

दी इंडियन लॉ रिपोर्ट्स

इलाहाबाद संस्करण



सत्यमेव जयते

इलाहाबाद हाई कोर्ट के सभी प्रकाशन योग्य निर्णय

२०२५ – भाग २

(फरवरी)

पृष्ठ १ से ९३३

उत्तर प्रदेश सरकार के अधीन प्रकाशित
इंडियन लॉ रिपोर्टर अनुभाग, उच्च न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित।

इंडियन लॉ रिपोर्टिंग काउंसिल

इलाहाबाद संस्करण

अध्यक्ष

माननीय मुख्य न्यायमूर्ति श्री अरुण भंसाली

परिषद

माननीय न्यायमूर्ति श्री अजित कुमार

माननीय न्यायमूर्ति श्री सौरभ श्याम शमशेरी

माननीय न्यायमूर्ति श्री विक्रम डी.चौहान

माननीय न्यायमूर्ति श्री जितेन्द्र कुमार सिन्हा

संपादक मंडल

वरिष्ठ विधि संपादक

१. श्री विनय सरन, वरिष्ठ अधिवक्ता

२. श्री समीर शर्मा, वरिष्ठ अधिवक्ता

कनिष्ठ विधि संपादक

१. श्री अनूप बरनवाल, अधिवक्ता

२. सुश्री प्रिया अग्रवाल, अधिवक्ता

३. श्री आशुतोष मणि त्रिपाठी, अधिवक्ता

४. सुश्री नूर सबा बेगम, अधिवक्ता

५. श्री सरोज गिरि, अधिवक्ता

६. सुश्री मनीषा चतुर्वेदी, अधिवक्ता

७. श्री अरविन्द कुमार गोस्वामी, अधिवक्ता

८. श्री विनीत दूबे, अधिवक्ता

९. . श्री प्रशान्त मिश्रा, अधिवक्ता

१० . श्री अबू बख्त, अधिवक्ता

माननीय न्यायमूर्तिगण

मुख्य न्यायमूर्ति	
माननीय मुख्य न्यायमूर्ति श्री अरुण भंसाली	
न्यायमूर्ति	
१. माननीय न्यायमूर्ति श्री मनोज कुमार गुप्ता (वरिष्ठ न्यायमूर्ति इलाहाबाद)	३२. माननीय न्यायमूर्ति श्री विवेक वर्मा
२. माननीय न्यायमूर्ति श्री अंजनी कुमार मिश्रा	३३. माननीय न्यायमूर्ति श्री संजय कुमार सिंह
३. माननीय न्यायमूर्ति श्री महेश चंद्र त्रिपाठी	३४. माननीय न्यायमूर्ति श्री पीयूष अग्रवाल
४. माननीय न्यायमूर्ति श्री विवेक कुमार बिरला	३५. माननीय न्यायमूर्ति श्री सौरभ श्याम शमशेरी
५. माननीय न्यायमूर्ति श्री अतुल रहमान मसूदी (वरिष्ठ न्यायमूर्ति लखनऊ)	३६. माननीय न्यायमूर्ति श्री जसप्रीत सिंह
६. माननीय न्यायमूर्ति श्री अश्वनी कुमार मिश्रा	३७. माननीय न्यायमूर्ति श्री राजीव सिंह
७. माननीय न्यायमूर्ति श्री राजन राय	३८. माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती मंजू रानी चौहान
८. माननीय न्यायमूर्ति श्री सिद्धार्थ वर्मा	३९. माननीय न्यायमूर्ति श्री करुणेश सिंह पवार
९. माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती संगीता चन्द्रा	४०. माननीय न्यायमूर्ति डॉ० योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
१०. माननीय न्यायमूर्ति श्री विवेक चौधरी	४१. माननीय न्यायमूर्ति श्री मनीष माथुर
११. माननीय न्यायमूर्ति श्री सौमित्र दयाल सिंह	४२. माननीय न्यायमूर्ति श्री रोहित रंजन अग्रवाल
१२. माननीय न्यायमूर्ति श्री शेखर बी सराफ	४३. माननीय न्यायमूर्ति श्री राज बीर सिंह
१३. माननीय न्यायमूर्ति श्री सलिल कुमार राय	४४. माननीय न्यायमूर्ति श्री विपिन चन्द्र दीक्षित
१४. माननीय न्यायमूर्ति श्री जयंत बनर्जी	४५. माननीय न्यायमूर्ति श्री शेखर कुमार यादव
१५. माननीय न्यायमूर्ति श्री राजेश सिंह चौहान	४६. माननीय न्यायमूर्ति श्री दीपक वर्मा
१६. माननीय न्यायमूर्ति श्री इरशाद अली	४७. माननीय न्यायमूर्ति डॉ. गौतम चौधरी
१७. माननीय न्यायमूर्ति श्री सरल श्रीवास्तव	४८. माननीय न्यायमूर्ति श्री दिनेश पाठक
१८. माननीय न्यायमूर्ति श्री जे.जे. मुनीर	४९. माननीय न्यायमूर्ति श्री मनीष कुमार
१९. माननीय न्यायमूर्ति श्री राजीव गुप्ता	५०. माननीय न्यायमूर्ति श्री समित गोपाल
२०. माननीय न्यायमूर्ति श्री सिद्धार्थ	५१. माननीय न्यायमूर्ति श्री डोनादि रमेश
२१. माननीय न्यायमूर्ति श्री अजित कुमार	५२. माननीय न्यायमूर्ति श्री संजय कुमार पचौरी
२२. माननीय न्यायमूर्ति श्री रजनीश कुमार	५३. माननीय न्यायमूर्ति श्री सुभाष चन्द्र शर्मा
२३. माननीय न्यायमूर्ति श्री अब्दुल मोईन	५४. माननीय न्यायमूर्ति श्री अजय कुमार श्रीवास्तव- प्रथम
२४. माननीय न्यायमूर्ति श्री राजीव मिश्रा	५५. माननीय न्यायमूर्ति श्री चन्द्र कुमार राय
२५. माननीय न्यायमूर्ति श्री अजय भनोट	५६. माननीय न्यायमूर्ति श्री कृष्ण पहल
२६. माननीय न्यायमूर्ति श्री नीरज तिवारी	५७. माननीय न्यायमूर्ति श्री समीर जैन
२७. माननीय न्यायमूर्ति श्री मनोज बजाज	५८. माननीय न्यायमूर्ति श्री आशुतोष श्रीवास्तव
२८. माननीय न्यायमूर्ति श्री प्रकाश पाडिया	५९. माननीय न्यायमूर्ति श्री सुभाष विद्यार्थी
२९. माननीय न्यायमूर्ति श्री आलोक माथुर	६०. माननीय न्यायमूर्ति श्री बृज राज सिंह
३०. माननीय न्यायमूर्ति श्री पंकज भाटिया	६१. माननीय न्यायमूर्ति श्री श्री प्रकाश सिंह
३१. माननीय न्यायमूर्ति श्री सौरभ लवानिया	६२. माननीय न्यायमूर्ति श्री विकास बुद्धवार

६३. माननीय न्यायमूर्ति श्री विक्रम डी चौहान
६४. माननीय न्यायमूर्ति श्री सौरभ श्रीवास्तव
६५. माननीय न्यायमूर्ति श्री ओम प्रकाश शुक्ला
६६. माननीय न्यायमूर्ति श्री मौ० अजहर हुसैन इंदरिशी
६७. माननीय न्यायमूर्ति श्री राम मनोहर नारायण मिश्रा
६८. माननीय न्यायमूर्ति श्री नलिन कुमार श्रीवास्तव
६९. माननीय न्यायमूर्ति श्री सैयद कमर हसन रिज़वी
७०. माननीय न्यायमूर्ति श्री मनीष कुमार निगम
७१. माननीय न्यायमूर्ति श्री अनीश कुमार गुप्ता
७२. माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती नंद प्रभा शुक्ला
७३. माननीय न्यायमूर्ति श्री क्षितिज शैलेन्द्र
७४. माननीय न्यायमूर्ति श्री विनोद दिवाकर
७५. माननीय न्यायमूर्ति श्री प्रशांत कुमार
७६. माननीय न्यायमूर्ति श्री मंजीव शुक्ला
७७. माननीय न्यायमूर्ति श्री अरूण कुमार सिंह देशवाल
७८. माननीय न्यायमूर्ति श्री प्रवीण कुमार गिरि

2.इला	वर्णमाला सूचकांक आईओएलओआरओ फरवरी 2025 (भाग-2)	1
अनिल कुमार श्रीवास्तव बनाम सी.बी.आई./एस.सी.बी. लखनऊ एवं अन्य		पृष्ठ-130
अमर पाल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य		पृष्ठ-656
अमरेंद्र बहादुर सिंह एवं अन्य बनाम भारत संघ		पृष्ठ-32
अमित कुमार तिवारी एवं अन्य बनाम राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य		पृष्ठ-223
उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम मोहम्मद समीर राव और अन्य		पृष्ठ-841
उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मनीष कुमार एवं अन्य		पृष्ठ-36
गोरखनाथ शुक्ला बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य		पृष्ठ-595
जगबीर सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य		पृष्ठ-876
जय प्रकाश चंद एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश एवं अन्य राज्य		पृष्ठ-859
जसवंत सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य		पृष्ठ-495
जुगी लाल बनाम गुरु प्रसाद		पृष्ठ-61
जेपी अस्पताल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य		पृष्ठ-114
ज्ञानेन्द्र कुमार बनाम भारत संघ एवं अन्य		पृष्ठ-830
दान बहादुर यादव बनाम प्रबंध निदेशक एवं सीईओ बैंक आफ बड़ौदा कॉर्पोरेट सेंटर मुंबई एवं अन्य		पृष्ठ-884
दिनेश्वर मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य		पृष्ठ-604
नगेंद्र सिरौही बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य		पृष्ठ-556
पियूष गुप्ता एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य		पृष्ठ-206

प्रकाश नारायण एवं अन्य बनाम हरि बक्स सिंह एवं अन्य	पृष्ठ-12
प्रदीप कुमार मौर्य और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य	पृष्ठ-167
प्रशांत कुमार मिश्रा व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-565
बजाज आलियांज लाइफ इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम श्रद्धा पद्मजा अवस्थी एवं अन्य	पृष्ठ-99
बिरजेश अग्रवाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य	पृष्ठ-930
बृज भूषण शरण सिंह बनाम राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य	पृष्ठ-196
भगवती शरण द्विवेदी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य	पृष्ठ-176
भारत संघ एवं अन्य बनाम धर्मेन्द्र कुमार साहू	पृष्ठ-584
भारत संघ एवं अन्य बनाम श्री संतोष कुमार एवं अन्य	पृष्ठ-590
मयंक पराशरी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य	पृष्ठ-519
महेंद्र कुमार जैन बनाम मोहम्मद इमरान और अन्य	पृष्ठ-87
मे./एस. लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शन्स प्रा. लि. बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य	पृष्ठ-337
मेसर्स अल-हक फूड्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-711
मेसर्स जानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-812
मेसर्स रजत इंफ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत संघ व 4 अन्य	पृष्ठ-487
मेसर्स श्री शंकर मेडिकल्स बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-702
मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-741
मेसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य	पृष्ठ-231

मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य	पृष्ठ-415
एम/एस जुहूर इन्फ्राटेक प्रा० लि० बनाम अपर आयुक्त ग्रेड-2 एवं अन्य	पृष्ठ-483
यांत्रिक विभाग प्राथमिक और अन्य बनाम भारत संघ और एक अन्य	पृष्ठ-305
युधवीर सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-647
रक्षपाल व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य	पृष्ठ-501
रजनीता बनाम भारत संघ व अन्य	पृष्ठ-696
रमेश तिवारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-541
राजेश कुमार शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य	पृष्ठ-126
राम लाल (मृत) एवं अन्य बनाम श्रीमती विजय लक्ष्मी एवं अन्य	पृष्ठ-54
राम लोटन विश्वकर्मा और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य	पृष्ठ-181
रामबाबू गुप्ता एवं अन्य बनाम श्री गणेश महाराज विराजमान	पृष्ठ-81
लालसा यादव बनाम राजस्व परिषद व अन्य	पृष्ठ-688
विद्या किशोर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-609
शानू सक्सेना व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-491
शिव दत्त जोशी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एवं अन्य	पृष्ठ-613
शिव बालक सिंह एवं अन्य बनाम राजस्व बोर्ड एवं अन्य	पृष्ठ-835
शिवकर सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-642

शीतल चौधरी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य	पृष्ठ-677
श्रीपाल गिरि बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य	पृष्ठ-910
श्रीमती कविता चौधरी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-562
श्रीमती दुर्गेश शर्मा व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-577
श्रीराम यादव बनाम संजय मॉल एवं अन्य	पृष्ठ-77
संजीव कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-698
सुरेंद्र कुमार और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य	पृष्ठ-137
सूर्य प्रताप सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य	पृष्ठ-894
सौरभ मीणा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य	पृष्ठ-5
स्पैन इन्फ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य	पृष्ठ-832

अनुराधा

(2025) 2 ILRA 4

अपीलीय अधिकारिता

आपराधिक पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 20.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति कृष्ण पहल

आपराधिक प्रकीर्ण जमानत प्रार्थना पत्र संख्या 39053/2024

सौरभ मीणा

...आवेदक

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

...विपक्षीगण

आवेदक की ओर से अधिवक्ता:

अंकित प्रकाश, पारिजात मिश्र, सुशील शुक्ल, विमलेन्दु त्रिपाठी

विपक्षी की ओर से अधिवक्ता:

जी.ए., गंगा भूषण मिश्रा

आपराधिक विधि - भारतीय दंड संहिता, 1860 - धारा 306, 376, 313 और 323- जमानत - आत्महत्या के लिए उकसाना - पीड़िता को बार-बार गर्भपात के लिए मजबूर करने का आरोप - आत्महत्या नोट में आवेदक की भूमिका का उल्लेख नहीं - प्राथमिकी शुरू में धारा 302 भा0द0सं0 के तहत दर्ज की गई, जिसे बाद में धारा 306 भा0द0सं0 में बदल दिया गया - आवेदक के खिलाफ कोई प्रत्यक्ष उकसावे या प्रत्यक्ष कृत्य का आरोप नहीं - पीड़िता बंद कमरे में लटकी हुई पाई गई - जबरन प्रवेश या गला घोटने का कोई सबूत नहीं - जांच में अवैध प्रभाव डालने का आरोप निराधार - प्रथम दृष्टया धारा 306 भा0द0सं0 के तत्व संतुष्ट नहीं - जमानत स्वीकृत। (प्रस्तर 33 से 37)

अभिनिर्धारित:

यह विधि का स्थापित सिद्धांत है कि जमानत का उद्देश्य अभियुक्त की मुकदमे में उपस्थिति सुनिश्चित करना है। विद्वान ए.जी.ए. द्वारा कोई भी ऐसा भौतिक विवरण या परिस्थितियाँ प्रस्तुत नहीं की गई हैं जिनसे यह पता चलता हो कि आवेदक न्याय से भाग रहा है, न्याय प्रक्रिया को बाधित कर रहा है, या अपराध दोहराकर या गवाहों को डराकर अन्य समस्याएँ पैदा कर रहा है, इत्यादि।

प्राथमिकी में इस तथ्य का उल्लेख है कि आवेदक ने मृतक की हत्या की थी, लेकिन जाँच कुछ और ही कहती है। यह आत्महत्या के लिए उकसाने का प्रकरण है। मृतक का दरवाज़ा सोसायटी के गार्ड और सुरक्षा अधिकारी द्वारा तोड़ा गया था। (प्रस्तर 35)

आवेदक पर मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने का कोई प्रत्यक्ष आरोप नहीं लगाया गया है। यह सच है कि मृतक महिला होने के कारण तनाव में रही होगी। (प्रस्तर 36)

इस प्रकरण में यह स्वीकार किया गया है कि आवेदक और मृतक व्यक्ति के बीच सहमति से शारीरिक संबंध थे। इस प्रकरण में मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने का तत्व गायब प्रतीत होता है। (प्रस्तर 37)

जमानत प्रार्थना पत्र स्वीकृत। (ई-14)

उद्धृत प्रकरण की सूची:

1. उदे सिंह बनाम हरियाणा राज्य, (2019) 17 एससीसी 301
2. सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम सीबीआई, 2022 आईएनएससी 690
3. मनीष सिसोदिया बनाम प्रवर्तन निदेशालय, 2024 आईएनएससी 595
4. निरंजन सिंह बनाम प्रभाकर राजाराम खरोटे, एआईआर 1980 एससी 785

(माननीय न्यायमूर्ति कृष्ण पहल द्वारा पारित)

1. सूची पुनरीक्षित की गई है।

2. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता श्री सुशील शुक्ला, सूचनाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री गंगा भूषण मिश्रा का पक्ष रख रहे अधिवक्ता श्री राज कुमार पाण्डेय तथा राज्य के विद्वान अपर महाधिवक्ता श्री दीपक कुमार सिंह को सुना गया तथा अभिलेख का अवलोकन किया गया।

3. आवेदक मुकदमा अपराध संख्या 308/2024, अंतर्गत धारा 323, 313, 376 और 306 भा0द0सं0, थाना सेक्टर-39, जिला गौतम बुद्ध नगर में विचारण के लंबित रहने के दौरान जमानत चाहता है।

अभियोजन पक्ष की कहानी:

4. बताया गया है कि आवेदक ने सूचना देने वाले को फोन करके बताया कि उसकी बेटी उसके घर में मर गई है, जिसके बाद सूचना देने वाला अलीगढ़ से नोएडा पहुंचा।

5. एफआईआर सूचनाकर्ता द्वारा इस आरोप के साथ दर्ज कराई गई थी कि मृतक व्यक्ति उस समय गर्भवती थी और उसने आवेदक के कहने पर अपने भ्रूण का गर्भपात करा लिया था।

6. आवेदक पर अन्य आरोप भी हैं कि उसने मृतक व्यक्ति से अपना घर बेचने और दोनों के संयुक्त नाम से एक संपत्ति खरीदने के लिए कहा था। आवेदक मृतक व्यक्ति से उसकी कार बेचने के लिए भी कहता था। आरोप है कि आवेदक मृतक व्यक्ति के साथ दुर्व्यवहार करता था और उसके साथ मारपीट भी करता था।

7. आवेदक ने सूचनाकर्ता की पुत्री की हत्या की थी, इस प्रकार उसके द्वारा दिनांक 26.05.2024 को एफआईआर दर्ज कराई गई थी।

आवेदक की ओर से तर्क:

8. आवेदक पूर्णतः निर्दोष है तथा उसे वर्तमान प्रकरण में झूठा फंसाया गया है।

9. प्रारंभ में, एफआईआर धारा 302, 323, 313 और 376 भा0द0सं0 के तहत दर्ज की गई थी, लेकिन बाद में पूरी जांच के बाद, अंतिम रिपोर्ट (चार्जशीट) केवल धारा 376, 306, 323 और 313 भा0द0सं0 के तहत दायर की गई है और धारा 302 भा0द0सं0 को धारा 306 भा0द0सं0 में परिवर्तित कर दिया गया है।

10. एफआईआर दर्ज होने से पहले ही जांच पूरी हो चुकी थी। जांच की कार्यवाही 25.05.2024 को ही शुरू हुई और उसी रात 9:10 बजे तक पूरी हो गई।

11. मृतक का पोस्टमार्टम अगले दिन यानि 26.05.2024 को शाम 4:30 बजे किया गया।

12. मृतक के सुसाइड नोट में भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के किसी भी तत्व का संकेत नहीं है क्योंकि इसमें आवेदक द्वारा मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने के विरुद्ध एक शब्द का भी उल्लेख नहीं है। उस पर कोई प्रत्यक्ष कृत्य आरोपित नहीं किया गया है।

13. रुद्रिका शर्मा के बयान पर ज़्यादा भरोसा किया गया है, जिन्होंने साफ़ तौर पर कहा है कि आवेदक ने घटना वाले दिन ही उन्हें फ़ोन करके बताया था कि मृतक ने दरवाज़ा बंद कर लिया है और उसे खोल नहीं रहा है। काफ़ी समझाने के बाद, सोसाइटी के गार्ड और सुरक्षा अधिकारी की मदद से दरवाज़ा तोड़ा जा सका।

14. उक्त गार्ड और सुरक्षा अधिकारी के बयान अभियुक्तों के उक्त बयान की पुष्टि करते हैं कि मृतक के कमरे का दरवाज़ा उनके द्वारा तोड़ा गया था।

15. यह स्पष्ट रूप से आत्महत्या का प्रकरण है क्योंकि पोस्टमार्टम रिपोर्ट में डॉक्टर ने मृत्यु का कारण मृत्युपूर्व फांसी के कारण दम घुटना बताया है। हत्या का आरोप झूठा साबित होता है।

16. आवेदक की ओर से उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों की असत्यता को सिद्ध करने के लिए कई अन्य तर्क प्रस्तुत किए गए हैं। अधिवक्ता के अनुसार, जिन परिस्थितियों के कारण आवेदक को झूठा फंसाया गया, उन पर भी विस्तार से चर्चा की गई है।

17. आवेदक का कोई आपराधिक इतिहास नहीं है। आवेदक 26.05.2024 से जेल में बंद है और मुकदमे में सहयोग करने को तैयार है। यदि आवेदक को जमानत पर रिहा कर दिया जाता है, तो वह जमानत की स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं करेगा।

राज्य/सूचनादाता की ओर से तर्क:

18. जमानत याचिका का इस आधार पर विरोध किया गया है कि यह स्पष्ट रूप से एक ऐसा प्रकरण है जहाँ आवेदक ने अपने प्रभाव का इस्तेमाल किया है क्योंकि वह एक भारतीय राजस्व अधिकारी (आईआरएस) है। उसका परिवार एक प्रतिष्ठित परिवार है, जिसमें कई लोग आईएएस, आईपीएस और आईआरएस सहित प्रशासनिक अधिकारी हैं।

19. आवेदक ने अपने प्रभाव का दुरुपयोग करते हुए अपने निर्देशानुसार जांच कराई है, जिसके फलस्वरूप आवेदक के कहने पर अंतिम रिपोर्ट (आरोप पत्र) प्रस्तुत की गई है।

20. इस तथ्य से ही जाँच में गड़बड़ी स्पष्ट हो जाती है कि पोस्टमार्टम रिपोर्ट से पता चलता है कि शरीर के केवल निचले हिस्सों में ही कठोरता थी। इसका अर्थ है कि मोदी की चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान पुस्तक के अनुसार, मृत्यु का समय 24-36 घंटों के बीच हो सकता है।

21. आवेदक द्वारा अपने बयान में बताई गई मृत्यु का समय, जिसकी पुष्टि उसके एक साझा मित्र रुद्रिका शर्मा ने भी की है, उक्त शव-परीक्षण रिपोर्ट से पुष्टि नहीं होती है।

22. सूचनाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने उसके प्रति-शपथपत्र पर काफी भरोसा जताया है, जिसमें दोनों के बीच हुई कई व्हाट्सएप चैट संलग्न हैं। 06.05.2024 को प्रातः 5:55:22 बजे, मृतक ने निम्नलिखित संदेश भेजा था:

“शिल्पा: सौरभ, उस आईपिल से मुझे अभी तक पीरियड्स नहीं आए हैं। मैं इसे अकेले नहीं झेल सकती। मैं इस पागलपन को अकेले नहीं झेल सकती। तुमने कल मुझे इसके बारे में बोलने नहीं दिया। तुम अब भी मेरे अंदर हो। मैंने पहले भी हमारे कई बच्चों को ऐसे ही मारा है। जब तुमने कहा था कि जाओ और किसी को दूँडो

जिसके साथ बच्चे हों, तब मैं सोचती रही और जब मैं तुमसे गर्भवती हो रही थी, तब मैंने यही सब सोचा और मैंने इन आईपिल्स से उन सभी को मारने का फैसला किया। नर्क में मेरी जगह तय है। मैं इस तरह नहीं जी सकती और मैं अब यह शरीर किसी और को नहीं दे सकती। मेरे पास किसी और को देने के लिए कुछ भी नहीं है। मैं अब कहीं नहीं जा सकती। मैं पूरी तरह से तुम्हारे साथ थी।"

23. मृतक ने उसी दिन प्रातः 5:56:13 बजे एक और संदेश भेजा था, जो इस प्रकार है:

"शिल्पा: सोचिये, कम से कम 10 आईपिल्स और गर्भपात से मैं मानसिक रूप से कितनी प्रभावित हो रही हूँ और आप मुझे बच्चे पैदा करने के लिए किसी और के पास जाने के लिए कह रहे हैं।"

24. उपरोक्त कथनों से पता चलता है कि मृतका आवेदक से बेहद प्यार करती थी, लेकिन आवेदक ने ही अपने प्रभाव का दुरुपयोग करके उससे विवाह नहीं किया और न ही मृतका को अपने शारीरिक संबंध से संतान उत्पन्न करने दी। उसने स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि उसका मासिक धर्म नहीं हुआ था, इसलिए वह गर्भवती थी और वह अब अपने गर्भ का गर्भपात नहीं करवाना चाहती, जैसा कि पहले किया गया था।

25. इसका तात्पर्य यह है कि आवेदक ने ही मृतक व्यक्ति को आत्महत्या के लिए मजबूर किया था।

26. सूचना देने वाले के विद्वान अधिवक्ता ने मृतका के कई फोटोग्राफों पर बहुत अधिक भरोसा किया है, जिससे उक्त फोटोग्राफ से पता चलता है कि मृतका के ऊपरी हिस्से का रंग अलग है, क्योंकि एक रंगीन फोटोग्राफ में उसका ऊपरी हिस्सा नीले रंग का पाया गया, जबकि जांच के दौरान पुलिस द्वारा दाखिल की गई दूसरी तस्वीर से पता चलता है कि वह सफेद रंग का है, इस प्रकार, यह अवैध जांच का स्पष्ट प्रकरण है।

27. मृतका स्वयं बीएचईएल, नोएडा में कार्यरत थी और उसका कैरियर बहुत अच्छा था तथा एक उज्ज्वल भविष्य की महिला को आवेदक के इशारे पर मौत की सजा दी गई है, इसलिए आवेदक जमानत का हकदार नहीं है।

निष्कर्ष:

28. निरंजन सिंह एवं अन्य बनाम प्रभाकर राजाराम खरोटे एवं अन्य, एआईआर 1980 एससी 785 प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय ने साक्ष्यों की विस्तृत जाँच और प्रकरण के गुण-दोषों का विस्तृत दस्तावेजीकरण करने से परहेज किया है ताकि किसी भी पक्ष को यह आभास न हो कि उसके प्रकरण में पक्षपात किया गया है। प्रकरण की प्रथम दृष्टया संतुष्टि आवश्यक है, लेकिन यह आदेश के गुण-दोषों की विस्तृत जाँच के समान नहीं है।

29. "दोष सिद्ध होने तक निर्दोषता की धारणा" का सुप्रसिद्ध सिद्धांत, नियम के रूप में जमानत और अपवाद के रूप में कारावास की अवधारणा को जन्म देता है।

30. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त किसी व्यक्ति के जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार को केवल इसलिए नहीं छीना जा सकता क्योंकि उस व्यक्ति पर अपराध करने का आरोप है, जब तक कि अपराध किसी भी संदेह से परे सिद्ध न हो जाए। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 में कहा गया है कि किसी के जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता को तब तक नहीं छीना जा सकता जब तक कि विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया का पालन न किया जाए, और यह प्रक्रिया न्यायसंगत और युक्तिसंगत होनी चाहिए। उक्त सिद्धांत को सर्वोच्च न्यायालय ने **सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो एवं अन्य, 2022 आईएनएससी 690** में दोहराया है।

31. **मनीष सिसोदिया बनाम प्रवर्तन निदेशालय, 2024 आईएनएससी 595** प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय ने उपरोक्त दृष्टिकोण को दोहराते हुए पुनः इस बात पर जोर दिया है कि विधि का यह सुस्थापित सिद्धांत कि सज़ा के रूप में ज़मानत रोकी नहीं जानी चाहिए, भुलाया नहीं जाना चाहिए। अब समय आ गया है कि न्यायालय इस सिद्धांत को स्वीकार करें कि "ज़मानत एक नियम है और जेल एक अपवाद"।

32. विद्वान ए.जी.ए. ऐसी कोई असाधारण परिस्थिति प्रस्तुत नहीं कर सके, जिसके आधार पर आवेदक को जमानत देने से इंकार किया जा सके।

33. "यह विधि का स्थापित सिद्धांत है कि जमानत का उद्देश्य अभियुक्त की मुकदमे में उपस्थिति सुनिश्चित करना है। विद्वान एजीए द्वारा ऐसा कोई भी भौतिक विवरण या परिस्थितियाँ प्रस्तुत नहीं की गई हैं जिनसे यह पता चलता हो कि आवेदक न्याय से भाग रहा है, न्याय की प्रक्रिया को बाधित कर रहा है, या अपराधों को दोहराकर या गवाहों को डराकर अन्य परेशानियाँ पैदा कर रहा है।"

34. **उदे सिंह एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य, (2019) 17 एससीसी 301** में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा:-

"16. कथित आत्महत्या के उकसावे के प्रकरण में, आत्महत्या के लिए उकसाने के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कृत्य/कृत्यों का प्रमाण अवश्य होना चाहिए। इस बात पर शायद ही कोई विवाद हो कि आत्महत्या के कारण का प्रश्न, विशेष रूप से आत्महत्या के लिए उकसाने के अपराध के संदर्भ में, एक पेचीदा प्रश्न बना हुआ है, जिसमें मानवीय व्यवहार और प्रतिक्रियाओं के बहुआयामी और जटिल गुण शामिल होते हैं। आत्महत्या के लिए उकसाने के आरोप के प्रकरण में, न्यायालय आत्महत्या के लिए उकसाने के कृत्य/कृत्यों के ठोस और विश्वसनीय प्रमाण की तलाश करेगा। आत्महत्या के प्रकरण में, केवल किसी अन्य व्यक्ति द्वारा मृतक को परेशान करने का आरोप पर्याप्त नहीं होगा, जब तक कि अभियुक्त की ओर से ऐसा कोई कार्य न हो जो व्यक्ति को आत्महत्या के लिए मजबूर करे; और ऐसा आपत्तिजनक कार्य घटना के समय के निकट होना चाहिए। किसी व्यक्ति ने किसी अन्य व्यक्ति को आत्महत्या के लिए उकसाया है या नहीं, यह केवल प्रत्येक प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों से ही पता लगाया जा सकता है।

16.1. यह पता लगाने के लिए कि क्या किसी व्यक्ति ने किसी अन्य व्यक्ति को आत्महत्या के लिए उकसाया है; विचार यह होगा कि क्या अभियुक्त आत्महत्या के लिए उकसाने के कृत्य का दोषी है। जैसा कि इस न्यायालय ने ऊपर दिए गए निर्णयों में समझाया और दोहराया है, उकसाने का अर्थ है किसी कार्य को करने के लिए उकसाना, आगे बढ़ाना, उकसाना, उत्तेजित करना या प्रोत्साहित करना। यदि आत्महत्या करने वाले व्यक्ति अतिसंवेदनशील थे और अभियुक्त के कृत्य से सामान्यतः समान परिस्थिति वाले व्यक्ति को आत्महत्या के लिए प्रेरित करने की उम्मीद नहीं की जाती है, तो अभियुक्त को आत्महत्या के लिए उकसाने का दोषी ठहराना सुरक्षित नहीं होगा। लेकिन, दूसरी ओर, यदि अभियुक्त अपने कृत्यों और अपने निरंतर आचरण से ऐसी स्थिति उत्पन्न करता है जिससे मृतक को आत्महत्या के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं दिखता है, तो प्रकरण भा0द0सं0 की धारा 306 के अंतर्गत आ सकता है। यदि अभियुक्त पीड़ित के आत्मसम्मान और स्वाभिमान को धूमिल करने में सक्रिय भूमिका निभाता है, जो अंततः पीड़ित को आत्महत्या के लिए प्रेरित करता है, तो अभियुक्त को आत्महत्या के लिए उकसाने का दोषी ठहराया जा सकता है। ऐसे प्रकरण में अभियुक्त की ओर से मेन्स रीया के प्रश्न की जांच अभियुक्त के वास्तविक कृत्यों और कार्यों के संदर्भ में की जाएगी और यदि कृत्य और कार्य केवल ऐसी प्रकृति के हैं जहां अभियुक्त का उत्पीड़न या क्रोध के अचानक प्रदर्शन से अधिक कुछ नहीं था, तो एक विशेष प्रकरण आत्महत्या के लिए उकसाने के अपराध से कम हो सकता है। हालांकि, अगर अभियुक्त मृतक को शब्दों या कार्यों से तब तक परेशान या परेशान करता रहा जब तक कि मृतक ने प्रतिक्रिया नहीं की या उसे उकसाया नहीं गया, तो एक विशेष प्रकरण आत्महत्या के लिए उकसाने का हो सकता है। चूंकि यह मानव व्यवहार के नाजुक विश्लेषण का प्रकरण है, इसलिए प्रत्येक प्रकरण की अपने तथ्यों पर जांच करने की आवश्यकता है, साथ ही अभियुक्त और मृतक के कार्यों और मानसिकता पर असर डालने वाले सभी आसपास के कारकों पर ध्यान देना आवश्यक है।

35. प्राथमिकी में इस तथ्य का उल्लेख है कि आवेदक ने मृतक की हत्या की थी, लेकिन जाँच में कुछ और ही कहा गया है। इसमें कहा गया है कि यह आत्महत्या के लिए उकसाने का प्रकरण है। मृतक का दरवाज़ा सोसायटी के गार्ड और सुरक्षा अधिकारी द्वारा तोड़ा गया था।

36. आवेदक पर मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने का कोई प्रत्यक्ष प्रत्यक्ष आरोप नहीं लगाया गया है। यह सच है कि मृतका एक महिला होने के कारण तनाव में रही होगी। 'जॉर्ज बर्नार्ड शॉ' की एक कहावत है, जो इस प्रकार है:

"एक महिला का काम है कि वह यथाशीघ्र विवाह कर ले, और एक पुरुष का काम है कि वह यथासंभव लंबे समय तक अविवाहित रहे।"

37. इस प्रकरण में यह स्वीकार किया गया है कि आवेदक और मृतक व्यक्ति के बीच सहमति से शारीरिक संबंध थे। इस प्रकरण में मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने का तत्व अनुपस्थित प्रतीत होता है।

38. प्रकरण के उपर्युक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों, पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों, अभिलेख में उपलब्ध साक्ष्यों तथा प्रकरण के गुण-दोष पर कोई राय व्यक्त किए बिना, न्यायालय का मत है कि आवेदक ने जमानत हेतु पर्याप्त आधार प्रस्तुत किया है। जमानत प्रार्थना पत्र स्वीकार किया जाता है।

उपरोक्त प्रकरण अपराध संख्या में संलिप्त आवेदक सौरभ मीणा को संबंधित न्यायालय की संतुष्टि के लिए व्यक्तिगत बंधपत्र एवं समान राशि के दो जमानतदार प्रस्तुत करने पर निम्नलिखित शर्तों के अधीन जमानत पर रिहा किया जाए।

(i) आवेदक साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ नहीं करेगा।

(ii) आवेदक को (1) प्रकरण शुरू करने, (2) आरोप तय करने और (3) धारा 313 सीआरपीसी / 351 बीएनएसएस के तहत बयान दर्ज करने के लिए तय की गई तारीखों पर विचारण न्यायालय के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहना होगा। यदि विचारण न्यायालय की राय में आवेदक की अनुपस्थिति जानबूझकर या पर्याप्त कारण के बिना है, तो विचारण न्यायालय के लिए इस तरह की चूक को जमानत की स्वतंत्रता का दुरुपयोग मानना और विधि अनुसार उसके खिलाफ कार्यवाही करना खुला होगा।

40. उपरोक्त किसी भी शर्त का उल्लंघन होने पर, यह जमानत रद्द करने का आधार होगा। बांड स्वीकार करने से पहले, संबंधित न्यायालय द्वारा आवेदक और जमानतदारों की पहचान, स्थिति और निवास प्रमाण का सत्यापन किया जाएगा।

41. यह स्पष्ट किया जाता है कि आवेदक को जमानत देने में की गई टिप्पणियां गवाहों की गवाही के आधार पर विद्वान विचारण न्यायाधीश की स्वतंत्र राय बनाने में किसी भी तरह से प्रभावित नहीं होंगी।

(2025) 2 ILRA 9

अपीलीय अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 17.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति रजनीश कुमार

आदेश से प्रथम अपील संख्या- 32/2022

प्रकाश नारायण एवं अन्य

बनाम

हरि बक्स सिंह एवं अन्य

...अपीलकर्ता

...प्रतिवादी

अपीलकर्तागण की ओर से अधिवक्ता:

अंकित पांडेय

प्रतिवादीगण की ओर से अधिवक्ता:

ओंकार नाथ पांडेय

सिविल विधि-सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-धारा 96, 100 और 107 - आदेश 41 - नियम 17, 23, 23-ए, 25 और आदेश 43 नियम (1) (यू) - अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित रिमांड आदेश के खिलाफ आदेश XLIII नियम 1(यू) के तहत अपील --- यदि अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए अनुसार विचारण न्यायालय द्वारा सीमा का विशेष मुद्दा तैयार नहीं किया गया था और रिकॉर्ड के आधार पर विचारण न्यायालय ने एक निष्कर्ष दर्ज किया है जो दर्शाता है कि मुकदमा समय बाधित नहीं है, यह उस पर विचार कर सकता था और उस पर एक निष्कर्ष दर्ज कर सकता था, यदि सबूत पर्याप्त हैं तो एक मुद्दा तैयार करके, यदि आवश्यक हो, क्योंकि पहली अपील मुकदमे की निरंतरता में है और अपीलीय न्यायालय के पास तथ्यों के साथ-साथ विधि के आधार पर मुकदमे पर विचार करने की सभी शक्तियां हैं --- बेशक आयोग की रिपोर्ट रिकॉर्ड पर है, लेकिन प्रतिवादी-प्रतिवादीगण द्वारा उस पर कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई है और विचारण न्यायालय द्वारा कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया गया है कि वह इससे संतुष्ट नहीं है कार्यवाही और आयुक्त की रिपोर्ट, इसलिए, यह अंतिम है और यदि इस पर विचारण न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया है और अवर अपीलीय न्यायालय का यह विचार है कि इस पर विचार किया जाना आवश्यक है, तो वह इस पर विचार कर सकती थी और इस पर विचार करने के बाद एक स्वतंत्र निष्कर्ष दर्ज किया जा सकता था और इसके बाद यदि अपीलीय न्यायालय का यह विचार है कि प्रकरण को रिमांड पर लेने की आवश्यकता है, तो वह विशिष्ट निष्कर्षों को दर्ज करके रिमांड पर ले सकती थी, क्योंकि तकनीकी आधार पर योग्यता को प्रभावित किए बिना रिमांड मान्य नहीं है। (प्रस्तर 36 और 40)

आक्षेपित आदेश सीपीसी की धारा 96 के तहत अपीलीय न्यायालय के रूप में प्रकरण पर विचार किए बिना और सीपीसी की धारा 107 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए आदेश-41, नियम-23, 23-ए और 25 के साथ पारित किया गया था और सीपीसी के आदेश 41 नियम 31 के तहत प्रावधान का पालन किए बिना निर्णय पारित किया गया था, इसलिए, अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश को रद्द किया जाना चाहिए और प्रकरण को अवर अपीलीय न्यायालय को विधि और इस आदेश में ऊपर की गई टिप्पणियों के अनुसार अपील पर नए सिरे से विचार करने और निर्णय लेने के लिए वापस भेजा जाना चाहिए। (ई-15)

(प्रस्तर 41)

उद्धृत प्रकरण की सूची:

1. अब्दुर रहमान एवं अन्य बनाम अथिफा बेगम और अन्य; (1996) 9 एससीसी 62

2. जानकी प्रसाद बनाम संजय कुमार एवं अन्य; 2022 (1) एडीजे 312 (एलबी)
3. नारायणन बनाम कुमारन और अन्य; (2004) 4 एससीसी 26
4. वसंत गणेश दामले बनाम श्रीकांत त्र्यंबक दातार एवं अन्य; (2002) 4 एससीसी 183
5. मल्लूरू मल्लप्पा (मृत) बनाम कुरुवथप्पा व अन्य; (2020) 4 सर्वोच्च न्यायालय प्रकरण 313
6. सैयदा रहीमुन्निसा बनाम मालन बीआई (मृत) जरिए उत्तराधिकारी और अन्य; 2016 (119) एएलआर 485
7. जगन्नाथन बनाम राजू सिगमानी और अन्य; (2012) 5 एससीसी 540
8. पी. पुरुषोत्तम रेड्डी एवं अन्य बनाम प्रताप स्टील्स लिमिटेड; (2002) 2 एससीसी 686
9. माया देवी (मृत) जरिए उत्तराधिकारी बनाम राज कुमारी बत्रा (मृत); (2010) 9 एससीसी 486
10. सत्यनाथ और अन्य बनाम सरोजमणि; (2022) 7 सर्वोच्च न्यायालय प्रकरण 644
11. श्रीमती उर्मिला देवी बनाम श्याम सुंदर एवं अन्य 2021 (151) आरडी 73
12. सईदा अख्तर बनाम अब्दुल अहद (2003) 7 सर्वोच्च न्यायालय प्रकरण 52,
13. नगुबाई अम्मल एवं अन्य बनाम बी. शमा राव एवं अन्य 1956 एआईआर (एससी) 593
14. आर्य प्रतिनिधि सभा एवं अन्य बनाम अरविन्द निकेतन चरथावल एवं अन्य 1979 इलाहाबाद एलजे 1220

(माननीय न्यायमूर्ति रजनीश कुमार द्वारा प्रदत्त)

1. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे आगे सीपीसी कहा जाएगा) के आदेश XLIII नियम 1(यू) के तहत वर्तमान अपील सिविल अपील संख्या 110/2011; हरि बक्स सिंह एवं अन्य बनाम प्रकाश नारायण एवं अन्य में अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 1, सुल्तानपुर द्वारा पारित दिनांक 04.01.2022 के निर्णय और आदेश के खिलाफ दायर की गई है, जिसके माध्यम से अपील को अनुमति दी गई है और विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को रद्द कर दिया गया है और प्रकरण को गुण-दोष के आधार पर मुकदमे के नए निर्णय के लिए विचारण न्यायालय में वापस भेज दिया गया है।

2. वादी-अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि जब प्रकरण को सुनवाई के लिए निर्धारित तिथि पर बुलाया गया था, तब प्रतिवादी-प्रतिवादी उपस्थित नहीं थे, इसलिए, अपील को अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा गुण-दोष के आधार पर तय नहीं किया जा सकता था और इसे सीपीसी के आदेश XLI नियम 17 के तहत खारिज कर दिया जाना चाहिए था। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि अवर अपीलीय न्यायालय ने सीपीसी के आदेश XLI नियम 31 का उल्लंघन करते हुए सिविल अपील का फैसला किया है, बिना निर्धारण के लिए बिंदु तैयार किए और उस पर निष्कर्ष दर्ज किए।

3. उन्होंने आगे दलील दी कि प्रतिवादी-प्रतिवादीगण द्वारा ली गई समय सीमा की दलील पक्षकारों के ज्ञान में थी और तदनुसार साक्ष्य प्रस्तुत किए गए थे जो दर्शाते हैं कि मुकदमा समय सीमा के भीतर था, इसलिए, केवल

इसलिए कि समय सीमा के संबंध में कोई मुद्दा तैयार नहीं किया गया था, यह विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को रद्द करने और प्रकरण को रिमांड करने का आधार नहीं हो सकता है। आगे यह भी दलील दी गई कि प्रतिवादी-प्रतिवादीगण द्वारा आयोग की रिपोर्ट पर कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई थी, इसलिए, आयोग की रिपोर्ट के संबंध में कोई विवाद नहीं था और यदि न्यायालय आयुक्त की रिपोर्ट से असंतुष्ट होती, तो वह प्रकरण में आगे की जांच का निर्देश दे सकती थी या आयुक्त से पूछताछ कर सकती थी, लेकिन ऐसा नहीं किया गया था, इसलिए, यह रिमांड का आधार भी नहीं हो सकता है। इस प्रकार दलील यह थी कि आरोपित निर्णय और आदेश विधि की नजर में टिकने योग्य नहीं है और इसे रद्द किया जा सकता है। उन्होंने निम्नलिखित प्रकरण के कानूनों पर भरोसा किया:

- i. नागुबाई अम्मल एवं अन्य बनाम बी. शमा राव एवं अन्य; 1956 एआईआर (सर्वोच्च न्यायालय) 593
- ii. आर्य प्रतिनिधि सभा एवं अन्य बनाम अरविन्द निकेतन चरथावल एवं अन्य; 1979 इलाहबाद एलजे 1220
- iii. अब्दुर रहमान एवं अन्य बनाम अथिफा बेगम एवं अन्य; (1996) 9 सर्वोच्च न्यायालय प्रकरण 62,
- iv. सईदा अख्तर बनाम अब्दुल अहद; (2003) 7 सर्वोच्च न्यायालय प्रकरण 52,
- v. मल्लूरू मल्लप्पा (मृत) जरिए विधिक उत्तराधिकारी बनाम कुरुवथप्पा एवं अन्य; (2020) 4 सर्वोच्च न्यायालय प्रकरण 313,
- vi. श्रीमती उर्मिला देवी बनाम श्याम सुंदर एवं अन्य; 2021 (151) आरडी 73,
- vii. सत्यनाथ एवं अन्य बनाम सरोजमणि; (2022) 7 सर्वोच्च न्यायालय प्रकरण 644,
- viii. जानकी प्रसाद बनाम संजय कुमार एवं अन्य; 2022 (1) एडीजे 312 (एलबी),
- ix. बेनी डिसूजा एवं अन्य बनाम मेल्विन डिसूजा एवं अन्य; 2023 लाइवलाॅ (एससी) 1032

4. इसके विपरीत, प्रतिवादी-प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अवर अपीलीय न्यायालय ने अपील को अनुमति दे दी है और वादी-अपीलकर्तागण के आग्रह पर अपील का अंतिम रूप से निर्णय हो चुका है, इसलिए यह दलील कि वादी-प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता की अनुपस्थिति में अपील को सीपीसी के आदेश XLI नियम 17 के तहत खारिज कर दिया जाना चाहिए था, मान्य नहीं है। एक बार अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा अपील का निर्णय और अनुमति मिलने के बाद भी वह पीड़ित व्यक्ति नहीं है क्योंकि अपील प्रतिवादी-प्रतिवादीगण द्वारा दायर की गई थी और उन्हें कोई शिकायत नहीं है। प्रतिवादी-प्रतिवादीगण के पास इसे चुनौती देने के लिए पीड़ित व्यक्ति हो सकता है, अगर इसे खारिज कर दिया गया होता। यह भी प्रस्तुत किया गया कि वादी-अपीलकर्तागण को अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा सुना गया है और उनके तर्कों पर विचार किया गया है और आयोग की रिपोर्ट पर कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई

5. उपरोक्त के आधार पर, प्रतिवादी-प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता का तर्क था कि अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश में कोई अवैधता या त्रुटि नहीं है। यह अपील गलत और निराधार आधार पर दायर की गई है, जो जुर्माने सहित खारिज किए जाने योग्य है।

6. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के तर्कों पर विचार किया है तथा अभिलेखों का अवलोकन किया है।

7. वादी-अपीलकर्तागण ने विवादित भूमि पर दावा करते हुए स्थायी निषेधाज्ञा और अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए वाद दायर किया। प्रतिवादी-प्रतिवादीगण ने लिखित बयान दाखिल करके वाद का विरोध किया। पक्षों की दलीलों के आधार पर, अवर न्यायालय ने छह मुद्दे तय किए। इसके बाद पक्षों द्वारा मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किए गए। वाद के लंबित रहने के दौरान एक आयोग का गठन भी किया गया और आयुक्त ने साइट प्लान के साथ आयोग की रिपोर्ट प्रस्तुत की। विद्वान अवर न्यायालय ने पक्षों की दलीलों, साक्ष्य और रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री पर विचार करने के बाद, मूल वाद संख्या 47/2005 में पारित 30.04.2011 के निर्णय और डिक्री के माध्यम से स्थायी निषेधाज्ञा के साथ-साथ अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए वाद का आदेश दिया; प्रकाश नारायण शुक्ला एवं अन्य बनाम हरि बक्स सिंह एवं अन्य और प्रतिवादी-प्रतिवादीगण को निर्देश दिया गया था कि वे विवादित भूमि पर, जिसे दा, या, मा, का, बा, खा दा के रूप में दिखाया गया है, मुकदमे के लंबित रहने के दौरान किए गए निर्माण को हटा दें। विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर प्रतिवादी-प्रतिवादीगण द्वारा सिविल अपील संख्या 110/2011 दायर की गई थी, जिस पर प्रतिवादी-प्रतिवादीगण द्वारा बहस नहीं की जा रही थी और बार-बार स्थगित की जा रही थी, इसलिए, 04.01.2022 को अपील के स्थगन के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया गया क्योंकि वादी-अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा स्थगन पर गंभीर आपत्ति भी उठाई गई थी। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने पूर्ववर्ती द्वारा पारित आदेश, जिसमें स्थगन के लिए आवेदन को खारिज कर दिया गया था, तथा उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश और वादी-अपीलकर्तागण के इस तर्क पर विचार करने के बाद कि चूंकि प्रतिवादी-प्रतिवादी न्यायालय द्वारा पर्याप्त अवसर दिए जाने के बावजूद अपील पर बहस नहीं कर रहे हैं और इन परिस्थितियों में अपील को लापरवाही से खारिज करने के बजाय, गुण-दोष के आधार पर आदेश पारित करना उचित होगा, वादी-अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और उनके तर्कों पर विचार करने के बाद अपील का फैसला किया।

8. विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपील में उठाए गए आधारों और वादी-अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्तागण द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करते हुए दो आधारों पर अपील स्वीकार की, जिनमें से पहला यह है कि मुकदमे के लिखित बयान के पैराग्राफ 44 में समयबाधित होने की विशिष्ट दलील के बावजूद, कोई मुद्दा तैयार नहीं किया गया है और यदि मुद्दा तैयार किया गया होता, तो प्रतिवादी-प्रतिवादीगण को साक्ष्य प्रस्तुत करके उसे साबित करना होता और पक्षकारों ने तदनुसार साक्ष्य प्रस्तुत किए होते। दूसरा यह है कि हालांकि आयोग की रिपोर्ट रिकॉर्ड में थी, लेकिन उस पर गुण-दोष के आधार पर निर्णय नहीं किया गया और अतिरिक्त मुद्दे को तैयार करने और आयोग की रिपोर्ट के गुण-दोष के आधार पर निपटारे और दोनों पक्षों को सुनवाई का

अवसर देने के बाद, प्रकरण को नए सिरे से गुण-दोष के आधार पर निर्णय के लिए अवर न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को रद्द करने के बाद प्रकरण को वापस भेज दिया।

9. उपर्युक्त के मददेनजर, इस अपील में विचारणीय प्रथम प्रश्न यह है कि क्या अवर अपीलीय न्यायालय ने सुनवाई के लिए निर्धारित तिथि पर अपील दायर करने वाले प्रतिवादी-प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता की अनुपस्थिति में अपील पर निर्णय लेने और उसे स्वीकार करने में कोई अवैधता या त्रुटि की है।

10. सीपीसी के आदेश 41 के नियम 17 में अपीलकर्ता की चूक के लिए अपील खारिज करने का प्रावधान है। नियम 17 के उपनियम 1 को उच्च न्यायालय संशोधन द्वारा संशोधित किया गया है, जिसमें "निर्धारित दिन पर, या किसी अन्य दिन जिस दिन सुनवाई स्थगित की जा सकती है" शब्दों को हटा दिया गया है। उच्च न्यायालय संशोधन सहित सीपीसी के आदेश 41 के नियम 17 का सारांश नीचे दिया गया है:

17. व्यतिक्रम के लिए अपील खारिज करना- (1) जहां नियत दिन को, या किसी अन्य दिन को, जिसके लिए सुनवाई स्थगित की जा सकती है, अपीलकर्ता उस समय उपस्थित नहीं होता है जब अपील की सुनवाई के लिए पुकार की जाती है, वहां न्यायालय आदेश दे सकता है कि अपील खारिज कर दी जाए।

[स्पष्टीकरण.- इस उपनियम की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह न्यायालय को अपील को गुण-दोष के आधार पर खारिज करने का अधिकार देती है।]

(2) अपील की एकपक्षीय सुनवाई - जहां अपीलकर्ता उपस्थित होता है और प्रत्यर्थी उपस्थित नहीं होता है, वहां अपील की एकपक्षीय सुनवाई की जाएगी।

उच्च न्यायालय संशोधन

इलाहाबाद- उपनियम (1) में "निर्धारित दिन पर, या किसी अन्य दिन जिस दिन सुनवाई स्थगित की जा सकती है" शब्दों को हटा दिया गया है।"

11. उच्च न्यायालय संशोधन द्वारा संशोधित आदेश 41 के उपरोक्त नियम 17 के उपनियम 1 में यह प्रावधान है कि "जहाँ अपील की सुनवाई के लिए बुलाए जाने पर अपीलकर्ता उपस्थित नहीं होता है, वहाँ न्यायालय अपील को खारिज करने का आदेश दे सकता है।" उपनियम 1 में 01.02.1977 से जोड़ा गया स्पष्टीकरण यह प्रावधान करता है कि इस उपनियम की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह न्यायालय को अपील को गुण-दोष के आधार पर खारिज करने का अधिकार देती है। इस प्रकार, जहाँ अपील की सुनवाई के लिए बुलाए जाने पर अपीलकर्ता उपस्थित नहीं होता है, वहाँ न्यायालय अपील को खारिज कर सकता है, लेकिन अपीलकर्ता की अनुपस्थिति में इसे गुण-दोष के आधार पर खारिज नहीं किया जाएगा।

12. वर्तमान प्रकरण में, प्रतिवादी-प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता, जिन्होंने अवर अपीलीय न्यायालय में अपील दायर की थी, ने उस तिथि पर स्थगन की मांग की जिस दिन अपील की सुनवाई होनी थी। वादी-अपीलकर्तागण ने इसका इस आधार पर विरोध किया कि पर्याप्त अवसर दिए जाने के बावजूद, प्रतिवादी-प्रतिवादी

अपील पर बहस नहीं कर रहे हैं। अवर अपीलीय न्यायालय ने उनके पूर्ववर्ती द्वारा पूर्व में दिए गए आवेदन और आपति तथा अनुरोध की अस्वीकृति और इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा विविध एकल संख्या 32718/2018; हरि बक्स सिंह बनाम अपर जिला न्यायाधीश न्यायालय संख्या 1 सुल्तानपुर एवं अन्य में पारित दिनांक 02.11.2018 के आदेश पर विचार करते हुए, वादी-अपीलकर्तागण ने अपील पर बहस नहीं की। जिसमें यह माना गया कि प्रकरण को स्थगित नहीं किया जाएगा, स्थगन के अनुरोध को खारिज कर दिया और वादी-अपीलकर्तागण के विरोध पर विचार करते हुए और यह दर्ज करते हुए कि पर्याप्त अवसर दिए जाने के बावजूद, प्रतिवादी-प्रतिवादी, उसमें अपीलकर्ता सुनवाई में भाग नहीं ले रहे हैं, अपील को कारणात्मक तरीके से खारिज करने के बजाय गुण-दोष के आधार पर आदेश पारित करना उचित होगा। इसके बाद अपील के आधारों और वादी-अपीलकर्तागण के तर्कों पर विचार करने के लिए आगे बढ़ा और इस आदेश के पैराग्राफ 8 में संदर्भित पूर्वोक्त आधारों पर अपील को अनुमति दी। इस प्रकार सबसे पहले अपील को अपीलकर्तागण यानी प्रतिवादी-प्रतिवादीगण की अनुपस्थिति में अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा गुण-दोष के आधार पर खारिज नहीं किया गया है। दूसरे, अपील में उठाए गए आधारों और वादी-अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ताओं के तर्कों पर विचार करने के बाद, अवर अपीलीय न्यायालय ने पाया कि विद्वान अवर न्यायालय द्वारा प्रक्रियागत त्रुटियाँ की गई हैं और अपील स्वीकार कर ली तथा डिक्री को रद्द करते हुए प्रकरण को गुण-दोष के आधार पर नए सिरे से निपटाने के लिए वापस भेज दिया। इसलिए, वादी-अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ताओं का तर्क गलत है और विधि की दृष्टि में मान्य नहीं है क्योंकि अपील गुण-दोष के आधार पर खारिज नहीं की गई है या यहाँ तक कि प्रकरण का अंतिम रूप से निर्णय भी नहीं हुआ है। वैसे भी, अपील दायर करने वाले प्रतिवादी-प्रतिवादी इससे व्यथित नहीं हैं।

13. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **अब्दुर रहमान एवं अन्य बनाम अतीफा बेगम एवं अन्य (पूर्वोक्त)** प्रकरण में यह निर्णय दिया कि आदेश 41 के नियम 17(1) सीपीसी के स्पष्टीकरण में यह कहा गया है कि इस उप-नियम में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह समझा जाए कि न्यायालय को अपीलकर्ता के अधिवक्ता की अनुपस्थिति में अपील को गुण-दोष के आधार पर खारिज करने का अधिकार है। इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने **जानकी प्रसाद बनाम संजय कुमार एवं अन्य (पूर्वोक्त)** प्रकरण में भी यही दृष्टिकोण अपनाया है।

14. अब प्रश्न यह उठता है कि क्या प्रक्रियागत त्रुटियाँ, जिनके आधार पर अवर अपीलीय न्यायालय ने अपील स्वीकार की है, ऐसी हैं, जिन पर अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा विचार और निर्णय नहीं किया जा सकता था और प्रकरण को अवर अपीलीय न्यायालय के निर्देशानुसार नए सिरे से निर्णय करने के लिए अनिवार्य रूप से विचारण न्यायालय को वापस भेजा जाना था, जिसे सीपीसी के आदेश 43 नियम (1) (यू) के तहत अपील में देखा जाना है।

15. 27. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **नारायणन बनाम कुमारन एवं अन्य (2004) 4 एससीसी 26** के प्रकरण में यह माना है कि यह पूरी तरह सुरक्षित है कि आदेश 43 नियम (1) खंड (यू) के तहत अपील की सुनवाई

केवल धारा 100 में उल्लिखित आधार पर ही की जानी चाहिए। निर्णय का प्रासंगिक पैराग्राफ-17 नीचे उद्धृत है :-

"17. उपरोक्त नियम से यह स्पष्ट है कि रिमांड आदेश के विरुद्ध अपील केवल उन्हीं प्रकरण में होगी जिनमें डिफेंडेंट के विरुद्ध अपील की जा सकती है यदि अपील न्यायालय ने रिमांड आदेश देने के बजाय उस निर्णय के आधार पर डिफेंडेंट पारित की हो जिस पर रिमांड आदेश पारित किया गया था। परीक्षण यह है कि क्या इन परिस्थितियों में रिमांड आदेश के विरुद्ध अपील की जा सकती है, जहाँ उसे केवल आदेश न मानकर डिफेंडेंट माना जाए। इन परिस्थितियों में, यह स्वीकार करना सर्वथा उचित है कि आदेश 43 नियम (1) खंड (यू) के अंतर्गत अपील की सुनवाई केवल धारा 100 में उल्लिखित आधार पर ही की जानी चाहिए। अतः, हम श्री टी.एल. वी. अय्यर के तर्क को स्वीकार करते हैं और यह मानते हैं कि आदेश 43 नियम (1) खंड (यू) के अंतर्गत अपील के अंतर्गत अपीलकर्ता तथ्यों के प्रश्नों पर बहस करने का हकदार नहीं है। इसलिए, हम मानते हैं कि इस खंड के तहत रिमांड के आदेश के खिलाफ अपील में, उच्च न्यायालय खुद को ऐसे तथ्यों, निष्कर्षों और निर्णयों तक सीमित रख सकता है और करना चाहिए, जिनका रिमांड के आदेश पर असर पड़ता है और निचली अपीलीय अदालत द्वारा प्राप्त तथ्यों के सभी निष्कर्षों को खारिज नहीं किया जा सकता है।

16. धारा 96 सीपीसी के तहत अपील एक पक्ष का मूल्यवान अधिकार है और सीपीसी की धारा 107 अपीलीय न्यायालय की शक्तियां प्रदान करती है, जो नीचे उद्धृत है :-

"107. न्यायालय की शक्तियां- (1) ऐसी शर्तों और सीमाओं के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाएं, अपील न्यायालय को शक्ति होगी-

(क) किसी प्रकरण का अंतिम रूप से निर्धारण करना;

(ख) किसी प्रकरण को रिमांड पर लेना;

(ग) मुद्दों को तैयार करना और उन्हें परीक्षण के लिए भेजना;

(घ) अतिरिक्त साक्ष्य लेना या लिये जाने वाले ऐसे साक्ष्य की अपेक्षा करना

(2) पूर्वोक्त के अधीन रहते हुए, अपील न्यायालय को वही शक्तियां प्राप्त होंगी और वह यथासम्भव उन्हीं कर्तव्यों का पालन करेगा जो इस संहिता द्वारा प्रारम्भिक अधिकारिता वाले न्यायालयों को उसमें संस्थित वादों के संबंध में प्रदत्त और अधिरोपित किए गए हैं।"

17. धारा 107 की उपर्युक्त उपधारा 1 के अनुसार, अपीलीय न्यायालय को, यदि आवश्यक हो, अतिरिक्त साक्ष्य लेने के बाद किसी प्रकरण का अंतिम रूप से निर्धारण करने, या विवादक विरचित करने, उसे सुनवाई के लिए भेजने और यदि आवश्यक हो, तो कोई साक्ष्य लेने की अपेक्षा करने, या प्रकरण को वापस भेजने की शक्ति है। सीपीसी की धारा 107 की उपधारा (2) में यह प्रावधान है कि, उपधारा (1) में किए गए प्रावधानों के अधीन रहते हुए, अपीलीय न्यायालय के पास वही शक्तियां और कर्तव्य होंगे जो उसमें संस्थित वादों के आरंभिक क्षेत्राधिकार वाले न्यायालयों को प्रदत्त और अधिरोपित हैं। इस प्रकार, प्रथम अपीलीय न्यायालय के पास अपील

का निर्णय करते समय विचारण न्यायालय की सभी शक्तियां होती हैं, इसलिए, अपीलीय न्यायालय से यह अपेक्षित है कि वह अपील का निर्णय करते समय पक्षकारों की सभी दलीलों, साक्ष्यों और अभिलेखों में उपलब्ध सामग्री पर विचार करे। इसलिए, यदि किसी दलील या साक्ष्य पर विचारण न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया है, तो प्रथम अपीलीय न्यायालय उस पर भी विचार कर सकता है और यदि आवश्यक हो तो प्रकरण को तैयार कर सकता है, और यदि साक्ष्य पर्याप्त हैं तो उसके आधार पर विचार कर सकता है या अतिरिक्त साक्ष्य ले सकता है या साक्ष्य को दर्ज करवा सकता है और अपील पर निर्णय करते समय तदनुसार निष्कर्ष दर्ज कर सकता है।

18. सी.पी.सी. का आदेश XLI नियम 31 अपीलीय न्यायालय के निर्णय की विषय-वस्तु आदि प्रदान करता है, जो नीचे उद्धृत है :-

“31. निर्णय की विषय-वस्तु, दिनांक और हस्ताक्षर— अपील न्यायालय का निर्णय लिखित में होगा और उसमें यह लिखा होगा— दर्ज किया गया है

(क) निर्धारण हेतु बिन्दु;

(ख) उस पर निर्णय;

(ग) निर्णय के कारण क्या हैं; और

(घ) जहां अपील की गई डिक्री को उलट दिया गया है या उसमें परिवर्तन कर दिया गया है, वहां अपीलकर्ता जिस अनुतोष का हकदार है, और जिस समय वह सुनाई जाती है, उस पर न्यायाधीश या उससे सहमत न्यायाधीशों द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे और तारीख डाली जाएगी।

इलाहाबाद... नियम के अंत में पूर्ण विराम के स्थान पर अर्धविराम लगाएं और निम्नलिखित जोड़ें:

“परन्तु जहां पीठासीन न्यायाधीश खुले न्यायालय में किसी आशुलिपिक को लिखवाकर अपना निर्णय सुनाता है, वहां इस प्रकार सुनाए गए निर्णय की प्रतिलिपि, ऐसे संशोधन के पश्चात्, जो आवश्यक समझा जाए, न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित की जाएगी और उस पर उसके सुनाए जाने की तारीख अंकित होगी।”

19. उपर्युक्त के मद्देनजर, अपीलीय न्यायालय को निर्णय के लिए अपने कारणों को दर्ज करना आवश्यक है और वह उस डिक्री को उलट या परिवर्तित कर सकता है जिसके विरुद्ध अपील की गई है और ऐसे प्रकरण में अपीलकर्ता जिस राहत का हकदार है, उसे भी बदल सकता है। इसलिए, अपीलीय न्यायालय न केवल विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलट सकता है, बल्कि एक अलग दृष्टिकोण भी अपना सकता है और यह विचारण न्यायालय के रूप में रिकॉर्ड पर दलीलों, साक्ष्य और सामग्री पर विचार करने और विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों पर विचार करने और विचारण न्यायालय के रूप में रिकॉर्ड पर दलीलों, साक्ष्य और सामग्री का मूल्यांकन करने के बाद यह देखने के बाद किया जा सकता है कि क्या उन्हें सही ढंग से और विधि के अनुसार दर्ज किया गया है या नहीं। ऐसा इसलिए है क्योंकि यदि कोई दलील या साक्ष्य विचारण न्यायालय द्वारा विचार के लिए छोड़ दिया गया है, तो किसी भी पक्ष के साथ अन्याय से बचने और प्रकरण का अंतिम

रूप से निर्धारण करने के लिए, यदि ऐसा किया जा सकता है, तो प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा उचित रूप से उस पर विचार किया जा सकता है।

20. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *वसंत गणेश दामले बनाम श्रीकांत न्यंबक दातार एवं अन्य (2002) 4 एससीसी 183* के प्रकरण में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अपील को वाद का विस्तार माना जाता है क्योंकि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 107 के अंतर्गत, अपीलीय न्यायालय को संहिता द्वारा मूल अधिकार क्षेत्र वाले न्यायालयों को उसमें स्थित वादों के संबंध में प्रदत्त समान शक्तियाँ प्राप्त हैं। प्रासंगिक अनुच्छेद-9 नीचे उद्धृत है :-

"9. अपील को मुकदमे का विस्तार माना जाता है क्योंकि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 107 के अंतर्गत, अपीलीय न्यायालय को वही शक्तियाँ प्राप्त हैं जो संहिता द्वारा आरंभिक अधिकारिता वाले न्यायालयों को संहिता में संस्थित वादों के संबंध में प्रदत्त हैं। अपीलीय न्यायालय द्वारा ऐसी शक्ति का प्रयोग संहिता के अंतर्गत विचारण न्यायालय द्वारा "यथासंभव" किया जा सकता है। यदि विचारण न्यायालय को प्रदत्त शक्तियाँ संहिता के अंतर्गत न होकर किसी विशिष्ट कानून के अंतर्गत हैं, तो यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि क्या ऐसी शक्ति का प्रयोग अपीलीय न्यायालय द्वारा भी किया जाना था। ऐसी स्थिति का निर्धारण, स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा अपीलीय न्यायालय को शक्ति प्रदान करने के विधायी आशय को ध्यान में रखते हुए, निर्दिष्ट विधि का संदर्भ लेकर किया जा सकता है।"

21. *मल्लुरु मल्लप्पा (मृत) जरिए विधिक उत्तराधिकारी बनाम कुरुवथप्पा और अन्य (पूर्वोक्त)* में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि यह विधि की एक स्थापित स्थिति है कि एक अपील मूल न्यायालय की कार्यवाही की निरंतरता है। आम तौर पर, अपीलीय क्षेत्राधिकार में विधि के साथ-साथ तथ्य पर पुनर्विचार शामिल होता है और एक पीड़ित व्यक्ति द्वारा इसका आह्वान किया जाता है। पहली अपील अपीलकर्ता का एक मूल्यवान अधिकार है और इसमें विचारण न्यायालय द्वारा तय किए गए तथ्य और विधि के सभी प्रश्न पुनर्विचार के लिए खुले हैं, धारा 100 सीपीसी के तहत दूसरी अपील के विपरीत। इसलिए, पहली अपीलीय न्यायालय को सभी मुद्दों पर खुद को संबोधित करने और कारण बताते हुए प्रकरण का फैसला करने की आवश्यकता है। पहली अपील की न्यायालय को विधि के सभी मुद्दों के साथ-साथ तथ्य और पक्षों द्वारा पेश किए गए साक्ष्य, मौखिक और साथ ही दस्तावेजी के साथ निपटने के बाद ही अपने निष्कर्ष दर्ज करने चाहिए।

"10. सीपीसी की धारा 96 में किसी भी न्यायालय द्वारा पारित डिक्री से अपील दायर करने का प्रावधान है, जो मूल अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए ऐसी न्यायालयों के फैसलों से अपील सुनने के लिए अधिकृत न्यायालय में अपील दायर करती है। तात्कालिक प्रकरण में, विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री से अपील उच्च न्यायालय में होती है। सीपीसी में 'अपील' शब्द को परिभाषित नहीं किया गया है। ब्लैक की लॉ डिक्शनरी (7वां संस्करण) एक अपील को "एक ऐसी कार्यवाही के रूप में परिभाषित करती है, जो किसी फैसले को उच्च प्राधिकारी के समक्ष लाकर उस पर पुनर्विचार करवाती है।" यह अपील के तहत आदेश में किसी भी संभावित त्रुटि को

सुधारने के लिए अधीनस्थ न्यायालय के फैसले की उच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक जांच है। विधि अपील का उपाय प्रदान करता है क्योंकि यह मान्यता है कि न्यायिक स्तरों का संचालन करने वाले भी त्रुटियां करते हैं।

11. हरि शंकर बनाम राव गिरधारी लाल चौधरी 1 प्रकरण में यह माना गया कि अपील के अधिकार के साथ-साथ विधि के आधार पर पुनः सुनवाई का अधिकार भी जुड़ा हुआ है, जब तक कि अपील का अधिकार प्रदान करने वाला विधि पुनः सुनवाई को किसी तरह से सीमित न करे, जैसा कि सी.पी.सी. के तहत उत्पन्न होने वाली दूसरी अपील में किया गया है।

12. शंकर रामचन्द्र अभ्यंकर बनाम कृष्णाजी दत्तात्रेय बापट 2 में यह इस प्रकार आयोजित किया गया था:

5. स्टोरी की प्रसिद्ध रचना संविधान (संयुक्त राज्य अमेरिका का), खंड 2, अनुच्छेद 1761 में कहा गया है कि अपीलीय क्षेत्राधिकार का आवश्यक मानदंड यह है कि यह पहले से स्थापित किसी प्रकरण में कार्यवाही को संशोधित और सही करता है और उस प्रकरण को बनाता नहीं है। अपीलीय क्षेत्राधिकार का प्रयोग विभिन्न रूपों में किया जा सकता है और वास्तव में, किसी भी रूप में जिसमें विधानमंडल एआईआर 1963 एससी 698 1969 (2) एससीसी 74 निर्धारित करना चुन सकता है। अनुच्छेद के अनुसार 1762 अपीलीय क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के सबसे सामान्य तरीके, कम से कम जो संयुक्त राज्य अमेरिका में सबसे अधिक जात हैं, त्रुटि की एक रिट द्वारा, या एक अपील द्वारा, या एक अवर न्यायाधिकरण से एक मुकदमे को हटाने की कुछ प्रक्रिया द्वारा हैं। अपील नागरिक विधि की उत्पत्ति की एक प्रक्रिया है और एक प्रकरण को हटाती है, पूरी तरह से तथ्य के साथ-साथ विधि को भी समीक्षा और पुनर्विचार के अधीन करती है...

13. विधि की यह स्थापित स्थिति है कि अपील मूल न्यायालय की कार्यवाही की निरंतरता है। सामान्यतः, अपीलीय क्षेत्राधिकार में विधि के साथ-साथ तथ्य पर भी पुनर्विचार शामिल होता है और इसका आह्वान पीड़ित व्यक्ति द्वारा किया जाता है। प्रथम अपील अपीलकर्ता का एक मूल्यवान अधिकार है और इसमें विचारण न्यायालय द्वारा विनिश्चित तथ्य और विधि के सभी प्रश्न पुनर्विचार के लिए खुले हैं। इसलिए, प्रथम अपीलीय न्यायालय से यह अपेक्षित है कि वह सभी मुद्दों पर स्वयं विचार करे और कारण बताते हुए प्रकरण का निर्णय करे। प्रथम अपील न्यायालय को विधि के साथ-साथ तथ्य के सभी मुद्दों और पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों पर विचार करने के बाद ही अपने निष्कर्ष दर्ज करने चाहिए। प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय में सभी मुद्दों और विवादों पर तर्कों द्वारा समर्थित निष्कर्ष और सचेत विचार प्रदर्शित होने चाहिए [देखें: संतोष हजारी बनाम पुरुषोत्तम तिवारी (मृत) जरिए उत्तराधिकारी, मधुकर और अन्य बनाम संग्राम और अन्य, बी.एम. नारायण गौड़ा बनाम शांतम्मा (मृत) जरिए उत्तराधिकारी और अन्य, एच.के.एन. स्वामी बनाम इरशाद बसिथ (मृत) जरिए उत्तराधिकारी और मेसर्स श्री राजा लक्ष्मी डाइंग वर्क्स बनाम रंगास्वामी चेट्टियार]।

14. सी.पी.सी. की धारा 96 के अंतर्गत प्रथम अपील, धारा 100 के अंतर्गत द्वितीय अपील से पूर्णतः भिन्न है। धारा 100 स्पष्ट रूप से द्वितीय अपील पर रोक लगाती है, जब तक कि किसी प्रकरण में विधि का प्रश्न अंतर्गस्त न हो और इस प्रकार अंतर्गस्त विधि का प्रश्न सारवान प्रकृति का न हो।”

22. सीपीसी के आदेश 41 के नियम-23, 23-ए और 25 में दिए गए रिमांड के प्रावधान रिमांड के मुद्दे पर विचार करने के लिए प्रासंगिक हैं, जिनका उपयोग अपील पर निर्णय लेते समय किया जा सकता है। इन्हें नीचे उद्धृत किया गया है :-

"23. अपील न्यायालय द्वारा प्रकरण का प्रतिप्रेषण- जहां वह न्यायालय, जिसके निर्णय के विरुद्ध अपील की गई है, ने किसी प्रारंभिक बिन्दु पर वाद का निपटारा कर दिया है और अपील में निर्णय उलट दिया गया है, वहां अपील न्यायालय, यदि वह उचित समझे, आदेश द्वारा प्रकरण को प्रतिप्रेषित कर सकता है, और आगे यह निर्देश दे सकता है कि इस प्रकार प्रतिप्रेषित प्रकरण में कौन से मुद्दे या मुद्दों पर विचार किया जाएगा, और वह अपने निर्णय और आदेश की एक प्रतिलिपि उस न्यायालय को भेजेगा, जिसके निर्णय के विरुद्ध अपील की गई है, जिसमें यह निर्देश होगा कि वह वाद को सिविल वादों के रजिस्टर में उसके मूल क्रमांक के अधीन पुनः ग्रहण करे, और वाद का अवधारण करने के लिए आगे बढ़े; और मूल परीक्षण के दौरान अभिलिखित साक्ष्य (यदि कोई हो), सभी उचित अपवादों के अधीन रहने हुए, प्रतिप्रेषण के पश्चात् परीक्षण के दौरान साक्ष्य होगा।

उपरोक्त नियम 23 में निम्नलिखित इलाहाबाद उच्च न्यायालय संशोधन किया गया है:

- (i) 'और अपील में डिक्री उलट दी जाती है' शब्दों के पश्चात् निम्नलिखित अंतःस्थापित करें, अर्थात्:
"या जहां अपीलीय न्यायालय अपील के अधीन डिक्री को उलटते या रद्द करते समय प्रकरण को वापस भेजना न्याय के हित में आवश्यक समझता है, वहां वह"; और
- (ii) उसके बाद आने वाले शब्दों "अपीलीय न्यायालय" को हटा दें और निम्नलिखित शब्दों को भी हटा दें
"यदि वह उचित समझे", शब्द "हो सकता है" के बाद आता है।

23.(क)- अन्य प्रकरण में रिमांड- जहां वह न्यायालय, जिसके निर्णय के विरुद्ध अपील की गई है, ने प्रकरण का निपटारा प्रारंभिक बिन्दु के अलावा किसी अन्य आधार पर किया है, और निर्णय अपील में उलट दिया गया है और पुनः विचारण आवश्यक समझा गया है, वहां अपील न्यायालय को वही शक्तियां प्राप्त होंगी जो उसे नियम 23 के अधीन प्राप्त हैं।

25. जहां अपील न्यायालय विवाद्यों को विरचित कर सकेगा और उन्हें उस न्यायालय को विचारण के लिए निर्दिष्ट कर सकेगा जिसकी डिक्री के विरुद्ध अपील की गई है। - जहां वह न्यायालय, जिसके डिक्री के विरुद्ध अपील की गई है, किसी विवाद्यक को विरचित करने या विचारण करने में, या किसी तथ्य के प्रश्न का अवधारण करने में चूक गया है, जो अपील न्यायालय को वाद के गुण-दोष के आधार पर सही निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है, वहां अपील न्यायालय, यदि आवश्यक हो, विवाद्यक विरचित कर सकेगा और उन्हें

उस न्यायालय को विचारण के लिए निर्दिष्ट कर सकेगा जिसकी डिक्री के विरुद्ध अपील की गई है, और ऐसे प्रकरण में ऐसे न्यायालय को अपेक्षित अतिरिक्त साक्ष्य लेने का निर्देश देगा; और ऐसा न्यायालय ऐसे विवादों पर विचारण करने के लिए अग्रसर होगा, और साक्ष्य को अपील न्यायालय को, उस पर अपने निष्कर्षों और उसके कारणों सहित, ऐसे समय के भीतर वापस कर देगा, जो अपील न्यायालय द्वारा नियत किया जाए या समय-समय पर उसके द्वारा बढ़ाया जाए।"

23. उपर्युक्त के मददेनजर, इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा संशोधित नियम 23 यह है कि 'जहां वह न्यायालय, जिसके निर्णय के विरुद्ध अपील की गई है, ने किसी प्रारंभिक बिन्दु पर वाद का निपटारा कर दिया है और निर्णय को अपील में उलट दिया गया है या जहां अपीलीय न्यायालय अपील के अधीन निर्णय को उलटते या अपास्त करते समय न्याय के हित में प्रकरण को वापस भेजना आवश्यक समझता है, वहां वह आदेश द्वारा प्रकरण को वापस भेज सकता है, और आगे निर्देश दे सकता है कि इस प्रकार वापस भेजे गए प्रकरण में कौन से मुद्दे या मुद्दों पर विचार किया जाएगा, और अपने निर्णय और आदेश की एक प्रति उस न्यायालय को भेजेगा, जिसके निर्णय के विरुद्ध अपील की गई है, इस निर्देश के साथ कि वह वाद को सिविल वादों के रजिस्टर में उसकी मूल संख्या के अंतर्गत पुनः स्वीकार करे, और वाद का निर्धारण करने के लिए आगे बढ़े; और मूल परीक्षण के दौरान अभिलिखित साक्ष्य (यदि कोई हो), सभी उचित अपवादों के अधीन, वापस भेजने के बाद परीक्षण के दौरान साक्ष्य होगा।' उपर्युक्त नियम 23(ए) उस अपील के संबंध में प्रावधान करता है, जो किसी प्रारंभिक बिंदु के अलावा किसी अन्य आधार पर दी गई डिक्री के खिलाफ दायर की गई है और अपील में डिक्री को उलट दिया जाता है और पुनः सुनवाई आवश्यक समझी जाती है, अपीलीय न्यायालय के पास नियम 23 के तहत प्राप्त समान शक्तियां होंगी। उपर्युक्त दोनों नियमों में प्रथम अपीलीय न्यायालय की शक्तियां नियम 23 के समान ही हैं, जिसके अनुसार अपील में डिक्री को उलट दिए जाने की स्थिति में अपीलीय न्यायालय प्रकरण को पुनः सुनवाई के लिए वापस भेज सकता है। नियम 25 उन आकस्मिकताओं का प्रावधान करता है, जिनमें अपीलीय न्यायालय मुद्दे तैयार कर सकता है और उन पर साक्ष्य लेने और उक्त मुद्दों पर सुनवाई के लिए प्रकरण को विचारण न्यायालय को भेज सकता है, जो उन्हें अपने निष्कर्षों के साथ अपीलीय न्यायालय को भेजेगा और अपीलीय न्यायालय तदनुसार अपील का फैसला कर सकता है। नियम 25 में यह प्रावधान है कि जहाँ वह न्यायालय, जिसके निर्णय के विरुद्ध अपील की गई है, किसी ऐसे विवादक को विरचित या विचारण करने या तथ्य के किसी प्रश्न का निर्धारण करने में चूक गया है, जो गुण-दोष के आधार पर वाद के सही निर्णय के लिए आवश्यक है, वहाँ अपीलीय न्यायालय उक्त विवादक को विरचित कर सकता है और साक्ष्य प्राप्त करने तथा अपने निष्कर्षों और कारणों के साथ अपीलीय न्यायालय को संदर्भित करने के बाद, संबंधित न्यायालय को उस पर विचारण के लिए संदर्भित कर सकता है और फिर अपीलीय न्यायालय अपील पर निर्णय दे सकता है। इस प्रकार, यदि विचारण न्यायालय किसी ऐसे विवादक को विरचित या विचारण करने या तथ्य के किसी प्रश्न का निर्धारण करने में चूक गया है, तो यह प्रक्रिया अपनाई जा सकती है।

24. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **सैयदा रहीमुन्निसा बनाम मालन बीआई (मृत) जरिए उत्तराधिकारी एवं अन्य; 2016 (119) एलआर 485** के प्रकरण में यह अभिनिर्धारित किया है कि अपीलीय न्यायालय को प्रकरण को

अधीनस्थ न्यायालय में वापस भेजने का अधिकार सीपीसी के आदेश XLI नियम 23, 23-ए और 25 में निहित है। इसलिए, अपीलकर्ता के लिए रिमांड का दावा करने से पहले प्रकरण को इनमें से किसी भी प्रावधान के तहत लाना अनिवार्य है और अपीलीय न्यायालय को कारण दर्ज करने की आवश्यकता है कि उसने प्रकरण को विचारण न्यायालय में वापस भेजने के लिए सीपीसी के आदेश XLI के तीन नियमों में से किसी एक का सहारा क्यों लिया। प्रासंगिक पैराग्राफ 35 नीचे उद्धृत किया गया है :-

"35. विधि का यह स्थापित सिद्धांत है कि किसी प्रकरण को अवर न्यायालय में वापस भेजने का दावा करने के लिए, अपीलकर्ता के लिए पहले ऐसी दलील प्रस्तुत करना और फिर तथ्यों के आधार पर रिमांड का प्रकरण बनाना आवश्यक है। अपीलीय न्यायालय को प्रकरण को अधीनस्थ न्यायालय में वापस भेजने का अधिकार सीपीसी के आदेश 41 के नियम 23, 23-ए और 25 में निहित है। इसलिए, अपीलकर्ता के लिए रिमांड का दावा करने से पहले प्रकरण को इनमें से किसी भी प्रावधान के अंतर्गत लाना अनिवार्य है। अपीलीय न्यायालय को यह कारण दर्ज करना आवश्यक है कि उसने प्रकरण को अवर न्यायालय में वापस भेजने के लिए सीपीसी के आदेश 41 के तीन नियमों में से किसी एक का सहारा क्यों लिया। प्रतिवादीगण (प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता) द्वारा प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय के समक्ष यह बताने का कोई आधार न होने के कारण कि इन प्रकरण में रिमांड आदेश क्यों अपेक्षित है और यदि ऐसा है तो सीपीसी के आदेश 41 के किस नियम के अंतर्गत, और इसके अतिरिक्त, किसी भी निष्कर्ष के अभाव में, उच्च न्यायालय की ओर से ऐसा करने का कोई औचित्य नहीं था। प्रकरण को विचारण न्यायालय में वापस भेज दिया जाए। इसके बजाय, उच्च न्यायालय को अपीलों का गुण-दोष के आधार पर निर्णय करना चाहिए था। हालाँकि, हम अपीलों का गुण-दोष के आधार पर निर्णय करने के लिए प्रकरण को उच्च न्यायालय में वापस भेजना उचित नहीं समझते, बल्कि इन अपीलों में प्रकरण के गुण-दोष की जाँच करना उचित समझते हैं।"

25. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने जगन्नाथन बनाम राजू सिगमणि एवं अन्य (2012) 5 एससीसी 540 के प्रकरण में यह निर्णय दिया है कि जहाँ विचारण न्यायालय ने गुण-दोष के आधार पर वाद का निपटारा कर दिया है और अपील में डिक्री को उलट दिया गया है और अपीलीय न्यायालय ने पाया है कि पुनः विचारण आवश्यक है, वहाँ अपीलीय न्यायालय वाद को विचारणीय न्यायालय को पुनः भेज सकता है। प्रासंगिक अनुच्छेद-7 नीचे उद्धृत है :-

"(7) आदेश 41 नियम 23ए को 1 फरवरी, 1977 से अधिनियम संख्या 104 सन् 1976 द्वारा संहिता में शामिल किया गया है। संहिता के आदेश 41 नियम 23ए के अनुसार, अपीलीय न्यायालय मुकदमे को विचारण न्यायालय में वापस भेज सकता है, भले ही ऐसे मुकदमे का निपटारा गुण-दोष के आधार पर कर दिया गया हो। इसमें यह प्रावधान है कि जहाँ विचारण न्यायालय ने मुकदमे का निपटारा गुण-दोष के आधार पर कर दिया है और अपील में डिक्री को उलट दिया गया है और अपीलीय न्यायालय का मानना है कि पुनः सुनवाई आवश्यक है, तो अपीलीय न्यायालय मुकदमे को विचारण न्यायालय में वापस भेज सकता है।"

26. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **पी. पुरुषोत्तम रेड्डी एवं अन्य बनाम प्रताप स्टील्स लिमिटेड; (2002) 2 एससीसी 686** के प्रकरण में यह माना है कि अपीलीय न्यायालय को रिमांड का आदेश देते समय सावधानी बरतनी चाहिए, जब प्रकरण नियम 23 या नियम 23-ए या नियम 25 सीपीसी के अंतर्गत नहीं आता है और रिमांड का अनुचित आदेश मुकदमे को अनावश्यक रूप से लंबा खींच देता है, इसलिए इससे बचना चाहिए।

27. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **माया देवी (मृत) बनाम राज कुमारी बत्रा (मृत); (2010) 9 एससीसी 486** के प्रकरण में यह निर्णय दिया है कि अपीलीय न्यायालय को प्रकरण को वापस भेजना चाहिए या नहीं, यह अपीलीय न्यायालय के विवेक पर निर्भर करता है और यह काफी हद तक विवाद की प्रकृति, साक्ष्य की प्रकृति और सीमा, निर्धारण हेतु उठने वाले मुद्दों की जटिलता और क्या रिमांड के परिणामस्वरूप पक्षकारों के बीच मुकदमेबाजी में अनावश्यक रूप से देरी होगी, पर निर्भर करेगा। संबंधित अनुच्छेद-30 नीचे उद्धृत है :-

"(17) ऐसे प्रकरण में, जहाँ आदेश आगे अपील के अधीन है, कारणों का अभिलेखन एक अन्य दृष्टिकोण से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। अपीलीय न्यायालय या प्राधिकारी को आदेश देने वाले न्यायालय या प्राधिकारी के पास विद्यमान कारणों की जाँच करने का लाभ प्राप्त होना चाहिए। इसके विपरीत, अपीलीय आदेश में कारणों का अभाव अपीलीय न्यायालय या प्राधिकारी को उस लाभ से वंचित करता है और उस पर स्वयं प्रश्न की जाँच और निर्धारण करने का भारी दायित्व डालता है। किसी प्रकरण में अपीलीय न्यायालय या प्राधिकारी ऐसा कोई भी कार्य करने से इनकार कर सकता है और प्रकरण को नए और तर्कसंगत आदेश के लिए अवर न्यायालय या प्राधिकारी को वापस भेज सकता है। हालाँकि, यह कोई अटल नियम नहीं है, क्योंकि अपीलीय न्यायालय अपीलीय आदेश के समर्थन में कारणों के अभाव के बावजूद, प्रकरण की गुण-दोष के आधार पर जाँच कर सकता है और अंततः अपीलीय स्तर पर उस पर निर्णय दे सकता है। अपीलीय न्यायालय को प्रकरण को वापस भेजना चाहिए या नहीं, यह अपीलीय न्यायालय के विवेक पर निर्भर करता है और यह काफी हद तक विवाद की प्रकृति, साक्ष्य की प्रकृति और सीमा पर निर्भर करेगा, जिसे देखा जाना है। निर्धारण के लिए उठने वाले मुद्दों की जटिलता और क्या रिमांड के परिणामस्वरूप पक्षों के बीच मुकदमेबाजी में अनावश्यक रूप से लम्बाई बढ़ने वाली स्थिति उत्पन्न होगी, इस पर विचार किया जाना चाहिए। रिमांड आमतौर पर तभी टाला जाता है जब अपीलीय न्यायालय का मानना हो कि इससे मुकदमेबाजी लम्बी हो जाएगी।

28. **सत्यनाथ एवं अन्य बनाम सरोजमणि (पूर्वोक्त)** के प्रकरण में यह माना है कि आदेश XLI नियम 24 और 25 के प्रावधानों का उद्देश्य यह है कि यदि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा सभी मुद्दों पर साक्ष्य दर्ज किए जाते हैं, तो इससे प्रथम अपीलीय न्यायालय को मुद्दों को फिर से तैयार करके भी तथ्य के प्रश्नों पर निर्णय करने में सुविधा होगी। केवल तभी जब प्रथम अपीलीय न्यायालय पाता है कि पक्षकारों द्वारा कोई साक्ष्य नहीं दिया गया है, प्रथम अपीलीय न्यायालय पक्षकारों को ऐसे अतिरिक्त मुद्दों पर साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए कह सकता है, या तो अपीलीय न्यायालय के समक्ष या विचारण न्यायालय के समक्ष। विधि के ऐसे सभी प्रावधान और संशोधन एक उद्देश्य सुनिश्चित करने के लिए हैं, अर्थात्, पक्षकारों के बीच मुकदमे को शीघ्र अंतिम रूप देना। जिसका प्रासंगिक अनुच्छेद 34 नीचे उद्धृत किया गया है:

"34. आदेश XLI नियम 24 और 25 के प्रावधानों का उद्देश्य यह है कि यदि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा सभी मुद्दों पर साक्ष्य दर्ज कर लिए जाएँ, तो प्रथम अपीलीय न्यायालय को मुद्दों को पुनः तैयार करके भी तथ्यात्मक प्रश्नों पर निर्णय लेने में सुविधा होगी। केवल तभी जब प्रथम अपीलीय न्यायालय को पता चले कि पक्षकारों द्वारा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, प्रथम अपीलीय न्यायालय पक्षकारों को ऐसे अतिरिक्त मुद्दों पर, या तो अपीलीय न्यायालय के समक्ष या विचारण न्यायालय के समक्ष, साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए कह सकता है। विधि के ऐसे सभी प्रावधान और संशोधन एक ही उद्देश्य सुनिश्चित करने के लिए हैं, अर्थात्, पक्षकारों के बीच मुकदमे को शीघ्र अंतिम रूप देना।"

29. इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने **श्रीमती उर्मिला देवी बनाम श्याम सुन्दर एवं अन्य (पूर्वोक्त)** के प्रकरण में सी.पी.सी. के आदेश 41 नियम 23, 23-ए और नियम 25 के तहत रिमांड के प्रावधानों पर विचार करने के बाद यह माना कि अवर न्यायालय के पास पर्याप्त सामग्री है, तथापि, उसने उचित रूप से विवेचना नहीं की और यह रिमांड का कारण नहीं हो सकता।

30. उपरोक्त के मद्देनजर, अपील सुनवाई की निरंतरता में है, जिसमें सभी तथ्य और विधि प्रथम अपीलीय न्यायालय के विचारण के लिए खुले हैं, इसलिए, वह न केवल साक्ष्य पर विचार करने के बाद विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को पलट सकता है बल्कि अपने स्वयं के निष्कर्ष भी दर्ज कर सकता है और उस प्रकरण पर भी विचार कर सकता है जिसे विचारण न्यायालय द्वारा विचारण के लिए छोड़ दिया गया है, लेकिन निश्चित रूप से, दलीलों, साक्ष्य और रिकॉर्ड पर सामग्री के आधार पर अपने कारणों को दर्ज करना और यदि साक्ष्य की सराहना करते हुए इसे उचित महत्व देना, अपीलीय न्यायालय पाता है कि रिमांड अपरिहार्य है, तो वह इसके लिए निष्कर्ष दर्ज करने के बाद रिमांड कर सकता है क्योंकि रिमांड न केवल मुकदमेबाजी के जीवन को रिकॉर्ड करने को बढ़ाता है बल्कि मुकदमेबाजी पर मानसिक और शारीरिक रूप से भी बोझ डालता है।

31. वर्तमान प्रकरण के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, रिमांड का पहला आधार लिखित बयान के पैराग्राफ 44 में प्रतिवादी-प्रतिवादीगण द्वारा की गई विशिष्ट दलील के बावजूद सीमा के मुद्दे को तैयार न करना है। सीपीसी के आदेश XIV के नियम 1 के उपनियम (1) में प्रावधान है कि मुद्दा तब उठता है जब तथ्य या विधि का कोई महत्वपूर्ण प्रस्ताव एक पक्ष द्वारा पुष्टि की जाती है और दूसरे द्वारा अस्वीकार की जाती है। उपनियम (5) में प्रावधान है कि मुकदमे की पहली सुनवाई में न्यायालय, वादपत्र और लिखित बयानों को, यदि कोई हो, पढ़ने के बाद और आदेश X के नियम 2 के तहत जांच करने और पक्षकारों या उनके अधिवक्तागण को सुनने के बाद यह पता लगाएगा कि तथ्य या विधि के किन महत्वपूर्ण प्रस्तावों पर पक्षकारों में मतभेद है और उसके बाद उन मुद्दों को तैयार करने और दर्ज करने के लिए आगे बढ़ेगा जिन पर प्रकरण का सही निर्णय निर्भर करता प्रतीत होता है। आदेश XIV के नियम 5 के अंतर्गत, न्यायालय किसी भी समय डिक्री पारित करने से पहले मुद्दों में संशोधन कर सकता है या अतिरिक्त मुद्दे निर्धारित कर सकता है और आदेश XIV के नियम 5(2) के अंतर्गत किसी भी ऐसे मुद्दे को हटा सकता है जो गलत तरीके से तैयार किया गया हो। इसलिए, दलीलों के आदान-प्रदान के बाद, न्यायालय को सीपीसी के आदेश XIV के अंतर्गत प्रदान की गई प्रक्रिया के

अनुसार उन मुद्दों को निर्धारित करना होगा जिन पर पक्षकारों की दलीलों में मतभेद है, और जिन पर निर्णय लिया जाना आवश्यक है।

32. परिसीमा का मुद्दा एक ऐसा मुद्दा है जो प्रकरण की जड़ और न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से जुड़ा है, इसलिए, भले ही इसे उठाया न गया हो या मुद्दा तैयार न किया गया हो, संबंधित न्यायालय को प्रकरण में आगे बढ़ने से पहले इस पर विचार करना होगा। एक बार जब यह स्पष्ट रूप से अभिवचन कर दिया जाता है, तो परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 3 के अनुसार, न्यायालय को आगे बढ़ने से पहले इस पर विचार करना और निर्णय लेना होता है और समयबद्ध वाद खारिज किए जाने योग्य होता है। हालाँकि, परिसीमा का मुद्दा विधि और तथ्यों का एक मिश्रित प्रश्न है और कभी-कभी साक्ष्य के बिना इसका निर्णय नहीं हो पाता है। वर्तमान प्रकरण में विद्वान विचारण न्यायालय ने न तो परिसीमा का मुद्दा तैयार किया और न ही इस संबंध में कोई विशिष्ट निष्कर्ष दर्ज किया, तथापि, विद्वान विचारण न्यायालय ने प्रतिवादी-प्रतिवादीगण के गवाह अर्थात् डीडब्ल्यू-1 और पृष्ठ 9 पर उसकी जिरह में एक स्वीकारोक्ति दर्ज की है, जिसमें उसने कहा है कि जब प्रतिवादी-प्रतिवादीगण ने चारदीवारी और चबूतरे का निर्माण शुरू किया, तो प्रकाश नारायण आदि ने इसे रोक दिया और वाद दायर किया। इस प्रकार, प्रतिवादी-प्रतिवादीगण ने स्वयं स्वीकार किया कि जब उन्होंने विक्रय-पत्र के माध्यम से खरीदी गई भूमि से अधिक भूमि पर कब्जा करने के बाद निर्माण कार्य शुरू किया, तो वादी-प्रतिवादीगण द्वारा वाद संस्थित किया गया था। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने यद्यपि यह दर्ज किया कि विद्वान अवर न्यायालय ने इस संबंध में कोई मुद्दा तैयार नहीं किया है, परन्तु निर्णय के पृष्ठ 11 के पैरा 2 में उल्लेख किया है कि वाद समय-सीमा पार नहीं है, परन्तु इस पर विचार किए बिना और यह निष्कर्ष दर्ज किए बिना कि यह कैसे पर्याप्त नहीं है, तकनीकी आधार पर प्रकरण को प्रतिप्रेषित कर दिया, जबकि एक बार जब पक्षकारों ने वाद में शामिल मुद्दों के बारे में पूरी तरह से जानते हुए साक्ष्य प्रस्तुत कर दिए थे, भले ही कोई मुद्दा तैयार न किया गया हो और किसी अन्य मुद्दे पर निर्णय करते समय उस पर विचार किया गया हो, तो उक्त उद्देश्य के लिए प्रकरण को प्रतिप्रेषित करना केवल एक तकनीकी बात होगी और प्रतिप्रेषण को उचित नहीं ठहराया जा सकता। अवर अपीलीय न्यायालय भी इस पर विचार कर सकती थी क्योंकि प्रथम अपीलीय न्यायालय तथ्य और विधि का न्यायालय है और यदि आवश्यक हो, तो वह मुद्दे को तैयार कर सकती थी और उस पर निर्णय दे सकती थी, यदि पर्याप्त साक्ष्य और सामग्री अभिलेख में उपलब्ध हो। ऐसा न करने पर अतिरिक्त साक्ष्य भी लिए जा सकते थे या अभिलेखित करवाए जा सकते थे। अन्यथा भी, पक्षकारों को मुकदमे में शामिल मुद्दों के बारे में जानकारी होने के बावजूद, साक्ष्य प्रस्तुत किए गए और संबंधित प्रस्तुतियां दी गईं, कोई पूर्वाग्रह उत्पन्न नहीं हुआ, न ही यह कहा जा सकता है कि कार्यवाही केवल इस तकनीकी आधार पर दूषित हुई है और अपीलीय न्यायालय प्रकरण को अंतिम रूप से निर्धारित करने के लिए इस पर विचार कर सकता था और निर्णय दे सकता था, जब तक कि प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों में रिमांड अपरिहार्य न हो, जिसके लिए निष्कर्ष दर्ज किया जाना उत्तरदायी है।

33. माननीय उच्चतम न्यायालय ने *सईदा अख्तर बनाम अब्दुल अहद (पूर्वोक्त)* के प्रकरण में यह टिप्पणी की कि यह सत्य है कि विचारण न्यायालय ने कोई विशिष्ट मुद्दा नहीं बनाया, लेकिन विद्वान विचारण न्यायालय

द्वारा पारित निर्णय का मात्र अवलोकन करने से यह स्पष्ट हो जाएगा कि पक्षकार इस बारे में जानते थे और उन्होंने न केवल इस संबंध में साक्ष्य प्रस्तुत किए, बल्कि इस संबंध में अपने-अपने तर्क भी प्रस्तुत किए और यह माना कि द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय पर्याप्त और उचित कारण के बिना अवर न्यायालयों के तथ्यों के समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता था।

34. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **नागुबाई अम्मल एवं अन्य बनाम बी. शमा राव एवं अन्य (पूर्वोक्त)** प्रकरण में यह निर्णय दिया कि यह नियम ऐसे प्रकरण में लागू नहीं होता जहाँ पक्षकार यह जानते हुए मुकदमे में जाते हैं कि कोई विशेष प्रश्न विवादास्पद है, हालाँकि उस पर कोई विशिष्ट मुद्दा तैयार नहीं किया गया है, और उससे संबंधित साक्ष्य प्रस्तुत करने से पक्षकारों के प्रति कोई पूर्वाग्रह उत्पन्न होता है। प्रासंगिक अनुच्छेद 12 नीचे उद्धृत है:

"12. अपीलकर्तागण की ओर से यह तर्क दिया गया कि चूंकि याचिकाओं में लिस पेंडेंस की कोई दलील नहीं ली गई थी, इसलिए उस प्रश्न से संबंधित साक्ष्य पर उचित रूप से गौर नहीं किया जा सका, और यह कि प्रदर्श जे श्रृंखला के आधार पर कोई निर्णय नहीं दिया जा सका कि दिनांक 30-1-1920 की बिक्री लिस से प्रभावित थी; और सिद्दीक मोहम्मद शाह बनाम माउंट सरन और अन्य (1) में लॉर्ड डुनेडिन की टिप्पणियों पर भरोसा किया गया कि "किसी भी साक्ष्य की मात्रा उस दलील पर नहीं देखी जा सकती है जिसे कभी आगे नहीं रखा गया था"।

इस नियम का वास्तविक दायरा यह है कि जिन मुद्दों पर पक्षकारों ने वास्तव में मुकदमा चलाया था, उन पर दिए गए साक्ष्य को किसी अन्य भिन्न मुद्दे के निर्णय का आधार नहीं बनाया जाना चाहिए, जो पक्षकारों के मन में मौजूद ही नहीं था और जिस पर उन्हें साक्ष्य प्रस्तुत करने का कोई अवसर नहीं मिला। लेकिन यह नियम ऐसे प्रकरण में लागू नहीं होता जहाँ पक्षकार यह जानते हुए मुकदमे में जाते हैं कि कोई विशेष प्रश्न विवादास्पद है, हालाँकि उस पर कोई विशिष्ट मुद्दा तैयार नहीं किया गया है, और उससे संबंधित साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं।

इस श्रेणी के प्रकरण पर लागू नियम **रानी चंद्र कुंवर बनाम चौधरी नरपत सिंह: रानी चंद्र कुंवर बनाम राजा मकुंद सिंह (2)** में प्रतिपादित है। इसमें, प्रतिवादीगण ने मुकदमे के समय यह तर्क दिया कि वादी को गोद दे दिया गया था, और इसलिए वह उत्तराधिकार पाने का हकदार नहीं है। लिखित बयान में ऐसी कोई दलील नहीं दी गई थी; न ही उस पर कोई मुद्दा बनाया गया था। प्रिवी काउंसिल के समक्ष, वादी की ओर से यह तर्क दिया गया कि प्रस्तुत दलीलों के मद्देनजर, प्रतिवादीगण के लिए गोद लेने का प्रश्न ही नहीं उठता।

लॉर्ड एटकिंसन ने इस आपत्ति को खारिज करते हुए यह माना कि चूंकि दोनों पक्षों के बीच दत्तक ग्रहण के प्रश्न पर मुकदमा चल चुका था और वादी को कोई आश्चर्य नहीं हुआ था, इसलिए दत्तक ग्रहण के संबंध में दलील प्रतिवादीगण के लिए खुली थी और वास्तव में, प्रतिवादी उसी मुद्दे पर सफल रहे। इसलिए इस आपत्ति को खारिज किया जाना चाहिए।"

35. उपरोक्त निर्णय को इस न्यायालय द्वारा **आर्य प्रतिनिधि सभा और अन्य बनाम अरविंद निकेतन चरथावाल और अन्य (पूर्वोक्त)** के प्रकरण पर भरोसा किया गया है।

36. उपर्युक्त के मद्देनजर, भले ही अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए अनुसार परीक्षण न्यायालय द्वारा सीमा का विशेष मुद्दा तैयार नहीं किया गया था और रिकॉर्ड के आधार पर परीक्षण न्यायालय ने एक निष्कर्ष दर्ज किया है जो दर्शाता है कि वाद समयबद्ध नहीं है, वह उस पर विचार कर सकता था और उस पर एक निष्कर्ष दर्ज कर सकता था, यदि साक्ष्य पर्याप्त हैं तो एक मुद्दा तैयार करके, यदि आवश्यक हो, क्योंकि पहली अपील वाद की निरंतरता में है और अपीलीय न्यायालय के पास तथ्यों के साथ-साथ विधि के आधार पर वाद पर विचार करने की सभी शक्तियां हैं।

37. रिमांड का दूसरा आधार यह है कि आयोग की रिपोर्ट के गुण-दोष के आधार पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया है, जो कि रिकार्ड में है और प्रतिवादी-प्रतिवादीगण द्वारा उस पर कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई है।

38. सी.पी.सी. का आदेश XXVI कमीशन से संबंधित है। आदेश XXVI के नियम 9 और 10 स्थानीय जांच के लिए कमीशन से संबंधित हैं, जो वर्तमान प्रकरण में प्रासंगिक हैं और सुविधा के लिए पुनः प्रस्तुत किए गए हैं:

“9. स्थानीय जांच करने के लिए आयोग - किसी भी वाद में जिसमें न्यायालय किसी विवादित प्रकरण को स्पष्ट करने के लिए या किसी संपत्ति के बाजार मूल्य या किसी अंतःस्थ लाभ या नुकसान या वार्षिक शुद्ध लाभ की राशि का पता लगाने के प्रयोजन के लिए स्थानीय जांच को आवश्यक या उचित समझता है, न्यायालय ऐसे व्यक्ति को, जिसे वह ठीक समझे, एक कमीशन जारी कर सकता है जिसमें उसे ऐसी जांच करने और न्यायालय को उस पर रिपोर्ट देने का निर्देश दिया जाएगा:

परन्तु जहां राज्य सरकार ने ऐसे व्यक्तियों के बारे में नियम बनाए हैं जिन्हें ऐसा कमीशन जारी किया जाएगा, वहां न्यायालय ऐसे नियमों से आबद्ध होगा।

10. आयुक्त की प्रक्रिया- (1) आयुक्त, ऐसे स्थानीय निरीक्षण के पश्चात्, जैसा वह आवश्यक समझे, और अपने द्वारा लिए गए साक्ष्य को लेखबद्ध करने के पश्चात्, ऐसे साक्ष्य को अपने हस्ताक्षरित लिखित रिपोर्ट सहित न्यायालय को लौटा देगा।

(2) रिपोर्ट और अभिकथनों का वाद में साक्ष्य होना.- आयुक्त की रिपोर्ट और उसके द्वारा लिया गया साक्ष्य (किन्तु रिपोर्ट के बिना लिया गया साक्ष्य नहीं) वाद में साक्ष्य होगा और अभिलेख का भाग होगा; किन्तु न्यायालय या न्यायालय की अनुज्ञा से वाद का कोई भी पक्षकार आयुक्त से खुले न्यायालय में व्यक्तिगत रूप से परीक्षा कर सकेगा, जो उसे निर्दिष्ट या उसकी रिपोर्ट में उल्लिखित किसी विषय के संबंध में, या उसकी रिपोर्ट के संबंध में, या जिस रीति से उसने अन्वेषण किया है उसके संबंध में हो।

(3) आयुक्त की व्यक्तिगत रूप से परीक्षा की जा सकेगी- जहां न्यायालय किसी कारणवश आयुक्त की कार्यवाही से असंतुष्ट है, वहां वह ऐसी अतिरिक्त जांच करने का निर्देश दे सकेगा, जैसी वह ठीक समझे।

39. सीपीसी कार्यवाही के उपरोक्त नियम 10(2) के मददेनजर आयुक्त की रिपोर्ट और रिपोर्ट के साथ उनके द्वारा लिए गए साक्ष्य मुकदमे में साक्ष्य होंगे और रिकॉर्ड का हिस्सा होंगे। हालांकि, न्यायालय या न्यायालय की अनुमति से मुकदमे का कोई भी पक्ष आयुक्त से खुले न्यायालय में व्यक्तिगत रूप से पूछताछ कर सकता है, जो उन्हें संदर्भित या उनकी रिपोर्ट में उल्लिखित किसी भी प्रकरण, या उनकी रिपोर्ट के संबंध में, या जिस तरीके से उन्होंने जांच की है, के संबंध में हो। नियम 10 के उपनियम (3) के अनुसार, यदि न्यायालय किसी भी कारण से आयुक्त की कार्यवाही से असंतुष्ट है, तो वह आगे ऐसी जांच करने का निर्देश दे सकता है, जैसा वह उचित समझे। इसलिए, यदि न्यायालय को रिपोर्ट और कमीशन के दौरान उनके द्वारा लिए गए साक्ष्य पर कोई संदेह है, तो आयुक्त से व्यक्तिगत रूप से पूछताछ की जा सकती है और उसके बाद यदि न्यायालय का विचार है कि किसी और जांच की आवश्यकता है, तो वह इसके लिए निर्देश दे सकता है।

40. वर्तमान प्रकरण के तथ्यों पर विचार करते हुए, बेशक आयोग की रिपोर्ट रिकॉर्ड पर है, लेकिन प्रतिवादी-प्रतिवादीगण द्वारा इस पर कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई है और विचारण न्यायालय द्वारा ऐसा कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया गया है कि वह कार्यवाही और कमिश्नर की रिपोर्ट से संतुष्ट नहीं है, इसलिए, यह अंतिम है और यदि विचारण न्यायालय द्वारा इस पर विचार नहीं किया गया है और अवर अपीलीय न्यायालय का यह विचार है कि इस पर विचार किया जाना आवश्यक है, तो वह इस पर विचार कर सकती थी और इस पर विचार करने के बाद एक स्वतंत्र निष्कर्ष दर्ज किया जा सकता था और इसके बाद यदि अपीलीय न्यायालय का यह विचार है कि प्रकरण को रिमांड पर लेने की आवश्यकता है, तो वह विशिष्ट निष्कर्षों को दर्ज करके रिमांड पर ले सकती थी क्योंकि तकनीकी आधार पर योग्यता को प्रभावित किए बिना रिमांड मान्य नहीं है।

41. उपरोक्त के मददेनजर और प्रकरण के समग्र तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, यह न्यायालय इस विचार पर है कि अवर अपीलीय न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री को रद्द कर दिया है और प्रकरण को सीपीसी की धारा 96 के तहत अपीलीय न्यायालय के रूप में निपटने और सीपीसी की धारा 107 के तहत शक्तियों का प्रयोग करने के बिना प्रकरण को वापस भेज दिया है, आदेश -41, नियम -23, 23-ए और 25 और सीपीसी के आदेश 41 नियम 31 के तहत प्रावधान का पालन किए बिना निर्णय पारित किया है, इसलिए, अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश को अपास्त करने योग्य है और प्रकरण को अवर अपीलीय न्यायालय को विधि और इस आदेश में ऊपर की गई टिप्पणियों के अनुसार अपील पर नए सिरे से विचार करने और निर्णय लेने के लिए वापस प्रेषित किये जाने योग्य है।

42. अपील स्वीकार की जाती है। अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 1, सुल्तानपुर द्वारा सिविल अपील संख्या 110/2011; हरि बक्स सिंह एवं अन्य बनाम प्रकाश नारायण एवं अन्य में पारित दिनांक 04.01.2022 के आक्षेपित निर्णय एवं आदेश को एतद्वारा अपास्त किया जाता है। यह प्रकरण अवर अपीलीय

न्यायालय को वापस प्रेषित किया जाता है ताकि वह विधि और इस आदेश में ऊपर की गई टिप्पणियों के अनुसार सिविल अपील पर नए सिरे से विचार कर निर्णय ले सके। लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।

(2025) 2 ILRA 24

अपीलीय अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 11.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति रजनीश कुमार

आदेश से प्रथम अपील संख्या- 44/2021

अमरेंद्र बहादुर सिंह एवं अन्य

...अपीलकर्ता

बनाम

भारत संघ

...प्रतिवादी

अपीलकर्तागण की ओर से अधिवक्ता:

प्रदीप सिंह सोमवंशी

प्रतिवादी की ओर से अधिवक्ता:

विजय प्रताप सिंह, अमित शर्मा, हर्षा यादव

रेलवे दावे - रेलवे दुर्घटनाएं और अप्रिय घटनाएं (मुआवजा) नियमावली, 1990 - मुआवजा - ब्याज - रीना देवी सिद्धांत की प्रयोज्यता - संशोधित नियमों के तहत निर्धारित मुआवजा पहले के नियमों के तहत ब्याज सहित गणना की गई राशि से अधिक है - न्यायाधिकरण ने नए नियमों के तहत उच्च राशि के अनुसार मुआवजा देने का सही फैसला किया - ब्याज दुर्घटना की तारीख से नहीं, बल्कि फैसले की तारीख से दिया गया - भारत संघ बनाम रीना देवी, (2019) 3 एससीसी 572 के अनुसार, मुआवजे पर ब्याज केवल तुलनात्मक गणना के अनुसार अर्जित राशि पर देय है - न्यायाधिकरण की गणना में कोई त्रुटि नहीं - बिना दलील या कारण के एकमुश्त राशि वितरण का अनुरोध खारिज कर दिया गया - अपील गलत समझी गई और खारिज कर दी गई। (प्रस्तर 7,8, और 10)

अभिनिर्धारित:

कथित अप्रिय घटना 15.06.2015 को घटित हुई थी, जिसके संबंध में रेलवे दावा अधिकरण के समक्ष दावा याचिका दायर की गई थी, जिसे रेलवे दावा अधिकरण, लखनऊ पीठ, लखनऊ द्वारा वाद संख्या ओए /II/U/995/15 में पारित दिनांक 18.10.2019 के आक्षेपित निर्णय एवं अधिनिर्णय द्वारा स्वीकार कर लिया

गया है। दुर्घटना के समय 4 लाख रुपये की क्षतिपूर्ति राशि को रेलवे दुर्घटना एवं अप्रिय घटना (क्षतिपूर्ति) नियमावली, 1990 की अनुसूची के भाग-1 में दिनांक 22.12.2016 के जीएसआर 1165 (ई) के तहत संशोधन द्वारा बढ़ाकर 8 लाख रुपये कर दिया गया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारत संघ बनाम रीना देवी (पूर्वोक्त) के प्रकरण में यह निष्कर्ष निकाला है कि मुआवजा दुर्घटना की तिथि पर लागू ब्याज के साथ देय होगा, जिसे समय-समय पर दुर्घटना दावा प्रकरण के समान पैटर्न पर उचित माना जा सकता है और यदि गणना की गई राशि न्यायाधिकरण के अधिनिर्णय की तिथि पर निर्धारित राशि से कम है, तो दावेदार दोनों राशियों में से उच्चतर राशि के लिए हकदार होगा... (प्रस्तर 7)

उपर्युक्त के मददेनजर, मुआवजे की गणना निर्णय की तिथि पर दुर्घटना की तिथि पर लागू मुआवजे और उस पर समय-समय पर उचित समझे जाने वाले ब्याज पर विचार करते हुए की जाएगी और दुर्घटना की तिथि पर लागू मुआवजे की गणना निर्णय की तिथि तक उस पर ब्याज के साथ करने के बाद तथा वर्तमान लागू मुआवजे के साथ उसकी तुलना करने पर, जो भी अधिक हो, निर्णय की तिथि पर मुआवजे की वही राशि होगी, जिसके लिए दावेदार हकदार है। एक बार जब मुआवजे की राशि भारत संघ बनाम रीना देवी (पूर्वोक्त) के उपरोक्त निर्णय के पैराग्राफ 15.4 के मददेनजर निर्धारित की जानी है, तो अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क कि मुआवजे की निर्धारित राशि पर, दुर्घटना की तारीख से ब्याज दिया जाना चाहिए था, गलत है और यह मान्य नहीं है क्योंकि एक बार जब मुआवजे की उक्त राशि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में प्रदान की गई प्रक्रिया के अनुसार गणना करने के बाद अधिनिर्णय की तारीख को अर्जित होती है, तो ब्याज केवल अर्जित होने की तारीख से बाद की अवधि के लिए ही प्रदान किया जा सकता है क्योंकि ब्याज उस तारीख से पहले की अवधि के लिए प्रदान नहीं किया जा सकता है जिस पर यह अर्जित होता है। (प्रस्तर 8)

जहाँ तक अंजू एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य संबंधित पुनरीक्षण (पूर्वोक्त) प्रकरण में अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा लिए गए निर्णय का संबंध है, अपीलकर्तागण ने अपील में कोई आधार नहीं लिया है और यह दर्शाया है कि अपीलकर्ता को एक साथ पूरी धनराशि की आवश्यकता है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि न्यायालय द्वारा अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता से बार-बार यह अनुरोध करने के बावजूद कि यदि आवश्यक हो, तो वे एक हलफनामा और संशोधन हेतु आवेदन प्रस्तुत कर सकते हैं, जिस पर विचार किया जा सकता है, अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने ऐसा करने से इनकार कर दिया और अपील का आज ही निपटारा करने पर जोर दिया। इस प्रकार, अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता का तर्क गलत और मान्य नहीं है। (प्रस्तर 10)

अपील खारिज। (ई-14)

उद्धृत प्रकरण की सूची:

1. भारत संघ बनाम रीना देवी, (2019) 3 एससीसी 572

2. अंजू एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य संबंधित पुनरीक्षण, सिविल पुनरीक्षण संख्या 3730/2019 (पी एंड एच एचसी)

(माननीय न्यायमूर्ति रजनीश कुमार द्वारा पारित)

1. अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रदीप सिंह सोमवंशी और प्रतिवादी की विद्वान अधिवक्ता सुश्री हर्षा यादव को सुना गया।

2. अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दी गई एकमात्र दलील यह है कि ब्याज निर्णय की तारीख से दिया गया है, जबकि **भारत संघ बनाम रीना देवी; सिविल अपील संख्या 4945/2018** के प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अनुसार इसे घटना की तारीख से दिया जाना चाहिए था।

3. अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने **सिविल पुनरीक्षण संख्या 3730/2019 (ओ एंड एम); अंजू एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य** संबंधित पुनरीक्षण में पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के निर्णय का हवाला देते हुए यह तर्क दिया है कि विद्वान न्यायाधिकरण ने गलत और अवैध रूप से न्यायाधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत मुआवजे का भुगतान किश्तों में करने का निर्देश दिया है और कुल राशि जारी की जानी चाहिए। अतः, आक्षेपित निर्णय और अधिनिर्णय को तदनुसार संशोधित किया जाना चाहिए।

4. प्रतिपक्ष, प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि ब्याज भारत संघ बनाम रीना देवी के प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के अनुसार प्रदान किया गया है क्योंकि यदि घटना के बाद मुआवजे की राशि बढ़ाई जाती है तो मुआवजे के पुराने हक पर ब्याज की गणना करने के बाद प्रदान किया जा सकता है, यदि ब्याज के साथ अधिनिर्णय की तारीख पर यह अधिक है और तदनुसार मुआवजा और ब्याज प्रदान किया गया है, इसलिए, विवादित निर्णय और अधिनिर्णय में कोई अवैधता या त्रुटि नहीं है।

5. प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि मुआवजे की कुल राशि जारी करने का कोई आधार नहीं है और यह योजना दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के अनुसरण में तैयार की गई है, इसलिए, जब तक आधार नहीं लिया जाता है और कारण नहीं दिखाया जाता है, अपीलकर्ता एक साथ कुल राशि जारी करने का हकदार नहीं है।

6. उभय पक्ष के विद्वान अधिवक्ताओं के तर्कों पर विचार करने के पश्चात् मैंने अभिलेखों का अवलोकन किया है।

7. कथित अप्रिय घटना दिनांक 15.06.2015 को घटित हुई थी, जिसके संबंध में रेलवे दावा अधिकरण के समक्ष दावा याचिका दायर की गई थी, जिसे रेलवे दावा अधिकरण, लखनऊ पीठ, लखनऊ द्वारा प्रकरण संख्या

ओए //II/यू/995/15 में पारित दिनांक 18.10.2019 के आक्षेपित निर्णय एवं अधिनिर्णय द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। दुर्घटना के समय 4 लाख रुपये की क्षतिपूर्ति राशि को रेलवे दुर्घटना एवं अप्रिय घटना (क्षतिपूर्ति) नियमावली, 1990 की अनुसूची के भाग-I में दिनांक 22.12.2016 के जीएसआर 1165 (ई) के तहत संशोधन द्वारा बढ़ाकर 8 लाख रुपये कर दिया गया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **भारत संघ बनाम रीना देवी (पूर्वोक्त)** प्रकरण में यह निष्कर्ष निकाला है कि दुर्घटना की तिथि पर लागू मुआवज़ा, दुर्घटना दावा प्रकरण की तरह ही, समय-समय पर उचित समझे जाने वाले ब्याज सहित देय होगा और यदि इस प्रकार गणना की गई राशि न्यायाधिकरण के निर्णय की तिथि पर निर्धारित राशि से कम है, तो दावेदार दोनों राशियों में से उच्चतर राशि का हकदार होगा। उपरोक्त निर्णय का प्रासंगिक अनुच्छेद 15.4 नीचे उद्धृत है:

"15.4 तदनुसार, हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि दुर्घटना की तिथि पर लागू क्षतिपूर्ति, दुर्घटना दावा प्रकरण की तरह ही, समय-समय पर उचित समझे जाने वाले ब्याज सहित देय होगी। यदि इस प्रकार गणना की गई राशि न्यायाधिकरण के निर्णय की तिथि पर निर्धारित राशि से कम है, तो दावेदार दोनों राशियों में से उच्चतर राशि का हकदार होगा। यह आदेश उन निर्णयों को प्रभावित नहीं करेगा जो पहले ही अंतिम हो चुके हैं और जहाँ ऐसे निर्णयों को चुनौती देने की समय-सीमा समाप्त हो गई है, वहाँ यह आदेश अपने आप में विलम्ब की क्षमा का आधार नहीं होगा।"

8. उपर्युक्त के मद्देनजर, मुआवजे की गणना निर्णय की तिथि पर दुर्घटना की तिथि पर लागू मुआवजे और उस पर समय-समय पर उचित समझे जाने वाले ब्याज पर विचार करते हुए की जाएगी और दुर्घटना की तिथि पर लागू मुआवजे की गणना निर्णय की तिथि तक उस पर ब्याज के साथ करने के बाद और वर्तमान लागू मुआवजे के साथ उसकी तुलना करने पर, जो भी अधिक हो, निर्णय की तिथि पर मुआवजे की वही राशि होगी, जिसके लिए दावेदार हकदार है। एक बार जब मुआवजे की राशि का निर्धारण भारत संघ बनाम रीना देवी (पूर्वोक्त) के उपरोक्त निर्णय के पैराग्राफ 15.4 के मद्देनजर किया जाना है, तो अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क कि निर्धारित मुआवजे की राशि पर, दुर्घटना की तारीख से ब्याज दिया जाना चाहिए था, गलत है और यह मान्य नहीं है क्योंकि एक बार जब माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में प्रदान की गई प्रक्रिया के अनुसार गणना करने के बाद मुआवजे की उक्त राशि अधिनिर्णय की तारीख को अर्जित होती है, तो ब्याज केवल अर्जित होने की तारीख से बाद की अवधि के लिए ही प्रदान किया जा सकता है क्योंकि ब्याज अर्जित होने की तारीख से पहले की अवधि के लिए प्रदान नहीं किया जा सकता है।

9. वर्तमान प्रकरण में, विद्वान न्यायाधिकरण ने 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज को उचित माना और दुर्घटना की तिथि से अधिनिर्णय की तिथि तक 9% की दर से ब्याज सहित दुर्घटना की तिथि पर लागू 4 लाख रुपये के मुआवजे की गणना करने के बाद, न्यायाधिकरण ने पाया कि 8 लाख रुपये का बढ़ा हुआ मुआवजा अधिक राशि है और तदनुसार, यह माना कि आवेदक अधिनिर्णय की तिथि से वास्तविक भुगतान की तिथि तक 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज सहित 8 लाख रुपये के मुआवजे का हकदार होगा। इस न्यायालय को इसमें कोई अवैधता या त्रुटि नहीं लगती।

10. जहाँ तक **अंजू एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य संबंधित पुनरीक्षण (पूर्वोक्त)** प्रकरण में अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए निर्णय का संबंध है, अपीलकर्तागण ने अपील में कोई आधार नहीं लिया है और यह दर्शाया है कि अपीलकर्ता को पूरी धनराशि एक साथ चाहिए। यह भी ध्यान देने योग्य है कि न्यायालय द्वारा अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता से बार-बार यह अनुरोध करने के बावजूद कि यदि आवश्यक हो, तो वे एक हलफनामा और संशोधन हेतु आवेदन प्रस्तुत कर सकते हैं, जिस पर विचार किया जा सकता है, अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने ऐसा करने से इनकार कर दिया और अपील का आज ही निपटारा करने पर जोर दिया। इस प्रकार, अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता का तर्क गलत और तर्कपूर्ण नहीं है।

11. इस न्यायालय को 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज देने में कोई अवैधता या त्रुटि नहीं लगती है, जिस पर भारत संघ बनाम रीना देवी (पूर्वोक्त) के निर्णय में विचार किया गया है और जिसे बढ़ाया नहीं गया है।

12. उपरोक्त के मद्देनजर, इस न्यायालय को रेलवे दावा अधिकरण, लखनऊ पीठ, लखनऊ द्वारा वाद संख्या ओए //II/यू/995/15 में पारित दिनांक 18.10.2019 के आक्षेपित निर्णय एवं अधिनिर्णय में कोई अवैधानिकता या त्रुटि नहीं लगती, जिससे इस न्यायालय को हस्तक्षेप की आवश्यकता हो। यह अपील गलत एवं निराधार आधार पर दायर की गई है, जो खारिज किए जाने योग्य है।

13. तदनुसार, अपील खारिज की जाती है।

14. लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।

(2025) 2 ILRA 28

अपीलीय अधिकारिता

आपराधिक पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 21.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति राजीव गुप्ता

माननीय न्यायमूर्ति विकास बुधवार

शासकीय अपील संख्या- 1062/2024

के साथ

आपराधिक अपील अंतर्गत धारा 372 द0प्र0सं0 संख्या- 254/2023

उत्तर प्रदेश राज्य

...अपीलकर्ता

बनाम

मनीष कुमार एवं अन्य

...प्रतिवादी

अपीलकर्ता की ओर से अधिवक्ता:

श्री एके सेंड, श्री अनिल कुमार पांडे

प्रतिवादीगण की ओर से अधिवक्ता:

आपराधिक विधि - भारतीय दंड संहिता, 1860 - धारा 498 ए, 304 बी और 302 - दहेज निषेध अधिनियम, 1961 - धारा 4 - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 161 और 313 - बरी होने के खिलाफ अपील - भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 113-बी - दहेज की मांग के कारण मृत्यु साबित नहीं हुई क्योंकि पीडब्लू 1 से पीडब्लू 3 द्वारा दहेज की मांग के संबंध में प्रतिपादित सिद्धांत शादी के ठीक चार दिन बाद किया गया था जब मृतक (पीड़िता) पहली बार ससुराल से अपने मायके गई थी, झूठा साबित हुआ क्योंकि 18.6.2017 की घटना से संबंधित 22.6.2017 को दर्ज की गई एफआईआर इस तथ्य को नहीं दर्शाती है - मृतक पर कोई क्रूरता नहीं की गई थी - डीडब्लू 1 ने गवाही दी कि ए1 उसके घर में मौजूद था जब वह अपने बीमार शिक्षक से मिलने के लिए उसके घर आया था, ए1 के घर से दो या तीन महिलाएं आई थीं, बताया गया कि ए1 की पत्नी ने कीटनाशक की गोलियाँ खा लीं, ए1, डीडब्लू1 और गाँव वालों के साथ उस घर में गया जहाँ पीड़िता ने गलती से बुखार की दवा समझकर गोली खा ली - डीडब्लू1 की गवाही बरकरार है, अभियोजन पक्ष द्वारा गवाही को ध्वस्त करने के लिए कोई प्रश्न नहीं पूछा गया है। (प्रस्तर 41, 43)

पीडब्लू 2 और पीडब्लू 3 ने बयान दिया कि अभियुक्त ए2 पिछले 30-32 वर्षों से वहीं रह रही थी, जहां उसका पति काम कर रहा था - अभियोजन पक्ष के गवाह के बयान या अन्य किसी भी रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे पता चले कि ए1 और ए2 अपराध में शामिल थे - आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं है। (अनुच्छेद 44, 46)

अपीलें निरस्त। (ई-13)

उद्धृत प्रकरण की सूची:

1. राजेश प्रसाद बनाम बिहार राज्य (2022) 3 एससीसी (471), (पैरा 21 से 25)
2. बाबू साहेबगौड़ा रुद्रगौड़ार एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य 2024 (8) एससीसी 129, (पैरा 38 से 40)
3. युधिष्ठिर बनाम एम.पी. राज्य, 1971 (3) एससीसी 436, (पैरा 11)
4. दिगंबर एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य, आपराधिक अपील संख्या... 2024, एसएलपी (आपराधिक) संख्या 2122/2020 से उत्पन्न, 20.12.2024 को निर्णीत, (पैरा 22)
5. चरण सिंह @ चनरणजीत सिंह बनाम उत्तराखण्ड राज्य (2023) 3 एससीआर 511
6. बैजनाथ एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य (2017) 1 एससीसी 101, (पैरा 13) (पर भरोसा किया गया)
7. करण सिंह बनाम हरियाणा राज्य, आपराधिक अपील संख्या 1076/2014, 31.01.2025 को निर्णीत

1. वर्तमान कार्यवाही में उत्तर प्रदेश राज्य के कहने पर शासकीय अपील संख्या 1062/2024 और द0प्र0सं0 संख्या 254/2023 की धारा 372 के तहत अपील, अशोक कुमार (सूचनाकर्ता) द्वारा प्रस्तुत की गई है, मुकदमा अपराध संख्या 75/2018, धारा 498 ए, 304 बी, 302 भा0द0सं0 और दहेज निषेध अधिनियम की धारा 4 के तहत, थाना सहायल, जिला औरैया से उत्पन्न सत्र परीक्षण संख्या 174/2018 राज्य बनाम मनोज कुमार और अन्य में सत्र न्यायाधीश, औरैया की न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश दिनांक 2.3.2023 में आरोपी प्रतिवादीगण को बरी कर दिया गया है।

तथ्य

2. अभियोजन पक्ष का सिद्धांत संक्षेप में यह है कि 20.3.2017 को अशोक कुमार (प्रथम सूचनाकर्ता) ने पुलिस स्टेशन सहायल, जिला औरैया में एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई कि उनकी बेटी नीता (पीड़िता) ने 29.1.2016 को अभियुक्त (ए-1), मनीष कुमार, पुत्र बृज किशोर पाल, निवासी ग्राम गढ़ैया, थाना सहायल, जिला औरैया के साथ विवाह किया था। यह भी आरोप लगाया गया है कि वर पक्ष को उनकी हैसियत के अनुसार उपहार दिए गए थे। हालांकि, अभियुक्त (ए-1) मनीष कुमार, उनके पिता बृज किशोर पाल, मृतका (पीड़िता) के ससुर, अभियुक्त (ए-2) राजेश्वरी, मृतका (पीड़िता) की सास और ननद मनु दहेज में एक चार पहिया वाहन और 1,00,000/- रुपये की मांग करते थे, जो उनके अनुसार दिया जाना था क्योंकि वर पक्ष द्वारा दिए गए उपहार और चढ़ावा पूरी तरह से अपर्याप्त थे। उक्त मांग पूरी न होने पर मृतका (पीड़िता) पर अत्याचार करने की कोशिश की गई। मृतका (पीड़िता) जब भी अपने मायके वालों से मिलती थी, तो प्रथम सूचनाकर्ता और उसके परिवार को भी उक्त तथ्य से अवगत कराया जाता था।

3. दिनांक 22.6.2017 को पुलिस स्टेशन, मंगलपुर, कानपुर देहात में एफआईआर संख्या 265/2017 के रूप में धारा 498 ए, 323, 504, 506 भा0द0सं0 सहपठित धारा 3/4 दहेज प्रतिषेध अधिनियम के तहत प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज हुई और उसके बाद उन्हें उक्त कृत्य को न दोहराने की सलाह दी गई लेकिन उन्होंने दहेज की मांग जारी रखी और पीड़िता के साथ दुर्व्यवहार किया। 19.03.2018 को, अभियुक्त (ए-1), मनीष कुमार ने प्रथम सूचनाकर्ता के भाई बृजेश कुमार को सूचित किया कि मृतक (पीड़िता) ने जहर खा लिया है जिसके कारण पीड़िता को इलाज के लिए ले जाया गया, हालांकि, उसकी मृत्यु हो गई। उक्त सूचना प्राप्त होने पर, प्रथम सूचनाकर्ता अपने परिवार के सदस्यों और ग्रामीणों के साथ पीड़िता के वैवाहिक घर आया, जहाँ उन्होंने पाया कि शव आरोपियों के घर के बाहर पड़ा था, वे फरार थे और घर पर ताला लगा था।

4. दिनांक 20.03.2018 को समय 0020 बजे प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज हुई, जो अभियुक्तगण (ए-1) मनीष कुमार, बृज किशोर पाल, (ए-2) राजेश्वरी और मनु के विरुद्ध धारा 498ए, 304बी, भादवि सहपठित धारा 3/4 दहेज प्रतिषेध अधिनियम के अंतर्गत मुकदमा अपराध संख्या 75/2018 के रूप में पंजीकृत की गई। प्रथम सूचना रिपोर्ट हेड कांस्टेबल सोबरन सिंह द्वारा दर्ज की गई और नायब तहसीलदार पीडब्लू-4 प्रेमचंद पांडे की उपस्थिति

में जाँच-पड़ताल भी तैयार की गई। मृतका के शव को पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया और पोस्टमार्टम डॉ. सुबोध कुमार द्वारा किया गया। पीडब्लू-6 बंदना सिंह, क्षेत्राधिकारी को जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया। स्थल योजना तैयार करने संबंधी आवश्यक औपचारिकताएँ भी पूरी कर ली गईं और मृतका के पिता पीडब्लू-1 अशोक कुमार, पीडब्लू-2 अरुण कुमार, (मृतका के चाचा) और मृतका की ममेरी ननद पीडब्लू-3 रीता का बयान भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अंतर्गत दर्ज किया गया। जाँच अधिकारी ने जाँच की और धारा 498ए, 304बी, सहपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अंतर्गत अभियुक्त ए-1 मनीष कुमार, ए-2 राजेश्वरी और बृज किशोर पाल के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया, जबकि सुश्री मनु को आरोपों से मुक्त कर दिया गया। तत्पश्चात, संज्ञान लिया गया और प्रकरण सत्र न्यायालय को सौंप दिया गया।

5. मुकदमे के दौरान अभियोजन पक्ष ने 8 गवाहों, अशोक कुमार, सूचनाकर्ता पीडब्लू-1, पीडब्लू-2, अरुण कुमार और पीडब्लू-3, रीता की जांच की। पीडब्लू-4, प्रेम चंद, नायब तहसीलदार, तहसील बिधूना ने जांच साबित की, पीडब्लू-5, कांस्टेबल शरीफ खान ने चिक एफआईआर साबित की जो हेड कांस्टेबल सोबरन सिंह द्वारा दर्ज की गई थी, पीडब्लू-6, सर्कल अधिकारी, बंदना सिंह ने जांच करने में उठाए गए कदमों को साबित किया, पीडब्लू-7, राजेश यादव, फार्मासिस्ट ने पोस्टमार्टम के तथ्य को साबित किया जो डॉ. सुबोध कुमार, (अब मृत) द्वारा किया गया था। अभियोजन पक्ष के साक्ष्य बंद होने के बाद विचारण न्यायालय ने ए-1, मनीष कुमार, ए-2, राजेश्वरी देवी का बयान द0प्र0सं0 की धारा 313 के तहत दर्ज किया। आरोपियों ने अपने खिलाफ लगाए गए आरोपों से इनकार किया और कहा कि उन्हें आपराधिक प्रकरण में झूठा फंसाया गया है विचारण न्यायालय ने आरोपी ए-1 मनीष कुमार, ए-2 राजेश्वरी देवी को निर्दोष पाया और उन्हें भा0द0सं0 की धारा 498ए, 304बी, 302 तथा दहेज निषेध अधिनियम की धारा 4 के तहत आरोपों से बरी कर दिया।

6. अपना प्रकरण साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष ने दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत किए थे-

दस्तावेजी प्रमाण

लिखित रिपोर्ट	ए-1
पंचायतनामा	ए-2
सीएचओ को पत्र	ए-3
कॉर्पस की तस्वीर	ए-4
कॉर्पस का चालान	ए-5 व ए-6
जी.डी. रिपोर्ट	ए-7
चिक, एफ.आई.आर.	ए-8
नक्शा नजरी	ए-9
आरोप पत्र	ए-10

पोस्टमार्टम रिपोर्ट और फोरेंसिक रिपोर्ट	ए-11

अभियोजन पक्ष के गवाहों की गवाही

7. पीडब्लू 1 अशोक कुमार सूचनाकर्ता की पीडब्लू 1 के रूप में जांच की गई है, वह मृतक (पीड़िता) का पिता है। पीडब्लू 1 ने अपने मुख्य परीक्षण में यह बयान दिया है कि उसकी बेटी की शादी 29.01.2016 को ए1 मनीष कुमार के साथ हुई थी, जो दहेज की मांग करता था। दहेज मांगने की शिकायत उसे तब बताई गई जब वह शादी के 4 दिन बाद 29.01.2016 को उसे उसके मायके बुलाने गया था, जिसे एक समारोह के रूप में मनाया जाता है। मृतक (पीड़िता) ने उसे बताया था कि ए1 मनीष के ससुर बृजेश कुमार, ए2 राजेश्वरी (सास) और ममेरी ननद 1,00,000/- रुपये और चार पहिया वाहन के रूप में दहेज की मांग करते थे और दहेज न देने पर उसके साथ मारपीट की जाती थी और उसके साथ दुर्व्यवहार किया जाता था। उन्होंने आगे कहा कि मृतका (पीड़िता) को ससुराल वालों ने 18.06.2017 को गांव के बाहरी इलाके में फेंक दिया था और उक्त जानकारी एकत्र करने पर प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई थी। प्रथम सूचना रिपोर्ट 22.06.2017 को पुलिस स्टेशन मंगलपुर, जिला रमाबाई नगर में धारा 323, 498 ए, 506 भा0द0सं0 के साथ दहेज निषेध अधिनियम की धारा 3/4 के तहत दर्ज की गई थी। इसके बाद, एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार मृतका (पीड़िता) अपने ससुराल वापस चली गई और परिवार के सदस्यों ने आश्वासन दिया कि वे उक्त कृत्यों को नहीं दोहराएंगे। उन्होंने आगे कहा कि जब भी मृतका (पीड़िता) वैवाहिक स्थान से अपने मायके आती थी तो वह मारपीट और दुर्व्यवहार की शिकायत करती थी और अनुरोध करती थी कि दहेज की मांग पूरी की जाए। पीडब्लू 1 ने आगे कहा कि पहले सूचनाकर्ता और उसके परिवार द्वारा उन्हें शांत करने और मांग नहीं बढ़ाने के लिए सभी प्रयास किए गए थे दिनांक 19.03.2018 को दूरभाष के माध्यम से सूचना मिली कि मृतका (पीड़िता) ने विषपान कर लिया है, जिससे उसकी मृत्यु हो गई। उक्त सूचना प्राप्त होने पर, प्रथम सूचनाकर्ता, परिवार के सदस्यों और ग्रामीणों के साथ मृतका (पीड़िता) के वैवाहिक स्थल पर गए, जहाँ उन्होंने पाया कि मृतका (पीड़िता) का शव घर के बाहर पड़ा था और घर में ताला लगा था। तत्पश्चात, मुंशी अनुराग पाल के माध्यम से लिखित रिपोर्ट थाने में प्रस्तुत की गई, जिन्होंने लिखित रिपोर्ट पढ़ी और संतुष्ट होने पर प्रथम सूचनाकर्ता ने लिखित रिपोर्ट पर हस्ताक्षर किए। पुलिस के आने के बाद, जाँच-पड़ताल तैयार की गई और मृतका (पीड़िता) के शव को सील कर दिया गया। प्रथम सूचनाकर्ता ने अपने मुख्य परीक्षण में यह साक्ष्य दिया कि मृतका (पीड़िता) अपनी मृत्यु के लगभग एक माह पूर्व एक पारिवारिक विवाह में उनसे मिली थी और शिकायत की थी कि उसके ससुराल वाले दहेज में एक चार पहिया वाहन और नकद धन की मांग कर रहे हैं और ऐसा न करने पर उसे जान से मार देंगे।

8. पीडब्लू2 अरुण कुमार ने पीडब्लू2 के रूप में अपना परीक्षण कराया और उसने अपने मुख्य परीक्षण में यह साक्ष्य दिया कि मृतका (पीड़िता) उसकी भतीजी है, जिसका विवाह अभियुक्त ए1 मनीष कुमार के साथ 29.01.2016 को हुआ था। विवाह के बाद जब वह पहली बार अपने मायके गई तो उसने बताया कि अभियुक्तगण 1 लाख रुपये नकद और एक चार पहिया वाहन के रूप में दहेज की मांग कर रहे हैं और दहेज की मांग पूरी न होने पर उसके साथ दुर्व्यवहार किया गया। उसने यह भी साक्ष्य दिया कि दहेज की मांग पूरी न होने पर

मृतका (पीड़िता) को गांव के बाहरी इलाके में स्थित घर से निकाल दिया गया था, उसके बाद एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई और एक समझौते के बाद और अभियुक्त पक्ष द्वारा यह आश्वासन दिए जाने पर कि वे उसके साथ दुर्व्यवहार नहीं करेंगे, मृतका (पीड़िता) अपने ससुराल वापस चली गई। अपने बयान में पीडब्लू 1 ने आगे कहा कि मृतका (पीड़िता) की मृत्यु से एक महीने पहले, उसने परिवार के एक रिश्तेदार के घर में उसे बताया कि उसके पिता, पहले सूचनाकर्ता और पीडब्लू 2 को दहेज के रूप में उठाई गई मांग को पूरा करने का प्रयास करना चाहिए अन्यथा उसे मार दिया जाएगा। पीडब्लू 2 ने आगे बयान दिया कि 19.03.2018 को देर शाम लगभग 8 बजे सूचना मिली कि मृतका (पीड़िता) के आरोपियों/ससुराल वालों ने पीड़िता की हत्या कर दी है और जब वे मृतका (पीड़िता) के ससुराल गए तो उन्होंने मृतका (पीड़िता) को मृत पाया जिसके बाद पीडब्लू 1, अशोक कुमार ने पुलिस स्टेशन में लिखित रिपोर्ट दर्ज कराई, एफआईआर दर्ज की गई, पूछताछ की गई।

9. **पीडब्लू 3 रीता**, पीडब्लू 3 के रूप में कटघरे में उपस्थित हुई। उसने बताया कि वह मृतका (पीड़िता) की ममेरी ननद है। उसने यह भी बताया कि मृतका (पीड़िता) का विवाह 29.01.2016 को मनीष कुमार, ए1 के साथ हुआ था। वे दहेज की मांग कर रहे थे और विवाह के बाद जब वह पहली बार अपने ससुराल आई, तो उसने शिकायत की कि दहेज में 1 लाख रुपये नकद और चार पहिया वाहन की मांग की जा रही थी। उसने यह भी शिकायत की कि दहेज की मांग पूरी न होने पर उसे मार दिया जाएगा। उसने यह भी बताया कि मृतका (पीड़िता) को घर से निकाल दिया गया था, जिसके बाद एक प्राथमिकी दर्ज की गई थी और समझौता होने पर मृतका (पीड़िता) अपने घर वापस चली गई थी। पीडब्लू संख्या 3 ने यह भी बयान दिया कि मृतका (पीड़िता) की मृत्यु से एक माह पूर्व, वह अपनी ननद की एक शादी में मृतका (पीड़िता) से मिली थी और शिकायत की थी कि अभियुक्तगण दहेज की मांग कर रहे हैं और दहेज न मिलने पर उसकी हत्या कर दी जाएगी। मृतका (पीड़िता) की मृत्यु की सूचना मिलने पर, वह परिवार के अन्य सदस्यों के साथ मृतका के ससुराल गई थी।

10. **पीडब्लू 4 प्रेम चंद पांडे**, पीडब्लू 4 के रूप में साक्षी के कठघरे में उपस्थित हुए। उनके अनुसार, वे 20.03.2018 को तहसील बिधूना में नायब तहसीलदार के पद पर तैनात थे और उप जिला अधिकारी से फोन पर सूचना मिलने पर, वे ग्राम गढ़ेहवा, थाना सहायल, जिला औरैया गए, जहाँ मृतका (पीड़िता) का शव पड़ा था और उन्होंने अपनी जाँच को प्रमाणित किया। उन्होंने यह भी साक्ष्य दिया कि मृतका (पीड़िता) को लगी चोटों का निरीक्षण महिला कांस्टेबल प्रियंका सिंह द्वारा मृतका की माँ की उपस्थिति में किया गया था।

11. **पीडब्लू 5 कांस्टेबल शरीफ खान**। वह एक औपचारिक गवाह है, जिसने साबित किया है कि 20.03.2018 को वह थाना सहायल में क्लर्क/कंप्यूटर क्लर्क के पद पर तैनात था और उसी दिन एचसीपी सोबरन सिंह भी उक्त थाने में तैनात थे। उसने लिखित रिपोर्ट और चिक एफआईआर दर्ज करने के तथ्य को साबित किया है।

12. जांच अधिकारी, पीडब्लू 6 बंदना सिंह ने गवाही दी कि 20.03.2018 को वे औरैया के क्षेत्राधिकारी के पद पर तैनात थे। उनके अनुसार, उन्हें जांच का कार्य सौंपा गया था, उन्होंने अभियोजन पक्ष के गवाहों के बयान दर्ज किए थे। उन्होंने यह भी साबित किया कि जाँच-पड़ताल तैयार कर ली गई थी, शव पोस्टमार्टम के लिए

भेज दिया गया था और उन्होंने यह भी दावा किया कि आरोपियों के खिलाफ आरोप पत्र दाखिल कर दिया गया है।

13. **पीडब्ल्यू7 राजेश यादव।** उन्होंने बयान दिया कि वे अक्टूबर 2016 से सीएचपी अछनादा में फार्मासिस्ट के पद पर कार्यरत हैं। उनका पोस्टमार्टम सुबोध कुमार ने किया था, जो अब दिवंगत हो चुके हैं। 20.3.2018 को दोपहर 2.30 बजे उनकी उपस्थिति में पोस्टमार्टम किया गया, जो दोपहर 3.00 बजे संपन्न हुआ। उन्होंने पोस्टमार्टम की बात साबित की।

बचाव पक्ष के गवाह की गवाही

14. **डीडब्ल्यू1 सुधीर कुमार,** डीडब्ल्यू1 के रूप में गवाह के कठघरे में पेश हुए। उनके अनुसार, 19.3.2018 को ए1, मनीष कुमार अपने पिता लज्जाराम से मिलने उनके घर आए थे, जो अस्वस्थ थे और वे अपने घर के सामने गेट पर बैठे थे। ए1, मनीष कुमार के अलावा, अन्य ग्रामीण भी बैठे थे और शाम को लगभग 5-6 बजे, ए1, मनीष कुमार के घर से दो-तीन महिलाएं चिल्लाते हुए आई कि मृतका (पीड़िता), जो ए1, मनीष कुमार की पत्नी है, ने अनजाने में कीटनाशक की गोलियां खा ली हैं। उन्होंने यह भी गवाही दी कि मृतका (पीड़िता) 19.03.2018 को अपनी मृत्यु से पहले पिछले दो-तीन दिनों से बुखार से पीड़ित थी और अनजाने में उसने कीटनाशक की गोलियां खा लीं, जिससे उसकी हालत बिगड़ गई। सूचना पाकर ए1 मनीष कुमार अपने घर के बाहर बैठे अन्य ग्रामीणों के साथ तुरंत ए1 मनीष कुमार के घर पहुंचे, जहां पर पता चला कि मृतक (पीड़ित) की हालत बिगड़ रही थी और उसके समेत सभी ग्रामीणों के सामने मृतक (पीड़ित) ने कहा कि गलतफहमी के कारण उसने बुखार ठीक करने की दवा समझकर कीटनाशक की गोलियां खा ली थीं। इसके बाद ए1 मनीष कुमार मृतक (पीड़ित) को इलाज के लिए कानपुर ले गए और उनके पिता की तबीयत खराब होने के कारण वह अपने घर वापस चले गए। उसी दिन शाम करीब 7-7.30 बजे उन्हें सूचना मिली कि मृतक की मृत्यु हो गई है और जब वह ए1 मनीष कुमार के घर गए तो उन्हें मृतक का शव मिला। उन्होंने आगे बताया कि ए1 मनीष ने अपने ससुराल वालों को फोन के माध्यम से सूचित किया कि मृतक (पीड़ित) अब नहीं रहा डीडब्ल्यू1 ने आगे बताया कि ए1, मनीष कुमार के पिता बृज किशोर पाल मध्य प्रदेश के शिवपुर जिले के एक संस्थान में शिक्षक हैं, जो उनके गाँव से लगभग 500-600 किलोमीटर दूर हैं। बृज किशोर पाल के साथ उनकी पत्नी ए1, राजेश्वरी और बेटी मनु भी रहती हैं, और उक्त घटना के समय वे शारीरिक रूप से मौजूद नहीं थे।

विधिक स्थिति:

15. राज्य के कहने पर धारा 378(3) द0प्र0सं0 के तहत कार्यवाही में चुनौती के तहत बरी करने के फैसले की बारीकियों पर विचार करने से पहले, इस न्यायालय को इस तथ्य को फिर से याद रखना होगा कि वर्तमान कार्यवाही अपीलीय क्षेत्राधिकार के रूप में है जो बरी करने के फैसले की जांच का अवसर देती है जिसमें कुछ सीमाएं प्रदान की गई हैं जिन्हें इस मुद्दे पर गहराई से विचार करने से पहले पहचाना जाना चाहिए।

16. मोटे तौर पर कहा जाए तो जब तक कि चुनौती के तहत निर्णय विकृत न हो और पक्षकारों द्वारा न्याय की विफलता के लिए पर्याप्त और बाध्यकारी कारण न हों, तब तक इस न्यायालय को सामान्य तरीके से दोषमुक्ति के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, क्योंकि अभियुक्त के पास निर्दोषता की दोहरी धारणा है।

17. इसे अधिकार के रूप में अन्यथा कहें तो, यह न्यायालय अपीलकर्ता, जो राज्य है, के कहने पर दोषमुक्ति के निर्णय को दोषसिद्धि में परिवर्तित करते समय अधिकारिता का प्रयोग नहीं कर सकता।

18. विधि के उपरोक्त सिद्धांत को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पहले ही अनेक निर्णयों में स्पष्ट किया जा चुका है और उदाहरण के लिए **राजेश प्रसाद बनाम बिहार राज्य (2022) 3 एससीसी (471)** के निर्णय का संदर्भ दिया जा सकता है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अवलोकन किया था।

"21. आगे बढ़ने से पहले, अवर न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा बरी किए जाने के विरुद्ध अपील पर निर्णय लेते समय अपनाए जाने वाले दृष्टिकोण की समीक्षा करना उपयोगी होगा। द0प्र0सं0 की धारा 378 बरी किए जाने की स्थिति में अपीलों से संबंधित है। बरी किए जाने के आदेश के विरुद्ध अपील पर विचार करने में उच्च न्यायालय की शक्तियों पर सबसे पुराने प्रकरण में से एक, **शेओ स्वरूप बनाम राजा सम्राट²** प्रकरण में प्रिवी काउंसिल की न्यायिक समिति ने बरी किए जाने के आदेश के विरुद्ध अपील पर विचार करने में अपीलीय न्यायालय की शक्ति से संबंधित प्रावधानों पर विचार किया और निम्नलिखित टिप्पणी की: (एससीसी ऑनलाइन पीसी)

"16. हालांकि, यह नहीं भूलना चाहिए कि बरी होने की स्थिति में, अभियुक्त के पक्ष में दोहरी धारणा होती है। सबसे पहले, निर्दोषता की धारणा उसे आपराधिक न्यायशास्त्र के मूल सिद्धांत के तहत उपलब्ध है कि प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाना चाहिए जब तक कि वह किसी सक्षम न्यायालय द्वारा दोषी साबित न हो जाए। दूसरे, अभियुक्त को बरी कर दिए जाने के बाद, उसकी निर्दोषता की धारणा निश्चित रूप से कमजोर नहीं होती है, बल्कि विचारण न्यायालय द्वारा उसे मजबूत, पुष्ट और सुदृढ़ किया जाता है।

"..... लेकिन संहिता द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए और तथ्यों के आधार पर अपने निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले, उच्च न्यायालय को हमेशा निम्नलिखित प्रकरण पर उचित ध्यान देना चाहिए और विचार करना चाहिए: (1) गवाहों की विश्वसनीयता के बारे में सुनवाई कर रहे न्यायाधीश के विचार; (2) अभियुक्त के पक्ष में निर्दोषता की धारणा, एक धारणा जो निश्चित रूप से इस तथ्य से कमजोर नहीं होती कि उसे सुनवाई में बरी कर दिया गया है; (3) अभियुक्त को किसी भी संदेह का लाभ पाने का अधिकार; और (4) एक न्यायाधीश द्वारा, जिसे गवाहों को देखने का लाभ प्राप्त था, निकाले गए तथ्य के निष्कर्ष को बाधित करने में अपीलीय न्यायालय की सुस्ती। हालाँकि, यह कहना केवल यह कहना है कि उच्च न्यायालय को अपील के संचालन में न्याय प्रशासन में सुविदित और मान्यता प्राप्त नियमों और सिद्धांतों के अनुसार कार्य करना चाहिए और करेगा।"

यह कहा गया कि अपीलीय न्यायालय के पास बरी किये गये फैसले की समीक्षा करने तथा उसे पलटने की पूरी शक्ति है।

22. एटली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य प्रकरण में, दोषमुक्ति के निर्णय पर विचार करते समय अपीलीय न्यायालय के दृष्टिकोण पर चर्चा की गई और यह टिप्पणी की गई कि जब तक अपीलीय न्यायालय इस निष्कर्ष पर न पहुंच जाए कि दोषमुक्ति का निर्णय गलत था, तब तक वह उसे रद्द नहीं कर सकता। इसी प्रकार, संवत सिंह बनाम राजस्थान राज्य प्रकरण में न्यायमूर्ति सुब्बा राव (तत्कालीन माननीय न्यायाधीश) के माध्यम से इस न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियाँ भी हैं: (संवत सिंह प्रकरण⁴, एआईआर पृष्ठ 719-20, अनुच्छेद 9)

"9. उपरोक्त चर्चा से निम्नलिखित परिणाम निकलते हैं: (1) अपीलीय न्यायालय के पास उन साक्ष्यों की समीक्षा करने की पूरी शक्ति है जिन पर दोषमुक्ति का आदेश आधारित है; (2) शीओ स्वरूप² में निर्धारित सिद्धांत किसी प्रकरण में अपीलीय न्यायालय के दृष्टिकोण के लिए एक सही मार्गदर्शन प्रदान करते हैं, ऐसी अपील का निपटारा करते समय; और (3) इस न्यायालय के निर्णयों में प्रयुक्त विभिन्न वाक्यांश, जैसे कि, (i) "पर्याप्त और बाध्यकारी कारण", (ii) "अच्छे और पर्याप्त रूप से ठोस कारण", और (iii) "मजबूत कारण", का उद्देश्य दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में अपीलीय न्यायालय की संपूर्ण साक्ष्यों की समीक्षा करने और स्वयं निष्कर्ष पर पहुंचने की निस्संदेह शक्ति को कम करना नहीं है; बल्कि ऐसा करते समय उसे न केवल तथ्य के प्रश्नों से संबंधित अभिलेख पर मौजूद प्रत्येक प्रकरण और उन तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष पर पहुंचने में अवर न्यायालय द्वारा अपने दोषमुक्ति के आदेश के समर्थन में दिए गए कारणों पर विचार करना चाहिए, बल्कि अपने निर्णय में उन कारणों को भी व्यक्त करना चाहिए, जो उसे यह मानने के लिए प्रेरित करते हैं कि बरी करना उचित नहीं था।"

उपर्युक्त टिप्पणियों की आवश्यकता अहेर राजा खीमा बनाम सौराष्ट्र राज्य⁵ प्रकरण में बहुमत की टिप्पणियों के कारण उत्पन्न हुई, जिसमें कहा गया था कि उच्च न्यायालय द्वारा साक्ष्य पर अलग दृष्टिकोण अपनाने के लिए "यह मानने के लिए पर्याप्त और सम्मोहक कारण भी होने चाहिए कि विचारण न्यायालय गलत था"।

23. एमजी अग्रवाल बनाम महाराष्ट्र राज्य, इस न्यायालय की संविधान पीठ का न्यायमूर्ति गर्जेन्द्रगढ़कर (तत्कालीन माननीय न्यायाधीश) के माध्यम से दिया गया निर्णय है। इस न्यायालय ने टिप्पणी की कि बरी किए जाने के विरुद्ध अपील पर विचार करते समय उच्च न्यायालय (अपीलीय न्यायालय) को सावधानी बरतनी चाहिए क्योंकि अभियुक्त के पक्ष में निर्दोषता की धारणा "इस तथ्य से निश्चित रूप से कमज़ोर नहीं होती कि उसे मुकदमे में बरी कर दिया गया है"।

24. शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य में, न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने निम्नलिखित टिप्पणी की: (एससीसी पृ. 799, पैरा 6)।

"6. ... संक्षेप में, अनुमानित निर्दोषता के प्रति हमारे न्यायशास्त्रीय उत्साह को आपराधिक न्याय को सशक्त और यथार्थवादी बनाने की व्यावहारिक आवश्यकता द्वारा नियंत्रित किया जाना चाहिए। अपराधी को मुक्त करने के लिए पर्याप्त रूप से अच्छे संयोग की संभावनाओं का पीछा करने और सीमांत निर्दोषों को दंडित करने के लिए प्रबल संभावना के तर्क को काटने के बीच संतुलन बनाना होगा।"

25. इस न्यायालय ने रमेश बाबूलाल दोशी बनाम गुजरात राज्य प्रकरण में अभियुक्त को बरी करने के आदेश के खिलाफ अपील पर विचार करते समय अपीलीय न्यायालय के दृष्टिकोण के बारे में बात की और निम्नानुसार कहा: (एससीसी पृष्ठ 229, पैरा 7)

"7. ... किसी बरी करने के फैसले पर फैसला सुनाते समय, अपीलीय न्यायालय को सबसे पहले इस सवाल का जवाब तलाशना होता है कि क्या विचारण न्यायालय के निष्कर्ष स्पष्ट रूप से गलत, स्पष्ट रूप से त्रुटिपूर्ण या स्पष्ट रूप से अस्थिर हैं। यदि अपीलीय न्यायालय उपरोक्त प्रश्न का उत्तर नकारात्मक में देती है, तो बरी करने के आदेश में कोई बदलाव नहीं किया जाएगा। इसके विपरीत, यदि अपीलीय न्यायालय, दर्ज किए जाने वाले कारणों से, यह मानती है कि उपरोक्त किसी भी कमी के सुदृढ़ बरी करने के आदेश को बरकरार नहीं रखा जा सकता है, तो वह अपने निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए सबूतों का पुनर्मूल्यांकन कर सकती है।" उपर्युक्त दृष्टिकोण का उद्देश्य और प्रयोजन यह सुनिश्चित करना है कि न्याय में कोई चूक न हो। दूसरे शब्दों में, किसी दोषी को बरी या किसी निर्दोष को दोषसिद्धि न मिले।

31.1. सामान्यतः यह न्यायालय दोषमुक्ति के आदेश में हस्तक्षेप करने में सावधानी बरतता है, विशेष रूप से तब जब दोषमुक्ति के आदेश की पुष्टि उच्च न्यायालय तक हो चुकी हो। केवल दुर्लभतम प्रकरण में ही ऐसा होता है, जहाँ उच्च न्यायालय ने तर्क की एक बिल्कुल गलत प्रक्रिया और प्रकरण के तथ्यों के प्रति विधिक रूप से त्रुटिपूर्ण और विकृत दृष्टिकोण अपनाते हुए, कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण तथ्यों की अनदेखी करते हुए, अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया हो, और संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अधिकारिता का प्रयोग करते हुए इस न्यायालय द्वारा उस आदेश को उलट दिया जा सकता है। [यूपी राज्य बनाम सहाय] घ. अपील स्वीकार करने के अधिकार पर इस तरह की बेड़ियाँ किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसे किसी सक्षम न्यायालय द्वारा आपराधिक आरोप से बरी कर दिया गया हो, प्रकरण की आगे की जाँच की चिंता और तनाव से उजागर करने की अनिच्छा के कारण उत्पन्न होती हैं, भले ही वह किसी उच्च न्यायालय द्वारा आयोजित किया गया हो। [अरुणाचलम बनाम पीएसआर साधनाथम]। बरी करने के आदेश के विरुद्ध अपील स्वीकार नहीं की जा सकती, जिसमें वैध और वजनदार कारणों को दर्ज करने के बाद, एक अकाट्य, तार्किक निष्कर्ष निकाला गया है जो बरी करने को उचित ठहराता है।"

19. हाल ही में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने बाबू साहेबगौड़ा रुद्रगौदर और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य 2024 (8) एससीसी 129 में सर्वोच्च न्यायालय ने अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग के प्रकरण में सावधानी बरतने की

बात कही थी, जब अपीलीय न्यायालय को बरी करने के आदेश का सामना करना पड़ता है, निम्नलिखित टिप्पणी की गई थी:-

"38. सबसे पहले, हम इस न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों को दोहराना चाहेंगे जो राज्य द्वारा अवर न्यायालय द्वारा दर्ज अभियुक्तों को बरी करने के फैसले को चुनौती देने के लिए दायर अपील में उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप के दायरे को नियंत्रित करते हैं।

39. इस न्यायालय ने राजेश प्रसाद बनाम बिहार राज्य प्रकरण में विभिन्न पूर्व निर्णयों पर विचार करने के बाद इस क्षेत्र को कवर करने वाली विधिक स्थिति को संक्षेप में प्रस्तुत किया और निम्नानुसार निर्णय दिया: (एससीसी पृ. 482-83, पैरा 29)

"29. निर्णयों की एक श्रृंखला का उल्लेख करने के बाद, इस न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में बरी करने के आदेश के खिलाफ अपील से निपटने के दौरान अपीलीय न्यायालय की शक्तियों के बारे में निम्नलिखित सामान्य सिद्धांतों को निकाला: (चंद्रप्पा प्रकरण, एससीसी पृष्ठ 432, पैरा 42)

'42. उपरोक्त निर्णयों से, हमारे सुविचारित मत से, दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध अपील पर विचार करते समय अपीलीय न्यायालय की शक्तियों के संबंध में निम्नलिखित सामान्य सिद्धांत उभर कर आते हैं:

(1) अपीलीय न्यायालय को उन साक्ष्यों की समीक्षा, पुनर्मूल्यांकन और पुनर्विचार करने की पूर्ण शक्ति प्राप्त है, जिन पर दोषमुक्ति का आदेश आधारित है।

(2) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 ऐसी शक्ति के प्रयोग पर तथा अपीलीय न्यायालय द्वारा तथ्य और विधि दोनों के प्रश्नों पर अपना निष्कर्ष पढ़ने से पूर्व साक्ष्य पर कोई सीमा, प्रतिबंध या शर्त नहीं लगाती है।

(3) विभिन्न अभिव्यक्तियाँ, जैसे "पर्याप्त और बाध्यकारी कारण", "उचित और पर्याप्त आधार", "अत्यंत मजबूत परिस्थितियाँ", "विकृत निष्कर्ष", "स्पष्ट गलतियाँ", आदि, बरी किए जाने के विरुद्ध अपील में अपीलीय न्यायालय की व्यापक शक्तियों को सीमित करने के लिए नहीं हैं। ऐसी शब्दावली "भाषा के अतिरेक" की प्रकृति की हैं, जो साक्ष्यों की समीक्षा करने और अपने निष्कर्ष पर पहुँचने की न्यायालय की शक्ति को सीमित करने के बजाय, बरी किए जाने के प्रकरण में हस्तक्षेप करने में अपीलीय न्यायालय की अनिच्छा पर ज़ोर देती हैं।

(4) हालाँकि, अपीलीय न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए कि दोषमुक्ति की स्थिति में, अभियुक्त के पक्ष में दोहरी धारणा होती है। पहला, आपराधिक न्यायशास्त्र के इस मूल सिद्धांत के तहत, कि प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाएगा जब तक कि वह किसी सक्षम न्यायालय द्वारा दोषी सिद्ध न हो जाए, उसे

निर्दोषता की धारणा प्राप्त है। दूसरा, अभियुक्त के दोषमुक्ति प्राप्त कर लेने के बाद, अवर न्यायालय द्वारा उसकी निर्दोषता की धारणा को और भी पुष्ट, पुष्ट और सुदृढ़ किया जाता है।

(5) यदि रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर दो उचित निष्कर्ष संभव हैं, तो अपीलीय न्यायालय को विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए बरी करने के फैसले को बाधित नहीं करना चाहिए।”

40. इसके अलावा, एच.डी. सुंदरा बनाम कर्नाटक राज्य प्रकरण में इस न्यायालय ने धारा 378 द0प्र0सं0 के तहत बरी किए जाने के खिलाफ अपील पर विचार करते समय अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया है: (एससीसी पृष्ठ 584, पैरा 8)

“8. ... 8.1. अभियुक्त को बरी किए जाने से निर्दोषता की धारणा और मजबूत होती है;

8.2. अपीलीय न्यायालय, दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील की सुनवाई करते समय, मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का पुनः मूल्यांकन करने का हकदार है;

8.3. अपीलीय न्यायालय को, दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील पर निर्णय करते समय, साक्ष्यों का पुनः मूल्यांकन करने के पश्चात्, इस बात पर विचार करना अपेक्षित है कि क्या विचारण न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण एक संभावित दृष्टिकोण है जिसे अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर लिया जा सकता था;

8.4. यदि लिया गया दृष्टिकोण एक संभावित दृष्टिकोण है, तो अपीलीय न्यायालय इस आधार पर बरी करने के आदेश को पलट नहीं सकता कि एक अन्य दृष्टिकोण भी संभव था; और

8.5. अपीलीय न्यायालय दोषमुक्ति के आदेश में केवल तभी हस्तक्षेप कर सकता है जब वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर एकमात्र निष्कर्ष यह है कि अभियुक्त का अपराध संदेह से परे सिद्ध हो चुका है तथा कोई अन्य निष्कर्ष संभव नहीं है।

20. मोटे तौर पर यही सिद्धांत सूचनाकर्ता/शिकायतकर्ता द्वारा द0प्र0सं0 की धारा 372 के तहत अपील पर भी लागू होता है।

21. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि के सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वर्तमान प्रकरण को तार्किक अंत देते हुए आगे बढ़ाया जाना है।

राज्य अपीलकर्तागण और सूचनाकर्ता के अधिवक्ता की ओर से प्रस्तुत प्रस्तुतियाँ

22. श्री अनिल कुमार मिश्रा, विद्वान ए.जी.ए. तथा श्री अनिल कुमार पांडे, जो सूचनाकर्ता की ओर से उपस्थित हुए, ने कई दलीलें प्रस्तुत की हैं, अर्थात्:

(क) अभियुक्तगण ने अपराध किया है जो संदेह से परे सिद्ध है, क्योंकि घटनाओं का क्रम स्वयं दर्शाता है कि अभियुक्तगण द्वारा दहेज की लगातार मांग की जा रही थी तथा उसकी पूर्ति न होने के कारण मृतका की हत्या कर दी गई।

(ख) यदि मृतक (पीड़ित) की मृत्यु सामान्य परिस्थितियों में नहीं हुई हो, वह भी वैवाहिक घर में विवाह के 7 वर्ष की अवधि के भीतर, तो निर्दोषता साबित करने का दायित्व आरोपी पक्ष पर होता है।

(ग) पीडब्लू 1, पीडब्लू 2 और पीडब्लू 3 के बयानों को स्वीकार करने योग्य न मानते हुए खारिज नहीं किया जा सकता था, विशेषकर तब जब पूर्व में भी दहेज की मांग के साथ-साथ मारपीट और दुर्व्यवहार के संबंध में एफआईआर दर्ज की गई थी।

(घ) किसी भी प्रकरण में, दहेज की मांग को अपराध के घटित होने का एक कारक होने से इंकार नहीं किया जा सकता है, विशेषकर तब जब मृतका (पीड़िता) दहेज की मांग के बारे में शिकायत करती थी और मांग पूरी न होने पर उसे जान से मारने की धमकी दी जाती थी।

(ङ) वर्तमान प्रकरण साक्ष्य अधिनियम की धारा 113-बी के साथ पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 304-बी के आवश्यक तत्वों से संबंधित मानदंडों के दायरे में आता है, ताकि यह दर्शाया जा सके कि मृतका (पीड़िता) की मृत्यु दहेज के कारण हुई थी, जबकि यह सिद्धांत (उसकी मृत्यु से ठीक पहले) प्रस्तुत किया गया था।

(च) अन्यथा भी, जब मृतक (पीड़ित) की वैवाहिक घर में हत्या कर दी गई थी, तो साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के तहत भार अभियुक्त पर पड़ेगा, जिससे यह पता चलेगा कि वे निर्दोष हैं।

विश्लेषण

23. हमने विद्वान ए.जी.ए. तथा सूचना देने वाले के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर गहन विचार किया है तथा विचारण न्यायालय के अभिलेखों सहित अभिलेखों का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है।

24. प्रथम सूचना रिपोर्ट दिनांक 20.3.2018 को समय 00.20 बजे धारा 498ए, 304बी, भारतीय दंड संहिता और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अंतर्गत प्रथम सूचनाकर्ता पीडब्लू-1, अशोक कुमार द्वारा दर्ज कराई गई थी, जिसमें आरोप लगाया गया था कि मृतका (पीड़िता), जो उसकी पुत्री है, ने दिनांक 29.1.2016 को पीडब्लू-1, मनीष कुमार के साथ विवाह किया था। दहेज की पूर्ति हेतु एक चार पहिया वाहन और एक लाख रुपये नकद की नियमित मांग की जा रही थी और दहेज की मांग पूरी न होने पर मृतका (पीड़िता) की हत्या

कर दी गई। अभियुक्तों को फंसाने का पूरा आधार दहेज की मांग से संबंधित है। यह सिद्ध करने के लिए कि अभियुक्त द्वारा दहेज की मांग की जा रही थी, पीडब्लू-1 ने अपने मुख्य परीक्षण में यह साक्ष्य दिया था कि यद्यपि विवाह 29.1.2016 को संपन्न हुआ था, परन्तु मृतका (पीड़िता) के ससुराल में चार दिन रहने के बाद, जब वह उसे मायके ले जाने आया, तब मृतका (पीड़िता) ने उसे पहली बार बताया कि अभियुक्त द्वारा दहेज की मांग की जा रही है। उसने यह भी साक्ष्य दिया कि मृतका जब भी उससे मिलती थी, तो वह अपने परिवार को बताती थी कि अभियुक्त द्वारा दहेज की मांग की जा रही है और उसे धमकी दी जाती थी कि यदि दहेज नहीं दिया गया, तो उसे मार-पीट का सामना करना पड़ेगा और उसे हर स्तर पर मारा-पीटा जाता था। पीडब्लू 1 ने आगे आरोप लगाया है कि 18.06.2017 को मृतका को गाँव के बाहरी इलाके में स्थित उसके ससुराल वाले घर से निकाल दिया गया और उसके बाद 22.06.2017 को धारा 323, 498ए, 506 भा0द0सं0 सहपठित धारा 3/4 दहेज प्रतिषेध अधिनियम के तहत प्राथमिकी दर्ज की गई। इसके बाद समझौता हो गया और मृतका (पीड़िता) के ससुराल वालों के आश्वासन पर वह अपने ससुराल वापस चली गई। उसने आगे आरोप लगाया है कि मृतका (पीड़िता) की मृत्यु से लगभग एक महीने पहले कचौंसी नामक स्थान पर एक पारिवारिक विवाह समारोह में मृतका ने उससे मुलाकात की और दहेज की मांग पूरी करने का अनुरोध किया, अन्यथा उसे मार दिया जाएगा।

25. मृतका के चाचा पीडब्लू 2, अरूण कुमार ने भी गवाही देते समय यही कहानी सुनाई कि विवाह के पश्चात् जब वह पहली बार अपने मायके आई थी, तो उसने बताया था कि दहेज की मांग की जा रही है, साथ ही मांग पूरी न होने पर कचौंसी में एक रिश्तेदार के यहां घटना वाले दिन से एक माह पूर्व उसकी हत्या कर देने की शिकायत भी की गई थी।

26. इसी प्रकार, पीडब्लू 3, रीता, जो ममेरी ननद है, ने यह साक्ष्य दिया कि जब मृतका विवाह के पश्चात् प्रथम बार ससुराल से मायके गई तो उसने शिकायत की कि दहेज की मांग की जा रही है और यदि दहेज नहीं दिया गया तो उसके साथ दुर्व्यवहार और मारपीट की जाएगी। पीडब्लू 3 ने यह भी साक्ष्य दिया कि मृतका की मृत्यु से एक माह पूर्व उसकी ननद के विवाह में मृतका ने दहेज की मांग की शिकायत की थी और यदि दहेज नहीं दिया गया तो उसे मार डाला जाएगा।

27. पीडब्लू 1, पीडब्लू 2 और पीडब्लू 3 के बयान एक तथ्य पर टिके हैं कि दहेज की मांग विवाह के ठीक चार दिन बाद शुरू हुई थी, जब मृतका (पीड़िता) पहली बार ससुराल से मायके गई थी। दिलचस्प बात यह है कि मृतक (पीड़ित) के भाई, विनय पाल सिंह, पुत्र पीडब्लू 1 अशोक कुमार द्वारा 22.06.2017 को धारा 323, 498 ए, 506 भा0द0सं0 के तहत धारा 3/4 के साथ पढ़ें, पुलिस स्टेशन, मंगलपुर, रमाबाई नगर, एफआईआर संख्या 0265 में दर्ज की गई पहली सूचना रिपोर्ट में आरोप लगाया गया है कि हालांकि मृतक (पीड़ित) का ए 1 मनीष कुमार के साथ विवाह 29.01.2016 को हुआ था, लेकिन छह महीने तक चीजें सही तरीके से चलीं और उसके बाद 18.06.2017 को दहेज की मांग पूरी न होने के कारण मृतक को गांव के बाहरी इलाके में घर से निकाल दिया गया।

28. उपर्युक्त तथ्य स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि विवाह के ठीक चार दिन बाद, जब मृतका (पीड़िता) पहली बार अपने ससुराल से अपने मायके गई थी, दहेज की मांग के संबंध में पीडब्लू 1, पीडब्लू 2 और पीडब्लू 3 द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत झूठा साबित होता है।

29. इसके अलावा, दिनांक 18.6.2017 की घटना के संबंध में 22.06.2017 को प्राथमिकी दर्ज करने के अलावा, रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे पता चले कि दहेज की मांग के संबंध में कोई और शिकायत दर्ज करने की मांग की गई थी। इसके अतिरिक्त, न्यायालय ने पाया कि मृतक (पीड़िता) से उसकी मृत्यु की तारीख से एक महीने पहले धारा 164 द0प्र0सं0 के तहत अभियुक्त द्वारा दिए गए बयानों में दहेज की मांग का जो आरोप लगाया गया था, उसका उल्लेख द0प्र0सं0 की धारा 161 के तहत दर्ज किए गए पीडब्लू-1, पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 के बयानों में नहीं मिलता है।

30. पीडब्लू-6, बंदना सिंह, सर्किल ऑफिसर, जिन्होंने जांच की थी, ने पृष्ठ 10 पर अपने बयान में स्पष्ट रूप से कहा है कि द0प्र0सं0 की धारा 161 के तहत बयान में उक्त आरोप नहीं लगाए गए थे। उक्त बयान को दर्ज न करना ही यह दर्शाता है कि यह कुछ और नहीं बल्कि सुधार का एक उत्कृष्ट उदाहरण है, ताकि अभियुक्तों को फंसाने के लिए एक सिद्धांत विकसित किया जा सके।

31. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **युधिष्ठिर बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 1971 (3) एससीसी 436** के पैरा 11 में निम्नानुसार टिप्पणी की है:-

"पी.डब्लू. 1 और 6 द्वारा न्यायालय के समक्ष दिए गए साक्ष्य, पुलिस को दिए गए उनके बयानों से काफी भिन्न थे। न्यायालय के समक्ष उन्होंने अपने बयानों में काफी सुधार किया है। पुलिस को दिए गए बयानों में चूक बहुत गंभीर प्रकृति की थी, जिससे न्यायालय के समक्ष उनका साक्ष्य झूठा और अस्वीकार्य हो गया।"

32. हालाँकि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के तहत दिए गए बयानों पर ज्यादा भरोसा नहीं किया जा सकता, लेकिन वे इस बात के संकेत ज़रूर देते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत दिए गए बयानों में कोई अतिशयोक्ति है या नहीं। बेशक, प्रकरण के मौजूदा तथ्यों और परिस्थितियों में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के तहत दिए गए बयान अभियोजन पक्ष के गवाहों के आचरण को दर्शाने में अहम भूमिका निभाएँगे, खासकर तब जब पूरा प्रकरण दहेज की माँग पर टिका हो।

33. स्पष्टतः, प्रथम सूचना रिपोर्ट में निहित आरोपों तथा अभियोजन पक्ष के गवाहों की गवाही से पता चलता है कि अपराध के लिए दहेज एक प्रेरक कारक है तथा इसे प्रमाणित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 498ए तथा 304बी के प्रावधानों के साथ भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113बी का सहारा लिया गया है।

34. संहिता की धारा 498-ए के अंतर्गत अपराध पति या उसके संबंधी द्वारा उस स्थिति में लगाया जाता है जब महिला के साथ क्रूरता की जाती है। जैसे कि जानबूझकर किया गया कोई भी ऐसा आचरण जो महिला को आत्महत्या के लिए प्रेरित कर सकता है या उसके जीवन, अंग या स्वास्थ्य को गंभीर चोट या खतरा पहुँचा सकता है, महिला के उत्पीड़न के लिए उपयुक्त है, जहाँ ऐसा उत्पीड़न उसे या उसके किसी संबंधी को संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति की किसी अवैध माँग को पूरा करने के लिए मजबूर करने के उद्देश्य से किया जाता है या महिला या उसके किसी संबंधी द्वारा ऐसी माँग को पूरा करने में विफलता के कारण किया जाता है।

35. भारतीय दंड संहिता की धारा 304-बी लागू करने के लिए कुछ शर्तें पूरी होनी चाहिए, जैसे; (क) महिला की मृत्यु सामान्य परिस्थितियों के अलावा जलने या शारीरिक चोट के कारण हुई हो, (ख) मृत्यु उसकी शादी के 7 साल के भीतर हुई हो, (ग) उसकी मृत्यु से ठीक पहले, उसके पति या उसके पति के किसी रिश्तेदार द्वारा उसके साथ क्रूरता या उत्पीड़न किया गया हो और (घ) क्रूरता या उत्पीड़न दहेज की मांग के संबंध में हो।

36. यहां तक कि, धारा 113-बी केवल उन आकस्मिकताओं में लागू होती है जहां यह स्थापित हो जाता है कि महिला की मृत्यु से ठीक पहले, दहेज की मांग के संबंध में अभियुक्त द्वारा महिला के साथ क्रूरता या उत्पीड़न किया गया था।

37. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एसएलपी (द0प्र0सं0) संख्या 2122/2020, दिगंबर और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य से उत्पन्न आपराधिक अपील संख्या 2024 में 20.11.2024 को निर्णय दिया, निम्नानुसार टिप्पणी की है: -

22. इस न्यायालय के एक अन्य हालिया निर्णय, जयदीपसिंह प्रवीणसिंह चावड़ा एवं अन्य बनाम गुजरात राज्य 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 3679, में भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के अंतर्गत अपीलकर्ता का दोष बरकरार रखा गया, तथापि, भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तत्वों पर चर्चा की गई। यह इस प्रकार कहा गया:

"11. प्रावधान की उपरोक्त समझ से यह स्पष्ट है कि, केवल 'क्रूरता' ही अपराध गठित करने के लिए पर्याप्त नहीं है, बल्कि यह या तो गंभीर चोट पहुंचाने या उसे आत्महत्या के लिए मजबूर करने या उसे या उसके रिश्तेदारों को गैरविधिक मांगों को पूरा करने के लिए मजबूर करने के इरादे से किया जाना चाहिए।"

38. चरण सिंह @ चन्ननजीत सिंह बनाम उत्तराखंड राज्य (2023) 3 एससीआर 511 में दहेज मृत्यु स्थापित करने के लिए पूर्व शर्त पर विचार किया गया, जबकि बैजनाथ एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य (2017) 1 एससीसी 101 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के पहले के फैसले पर भरोसा किया गया था, जिसमें निम्नानुसार देखा गया था: -

13. उपरोक्त निर्णय के पैरा 32 में उठाई गई धारणा के संदर्भ में भारतीय दंड संहिता की धारा 304बी और भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113बी के संयुक्त वाचन पर चर्चा की गई थी, जिसका उद्धरण नीचे दिया गया है:-

"32. इस न्यायालय ने संहिता की धारा 304-बी और अधिनियम की धारा 113-बी के दायरे और उद्देश्य पर अक्सर विचार करते हुए [2023] 3 एससीआर 519 चरण सिंह @ चरणजीत सिंह बनाम उत्तराखंड राज्य ने यह प्रतिपादित किया है कि यह अनुमान इस तथ्य पर निर्भर है कि अभियोजन पक्ष पहले धारा 304-बी के अपराध के अवयवों को स्पष्ट करे जैसा कि शिंदो बनाम पंजाब राज्य [शिंदो बनाम पंजाब राज्य, (2011) 11 एससीसी 517: (2011) 3 एससीसी (आपराधिक) 394] और राजीव कुमार बनाम हरियाणा राज्य [राजीव कुमार बनाम हरियाणा राज्य, (2013) 16 एससीसी 640: (2014) 6 एससीसी (आपराधिक) 346] में दोहराया गया है। बाद के फैसले में, इस न्यायालय ने प्रतिपादित किया कि संहिता की धारा 304-बी के तहत दहेज हत्या के आवश्यक तत्वों में से एक यह है कि अभियुक्त ने महिला की मृत्यु से ठीक पहले दहेज की मांग के संबंध में उसके साथ क्रूरता की होगी और इस तत्व को अभियोजन पक्ष द्वारा उचित संदेह से परे साबित किया जाना चाहिए और केवल तभी न्यायालय यह मान लेगा कि अभियुक्त ने अधिनियम की धारा 113-बी के तहत दहेज हत्या का अपराध किया है। इसने अनुमोदन के साथ, के. प्रेमा एस. राव. यदला श्रीनिवास राव [के. प्रेमा एस. राव. यदला श्रीनिवास राव, (2003) 1 एससीसी 217: 2003 एससीसी (आपराधिक) 271] में इस न्यायालय के पहले के फैसले को संदर्भित किया, जिसके अनुसार संहिता की धारा 304-बी के प्रावधान को आकर्षित करने के लिए, अपराध के मुख्य तत्वों में से एक जिसे स्थापित करने की आवश्यकता है, वह यह है कि "उसकी मृत्यु से ठीक पहले" उसे "दहेज की मांग के संबंध में" क्रूरता और उत्पीड़न के अधीन किया गया था।

39. करण सिंह बनाम हरियाणा राज्य, आपराधिक अपील संख्या 1076/2014, दिनांक 31.01.2025 को निर्णीत, में निम्नलिखित अवलोकन किया गया:-

"कुछ बुनियादी बातें हैं जो प्रकरण की जड़ तक जाती हैं। दहेज की मांग के बारे में गवाही देते हुए, उसने अपीलकर्ता द्वारा किसी विशेष क्रूरता या उत्पीड़न के कृत्य की गवाही नहीं दी है। यह धारा 304बी का एक अनिवार्य तत्व है। पीडब्लू संख्या 6 के साक्ष्य से ऐसा नहीं लगता।"

40. उपर्युक्त निर्णयों में उल्लिखित विधि के सिद्धांत स्पष्ट रूप से यह आदेश देते हैं कि प्रकरण को भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113बी के साथ पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 498ए, 304बी के दायरे में लाने के लिए, यह साक्ष्य देते समय कि मृत्यु दहेज की मांग के कारण हुई थी, अभियोजन पक्ष के गवाहों की गवाही के समर्थन में क्रूरता या उत्पीड़न के किसी विशेष कृत्य की ओर संकेत किया जाना चाहिए।

41. प्रकरण के वर्तमान तथ्य में उपर्युक्त निर्णयों को लागू करते हुए, हम पाते हैं कि दहेज की मांग के कारण मृत्यु विभिन्न कारणों से साबित नहीं हुई है, अर्थात् (क) यह सिद्धान्त कि विवाह के चार दिन बाद ही दहेज

की मांग की जा रही थी, झूठा साबित होता है क्योंकि दिनांक 18.6.2017 की घटना से संबंधित 22.6.2017 को दर्ज की गई एफआईआर में विवाह के चार दिन बाद दहेज की मांग के बारे में कुछ नहीं कहा गया है। (ख) रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है कि मृतक पीड़िता पर क्रूरता की गई थी, क्योंकि दिनांक 18.6.2017 की घटना और 22.6.2017 को एफआईआर दर्ज करने के बाद, रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है जो दर्शाता हो कि मृतक (पीड़ित) के साथ क्रूरता की गई थी।

42. अब अगला प्रश्न यह है कि क्या अभियुक्तगण मनीष कुमार और ए2 राजेश्वरी घटना के दिन उपस्थित थे।

43. डीडब्ल्यू1 सुधीर कुमार ने अपनी गवाही में कहा है कि ए1 मनीष कुमार उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन उनके घर में मौजूद थे क्योंकि वह अपने बीमार शिक्षक लज्जाराम से मिलने उनके घर आए थे। इसके अलावा, उन्होंने यह भी कहा कि ए1 मनीष कुमार के घर से दो या तीन महिलाएं आईं और बताया कि ए1 मनीष कुमार मृतक (पीड़िता) की पत्नी ने कीटनाशक की गोलियां खा ली थीं और उसके बाद ए1 मनीष कुमार, डीडब्ल्यू1 सुधीर कुमार और ग्रामीणों के साथ उस घर गए जहां मृतक पीड़िता ने कहा कि उसने गलती से कीटनाशक की गोलियां बुखार की दवा समझकर खा ली थीं। डीडब्ल्यू1 सुधीर कुमार की उक्त गवाही बरकरार है क्योंकि अभियोजन पक्ष द्वारा की गई जिरह में अभियोजन पक्ष ने उक्त गवाही को खारिज करने के लिए कोई प्रश्न नहीं पूछा है। एक बार जब स्थिति ऐसी हो जाती है कि डीडब्ल्यू1 की गवाही बरकरार रहती है तो यह अत्यधिक संदिग्ध हो जाता है कि ए1 मनीष कुमार मौजूद थे

44. पीडब्लू 2, अरूण कुमार ने भी अपनी जिरह में पीडब्लू 2 राजेश्वरी देवी के संबंध में यह साक्ष्य दिया कि पिछले 30-32 वर्षों से बृज किशोर पाल मध्य प्रदेश में रहकर सरकारी नौकरी कर रहे थे। इसी प्रकार, पीडब्लू 3 रीता ने भी अपनी जिरह में यह साक्ष्य दिया कि अभियुक्त पीडब्लू 2, राजेश्वरी देवी मध्य प्रदेश में रह रही थीं जहाँ उनके पति काम करते थे। इस प्रकार, अभिलेखों में ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जो यह दर्शाए कि पीडब्लू 2, राजेश्वरी देवी आपराधिक गतिविधियों में संलिप्त थीं।

45. निश्चित रूप से, यह राय बनाने में कि अभियुक्त वास्तव में निर्दोष है या नहीं, आचरण भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जहां तक सहायक अभियन्ता मनीष कुमार का संबंध है, डीडब्लू 1, सुधीर कुमार के बयान से यह बात सामने आई है कि उसने मृतका (पीड़िता) के ससुराल वालों को फोन करके उसकी मृत्यु के बारे में बताया था। मृतका (पीड़िता) के शव के साथ घर में उसकी उपस्थिति भी दर्शाई गई है। डीडब्लू 1, सुधीर कुमार के बयान से यह भी बात सामने आई है कि मृतका (पीड़िता) को डीडब्लू 1, मनीष कुमार उपचार के लिए ले गया था। उपरोक्त तथ्य और परिस्थितियां स्पष्ट रूप से दर्शाती हैं कि ऐसा कुछ भी असामान्य नहीं है जिससे यह संकेत मिले कि अभियुक्त 1 ने कोई आपराधिक कृत्य किया है।

46. फिर भी, अभियोजन पक्ष के गवाह के बयान या अन्य किसी भी अभिलेख में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि ए1, मनीष कुमार और ए2, राजेश्वरी देवी अपराध में शामिल थे।

47. विद्वान अवर न्यायालय द्वारा अभियुक्त को बरी करने के निर्णय और पारित आदेश पर समग्र रूप से गहन विचार करते हुए, यह न्यायालय यह पाता है कि विद्वान अवर न्यायालय ने कोई स्पष्ट अवैधता या विकृतता नहीं की है क्योंकि विद्वान अवर न्यायालय ने अभियुक्त को बरी करते समय प्रकरण के प्रत्येक पहलू का विधि की चारों दिशाओं से मूल्यांकन किया है। अवर न्यायालय द्वारा लिया गया यह दृष्टिकोण एक संभावित और प्रशंसनीय दृष्टिकोण है जो न केवल अभियोजन पक्ष के गवाहों की गवाही और उसमें प्रस्तुत दस्तावेजों के मूल्यांकन पर आधारित है, बल्कि विधि के उन प्रमुख सिद्धांतों पर भी आधारित है जो संबंधित विषय को नियंत्रित करते हैं।

48. इस प्रकार, इस न्यायालय के पास इस बात से सहमत होने के अलावा कोई विकल्प नहीं है कि विचारण न्यायालय का निर्णय और आदेश जिसके द्वारा अभियुक्त को बरी किया गया है।

49. परिणामस्वरूप, अपील की अनुमति देने का कोई आधार नहीं बनता। तदनुसार, अपील की अनुमति अस्वीकृत की जाती है। चूंकि अपील की अनुमति अस्वीकृत हो जाती है, अतः अपीलकर्ता द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 378(3) के अंतर्गत प्रस्तुत शासकीय अपील और सूचनाकर्ता द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 372 के अंतर्गत प्रस्तुत अपील भी अस्वीकृत की जाती है।

50. अभिलेख अवर न्यायालय को वापस प्रेषित किए जाएं।

(2025) 2 ILRA 42

अपीलीय अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 13.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति रजनीश कुमार

द्वितीय अपील संख्या- 12 वर्ष 2022

राम लाल (मृत) एवं अन्य

...अपीलकर्ता

बनाम

श्रीमती विजय लक्ष्मी एवं अन्य

...प्रतिवादी

अपीलकर्तागण की ओर से अधिवक्ता:

बहार अली, रिपु दमन शाही

प्रतिवादीगण की ओर से अधिवक्ता:

सभापति वर्मा, आभा बाजपेयी, अमरेंद्र कुमार बाजपेयी, राकेश कुमार मिश्रा, तपस्या बाजपेयी, विनोद कुमार सिंह

सिविल विधि - सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 - धारा 100 - विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय, अभिलेख पर मौजूद दलीलों, साक्ष्यों और सामग्री के आधार पर वादी/प्रतिवादी संख्या 1 के कब्जे का निष्कर्ष दर्ज किए बिना स्थायी निषेधाज्ञा की राहत नहीं दे सकती थी, खासकर जब विवादित भूमि पहचान योग्य नहीं थी क्योंकि उसी भूमि के लिए स्थायी निषेधाज्ञा और बिक्री विलेख को रद्द करने के लिए वाद दायर किया गया था - भले ही, वादी प्रतिवादी संख्या 1 विधि के अनुसार सक्षम न्यायालय द्वारा पारित विभाजन के आदेश के आधार पर उक्त हिस्से पर कब्जा कर सकता है क्योंकि जिस भूमि पर स्थायी निषेधाज्ञा की राहत दी गई थी, वह वर्तमान कार्यवाही में विशेष रूप से मुद्दा नहीं थी क्योंकि विवादित भूमि पहचान योग्य नहीं पाई गई थी - इस प्रकार, विवादित निर्णय और आदेश विधि की नजर में पोषणीय नहीं हैं और इसे अपास्त किया जाता है। (प्रस्तर 18)

अपील स्वीकृत। (ई-13)

उद्धृत प्रकरण की सूची:

1. एस.के. गोलाम लालचंद बनाम नंदू लाल शर्मा @ नंदू लाल केशरी @ नंदू लाल बेयस और अन्य, सिविल अपील संख्या 4177/2024, आदेश दिनांक 10.09.2024
2. राम बालक सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, सिविल अपील संख्या 1627/2016, आदेश दिनांक 01.05.2024
3. अनाथुला सुधाकर बनाम पी. बुची रेड्डी (मृत) जरिए उत्तराधिकारी एवं अन्य; (2008) 4 एससीसी 594, (पैरा 15)
4. बालकृष्ण दत्तात्रेय गलांडे बनाम बालकृष्ण रामभरोसे गुप्ता एवं अन्य; (2020) 19 एससीसी 119

(माननीय न्यायमूर्ति रजनीश कुमार द्वारा प्रदत्त)

1. अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता श्री बहार अली और प्रतिवादी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता सुश्री तपस्या बाजपेयी के साथ श्री अमरेन्द्र कुमार बाजपेयी को सुना गया। प्रतिवादी संख्या 2 की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ।

2. सिविल प्रक्रिया संहिता (जिसे आगे सीपीसी कहा जाएगा) की धारा 100 के तहत यह द्वितीय अपील, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 6, सीतापुर द्वारा सिविल अपील संख्या 60/2013 (श्रीमती विजय

लक्ष्मी बनाम राम लाल (मृत) उनके विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा प्रतिस्थापित) में पारित दिनांक 14.10.2021/26.10.2021 के निर्णय और डिक्री को रद्द करने के लिए दायर की गई है।

3. निम्नलिखित महत्वपूर्ण विधि प्रश्न पर अपील स्वीकार की गई है :-

"1. क्या विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने वादी/प्रतिवादी के कब्जे के निष्कर्ष को दर्ज किए बिना स्थायी निषेधाज्ञा प्रदान करते समय गलती की थी, जबकि बिक्री विलेख को रद्द करने के लिए मुकदमे को खारिज कर दिया गया था?"

4. अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि वादी-प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दायर स्थायी निषेधाज्ञा और विक्रय विलेख को रद्द करने के लिए वाद को अवर न्यायालय ने अभिलेख पर प्रस्तुत दलीलों, साक्ष्यों और सामग्री पर विचार करने के बाद खारिज कर दिया था, लेकिन अवर अपीलीय न्यायालय ने, यद्यपि विवादित भूमि के हिस्से की पहचान न होने के आधार पर विक्रय विलेख को रद्द करने के संबंध में वाद को खारिज करने के अवर न्यायालय के निर्णय और पारित डिक्री को बरकरार रखा, लेकिन वादी-प्रतिवादी संख्या 1 को स्थायी निषेधाज्ञा का हकदार माना और गाटा संख्या 233 के 1/4 पश्चिमी हिस्से पर स्थायी निषेधाज्ञा की राहत बिना किसी साक्ष्य और उक्त हिस्से पर वादी-प्रतिवादी संख्या 1 के कब्जे के किसी निष्कर्ष को दर्ज किए बिना प्रदान कर दी। इस प्रकार, प्रस्तुत किया गया है कि अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री विधि की दृष्टि में टिकने योग्य नहीं है और इसे रद्द किया जाना चाहिए।

5. इसके विपरीत, वादी-प्रतिवादी सं. 1 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि वादी-प्रतिवादी सं. 1 की हित-पूर्ववर्ती ने पारिवारिक समझौता कर लिया था, जिसके आधार पर उनके हिस्से पर उनका कब्जा था और तदनुसार विवादित भूमि पर उनका कब्जा था। पक्षों के कब्जे का निर्णय विभाजन के वाद में आयोग की रिपोर्ट के आधार पर किया गया है। इस प्रकार, विधि के अनुसार निषेधाज्ञा उचित रूप से प्रदान की गई है क्योंकि वादी-प्रतिवादी सं. 1 गाटा सं. 233 के पश्चिमी ओर 1/4 भाग पर काबिज है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विभाजन के बिना विक्रय विलेख निष्पादित नहीं किया जा सकता था। हालाँकि, चूँकि अवर न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के उस भाग को वादी-प्रतिवादी सं. 1 द्वारा चुनौती नहीं दी गई है, इसलिए इस अपील में वह मुद्दा नहीं है।

6. वादी-प्रतिवादी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता ने उपरोक्त प्रस्तुतियों के आधार पर तर्क दिया कि अवर अपीलीय न्यायालय ने विधि के अनुसार उचित रूप से स्थायी निषेधाज्ञा प्रदान की है। 14.10.2021 के विवादित निर्णय और डिक्री में कोई अवैधता या त्रुटि नहीं है। उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एस.के. गोলাম लालचंद बनाम नंदू लाल शाँ उर्फ नंद लाल केशरी उर्फ नंदू लाल बेयस एवं अन्य; सिविल अपील संख्या 4177/2024 में पारित दिनांक 10.09.2024 के निर्णय और आदेश तथा राम बालक सिंह बनाम बिहार राज्य

एवं अन्य; सिविल अपील संख्या 1627/2016 में पारित दिनांक 01.05.2024 के निर्णय और आदेश का हवाला दिया और भरोसा जताया।

7. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण के तर्कों पर विचार किया है तथा अभिलेखों का अवलोकन किया है।

8. वादी-प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा स्थायी निषेधाज्ञा एवं विक्रय विलेख निरस्तीकरण हेतु वाद दायर किया गया था, जिसमें आरोप लगाया गया था कि विवादित भूमि अर्थात् गाटा संख्या 233, जो ग्राम मंसूरपुर में स्थित है और गाटा संख्या 208, जो ग्राम सीतापुर (नगर पालिका परिषद की सीमा के बाहर) परगना, तहसील एवं जिला सीतापुर में स्थित है, पूर्वजों से चली आ रही है, जो वादी-प्रतिवादी संख्या 1 एवं सह-खातेदार मुकुंद मुरारी आदि के नाम अधिकार अभिलेख में दर्ज है। दोनों भूमियाँ आस-पास स्थित हैं। वादी-प्रतिवादी संख्या 1 और सह-खातेदारों के बीच बहुत पहले एक पारिवारिक समझौता हुआ था और उसी के आधार पर पक्षकार अपने हिस्से के मालिक और काबिज थे और तदनुसार वादी-प्रतिवादी संख्या 1 गाटा संख्या 233 और 208 के 1/4 हिस्से पर काबिज था। प्रतिवादी-प्रतिवादी संख्या 2 ने दर्ज खातेदार रामजी पुत्र मदन गोपाल के साथ मिलीभगत करके गाटा संख्या 233, जिसका क्षेत्रफल 1.615 हेक्टेयर है, में 1/12वां हिस्सा विक्रय पत्र के माध्यम से खरीद लिया, जिसके कारण पक्षकारों के बीच विवाद हो गया। वादी-प्रतिवादी संख्या 1 ने सहायक कलेक्टर, प्रथम श्रेणी (परगना मजिस्ट्रेट, सीतापुर) के समक्ष बंटवारे के लिए वाद दायर किया, जिसमें उनके द्वारा एक प्रारंभिक डिक्री पारित की गई और क्षेत्र के लेखपाल को अंतिम डिक्री के लिए बंटवारे का नक्शा प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया इसकी जानकारी होने के बावजूद उसने बिक्री विलेख निष्पादित करवा लिया, जो निरस्त किये जाने योग्य है।

9. प्रतिवादी संख्या 2/अपीलकर्तागण के हित पूर्ववर्ती ने लिखित बयान दाखिल कर कथित विभाजन से इनकार किया और विभाजन के लिए मुकदमे के लंबित होने की जानकारी दी, जिसके द्वारा मुकदमे का विरोध किया गया। आगे कहा गया कि गाटा संख्या 233 के सह-खातेदारों में से एक रामजी पुत्र मदन गोपाल ने 20.01.2000 को प्रतिवादी-प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में 50,000/- रुपये के विचारार्थ उपरोक्त बिक्री विलेख निष्पादित किया और तदनुसार सह-खातेदार के रूप में म्यूटेशन भी किया गया। वादी-प्रतिवादी संख्या 1 ने उक्त बिक्री विलेख और म्यूटेशन के संबंध में कभी आपत्ति नहीं की। प्रतिवादी-प्रतिवादी संख्या 2 ने 08.11.2007 को पंजीकृत बिक्री विलेख के माध्यम से प्रतिवादी संख्या 1/अपीलकर्तागण के पक्ष में भूमि के उक्त हिस्से का बिक्री विलेख निष्पादित किया था। यह भी कहा गया है कि प्रतिवादी संख्या 1/अपीलकर्तागण द्वारा दाखिल नामांतरण के आवेदन में, वादी-प्रतिवादी संख्या 1 को छोड़कर, किसी ने भी नायब तहसीलदार, सदर-सीतापुर के न्यायालय में आपत्ति दर्ज नहीं की थी। उक्त नामांतरण वाद प्रतिवादी संख्या 1/अपीलकर्तागण के पक्ष में दिनांक 05.05.2008 के आदेश द्वारा निर्णीत किया गया है। इसके अनुसरण में प्रतिवादी-प्रतिवादी संख्या 2 का नाम हटाकर, प्रतिवादी संख्या 1/अपीलकर्तागण का नाम दर्ज किया गया था। वादी-प्रतिवादी संख्या 1 ने दिनांक 05.05.2008 के आदेश के विरुद्ध उप-विभागीय अधिकारी के न्यायालय में अपील दायर की, जिसे दिनांक 31.12.2008 के आदेश

द्वारा खारिज कर दिया गया है। इस प्रकार, उक्त आदेश उन पर बाध्यकारी है। आवश्यक पक्षों के कार्यान्वयन न करने के कारण वाद पोषणीय नहीं है।

10. पक्षकारों की दलीलों के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा आठ मुद्दे तय किए गए। तत्पश्चात पक्षकारों द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किए गए। दलीलों, साक्ष्यों एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के पश्चात, विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 31.07.2013 के निर्णय एवं डिक्री द्वारा वाद खारिज कर दिया गया। व्यथित होकर वादी-प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा अवर अपीलीय न्यायालय में सिविल अपील दायर की गई। अवर अपीलीय न्यायालय ने दो बिंदुओं पर निर्णय निर्धारित किया तथा अपील को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए वादी-प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में गाटा संख्या 233 के पश्चिमी भाग के 1/4 भाग पर स्थायी निषेधाज्ञा का अनुतोष प्रदान किया। अतः यह द्वितीय अपील दायर की गई है, जो उपरोक्त सारवान विधि प्रश्न पर स्वीकार की गई है।

11. विद्वान विचारण न्यायालय ने, पक्षों की दलीलों, साक्ष्यों और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के बाद, मुद्दा संख्या 1 और 2 अर्थात् "क्या विवादित 12.11.2007 का विक्रय विलेख वादपत्र में बताए गए आधारों पर रद्द किए जाने योग्य है" और "क्या वादी विवादित भूमि का स्वामी है और उसका कब्जा है" पर निर्णय देते हुए यह माना कि रामजी, जो वादी-प्रतिवादी संख्या 1 की सह-खातेदार थी, आपसी समझौते और बंटवारे के आधार पर अपने हिस्से पर काबिज थी, उसने प्रतिवादी/प्रतिवादी संख्या 2 को 21.01.2000 को अर्थात् लगभग 13 वर्ष पूर्व पंजीकृत विक्रय विलेख निष्पादित किया था और परिणामस्वरूप उसका नाम राजस्व अभिलेखों में गैर-हस्तांतरणीय अधिकारों वाली भूमिधर और सह-खातेदार के रूप में दर्ज किया गया था। उसने यह भी स्वीकार किया है कि प्रतिवादी-प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा रामजी से खरीदी गई भूमि उसने प्रतिवादी संख्या 1/अपीलकर्तागण के पक्ष में पंजीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से 12.11.2007 को बेच दी है। तत्पश्चात, राजस्व अभिलेखों में प्रतिवादी-प्रतिवादी संख्या 2 के स्थान पर प्रतिवादी संख्या 1/अपीलकर्तागण का नाम दर्ज हो गया है। अतः, चूंकि दिनांक 20.01.2000 के पूर्व विक्रय विलेख को चुनौती नहीं दी गई है, इसलिए प्रतिवादी/प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा प्रतिवादी संख्या 1/अपीलकर्तागण के पक्ष में निष्पादित बाद के विक्रय विलेख को चुनौती देना गलत और मान्य नहीं है। तदनुसार, वादी-प्रतिवादी संख्या 1 के विरुद्ध नकारात्मक रूप से मुद्दों का निर्णय किया गया क्योंकि वह भी कब्जे में नहीं पाई गई।

12. वादी-प्रतिवादी संख्या 1 ने, विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री से व्यथित होकर, उसे अवर अपीलीय न्यायालय में सिविल अपील में चुनौती दी। अवर अपीलीय न्यायालय ने विक्रय पत्र के निरस्तीकरण के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्षों की पुष्टि की और वादी-प्रतिवादी संख्या 1 के इस तर्क को खारिज कर दिया कि विभाजन के वाद में, जिसमें उसे गाटा संख्या 233 के पश्चिमी भाग का 1/4 भाग प्राप्त हुआ है, संबंधित न्यायालय द्वारा 07.08.2013 को अंतिम डिक्री पारित कर दी गई है। इस आधार पर कि विचाराधीन विक्रय पत्र 12.11.2007 को निष्पादित किया गया था और अंतिम डिक्री 07.08.2013 को पारित की गई थी। इसके अतिरिक्त, वादी-प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा यह भी नहीं बताया गया है कि विवादित भूमि का

कौन-सा भाग प्रतिवादी/प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा प्रतिवादी संख्या 1/अपीलकर्तागण को विक्रय-पत्र के माध्यम से बेचा गया है, अर्थात् उसकी सीमाओं का खुलासा नहीं किया गया है। वादी-प्रतिवादी संख्या 1 ने यह भी नहीं बताया है कि आपसी बंटवारे के बाद भूमि के किस भाग पर उसका कब्जा था और क्या उक्त भूमि के भाग का विक्रय-पत्र निष्पादित किया गया है। यह भी स्पष्ट नहीं किया गया है कि प्रथम विक्रय-पत्र पर आपत्ति क्यों नहीं की गई, जबकि वह उसी समय उचित कार्रवाई कर सकती थी, अतः प्रश्नगत विक्रय-पत्र को निरस्त करने का प्रश्न ही नहीं उठता। तथापि, यह मानते हुए कि उपरोक्त आधारों पर बिक्री विलेख को रद्द करने का कोई आधार नहीं है, जिसमें यह भी शामिल है कि प्रश्नगत बिक्री विलेख के विवादित भूमि की सीमाओं को स्पष्ट नहीं किया गया है और वादी-प्रतिवादी संख्या 1 किस हिस्से पर काबिज थी, गाटा संख्या 233 के 1/4 पश्चिमी भाग पर स्थायी निषेधाज्ञा की राहत इस आधार पर प्रदान की गई कि यह उसे न्यायालय द्वारा दिया गया है और वह उस पर काबिज है, जो उपरोक्त निष्कर्षों के विपरीत है और अभिलेख पर मौजूद दलीलों, साक्ष्यों और सामग्री के आधार पर वादी-प्रतिवादी संख्या 1 के कब्जे के किसी भी निष्कर्ष को दर्ज करना, जो केवल वादी-प्रतिवादी संख्या 1 के तर्क के आधार पर है और न्यायालय द्वारा किसी अन्य कार्यवाही में पारित आदेश के आधार पर हो सकता है, जो वर्तमान कार्यवाही में कोई साक्ष्य और प्रमाण प्रस्तुत किए बिना नहीं किया जा सकता था।

13. यह भी संज्ञान में आया है कि स्थायी निषेधाज्ञा और विक्रय विलेख के निरस्तीकरण के लिए वाद उस भूमि के संबंध में दायर किया गया था, जिसके संबंध में विक्रय विलेख निष्पादित किया गया था और स्वयं अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों के अनुसार, उक्त भूमि पहचान योग्य नहीं है, इसलिए, जब भूमि पहचान योग्य नहीं थी जो वाद में शामिल थी, तो बिना किसी ठोस साक्ष्य के यह नहीं कहा जा सकता है कि इस वाद में विवाद गाटा संख्या 233 के पश्चिमी तरफ 1/4 भाग के संबंध में है, इसलिए स्थायी निषेधाज्ञा की राहत अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा प्रदान नहीं की जा सकती थी।

14. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **अनाथुला सुधाकर बनाम पी. बुची रेड्डी (मृत) व अन्य (2008) 4 एससीसी 594** के प्रकरण में यह निर्णय दिया है कि प्रतिवादी को वादी के कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा के वाद में, वादी को यह सिद्ध करना होगा कि वाद की तिथि तक वह वादाधीन संपत्ति पर वैध कब्जे में था और प्रतिवादी ने ऐसे वैध कब्जे में हस्तक्षेप करने या उसे बाधित करने का प्रयास किया था। प्रासंगिक अनुच्छेद 15 नीचे उद्धृत किया गया है।

"15. प्रतिवादी को वादी के कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा के मुकदमे में, वादी को यह स्थापित करना होगा कि मुकदमे की तिथि तक वह वादी संपत्ति पर वैध कब्जे में था और प्रतिवादी ने ऐसे वैध कब्जे में हस्तक्षेप करने या उसे बाधित करने का प्रयास किया। जहाँ संपत्ति एक इमारत या संलग्न भूमि वाली इमारत है, वहाँ कब्जा स्थापित करने में अधिक कठिनाई नहीं हो सकती है। वादी स्वयं या अपने परिवार के सदस्यों या एजेंटों या पट्टेदारों/लाइसेंसधारियों के माध्यम से भौतिक या वैध कब्जे को साबित कर सकता है। बिना संरचनाओं वाली भूमि के संबंध में भी, उदाहरण के लिए कृषि भूमि, वास्तविक उपयोग और खेती के

संदर्भ में कब्जा स्थापित किया जा सकता है। ऐसे मुकदमे में स्वामित्व का प्रश्न मुद्दा नहीं है, हालाँकि यह आकस्मिक या अनुपाश्विक रूप से उत्पन्न हो सकता है।"

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **बालकृष्ण दत्तात्रेय गलांडे बनाम बालकृष्ण रामभरोसे गुप्ता एवं अन्य (2020) 19 एससीसी 119** के प्रकरण में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि स्थायी निषेधाज्ञा प्रदान करने के लिए वादी को वास्तविक कब्जा साबित करना होगा और स्थायी निषेधाज्ञा केवल उसी व्यक्ति को दी जा सकती है जिसका संपत्ति पर वास्तविक कब्जा हो। प्रथम प्रतिवादी-वादी पर यह साबित करने का भार है कि वाद की तिथि पर संपत्ति पर उसका वास्तविक और भौतिक कब्जा था।

16. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **एस.के. गुलाम लालचंद बनाम नंदू लाल शॉ उर्फ नंद लाल केशरी उर्फ नंदू लाल बेयस एवं अन्य (पूर्वोक्त)** प्रकरण में यह अभिनिर्धारित है कि विवादित संपत्ति, जो अविभाजित है, सह-स्वामियों के पास छोड़ दी गई है ताकि वे हस्तांतरण से पहले विधि के अनुसार अपने शेयरों का निर्धारण और सीमांकन करवा सकें। इससे प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता को कोई सहायता नहीं मिलती।

17. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **राम बालक सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य (पूर्वोक्त)** के प्रकरण में यह माना है कि जहाँ चकबंदी न्यायालय ने पहले ही किसी एक पक्ष के अधिकारों को मान्यता देते हुए आदेश पारित कर दिया है, वहाँ चकबंदी अधिनियम की धारा 37 के अंतर्गत कोई बाधा नहीं है और सिविल न्यायालय चकबंदी अधिकारी द्वारा पारित आदेश के अंतिम हो जाने के बाद उसे अनदेखा करने या उलटने के लिए सक्षम नहीं है। इससे प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता को कोई सहायता नहीं मिलती।

18. उपर्युक्त के मद्देनजर और प्रकरण के समग्र तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय, अभिलेख पर मौजूद दलीलों, साक्ष्यों और सामग्री के आधार पर वादी-प्रतिवादी संख्या 1 के कब्जे का निष्कर्ष दर्ज किए बिना स्थायी निषेधाज्ञा की राहत प्रदान नहीं कर सकती थी, खासकर जब विवादित भूमि पहचान योग्य नहीं है क्योंकि वाद एक ही भूमि के लिए स्थायी निषेधाज्ञा और बिक्री विलेख को रद्द करने के लिए दायर किया गया था। भले ही, वादी-प्रतिवादी संख्या 1 विधि के अनुसार सक्षम न्यायालय द्वारा पारित विभाजन के आदेश के आधार पर उक्त हिस्से पर काबिज हो, क्योंकि जिस भूमि पर स्थायी निषेधाज्ञा की राहत प्रदान की गई है, वह वर्तमान कार्यवाही में विशेष रूप से मुद्दागत नहीं है क्योंकि इन कार्यवाहियों में विवादित भूमि पहचान योग्य नहीं पाई गई है। इस प्रकार, अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश विधि की दृष्टि में टिकने योग्य नहीं है और इसे रद्द किया जा सकता है।

19. तदनुसार, अपील **स्वीकार** की जाती है। दिनांक 14.10.2021/26.10.2021 के आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री को वादी-प्रतिवादी संख्या 1 को स्थायी निषेधाज्ञा की राहत प्रदान करने की सीमा तक, आक्षेपित निर्णय एवं

डिक्री के शेष भाग में कोई परिवर्तन किए बिना, अपास्त किया जाता है, जो यथावत रहेगा। लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।

(2025) 2 ILRA 48

अपील अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 28.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति श्री रजनीश कुमार

द्वितीय अपील संख्या- 42 सन् 2013

जुगी लाल

...अपीलकर्ता

बनाम

गुरु प्रसाद

...प्रत्यर्थी

अपीलकर्ता के अधिवक्ता:

वेद प्रकाश मिश्रा, अनुज पाण्डेय, निशांत शुक्ला, विजय कृष्ण

प्रत्यर्थी के अधिवक्ता:

सम्पूर्णानन्द शुक्ला, अशोक कुमार भटनागर, सुरेश सिंह

सिविल विधि - सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 - आदेश 41 - नियम 31 - पंजीकरण अधिनियम, 1908 - धारा 34 एवं 35 - यह आपति ली गई है कि यदि वसीयत धोखाधड़ी के आधार पर निष्पादित की गई थी, तो वादी-प्रत्यर्थी के पिता पंजीकरण प्राधिकारी के समक्ष जाँच के दौरान इस संबंध में बता सकते थे - यह आपति अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष नहीं ली गई - अपीलकर्ता द्वारा कोई साक्ष्य प्रस्तुत या इंगित नहीं किया गया - वसीयत के साक्षी बचाव साक्षी-2 द्वारा वसीयत के पंजीकरण या प्रत्यर्थी के पिता की पंजीकरण प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुति के संबंध में कोई साक्ष्य नहीं दिया गया, तथा वसीयत पर अंकन के अनुसार, निष्पादक की पहचान बचाव साक्षी-2 एवं पटनदीन द्वारा की गई है - अतः यह आपति भ्रान्तिपूर्ण एवं अस्वीकार्य है। (प्रस्तर 25)

निम्न अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि यद्यपि निर्धारण हेतु पृथक बिंदु नहीं बनाए गए, तथापि परीक्षण न्यायालय द्वारा निर्मित सभी 7 मुद्दों पर पृथक रूप से विचार किया गया तथा अभिलेख पर उपलब्ध अभिलेखीय साक्ष्य, कथनों एवं सामग्री पर विचार कर स्वतंत्र निष्कर्ष अंकित किए गए - अतः नियम का पर्याप्त अनुपालन हुआ - प्रत्यर्थी की पैतृकता एवं वसीयत के निष्पादन में धोखाधड़ी

संबंधी निष्कर्ष, अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर आधारित हैं तथा उनमें कोई विधिक त्रुटि परिलक्षित नहीं होती। (प्रस्तर 27, 31)

अपील निरस्त। (ई-13)

उद्धृत प्रकरण की सूची:

1. मृगेंद्र इंद्रवदन मेहता एवं अन्य बनाम अहमदाबाद नगर निगम; (2024) 6 एस.सी.आर. 594, (प्रस्तर 30)
2. बद्री एवं अन्य बनाम जटा शंकर एवं अन्य, द्वितीय अपील संख्या 162 सन् 2011, आदेश दिनांक 03.02.2020
3. धन्नूलाल एवं अन्य बनाम गणेशराम एवं अन्य; 2015 (12) एससीसी 301, (प्रस्तर 19)
4. मीना प्रधान बनाम कमला प्रधान एवं अन्य; 2023 (9) एससीसी 734, (प्रस्तर 10, 11)
5. सूर्यकुंवारी बनाम नन्हू एवं अन्य; 2019 (37) एलसीडी. 2346, (प्रस्तर 11 से 16)

(माननीय न्यायमूर्ति रजनीश कुमार द्वारा पारित)

1. प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री विजय कृष्ण और वादी-प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री अशोक कुमार भटनागर को सुना गया।
2. वर्तमान द्वितीय अपील सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे आगे सिविल प्रक्रिया संहिता कहा जाएगा) की धारा 100 के अंतर्गत दिनांक 23.01.1984 को पारित निर्णय एवं डिक्री, जो नियमित वाद संख्या 197/91 (गुरु प्रसाद बनाम जुग्गी लाल) में षष्ठ अतिरिक्त मुंसिफ, फैजाबाद (अब अयोध्या) द्वारा पारित की गई, और सिविल अपील संख्या 044/1984 (जुग्गी लाल बनाम गुरु प्रसाद) में अपर जिला न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 5, फैजाबाद (अब अयोध्या) द्वारा पारित दिनांक 04.01.2013 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध दाखिल की गई है।
3. इस अपील में दिनांक 04.02.2013 के आदेश के माध्यम से निम्नलिखित महत्वपूर्ण विधिक प्रश्न प्रस्तुत किया गया है:-

“क्या अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा वादी की पैतृकता तथा वसीयत के निष्पादन में किए गए कथित धोखाधड़ी संबंधी निष्कर्ष अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों के विरुद्ध और विकृत हैं?”

4. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रस्तुत किया कि वादी-प्रत्यर्थी माता देई तथा उसके पूर्व पति (छेदी) का पुत्र है। इस तथ्य के समर्थन में जन्म प्रमाणपत्र एवं वादी-प्रत्यर्थी का परिवार रजिस्टर अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया, परंतु उसका विचार किए बिना एवं वादी-प्रत्यर्थी के साक्ष्य पर, जो कि एक हितग्राही साक्षी था,

निर्भर करते हुए यह निष्कर्ष अंकित किया गया कि वादी-प्रत्यर्थी गुरु प्रसाद लोधे एवं माता देई का पुत्र है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि ग्रामों में ग्रामवासियों में गाजा और शराब पीने की प्रवृत्ति होती है, अतः केवल इस आधार पर कि लोधे मदिरा पीते थे, यह नहीं कहा जा सकता कि वसीयत उस प्रभाव में निष्पादित कराई गई थी। उन्होंने आगे यह भी प्रस्तुत किया कि यह आरोप कि वसीयत पत्र प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता द्वारा वसीयत के साक्षियों की मिलीभगत से कपटपूर्वक निष्पादित कराया गया, इस कारण से टिकने योग्य नहीं है, क्योंकि वसीयत पत्र को उसके एक अभिप्रमाणित साक्षी द्वारा सिद्ध किया गया है, परंतु अधीनस्थ न्यायालयों ने यह विचार नहीं किया कि यदि वसीयत कपटपूर्वक निष्पादित कराई जा रही थी, तो लोधे, जिसने वसीयत निष्पादित की थी, पंजीकरण अधिनियम की धारा 34 एवं 35 के अंतर्गत जाँच के दौरान पंजीकरण प्राधिकारी के समक्ष इस संबंध में उल्लेख करता। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि आदेश 41 नियम 31 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों का उल्लंघन किया गया है तथा निर्धारण हेतु बिंदु निर्मित नहीं किए गए हैं। अतः यह निवेदन है कि अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय एवं डिक्ली विधि की दृष्टि में ग्राह्य नहीं हैं तथा निरस्त किए जाने योग्य हैं।

5. इसके विपरीत, वादी-प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि लोधे वादी-प्रत्यर्थी गुरु प्रसाद के पिता थे और इसे सिद्ध करने के लिए गुरु प्रसाद का हाई स्कूल प्रमाणपत्र एवं लोधे की पैतृकता सहित जाति प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया गया, और इसके विपरीत कोई ठोस साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जा सका। वादी-प्रत्यर्थी के पिता लोधे द्वारा लिखे पत्र भी अभिलेख पर रखे गए, जिनमें उन्होंने वादी-प्रत्यर्थी को अपने पुत्र के रूप में संबोधित किया है। वादी-प्रत्यर्थी द्वारा अपने पिता लोधे को भेजे गए पैसे के प्रेषण रसीदें भी अभिलेख पर रखी गई हैं। अतः पर्याप्त साक्ष्य है कि वादी-प्रत्यर्थी लोधे एवं माता देई का वास्तविक पुत्र है। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि इस संबंध में शंका उत्पन्न करने का प्रयास परिवार रजिस्टर की एक प्रति प्रस्तुत करके किया गया, जिसमें पैतृकता छेदी दर्शाई गई है, जिसे उसी ग्राम प्रधान ने हस्ताक्षरित किया था जिसने वादी-प्रत्यर्थी का जाति प्रमाणपत्र हस्ताक्षरित किया था, जिसमें पिता का नाम लोधे दर्शाया गया है, परंतु उस ग्राम प्रधान को इसका प्रमाण देने के लिए उपस्थित नहीं किया गया। अतः यह प्रस्तुतिकरण था कि वादी-प्रत्यर्थी दिवंगत लोधे का पुत्र है और अधीनस्थ न्यायालयों ने वादी-प्रत्यर्थी की पैतृकता संबंधी निष्कर्ष सही ढंग से अंकित किए हैं, जो अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के विपरीत नहीं हैं और इसमें कोई विकृति नहीं है। उन्होंने आगे यह भी प्रस्तुत किया कि यह सिद्ध हो गया है कि वसीयत पत्र प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता द्वारा निष्पादित कराया गया, जो लोधे को अपनी बहन का पुत्र मानता था, जो वादी-प्रत्यर्थी की अनुपस्थिति में लोधे की देखभाल करती थी। अधीनस्थ न्यायालयों ने वसीयत को प्रत्यर्थी -अपीलकर्ता के पक्ष में निष्पादित किए जाने को निरस्त करने का निष्कर्ष अभिलेख पर उपलब्ध ठोस साक्ष्य एवं दोनों पक्षों के साक्ष्यों पर विचार कर अंकित किया है और इसमें कोई विधिक त्रुटि या विकृति नहीं है।

6. जहाँ तक पंजीकरण अधिनियम की धारा 34 एवं 35 का तर्क है, यह प्रस्तुत किया गया कि यह आपत्ति अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष नहीं उत्थापित की गई थी, अतः बिना किसी साक्ष्य के इसे इस चरण में विकसित नहीं किया जा सकता और इसलिए इसे विचार में नहीं लिया जा सकता। उन्होंने अंततः यह भी प्रस्तुत किया

कि केवल इसलिए कि निर्धारण हेतु बिंदु निम्न अपीलीय न्यायालय द्वारा निर्मित नहीं किए गए, इसका यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि उसके द्वारा पारित निर्णय आदेश 41 नियम 31 सिविल प्रक्रिया संहिता का उल्लंघन करता है, क्योंकि मामले में सभी मुद्दों पर अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा विचार किया गया और निष्कर्ष प्रस्तुतियों, साक्ष्यों एवं अभिलेखीय सामग्री के आधार पर अंकित किए गए। इस संदर्भ में उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का हवाला दिया है, जो **मृगेंद्र इंद्रावदान मेहता एवं अन्य बनाम अहमदाबाद नगर निगम; (2024) 6 एस.सी.आर. 594 में दिया गया तथा इस न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील संख्या 162/2011; बद्री एवं अन्य बनाम जटा शंकर एवं अन्य में दिनांक 03.02.2020 को पारित निर्णय एवं आदेश पर निर्भर करते हैं।**

7. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण के अभ्यावेदन पर विचार किया और अभिलेखों का अवलोकन किया।

8. वादी-प्रत्यर्थी द्वारा प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता के पक्ष में लोधे द्वारा दिनांक 19.09.1980 को निष्पादित वसीयत पत्र को रद्द करने हेतु वाद दाखिल किया गया, जिसमें यह आरोप लगाया गया कि वह दिवंगत लोधे का एकमात्र वैध उत्तराधिकारी/प्रतिनिधि है तथा उसकी सभी चल और अचल संपत्तियों का स्वामी और कब्जाधारी है। वह ग्राम चकवारा, परगना मगलसी, तहसील एवं जिला फैजाबाद का निवासी है। वादी-प्रत्यर्थी केंद्रीय सरकार की सेवा में डाक-प्रशासन कार्यालय, मुख्य डाकघर में पिछले 9 वर्षों से कनिष्ठ अधीक्षक पद पर कार्यरत है। प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता वादी-प्रत्यर्थी का चचेरा भाई और वास्तविक ससुराल का भाई (साधु) है, जो स्थायी रूप से ग्राम चकवारा, परगना मगलसी, तहसील एवं जिला फैजाबाद का निवासी है। वादी-प्रत्यर्थी के पिता का दो बार विवाह हुआ, अर्थात् श्रीमती दुर्पता (जिनका निधन हो चुका है) और श्रीमती माता देई, जो वादी-प्रत्यर्थी की माता हैं। वादी-प्रत्यर्थी लोधे और श्रीमती माता देई का पुत्र है। लोधे का निधन 08.10.1980 को हुआ। वादी-प्रत्यर्थी के पिता निरक्षर और ग्राम्य व्यक्ति थे तथा मदिरा लेने के आदी थे। वे अपने निधन से पूर्व अंतिम 4-5 वर्षों से अस्वस्थ थे। लोधे ने आरंभ से ही वादी-प्रत्यर्थी से स्नेह रखा। वादी-प्रत्यर्थी की एक वास्तविक बहन फूला भी थी, जो लोधे और माता देई की संतान थी। प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता, नजदीकी संबंधी होने के नाते, उनके घर आता-जाता था। वादी-प्रत्यर्थी सरकारी सेवा में होने के कारण दूर तैनात था और अपने पिता लोधे को धन भेजता था। लोधे अंतिम एक वर्ष से गंभीर रूप से बीमार थे, उम्र, स्वास्थ्य और मदिरा के सेवन के कारण। वे वस्तुओं को समझने में असमर्थ थे और प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता के प्रभाव में आ गए थे। प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने लोधे के निधन पर उनकी गंभीर बीमारी के बारे में वादी-प्रत्यर्थी को सूचित किया। प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने वादी-प्रत्यर्थी के पिता के निधन के कुछ समय बाद समेकन अधिकारी, सदर फैजाबाद के न्यायालय में नामांतरण हेतु आवेदन दिया। तब वादी-प्रत्यर्थी को ज्ञात हुआ कि प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने उनके पिता से उनकी जानकारी के बिना या किसी अन्य व्यक्ति का बहुरूपता कर वसीयत पत्र निष्पादित कराया है। वसीयत पत्र प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता द्वारा अनुचित प्रभाव और छल के माध्यम से निष्पादित कराया गया। वादी-प्रत्यर्थी के पिता ने अंतिम एक वर्ष से गंभीर रूप से बीमार होने के कारण वस्तुओं को समझने की क्षमता खो दी थी। वसीयत पत्र स्वाभाविक नियमों के विरुद्ध है। वसीयत पत्र प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने पटनदीन और संत्रम के मिलाप से निष्पादित कराया। वादी-प्रत्यर्थी के पिता ने स्वतंत्र इच्छा से वसीयत पत्र निष्पादित नहीं किया। वादी-प्रत्यर्थी के पिता की दोनों पत्नियां वसीयत

निष्पादन के समय जीवित थीं, अतः वसीयत निष्पादित करने का कोई अवसर नहीं था और उनके लिए कुछ रखने का कोई औचित्य नहीं दिया गया तथा उनका उल्लेख वसीयत में नहीं किया गया। अतः वसीयत विलेख रद्द करने योग्य है।

9. वसीयत विलेख रद्द करने के वाद का प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता द्वारा विरोध किया गया और प्रतिवाद पत्र प्रस्तुत कर में सम्मिलित अभ्यावेदन को खंडित किया गया। लिखित बयान में यह कहा गया कि वादी-प्रत्यर्थी लोधे का पुत्र नहीं है; लोधे का श्रीमती माता देई के साथ अवैध संबंध था, अतः उन्होंने उन्हें रखा; वादी-प्रत्यर्थी माता देई और छेड़ी से जन्मा; उनका एक कन्या फूला भी थी; छेड़ी के जीवित रहते माता देई वादी-प्रत्यर्थी और फूला के साथ लोधे के घर में आई थी; लोधे को प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता पर विश्वास था क्योंकि वह उनकी देखभाल करता था, अतः मृत्यु से पूर्व उसने अपनी चल और अचल संपत्तियों की वसीयत 19.09.1980 को प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता के पक्ष में स्वतंत्र इच्छा से संपन्न की, जिसमें कोई धोखाधड़ी नहीं थी; प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने लोधे का अंतिम संस्कार किया क्योंकि वादी-प्रत्यर्थी अन्य राज्य में था; प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता लोधे की संपत्तियों का अधिपति है; न्यायालय के पास वाद सुनवाई का क्षेत्राधिकार नहीं है और यह उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम की धारा 331 के द्वारा निषिद्ध है तथा चकबंदी अधिनियम की धारा 5 के तहत रद्द किया जा सकता है; अतः वाद खारिज किए जाने योग्य है।

10. पक्षकारों के निवेदन पर विचार करने के पश्चात विचारण न्यायालय द्वारा सात मुद्दे विन्यस्त किए गए, जो नीचे उद्धृत हैं:

"1:- क्या वाद पत्र की धारा 15 में अभिकथित आधारों के आधार पर वसीयतनामा दिनांकित 19.9.80 अवैध है और निरस्त होने योग्य है।

2:- क्या वादी विवादित सम्पत्ति का स्वामी है जैसा कि वाद-पत्र में अभिकथित है।

3:- क्या वादी मृतक लोधे का पुत्र नहीं है, जैसा कि प्रतिवाद पत्र की धारा 20 में अभिकथित किया गया है।

4:- क्या वाद धारा 331 जमींदारी विनाश अधिनियम से बाधित है।

5:- क्या वाद धारा 5 चकबंदी अधिनियम के अन्तर्गत अबेट होने योग्य है।

6:- क्या वाद का मूल्यांकन कम किया गया है और न्याय शुल्क अपर्याप्त अदा किया गया है।

7:- वादी किस उपशम को पाने का अधिकारी है।"

11. इसके बाद, पक्षकारों द्वारा मौखिक एवं अभिलेखीय साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने के उपरांत, परीक्षण न्यायालय ने दिनांक 13.01.1984 के निर्णय एवं डिक्री द्वारा वाद को आदेशित किया। इससे आहत होकर, प्रत्यर्थी - अपीलकर्ता द्वारा दीवानी अपील दाखिल की गई, जिसे निम्न अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया। अतः इस द्वितीय अपील को दाखिल किया गया, जिसे उक्त महत्वपूर्ण विधिक प्रश्न पर स्वीकार किया गया।

12. विद्वान परीक्षण न्यायालय ने पहले मुद्दा संख्या 3 पर विचार किया, जो यह है कि वादी-प्रत्यर्थी लोधे का पुत्र है या नहीं, जैसा कि प्रत्यर्थी-विवरण के प्रस्तर 20 में कहा गया है। इस मुद्दे पर विचार करते समय परीक्षण न्यायालय ने पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत अभिलेखीय और मौखिक साक्ष्यों तथा अभिलेखों का विश्लेषण किया। परीक्षण न्यायालय ने यह अंकित किया कि प्रत्यर्थी-साक्षी 1 जुगगी लाल अर्थात् प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता, जिसने स्वयं को साक्ष्य में प्रस्तुत किया, 25 वर्ष का है, इसलिए वह यह प्रमाणित नहीं कर सका कि गुरु प्रसाद का जन्म कब हुआ। प्रत्यर्थी-साक्षी 2 संत्रम ने अपने साक्ष्य में कहा कि उसे ज्ञात नहीं कि गुरु प्रसाद का जन्म कब हुआ, परंतु उसने कहा कि माता देई 35 वर्ष पूर्व लोधे के घर आई थीं और फूला की आयु 20-22 वर्ष है। अतः श्रीमती फूला माता देई और लोधे की संतान है और इस साक्षी के साक्ष्य से स्पष्ट है कि गुरु प्रसाद लोधे का पुत्र है, क्योंकि गुरु प्रसाद की आयु भी 35 वर्ष है और प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता का यह दावा नहीं है कि माता देई के लोधे के घर आने के बाद उसके पूर्व पति से कोई संबंध था। प्रत्यर्थी-साक्षी 3 राम राज ने कहा कि उसे ज्ञात नहीं कि गुरु प्रसाद का जन्म कब हुआ और फूला गुरु प्रसाद से कितनी छोटी है; वह दोनों के जन्म के बारे में नहीं बता सका। परंतु उसने यह कहा कि माता देई के लोधे के घर आने के 3-4 वर्षों के बाद ज़मीनदारी टूट गई। अतः माता देई लोधे के घर वर्ष 1947-48 में आई होंगी। इस प्रकार इस साक्षी के साक्ष्य से भी यह सिद्ध होता है कि गुरु प्रसाद और फूला लोधे की संतान हैं और प्रत्यर्थी-साक्षी 2 का यह कथन कि गुरु प्रसाद और फूला ग्राम शेखपुर में पैदा हुए थे, असत्य है, क्योंकि फूला की आयु 20-22 वर्ष है और प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता के साक्ष्य के अनुसार माता देई लगभग 35 वर्ष पूर्व वादी-प्रत्यर्थी के पिता के घर आई थीं। वादी-प्रत्यर्थी ने उच्च माध्यमिक विद्यालय, 1966 का हाई स्कूल प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया, जिसमें गुरु प्रसाद के पिता का नाम लोधे और जन्म तिथि 15.08.1948 अंकित है। साथ ही उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, फैजाबाद का स्थानांतरण प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया गया, जिसमें भी पिता के नाम के स्कम्भ में लोधे अंकित है। जिला मजिस्ट्रेट द्वारा 09.12.1968 को जारी जाति प्रमाणपत्र में भी गुरु प्रसाद के पिता का नाम लोधे अंकित है। प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता द्वारा कोई विपरीत साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जा सका और ये दस्तावेज भी यह दर्शाते हैं कि लोधे ने कभी यह नहीं कहा कि वादी-प्रत्यर्थी उसका पुत्र नहीं है। प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने अपनी दलील के समर्थन में 25.11.1980 की परिवार पंजिका की प्रति प्रस्तुत की, जिसमें गुरु प्रसाद को छेदी का पुत्र बताया गया, परंतु यह विश्वसनीय नहीं है क्योंकि यह 1980 में प्राप्त किया गया और ग्राम प्रधान राम दुलारे के हस्ताक्षर से जारी किया गया, जबकि वही ग्राम प्रधान 09.12.1968 के जाति प्रमाणपत्र पर हस्ताक्षर कर चुके थे, जिसमें वादी-प्रत्यर्थी के पिता के रूप में लोधे का नाम अंकित है। अतः यह दस्तावेज केवल मामले के प्रयोजन हेतु तैयार कराया गया प्रतीत होता है।

13. विद्वान परीक्षण न्यायालय ने यह भी अभिलेखित किया है कि लोधे ने श्रीमती माता देई को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार किया है, क्योंकि प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत मतदाता सूची की प्रति में लोधे को माता देई का पति प्रदर्शित किया गया है, और चूँकि यह अभिलेख प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है, अतः वह इस तथ्य का खण्डन नहीं कर सकता कि श्रीमती माता देई लोधे की पत्नी नहीं हैं। प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने मौजा शेखापुर, थाना रोनाही की वर्ष 1944 की जन्म प्रमाणपत्र की प्रति प्रस्तुत कर यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि वादी-प्रत्यर्थी छेदी का पुत्र था, क्योंकि वर्ष 1944 में छेदी के यहाँ एक पुत्र का जन्म हुआ था,

किन्तु प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने अपने लिखित बयान में वादी-प्रत्यर्थी की आयु 33 वर्ष होने का जो उल्लेख वादी द्वारा अपने वादपत्र में किया गया है, उसका खण्डन नहीं किया है। अतः उक्त जन्म प्रमाणपत्र में उल्लिखित आयु वादी-प्रत्यर्थी की आयु से मेल नहीं खाती और यह वादी-प्रत्यर्थी के जन्म का प्रमाण नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त, बचाव साक्षी-1 जुगी लाल अर्थात् प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने अपने साक्ष्य में यह स्वीकार किया है कि उसने वादी-प्रत्यर्थी को लोधे की बीमारी की सूचना देने के लिए टेलीग्राम यानी कागज़ संख्या 59(ग)) प्रेषित किया था ताकि वह भयभीत न हो। यह टेलीग्राम लोधे की मृत्यु के पश्चात प्रेषित किया गया था। फलस्वरूप यह अनुमान लगाया जा सकता है कि टेलीग्राम भेजने के समय बचाव साक्षी-1 अर्थात् जुगी लाल के मन में यह था कि लोधे का पुत्र होने के कारण वादी-प्रत्यर्थी अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर मानसिक संतुलन न खो बैठे, और यदि प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता को यह ज्ञात होता कि वादी-प्रत्यर्थी लोधे का पुत्र नहीं है, तो उसे लोधे की मृत्यु का तार भेजने में कोई संकोच न होता। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि वादी-प्रत्यर्थी मृतक लोधे का पुत्र है।

14. अवर न्यायालय ने परीक्षण न्यायालय द्वारा अभिलेखित उपर्युक्त निष्कर्षों तथा अभियोजन साक्षी-1, अभियोजन साक्षी-2, अभियोजन साक्षी-3, अभियोजन साक्षी-4 एवं बचाव साक्षी-1, बचाव साक्षी-2 तथा बचाव साक्षी-3 के साक्ष्य तथा वादी-प्रत्यर्थी द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत दस्तावेजी साक्ष्य सहित सूची 26(ग) जिसमें अंतर्देशीय पत्र, डाक कार्ड, धनादेश की रसीदें, कक्षा 9 की अंकपत्रिका, नियुक्तिपत्र, जल पंप यंत्र की रसीदें, विद्यालय त्याग प्रमाणपत्र आदि सम्मिलित हैं, कागज़ संख्या 28(ग) प्रारूप 4 जिसमें मकान सं. 637 के स्वामी के रूप में लोधे पुत्र नारायण, श्रीमती दुर्पता तथा श्रीमती माता देई पत्नी लोधे का उल्लेख है, प्रदर्श-पत्र संख्या सं. 51(ग) अर्थात् वह तार रसीद जो जुगी लाल द्वारा गुरु प्रसाद को भेजी गई थी जिसमें उल्लेख है कि "मामा की तबीयत गंभीर है, शीघ्र आओ", प्रदर्श-पत्र संख्या 55(ग) से 58(ग) तथा 64(ग) और 73(ग) अर्थात् वे अंतर्देशीय पत्र जो लोधे द्वारा गुरु प्रसाद को अपने पुत्र के रूप में संबोधित करते हुए लिखे गए, प्रदर्श-पत्र संख्या 73(ग) अर्थात् जिला परिषद, फैज़ाबाद कार्यालय में लोधे पुत्र गुरु प्रसाद का नियुक्तिपत्र, प्रदर्श-पत्र संख्या 75(ग) अर्थात् त्याग प्रमाणपत्र जिसमें गुरु प्रसाद को लोधे का पुत्र दर्शाया गया है, पर विचार करने के पश्चात निष्कर्ष अभिलेखित किया है। यह भी अभिलेखित किया गया है कि वादी-प्रत्यर्थी ने मूल उच्च विद्यालय परीक्षा 1966 का प्रमाणपत्र, त्याग प्रमाणपत्र सूची 126(ग) सहित तथा जाति प्रमाणपत्र प्रदर्श-पत्र सं. 129(ग) भी अभिलेख पर प्रस्तुत किए हैं, जिनसे यह स्पष्ट होता है कि वादी-प्रत्यर्थी के पिता लोधे थे। अभियोजन साक्षी-1 से अभियोजन साक्षी-4 तक के साक्ष्य पर विचार करते हुए अवर अपीलीय न्यायालय ने यह भी निष्कर्ष अभिलेखित किया है कि वादी-प्रत्यर्थी गुरु प्रसाद, लोधे का पुत्र है क्योंकि उसकी माता माता देई गौना के पश्चात एक वर्ष बाद अपने नैहर लौट आई थीं और लोधे उसे उसके नैहर से लाकर अपने घर पिलखवा ले आया, जहाँ गुरु प्रसाद एवं फूल्ला का जन्म हुआ। इस प्रकार, अभिलेख पर उपलब्ध पक्षकारों की दलीलों, साक्ष्यों एवं सामग्री पर विचार करने के उपरांत परीक्षण न्यायालय तथा अपीलीय न्यायालय दोनों ने यह निष्कर्ष अभिलेखित किया कि वादी-प्रत्यर्थी की पितृत्व संबंधी स्थिति यह है कि लोधे वादी-प्रत्यर्थी के पिता थे, जिसका जन्म लोधे और माता देई से हुआ था।

15. विचारण न्यायालय ने मुद्दा संख्या 1, कि दिनांक 19.09.1980 की वसीयत विधिसम्मत है अथवा प्रस्तर 15 में उल्लिखित आधारों पर निरस्त किए जाने योग्य है या नहीं, पर विचार करते हुए पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों का परीक्षण किया। विद्वान विचारण न्यायालय ने साक्षियों के कथन तथा दस्तावेजी साक्ष्यों पर विचार किया। अभियोजन साक्षी-1 गुरु प्रसाद ने यह कहा कि वह मृतक लोधे का पुत्र है और इलाहाबाद मुख्य डाकघर में लिपिक के पद पर कार्यरत है। उसने यह भी कहा कि वह अपने पिता के उपचार हेतु प्रायः धन प्रेषित करता था तथा अपने पिता होने के नाते उनसे पत्राचार भी करता था। उसने यह भी कहा कि प्रत्यर्थी -अपीलकर्ता जुग्गी लाल उसका साढ़ू तथा उसकी बुआ का पुत्र है, जो उसके घर आता-जाता रहता था। उसने यह भी कहा कि जब वादी-प्रत्यर्थी की नियुक्ति टिहरी गढ़वाल में थी, तब उसने प्रत्यर्थी - अपीलकर्ता को अपने पिता की देखभाल करने के लिए कहा था। उसका पिता अशिक्षित एवं ग्रामीण स्वभाव का व्यक्ति था, जिसे वह धन भेजा करता था। अभियोजन साक्षी-2 ने अपने साक्ष्य में कहा कि लोधे ने वादी-प्रत्यर्थी को शिक्षित कराया था और जब वह नौकरी पर लग गया, तो वह उसे धन भेजा करता था। उसने यह भी कहा कि लोधे अपने पुत्र गुरु प्रसाद से प्रसन्न रहता था। वादी-प्रत्यर्थी की माता माता देई अभियोजन साक्षी-3 के रूप में उपस्थित हुई। उन्होंने अपने साक्ष्य में यह स्वीकार किया कि गुरु प्रसाद के रोजगार प्राप्त करने के बाद वह अपने पिता के उपचार हेतु धन भेजा करता था। उन्होंने यह भी कहा कि लोधे मृत्यु से एक वर्ष पूर्व से बीमार था। अभियोजन साक्षी-4 रंजीत प्रसाद मिश्र ने अभियोजन साक्षी-1 गुरु प्रसाद के कथन का समर्थन किया और कहा कि गुरु प्रसाद लोधे को धन भेजा करता था। बचाव साक्षी-1 जुग्गी लाल अर्थात् प्रत्यर्थी -अपीलकर्ता ने भी अपने साक्ष्य में स्वीकार किया कि वादी-प्रत्यर्थी गुरु प्रसाद लोधे को धन भेजा करता था। बचाव साक्षी-2 सन्तराम ने अपने साक्ष्य में कहा कि गुरु प्रसाद प्रारम्भ से ही लोधे के साथ रहता था। लोधे ने ही उसे शिक्षित किया और उसका विवाह कराया। उसने यह भी कहा कि लोधे के कहने पर वह गुरु प्रसाद को पत्र लिखा करता था। उसने भी यह स्वीकार किया कि गुरु प्रसाद लोधे को धन भेजा करता था। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि वादी-प्रत्यर्थी और उसके पिता मृतक लोधे के मध्य किसी प्रकार का मतभेद नहीं था।

16. यह भी अभिलेखित किया गया है कि बचाव साक्षी-2 सन्तराम ने यह स्वीकार किया कि अभिलेख संख्या 27(ग), 57(ग), 58(ग) तथा 59(ग) वे पत्र हैं जो उसने लोधे एवं माता देई के कहने पर लिखे थे। उसने यह भी स्वीकार किया कि पत्र संख्या 34(ग), 46(ग) एवं 49(ग) भी उसी द्वारा लिखे गए हैं। पत्र संख्या 30(ग) धनादेश की रसीद है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि जुलाई 1973 में गुरु प्रसाद द्वारा लोधे को ₹100 प्रेषित किए गए थे। इसी प्रकार पत्र संख्या 31(ग) से 50(ग) तक धनादेश की रसीदें हैं, जो समय-समय पर गुरु प्रसाद द्वारा मृतक लोधे को भेजी गई थीं। प्रत्यर्थी -अपीलकर्ता ने अपने लिखित बयान में यह नहीं कहा है कि मृतक लोधे के अपनी पत्नियों दुर्पता और माता देई या अपने पुत्र गुरु प्रसाद से कोई मतभेद थे। अतः यह प्रत्यक्ष है कि वादी-प्रत्यर्थी अपने पिता मृतक लोधे के साथ निवास करता था तथा यह भी निर्विवाद है कि माता देई एवं दुर्पता लोधे की पत्नियाँ थीं और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह भी सिद्ध होता है कि मृतक लोधे को श्रीमती दुर्पता, श्रीमती माता देई एवं गुरु प्रसाद पर विश्वास था। ऐसी स्थिति में मृतक लोधे द्वारा अपने जीवनकाल में दिनांक 19.09.1980 को वसीयत का निष्पादन किया जाना संदेहास्पद प्रतीत होता है, विशेष रूप से जब लोधे की मृत्यु के समय उसकी पत्नियाँ दुर्पता एवं माता देई जीवित थीं। इन परिस्थितियों में मृतक

लोधे द्वारा विवादित वसीयत का निष्पादन संदेह उत्पन्न करता है। यह भी आश्चर्यजनक है कि लोधे की पत्नियाँ श्रीमती दुर्पता एवं श्रीमती माता देई को उक्त वसीयत की कोई जानकारी नहीं थी।

17. विद्वान परीक्षण न्यायालय ने अभियोजन साक्षी-1, अभियोजन साक्षी-2, अभियोजन साक्षी-3, अभियोजन साक्षी-4 तथा बचाव साक्षी-1, बचाव साक्षी-2 और बचाव साक्षी-3 के साक्ष्यों पर विचार करते हुए, जिनमें अभियोजन साक्षियों ने यह स्वीकार किया कि मृतक अपनी मृत्यु से एक वर्ष पूर्व से बीमार था, तथा अभियोजन साक्षी-3 माता देई ने यह कहा कि लोधे दमा का रोगी था, तथा अभियोजन साक्षी-4 रंजीत प्रसाद मिश्र ने यह कहा कि मृतक लोधे अपनी मृत्यु से आठ दिन पूर्व गौदान के लिए आया था और उसने मृत्यु से पूर्व उसकी बीमारी संबंधी अन्य अभियोजन साक्षियों के कथन का समर्थन किया, साथ ही बचाव साक्षी-1 एवं बचाव साक्षी-2 के साक्ष्यों में विरोधाभास पाया गया, क्योंकि बचाव साक्षी-1 जुगी लाल ने कहा कि मृतक लोधे बीमार नहीं था और वह अचानक मर गया, जबकि बचाव साक्षी-2 सन्तराम ने अपने साक्ष्य में कहा कि वह मृत्यु से एक सप्ताह पूर्व बीमार था और वह हृदय रोगी था, तथा उसने यह भी कहा कि मृत्यु से चार-पाँच दिन पूर्व वह चलने की स्थिति में भी नहीं था इन सभी तथ्यों के आधार पर परीक्षण न्यायालय ने यह निष्कर्ष अभिलेखित किया कि यह सिद्ध होता है कि मृतक लोधे मृत्यु से पूर्व बीमार था। वह गंभीर रूप से बीमार था और उसमें समझने-बूझने की क्षमता शेष नहीं रही थी। तत्पश्चात् अभियोजन साक्षी-1, अभियोजन साक्षी-2 तथा बचाव साक्षी-2 के साक्ष्य पर विचार करने के उपरांत परीक्षण न्यायालय ने यह निष्कर्ष अभिलेखित किया कि लोधे को शराब पीने की आदत थी, जिसे इस न्यायालय में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने भी विवादित नहीं किया, क्योंकि उन्होंने यह कहा कि ग्रामीण लोग गाँजा और शराब का सेवन करते हैं। इस प्रकार उसकी पत्नियाँ, पुत्र और पुत्री के जीवित रहते हुए प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता के पक्ष में वसीयत का निष्पादन किया जाना संदेहास्पद एवं शंका उत्पन्न करने वाला है, विशेष रूप से जब वह बीमार, अशिक्षित एवं ग्रामीण स्वभाव का व्यक्ति था। अतः यह स्पष्ट है कि वसीयतनामा मृतक लोधे से छलपूर्वक संपादित कराया गया था।

18. यह भी अभिलेखित किया गया है कि बचाव साक्षी-1 जुगी लाल ने यह स्वीकार किया कि दुर्पता, लोधे की मृत्यु तक उसके घर में ही रहती थी और उसने यह भी स्वीकार किया कि माता देई उसके स्मरण काल से ही उसी घर में रह रही थी। बचाव साक्षी-2 सन्तराम ने भी अपने साक्ष्य में यह स्वीकार किया कि प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता जुगी लाल गाँव चकवारा में रहता था। अतः यह भी सिद्ध नहीं होता कि वह लोधे की देखभाल करता था या लोधे उससे प्रसन्न था। इस प्रकार परीक्षण न्यायालय ने यह निष्कर्ष अभिलेखित किया कि लोधे द्वारा विवादित वसीयत अपने स्वतंत्र इच्छा और सहमति से लिखे जाने का कोई औचित्य नहीं था।

19. विद्वान अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने उक्त मुद्दे पर विचार करते हुए, पक्षकारों के उपर्युक्त साक्ष्य पर विचार किया और यह निष्कर्ष अभिलेखित किया कि प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता लोधे का भतीजा (भांजा) था और वह लोधे की वसीयत को नियंत्रित करने की स्थिति में था। अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने बचाव साक्षी-1 के साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् यह अभिलेखित किया कि उसने अपने प्रतिपरीक्षण में स्वीकार किया कि उसने लोधे की बीमारी का उल्लेख तार में इसलिए किया था ताकि गुरु प्रसाद उससे भयभीत न हो। उसने यह

भी कहा कि वसीयत से दो दिन पूर्व वह गाँव चकवारा गया था और वसीयत संपन्न होने के दो दिन बाद लौटा। बचाव साक्षी-2 ने अपने साक्ष्य में स्वीकार किया कि लोधे की मृत्यु वसीयत के 19 दिन पश्चात हुई और यह भी स्वीकार किया कि जुगगी लाल चकवारा में निवास करता था। अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने अभ्यावेदन, साक्ष्य एवं अभिलेख पर विचार करने के उपरांत यह निष्कर्ष अभिलेखित किया कि बचाव साक्षी-1 और बचाव साक्षी-2 के साक्ष्यों में लोधे की बीमारी के संबंध में विरोधाभास है, क्योंकि बचाव साक्षी-1 ने कहा कि मृत्यु के समय वह बीमार नहीं था, जबकि बचाव साक्षी-2 ने कहा कि लोधे अपनी मृत्यु से एक वर्ष पूर्व से बीमार था और वह हृदय रोगी था। उनका साक्ष्य अभियोजन साक्षी-3 माता देई के साक्ष्य द्वारा समर्थित है, जिन्होंने कहा कि लोधे अस्थमा का रोगी था। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि गुरु प्रसाद द्वारा लोधे को धनादेश भेजा गया था। बचाव साक्षी-1 अर्थात् प्रत्यर्थी -अपीलकर्ता जुगगी लाल ने यह भी स्वीकार किया कि जब गुरु प्रसाद उसके पिलखवा स्थित घर आता था, तब वह लोधे को धन देता था। उसने यह भी स्वीकार किया कि लोधे की मृत्यु के समय उसकी पत्नियाँ श्रीमती दुर्पता और श्रीमती माता देई जीवित थीं और चूँकि लोधे बीमार था, वह उसके घर आता-जाता था। उसने यह भी स्वीकार किया कि मृत्यु के समय लोधे बहुत वृद्ध था। इन तथ्यों पर विचार करते हुए यह निष्कर्ष अभिलेखित किया गया कि प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता जुगगी लाल लोधे की इच्छाओं को नियंत्रित करने की स्थिति में था।

20. विद्वान अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने यह भी निष्कर्ष अभिलेखित किया कि बचाव साक्षी-3 सन्तराम साक्ष्य देने के आदी पाए गए, क्योंकि वह बुढ़ाराम की वसीयत, हिबनामा एवं एक बिक्री विलेख में साक्षी था। विद्वान अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने यह भी निष्कर्ष अभिलेखित किया कि साक्ष्यों के अनुसार लोधे की मृत्यु के समय दोनों पत्नियाँ जीवित थीं, परंतु उसने वसीयत में उनके निर्वाह के लिए कोई प्रावधान नहीं किया। अतः विवादित वसीयत अनुचित प्रभाव का परिणाम है और लोधे की बीमारी के कारण सोचने-समझने की क्षमता न होने के कारण संपन्न कराई गई, तथा जानबूझकर वसीयत में दोनों पत्नियों का कोई उल्लेख नहीं किया गया।

21. इस न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अभिलेखित उपर्युक्त निष्कर्षों तथा अभ्यावेदन, प्रस्तुत साक्ष्य और अभिलेख पर विचार करने के उपरांत यह पाया कि अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री में कोई अवैधता या त्रुटि नहीं है और वादी की पितृत्व संबंधी स्थिति तथा वसीयत के निष्पादन में ठगी संबंधी निष्कर्ष अभ्यावेदन, साक्ष्य एवं अभिलेख पर विचार करने के पश्चात अभिलेखित किए गए हैं तथा ये अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों के विरुद्ध नहीं हैं। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अभिलेखित निष्कर्ष किसी प्रकार से पक्षपाती या प्रतिकूल हैं।

22. इस न्यायालय के लिए यह समझना भी कठिन है कि कोई पुरुष अपनी पत्नियों को, जिनसे उसके कोई मतभेद नहीं थे, वसीयत में किस प्रकार बाहर कर सकता है, और वह भी बिना किसी संदर्भ के, यदि उसके साथ कोई रंजिश या मतभेद होते तो, जबकि वह वसीयत अपने सजग मनोवस्था, स्वतंत्र इच्छा एवं सहमति से संपादित कर रहा हो। वादी-प्रत्यर्थी द्वारा संदेहास्पद परिस्थितियों का खुलासा करने के बावजूद, प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता

ने इसे स्पष्ट करने हेतु कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया और इसे किसी ठोस साक्ष्य द्वारा हटाया नहीं जा सका। यह विरोधाभासी साक्ष्यों से और गहरा होता है, जैसे कि बचाव साक्षी-1 और बचाव साक्षी-2 के लोभे की बीमारी संबंधी साक्ष्य और बचाव साक्षी-1 का यह स्वीकार कि वह वसीयत के दो दिन पूर्व चकवारा गया और वसीयत संपन्न होने के दो दिन बाद लौटा, जो यदि ऐसा किया गया, तो यह दर्शाने के लिए किया गया होगा कि वह वसीयत के दिन उपस्थित नहीं था और वसीयत उक्त सहयोगी हाथों की मिलीभगत से संपादित कराई गई। यह भी बचाव साक्षी-2 के स्वीकार से स्पष्ट है कि वसीयत के निष्पादन का निर्णय निष्पादन से दो दिन पूर्व लिया गया था। यह भी अत्यंत असामान्य है कि वसीयत के निष्पादक को अपनी संपत्तियों के बारे में जानकारी नहीं थी, क्योंकि वसीयत में यह उल्लेख है कि जुगी लाल उसकी सभी चल और अचल संपत्तियों, नकद, वस्तुओं, आभूषणों, बर्तन, मकान, कृषि भूमि, बाग के पेड़, कोट, भीत, सीर सागर तथा समस्त घरेलू सामान आदि का स्वामी होगा, जो भी संपत्ति निष्पादक के स्वामित्व और कब्जे में पाए जाए, उसे उसकी मृत्यु के पश्चात अपने नाम अंकित कराएगा। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि उसने अपनी पत्नियों के लिए एक भी स्थान या बर्तन नहीं छोड़ा, जो स्वयं वसीयत के निष्पादन में संदेह उत्पन्न करता है और इसे प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता ने किसी ठोस साक्ष्य द्वारा दूर नहीं किया।

23. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **धननुलाल एवं अन्य बनाम गणेशराम एवं अन्य; 2015(12) एससीसी 301** के मामले में यह निर्देश दिया कि वसीयत का प्रमाण अन्य दस्तावेजों की तुलना में उच्चतर स्तर पर माना जाता है। प्रासंगिक प्रस्तर 19 निम्नानुसार उद्धृत किया गया है:-

19. वसीयत का प्रमाण अन्य दस्तावेजों की तुलना में उच्च स्तर पर होता है। यह आवश्यक है कि सत्यापित करने वाले साक्षी या अन्य साक्षियों का स्पष्ट साक्ष्य हो कि वसीयत की सामग्री निष्पादक को पढ़कर सुनाई गई और उसने उसे सही स्वीकार करते हुए साक्षियों की उपस्थिति में अपने हस्ताक्षर किए। केवल निष्पादक द्वारा हस्ताक्षर करने के बाद, सत्यापित करने वाले साक्षियों को निष्पादक की उपस्थिति में अपने हस्ताक्षर करने चाहिए।"

24. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मीना प्रधान बनाम कमला प्रधान एवं अन्य; 2023 9 एससीसी 734** के मामले में वसीयत की वैधता और निष्पादन के प्रमाण के लिए आवश्यक सिद्धांतों का निरूपण किया। प्रस्तर 10 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि न्यायिक विवेक की कसौटी उन मामलों में लागू होती है जहाँ वसीयत का निष्पादन संदेहास्पद परिस्थितियों से घिरा होता है। इसमें निम्नलिखित कारकों पर विचार करना आवश्यक है: वसीयतकर्ता को वसीयत की सामग्री तथा उसके परिणामों के प्रति जागरूकता; वसीयत में किए गए वितरण की प्रकृति और प्रभाव; निष्पादक की मानसिक स्थिति और स्मृति का स्वस्थ, निश्चित और निर्णयात्मक होना; वसीयतकर्ता ने अपनी स्वतंत्र इच्छा से वसीयत का निष्पादन किया हो। प्रस्तर 10.10 में यह भी कहा गया कि भले ही धोखाधड़ी, झूठे दस्तावेज, अनुचित प्रभाव आदि का आरोप न हो, यदि ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं जो संदेहास्पद हों, तो वसीयत प्रस्तुत करने वाले का कर्तव्य बनता है कि वह ठोस

और विश्वासपूर्ण व्याख्या देकर उन संदेहास्पद परिस्थितियों को दूर करे। प्रासंगिक प्रस्तर 10 और 11 निम्नानुसार उद्धृत किए गए हैं:-

10. एच. वेंकटचला अय्यंगर बनाम बी.एन. थिम्माजम्मा (तीन न्यायाधीशों की पीठ), भगवान कौर बनाम करतार कौर (तीन न्यायाधीशों की पीठ), जानकी नारायण भोइर बनाम नारायण नामदेव कादम (दो न्यायाधीशों की पीठ), युमनाम आंगबी तम्पा इबेमा देवी बनाम युमनाम जॉयकुमार सिंह (तीन न्यायाधीशों की पीठ) एवं शिवकुमार बनाम शरणबासप्पा (तीन न्यायाधीशों की पीठ) के आधार पर, हम वसीयत की वैधता और निष्पादन के लिए आवश्यक निम्नलिखित सिद्धांतों का निरूपण कर सकते हैं:-

10.1 न्यायालय को दो पहलुओं पर विचार करना होगा: प्रथम, कि वसीयत निष्पादक द्वारा निष्पादित की गई और द्वितीय, कि यह उनकी अंतिम वसीयत थी।

10.2 इसे गणितीय सटीकता के साथ प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन विवेकशील मन की संख्यातुष्टि की कसौटी लागू करनी होगी।

10.3 वसीयत को उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 के अंतर्गत सभी औपचारिकताओं को पूरा करना आवश्यक है, अर्थात:

(क) निष्पादक को वसीयत पर अपने हस्ताक्षर या चिह्न करना होगा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसकी उपस्थिति और निर्देश में हस्ताक्षर कराना होगा और उक्त हस्ताक्षर यह दर्शाए कि इसे वसीयत के रूप में प्रभाव देने का इरादा था;

(ख) इसे दो या अधिक साक्षियों द्वारा सत्यापित करना अनिवार्य है, हालांकि सत्यापन का कोई विशेष रूप आवश्यक नहीं है;

(ग) प्रत्येक सत्यापन करने वाले साक्षी ने देखा हो कि निष्पादक ने वसीयत पर हस्ताक्षर या चिह्न किया या किसी अन्य व्यक्ति ने निष्पादक की उपस्थिति और निर्देश में वसीयत पर हस्ताक्षर किया, या निष्पादक से व्यक्तिगत रूप से ऐसा स्वीकार किया;

(घ) प्रत्येक सत्यापन करने वाले साक्षी को निष्पादक की उपस्थिति में वसीयत पर हस्ताक्षर करना होगा, हालांकि सभी साक्षियों की एक ही समय में उपस्थिति आवश्यक नहीं है।

10.4 वसीयत के निष्पादन का प्रमाण प्रस्तुत करने के लिए कम से कम एक जीवित सत्यापन करने वाले साक्षी को, जो न्यायालय की प्रक्रिया के अधीन हो और साक्ष्य देने में सक्षम हो, गवाही देना आवश्यक है।

10.5 सत्यापन करने वाले साक्षी को केवल निष्पादक के हस्ताक्षरों के बारे में ही नहीं, बल्कि यह भी बताना चाहिए कि प्रत्येक साक्षी ने निष्पादक की उपस्थिति में वसीयत पर हस्ताक्षर किए।

10.6 यदि एक सत्यापन करने वाला साक्षी वसीयत के निष्पादन का प्रमाण दे सकता है, तो अन्य सत्यापन करने वाले साक्षियों की परीक्षा अनिवार्य नहीं है।

10.7 यदि एक सत्यापन करने वाला साक्षी वसीयत के उचित निष्पादन का प्रमाण प्रस्तुत करने में विफल रहता है, तो अन्य उपलब्ध सत्यापन करने वाले साक्षियों को बुलाकर उसका साक्ष्य पूरक बनाना होगा।

10.8 जब भी वसीयत के निष्पादन को लेकर कोई संख्यादेह हो, तो इसे स्वीकार करने से पूर्व प्रस्तुतकर्ता का कर्तव्य है कि वह सभी वैध संख्यादेहों को दूर करे। ऐसे मामलों में प्रारंभिक बोज़ प्रस्तुतकर्ता पर अधिक होता है।

10.9 न्यायिक विवेक की कसौटी उन मामलों में विकसित की गई है जहाँ वसीयत का निष्पादन संख्यादेहास्पद परिस्थितियों से घिरा होता है। इसमें विचार करने योग्य कारक हैं: निष्पादक की वसीयत की सामग्री और परिणामों के प्रति जागरूकता; वसीयत में वर्णित वितरण की प्रकृति और प्रभाव; निष्पादक का निष्पादन के समय सुसंख्यागत, सुनिश्चित और निर्णयात्मक मानसिक स्थिति एवं स्मृति; निष्पादक ने स्वतंत्र इच्छा से वसीयत निष्पादित की।

10.10 जो व्यक्ति धोखाधड़ी, मनगढ़ंत निर्माण, अनुचित प्रभाव आदि का आरोप लगाता है, उसे इसका प्रमाण प्रस्तुत करना होगा। हालांकि, ऐसे आरोपों की अनुपस्थिति में भी यदि संख्यादेहास्पद परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं, तो यह प्रस्तुतकर्ता का कर्तव्य है कि वह ठोस और विश्वासजनक व्याख्या द्वारा उन संदेहास्पद परिस्थितियों को दूर करे।

10.11 संदेहास्पद परिस्थितियाँ "यथार्थ, प्रासंगिक और वैध" होनी चाहिए, न कि केवल "संदेहशील मन की कल्पना"। किसी विशेष विशेषता को "संदेहास्पद" मानने के लिए प्रत्येक मामले की तथ्य और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। कोई भी परिस्थिति जो प्राकृतिक रूप से संदेह उत्पन्न करे, उसे संदेहास्पद परिस्थिति माना जाएगा, जैसे कि अस्थिर हस्ताक्षर, दुर्बल मानसिक स्थिति, संपत्ति का अन्यायपूर्ण वितरण, वसीयत प्रस्तुतकर्ता का स्वयं प्रमुख भूमिका निभाना जिसमें उसे महत्वपूर्ण लाभ प्राप्त हो आदि।

11. संक्षेप में, वैधानिक अनुपालन के अतिरिक्त, व्यापक रूप से यह प्रमाणित करना आवश्यक है कि: (क) निष्पादक ने वसीयत अपने स्वतंत्र इच्छा से हस्ताक्षर की; (ख) निष्पादन के समय उसका मानसिक स्थिति सुसंख्यागत थी; (ग) वह वसीयत की प्रकृति और प्रभाव से अवगत था; (घ) वसीयत किसी संख्यादेहास्पद परिस्थिति में निष्पादित नहीं हुई।

25. यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि यदि वसीयत धोखाधड़ी के आधार पर निष्पादित कराई गई थी, तो लोधे इसे भारतीय पंजीकरण अधिनियम, धारा 34 एवं 35 के तहत पंजीकरण अधिकारी के समक्ष जांच के समय

बता सकते थे। पहले, यह तर्क अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष नहीं रखा गया था। दूसरे, इस संबंध में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया और न ही प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित किया गया। बचाव साक्षी-2 संत राम, जो वसीयत का साक्षी है, ने वसीयत के पंजीकरण या वादी-प्रत्यर्थी के पिता लोधे द्वारा पंजीकरण अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करने का कोई साक्ष्य नहीं दिया और वसीयत पर किए गए अभिलेख के अनुसार, निष्पादक की पहचान संत राम; बचाव साक्षी-2 और पाटंदीन द्वारा की गई। अतः यह तर्क भ्रामक और अस्वीकार्य है तथा इसे एतद्वारा निरस्त किया जाता है।

26. प्रत्यर्थी-अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत किए गए एक तर्क के अनुसार, बिना निर्धारण बिंदु तय किए और सिविल प्रक्रिया संहिता, आदेश 41, नियम 31 के प्रावधानों का पालन किए बिना अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने अपील का निष्पादन किया। आदेश 41, नियम 31, सिविल प्रक्रिया संहिता के अनुसार, अपीलीय न्यायालय का निर्णय लिखित रूप में होना चाहिए और इसमें निर्धारण बिंदु, उनके सम्बन्ध में निर्णय, निर्णय के कारण तथा जहाँ अपील के अंतर्गत प्रत्यास्थ आदेश को रद्द या परिवर्तित किया गया हो, अपीलकर्ता को मिलने वाली अनुतोष का उल्लेख होना अनिवार्य है।

27. अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय का अवलोकन से पता चलता है कि हालाँकि कोई निर्धारण बिंदु तय नहीं किया गया है, लेकिन परीक्षण न्यायालय द्वारा तय किए गए सभी 7 मुद्दों पर अलग-अलग विचार किया गया और अभियोग, साक्ष्यों और अभिलेखों पर विचार करने के पश्चात् स्वतंत्र निष्कर्ष अभिलेखित किए गए। इसलिए केवल इसलिए कि निर्धारण बिंदु तय नहीं किए गए, यह नहीं कहा जा सकता कि अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय का निर्णय आदेश 41 नियम 31 सिविल प्रक्रिया संहिता का अनुपालन नहीं करता, क्योंकि जब अपील में शामिल सभी मुद्दों पर विचार किया गया और अभियोग, साक्ष्यों एवं अभिलेखों के आधार पर निष्कर्ष अभिलेखित किए गए, तो नियम का पर्याप्त अनुपालन हुआ है।

28. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने, **मृगेन्द्र इन्द्रवदन मेहता एवं अन्य बनाम अहमदाबाद म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन (उपरोक्त)** के मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि यदि प्रथम अपीलीय न्यायालय प्रथम अपील में उत्पन्न निर्धारण बिंदुओं को अलग से तय नहीं करता है, तो भी यह घातक नहीं होगा, बशर्ते वह न्यायालय उन सभी मुद्दों पर विचार करे जो वास्तव में अपील में विचार के लिए उत्पन्न होते हैं। इस संख्यादर्भ में आदेश 41 नियम 31 सिविल प्रक्रिया संहिता के अधिदेश का पर्याप्त अनुपालन पर्याप्त है। संख्याबंधित प्रस्तर 30 निम्नानुसार उद्धृत किया गया है:-

30. इस प्रकार, यदि प्रथम अपीलीय न्यायालय प्रथम अपील में उत्पन्न बिंदु-निर्धारण को अलग से निर्धारित नहीं भी करता है, तो भी यह तब तक घातक नहीं होगा जब तक कि वह न्यायालय उन सभी मुद्दों पर विचार नहीं करता जो वास्तव में उक्त अपील में विचार-विमर्श के लिए उत्पन्न होते हैं। आदेश 41 नियम 31 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन पर्याप्त है। इस संबंध में, उपयोगी संख्यादर्भ जी. अमालोरपावम

एवं अन्य बनाम आर सी डायोसीज ऑफ मद्रुरै एवं अन्य 8 का संदर्भ उपयोगी हो सकता है, जिसमें इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:-

'9. यह प्रश्न कि क्या किसी विशेष मामले में आदेश 41 नियम 31 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन हुआ है या नहीं, प्रत्येक मामले में दिए गए निर्णय की प्रकृति पर निर्भर करता है। प्रावधानों का अनुपालन न होने से निर्णय शुद्धतः अमान्य नहीं होगा और वह पूरी तरह से शून्य नहीं हो सकता, यदि पर्याप्त अनुपालन हुआ हो और द्वितीय अपीलीय न्यायालय अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय के निष्कर्षों का पता लगाने की स्थिति में है, तो उसे अनदेखा किया जा सकता है। निस्संदेह यह वांछनीय है कि अपीलीय न्यायालय आदेश 41 नियम 31 सिविल प्रक्रिया संहिता की सभी आवश्यकताओं का पालन करे।

लेकिन यदि निर्णय से यह स्पष्ट हो सके कि उक्त आवश्यकताओं का पर्याप्त अनुपालन हुआ है और न्याय में कोई हानि नहीं हुई, तो वह पर्याप्त होगा। जहां अपीलीय न्यायालय ने अभिलेखों पर समय साक्ष्य पर विचार किया और उसका विवरणपूर्वक चर्चा की, किसी निष्कर्ष पर पहुंचा और उसके निष्कर्ष तर्कों द्वारा समर्थित हैं, भले ही बिंदु-निर्धारण अपीलीय न्यायालय द्वारा तय न किया गया हो, वहां आदेश 41 नियम 31 सिविल प्रक्रिया संहिता का पर्याप्त अनुपालन माना जाएगा और निर्णय किसी भी प्रकार से अमान्य नहीं होगा।

जहां अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने ईमानदारीपूर्वक पक्षकारों के विवाद पर विचार किया और प्रत्येक पक्ष के मामलों का उचित मूल्यांकन, साक्ष्य, तथ्य और अन्य विचारों का मूल्यांकन और संतुलन स्पष्ट रूप से निर्णय में प्रकट होता है, वहाँ यह निर्णय वैध होगा भले ही इसमें बिंदु-निर्धारण शामिल न हों।

इस नियम का उद्देश्य अपीलीय न्यायालय पर बिंदु-निर्धारण तय करने और निर्णय के कारण बताने का भार डालना है, ताकि न्यायालय का ध्यान उन प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर केंद्रित हो जो निर्णयार्थ उत्पन्न होती हैं और पक्षकारों को यह समझने का अवसर मिले कि निर्णय किस आधार पर किया गया है और यदि उचित समझा और सलाह दी गई तो वे धारा 100 सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा प्रदत्त द्वितीय अपील का उपाय का लाभ ग्रहण कर सकें।'

29. इस न्यायालय ने, **बद्री एवं अन्य बनाम जताशंकर एवं अन्य (उपरोक्त)** के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कई निर्णयों पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि केवल इसलिए कि निर्णय में बिंदु-निर्धारण विशेष रूप से नहीं बताए गए, यह अमान्य नहीं होगा, क्योंकि इसे नजरअंदाज किया जा सकता है यदि प्रावधानों अर्थात् आदेश 41 नियम 31 सीपीसी का पर्याप्त अनुपालन हुआ हो और उच्च अपीलीय न्यायालय अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय के निष्कर्षों का पता लगा सके।

29. वर्तमान मामले के तथ्यों पर ध्यान देते हुए, अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने परीक्षण न्यायालय द्वारा तय किए गए सभी 7 मुद्दों पर विचार किया और तर्कों, साक्ष्यों एवं अभिलेखों के आधार पर अपने निष्कर्ष अभिलेखित किए तथा परीक्षण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को बरकरार रखा, यह अभिलेखित करते हुए कि विचाराधीन निर्णय और डिक्री दिनांक 23.01.1984 विधि के अनुसार है और इसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है। इस न्यायालय का मत है कि आदेश 41 नियम 31 सिविल प्रक्रिया संहिता का

पर्याप्त अनुपालन हुआ है और अगर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को किसी भी प्रकार से अमान्य, विपरीत या विधि-विरोधी नहीं कहा जा सकता।

30. यह भी स्थापित विधि है कि दो अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अभिलेखित तथ्यात्मक निष्कर्षों में दूसरी अपील में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता जब तक वे पूर्णतः विरोधाभासी न हों। इस न्यायालय की समवर्ती पीठ ने, **सूर्याकुमारी बनाम नन्हू एवं अन्य; 2019 (37) एलसीडी 2346** में, कई निर्णयों पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि दो निचली न्यायालयों द्वारा अभिलेखित समवर्ती तथ्यात्मक निष्कर्षों को तब तक रद्द नहीं किया जा सकता जब तक कि वे पूर्णतः विपरीत न हों। संख्याबंधित प्रस्तर 11 से 16 निम्नलिखित हैं:-

"11. इस मामले में, दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा तथ्यात्मक समवर्ती निष्कर्ष हैं। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कई निर्णयों में यह विधि निर्धारित किया है कि दो अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अभिलेखित समवर्ती तथ्यात्मक निष्कर्षों में उच्च न्यायालय को दूसरी अपील में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कि निष्कर्ष पूर्णतः विपरीत न हों।

12. शिवा बलराम हैबती बनाम अविनाश मारुति पवार (2018) 11 एससीसी 652 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

"..... ये निष्कर्ष तथ्यात्मक समवर्ती निष्कर्ष होने के कारण उच्च न्यायालय के लिए बाध्यकारी थे, अतः दूसरी अपील को प्रारंभिक स्तर पर ही खारिज किया जाना चाहिए था क्योंकि इसमें कोई महत्वपूर्ण विधिक प्रश्न शामिल नहीं था।"

13. नरेंद्र एवं अन्य बनाम अजाबराव पुत्र नारायण कातार (मृत) के कानूनी प्रतिनिधियों के माध्यम से (2018) 11 एससीसी 564 में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

"...दूसरी अपील में तथ्यात्मक निष्कर्ष में हस्तक्षेप तब ही स्वीकार्य है जब ऐसा निष्कर्ष पूर्णतः विपरीत हो कि कोई न्यायिक व्यक्ति ऐसा निष्कर्ष कभी नहीं दे सकता या जब वह किसी स्थापित विधिक सिद्धांत, दलील या साक्ष्य के विरुद्ध पाया जाता है। ऐसे त्रुटियाँ विधिक प्रश्न बनाती हैं जो दूसरी अपील में हस्तक्षेप की अनुमति देता हैं।"

14. एक और हालिया मामले, दलीप सिंह बनाम भूपिंदर कौर (2018) 3 एससीसी 677 में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि तथ्यात्मक समवर्ती निष्कर्षों में कोई विपर्ययता नहीं है, तो उच्च न्यायालय द्वारा दूसरी अपील में हस्तक्षेप स्वीकार्य नहीं है।

15. गौतम सरूप बनाम लीला जेटली एवं अन्य [(2008) 7 एससीसी 85] में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि पक्षकार वैकल्पिक दलील प्रस्तुत करने के हकदार हैं। हालांकि, ये वैकल्पिक दलीलें आपस में परस्पर विनाशकारी नहीं हो सकतीं।

16. भारतीय स्टेट बैंक और अन्य बनाम एस.एन. गोयल; (2008) 8 एससीसी 92 में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

"दूसरी अपील केवल उन मामलों में प्रस्तुत की जा सकती है जिनमें विधि के सारवान प्रश्न शामिल हों। 'विधि के प्रश्न' के आगे 'सारवान' शब्द मामले में शामिल दावों को संदर्भित नहीं करता है, न ही इसका उद्देश्य केवल सामान्य महत्व के विधि के प्रश्नों को संदर्भित करना है, बल्कि पक्षकारों के बीच निर्णय पर विधि के प्रश्न के प्रभाव को संदर्भित करता है। 'विधि के सारवान प्रश्न' का अर्थ न केवल सामान्य महत्व के सारवान प्रश्न हैं, बल्कि पक्षकारों के बीच किसी मामले में उत्पन्न होने वाले सारवान विधि के प्रश्न भी हैं। धारा 100 सिविल प्रक्रिया संहिता के संदर्भ में, कोई भी विधि का प्रश्न जो किसी मामले में अंतिम निर्णय को प्रभावित करता है, पक्षकारों के बीच विधि का एक सारवान प्रश्न है। कोई विधि का प्रश्न जो संयोगवश या संपार्श्विक रूप से उत्पन्न होता है, जिसका अंतिम परिणाम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, वह विधि का सारवान प्रश्न नहीं होगा। जहाँ इस न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा विधि के प्रश्न पर स्पष्ट और निश्चित उद्घोषणा हो, संबंधित, यह नहीं कहा जा सकता कि मामला कोई महत्वपूर्ण विधिक प्रश्न से जुड़ा है।"

31. उपरोक्त के मद्देनजर, इस न्यायालय का यह अभिमत है कि आक्षेपित निर्णय और डिक्री, अभिलेख पर मौजूद तर्कों, साक्ष्यों और सामग्री पर विचार करने के बाद, विधि के अनुसार पारित किए गए हैं और यह नहीं कहा जा सकता कि अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा वादी-प्रत्यर्थी के पितृत्व और वसीयत के निष्पादन में धोखाधड़ी के संबंध में अंकित किए गए निष्कर्ष अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के विरुद्ध और विकृत हैं, जबकि वे अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य और सामग्री पर आधारित हैं और इनमें कोई अवैधता, त्रुटि या विकृतता नहीं है, जिसके लिए इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की आवश्यकता हो। इस अपील में प्रस्तुत विधि का मूल प्रश्न तदनुसार निर्णीत किया जाता है। यह अपील गलत और निराधार आधार पर दाखिल की गई है, जो निरस्त किए जाने योग्य है।

32. तदनुसार, अपील खारिज की जाती है। लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।

(2025) 2 ILRA 61

मूल अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 13.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अजीत कुमार

प्रकरण अन्तर्गत अनुच्छेद 227 संख्या- 1401/2025

श्रीराम यादव

...याचिकाकर्ता

बनाम

संजय मॉल एवं अन्य

...प्रत्यर्थी

याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता:

शिव ओम विक्रम सिंह चौहान

प्रत्यर्थागण की ओर से अधिवक्ता:

सुशील कुमार मिश्रा

सिविल विधि - 30प्र0 शहरी भवन (किराए पर देने, किराया और बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972 - भारत का संविधान, अनुच्छेद 227 - रिहाई आवेदन - सह-स्वामी द्वारा रिहाई की मांग करने की स्वीकार्यता - किरायेदार की आपत्ति कि अविभाजित संपत्ति के क्रेता के पास कोई कब्ज़ा अधिकार नहीं है, खारिज - निर्णय दिया गया कि किरायेदार इस आधार पर रिहाई आवेदन पर आपत्ति नहीं कर सकता कि मकान मालिक केवल सह-स्वामी है - सह-स्वामी का काल्पनिक कब्ज़ा रिहाई आवेदन को बनाए रखने के लिए पर्याप्त है - किराया अधिनियम के तहत कार्यवाही प्रकृति में संक्षिप्त है - अनन्य स्वामित्व या विभाजन का मुद्दा प्रासंगिक नहीं है - आपत्ति में संशोधन की अस्वीकृति के खिलाफ अनुच्छेद 227 के तहत याचिका गुण-दोष से रहित पाई गई - याचिका खारिज। (पैरा 5 और 6)

अभिनिर्धारित:

संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने और अभिलेखों का अवलोकन करने के बाद, मैं प्रत्यर्थागण की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ओ.पी. सिंह द्वारा प्रस्तुत तर्कों में सत्यता पाता हूँ। एक किरायेदार, सह-स्वामी द्वारा रिहाई आवेदन को बनाए रखने पर आपत्ति नहीं कर सकता क्योंकि इस न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनेक निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि सह-स्वामियों में से कोई एक रिहाई आवेदन को बनाए रख सकता है। मेसर्स इंडिया अम्ब्रेला मैनुफैक्चरिंग कंपनी एवं अन्य बनाम भगबांदेई अग्रवाल (मृत) जरिए उत्तराधिकारी श्रीमती सावित्री अग्रवाल एवं अन्य, (2004) 3 एससीसी 178, श्री राम पसरीचा बनाम जगन्नाथ एवं अन्य (1976) 4 एससीसी 184. (प्रस्तर 5)

यह तर्क कि किसी संपत्ति के क्षेत्र और सीमा में विभाजन होने तक सह-स्वामी को कब्ज़ा-अधिकार नहीं मिल सकता, कुछ-कुछ सह-स्वामी द्वारा अन्य सह-स्वामियों के विरुद्ध दायर की जाने वाली दलील जैसा है। मेरे अनुसार, यह तर्क किसी किरायेदार के लिए उपलब्ध नहीं है। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि किसी खरीदार के पास संयुक्त संपत्ति के किसी विशिष्ट भाग पर कब्ज़ा हस्तांतरित करने का अनन्य अधिकार नहीं हो सकता है, लेकिन संयुक्त स्वामित्व के सिद्धांत के अनुसार, वह अपने सभी सह-हिस्सेदारों के साथ अविभाजित संपत्ति पर काल्पनिक कब्ज़ा रखता है। हालाँकि, कब्ज़ा-अधिकार का यह सिद्धांत किरायेदार को रिहाई आवेदन की स्थिरता पर प्रश्न उठाने में मदद नहीं कर सकता। एक बार किरायेदार द्वारा संपत्ति मुक्त कर दिए जाने के बाद, यह सभी सह-स्वामियों के पास निहित हो जाएगी और विभाजन के बाद ही किसी एक के वैध अनन्य कब्ज़े में आएगी। इसलिए, यदि किसी सह-स्वामी को संपत्ति का कब्ज़ा मिल जाता है, तो वह अनन्य कब्ज़े के हस्तांतरण के साथ उसे बेच नहीं सकता, लेकिन किरायेदार को रिहाई आवेदन की स्थिरता पर प्रश्न उठाने का

कोई विधिक अधिकार नहीं है। इस प्रकार, इस आधार पर रिहाई आवेदन की स्थिरता पर प्रश्न नहीं उठाया जा सकता कि सह-स्वामी ने रिहाई आवेदन दायर किया था। गजरा विष्णु गोसावी (पूर्वोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले में जो टिप्पणियां की गई हैं, वे मेरे ऊपर दिए गए दृष्टिकोण के विरोध में नहीं आती हैं। वह एक ऐसा प्रकरण था जिसमें सह-उत्तराधिकारी से संपत्ति का खरीदार अविभाजित संपत्ति के संबंध में अधिकार प्राप्त करने का प्रयास कर रहा था। यह एक स्थापित विधि है कि सह-हिस्सेदारों की संपत्ति के संबंध में, एक का कब्जा अन्य सभी सह-हिस्सेदारों का कब्जा माना जाता है। यह वह सिद्धांत है जिसका आज तक पालन किया गया है। हालांकि, रिलीज आवेदन के संबंध में दायर किया जा रहा है जो एक संक्षिप्त कार्यवाही है जिसमें आकस्मिक रूप से शीर्षक के मुद्दे पर भी विचार नहीं किया जा सकता है और वह भी जहां याचिकाकर्ता शीर्षक की अंतर्निहित कमी की दलील देता है लेकिन यह प्रकरण नहीं है। उस प्रकरण के तथ्य बिल्कुल अलग हैं और उक्त फैसले में प्रतिपादित सिद्धांत वर्तमान प्रकरण पर लागू नहीं होता है। (प्रस्तर 6)

याचिका खारिज। (ई-14)

उद्धृत प्रकरण की सूची:

1. गजरा विष्णु गोसावी बनाम प्रकाश नानासाहेब कांबले और अन्य, (2009) 10 एससीसी 654
2. रामदास बनाम सीताबाई एवं अन्य, जे.टी. 2009 (8) एस.सी. 224
3. श्री राम पसरीचा बनाम जगन्नाथ एवं अन्य, (1976) 4 एससीसी 184
4. मेसर्स इंडिया अम्ब्रेला मैनुफैक्चरिंग कंपनी बनाम भगवांदाई अग्रवाल (मृत), (2004) 3 एससीसी 178

(माननीय न्यायमूर्ति अजीत कुमार द्वारा प्रदत्त)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री शिव ओम विक्रम सिंह चौहान की सहायता से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री विष्णु गुप्ता और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री सुशील कुमार मिश्रा की सहायता से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ओ.पी. सिंह को सुना गया।

2. संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दायर इस याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ता ने निर्धारित प्राधिकारी द्वारा दिनांक 29.11.2024 को पारित आदेश का विरोध किया है, जिसके माध्यम से रिहाई आवेदन के खिलाफ उनके द्वारा दायर लिखित बयान/आपत्ति में संशोधन आवेदन को खारिज कर दिया गया है।

3. यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि प्रकरण 2017 में दर्ज किया गया था और जिस मकान मालिक ने रिहाई के लिए आवेदन किया है, वह 30.11.2013 के विक्रय विलेख के आधार पर संपत्ति का मालिक बन जाता है। किरायेदार/याचिकाकर्ता द्वारा उठाया गया प्रश्न यह है कि अविभाजित संपत्ति के संबंध में विक्रय विलेख के

आधार पर संपत्ति का मालिक बनने वाला व्यक्ति केवल संपत्ति के एक हिस्से का ही हकदार होता है और ऐसी संपत्ति पर उसका कब्ज़ा नहीं हो सकता। उन्होंने **गजरा विष्णु गोसावी बनाम प्रकाश नानासाहेब कांबले एवं अन्य, (2009) 10 एससीसी 654** के प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है, जिसमें न्यायालय ने उसी न्यायालय की एक अन्य बेंच द्वारा **रामदास बनाम सीताबाई एवं अन्य, जेटी 2009 (8) एससी 224** के प्रकरण में की गई टिप्पणियों पर भरोसा किया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि "संयुक्त परिवार की संपत्ति में सह-भागी के अविभाजित हिस्से का खरीदार उस संपत्ति पर कब्जे का हकदार नहीं है, जो उसने खरीदी थी। उसे केवल संपत्ति के विभाजन के लिए मुकदमा करने और मुकदमे वाली संपत्ति में अपने हिस्से के आवंटन की मांग करने का अधिकार है।"

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत इस दलील का विरोध करते हुए, प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ओपी सिंह ने दलील दी कि एक बार जब संपत्ति किसी तीसरे पक्ष द्वारा खरीद ली जाती है और वह संपत्ति का मालिक बन जाता है, तो वह संपत्ति का सह-हिस्सेदार बन सकता है, लेकिन यह सह-स्वामी की स्थिति के बराबर होगा और मौजूदा किरायेदार इस बात पर आपत्ति नहीं कर सकता कि एक सह-स्वामी केवल इस कारण से रिहाई आवेदन को बनाए नहीं रख सकता है कि उसके पास विभाजन के साथ कब्जे का अधिकार नहीं है। यह भी दलील दी गई है कि जिस फैसले पर भरोसा किया गया है वह एक कृषि जोत के संबंध में था जहां अविभाजित हिस्से को लेकर विवाद था। इसलिए, उन्होंने दलील दी कि उस प्रकरण के तथ्य अलग-अलग हैं और किराया विवाद प्रकरण पर लागू नहीं होते हैं जहां शीर्षक कार्यवाही के लिए प्रासंगिक नहीं है।

5. संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने और अभिलेखों का अवलोकन करने के बाद, मैं प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ओ.पी. सिंह द्वारा प्रस्तुत तर्कों में सत्यता पाता हूँ। एक किरायेदार सह-स्वामी द्वारा रिहाई आवेदन को बनाए रखने पर आपत्ति नहीं कर सकता क्योंकि इस न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनेक निर्णयों में यह माना गया है कि सह-स्वामियों में से कोई एक रिहाई आवेदन को बनाए रख सकता है। मेसर्स इंडिया अम्ब्रेला मैनुफैक्चरिंग कंपनी एवं अन्य बनाम भगवांंदेई अग्रवाल (मृत) बनाम जरिए उत्तराधिकारी श्रीमती सावित्री अग्रवाल एवं अन्य, (2004) 3 एससीसी 178, श्री राम पसरीचा बनाम जगन्नाथ एवं अन्य (1976) 4 एससीसी 184।

6. यह तर्क कि सह-स्वामी को संपत्ति का स्वामित्व तब तक नहीं मिल सकता जब तक कि संपत्ति के क्षेत्र और सीमाओं में विभाजन न हो, कुछ-कुछ सह-स्वामी द्वारा अन्य सह-स्वामियों के विरुद्ध दायर की जाने वाली दलील जैसा है। मेरे अनुसार, यह तर्क किरायेदार के लिए उपलब्ध नहीं है। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि किसी खरीदार के पास संयुक्त संपत्ति के किसी विशिष्ट भाग पर कब्ज़ा हस्तांतरित करने का अनन्य अधिकार नहीं हो सकता है, लेकिन संयुक्त स्वामित्व के सिद्धांत के अनुसार, वह अपने सभी सह-हिस्सेदारों के साथ अविभाजित संपत्ति पर काल्पनिक कब्ज़ा रखता है। हालाँकि, स्वामित्व संबंधी अधिकार का यह सिद्धांत किरायेदार

को रिहाई आवेदन की स्थिरता पर प्रश्न उठाने में मदद नहीं कर सकता। एक बार किरायेदार द्वारा संपत्ति मुक्त कर दिए जाने के बाद, यह सभी सह-स्वामियों के पास निहित हो जाएगी और विभाजन के बाद ही किसी एक के वैध अनन्य कब्जे में आएगी। इसलिए, रिहाई के बाद, यदि किसी सह-स्वामी को संपत्ति का कब्जा मिल जाता है, तो वह अनन्य कब्जे के हस्तांतरण के साथ उसे बेच नहीं सकता, लेकिन किरायेदार को रिहाई आवेदन की स्थिरता पर प्रश्न उठाने का कोई विधिक अधिकार नहीं है। इस प्रकार, रिलीज आवेदन की स्थिरता पर इस आधार पर सवाल नहीं उठाया जा सकता है कि सह-स्वामी ने रिलीज आवेदन दायर किया था। **गजरा विष्णु गोसावी (पूर्वोक्त)** में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले में जो टिप्पणियां की गई हैं, वे मेरे द्वारा ऊपर दिए गए दृष्टिकोण के विरोध में नहीं आती हैं। वह एक ऐसा प्रकरण था जिसमें सह-उत्तराधिकारी से संपत्ति का खरीदार अविभाजित संपत्ति के संबंध में अधिकार रखने का प्रयास कर रहा था। यह एक स्थापित विधि है कि सह-हिस्सेदारों की संपत्ति के संबंध में, एक का कब्जा अन्य सभी सह-हिस्सेदारों का कब्जा माना जाता है। यह वह सिद्धांत है जिसका आज तक पालन किया गया है। हालांकि, रिलीज आवेदन के संबंध में दायर होने पर जो एक संक्षिप्त कार्यवाही है जिसमें आकस्मिक रूप से शीर्षक के मुद्दे पर भी विचार नहीं किया जा सकता है और वह भी जहां याचिकाकर्ता शीर्षक की अंतर्निहित कमी की दलील देता है लेकिन यह प्रकरण नहीं है। उस प्रकरण के तथ्य बिल्कुल अलग हैं

7. उपरोक्त के मद्देनजर, मुझे विहित प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश में कोई स्पष्ट त्रुटि नहीं दिखती।

8. याचिका में कोई गुण-दोष नहीं है और तदनुसार इसे खारिज किया जाता है।

(2025) 2 ILRA 64

मूल अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक : इलाहाबाद 06.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अजित कुमार

प्रकरण अन्तर्गत अनुच्छेद 227 संख्या- 3900 सन् 2022

रामबाबू गुप्ता एवं अन्य

...याचिकाकर्तागण

बनाम

श्री गणेश महाराज विराजमान

...प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्तागण के अधिवक्ता :

निखिल चतुर्वेदी, वरिष्ठ अधिवक्ता

प्रत्यर्थागण के अधिवक्ता :

नितिन यशार्थ, पद्माकर पांडेय, सुनील कुमार श्रीवास्तव, यशार्थ

सिविल विधि – उत्तर प्रदेश शहरी भवन (किरायेदारी, किराया तथा बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972

– धारा 21(1)(क) तथा 2(1) (खख) – क्या निजी न्यास के मामले में भी वास्तविक आवश्यकता केवल न्यास की आवश्यकता के रूप में ही स्थापित की जा सकती है और न्यासी के परिवार के सदस्यों के संबंध में नहीं? – संशोधन अधिनियम के लागू होने के उपरान्त सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास अब अधिनियम, 1972 के अंतर्गत अधिकारों के संबंध में किराया प्राधिकारी के क्षेत्राधिकार में नहीं आते, किन्तु निजी न्यास आते हैं तथा धारा 21(1)(क) के अधीन जो अंतिम भाग अप्रशोधित रह गया है, वह निजी न्यास पर लागू नहीं होगा।

याचिका खारिज। (ई-15)**उद्धृत मामलों की सूची:**

1. नवाब सरदार मीर सुल्तान साहब अलीम खाँ साहब बनाम आर. आर. गिब्सन 1969 (71) बंबई विधि रिपोर्टर 357 = विधि खोज दस्तावेज सं. 31388
2. गेंदा लाल बनाम जिला न्यायाधीश, कानपुर नगर एवं अन्य, इलाहाबाद किराया वाद 1999, खंड 1, पृष्ठ संख्या 3

(माननीय न्यायमूर्ति अजित कुमार द्वारा प्रदत्त)

1. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी. के. जैन को, जिनकी सहायता विद्वान अधिवक्ता श्री निखिल चतुर्वेदी द्वारा की गई, याचिकाकर्तागण की ओर से सुना गया तथा विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अतुल दयाल को, जिनकी सहायता विद्वान अधिवक्ता श्री नितिन यशार्थ द्वारा की गई, प्रत्यर्थी की ओर से सुना गया।

2. याचिकाकर्ता किरायेदार ने प्राधिकारी द्वारा वाद संख्या 41 सन् 2011 में पारित मकानमालिक प्रत्यर्थी के पक्ष में निर्गम आदेश को केवल इस आधार पर चुनौती दी है कि निजी न्यास होने की स्थिति में भी मुतवल्ली के परिवार के सदस्यों के लिए व्यक्तिगत आवश्यकता की पूर्ति नहीं की जा सकती, और अपने इस कथन के समर्थन में याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने उत्तर प्रदेश शहरी भवन (किरायेदारी, किराया तथा बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972 की धारा 21(1)(क) पर निर्भर किया है। प्रत्यर्थी मकानमालिक तथा याचिकाकर्ता किरायेदार के मध्य विधिक संबंध के विषय में भी प्राधिकारी तथा अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष प्रश्न उठाया गया था, किन्तु उक्त प्रश्न न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया। अतः किरायेदार याचिकाकर्ता

की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने केवल वास्तविक आवश्यकता के बिंदु पर ही आग्रह किया है, और परिणामस्वरूप प्राधिकारी के समक्ष निर्गम आवेदन की ग्राह्यता का प्रश्न विचारणीय है।

3. अपने तर्क के समर्थन में याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने बंबई उच्च न्यायालय की समन्वित पीठ के निर्णय **नवाब सरदार मीर सुल्तान साहब अलीम खाँ साहब बनाम आर. आर. गिब्सन, 1969 (71) बंबई विधि रिपोर्टर 357 = विधि खोज दस्तावेज संख्या # 31388** पर निर्भर किया है। उक्त निर्णय के प्रासंगिक प्रस्तर संख्या 16 को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है, जिसमें **बंबई किराया (युद्ध प्रतिबंध) अधिनियम, 1918** के प्रासंगिक उपबंधों का उल्लेख है, जिन्हें न्यास संपत्ति की वास्तविक आवश्यकता के संदर्भ में **धारा 21(1)(क)** के समानार्थक बताया गया है। प्रासंगिक अनुच्छेद 16 इस प्रकार है—

“जैसा कि पहले ही इंगित किया गया है, न्यास-पत्र केवल प्रबंध न्यासी को न्यास के बेहतर प्रबंधन के लिए एक आवास पर अधिकार देता है, और वर्तमान प्रबंध न्यासी अर्थात् वादी संख्या 1 द्वारा ऐसा एक आवास पहले ही ग्रहण किया जा चुका है। पुनः, अपने जिरह में वादी संख्या 3 ने परीक्षण न्यायालय के समक्ष यह कहा:

‘यदि मैं वाद में वर्णित आवास पर निवास करता हूँ, तो मुझे किराया देना होगा।’

यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि वादी उक्त परिसर को वादी संख्या 3 को किराये पर देना चाहता था। यह वादी संख्या 3 द्वारा न तो अपनी न्यासी की हैसियत में और न ही लाभार्थी के रूप में अधिभोग होगा। इसके अतिरिक्त, किसी न्यासी के लिए, जब तक कि उसे न्यास-पत्र द्वारा अधिकृत न किया गया हो, अपने व्यक्तिगत प्रयोजन हेतु न्यास संपत्ति का उपयोग करना अवैध होगा। अतः इस आधार पर कब्जे की पुनःप्राप्ति का कोई दावा स्थापित नहीं किया जा सकता कि किसी एक न्यासी को अपनी न्यासी की हैसियत में वादित परिसर पर कब्जा करना चाहता है।”

4. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जैन ने यह भी तर्क दिया कि निर्गम आवेदन की ग्राह्यता का प्रश्न एक विविध आवेदन प्रस्तुत करके उठाया गया था, जिस पर दिनांक 13.10.2014 के आदेश द्वारा यह कहते हुए सुनवाई स्थगित कर दी गई कि यह प्रश्न अंतिम निस्तारण के समय निर्धारित किया जाएगा, किन्तु यह प्रश्न वस्तुतः अनिर्णीत रह गया। यह तर्क किया गया कि अपीलीय न्यायालय ने प्राधिकारी के निर्णय की पुष्टि करते समय स्पष्ट रूप से त्रुटि की है।

5. उपर्युक्त तर्कों का प्रतिवाद करते हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी. के. जैन द्वारा प्रस्तुत निवेदन के प्रत्युत्तर में प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अतुल दयाल ने न्यायालय के समक्ष

गेंदा लाल बनाम जिला न्यायाधीश, कानपुर नगर एवं अन्य, इलाहाबाद किराया वाद 1999, खंड 1, पृष्ठ संख्या 3 में पारित निर्णय प्रस्तुत किया है तथा उक्त निर्णय के प्रस्तर 5 और 6 न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए हैं, जिनके अनुसार निजी न्यास के मामले में सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास से संबंधित सिद्धांत लागू नहीं होंगे, विशेष रूप से उस परिस्थिति में जब उत्तर प्रदेश अधिनियम सं० 6 सन् 1995 द्वारा अधिनियम सं० 13 सन् 1972 की धारा 2(1) के अंतर्गत उपबंध (बीबी) जोड़ा गया है, जिसके द्वारा सार्वजनिक धार्मिक संस्थाओं को अधिनियम, 1972 के प्रावधानों से अपवर्जित किया गया है। प्रस्तर 5 और 6 नीचे पुनः प्रस्तुत हैं:

"5. विद्वान अधिवक्ता के उपरोक्त तर्क को समझने के लिए यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 6 सन् 1995 द्वारा धारा 2(1) में उपबंध (बीबी) जोड़ा गया, जिसके द्वारा यह उपबंधित किया गया कि किराया नियंत्रण अधिनियम किसी ऐसे भवन पर लागू नहीं होगा जो किसी सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास अथवा सार्वजनिक धार्मिक संस्था का स्वामित्व हो अथवा जिसमें ऐसी संस्था का अधिकार निहित हो। यह संशोधन अधिनियम 26.09.1994 से प्रभावी हुआ।

6. सबसे पहले यह इंगित किया जाना आवश्यक है कि अभिलेख पर ऐसा कोई पदार्थ नहीं है जिससे यह सिद्ध हो सके कि विवादित भवन किसी सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास का स्वामित्व है या उसमें उसका अधिकार निहित है। सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास और निजी धर्मार्थ न्यास के मध्य एक भेद है। निजी धर्मार्थ न्यास के स्वामित्व वाले भवन पर संशोधित उपबंध (बीबी) के कारण अधिनियम का प्रभाव समाप्त नहीं होता। किंतु तर्क के लिए यह मान भी लिया जाए कि विवादित भवन उपबंध (बीबी) के अंतर्गत आता है, तो यह उल्लेखनीय है कि याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित आवंटन आदेश के विरुद्ध दाखिल पुनरीक्षण संशोधन अधिनियम के प्रभावी होने से पूर्व 21.09.1994 को ही निर्णयित हो चुका था। अतः याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित आवंटन आदेश संशोधन अधिनियम के प्रभाव में आने से पूर्व ही निरस्त हो चुका था। पुनरीक्षण न्यायालय के आदेश के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित आवंटन आदेश को उचित कारणों से निरस्त किया गया, क्योंकि यह पाया गया कि संबंधित प्राधिकारी ने नियम 8(2) और 9(3) में निहित अनिवार्य प्रावधानों की पूर्ण उपेक्षा की थी। उक्त प्रावधानों के अंतर्गत मकानमालिक को उस रिक्त भवन के आवंटन संबंधी कार्यवाही की सूचना पाने का निहित अधिकार है। यह स्वाभाविक है क्योंकि यदि भवन मकानमालिक को वास्तविक रूप से आवश्यक हो तो वह अधिनियम की धारा 16(1) के अंतर्गत उसके निर्गम हेतु आवेदन प्रस्तुत कर सकता है। जब याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित आवंटन आदेश पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा निरस्त कर दिया गया, तो याचिकाकर्ता के पास ऐसा कोई अधिकार शेष नहीं रहा जिसे वह विधि द्वारा प्रवर्तित कर सके। अतः यह मान भी लिया जाए कि संशोधन अधिनियम कार्यवाही की लंबितावस्था के दौरान किराया नियंत्रण एवं बेदखली अधिकारी के समक्ष प्रभावी हुआ, तब भी याचिकाकर्ता उस आधार पर कोई लाभ प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है, क्योंकि उसका दर्जा अनधिकृत अधिभोगी का ही रहा, चूँकि यह निर्विवाद है कि उसने विवादित भवन पर

अधिभोग उस आवंटन आदेश के आधार पर प्राप्त किया था जिसे बाद में पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा निरस्त कर दिया गया। आवंटन आदेश के निरस्त हो जाने पर उसका दर्जा अनधिकृत अधिभोगी का हो गया, जिसके पास संबंधित भवन पर कब्जा बनाए रखने का कोई अधिकार नहीं है।"

6. चूँकि याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रत्यर्थी मकानमालिक और याचिकाकर्ता किरायेदार के विधिक संबंध के प्रश्न पर आग्रह नहीं किया, अतः न्यायालय स्वीकृत तथ्य स्थिति पर आगे बढ़ता है कि इस विधिक संबंध का अस्तित्व था। ऐसी परिस्थितियों में, इसलिए, केवल वही प्रश्न विचारणीय है कि क्या निजी न्यास के मामले में भी वास्तविक आवश्यकता केवल न्यास की आवश्यकताओं के लिए ही स्थापित की जा सकती है और न्यासी के परिवार के सदस्यों के संबंध में नहीं।

7. याचिकाकर्ता ने हालांकि अधिकार का दावा प्रस्तुत करते समय न्यास पर प्रश्न उठाया था, किन्तु अंततः केवल इस बिंदु पर अडिग रहा कि निर्गम आवेदन की ग्राह्यता केवल इसलिए कि आवश्यकता न्यासी के परिवार के सदस्यों अर्थात् मुतवल्ली के लिए स्थापित की गई थी।

8. याचिकाकर्तागण और प्रत्यर्थीगण की ओर से विद्वान अधिवक्तागण को सुनने के पश्चात् और अभिलेखों का अवलोकन करने के उपरांत, याचिकाकर्ता की ओर से प्रस्तुत किए गए इस प्रश्न को संबोधित करने के लिए अधिनियम संख्या 13 सन् 1972 की धारा 21(1)(क) का उप-उपबंध प्रस्तुत करना प्रासंगिक है, जो इस प्रकार है:

"21. (1) (क) कि भवन वास्तविक रूप से आवश्यक है, चाहे वह वर्तमान रूप में हो या उसे ध्वस्त कर नए निर्माण के पश्चात्, मकानमालिक द्वारा स्वयं या उसके परिवार के किसी सदस्य, अथवा किसी ऐसे व्यक्ति के अधिभोग के लिए जिसके लाभ के लिए यह उसके पास रखा गया हो, चाहे आवासीय प्रयोजन के लिए हो या किसी पेशे, व्यवसाय या कार्य के प्रयोजन के लिए, अथवा जहाँ मकानमालिक सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास का न्यासी हो. न्यास के उद्देश्यों के लिए वास्तविक रूप से आवश्यक है.":

(परावर्द्धित)

1. उक्त प्रावधान स्पष्ट रूप से निर्धारित करता है कि धर्मार्थ न्यास के मामले में, धर्मार्थ न्यास के आवासीय प्रयोजनों की आवश्यकता, न्यास के उद्देश्यों के लिए स्थापित की जानी चाहिए ताकि अधिनियम की धारा 21(1)(क) के अंतर्गत निर्गम के लिए आवेदन किया जा सके। यह प्रावधान प्रारंभ से ही विधि में कायम रहा जब यह 13.03.1972 को गजटेट अधिसूचना के माध्यम से लागू हुआ था, जिसके लिए 08.03.1972 को राष्ट्रपति द्वारा अनुमोदन प्रदान किया गया था। तथापि, उपधारा 1 के अंतर्गत उपबंध (बीबी) को उत्तर प्रदेश

संशोधन अधिनियम संख्या 5 सन् 1995 द्वारा 26.09.1994 से लागू करते हुए जोड़ा गया, उक्त प्रावधान इस प्रकार उद्धृत है:

"2(1).....

(क).....

(ख).....

(खख) कोई भी भवन जो किसी सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास या सार्वजनिक धार्मिक संस्थाओं का हो या उसमें अधिकार निहित हो।"

10. उक्त प्रावधान के साधारण पढ़ने से स्पष्ट होता है कि सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास या सार्वजनिक धार्मिक संस्थाएँ अधिनियम संख्या 13 सन् 1972 के दायरे से बाहर रखी गई हैं और इसलिए इन परिस्थितियों में, यद्यपि उपधारा 1 धारा 21 के उपबंध (क) का प्रासंगिक भाग हटाया जाना चाहिए था, यह विधि में बना रहा। मेरे विचार से, भले ही यह प्रावधान अप्रशोधित रह गया हो, यह अप्रयुक्त हो गया क्योंकि यह प्रावधान मुख्यतः सार्वजनिक न्यास के संबंध में है। अतः उक्त प्रावधान का यह भाग वर्तमान मामले में लागू नहीं होगा क्योंकि यह स्पष्ट रूप से निजी न्यास है और सार्वजनिक न्यास नहीं है। बॉम्बे उच्च न्यायालय के निर्णय में अधिनियम के समान प्रावधान का उल्लेख है। प्रासंगिक प्रस्तर 1 के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास बॉम्बे अधिनियम के दायरे में आते हैं। समन्वित पीठ ने उक्त अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधान और विधानमंडल की मंशा का विवेचन किया कि संरक्षण केवल न्यास के उद्देश्यों और इसके प्रयोजन को सेवा देने के लिए दिया गया है, व्यक्तिगत लाभार्थी के लिए नहीं। याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता से बार-बार पूछने पर भी यह नहीं बताया जा सका कि बॉम्बे अधिनियम में भी सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास अब उक्त अधिनियम के अंतर्गत किराया प्राधिकरण के अधिकार क्षेत्र के अधीन नहीं हैं। इसके अतिरिक्त, मुझे लगता है कि इस न्यायालय की समन्वित पीठ ने गेंदा लाल (उपरोक्त) मामले में सही रूप से अवलोकन किया कि संशोधन अधिनियम के लागू होने के पश्चात्, सार्वजनिक धर्मार्थ न्यास अधिनियम 1972 के अंतर्गत किराया प्राधिकारी के अधिकार क्षेत्र के अधीन नहीं हैं, किंतु निजी न्यास आते हैं और इसलिए धारा 21(1)(क) के अंतर्गत अप्रशोधित रह गया अंतिम भाग निजी न्यास पर लागू नहीं होगा।

11. उपर्युक्त दृष्टिकोण के अनुसार, इसलिए, याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क में मुझे कोई बल नहीं दिखाई देता। कोई अन्य बिंदु प्रस्तुत नहीं किया गया।

12. याचिका अविवेचित है और तदनुसार निरस्त की जाती है।

(2025) 2 ILRA 68

मूल अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 13.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अजीत कुमार

प्रकरण अन्तर्गत अनुच्छेद 227 संख्या- 5780/2023

महेंद्र कुमार जैन

...याचिकाकर्ता

बनाम

मोहम्मद इमरान और अन्य

...प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता:

रमा गोयल बंसल, शालिनी गोयल

प्रत्यर्थीगण की ओर से अधिवक्ता:

रमेश कुमार शुक्ला, स्मृति गुप्ता

सिविल विधि - उ0प्र0 शहरी भवन किराया, किराया और बेदखली नियंत्रण अधिनियम, 1972 - धारा 20 (4) और 30 (1) - उत्तर प्रदेश शहरी परिसर किरायेदारी विनियमन अधिनियम, 2021 - धारा 4 - बेदखली आदेश के विरुद्ध - जमा राशि की मात्रा - किराए का भुगतान न करने पर मुकदमा दायर होने पर किरायेदार/याचिकाकर्ता को भवन के उपयोग और कब्जे दोनों के लिए किराया और हर्जाना जमा करना आवश्यक है और वह भी पूरी तरह से, लेकिन हर्जाने की गणना किराए के समान दर पर की जाएगी, साथ ही 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज और मुकदमे की लागत जो मकान मालिक को हुई हो सकती है - विचारण न्यायालय के पूरे फैसले में, मुकदमे की लागत और किरायेदार को कितना हर्जाना देना था, इसका कोई निर्धारण या संदर्भ नहीं है - निष्कर्ष जिसमें किराए की दर और हर्जाने का भुगतान नहीं करने की मांग की गई थी - केवल इसलिए कि किरायेदार यह नहीं बता सका कि वर्तमान बाजार मूल्य पर किराए की राशि या दर क्या होगी, विचारण न्यायालय का यह मानना उचित नहीं है कि की गई जमा राशि अपेक्षित जमा राशि से कम थी आधारणीय - जमा राशि को केवल इस आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि चालान फॉर्म में यह नहीं बताया गया था कि जमा किस मद में किया गया था - मकान मालिक द्वारा बकाया किराया और हर्जाना वसूलने का वाद खारिज किया जाता है। (प्रस्तर 19, 25, 26, 28)

याचिका आंशिक रूप से स्वीकृत। (ई-13)

उद्धृत प्रकरण की सूची:

1. काशी नाथ बनाम सुशीला देवी 2003 (2) एआरसी 347, (पैरा 70 से 73, 76)
2. एस.बी.आई. बनाम शंकर दयाल अग्रवाल 2010 2 एआरसी 378
3. रमेश कुमार सचदेवा बनाम राकेश कुमार रस्तोगी, सिविल पुनरीक्षण संख्या 125 सन् 2013, निर्णय 21.3.2018
4. महेंद्र प्रताप गर्ग बनाम श्रीमती विजय लक्ष्मी जनरल 1983 (1) एआरसी 74, (पैरा 12 से 20)
5. गोपाल यादव बनाम विशेष न्यायाधीश (भ्रष्टाचार निवारण)/अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, वाराणसी एवं अन्य 2002 (1) एआरसी 197, (प्रस्तर 8, 14, 16 से 18)
6. सुशील शर्मा बनाम आठवीं एडीजे, गाजियाबाद 2001 एआरसी पृष्ठ 458, (पैरा 9) **(पर भरोसा किया गया)**

(माननीय न्यायमूर्ति अजीत कुमार द्वारा प्रदत्त)

1. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री रमा गोयल बंसल का पक्ष रखते हुए सुश्री शिवांगी नंदा और मकान मालिक प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री स्मृति गुप्ता को सुना गया।
2. किरायेदार याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष एससीसी वाद संख्या 17/2015 में न्यायाधीश लघुवाद, झांसी द्वारा पारित निर्णय और डिक्री पर सवाल उठाया है, जिसमें बेदखली के लिए वाद का आदेश दिया गया था, साथ ही अतिरिक्त जिला न्यायाधीश न्यायालय संख्या 4 झांसी द्वारा पारित दिनांक 12.04.2025 के निर्णय और आदेश पर भी सवाल उठाया है, जिसमें विचारण न्यायालय के फैसले की पुष्टि की गई थी।
3. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री नंदा ने निर्णय और डिक्री पर आपत्ति जताते हुए न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया कि किरायेदार याचिकाकर्ता ने नोटिस के अनुसार भुगतान किए जाने वाले किराए के बकाया को ब्याज, न्यायालय शुल्क और व्यय के साथ पर्याप्त जमा कर दिया है, वह उत्तर प्रदेश शहरी भवन किराया नियंत्रण एवं बेदखली अधिनियम 1972 की धारा 20(4) के तहत प्रदान किए गए वैधानिक लाभ का हकदार है। उन्होंने तर्क दिया कि शिकायत के अनुसार किराए की स्वीकृत दर 80 रुपये प्रति माह थी और नोटिस में दावे के अनुसार देय राशि 01.04.2013 से 12.05.2015 तक जून और जुलाई के दो महीनों के साथ प्रभावी थी, क्योंकि मुकदमा अगस्त 2015 में शुरू हुआ था। इसलिए सुश्री नंदा के अनुसार बकाया के लिए गणना की जाने वाली राशि रुपये की दर से होनी चाहिए थी। 80 रुपये और अतिरिक्त कर व ब्याज, अधिवक्ता शुल्क सहित, उनके अनुसार सुनवाई की पहली तारीख को जमा की गई कुल राशि 8,000 रुपये थी, जिसमें किराया, कर, ब्याज और अधिवक्ता शुल्क शामिल थे। उनके अनुसार, यह जमा राशि 13.09.2015 को चालान 57-सी के तहत मुकदमा दायर करने के तुरंत बाद जमा की गई थी और उसके बाद से किराया लगातार जमा होता रहा। हालाँकि, अवर न्यायालय ने पाया कि क्षतिपूर्ति के लिए आवश्यक राशि न होने के कारण जमा राशि

पर्याप्त नहीं थी और इस प्रकार, यह माना गया कि याचिकाकर्ता ने धारा 20(4) के अनुसार राशि जमा नहीं की थी, इसलिए वह वैधानिक लाभ प्राप्त करने का हकदार नहीं था।

4. सुश्री नंदा ने आगे तर्क दिया कि नियम 21 (5) का गैर-अनुपालन इस साधारण कारण से वर्तमान प्रकरण में उत्पन्न नहीं होता है कि याचिकाकर्ता द्वारा धारा 30 (1) के तहत जमा राशि के संबंध में ऐसा कोई दावा नहीं किया गया था। उन्होंने दृढ़ता से आग्रह किया कि ऐसा कोई दावा कभी भी स्थापित नहीं किया गया था, न ही इस तरह का कोई विविध प्रकरण 1972 के अधिनियम संख्या 13 की धारा 30 (1) के तहत जमा की मांग करते हुए दायर किया गया था। इस प्रकार, सुश्री नंदा के अनुसार, इस आशय के निष्कर्ष कि याचिकाकर्ता 1972 के अधिनियम संख्या 13 की धारा 20 (4) के तहत वैधानिक लाभ का हकदार नहीं था, विकृत है और इसे रद्द किया जाना चाहिए और इसलिए, उस आधार पर ट्रायल जज द्वारा पारित निर्णय और डिक्री स्पष्ट रूप से अस्थिर है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि अपीलीय न्यायालय द्वारा भी यही स्पष्ट त्रुटि की गई थी अपने निवेदन के समर्थन में याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने **काशी नाथ बनाम सुशीला देवी 2003 (2) एआरसी 347** के प्रकरण में इस न्यायालय की समन्वय पीठ के निर्णय पर भरोसा रखा है।

5. धारा 20(4) के अंतर्गत जमा राशि की मात्रा और जमा राशि की मदों के मुद्दे पर आगे तर्क देते हुए, सुश्री नंदा ने तर्क दिया कि अधिनियम संख्या 13, 1972 के अंतर्गत आने वाले भवन के संबंध में, हर्जाना पक्षकारों के बीच सहमत किराए से अधिक नहीं हो सकता। उनके अनुसार, यदि हर्जाना किराए के अनुसार 80 रुपये प्रति माह की दर से माना जाए, तब भी जमा राशि पर्याप्त थी। उन्होंने इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा **भारतीय स्टेट बैंक बनाम शंकर दयाल अग्रवाल 2010 2 एआरसी 378** में दिए गए दो निर्णयों और साथ ही **रमेश कुमार सचदेवा बनाम राकेश कुमार रस्तोगी** प्रकरण में 21.3.2018 को **सिविल पुनरीक्षण संख्या 125/2013** में दिए गए निर्णय का हवाला दिया है।

6. इसके विपरीत, विचाराधीन निर्णय और डिक्री का बचाव करते हुए प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री स्मृति गुप्ता ने न्यायालय के समक्ष जोरदार ढंग से आग्रह किया कि हालांकि इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के अनुसार हर्जाना किराए से अधिक नहीं हो सकता है, लेकिन धारा 20(4) के तहत संदर्भित हर्जाने में उस विशिष्ट अवधि का प्रावधान नहीं है जिसके लिए हर्जाना वसूला जाना है और जिस तरीके से इसे वसूला जाना है। उनके अनुसार यदि कोई किरायेदार किराए का भुगतान करने में चूक करता है, तो वह बेदखली का हकदार है क्योंकि वह अतिचारी बन जाता है और इसलिए, उसे भवन पर ऐसे अनधिकृत कब्जे के लिए दिन-प्रतिदिन के आधार पर हर्जाना देना होगा। उन्होंने निर्णय में निर्दिष्ट कारणों के लिए निर्णय और डिक्री का बचाव किया और तर्क दिया कि अपील की न्यायालय ने निर्णय की पुष्टि करते हुए इस तथ्य का उल्लेख किया था

7. संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने तथा इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत अभिलेखों और निर्णय का अवलोकन करने के पश्चात्, विचारणीय बिन्दु यह है कि क्या धारा 20(4) के अन्तर्गत जमा की पर्याप्तता

के बिन्दु पर अवर न्यायालयों के निष्कर्ष डिक्री को कायम रखने के लिए मान्य हैं या निष्कर्ष विधि के प्रासंगिक प्रावधानों की गलत व्याख्या के कारण विकृत हैं और इसलिए निर्णय को गलत ठहराया जा सकता है और इसलिए वाद खारिज किए जाने योग्य है।

8. पक्षकारों के बीच तथ्य की यह स्वीकार्य स्थिति है कि दिनांक 13.04.2015 को नोटिस की तामील और प्रत्यर्थी मकान मालिक द्वारा बेदखली के लिए मुकदमा दायर करने के साथ, किरायेदार याचिकाकर्ता ने 30.09.2015 को चालान के माध्यम से 8,000/- रुपये जमा किए, जबकि जारी किए गए नोटिस/समन में पक्षकारों की उपस्थिति की नियत तिथि 12.10.2015 थी। इस प्रकार, अपनी उपस्थिति की पहली ही तिथि को किरायेदार-याचिकाकर्ता ने 8,000/- रुपये की राशि जमा कर दी, जिसके बारे में दावा किया गया कि वह किराया, हर्जाना, ब्याज, अधिवक्ता की फीस आदि के लिए थी। पक्षकारों द्वारा यह स्वीकार किया जाता है कि शिकायत के आरोपों के अनुसार, विशेष रूप से उसके पैरा 6 के अनुसार, पट्टे पर दिए गए परिसर का मासिक किराया 80 रुपये था।

9. प्रत्यर्थी द्वारा यह भी विवादित नहीं है कि देय बकाया राशि 1.04.2013 से मुकदमा दायर करने तक प्रभावी थी और मुकदमा अगस्त, 2015 के महीने में शिकायत प्रस्तुत करने के माध्यम से स्थापित किया गया था। इसलिए किरायेदार याचिकाकर्ता के कहने पर मकान मालिक को भुगतान की जाने वाली राशि 1.4.2013 से अगस्त 2015 के महीने तक प्रभावी थी। परिणामस्वरूप 28 महीने और कुछ दिनों की अवधि में मासिक किराया $28 \times 80 = 2240$ रुपये आया होगा।

10. अब विवाद उत्पन्न होता है। वादपत्र के अनुसार, 1.4.2013 से 80 रुपये प्रति माह की दर से किराए के बकाया के रूप में देय राशि, लेकिन नोटिस जारी होने और अधिनियम संख्या 13, 1972 की धारा 30(1) के अंतर्गत जमा राशि न होने के कारण, किरायेदार, याचिकाकर्ता वादपत्र में दावा किए गए अनुसार 200 रुपये की दर से हर्जाना देने के लिए उत्तरदायी हो गया और इस प्रकार कुल देय बकाया राशि 20,131 रुपये हो गई और तदनुसार वादपत्र में राहत निर्धारित की गई।

11. लिखित बयान में वादी के 200 रुपये प्रतिदिन की दर से हर्जाने के दावे को खारिज कर दिया गया। इसलिए, अगर हर्जाना दावे के अनुसार माना जाता है, तो जमा राशि निश्चित रूप से एक बड़ी राशि से कम होगी, लेकिन अगर हर्जाना मासिक किराए के बराबर माना जाता है, तो जमा की गई 8,000 रुपये की राशि मकान मालिक की हकदार राशि से अधिक होगी। इसलिए, न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाने वाला मुख्य मुद्दा यह था कि किरायेदार को हर्जाने की कितनी राशि देनी चाहिए।

12. विधि इस बात पर पूरी तरह से स्थापित है कि अधिनियम संख्या 13, 1972 की धारा 20(4) के अंतर्गत देय हर्जाना, पक्षों के बीच सहमत किराए की दर पर होना चाहिए। **काशी नाथ (पूर्वोक्त)** के प्रकरण में यह माना गया था कि धारा 20(4) के अंतर्गत वैधानिक लाभ प्राप्त करने के लिए जमा किया जाने वाला किराया और

हर्जाना, किराए की राशि के संबंध में किसी प्रकरण में अंतिम निर्णय पर निर्भर करेगा और किरायेदार को केवल इस आधार पर लाभ से वंचित नहीं किया जा सकता कि मकान मालिक द्वारा दावा किया गया किराया और हर्जाना नहीं चुकाया गया। इस प्रकार, यदि मकान मालिक किराए और हर्जाने के बकाया के संबंध में अधिक राशि की मांग करता है, तो किराए और हर्जाने, दोनों के संबंध में न्यायालय के अंतिम निष्कर्ष ही निर्णायक कारक होंगे। **महेंद्र प्रताप गर्ग बनाम श्रीमती विजय लक्ष्मी जनरल 1983 (1) एआरसी 74** के प्रकरण में अनुच्छेद 12, 13, 14, 16, 17, 18, 19, 20 के तहत न्यायालय ने इस मुद्दे पर व्यापक विचार-विमर्श किया है और तदनुसार विधि निर्धारित किया है। इन्हीं अनुच्छेदों को नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है।

“12. किराया नियंत्रण अधिनियम, 1947 की धारा 3(1) का खंड (क) वर्तमान किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 20(2) के खंड (क) के समान था। 1947 के अधिनियम में इस खंड की व्याख्या करते हुए, लाल मनोहर लाल के प्रकरण में इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने माना कि मांग के नोटिस में उल्लिखित किराए की बकाया राशि, न्यायालय द्वारा नोटिस की तिथि को देय पाई गई सटीक राशि नहीं होनी चाहिए, यदि प्रत्यर्थी की ओर से राशि का विरोध किया जाता है। किरायेदार को किराए के बकाया का भुगतान करने के लिए कहा जाता है, जिसका प्रथम दृष्टया अर्थ नोटिस में उल्लिखित राशि है। यदि किरायेदार उस राशि की सत्यता को स्वीकार नहीं करता है और पूरी राशि का भुगतान नहीं करना चाहता है, तो ऐसा कोई कारण नहीं दिखता है कि वह कम से कम उतनी राशि का भुगतान न करे, जितनी वह देय समझता है। यदि वह ऐसा भुगतान करता है तो वह अपनी स्थिति सुरक्षित रखता है और यदि वह किरायेदार को बेदखल करने के लिए न्यायालय जाता है तो दोष पूरी तरह से मकान मालिक का होगा। यदि किरायेदार सफल होता है तो वह अपने मुकदमे में असफल हो जाएगा। न्यायालय को यह संतुष्ट करने में कि उसने बकाया किराया चुका दिया है, भले ही माँग ज़्यादा राशि की थी। वादी तभी सफल होगा जब किरायेदार यह साबित करने में विफल रहे और वादी यह साबित करने में सफल हो जाए कि किरायेदार द्वारा भुगतान की गई राशि के बावजूद, नोटिस की तामील के एक महीने बाद भी कुछ बकाया किराया बकाया रह गया था।

13. यह माना जाना चाहिए कि विधानमंडल ने इस व्याख्या को स्वीकार कर लिया है, क्योंकि उसने वर्तमान अधिनियम की धारा 20(2) के खंड (क) को उन्हीं शब्दों में पुनः अधिनियमित किया है।

14. बेदखली के मुकदमे को खारिज करने के लिए, किरायेदार के लिए यह ज़रूरी नहीं है कि वह मकान मालिक की माँग नोटिस में बताई गई माँग पूरी करे। अगर किरायेदार विवाद की स्थिति में देय सही राशि का भुगतान कर देता है, तो बेदखली का मुकदमा खारिज हो जाएगा।

15. धारा 20 की उपधारा (4) प्रत्यर्थी को अपनी किरायेदारी बचाने का एक और अवसर देती है। यह इस बात पर ज़ोर नहीं देती कि किरायेदार को मुकदमे में मकान मालिक द्वारा मांगी गई राशि का भुगतान करना चाहिए। यह किरायेदार से ब्याज और लागत सहित देय राशि का भुगतान करने के लिए कहती है। भुगतान, निविदा या जमा राशि बिना शर्त होनी चाहिए। उपधारा (4) के तहत की गई बिना शर्त जमा राशि मकान मालिक को तुरंत

चुकानी होगी। उपधारा (6) के तहत बिना शर्त जमा राशि का भुगतान पक्षकारों की दलीलों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना किया जाता है और यह मुकदमे के अंतिम निर्णय के अधीन है। स्पष्ट आशय यह है कि यदि किरायेदार देय राशि का भुगतान या जमा कर देता है तो बेदखली का आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए। उपधारा (6) यह स्पष्ट करती है कि किरायेदार द्वारा बिना शर्त देय राशि जमा करने और मकान मालिक को भुगतान किए जाने के बावजूद, पक्षकारों की दलीलें प्रभावी रहती हैं। यदि दलीलों में विचारणीय मुद्दे उठते हैं तो मुकदमा जारी रह सकता है। भुगतान निर्णय, अर्थात् निष्कर्ष के अधीन किया गया है। मकान मालिक को बिना शर्त जमा राशि का भुगतान पक्षकारों की दलीलों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होता है, अर्थात्, दोनों पक्षों की दलीलें सुरक्षित या संरक्षित रहती हैं। बिना शर्त जमा राशि का भुगतान प्राप्त करके मकान मालिक अपनी दलीलों से समझौता नहीं करता। जमा राशि के भुगतान का अर्थ यह नहीं है कि मकान मालिक किरायेदार के प्रकरण के किसी भी हिस्से को स्वीकार करता है। किरायेदार का भी यही हश्र होना चाहिए। भुगतान, समर्पण या जमा राशि का किरायेदार की दलीलों पर कोई प्रभाव या प्रभाव नहीं पड़ सकता।

16. उप-धारा (6) के अंतर्गत बिना शर्त जमा राशि का भुगतान वाद के निर्णय के अधीन है। इस प्रकार, यह भुगतान अस्थायी है। मकान मालिक अपने दावा किए गए अधिकारों की पूर्ति हेतु उसे दी गई राशि को अंतिम रूप से विनियोजित नहीं कर सकता। इस भुगतान का किरायेदार द्वारा दायित्व स्वीकार करने जैसा प्रभाव नहीं होगा। पक्षकारों के अधिकार और दायित्व न्यायालय द्वारा निर्धारित किए जाएंगे। बिना शर्त जमा राशि का भुगतान न्यायालय के निष्कर्ष के अधीन होगा। बिना शर्त जमा राशि के भुगतान का भाग्य और पर्याप्तता वाद के निर्णय पर निर्भर करेगी। विवाद की स्थिति में, न्यायालय के निष्कर्ष पक्षकारों के अधिकार और दायित्व निर्धारित करेंगे।

17. यदि मकान मालिक अपना दावा सिद्ध करने में सफल हो जाता है, तो न्यायालय यह देखेगा कि किरायेदार द्वारा जमा की गई राशि मकान मालिक के दावे के अनुरूप थी या नहीं। यदि जमा की गई राशि पर्याप्त थी, तो न्यायालय बेदखली का आदेश पारित नहीं करेगा। लेकिन यदि यह अपर्याप्त थी, तो धारा 20 की उपधारा (4) किरायेदार के लिए इसलिये उपयोगी नहीं होगी क्योंकि यह सशर्त थी, बल्कि इस आधार पर कि जमा राशि पर्याप्त थी और पूरी देय राशि नहीं थी। दूसरी ओर, यदि किरायेदार अपना प्रकरण सिद्ध करने में सफल हो जाता है, तो न्यायालय समान रूप से यह भी देखेगा कि निष्कर्ष के अनुसार, पहली सुनवाई में उसके द्वारा जमा की गई राशि सही थी या नहीं। यह तथ्य कि मकान मालिक ने बढ़ा-चढ़ाकर दावा किया था, बेदखली का आदेश प्राप्त करने में मदद नहीं करेगा।

18. यह दलील कि जमा राशि बिना शर्त होनी चाहिए, मकान मालिक द्वारा दावा किए गए दायित्व की स्वीकृति में होनी चाहिए, उप-धारा (6) को अनावश्यक और अनावश्यक बना देगी।

19. अनुबंध के विधि के तहत, खातों को बताने के बाद या विरोध के तहत भुगतान या निविदा करना यह कहने से ज्यादा कुछ नहीं है कि भुगतान करने वाले व्यक्ति द्वारा भुगतान को देय माना जाता है या भुगतान

करने के पूर्वाग्रह के बिना दावे के न्याय को चुनौती देने का अधिकार सुरक्षित रखता है। ऐसे सभी प्रकरण में भुगतान करने वाला व्यक्ति भुगतान पर कोई शर्त नहीं लगाता है। भुगतान बिना शर्त है। ऐसे प्रकरण में लेनदार उस आधार पर भुगतान ले सकता है और कह सकता है, "मैं पैसा लेता हूँ, जितना चाहें उतना विरोध करें।" और कोई भी पक्ष दूसरे के प्रकरण में दावे की कोई स्वीकृति नहीं देता है। ए। एकाँट बनाम अक्सब्रिज और रिकमैनवर्थ आर। कंपनी। निविदा देने वाले व्यक्ति को यह कहकर अपने खिलाफ अनुमानों को बाहर करने का अधिकार है, "मैं इसे पूरी तरह से चुकाता हूँ जो देय है।" लेकिन यदि दूसरे पक्ष को यह स्वीकार करने की आवश्यकता है कि यह सब देय है, तो यह एक शर्त लगाना है। (i) बोवेन बनाम ओवान, (ii) सती प्रसाद बनाम मोनमोथ नाथ, (iii) बैंक ऑफ मैसूर बनाम बीडी नोएडा।

20. हमारी राय में, धारा 20 (4) में 'बिना शर्त' शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया गया है। यदि कोई किरायेदार जमा राशि तो दे देता है, लेकिन साथ ही यह भी कहता है कि यह राशि मकान मालिक को तब तक नहीं दी जाएगी जब तक कि वह इसे पूरी तरह से दायित्व से मुक्त न कर ले, तो यह शर्त लगाना होगा। या, यदि किरायेदार कहता है कि उसके द्वारा जमा की गई राशि जमा रखी जाए और मुकदमे के निर्णय तक उसका भुगतान न किया जाए, तो जमा राशि सशर्त हो जाएगी। लेकिन लिखित बयान में किराया भुगतान की देयता की सीमा या परिमाण के बारे में अलग-अलग दलीलें देने से जमा राशि सशर्त नहीं हो जाती। जमा राशि का उद्देश्य मकान मालिक को 'तुरंत' भुगतान करना है (उपधारा (6) देखें)। जमा राशि बिना शर्त होनी चाहिए, इस अर्थ में कि इसके तत्काल भुगतान में कोई बाधा या शर्त न हो।

(प्रभाव वर्द्धित)

12. यह खंडपीठ के उक्त निर्णय पर निर्भर है कि इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने काशी नाथ (पूर्वोक्त) प्रकरण में अनुच्छेद 70, 71, 72 और 73 के तहत इस प्रकार निर्णय दिया है:

"70. इस निर्णय के मद्देनजर, यह स्पष्ट है कि भले ही मकान मालिक किराए और हर्जाने के बकाया के संबंध में बड़ी राशि का दावा करता है, जबकि किरायेदार ऐसी राशि जमा करता है जो किरायेदार के अनुसार देय है, और न्यायालय अंततः किरायेदार के संस्करण को स्वीकार करता है, तब भी किरायेदार अधिनियम की धारा 20 (4) के लाभ के हकदार होंगे। दूसरे शब्दों में, किरायेदार को किराए और हर्जाने के बकाया को जमा करने की आवश्यकता नहीं है जैसा कि मकान मालिक ने मुकदमे में दावा किया है, और किरायेदार ऐसा किराया और हर्जाना जमा कर सकता है जो किरायेदार के अनुसार बकाया है और यदि न्यायालय अंततः किरायेदार के संस्करण को स्वीकार करता है तो भी किरायेदार अधिनियम की धारा 20 (4) के लाभ के हकदार होंगे।

71. अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि अधिनियम की धारा 20(4) का लाभ प्राप्त करने के लिए, किराये और क्षति के संबंध में राशि किराये की उस दर पर जमा करना आवश्यक है जो अंततः न्यायालय द्वारा अपने अंतिम निर्णय में निर्धारित की जाती है, न कि उस दर पर जैसा कि मुकदमे में मकान मालिक द्वारा दावा किया गया है।

72. महेंद्र प्रताप गर्ग प्रकरण (पूर्वोक्त) में खंडपीठ के उक्त निर्णय की पुष्टि श्रीमती विजय लक्ष्मी गंगल प्रकरण (पूर्वोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा की गई थी।

73. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि धारा 20(4) के प्रयोजन के लिए "किराए और उपयोग एवं कब्जे के लिए क्षति की सम्पूर्ण राशि" के संबंध में प्रथम मद का निर्धारण, किराए की दर और किरायेदार से देय बकाया राशि के संबंध में न्यायालय द्वारा अंततः दर्ज किए गए निष्कर्षों के आधार पर किया जाएगा।"

(प्रभाव वर्द्धित)

13. इसके बाद, काशी नाथ के प्रकरण में, उक्त समन्वय पीठ ने धारा 20(4) के अंतर्गत ब्याज के रूप में आवश्यक जमा राशि पर विचार किया और यह निर्णय दिया कि किराए और हर्जाने के संपूर्ण बकाया पर ब्याज देय होगा। अनुच्छेद 76 के अनुसार, न्यायालय ने इस प्रकार निर्णय दिया:

"76. अब दूसरे मद पर आते हैं, जिसे अधिनियम की धारा 20 की उपधारा (4) के तहत जमा करना आवश्यक है, अर्थात्, 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज, अधिनियम की धारा 20 (4) के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज किरायेदार से भवन के उपयोग और कब्जे के लिए किराए और हर्जाने की पूरी राशि पर जमा किया जाना है (उपयोग और कब्जे के लिए इस तरह के हर्जाने की गणना किराए के समान दर पर की जाती है)। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यह तय करने के लिए कि क्या किरायेदार अधिनियम की धारा 20 (4) के लाभ का हकदार है, किराए और हर्जाने की राशि को अंततः न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाएगा, न कि किराए और हर्जाने के संबंध में मकान मालिक द्वारा दावा की गई राशि को ध्यान में रखा जाएगा। इसलिए, अधिनियम की धारा 20 (4) के तहत जमा करने के उद्देश्य से, ब्याज की राशि की गणना भी किराए और हर्जाने की राशि पर की जाएगी, जैसा कि अंततः न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया है अधिनियम की धारा 20(4) का लाभ पाने के लिए याचिकाकर्ता (प्रत्यर्थी) को देय कुल राशि, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, 250 रुपये होगी, इसलिए, 250 रुपये की उक्त राशि पर 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज निर्धारित किया जाएगा।

(प्रभाव वर्द्धित)

15. कशीनाथ के उक्त प्रकरण में न्यायालय ने लागत के प्रश्न की आगे जाँच की और गोपाल यादव बनाम विशेष न्यायाधीश (भ्रष्टाचार निवारण)/अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, वाराणसी एवं अन्य 2002 (1) एआरसी 197 के प्रकरण में एक अन्य एकल न्यायाधीश के निर्णय का हवाला दिया। न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि किरायेदार को वादी द्वारा मुकदमे में वहन की गई वास्तविक लागत जमा करनी होगी। न्यायालय ने गोपाल यादव प्रकरण के प्रासंगिक अनुच्छेदों का हवाला दिया, जिन्हें मैं यहाँ पुनः प्रस्तुत करना आवश्यक समझता हूँ। अनुच्छेद 8, 14, 16, 17 और 18 नीचे पुनः प्रस्तुत हैं:

"8. इस न्यायालय के विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या मुकदमे की लागत में, अन्य के अलावा, (i) वादी द्वारा भुगतान की गई न्यायालय फीस की वास्तविक राशि, और (ii) विवादित मुकदमे पर अधिवक्ता की फीस का आधा हिस्सा (जैसा कि मकान मालिक-प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है) या न्यायालय फीस की राशि जो लिखित बयान में प्रत्यर्थी द्वारा बताई गई 'किराए की दर' के आधार पर देय होती (और, पक्षों द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करने के बाद, न्यायालय ने अंततः इसे सही पाया)।

14. विधायिका ने अभिव्यक्ति का प्रयोग किया है .. "मुकदमे के लिए मकान मालिक की लागत..." और यदि अभिव्यक्ति का प्रयोग करने से बचा जाए तो "जो अंततः देय पाया गया होगा" या "जो न्यायालय द्वारा दी गई राहत पर अंततः देय पाया जाना चाहिए था।"

16. मेरी सुविचारित राय में, उपरोक्त प्रावधान का उद्देश्य केवल 'किरायेदार' को लाभ पहुँचाना नहीं है, बल्कि मकान मालिक और किरायेदार दोनों को लाभ पहुँचाना है। दूसरी बात, यह न्यायालय किसी दिए गए वैधानिक प्रावधान की व्याख्या करते समय उसके साथ कोई छेड़छाड़ नहीं कर सकता, खासकर तब जब व्याख्या की आवश्यकता वाली भाषा में कोई अस्पष्टता न हो।

17. आक्षेपित आदेश के अवलोकन व संलग्न चार्ट के संदर्भ में, रिट याचिका के अनुलग्नक 6 और 7 के संदर्भ में, विवादित निर्णय और आदेश का अवलोकन करने से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि किरायेदार-याचिकाकर्ता द्वारा न्यायालय शुल्क की काफी राशि के साथ-साथ कर योग्य पक्ष और क्लर्कज का आधा हिस्सा जमा नहीं किया गया है।

18. यह पूरी तरह से स्पष्ट है कि किरायेदार ने अधिनियम की धारा 20 (4) के तहत "मकान मालिकों" के लिए मुकदमे की लागत के रूप में आवश्यक राशि जमा नहीं की है और इसलिए, वह अधिनियम की धारा 20 (4) के तहत लाभ का दावा नहीं कर सकता है और खुद को संबंधित आवास से बेदखल होने से बचा नहीं सकता है।

15. अब मैं भारतीय स्टेट बैंक बनाम शंकर दयाल अग्रवाल (पूर्वोक्त) प्रकरण में दिए गए फैसले का हवाला देना चाहता हूँ, जिसमें मैंने पाया कि न्यायालय ने बहुत स्पष्ट रूप से कहा था कि हर्जाना केवल उन प्रकरण में किराए की मासिक दर के बराबर दिया जाना चाहिए जहाँ 1972 का अधिनियम संख्या 13 लागू होता हो। ऐसा कहते हुए न्यायालय ने सुशील शर्मा बनाम अष्टम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, गाजियाबाद 2001 एआरसी पृष्ठ 458 के प्रकरण में दिए गए फैसले पर भरोसा किया। उक्त फैसले का प्रासंगिक पैराग्राफ नीचे पुनः प्रस्तुत है:

"9 . याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का अंतिम निवेदन यह है कि किराये की दर 1450/- रुपये थी और न्यायालय ने 2000/- रुपये प्रति माह की दर से हर्जाना दिलाया है। अवर न्यायालयों ने समवर्ती निष्कर्ष दर्ज

किए हैं कि विचाराधीन घर उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 13, 1972 के प्रावधानों द्वारा शासित नहीं है। यदि आवास अधिनियम द्वारा शासित है, तो हर्जाना किराए की दर से दिया जाना था लेकिन यदि अधिनियम लागू नहीं होता है तो हर्जाना बाजार दर पर दिया जा सकता है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यूनियन ऑफ इंडिया बनाम श्रीमती उर्मिला रानी गौड़ एवं अन्य, 1983 (2) एआरसी 304 के फैसले पर भरोसा रखा है, जिसमें यह माना गया था कि हर्जाना किराए की दर से दिया जाना चाहिए और उससे अधिक नहीं होना चाहिए। यह एक ऐसा प्रकरण था जहां आवास उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 13, 1972 के प्रावधानों के तहत शासित था।”

17. **रमेश कुमार सचदेवा (पूर्वोक्त)** के प्रकरण में एक अन्य समन्वय पीठ ने माना है कि क्षतिपूर्ति किराये की दर के बराबर होनी चाहिए।

18. अब उपरोक्त विधिक स्थिति को लागू करते हुए मैं यह जांच करने जा रहा हूँ कि क्या किरायेदार याचिकाकर्ता द्वारा सुनवाई की पहली तारीख को या उससे पहले किया गया जमा उसे अधिनियम संख्या 13/1972 की धारा 20(4) के तहत वैधानिक लाभ का हकदार बनाने के लिए पर्याप्त था। याचिकाकर्ता द्वारा अधिनियम संख्या 13/1972 की धारा 20(4) के तहत किए गए जमा की पर्याप्तता का परीक्षण करने के लिए, अधिनियम संख्या 13/1972 की धारा 20(4) का संदर्भ लेना आवश्यक हो जाता है। संबंधित प्रावधान नीचे पुनः प्रस्तुत किए गए हैं:

“(4) उपधारा (2) के खंड (क) में उल्लिखित आधार पर बेदखली के किसी मुकदमे में, यदि मुकदमे की पहली सुनवाई में किरायेदार बिना शर्त भवन के उपयोग और कब्जे के लिए उससे देय किराए और नुकसान की पूरी राशि (उपयोग और कब्जे के लिए ऐसे नुकसान की गणना किराए के समान दर पर की जाएगी) का भुगतान करता है या [मकान मालिक को देता है या न्यायालय में जमा करता है], उस पर नौ प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज और उसके संबंध में मुकदमे के मकान मालिक की लागत, उसमें से धारा 30 की उपधारा (1) के तहत किरायेदार द्वारा पहले से जमा की गई किसी भी राशि को काटने के बाद, न्यायालय उस आधार पर बेदखली के लिए डिक्री पारित करने के बदले में, किरायेदार को उस आधार पर बेदखली के लिए उसके दायित्व से राहत देने वाला आदेश पारित कर सकता है:

परंतु इस उपधारा की कोई बात ऐसे किरायेदार के संबंध में लागू नहीं होगी जिसने या जिसके परिवार के किसी सदस्य ने उसी शहर, नगरपालिका, अधिसूचित क्षेत्र या नगर क्षेत्र में कोई आवासीय भवन बनाया है या खाली अवस्था में अन्यथा अर्जित किया है, या अधिग्रहण के बाद खाली करवा लिया है।

[स्पष्टीकरण- इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए-

(क) 'प्रथम सुनवाई' से तात्पर्य प्रत्यर्थी को दिए गए समन में उल्लिखित किसी कदम या कार्यवाही की प्रथम तारीख से है;

(ख) 'वाद की लागत' पद में विवादित वाद के लिए कर योग्य अधिवक्ता की फीस की आधी रकम सम्मिलित है।]

(प्रभाव वर्द्धित)

19. उपर्युक्त प्रावधान को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि किराए का भुगतान न करने के लिए मुकदमा दायर होने पर किरायेदार को भवन के उपयोग और कब्जे दोनों के लिए किराया और हर्जाना जमा करना आवश्यक है और वह भी पूरी राशि में, लेकिन हर्जाने की गणना किराए के समान दर पर की जानी है, साथ ही उस पर 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज और मुकदमे की लागत जो मकान मालिक को हुई हो। प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री स्मृति गुप्ता ने सही तर्क दिया है कि प्रावधान उस अवधि के बारे में चुप है जिसके लिए और किस तरीके से हर्जाना वसूला जाना है। लेकिन **महेंद्र प्रताप गर्ग (पूर्वोक्त)** के फैसले के अनुसार, 'किराए और हर्जाने की पूरी राशि' शब्द और अभिव्यक्ति, इस अतिरिक्त योग्यता के साथ कि हर्जाना किराए के समान दर पर होगा, एक स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि हर्जाना किराए के समान तरीके से वसूला जाएगा। किराया मासिक आधार पर लिया जाता है, इसलिए, मेरे विचार से हर्जाना मासिक आधार पर लिया जाना चाहिए जब तक कि न्यायालय इसे अन्यथा न मान ले। काशी नाथ (पूर्वोक्त) के प्रकरण में लिए गए दृष्टिकोण से अब यह अच्छी तरह से स्थापित है कि धारा 20 (4) के तहत लाभ से किरायेदार को केवल इसलिए इनकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि उसने मकान मालिक द्वारा दावा की गई दर पर किराया और हर्जाना जमा नहीं किया है। यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि न्यायालय यह मानता है कि किसी विशेष प्रकरण में हर्जाना दिन-प्रतिदिन के आधार पर देय है, तो किरायेदार को किराए के बराबर मासिक आधार पर किराया जमा करने के लिए लाभ से इनकार नहीं किया जा सकता है। जैसा कि मैंने पहले ही ऊपर चर्चा की है कि अगस्त 2015 के महीने में मुकदमा शुरू होने की तिथि तक अर्जित कुल बकाया 28 महीने और कुछ दिनों की अवधि के लिए था और सहमत किराया 80 रुपये था। इस प्रकार, कुल बकाया 28x80 की गणना करने पर 2,240 रुपये आता है। अब सवाल यह उठता है कि हर्जाना क्या होना चाहिए।

20. सुश्री स्मृति गुप्ता द्वारा दिया गया तर्क कि किरायेदार अतिचारी बन जाएगा, दो कारणों से तर्कसंगत नहीं है: पहला, 1972 का अधिनियम संख्या 13 उस किरायेदार की रक्षा करने के उद्देश्य से था जो संपत्ति पर कब्जा रखता है क्योंकि उसे सहमत किराए पर परिसर में किरायेदार के रूप में शामिल किया गया है, इसलिए सिर्फ इसलिए कि वह किराए का बकाया है, वह अनधिकृत निवासी नहीं बन जाता है, न ही यह अधिनियम उसे ऐसी स्थिति में लाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि 1972 के अधिनियम संख्या 13 की धारा 20(4) के तहत वैधानिक लाभ किरायेदार को मकान मालिक द्वारा किरायेदार को बेदखल करने की दलीलों के अलावा एक बढ़त देता है। और दूसरा, रिहाई की अनुमति दिए जाने की स्थिति में, अधिनियम अभी भी 1972 के अधिनियम संख्या 13 की धारा 20(4) के तहत किरायेदार को वैधानिक सुरक्षा प्रदान करता है ताकि मकान मालिक द्वारा उसी परिसर में तीसरे पक्ष के किराया समझौते में प्रवेश किए जाने की स्थिति में उसे फिर से किरायेदार के रूप में शामिल किया जा सके।

21. किरायेदार को परिसर में किरायेदार के रूप में प्रवेश के लिए आवेदन करने का वैधानिक अधिकार दिया गया है, क्योंकि मकान मालिक ने रिहा किए गए परिसर का उपयोग व्यक्तिगत आवश्यकता के लिए नहीं किया है और इसे किसी तीसरे पक्ष को किराए पर दे दिया है या यहां तक कि धारा 21 (1) (बी) के तहत रिहा किए गए भवन के पुनर्निर्माण के बाद भी, यह फिर से किराए पर देने के लिए तैयार है।

22. इस प्रकार, उपरोक्त के मददेनजर, 1972 के अधिनियम संख्या 13 के तहत रिहाई और बेदखली के प्रकरण को उन प्रकरण से अलग तरीके से लिया जाना चाहिए जहां पट्टे की अवधि समाप्त हो जाती है और मकान मालिक संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम 1872 की धारा 106 के तहत नोटिस जारी करने के साथ किरायेदारी समाप्त करने के हकदार हो जाते हैं। तदनुसार, मकान मालिक की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री स्मृति गुप्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क कि किरायेदार ऐसे प्रकरण में एक अतिचारी होगा, उसे परिसर के ऐसे अनधिकृत कब्जे के लिए दिन-प्रतिदिन के आधार पर हर्जाना देने के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, को एतद्वारा खारिज किया जाता है।

23. अब उपरोक्त विधिक स्थिति को लागू करते हुए, जैसा कि चर्चा और विश्लेषण किया गया है और अंततः माना गया है, मैं 1972 के अधिनियम संख्या 13 की धारा 20 (4) के तहत याचिकाकर्ता द्वारा जमा की गई राशि की पर्याप्तता के संबंध में विचारण न्यायालय के निष्कर्षों की जांच और परीक्षण करने के लिए आगे बढ़ता हूं।

24. अब हर्जाने की दर यदि 80 रुपये प्रति माह निर्धारित की जाए, जैसा कि मैं ऊपर चर्चा की गई विधिक स्थिति के मददेनजर उचित पाता हूं, तो राशि किराए के बकाया के समान होगी, इसलिए दोनों को जोड़ने पर यह 4480 रुपये होगी। ब्याज की गणना 9% की दर से की जानी है। कोई कर देय नहीं था क्योंकि शिकायत में कोई दलील नहीं दी गई है, इसलिए किराए में कर शामिल माना जाएगा। अब इस प्रश्न का उत्तर दिया जाना बाकी है कि ब्याज की राशि और फिर लागत क्या होगी। ब्याज की गणना 4480 रुपये पर 9% प्रति वर्ष की दर से की जानी है, इसमें 403.20 रुपये होंगे और मुकदमा शुरू करने की लागत के साथ अदालती शुल्क होगा, जो वादी ने 100 रुपये की राशि की वसूली के लिए चुकाया होगा। 4883.20 है और न्यायालय शुल्क अधिनियम के अनुसार, उक्त राशि की वसूली के लिए मकान मालिक को न्यायालय शुल्क का भुगतान करना था, जो एक हजार रुपये से अधिक नहीं होता और यदि 1500 रुपये नोटिस के शुल्क के रूप में भी लिए जाते हैं, जिसे याचिकाकर्ता भुगतान करने का हकदार नहीं था, तब भी जमा की जाने वाली कुल राशि 8,000 रुपये से कम हो जाती है।

25. विचारण न्यायालय के पूरे फैसले में, मुझे मुकदमे की लागत और किरायेदार द्वारा भुगतान किए जाने वाले वास्तविक हर्जाने के संबंध में कोई निर्धारण या संदर्भ नहीं मिला। लौटाए गए निष्कर्ष यह हैं कि मांगी गई किराए की दर और हर्जाने का भुगतान नहीं किया गया है। केवल इसलिए कि किरायेदार यह नहीं बता सका कि वर्तमान बाजार मूल्य पर किराए की राशि या दर क्या होगी, विचारण न्यायालय का यह मानना उचित नहीं था कि दी गई राशि अपेक्षित जमा राशि से कम है। चूंकि चर्चा की गई विधिक स्थिति के अनुसार याचिकाकर्ता द्वारा भुगतान की जाने वाली हर्जाने की दर के बारे में कोई निष्कर्ष नहीं है और लागत आदि के बारे में कोई निर्धारण नहीं किया गया है, न ही इस संबंध में कोई चर्चा हुई है, इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा अधिनियम संख्या 13/1972 की धारा 20(4) के तहत याचिकाकर्ता को वैधानिक लाभ देने से इनकार करने के निष्कर्ष स्पष्ट रूप से अस्थिर हैं।

26. अपील न्यायालय ने केवल इस आधार पर जमा राशि को अस्वीकार कर दिया कि फॉर्म 18सी में यह नहीं बताया गया था कि जमा किस मद में किया गया था। यदि न्यायालय ने ऊपर वर्णित विधि को सही ढंग से लागू किया होता, तो वह आसानी से राशि की गणना कर लेता और यदि जमा राशि अपेक्षित राशि से कम होती, तो न्यायालय बहुत आसानी से गणना कर सकता था कि कितनी राशि कम हुई। केवल इस आधार पर जमा राशि को अस्वीकार नहीं किया जा सकता था कि चालान फॉर्म में उन विभिन्न मदों का खुलासा नहीं किया गया था जिनमें जमा राशि की गई थी।

27. इस प्रकार, एस.सी.सी. वाद संख्या 17/2015 में न्यायाधीश लघु वाद द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 29.09.2021 तथा पुनरीक्षण न्यायालय/अपर जिला न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 4, झांसी द्वारा एस.सी.सी. पुनरीक्षण संख्या 33/2021 में दिनांक 12.04.2023 को पारित निर्णय एवं आदेश को एतद्वारा निरस्त किया जाता है।

28. याचिकाकर्ता को अपेक्षित जमा राशि जमा करने के लिए अधिनियम संख्या 13, 1972 की धारा 20 (4) के तहत लाभ का हकदार माना जाता है और इसलिए, मकान मालिक प्रत्यर्थी द्वारा लाया गया किराया और नुकसान की बकाया राशि की वसूली के लिए मुकदमा खारिज किया जाता है।

29. याचिकाकर्ता हालांकि सहमति के अनुसार किराया देना जारी रखेगा लेकिन मकान मालिक प्रत्यर्थी के पास 2021 के अधिनियम संख्या 16 की धारा 4 के अनुसार लिखित में समझौते के लिए आवेदन करने की स्वतंत्रता है।

30. इस न्यायालय के अंतरिम आदेश के तहत याचिकाकर्ता द्वारा पहले से जमा की गई राशि का कोई समायोजन नहीं किया जाएगा क्योंकि यह केवल स्थगन के लिए एक शर्त थी और यदि उक्त राशि जारी नहीं की जाती है, तो उसे मकान मालिक के पक्ष में जारी कर दिया जाएगा।

(2025) 2 ILRA 78

मूल अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 28.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति पंकज भाटिया

प्रकरण अन्तर्गत अनुच्छेद 227 संख्या- 7467/2021

बजाज आलियांज लाइफ इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

श्रद्धा पद्मजा अवस्थी एवं अन्य

...याचिकाकर्ता

...प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता:

प्रसून श्रीवास्तव

प्रत्यर्थागण की ओर से अधिवक्ता:

ध्रुव कुमार

सिविल विधि- भारत का संविधान, 1950- अनुच्छेद 227 - बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण (पॉलिसीधारकों के हितों का संरक्षण) विनियम, 2002- विनियम 3 और 4 - बीमा अधिनियम, 1938-धारा-42, 45(3) एवं (4)--- ब्याज सहित मुआवजा देने के निर्णय को चुनौती देने वाली याचिका---वह व्यक्ति जो बीमा अनुबंध की याचना करता है और उस पर बातचीत करता है, उसे अनुबंध के निर्माण के प्रयोजन के लिए बीमाकर्ता का एजेंट माना जाएगा'--- बीमा कंपनी का पूरा प्रकरण गलत बयानी और भौतिक तथ्यों को छिपाने के आधार पर बीमा अनुबंध को अस्वीकार करने पर आधारित था। आईआरडीए विनियमनों के खंड 3 और खंड 4 का अनुपालन न करने, धारा 45(4) के दूसरे प्रावधान के तहत निर्धारित प्रीमियम की वापसी न करने और बीमाकर्ता द्वारा धारा 45(4) के तहत निर्धारित भार का निर्वहन न करने तथा इस तथ्य पर विचार न करने के मद्देनजर याचिकाकर्ता द्वारा उक्त आधार पर दलील देने की गुंजाइश नहीं है कि बीमाकर्ता ने दलील दी थी कि कथित गलत बयानी या दमन बिना किसी जानबूझकर इरादे के किया गया था, भले ही तर्क के लिए यह मान लिया जाए कि अनुबंध को बीमा अधिनियम की धारा 45(3) के तहत निर्धारित धोखाधड़ी के आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था।

याचिका खारिज। (ई-15)**उद्धृत प्रकरण की सूची:**

1. शाखा प्रबंधक, बजाज आलियांज लाइफ इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड एवं अन्य बनाम दलबीर कौर: सिविल अपील संख्या 3397/2020, एसएलपी (सी) संख्या 10652/2020 से उत्पन्न, 09.10.2020 को निर्णीत
2. रिलायंस लाइफ इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड एवं अन्य बनाम राखाबेन नरेशभाई राठौड़: सिविल अपील संख्या 4261/2019, एसएलपी (सी) संख्या 14312/2015 से उत्पन्न, 24.04.2019 को निर्णीत
3. सतवंत कौर संधू बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड: 2009 एआईआर एससीडब्ल्यू 7213
4. पी.सी. चाको एवं अन्य बनाम अध्यक्ष, भारतीय जीवन बीमा निगम एवं अन्य: अपील (सिविल) संख्या 5322/2007, दिनांक 20.11.2007 को निर्णीत
5. मेसर्स टेक्सको मार्केटिंग प्राइवेट लिमिटेड बनाम टाटा एआईजी जनरल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड; सिविल अपील संख्या 8249/2022, एसएलपी (सिविल) संख्या 25457/2019 से उत्पन्न, 09.11.2022 को निर्णीत
6. सौराष्ट्र केमिकल्स बनाम नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

(माननीय न्यायमूर्ति पंकज भाटिया द्वारा प्रदत्त)

1. याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री प्रसून श्रीवास्तव और प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री ध्रुव कुमार को सुना गया। विपक्षी संख्या 2 की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ।
2. भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत वर्तमान आवेदन स्थायी लोक न्यायालय, लखनऊ द्वारा 2017 के केस संख्या 06 (श्रीमती पद्मजा अवस्थी बनाम बजाज आलियांज लाइफ इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य) में पारित दिनांक 21.12.2020 के एक पुरस्कार को चुनौती देते हुए दायर किया गया है, जिसके तहत प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा दायर शिकायत को अनुमति दी गई थी और याचिकाकर्ता को प्रकरण दर्ज करने की तारीख से 9% की दर से ब्याज के साथ 50,00,000/- रुपये (केवल पचास लाख रुपये) का मुआवजा और मुकदमेबाजी की लागत के लिए 5,000/- रुपये (केवल पाँच हजार रुपये) का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था।
3. आक्षेपित निर्णय को चुनौती देते हुए, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने तर्क दिया कि प्रत्यर्थी संख्या 1 के पति, याचिकाकर्ता-कंपनी द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 3-यस बैंक के पक्ष में 28.09.2012 से 27.09.2013 तक की अवधि के लिए जारी मास्टर पॉलिसी के सदस्य बन गए। पॉलिसी के अंतर्गत बीमित राशि 50 लाख रुपये थी और एक वर्ष की अवधि के लिए निर्धारित प्रीमियम 16,854 रुपये था। दुर्भाग्य से, लाभार्थी, प्रवीण अवस्थी की 26.01.2013 को मृत्यु हो गई और दावा दायर किया गया। याचिकाकर्ता-कंपनी ने जाँच की और दिनांक 09.01.2014 के पत्र द्वारा इस आधार पर दावा अस्वीकार कर दिया कि "23 दिसंबर, 2011 को चिकित्सा परामर्श/अस्पताल में भर्ती होने पर गुर्दे की पथरी + पिंडली की मांसपेशी में फोड़ा होने का निदान किया गया, साथ ही थक्कारोधी दवा, रक्तस्राव और रक्त आधान का इतिहास भी था, और चिकित्सीय सलाह के विरुद्ध छुट्टी दे दी गई। 18.09.2012 के नामांकन में इस तथ्य का उल्लेख नहीं किया गया था। मृतक बीमित व्यक्ति को ज्ञात ये तथ्य हमें नहीं बताए गए, इसलिए दावा अस्वीकार किया जाता है।"
4. समीक्षा समिति के समक्ष निर्धारित शिकायत निवारण के संदर्भ में, मृतक के उत्तराधिकारियों ने पुनर्विचार याचिका दायर की, जिसे भी 09.05.2014 को खारिज कर दिया गया। उक्त आदेश को चुनौती देते हुए, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने स्थायी लोक न्यायालय, लखनऊ में अपील की, जिसने यहाँ आक्षेपित निर्णय पारित किया है।
5. स्थायी लोक न्यायालय के समक्ष सुलह के प्रयास किए गए, लेकिन वे विफल रहे। इसके बाद, प्रकरण की गुण-दोष के आधार पर सुनवाई की गई और दोनों पक्षों की बात सुनी गई। स्थायी लोक न्यायालय ने दो निर्णायक मुद्दे तय किए। पहला, "क्या दावेदार बीमा दावे के लिए किसी भी प्रकार के मुआवजे का हकदार था", और दूसरा, "दावेदार किस राहत का हकदार था"। स्थायी लोक न्यायालय ने दोनों निर्णायक बिंदुओं पर निर्णय लिया और दावेदार के पक्ष में मुआवजा दिलाया।

6. उक्त निर्णय को चुनौती देते हुए वर्तमान आवेदन दाखिल किया गया है। यह दलील दी गई है कि मृतक को 'वारफेरिन 5एमजी' दवा के रिएक्शन से हुए रक्तस्राव के कारण 23.12.2011 को सहारा अस्पताल, लखनऊ में भर्ती कराया गया था और 27.12.2011 को उसे छुट्टी दे दी गई थी और उसने अन्वेषक को छुट्टी का प्रमाण पत्र भी दे दिया था। याचिकाकर्ता के अनुसार, उक्त तथ्य प्रस्ताव/नामांकन फॉर्म में प्रकट नहीं किया गया था, जो याचिकाकर्ता द्वारा मृत्यु दावे को अस्वीकार करने का आधार है। याचिकाकर्ता ने 23.12.2011 के मेडिकल दस्तावेज की एक प्रति भी रिकॉर्ड में रखी है, जिसमें दिखाया गया है कि मृतक को अवध क्रिटिकल/कोरोनरी केयर यूनिट द्वारा चिकित्सीय सलाह के विरुद्ध छुट्टी दे दी गई थी। मृतक के भाई के बयान पर भरोसा किया गया है, जो अवध क्रिटिकल/कोरोनरी केयर में भर्ती के समय दिया गया था यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता ने मृतक द्वारा एसजीपीजीआई, लखनऊ में कराए गए उपचार की प्रति और रोगी पंजीकरण कार्ड, जो 28.07.2010 से 27.07.2011 तक वैध था, प्रस्तुत किया था। उपर्युक्त के आलोक में, यह तर्क दिया गया है कि घोषणा पत्र में गलत विवरण देकर पॉलिसी ली गई थी, जिन तथ्यों को स्थायी लोक न्यायालय द्वारा नज़रअंदाज़ किया गया है और इस प्रकार यह निर्णय रद्द किए जाने योग्य है।

7. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि प्रत्यर्थी संख्या 3-यस बैंक 'मास्टर पॉलिसी धारक' था, जिसने सही तथ्यों का पता लगाए बिना और याचिकाकर्ता-बीमा कंपनी को बताए बिना मृतक को पॉलिसी जारी की थी, इसलिए यदि कोई दायित्व है, तो वह याचिकाकर्ता के विरुद्ध नहीं, बल्कि यस बैंक पर लगाया जाना चाहिए। आगे तर्क दिया गया कि यस बैंक कंपनी का कॉर्पोरेट एजेंट नहीं है और केवल एक मास्टर पॉलिसी धारक था। वर्तमान प्रकरण में, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने कोई अन्य तर्क नहीं दिया। याचिकाकर्ता द्वारा उद्धृत निर्णय बाद में संदर्भित किया जाएगा।

8. प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का दृढ़ता से खंडन किया। उनका तर्क है कि सबसे पहले, मृतक के भाई द्वारा दिए गए बयान में, इस बात का कोई उल्लेख नहीं है कि उक्त बयान कहाँ दिया गया था। उन्होंने आगे तर्क दिया कि सहारा अस्पताल में मृतक द्वारा किए गए उपचार का विधिवत खुलासा किया गया था और डिस्चार्ज सारांश, जो कि पेपर बुक के पृष्ठ 66 पर दर्ज है, स्वयं दर्शाता है कि मृतक ने हाथ के दर्द के लिए 'वारफेरिन 5 मि.ग्रा.' ली थी। उनका तर्क है कि उक्त दवा वारफेरिन एक बिना डॉक्टरी पर्ची वाली दवा थी, जिसे मृतक ने हाथ के दर्द के लिए लिया था और दुर्भाग्यवश इससे कोगुलोपैथी हो गई, जो उक्त दवा वारफेरिन के कारण हुई थी, जिसके लिए मृतक को चार दिनों तक अस्पताल में भर्ती रहना पड़ा था। उन्होंने आगे तर्क दिया कि मृतक को पॉलिसी प्रत्यर्थी संख्या 3-यस बैंक द्वारा जारी की गई थी क्योंकि मृतक का उक्त बैंक में बैंक खाता था। उन्होंने आगे तर्क दिया कि सभी फॉर्म बैंक के सदस्यों द्वारा भरे गए थे। वह मेरा ध्यान प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा किए गए आवेदन की ओर आकर्षित करते हैं कि समीक्षा समिति के समक्ष दावेदार द्वारा दर्ज किए गए कारणों की दावेदार को कभी जानकारी नहीं थी और उन्होंने यह भी अनुरोध किया था कि प्रस्ताव फॉर्म दावेदार को विशेष रूप से प्रदान किया जाए। यह कहा गया है कि उक्त आवेदन के बावजूद, प्रत्यर्थी संख्या 1 को घोषणा पत्र कभी उपलब्ध नहीं कराया गया। उन्होंने आगे तर्क दिया कि 28.01.2025 को ही प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा एक पत्र लिखा गया था कि उनके पति को वारफेरिन दवा के

रिएक्शन के कारण रक्तस्राव हुआ था और वह किसी बीमारी से ग्रस्त नहीं थे, जो कि अस्वीकृति फॉर्म में दर्ज कारण है। उक्त पत्र पेपर बुक के पृष्ठ 89 पर रिकॉर्ड में है। आगे तर्क दिया गया है कि मृतक के सभी परीक्षण तब किए गए थे जब वह सहारा अस्पताल में भर्ती था। रिपोर्ट रिकॉर्ड में हैं और जांचकर्ता को विधिवत दी गई थीं और उक्त रिपोर्ट जो रिकॉर्ड में हैं, मृतक पर किसी भी बीमारी की उपस्थिति का संकेत नहीं देती हैं।

9. प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि मृतक की मृत्यु हृदयाघात के कारण हुई, जिसे मृतक को अस्पताल में भर्ती कराई गई दवा के कारण हुई प्रतिक्रिया के कारण नहीं माना जा सकता और मृत्यु के कारण और दावे को अस्वीकार करने के लिए गए कारणों के बीच कोई संबंध नहीं है। उन्होंने मेरा ध्यान पेपर बुक के पृष्ठ 40 पर दिए गए प्रस्ताव की ओर आकर्षित किया, जिसमें कहा गया था कि अच्छे स्वास्थ्य की घोषणा चार बिंदुओं पर आवश्यक थी। चौथा बिंदु यह है कि क्या बीमाकृत व्यक्ति 7 दिनों से अधिक समय से दवा ले रहा था या अस्पताल में देखभाल में था, जिसके लिए "नहीं" वाले ब्लॉक के सामने सही का निशान है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि अन्य कॉलम के लिए बैंक अधिकारियों ने "एनए" (लागू नहीं) भरा था, जैसा कि दस्तावेज़ से स्पष्ट है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि याचिकाकर्ता का यह तर्क गलत है कि प्रत्यर्थी संख्या 3 एजेंट नहीं था और याचिकाकर्ता की वेबसाइट पर मौजूद दस्तावेज़ों के आधार पर, प्रत्यर्थी संख्या 3, यस बैंक को अभी भी एक कॉर्पोरेट एजेंट के रूप में बीमा एजेंट दिखाया गया है। उन्होंने मेरा ध्यान यस बैंक द्वारा स्थायी लोक न्यायालय के समक्ष दायर लिखित बयान की ओर दिलाया जिसमें उन्होंने स्वीकार किया कि वे याचिकाकर्ता-कंपनी के कॉर्पोरेट एजेंट थे, उनके अनुसार इस तथ्य को याचिकाकर्ता ने स्थायी लोक न्यायालय या इस न्यायालय के समक्ष कभी विवादित नहीं किया। उन्होंने बीमा अधिनियम की धारा 114-ए के आधार पर प्रदत्त शक्ति के संदर्भ में बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण (आईआरडीए) द्वारा तैयार किए गए विनियमों की ओर मेरा ध्यान दिलाया, जिन्हें "बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण (पॉलिसीधारकों के हितों का संरक्षण) विनियम, 2002" के रूप में जाना जाता है और विशेष रूप से विनियम 3(4) पर भरोसा करते हैं, जो उनके अनुसार प्रस्ताव पत्र में शामिल नहीं था। उन्होंने उक्त विनियम, 2002 के विनियम 4(1) और विनियम 4(4) पर भरोसा किया, जो नीचे उद्धृत हैं:

4. बीमा के लिए प्रस्ताव (1) समुद्री बीमा कवर के प्रकरण को छोड़कर, जहाँ वर्तमान बाज़ार प्रथाएँ लिखित प्रस्ताव प्रपत्र पर जोर नहीं देतीं, सभी प्रकरण में, जीवन बीमा या सामान्य व्यवसाय के लिए कवर प्रदान करने का प्रस्ताव एक लिखित दस्तावेज़ द्वारा प्रमाणित होना चाहिए। बीमाकर्ता का यह कर्तव्य है कि वह प्रस्ताव स्वीकार होने के 30 दिनों के भीतर बीमित व्यक्ति को प्रस्ताव प्रपत्र की एक प्रति निःशुल्क उपलब्ध कराए।

(2) ...

(3) ...

(4) जहाँ प्रस्ताव प्रपत्र का उपयोग नहीं किया जाता है, वहाँ बीमाकर्ता मौखिक या लिखित रूप से प्राप्त जानकारी को अभिलिखित करेगा और 15 दिनों के भीतर प्रस्तावक के साथ उसकी पुष्टि करेगा तथा उस जानकारी को अपने कवर नोट या पॉलिसी में शामिल करेगा। जहाँ बीमाकर्ता यह दावा करता है कि प्रस्तावक ने कोई महत्वपूर्ण जानकारी छिपाई है या कवर प्रदान करने से संबंधित किसी भी विषय पर भ्रामक या गलत जानकारी प्रदान की

है, वहाँ इस प्रकार अभिलिखित न की गई किसी भी जानकारी के संबंध में प्रमाण प्रस्तुत करने का दायित्व बीमाकर्ता का होगा।

10. प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण (कॉर्पोरेट एजेंटों का लाइसेंसिंग) विनियम, 2002 के रूप में ज्ञात विनियमों पर भरोसा किया है, जिन्हें बीमा अधिनियम की धारा 42, 42-डी और 114 ए के तहत शक्तियों के प्रयोग में तैयार किया गया है, और विशेष रूप से, विनियम 9 के तहत निर्धारित आचार संहिता पर भरोसा करते हुए सुझाव दिया है कि कॉर्पोरेट एजेंट का कर्तव्य है कि वह बीमाकर्ता को सही और भौतिक तथ्य बताए और उक्त निर्देशों के मददेनजर, यह माना जाना चाहिए कि सभी भौतिक तथ्य बीमाकर्ता को विधिवत बताए गए थे।

11. प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने अंततः तर्क दिया कि न तो अस्वीकृति आदेश में और न ही स्थायी लोक न्यायालय के समक्ष ऐसी कोई दलील दी गई थी और वास्तव में, प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा बैंक के जांचकर्ता को दी गई सामग्री को याचिकाकर्ता-कंपनी द्वारा जानबूझकर छिपाया गया था और स्थायी लोक न्यायालय के समक्ष दायर नहीं किया गया था। इस प्रकार, उनका तर्क है कि आवेदन खारिज किए जाने योग्य है।

12. पक्षों के अधिवक्तागण के प्रस्तुतीकरण और उद्धृत केस कानूनों के साथ आगे बढ़ने से पहले, भारत में बीमा को नियंत्रित करने वाले वैधानिक प्रावधानों पर ध्यान देना आवश्यक है।

13. भारत में बीमा अनुबंध भारतीय संविदा अधिनियम और बीमा अधिनियम में निहित प्रावधानों द्वारा शासित होगा। भारत में बीमा केवल वही कंपनी कर सकती है जो बीमा अधिनियम के तहत गठित नियामक प्राधिकरण द्वारा प्रदत्त लाइसेंस के अनुसार उक्त व्यवसाय करने के लिए अधिकृत हो।

14. बीमा अधिनियम की धारा 42 में बीमा एजेंट की नियुक्ति का प्रावधान है। वर्तमान प्रकरण के प्रयोजनार्थ, धारा 42(5) नीचे उद्धृत है:

“42. बीमा एजेंटों की नियुक्ति—

(5) बीमाकर्ता उप-धारा (3) के खंड (एच) के तहत निर्दिष्ट आचार संहिता के उल्लंघन सहित अपने एजेंटों के सभी कार्यों और चूक के लिए जिम्मेदार होगा और एक करोड़ रुपये तक के जुर्माने के लिए उत्तरदायी होगा।

15. उक्त बीमा अधिनियम की धारा 45 इस आशय का प्रतिबंध लगाती है कि किसी भी जीवन बीमा पॉलिसी पर तीन वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद प्रश्न नहीं उठाया जाएगा। धारा 45(2) में निहित प्रतिबंधों और धारा 45 की उपधारा (3) और उपधारा (4) में निहित प्रतिबंधों के अधीन, इसे धोखाधड़ी या भौतिक तथ्यों के मिथ्या निरूपण द्वारा प्राप्त किए जाने के रूप में प्रश्नगत किया जा सकता है। धारा 45 नीचे उद्धृत है:

“45. तीन वर्ष के पश्चात् मिथ्या कथन के आधार पर पॉलिसी को प्रश्नगत नहीं किया जाएगा - (1) जीवन बीमा की किसी भी पॉलिसी को पॉलिसी की तारीख से तीन वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी भी आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा, अर्थात् पॉलिसी जारी होने की तारीख से या जोखिम के प्रारंभ होने की तारीख से या पॉलिसी के पुनरुद्धार की तारीख से या पॉलिसी में राइडर की तारीख से, जो भी बाद में हो।

(2) जीवन बीमा पॉलिसी को धोखाधड़ी के आधार पर पॉलिसी जारी करने की तारीख या जोखिम के प्रारंभ की तारीख या पॉलिसी के पुनरुद्धार की तारीख या पॉलिसी में राइडर की तारीख से तीन वर्ष के भीतर किसी भी समय प्रश्नगत किया जा सकता है:

बशर्ते कि बीमाकर्ता को बीमित व्यक्ति या बीमित व्यक्ति के विधिक प्रतिनिधियों या नामितियों या समनुदेशितियों को लिखित रूप में उन आधारों और सामग्रियों के बारे में सूचित करना होगा जिन पर ऐसा निर्णय आधारित है।

स्पष्टीकरण 1. - इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, "कपट" शब्द का अर्थ बीमाधारक या उसके एजेंट द्वारा बीमाकर्ता को धोखा देने या बीमाकर्ता को जीवन बीमा पॉलिसी जारी करने के लिए प्रेरित करने के इरादे से किए गए निम्नलिखित कार्यों में से कोई भी है: -

(क) किसी तथ्य के रूप में सुझाव, जो सत्य नहीं है और जिसके बारे में बीमाधारक को विश्वास नहीं है कि वह सत्य है;

(ख) बीमाधारक द्वारा तथ्य का ज्ञान या विश्वास होने पर उसे सक्रिय रूप से छिपाना;

(ग) धोखा देने के लिए उपयुक्त कोई अन्य कार्य; और

(घ) ऐसा कोई कार्य या चूक जिसे विधि विशेष रूप से कपटपूर्ण घोषित करता है।

स्पष्टीकरण 2. - बीमाकर्ता द्वारा जोखिम के निर्धारण को प्रभावित करने वाले तथ्यों के बारे में मात्र चुप्पी रखना धोखाधड़ी नहीं है, जब तक कि प्रकरण की परिस्थितियां ऐसी न हों कि उनको ध्यान में रखते हुए, बीमाकृत व्यक्ति या उसके एजेंट का यह कर्तव्य है कि वह चुप रहकर बोले, या जब तक कि उसका चुप रहना, स्वयं में बोलने के समतुल्य न हो।

(3) उपधारा (2) में किसी बात के होते हुए भी, कोई भी बीमाकर्ता धोखाधड़ी के आधार पर किसी जीवन बीमा पॉलिसी को अस्वीकार नहीं करेगा यदि बीमाधारक यह साबित कर सके कि किसी महत्वपूर्ण तथ्य का गलत कथन या उसका छिपाव उसके सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के अनुसार सत्य था या तथ्य को छिपाने का कोई जानबूझकर इरादा नहीं था या किसी महत्वपूर्ण तथ्य का ऐसा गलत कथन या छिपाव बीमाकर्ता के ज्ञान में है:

बशर्ते कि धोखाधड़ी के प्रकरण में, यदि पॉलिसीधारक जीवित नहीं है तो उसे गलत साबित करने का दायित्व लाभार्थियों पर होगा।

स्पष्टीकरण - वह व्यक्ति जो बीमा संविदा की याचना करता है और उस पर बातचीत करता है, संविदा के निर्माण के प्रयोजन के लिए बीमाकर्ता का अभिकर्ता समझा जाएगा।

(4) जीवन बीमा पॉलिसी को, पॉलिसी जारी होने की तारीख या जोखिम के प्रारंभ होने की तारीख या पॉलिसी के पुनरुत्थान की तारीख या पॉलिसी में राइडर की तारीख, जो भी बाद में हो, से तीन वर्ष के भीतर किसी भी समय इस आधार पर प्रश्नगत किया जा सकता है कि प्रस्ताव या अन्य दस्तावेज में, जिसके आधार पर पॉलिसी जारी की गई थी या पुनरुत्थान किया गया था या राइडर जारी किया गया था, बीमित व्यक्ति के जीवन की प्रत्याशा से संबंधित किसी तथ्य का कथन या उसका दमन गलत तरीके से किया गया था:

बशर्ते कि बीमाकर्ता को बीमित व्यक्ति या बीमित व्यक्ति के विधिक प्रतिनिधियों या नामितियों या समनुदेशितियों को लिखित रूप में उन आधारों और सामग्रियों के बारे में सूचित करना होगा जिन पर जीवन बीमा पॉलिसी को अस्वीकार करने का ऐसा निर्णय आधारित है:

बशर्ते कि यदि पॉलिसी को गलत विवरण या किसी महत्वपूर्ण तथ्य को छिपाने के आधार पर निरस्त किया जाता है, न कि धोखाधड़ी के आधार पर, तो निरस्तीकरण की तिथि तक पॉलिसी पर एकत्रित प्रीमियम का भुगतान बीमाधारक या बीमाधारक के विधिक प्रतिनिधियों या नामितियों या समनुदेशितियों को ऐसे निरस्तीकरण की तिथि से नब्बे दिन की अवधि के भीतर किया जाएगा।

स्पष्टीकरण--इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, तथ्य का गलत कथन या उसका छिपाना तब तक महत्वपूर्ण नहीं माना जाएगा जब तक कि उसका बीमाकर्ता द्वारा उठाए गए जोखिम पर सीधा प्रभाव न हो। बीमाकर्ता पर यह दर्शाने का दायित्व है कि यदि बीमाकर्ता को उक्त तथ्य की जानकारी होती तो बीमाधारक को कोई जीवन बीमा पॉलिसी जारी नहीं की गई होती।

(5) इस धारा में कोई भी बात बीमाकर्ता को किसी भी समय आयु का प्रमाण मांगने से नहीं रोकेंगी, यदि वह ऐसा करने का हकदार है, और कोई भी पॉलिसी केवल इसलिए प्रश्नगत नहीं मानी जाएगी कि पॉलिसी की शर्तों को बाद में इस बात के प्रमाण के आधार पर समायोजित किया जाता है कि प्रस्ताव में बीमित व्यक्ति की आयु गलत बताई गई थी।

16. बीमा अधिनियम की धारा 51 प्रस्ताव प्रपत्र आदि की आपूर्ति को अनिवार्य बनाती है। धारा 51 नीचे उद्धृत है:

“51. प्रस्तावों और चिकित्सा रिपोर्टों की प्रतियों की आपूर्ति - प्रत्येक बीमाकर्ता, पॉलिसीधारक द्वारा आवेदन करने पर और एक रुपए से अधिक नहीं की फीस के भुगतान पर, पॉलिसीधारक को उसके बीमा प्रस्ताव में और उसके संबंध में आपूर्ति की गई चिकित्सा रिपोर्ट में उससे पूछे गए प्रश्नों और उनके उत्तरों की प्रमाणित प्रतियां प्रदान करेगा।

17. चूँकि यह मुद्दा उठाया गया है कि क्या प्रत्यर्थी संख्या 3 याचिकाकर्ता का कॉर्पोरेट एजेंट था या नहीं, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि एजेंसी शब्द अनुबंध अधिनियम के अध्याय 10 के अंतर्गत निर्धारित है। अनुबंध अधिनियम की धारा 182 में एजेंट और सदस्य की परिभाषा इस प्रकार है:

182. “एजेंट” और “प्रधान” की परिभाषा—“एजेंट” वह व्यक्ति है जो किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई कार्य करने, या तृतीय व्यक्तियों के साथ लेन-देन में किसी अन्य व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करने के लिए नियोजित होता है। वह व्यक्ति जिसके लिए ऐसा कार्य किया जाता है, या जिसका इस प्रकार प्रतिनिधित्व किया जाता है, “प्रधान” कहलाता है।

18. संविदा अधिनियम की धारा 238, एजेंट द्वारा की गई धोखाधड़ी या मिथ्याबयान के करार पर पड़ने वाले प्रभाव का भी प्रावधान करती है। धारा 238 नीचे उद्धृत है:

“238. एजेंट द्वारा कपट की मिथ्या प्रस्तुति का समझौते पर प्रभाव—अपने प्रमुखों के लिए अपने व्यवसाय के दौरान कार्य करने वाले एजेंटों द्वारा की गई मिथ्या प्रस्तुति या की गई धोखाधड़ी का ऐसे एजेंटों द्वारा किए गए समझौतों पर वैसा ही प्रभाव पड़ता है जैसे कि ऐसी मिथ्या प्रस्तुति या धोखाधड़ी प्रमुखों द्वारा की गई होती; लेकिन एजेंटों द्वारा की गई मिथ्या प्रस्तुति या की गई धोखाधड़ी, ऐसे प्रकरण में जो उनके अधिकार क्षेत्र में नहीं आते, उनके प्रमुखों को प्रभावित नहीं करती।”

19. उक्त वैधानिक प्रावधानों और ऊपर वर्णित तथ्यों की पृष्ठभूमि में, विभिन्न पक्षों द्वारा उद्धृत निर्णय का संदर्भ दिया जा रहा है।

20. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता शाखा प्रबंधक, बजाज आलियांज लाइफ इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य बनाम दलबीर कौर के प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हैं: **एसएलपी (सी) संख्या 10652/2020 से उत्पन्न सिविल अपील संख्या 3397/2020, 09.10.2020 को निर्णीत** और उक्त निर्णयों के पैराग्राफ 9 और 10 पर जोर दिया गया है, जो नीचे उद्धृत हैं:

“9. बीमा अनुबंध परम सद्भावना का अनुबंध होता है। जीवन बीमा पॉलिसी प्राप्त करने का इच्छुक प्रस्तावक इस मुद्दे से संबंधित सभी महत्वपूर्ण तथ्यों का खुलासा करने के लिए बाध्य है कि क्या बीमाकर्ता प्रस्तावित जोखिम को उठाना उचित समझेगा। इसी सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए प्रस्ताव पत्र में पूर्व-मौजूद बीमारियों का विशिष्ट खुलासा आवश्यक है, ताकि बीमाकर्ता बीमांकिक जोखिम के आधार पर एक सुविचारित निर्णय ले सके। वर्तमान प्रकरण में, जैसा कि हमने संकेत दिया है, प्रस्तावक ने बीमा पॉलिसी जारी होने से लगभग एक महीने पहले हुई खून की उल्टी और उसके परिणामस्वरूप अस्पताल में भर्ती होने का खुलासा नहीं किया। बीमाकर्ता द्वारा की गई जाँच से संकेत मिलता है कि बीमित व्यक्ति शराब के दुरुपयोग के कारण पहले से मौजूद एक बीमारी से पीड़ित था और प्रस्तावक के ज्ञान में जो तथ्य थे, उनका खुलासा नहीं किया गया था।

यह इस न्यायालय द्वारा पूर्व में संदर्भित निर्णयों में प्रतिपादित सिद्धांतों के अंतर्गत अस्वीकृति का आधार प्रस्तुत करता है। भारतीय जीवन बीमा निगम बनाम आशा गोयल प्रकरण में, इस न्यायालय ने यह निर्णय दिया:

“12...जीवन बीमा अनुबंध सहित बीमा अनुबंध, सर्वव्यापी अनुबंध होते हैं और प्रत्येक भौतिक तथ्य (अर्थात् भौतिक तथ्य) का खुलासा किया जाना चाहिए, अन्यथा अनुबंध को रद्द करने का अच्छा आधार है। भौतिक तथ्यों को प्रकट करने का कर्तव्य अनुबंध के समापन तक जारी रहता है और इसमें जोखिम की प्रकृति में कोई भी भौतिक परिवर्तन भी शामिल है जो प्रस्ताव और उसकी स्वीकृति के बीच हो सकता है। यदि कोई गलत बयान या भौतिक तथ्यों को छिपाया गया है, तो पॉलिसी पर प्रश्नचिह्न लगाया जा सकता है। इस प्रश्न के निर्धारण के लिए कि क्या किसी भौतिक तथ्य को छिपाया गया है, यह भी जांचना आवश्यक हो सकता है कि क्या यह छिपाना किसी ऐसे तथ्य से संबंधित है जो पॉलिसी लेने के इच्छुक व्यक्ति के अनन्य ज्ञान में है और यह किसी विवेकशील व्यक्ति द्वारा उचित जांच से पता नहीं लगाया जा सकता है।”

10. पी.सी. चाको बनाम अध्यक्ष, भारतीय जीवन बीमा निगम और सतवंत कौर संधू बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड के निर्णयों में इस बात को दोहराया गया है। सतवंत कौर संधू बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड में, मेडिकलेम पॉलिसी प्राप्त करते समय, बीमित व्यक्ति क्रोनिक डायबिटीज और गुर्दे की विफलता से पीड़ित था, लेकिन उसने पॉलिसी प्रस्ताव पत्र में इन बीमारियों का विवरण नहीं दिया था। बीमा कंपनी द्वारा दायित्व से इनकार को बरकरार रखते हुए, इस न्यायालय ने यह निर्णय दिया:

“25. संपूर्ण चर्चा का निष्कर्ष यह है कि बीमा अनुबंध में, कोई भी तथ्य जो किसी विवेकशील बीमाकर्ता के मन को जोखिम स्वीकार करने या न करने का निर्णय लेने में प्रभावित करता है, एक “महत्वपूर्ण तथ्य” है। यदि प्रस्तावक को ऐसे तथ्य की जानकारी है, तो वह प्रस्ताव पत्र में प्रश्नों के उत्तर देते समय, विशेष रूप से, इसका खुलासा करने के लिए बाध्य है। इस बात पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है कि कोई भी गलत उत्तर बीमाकर्ता को अपने दायित्व से मुक्त करने का अधिकार देगा क्योंकि यह स्पष्ट अनुमान है कि प्रस्ताव पत्र में मांगी गई कोई भी जानकारी बीमा अनुबंध करने के उद्देश्य से महत्वपूर्ण है।”

21. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने रिलायंस लाइफ इश्योरेंस कंपनी लिमिटेड एवं अन्य बनाम राखाबेन नरेशभाई राठौड़: सिविल अपील संख्या 4261/2019, जो एसएलपी (सी) संख्या 14312/2015 से उत्पन्न हुई थी, के प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का भी हवाला दिया है, जिसका निर्णय 24.04.2019 को हुआ था, जिसमें बीमा अधिनियम और उसके अंतर्गत बनाए गए विनियमों के प्रावधानों पर विचार किया गया था। उक्त निर्णय के पैराग्राफ 26 में इस बात पर जोर दिया गया है, जो नीचे उद्धृत है:

“26. बीमा अनुबंध परम सद्भावना के सिद्धांत द्वारा शासित होते हैं। पारस्परिक निष्पक्ष व्यवहार के कर्तव्य के लिए अनुबंध के सभी पक्षों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे एक-दूसरे के साथ निष्पक्ष और खुले रहें ताकि

उनके बीच विश्वास पैदा हो और बना रहे। बीमा अनुबंध में, बीमित व्यक्ति से ऐसी जानकारी की अपेक्षा की जा सकती है जिसका उसे ज्ञान हो। यह सद्भावना के कर्तव्य को उचित ठहराता है, जिससे प्रकटीकरण का सकारात्मक कर्तव्य बनता है। बीमा अनुबंधों में प्रकटीकरण का कर्तव्य कार्टर बनाम बोहम¹⁹ में किंग्स बेंच के निर्णय में स्थापित किया गया था, जहाँ लॉर्ड मैन्सफील्ड ने इस प्रकार कहा था:

बीमा एक सट्टेबाजी पर आधारित अनुबंध है। जिन विशेष तथ्यों के आधार पर आकस्मिक संभावना की गणना की जाती है, वे आमतौर पर केवल बीमाधारक के ज्ञान में ही होते हैं; बीमाधारक के पास ही बीमा होता है।

लेखक अपने प्रतिनिधित्व पर भरोसा करता है, और इस विश्वास के साथ आगे बढ़ता है कि वह अपनी जानकारी में किसी भी परिस्थिति को छिपाकर नहीं रखता है, जिससे अंडरराइटर को यह विश्वास हो जाए कि वह परिस्थिति मौजूद नहीं है, और उसे जोखिम का अनुमान लगाने के लिए प्रेरित किया जा सके, मानो वह मौजूद ही न हो। बीमाकर्ता के लिए यह मानक अभ्यास है कि वह आवेदन में आवेदक के स्वास्थ्य इतिहास और बीमा योग्यता से संबंधित अन्य प्रकरण के बारे में विशिष्ट प्रश्नों की एक श्रृंखला निर्धारित करे। प्रस्ताव पत्र का उद्देश्य एक संभावित ग्राहक के बारे में जानकारी एकत्र करना है, जिससे बीमाकर्ता को जोखिम का आकलन करने और प्रत्येक संभावित ग्राहक के लिए प्रीमियम निर्धारित करने के लिए बीमाकर्ता के लिए सभी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करने की अनुमति मिलती है। प्रस्ताव पत्र प्रकटीकरण प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं और विवरणों की सटीकता की गारंटी देते हैं। प्रस्ताव पत्र भरते समय अत्यधिक सावधानी बरतनी चाहिए। प्रस्ताव पत्र में आवेदक घोषणा करता है कि वह सत्य की गारंटी देता है। इस प्रकार लगाया गया संविदात्मक कर्तव्य ऐसा है कि प्रस्ताव पत्र में दिए गए कथन में किसी भी प्रकार का दमन, असत्य या अशुद्धि को सद्भावना के कर्तव्य का उल्लंघन माना जाएगा और बीमाकर्ता द्वारा पॉलिसी को अमान्य घोषित कर दिया जाएगा। पर्याप्त प्रकटीकरण की प्रणाली बीमा पॉलिसियों के खरीदारों और विक्रेताओं को एक सामान्य बिंदु पर मिलने और सूचना विषमताओं के अंतर को कम करने में मदद करती है। यह पक्षों को अपने हितों की बेहतर सेवा करने और संविदात्मक समझौते की सही सीमा को समझने की अनुमति देता है। बीमा में एक भौतिक गलत बयानी या छिपाव का पता चलने पर विवाद की स्थिति में बीमित व्यक्ति और बीमाकर्ता दोनों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। यह तथ्य कि यह एक विवेकशील बीमाकर्ता के निर्णय को प्रभावित करेगा कि वह जोखिम स्वीकार करे या नहीं, एक भौतिक तथ्य है। जैसा कि इस न्यायालय ने सतवंत कौर (पूर्वोक्त) (1766) 3 बर 1905 में कहा था कि यह स्पष्ट धारणा है कि प्रस्ताव पत्र में मांगी गई कोई भी जानकारी बीमा अनुबंध में प्रवेश करने के उद्देश्य से महत्वपूर्ण है। प्रत्येक प्रतिनिधित्व या कथन जोखिम के लिए महत्वपूर्ण हो सकता है। बीमा कंपनी अभी भी परिवर्तित शर्तों पर बीमा सुरक्षा प्रदान कर सकती है।

22. अगला आधार सतवंत कौर संधू बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड: 2009 एआईआर एससीडब्ल्यू 7213 प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर रखा गया है। उक्त निर्णय का पैरा 12 नीचे उद्धृत है:

"12. इसमें कोई विवाद नहीं है कि बीमा अधिनियम, 1938 (संक्षेप में "अधिनियम") की धारा 45, जो बीमाकर्ता के किसी निश्चित अवधि के बाद गलत विवरण के आधार पर जीवन बीमा पॉलिसी को प्रश्नगत करने के अधिकार पर प्रतिबंध लगाती है, वर्तमान तथ्यों पर लागू नहीं होती, क्योंकि उक्त प्रावधान केवल जीवन बीमा पॉलिसी के प्रकरण में ही लागू होता है। वर्तमान प्रकरण एक मेडिकलेम पॉलिसी से संबंधित है, जो जीवन बीमा पॉलिसी से बिल्कुल अलग है। मेडिकलेम पॉलिसी एक गैर-जीवन बीमा पॉलिसी है जिसका उद्देश्य पॉलिसीधारक को चोट, दुर्घटना या अस्पताल में भर्ती होने से संबंधित कुछ खर्चों के संबंध में आश्वस्त करना है। फिर भी, यह एक बीमा अनुबंध है जो उबेरिमा फाइडेई अनुबंध की श्रेणी में आता है, जिसका अर्थ है बीमित व्यक्ति की ओर से परम सद्भावना का अनुबंध। इस प्रकार, इस बात पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है कि जब प्रस्ताव पत्र में किसी विशिष्ट पहलू पर जानकारी मांगी जाती है, तो बीमित व्यक्ति उस विषय पर अपनी जानकारी में मौजूद जानकारी का सही और पूर्ण प्रकटीकरण करने के लिए गंभीर रूप से बाध्य होता है। यह निर्धारित करना प्रस्तावक का काम नहीं है कि मांगी गई जानकारी पॉलिसी के उद्देश्य के लिए महत्वपूर्ण है या नहीं। बेशक, खुलासा करने की बाध्यता केवल उन तथ्यों तक ही सीमित है जो आवेदक को ज्ञात हैं, न कि उन तक जो उसे पता होने चाहिए थे। खुलासा करने की बाध्यता अनिवार्य रूप से उस ज्ञान पर निर्भर करती है जो व्यक्ति के पास है। उस ज्ञान की महत्ता के बारे में उसकी राय का कोई महत्व नहीं है। (देखें: जोएल बनाम लॉ यूनियन एंड क्राउन इंस. कंपनी 1)"

23. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा पीसी चाको एवं अन्य बनाम अध्यक्ष, भारतीय जीवन बीमा निगम एवं अन्य के प्रकरण में लिए गए अगले निर्णय: अपील (सिविल) संख्या 5322/2007, का निर्णय 20.11.2007 को हुआ, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों पर निम्नलिखित प्रभाव के साथ ध्यान दिया:

"17. इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रतिनिधित्व और वारंटी में अंतर होता है। मद्रास उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने एसपी माहेश्वरी (पूर्वोक्त) प्रकरण में संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड और भारत में बीमा कानूनों के इतिहास को ध्यान में रखते हुए कहा:-

(10) बीमा विधि का एक महान सिद्धांत यह है कि बीमा अनुबंध अत्यंत सद्भावना "उबेरिमा फाइडेई" पर आधारित होता है; वास्तव में यह मूलभूत आधार है जिस पर सभी बीमा अनुबंध किए जाते हैं। इस संबंध में एक बीमा अनुबंध और दूसरे के बीच कोई अंतर नहीं है। चाहे वह जीवन बीमा हो, अग्नि बीमा हो या समुद्री बीमा, समझ यह है कि अनुबंध "उबेरिमा फाइडेई" है और यद्यपि समुद्री बीमा की विशिष्ट प्रकृति के कारण कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हो सकती हैं जिनका खुलासा करना आवश्यक है और जो अन्य बीमा अनुबंधों पर लागू नहीं होती हैं, यह सिद्धांत में अंतर के बजाय सिद्धांत के अनुप्रयोग का एक उदाहरण है। इस तथ्य से कि अनुबंध में जोखिम शामिल है और यह जोखिम को एक पक्ष से दूसरे पक्ष में स्थानांतरित करने का दावा करता है, प्रत्येक पक्ष को लेनदेन करते समय दूसरे पक्ष के निर्णय को प्रभावित करने वाली प्रत्येक परिस्थिति से पूरी तरह निर्दोष होना आवश्यक है।"

24. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया अंतिम निर्णय मेसर्स टेक्सको मार्केटिंग प्राइवेट लिमिटेड बनाम टाटा एआईजी जनरल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य के प्रकरण में है; सिविल अपील संख्या 8249/2022, एसएलपी (सिविल) संख्या 25457/2019 से उत्पन्न, 09.11.2022 को पैराग्राफ 15 पर जोर देने के साथ तय किया गया, जो निम्नानुसार है:

“15. बीमाकर्ता की ओर से सद्भावना का कार्य अनुबंध निष्पादित करने के उसके इरादे के समय से ही शुरू हो जाता है। प्रकटीकरण एक आदर्श होना चाहिए और एक महत्वपूर्ण तथ्य क्या है, इसकी उदार व्याख्या की आवश्यकता है। केवल तभी जब कोई बीमाकर्ता किसी अपवर्जन खंड पर कार्रवाई करने का इरादा नहीं रखता है, उपरोक्त सिद्धांतों के लिए सख्त अनुपालन की आवश्यकता नहीं हो सकती है। जिन तीन तत्वों पर हमने चर्चा की है, वे आपस में जुड़े हुए हैं और एक-दूसरे पर अतिव्यापी हैं। उचित प्रकटीकरण और सूचना को उसके सही अर्थों में लागू करना बीमाकर्ता का सबसे पहला कर्तव्य है। जब कोई अपवर्जन खंड पेश किया जाता है, जिससे अनुबंध उस तिथि को अप्रवर्तनीय हो जाता है जिस दिन इसे निष्पादित किया गया था, बीमाकर्ता के ज्ञान के अनुसार, गैर-प्रकटीकरण और कानून द्वारा आवश्यक प्रक्रिया का पालन करके उक्त अनुबंध की एक प्रति प्रस्तुत करने में विफलता, उक्त खंड को निरर्थक और अस्तित्वहीन बना देगी।”

25. प्रत्यर्थी संख्या 1 के अधिवक्ता ने **सौराष्ट्र केमिकल्स बनाम नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** के प्रकरण में इस न्यायालय की खंडपीठ के फैसले पर भरोसा किया है, जिसमें इस न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया था कि बीमा कंपनी उस आधार से अधिक दलील नहीं दे सकती जिस पर बीमा को अस्वीकार किया गया है।

26. **टेक्सको मार्केटिंग प्राइवेट लिमिटेड (पूर्वोक्त)** प्रकरण में दिए गए अंतिम निर्णय पर प्रत्यर्थी संख्या 1 के अधिवक्ता ने भी भरोसा किया है। प्रासंगिक अनुच्छेद 21 और 42 इस प्रकार हैं:

“21. उपर्युक्त सिद्धांत की चर्चा के आधार पर, हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि किसी बहिष्करण खंड पर विचार करते समय बीमाकर्ता की ओर से एक भारी जिम्मेदारी होती है। हम केवल इतना जोड़ सकते हैं कि बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण (पॉलिसी धारक के हितों का संरक्षण, विनियमन 2002) अधिनियम, दिनांक 16.10.2002 (जिसे आगे आईआरडीए विनियमन, 2002 कहा जाएगा) की धारा 3(ii) के अनुसार बीमाकर्ता को वैधानिक रूप से यह आदेश दिया गया है कि बीमाकर्ता और उसके एजेंट का यह कर्तव्य है कि वे बीमाधारक को पॉलिसी के संबंध में सभी आवश्यक जानकारी प्रदान करें ताकि वह अपने हित में सर्वोत्तम कवर का निर्णय ले सके। इसके अतिरिक्त, धारा 3 का उप-धारा (iv) यह आदेश देता है कि यदि बीमाधारक द्वारा प्रस्ताव प्रपत्र नहीं भरा जाता है, तो उक्त प्रपत्र के अंत में एक प्रमाणपत्र शामिल किया जाना चाहिए कि प्रपत्र और दस्तावेजों की सभी विषय-वस्तु बीमाधारक को पूरी तरह से समझा दी गई है और उसे समझा दी गई है। इसी प्रकार, धारा 4 बीमाकर्ता पर यह कर्तव्य निर्धारित करती है कि स्वीकृति के तीस दिनों के भीतर प्रस्ताव प्रपत्र की एक प्रति निःशुल्क प्रस्तुत करें। किसी भी प्रकार का अनुपालन न करने पर, स्पष्टतः यह निष्कर्ष निकलेगा कि आपत्तिजनक

खंड, चाहे वह अपवर्जन खंड ही क्यों न हो, बीमाकर्ता द्वारा बीमित व्यक्ति के विरुद्ध प्रयोग में नहीं लाया जा सकता क्योंकि हो सकता है कि उसे इसकी जानकारी न हो।

42. इस प्रकरण से अलग होने से पहले, हम सभी बीमा कंपनियों को आईआरडीए विनियमन, 2002 के खंड (3) और (4) के अनिवार्य अनुपालन पर सावधानी बरतना चाहेंगे। बीमा कंपनियों की ओर से कोई भी गैर-अनुपालन उनके तहत शामिल किसी भी नियम और शर्तों पर भरोसा करके अनुबंध को अस्वीकार करने का अधिकार छीन लेगा।

27. वर्तमान प्रकरण में, मृतक के परिवार द्वारा किए गए दावे को निम्नलिखित कारणों से दिनांक 09.01.2014 के संचार के माध्यम से प्रथम दृष्टया खारिज कर दिया गया था:

"23 दिसंबर, 2011 को चिकित्सा परामर्श/अस्पताल में भर्ती होने पर गुर्दे की पथरी + पिंडली की मांसपेशी में फोड़ा होने का निदान किया गया, साथ ही थक्कारोधी दवा, रक्तस्राव और रक्त आधान का पूर्व इतिहास भी बताया गया और चिकित्सीय सलाह के विरुद्ध छुट्टी दे दी गई। 18.09.2012 के नामांकन में इस तथ्य का उल्लेख नहीं किया गया था।

मृतक बीमित व्यक्ति को ज्ञात ये तथ्य हमें नहीं बताए गए, इसलिए दावा अस्वीकृत किया जाता है।"

28. समीक्षा समिति ने निम्नलिखित कारणों से समीक्षा को खारिज कर दिया:

"यह आपके ध्यान में लाया जा सकता है कि कंपनी ने प्रस्ताव फॉर्म में उल्लिखित तथ्यों के आधार पर पूरी तरह से उपर्युक्त पॉलिसियों के लिए जोखिम को कवर किया था। हालांकि दावे की सूचना प्राप्त करने और आपके द्वारा दावे के साथ प्रस्तुत विभिन्न दस्तावेजों और मेडिकल रिपोर्टों के अवलोकन से, यह प्रतीत होता है कि मृतक बीमित व्यक्ति को 23/12/2011 के दौरान गुर्दे की पथरी के लिए परामर्श/उपचार दिया गया था, जिसमें पिंडली की मांसपेशी में फोड़ा था, साथ ही एंटीकोगुलेंट दवा का इतिहास, रक्तस्राव का इतिहास, रक्त आधान का इतिहास था। ये तथ्य बीमा के लिए प्रस्ताव करने से पहले बीमित व्यक्ति को पता थे और बीमा के प्रस्ताव के दौरान जानबूझकर इसे छिपाया गया था। अगर ये तथ्य हमें ज्ञात होते तो हम प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करते और उपरोक्त पॉलिसी जारी नहीं करते।

अतः दावा समीक्षा समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि कंपनी द्वारा आपके मृत्यु लाभ के दावे को अस्वीकार करने के संबंध में आपको सूचित किया गया पूर्व निर्णय, बीमित व्यक्ति को ज्ञात महत्वपूर्ण तथ्यों का खुलासा न करने के कारण पुष्ट होता है तथा बीमा प्रस्ताव में जानबूझकर एवं स्वेच्छा से उसे छिपाया गया था।

29. इस प्रकार बीमा अधिनियम की धारा 45(4) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए गलत बयानी या भौतिक तथ्यों को छिपाने के कारण दावे को अस्वीकार कर दिया गया।

30. उपर्युक्त दोनों आदेशों में, यह आधार था कि याचिकाकर्ता ने प्रस्ताव पत्र भरते समय सहारा अस्पताल में कोगुलोपैथी के लिए अपने प्रवेश से संबंधित महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाया था, जो कि एक महत्वपूर्ण दमन था। बीमाधारक या एजेंट द्वारा धोखाधड़ी का कोई आरोप नहीं लगाया गया था, इसलिए, अस्वीकृति की शक्ति बीमा अधिनियम की धारा 45(4) में निहित प्रावधानों के अधीन है। स्पष्ट रूप से धारा 45(4) के दूसरे प्रावधान का अनुपालन नहीं हुआ है क्योंकि पॉलिसी में एकत्रित प्रीमियम राशि मृतक को कभी वापस नहीं की गई थी। उक्त दोनों आदेशों में, धारा 45(4) के स्पष्टीकरण की आवश्यकता भी अनुपस्थित है, जिसमें बीमाकर्ता पर यह दायित्व डाला गया है कि वह बीमाकर्ता द्वारा उठाए गए जोखिम को तथ्यों के दमन के साथ सहसंबंधित करे क्योंकि मृतक की मृत्यु का मूल कारण हृदय गति रुकना था और कोगुलोपैथी से संबंधित दमन तथ्य और मृत्यु के कारण के बीच सह-संबंध स्पष्ट रूप से उक्त दोनों आदेशों में अनुपस्थित है। उक्त दोनों आदेशों में मृत्यु का कारण स्पष्टतः गायब है।

31. इस तथ्य के संबंध में कि क्या यस बैंक, जिसने मास्टर पॉलिसी धारक के रूप में पॉलिसी जारी की थी, को एजेंट या याचिकाकर्ता कंपनी माना जाएगा, बीमा अधिनियम की धारा 45(3) के स्पष्टीकरण पर ध्यान देना आवश्यक है जो स्पष्ट करता है कि जो व्यक्ति बीमा अनुबंध की मांग करता है और बातचीत करता है, उसे 'अनुबंध के निर्माण के उद्देश्य के लिए बीमाकर्ता का एजेंट माना जाएगा'।

32. इसके मद्देनजर, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता का यह तर्क कि यस बैंक एक एजेंट नहीं है और केवल एक मास्टर पॉलिसी धारक है, अस्वीकार करने योग्य है। चूंकि पॉलिसी यस बैंक द्वारा मांगी गई थी और बीमा अनुबंध पर भी यस बैंक द्वारा बातचीत की गई थी, जैसा कि स्थायी लोक न्यायालय में यस बैंक द्वारा लिए गए रुख से स्पष्ट है और याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा स्थायी लोक न्यायालय या इस न्यायालय के समक्ष किसी भी दलील में इनकार नहीं किया गया है। रिकॉर्ड से यह भी प्रतीत होता है कि पॉलिसी के लाभार्थी द्वारा प्रस्ताव पत्र प्रदान करने के अनुरोध के बावजूद, इसे प्रदान नहीं किया गया था और **मेसर्स टेक्सको मार्केटिंग प्राइवेट लिमिटेड (पूर्वोक्त)** के प्रकरण में फैसले के पैरा 42 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों के मद्देनजर, बीमा कंपनी का अस्वीकार करने का अधिकार वापस ले लिया जाता है जैसा कि उद्धृत मिसाल के पैरा 42 में कहा गया है। लिमिटेड (पूर्वोक्त) को अनुबंध और बीमा की प्रकृति के साथ-साथ मेरे समक्ष संबंधित पक्षों द्वारा उद्धृत निर्णय पर विचार करने का अवसर मिला और ऊपर उद्धृत पैरा 21 और 42 में निष्कर्ष निकाला गया।

33. बीमा कंपनी का पूरा प्रकरण गलत बयान और महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाने के आधार पर बीमा अनुबंध को अस्वीकार करने पर आधारित था। आईआरडीए विनियमों के खंड 3 और खंड 4 का पालन न करने, धारा 45(4) के दूसरे परंतुक के तहत निर्धारित प्रीमियम वापस न करने, बीमाकर्ता द्वारा धारा 45(4) के तहत निर्धारित दायित्व का निर्वहन न करने और इस तथ्य पर भी विचार न करने के कारण कि बीमाकर्ता ने तर्क दिया था कि कथित गलत बयान या छिपाव बिना किसी जानबूझकर इरादे के किया गया था, याचिकाकर्ता द्वारा उक्त

आधार पर दलील नहीं दी जा सकती, भले ही तर्क के लिए यह मान लिया जाए कि अनुबंध को बीमा अधिनियम की धारा 45(3) के तहत निर्धारित धोखाधड़ी के आधार पर अस्वीकार किया गया था।

34. उपर्युक्त तर्क पर विचार करते हुए, मुझे यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि स्थायी लोक न्यायालय के निर्णय में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और प्रकरण खारिज किये जाने योग्य है और तदनुसार **खारिज** किया जाता है।

35. दिनांक 18.03.2021 के आदेश के अनुसार इस न्यायालय के समक्ष जमा की गई राशि, इस न्यायालय के वरिष्ठ रजिस्ट्रार के समक्ष आवेदन प्रस्तुत करने पर प्रत्यर्थी संख्या 1 पर अर्जित ब्याज के साथ लाभार्थियों को भुगतान की जाएगी।

(2025) 2 ILRA 90

आरंभिक अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 21.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति सौरभ श्रीवास्तव

मामला अंतर्गत अनुच्छेद 227 संख्या 13987 वर्ष 2024

जेपी अस्पताल

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के लिए अधिवक्ता:

रोहन गुप्ता

प्रतिवादियों के लिए अधिवक्ता:

दीपक पांडे, शासकीय अधिवक्ता, लवलेश कुमार शर्मा

आपराधिक कानून - भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 21, 22 और 227 - भारतीय दंड संहिता, 1860 - धाराएं - 304-ए, 420, 468 और 201 - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धाराएं 173 (2), 173 (8) और 438: - रिट याचिका - याचिकाकर्ता ने सत्र न्यायालय के आदेश को चुनौती दी है - जिसके द्वारा परीक्षण न्यायालय ने अन्वेषण अधिकारी को मामले में अस्पताल की भूमिका की पुनःअन्वेषण करने का निर्देश दिया, जबकि डॉक्टर को अग्रिम जमानत दे दी - इस आधार पर कि सत्र न्यायालय ने अपने क्षेत्राधिकार का अतिक्रमण किया, क्योंकि

केवल उच्चतर संवैधानिक न्यायालय (उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय) ही पुनःअन्वेषण का आदेश दे सकते हैं और पुनःअन्वेषण के निर्देश को अनुचित माना जाता है और धारा 438 दं.प्र.सं. के अंतर्गत अग्रिम जमानत कार्यवाही के दायरे से बाहर है - न्यायालय ने पाया कि, -मुख्य मुद्दा इस बात के आस-पास घूमता है कि क्या सत्र न्यायालय अग्रिम जमानत आवेदन पर विचार करते समय पुनःअन्वेषण का आदेश दे सकता है - पुनःअन्वेषण और अग्रतर अन्वेषण के बीच अंतर - पुनःअन्वेषण के लिए पूर्व अन्वेषण को रद्द करने की आवश्यकता होती है और शायद ही कभी इसका आदेश दिया जाता है, जबकि अग्रतर अन्वेषण पहले के निष्कर्षों को अमान्य किए बिना हो सकती है - अग्रिम जमानत कार्यवाही का परिक्षेत्र - अन्य मामले से निपटने के लिए धारा 438 दं.प्र.सं. के अंतर्गत कोई अन्य मुद्दा नहीं था और विद्वान सत्र न्यायालय द्वारा किया गया संप्रेक्षण अनावश्यक था - अभिनिर्धारित हुआ, - पुनः -अन्वेषण की शक्ति अन्य न्यायालय को विशेष रूप से उच्च न्यायालय से नीचे के न्यायालय को नहीं दी गई है, - सत्र न्यायालय के पास पुनःअन्वेषण का निर्देश देने का क्षेत्राधिकार नहीं था, इसके द्वारा इसे रद्द किया जाता है - याचिका स्वीकार की जाती है। (प्रस्तर - 27, 28, 30, 36, 37, 38)

रिट याचिका स्वीकृत। (ई-11)

उद्धृत मामलों की सूची:

1. विनय त्यागी बनाम इरशाद अली उर्फ दीपक एवं अन्य, 2013 (5) एससीसी 762,
2. फादर थॉमस बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं एक अन्य, 2011, सीआरएलजे 2278,
3. हुसैन आरिफ एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश एवं अन्य, पारित - आवेदन अंतर्गत (धारा 482 संख्या 2562 वर्ष 2003, निर्णीत दिनांक 02.11.2011),
4. श्रीकांत उपाध्याय एवं अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य (2024) 3 एससीआर 421,
5. सुशीला अग्रवाल बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली) [2020] 2 एससीआर 1,
6. सविता गर्ग बनाम निदेशक, राष्ट्रीय हृदय संस्थान, (2004) 8 एससीसी 56,
7. राज्य द्वारा सीबीआई बनाम हेमेन्द्र रेड्डी, 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 515.
8. प्रबीर कुमार चटर्जी बनाम पश्चिम बंगाल एवं अन्य, 2008 सीआरएलजे 841.
9. रामा चौधरी बनाम बिहार राज्य, 2009 (6) एससीसी 346,
10. सुप्रिया जैन बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य, 2023 (7) एससीसी 711,
11. अमित कपूर बनाम रमेश चंदर, 2012 (9) एससीसी 460,
12. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अखिल शारदा एवं अन्य, 2022 एससीसी ऑनलाइन 11 का 4 एससी 820,
13. मेसर्स नीहारिका इंफ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य, 2021 (4) एससीआर 1044.
14. नरेश कुमार मंगला बनाम अनीता अग्रवाल एवं अन्य, (2021) 15 एससीसी 777,

15. गुरुबख्श सिंह सिब्बिया बनाम पंजाब राज्य, 1980 (2) एससीसी 565

16. मध्य प्रदेश राज्य बनाम प्रदीप शर्मा, 2014 (1) आरसीआर (क्रिमिनल) 269

(माननीय न्यायमूर्ति सौरभ श्रीवास्तव द्वारा प्रदत्त)

1. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री रोहन गुप्ता, प्रतिवादी संख्या 4 के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री दीपक पांडे तथा प्रतिवादी संख्या 1 से 3 के लिए विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता-प्रथम श्री आनंद सागर दुबे को सुना गया।

प्रार्थना

2. वर्तमान याचिका निम्नलिखित प्रार्थनाओं के साथ प्रस्तुत की गई है:-

"i) दिनांक 17.05.2024 के आदेश को रद्द करते हुए उचित आदेश या निर्देश पारित करना, जिसमें अन्वेषण अधिकारी को याचिकाकर्ता की भूमिका की पुनःअन्वेषण करने के निर्देश शामिल हैं, जबकि अग्रिम जमानत आवेदन संख्या 1696 वर्ष 2024 में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश- II/विशेष न्यायाधीश (एससी/एसटी) अधिनियम, जिला न्यायालय गौतम बुद्ध नगर द्वारा पारित अग्रिम जमानत आदेश के प्रस्तर संख्या 14 में अभियुक्त को जमानत प्रदान करते हुए, जो दिनांक 08.08.2023 की प्राथमिकी से उत्पन्न है, जो धारा 304-ए, 420, 468 और 201 भा.द.सं., थाना-सेक्टर 126, जिला: कमिश्नरेट गौतम बुद्ध नगर के अंतर्गत मामला अपराध संख्या 148 वर्ष 2023 के रूप में पंजीकृत है।

ii) अग्रिम जमानत आवेदन संख्या 1696 वर्ष 2024 में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश II/विशेष न्यायाधीश (एससी/एसटी) अधिनियम, जिला न्यायालय गौतम बुद्ध नगर द्वारा पारित दिनांक 17.05.2024 के अग्रिम जमानत आदेश के प्रस्तर संख्या 14 में निहित निर्देशों के अनुसरण में याचिकाकर्ता-अस्पताल के विरुद्ध आगे कोई भी अन्वेषण या अन्वेषण करने से अन्वेषण अधिकारी को रोकने के लिए एक उचित आदेश या निर्देश पारित करना, जो मामला अपराध संख्या 148 वर्ष 2023, अंतर्गत धारा 304-ए, 420, 468 और 201 भा.द.सं., थाना- सेक्टर 126, जिला: कमिश्नरेट गौतम बुद्ध नगर से उत्पन्न हुआ।"

3. वर्तमान याचिका याचिकाकर्ता के कहने पर विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश II/ विशेष न्यायाधीश (एससी/एसटी) अधिनियम, जिला न्यायालय गौतम बुद्ध नगर द्वारा पारित आदेश दिनांक 17.05.2024 की वैधता को चुनौती देने के लिए प्रस्तुत की गई है, जिसके माध्यम से विद्वान सत्र न्यायालय ने अन्वेषण अधिकारी को मामले में अस्पताल की भूमिका की पुनःअन्वेषण करने का निर्देश दिया था।

याचिकाकर्ता की प्रस्तुतियां

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि दिनांक 17.05.2024 के आदेश के प्रस्तर 14 के अंतर्गत उपलब्ध निर्देश अनावश्यक है, क्योंकि यह डॉ. जानेंद्र अग्रवाल द्वारा याचिकाकर्ता के विरुद्ध दायर अग्रिम जमानत आवेदन संख्या 1696 वर्ष 2024 में जारी किया गया है, जिसे आरोप पत्र में दोषमुक्त किया जा चुका है और वह विद्वान सत्र न्यायालय के समक्ष उपस्थित भी नहीं था और इस प्रकार पुनःअन्वेषण के निर्देश कई अन्य आधारों पर क्षेत्राधिकार के बिना पारित किए गए हैं, विशेष रूप से इस आधार पर कि पुनःअन्वेषण का आदेश केवल उच्च न्यायालयों द्वारा दिया जा सकता है जो संवैधानिक न्यायालय हैं अर्थात् उच्च न्यायालय और माननीय सर्वोच्च न्यायालय, इसके अलावा अग्रेतर अन्वेषण का निर्देश केवल एक मजिस्ट्रेट द्वारा दिया जा सकता है जब संबंधित विद्वान न्यायालय के समक्ष उचित कार्यवाही शुरू की जाती है, जो इस मामले में विरोध याचिका होगी।

5. विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 17.05.2024 के आदेश के क्रियान्वयन को ध्वस्त करने का प्रयास किया, जिसके माध्यम से हालांकि डॉ. जानेंद्र अग्रवाल को जमानत प्रदान की गई है, लेकिन साथ ही पुनःअन्वेषण के लिए निर्देश जारी किए गए हैं और सूचक द्वारा कोई विरोध याचिका प्रस्तुत नहीं की गई है और विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश (एससी/एसटी) अधिनियम, जिला न्यायालय गौतम बुद्ध नगर द्वारा इस संबंध में जारी किए गए निर्देश मजिस्ट्रेट की शक्ति का अतिक्रमण करने के समान हैं, जिसका प्रयोग मजिस्ट्रेट द्वारा तभी किया जा सकता था जब संबंधित न्यायालय के समक्ष स्वयं एक विरोध याचिका दायर की गई हो।

6. यह भी प्रस्तुत किया गया है कि पुनःअन्वेषण का आदेश पूर्णतः क्षेत्राधिकार से बाहर है, क्योंकि विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश (एससी/एसटी) अधिनियम, जिला न्यायालय गौतम बुद्ध नगर के समक्ष मामले के अभियुक्त डॉ. जानेंद्र अग्रवाल को अग्रिम जमानत देने के संबंध में था और याचिकाकर्ता को दोषमुक्त करना विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश (एससी/एसटी) अधिनियम, जिला न्यायालय गौतम बुद्ध नगर के समक्ष मुद्दा नहीं था और न ही इस पर इन कार्यवाहियों में विचार किया जा सकता था, विशेष रूप से याचिकाकर्ता की अनुपस्थिति में।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री रोहन गुप्ता द्वारा उठाए गए तर्कों को पुष्ट करने के लिए, **विनय त्यागी बनाम इरशाद अली उर्फ दीपक एवं अन्य, 2013 (5) एससीसी 762** के मामले पर भरोसा किया गया, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि नई अन्वेषण, पुनःअन्वेषण या नए सिरे से अन्वेषण के मामले में न्यायालय का एक निश्चित आदेश होना चाहिए। न्यायालय के आदेश में स्पष्ट रूप से यह बताया जाना चाहिए कि क्या पिछली अन्वेषण, दर्ज किए जाने वाले कारणों से, उस पर कार्रवाई करने योग्य नहीं है। न तो अन्वेषण अभिकरण और न ही मजिस्ट्रेट के पास 'नई अन्वेषण' का आदेश देने या संचालित करने का कोई अधिकार है। यह मुख्य रूप से इस कारण से है कि यह संहिता की योजना के विरुद्ध होगा। यह आवश्यक है कि उच्च न्यायपालिका द्वारा पारित "नई"/"नए सिरे से" अन्वेषण के आदेश के साथ हमेशा पहले

से की गई अन्वेषण के भाग्य के बारे में एक विशिष्ट निर्देश भी जुड़ा होना चाहिए। ऐसे मामले जहाँ ऐसा निर्देश जारी किया जा सकता है, बहुत कम हैं। यह हमारे आपराधिक न्यायशास्त्र के एक मूलभूत सिद्धांत पर आधारित है, जो यह है कि किसी भी संदिग्ध या अभियुक्त का यह अधिकार है कि वह न्यायसंगत और निष्पक्ष अन्वेषण और परीक्षण का लाभ उठाए। यह सिद्धांत भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 और 22 में निहित संवैधानिक अधिदेश से प्रेरित है। जहाँ अन्वेषण प्रत्यक्षतः अनुचित, दूषित, दुर्भावनापूर्ण और बेईमानी की बू आती है, वहाँ न्यायालय ऐसे अन्वेषण को रद्द कर देगा और नई या नए सिरे से अन्वेषण का निर्देश देगा, और यदि आवश्यक हो, तो किसी अन्य स्वतंत्र अन्वेषण अभिकरण द्वारा भी। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, यह व्यापक शक्ति है और इसलिए इसका प्रयोग संयम से किया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में विरलतम मामलों का सिद्धांत पूरी तरह लागू होगा। जब तक अन्वेषण की अनुचितता ऐसी न हो कि वह न्यायालय की न्यायिक अंतरात्मा को आहत करे, न्यायालय को ऐसे मामले में अन्वेषण को रद्द करने और "नई अन्वेषण" का निर्देश देने तक हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए।

प्रतिवादी की प्रस्तुतियाँ

8. इसके विपरीत, प्रतिवादी संख्या 4 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री दीपक पांडे ने याचिका में की गई प्रार्थना का पुरजोर विरोध किया और याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री रोहन गुप्ता द्वारा उठाए गए तर्क का खंडन किया। श्री दीपक पांडे ने अपने जवाब में कहा कि संभावित अभियुक्त के पास दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत संज्ञेय अपराध के अन्वेषण के निर्देश को चुनौती देने का कोई अधिकार नहीं है, इससे पहले कि उसके विरुद्ध प्रक्रिया जारी की जाए। चूँकि डॉ. ज्ञानेंद्र अग्रवाल की अग्रिम जमानत याचिका पर विचार करते हुए विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने घोर चिकित्सीय लापरवाही और मनगढ़ंत तथ्यों के साथ-साथ चिकित्सीय अभिलेखों में हेराफेरी और साक्ष्यों को नष्ट करने का उल्लेख किया है, जिसके परिणामस्वरूप पुनः अन्वेषण के निर्देश दिए गए हैं।

9. दिनांक 17.05.2024 के आदेश के समर्थन में, प्रतिवादी संख्या 4 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी प्रस्तुत किया गया है कि धारा 438 दं.प्र.सं. के अंतर्गत जमानत देने की शक्ति एक असाधारण शक्ति है जिसका प्रयोग प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर किया जाना है और इस तरह धारा 438 दं.प्र.सं. के अंतर्गत अग्रतर अन्वेषण का निर्देश देने पर कोई रोक नहीं है। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि न्यायालय मनमाने, पक्षपातपूर्ण, शरारती और रहस्यमय कृत्यों के प्रति अपनी आँखें बंद नहीं कर सकता है जो अभिलेख के साथ-साथ आरोप पत्र में चमकते स्वरूप में स्पष्ट हैं, जिसने विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश (एससी / एसटी) अधिनियम, जिला न्यायालय गौतम बुद्ध नगर को एक संप्रेक्षण पारित करने के लिए बाध्य किया। विशेषज्ञ समिति के अभिलेख, रिपोर्ट और निष्कर्षों की सामग्री की जाँच करने के बाद विद्वान न्यायालय का मानना है कि डॉ. ज्ञानेंद्र अग्रवाल और जेपी अस्पताल का नाम प्राथमिकी में था। हालांकि, जेपी अस्पताल का नाम रहस्यमय तरीके से अंतिम आरोप पत्र में हटा दिया गया था, हालांकि अभिलेखों में कथित हेरफेर, जिसका संरक्षक जेपी अस्पताल का प्रशासन है, विद्वान सत्र न्यायालय के समक्ष चिंता का विषय है। विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने आरोप पत्र से जेपी अस्पताल का नाम अभियुक्त के रूप में हटाते समय

अन्वेषण की निष्पक्षता के बारे में गंभीरता से विचार किया। 17.05.2024 के आदेश को पारित करते समय विद्वान अपर जिला और सत्र न्यायाधीश ने आगे संप्रेक्षित किया कि हालांकि अभिलेख को बनाने/हेरफेर करने में अस्पताल और डॉक्टर का कृत्य चिंता का विषय है लेकिन न्यायालय को पता चलता है कि अभिलेखों का संरक्षक जेपी अस्पताल का प्रशासनिक प्रमुख है और पुलिस ने उन्हें सबसे अच्छी तरह से ज्ञात कारण से आरोप पत्र में अस्पताल का नाम सुविधाजनक रूप से हटा दिया है और इसलिए विद्वान न्यायालय ने मामले के अन्वेषण अधिकारी को मामले में अस्पताल की भूमिका की पुनःअन्वेषण करने का निर्देश दिया।

10. प्रतिवादी संख्या 4 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी प्रस्तुत किया गया कि धारा 173(8) दं.प्र.सं. के अंतर्गत अग्रेतर अन्वेषण की अनुमति है और अग्रेतर अन्वेषण और पुनःअन्वेषण कई बार समानार्थी शब्द हैं और इस तरह अभियोजन को रोका नहीं जा सकता है, लघु परीक्षण की मांग नहीं की जा सकती है।

11. प्रतिवादी संख्या 4 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों की पुष्टि के लिए, उन्होंने **फादर थॉमस बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, 2011, सीआरएलजे 2278**, इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया। इस न्यायालय के एक अन्य मामले, अर्थात् **हुसैन आरिफ एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य**, आवेदन अंतर्गत धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता संख्या 2562 वर्ष 2003 में पारित निर्णय, जो दिनांक 02.11.2011 को निर्णीत हुआ था, में भी इसी निर्णय का सन्दर्भ दिया गया है। उन्होंने **श्रीकांत उपाध्याय और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य (2024) 3 एससीआर 421, सुशीला अग्रवाल बनाम राज्य (दिल्ली एनसीटी) [2020] 2 एससीआर 1, सविता गर्ग बनाम निदेशक, राष्ट्रीय हृदय संस्थान, (2004) 8 एससीसी 56, सीबीआई के माध्यम से राज्य बनाम हेमेंद्र रेड्डी, 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 515** के मामले पर भी भरोसा किया। **प्रवीर कुमार चटर्जी बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य, 2008 सीआरआईएलजे 841** के मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए अन्य निर्णय जैसे **रमा चौधरी बनाम बिहार राज्य, 2009 (6) एससीसी 346, सुप्रिया जैन बनाम हरियाणा राज्य और अन्य, 2023 (7) एससीसी 711, अमित कपूर बनाम रमेश चंदर, 2012 (9) एससीसी 460, उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अखिल शारदा और अन्य, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 820, मेसर्स नीहारिका इंफ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, 2021 (4) एससीआर 1044।**

12. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता-प्रथम श्री आनंद सागर दुबे ने भी याचिका में की गई प्रार्थना का विरोध किया और विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-III/विशेष न्यायाधीश, एससी/एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध नगर द्वारा पारित आदेश दिनांक 17.05.2024 के हिस्से का समर्थन करते हुए उन्होंने प्रस्तुत किया कि आदेश दिनांक 17.05.2024 के अनुपालन में, जेपी अस्पताल के विरुद्ध पुलिस द्वारा अग्रेतर अन्वेषण की जा रही है और सभी पिछली केस डायरियों की अन्वेषण पर विचार किया जा रहा है और दिनांक 17.05.2024 के आदेश के अनुपालन में मामला अपराध संख्या 148 वर्ष 2023 में जेपी अस्पताल की भूमिका की अग्रेतर अन्वेषण जारी है और विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश, एससी/एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध नगर द्वारा पारित आदेश दिनांक 17.05.2024 के अनुसार जारी किए गए अग्रेतर अन्वेषण के लिए धारा 438

दं.प्र.सं. के अंतर्गत कोई रोक नहीं है। उक्त निर्देश *नरेश कुमार मंगला बनाम अनीता अग्रवाल एवं अन्य, (2021) 15 एससीसी 777* के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अनुरूप भी है।

13. श्री आनंद सागर दुबे, विद्वान शासकीय अधिवक्ता-प्रथम ने आगे कहा कि इस न्यायालय के साथ-साथ माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के दृष्टिगत, अग्रतर अन्वेषण जो वर्तमान में प्रगति पर है, न्याय के हित में अपने तार्किक निष्कर्ष तक पहुंचने के लिए जारी रखना आवश्यक है और याचिकाकर्ता के विरुद्ध अग्रतर अन्वेषण से किसी को भी किसी भी तरह से कोई पूर्वाग्रह नहीं होगा और इस तरह वर्तमान याचिका पोषणीय नहीं है और न्याय के हित में खारिज करने योग्य है।

संप्रेक्षण और निष्कर्ष

14. पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत प्रतिद्वन्द्वी दलीलों को सुनने के पश्चात् इस न्यायालय के समक्ष विचारार्थ केवल दो मुद्दे ही शेष हैं, जो इस प्रकार हैं:

I. क्या विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश, एससी/एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध नगर को पुनःअन्वेषण के लिए आदेश पारित करने की शक्ति थी?

II. क्या विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश, एससी/एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध नगर अग्रिम जमानत आवेदन पर विचार करते समय अग्रिम जमानत आवेदन को अस्वीकार करने या स्वीकृत करने के अलावा कोई अन्य आदेश पारित कर सकते हैं?

15. निर्णय सुरक्षित रखते समय इस न्यायालय द्वारा किए गए अनुरोध पर पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत संपूर्ण तर्क और लिखित प्रस्तुतियां मोटे तौर पर विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश की योग्यता पर आधारित हैं, जिसमें उन्होंने संबंधित अन्वेषण अधिकारी को याचिकाकर्ता की भूमिका की पुनःअन्वेषण करने का निर्देश जारी करने के रूप में अपनी शक्ति का प्रयोग किया है, जिसे दं.प्र.सं. की धारा 173(2) के अंतर्गत रिपोर्ट पेश करने के समय पहले ही दोषमुक्त कर दिया गया है। प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, उनमें से अधिकांश ने स्पष्ट रूप से संबंधित विद्वान न्यायालय के मुद्दे को प्रदर्शित किया है कि मामले की अग्रतर अन्वेषण दं.प्र.सं. की धारा 173(8) के अनुसार की जाए, लेकिन साथ ही, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा जिस निर्णय पर भरोसा किया गया है, अर्थात् *विनय त्यागी (उपरोक्त)* के मामले में, अग्रतर अन्वेषण और पुनःअन्वेषण के बीच अंतर को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है। *विनय त्यागी (उपरोक्त)* के निर्णय की धारा 22, 23, 28, 29, 30, 40, 41 और 43 निम्नानुसार हैं:-

22. 'अग्रतर अन्वेषण' वह है जहाँ अन्वेषण अधिकारी धारा 173(8) के अनुसार न्यायालय के समक्ष अंतिम रिपोर्ट दाखिल होने के बाद आगे मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्राप्त करता है। यह शक्ति कार्यपालिका में निहित है। यह किसी पूर्ववर्ती अन्वेषण का ही अनुक्रम है और इसलिए इसे 'अग्रतर अन्वेषण' के रूप में समझा और

वर्णित किया जाता है। ऐसी अन्वेषण का परिक्षेत्र आगे के मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों की खोज तक सीमित है। इसका प्रयोजन सत्य तथ्यों को न्यायालय के समक्ष लाना है, भले ही वे प्राथमिक अन्वेषण के बाद के चरण में खोजे गए हों। इसे आमतौर पर 'पूरक रिपोर्ट' के रूप में वर्णित किया जाता है। 'पूरक रिपोर्ट' सही अभिव्यक्ति होगी क्योंकि अनुवर्ती अन्वेषण का तात्पर्य और उद्देश्य अधिकार प्राप्त पुलिस अधिकारी द्वारा की गई प्राथमिक अन्वेषण का पूरक होना है। अग्रेतर अन्वेषण की एक और महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसका प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अन्वेषण अभिकरण द्वारा की गई प्रारंभिक अन्वेषण को समाप्त करने का नहीं होता है। यह एक प्रकार से पूर्ववर्ती अन्वेषण की निरंतरता है। इसका आधार नए साक्ष्यों की खोज और उसी अपराध और उससे संबंधित घटनाओं की शृंखला की निरंतरता है। दूसरे शब्दों में, यह इसे 'नई अन्वेषण', 'नए' या 'नए सिरे से' अन्वेषण के बिल्कुल विपरीत समझा जाना चाहिए।

23. हालाँकि, 'नई अन्वेषण', 'पुनः अन्वेषण' या 'नए सिरे से अन्वेषण' के मामले में न्यायालय का एक निश्चित आदेश होना आवश्यक है। न्यायालय के आदेश में स्पष्ट रूप से यह बताया जाना चाहिए कि क्या पिछली अन्वेषण, दर्ज किए जाने वाले कारणों से, उस पर कार्रवाई करने योग्य नहीं है। न तो अन्वेषण अभिकरण और न ही मजिस्ट्रेट को 'नई अन्वेषण' का आदेश देने या कराने का कोई अधिकार है। ऐसा मुख्यतः इसलिए है क्योंकि यह संहिता की योजना के विरुद्ध होगा। यह आवश्यक है कि उच्च न्यायपालिका द्वारा पारित 'नई'/'नए सिरे से' अन्वेषण के आदेश के साथ पहले से की गई अन्वेषण के भविष्य के बारे में एक विशिष्ट निर्देश भी दिया जाना चाहिए। ऐसे मामले बहुत कम हैं जहाँ ऐसा निर्देश जारी किया जा सकता है। यह हमारे आपराधिक न्यायशास्त्र के एक मूलभूत सिद्धांत पर आधारित है, जो यह है कि किसी संदिग्ध या अभियुक्त का यह अधिकार है कि वह न्यायसंगत और निष्पक्ष अन्वेषण और परीक्षण का पात्र हो। यह सिद्धांत भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 और 22 में निहित संवैधानिक अधिदेश से उद्भूत होता है। जहाँ अन्वेषण पूर्व दृष्ट्या अनुचित, दूषित, दुर्भावनापूर्ण और बेईमानी की बू आती है, वहाँ न्यायालय ऐसे अन्वेषण को रद्द कर देगा और नए या नए सिरे से अन्वेषण का निर्देश देगा, और यदि आवश्यक हो, तो किसी अन्य स्वतंत्र अन्वेषण अभिकरण से भी। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, यह व्यापक शक्ति है और इसलिए इसका प्रयोग संयम से किया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में दुर्लभतम मामलों का सिद्धांत पूरी तरह लागू होगा। जब तक अन्वेषण की अनुचितता ऐसी न हो कि वह न्यायालय की न्यायिक अंतरात्मा को आहत करे, न्यायालय को ऐसे मामलों में अन्वेषण को रद्द करने और 'नई अन्वेषण' का निर्देश देने तक हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए।

28. इस न्यायालय के विचारणीय अगला प्रश्न यह है कि क्या सशक्त मजिस्ट्रेट के पास 'अग्रेतर अन्वेषण' या 'नई अन्वेषण' का निर्देश देने का अधिकार है। जहाँ तक उत्तरार्द्ध का संबंध है, इस न्यायालय द्वारा घोषित कानून यह है कि विद्वान मजिस्ट्रेट के पास 'नई' या 'नए सिरे से' अन्वेषण का निर्देश देने का कोई अधिकार नहीं है। हालाँकि, एक बार रिपोर्ट दर्ज हो जाने के बाद, मजिस्ट्रेट के पास रिपोर्ट को स्वीकार करने या उसे शुरू में ही अस्वीकार करने का अधिकार होता है। रिपोर्ट स्वीकार करने के बाद भी, उसके पास अभियुक्त को दोषमुक्त करने या आरोप तय करने और उस पर परीक्षण चलाने का अधिकार होता है। लेकिन संहिता में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो मजिस्ट्रेट को अन्वेषण लंबित रहने तक या रिपोर्ट दर्ज होने पर, रिपोर्ट और कानून में उसके

प्रभावों को खत्म करने के लिए अभियुक्त की स्थिति में व्यवधान डालने का अधिकार देता हो। इस संबंध में के. चंद्रशेखर बनाम केरल राज्य [(1998) 5 एससीसी 223]; रामचंद्र बनाम आर. उदयकुमार [(2008) 5 एससीसी 413], निर्मल सिंह कहलों बनाम पंजाब राज्य और अन्य, [(2009) 1 एससीसी 441]; मीठाभाई पाशाभाई पटेल एवं अन्य बनाम गुजरात राज्य [(2009) 6 एससीसी 332]; और बाबूभाई बनाम गुजरात राज्य [(2010) 12 एससीसी 254] का संदर्भ लिया जा सकता है।

29. अब हम पहले प्रश्न पर आते हैं, अर्थात् क्या मजिस्ट्रेट को धारा 173(8) के अंतर्गत अग्रतर अन्वेषण का निर्देश देने का अधिकार है।

30. अग्रतर अन्वेषण के लिए आदेश पारित करने की न्यायालय की शक्ति पिछले कुछ समय से न्यायिक चिंता का विषय रही है। इस संबंध में न्यायालयों ने कुछ हद तक भिन्न, लेकिन बिल्कुल विपरीत विचार नहीं रखे हैं। ऐसे विचारों में सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है और वरीयता के नियम का उल्लंघन किए बिना सामंजस्यपूर्ण ढंग से लागू किया जा सकता है। पंजाब राज्य बनाम केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो [(2011) 9 एससीसी 182] के मामले में, न्यायालय ने 'पुनःअन्वेषण' और 'अग्रतर अन्वेषण' के बीच के अंतर पर ध्यान दिया। न्यायालय ने इस स्थापित सिद्धांत पर भी ध्यान दिया कि उच्च न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालयों के पास संहिता की धारा 482 के अंतर्गत उच्च न्यायालय जैसी वैधानिक अंतर्निहित शक्तियाँ नहीं हैं और इसलिए, उन्हें संहिता के दायरे में रहकर ही अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करना चाहिए।

40. संहिता के प्रावधानों और पूर्वोक्त विभिन्न निर्णयों का विश्लेषण करने के बाद, हम संहिता की धारा 173(2) को धारा 173(8) और धारा 156(3) के साथ पठित धारा 173(2) के संदर्भ में मजिस्ट्रेट की शक्तियों के संबंध में निम्नलिखित निष्कर्ष निकालेंगे:

40.1 मजिस्ट्रेट को पुलिस रिपोर्ट के आधार पर शुरू किए गए मामले में 'पुनः अन्वेषण' या 'नए सिरे से अन्वेषण' (डी नोवो) का निर्देश देने का कोई अधिकार नहीं है।

40.2 संहिता की धारा 173(6) के अनुसार पुलिस रिपोर्ट दर्ज होने के बाद मजिस्ट्रेट को 'अग्रतर अन्वेषण' का निर्देश देने का अधिकार है।

40.3 उप-प्रस्तर 40.2 में व्यक्त किया गया दृष्टिकोण भगवंत सिंह मामले (उपरोक्त) में तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा बताए गए विधि के सिद्धांत के अनुरूप है और इस प्रकार पूर्वता के सिद्धांत के अनुरूप है।

40.4 न तो संहिता की योजना और न ही उसका कोई विशिष्ट प्रावधान मजिस्ट्रेट द्वारा ऐसे क्षेत्राधिकार के प्रयोग पर रोक लगाता है। धारा 173(2) की भाषा को इतना प्रतिबंधात्मक नहीं समझा जा सकता कि मजिस्ट्रेट

को ऐसी शक्तियों से वंचित कर दिया जाए, विशेषकर धारा 156(3) के प्रावधानों और स्वयं धारा 173(8) की भाषा के संदर्भ में। वास्तव में, ऐसी शक्ति को धारा 173(8) की भाषा में ही पढ़ा जाना चाहिए।

40.5 संहिता एक प्रक्रियात्मक दस्तावेज़ है, इसलिए इसे ऐसी व्याख्या प्राप्त करनी होगी जो न्याय और विधायी उद्देश्य को आगे बढ़ाए। यह तर्कपूर्ण नहीं है कि विधायिका ने रिपोर्ट दर्ज करने के बाद भी पुलिस को अग्रतर अन्वेषण का अधिकार प्रदान किया, बल्कि न्यायालय की शक्ति को इस हद तक सीमित करने का आशय किया कि जहाँ मामले के तथ्य और न्याय की माँग हो, वहाँ भी न्यायालय अन्वेषण अभिकरण को अग्रतर अन्वेषण करने का निर्देश नहीं दे सकता, जो वह स्वयं कर सकती है।

40.6. यह एक स्वामित्व प्रक्रिया रही है कि पुलिस को 'अग्रतर अन्वेषण' जारी रखने और पूरक आरोपपत्र दाखिल करने के लिए न्यायालय की अनुमति लेनी पड़ती है। इस दृष्टिकोण को इस न्यायालय ने कई निर्णयों में अनुमोदित किया है। यह इस प्रकार वर्तमान मामले में हमारे द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण का समर्थन करता है।

41. संहिता की धारा 173 के अंतर्गत मजिस्ट्रेट की शक्तियों के दायरे पर चर्चा करने के बाद, अब हमें संहिता के प्रावधानों और/या इस न्यायालय के निर्णयों के अनुसार किस प्रकार की रिपोर्ट प्रस्तुत की जानी है, इसकी अन्वेषण करनी होगी। मजिस्ट्रेट के क्षेत्राधिकार में आने वाला पहला और सबसे महत्वपूर्ण दस्तावेज़ प्राथमिकी है। फिर, अन्वेषण पूरी होने पर, पुलिस को संहिता की धारा 173(2) के अनुसार रिपोर्ट दर्ज करनी होती है। इस रिपोर्ट को प्राथमिक रिपोर्ट कहना उचित होगा, क्योंकि यह न्यायालय के समक्ष अभियोजन पक्ष के मामले का मूल आधार है। यह मामले का अभिलेख और उससे संलग्न दस्तावेज़ हैं, जिन पर न्यायालय द्वारा विचार किया जाता है और फिर मजिस्ट्रेट के न्यायालय से पूर्वोक्त तीन विकल्पों में से किसी एक का प्रयोग करने की अपेक्षा की जाती है। न्यायालय के समक्ष उल्लिखित विकल्पों में से, उसके द्वारा प्रयुक्त क्षेत्राधिकार कानून के स्थापित सिद्धांतों के पूर्णतः अनुरूप होना चाहिए। मजिस्ट्रेट की 'अग्रतर अन्वेषण' का निर्देश देने की शक्ति एक महत्वपूर्ण शक्ति है जिसका प्रयोग असाधारण मामलों में और न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संयम से किया जाना चाहिए। निष्पक्ष, उचित और निर्विवाद अन्वेषण प्रदान करना अन्वेषण अभिकरण का दायित्व है और न्यायालय को अपनी पर्यवेक्षी क्षमता में इसे सुनिश्चित करना आवश्यक है। न्यायालय के आदेशों के अंतर्गत, मजिस्ट्रेट के आदेशों सहित या पुलिस द्वारा अपनी इच्छा से और वैध कारणों से की गई अग्रतर अन्वेषण, एक पूरक रिपोर्ट दाखिल करने का कारण बनेगी। ऐसी पूरक रिपोर्ट को प्राथमिक रिपोर्ट के भाग के रूप में माना जाएगा। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि धारा 173(3) से 173(6) के प्रावधान संहिता की धारा 173(8) के अनुसार ऐसी रिपोर्टों पर लागू होंगे।

43. इस स्तर पर, हम आपराधिक न्यायशास्त्र के एक अन्य सुस्थापित सिद्धांत को भी बता सकते हैं कि उच्च न्यायालयों को संहिता की धारा 482 या यहां तक कि अनुच्छेद 226 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार प्राप्त है। भारत का संविधान 'अग्रतर अन्वेषण', 'नए' या 'नए सिरे से' और यहाँ तक कि पुनः अन्वेषण का भी निर्देश देता है। 'नए',

‘नए सिरे से’ और ‘पुनःअन्वेषण’ समानार्थी शब्द हैं और कानून में इनका परिणाम एक ही होगा। उच्च न्यायालयों को अन्वेषण को एक अभिकरण से दूसरे अभिकरण को स्थानांतरित करने का भी अधिकार है, बशर्ते न्याय के उद्देश्य ऐसी कार्रवाई की माँग करें। वास्तव में, यह भी एक स्थापित सिद्धांत है कि उच्च न्यायालयों को इस शक्ति का प्रयोग बहुत ही संयम और अत्यंत सावधानी के साथ करना चाहिए।”

16. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के सभी निर्णय और विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय, जिन पर प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं ने भरोसा किया है, संबंधित विद्वान न्यायालय को विशेष रूप से धारा 438 दं.प्र.सं. और 173(8) दं.प्र.सं. के अंतर्गत अग्रेतर अन्वेषण के लिए निर्देश जारी करने के लिए प्रदत्त शक्तियों पर आधारित हैं। **प्रवीर कुमार चटर्जी (उपरोक्त)** के मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय, जिस पर प्रतिवादी संख्या 4 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने भरोसा किया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि ‘अग्रेतर अन्वेषण’ या ‘पुनःअन्वेषण’ का निर्देश देने वाला मजिस्ट्रेट का आदेश स्पष्ट रूप से बेतुका या स्पष्ट रूप से अवैध है या नहीं और विद्वान मजिस्ट्रेट ने कारण बताए हैं, मुझे नहीं लगता कि जिस आदेश की शिकायत की गई है, उसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता है। चूंकि दोनों शब्द समानार्थी हैं, लेकिन याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय में, **विनय त्यागी (उपरोक्त)** के मामले में दिनांक 13.12.2012 को तय किए गए ‘अग्रेतर अन्वेषण’ और ‘पुनःअन्वेषण’ के बीच स्पष्टता और अंतर स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया गया है और इस प्रकार माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून, उस समय उपलब्ध, संदर्भित, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करने के बाद पारित किए गए किसी भी अन्य न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को पीठासीन करेगा।

17. राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता-प्रथम श्री आनंद सागर दुबे ने **नरेश कुमार मंगला बनाम अनीता अग्रवाल एवं अन्य (उपरोक्त)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय दिनांक 17.12.2020 पर भरोसा किया, जिसमें **गुरुबख्श सिंह सिब्बिया बनाम पंजाब राज्य, 1980 (2) एससीसी 565** में संवैधानिक पीठ के निर्णय पर भरोसा किया गया है और इसी निर्णय पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय के पांच न्यायाधीशों वाली वृहत्तर पीठ ने **मध्य प्रदेश राज्य बनाम प्रदीप शर्मा, 2014 (1) आरसीआर (क्रिमिनल) 269** के मामले में भरोसा किया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अग्रिम जमानत का आदेश किसी भी तरह से पुलिस या अन्वेषण अभिकरण के अधिकारों या कर्तव्यों को सीमित या प्रतिबंधित नहीं करता है, जो उस व्यक्ति के विरुद्ध आरोपों के अन्वेषण करने के लिए है जो गिरफ्तारी पूर्व जमानत चाहता है और उसे दी जाती है।

18. पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत निर्णयों और उनके द्वारा प्रस्तुत तर्कों की गहन जाँच के बाद, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों के अनुसरण में कानून बिल्कुल स्पष्ट है और ‘पुनःअन्वेषण’ तथा ‘अग्रेतर अन्वेषण’ के बीच के अंतर को व्यापक रूप से परिभाषित और स्पष्ट किया गया है। ‘पुनःअन्वेषण’ और ‘अग्रेतर अन्वेषण’ जैसे विशिष्ट शब्दों के संबंध में शायद ही कोई अस्पष्टता है। यदि किसी भी तरह से, अपर सत्र न्यायाधीश- II / विशेष न्यायाधीश, एससी / एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध

नगर का विद्वान न्यायालय याचिकाकर्ता के विरुद्ध आगे बढ़ने के लिए प्रभावित था, लेकिन 17.05.2024 के आदेश के प्रस्तर 14 के अंतर्गत निहित निर्देश अग्रेतर अन्वेषण के स्थान पर पुनःअन्वेषण के लिए संबंधित अन्वेषण अधिकारी के पक्ष में निर्देश दे रहे हैं, इसके अलावा, विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश- II / विशेष न्यायाधीश, एससी / एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध नगर के पास कोई क्षेत्राधिकार नहीं था और उन्हें अग्रेतर अन्वेषण या पुनःअन्वेषण के लिए संबंधित अन्वेषण अधिकारी को निर्देश देने का अधिकार नहीं था। पुनःअन्वेषण की गंभीरता अग्रेतर अन्वेषण से बहुत अधिक है और इस तरह माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों की श्रृंखला में, पुनःअन्वेषण की शक्ति अन्य कानून के न्यायालय को विशेष रूप से उच्च न्यायालय से नीचे नहीं दी गई है। यदि किसी मामले में उच्च न्यायालय पुनःअन्वेषण का निर्देश देता है, तो मामले की पुनःअन्वेषण के निर्देश के समर्थन में उचित तर्क दर्ज करते हुए पूर्व में की गई संपूर्ण अन्वेषण को रद्द करना होगा, जबकि अग्रेतर अन्वेषण के निर्देश केवल प्रक्रिया के अधिदेश के अंतर्गत आते हैं जो कि धारा 173(8) दं.प्र.सं. के अंतर्गत उपलब्ध है, लेकिन सह-अभियुक्तों में से एक के पक्ष में अग्रिम जमानत देते समय, अपर सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश, एससी/एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध नगर के विद्वान न्यायालय को संबंधित अन्वेषण अधिकारी को अग्रेतर अन्वेषण के लिए भी निर्देश देने का अधिकार नहीं था।

19. उपरोक्त तर्क के आलोक में, मुद्दा संख्या I के अंतर्गत यह निर्णय दिया जाता है कि अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश, एससी/एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध नगर के विद्वान न्यायालय के पास याचिकाकर्ता के संदर्भ में मामले की पुनःअन्वेषण करने का आदेश पारित करने के लिए कानून के अनुसार कोई शक्ति नहीं थी।

20. मुद्दा संख्या II के संबंध में, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने लिखित दलीलें पेश करते हुए विशेष रूप से यह आधार लिया कि गौतम बुद्ध नगर के विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश, एससी/एसटी अधिनियम, के समक्ष डॉ. ज्ञानेंद्र अग्रवाल के आदेश पर प्रस्तुत अग्रिम जमानत याचिका को अस्वीकार या स्वीकृत करने के अलावा कोई अन्य आदेश पारित करने का कोई अवसर उपलब्ध नहीं था। विद्वान सत्र न्यायाधीश के समक्ष मुद्दा डॉ. ज्ञानेंद्र अग्रवाल द्वारा दायर अग्रिम जमानत पर विचार करने का था और अन्य मामलों से निपटने के लिए धारा 438 दं.प्र.सं. के अंतर्गत कोई अन्य मुद्दा नहीं था और विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा किए गए संप्रेक्षण अनावश्यक थे और इसके अलावा, संप्रेक्षणों के आधार पर, संबंधित अन्वेषण अधिकारी को पुनःअन्वेषण के लिए जारी निर्देश रद्द किए जाने योग्य है।

21. उपर्युक्त तथ्यों और परिस्थितियों तथा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के साथ-साथ विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा दिए गए ऊपर संदर्भित निर्णयों के दृष्टिगत की गई चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, आदेश दिनांक 17.05.2024 के प्रस्तर संख्या 14 के अंतर्गत दिए गए निर्देश के अंश को, जिसमें विशेष रूप से संबंधित अन्वेषण अधिकारी को पुनःअन्वेषण के लिए निर्देश जारी किया गया था, अपास्त किया जाता है।

22. तदनुसार, वर्तमान याचिका **स्वीकृत** की जाती है।

(2025) 2 ILRA 99

आरंभिक अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 21.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति सौरभ श्रीवास्तव

मामला अंतर्गत अनुच्छेद 227 संख्या 15602 वर्ष 2024

राजेश कुमार शर्मा

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के लिए अधिवक्ता:

दीपक पांडे, लवलेश कुमार शर्मा

प्रतिवादियों के लिए अधिवक्ता:

शासकीय अधिवक्ता

आपराधिक कानून- भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 227 - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-धारा 439(2) --- जमानत रद्द करने का आवेदन केवल धारा 439(2) दं.प्र.सं. के अंतर्गत ही दिया जा सकता है --- प्रक्रिया में भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत याचिका दायर करके जमानत रद्द करने की मांग करना अनिवार्य नहीं है और वर्तमान याचिका में आदेश को केवल उस सीमा तक रद्द करने की मांग करने के लिए की गई प्रार्थना जहां तक यह प्रतिवादी के विरुद्ध गैर-जमानती अपराधों को जमानती मानता है और प्रतिवादी को अग्रिम जमानत प्रदान करता है, पर विचार नहीं किया जा सकता क्योंकि यह सीधे तौर पर प्रतिवादी के पक्ष में दी गई जमानत को रद्द करने की मांग कर रहा है।

याचिका खारिज। (ई-15)

उद्धृत मामलों की सूची:

1. श्रीकांत उपाध्याय एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2024 (3) एससीआर 421
2. अब्दुल बासित बनाम मोहम्मद अब्दुल कादिर चौधरी, 2014 (10) एससीसी 754

(माननीय न्यायमूर्ति सौरभ श्रीवास्तव द्वारा प्रदत्त)

1. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री दीपक पांडे, प्रतिवादी संख्या 1 के लिए विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता-1 श्री आनंद सागर दुबे और प्रतिवादी संख्या 2 के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री रोहन गुप्ता को सुना गया।
2. विस्तार से सुनवाई के बाद, निर्णय सुरक्षित रखते हुए, पक्षों की ओर से उपस्थित सभी विद्वान अधिवक्ताओं से अनुरोध किया गया था कि वे एक सप्ताह के भीतर अपने लिखित तर्क तथा भरोसा किए गए निर्णयों को प्रस्तुत करें, तथा वे प्राप्त हो गए हैं तथा अभिलेखों में उपलब्ध हैं।

याचिकाकर्ता की प्रस्तुतियाँ

3. वर्तमान रिट याचिका विद्वान न्यायालय, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II/विशेष न्यायाधीश, एससी/एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध नगर द्वारा पारित किए गए आदेश दिनांकित 17.05.2024 को चुनौती देने के लिए प्रस्तुत की गई है, जिसके माध्यम से धारा 438 दं.प्र.सं. के अंतर्गत अग्रिम जमानत आवेदन की अनुमति दी गई है और कुछ शर्तों पर जमानत बढ़ा दी गई है, जो आदेश में उल्लिखित हैं, वर्तमान याचिका में आक्षेपित है और संख्या में पांच हैं।
4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 17.05.2024 के आदेश पर आपत्ति जताते हुए प्रस्तुत किया कि प्रतिवादी संख्या 2 के विरुद्ध जमानती वारंट जारी किए जाने के बावजूद, प्रतिवादी संख्या 2 के कहने पर अग्रिम जमानत आवेदन को अनुमति दी गई है और यह **श्रीकांत उपाध्याय और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य, 2024 (3) एससीआर 421** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का उल्लंघन है।
5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे दलील दी कि यद्यपि 17.05.2024 का आदेश चुनौती के अधीन है, लेकिन उसी आदेश में निहित एक निर्देश, जिसके माध्यम से जाँच अधिकारी को प्रतिवादी संख्या 2 की भूमिका की पुनः जाँच करने का निर्देश दिया गया है, चुनौती के अधीन नहीं है। 17.05.2024 के आदेश के एक भाग को चुनौती न देने के तर्कों को पुष्ट करते हुए, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने न्यायालय का ध्यान उस प्रार्थना खंड की ओर आकर्षित किया, जो नीचे पुनः प्रस्तुत है:

"(i) दिनांक 17.05.2024 के आदेश को केवल उस सीमा तक रद्द करना जहां तक वह प्रतिवादी संख्या 2 के विरुद्ध गैर जमानती अपराधों को जमानती मानता है और श्रीकांत उपाध्याय एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य (एसएलपी (क्रि.) संख्या 7940 वर्ष 2023) [2024] 3 एससीआर 421 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अवमाननापूर्ण उल्लंघन में प्रतिवादी संख्या 2 को अग्रिम जमानत प्रदान करता है।"

6. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान याचिका को प्रस्तुत करते समय विभिन्न आधार लिए गए हैं, जो कि **श्रीकांत उपाध्याय (उपरोक्त)** के निर्णय से पूरी तरह से आच्छादित है और इस प्रकार दिनांक 17.05.2024 के आदेश के एक भाग को छोड़कर शेष भाग को रद्द किया जाना चाहिए।

प्रतिवादी की प्रस्तुतियाँ

7. इसके विपरीत, प्रतिवादी संख्या 2 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री रोहन गुप्ता ने अपने लिखित निवेदन के माध्यम से प्रस्तुत किया कि दिनांक 12.04.2024 को जमानती वारंट जारी करने के बाद प्रतिवादी संख्या 2 अग्रिम जमानत आवेदन के माध्यम से संबंधित विद्वान न्यायालय के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुआ और दिनांक 17.05.2024 के आदेश के अंतर्गत इसे सही रूप से अनुमति दी गई और किसी भी आधार में उन नियमों और शर्तों का उल्लंघन शामिल नहीं था जो प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में जमानत बढ़ाते समय विद्वान संबंधित न्यायालय द्वारा तय किए गए थे और अग्रिम जमानत केवल तभी अस्वीकार की जा सकती है, यदि अभियुक्त सम्मन, गैर-जमानती वारंट के साथ-साथ धारा 82 दं.प्र.सं. के अंतर्गत उद्घोषणा के बावजूद फरार रहा हो और प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में दी गई अग्रिम जमानत के विस्तार के आदेश को केवल तभी रद्द किया जा सकता है जब अग्रिम जमानत देने वाले आदेश में दर्ज शर्तों का उल्लंघन किया गया हो या यह इंगित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य हों कि प्रतिवादी संख्या 2 ने दी गई स्वतंत्रता का दुरुपयोग किया है, न्याय की प्रक्रिया में बाधा डाली है या आगे अपराध किए हैं। हालाँकि, वर्तमान मामले में ऐसी कोई घटना नहीं घटी है और ऐसा कोई साक्ष्य भी अभिलेख में नहीं लाया गया है जिससे यह पता चले कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समय-समय पर निर्धारित की गई ऐसी किसी शर्त का उल्लंघन हुआ है।

8. प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय अर्थात् **अब्दुल बासित बनाम मोहम्मद अब्दुल कादिर चौधरी, 2014 (10) एससीसी 754** पर भरोसा किया गया है, जिस पर इस न्यायालय ने आपराधिक विविध जमानत निरस्तीकरण आवेदन संख्या 646 वर्ष 2022 (ज़ेबा परवीन बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में अग्रिम जमानत याचिका रद्द करने के निर्णय को खारिज करते हुए भरोसा किया था, जिसमें अभिनिर्धारित किया गया था कि अध्याय 33 के अंतर्गत धारा 439(1) उच्च न्यायालय के साथ-साथ सत्र न्यायालय को भी किसी भी अभियुक्त को जमानत पर रिहा करने का निर्देश देने को सशक्त करती है। दं.प्र.सं. की धारा 439(2) उच्च न्यायालय को संहिता के अध्याय 39 के अंतर्गत जमानत पर रिहा किए गए किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार करने और अभिरक्षा में सौंपने का निर्देश देने का अधिकार देती है, यानी किसी अभियुक्त को दी गई जमानत को रद्द करने का अधिकार। सामान्य तौर पर, जमानत रद्द करने के आधार मोटे तौर पर हैं, (i) अभियुक्त समान आपराधिक गतिविधि में लिप्त होकर अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करता है, (ii) अन्वेषण के दौरान हस्तक्षेप करता है, (iii) साक्ष्यों या साक्षियों के साथ छेड़छाड़ करने का प्रयास करता है, (iv) साक्षियों को धमकाता है या इसी तरह की गतिविधियों में लिप्त होता है जो सुचारू अन्वेषण में बाधा डालता है, (v) उसके किसी दूसरे देश में भाग जाने की संभावना है, (vi) भूमिगत होकर या अन्वेषण अभिकरण के लिए अनुपलब्ध होकर खुद को दुर्लभ बनाने का प्रयास करता है, (vii) खुद को अपने

जमानतदार की पहुँच से बाहर करने का प्रयास करता है, आदि। ये आधार दृष्टान्तरूप और गैर-संपूर्ण हैं। जहां अभियोजन पक्ष की चूक के लिए धारा 167 (2) के प्रावधान के अंतर्गत जमानत दी गई है, आरोप पत्र दाखिल करने से दोष ठीक होने के बाद साठ दिनों में अन्वेषण पूरी नहीं कर रहा है, अभियोजन पक्ष इस आधार पर जमानत रद्द करने की मांग कर सकता है हालाँकि, अंतिम उल्लेखित मामले में, वास्तव में बहुत सशक्त आधार की अपेक्षा की जा सकती है। (रघुबीर सिंह बनाम बिहार राज्य, [(1986) 4 एससीसी 481]।

9. प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि निर्विवाद रूप से याचिकाकर्ता जांच में भाग ले रहा था और रिट याचिका संख्या 13160 वर्ष 2023 में इस न्यायालय द्वारा गिरफ्तारी पर रोक लगाने के आदेश के बावजूद अपना पूर्ण सहयोग दे रहा था। प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी प्रस्तुत किया गया है कि प्रतिवादी संख्या 2 ने 12.03.2024 को धारा 482 दं.प्र.सं. संख्या 8717 वर्ष 2024 के अंतर्गत इस न्यायालय की पहुँच की, आरोप पत्र को चुनौती दी और बाद में मामलों के लंबित होने के कारण, अंतरिम आवेदन पर अंततः सुनवाई और निर्णय हो सका और 20.08.2024 के आदेश के अंतर्गत अवर न्यायालय की कार्यवाही पर रोक लगा दी गई। इसलिए धारा 482 के अंतर्गत उपरोक्त आवेदन के लंबित रहने के दौरान जमानती वारंट भी जारी किया गया था और यह तथ्य आदेश पारित करने के समय अवर न्यायालय के समक्ष विधिवत था और इस प्रकार उपरोक्त के प्रकाश में प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान याचिका पूरी तरह से तुच्छ है और कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग है और इसलिए इसे लागत के साथ खारिज किया जाना चाहिए।

10. राज्य की ओर से उपस्थित हुए विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता-1 श्री आनंद सागर दुबे ने लिखित रूप से अपना पक्ष प्रस्तुत किया, लेकिन उनके द्वारा प्रस्तुत सभी कथन और तथ्य, तथा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, वही हैं जो उन्होंने मामला अनुच्छेद 227 संख्या 13987 वर्ष 2024 के अंतर्गत याचिका में प्रस्तुत किए थे, क्योंकि याचिका संख्या 13987 वर्ष 2024 (संबंधित) और 15602 वर्ष 2024 (वर्तमान) को एक साथ मिलाकर एक साथ सुना गया था, अतः दोनों याचिकाओं में विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता का रुख एक जैसा था।

संप्रेक्षण और निष्कर्ष

11. पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा दिए गए प्रतिद्वन्द्वी तर्कों को सुनने के बाद, यह स्पष्ट है कि एक ओर याचिकाकर्ता प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में जमानत की अवधि बढ़ाने को चुनौती दे रहा है और संबंधित याचिका में याचिकाकर्ता उस आदेश में निहित निर्देश का समर्थन कर रहा है, जिसने वर्तमान याचिका को चुनौती दी थी, जिसका अर्थ है कि याचिकाकर्ता इस याचिका के माध्यम से जमानत रद्द करने की मांग कर रहा है, लेकिन साथ ही वह विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश-1/विशेष न्यायाधीश, एससी/एसटी अधिनियम, गौतम बुद्ध नगर द्वारा पारित निर्देश को बहाल करने का आशय रखता है, जो कि आक्षेपित आदेश में उपलब्ध है, जिसके माध्यम से प्रतिवादी संख्या 3 की भूमिका का पता लगाने के लिए मामले की फिर से अन्वेषण करने का निर्देश जारी किया गया था।

12. प्रक्रिया के अनुसार, ज़मानत रद्द करने का आवेदन केवल धारा 439(2) दं.प्र.सं. के अंतर्गत ही प्रस्तुत की जा सकती है, लेकिन इस मामले में ज़मानत रद्द करने की मांग उस आदेश को चुनौती देकर की गई है जिसके ज़रिए प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में ज़मानत बढ़ाई गई है। यह एक सामान्य नियम है कि ज़मानत मांगते समय, केवल ज़मानत रद्द करने के आदेश को ही उच्च न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती। ज़मानत देना एक ऐसा आदेश नहीं है जिस पर आदान-प्रदान किए गए अभिवचनों के आधार पर निर्णय सुनाया गया हो, बल्कि यह प्रक्रिया के अनुसार कुछ शर्तों के आधार पर व्यक्तिगत स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के लिए विस्तार और अनुदान है और ऐसे में इस याचिका के ज़रिए की गई प्रार्थना स्वीकार्य नहीं है, जिसमें कुछ हिस्से को बहाल करने और अग्रिम ज़मानत देने पर विचार को रद्द करने की मांग की गई है।

13. प्रक्रिया में भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत याचिका दायर करके जमानत रद्द करने की मांग करना अनिवार्य नहीं है और 17.05.2024 के आदेश को रद्द करने की मांग करने के लिए वर्तमान याचिका में की गई प्रार्थना केवल इस सीमा तक है कि यह प्रतिवादी संख्या 2 के विरुद्ध गैर-जमानती अपराधों को जमानती मानता है और प्रतिवादी संख्या 2 को अग्रिम जमानत प्रदान करता है, इस पर विचार नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह सीधे तौर पर प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में दी गई जमानत को रद्द करने की मांग कर रहा है।

14. उपर्युक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, तथा ऊपर की गई चर्चाओं के आलोक में तथा माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों और इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को शीर्ष सम्मान देते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए, वर्तमान याचिका तदनुसार **खारिज** की जाती है।

(2025) 2 ILRA 102

आरंभिक अधिकारिता

आपराधिक पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 11.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति श्री प्रकाश सिंह

आवेदन अंतर्गत धारा 482 संख्या 1287 वर्ष 2025

अनिल कुमार श्रीवास्तव

...आवेदक

बनाम

सी.बी.आई./एस.सी.बी. लखनऊ एवं अन्य

...प्रतिपक्षीगण

आवेदक के लिए अधिवक्ता:

अम्बरीश कुमार पांडे

प्रतिपक्षियों के लिए अधिवक्ता:

अनुराग कुमार सिंह, शासकीय अधिवक्ता

ए. दंड विधि - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 161 - साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 33 - भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023- साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 27 और 33, बाद की कार्यवाही में या उसी कार्यवाही के बाद के चरण में, उनमें वर्णित तथ्यों की सच्चाई को सिद्ध करने के लिए कुछ साक्ष्यों की प्रासंगिकता से संबंधित हैं। न्यायिक कार्यवाही में साक्षी द्वारा दिया गया साक्ष्य ऐसे उद्देश्यों के लिए प्रासंगिक हो जाता है जब साक्षी मर चुका हो या अनुपलब्ध हो। हालांकि, धारा 161 द.प्र.सं. के अंतर्गत एक अन्वेषण अधिकारी द्वारा दर्ज किया गया अभिकथन साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 33 के परिक्षेत्र में नहीं आता है, न ही यह भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 27 के अंतर्गत आवश्यकताओं को पूरा करता है। इसलिए, इस तरह के अभिकथनों को बाद की न्यायिक कार्यवाहियों में तथ्यों की सच्चाई सिद्ध करने के लिए साक्ष्य के तौर पर नहीं पढ़ा जा सकता। (प्रस्तर 5, 6)

बी. भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023- धारा 528 - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973, धारा 482 - उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियाँ, संहिता के अंतर्गत किसी भी आदेश को प्रभावी बनाने, किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने, या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक आदेश देने की है। इसके दो भाग हैं: (i) प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और पर्याप्त न्याय सुनिश्चित करने के लिए निहित शक्तियों का प्रयोग, और (ii) जब कोई विशिष्ट उपचार मौजूद न हो, तो संहिता के प्रावधानों को प्रभावी बनाना। बीएनएसएस की धारा 528 के अंतर्गत न्यायालय का अंतर्निहित क्षेत्राधिकार व्यापक और व्यापक है। (प्रस्तर 11)

सी. अधिवक्ता की ओर से चूक - यह एक सामान्य कानून है कि किसी वादी को अपने अधिवक्ता की चूक या अनजाने में हुई गलतियों का खामियाजा नहीं भुगतना चाहिए। एक बार जब कोई पक्षकार किसी अधिवक्ता को नियुक्त करता है, तो उसके हितों की रक्षा के लिए अधिवक्ता पर भरोसा किया जाता है। यदि अधिवक्ता द्वारा उचित तत्परता दिखाई जाती है, लेकिन अनजाने में तकनीकी या प्रक्रियात्मक चूक हो जाती है, तो पक्षकार को दंडित नहीं किया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में, आवेदक ने पहले भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 33 के अंतर्गत 18.07.2024 को एक आवेदन दायर किया था, जिसमें पिछली कार्यवाहियों में द.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत दर्ज किए गए अन्वेषण अधिकारी (सीबीसीआईडी) स्वर्गीय विजय बहादुर सिंह के अभिकथन पर भरोसा करने की मांग की गई थी। हालांकि, धारा 33, धारा 161 द.प्र.सं. के अंतर्गत दर्ज किए गए ऐसे अभिकथनों को बाद की न्यायिक कार्यवाहियों में प्रासंगिक मानने की अनुमति नहीं देती है। अभिनिर्धारित हुआ: न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि पक्षकारों को अपने अधिवक्ताओं की चूक के कारण पक्षपातपूर्ण व्यवहार नहीं करना चाहिए। यदि धारा 528 बीएनएसएस के अंतर्गत निहित शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जाता है, तो

घोर अन्याय होगा और आवेदक के पास कोई उपचार नहीं बचेगा, जो संवैधानिक व्यवस्था के अंतर्गत अनुचित है। तदनुसार, आवेदक को साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 33 के अंतर्गत एक नया आवेदन प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई। परीक्षण न्यायालय को निर्देश दिया गया कि वह इस पर विधि के अनुसार विचार करे। (प्रस्तर 14, 15, 18)

अभिनिर्धारित हुआ: आवेदन स्वीकृत। (ई-5)

उद्धृत मामलों की सूची:

अशोक कुमार बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, (2024) 1 एससीसी 357

(माननीय न्यायमूर्ति श्री प्रकाश सिंह द्वारा प्रदत्त)

1. आवेदक के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री अनुराग कुमार सिंह, सी.बी.आई. के लिए अधिवक्ता श्री निर्मल कुमार पाण्डेय तथा राज्य के लिए अधिवक्ता श्री सुशील कुमार पाण्डेय को सुना गया।

2. चुनौती के अधीन प्रकरण संख्या 01ए/2009, आरसी 4 (एस)/2007, अंतर्गत धारा 120बी सहपठित - 420, 467, 468 और 471 भा.द.सं., सी.बी.आई./एस.सी.बी. लखनऊ, सी.बी.आई. बनाम - अनिल कुमार श्रीवास्तव में पारित आदेश दिनांक 03.08.2024 एवं आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 558 वर्ष 2024, अनिल कुमार श्रीवास्तव बनाम सी.बी.आई. लखनऊ में पारित आदेश दिनांक 05.11.2024 है, जो विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रदूषण/सी.बी.आई. के समक्ष लंबित है।

3. मामले का तथ्यात्मक परिवेश यह है कि दिनांक 06.06.2007 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय, लखनऊ पीठ के तत्कालीन रजिस्ट्रार के पत्र संख्या 4616 दिनांक 30.05. 2007 के आधार पर राजेंद्र कुमार उर्फ टिंकू और दो अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध भा.द.सं. की धारा 120-बी, 420, 467, 468 और 471 के अंतर्गत प्राथमिकी दर्ज की गई थी, जिसके बाद सी.बी.आई. ने मामले का अन्वेषण किया और साक्षियों और सभी संबंधितों के अभिकथन दर्ज करते हुए 26.12.2008 को आरोप पत्र दायर किया गया था। आरोप पत्र बृजेश कुमार वर्मा और वर्तमान आवेदक अनिल कुमार श्रीवास्तव के विरुद्ध दायर किया गया था और बाद में वर्तमान आवेदक द्वारा आरोप पत्र को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी और उसके विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही पर रोक लगाते हुए उसके पक्ष में एक अंतरिम आदेश दिया गया था, जबकि बृजेश कुमार वर्मा के विरुद्ध परीक्षण चला और उसे सिद्धदोष ठहराया गया था। बाद में 482 की याचिका का निर्णय हुआ और मामले के परीक्षण को आगे बढ़ाने के लिए संबंधित परीक्षण न्यायालय में वापस भेज दिया गया। परीक्षण के दौरान साक्ष्य अधिनियम, 1872 (इसके बाद 'अधिनियम 1872' के रूप में संदर्भित) की धारा 33 के अंतर्गत एक आवेदन आवेदक द्वारा परीक्षण न्यायालय के समक्ष पेश किया गया था, यह कि विजय बहादुर सिंह (तत्कालीन सीबीसीआईडी अधिकारी) द्वारा द.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत अभिकथन आगामी न्यायिक कार्यवाही में सिद्ध करने के लिए प्रासंगिक

है और इसलिए, उनकी प्रार्थना को उनकी प्रार्थना को स्वीकार किया जा सकता है और उनके अभिकथन को साक्ष्य के रूप में माना जा सकता है।

4. आवेदक और सी.बी.आई. को सुनने के बाद, विद्वान परीक्षण न्यायालय ने 03.08.2024 को आवेदन का निर्णय किया और यह अभिनिर्धारित किया कि अन्वेषण अधिकारी द्वारा द.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत लिया गया अभिकथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 के परिक्षेत्र में नहीं आता है।

5. साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 नीचे पुनः प्रस्तुत की गई है:-

"पश्चात्त्वर्ती कार्यवाही में, उसमें कथित तथ्यों की सच्चाई सिद्ध करने के लिए कुछ साक्ष्यों की प्रासंगिकता-- किसी न्यायिक कार्यवाही में, या उसे लेने के लिए कानून द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष किसी साक्षी द्वारा दिया गया साक्ष्य, पश्चात्त्वर्ती न्यायिक कार्यवाही में, या उसी न्यायिक कार्यवाही के बाद के चरण में, उसके द्वारा बताए गए तथ्यों की सच्चाई सिद्ध करने के प्रयोजन के लिए प्रासंगिक है, जब साक्षी मर चुका है या उसे पाया नहीं जा सकता है, या वह साक्ष्य देने में असमर्थ है, या प्रतिपक्ष द्वारा उसे रास्ते से हटा दिया गया है, या यदि उसकी उपस्थिति बिना किसी विलंब या व्यय के प्राप्त नहीं की जा सकती है, जिसे मामले की परिस्थितियों के अंतर्गत न्यायालय अयुक्तियुक्त मानता है; बशर्ते-- कि कार्यवाही उन्हीं पक्षों या उनके हित प्रतिनिधियों के बीच थी; कि प्रथम कार्यवाही में प्रतिपक्षी को प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार और अवसर था; कि मुद्दे में प्रश्न पहली कार्यवाही की तरह दूसरी कार्यवाही में भी मूलतः समान थे। स्पष्टीकरण: इस धारा के अर्थ के अंतर्गत आपराधिक परीक्षण या जाँच अभियोजक और अभियुक्त के बीच की कार्यवाही मानी जाएगी।"

6. उपर्युक्त प्रावधान न्यायिक कार्यवाही में साक्षी के साक्ष्य की प्रासंगिकता के बारे में बात करते हैं, ताकि बाद की कार्यवाही में सिद्ध किया जा सके। प्रावधान बहुत स्पष्ट है कि न्यायिक कार्यवाही में दिया गया अभिकथन तथ्यों की सच्चाई के लिए कुछ साक्ष्यों को सिद्ध करने के लिए प्रासंगिक है। द.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत अन्वेषण अधिकारी द्वारा दर्ज किया गया अभिकथन प्रावधानों के क्षेत्र को कवर नहीं करता है क्योंकि इसमें दो तत्व हैं, पहला, न्यायिक कार्यवाही में साक्षीद्वारा दिया गया साक्ष्य और दूसरा, 'कानून द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष' और निस्संदेह, परीक्षण न्यायालयके समक्ष प्रस्तुत 18.07.2024 के आवेदन से स्पष्ट है कि इसमें यह प्रार्थना की गई थी कि सीबीसीआईडी के तत्कालीन अधिकारी स्वर्गीय विजय बहादुर सिंह द्वारा 14.07.2008 को द.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत दिए गए अभिकथन को साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 के अंतर्गत प्रावधानों को लागू करते समय पढ़ा जाए। आवेदन का प्रासंगिक अंश यहाँ नीचे पुनः प्रस्तुत है:-

"अतः न्यायालय श्रीमानजी से प्रार्थना है कि महत्वपूर्ण बयान जो साक्षी श्री विजय बहादुर सिंह पुत्र स्व० श्री हरनाम सिंह द्वारा सी.बी.आई. को मुकदमा उपरोक्त में दिनांक 14.07.2008 को बयान अंतर्गत धारा 161 द.प्र.सं. के रूप में कराया गया था, सी.बी.आई. द्वारा न्यायालय के समक्ष प्रेषित, रिपोर्ट दिनांकित 29.05.2022

के अनुसार उपरोक्त साक्षी की मृत्यु दिनांक 09.06.2018 को हो चुकी है जिससे साक्षी स्व० श्री विजय बहादुर सिंह पुत्र स्व० श्री हरनाम सिंह बयान अंतर्गत धारा 164 नहीं हो सका, को प्रार्थी/अभियुक्त की सफाई साक्षी-2 के रूप में पढ़ा जाना अत्यंत महत्वपूर्ण एवं न्याय हित में आवश्यक है एवं सफाई साक्षी-2 के रूप में पढ़ा जाय।"

7. स्पष्ट रूप से, उपरोक्त प्रार्थना, सह-अभियुक्त/आवेदक के आगामी परीक्षण में द.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत लिए गए अभिकथन पर विचार करने के लिए है और यह न्यायिक कार्यवाही के अंतर्गत लिया गया अभिकथन नहीं है और इस प्रकार, प्रथम दृष्टया, विद्वान परीक्षण न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष सही है।

8. इस स्तर पर, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी कि गलत सलाह पर, आवेदक ने गलत प्रार्थना के साथ आवेदन दायर किया था और यदि आवेदक को नए सिरे से आवेदन दायर करने की स्वतंत्रता नहीं दी जाती है, तो उसे अपूरणीय क्षति और कानूनी चोट पहुंचेगी। उन्होंने आगे दलील दी कि वास्तव में स्वर्गीय विजय बहादुर सिंह का अभिकथन न्यायिक कार्यवाही के अंतर्गत दर्ज किया गया था और वास्तव में 'अधिनियम 1872' की धारा 33 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार का आह्वान करते समय विद्वान परीक्षण न्यायालय द्वारा उस पर विचार किया जाना आवश्यक है। इस प्रकार, दलील यह है कि न्याय के हित को पूरा करने के लिए, आवेदक को अधिनियम 1872 की धारा 33 के प्रावधानों के अनुरूप एक नया आवेदन दायर करने की स्वतंत्रता दी जा सकती है और परीक्षण न्यायालय को इस न्यायालय द्वारा निर्धारित समय अवधि के भीतर उस पर विचार करने का निर्देश दिया जा सकता है।

9. दूसरी ओर, सी.बी.आई. की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अनुराग कुमार सिंह ने आवेदक के अधिवक्ता द्वारा 3 अगस्त 2024 और 5 नवंबर 2024 को अधिनियम 1872 की धारा 33 के अंतर्गत आवेदक द्वारा परीक्षण न्यायालय में दायर एक आवेदन पर पारित आदेशों को रद्द करने की मांग का विरोध किया है। यह आवेदन बाद में पुनरीक्षण न्यायालय में भी प्रस्तुत किया गया था। उन्होंने दलील दी कि परीक्षण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों में कोई त्रुटि नहीं है और 18 जुलाई 2024 को दायर आवेदन को सही रूप से खारिज कर दिया गया है, क्योंकि एक अन्वेषण अधिकारी द्वारा द.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत दर्ज किए गए अभिकथन को धारा 33 के प्रावधानों के अधिदेश के अनुसार ध्यान में नहीं रखा जा सकता है। इस प्रकार, दलील यह है कि यह आवेदन खारिज किए जाने योग्य है।

10. पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने और अभिलेख पर रखी गई सामग्री के परिशीलन के बाद, यह पता चलता है कि बीएनएसएस की धारा 528 (द.प्र.सं. की पुरानी धारा 482) के अंतर्गत क्षेत्राधिकार का आह्वान करते हुए आक्षेपित आदेश को चुनौती दी गई है, प्रावधानों को यहां शब्दशः उद्धृत किया गया है: -

"उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों की व्यावृत्ति."

इस संहिता में कोई भी बात उच्च न्यायालय की ऐसे आदेश देने की अंतर्निहित शक्तियों को सीमित या प्रभावित करने वाली नहीं समझी जाएगी जो इस संहिता के अंतर्गत किसी आदेश को प्रभावी करने के लिए या किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक हो सकते हैं।"

11. उपर्युक्त प्रावधान के परिशीलन से पता चलता है कि इसके दो भाग हैं, 'पहला यह कि जहां कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होता है वहां वास्तविक और पर्याप्त न्याय करने के लिए अधिकारतः कार्य करने की अंतर्निहित शक्तियां और दूसरा, न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करना। अंतर्निहित शक्ति को संहिता के प्रावधानों को प्रभावी करने की सीमा तक भी बढ़ाया गया है। अनेक बार कानून तय होता है कि दं.प्र.सं. की धारा 482 (अब बीएनएसएस की धारा 528) के अंतर्गत अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग संयम से, सावधानीपूर्वक और बहुत सावधानी से किया जाना चाहिए और केवल उस स्थिति में जब इस तरह के प्रयोग को प्रावधान में निर्धारित परीक्षणों द्वारा उचित ठहराया जाता है। इसके अलावा न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग तब भी किया जा सकता है जब शिकायत के निवारण के लिए दंड प्रक्रिया संहिता (अब बीएनएसएस) में कोई उपचार प्रदान नहीं किया गया हो। यह तथ्य है कि दं.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत पहले से परिकल्पित प्रावधान बीएनएसएस की धारा 528 के अंतर्गत शब्दशः दिए गए हैं।

12. जहां तक विचाराधीन मामले का संबंध है, इस न्यायालय के संज्ञान में एक विसंगति लाई गई है कि आवेदक के अधिवक्ता द्वारा परीक्षण न्यायालय के समक्ष एक आवेदन प्रस्तुत किया गया था जिसमें प्रार्थना की गई थी कि सीबीसीआईडी के अन्वेषण अधिकारी स्वर्गीय विजय बहादुर सिंह के अभिकथन को द.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत मामले को सिद्ध करने के लिए पढ़ने की अनुमति दी जाए, जबकि अधिनियम 1872 की धारा 33 ऐसे अभिकथन को पढ़ने की अनुमति नहीं देती है।

13. जब यह न्यायालय आक्षेपित आदेश दिनांकित 03.08.2024 की जाँच करता है, तो यह पता चलता है कि विद्वान परीक्षण न्यायालय ने अधिनियम 1872 की धारा 33 के प्रावधानों का पालन करते हुए, आवेदन पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार किया है। मामले की इस पृष्ठभूमि में, अब आवेदक के पास धारा 528 बीएनएसएस (द.प्र.सं. की पुरानी धारा 482) के अंतर्गत क्षेत्राधिकार का आह्वान करते हुए इस न्यायालय से अनुरोध करने के अलावा कोई उपचार नहीं है। प्रथमदृष्टया, आवेदक के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत दिनांक 18.07.2024 का आवेदन त्रुटिपूर्ण प्रतीत होता है क्योंकि उपरोक्त आवेदन दायर करने का मूल उद्देश्य अधिनियम 1872 की धारा 33 के आदेशों का अनुपालन करना था और यह एक तथ्य है कि सीबीसीआईडी के अन्वेषण अधिकारी स्वर्गीय विजय बहादुर सिंह का अभिकथन पहले न्यायिक कार्यवाही में परीक्षण न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया था और यह प्रासंगिक होगा और वास्तव में दिनांक 18.07.2024 का आवेदन अनजाने में द.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत उस अभिकथन को आवेदक की बाद की न्यायिक कार्यवाही में विद्वान परीक्षण न्यायालय द्वारा विचार करने की प्रार्थना के साथ तैयार किया गया प्रतीत होता है ताकि मामला सिद्ध हो सके और इसलिए, आवेदन दोषपूर्ण है।

14. यह एक सामान्य नियम है कि प्रतिवादरत पक्ष को अपने अधिवक्ताओं की चूक का खामियाजा नहीं भुगतना चाहिए। हमारे समाज में यह बात स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है कि आमतौर पर पक्षकार अपने अधिवक्ताओं के माध्यम से ही उपस्थित होते हैं और उन्हें जानकारी देने के बाद, वे फीस का भुगतान करते हैं और बाकी काम पूरी तरह से अपने अधिवक्ताओं पर ही छोड़ देते हैं। ऐसे पक्षकार ग्रामीण होते हैं और ग्रामीण क्षेत्र से आते हैं, इसलिए उनसे न्यायालय की कार्यप्रणाली की जानकारी की अपेक्षा नहीं की जाती। एक बार ऐसा पक्षकार / व्यक्ति किसी अधिवक्ता को नियुक्त कर लेता है, तो वह इस विश्वास में रहता है कि अधिवक्ता उसके हितों का ध्यान रखेगा, लेकिन सिकके का दूसरा पहलू यह भी है कि यदि कोई अधिवक्ता पूरी लगन से काम करता है, लेकिन उसकी किसी प्रकार की असावधानी के कारण उससे कोई गलती हो जाती है, तो उसे पक्षकार की गलती नहीं कहा जा सकता, इसलिए ऐसे व्यक्ति को अपने अधिवक्ताओं की गलतियों/चूक के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जाना चाहिए। मामले के इस पहलू को वर्तमान में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **अशोक कुमार बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, 2024 1 एससीसी 357 में प्रतिवेदित किए गए** मामले में दोहराया गया है।

15. यह न्यायालय बीएनएसएस की धारा 528 (दंड प्रक्रिया संहिता की पुरानी धारा 482) के अंतर्गत प्रदत्त व्यापक और प्रचुर शक्तियों और साथ ही, उनकी सीमाओं से भी अवगत है। इस मामले में, प्रथम दृष्टया, आवेदक के अधिवक्ता की ओर से कुछ चूक प्रतीत होती है, जो मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से स्पष्ट होने के बावजूद, अनजाने में हुई हो सकती है और यदि यह न्यायालय अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग नहीं करता, तो इससे आवेदक के साथ घोर अन्याय होगा और वह उपचार-रहित हो जाएगा, जो भारत के संविधान की योजना के अंतर्गत अस्वीकार्य है।

16. परिणामस्वरूप, आवेदक द्वारा वर्तमान आवेदन के माध्यम से मांगी गई राहत वास्तविक प्रतीत होती है और इसलिए, विद्वान परीक्षण न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 03.08.2024 को प्रास्थगित रखा जाता है।

17. इसके अलावा आवेदक ने विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय से भी संपर्क किया था और पुनरीक्षण न्यायालय ने आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 558 वर्ष 2024 में आदेश दिनांक 05.11.2024 को पारित किया है, जबकि दिनांक 03.08.2024 के आदेश की पुष्टि की है और इसलिए, इसे भी प्रास्थगित रखा जाता है।

18. उपर्युक्त के दृष्टिगत, आवेदक को अधिनियम 1872 की धारा 33 के सख्त दायरे में सही स्वरूप और प्रार्थना के साथ 30 दिनों की अवधि के भीतर एक नया आवेदन प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता दी जाती है और यदि आवेदक द्वारा ऐसा आवेदन प्रस्तुत किया जाता है, तो उस पर सभी संबंधितों को अवसर देने के बाद, तीस दिनों की अतिरिक्त अवधि के भीतर, परीक्षण न्यायालय द्वारा निर्णय लिया जाएगा।

19. तदनुसार, आवेदन स्वीकार किया जाता है।

(2025) 2 ILRA 107

मूल क्षेत्राधिकार

आपराधिक पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 19.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति श्री समित गोपाल

धारा 482 के तहत आवेदन संख्या-2818 वर्ष 2020

सम्बद्ध

धारा 482 संख्या-18261 वर्ष 2022 के तहत आवेदन

धारा 482 संख्या-36143 वर्ष 2022 के तहत आवेदन

धारा 482 संख्या-4446 वर्ष 2020 के तहत आवेदन

सुरेंद्र कुमार और एक अन्य ... आवेदकगण

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य ... प्रतिपक्षी

आवेदकों के अधिवक्ता: आशा परिहार, प्रदीप चंद्रा (वरिष्ठ अधिवक्ता), प्रतीक चंद्रा

प्रतिपक्षियों के अधिवक्ता: शासकीय अधिवक्ता, गजेंद्र कुमार गौतम, मांडवी त्रिपाठी, राहुल कुमार

आपराधिक कानून - भारतीय दंड संहिता, 1860 - धारा 498 ए, 406 और 506 - दहेज निषेध अधिनियम, 1961 - धारा 3/4 - आपराधिक कार्यवाही - रद्द करना - सम्मन आदेश नॉन-स्पीकिंग ऑर्डर था जो टाइप किए गए प्रोफार्मा पर था, जिसमें पेन से भरे अंतराल - संबंधित न्यायालय ने आरोपी व्यक्तियों को बुलाने का कोई कारण नहीं बताया - धारा 377 भ०द०वि० के तहत अपराध के लिए पति के खिलाफ आरोप झूठे पाए गए, दोषमुक्त - अन्य दो सह-अभियुक्त व्यक्तियों (नंद और नंदोई) को सामान्य भूमिका सौंपी गई, दोषमुक्त - पति के साथ परिवार के अन्य सदस्यों को प्राथमिकी में आरोपी बनाया गया, 05 महीने की अत्यधिक देरी के साथ दर्ज किया गया। (प्रस्तर-30)

दोनों अच्छी तरह से शिक्षित, अच्छी स्थिति वाले व्यक्ति हैं - विवाद प्रकृति में विशुद्ध रूप से वैवाहिक था - दंपति ने विभिन्न विदेशी स्थानों की यात्रा की है - लंबे समय तक अहंकार का टकराव चला, जिसके परिणामस्वरूप प्राथमिकी दर्ज की गई और शिकायत - शादी के 02 साल बाद 2018-2019 में कथित तौर पर हुई हिंसा के आरोप - शिकायतकर्ता ने "स्त्रीधन" की वापसी सहित कई प्रार्थनाएं कीं - शिकायतकर्ता को उसके पति द्वारा पीटा गया और पीटा गया, उसके द्वारा प्राप्त चोट दिखाने के लिए कोई सहायक दस्तावेज नहीं - आरोप सामान्य

और सर्वव्यापी हैं - स्पष्ट कारणों से परिवार के सदस्यों की अधिकतम संख्या-को फंसाने के इरादे से शिकायत दर्ज की गई है। (प्रस्तर-31, 33)

आवेदनों की अनुमति है। (ई-13)

उद्धृत वादों / निर्णयज विधियों की सूची:

1. मैसर्स पेप्सी फूड्स लिमिटेड और अन्य बनाम विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट और अन्य: (1998) 5 एस.सी.सी. 749
2. सुनील भारती मित्तल बनाम सीबीआई: (2015) 4 एस.सी.सी. 609
3. महमूद उल रहमान बनाम खजीर मोहम्मद टुंडा और अन्य: (2015) 12 एस.सी.सी. 420
4. कृष्ण लाल चावला और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य: (2015) 12 एस.सी.सी. 420
5. आईनॉक्स एयर प्रोडक्ट्स लिमिटेड अब आईनॉक्स एयर प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम आंध्र प्रदेश राज्य: 2025 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 209, (प्रस्तर-33 से 37)
6. लालनकुमार सिंह और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य: (2022) एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 1383
7. सचिन गर्ग बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य: 2024 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 82
8. जेएम लेबोरेटरीज और अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य: 2025 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 208, (प्रस्तर-8, 9)
9. कहकशां कौसर बनाम बिहार राज्य: (2022) 6 एस.सी.सी. 599, (प्रस्तर-10 से 17)
10. पायल शर्मा बनाम पुन राज्य और अन्य: 2024 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 3473, (प्रस्तर-9 से 11)
11. दारा लक्ष्मी नारायण और अन्य बनाम तेलंगाना राज्य और अन्य, (प्रस्तर-11 से 16, 25, 28 से 31)
12. गेददाम झांसी बनाम तेलंगाना राज्य: 2025 आईएनएस.सी. 160, एस.एल.पी. (आपराधिक) संख्या-428 वर्ष 2024, 07.02.2025 को निर्णीत, (प्रस्तर-31 से 36)

(माननीय न्यायमूर्ति श्री समित गोपाल द्वारा उद्घोषित)

1. ये धारा 482 द०प्र०स० के तहत दायर चार याचिकाएं हैं जो उन्हें एक साथ जोड़ने वाले आदेशों के अनुपालन में एक साथ जुड़ी हुई हैं।
2. श्री सुरेंद्र कुमार के पुत्र पीयूष कौशल और श्री पवन कुमार तनेजा की पुत्री कुमारी पारु के बीच वैवाहिक संबंध होने के बाद इस मामले में विवाद वैवाहिक प्रकृति का है।

3. धारा 482 संख्या-2818 वर्ष 2020 के तहत आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन आवेदक सुरेंद्र कुमार और श्रीमती उषा द्वारा निम्नलिखित प्रार्थनाओं के साथ दायर किया गया है: -

"इसलिए अत्यन्त आदरपूर्वक निवेदन किया जाता है कि यह माननीय न्यायालय कृपया अनुग्रहपूर्वक प्रार्थी की यह प्रार्थना स्वीकार करते हुए वाद संख्या 24185 सन् 2019 (राज्य बनाम पीयूष कौशल एवं अन्य), जो प्रकरण अपराध संख्या 149 सन् 2019, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 498-क, 406, 506 तथा दहेज निषेध अधिनियम की धारा 3/4 से सम्बन्धित है, थाना महिला थाना, जनपद गाज़ियाबाद से उत्पन्न हुआ है, जिसकी सम्पूर्ण कार्यवाही वर्तमान में माननीय अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, न्यायालय संख्या-8, जनपद गाज़ियाबाद के समक्ष विचाराधीन है, उसे पूर्णतः निरस्त करने की कृपा की जाए। साथ ही दिनांक 02-12-2019 की आरोपपत्र तथा दिनांक 19-12-2019 के अभिज्ञान ग्रहण आदेश को भी निरस्त करने की कृपा की जाए, अन्यथा प्रार्थीगण को ऐसी अपूरणीय हानि एवं क्षति होगी जिसकी भरपाई किसी भी प्रकार से सम्भव नहीं होगी।

यह भी अत्यन्त आदरपूर्वक निवेदन किया जाता है कि यह माननीय न्यायालय कृपया अनुग्रहपूर्वक वाद संख्या 24185 सन् 2019 (राज्य बनाम पीयूष कौशल एवं अन्य), जो प्रकरण अपराध संख्या 149 सन् 2019, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 498-क, 406, 506 तथा दहेज निषेध अधिनियम की धारा 3/4 से सम्बन्धित है, थाना महिला थाना, जनपद गाज़ियाबाद से उत्पन्न हुआ है और जिसकी कार्यवाही वर्तमान में माननीय अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, न्यायालय संख्या-8, जनपद गाज़ियाबाद के समक्ष विचाराधीन है, की आगे की कार्यवाही पर स्थगनादेश (स्टे) प्रदान करने की कृपा की जाए। साथ ही, उक्त वाद में दिनांक 19-12-2019 को पारित अभिज्ञान ग्रहण आदेश के प्रभाव एवं संचालन को वर्तमान प्रार्थना-पत्र के विचाराधीन रहने की अवधि तक स्थगित करने की कृपा की जाए, अन्यथा प्रार्थीगण को ऐसी अपूरणीय हानि एवं क्षति होगी जिसकी भरपाई किसी भी प्रकार से सम्भव नहीं होगी।

4. आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन धारा 482 के तहत संख्या-18261 वर्ष 2022 के तहत आवेदक श्रीमती उषा, सुरेंद्र कौशल, पूजा बाटला और रजत बाटला द्वारा निम्नलिखित प्रार्थनाओं के साथ दायर किया गया है: -

"इसलिए, यह सादर प्रार्थना की जाती है कि यह माननीय न्यायालय अधिनियम की धारा 12 के तहत दायर केस संख्या-3463/2021 की पूरी कार्यवाही को रद्द करने की कृपा करे जो सिविल न्यायाधीश, जूनियर डिवीजन/एफ.टी.सी.-1 (महिलाओं के प्रति अपराध), जिला-गाज़ियाबाद के समक्ष लंबित मामले 2005, 2005 के तहत 2005 में सिविल न्यायाधीश, जूनियर डिवीजन/एफ.टी.सी.-1 (महिलाओं के प्रति अपराध), जिला-गाज़ियाबाद के समक्ष लंबित हैं। और/या इस तरह के अन्य और आगे के आदेश पारित करें जैसा कि यह माननीय न्यायालय मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के तहत उचित और उपयुक्त समझे।

5. आवेदक पीयूष कौशल द्वारा धारा 482 संख्या-36143 वर्ष 2022 के तहत आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन निम्नलिखित प्रार्थनाओं के साथ दायर किया गया है:-

"इसलिए, अत्यंत आदरपूर्वक निवेदन किया जाता है कि यह माननीय न्यायालय कृपया अनुग्रहपूर्वक प्रार्थी की यह प्रार्थना स्वीकार करते हुए, वाद संख्या 3463/2021, जो कि महिला को घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम, 2005 की धारा 12 के अंतर्गत तथा धारा 17, 18, 19, 20, 22 एवं 23 के अंतर्गत पुलिस थाना साहिबाबाद, जनपद गाज़ियाबाद (शीर्षक पारू तनेजा बनाम पीयूष कौशल एवं अन्य) में दायर है, जो कि वर्तमान में नागरिक न्यायाधीश, कनिष्ठ प्रभाग/फास्ट ट्रैक कोर्ट-1 (महिला अपराध प्रकरण), जनपद गाज़ियाबाद के समक्ष विचाराधीन है – की समस्त कार्यवाही को खंडित करने की कृपा करें।

साथ ही यह भी प्रार्थना है कि उक्त वाद संख्या 3463/2021 की आगे की कार्यवाही पर स्थगनादेश प्रदान किया जाए, तथा प्रार्थी के विरुद्ध किसी प्रकार की दबावपूर्ण या बाध्यकारी कार्यवाही प्रारंभ न की जाए, अन्यथा प्रार्थी को अपूरणीय क्षति एवं हानि होगी, जिसकी भरपाई किसी प्रकार संभव नहीं होगी।"

और/या इस तरह के अन्य और आगे के आदेश पारित करें जैसा कि यह माननीय न्यायालय मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के तहत उचित और उपयुक्त समझे।

6. आवेदक पीयूष कौशल द्वारा धारा 482 संख्या-4446 वर्ष 2020 के तहत आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन निम्नलिखित प्रार्थनाओं के साथ दायर किया गया है: -

"इसलिए यह अत्यंत सम्मानपूर्वक प्रार्थना की जाती है कि यह माननीय न्यायालय धारा 498 ए, 406, 506 भ०द०वि० और दहेज निषेध अधिनियम की धारा 3/4 के तहत केस अपराध संख्या-149 वर्ष 2019 (राज्य बनाम पीयूष कौशल और अन्य) की पूरी कार्यवाही को रद्द करने की कृपा करे, थाना-महिला थाना, जिला-गाजियाबाद अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, न्यायालय संख्या-8, जिला-गाजियाबाद के समक्ष लंबित है और साथ ही दिनांक 02.12.2019 के आरोप पत्र को रद्द करने के लिए और उपरोक्त मामले में पारित दिनांक 19.12.2019 के संज्ञान लेने के आदेश को भी रद्द करने के लिए, अन्यथा आवेदक को अपूरणीय क्षति और चोट का सामना करना पड़ेगा जिसकी किसी भी शर्त में भरपाई नहीं की जा सकती है।

यह भी प्रार्थना की जाती है कि यह माननीय न्यायालय अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष लंबित केस अपराध संख्या-140 वर्ष 2019 (राज्य बनाम पीयूष कौशल और अन्य) की आगे की कार्यवाही पर रोक लगाने की कृपा करे। न्यायालय संख्या-8, जिला-गाजियाबाद और प्रस्तुत आवेदन के लंबित रहने के दौरान, उपरोक्त मामले में पारित 19.12.2019 के आक्षेपित संज्ञान लेने के आदेश के प्रभाव और संचालन पर रोक लगाने के लिए, अन्यथा आवेदक को अपूरणीय क्षति और चोट का सामना करना पड़ेगा जिसकी भरपाई किसी भी शर्त में नहीं की जा सकती है।

7. आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन धारा 482 के तहत संख्या-4446 वर्ष 2020 में 07.11.2023 को एक आदेश पारित किया गया था जो इस प्रकार है:-

"1. सूची संशोधित।

2. आवेदक के अधिवक्ता सुश्री आशा परिहार, राज्य के लिए अपर शासकीय अधिवक्ता-। श्री अजय सिंह को सुना और अभिलेखों का अवलोकन किया।

3. श्री गजेंद्र कुमार गौतम, प्रतिपक्षी संख्या-2 के अधिवक्ता तब भी उपस्थित नहीं हैं जब मामले को संशोधित सूची में लिया गया है।

4. 03.10.2023 को भी प्रतिपक्षी संख्या-2 की ओर से कोई प्रतिनिधित्व नहीं था और न्याय के हित में मामले को स्थगित कर दिया गया था। आज भी प्रतिपक्षी संख्या-2 की ओर से कोई प्रतिनिधित्व नहीं है।

5. न्याय के हित में इसे देखते हुए, मामले को आज के लिए स्थगित किया जाता है।

6. मामले को 29.1.2024 को सूचीबद्ध किया जाए।

7. अंतरिम आदेश, यदि कोई हो, सूचीबद्ध होने की अगली तारीख तक प्रभाव में रहेगा।

8. दिनांक 07.11.2023 के उक्त आदेश के खिलाफ, कुमारी पारू की मां रमणीक तनेजा ने एक विशेष अनुमति याचिका (आपराधिक) डायरी संख्या-4776/2024, रमणीक तनेजा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य दायर की, जिसे शीर्ष न्यायालय ने दिनांक 15.07.2024 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया था, लेकिन आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन संख्या-4446/2020 वाले मामले की सुनवाई में तेजी लाने के लिए उच्च न्यायालय से अनुरोध किया गया था। दिनांक 15.07.2024 का उक्त आदेश इस प्रकार है:-

"देरी माफ कर दी गई।

यह आक्षेपित आदेश अंतरिम प्रकृति का है, इसलिए हमें इसमें हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं मिलता है। हालाँकि, हमें याचिकाकर्ता की शिकायत में बल मिलता है कि मामला चार साल से बिना किसी निर्णय के लटका हुआ है। इस प्रकार, हम उच्च न्यायालय से आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन संख्या-4446/2020 वाले मामले की सुनवाई में तेजी लाने का अनुरोध करते हैं।

तदनुसार, विशेष अनुमति याचिका खारिज की जाती है।

लंबित आवेदन, यदि कोई हो, का निपटारा किया जाता है।

9. सभी चार याचिकाओं की सुनवाई 09.01.2025 को संपन्न हुई, लेकिन सुनवाई के समापन के बाद, पक्षों के अधिवक्ताओं ने प्रस्तुत किया कि हालांकि मामले में दलीलें पूरी हो गई हैं, लेकिन अभी भी पक्षों के बीच विवाद

के सौहार्दपूर्ण समाधान के प्रयास प्रगति में हैं, जिसे दो सप्ताह की अवधि के भीतर अंतिम रूप मिलने की उम्मीद है और वे उक्त के भीतर इसके परिणाम के बारे में न्यायालय को अवधि के बारे में सूचित करेंगे।

10. आवेदकों के अधिवक्ता, श्री प्रतीक चंद्रा, एडवोकेट, ने न्यायालय को सूचित किया कि पक्षों के बीच मामले को निपटाने के प्रयास विफल रहे हैं और इस तरह मामले का निर्णय इसके गुण-दोष के आधार पर किया जाए।

11. सभी याचिकाओं में आवेदकों के अधिवक्ता श्री प्रतीक चंद्रा, सभी याचिकाओं में प्रतिपक्षी संख्या-2/प्रथम सूचनाकर्ता/शिकायतकर्ता के अधिवक्ता श्री प्रांशु गुप्ता और राज्य के अतिरिक्त शासकीय अधिवक्ता श्री बीरेंद्र प्रताप सिंह को सुना और अभिलेखों का अवलोकन किया।

संदर्भ: आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन यू/एस धारा 482 संख्या-4446 वर्ष 2020 और आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन यू/एस 482 संख्या-2818 वर्ष 2020

12. आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन धारा 482 के तहत संख्या-4446 वर्ष 2020 पीयूष कौशल द्वारा दायर किया गया है जो पारू के पति हैं। अन्य संबंधित याचिका आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन धारा 482 के तहत संख्या-2818 वर्ष 2020 पारू के ससुर सुरेंद्र कुमार और सास श्रीमती उषा की ओर से है। उक्त दोनों मामलों में चुनौती एक ही से संबंधित है। दोनों पक्षों के बीच विवाद उत्पन्न हुआ, जिसके बाद 26.07.2019 को प्रतिपक्षी संख्या-2/श्रीमती रमणीक तनेजा द्वारा केस अपराध संख्या-140 वर्ष 2019 के तहत पारू के पति पीयूष कौशल के खिलाफ धारा 498ए, 377, 406, 506 भ्रूणहत्या और 3/4 दहेज निषेध अधिनियम, 1961 के तहत प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई। सुरेंद्र कुमार ससुर, श्रीमती उषा सास, श्रीमती पूजा बाटला नंद और रजत बाटला नंदोई ने पुलिस अधीक्षक (नगर), गाजियाबाद को संबोधित एक आवेदन के आधार पर आरोप लगाया कि उसकी बेटी पारू की शादी 10.12.2017 को पीयूष कौशल के साथ तय की गई थी और 03.10.2017 को सगाई की गई थी। सगाई में उन्होंने अपनी हैसियत के हिसाब से करीब 5 लाख रुपये खर्च किए थे। पीयूष कौशल के माता-पिता श्रीमती उषा और सुरेंद्र कुमार ने उनसे नाराज़ होकर उन्हें बताया कि उनकी बड़ी बेटी पूजा बाटला और उनके दामाद रजत बाटला ने उन्हें टेलीफोन पर बताया कि सगाई में कम उपहार और सामान देने के कारण वे उनसे नाराज़ हैं और उन्हें रिश्ता तोड़ने की बात कही है, जिस पर उन्होंने खास तौर पर उनसे रिश्ता खत्म करने के लिए कहा था। इस पर उसने उनसे विशेष रूप से पूछा कि वे और क्या चाहते हैं, जिस पर उन्होंने उसे बताया कि वे चाहते हैं कि शादी कम से कम 50 लाख रुपये की हो, जिस पर शादी के लिए 10.12.2017 को होटल रमाडा प्लाजा, एक 5 सितारा होटल में संपन्न होना था, जिसे बुक किया गया था और बुकिंग राशि के रूप में 50,000 रुपये दिए गए थे। उन्होंने यह कहते हुए शादी रद्द कर दी कि होटल अच्छा नहीं है। बहुत समझाने और लड़की के जीवन और भविष्य के लिए अनुरोध करने पर, वे सहमत हो गए और फिर 18.4.2018 को शादी के लिए तय किया गया, जिसके बाद लड़की के भविष्य को देखते हुए, हरियाणा के पंचकुला में एक बैंक्वेट हॉल को 300 लोगों के लिए 2500 रुपये प्रति प्लेट की कीमत पर बुक किया गया था, जिसमें भोजन पर लगभग 12.50 लाख रुपये खर्च किए गए थे। सजावट आदि का अन्य खर्च लगभग 10 लाख रुपये था।

विवाह में पीयूष कौशल को हीरे की अंगूठी, चेन और नकद राशि दी गई और उनकी मां श्रीमती उषा कौशल को सोने का सेट दिया गया, पिता को एक अंगूठी दी गई और गिन्नी और उनकी बहन पूजा बाटला और उनके पति रजत बाटला को भी गिन्नी दी गई और इसी तरह दूसरी बहन मिली आनंद और उनके पति अमित आनंद को सोने की अंगूठी और गिन्नी दी गई और बच्चों को 21000/- रुपये दिए गए और 'बारातियों' को नकद राशि दी गई, जिसमें कुल 25 लाख रुपये खर्च किए गए लेकिन फिर भी वे इससे संतुष्ट नहीं थे। उनकी बेटी को आभूषण, कपड़े और चांदी के बर्तन दिए गए जिसमें करीब 30 लाख रुपये खर्च हुए। उनकी बेटी पारू 26.4.2018 को पीयूष कौशल के साथ उनके घर आई थी, जिसमें उस तारीख को उनके दामाद ने शराब पी थी और उनकी बेटी को मासिक धर्म होने के बावजूद उनके कमरे में अप्राकृतिक यौन संबंध बनाने के लिए मजबूर किया गया था, जो बाद में उनकी बेटी ने बताया था, जिस पर उन्होंने कहा कि उन्होंने इसे पहले नहीं बताया था और पीयूष कौशल से ऐसा न करने का अनुरोध किया, लेकिन वह इसके लिए सहमत नहीं थे। उसकी बेटी अपने घर में थी, जहां उसकी सास, ससुर, नंद और नंदोई के संपर्क में आने पर, उन्होंने घर की मरम्मत और लड़के द्वारा घर खरीदने के लिए 25 लाख रुपये की मांग की, जिस पर पारू को सांत्वना दी गई और 15.1.2019 को उसे वापस उसके ससुराल भेज दिया गया, जिसके बाद पीयूष कौशल उत्तेजित हो गए और उसे प्रताड़ित करने लगे। 03.02.2019 को पारू अपने मायके में आई और तब से अलग रह रही है। आरोपियों ने उन्हें धमकी दी है। रिपोर्ट दर्ज की जाए और कार्रवाई की जाए।

13. मामले की जांच की गई और पीयूष कौशल/पति, सुरेंद्र कुमार/ससुर और श्रीमती उषा/सास के खिलाफ धारा 498ए, 406, 506 भ०द०वि० और 3/4 डी.पी. अधिनियम के तहत आरोप पत्र (अप्रकाशित) प्रस्तुत किया गया। प्राथमिकी में नामित अन्य आरोपियों श्रीमती पूजा बाटला और रजत बाटला को दोषमुक्त कर दिया गया और उनके नामों का उल्लेख उन अभियुक्त व्यक्तियों के कॉलम में कॉलम-12 में किया गया था, जिनके खिलाफ आरोप पत्र नहीं लगाया गया था। विवेचनाधिकारी को धारा 377 भ०द०वि० के तहत अपराध के लिए कोई सबूत नहीं मिला और इस तरह उसे कार्यवाही से निकाल दिया गया। विवेचना में श्रीमती रमणीक तनेजा/प्रथम सूचनाकर्ता, श्रीमती पारू तनेजा और सहज तनेजा कथित गवाह थे, जिनसे पूछताछ की गई थी।

14. अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, न्यायालय संख्या-8, गाजियाबाद की अदालत ने दिनांक 19.12.2019 के आदेश के माध्यम से आरोप पत्र पर संज्ञान लिया और उक्त तीन आरोपियों को धारा 498ए, 406, 506 भ०द०वि० और 3/4 डी.पी. अधिनियम के तहत अपराधों के लिए तलब किया।

15. इस प्रकार धारा 482 द०प्र०स० के तहत वर्तमान दो याचिकाएं इस न्यायालय के समक्ष दायर की गई हैं, जिसमें संबंधित आरोपी व्यक्तियों द्वारा पूर्वोक्त प्रार्थनाओं के साथ उक्त मामले की कार्यवाही को चुनौती दी गई है।

16. आवेदकों के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आवेदकों को प्रस्तुत मामले में गलत तरीके से फंसाया गया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि प्रस्तुत मामले की असत्यता इस तथ्य से स्पष्ट है कि प्राथमिकी में नामित

02 अभियुक्तों श्रीमती पूजा बाटला/नंद और रजत बाटला को पुलिस द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया है क्योंकि जांच के दौरान मामले में उनका निहितार्थ नहीं पाया गया था। यह भी प्रस्तुत किया जाता है कि धारा 377 भ०द०वि० के तहत अपराध के लिए अभियुक्त/पीयूष कौशल के खिलाफ आरोप भी गलत पाया गया था और इस तरह जांच के बाद उक्त धारा के तहत उसे दोषमुक्त कर दिया गया था। यह प्रस्तुत किया जाता है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट 26.07.2019 को दर्ज की गई है जो लगभग 05 महीने की अत्यधिक देरी के बाद है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि आवेदक/पीयूष कौशल का विवाह प्रतिपक्षी संख्या-2 की बेटी पारू के साथ संपन्न हुआ था और समारोह दहेज की किसी भी मांग के बिना आदर्श तरीके से साधारण समारोह था। यह प्रस्तुत किया जाता है कि शादी के तुरंत बाद पारू अपने पति के साथ यूनाइटेड किंगडम (लंदन) चली गईं जहां वे काम कर रहे थे। यह प्रस्तुत किया जाता है कि चूंकि पारू ने अपने पति के घर छोड़ दिया था और व्हाट्सएप चैट के माध्यम से पति द्वारा संपर्क किया जा रहा था और उसकी ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं होने से पता चलता है कि वह उसके साथ नहीं रहना चाहती है और इस तरह पीयूष कौशल ने यूनाइटेड किंगडम (लंदन) में तलाक का मामला दायर किया। आगे यह प्रस्तुत किया जाता है कि आवेदक/पीयूष कौशल एक शिक्षित और एक अच्छी तरह से योग्य व्यक्ति है और उसके और उसकी पत्नी के बीच कुछ गलतफहमी के कारण/पारू वैवाहिक विवाद उत्पन्न हुआ, जिसने पूरी तरह से झूठे और निराधार आरोपों के साथ प्राथमिकी की प्रकृति में आपराधिक मामले का रूप ले लिया है। यह भी प्रस्तुत किया जाता है कि प्रस्तुत मामले में आरोप सामान्य और सर्वव्यापी प्रकृति के हैं। यह प्रस्तुत किया जाता है कि आवेदक सुरेंद्र कुमार लगभग 79 वर्ष की आयु के एक वृद्ध व्यक्ति हैं, जबकि अन्य आवेदक श्रीमती उषा भी लगभग 69 वर्ष की आयु के एक वृद्ध व्यक्ति हैं और वे विभिन्न बीमारियों से पीड़ित हैं। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि अदालत ने आरोप पत्र पर संज्ञान लेते हुए अपने न्यायिक दिमाग का उपयोग नहीं किया है और संज्ञान लिया है और एक मुद्रित प्रोफार्मा पर दिनांक 19.12.2019 को सम्मन आदेश पारित किया है, जिसमें रिक्त स्थान हैं जो पेन द्वारा भरे गए थे। यह प्रस्तुत किया जाता है कि संबंधित न्यायालय ने उक्त आदेश पारित करने का कोई कारण नहीं बताया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि दहेज मांगने के आवेदकों के खिलाफ आरोप झूठे और निराधार हैं। यह प्रस्तुत किया गया है कि सम्मन का आदेश और कार्यवाही कानून की नजर में खराब है और इसे रद्द किया जाना चाहिए। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस मामले में आरोपों की अस्पष्टता स्पष्ट है क्योंकि इसमें कथित घटना की कोई विशिष्ट तारीखें नहीं बताई गई हैं। आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ सामान्य और ठोस आरोप हैं। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस तरह आवेदकों के खिलाफ कार्यवाही को रद्द कर दिया जाए।

17. प्रतिपक्षी संख्या-2 के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता ने याचिकाओं और रद्द करने की प्रार्थना का जोरदार विरोध किया और प्रस्तुत किया कि आवेदकों का नाम प्राथमिकी में है और उनके खिलाफ आरोप हैं। यह प्रस्तुत किया जाता है कि जहां तक इस तथ्य का संबंध है कि पक्ष अच्छी तरह से शिक्षित हैं, यह विवादित नहीं है। इसके अलावा, राज्य के अधिवक्ताओं और प्रतिपक्षी संख्या-2 दोनों ने पारू के साथ आवेदकों के संबंधों पर विवाद नहीं किया। यह प्रस्तुत किया जाता है कि आवेदकों का नाम प्राथमिकी में है और उनके खिलाफ एक आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया है जिस पर संबंधित अदालत ने संज्ञान लिया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि प्रस्तुत याचिकाओं को खारिज कर दिया जाए।

संदर्भ: आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन धारा 482 के तहत संख्या-18261 वर्ष 2022 और आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन धारा 482 के तहत संख्या-36143 वर्ष 2022 के तहत

18. धारा 482 द०प्र०स० के तहत उपरोक्त दो (02) याचिकाएं श्रीमती पारू तनेजा द्वारा शुरू की गई कार्यवाही को चुनौती देने से संबंधित हैं, जो घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 की धारा 12 के तहत थाना-साहिबाबाद, जिला-गाजियाबाद थाना के तहत अपराधों के लिए है। आवेदन यू/एस 482 संख्या-18261 वर्ष 2022 में आवेदक श्रीमती उषा/सास, सुरेंद्र कौशल/ससुर, पूजा बाटला/नंद और प्रतिपक्षी संख्या-2 के रजत बाटला/नंद हैं। अन्य याचिका में आवेदक जो पीयूष कौशल प्रतिपक्षी संख्या-2 श्रीमती पारू तनेजा के पति हैं, ने धारा 482 के तहत संख्या-36143 वर्ष 2022 आवेदन किया है।

19. मामले के तथ्य यह हैं कि प्रतिपक्षी संख्या-2 ने 05 अभियुक्तों के खिलाफ दिनांक 12.11.2021 को शिकायत दर्ज की, जिसमें पीयूष कौशल (पति), श्रीमती उषा (सास), सुरेंद्र कुमार (ससुर), श्रीमती पूजा बटला (नंद) और रजत बाटला (नंदोई) शामिल थे, इस आरोप के साथ कि उनकी शादी 18.4.2018 को हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार प्रतिपक्षी संख्या-1 पीयूष कौशल से हुई थी और पंचकूला, हरियाणा में विवाह किया गया था। शादी में करीब 50 लाख रुपये खर्च हुए और इसमें सोने, चांदी और हीरे के गहने के साथ ही महंगे कपड़े, फर्नीचर, घरेलू सामान और नकद राशि दी गई। वह शादी और विदाई के बाद, आरोपियों/प्रतिवादियों के घर गई और पूरे गहने प्रतिवादियों को सौंप दिए जो आज तक उनके कब्जे में हैं। उसने अपने वैवाहिक दायित्वों का निर्वहन करना शुरू कर दिया और उनकी उम्मीदों को पूरा करने की कोशिश की। शादी के समय उसका पति लंदन में काम कर रहा था, जिसके कारण आरोपी व्यक्ति ताना मारते थे कि दहेज और उपहार उनकी हैसियत के अनुसार नहीं दिए गए हैं। उसका पति 02.5.2018 को लंदन (यूके) गया था, लेकिन वह उसके साथ नहीं जा सकी क्योंकि उसके पास वीजा नहीं था। इसके बाद वह 22.05.2018 को वहां गई। उसने अपने वैवाहिक दायित्वों का निर्वहन करना शुरू कर दिया। आरोपी/प्रतिवादी नियमित रूप से उसके साथ मारपीट करता था और उसे कम दहेज के लिए ताना मारता था और उसे घर खरीदने के लिए अपने माता-पिता से 25 लाख रुपये लाने के लिए कहता था अन्यथा वह उसकी हत्या कर देगा। प्रतिवादी एक चतुर व्यक्ति है। प्रतिवादी अक्सर नशे में रहता था और जब वह देर से आने का कारण पूछती थी, तो वह उसके साथ मारपीट करता था। शादी के करीब एक हफ्ते बाद उसकी सास, ससुर, नंद और नंदोई ने कम दहेज के लिए उसके साथ मारपीट शुरू कर दी। वह इसका सामना करती रही लेकिन आरोपी व्यक्तियों ने अपने तरीके नहीं बदले। 02.02.2019 से वह और उसका पति बिना किसी शारीरिक संबंध के अलग रह रहे हैं। नशे की हालत में उसका पति उसके साथ मारपीट करता था और उसे शारीरिक और मानसिक रूप से प्रताड़ित करता था और संबंधों में विवाद के कारण, उसकी मां ने धारा 498 ए, 377, 406, 506 भ०द०वि० और 3/4 डीपी अधिनियम के तहत केस अपराध संख्या-0140/2019, राज्य बनाम पीयूष कौशल और अन्य के तहत मामला दर्ज किया। प्रतिवादी लंदन में अमेज़न कंपनी में एक अच्छी स्थिति में काम कर रहा है और उसे वेतन के रूप में प्रति माह 10 लाख रुपये मिल रहे हैं और उसके पास बहुत सारी संपत्ति भी है। अतः वादिनी द्वारा प्रस्तुत प्रार्थनाएँ इस प्रकार की गई हैं कि अधिनियम की धारा 18 के अन्तर्गत उसे पुनः किसी प्रकार की घरेलू हिंसा से संरक्षण प्रदान करने का आदेश दिया जाए तथा उसका

“स्त्रीधन” जिसमें वाहन, आभूषण, वस्त्र आदि सम्मिलित हैं, उसे वापस दिलाया जाए। धारा 17 एवं 19 के अन्तर्गत सुरक्षित निवास हेतु स्थान प्रदान करने की व्यवस्था की जाए, जिसके लिए प्रति माह ₹15,000/- किराये के रूप में दिलाए जाने का आदेश दिया जाए। धारा 20 के अन्तर्गत प्रति माह ₹5,00,000/- भरण-पोषण के रूप में दिलाए जाने का आदेश पारित किया जाए तथा धारा 22 के अन्तर्गत एकमुश्त ₹1,00,00,000/- (एक करोड़ रुपये) गुज़ारा भत्ता (एलिमनी) के रूप में प्रदान किए जाने का आदेश पारित किया जाए। इसके अतिरिक्त यह भी प्रार्थना की गई है कि सम्पूर्ण “स्त्रीधन” उसे लौटाए जाने का आदेश पारित किया जाए।

20. उक्त आवेदन पर जिला परिवीक्षा अधिकारी, गाज़ियाबाद द्वारा अभियुक्तों/प्रतिवादियों को दिनांक 12.11.2021 का नोटिस जारी किया गया था। जिला परिवीक्षा अधिकारी ने 12.11.2021 को अपनी रिपोर्ट संबंधित न्यायालय को दी। इस प्रकार उक्त मामले की कार्यवाही को भी इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जा रही है।

21. आवेदकों के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आवेदकों को प्रस्तुत मामले में गलत तरीके से फंसाया गया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि शिकायत में पूरी कहानी मनगढ़ंत, झूठी और कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग करने का प्रयास है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि आवेदक/पूजा बाटला और रजत बाटला लंदन (यूनाइटेड किंगडम) के स्थायी निवासी हैं और उन्हें शिकायतकर्ता और उसके पति के जीवन से कोई सरोकार नहीं है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि उक्त व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के साथ और विशेष रूप से शिकायतकर्ता और उसके पति के साथ घर साझा नहीं करते हैं। यह निवेदन किया जाता है कि दोनों उपर्युक्तवादों में दायर शपथपत्रों के अनुच्छेद संख्या 26 एवं 27 के संदर्भ में यह तथ्य प्रस्तुत किया जा रहा है कि अभियोगिनी/प्रतिवादी संख्या 2 तथा उसके पति श्री पीयूष कौशल ने आवेदिका संख्या 1 श्रीमती उषा तथा आवेदक संख्या 2 श्री सुरेन्द्र कौशल के आवास पर केवल लगभग 3 दिन ही निवास किया। तत्पश्चात वे दिनांक 22.04.2018 से 24.04.2018 तक हनीमून पर गए और दिनांक 26.04.2018 से 27.04.2018 तक प्रतिवादी संख्या 2 के मायके साहिबाबाद, गाज़ियाबाद में रहे। इसके पश्चात दोनों पुनः लौटकर दिनांक 27.04.2018 से 01.05.2018 तक आवेदिका संख्या 1 एवं आवेदक संख्या 2 के आवास पर रहे। यह निवेदन किया जाता है कि दिनांक 02.05.2018 को पति लंदन चले गए और प्रतिवादी संख्या 2 अपने पति को दिल्ली हवाई अड्डे तक छोड़ने गई, परंतु वह पुनः आवेदिका संख्या 1 एवं आवेदक संख्या 2 के घर वापस नहीं आई, बल्कि साहिबाबाद, गाज़ियाबाद स्थित अपने मायके में ही रुक गई। उसी दौरान वहीं रहते हुए उसने दिनांक 14.05.2018 को यूनाइटेड किंगडम (यू.के.) वीज़ा के लिए साक्षात्कार (इंटरव्यू) दिया और तत्पश्चात आवेदिका संख्या 1 एवं आवेदक संख्या 2 के घर लौटी, किन्तु पुनः 17.05.2018 को वीज़ा प्राप्त करने के लिए साहिबाबाद, गाज़ियाबाद चली गई और वीज़ा प्राप्त करने के बाद दिनांक 22.05.2018 को उसने लंदन जाने की तैयारी की तथा 24.05.2018 को अपने पति के साथ रहने के लिए लंदन चली गई। यह भी निवेदन किया जाता है कि दिनांक 16.07.2018 से 24.07.2018 तक प्रतिवादी संख्या 2 एवं उसके पति क्रोएशिया गए तथा तत्पश्चात 26.09.2018 से 01.10.2018 तक रोम (इटली) एवं 12.10.2018 से 15.10.2018 तक वेनिस (इटली) में रहे, जिसके सभी खर्चे उसके पति द्वारा वहन किए गए। यह निवेदन किया जाता है कि प्रतिवादी संख्या 2 ने दिनांक 18.12.2018 को बिना अपने पति को सूचित किए

लंदन स्थित उनके आवास को छोड़ दिया। तत्पश्चात परिवारजनों के मध्यस्थता से उसकी पत्नी को पुनः अपने पति के साथ रहने के लिए समझाया गया, जिसके फलस्वरूप वह 21.12.2018 को वापस लौटी और अपने पति के साथ लंदन में रहने लगी। तत्पश्चात 26.12.2018 को प्रतिवादी संख्या 2 ने अपना सारा सामान पैक किया और अपने पति को उसे हवाई अड्डे तक छोड़ने के लिए बाध्य किया क्योंकि वह भारत वापस आना चाहती थी। परंतु आश्चर्यजनक रूप से 15.01.2019 को उसने अपने पति को बिना सूचित किए पुनः लंदन स्थित अपने घर पर पहुँच गई। यह प्रस्तुत किया जाता है कि शादी एक प्रेम विवाह थी क्योंकि प्रतिपक्षी संख्या-2 और पीयूष कौशल वर्ष 2015 और वर्ष 2016 में एक साथ अध्ययन करते थे और उन्होंने शादी करने का फैसला किया और अक्टूबर 2017 में रोका समारोह हुआ, जिसके बाद परिवार के बीच कुछ मुद्दे उठे जो बाद में सुलझ गए और फिर उन्होंने एक-दूसरे से शादी कर ली। यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि प्रतिपक्षी संख्या-2 एक उच्च शिक्षित महिला है और उसने विभिन्न उच्च पदों पर काम किया है, इसका विवरण हलफनामे के प्रस्तर-42 में दिया गया है जो इस प्रकार है: -

"(क) 2012-2015 दुबई, संयुक्त अरब अमीरात में एक बहुराष्ट्रीय फर्म प्राइस वाटर हाउस कूपर्स के साथ एक वरिष्ठ कार्यकारी पद पर काम कर रहा है।

(ख) 2016-2017 में बेंगलूर, भारत में एक शीर्ष ई-कॉमर्स कंपनी फ्लिपकार्ट के साथ वरिष्ठ प्रबंधक के रूप में काम कर रहा है, जिसकी वार्षिक आय 25 लाख से अधिक है।

(ग) 2018-2021 लंदन, यूके में एसोसिएट डायरेक्टर ई-कॉमर्स, ओमनीकॉम मीडिया ग्रुप 90-100 साउथवार्क स्ट्रीट, लंदन एसई 1 ओएसडब्ल्यू के रूप में काम कर रहे हैं। (डी) 2021- वर्तमान तिथि दुबई में निदेशक ई-कॉमर्स रणनीति, ओमनीकॉम मीडिया ग्रुप बिल्डिंग, दुबई मीडिया सिटी, संयुक्त अरब अमीरात-34404 में ओमनीकॉम मीडिया ग्रुप के रूप में काम कर रही है।

यह प्रस्तुत किया जाता है कि वर्तमान शिकायत प्रतिपक्षी संख्या-2 द्वारा केवल आवेदकों को परेशान करने और झूठा फंसाने के लिए दायर की गई है। आवेदकों के अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि प्रतिपक्षी संख्या-2 ने पहले 11.10.2021 को प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, पंचकुला, हरियाणा के समक्ष तलाक की याचिका दायर की थी, जिसे क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के आधार पर 22.11.2021 को खारिज कर दिया गया था। इसके बाद पति/पीयूष कौशल ने 23.11.2021 को प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, डेराबसी, पंजाब के समक्ष हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 के तहत तलाक की याचिका दायर की और इस बीच, वर्ष 2018-19 में कथित रूप से हुई एक घटना के लिए 12.11.2021 को विलंबित चरण में वर्तमान शिकायत दर्ज की गई है। यह भी प्रस्तुत किया जाता है कि शिकायत में बताए गए आरोप सामान्य और सर्वव्यापी हैं। यह प्रस्तुत किया जाता है कि हालांकि पति के परिवार के सदस्यों को इसमें आरोपी/प्रतिवादी बनाया गया है, लेकिन शिकायत के संस्करण से यह नहीं पता चलता है कि वे शिकायतकर्ता और उसके पति के साथ एक ही घर साझा कर रहे थे। यह प्रस्तुत किया जाता है कि प्रतिवादी के खिलाफ विशिष्ट और स्पष्ट आरोपों के अभाव में, शिकायत दर्ज करना

स्पष्ट रूप से दुर्भावनापूर्ण कार्य है, जिसमें संबंधित न्यायालय को आगे बढ़ने के लिए आवश्यक दलीलों, कथनों और आरोपों का भी अभाव होगा। इस प्रकार यह प्रस्तुत किया जाता है कि प्रस्तुत याचिका को अनुमति दी जाए और उक्त मामले की कार्यवाही को भी रद्द कर दिया जाए।

22. प्रतिपक्षी संख्या-2 के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता ने रद्द करने के लिए प्रार्थनाओं का विरोध किया और प्रस्तुत किया कि आवेदकों का नाम शिकायत में है और उनके खिलाफ आरोप हैं। इस प्रकार प्रस्तुत याचिकाओं को खारिज किया जाए।

23. पक्षों के अधिवक्ताओं को सुनने और अभिलेखों देखने के बाद, यह स्पष्ट है कि प्रस्तुत मामले में विवाद पीयूष कौशल के पारू के साथ वैवाहिक संबंध में प्रवेश करने के बाद उत्पन्न हुआ है। संबंध में खटास आ गई और इस तरह 26.7.2019 को धारा 498ए, 377, 406, 506 भ०द०वि० और 3/4 डी.पी.सी. अधिनियम के तहत 05 आरोपियों के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज की गई। मामले में विवेचना पूरी हो गई और प्राथमिकी के निहितार्थ में 05 नामित अभियुक्तों में से दो अभियुक्त व्यक्तियों श्रीमती पूजा बाटला और रजत बाटला को झूठा पाया गया और उनके खिलाफ आरोप पत्र नहीं दायर किया गया और आगे आरोपी/पीयूष कौशल के खिलाफ धारा 377 भ०द०वि० के संबंध में लगाए गए आरोप भी झूठे पाए गए और इस प्रकार उन्हें इसके लिए दोषमुक्त कर दिया गया। इसके बाद तीन आरोपियों पीयूष कौशल (पति), श्रीमती उषा (सास) और सुरेंद्र कुमार (ससुर) के खिलाफ धारा 498 ए, 406, 506 भ०द०वि० और 3/4 डीपी अधिनियम के तहत आरोप पत्र दायर किया गया था। संबंधित न्यायालय ने दिनांक 19.12.2019 के अपने आदेश के माध्यम से इस पर संज्ञान लिया और आरोपी व्यक्तियों को तलब किया।

24. सम्मन आदेश के संबंध में पहलुओं को पहले लिया जा रहा है। दिनांक 19.12.2019 के आदेश का अवलोकन करने और आरोपी व्यक्तियों को तलब करने के लिए एक मुद्रित प्रोफार्मा पर पारित एक आदेश है जिसमें खाली स्थान हैं जो स्याही से भरे हुए थे। संबंधित न्यायालय द्वारा उक्त आदेश में कोई कारण नहीं दिया गया है जो आरोपी व्यक्तियों को तलब करने के आदेश को पारित करने को उचित ठहराएगा। सम्मन आदेश पूरी तरह से गैर-बोलने वाला आदेश है। मैसर्स पेप्सी फूड्स लिमिटेड और अन्य बनाम विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट और अन्य के मामलों में सर्वोच्च न्यायालय: (1998) 5 एस.सी.सी. 749, सुनील भारती मित्तल बनाम सीबीआई: (2015) 4 एस.सी.सी. 609, महमूद उल रहमान बनाम खजीर मोहम्मद टुंडा और अन्य: (2015) 12 एस.सी.सी. 420, कृष्ण लाल चावला और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य: (2015) 12 एस.सी.सी. 420, आईनॉक्स एयर प्रोडक्ट्स लिमिटेड जिसे अब आईनॉक्स एयर प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम आंध्र प्रदेश राज्य: 2025 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी.209, लालनकुमार सिंह और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य: (2022) एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी.1383, सचिन गर्ग बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य: 2024 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 82 और जेएम लेबोरेटरीज और अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य: 2025 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 208 में माना है कि एक आरोपी को बुलाने के लिए सम्मन का आदेश बोलने का आदेश होना चाहिए और संबंधित अदालत द्वारा कारण बताए जाने चाहिए क्योंकि इसके गंभीर परिणाम हो रहे हैं। यहां आईनॉक्स

ए.आई.आर. (उपरोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के प्रस्तर-33 से 40 का संदर्भ दिया गया है। यह इस प्रकार है:-

"33. उपरोक्त आदेश से यह देखा जा सकता है कि शिकायतकर्ता की प्रस्तुतियों को दर्ज करने के अलावा, आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ प्रक्रिया जारी करने के लिए कोई कारण दर्ज नहीं किया गया है।

34. इस संबंध में, पेप्सी फूड्स लिमिटेड (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा:

"28. एक आपराधिक मामले में एक आरोपी को बुलाना एक गंभीर मामला है। आपराधिक कानून को निश्चित रूप से गति में स्थापित नहीं किया जा सकता है। ऐसा नहीं है कि शिकायतकर्ता को आपराधिक कानून को लागू करने के लिए शिकायत में अपने आरोपों का समर्थन करने के लिए केवल दो गवाहों को लाना होगा। अभियुक्त को तलब करने वाले मजिस्ट्रेट के आदेश में यह प्रतिबिंबित होना चाहिए कि उसने मामले के तथ्यों और उस पर लागू कानून पर अपना दिमाग लगाया है। उसे शिकायत में लगाए गए आरोपों की प्रकृति और उसके समर्थन में मौखिक और दस्तावेजी दोनों सबूतों की जांच करनी होगी और क्या यह शिकायतकर्ता के लिए आरोपी को घर लाने में सफल होने के लिए पर्याप्त होगा। ऐसा नहीं है कि अभियुक्त को तलब करने से पहले प्रारंभिक साक्ष्य दर्ज करते समय मजिस्ट्रेट मूक दर्शक होता है। मजिस्ट्रेट को अभिलेखों पर लाए गए सबूतों की सावधानीपूर्वक जांच करनी होती है और यहां तक कि शिकायतकर्ता और उसके गवाहों से खुद भी सवाल पूछ सकता है ताकि आरोपों की सत्यता का पता लगाने के लिए जवाब मिल सके या अन्यथा और फिर जांच की जा सके कि क्या कोई अपराध प्रथम दृष्टया सभी या किसी भी आरोपी द्वारा किया गया है।

35. इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से माना है कि एक आपराधिक मामले में एक आरोपी को बुलाना एक गंभीर मामला है। यह माना गया है कि अभियुक्त को तलब करने वाले मजिस्ट्रेट के आदेश में यह प्रतिबिंबित होना चाहिए कि उसने मामले के तथ्यों और उस पर लागू कानून पर अपना दिमाग लगाया है। इस न्यायालय ने माना कि मजिस्ट्रेट को शिकायत में लगाए गए आरोपों की प्रकृति और उसके समर्थन में मौखिक और दस्तावेजी दोनों तरह के साक्ष्यों की जांच करने की आवश्यकता है और क्या यह अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त होगा। यह माना गया है कि अभियुक्त को तलब करने से पहले प्रारंभिक साक्ष्य दर्ज करते समय मजिस्ट्रेट मूकदर्शक नहीं है।

36. सुनील भारती मित्तल बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो, महमूद उल रहमान बनाम खजीर मोहम्मद टुंडा और अन्य और कृष्ण लाल चावला और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य के मामले सहित निर्णयों के एक कैटिना में इस न्यायालय द्वारा उक्त कानून का लगातार पालन किया जाएगा।

37. हाल ही में, इस न्यायालय की एक खंडपीठ, जिसके हम में से एक (गवर्ड) सदस्य थे, ललनकुमार सिंह (उपरोक्त) के मामले में इस प्रकार टिप्पणी की है:

"38. प्रक्रिया जारी करने का आदेश एक खाली औपचारिकता नहीं है। मजिस्ट्रेट को अपने दिमाग को लागू करने की आवश्यकता है कि मामले में कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार मौजूद है या नहीं। इस तरह की राय के गठन को आदेश में ही बताया जाना आवश्यक है। आदेश को रद्द किया जा सकता है यदि इस निष्कर्ष पर पहुंचने के दौरान कोई कारण नहीं दिया जाता है कि आरोपी के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आदेश में विस्तृत कारणों की आवश्यकता नहीं है। इस संबंध में सुनील भारती मितल बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो के मामले में इस न्यायालय के फैसले का संदर्भ दिया जा सकता है, जो इस प्रकार है:

51. दूसरी ओर, संहिता की धारा 204 प्रक्रिया के मुद्दे से संबंधित है, यदि मजिस्ट्रेट की राय में किसी अपराध का संज्ञान लेते हुए, कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है। यह धारा एक आपराधिक कार्यवाही शुरू करने से संबंधित है। यदि मजिस्ट्रेट किसी मामले का संज्ञान लेता है (यह शिकायत प्राप्त करने वाला मजिस्ट्रेट हो सकता है या जिसे धारा 192 के तहत स्थानांतरित किया गया है), तो उसके सामने मौजूद सामग्री (यानी शिकायत, शिकायतकर्ता और उसके गवाहों की जांच, यदि मौजूद है, या जांच की रिपोर्ट, यदि कोई हो) पर विचार करने पर यह सोचता है कि किसी अपराध के संबंध में कार्यवाही के लिए प्रथम दृष्टया मामला है, वह आरोपी के खिलाफ प्रक्रिया जारी करेगा।

52. प्रक्रिया को देने या अस्वीकार करने के बारे में एक व्यापक विवेकाधिकार दिया गया है और इसका न्यायिक प्रयोग किया जाना चाहिए। किसी व्यक्ति को केवल इसलिए अदालत में नहीं घसीटा जाना चाहिए क्योंकि शिकायत दर्ज की गई है। यदि प्रथम दृष्टया मामला सामने आया है, तो मजिस्ट्रेट को प्रक्रिया जारी करनी चाहिए और इसे केवल इसलिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि वह सोचता है कि इसके परिणामस्वरूप दोषसिद्धि होने की संभावना नहीं है।

25. इसके अलावा, जेएम लेबोरेटरीज (उपरोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नानुसार अवधारित किया गया है:

"8. एस.एल.पी. (क्रिल) संख्या-2345 वर्ष 2024 से उद्भूत आपराधिक अपील में सम तारीख के निर्णय और आदेश में, जिसका शीर्षक है "आईनॉक्स एयर प्रोडक्ट्स लिमिटेड आन्ध्र प्रदेश राज्य, जिसे अब आईनॉक्स एयर प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के नाम से जाना जाता है, मैं हमने इस प्रकार देखा है:

"33. उपरोक्त आदेश से यह देखा जा सकता है कि शिकायतकर्ता की प्रस्तुतियों को दर्ज करने के अलावा, आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ प्रक्रिया जारी करने के लिए कोई कारण दर्ज नहीं किया गया है।

34. इस संबंध में, पेप्सी फूड्स लिमिटेड बनाम विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट (1998) 5 एस.सी.सी. 749 (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा:

"28. एक आपराधिक मामले में एक आरोपी को बुलाना एक गंभीर मामला है। आपराधिक कानून को निश्चित रूप से गति में स्थापित नहीं किया जा सकता है। ऐसा नहीं है कि शिकायतकर्ता को आपराधिक कानून को लागू करने के लिए शिकायत में अपने आरोपों का समर्थन करने के लिए केवल दो गवाहों को लाना होगा। अभियुक्त को तलब करने वाले मजिस्ट्रेट के आदेश में यह प्रतिबिंबित होना चाहिए कि उसने मामले के तथ्यों और उस पर लागू कानून पर अपना दिमाग लगाया है। उसे शिकायत में लगाए गए आरोपों की प्रकृति और उसके समर्थन में मौखिक और दस्तावेजी दोनों सबूतों की जांच करनी होगी और क्या यह शिकायतकर्ता के लिए आरोपी को घर लाने में सफल होने के लिए पर्याप्त होगा। ऐसा नहीं है कि अभियुक्त को तलब करने से पहले प्रारंभिक साक्ष्य दर्ज करते समय मजिस्ट्रेट मूक दर्शक होता है। मजिस्ट्रेट को अभिलेखों पर लाए गए सबूतों की सावधानीपूर्वक जांच करनी होती है और यहां तक कि शिकायतकर्ता और उसके गवाहों से खुद भी सवाल पूछ सकता है ताकि आरोपों की सत्यता का पता लगाने के लिए जवाब मिल सके या अन्यथा और फिर जांच की जा सके कि क्या कोई अपराध प्रथम दृष्टया सभी या किसी भी आरोपी द्वारा किया गया है।

35. इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से माना है कि एक आपराधिक मामले में एक आरोपी को बुलाना एक गंभीर मामला है। यह माना गया है कि अभियुक्त को तलब करने वाले मजिस्ट्रेट के आदेश में यह प्रतिबिंबित होना चाहिए कि उसने मामले के तथ्यों और उस पर लागू कानून पर अपना दिमाग लगाया है। इस न्यायालय ने माना कि मजिस्ट्रेट को शिकायत में लगाए गए आरोपों की प्रकृति और उसके समर्थन में मौखिक और दस्तावेजी दोनों तरह के साक्ष्यों की जांच करने की आवश्यकता है और क्या यह अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त होगा। यह माना गया है कि अभियुक्त को तलब करने से पहले प्रारंभिक साक्ष्य दर्ज करते समय मजिस्ट्रेट मूकदर्शक नहीं है।

36. सुनील भारती मित्तल बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो (2015) 4 एस.सी.सी. 609, महमूद उल रहमान बनाम खजीर मोहम्मद टुंडा (2015) 12 एस.सी.सी. 420 और कृष्ण लाल चावला बनाम कृष्ण लाल चावला उत्तर प्रदेश राज्य (2021) 5 एस.सी.सी. 435 के मामलों सहित निर्णयों के एक कैटिना में इस न्यायालय द्वारा लगातार पालन किया जाएगा।

37. हाल ही में, इस न्यायालय की एक खंडपीठ, जिसमें हम में से एक (गवई) सदस्य थे, ललनकुमार सिंह बनाम महाराष्ट्र राज्य 2022 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 1383 (उपरोक्त) के मामले में इस प्रकार देखा गया है:

"38. प्रक्रिया जारी करने का आदेश कोई खाली औपचारिकता नहीं है। मजिस्ट्रेट को अपने दिमाग को लागू करने की आवश्यकता है कि मामले में कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार मौजूद है या नहीं। इस तरह की राय के गठन

को आदेश में ही बताया जाना आवश्यक है। आदेश को रद्द किया जा सकता है यदि इस निष्कर्ष पर पहुंचने के दौरान कोई कारण नहीं दिया जाता है कि आरोपी के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आदेश में विस्तृत कारणों की आवश्यकता नहीं है। इस संबंध में सुनील भारती मितल बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो के मामले में इस न्यायालय के फैसले का संदर्भ दिया जा सकता है, जो इस प्रकार है:

"51. दूसरी ओर, संहिता की धारा 204 प्रक्रिया के मुद्दे से संबंधित है, यदि मजिस्ट्रेट की राय में किसी अपराध का संज्ञान लेते हुए, कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है। यह धारा एक आपराधिक कार्यवाही शुरू करने से संबंधित है। यदि मजिस्ट्रेट किसी मामले का संज्ञान लेता है (यह शिकायत प्राप्त करने वाला मजिस्ट्रेट हो सकता है या जिसे धारा 192 के तहत स्थानांतरित किया गया है), तो उसके सामने मौजूद सामग्री (यानी शिकायत, शिकायतकर्ता और उसके गवाहों की जांच, यदि मौजूद है, या जांच की रिपोर्ट, यदि कोई हो) पर विचार करने पर यह सोचता है कि किसी अपराध के संबंध में कार्यवाही के लिए प्रथम दृष्टया मामला है, वह आरोपी के खिलाफ प्रक्रिया जारी करेगा।

52. प्रक्रिया को देने या अस्वीकार करने के बारे में एक व्यापक विवेकाधिकार दिया गया है और इसका न्यायिक प्रयोग किया जाना चाहिए। किसी व्यक्ति को केवल इसलिए अदालत में नहीं घसीटा जाना चाहिए क्योंकि शिकायत दर्ज की गई है। यदि प्रथम दृष्टया मामला सामने आया है, तो मजिस्ट्रेट को प्रक्रिया जारी करनी चाहिए और इसे केवल इसलिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि वह सोचता है कि इसके परिणामस्वरूप दोषसिद्धि होने की संभावना नहीं है।

53. हालांकि, धारा 204 में दिखाई देने वाले शब्द "कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार" अत्यधिक महत्व के हैं। ये वे शब्द हैं जो पर्याप्त रूप से सुझाव देते हैं कि एक राय केवल दिमाग के आवेदन के बाद ही बनाई जानी चाहिए कि उक्त अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है और इस तरह की राय का गठन आदेश में ही कहा जाना है। आदेश को रद्द किया जा सकता है यदि इस निष्कर्ष पर पहुंचने के दौरान कोई कारण नहीं दिया जाता है कि आरोपी के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला है, हालांकि आदेश में विस्तृत कारणों की आवश्यकता नहीं है। अगर दिया गया कारण गलत साबित होता है तो यह आदेश कानून की दृष्टि से गलत होगा।

39. इसी तरह का दृष्टिकोण इस न्यायालय द्वारा अशोक मल बाफना (उपरोक्त) के मामले में लिया गया है।

40. प्रस्तुत मामले में, प्रक्रिया जारी करने के आदेश के समर्थन में कोई कारण नहीं होने के अलावा, वास्तव में, उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के आदेश से यह स्पष्ट है कि ऐसा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था। अभिलेखों के आधार पर उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने यह मान लिया है कि प्रक्रिया जारी करने का आदेश था। हम पाते हैं कि इस तरह का दृष्टिकोण कानून में अस्थिर है। इसलिए अपील की अनुमति दी जानी चाहिए।

9. प्रस्तुत मामले में भी, विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा नाम के लिए भी कोई कारण नहीं बताया गया है। सम्मन आदेश पूरी तरह से गैर-भाषी है। इसलिए हम पाते हैं कि एस.एल.पी. (क्रिल) संख्या-2345 वर्ष 2024 से उद्भूत अपराधिक अपील में हमारे द्वारा लिए गए दृष्टिकोण के आलोक में, जिसका शीर्षक है "आईनॉक्स एयर प्रोडक्ट्स लिमिटेड जिसे अब आईनॉक्स एयर प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के नाम से जाना जाता है। आंध्र प्रदेश राज्य", और पेप्सी फूड्स लिमिटेड बनाम विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, (1998) 5 एस.सी.सी. 749, सुनील भारती मित्तल बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो (2015) 4 एस.सी.सी. 609, महमूद उल रहमान बनाम खजीर मोहम्मद टुंडा (2015) 12 एस.सी.सी. 420 और कृष्ण लाल चावला बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2021) 5 एस.सी.सी. 435, के प्रकाश में प्रस्तुत अपील की अनुमति दी जानी चाहिए।

26. इसके अलावा, मामले का दूसरा अंग प्राथमिकी पीयूष कौशल में नामित आरोपी व्यक्ति के खिलाफ आरोप के संबंध में है। यद्यपि वह पहले सूचनाकर्ता/प्रतिपक्षी संख्या-2 की बेटी का पति है, जिसके खिलाफ पीड़ित के साथ अप्राकृतिक यौन संबंध रखने के संबंध में विशिष्ट आरोप थे, लेकिन जांच के बाद उक्त आरोप झूठा पाया गया और इस तरह उसे धारा 377 भ०द०वि० के तहत अपराध के लिए दोषमुक्त कर दिया गया।

27. पति सहित सभी आरोपी व्यक्तियों के लिए मामले में अन्य आरोप सामान्य और सर्वव्यापी हैं। जहां तक प्राथमिकी में नामित अभियुक्तों में से 02 अर्थात् श्रीमती पूजा बाटला (नंद) और रजत बाटला (नंदोई) का संबंध है, मामले में उनका निहितार्थ झूठा पाया गया था और इस प्रकार जांच एजेंसी द्वारा उनके खिलाफ आरोप पत्र नहीं दायर किया गया था। इस प्रकार उनके लिए लगाए गए आरोप झूठे पाए गए। शेष 03 अभियुक्तों के खिलाफ आरोप अन्य दो गैर-आरोपित अभियुक्तों के समान ही हैं और सामान्य और सर्वव्यापी हैं। प्राथमिकी में नामजद 02 आरोपियों और पति के अलावा आरोप पत्र दाखिल किए गए हैं, उनमें पारू के ससुर सुरेंद्र कुमार और श्रीमती उषा शामिल हैं। यहां तक कि उनके संबंध में भी आरोप सामान्य और सर्वव्यापी हैं।

28. बार-बार, सर्वोच्च न्यायालय ने विचार किया है और माना है कि वैवाहिक विवादों में बयानों की अतिशयोक्ति है और पति के परिवार के सदस्य शामिल हैं और मामलों में आरोपी बनाए गए हैं और उन्हें सामान्य और सर्वव्यापी आरोप सौंपे गए हैं। संदर्भ के लिए, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विभिन्न मामलों में लिए गए दृष्टिकोण इस प्रकार हैं: -

A - कहकशां कौसर बनाम बिहार राज्य:(2022) 6 SCC 599

"मुद्दे शामिल

10. अपीलकर्ताओं और प्रतिवादियों द्वारा किए गए प्रासंगिक तथ्यों और तर्कों का अवलोकन करने के बाद, हमारी सुविचारित राय में, सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा जिसे प्रस्तुत मामले में निर्धारित करने की आवश्यकता है, वह यह है कि क्या अपीलकर्ता ससुराल वालों के खिलाफ लगाए गए आरोप सामान्य सर्वव्यापी आरोपों की प्रकृति में हैं और इसलिए उन्हें रद्द किया जा सकता है?

11. इससे पहले कि हम लगाए गए आरोपों की प्रकृति और सामग्री पर अधिक प्रदर्श से विचार करें, यह उल्लेख करना उचित हो जाता है कि धारा 498-एभ०द०वि० को शामिल करने का उद्देश्य एक महिला को उसके पति और उसके ससुराल वालों द्वारा राज्य के त्वरित हस्तक्षेप की सुविधा प्रदान करके उसके साथ की गई क्रूरता को रोकना था। हालांकि, यह भी उतना ही सच है, कि हाल के दिनों में, देश में वैवाहिक मुकदमेबाजी में भी काफी वृद्धि हुई है और विवाह की संस्था में अब अधिक असंतोष और घर्षण है, पहले से कहीं अधिक। इसके परिणामस्वरूप पति और उसके रिश्तेदारों के खिलाफ व्यक्तिगत हिसाब चुकाने के लिए धारा 498-एभ०द०वि० जैसे प्रावधानों को उपकरण के रूप में नियोजित करने की प्रवृत्ति बढ़ गई है।

12. इस न्यायालय ने राजेश शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [राजेश शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2018) 10 एस.सी.सी. 472: (2019)1 एस.सी.सी. (क्रि०)301] (एस.सी.सी. पीपी 478-79, प्रस्तर-14) में अपने फैसले में कहा है:

"14. धारा 498-ए को एक पत्नी के खिलाफ पति या उसके रिश्तेदारों के हाथों क्रूरता को दंडित करने के बोधगम्य उद्देश्य के साथ कानून में डाला गया था, खासकर जब इस तरह की क्रूरता के परिणामस्वरूप एक महिला की आत्महत्या या हत्या होने की संभावना थी, जैसा कि अधिनियम 46 वर्ष 1983 के उद्देश्यों और कारणों के कथन में उल्लिखित है। धारा 498-ए में "क्रूरता" अभिव्यक्ति में ऐसे आचरण को शामिल किया गया है जो महिला को आत्महत्या करने या गंभीर चोट (मानसिक या शारीरिक) या जीवन के लिए खतरा या उत्पीड़न का कारण बन सकता है। [धारा 498-ए का स्पष्टीकरण] यह गंभीर चिंता का विषय है कि विवाहित महिलाओं के उत्पीड़न के आरोप में धारा 498-ए के तहत बड़ी संख्या में मामले दर्ज किए जा रहे हैं। हम पहले ही अपराध अभिलेखों ब्यूरो के कुछ आंकड़ों का उल्लेख कर चुके हैं। इस न्यायालय ने पहले इस तथ्य पर ध्यान दिया था कि ऐसी अधिकांश शिकायतें छोटी-छोटी बातों पर ही दर्ज की जाती हैं। ऐसी कई शिकायतें वास्तविक नहीं हैं। शिकायत दर्ज करते समय, निहितार्थ और परिणामों की कल्पना नहीं की जाती है। कभी-कभी ऐसी शिकायतों से न केवल अभियुक्त बल्कि शिकायतकर्ता को भी अनावश्यक रूप से प्रताड़ित किया जाता है। बिना बुलाए गिरफ्तारी समझौते की संभावनाओं को बर्बाद कर सकती है।

13. इससे पहले, अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य [अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य, (2014)8 एस.सी.सी. 273: (2014) 3 एस.सी.सी. (क्रि०) 449] में इस न्यायालय के ऐतिहासिक फैसले में, यह भी देखा गया था: (एस.सी.सी. पी. 276, प्रस्तर-4)

"4. हाल के वर्षों में वैवाहिक विवादों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। इस देश में विवाह की संस्था को बहुत सम्मानित किया जाता है। धारा 498 ए भ०द०वि० को एक महिला के पति और उसके रिश्तेदारों के हाथों उत्पीड़न के खतरे से निपटने के उद्देश्य से पेश किया गया था। तथ्य यह है कि धारा 498-ए भ०द०वि० एक संज्ञेय और गैर-जमानती अपराध है, जिसने इसे उन प्रावधानों के बीच गर्व का एक संदिग्ध स्थान दिया है जो असंतुष्ट पत्नियाँ द्वारा ढाल के बजाय हथियार के रूप में उपयोग किए जाते हैं। परेशान करने का सबसे आसान तरीका है कि

पति और उसके रिश्तेदारों को इस प्रावधान के तहत गिरफ्तार किया जाए। कई मामलों में, दशकों से विदेश में रह रहे पतियों के बिस्तर पर पड़े दादा-दादी और उनकी बहनों तक को गिरफ्तार कर लिया जाता है।

14. इसके अलावा प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य [प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य, (2010) 7 एस.सी.सी. 667: (2010) 3 एस.सी.सी. (क्रि०) 473] में, यह भी देखा गया है: (एस.सी.सी. पीपी 676-77, प्रस्तर-32-36)

"32. यह सामान्य अनुभव का विषय है कि भ०द०वि० की धारा 498-ए के तहत इनमें से अधिकांश शिकायतें उचित विचार-विमर्श के बिना तुच्छ मुद्दों पर बहुत कम समय में दर्ज की जाती हैं। हमारे सामने बड़ी संख्या में ऐसी शिकायतें आती हैं जो वास्तविक भी नहीं हैं और तिरछी मंशा से दायर की जाती हैं। साथ ही, दहेज उत्पीड़न के वास्तविक मामलों की संख्या में तेजी से वृद्धि भी गंभीर चिंता का विषय है।

33. बार के विद्वान सदस्यों की यह सुनिश्चित करने की भारी सामाजिक जिम्मेदारी और दायित्व है कि पारिवारिक जीवन का सामाजिक ताने-बाना नष्ट या ध्वस्त न हो। उन्हें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आपराधिक शिकायतों में छोटी घटनाओं के अतिरंजित संस्करण परिलक्षित नहीं होने चाहिए। अधिकांश शिकायतें या तो उनकी सलाह पर या उनकी सहमति से दर्ज की जाती हैं। बार के विद्वान सदस्य, जो एक महान पेशे से संबंधित हैं, को अपनी महान परंपराओं को बनाए रखना चाहिए और धारा 498-ए के तहत प्रत्येक शिकायत को एक बुनियादी मानवीय समस्या के रूप में मानना चाहिए और उस मानवीय समस्या के सौहार्दपूर्ण समाधान तक पहुंचने में पक्षकारों की मदद करने के लिए गंभीर प्रयास करना चाहिए। उन्हें अपनी क्षमताओं के अनुसार अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि समाज का सामाजिक ताना, शांति और स्थिरता बनी रहे। बार के सदस्यों को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि एक शिकायत से कई मामले सामने न आए।

34. दुर्भाग्य से, शिकायत दर्ज करते समय निहितार्थ और परिणाम

(ख) शिकायतकर्ता द्वारा इस बात की उचित कल्पना नहीं की गई है कि ऐसी शिकायत से शिकायतकर्ता, अभियुक्त और उसके निकट संबंधियों को अपूरणीय उत्पीड़न, पीड़ा और पीड़ा हो सकती है।

35. न्याय का अंतिम उद्देश्य सत्य का पता लगाना और दोषियों को दंडित करना और निर्दोषों की रक्षा करना है। इनमें से अधिकांश शिकायतों में सच्चाई का पता लगाना एक कठिन कार्य है। पति और उसके सभी तात्कालिक संबंधों को फंसाने की प्रवृत्ति भी असामान्य नहीं है। कई बार आपराधिक मुकदमे के समापन के बाद भी वास्तविक सच्चाई का पता लगाना मुश्किल होता है। अदालतों को इन शिकायतों से निपटने में बेहद सावधान और सतर्क रहना होगा और वैवाहिक मामलों से निपटने के दौरान व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। पति के करीबी रिश्तेदारों के उत्पीड़न के आरोप जो अलग-अलग शहरों में रह रहे थे और कभी

उस स्थान पर नहीं गए या शायद ही कभी उस स्थान पर गए जहां शिकायतकर्ता रहता था, उसका रंग पूरी तरह से अलग होगा। शिकायत के आरोपों की बहुत सावधानी और सतर्कता से जांच करने की आवश्यकता है।

36. अनुभव से पता चलता है कि लंबे और लंबे आपराधिक मुकदमे पक्षों के बीच संबंधों में विद्वेष, कटुता और कड़वाहट पैदा करते हैं। यह भी सामान्य ज्ञान का विषय है कि शिकायतकर्ता द्वारा दायर मामलों में यदि पति या पति के रिश्तेदारों को कुछ दिनों के लिए भी जेल में रहना पड़ता है, तो यह एक सौहार्दपूर्ण समझौते की संभावना को पूरी तरह से बर्बाद कर देगा। दुख की प्रक्रिया बहुत लंबी और दर्दनाक होती है।

15. गीता मेहरोत्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [गीता मेहरोत्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2012)10 एस.सी.सी. 741: (2013)1 एस.सी.सी. (सीआईवी) 212: (2013)1 एस.सी.सी. (क्रि०) 120] (एस.सी.सी. पी. 749, प्रस्तर-21) में यह देखा गया था:

"21. इस स्तर पर जी.वी. राव बनाम एल.एच.वी. प्रसाद [जी.वी. राव बनाम एल.एच.वी. प्रसाद, (2000) 3 एस.सी.सी. 693: 2000 एस.सी.सी. (क्रि०) 733] में दर्ज इस न्यायालय की एक उपयुक्त टिप्पणी पर ध्यान देना प्रासंगिक होगा, जिसमें एक वैवाहिक विवाद में भी, इस न्यायालय ने माना था कि उच्च न्यायालय को वैवाहिक विवाद से उत्पन्न शिकायत को रद्द कर देना चाहिए था, जिसमें परिवार के सभी सदस्यों को वैवाहिक मुकदमे में शामिल किया गया था, जिसमें परिवार के सभी सदस्यों को वैवाहिक मुकदमे में शामिल किया गया था, जो रद्द कर दिया गया और अलग रख दिया गया। माननीय न्यायमूर्ति ने उसमें अवलोकन किया जिसके साथ हम पूरी तरह से सहमत हैं कि: (एस.सी.सी. पृष्ठ 698, प्रस्तर-12)

'12. ... हाल के दिनों में वैवाहिक विवाद का प्रकोप सामने आया है। विवाह एक पवित्र समारोह है, जिसका मुख्य उद्देश्य युवा जोड़े को जीवन में बसने और शांति से रहने में सक्षम बनाना है। लेकिन वैवाहिक संबंध में छोटी-छोटी झड़पें अचानक भड़क उठती हैं, जो अक्सर गंभीर रूप से होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप जघन्य अपराध होते हैं, जिसमें परिवार के बुजुर्ग भी शामिल होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप जो लोग परामर्श दे सकते थे और मेल-मिलाप कर सकते थे, वे आपराधिक मामले में आरोपी के रूप में पेश किए जाने पर असहाय हो जाते हैं। वैवाहिक मुकदमेबाजी को प्रोत्साहित नहीं करने के लिए कई अन्य कारण हैं जिनका यहां उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है ताकि पक्ष अपनी चूक पर विचार कर सकें और कानून की अदालत में लड़ने के बजाय आपसी समझौते से अपने विवादों को सौहार्दपूर्ण ढंग से समाप्त कर सकें, जहां इसे समाप्त करने में वर्षों लगते हैं और उस प्रक्रिया में पक्षगण अलग-अलग अदालतों में अपने मामलों की पैरवी करने में अपने "युवा" दिन खो देते हैं।

इस मामले में न्यायाधीशों द्वारा लिया गया विचार यह था कि अदालतें इस तरह के विवादों को प्रोत्साहित नहीं करेंगी।

16. हाल ही में, **के. सुब्बा राव बनाम तेलंगाना राज्य [के. सुब्बा राव बनाम तेलंगाना राज्य, (2018) 14 एस.सी.सी. 452: (2019) 1 एस.सी.सी. (क्रि०) 605]** में, यह भी देखा गया था कि: (एस.सी.सी. पी. 454, प्रस्तर-6)

"6. ... वैवाहिक विवादों और दहेज हत्या से संबंधित अपराधों में दूर के रिश्तेदारों के खिलाफ कार्रवाई में अदालतों को सावधानी बरतनी चाहिए। पति के रिश्तेदारों को आरोपों के आधार पर तब तक शामिल नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि अपराध में उनकी संलिप्तता के विशिष्ट उदाहरण सामने नहीं आ जाते।"

17. उपर्युक्त निर्णय स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करते हैं कि न्यायालय ने कई मामलों में धारा 498-ए भ०द०वि० के दुरुपयोग और शिकायतकर्ता के साथ-साथ आरोपी पर मुकदमे के दीर्घकालिक प्रभावों का विश्लेषण किए बिना, वैवाहिक विवादों में पति के रिश्तेदारों को फंसाने की बढ़ती प्रवृत्ति पर चिंता व्यक्त की है। उक्त निर्णयों से यह और स्पष्ट होता है कि वैवाहिक विवाद के दौरान लगाए गए सामान्य सर्वव्यापी आरोपों के माध्यम से झूठे निहितार्थ, यदि अनियंत्रित छोड़ दिए जाते हैं, तो इसके परिणामस्वरूप कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। इसलिए, इस न्यायालय ने अपने फैसलों के माध्यम से अदालतों को पति के रिश्तेदारों और ससुराल वालों के खिलाफ कार्रवाई करने की चेतावनी दी है, जब उनके खिलाफ प्रथम दृष्टया कोई मामला नहीं बनता है।

B. - पायल शर्मा बनाम पायल शर्मा पंजाब राज्य और अन्य: 2024 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 3473

"9. प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य: (2010) 7 एस.सी.सी. 667 में निर्णय में, इस न्यायालय ने कहा कि यह सामान्य ज्ञान का मामला है कि वैवाहिक विवादों में घटना के अतिरंजित संस्करण बड़ी संख्या में शिकायतों में परिलक्षित होते हैं और बड़ी संख्या में मामलों में अत्यधिक निहितार्थ की प्रवृत्ति भी परिलक्षित होती है। आपराधिक मुकदमे सभी संबंधितों के लिए भारी पीड़ा का कारण बनते हैं। मुकदमे में अंतिम रूप से बरी होने पर भी अपमान के गहरे निशान को मिटाने में सक्षम नहीं हो सकता है, आगे यह भी अवधारित किया गया था। हमें यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि इस न्यायालय की उक्त टिप्पणी वास्तव में, यह देखने के लिए कर्तव्य का निर्वहन न करने के खिलाफ एक चेतावनी की ओर इशारा करती है, यह देखने के लिए कि क्या किसी ऐसे व्यक्ति का निहितार्थ जो पति के परिवार का करीबी रिश्तेदार नहीं है, निहितार्थ से अधिक है या क्या इस प्रकृति के वैवाहिक विवादों में, ऐसे किसी व्यक्ति के खिलाफ आरोप एक अतिरंजित संस्करण है। इस संदर्भ में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि कानून में 'रिश्तेदार' शब्द को परिभाषित नहीं किया गया है और इसलिए, इसे एक अर्थ दिया जाना चाहिए जैसा कि आमतौर पर समझा जाता है। इसलिए, आम तौर पर, इसे किसी भी व्यक्ति के पिता, माता, पति या पत्नी, बेटा, बेटा, भाई, बहन, भतीजे, भतीजी, पोते या पोती या किसी भी व्यक्ति के पति या पत्नी को शामिल करने के लिए लिया जा सकता है। संक्षेप में कहें तो, इसमें रक्त, विवाह या गोद लेने से संबंधित व्यक्ति शामिल है। *प्रीति गुप्ता के मामले* (उपरोक्त) के प्रस्तर- 35 में यह भी कहा गया था:

“... अदालतों को इन शिकायतों से निपटने में बेहद सावधान और सतर्क रहना होगा और वैवाहिक मामलों से निपटने के दौरान व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। पति के करीबी रिश्तेदारों द्वारा उत्पीड़न के आरोप, जो अलग-अलग शहरों में रह रहे थे और कभी उस स्थान पर नहीं गए या शायद ही कभी उस स्थान पर गए जहां शिकायतकर्ता रहता था, जिसका रंग पूरी तरह से अलग होगा। शिकायतकर्ता के आरोपों की बहुत सावधानी और सतर्कता से जांच करने की आवश्यकता है।

10. ऐसी परिस्थितियों में, आम तौर पर एक ऐसे व्यक्ति के खिलाफ जो उपरोक्त श्रेणियों में से किसी के अंतर्गत नहीं आता है, जब आरोप लगाए जाते हैं, तो प्रीति गुप्ता के मामले (उपरोक्त) में की गई टिप्पणियों के आलोक में, संबंधित न्यायालय को यह देखने के लिए एक अपूरणीय कर्तव्य है कि क्या इस तरह का निहितार्थ निहितार्थ है और/या क्या ऐसे व्यक्ति के खिलाफ आरोप एक अतिरंजित संस्करण है। हम पहले ही इस तथ्य पर ध्यान दे चुके हैं कि प्रस्तर-7 में की गई टिप्पणी को छोड़कर, आक्षेपित आदेश में आरोपी संख्या-5 के तर्कों पर कोई विचार नहीं किया गया है।

11. **गीता मेहरोत्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य: (2012)10 एस.सी.सी. 741** में निर्णय में, इस न्यायालय ने माना कि मामले में सक्रिय भागीदारी के आरोप के बिना वैवाहिक विवाद में परिवार के सदस्यों के नामों का केवल आकस्मिक संदर्भ उनके खिलाफ संज्ञान लेने का औचित्य नहीं होगा, जिससे अधिक निहितार्थ की प्रवृत्ति की अनदेखी की जा सकती है, अर्थात्, घर के सभी सदस्यों को घरेलू झगड़े में आकर्षित करने के लिए जिसके परिणामस्वरूप वैवाहिक विवाद होता है, खासकर जब यह शादी के तुरंत बाद होता है। **कहकशां कौसर @ सोनम बनाम बिहार राज्य: (2022) 6 एस.सी.सी. 599** के फैसले में, इस न्यायालय ने पति के परिवार के सदस्यों के रूप में अब तक की कार्यवाही को इस आधार पर रद्द कर दिया कि उनके खिलाफ आरोप सामान्य और अशुभ प्रकृति के हैं। ऐसे मामलों में जब रिश्तेदार उसी घर में नहीं रहते हैं जहां कथित पीड़ित रहता है, तो अदालतें केवल उस प्रश्न को देखकर विचार करना बंद नहीं करेंगी जहां आरोपी धारा 498-ए भ०द०वि० के उद्देश्य के लिए 'रिश्तेदार' अभिव्यक्ति के दायरे में आने वाला व्यक्ति है, बल्कि यह भी विचार करना चाहिए कि क्या यह केवल ऐसे व्यक्ति (व्यक्तियों) को फंसाने के लिए की मुख्य आरोपी पर दबाव बनाएं, अतिरंजित या अतिरंजित संस्करण का मामला है। **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल: 1992 पूरक (1) एस.सी.सी. 335** में इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख करना भी प्रासंगिक है, जिसमें वैधानिक प्रावधानों और पहले के निर्णयों पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय ने मामलों की विभिन्न श्रेणियों का उल्लेख किया जहां धारा 482, द०प्र०स० के तहत अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग उच्च न्यायालय द्वारा न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जा सकता है। ऐसी श्रेणियों में से एक यह है कि प्राथमिकी या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं, जिसके आधार पर कोई भी विवेकपूर्ण व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है कि आरोपी के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है।

दारा लक्ष्मी नारायण और अन्य बनाम तेलंगाना राज्य और अन्य: 2024 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 3682:

"11. हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल, 1992 पूरक(1) एस.सी.सी. 335 ("भजन लाल") में, इस न्यायालय ने उन मापदंडों को तैयार किया जिनके तहत धारा 482 द०प्र०स० के तहत शक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है। हालांकि सभी मापदंडों पर फिर से विचार करना आवश्यक नहीं है, कुछ जो प्रस्तुत मामले के लिए प्रासंगिक हैं, उन्हें निम्नानुसार निर्धारित किया जा सकता है:

"102. अध्याय XIV के तहत संहिता के विभिन्न प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या और अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण शक्ति के प्रयोग से संबंधित निर्णयों की एक श्रृंखला में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून के सिद्धांतों की पृष्ठभूमि में या संहिता की धारा 482 के तहत अंतर्निहित शक्तियों जिसे हमने ऊपर निकाला और पुनः प्रस्तुत किया है, हम उदाहरण के माध्यम से मामलों की निम्नलिखित श्रेणियां देते हैं जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग या तो किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जा सकता है, हालांकि किसी भी सटीक, स्पष्ट रूप से परिभाषित और पर्याप्त रूप से चैनलाइज्ड और अनम्य दिशानिर्देशों या कठोर सूत्रों को निर्धारित करना और असंख्य प्रकार के मामलों की एक विस्तृत सूची देना संभव नहीं हो सकता है जिसमें ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(1) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया गया हो और पूरी तरह से स्वीकार किया गया हो, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं बनता है या अभियुक्त के खिलाफ मामला नहीं बनता है।

x x x x x x x x x

(7) जहां एक आपराधिक कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण रूप से भाग ली जाती है और/या जहां अभियुक्त से प्रतिशोध लेने के लिए एक गुप्त उद्देश्य के साथ दुर्भावनापूर्ण रूप से कार्यवाही शुरू की जाती है और निजी और व्यक्तिगत द्वेष के कारण उसे नाराज करने की दृष्टि से की जाती है।

12. प्रस्तुत मामले में, प्राथमिकी में आरोप धारा 498 ए भ०द०वि० और दहेज अधिनियम की धारा 3 और 4 के तहत हैं।

13. धारा 498ए भ०द०वि० पति या पति के रिश्तेदारों द्वारा पत्नी के प्रति क्रूरता के अधीन किए गए अपराधों से संबंधित है। उक्त प्रावधान इस प्रकार है:

"498क. किसी महिला के पति या पति का रिश्तेदार उसे क्रूरता के अधीन करना।- जो कोई भी, पति या पति का रिश्तेदार होने के नाते, ऐसी महिला को क्रूरता के अधीन करता है, उसे एक अवधि के लिए कारावास से दंडित किया जाएगा जिसे तीन साल तक बढ़ाया जा सकता है और जुर्माना भी लगाया जाएगा।

खुलासा- इस धारा के प्रयोजन के लिए, "क्रूरता" का अर्थ है-

(क) कोई भी जानबूझकर किया गया आचरण जो इस प्रकार का हो जिससे महिला को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित किया जा सके या महिला के जीवन, अंग या स्वास्थ्य (चाहे मानसिक या शारीरिक) को गंभीर चोट या खतरा होने की संभावना हो; नहीं तो

(ख) उस महिला का उत्पीड़न, जहां इस तरह का उत्पीड़न किसी संपत्ति या मूल्यवान सुरक्षा के लिए किसी भी गैरकानूनी मांग को पूरा करने के लिए उसे या उससे संबंधित किसी व्यक्ति को मजबूर करने के उद्देश्य से किया जाता है या ऐसी मांग को पूरा करने में उसके या उससे संबंधित किसी व्यक्ति द्वारा विफलता के कारण होता है।

14. इसके अलावा, दहेज अधिनियम की धारा 3 और 4 दहेज देने या लेने या मांगने के लिए दंड के बारे में बात करती है।

"3. दहेज देने या लेने के लिए दंड-

(1) यदि कोई व्यक्ति, इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात्, दहेज देने या लेने या लेने के लिए दुष्प्रेरण देता है या करता है, तो वह पांच वर्ष से कम नहीं होने वाली अवधि के कारावास से दंडनीय होगा और ऐसे जुर्माने से, जो पंद्रह हजार रुपए से कम नहीं होगा या ऐसे दहेज के मूल्य की राशि, जो भी अधिक हो।
परन्तु न्यायालय निर्णय में अभिलिखित किए जाने वाले पर्याप्त और विशेष कारणों के लिए पांच वर्ष से कम की अवधि के लिए कारावास की सजा दे सकेगा।

(2) उपधारा (1) में कुछ भी लागू नहीं होगा, या इसके संबंध में, -

(ए) उपहार जो दुल्हन को विवाह के समय दिए जाते हैं, बिना किसी मांग के उस संबंध में:

बशर्ते कि इस तरह के उपहारों को इस अधिनियम के तहत बनाए गए नियमों के अनुसार बनाए गए सूची में दर्ज किया जाता है;

(बी) उपहार जो दूल्हे को शादी के समय दिए जाते हैं, बिना किसी मांग के उस संबंध में:

बशर्ते कि इस तरह के उपहारों को इस अधिनियम के तहत बनाए गए नियमों के अनुसार रखी गई सूची में दर्ज किया जाता है:

बशर्ते कि जहां इस तरह के उपहार दुल्हन या दुल्हन से संबंधित किसी व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से किए जाते हैं, ऐसे उपहार एक प्रथागत प्रकृति के होते हैं और उस व्यक्ति की वित्तीय स्थिति को ध्यान में रखते हुए उसका मूल्य अत्यधिक नहीं होता है, जिसके द्वारा या जिसकी ओर से, ऐसे उपहार दिए जाते हैं।

4. दहेज मांगने के लिए दंड- यदि कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, माता-पिता या अन्य रिश्तेदारों या वर या वर के अभिभावक से, जैसा भी मामला हो, कोई दहेज मांगता है, तो वह उस अवधि के कारावास से

दंडनीय होगा जो छह महीने से कम नहीं होगा, लेकिन जिसे दो वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है और जुर्माने के साथ जो दस हजार रुपये तक बढ़ाया जा सकता है:

परन्तु न्यायालय निर्णय में उल्लिखित किए जाने वाले पर्याप्त और विशेष कारणों के लिए छह माह से कम अवधि के लिए कारावास की सजा दे सकेगा।

15. धारा 498 ए भ०द०वि० के तहत एक दंडनीय अपराध है जब एक पति या उसका रिश्तेदार एक महिला को क्रूरता के अधीन करता है, जिसके परिणामस्वरूप तीन साल तक की अवधि के लिए कारावास और जुर्माना हो सकता है। धारा 498ए भ०द०वि० के तहत स्पष्टीकरण धारा 498ए भ०द०वि० के उद्देश्य के लिए "क्रूरता" को परिभाषित करता है, जिसका अर्थ खंड (ए) या (बी) में उल्लिखित किसी भी कार्य से है। धारा 498ए भ०द०वि० की व्याख्या के खंड (ए) के पहले अंग में कहा गया है कि "क्रूरता" का अर्थ है कोई भी जानबूझकर किया गया आचरण जो इस तरह का है जो इस तरह का है जो महिला को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित करने की संभावना है। धारा 498ए भ०द०वि० के स्पष्टीकरण के खंड (ए) के दूसरे अंग में कहा गया है कि क्रूरता का अर्थ है कोई भी जानबूझकर किया गया आचरण जो इस तरह का है कि महिला के जीवन, अंग या स्वास्थ्य (चाहे मानसिक या शारीरिक) के लिए गंभीर चोट या खतरा पैदा करता है। इसके अलावा, धारा 498ए भ०द०वि० के स्पष्टीकरण के खंड (बी) में कहा गया है कि क्रूरता में महिला का उत्पीड़न भी शामिल होगा, जहां इस तरह का उत्पीड़न उसे या उससे संबंधित किसी भी व्यक्ति को किसी भी संपत्ति या मूल्यवान सुरक्षा के लिए किसी भी गैरकानूनी मांग को पूरा करने के लिए मजबूर करना है या ऐसी मांग को पूरा करने में उसके या उससे संबंधित किसी भी व्यक्ति द्वारा विफलता के कारण है।

16. इसके अलावा, दहेज अधिनियम की धारा 3 दहेज देने या लेने के लिए दंड से संबंधित है। इसमें कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति जो दहेज देने, लेने या विनिमय करने में लिप्त है, उसे कम से कम पांच साल की कैद की सजा और पंद्रह हजार रुपये का जुर्माना या दहेज का मूल्य, जो भी अधिक हो, का सामना करना पड़ेगा। दहेज अधिनियम की धारा 4 दहेज मांगने पर दंड की बात करती है। इसमें कहा गया है कि दूल्हा या दुल्हन के माता-पिता या अन्य रिश्तेदारों या अभिभावकों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दहेज की मांग करने वाले किसी भी व्यक्ति को उस अवधि के लिए कारावास की सजा दी जाएगी, जो छह महीने से कम नहीं होगी, लेकिन जिसे दो साल तक बढ़ाया जा सकता है और जुर्माने के साथ जो दस हजार रुपये तक बढ़ाया जा सकता है।

XXX XXX

25. वैवाहिक विवाद से उत्पन्न होने वाले आपराधिक मामले में परिवार के सदस्यों के नाम का केवल संदर्भ, बिना विशिष्ट आरोपों के उनकी सक्रिय भागीदारी को इंगित करते हुए शुरुआत में ही खत्म कर दिया जाना चाहिए। यह एक अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त तथ्य है, जो न्यायिक अनुभव से उत्पन्न होता है, कि अक्सर पति के परिवार के सभी सदस्यों को फंसाने की प्रवृत्ति होती है जब घरेलू विवाद वैवाहिक कलह से उत्पन्न होते हैं। ठोस सबूतों या विशेष आरोपों से असमर्थित इस तरह के सामान्यीकृत और व्यापक आरोप आपराधिक अभियोजन का आधार नहीं बन सकते हैं। अदालतों को ऐसे मामलों में सावधानी बरतनी चाहिए ताकि कानूनी

प्रावधानों और कानूनी प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोका जा सके और निर्दोष परिवार के सदस्यों के अनावश्यक उत्पीड़न से बचा जा सके। प्रस्तुत मामले में, अपीलकर्ता संख्या-2 से 6, जो अपीलकर्ता संख्या-1 के परिवार के सदस्य हैं, अलग-अलग शहरों में रह रहे हैं और अपीलकर्ता संख्या-1 और प्रतिवादी संख्या-2 के वैवाहिक घर में नहीं रहते हैं। इसलिए, उन्हें आपराधिक अभियोजन में नहीं घसीटा जा सकता है और यह उनमें से प्रत्येक के खिलाफ लगाए गए विशिष्ट आरोपों के अभाव में कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

XXX XXX

28. एक संशोधन के माध्यम से धारा 498ए भ०द०वि० को शामिल करने का उद्देश्य एक महिला को उसके पति और उसके परिवार द्वारा दी गई क्रूरता पर अंकुश लगाना था, जिससे राज्य द्वारा त्वरित हस्तक्षेप सुनिश्चित किया जा सके। हालांकि, हाल के वर्षों में, जैसा कि देश भर में वैवाहिक विवादों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, साथ ही विवाह की संस्था के भीतर बढ़ती कलह और तनाव भी बढ़ रहा है, परिणामस्वरूप, पत्नी द्वारा पति और उसके परिवार के खिलाफ व्यक्तिगत प्रतिशोध को बढ़ावा देने के लिए धारा 498ए भ०द०वि० जैसे प्रावधानों का दुरुपयोग करने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। वैवाहिक संघर्षों के दौरान अस्पष्ट और सामान्यीकृत आरोप लगाने से, यदि जांच नहीं की जाती है, तो कानूनी प्रक्रियाओं का दुरुपयोग होगा और पत्नी और/या उसके परिवार द्वारा प्रकरण को घुमाने की रणनीति के उपयोग के लिए प्रोत्साहन मिलेगा। कभी-कभी, पत्नी की अनुचित मांगों का अनुपालन करने के लिए पति और उसके परिवार के खिलाफ धारा 498ए भ०द०वि० लगाने का सहारा लिया जाता है। नतीजतन, इस न्यायालय ने बार-बार पति और उसके परिवार के खिलाफ स्पष्ट प्रथम दृष्टया मामले के अभाव में मुकदमा चलाने के खिलाफ चेतावनी दी है।

29. हम एक पल के लिए भी यह नहीं कह रहे हैं कि धारा 498ए भ०द०वि० के तहत जो कुछ भी माना गया है, उसके संदर्भ में क्रूरता का सामना करने वाली किसी भी महिला को चुप रहना चाहिए और शिकायत करने या कोई आपराधिक कार्यवाही शुरू करने से खुद को रोकना चाहिए। यह हमारी उपरोक्त टिप्पणियों का इरादा नहीं है, लेकिन हमें वर्तमान की तरह एक मामले को प्रोत्साहित नहीं करना चाहिए, जहां यहां दूसरे प्रतिवादी के पहले अपीलकर्ता-पति द्वारा मांगी गई शादी के विघटन के लिए याचिका के प्रतिवाद के रूप में, धारा 498ए भ०द०वि० के तहत शिकायत दर्ज की जाती है। वास्तव में, उक्त प्रावधान का सम्मिलन मुख्य रूप से एक महिला की सुरक्षा के लिए है, जो मुख्य रूप से दहेज के रूप में किसी भी संपत्ति या मूल्यवान सुरक्षा की गैरकानूनी मांग के कारण वैवाहिक घर में क्रूरता के अधीन है। हालांकि, कभी-कभी प्रस्तुत मामले की तरह इसका दुरुपयोग किया जाता है।

30. उपरोक्त संदर्भ में, इस न्यायालय ने **जी.वी. राव बनाम एल.एच.वी. प्रसाद, (2000) 3 एस.सी.सी. 693** में निम्नानुसार अवलोकन किया:

"12. हाल के दिनों में वैवाहिक विवादों का प्रकोप हुआ है। विवाह एक पवित्र समारोह है, जिसका मुख्य उद्देश्य युवा जोड़े को जीवन में बसने और शांति से रहने में सक्षम बनाना है। लेकिन वैवाहिक संबंध में छोटी-छोटी

झड़पें अचानक भड़क उठती हैं, जो अक्सर गंभीर रूप से होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप जघन्य अपराध होते हैं, जिसमें परिवार के बुजुर्ग भी शामिल होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप जो लोग परामर्श दे सकते थे और मेल-मिलाप कर सकते थे, वे आपराधिक मामले में आरोपी के रूप में पेश किए जाने पर असहाय हो जाते हैं। वैवाहिक मुकदमेबाजी को प्रोत्साहित नहीं करने के लिए कई अन्य कारण हैं जिनका यहां उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है ताकि पक्ष अपनी चूक पर विचार कर सकें और कानून की अदालत में लड़ने के बजाय आपसी समझौते से अपने विवादों को सौहार्दपूर्ण ढंग से समाप्त कर सकें, जहां इसे समाप्त करने में वर्षों और वर्षों लगते हैं और उस प्रक्रिया में पक्षगण अलग-अलग अदालतों में अपने "मामलों" की पैरवी करने में अपने "युवा" दिन खो देती हैं।

31. इसके अलावा **प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य, (2010)7 एस.सी.सी.667** में इस न्यायालय ने माना कि अदालतों को इन शिकायतों से निपटने में बेहद सावधान और सतर्क रहना होगा और वैवाहिक मामलों से निपटने के दौरान व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। पति के करीबी रिश्तेदारों द्वारा उत्पीड़न के आरोप, जो अलग-अलग शहरों में रह रहे थे और कभी उस स्थान पर नहीं गए या शायद ही कभी उस स्थान पर गए जहां शिकायतकर्ता रहता था, का रंग पूरी तरह से अलग होगा। शिकायतकर्ता के आरोपों की बहुत सावधानी और सतर्कता से जांच करने की आवश्यकता है।

29. **गेददाम झांसी बनाम तेलंगाना राज्य विशेष अनुमति याचिका (आपराधिक) संख्या-428 वर्ष 2024 का निर्णय 07.02.2025 : 2025 आईएनएस.सी. 160** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि विशिष्ट आरोपों और विश्वसनीय सामग्रियों के बिना क्रूरता, दहेज की मांग और घरेलू हिंसा के आपराधिक आरोपों के परिवारों के लिए विनाशकारी परिणाम हो सकते हैं। आगे यह माना गया कि जब पारिवारिक संबंधों को पारिवारिक बंधन को तोड़ने वाली आपराधिक कार्यवाही के दायरे में लाने की मांग की जाती है, तो अदालतों को सतर्क और विवेकपूर्ण होना चाहिए और आपराधिक प्रक्रिया को लागू करने की अनुमति केवल तभी देनी चाहिए जब सहायक सामग्री के साथ विशिष्ट आरोप हों जो स्पष्ट रूप से आपराधिक अपराध हैं। यह निम्नानुसार अवधारित किया गया है:

"31. आपराधिक प्रक्रिया को लागू करना एक गंभीर मामला है जिसमें दंडात्मक उपायों से जुड़े दंडात्मक परिणाम शामिल हैं, जिसकी अनुमति केवल तभी दी जा सकती है जब विशिष्ट कार्य जो दंड संहिता या किसी अन्य दंड कानून के तहत दंडनीय अपराधों का गठन करते हैं, अभियुक्त पर आरोप लगाए जाते हैं या जिम्मेदार ठहराए जाते हैं और प्रथम दृष्टया मामला बनता है। यह जब घरेलू विवादों में आपराधिक कानून लागू किए जाते हैं, समान बल के साथ लागू होता है। विशिष्ट आरोपों और विश्वसनीय सामग्रियों के बिना घरेलू विवादों को अपराध बनाने से परिवार की संस्था के लिए विनाशकारी परिणाम हो सकते हैं, जो प्यार, स्नेह, सौहार्द और आपसी विश्वास के आधार पर बनाया गया है। परिवार की संस्था मानव समाज के मूल का गठन करती है। घरेलू रिश्ते, जैसे कि परिवार के सदस्यों के बीच, गहराई से निहित सामाजिक मूल्यों और सांस्कृतिक अपेक्षाओं द्वारा निर्देशित होते हैं। इन रिश्तों को अक्सर पवित्र माना जाता है, जो अन्य सामाजिक या व्यावसायिक संघों की

तुलना में उच्च स्तर के सम्मान, प्रतिबद्धता और भावनात्मक निवेश की मांग करते हैं। उपरोक्त कारण से, पारिवारिक संबंधों के संरक्षण पर हमेशा जोर दिया गया है। इस प्रकार, जब पारिवारिक संबंधों को पारिवारिक बंधन को तोड़ने वाली आपराधिक कार्यवाही के दायरे में लाने की मांग की जाती है, तो अदालतों को सतर्क और विवेकपूर्ण होना चाहिए, और आपराधिक प्रक्रिया को लागू करने की अनुमति केवल तभी देनी चाहिए जब सहायक सामग्री के साथ विशिष्ट आरोप हों जो स्पष्ट रूप से आपराधिक अपराध का गठन करते हैं।

32. हमें यह ध्यान रखना होगा कि वैवाहिक विवादों के संदर्भ में, भावनाएं उच्च होती हैं, और इस तरह उत्पीड़न या घरेलू हिंसा का आरोप लगाते हुए दायर शिकायतों में, परिवार के अन्य सदस्यों को फंसाने की प्रवृत्ति हो सकती है जो शिकायतकर्ता के बचाव में नहीं आते हैं या उत्पीड़न की किसी भी कथित घटना के मूकदर्शक बने रहते हैं, जो हमारे विचार में अपने आप में एक आपराधिक कृत्य नहीं बन सकता है, जब तक कि उनके लिए विशिष्ट कार्य न हो। इसके अलावा, जब गुस्सा बढ़ जाता है और रिश्ते कड़वे हो जाते हैं, तो आरोपों को बढ़ा-चढ़ाकर पेश करने की प्रवृत्ति भी होती है, जिसका मतलब यह नहीं है कि ऐसे घरेलू विवादों को आपराधिकता का रंग दिया जाना चाहिए।

33. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि घरेलू क्षेत्र में क्रूरता और हिंसा के वास्तविक मामलों, जो होते हैं, उन्हें अत्यंत संवेदनशीलता के साथ निपटाया जाना चाहिए। घरेलू हिंसा आमतौर पर घर की चार दीवारों के भीतर होती है, न कि जनता की निगाहों में। इसलिए, इस तरह की हिंसा पर बड़े पैमाने पर जनता द्वारा ध्यान नहीं दिया जाता है, सिवाय शायद निकटतम पड़ोसियों द्वारा। इस प्रकार, घरेलू हिंसा के शिकार व्यक्ति द्वारा दृश्यमान साक्ष्य प्रदान करना आसानी से सामने नहीं आ सकता है और प्रत्यक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करना कठिन हो सकता है, जिसका मतलब यह नहीं है कि घरेलू हिंसा नहीं होती है। वास्तव में, इस घातक घटना से निपटने के लिए, घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम, 2005 जैसे कड़े कानूनों को बहुत व्यापक अर्थ और घरेलू हिंसा के दायरे के साथ अधिनियमित किया गया है। चूंकि, करीबी रिश्तेदारों द्वारा घरेलू क्षेत्र में की गई हिंसा को अब अपराध बना दिया गया है, जिसके अपराधियों पर गंभीर परिणाम होते हैं, इसलिए अदालतों को ऐसे मामलों से निपटने के दौरान यह जांचकर सावधान रहना होगा कि क्या अपराधियों के खिलाफ विशिष्ट आरोप हैं और सामान्यीकृत आरोप नहीं हैं। घरेलू हिंसा के पीड़ितों की रक्षा के लिए कानून का उद्देश्य और जनादेश सबसे महत्वपूर्ण है, और इस तरह, यह सुनिश्चित करके संतुलन बनाया जाना चाहिए कि अपराधियों को न्याय के दायरे में लाया जाता है, परिवार के सभी सदस्यों या रिश्तेदारों को अंधाधुंध तरीके से आपराधिक जाल में नहीं लाया जाता है।

34. एक वैवाहिक संबंध के लिए जो सौहार्द और विश्वास के आधार पर स्थापित किया जाता है, एक साथी को दूसरे साथी के खिलाफ घरेलू हिंसा और उत्पीड़न के आरोप लगाने के लिए एक हद तक खट्टा हो जाता है, आमतौर पर पल के साथ नहीं होता है और इस तरह के कटु संबंध केवल समय के साथ विकसित होंगे। तदनुसार, ऐसी स्थिति कृत्यों की एक श्रृंखला की परिणति होगी जो अन्यथा एक सौहार्दपूर्ण संबंध को एक खंडित रिश्ते में बदल देती है। इस प्रकार, घरेलू हिंसा या उत्पीड़न के आरोपों से जुड़े ऐसे मामलों में, आम

तौर पर अपमानजनक कृत्यों की एक श्रृंखला होती है, जिसे शिकायतकर्ता द्वारा अपराधियों के खिलाफ विशिष्ट शब्दों में स्पष्ट करने की आवश्यकता होती है ताकि ऐसे अपराधियों को उनके खिलाफ शुरू की जाने वाली आपराधिक कार्यवाही में शामिल किया जा सके। इस प्रकार, ऐसे अपराधियों के खिलाफ बारीकियों को इंगित किए बिना उत्पीड़न का सामान्य आरोप पर्याप्त नहीं होगा, जैसा कि प्रस्तुत अपीलकर्ताओं के संबंध में है।

35. इस प्रकार, हमारा विचार है कि घरेलू हिंसा से संबंधित आपराधिक मामलों में, शिकायतें और आरोप विशिष्ट होने चाहिए, जहां तक संभव हो, परिवार के प्रत्येक सदस्य के खिलाफ जो इस तरह के अपराधों के आरोपी हैं और उन पर मुकदमा चलाने की मांग की गई है, अन्यथा यह परिवार के सभी सदस्यों को अंधाधुंध घसीटकर कड़ी आपराधिक प्रक्रिया का दुरुपयोग करने के समान हो सकता है। ऐसी स्थितियां हो सकती हैं जहां परिवार के कुछ सदस्य या रिश्तेदार पीड़ित के साथ की गई हिंसा या उत्पीड़न से आंखें मूंद सकते हैं, और पीड़ित की मदद के लिए कोई हाथ नहीं बढ़ा सकते हैं, जिसका मतलब यह नहीं है कि वे घरेलू हिंसा के अपराधी भी हैं, जब तक कि परिस्थितियां स्पष्ट रूप से उनकी भागीदारी और उकसाने का संकेत न दें। इसलिए, ऐसे सभी रिश्तेदारों को विशिष्ट आरोप लगाए बिना और उन पर अपमानजनक कृत्यों को जिम्मेदार ठहराए बिना और प्रथम दृष्टया सबूत के बिना उनके खिलाफ कार्यवाही करना कि वे इसमें शामिल थे और घरेलू हिंसा के अपराधियों के साथ सक्रिय रूप से सहयोग किया था, कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

36. हालांकि, हमारी टिप्पणियों को यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि रिश्तेदारों को उपरोक्त दंडात्मक प्रावधानों के दायरे में नहीं लाया जा सकता है जब उन्होंने बहू/पीड़ित पर क्रूरता करने में सक्रिय रूप से भाग लिया हो। इस बात का आकलन करने की आवश्यकता है कि क्या इस तरह के आरोप वास्तविक हैं और परिवार के ऐसे सदस्यों को विशिष्ट आपराधिक भूमिका सौंपी गई है या क्या यह केवल एक वैवाहिक कलह और भावनात्मक रूप से परेशान व्यक्ति द्वारा लगाए गए आरोपों का एक दुष्प्रभाव है। इस प्रकार घरेलू हिंसा का प्रत्येक मामला प्रत्येक मामले में प्राप्त होने वाले अजीबोगरीब तथ्यों पर निर्भर करेगा।

30. उपरोक्त चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि सम्मन आदेश, पहली बार में, एक अनाआख्यापक आदेश है जो एक टाइप किए गए प्रोफार्मा पर है, जिसमें अंतराल को कलम से भर दिया गया है। संबंधित अदालत ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने का कोई कारण नहीं बताया है कि आरोपी व्यक्तियों को तलब करने की आवश्यकता है। धारा 377 भ०द०वि० के तहत अपराध के लिए आरोपी पीयूष कौशल के खिलाफ आरोप झूठे पाए गए हैं और उन्हें उक्त अपराध के लिए बरी कर दिया गया है। प्राथमिकी में नामजद दो सह-अभियुक्तों श्रीमती पूजा बाटला और रजत बाटला को उनके खिलाफ लगाए गए आरोपों से बरी कर दिया गया है। इस मामले में आरोप सामान्य और सर्वव्यापी हैं। प्राथमिकी में पति, उसके माता-पिता

और बहन और उसके पति को आरोपी बनाया गया था। प्राथमिकी को लगभग 05 महीने की देरी से दर्ज किया गया है।

31. यहां तक कि एक महत्वपूर्ण पहलू जो अभिलेखों से सामने आता है वह यह है कि पति (एक अभियुक्त) और पत्नी (पीड़ित) अच्छी तरह से शिक्षित और अच्छी तरह से पाले गए व्यक्ति हैं। उनके बीच विवाद प्रकृति में विशुद्ध रूप से वैवाहिक है। पीड़िता ने उसे किसी भी शारीरिक चोट के बारे में नहीं बताया है और न ही किसी भी शारीरिक चोट को दिखाने के लिए कोई दस्तावेज है। उन्होंने कई बार विदेश की यात्रा की है। यहां तक कि इस जोड़े ने एक साथ विभिन्न विदेशी स्थानों की यात्रा की है। इस प्रकार तथ्य उनके बीच अहंकार का टकराव प्रतीत होता है जो कम नहीं हो सका लेकिन लंबे समय तक चलता रहा, जिसके परिणामस्वरूप प्राथमिकी दर्ज की गई और यहां तक कि घरेलू हिंसा अधिनियम के तहत शिकायत भी दर्ज की गई।

32. मामले के तथ्यों, विवाद पर कानून, आरोपों की प्रकृति और प्राथमिकी के अनुसार आरोपी व्यक्तियों के संबंधों को देखते हुए, प्रस्तुत मामले उपयुक्त मामले हैं जिन्हें रद्द किया जाना चाहिए। इसलिए, आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन धारा 482 के तहत संख्या-4446 वर्ष 2020 और आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन के तहत 482 संख्या-2818 वर्ष 2020 की अनुमति दी जाती है और उसमें आवेदकों/आरोपियों के खिलाफ कार्यवाही को **खंडित/अपास्त** किया जाता है।

33. जहां तक घरेलू हिंसा से महिलाओं के संरक्षण अधिनियम के तहत कार्यवाही का संबंध है, इस मामले में आरोप कथित रूप से वर्ष 2018-2019 में हुई हिंसा के लिए हैं जो लगभग 02 वर्षों से अधिक की अवधि के बाद है। शिकायतकर्ता कई प्रार्थनाएं करती है जो "स्त्रीधन" की वापसी के लिए भी प्रार्थना करती है। शिकायत को पढ़ने से पता चलता है कि हालांकि शिकायतकर्ता पर उसके पति द्वारा हमला और पीटा गया था, लेकिन उसे किसी भी तरह की चोट दिखाने के लिए कोई सहायक दस्तावेज नहीं है। शिकायत में लगाए गए आरोप सामान्य और सर्वव्यापी हैं। पति, ससुर, सास, नंद और नंदोई इसमें प्रतिवादी हैं। आरोपों के अवलोकन से पता चलता है कि वैवाहिक विवाद हुआ है। यह तथ्य कि ये विवाह एक प्रेम विवाह था, विवादित नहीं है। तथ्य यह है कि शिकायतकर्ता एक अच्छी तरह से शिक्षित और योग्य व्यक्ति है जिसने अंतरराष्ट्रीय ख्याति की विभिन्न कंपनियों में काम किया है, यह भी विवाद के दायरे में नहीं है। आरोप सामान्य और प्रकृति में सर्वव्यापी होने के कारण यह दर्शाते हैं कि शिकायत केवल स्पष्ट कारणों से परिवार के सदस्यों की अधिकतम संख्या को फंसाने के इरादे से दर्ज की गई है। इस प्रकार आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन धारा 482 के तहत संख्या-18261 वर्ष 2022 और आपराधिक प्रकीर्ण आवेदन यू/एस 482 संख्या-36143 वर्ष 2022 को भी अनुमति दी जानी चाहिए और आवेदकों के खिलाफ उसमें की गई कार्यवाही को रद्द किया जाना चाहिए, जैसा कि प्रार्थना की गई है। इस प्रकार, उक्त दो याचिकाओं को भी **अनुमति** दी जाती है और उनमें आवेदकों के खिलाफ कार्यवाही को भी **रद्द/खंडित** कर दिया जाता है।

(2025) 2 ILRA 131

आरंभिक अधिकारिता

आपराधिक पक्ष

दिनांक: लखनऊ 21.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष चंद्र शर्मा,
आवेदन अंतर्गत धारा 482 संख्या 2882 वर्ष 2016

प्रदीप कुमार मौर्य और अन्य

...आवेदकगण

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

...प्रतिपक्षीगण

आवेदकों के लिए अधिवक्ता:

विनोद कुमार शाही, अभिषेक श्रीवास्तव, बाल केशवर श्रीवास्तव, संजीव कुमार मिश्रा

प्रतिपक्षियों के लिए अधिवक्ता:

शासकीय अधिवक्ता, ओसामा अजीज (स्वयं उपस्थित)

आपराधिक कानून - भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 12, 14, 21 और 39-ए - निष्पक्ष अन्वेषण - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 169, 170 और 173(2) - मुद्दा: क्या कोई वरिष्ठ पुलिस अधिकारी आरोप पत्र या अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के निर्देश जारी कर सकता है? - धारा 36 दंड प्रक्रिया संहिता - वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों की शक्तियां: किसी भी वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी से अन्वेषण अपने हाथ में लेने की अनुमति है, चाहे वह स्वतः संज्ञान से हो या किसी वरिष्ठ अधिकारी के निर्देश पर, जिसमें सरकार का अधिकारी भी शामिल है। यदि कोई वरिष्ठ पुलिस अधिकारी स्वयं मामले का अन्वेषण करता है, तो वह आरोप पत्र या अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के लिए अंतिम राय बना सकता है। हालांकि, पर्यवेक्षी प्राधिकारी के रूप में शक्तियों का प्रयोग करते समय, वह इस संबंध में कोई राय नहीं बना सकता - यह पूरी तरह से अन्वेषण अधिकारी/पुलिस स्टेशन के प्रभारी के क्षेत्राधिकार में आता है। पर्यवेक्षी प्राधिकार का प्रयोग करते समय, यदि वरिष्ठ अधिकारी को अन्वेषण में कोई खामी या त्रुटि प्रतीत होती है, तो वह ऐसी खामियों और त्रुटियों को इंगित कर सकता है और अन्वेषण अधिकारी को उन बिंदुओं पर अग्रतर अन्वेषण करने और फिर राय बनाने का निर्देश दे सकता है। लेकिन वह न तो आरोप पत्र भेजने और न ही अंतिम रिपोर्ट भेजने के संबंध में अपनी राय बना सकता है, और न ही उसके द्वारा ऐसा कोई निर्देश दिया जा सकता है। यदि पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी की राय है, और वह इस आशय की अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करता है कि अभियुक्त को परीक्षण के लिए भेजने का कोई मामला नहीं बनता है, तो किसी अन्य प्राधिकारी के पास उसे अपनी राय

बदलने और मजिस्ट्रेट को आरोप पत्र दाखिल करने/प्रस्तुत करने का निर्देश देने की शक्ति नहीं है। कोई भी प्राधिकारी अन्वेषण अधिकारी को न तो आरोप पत्र दाखिल करने और न ही अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश दे सकता है। संहिता के अंतर्गत पुलिस के किसी भी पर्यवेक्षक प्राधिकारी को अन्वेषण अधिकारी को आरोप पत्र या अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश देने की कोई शक्ति, अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से, नहीं दी गई है, न ही वह इस संबंध में अपनी राय बना सकता है और तदनुसार अन्वेषण अधिकारी को निर्देश दे सकता है। (प्रस्तर 19, 21, 23, 24)

आपराधिक कानून - इस मामले में आवेदकों के विरुद्ध प्र.सू.रि. दर्ज की गई थी। अन्वेषण अधिकारी ने अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस बीच, अन्वेषण को सी.बी.सी.आई.डी. एस.पी., सी.बी.सी.आई.डी. को स्थानांतरित कर दिया गया, जिसने अंतिम रिपोर्ट रद्द कर दी और आरोप पत्र दाखिल करने का निर्देश दिया। इसके बाद, आरोप पत्र दाखिल किया गया, जिस पर संज्ञान लिया गया। संज्ञान के आदेश और आरोप पत्र को चुनौती दी गई। *अभिनिर्धारित हुआ:* अन्वेषण अधिकारी द्वारा पर्यवेक्षी प्राधिकारी, अर्थात् पुलिस अधीक्षक द्वारा पारित अवैध आदेश के अनुपालन में दायर किए गए आरोप पत्र को वैध नहीं माना जा सकता। आवेदन स्वीकार किया गया और आरोप पत्र के साथ-साथ मामले की पूरी कार्यवाही रद्द कर दी गई। (प्रस्तर 24)

स्वीकार किया गया। (ई-5)

उद्धृत मामलों की सूची:

1. बिहार बनाम जे.ए.सी. सल्दान्हा..(1980) 1 सुप्रीम कोर्ट केसेज 544
2. अभिनंदन झा बनाम दिनेश मिश्रा एआईआर 1968, सुप्रीम कोर्ट 117
3. मुथाराजू सत्यनारायण बनाम आंध्र प्रदेश सरकार और अन्य, 1997, क्रिमिनल लॉ जर्नल 3741 आंध्र प्रदेश
4. सत्यवानी पोन्नरानी बनाम सैमुअल राज, 2010 (4) सीटीसी 833
5. निर्मल सिंह कोहलोन बनाम पंजाब राज्य (2009) 1 एससीसी 441
6. सुब्रमण्यम स्वामी बनाम सीबीआई, (2014) 8 सुप्रीम कोर्ट केसेज 682
7. एच.एन. ऋषबुद बनाम दिल्ली राज्य 1955 क्रिमिनल लॉ जर्नल 526
8. मुथाराजू सत्यनारायण बनाम आंध्र प्रदेश सरकार और अन्य 1997 क्रिमिनल लॉ जर्नल 3741

(माननीय न्यायमूर्ति सुभाष चंद्र शर्मा द्वारा प्रदत्त)

1. वादसूची पुनरावलोकित की गई, प्रतिपक्षी संख्या 2 की ओर से पुनर्पुकार पर भी कोई उपस्थित नहीं हुआ, हालांकि नोटिस विधिवत रूप से तामील किया जा चुका था।

2. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता श्री बाल केशवर श्रीवास्तव और विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता श्री राजेश कुमार सिंह को सुना और अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन किया।

3. आवेदकों द्वारा यह आवेदन अपराध संख्या 419 वर्ष 2010 से उत्पन्न आक्षेपित आरोप पत्र, सम्बंधित संख्या 17 वर्ष 2011 और 17-ए वर्ष 2011, दिनांक 27.08.2011, अंतर्गत धारा 147, 323, 504, 353 भारतीय दंड संहिता, पुलिस स्टेशन वजीरगंज, जिला लखनऊ को रद्द करने की प्रार्थना के साथ दायर किया गया है, जो विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट, लखनऊ के न्यायालय में लंबित रहा और बाद में सिविल जज (जूनियर डिवीजन) साउथ, लखनऊ के न्यायालय में स्थानांतरित कर दिया गया (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मोहम्मद ऐराज सिद्दीकी और अन्य)।

4. संक्षेप में तथ्य यह हैं कि आवेदक संख्या 2 मोहम्मद ऐराज सिद्दीकी ने वर्तमान मामले में सूचक के बेटे के विरुद्ध अपराध संख्या 24 वर्ष 2009, अंतर्गत धारा 147, 323, 336, 504, 506 भा.दं.सं. के रूप में प्र.सू.रि. दर्ज कराई थी। उस मामले में, वह मजिस्ट्रेट के न्यायालय में पेश हुआ और जमानत याचिका दायर की, जिसे स्वीकार कर लिया गया। जब वह न्यायिक अभिरक्षा में था, तब वर्तमान मामले के आवेदकगण ऐराज सिद्दीकी, उसके पिता जमरुद्दीन और कुछ अन्य अधिवक्ता वहां पहुंचे और उससे गाली-गलौज करने लगे और लातों, घूसे और डंडे से उस पर हमला किया, जिससे उसे चोटें आईं। जब वह बचाने आई तो उसे भी पीटा गया, जिसके संबंध में आवेदकों के विरुद्ध अपराध संख्या 359 वर्ष 2010, अंतर्गत धारा 147, 323, 504, 427, 307, 308 भा.दं.सं. के रूप में वर्तमान प्र.सू.रि. दर्ज की गई। अन्वेषण के दौरान, अन्वेषण अधिकारी ने घटनास्थल का निरीक्षण किया और साक्षियों के अभिकथनों को दर्ज किया और साक्ष्यों के अभाव में अंतिम रिपोर्ट संख्या 201 वर्ष 2010 प्रस्तुत की। इस बीच, अन्वेषण को सी.बी.सी.आई.डी. को स्थानांतरित कर दिया गया और सेक्टर अधिकारी सी.आई.एस.आई. के आदेश संख्या सी.आई.एस.-1(मिस)10 दिनांक 26.11.2010 के अंतर्गत निरीक्षक सी.बी.सी.आई.डी. ने इसे अपने हाथ में ले लिया। पुलिस अधीक्षक, सी.बी.सी.आई.डी. ने स्थानीय पुलिस द्वारा 06.06.2011 को प्रस्तुत अंतिम रिपोर्ट को रद्द कर दिया और पत्र संख्या सी.बी. 447/10 दिनांक 06 जून 2011 को यह उल्लेख करते हुए पत्र भेजा कि उन्होंने स्थानीय पुलिस द्वारा दिनांक 08.09.2010 को प्रस्तुत अंतिम रिपोर्ट संख्या 201/10 को रद्द कर दिया है और इसे न्यायालय में आरोप पत्र दाखिल करने और फिर मुख्यालय में अनुपालन रिपोर्ट प्रस्तुत करने के निर्देश के साथ वापस भेज दिया है। इसके बाद, सी.बी.सी.आई.डी. द्वारा वर्तमान मामले में भारतीय दंड संहिता की धारा 147, 323, 504, 353 के अंतर्गत आवेदकों के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया गया, जिस पर संबंधित विद्वान न्यायालय ने संज्ञान लिया। संज्ञान लेने के आदेश और आरोप पत्र से असंतुष्ट होकर यह आवेदन इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था।

5. आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया है कि इस मामले में अन्वेषण अधिकारी द्वारा अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद उसे संबंधित क्षेत्राधिकार प्राप्त न्यायालय को भेजा जाना चाहिए था, लेकिन अंतिम रिपोर्ट रद्द करने के बाद पुलिस अधीक्षक को अन्वेषण अधिकारी को आरोप पत्र दाखिल करने का निर्देश

देने का कोई प्राधिकार नहीं है। इस संबंध में उनके पास कोई शक्ति नहीं है। वे केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(8) के अंतर्गत आगे के अन्वेषण का निर्देश दे सकते हैं। अन्वेषण के दौरान एकत्रित सामग्री के आधार पर मामले में आरोप पत्र या अंतिम रिपोर्ट दाखिल की जानी है या नहीं, इस संबंध में अंतिम राय बनाने का प्राधिकारी, अन्वेषण अधिकारी है। ऐसी अंतिम राय अन्वेषण अधिकारी/पुलिस स्टेशन प्रभारी अधिकारी के अलावा किसी अन्य वरिष्ठ अधिकारी द्वारा नहीं बनाई जा सकती है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 36 के अनुसार, कोई भी वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, पुलिस स्टेशन प्रभारी अधिकारी की शक्तियों का प्रयोग कर सकता है और उस क्षमता में मामले का अन्वेषण कर सकता है और फिर वह आरोप पत्र या अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के संबंध में अंतिम राय बना सकता है, लेकिन पर्यवेक्षी अधिकारी होने के नाते उन्हें ऐसा कोई अधिकार नहीं है। वह केवल अन्वेषण अधिकारी द्वारा की गई कमियों को इंगित कर सकता है और उसे उस दिशा में आगे अन्वेषण करने का निर्देश दे सकता है, जिसके बाद वह राय बनाकर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अंतर्गत आवश्यक पुलिस रिपोर्ट दाखिल करे। इस प्रकार, पुलिस अधीक्षक द्वारा दिनांक 06.06.2011 को पारित आदेश, जिसके द्वारा उन्होंने अन्वेषण अधिकारी को अभियुक्तों के विरुद्ध न्यायालय में आरोप पत्र दाखिल करने और मुख्यालय में अनुपालन रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निर्देश दिया है, वैध नहीं कहा जा सकता। जब पर्यवेक्षी प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश अवैध है, तो उसके अनुपालन में दाखिल किया गया आरोप पत्र भी अवैध होगा। यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित निष्पक्ष अन्वेषण के सिद्धांतों के विरुद्ध है, अतः आरोप पत्र और मामले की संपूर्ण कार्यवाही को रद्द करने का अनुरोध है। उन्होंने अपने तर्कों के लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बिहार राज्य बनाम जे.ए.सी. साल्डनहा (1980) 1 सुप्रीम कोर्ट केसेज 544; अभिनंदन झा बनाम दिनेश मिश्रा, एआईआर 1968 सुप्रीम कोर्ट 117; और मुथाराजू सत्यनारायण बनाम आंध्र प्रदेश सरकार और अन्य, 1997 क्रिमिनल लॉ जर्नेल 3741, आंध्र प्रदेश के मामले में दिए गए कानून पर भरोसा किया है।

6. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने हालांकि आरोप पत्र रद्द करने की प्रार्थना का विरोध किया, लेकिन वे इस तथ्य को अस्वीकार नहीं कर सके कि पुलिस अधीक्षक ने 6 जून 2011 को अन्तिम रिपोर्ट रद्द कर दिया था और ए.एस.पी./सेक्टर अधिकारी को पत्र दिनांकित 06.06.2011 के माध्यम से आरोप पत्र दाखिल करने का निर्देश दिया था और उसके अनुपालन में अन्वेषण अधिकारी, सी.बी.सी.आई.डी. द्वारा आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया। वह सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उपरोक्त मामलों में निर्धारित कानूनी स्थिति पर भी विवाद नहीं कर सके।

7. इससे जो मुख्य प्रश्न उभरता है वह यह है कि क्या पुलिस अधीक्षक अंतिम रिपोर्ट रद्द करने के बाद अन्वेषण अधिकारी को आरोप पत्र प्रस्तुत करने का निर्देश दे सकते हैं और पुलिस अधीक्षक द्वारा पारित उपरोक्त आदेश के अनुपालन में प्रस्तुत आरोप पत्र को वैध माना जा सकता है।

8. यह सुस्थापित है कि निष्पक्षता भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 का एक महत्वपूर्ण पहलू है। आपराधिक अन्वेषण में भी इस प्रकार की निष्पक्षता का पालन करना अनिवार्य है। निष्पक्ष अन्वेषण का अधिकार

न केवल संवैधानिक अधिकार है बल्कि एक प्राकृतिक अधिकार भी है। सत्यवानी पोन्नरानी बनाम सैमुअल राज, 2010 (4) सीटीसी 833 मामले में, निष्पक्ष अन्वेषण से संबंधित मामले पर विचार करते हुए, मद्रास उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 21 और 39 के अंतर्गत अनिवार्य है। निम्नलिखित प्रस्तर प्रासंगिक होगा:

66. निष्पक्ष और स्वतंत्र अन्वेषण एवं परीक्षण का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 21 और 39-ए में निहित है। यह राज्य का कर्तव्य है कि वह यह सुनिश्चित करे कि देश के प्रत्येक नागरिक को निष्पक्ष और स्वतंत्र अन्वेषण एवं परीक्षण का अधिकार प्राप्त हो। प्रस्तावना और संविधान बाध्यकारी हैं, वैकल्पिक नहीं, क्योंकि न्याय तक स्वतंत्र पहुंच समानता के मूल अधिकार का अभिन्न अंग है, जिसे हमारे संविधान की मूलभूत विशेषता माना जाता है। अतः यह अधिकार संवैधानिक अधिकार होने के साथ-साथ मौलिक अधिकार भी है। यह अधिकार केवल अभियुक्त तक ही सीमित नहीं है, बल्कि मामले की परिस्थितियों के आधार पर पीड़ित को भी दिया जा सकता है। अतः यह अधिकार न केवल संवैधानिक अधिकार है, बल्कि मानवाधिकार भी है। कोई भी प्रक्रिया जो किसी पक्ष को निष्पक्ष परीक्षण प्राप्त करने से रोकती है, संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगी।

9. निर्मल सिंह कोहलोन बनाम पंजाब राज्य (2009) 1 एससीसी 441 में, सर्वोच्च न्यायालय ने आगे यह संप्रेक्षित किया है कि:-

“28. अभियुक्त को निष्पक्ष अन्वेषण का अधिकार है। निष्पक्ष अन्वेषण और निष्पक्ष परीक्षण भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत अभियुक्त के मौलिक अधिकार के परिरक्षण के लिए अनोन्याश्रित हैं।”

10. सुब्रमण्यम स्वामी बनाम सीबीआई (2014) 8 सुप्रीम कोर्ट केसेज 682 में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय सुनाया है कि किसी भी अपराध का अन्वेषण निष्पक्ष होना चाहिए और उसमें किसी प्रकार का पूर्वाग्रह नहीं होना चाहिए। साथ ही, यह भी कहा गया है कि विधि का शासन भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत समानता का एक पहलू है।

11. वर्तमान मामले में स्थानीय पुलिस ने अन्वेषण के बाद अंतिम रिपोर्ट संख्या 201 वर्ष 2010, दिनांक 8.9.2010 प्रस्तुत की। इस बीच, अन्वेषण को सी.बी.सी.आई.डी. को स्थानांतरित कर दिया गया और उसने अन्वेषण का प्रभार ले लिया। दिनांक 6.6.2011 को पुलिस अधीक्षक, सी.बी.सी.आई.डी. ने दिनांक 8.9.2010 की अंतिम रिपोर्ट संख्या 201 वर्ष 2010 को रद्द कर दिया और सेक्टर अधिकारी सी.बी.सी.आई.डी. को निर्देश दिया कि वे अतिशीघ्र न्यायालय में आरोप पत्र दाखिल करें और मुख्यालय को अनुपालन रिपोर्ट प्रस्तुत करें। इसके अनुपालन में आवेदकों के विरुद्ध न्यायालय में आरोप पत्र दाखिल किया गया और संज्ञान लिया गया।

12. पुलिस अधीक्षक, सी.बी.सी.आई.डी. द्वारा दिनांक 6.6.2011 को लिखा गया पत्र निम्नलिखित है:

“गोपनीय/अवश्यक

श्री कृपाशंकर सिंह

अपर पुलिस अधीक्षक/खण्डाधिकारी

अपराध शाखा, अपराध अनुसंधान विभाग

खण्ड- सीआईएस -प्रथम।

कृपया अपने समसंख्यक पत्र दिनांक 06-06-2011 का अवलोकन करने का कष्ट करें, जिसके द्वारा प्रश्नगत प्रकरण में स्थानीय पुलिस द्वारा निर्गत अन्तिम रिपोर्ट संख्या-201/10 दिनांक 8-9-10 को निरस्त किये जाने का अनुरोध किया गया है।

उक्त संदर्भ में अवगत कराना है कि स्थानीय पुलिस द्वारा निर्गत अन्तिम रिपोर्ट संख्या-201/10 दिनांक 8-9-10 मेरे द्वारा निरस्त कर दी गयी है, जिसे मूलरूप में वापस इस पत्र के साथ संलग्न कर भेजी जा रही है, तथा निर्देशित किया जाता है कि अभियुक्तों के विरुद्ध शीघ्रताशीघ्र आरोप पत्र माननीय न्यायालय में प्रेषित कर अनुपालन आख्या मुख्यालय उपलब्ध कराना सुनिश्चित करें।
संलग्नक:- उपरोक्तानुसार

ह0 अपठनीय

(प्रकाश त्रिपाठी)

पुलिस अधीक्षक

अपराध शाखा, अपराध अनु० विभाग,

उ०प्र०, लखनऊ।

पत्र संख्या:- सी बी -447/10

दिनांक- लखनऊ जून 6, 2011"

13. संहिता का अध्याय 12 पुलिस को सूचना देने और मामले का अन्वेषण करने के उनकी शक्तियों से संबंधित है। अन्वेषण पूर्ण होने पर धारा 169 में प्रावधान है कि यदि पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को अन्वेषण के बाद यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के पास भेजने के लिए पर्याप्त साक्ष्य या संदेह का कोई उचित आधार नहीं है, और अभियुक्त अभिरक्षा में है, तो वह उसे जमानत सहित या बिना जमानत के बंधपत्र भरवाने पर रिहा कर देगा या उसे मामले का संज्ञान लेने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश होने का निर्देश देगा। धारा 172 में कहा गया है कि इस अध्याय के अंतर्गत अन्वेषण करने वाला प्रत्येक पुलिस अधिकारी अपनी अन्वेषण की कार्यवाही को प्रतिदिन डायरी में दर्ज करेगा। धारा 173(2) में प्रावधान है कि अन्वेषण पूरी होते ही, पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी राज्य सरकार द्वारा निर्धारित प्रारूप में एक रिपोर्ट, पुलिस रिपोर्ट पर अपराध का संज्ञान लेने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट को भेजेगा। धारा 173(3) में यह प्रावधान है कि जहां धारा 158 के अधीन किसी वरिष्ठ पुलिस अधिकारी की नियुक्ति की गई है, वहां राज्य सरकार द्वारा सामान्य या विशेष आदेश द्वारा निर्देशित किसी भी मामले में रिपोर्ट उस अधिकारी के माध्यम से प्रस्तुत की जाएगी, और वह मजिस्ट्रेट के आदेश आने तक पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को अग्रेतर अन्वेषण

करने का निर्देश दे सकता है। धारा 173(8) में यह प्रावधान है कि पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को अपने द्वारा प्राप्त साक्ष्यों के संबंध में एक या अधिक अतिरिक्त रिपोर्ट भेजने का अधिकार है। अतिरिक्त रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद, मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान लेने के लिए क्षेत्राधिकार का प्रयोग करेगा।

14. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 36 में पुलिस अधीक्षण प्राधिकारी की शक्तियों के बारे में निम्नानुसार प्रावधान है:

पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी से उच्च पदस्थ पुलिस अधिकारी, अपने नियुक्त स्थानीय क्षेत्र में, उन सभी शक्तियों का प्रयोग कर सकते हैं, जिनका प्रयोग वह अधिकारी अपने थाने की सीमाओं के भीतर कर सकता है।

15. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 36 में प्रयुक्त भाषा से यह स्पष्ट है कि वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों को पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी के समान शक्तियां प्रदान की गई हैं, जिससे यह तात्पर्य निकलता है कि वरिष्ठ पुलिस अधिकारी भी मामले का अन्वेषण कर सकते हैं। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 36 का विधायी उद्देश्य यह है कि पुलिस अधीक्षक सहित प्रभारी अधिकारी से ऊपर के सभी वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों को निष्पक्षता और गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए अन्वेषण की निगरानी में शामिल होना चाहिए। किसी भी वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी से स्वतः संज्ञान लेकर या वरिष्ठ अधिकारी (यहां तक कि सरकार के अधिकारी) के निर्देश पर अन्वेषण अपने हाथ में लेने की अनुमति है। जब धारा 36 में उल्लिखित कोई पुलिस अधिकारी अन्वेषण संचालित करता है, तो उसे अधिकारातीत होने के रूप में प्रश्नगत नहीं किया जा सकता।

16. संहिता के उपरोक्त प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि अन्वेषण, पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी या वरिष्ठ अधिकारी द्वारा की जानी चाहिए। अन्वेषण करने के बाद, यदि अभियुक्त अभिरक्षा में है, तो पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी या वरिष्ठ अधिकारी उसे अपराध का संज्ञान लेने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत करेंगे, यदि उन्हें पर्याप्त साक्ष्य या संदेह का उचित आधार प्रतीत होता है। अन्वेषण करने के बाद, पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी या वरिष्ठ अधिकारी साक्ष्य एकत्र करने के बाद मजिस्ट्रेट को एक रिपोर्ट भेजेंगे। यदि पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नहीं है, तो उन्हें मजिस्ट्रेट को अंतिम रिपोर्ट भेजनी होगी।

17. पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को धारा 173(8) के अंतर्गत आरोप पत्र दाखिल करने के बाद भी मामले के अन्वेषण और साक्ष्य एकत्र करने के बाद आगे के अन्वेषण करने के लिए सशक्त है। अन्वेषण की पूर्ण शक्ति पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी में निहित है। संहिता में पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी के अलावा किसी अन्य अधिकारी को पुलिस रिपोर्ट दाखिल करने का अधिकार देने का कोई प्रावधान नहीं है, सिवाय उस वरिष्ठ अधिकारी के जिसने स्वयं अन्वेषण का प्रभार संभाला है। मजिस्ट्रेट के पास पुलिस स्टेशन के प्रभारी

अधिकारी को रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश देने की भी शक्ति नहीं है, हालांकि वह ऐसे अधिकारी द्वारा दाखिल की गई रिपोर्ट के आधार पर अपराध का संज्ञान ले सकता है।

18. पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी द्वारा अन्वेषण के संबंध में संहिता में उल्लिखित महत्वपूर्ण चरणों में से एक यह है कि अधिकारी इस बात पर राय बनाए कि क्या एकत्रित सामग्री अभियुक्त के विरुद्ध मजिस्ट्रेट के समक्ष परीक्षण चलाने या अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के लिए पर्याप्त है। इस प्रकार, पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को यह राय बनाने का विवेक प्राप्त है कि एकत्रित साक्ष्य पुलिस रिपोर्ट दाखिल करने के लिए पर्याप्त हैं या नहीं। यह राय अपराध का संज्ञान लेने के मजिस्ट्रेट के क्षेत्राधिकार के अधीन है। मजिस्ट्रेट अन्वेषण अधिकारी को पुलिस रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश नहीं दे सकता। इस प्रकार, अभियुक्त के विरुद्ध रिपोर्ट दाखिल करने के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं, यह अन्वेषण अधिकारी और अन्वेषण करने वाले वरिष्ठ अधिकारी के क्षेत्राधिकार में आता है, जो मजिस्ट्रेट के नियंत्रण के अधीन है। अन्वेषण अधिकारी/पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी के अलावा कोई अन्य प्राधिकारी राय बनाने के विवेक में हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

19. संहिता के अंतर्गत, अन्वेषण में सामान्यतः निम्नलिखित चरण शामिल होते हैं: (1) घटनास्थल पर कार्यवाही, (2) मामले के तथ्यों और परिस्थितियों का पता लगाना, (3) संदिग्ध अपराधी की खोज और गिरफ्तारी, (4) साक्ष्य एकत्र करना, (5) राय बनाना। इस संबंध में राय बनाने की शक्ति प्रत्यायोजन की अनुमति देने वाला कोई प्रावधान नहीं है कि क्या अभियुक्त को परीक्षण के लिए पेश करने का मामला बनता है या नहीं, बल्कि केवल एक प्रावधान है जो वरिष्ठ अधिकारियों को धारा 36 के अंतर्गत पर्यवेक्षण करने या भाग लेने का अधिकार देता है। धारा 36 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करने वाला एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी किसी मामले में आगे के अन्वेषण का आदेश पारित कर सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि यदि वरिष्ठ पुलिस अधिकारी स्वयं मामले का अन्वेषण करता है, तो वह आरोप पत्र या अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के लिए अंतिम राय बना सकता है, लेकिन पर्यवेक्षी प्राधिकारी के रूप में अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय वह इस संबंध में राय नहीं बना सकता है। यह पूरी तरह से अन्वेषण अधिकारी/पुलिस स्टेशन के प्रभारी के क्षेत्राधिकार में आता है। यदि पर्यवेक्षी प्राधिकारी होने के नाते उन्हें अन्वेषण में कोई खामी या त्रुटि प्रतीत होती है, तो वे उन खामियों और त्रुटियों को इंगित कर सकते हैं और अन्वेषण अधिकारी को उन बिंदुओं पर आगे का अन्वेषण करने और फिर राय बनाने का निर्देश दे सकते हैं, लेकिन वे स्वयं कोई राय नहीं बना सकते हैं, न ही आरोप पत्र या अंतिम रिपोर्ट भेजने का निर्देश दे सकते हैं और न ही उनके द्वारा ऐसा कोई निर्देश दिया जा सकता है।

20. एच.एन. ऋषबुद बनाम दिल्ली राज्य, 1955 सीआर.एल.जे. 526 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने पृष्ठ 531 पर निम्नानुसार संप्रेक्षण किया:

“इस प्रकार, संहिता के अंतर्गत अन्वेषण में सामान्यतः निम्नलिखित चरण शामिल होते हैं: (1) घटनास्थल पर कार्यवाही करना, (2) मामले के तथ्यों और परिस्थितियों का पता लगाना, (3) संदिग्ध अपराधी की खोज एवं गिरफ्तारी, (4) अपराध के घटित होने से संबंधित साक्ष्य एकत्र करना, जिसमें निम्नलिखित शामिल हो सकते

हैं: (ए) विभिन्न व्यक्तियों (अभियुक्त सहित) की पूछताछ और यदि अधिकारी उचित समझे तो उनके अभिकथनों को लिखित रूप में दर्ज करना, (बी) अन्वेषण के लिए आवश्यक समझी जाने वाली वस्तुओं की ज़बती और परीक्षण में प्रस्तुत की जाने वाली वस्तुओं की ज़बती के लिए स्थानों की तलाशी, और (5) एकत्रित सामग्री के आधार पर यह राय बनाना कि क्या अभियुक्त को परीक्षण के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश करने का मामला बनता है और यदि ऐसा है तो धारा 173 के अंतर्गत आरोप पत्र दाखिल करके इसके लिए आवश्यक कदम उठाना... यह भी स्पष्ट है कि अन्वेषण के अंतिम चरण, अर्थात्, यह राय बनाना कि क्या अभियुक्त को परीक्षण के लिए पेश करने का मामला बनता है या नहीं, पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी का कार्य है।”

21. मुथाराजू सत्यनारायण बनाम आंध्र प्रदेश सरकार और अन्य, 1997 सीआर.एल.जे 3741 के मामले में निर्णय का प्रस्तर संख्या 15 इस प्रकार है:

15. अतः, उपरोक्त निर्णयों में प्रतिपादित सिद्धांतों से यह स्पष्ट है कि पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी के अलावा कोई अन्य प्राधिकारी यह राय नहीं बना सकता कि एकत्रित साक्ष्यों के आधार पर अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष विचार के लिए प्रस्तुत करने हेतु मामला बनता है या नहीं। यदि पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी की राय है और वह इस आशय की अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करता है कि अभियुक्त को विचार के लिए प्रस्तुत करने हेतु कोई मामला नहीं बनता है, तो किसी अन्य प्राधिकारी को उसे अपनी राय बदलने और मजिस्ट्रेट के समक्ष आरोप पत्र दाखिल करने/प्रस्तुत करने का निर्देश देने का अधिकार नहीं है। यद्यपि, यदि मजिस्ट्रेट पुलिस द्वारा बनाई गई राय से सहमत नहीं है, तो वह पुलिस की अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है।

22. अंतिम रिपोर्ट के बाद अग्रेतर अन्वेषण करने के लिए पुलिस की शक्तियों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(8) के अंतर्गत मान्यता प्राप्त है, जो इस प्रकार है:-

इस धारा में ऐसा कुछ भी नहीं माना जाएगा जिससे उपधारा (2) के अंतर्गत मजिस्ट्रेट को रिपोर्ट भेजे जाने के बाद किसी अपराध के संबंध में आगे की अन्वेषण को रोका जा सके, और यदि ऐसी अन्वेषण के बाद पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को मौखिक या दस्तावेजी रूप में कोई अतिरिक्त साक्ष्य प्राप्त होता है, तो वह निर्धारित प्रारूप में ऐसे साक्ष्य के संबंध में एक या अधिक रिपोर्टें मजिस्ट्रेट को भेजेगा; और उपधारा (2) से (6) के प्रावधान, जहां तक संभव हो, ऐसी रिपोर्ट या रिपोर्टों पर उसी प्रकार लागू होंगे जैसे वे उपधारा (2) के अंतर्गत भेजी गई रिपोर्ट पर लागू होते हैं।

23. यह धारा पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को न्यायालय द्वारा संज्ञान लिए जाने के बाद भी धारा 173(8) दं.प्र.सं. के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करते हुए आगे के अन्वेषण करने का स्पष्ट और विशिष्ट अधिकार प्रदान करती है। अन्वेषण अधिकारी को नई अन्वेषण या पुनर्जांच का निर्देश देने का कोई अधिकार नहीं है। यदि आगे के अन्वेषण का निर्देश दिया जाता है, तो अन्वेषण अधिकारी आगे का अन्वेषण करेगा और

अन्वेषण के दौरान एकत्रित सामग्री के आधार पर अपनी राय बनाएगा। कोई भी प्राधिकारी अन्वेषण अधिकारी को आरोप पत्र या अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश नहीं दे सकता है, इसलिए संहिता के अंतर्गत पुलिस के पर्यवेक्षी प्राधिकारी को अन्वेषण अधिकारी को आरोप पत्र या अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश देने का कोई अभिव्यक्त या विवक्षित अधिकार नहीं है और वह इस संबंध में अपनी राय बनाकर अन्वेषण अधिकारी को ऐसा करने का निर्देश नहीं दे सकता है।

24. संक्षेप में, इस न्यायालय का मत है कि पुलिस अधीक्षक द्वारा मामले में आरोप पत्र दाखिल करने और अनुपालन हेतु अन्वेषण अधिकारी को अपना आदेश सूचित करने की राय बनाना ही कानून के प्रावधानों के अनुरूप नहीं कहा जा सकता है, बल्कि यह मामले के निष्पक्ष अन्वेषण में हस्तक्षेप है, जो कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 21 और 39-ए के अंतर्गत स्थापित अभियुक्त का मौलिक अधिकार है। अतः, पुलिस अधीक्षक जैसे पर्यवेक्षी प्राधिकारी द्वारा पारित अवैध आदेश के अनुपालन में अन्वेषण अधिकारी द्वारा दाखिल किया गया आरोप पत्र वैध नहीं कहा जा सकता। यदि पर्यवेक्षी प्राधिकारी के अवैध आदेश के अनुपालन में दाखिल किए गए ऐसे आरोप पत्र पर अभियोजन को जारी रखने की अनुमति दी जाती है, तो यह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

25. तदनुसार, यह आवेदन स्वीकार किया जाता है और आरोप पत्र के साथ-साथ मामले की संपूर्ण कार्यवाही को रद्द किया जाता है।

(2025) 2 ILRA 138

आरंभिक अधिकारिता

आपराधिक पक्ष

दिनांक: लखनऊ 19.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति करुणेश सिंह पवार,

आवेदन अंतर्गत धारा 482 संख्या 6694 वर्ष 2019

भगवती शरण द्विवेदी

...आवेदक

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

...प्रतिपक्षीगण

आवेदक के लिए अधिवक्ता:

चंदन श्रीवास्तव, योगेश सोमवंशी

प्रतिपक्षियों के लिए अधिवक्ता:

शासकीय अधिवक्ता, आनंद कुमार वर्मा, सूर्य प्रकाश

आपराधिक कानून -दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 200, 202, 202(2) और 482 - परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 - धारा 138, 143, 144, 145 और 147- आवेदन - समन आदेश के साथ-साथ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 82 और 83 के अंतर्गत पारित आदेशों को चुनौती देना - परिवाद मामला - दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 200 के अंतर्गत अभिकथन - यह दलील दी गई कि नोटिस जारी करने से पहले, मजिस्ट्रेट के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के अंतर्गत जांच करना अनिवार्य है, जो कि समन आदेश जारी करने के समय किया गया था - परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत दायर परिवादों के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 की प्रयोज्यता - न्यायालय ने पाया कि, मजिस्ट्रेट ने आक्षेपित आदेश पारित करते समय परिवाद और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 200 के अंतर्गत अभिकथन पर ध्यान दिया है - साक्षियों के साक्ष्य को शपथ पर लेने पर जोर देने का कोई कारण नहीं है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202(2) इसमें बाधा नहीं बनेगी, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने (मांडवी कोऑपरेटिव बैंक लिमिटेड बनाम निमेश बी. ठकोर के मामले में) अभिनिर्धारित किया है, जिसमें प्रावधान है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202(2) शपथ पर साक्षियों की जांच के संबंध में, परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत परिवादों पर यह लागू नहीं होता है - अभिनिर्धारित हुआ कि परिवादी की ओर से शपथपत्र पर साक्षियों के साक्ष्य की अनुमति देने में कोई रोक नहीं है - इसलिए, यह मानने का कोई कारण नहीं है कि मजिस्ट्रेट ने अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार तक पहुंचने के लिए जांच नहीं की है, इसलिए वर्तमान आवेदन गुणदोष रहित है और तदनुसार, खारिज किया जाता है। (प्रस्तर-8,9)

आवेदन खारिज। (ई-11)

उद्धृत मामलों की सूची:

मांडवी कोऑपरेटिव बैंक लिमिटेड बनाम निमेश बी. ठकोर (2010)3 एससीसी 83.

(माननीय न्यायमूर्ति करुणेश सिंह पवार द्वारा प्रदत्त)

1. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत यह याचिका, अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, न्यायालय संख्या 2, लखीमपुर खीरी द्वारा पारित समन आदेश दिनांक 2.12.2015 को और दं.प्र.सं. की धारा 82 और 83 के अंतर्गत आदेश दिनांक 15.5.2019 को रद्द करने के लिए दायर की गई है।

2. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री सूर्य प्रकाश, परिवादी के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए अपर शासकीय अधिवक्ता श्री अनुराग वर्मा को सुना।

3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि परिवादी द्वारा धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम (संक्षेप में, अधिनियम) के अंतर्गत परिवाद दर्ज की गई है और इसके बाद, धारा 200 दं.प्र.सं. के अंतर्गत परिवादी की जांच के बाद, आक्षेपित समन आदेश पारित किया गया है। यह प्रस्तुत किया गया है कि वर्ष 2005 में धारा 202 दं.प्र.सं. में संशोधन के बाद, मजिस्ट्रेट के लिए प्रक्रिया जारी करने से पहले धारा 202 दं.प्र.सं. के अंतर्गत जांच करना अनिवार्य है, हालांकि, इस तथ्य के बावजूद कि अभियुक्त न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता से बाहर रहता है, विद्वान मजिस्ट्रेट ने आक्षेपित समन आदेश पारित करते समय ऐसा नहीं किया।

4. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने इस तर्क का विरोध किया है और अंतर्गत संदर्भ: स्वतः संज्ञान रिट याचिका (आपराधिक) संख्या 2 वर्ष 2020, परक्राम्य लिखत अधिनियम 1881 की धारा 138 के मामलों का शीघ्र परीक्षण, में सर्वोच्च न्यायालय के संविधान पीठ के निर्णय दिनांक 16.4.2021 पर भरोसा जताते हुए यह तर्क दिया है कि जांच के उद्देश्य से साक्षियों के साक्ष्य शपथ पर लेने पर जोर देने का कोई कारण नहीं है। अधिनियम की धारा 145 को संहिता की धारा 202 के साथ पढ़ने पर सर्वोच्च न्यायालय ने उपरोक्त निर्णय में विचार किया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि शपथ पर साक्षियों की जांच के संबंध में अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत परिवादों पर संहिता की धारा 202 की उपधारा (2) लागू नहीं होती है। अग्रेतर यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि परिवादी की ओर से साक्षियों के साक्ष्य शपथपत्र पर दिए जा सकते हैं। यह भी अभिनिर्धारित किया जाता है कि यदि मजिस्ट्रेट स्वयं जांच करता है, तो उसके लिए साक्षियों की जांच करना अनिवार्य नहीं है और उचित मामलों में, मजिस्ट्रेट धारा 202 के अंतर्गत कार्यवाही के लिए आधारों की पर्याप्तता के संबंध में संतुष्टि के लिए दस्तावेजों की जांच कर सकता है (प्रस्तर 12 पर जोर दिया गया है)।

श्री वर्मा ने मांडवी कोऑपरेटिव बैंक लिमिटेड बनाम निमेश बी. ठकोर (2010)3 एससीसी 83 (प्रासंगिक प्रस्तर 20, 21, 24 और 25) मामले में सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय पर भी भरोसा जताया है और उनका तर्क है कि धारा 143, 144, 145 और 147 के प्रावधान संहिता के प्रावधानों से स्पष्ट रूप से भिन्न हैं और उन्हें अध्यारोहित करते हैं। उक्त प्रावधान अधिनियम के अध्याय 17 के अंतर्गत अपराधों के परीक्षण के लिए एक विशेष संहिता निर्धारित करते हैं और इन धाराओं को परक्राम्य लिखत (संशोधन और विविध प्रावधान) अधिनियम, 2002 के माध्यम से अधिनियम में शामिल किया गया था जो नियमित आपराधिक परीक्षण में उन सभी चरणों और प्रक्रियाओं को समाप्त करने के लिए है जो सामान्यतः इसके निष्कर्ष में अत्यधिक देरी का कारण बनते हैं और अभियुक्त के निष्पक्ष परीक्षण के अधिकार से किसी भी तरह से समझौता किए बिना परीक्षण की प्रक्रिया को यथासंभव शीघ्र बनाना है।

5. परिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि परिवादी का अभिकथन धारा 200 दं.प्र.सं. के अंतर्गत शपथपत्र के साथ अवर न्यायालय के समक्ष दायर किया गया है और परिवादी के उक्त अभिकथन पर विचार करते हुए, आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

6. अभिलेखों और सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय दिनांक 16.4.2021 के परिशीलन करने से यह दर्शित होता है कि अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत दायर परिवादों के संबंध में धारा 202 की प्रयोज्यता को लेकर विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा व्यक्त किए गए भिन्न मतों के कारण कानून को स्पष्ट करने के लिए, कुछ मामलों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत दायर परिवादों में प्रक्रिया जारी करने से पहले मजिस्ट्रेट के लिए संहिता की धारा 202 में दिए गए प्रावधान के अनुसार जांच करना अनिवार्य है, जबकि कुछ अन्य मामलों में इसके विपरीत मत व्यक्त किया गया है। सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 11 और 12 में इस विषय से संबंधित कानून निर्धारित किया है।

सर्वोच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 145 पर भी विचार किया है, जिसमें यह प्रावधान है कि परिवादी द्वारा शपथपत्र के माध्यम से साक्ष्य प्रस्तुत किया जा सकता है, जिसे किसी भी जांच, परीक्षण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में पढ़ा जाएगा। अधिनियम की धारा 145 नीचे उद्धृत है:

“145. शपथपत्र पर साक्ष्य.—

(1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (2 वर्ष 1974) में किसी बात के होते हुए भी, परिवादी का साक्ष्य उसके द्वारा शपथपत्र पर दिया जा सकता है और सभी उचित अपवादों के अधीन रहते हुए, उक्त संहिता के अंतर्गत किसी भी जांच, परीक्षण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में पढ़ा जा सकता है।

(2) न्यायालय, यदि वह उचित समझे, और अभियोजन पक्ष या अभियुक्त के आवेदन पर, शपथपत्र पर साक्ष्य देने वाले किसी भी व्यक्ति को उसमें निहित तथ्यों के संबंध में बुलाकर उसकी जांच कर सकता है।

यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिनियम की धारा 145, शपथपत्र के माध्यम से परिवादी की परीक्षा के संबंध में धारा 202 का अपवाद है। धारा 145 में शपथपत्र के माध्यम से साक्षियों की परीक्षा के संबंध में कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है। इस प्रकार, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत दायर परिवादों के परीक्षणों में तेजी लाने के प्रशंसनीय उद्देश्य से वर्ष 2003 से अधिनियम में धारा 145 जोड़ी गई थी। यदि परिवादी शपथपत्र के माध्यम से साक्ष्य दे सकता है, तो साक्षियों के साक्ष्य को शपथ पर लेने पर जोर देने का कोई कारण नहीं है। इस प्रकार, अधिनियम की धारा 145 और संहिता की धारा 202 के समग्र अध्ययन के आधार पर कानून का सारांश प्रस्तुत किया गया है और यह अभिनिर्धारित किया गया है कि शपथ पर साक्षियों की परीक्षा के संबंध में धारा 202(2) धारा 138 के अंतर्गत परिवादों पर लागू नहीं होती है। परिवादी की ओर से साक्षियों के साक्ष्य शपथपत्र पर दिए जा सकते हैं। यदि मजिस्ट्रेट स्वयं जांच करता है, तो उसके लिए साक्षियों से पूछताछ करना अनिवार्य नहीं है। निर्णय के प्रस्तर 12 का प्रासंगिक भाग नीचे दिया गया है:

"12.....अधिनियम की धारा 145, शपथपत्र के माध्यम से परिवादी की परीक्षा के संबंध में धारा 202 का अपवाद है। धारा 145 में शपथपत्र के माध्यम से साक्षियों की परीक्षा के संबंध में कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है। यह स्पष्ट हो जाता है कि धारा 145 को वर्ष 2003 से अधिनियम में धारा 138 के अंतर्गत दायर परिवादों के परीक्षणों में तेजी लाने के प्रशंसनीय उद्देश्य से जोड़ा गया था। यदि परिवादी का साक्ष्य शपथपत्र पर दिया जा सकता है, तो साक्षियों के साक्ष्य को शपथ पर लेने पर जोर देने का कोई कारण नहीं है। धारा 145 और धारा 202 के समग्र अध्ययन से हम यह मानते हैं कि शपथ पर साक्षियों की परीक्षा के संबंध में संहिता की धारा 202 (2) अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत परिवादों पर लागू नहीं होती है। परिवादी की ओर से साक्षियों के साक्ष्य शपथपत्र पर दिए जा सकते हैं। यदि मजिस्ट्रेट स्वयं जांच करता है, तो उसके लिए साक्षियों की परीक्षा करना अनिवार्य नहीं है। उपयुक्त मामलों में, मजिस्ट्रेट दस्तावेजों की जांच करके धारा 202 के अंतर्गत कार्यवाही करने के लिए आधारों की पर्याप्तता सुनिश्चित कर सकता है।

7. अतः, सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के दृष्टिगत, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क कि मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 202 दं.प्र.सं. के अंतर्गत परिकल्पित जांच नहीं की गई है क्योंकि साक्षी से शपथ पर पूछताछ नहीं की गई है, निराधार हो जाता है। परिवादी का धारा 202 दं.प्र.सं. के अंतर्गत अभिकथन दाखिल किया जा चुका है, जो अधिनियम की धारा 145 के अनुसार साक्ष्य है। अतः यह स्पष्ट है कि शपथ पर साक्षियों की पूछताछ के संबंध में अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत परिवादों पर धारा 202 की उपधारा (2) लागू नहीं होती है।

8. वर्तमान मामले में, मजिस्ट्रेट ने आक्षेपित आदेश पारित करते समय परिवाद और संहिता की धारा 200 के अंतर्गत दिए गए अभिकथन पर ध्यान दिया है। परिवादी ने धारा 200 दं.प्र.सं. के अंतर्गत अपना अभिकथन दाखिल किया है, जिस पर मजिस्ट्रेट ने विचार किया और आक्षेपित आदेश पारित किया। परिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के समक्ष परिवादी के शपथपत्र की प्रति प्रस्तुत की है। साक्षियों के साक्ष्य शपथ पर लेने पर जोर देने का कोई कारण नहीं है और धारा 202(2) इसमें बाधा नहीं बनेगी, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने उपरोक्त संदर्भित निर्णय में अभिनिर्धारित किया है, जिसमें यह प्रावधान है कि शपथ पर साक्षियों की परीक्षा के संबंध में धारा 138 के अंतर्गत परिवादों पर संहिता की धारा 202(2) लागू नहीं होती है। परिवादी की ओर से शपथपत्र पर साक्षियों के साक्ष्य की अनुमति देने में कोई रोक नहीं है। मुझे यह मानने का कोई कारण नहीं दिखता कि मजिस्ट्रेट ने अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार प्राप्त करने हेतु जांच नहीं की है।

9. यहाँ पर उपरोक्त प्रकथनों के दृष्टिगत, मैं याचिका में कोई गुणदोष नहीं पाता। याचिका गुणदोष रहित होने से खारिज की जाती है।

यदि कोई आवेदन लंबित था, तो उसका निस्तारण हो चुका है।

(2025) 2 ILRA 142

आरंभिक अधिकारिता

आपराधिक पक्ष

दिनांक: लखनऊ 06.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति ओम प्रकाश शुक्ला,

आवेदन अंतर्गत धारा 482 संख्या 8107 वर्ष 2022

राम लोटन विश्वकर्मा और अन्य ...आवेदकगण

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य ...प्रतिपक्षीगण

आवेदकों के लिए अधिवक्ता:

सचिन चतुर्वेदी

प्रतिपक्षियों के लिए अधिवक्ता:

शासकीय अधिवक्ता, अमित कुमार सिंह

आपराधिक विधि -दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 482 - भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 - धारा 528 - घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम, 2005 - धारा 12 - इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमावली, 1952 - अध्याय 5 नियम 6 - भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226 और 227 - आवेदन अंतर्गत धारा 482 - घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के प्रावधानों के अंतर्गत शुरू की गई कार्यवाही को चुनौती देने के लिए - पोषणीयता की प्रारंभिक आपत्ति - इस न्यायालय की समन्वय पीठों के परस्पर विरोधी निर्णयों के दृष्टिगत - अंतर्निहित शक्ति का आह्वान - घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 12 के अंतर्गत जारी नोटिस पर पारित आदेश को रद्द करने के लिए धारा 482 दं.प्र.सं. के अंतर्गत एक याचिका की पोषणीयता के मुद्दे पर समन्वय पीठों के परस्पर विरोधी निर्णय- श्रीमती सुमन मिश्रा के मामले में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि धारा 482 दं.प्र.सं. के अंतर्गत आवेदन पोषणीय नहीं था - संदीप किशोर के मामले में, एक अन्य समन्वय पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 12 के अंतर्गत पारित आदेश के विरुद्ध धारा 482 दं.प्र.सं. के अंतर्गत दायर आवेदन स्वीकार्य नहीं होगा - देवेंद्र अग्रवाल के मामले में, एक अन्य समन्वय पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि धारा 482 दं.प्र.सं. के अंतर्गत आवेदन पोषणीय है - वृहत्तर पीठ को संदर्भ - न्यायालय ने मामले को कानूनी स्थिति को स्पष्ट करने और विषय पर निश्चितता लाने के लिए पुनर्विचार हेतु वृहत्तर पीठ को संदर्भित किया - आवश्यक आदेशों के लिए मामला माननीय मुख्य न्यायाधीश के

समक्ष रखा जाएगा - इस आवेदन को परीक्षण न्यायालय द्वारा संदर्भ के अंतिम परिणाम तक स्थगित किया जाएगा। (प्रस्तर - 19, 20, 21, 23)

आवेदन लंबित। (ई-11)

उद्धृत मामलों की सूची:

1. श्रीमती सुमन मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य - आवेदन अंतर्गत धारा 482 संख्या 6975 वर्ष 2013, निर्णीत दिनांक 31.07.2024,
2. संदीप किशोर और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य - आवेदन अंतर्गत धारा 482 संख्या 11130 वर्ष 2024 - निर्णीत दिनांक 09.08.2024,
3. देवेंद्र अग्रवाल और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य - आवेदन अंतर्गत धारा 482 संख्या 18994 वर्ष 2024, निर्णीत दिनांक 27.11.2024,
4. पी. पथमनाथन बनाम मोनिका: (2021) एससीसी ऑनलाइन मद्रास 8731,
5. कुनापारेड्डी बनाम कुनापारेड्डी स्वर्ण कुमारी: (2016) 11 एससीसी 774,
6. कामाची बनाम लक्ष्मी नारायणन: (2022) 15 एससीसी 50,
7. दिनेश कुमार यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य: 2016 एससीसी ऑनलाइन इलाहाबाद 3848,
8. बिहार राज्य बनाम कालिका कुएर: (2003) 5 एससीसी 448,
9. मैरी पुष्पम बनाम तेलवी कुरुसुमरी और अन्य (2024) 3 एससीसी 224,
10. यूपी पावर कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजेश कुमार (2012) 7 एससीसी 1
11. श्री भगवान बनाम राम चंद, एआईआर 1965 एससी 1767,
12. सुंदरजस कन्यालाल भतीजा बनाम कलेक्टर, (1989) 3 एससीसी 396,
13. कामाची बनाम लक्ष्मी नारायणन, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 446 में प्रतिवेदित।

(माननीय न्यायमूर्ति ओम प्रकाश शुक्ला द्वारा प्रदत्त)

(1) आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता श्री सचिन चतुर्वेदी, प्रतिपक्षी संख्या 1/राज्य के लिए विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता श्री एस.एन. तिलहरी और प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता श्री अमित कुमार सिंह को सुना।

(2) इस आवेदन/याचिका पर इस न्यायालय की समतुल्य पीठों के परस्पर विरोधी निर्णयों के दृष्टिगत प्रारंभिक आपत्ति पर सुनवाई शुरू की गई थी।

(3) भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (बी.एन.एस.एस.), 2023 की धारा 528, (दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की समरूप धारा 482) के अंतर्गत इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करने का आह्वान किया जा रहा है, जो घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम, 2005 (इसके बाद इसे 'घरेलू हिंसा अधिनियम' कहा जाएगा) के प्रावधानों के अंतर्गत आवेदकों के विरुद्ध शुरू की गई कार्यवाही को चुनौती देने के लिए है।

(4) घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत जारी नोटिस पर पारित आदेश को रद्द करने के लिए दं.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत एक याचिका की पोषणीयता के मुद्दे पर समन्वय पीठों के परस्पर विरोधी निर्णयों को इस न्यायालय के संज्ञान में लाया गया है। एक ओर इस न्यायालय (कोरम: माननीय न्यायमूर्ति ओम प्रकाश शुक्ला) द्वारा पारित निर्णय दिनांक 31.07.2024, आवेदन अंतर्गत धारा 482 संख्या 6975 वर्ष 2013: *श्रीमती सुमन मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* और इस न्यायालय की समन्वय पीठ (कोरम: माननीय न्यायमूर्ति अनीश कुमार गुप्ता) द्वारा पारित निर्णय दिनांक 09.08.2024, आवेदन अंतर्गत धारा 482 संख्या 11130 वर्ष 2024: *संदीप किशोर और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य*, में हैं जबकि दूसरी ओर इस न्यायालय की एक अन्य समन्वय पीठ (कोरम: माननीय न्यायमूर्ति अरुण कुमार सिंह देशवाल) का निर्णय दिनांक 27.11.2024 है जिसने दं.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत दायर कई आवेदनों/याचिकाओं के समूह में मुख्य आवेदन संख्या 18994 वर्ष 2024: *देवेंद्र अग्रवाल और 3 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य* में भिन्न मत व्यक्त किया। जबकि इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय, अर्थात् श्रीमती सुमन मिश्रा (उपरोक्त) और इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा पारित निर्णय, अर्थात् संदीप किशोर (उपरोक्त), यह मानते हैं कि घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत एक आवेदन पर मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में जांच के प्रयोजन से संरक्षण अधिकारी द्वारा जारी नोटिस को चुनौती देने वाली दंड प्रक्रिया की धारा 482 के अंतर्गत दायर की गई याचिका पोषणीय नहीं है, इस न्यायालय के एक अन्य समन्वय पीठ (कोरम: माननीय न्यायमूर्ति अरुण कुमार सिंह देशवाल) द्वारा पारित बाद के निर्णय देवेंद्र अग्रवाल के मामले (उपरोक्त) में धारा 482 दं.प्र.सं. के अंतर्गत दायर आवेदन की पोषणीयता के पक्ष में निर्णय दिया है, जिसमें घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत कार्यवाही को रद्द करने की मांग की गई है।

(5) *श्रीमती सुमन मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य (उपरोक्त)* में, यह न्यायालय एक ऐसी स्थिति से निपट रहा था जिसमें घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत पीड़ित द्वारा दायर आवेदन पर मजिस्ट्रेट ने इसे विविध मामले के रूप में दर्ज करने का निर्देश दिया था और संरक्षण अधिकारी को प्रारंभिक जांच करने के बाद घरेलू घटना रिपोर्ट प्रस्तुत करने का भी निर्देश दिया था। परिणामस्वरूप, संरक्षण अधिकारी ने मजिस्ट्रेट के उक्त आदेश के अनुपालन में, उक्त जांच करते समय याचिकाकर्ता/आवेदक को नोटिस जारी कर जवाब दाखिल करने को कहा गया था। हालांकि, प्रारंभिक जांच में भाग लेने के बजाय, याचिकाकर्ता/आवेदक ने मजिस्ट्रेट से उक्त नोटिस/कार्यवाही को रद्द करने और अपना नाम हटाने की मांग की, जिसे मजिस्ट्रेट ने अस्वीकार कर दिया। इससे व्यथित होकर, याचिकाकर्ता/आवेदक ने पुनरीक्षण याचिका दायर की, जिसे पुनरीक्षण न्यायालय ने भी अस्वीकार कर दिया। उपरोक्त पृष्ठभूमि में, याचिकाकर्ता ने दं.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत आवेदन संख्या 6975 वर्ष 2013 में इस न्यायालय के समक्ष उपरोक्त दोनों आदेशों पर रोक लगवा दी और इस न्यायालय

ने दं.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत दायर आवेदन की पोषणीयता के संबंध में पक्षों की सुनवाई करने के बाद, माननीय मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा कई मामलों में निर्धारित निर्णयाधार पर ध्यान दिया, जहाँ अग्रणी मामला **पी. पथमनाथन बनाम मोनिका** : (2021) एससीसी ऑनलाइन मद्रास 8731 था, जिसमें मद्रास उच्च न्यायालय ने घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के उद्देश्य और विभिन्न प्रावधानों पर विस्तार से चर्चा की थी और सर्वोच्च न्यायालय के आधिकारिक निर्णय **कुनापारेड्डी बनाम कुनापारेड्डीस्वर्ण कुमारी** : (2016) 11 एससीसी 774 पर भी भरोसा किया था, यह अभिनिर्धारित करने के लिए कि घरेलू हिंसा अधिनियम के अध्याय-छः के अंतर्गत परिकल्पित सभी राहते प्रकृति में सिविल हैं।

(6) इसके अलावा, इस न्यायालय ने सुमन मिश्रा के उक्त मामले (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के **कामाची बनाम लक्ष्मी नारायणन**: (2022) 15 एससीसी 50 के निर्णय पर भी भरोसा किया और **पी. पथमनाथन के मामले** में माननीय मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय और **कामाची के मामले (उपरोक्त)** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय से अपनी सहमति व्यक्त की। इस न्यायालय ने **दिनेश कुमार यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य**: 2016 एससीसी ऑनलाइन इलाहाबाद 3848 में पूर्ण पीठ के निर्णय पर भी ध्यान दिया था। उक्त पृष्ठभूमि में, इस न्यायालय ने **श्रीमती सुमन मिश्रा के मामले (उपरोक्त)** में, धारा 482 दं.प्र.सं. के अंतर्गत दायर एक आवेदन की पोषणीयता के मुद्दे की जांच करते हुए, जिसमें मजिस्ट्रेट द्वारा नोटिस जारी करने को चुनौती दी गई थी, जिसके परिणामस्वरूप घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत एक संरक्षण अधिकारी द्वारा कार्यवाही शुरू की गई थी, उक्त मामले के तथ्यों में आवेदन को पोषणीय नहीं माना और उसे खारिज कर दिया।

(7) **संदीप किशोर और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य (उपरोक्त)**, में **श्रीमती सुमन मिश्रा (उपरोक्त)**, **दिनेश कुमार यादव (उपरोक्त)**, **डॉ. पी. पथमनाथन (उपरोक्त)** पर भरोसा करते हुए, एक अन्य समन्वय पीठ ने भी यह अभिनिर्धारित किया है कि दं.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत दायर आवेदन घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत पारित आदेश के विरुद्ध पोषणीय नहीं होगा।

(8) हालाँकि, **देवेंद्र अग्रवाल और 3 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय की एक अन्य समन्वय पीठ (कोरम: माननीय न्यायमूर्ति अरुण कुमार सिंह देशवाल) ने **श्रीमती सुमन मिश्रा (उपरोक्त)** के निर्णय पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा **दिनेश कुमार यादव (उपरोक्त)** के निर्णय के विपरीत, गलत तरीके से सर्वोच्च न्यायालय के **कामाची (उपरोक्त)** के निर्णय पर भरोसा करते हुए, इसे *न्यायालय की अनवधानता के कारण हुआ माना है और परिणामस्वरूप, आवेदन अंतर्गत धारा 482 दं.प्र.सं. (अब बी.एन.एस.एस. की धारा 528) को घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अंतर्गत पारित आदेश या संपूर्ण कार्यवाही के विरुद्ध पोषणीय अभिनिर्धारित किया गया है।*

(9) प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि **कामाची (उपरोक्त)** मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने डॉ. पी. पथमनाथन बनाम श्रीमती वी. मोनिका (उपरोक्त) मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश

द्वारा दिए गए निर्णय को स्वीकृति दी है। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, नोटिस जारी करने के चरण में, दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान लागू नहीं होंगे क्योंकि घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन परिवाद नहीं है। उनके अनुसार, डॉ. पी. पद्मनाथन (उपरोक्त) मामले में एकल न्यायाधीश ने कुनापारेडुडी (उपरोक्त) मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसा आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत पोषणीय नहीं है और इस संबंध में उन मामलों में अनेक संप्रेक्षण और निर्देश भी जारी किए, जिनका एक रुचिकर विवरण नीचे दिया गया है:-

“अतः, निम्नलिखित निर्देश जारी किए जाते हैं:

i. घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत दायर किया गया आवेदन, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(डी) के अंतर्गत परिवाद नहीं है। अतः, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190(1)(ए) और 200 से 204 में परिवाद पर आधारित मामलों के लिए निर्धारित प्रक्रिया घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत कार्यवाही पर लागू नहीं होती है। इसलिए, मजिस्ट्रेट घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत दायर आवेदन को दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत परिवाद मामले की तरह नहीं मान सकता।

ii. अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन, घरेलू हिंसा नियमावली, 2006 के प्रपत्र II में निर्धारित अनुसार या यथासंभव उसके अनुरूप होगा। यदि पीड़ित व्यक्ति अधिनियम की धारा 23(2) के अंतर्गत अंतरिम एकपक्षीय आदेशों की मांग करता है, तो प्रपत्र III के अनुसार शपथ पत्र दाखिल करना होगा।

iii. घरेलू हिंसा अधिनियम के अध्याय चार के अंतर्गत कार्यवाही में मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 61 के अंतर्गत प्रतिपक्षी(यों) को समन जारी नहीं करेगा। इसके बजाय, मजिस्ट्रेट उपस्थिति के लिए नोटिस जारी करेगा, जो घरेलू हिंसा नियमावली, 2006 के साथ संलग्न प्रपत्र VII में निर्धारित होगा। ऐसे नोटिस की तामील अधिनियम की धारा 13 और घरेलू हिंसा नियमावली के नियम 12(2) के अंतर्गत निर्धारित विधि से की जाएगी और इसके साथ याचिका और शपथपत्र (यदि कोई हो) की प्रति संलग्न होगी।

iv. यदि पक्षकारों का प्रतिनिधित्व अधिवक्ता द्वारा प्रभावी ढंग से किया जा रहा है, तो प्रतिपक्षी(यों) की व्यक्तिगत उपस्थिति पर सामान्यतः जोर नहीं दिया जाएगा। घरेलू हिंसा नियमावली, 2006 का प्रपत्र VII स्पष्ट करता है कि पक्षकार मजिस्ट्रेट के समक्ष स्वयं या विधिवत अधिकृत अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित हो सकते हैं। सभी मामलों में, रिश्तेदारों और घरेलू संबंध से जुड़े अन्य तीसरे पक्षों की व्यक्तिगत उपस्थिति पर केवल बाध्यकारी कारणों के प्रस्तुत किए जाने पर ही जोर दिया जाएगा। (देखें सिलादित्य बसक बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (2009 एससीसी ऑनलाइन कलकत्ता 1903))।

v. यदि प्रतिपक्षी धारा 13 के अंतर्गत जारी नोटिस के उत्तर में स्वयं या अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित नहीं होता है, तो मजिस्ट्रेट आवेदन का एकतरफा निपटारा कर सकता है।

vi. अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन में प्रतिपक्षी के रूप में नामित सभी पक्षों को नोटिस जारी करना मजिस्ट्रेट के लिए अनिवार्य नहीं है। जैसा कि इस न्यायालय ने विजय भास्कर (उपरोक्त उद्धृत) मामले में बताया है, मजिस्ट्रेट को यह तय करते समय विवेक का प्रयोग करना चाहिए कि किन प्रतिवादियों को नोटिस जारी किया जाना चाहिए। वैवाहिक संबंध में रिश्तेदारों और अन्य तृतीय पक्षों से जुड़े सभी मामलों में, मजिस्ट्रेट को उन कारणों को स्पष्ट करना होगा जिनके कारण उन्होंने ऐसे पक्षों को नोटिस जारी किया है। इससे मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही में सभी को घसीटने की हानिकारक प्रथा काफी हद तक कम हो जाएगी।

vii. घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत कार्यवाही में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 204 के अंतर्गत परिकल्पित प्रक्रिया जारी नहीं की जाती है, इसलिए अदालत प्रसाद बनाम रूपलाल जिंदल ((2004) 7 एससीसी 338) में प्रतिपादित सिद्धांत कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 204 के अंतर्गत एक बार जारी की गई प्रक्रिया की समीक्षा या उसे वापस नहीं लिया जा सकता है, घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत कार्यवाही पर लागू नहीं होगा। परिणामस्वरूप, पीड़ित प्रतिपक्षी मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही की पोषणीयता और अन्य प्रारंभिक मुद्दों को उठा सकते हैं। साझा घर/घरेलू संबंध आदि जैसे मुद्दे, जो धारा 12 के अंतर्गत आवेदन पर विचार करने का क्षेत्राधिकार बनाते हैं, उचित मामलों में प्रारंभिक मुद्दे के रूप में निर्धारित किए जा सकते हैं। ऐसे किसी भी आदेश से पीड़ित व्यक्ति प्रभावी निवारण के लिए घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 29 के अंतर्गत अपील का सहारा ले सकता है (देखें वी.के. विजयलक्ष्मी अम्मा बनाम बिंदू वी., (2010) 87 एआईसी 367)। इससे घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन की पोषणीयता को चुनौती देने वाली याचिकाओं की बाढ़ को संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत इस न्यायालय के समक्ष प्रारंभिक चरण में ही रोका जा सकेगा।

viii. इसी प्रकार, पीड़ित पक्ष धारा 25 का सहारा ले सकता है, जो स्पष्ट रूप से मजिस्ट्रेट को परिस्थितियों में परिवर्तन दर्शाने पर अधिनियम के अंतर्गत किसी भी आदेश को बदलने, संशोधित करने या रद्द करने के लिए अधिकृत करती है।

ix. कुनापारेड्डी मामले (उपरोक्त उद्धृत) में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे आगे "सी.पी.सी." कहा गया है) के आदेश 6, नियम 17 के अंतर्गत शक्तियों का कथित रूप से प्रयोग करते हुए, घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत एक आवेदन में संशोधन की अनुमति देने के मजिस्ट्रेट के आदेश को बरकरार रखा। इससे प्रेरणा लेते हुए, कार्यवाही के किसी भी चरण में, किसी भी प्रतिपक्षी को मजिस्ट्रेट से आवेदन करने का अधिकार होगा कि यदि उन्हें अनुचित रूप से पक्षकार बनाया गया है, तो उनका नाम प्रतिवादियों की सूची से हटा दिया जाए। इस उद्देश्य के लिए, मजिस्ट्रेट सी.पी.सी. के आदेश 1, नियम 10(2) के अंतर्गत शक्ति का सहारा ले सकता है। इस शक्ति का विवेकपूर्ण उपयोग यह सुनिश्चित करेगा कि घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत कार्यवाही उत्पीड़न का हथियार न बन जाए और न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग करके सभी को वाद में पक्षकार बनाने से रोका जा सके।

x. मजिस्ट्रेटों को यह ध्यान रखना चाहिए कि आवेदन में नामित प्रतिवादियों को यंत्रवत नोटिस जारी करने की प्रथा की इस न्यायालय द्वारा लगभग एक दशक पहले विजय भास्कर (उपरोक्त उद्धृत) मामले में निंदा की गई थी। पूर्व निर्णयों का पालन किया जाना चाहिए, उन्हें भुलाया नहीं जाना चाहिए, और इसलिए मजिस्ट्रेटों को आवेदन की प्रारंभिक जांच करनी चाहिए और केवल उन्हीं व्यक्तियों तक अपनी जांच सीमित रखनी चाहिए जिनकी उपस्थिति घरेलू हिंसा अधिनियम के अध्याय चार के अंतर्गत राहत प्रदान करने के लिए उचित और आवश्यक है।

xi. सतीश चंद्र आहूजा (उपरोक्त उद्धृत) मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कार्यवाहियों की बहुलता से बचने के लिए घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 26 के अंतर्गत दिए गए सक्षम प्रावधानों के महत्व पर प्रकाश डाला है। अतः, सिविल, आपराधिक या पारिवारिक न्यायालय में लंबित कार्यवाही में प्रतिदावे के रूप में घरेलू हिंसा अधिनियम के अध्याय चार के अंतर्गत राहतें भी मांगी जा सकती हैं।

xii. साक्ष्य दर्ज करते समय, मजिस्ट्रेट शपथपत्र द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले साक्षियों की मुख्य परीक्षा का सहारा ले सकता है (देखें लक्ष्मण बनाम संगीता, (2009) 3 एमडब्लूएन (क्रि) 257। मजिस्ट्रेट आम तौर पर धारा 254, दं.प्र.सं. में निर्धारित प्रक्रिया का पालन साक्ष्य दर्ज करते समय करेगा।

xiii. अधिनियम की धारा 28(2) एक सक्षम बनाने वाला प्रावधान है जो मजिस्ट्रेट को धारा 28(1) के अंतर्गत निर्धारित प्रक्रिया से विचलित होने की अनुमति देता है, यदि मामले के तथ्य और परिस्थितियाँ ऐसा करने की अनुमति देती हैं, यह ध्यान में रखते हुए कि प्रक्रिया के क्षेत्र में, सब कुछ अनुमत माना जाता है जब तक कि निषिद्ध न हो (देखें मुहम्मद सुलेमान खान बनाम मुहम्मद यार खान, आईएलआर (1888) 11 इलाहाबाद 267)।

xiv. संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत दायर याचिका तब भी स्वीकार्य हो सकती है, यदि यह सिद्ध हो जाए कि मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही में स्पष्ट रूप से क्षेत्राधिकार का अभाव है। अनुच्छेद 227 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार अधीक्षण का है और प्रकृति में निरीक्षणात्मक है, तथा इसका प्रयोग तब तक नहीं किया जाएगा जब तक कि कोई स्पष्ट क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि न हो और याचिकाकर्ता के पक्ष में शक्ति का प्रयोग न करने पर प्रत्यक्ष या पर्याप्त अन्याय न हो। (देखें अब्दुल रजाक बनाम मंगेश राजाराम वागले, (2010) 2 एससीसी 432, विरुधुनगर हिंदू नादरगल धर्म परिबालना सबाई बनाम तूतीकोरिन एजुकेशनल सोसाइटी, (2019) 9 एससीसी 538)। सामान्य परिस्थितियों में, अनुच्छेद 227 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग स्वयं-लगाए गए प्रतिबंध के मापक के रूप में नहीं किया जाएगा, दृष्टिगत इसके कि पीड़ित पक्षों के पास मजिस्ट्रेट के समक्ष और फिर अधिनियम की धारा 29 के अंतर्गत अपील के माध्यम से सुधारात्मक तंत्र उपलब्ध है।“

(10) प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, वर्तमान मामले में, माननीय मजिस्ट्रेट ने घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत दायर आवेदन प्रस्तुत करने पर मामला दर्ज किया है और संरक्षण अधिकारी को जांच करने और अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निर्देश दिया है। अतः, इस मामले के संदर्भ में तथ्यों और परिस्थितियों के दृष्टिगत, धारा 482 दं.प्र.सं. के अंतर्गत वर्तमान आवेदन पोषणीय नहीं है और इस संबंध में **श्रीमती सुमन के मामले (उपरोक्त)** के प्रस्तर 19, 20 और 21 का संदर्भ दिया गया है, जिन्हें नीचे उद्धृत किया जा रहा है:

“19. डॉ. पी.सी. पथमनाथन के मामले (उपरोक्त) में माननीय मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को ध्यान में रखते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष कामाची मामले (उपरोक्त) में शामिल मुख्य प्रश्न पर विचार करना आवश्यक होगा। प्रतिपक्षी (पति और ससुराल वाले) ने घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत अपीलार्थी/पत्नी द्वारा शुरू की गई कार्यवाही को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत आवेदन दाखिल करके चुनौती दी थी। ससुर का आवेदन स्वीकार कर लिया गया था। हालांकि, पति द्वारा दायर आवेदन के संबंध में, माननीय उच्च न्यायालय ने प्रतिपक्षी/पति के तर्क को गुणदोष के आधार पर खारिज कर दिया था, लेकिन परिसीमा के बिंदु पर, घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था क्योंकि इसे अपीलार्थी/पत्नी द्वारा एक वर्ष बाद दायर किया गया था। उक्त आदेश को पत्नी ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष अपील दायर करके चुनौती दी थी। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष, पत्नी की ओर से दो दलीलें दी गईं; पहली, कि घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन दाखिल करने की परिसीमा और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के अंतर्गत निर्धारित परिसीमा केवल घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 31 और 33 के अंतर्गत आपराधिक अभियोजन शुरू करने के लिए लागू होगी; और दूसरा यह कि उच्च न्यायालय द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया था वे भिन्न थे और इस उद्देश्य के लिए मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के पी. पथमनाथन मामले में दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया था। प्रतिपक्षी/पति का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता ने सारा मैथ्यू बनाम इंस्टीट्यूट ऑफ कार्डियो वैस्कुलर डिजीज (2014) 2 एससीसी 62 के मामले में दिए गए निर्णय पर अपने इस तर्क को पुष्ट करने के लिए भरोसा किया कि परिसीमा अवधि एक वर्ष होगी और इसकी गणना आवेदन की तिथि से की जानी चाहिए। दूसरा तर्क उन्होंने अदालत प्रसाद मामले में दिए गए निर्णय पर आधारित किया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कामाची मामले में उक्त लिखित प्रस्तुति को प्रस्तर 10 में पुनः प्रस्तुत किया है। कामाची मामले के निर्णय का उक्त प्रस्तर 10 को उद्धृत करने की आवश्यकता है, जो इस प्रकार है: (कामाची मामला, पृष्ठ 61, प्रस्तर 10)

“11. लिखित प्रस्तुतियों में यह भी कहा गया है कि:

“अदालत प्रसाद बनाम रूपलाल जिंदल (2004) 7 एससीसी 338 में इस माननीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि कोई मजिस्ट्रेट किसी अपराध का संज्ञान लेता है और अभियुक्त के विरुद्ध कोई आरोप या उसे फंसाने वाली कोई सामग्री न होने पर भी, या धारा 200 और 202 के प्रावधानों का उल्लंघन

करते हुए, प्रक्रिया जारी करता है, तो मजिस्ट्रेट का आदेश दूषित हो सकता है। हालांकि, उस स्तर पर पीड़ित अभियुक्त को जो राहत मिल सकती है, वह संहिता की धारा 203 का सहारा लेकर नहीं है, क्योंकि संहिता में किसी आदेश की समीक्षा का प्रावधान नहीं है। अतः, अधीनस्थ आपराधिक न्यायालयों के पास किसी समीक्षा शक्ति या अंतर्निहित शक्ति के अभाव में, उपाय संहिता की धारा 482 का सहारा लेने में है। “

20. यह ध्यान देने योग्य है कि पी. पथमनाथन मामले में परिसीमा का मुद्दा न तो उठाया गया था और न ही उस पर विचार किया गया था। उक्त मामले में मुद्दा घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत दायर कार्यवाही को रद्द करने के लिए दं.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत कार्यवाही की वैधता से संबंधित था। पी. पथमनाथन मामले के निर्णय पर भरोसा करते हुए अपीलार्थी पत्नी की ओर से दिए गए इस तर्क का उत्तर देने के लिए, प्रतिपक्षी/पति के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष अदालत प्रसाद मामले के निर्णय पर भरोसा जताया और यह तर्क दिया कि अधीनस्थ आपराधिक न्यायालयों के पास समीक्षा शक्ति या अंतर्निहित शक्ति के अभाव में, उपाय केवल धारा 482 दं.प्र.सं. के माध्यम से ही संभव है। पति के तर्क को खारिज करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तर 27 से 30 में प्रासंगिक संप्रेक्षण किए हैं, जिन्हें नीचे उद्धृत किया जा रहा है:

“27. अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन के संबंध में मुख्य विशेषताओं को उच्च न्यायालय के एक एकल न्यायाधीश ने पी. पथमनाथन मामले में देखा था, जैसा कि नीचे दिया गया है:

19. सर्वप्रथम, उन क्षेत्रों की जाँच करना आवश्यक है जहाँ घरेलू हिंसा अधिनियम या घरेलू हिंसा नियमावली में स्पष्ट रूप से प्रक्रिया निर्धारित की गई है, जिससे अधिनियम की धारा 28(1) के अंतर्गत परिकल्पित दंड प्रक्रिया का संचालन वर्जित हो जाता है। यह हमें घरेलू हिंसा नियमावली की ओर ले जाता है। प्रारंभ में, यह ध्यान दिया जा सकता है कि घरेलू हिंसा अधिनियम और घरेलू हिंसा नियमावली के अंतर्गत परिकल्पित "परिवाद" दंड प्रक्रिया के अंतर्गत "परिवाद" के समान नहीं है। घरेलू हिंसा नियमावली के नियम 2(बी) के अंतर्गत परिवाद को किसी व्यक्ति द्वारा संरक्षण अधिकारी को मौखिक या लिखित रूप से लगाए गए आरोप के रूप में परिभाषित किया गया है। दूसरी ओर, दंड प्रक्रिया की धारा 2(डी) के अंतर्गत परिवाद किसी मजिस्ट्रेट को मौखिक या लिखित रूप से लगाया गया कोई भी आरोप है, ताकि वह संहिता के अंतर्गत कार्रवाई कर सके, कि किसी ज्ञात या अज्ञात व्यक्ति ने कोई अपराध किया है। हालाँकि, अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन पर विचार करने वाले मजिस्ट्रेट को किसी अपराध के लिए कार्रवाई करने के लिए बाध्य नहीं किया जाता है। अतः, यहाँ परिवाद नहीं बल्कि घरेलू हिंसा नियमावली के नियम 6(1) में उल्लिखित मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन की बात हो रही है। घरेलू हिंसा नियमावली के अंतर्गत परिवाद केवल घरेलू हिंसा नियमावली के नियम 4(1) में उल्लिखित संरक्षण अधिकारी को ही की जाती है।

20. नियम 6(1) में यह निर्धारित किया गया है कि अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन अधिनियम के साथ संलग्न प्रपत्र II के अनुसार होगा। अतः, धारा 12 के अंतर्गत आवेदन, दं.प्र.सं. की धारा 2(डी) के अंतर्गत परिभाषित परिवाद न होने के कारण, संहिता की धारा 190(1)(ए) के अंतर्गत निर्धारित संज्ञान प्रक्रिया का पालन करते हुए अध्याय 15 में निर्धारित प्रक्रिया का अनुसरण करेगा। घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत किसी कार्यवाही पर संज्ञान लेने संबंधी संहिता लागू नहीं होगी। पुनः स्पष्ट किया जाता है कि संहिता की धारा 190(1)(ए) और संहिता के बाद के अध्याय 15 में निर्धारित प्रक्रिया केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(डी) के अंतर्गत मजिस्ट्रेट को दिए गए परिवादों के मामलों में लागू होगी, न कि अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत दिए गए आवेदन पर।

28. इससे स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन दाखिल करने को परिवाद दर्ज करने या अभियोजन शुरू करने के बराबर मान लिया, जो कि गलत था। हमारे विचार में, उच्च न्यायालय का यह कहना गलत था कि घरेलू हिंसा की कथित घटनाओं के एक वर्ष के भीतर अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन दाखिल किया जाना चाहिए था।

29. हालांकि, यह सच है कि जैसा कि संरक्षण अधिकारी ने 2-8-2018 की अपनी घरेलू निरीक्षण रिपोर्ट में उल्लेख किया है, 16-9-2008 के बाद लगभग 10 वर्षों की अवधि ऐसी प्रतीत होती है, जब अपीलार्थी ने पति के विरुद्ध कोई आरोप नहीं लगाया था। लेकिन यह एक ऐसा मामला है जिस पर पति की प्रतिक्रिया प्राप्त होने और दोनों पक्षों के तर्कों पर विचार करने के बाद मजिस्ट्रेट द्वारा निश्चित रूप से विचार किया जाएगा। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसे मजिस्ट्रेट को अपने समक्ष प्रस्तुत सभी तथ्यात्मक पहलुओं पर विचार करने के बाद ही करना होगा, जिसमें यह भी शामिल है कि क्या आरोप एक निरंतर अपराध का गठन करते हैं।

30. अंत में, हम अदालत प्रसाद मामले में दिए गए निर्णय पर आधारित दलील पर विचार करते हैं। उस मामले का सिद्धांत तब लागू होता है जब कोई मजिस्ट्रेट किसी अपराध का संज्ञान लेता है और प्रक्रिया जारी करता है, ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट के पास वापस जाने के बजाय, संहिता की धारा 482 के अंतर्गत याचिका दायर करने का उपाय है। अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत नोटिस का उद्देश्य प्रतिपक्षी से विधि के अनुसार उत्तर मांगना है ताकि दोनों पक्षों की दलीलों पर विचार करने के बाद उचित आदेश जारी किया जा सके। इस प्रकार, मामला एक अलग आधार पर है और अदालत प्रसाद मामले में दिया गया सिद्धांत इस मामले पर लागू होता है। धारा 12 के अंतर्गत नोटिस जारी होने की स्थिति में कोई आकर्षित नहीं होगा।

21. यह ध्यान देने योग्य है कि पी. पथमनाथन मामले के प्रस्तर 19 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कामाची मामले में इस पर विचार किया है और इस पर विचार करने के बाद, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत दायर आवेदन को आपराधिक

प्रक्रिया संहिता, 1973 के अंतर्गत परिवाद दर्ज करने या अभियोजन शुरू करने के बराबर नहीं माना जा सकता। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी माना कि अदालत प्रसाद मामले में दिया गया निर्णय घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत नोटिस जारी होने पर घरेलू हिंसा अधिनियम की कार्यवाही में धारा 482 दं.प्र.सं. लागू करने के तर्क को उचित ठहराने के लिए यह किसी भी प्रकार से बचाव में नहीं आएगा। यह भी विशेष रूप से कहा गया कि अदालत प्रसाद मामले में यह प्रावधान दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 190(1)(ए) के अंतर्गत मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध का संज्ञान लेने और प्रक्रिया जारी करने के मामले में लागू होगा, न कि घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत नोटिस जारी करने के मामले में। इस प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रक्रिया जारी करने के लिए संज्ञान लेने का मामला और घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत मामला अलग-अलग हैं, और इसलिए अदालत प्रसाद मामले में दिया गया निर्णय इसके विपरीत है। जब संबंधित मजिस्ट्रेट द्वारा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत नोटिस जारी किया जाता है, तो उस समय यह आकर्षित नहीं होगा।”

(11) प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया है कि इस न्यायालय ने श्रीमती सुमन मिश्रा के मामले (उपरोक्त) में मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के पी. पथमनाथन मामला (उपरोक्त) के निर्णय से और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कामाची मामले (उपरोक्त), से सहमति व्यक्त की है, साथ ही इस न्यायालय के पूर्ण पीठ के निर्णय दिनेश कुमार यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य: 2016 एससीसी ऑनलाइन इलाहाबाद 3848 पर भी निम्नलिखित शब्दों में भरोसा किया है:

“(23) घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 28 के अनुसार, घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 से 23 के अंतर्गत कार्यवाही दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों द्वारा शासित होगा। इसके अलावा, घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 29 के अनुसार, मजिस्ट्रेट के आदेश के विरुद्ध अपील सत्र न्यायालय में की जा सकती है। घरेलू हिंसा अधिनियम सत्र न्यायालय द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध आगे अपील का प्रावधान नहीं करता है। इस न्यायालय ने दिनेश कुमार यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य: 2016 एससीसी ऑनलाइन ऑल 3848 मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 29 के अंतर्गत सत्र न्यायालय द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण याचिका दायर की जा सकती है। उक्त निर्णय के प्रासंगिक संप्रेक्षण नीचे स्पष्ट किए गए हैं:

“35. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अंतर्गत, “ उच्च न्यायालय या कोई भी सत्र न्यायाधीश किसी भी अवर आपराधिक न्यायालय के समक्ष किसी भी कार्यवाही का अभिलेख मंगवाकर उसकी जांच कर सकता है...”। यह निर्विवाद है कि सत्र न्यायालय, उच्च न्यायालय से निम्न न्यायालय है। अतः, सत्र न्यायालय, जिसके समक्ष अधिनियम, 2005 की धारा 29 के अंतर्गत अपील का प्रावधान है, उच्च न्यायालय से निम्न आपराधिक न्यायालय है और इसलिए, धारा 29 के अंतर्गत पारित उसके आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण याचिका दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अंतर्गत उच्च न्यायालय में दायर की जा सकती है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 401, धारा 397 की पूरक है।

XXXX XXXX XXXX XXXX

37. उपरोक्त के दृष्टिगत, चूंकि अधिनियम, 2005 की धारा 29 के अंतर्गत सत्र न्यायालय के समक्ष अपील का उपाय प्रदान किया गया है, जिसका अर्थ है दं.प्र.सं. की धारा 6 को धारा 7 और 9 के साथ मिलाकर पढ़े जाने वाले सत्र न्यायालय, ऐसी अपील में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के संबंध में और कुछ कहे बिना, और अधिनियम, 2005 में ऐसा कुछ भी विपरीत न होने के कारण जो ऐसी अपील पर दं.प्र.सं. के प्रावधानों के लागू न होने का संकेत देता हो, सत्र न्यायालय द्वारा अपील और पुनरीक्षण के माध्यम से पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध, दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत निर्धारित किए गए उच्च न्यायालय के समक्ष उपलब्ध सामान्य उपाय, अधिनियम, 2005 की धारा 29 के अंतर्गत अपील में पारित आदेश के विरुद्ध उपलब्ध हैं।”

(12) प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने देवेंद्र अग्रवाल और 3 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (उपरोक्त) मामले में एक अन्य समन्वय पीठ द्वारा दिए गए विरोधाभासी निर्णय की ओर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित करते हुए तर्क दिया कि श्रीमती सुमन मिश्रा (उपरोक्त) मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर चर्चा किए बिना, उन्हें छुए बिना या उन पर विचार किए बिना, इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने गलती से यह निष्कर्ष निकाला था कि श्रीमती सुमन मिश्रा (उपरोक्त) का निर्णय न्यायालय की अनवधानता के कारण है।

(13) प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, सर्वोच्च न्यायालय ने कई निर्णयों की श्रृंखला में यह अभिनिर्धारित किया है कि जब उसी उच्च न्यायालय की समतुल्य पीठ का कोई निर्णय, न्यायपीठ के संज्ञान में लाया जाता है, तो उसका सम्मान किया जाना चाहिए और वह बाध्यकारी होता है, बशर्ते समान संख्या वाली पीठ को अलग राय रखने और प्रश्न को वृहत्तर पीठ के पास भेजने का अधिकार हो। समान संख्या वाली पीठ के लिए, समान संख्या वाली पीठ द्वारा लिए गए पूर्व निर्णय का सामना करने पर, यही एकमात्र विकल्प उपलब्ध होता है। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय के “स्टेट ऑफ बिहार बनाम कालिका कुएर: (2003) 5 एससीसी 448”, “मैरी पुष्पम बनाम तेल्वी कुरुसुमरी और अन्य (2024) 3 एससीसी 224” और “यू.पी. पावर कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजेश कुमार”, (2012) 7 एससीसी 1 मामले में दिए गए निर्णय पर भरोसा जताया है। विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि कालिका कुएर (उपरोक्त) में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:-

“ 10. मामले को देखते हुए, पर इनक्यूरियम के अर्थ को ध्यान में रखते हुए, हम पाते हैं कि किसी कानून या बाध्यकारी न्यायिक प्राधिकार के किसी प्रावधान की अनभिज्ञता में निर्णय देना, पूर्ण पीठ द्वारा आक्षेपित निर्णय में दिए गए उस कारण को नहीं दर्शाता है, जिसमें रामकृत सिंह मामले [एआईआर 1979 पटना 250 : 1979 पटना एलजेआर 161 (पूर्णपीठ)] के निर्णय को पर इनक्यूरियम बताया गया है। दूसरी ओर, यह संप्रेक्षित किया गया कि रामकृत सिंह मामले [एआईआर 1979 पटना 250 : 1979 पटना एलजेआर 161 (पूर्णपीठ)] में न्यायालय ने इस प्रश्न पर विचार नहीं किया कि क्या चकबंदी प्राधिकारीगण सीमित क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय हैं या नहीं। इस अवलोकन के संदर्भ में, हम यह कहना चाहेंगे कि यदि समान क्षेत्राधिकार वाली कोई पीठ बाद

में उसी प्रश्न पर विचार करे, तो पहले का निर्णय गलत प्रतीत हो सकता है, इस आधार पर कि मामले के किसी संभावित पहलू पर विचार नहीं किया गया था या न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया था, या मामले का निर्णय करने वाले न्यायालय को और अधिक पहलुओं पर विचार करना चाहिए था। लेकिन यह कहने का कारण नहीं होगा कि निर्णय त्रुटिपूर्ण था और उसे अनदेखा किया जाना चाहिए। पहले का निर्णय भले ही सही न लगे, फिर भी समान क्षेत्राधिकार वाली बाद की पीठ पर उसका बाध्यकारी प्रभाव होगा। यह कहना कि पहले का निर्णय त्रुटिपूर्ण था, उचित नहीं है और मामले का समाधान केवल दो तरीकों से ही किया जा सकता है - या तो पहले के निर्णय का पालन किया जाए या यदि यह महसूस किया जाए कि पहले का निर्णय गुण-दोष के आधार पर सही नहीं है, तो मामले को एक वृहत्तर पीठ के समक्ष विचार के लिए भेजा जाए। यद्यपि यह आवश्यक नहीं है, फिर भी हम उपरोक्त प्रतिपादना पर कुछ निर्णयों का उल्लेख कर सकते हैं।” (जोर दिया गया)

(14) प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा है कि **मैरी पुष्पम बनाम तेलवी कुरुसुमरी और अन्य (उपरोक्त)** में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारण दिया है:-

“1. “न्यायिक अनुशासन और औचित्य” का नियम और पूर्व निर्णयों का सिद्धांत न्यायिक निर्णयों में निश्चितता और एकरूपता को बढ़ावा देने का गुण रखते हैं, जिससे व्यक्तियों को उनके कार्यों के परिणामों के बारे में आश्वासन मिलता है। इस न्यायालय की संविधान पीठों ने न्यायिक अनुशासन से उत्पन्न नियमों को बार-बार दोहराया है। तदनुसार, जब उसी उच्च न्यायालय की किसी समतुल्य पीठ का निर्णय इस पीठ के संज्ञान में लाया जाता है, तो उसका सम्मान किया जाना चाहिए और वह बाध्यकारी है, बशर्ते कि समान संख्या वाली पीठ को अलग राय रखने और प्रश्न को वृहत्तर पीठ के पास भेजने का अधिकार हो। समान संख्या वाली पीठ के लिए, समान संख्या वाली पीठ द्वारा लिए गए पूर्व निर्णय का सामना करने पर, यही एकमात्र विकल्प उपलब्ध है।”

(15) इस पृष्ठभूमि में, प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि यदि समन्वय पीठ कोई भिन्न दृष्टिकोण अपनाती है तो उसके पास एकमात्र उपाय **“कानून के प्रश्न तैयार करना”** और उक्त प्रश्नों को एक वृहत्तर पीठ के समक्ष प्रस्तुत करना है।

(16) प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, समान शक्ति वाली पीठ के लिए यह निर्णय करना उचित नहीं है कि पिछली समान शक्ति वाली पीठ द्वारा दिया गया निर्णय त्रुटिपूर्ण था या नहीं। अतः, वे निवेदन करते हैं कि समवर्ती पीठों के परस्पर विरोधी निर्णयों को देखते हुए, यह न्यायालय इन मुद्दों को विचार के लिए एक वृहत्तर पीठ को सौंप दे।

(17) विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने भी मामले को वृहत्तर पीठ के पास भेजने के संबंध में प्रतिपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन का समर्थन किया है।

(18) दूसरी ओर, आवेदकों/याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता को इस मुद्दे को वृहत्तर पीठ के समक्ष प्रस्तुत करने में कोई आपत्ति नहीं है, हालांकि, वे प्रार्थना करते हैं कि वृहत्तर पीठ के निर्णय के अंतिम परिणाम आने तक आवेदकों/याचिकाकर्ताओं को कुछ सुरक्षा प्रदान की जाए।

(19) यह न्यायालय माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय अंतर्गत “यूपी पावर कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजेश कुमार” : (2012) 7 एससीसी 1 का संदर्भ ले सकता है, जोकि संदर्भगत प्रासंगिक है। उक्त निर्णय में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ‘श्री भगवान बनाम राम चंद, एआईआर 1965 एससी 1767’ और ‘सुंदरजस कन्यालाल भतीजा बनाम कलेक्टर, (1989) 3 एससीसी 396’, के निर्णय से उद्धरण देते हुए प्रस्तर 20 में संप्रेक्षित किया गया है, जो पढ़ने में रोचक है और जिसे नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

“20. उपर्युक्त निर्णयों में स्पष्ट रूप से यह बताया गया है कि जब न्यायाधीशों को समान मुद्दे पर समवर्ती पीठ के निर्णय का सामना करना पड़ता है तो उनसे क्या अपेक्षा की जाती है। कोई भी विपरीत दृष्टिकोण, चाहे वह कितना भी साहसिक और गौरवशाली क्यों न हो, अनिश्चितता और असंगति को जन्म देगा। ठीक यही इस मामले में हुआ है। एक ही उच्च न्यायालय की दो खंडपीठों द्वारा दो निर्णय दिए गए हैं। हम दोनों पीठों द्वारा न्यायिक मर्यादा और अनुशासन के उल्लंघन पर अपनी चिंता व्यक्त करते हैं और आशा करते हैं कि भविष्य में वे इस तरह की स्थिति की अवधारणात्मक संभावना को अनुशासन के रूप में ध्यान में रखते हुए उचित मार्गदर्शन प्राप्त करेंगे, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा समय-समय पर निर्धारित किए गए हैं। हमने यह बात इस आशा के साथ कही है कि न्यायिक उत्साह न्यायाधीशों से अपेक्षित गहन जिम्मेदारी को मिटा न दे।”

(20) पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत दलीलों को ध्यान में रखते हुए, जिनका इस न्यायालय को विचार करना है, और इस विषय पर परस्पर विरोधी निर्णयों पर विचार करते हुए; एक श्रीमती सुमन मिश्रा (उपरोक्त) के मामले में और दूसरा देवेंद्र अग्रवाल (उपरोक्त) मामले में साथ ही, बिना इस मुद्दे को वृहत्तर पीठ के पास भेजे एकल न्यायाधीश पीठ द्वारा समन्वय पीठ के निर्णय को त्रुटिपूर्ण घोषित करने के अधिकार को देखते हुए, इस न्यायालय की राय है कि इस मामले पर वृहत्तर पीठ द्वारा पुनर्विचार की आवश्यकता है ताकि इस संबंध में कानूनी स्थिति स्पष्ट हो सके और विषय पर निश्चितता प्राप्त हो सके।

(21) इस स्थिति को देखते हुए, यह न्यायालय निम्नलिखित प्रश्नों को ऐसी क्षमता वाली पीठ के द्वारा विचारार्थ संदर्भित करता है जैसा कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमावली, 1952 के अध्याय 5 नियम 6 के अंतर्गत माननीय मुख्य न्यायाधीश उचित समझें:-

I. क्या देवेंद्र अग्रवाल (उपरोक्त) मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश के लिए यह उचित था कि वे समन्वय पीठ के निर्णय को त्रुटिपूर्ण घोषित कर दें, बजाय इसके कि उसकी शुद्धता की जांच के लिए वृहत्तर पीठ के पास भेजें?

II. क्या घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 12 के अंतर्गत दायर कार्यवाही को नोटिस जारी करने के चरण में रद्द करने की मांग के लिए, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 और/या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अंतर्गत उपाय उपलब्ध हैं?;

III. क्या घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के प्रावधानों के अंतर्गत किसी भी और सभी कार्यवाही के विरुद्ध धारा 528 बीएनएसएस (संबंधित धारा 482 दं.प्र.सं.) लागू की जा सकती है और/या पोषणीय है, सर्वोच्च न्यायालय के **कामाची बनाम लक्ष्मी नारायणन** मामले में दिए गए निर्णय के दृष्टिगत, जो 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 446 में प्रकाशित हुआ है?

IV. क्या **देवेंद्र अग्रवाल और 3 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य (उपरोक्त)** के मामले में दिया गया निर्णय, धारा 482 दं.प्र.सं. के अंतर्गत घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत कार्यवाही को रद्द करने के लिए आवेदन/याचिका की पोषणीयता के मुद्दे पर सही कानून निर्धारित करता है, या **श्रीमती सुमन मिश्रा के मामले (उपरोक्त)** में दिया गया निर्णय सही कानून निर्धारित करता है?

V. क्या घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 12 के अंतर्गत मजिस्ट्रेट के निर्देशानुसार प्रारंभिक जांच करने के लिए संरक्षण अधिकारी द्वारा जारी किया गया नोटिस, धारा 528 बीएनएसएस (पूर्ववर्ती धारा 482 दं.प्र.सं.) या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 या 227 जैसी अन्य कार्यवाहियों के अधीन है?.

VI. क्या किसी उच्च न्यायालय की समन्वय पीठ किसी अन्य समन्वय पीठ द्वारा दिए गए निर्णय के तथ्यों पर विचार किए बिना कोई मुद्दा निर्धारित कर सकती है और इस न्यायालय द्वारा समान शक्ति वाले किसी अन्य समन्वय पीठ के अनुचित निर्णय को बिना पहले अपना विचार व्यक्त किए और फिर पूर्व निर्णय तथा अपने विचार दोनों को स्पष्टता, संगति और निश्चितता के लिए कानून में सामंजस्य और पुनर्कथन हेतु एक वृहत्तर पीठ के समक्ष संदर्भित किए बिना स्वीकार करना उचित है?

VII. क्या समान संख्या वाले समन्वय पीठ द्वारा निर्णीतानुसरण के सिद्धांत का पालन किया जाना चाहिए और क्या इस सिद्धांत का सम्मान किया जाना चाहिए और यह बाध्यकारी है, बशर्ते कि समान संख्या वाले पीठ को अलग राय रखने और प्रश्न को वृहत्तर पीठ के पास भेजने का अधिकार हो?

(22) इस मामले को आवश्यक आदेशों के लिए माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखा जाए।

(23) जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, चूंकि मामला संदर्भित किया जा रहा है, यदि आवेदक/याचिकाकर्ता परीक्षण न्यायालय के समक्ष मामले को स्थगित करने के लिए आवेदन करते हैं, तो यह न्यायालय आशा करता है और विश्वास करता है कि परीक्षण न्यायालय संदर्भ के अंतिम परिणाम तक मामले को स्थगित कर देगा।

(2025) 2 ILRA 153

मूल क्षेत्राधिकार

आपराधिक पक्ष

दिनांक : लखनऊ 24.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति राजेश सिंह चौहान

धारा 482 के अंतर्गत आवेदन संख्या 11952 सन् 2024

बृज भूषण शरण सिंह

... आवेदक

बनाम

राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य

... प्रतिपक्ष

आवेदक के अधिवक्ता :

सुशील कुमार सिंह, जनार्दन सिंह

प्रतिपक्ष के अधिवक्ता

शासकीय अधिवक्ता (जी.ए.)

(A) आपराधिक विधि - भारतीय न्याय संहिता, 2023 (पूर्व धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता) - धारा 528 - दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धाराएँ 251, 252, 254 एवं 31 - भारतीय दण्ड संहिता, 1860 - धारा 188 - अभियोजन की वापसी एवं संज्ञान - लोक सेवक द्वारा विधिवत् प्रख्यापित आदेश की अवज्ञा; धारा 341 - अवैध अवरोध के लिए दण्ड - दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 195 के प्रावधान अनिवार्य हैं और इनके अनुपालन न होने से अभियोजन तथा उसके फलस्वरूप पारित अन्य आदेश अवैध हो जाते हैं - धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत अपराध का संज्ञान सक्षम लोक सेवक द्वारा परिवाद के बिना लिया जाना प्रारंभ से ही शून्य (void ab initio) है और इससे संपूर्ण कार्यवाही, जिसमें धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता जैसे आश्रित अपराध भी सम्मिलित हैं, अवैध हो जाती है - दोषस्वीकार (guilty plea) धारा 251 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत विचारण न्यायालय के समक्ष किया जाना आवश्यक है, उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं, तथा वह स्पष्ट, असंदिग्ध और निष्कपट होना चाहिए। (पैरा-23,24)

धाराएँ 341 एवं 188 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज - धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन लोक सेवक द्वारा परिवाद के अभाव में आरोप पत्र प्रस्तुत - धारा 321 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत लोक अभियोजक द्वारा अभियोजन वापसी हेतु आवेदन प्रस्तुत - विचारण न्यायालय ने इस आधार पर आवेदन अस्वीकार किया कि आवेदक ने उच्च न्यायालय के समक्ष पूर्व में दोषस्वीकार कर लिया था - धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत अभियोजन वापस नहीं लिया जा सकता। (पैरा-3, 5, 14-15)

निर्णीत : - चूँकि धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता से संबंधित आरोप पत्र पूर्व में ही निरस्त किया जा चुका था तथा लोक अभियोजक द्वारा शेष धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के संबंध में अभियोजन वापसी हेतु धारा 321 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत आवेदन प्रस्तुत किया गया था, अतः न्यायालय ने भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 528 (पूर्ववर्ती धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता) के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए यह अभिमत व्यक्त किया कि प्रकरण को पुनः विचारण न्यायालय को प्रेषित किए जाने की आवश्यकता नहीं है, और तदनुसार धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत अभियोजन को वापस लिया हुआ माना तथा अभियोजन वापसी आवेदन को अनुमन्य किया। (पैरा-27)

आवेदन अनुमन्य। (ई-7)

उद्धृत वादों की सूची :

1. इसरार अहमद बनाम राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य, आवेदन (धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता) संख्या 12525 सन् 2023
2. डी.के. राजेन्द्रन एवं अन्य आदि आदि बनाम राज्य तमिलनाडु, AIR 2010 SC 3718
3. राज्य महाराष्ट्र बनाम सुखदेव सिंह एवं अन्य, (1992) 3 SCC 700

(माननीय न्यायमूर्ति राजेश सिंह चौहान द्वारा प्रदत्त)

1. श्री सुशील कुमार सिंह (एस.के. सिंह), विद्वान अधिवक्ता, जिनकी सहायता श्री जनार्दन सिंह, विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई, आवेदक की ओर से सुने गए तथा राज्य की ओर से श्री रण विजय सिंह, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना गया।
2. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आज न्यायालय में अनुपूरक शपथपत्र दाखिल किया गया है, जिसे अभिलेख पर लिया जाता है।
3. भारतीय न्याय संहिता, 2023 की धारा 528 (पूर्व धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता) के अंतर्गत प्रस्तुत इस आवेदन/याचिका द्वारा, आवेदक ने निम्नलिखित राहत की प्रार्थना की है :-

" उपरोक्त तथ्यों, कारणों एवं परिस्थितियों के आधार पर यह अत्यंत आदरपूर्वक प्रार्थना की जाती है कि यह माननीय न्यायालय कृपया दिनांक 31.07.2024 को पारित आक्षेपित आदेश, जो माननीय अपर सिविल न्यायाधीश, मजिस्ट्रेट न्यायालय कक्ष संख्या 1, (विशेष न्यायालय एम.पी./एम.एल.ए.), गोण्डा द्वारा अपराध संख्या 348 सन् 2014, धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता, थाना-कोतवाली नगर, जनपद-गोण्डा में पारित किया गया है, को निरस्त एवं अपास्त करने की कृपा करे तथा न्याय के हित में उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा अपर जिला

शासकीय अधिवक्ता (आपराधिक), गोण्डा के माध्यम से धारा 321 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत दिनांक 03.11.2020 को प्रस्तुत अभियोजन वापसी आवेदन को अनुमन्य करने की कृपा करे।"

4. यह उसी प्रार्थना पर द्वितीय आवेदन है, क्योंकि प्रथम आवेदन दिनांक 27.09.2024 के आदेश (परिशिष्ट संख्या-1) द्वारा, जो आवेदन (धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता) संख्या 8632 सन् 2024; बृज भूषण शरण सिंह बनाम राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य में पारित किया गया था, वापस ली गई मानते हुए निरस्त कर दिया गया था, तथा आवेदक को नवीन आवेदन प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई थी। उक्त आदेश के अनुपालन में वर्तमान आवेदन प्रस्तुत किया गया है।

5. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों पर विचार करने से पूर्व, मैं यह उपयुक्त समझता हूँ कि इस न्यायालय द्वारा आवेदन (धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता) संख्या 3167 सन् 2022; बृज भूषण शरण सिंह बनाम राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य में पारित आदेश दिनांक 20.08.2022 को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाए, क्योंकि माननीय अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, न्यायालय संख्या 1/ विशेष मजिस्ट्रेट एम.पी./एम.एल.ए., गोण्डा द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 31.07.2024 की कथित उत्पत्ति उपर्युक्त आदेश दिनांक 22.08.2022 (उपर्युक्त) पर आधारित है। आदेश दिनांक 22.08.2022 निम्नवत् है :-

"1. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।

2. वर्तमान याचिका धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत इस प्रार्थना के साथ प्रस्तुत की गई है कि अपराध संख्या 348 सन् 2014, थाना-कोतवाली नगर, जनपद-गोण्डा से संबंधित, धाराएँ 341, 188 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत पुलिस द्वारा याचिकाकर्ता के विरुद्ध प्रस्तुत आरोप पत्र संख्या 77/2014 दिनांक 30.04.2014 तथा वाद संख्या 120 सन् 2018, राज्य बनाम बृज भूषण सिंह में पारित समन आदेश दिनांक 22.01.2018 सहित अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट-I, गोण्डा के समक्ष लंबित समस्त कार्यवाहियों को निरस्त किया जाए।

3. श्री जनार्दन सिंह, विद्वान अधिवक्ता, याचिकाकर्ता की ओर से प्रस्तुत करते हैं कि धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत, धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के अपराध का संज्ञान लोक सेवक द्वारा किए गए परिवाद के अतिरिक्त अन्यथा नहीं लिया जा सकता। उन्होंने आगे यह भी प्रस्तुत किया कि न तो धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के अपराध के लिए कोई प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की जा सकती थी और न ही कोई आरोप पत्र प्रस्तुत किया जा सकता था।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे प्रस्तुत किया गया है कि संज्ञान लेने का आदेश तथा आगे की कार्यवाही प्रारंभ करना धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता के स्पष्ट प्रावधानों के प्रतिकूल है, अतः वे प्रारंभ से ही शून्य (void ab initio) हैं।

5. आगे यह भी प्रस्तुत किया गया है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज किया जाना, आरोप पत्र प्रस्तुत किया जाना तथा उक्त आरोप पत्र पर संज्ञान लिया जाना पूर्णतः अवैध है तथा धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता द्वारा सृजित प्रतिबंध के विरुद्ध है।

6. श्री राव नरेन्द्र सिंह, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता, इस तथ्य का विवाद नहीं करते कि धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत एक प्रतिबंध सृजित है।

7. उपर्युक्त स्थिति पर विचार करते हुए तथा धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय इस अभिमत पर है कि धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत दर्ज प्रथम सूचना रिपोर्ट में जांच एजेंसी द्वारा प्रस्तुत आरोप पत्र पर कोई संज्ञान नहीं लिया जा सकता था। अतः यह घोषित किया जाता है कि धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के अपराध के संबंध में आक्षेपित कार्यवाही प्रारंभ से ही शून्य (void ab initio) है, क्योंकि वह धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के प्रतिकूल है।

8. उपर्युक्त के दृष्टिगत, वर्तमान याचिका आंशिक रूप से अनुमन्य की जाती है।

9. अपराध संख्या 348 सन् 2014, थाना-कोतवाली नगर, जनपद-गोण्डा से संबंधित, धाराएँ 341, 188 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत पुलिस द्वारा याचिकाकर्ता के विरुद्ध प्रस्तुत आरोप पत्र संख्या 77/2014 दिनांक 30.04.2014 तथा वाद संख्या 120 सन् 2018, राज्य बनाम बृज भूषण सिंह में पारित समन आदेश दिनांक 22.01.2018 सहित अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट-1, गोण्डा के समक्ष लंबित समस्त कार्यवाहियाँ, जहाँ तक वे धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के अपराध से संबंधित हैं, एतद्वारा निरस्त की जाती हैं।

10. जहाँ तक धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के अपराध का प्रश्न है, याचिकाकर्ता की ओर से यह भी प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत कार्यवाही का प्रतिवाद नहीं करना चाहता है और वह आज से दस दिवस के भीतर विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होकर दोषस्वीकार करेगा तथा माननीय विचारण न्यायालय द्वारा विधि के अनुसार अधिरोपित किए जाने वाले अर्थदण्ड का भुगतान करेगा।

11. यदि याचिकाकर्ता विचारण न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण करता है और दोषस्वीकार करता है, तो विचारण न्यायालय धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के अपराध हेतु कारावास के स्थान पर उपयुक्त अर्थदण्ड अधिरोपित कर सकता है तथा धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के संबंध में कार्यवाही का समापन कर सकता है।"

6. श्री एस.के. सिंह, विद्वान अधिवक्ता, आवेदक की ओर से प्रस्तुत करते हैं कि वर्ष 2022 में दायर पूर्व याचिका में वर्तमान आवेदक ने अपराध संख्या 348 सन् 2014 से संबंधित धारा 341/188 भारतीय दण्ड संहिता

के अंतर्गत उसके विरुद्ध प्रस्तुत आरोप पत्र संख्या 77 सन् 2014 को आक्षेपित किया था। उक्त आवेदन इस न्यायालय द्वारा आंशिक रूप से अनुमन्य किया गया, जिसके अंतर्गत धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के संबंध में आरोप पत्र तथा उससे संबंधित माननीय विचारण न्यायालय के समक्ष लंबित समस्त कार्यवाहियों को निरस्त कर दिया गया; तथापि धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के संबंध में इस न्यायालय ने आवेदक को यह स्वतंत्रता प्रदान की कि वह दस दिवस की अवधि के भीतर माननीय विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होकर दोषस्वीकार करे तथा माननीय विचारण न्यायालय द्वारा विधि के अनुसार अधिरोपित किए जाने वाले अर्थदण्ड को जमा करे।

7. श्री एस.के. सिंह ने जोरदार ढंग से प्रस्तुत किया कि धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता का विचारण संक्षिप्त विचारण (summary trial) होगा, क्योंकि उक्त धारा के अंतर्गत अधिकतम दण्ड एक माह का कारावास अथवा पाँच सौ रुपये तक का अर्थदण्ड या दोनों है, जैसा कि दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अध्याय-XXI में निर्दिष्ट है। धारा 262 दण्ड प्रक्रिया संहिता संक्षिप्त विचारण की प्रक्रिया का प्रावधान करती है, जो निम्नवत् है :-

"(1) इस अध्याय के अधीन विचारण में, इस संहिता में समन वाद के विचारण हेतु विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का पालन किया जाएगा, सिवाय इसके कि जैसा कि आगे उल्लिखित है।

(2) इस अध्याय के अधीन किसी भी दोषसिद्धि की स्थिति में तीन माह से अधिक की अवधि का कारावास दण्डादेशित नहीं किया जाएगा।"

8. उपर्युक्त विधिक प्रावधान के आलोक में, वर्तमान प्रकरण का विचारण उसी प्रकार किया जाएगा जिस प्रकार मजिस्ट्रेट द्वारा समन वादों का विचारण किया जाता है, जैसा कि अध्याय-XX में निर्दिष्ट है। धारा 251 दण्ड प्रक्रिया संहिता आरोप के सार को अभिव्यक्त किए जाने का प्रावधान करती है, जो निम्नवत् है :-

"जब किसी समन वाद में अभियुक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होता है या प्रस्तुत किया जाता है, तो जिस अपराध का वह अभियुक्त है उसके विवरण उसे बताए जाएंगे, और उससे यह पूछा जाएगा कि क्या वह दोष स्वीकार करता है या अपने बचाव में कुछ कहना चाहता है; परंतु औपचारिक आरोप निर्धारित करना आवश्यक नहीं होगा।"

9. श्री एस.के. सिंह ने कहा है कि विधि इस बिंदु पर स्पष्ट है कि जब किसी समन वाद में अभियुक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होता है, तो उससे यह पूछा जाएगा कि क्या वह दोष स्वीकार करता है या अपने बचाव में कुछ कहना चाहता है, तथा औपचारिक आरोप निर्धारित करना आवश्यक नहीं होगा।

10. श्री एस.के. सिंह ने आगे कहा कि इस न्यायालय के आदेश के अनुपालन में आवेदक को संहिता में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का अवलंबन करना होगा तथा धारा 251 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अनुसार कार्य करना होगा। आवेदक के

पास यह अवसर है कि वह या तो दोषस्वीकार करे अथवा अपना बचाव प्रस्तुत करे। इस न्यायालय के आदेश के अनुसरण में किसी भी परिस्थिति में आवेदक पर दोषस्वीकार करना अनिवार्य नहीं था; यदि उसके पास दोषस्वीकार न करने का कोई बचाव है, तो वह उसे प्रस्तुत कर सकता है।

11. अतः धारा 252 दण्ड प्रक्रिया संहिता अगले चरण के संबंध में पूर्णतः स्पष्ट है, जिसमें यह प्रावधान है कि यदि अभियुक्त दोषस्वीकार करता है, तो मजिस्ट्रेट उस दोषस्वीकार को यथासंभव अभियुक्त द्वारा प्रयुक्त शब्दों में अभिलेखित करेगा और अपने विवेकाधिकार से उसके आधार पर उसे दोषसिद्ध कर सकता है।

12. उल्लेखनीय है कि मजिस्ट्रेट धारा 254 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत अभियुक्त को संहिता की धारा 352 या 353 के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए बाध्य नहीं है तथा वह अभियोजन को सुन सकता है और ऐसे साक्ष्य ग्रहण कर सकता है जो वाद का गुण-दोष के आधार पर निर्णय करने हेतु आवश्यक हों।

13. उपर्युक्त के आलोक में, श्री एस.के. सिंह ने कहा कि इस न्यायालय द्वारा दिनांक 22.08.2022 के आदेश के माध्यम से विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होकर दोषस्वीकार करने की जो स्वतंत्रता प्रदान की गई थी, उसका आशय यह है कि आवेदक संहिता की धारा 251 के अंतर्गत विनिर्दिष्ट विधिक प्रक्रिया का अवलंबन करेगा। यदि उसके पास इस संबंध में कोई सामग्री उपलब्ध है, तो वह दोषस्वीकार न भी कर सकता है।

14. सहायक जिला शासकीय अधिवक्ता (आपराधिक), गोण्डा द्वारा दिनांक 03.11.2020 को संहिता की धारा 321 के अंतर्गत वर्तमान आवेदक के विरुद्ध धाराएँ 188 एवं 341 भारतीय दण्ड संहिता से संबंधित अभियोजन वापस लेने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया गया। इतना ही नहीं, वर्तमान आवेदक द्वारा भी दिनांक 03/4.04.2023 को शपथपत्र सहित धारा 321 संहिता के अंतर्गत आवेदन (परिशिष्ट संख्या-11) प्रस्तुत किया गया। माननीय विचारण न्यायालय ने लोक अभियोजक के उक्त आवेदन को आक्षेपित आदेश दिनांक 31.07.2024 द्वारा मुख्यतः इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि वर्तमान आवेदक प्रतीत होता है कि उसने उच्च न्यायालय के समक्ष दोषस्वीकार कर लिया था, अतः जहाँ तक धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता का प्रश्न है, अभियोजन वापस नहीं लिया जा सकता।

15. श्री एस.के. सिंह ने कहा कि माननीय विचारण न्यायालय ने यह अभिलेखित करते हुए त्रुटि की है कि वर्तमान आवेदक ने धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के संबंध में उच्च न्यायालय के समक्ष दोषस्वीकार किया था, जबकि दोषस्वीकार करने का एकमात्र मंच माननीय विचारण न्यायालय है, जहाँ इस प्रकार की कार्यवाही करने हेतु विशिष्ट प्रावधान संहिता की धारा 251 के अंतर्गत विनिर्दिष्ट है, जो स्पष्ट रूप से यह अनिवार्य करता है कि आवेदक या तो दोषस्वीकार कर सकता है अथवा यदि उसके पास इस संबंध में सामग्री उपलब्ध है तो दोषस्वीकार न भी कर सकता है। अतः आक्षेपित आदेश दिनांक 31.07.2024 में माननीय विचारण न्यायालय द्वारा की गई ऐसी टिप्पणी विकृत (perverse) है।

16. श्री एस.के. सिंह ने इस न्यायालय का ध्यान अनुपूरक शपथपत्र के परिशिष्ट संख्या-एस.ए.-1 की ओर आकृष्ट किया, जो दिनांक 22.01.2018 से 03.10.2024 तक की संपूर्ण आदेश-पत्रावली है, जिससे यह पूर्णतः स्पष्ट होता है कि आज दिनांक तक वर्तमान आवेदक के विरुद्ध आरोप निर्धारित नहीं किए गए हैं।

17. श्री एस.के. सिंह ने इस चरण पर कहा कि संक्षिप्त विचारण अथवा समन वादों के विचारण में आरोप निर्धारित करना आवश्यक नहीं होता, किन्तु यदि अभियुक्त-आवेदक के पास दोषस्वीकार न करने हेतु कोई सामग्री उपलब्ध है, तो वह विधि के अनुसार ऐसा कर सकता है। आवेदक ने दिनांक 12.12.2024 को माननीय विचारण न्यायालय के समक्ष एक आवेदन (परिशिष्ट संख्या-13) प्रस्तुत किया, जो दिनांक 22.08.2022 के कथित वक्तव्य से दोषस्वीकार के संबंध में प्रत्याहार (retraction) हेतु था। उक्त आवेदन में उसने दोषस्वीकार नहीं किया। अतः श्री सिंह ने प्रस्तुत किया कि यदि आरोप पत्र संख्या 77 सन् 2014 (उपर्युक्त) का वह भाग, जो धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता से संबंधित था, दिनांक 22.08.2022 के आदेश द्वारा निरस्त किया जा चुका है, तो उसका शेष भाग, जो धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता से संबंधित है, उसे भी निरस्त किया जाना चाहिए, क्योंकि वर्तमान आवेदक दोषस्वीकार नहीं करता है। इतना ही नहीं, लोक अभियोजक ने अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों, परिस्थितियों तथा सामग्री का परीक्षण करने के उपरांत धारा 321 संहिता के अंतर्गत अभियोजन वापस लेने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया था, जिसे अनुमन्य किया जाना चाहिए था तथा आरोप पत्र संख्या 77 सन् 2014 के अनुपालन में चल रहे अभियोजन को वापस लिया जाना चाहिए था।

18. प्रतिवादी की ओर से, श्री रण विजय सिंह, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने आवेदक के विद्वान अधिवक्ता श्री एस.के. सिंह के उपर्युक्त तर्कों का विरोध करते हुए प्रस्तुत किया कि चूँकि आवेदक ने इस न्यायालय के समक्ष अपनी प्रार्थना में धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के संबंध में कोई अनुरोध नहीं किया और केवल माननीय विचारण न्यायालय के समक्ष दोषस्वीकार करने की स्वतंत्रता मांगी थी, अतः उसे उचित आवेदन प्रस्तुत करके दोषस्वीकार करना चाहिए था तथा उसी प्रार्थना पर द्वितीय आवेदन धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत निरंतर स्वीकार्य नहीं होगा।

19. जब विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता से पूछा गया कि क्या आवेदक अपने संकल्प (undertaking) के आड़ में धारा 251 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत विधिक उपाय अपनाने से वंचित है तथा क्या उक्त संकल्प उसे धारा 251 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत निर्दिष्ट विधिक उपाय का लाभ लेने से रोकता है, तो विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि चूँकि धारा 251 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत इस संबंध में विधिक प्रावधान मौजूद है, अतः आवेदक अपने संकल्प के प्रकाश में उक्त विधिक उपाय अपना सकता है।

20. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन करने के उपरांत, विशेष रूप से यह ध्यान दिया गया कि प्रथम सूचना रिपोर्ट संख्या 348 सन् 2014 धाराएँ 341 एवं 188 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत दर्ज की गई थी, जिसमें आरोप पत्र संख्या 77 सन् 2014 प्रस्तुत किया गया। धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता स्पष्ट रूप से यह अनिवार्य करती है कि धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के

अंतर्गत प्रथम सूचना रिपोर्ट में जांच एजेंसी द्वारा प्रस्तुत आरोप पत्र पर कोई संज्ञान नहीं लिया जा सकता था। और यदि उसी प्रथम सूचना रिपोर्ट या आरोप पत्र में कोई अन्य लघु धारा उल्लिखित है, जो धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता पर निर्भर करती है, तो उस आरोप पत्र का संज्ञान विधि की दृष्टि में शून्य (nullity) होगा।

21. उल्लेखनीय है कि धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता में लोक सेवक द्वारा विधिवत् जारी आदेश का अवज्ञा करना परिभाषित किया गया है और धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता में अनुचित निरुद्धता के लिए दण्ड निर्धारित किया गया है। धारा 339 भारतीय दण्ड संहिता अनुचित निरुद्धता को परिभाषित करती है। वर्तमान प्रकरण में, कथित अनुचित निरुद्धता का अपराध धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता का एक अभिन्न और अविभाज्य हिस्सा है, क्योंकि इसे अलग करके धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत अभियुक्त के विरुद्ध अभियोजन चलाना संभव नहीं है, इस दृष्टि से कि धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता की उत्पत्ति धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता पर निर्भर करती है।

22. मुझे एक प्रकरण में निर्णय देने का अवसर प्राप्त हुआ, अर्थात् आवेदन (धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता) संख्या 12525 सन् 2023; इसरार अहमद बनाम राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य, जिसमें धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता के सूक्ष्म पहलुओं पर सर्वोच्च न्यायालय तथा अन्य उच्च न्यायालयों के निर्णयों के प्रकाश में विचार किया गया। अनुच्छेद 8, 11 और 12 यहाँ नीचे उद्धृत करना उपयुक्त होगा, जो इस प्रकार हैं :-

"8. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय का ध्यान सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रकरण D.K. राजेन्द्रन एवं अन्य बनाम राज्य तमिलनाडु, AIR 2010 SC 3718 में पारित निर्णय की ओर आकृष्ट किया, जिसमें अनुच्छेद 25 का उल्लेख किया गया है, जो निम्नवत् है :-

"25. अतः, उपर्युक्त के आलोक में, विधि का सारांश इस प्रकार है कि उस लोक सेवक द्वारा परिवाद किया जाना अनिवार्य है जिसका विधिक आदेश पालन नहीं किया गया हो। परिवाद लिखित रूप में होना चाहिए। धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान अनिवार्य हैं। उनका पालन न करने पर अभियोजन और अन्य सभी परिणामी आदेश अवैध हो जाएंगे। बिना ऐसे परिवाद के न्यायालय मामले का संज्ञान नहीं ले सकता। ऐसे परिवाद के अभाव में विचारण और दोषसिद्धि प्रारंभ से ही शून्य (void ab initio) होगी क्योंकि यह न्यायक्षेत्रहीन (without jurisdiction) है।"

(जोर दिया गया)

11. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन करने तथा सर्वोच्च न्यायालय और विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णयों का संदर्भ लेने के उपरांत, मैं भी इस विचार पर पहुँचा हूँ कि धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता द्वारा सृजित विशिष्ट प्रतिबंध के आलोक में, उस अधिकारी द्वारा लिखित परिवाद के अभाव में जिसे इस उद्देश्य के लिए अधिकृत किया गया हो, कोई भी न्यायालय धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत आरोप पत्र में उल्लिखित किसी अपराध का संज्ञान नहीं ले सकता। धारा 195

दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान अनिवार्य हैं और उनका पालन न करने पर अभियोजन तथा अन्य परिणामी आदेश अवैध हो जाएंगे।

12. वर्तमान प्रकरण में, विशेष रूप से यह ध्यान देने योग्य है कि वह परिवाद उस अधिकारी द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया जिसने धारा 144 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत उद्घोषणा जारी की थी; अतः विचारण न्यायालय धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत उल्लिखित अपराध को दर्शाने वाले आरोप पत्र का संज्ञान नहीं ले सकता था। इसके अतिरिक्त, अन्य अपराध जैसे कि धारा 143 भारतीय दण्ड संहिता: अवैध सभा का दण्ड और धारा 342: अनुचित निरुद्धता का दण्ड, चूँकि ये धारा 195(1) दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत कल्पित अपराध की उसी घटना का हिस्सा हैं, अतः इन्हें अलग करके अभियुक्त के विरुद्ध अभियोजन चलाना संभव नहीं है, क्योंकि अन्य अपराधों की उत्पत्ति धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता पर निर्भर करती है। मेरी दृष्टि में, यदि धारा 144 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत कोई उद्घोषणा नहीं होती, तो आवेदक के विरुद्ध धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत कोई अपराध नहीं बनता। इसके अतिरिक्त, अवैध सभा का अपराध भी धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता का अभिन्न और अविभाज्य हिस्सा है। उद्घोषणा आदेश के कारण, वर्तमान प्रकरण में अनुचित निरुद्धता का अपराध आवेदक द्वारा कई व्यक्तियों के साथ किया गया माना जाता है, जो उद्घोषणा आदेश के प्रभाव में एकत्रित हुए थे, और इसके परिणामस्वरूप कुछ आमजन और उनके वाहन जाम में फंस गए थे।

23. वर्तमान प्रकरण में, आरोप पत्र संख्या 77, सन् 2014 के संदर्भ में धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता का संज्ञान धारा 195 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत अविरुद्ध था; अतः उक्त आरोप पत्र का वह भाग पहले ही इस न्यायालय द्वारा दिनांक 22.08.2022 के आदेश के माध्यम से निरस्त किया जा चुका है। इसलिए, उसी आरोप पत्र का शेष भाग भी निरस्त किया जाना योग्य है, क्योंकि धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता से संबंधित आरोप धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता से संबंधित आरोप पर निर्भर करता है।

24. जब वर्तमान आवेदक ने दोष स्वीकार नहीं किया, जिसे वह धारा 251 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत कर सकता है, तो विचारण न्यायालय यह अवलोकन न करे कि चूँकि आवेदक ने उच्च न्यायालय के समक्ष यह प्रार्थना नहीं की कि वह विचारण न्यायालय में दोष स्वीकार करने के लिए उपस्थित हो, और इसे ऐसा न माना जाए कि उसने दोष स्वीकार किया है। जब तक और जब तक अभियुक्त आवेदक विचारण न्यायालय में दोष स्वीकार नहीं करता, इसे ऐसा नहीं माना जाएगा कि उसने दोष स्वीकार किया है। अतः, विचारण न्यायालय के इस प्रकार के निष्कर्ष इस दृष्टि से पथभ्रष्ट (perverse) हैं।

25. सर्वोच्च न्यायालय ने मामले में *राज्य महाराष्ट्र बनाम सुखदेव सिंह एवं अन्य*, रिपोर्टेड (1992) 3 SCC 700 में यही स्पष्ट किया है कि यद्यपि उक्त धाराएँ सत्र न्यायालय की प्रक्रिया से संबंधित हैं, परंतु दोष स्वीकार करने के संबंध में कानून का सिद्धांत वर्तमान प्रकरण में भी लागू हो सकता है। सर्वोच्च न्यायालय के अवलोकनों का प्रासंगिक अंश पैराग्राफ-52 में इस प्रकार उद्धृत किया गया है:-

52. "अतः, अभियुक्त का दोष स्वीकार करने का आग्रह स्पष्ट, अस्पष्टता रहित और अंशकालिक रहित होना चाहिए, तथा न्यायालय को यह संतोष होना चाहिए कि उसने अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों की प्रकृति को समझ लिया है और उन्हें स्वीकार करता है। न्यायालय को दोष स्वीकार करने की प्रार्थना को स्वीकार करने और उस पर कार्रवाई करने से पूर्व सतर्कता और विवेकपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। जब ये आवश्यकताएँ पूरी हो जाएँ, तो कानून न्यायाधीश को यह अनुमति देता है कि वह दोष स्वीकार करने की प्रार्थना के आधार पर अभियुक्त को दोषी ठहराए। यदि, तथापि, अभियुक्त दोष स्वीकार नहीं करता या माननीय न्यायाधीश उसके दोष स्वीकारने की प्रार्थना पर कार्य नहीं करता, तो उसे गवाहों की परीक्षा के लिए तिथि निर्धारित करनी होगी, अर्थात् मामले की सुनवाई करनी होगी।

26. उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों, उपरोक्त विचार किए गए न्यायिक निर्णयों के दृष्टिगत, दिनांक 31.07.2024 (परिशिष्ट संख्या 2) को माननीय अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, न्यायालय संख्या 1/विशेष मजिस्ट्रेट एम.पी./एम.एल.ए., गोंडा द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को यहाँ निरस्त/आक्षेपित किया जाता है।

27. चूंकि धारा 188 भारतीय दण्ड संहिता से संबंधित आरोप पत्र का भाग पहले ही इस न्यायालय द्वारा निरस्त/आक्षेपित किया जा चुका है और लोक अभियोजक ने पहले ही अभियोजन वापस लेने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया था, जो अब उसी आरोप पत्र के शेष भाग धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता से संबंधित होगा, इसलिए मामले को पुनः विचार के लिए माननीय विचारण न्यायालय को भेजने के बजाय, क्योंकि मुझे इस मुद्दे को पुनः विचारण न्यायालय के समक्ष भेजने में कोई सार्थक उद्देश्य नहीं प्रतीत होता, इस न्यायालय के धारा 528 बी.एन.एस.एस. (पूर्व में धारा 482 द.प्र.सं.) के अंतर्गत अधिकार का प्रयोग करते हुए, मैं यह निर्णय लेता हूँ कि आरोप पत्र संख्या 77, सन् 2014 के अनुसार धारा 341 भारतीय दण्ड संहिता के तहत अभियोजन को वापस लिया गया माना जाएगा और धारा 321 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत दिनांक 03.11.2020 को लोक अभियोजक द्वारा प्रस्तुत आवेदन को अनुमन्य माना जाएगा।

28. अतः, वर्तमान याचिका अनुमन्य की जाती है।

29. लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं है।

समाप्ति से पूर्व, मैं श्री पियूष त्रिपाठी, मेरे साथ संलग्न अनुसंधान सहयोगी, तथा सुश्री आयुषी पंडिता, विधि इंटरन, द्वारा वर्तमान प्रकरण में लागू होने वाले प्रासंगिक न्यायिक निर्णयों की खोज में किए गए प्रयासों और अनुसंधान की सराहना करता हूँ।

(2025) 2 ILRA 160

मूल अधिकारिता

आपराधिक पक्ष

दिनांक : लखनऊ 10.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अरुण कुमार सिंह देशवाल

धारा 482 के अंतर्गत आवेदन सं. 25418 वर्ष 2024

पियूष गुप्ता एवं अन्य

... आवेदकगण

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

... विपक्षी पक्ष

आवेदकों के अधिवक्ता : कबीर तिवारी, वरिष्ठ अधिवक्ता

विपक्षी पक्ष के अधिवक्ता : शासकीय अधिवक्ता

आपराधिक विधि – दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 482 – खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 – धाराएँ 3(1)(n), 3(1)(o), 3(1)(y), 26, 26(2)(i), 26(4), 27, 42(4), 59(i) एवं 80 – धारा 482 के अंतर्गत आवेदन – समन आदेश तथा संपूर्ण कार्यवाही को चुनौती – आवेदक, आवेदक संख्या 2 के कर्मचारी हैं जो एक रेस्टोरेंट चला रहे हैं – विभिन्न प्रकार के तैयार खाद्य पदार्थों की बिक्री का कार्य – खाद्य सुरक्षा अधिकारी द्वारा निरीक्षण किया गया – गोल्डी मसाला ब्राण्ड की हल्दी के चार सीलबंद पैकेटों का नमूना लिया गया – जिनमें लेड-क्रोमेट पाया गया जो मानव उपभोग के लिए हानिकारक है – शिकायत दर्ज की गई – अधिनियम, 2006 की धारा 59(1) के अंतर्गत समन आदेश जारी – न्यायालय का मत कि – यह विवादित नहीं है कि आवेदक ने हल्दी पाउडर के सीलबंद पैकेट एक लाइसेंसधारी/पंजीकृत निर्माता से खरीदे थे और उसकी गुणवत्ता के संबंध में निर्माता द्वारा दी गई जानकारी पर भरोसा किया था – यदि गुणवत्ता की गारंटी के बावजूद हल्दी पाउडर असुरक्षित पाया जाता है – तो उस स्थिति में हल्दी पाउडर का व्यवसाय करने वाला खाद्य व्यवसाय संचालक या उसका वितरक उत्तरदायी होगा – निर्णय यह कि रेस्टोरेंट या उसका स्वामी अथवा उसके किसी कर्मचारी द्वारा भोजन बेचने मात्र से वह उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता – फलतः आवेदकों के विरुद्ध लंबित विवादित कार्यवाही निरस्त किए जाने योग्य है – तदनुसार आवेदन स्वीकृत किया जाता है – तथापि अधीनस्थ न्यायालय उस निर्माता/वितरक के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र है जिसने उसकी गुणवत्ता के संबंध में बिल/इनवॉइस जारी करने के बावजूद निर्धारित मानकों का पालन नहीं किया। (पैरा - 27, 28, 30)

आवेदन स्वीकृत। (E-11)

उद्धृत वादों की सूची :

- 1.खाद्य निरीक्षक, बरहामपुर नगरपालिका बनाम पी. मोहन राव (1988 क्रि. एल.जे. 1534), उड़ीसा उच्च न्यायालय।
- 2.गुरुमूर्ति पात्रा बनाम उड़ीसा राज्य आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 24/1984 (MANU/OR/0272/1990))।
- 3.दिनेश कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 55/1998 (200 क्रि. एल.जे. 1879) - हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय)।
- 4.श्री महावीर एजेंसी एवं अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 982/2023 - ए.आई.आर. 2023 सर्वोच्च न्यायालय 2129 - माननीय सर्वोच्च न्यायालय)।
- 5.रण कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2019 खण्ड 9 एस.सी.सी. 427)।
- 6.प्याराली के. तेजानी बनाम महादेव रामचन्द्र दांगे (1974 खण्ड 1 एस.सी.सी. 167)।

(माननीय न्यायमूर्ति अरुण कुमार सिंह देशवाल द्वारा निर्णीत)

1.मैंने श्री अनिल तिवारी, वरिष्ठ अधिवक्ता, जिनकी सहायता श्री कबीर तिवारी, आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई, तथा राज्य की ओर से श्री पंकज सकसेना, विद्वान शासकीय अधिवक्ता को सुना।

2.प्रस्तुत आवेदन दिनांक 16.02.2024 को ए.सी.जे.एम.-I, न्यायालय संख्या 16, शाहजहाँपुर द्वारा वाद संख्या 83 वर्ष 2024 (राज्य बनाम पियूष गुप्ता एवं अन्य) में पारित समन आदेश को निरस्त (रद्द) करने के लिए दायर किया गया है, जो कि खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 की धारा 26(2)(i) तथा 59(i) के अंतर्गत पारित किया गया था (जिसे आगे "अधिनियम, 2006" कहा गया है), तथा उपर्युक्त वाद की संपूर्ण कार्यवाही को भी निरस्त करने हेतु प्रार्थना की गई है।

तथ्यात्मक पृष्ठभूमि

3.आवेदक संख्या 1, आवेदक संख्या 2 का कर्मचारी है, जो देवेंद्र सिंह नेगी की एकमात्र स्वामित्व वाली संस्था है। आवेदक संख्या 2 एक रेस्टोरेंट है, जो विभिन्न प्रकार के तैयार खाद्य पदार्थों की बिक्री का कार्य करता है। प्रारम्भ में अधिनियम, 2006 के अंतर्गत फॉर्म-सी लाइसेंस दिनांक 11.02.2021 को राखी अरोड़ा को जारी किया गया था। तत्पश्चात आवेदक संख्या 2 का फॉर्म-सी लाइसेंस दिनांक 11.02.2024 को देवेंद्र सिंह नेगी के नाम स्थानांतरित कर दिया गया। दिनांक 21.03.2023 को आवेदक संख्या 2 के परिसर का निरीक्षण मुख्य खाद्य सुरक्षा अधिकारी, शाहजहाँपुर द्वारा अपनी टीम के साथ किया गया। मुख्य खाद्य सुरक्षा अधिकारी की मांग पर आवेदक संख्या 1 ने आवेदक संख्या 2 का लाइसेंस प्रस्तुत किया, जो दिनांक 10.02.2024 तक वैध था। इसके बाद मुख्य खाद्य सुरक्षा अधिकारी ने आवेदक संख्या 2 के परिसर में पाए गए गोल्डी मसाला ब्रांड की हल्दी पाउडर के पाँच पैकेटों में से चार पैकेट खरीद लिए। इसके पश्चात हल्दी पाउडर के सीलबंद पैकेटों को दिनांक

22.03.2023 को परीक्षण हेतु सरकारी खाद्य प्रयोगशाला, लखनऊ भेजा गया। सरकारी खाद्य प्रयोगशाला, लखनऊ के खाद्य विश्लेषक की दिनांक 15.05.2023 की रिपोर्ट के अनुसार, हल्दी पाउडर के सीलबंद पैकेटों में लेड क्रोमेट पाया गया, जो मानव उपभोग के लिए हानिकारक है, इसलिए नमूने को असुरक्षित घोषित किया गया। इसके बाद दिनांक 29.03.2023 को खाद्य सुरक्षा आयुक्त, लखनऊ से खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 (जिसे आगे “अधिनियम, 2006” कहा गया है) की धारा 42(4) के अंतर्गत आवश्यक अनुमति प्राप्त करने के पश्चात, खाद्य सुरक्षा अधिकारी, शाहजहाँपुर द्वारा दिनांक 09.02.2024 को शिकायत दर्ज की गई। इसके उपरांत शिकायत तथा अन्य अभिलेखों का अवलोकन करने के बाद माननीय मजिस्ट्रेट ने संज्ञान लेते हुए अधिनियम, 2006 की धारा 59(1) के अंतर्गत आवेदकों को दिनांक 16.02.2024 के आदेश द्वारा समन जारी किया, जो वर्तमान आवेदन में चुनौती के अधीन है।

आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता की दलीलें

4. श्री अनिल तिवारी, वरिष्ठ अधिवक्ता, जिनकी सहायता श्री कबीर तिवारी, आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई, ने यह प्रस्तुत किया कि आवेदक संख्या 2 ने गोल्डी मसाला ब्रांड की हल्दी पाउडर के सीलबंद पैकेट उसके लाइसेंसधारी निर्माता से खरीदे थे और उन्हें उसी अवस्था में सुरक्षित रखा था, जिस अवस्था में वे खरीदे गए थे। यदि किसी ब्रांडेड कंपनी द्वारा निर्मित हल्दी पाउडर के सीलबंद पैकेट में कोई ऐसा घटक पाया जाता है जिससे वह असुरक्षित हो जाता है, तो इसके लिए आवेदकों की कोई जिम्मेदारी नहीं होगी और इसके लिए हल्दी पाउडर का निर्माता ही जिम्मेदार होगा। आगे यह भी प्रस्तुत किया गया कि आवेदक गोल्डी मसाला ब्रांड की हल्दी पाउडर को बेच नहीं रहे थे, बल्कि उसे बाद में ग्राहकों को परोसे जाने वाले भोजन को तैयार करने में उपयोग कर रहे थे। इसलिए आवेदक संख्या 2 “खाद्य व्यवसाय संचालक” की परिभाषा में नहीं आएगा, बल्कि “उपभोक्ता” की परिभाषा में आएगा।

5. आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे यह भी प्रस्तुत किया गया कि यदि केवल तर्क के लिए मान भी लिया जाए कि आवेदक को खाद्य व्यवसाय संचालक माना जाए, तब भी वह अधिनियम, 2006 की धारा 26(2) के अंतर्गत तभी उत्तरदायी होगा जब वह किसी खाद्य पदार्थ को बिक्री के उद्देश्य से भंडारित करे। किन्तु आवेदक संख्या 2 ने गोल्डी मसाला ब्रांड की हल्दी पाउडर को बिक्री के लिए भंडारित नहीं किया था, बल्कि उसे रेस्टोरेंट में भोजन तैयार करने के लिए उपभोग हेतु रखा था और उसे सीलबंद पैकेट में मौजूद सामग्री के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। अतः आवेदकों को अधिनियम, 2006 की धारा 26(2) के अंतर्गत उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। यह भी प्रस्तुत किया गया कि खाद्य व्यवसाय संचालक की जिम्मेदारी अधिकतम कठोर दायित्व की हो सकती है, न कि निर्माता की तरह पूर्ण दायित्व की, जैसा कि अधिनियम, 2006 की धारा 27 में निहित है।

6. अंत में, वरिष्ठ विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रस्तुत किया गया कि आवेदक संख्या 2 तैयार भोजन की बिक्री का व्यवसाय करता है, इसलिए गोल्डी मसाला ब्रांड की हल्दी पाउडर के सीलबंद पैकेट का नमूना, आवेदक संख्या

2 द्वारा तैयार किए गए भोजन का नमूना नहीं माना जा सकता। अपने इस तर्क के समर्थन में आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:-

- (i) फूड इंस्पेक्टर, बरहामपुर म्युनिसिपैलिटी बनाम पी. मोहन राव; 1988 क्रि.ला.ज. 1534 (उड़ीसा उच्च न्यायालय)
- (ii) गुरुमूर्ति पात्रा बनाम उड़ीसा राज्य; आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 24 सन् 1984 (MANU/OR/0272/1990)
- (iii) दिनेश कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य; आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 55 सन् 1998 (2000 क्रि.ला.ज. 1879) (हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय)
- (iv) श्री महावीर एजेंसी एवं अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य; आपराधिक अपील संख्या 982 सन् 2023 (AIR 2023 सर्वोच्च न्यायालय 2129) (माननीय सर्वोच्च न्यायालय)

राज्य की ओर से विद्वान ए.जी.ए. की दलीलें

7. श्री पंकज सक्सेना, विद्वान ए.जी.ए. ने यह प्रस्तुत किया कि आवेदक संख्या 2 के परिसर से प्राप्त गोल्डी मसाला ब्रांड की हल्दी पाउडर के सीलबंद पैकेट, खाद्य विश्लेषक की रिपोर्ट के आधार पर असुरक्षित घोषित किए गए थे, जिनका उपयोग आवेदक संख्या 2 द्वारा भोजन पकाने में किया जा रहा था, जिसे बाद में आवेदकों के रेस्टोरेंट में उपभोक्ताओं को बेचा जाना था। आगे विद्वान ए.जी.ए. द्वारा यह भी प्रस्तुत किया गया कि खाद्य व्यवसाय संचालक का यह दायित्व होता है कि वह यह सुनिश्चित करे कि उसके नियंत्रण में चल रहे व्यवसाय के अंतर्गत खाद्य पदार्थ अधिनियम तथा उसके अधीन बनाए गए नियमों और विनियमों की आवश्यकताओं का पालन करें। चूंकि आवेदक संख्या 2 के परिसर से बरामद हल्दी पाउडर के सीलबंद पैकेट असुरक्षित पाए गए और उन्हें मानव उपभोग के लिए रखा गया था, इसलिए अधिनियम, 2006 की धारा 26(2)(i) के तत्व लागू होते हैं। अपने तर्क के समर्थन में विद्वान ए.जी.ए. ने सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय **राज कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य; 2019 (9) एस.सी.सी. 427** पर भरोसा किया, जिसमें अनुच्छेद संख्या 8 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह अवलोकन किया है कि जब विधायिका द्वारा खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम के अंतर्गत सभी मानक निर्धारित कर दिए जाते हैं, तो उन मानकों का पालन किया जाना आवश्यक होता है। विद्वान ए.जी.ए. ने आगे सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय **प्याराली के. तेजानी बनाम महादेव रामचंद्र डांगे; (1974) 1 एस.सी.सी. 167** पर भी भरोसा किया, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम की धाराओं 14 और 19 के प्रावधानों पर विचार करते हुए यह कहा कि वारंटी के आधार पर अभियुक्त के दोषमुक्त होने का प्रश्न न्यायालय को इस प्रकार के तर्क को अस्वीकार करने से नहीं रोकेगा, क्योंकि विधि विशेष रूप से कार्रवाई का प्रावधान करती है और खाद्य संबंधी कानूनों की कठोर व्याख्या की जानी चाहिए।

8. आगे विद्वान ए.जी.ए. द्वारा यह भी प्रस्तुत किया गया कि आवेदकों द्वारा उठाए गए तर्क उनका प्रतिरक्षा पक्ष हैं, जिन पर विचार विचारण के दौरान किया जा सकता है। अतः विवादित कार्यवाही को निरस्त करने का कोई आधार नहीं बनता और यह आवेदन निरस्त किए जाने योग्य है।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष

9. अभिलेख पर उपलब्ध कथनों तथा तथ्यों से यह स्पष्ट है कि आवेदक संख्या 2 अपने परिसर में भोजन तैयार कर उसे बेचने के व्यवसाय से संबंधित है, जिसमें वह विभिन्न खाद्य पदार्थों की सामग्री का उपयोग करता है, जिनमें अलग-अलग मसाले तथा किसी ब्रांडेड कंपनी के सीलबंद पैकेट में उपलब्ध हल्दी पाउडर भी शामिल है। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि यदि आवेदक संख्या 2 ने भोजन तैयार करने में किसी ब्रांडेड कंपनी के खरीदे गए सीलबंद पैकेट में उपलब्ध हल्दी पाउडर का उपयोग किया है, तो क्या वह उस स्थिति में उत्तरदायी होगा जब वह सीलबंद हल्दी पाउडर असुरक्षित पाया जाए, जबकि आवेदक संख्या 2 ने उसे उचित बिल प्राप्त करके खरीदा था, जो प्रथमदृष्टया सीलबंद हल्दी पाउडर की गुणवत्ता की गारंटी का प्रमाण है। एक अन्य प्रश्न यह भी उत्पन्न होता है कि क्या वह रेस्टोरेंट, जो धन के बदले भोजन परोस रहा है, केवल इस आधार पर कि उसके पास किसी ब्रांडेड कंपनी के सीलबंद पैकेट में हल्दी पाउडर संग्रहीत है, जिसे बाद में भोजन तैयार करने में उपयोग किया जा सकता है, अधिनियम, 2006 की धारा 3(1)(n) के अंतर्गत “खाद्य व्यवसाय संचालक” माना जाएगा।

10. आगे बढ़ने से पहले यह प्रश्न तय करना उपयुक्त होगा कि क्या आवेदक संख्या 2 (रेस्टोरेंट) केवल इस कारण कि उसने गुणवत्ता के संबंध में वारंटी के साथ किसी ब्रांडेड कंपनी से खरीदा हुआ सीलबंद हल्दी पाउडर संग्रहीत किया है, “खाद्य व्यवसाय संचालक” की परिभाषा के अंतर्गत आएगा।

11. अब यह विवादित नहीं रहा कि हल्दी पाउडर “खाद्य” की परिभाषा के अंतर्गत आता है, क्योंकि इसका उपभोग मनुष्य अन्य खाद्य पदार्थों के साथ मिलाकर करता है। अतः हल्दी पाउडर अधिनियम, 2006 की धारा 3(1)(y) के अनुसार खाद्य सामग्री (इंग्रीडिएंट) की श्रेणी में आएगा। अधिनियम, 2006 की धारा 3(1)(y) इस प्रकार उद्धृत की जाती है:-

“3(1)(y) ‘सामग्री’ से अभिप्राय किसी भी ऐसे पदार्थ से है, जिसमें खाद्य योज्य (फूड एडिटिव) भी शामिल है, जिसका उपयोग भोजन के निर्माण या तैयारी में किया जाता है और जो अंतिम उत्पाद में उपस्थित रहता है, संभवतः परिवर्तित रूप में।”

12. “खाद्य व्यवसाय” की परिभाषा अधिनियम, 2006 की धारा 3(1)(n) में तथा “खाद्य व्यवसाय संचालक” की परिभाषा धारा 3(1)(o) में दी गई है, जो इस प्रकार है:-

“3(1)(n) ‘खाद्य व्यवसाय’ से अभिप्राय किसी भी उपक्रम से है, चाहे वह लाभ के लिए हो या नहीं तथा चाहे वह सार्वजनिक हो या निजी, जो भोजन के निर्माण, प्रसंस्करण, पैकेजिंग, भंडारण, परिवहन, वितरण, आयात से संबंधित किसी भी चरण की गतिविधि करता हो, और इसमें खाद्य सेवाएँ, कटरिंग सेवाएँ, भोजन या खाद्य सामग्री की बिक्री भी सम्मिलित है।

3(1)(o) 'खाद्य व्यवसाय संचालक' से अभिप्राय खाद्य व्यवसाय के संबंध में उस व्यक्ति से है जिसके द्वारा यह व्यवसाय संचालित या स्वामित्व में हो तथा जो इस अधिनियम तथा इसके अधीन बनाए गए नियमों और विनियमों के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए उत्तरदायी हो।"

13. खाद्य सुरक्षा और मानक (खाद्य उत्पाद मानक और खाद्य योज्य) विनियम, 2011 के अनुसार, जो खाद्य उत्पादों के मानक निर्धारित करता है, हल्दी पाउडर (हल्दी) विनियम 2.9.18 के अनुसार खाद्य उत्पाद की श्रेणी में आता है और विनियम 2.9.18(2) के अनुसार हल्दी पाउडर (हल्दी) भी खाद्य उत्पाद की परिभाषा में सम्मिलित होगा। विनियम 2.9.18 इस प्रकार उद्धृत है:-

"2.9.18: हल्दी (हल्दी)

1. संपूर्ण हल्दी से अभिप्राय कर्कुमा लोंगा एल. के प्राथमिक या द्वितीयक राइजोम (भूमिगत तने) से है, जिन्हें व्यापारिक रूप से बल्ब या उंगलियाँ कहा जाता है। इन राइजोमों को पुनः अंकुरण से बचाने के लिए उबलते पानी में भिगोकर सुखाया जाता है। राइजोम प्राकृतिक अवस्था में या मशीन द्वारा पॉलिश किए हुए हो सकते हैं। उत्पाद में विशिष्ट गंध और स्वाद होना चाहिए तथा उसमें सीलन या अन्य बाहरी स्वाद नहीं होना चाहिए। यह फफूंदी, जीवित या मृत कीट, कीट अवशेष तथा कृंतक प्रदूषण से मुक्त होना चाहिए। उत्पाद में लेड क्रोमेट, मिलाया गया स्टार्च या कोई अन्य बाहरी रंग पदार्थ नहीं होना चाहिए।

यह निम्नलिखित मानकों के अनुरूप होना चाहिए—

i	बाहरी चीज़ें	वज़न के हिसाब से 1.0 परसेंट से ज़्यादा नहीं
ii	खराब राइजोम	वज़न के हिसाब से 5.0 परसेंट से ज़्यादा नहीं
iii	नमी वज़न	वज़न के हिसाब से 12.0 परसेंट से ज़्यादा नहीं
iv	कीड़ों से खराब चीज़ें	वज़न के हिसाब से 1.0 परसेंट से ज़्यादा नहीं
v	लेड क्रोमेट के लिए टेस्ट	नेगेटिव

व्याख्या.—

दोषपूर्ण राइजोम (कंद/जड़-तना) से अभिप्राय उन सिकुड़ी हुई उंगलियों या बल्बों से है जो अंदर से क्षतिग्रस्त हों, खोखले या छिद्रयुक्त राइजोम हों, उबालने से जले हुए हों, तथा अन्य प्रकार के क्षतिग्रस्त राइजोम भी इसमें सम्मिलित होते हैं।

2. हल्दी (हल्दी) पाउडर से अभिप्राय उस पाउडर से है जो कर्कुमा लोंगा एल. के सूखे राइजोम या कंदाकार जड़ों को पीसकर प्राप्त किया जाता है। इस पाउडर में विशिष्ट गंध और स्वाद होना चाहिए तथा इसमें सीलन या कोई अन्य बाहरी गंध नहीं होनी चाहिए। यह फफूंदी, जीवित या मृत कीट, कीट अवशेष तथा कृंतक जनित संदूषण से मुक्त होना चाहिए। इस पाउडर में किसी भी प्रकार का मिला हुआ रंग पदार्थ, जिसमें लेड क्रोमेट भी शामिल है, तथा संरचनात्मक रूप से बाहरी पदार्थ, जैसे विदेशी स्टार्च, नहीं होना चाहिए।

यह निम्नलिखित मानकों के अनुरूप होना चाहिए:—

i	नमी	वज़न के हिसाब से 10.0 परसेंट से ज्यादा नहीं
ii	सूखे बेसिस पर टोटल ऐश	वज़न के हिसाब से 9.0 परसेंट से ज्यादा नहीं
iii	सूखे बेसिस पर डाइल HCl में इनसॉल्युबल ऐश	वज़न के हिसाब से 1.5 परसेंट से ज्यादा नहीं
iv	कलरिंग पावर, जिसे सूखे बेसिस पर करक्यूमिनॉइड कंटेंट के तौर पर बताया गया है	वज़न के हिसाब से 2.0 परसेंट से कम नहीं
v	टोटल स्टार्च	वज़न के हिसाब से 60.0 परसेंट से ज्यादा नहीं
vi	लेड क्रोमेट के लिए टेस्ट	नेगेटिव

14.अतः अब यह विवादित नहीं रहा कि हल्दी पाउडर (हल्दी) भी एक खाद्य सामग्री (फूड प्रोडक्ट) है क्योंकि यह भोजन का एक घटक (फूड इंग्रीडिएंट) है।

15.“खाद्य व्यवसाय” की उपर्युक्त परिभाषा से यह स्पष्ट है कि कोई रेस्टोरेंट, जो खाद्य सेवा (फूड सर्विस) की गतिविधि करता है, रेस्टोरेंट में तैयार किए जाने वाले भोजन के संबंध में “खाद्य व्यवसाय संचालक” (फूड बिज़नेस ऑपरेटर) की परिभाषा में आएगा। यह भी स्पष्ट है कि रेस्टोरेंट को खाद्य सामग्री (फूड इंग्रीडिएंट) के संबंध में खाद्य व्यवसाय संचालक नहीं माना जा सकता, जब तक कि वह उस सामग्री की बिक्री न करता हो।

16.वर्तमान वाद में, आवेदक संख्या-2 को अधिनियम, 2006 की धारा 31 के अंतर्गत फॉर्म-C में लाइसेंस जारी किया गया था, जिससे यह स्पष्ट होता है कि आवेदक संख्या-2 को रेस्टोरेंट की खाद्य सेवाओं के लिए निम्नलिखित तीन उत्पादों हेतु लाइसेंस प्रदान किया गया था—

- (i) खाद्य बर्फ (एडिबल आइस) जिसमें शरबत और सोरबे शामिल हैं
- (ii) पेय पदार्थ (बेवरेजेज) जिसमें डेयरी उत्पाद शामिल हैं
- (iii) तैयार भोजन (प्रिपेयर्ड फूड्स)

17.खाद्य सुरक्षा और मानक (खाद्य व्यवसाय का लाइसेंस एवं पंजीकरण) विनियम, 2011 के विनियम 2.1.2(5) के अनुसार, खाद्य व्यवसाय संचालक यह सुनिश्चित करेगा कि अनुसूची-2 के फॉर्म-B के परिशिष्ट-3 में दिए गए लाइसेंस की सभी शर्तों तथा अनुसूची-4 में विभिन्न भागों के अंतर्गत, व्यवसाय की प्रकृति के अनुसार

निर्दिष्ट सुरक्षा, स्वच्छता और स्वास्थ्यमान (हाइजीन) से संबंधित आवश्यकताओं का हर समय पालन किया जाए। संदर्भ हेतु विनियम 2.1.2(5) इस प्रकार है-

“2.1.2 खाद्य व्यवसाय के लिए लाइसेंस-

(5) खाद्य व्यवसाय संचालक यह सुनिश्चित करेगा कि अनुसूची-2 के फॉर्म-B के परिशिष्ट-3 में प्रदान की गई लाइसेंस की सभी शर्तों तथा अनुसूची-4 में विभिन्न भागों के अंतर्गत, व्यवसाय की प्रकृति के अनुसार निर्धारित सुरक्षा, स्वच्छता और हाइजीन संबंधी आवश्यकताओं का हर समय पालन किया जाए।

बशर्ते कि लाइसेंसिंग प्राधिकरण, एफ.एस.एस.ए.आई. द्वारा इस उद्देश्य के लिए अधिकृत अपनी एजेंसियों या स्वयं के माध्यम से लाइसेंस प्राप्त प्रतिष्ठानों का समय-समय पर खाद्य सुरक्षा ऑडिट और निरीक्षण सुनिश्चित करेगा।

यह भी बशर्ते कि कोई भी व्यक्ति परमाणु ऊर्जा विभाग से परमाणु ऊर्जा (खाद्य पदार्थों के विकिरण नियंत्रण) विनियम, 1996 के अंतर्गत लाइसेंस प्राप्त किए बिना, विकिरण उपचारित किसी भी खाद्य पदार्थ का निर्माण, आयात, बिक्री, भंडारण, वितरण या बिक्री हेतु प्रदर्शित नहीं करेगा।”

18. अनुसूची-2 के फॉर्म-B के परिशिष्ट-3 के अनुसार, जिन शर्तों का पालन खाद्य व्यवसाय संचालक द्वारा किया जाना आवश्यक है, वे निम्नलिखित हैं-

अनुसूची-2

फॉर्म-B

परिशिष्ट-3

लाइसेंस की शर्तें	
सभी खाद्य व्यवसाय संचालकों को यह सुनिश्चित करना होगा कि उनके खाद्य व्यवसाय के संचालन के दौरान निम्नलिखित शर्तों का हर समय पालन किया जाए।	
खाद्य व्यवसाय संचालक निम्नलिखित सुनिश्चित करेंगे:	
1	प्रदत्त लाइसेंस की सत्य प्रति प्रपत्र 'सी' में परिसर में किसी प्रमुख स्थान पर हर समय प्रदर्शित की जाएगी।
2	लाइसेंसिंग प्राधिकरण या उनके अधिकृत कर्मचारियों को परिसर में आवश्यक प्रवेश प्रदान किया जाएगा।
3	लाइसेंस से संबंधित गतिविधियों/विवरण में किसी भी परिवर्तन या संशोधन की जानकारी प्राधिकरणों को दी जाएगी।
4	उत्पादन प्रक्रिया की देखरेख के लिए कम से कम एक तकनीकी व्यक्ति नियुक्त किया जाएगा। उत्पादन प्रक्रिया की देखरेख करने वाले व्यक्ति के पास विज्ञान में रसायन विज्ञान/जैव-रसायन/खाद्य एवं पोषण/सूक्ष्मजीव विज्ञान में डिग्री या खाद्य प्रौद्योगिकी/डेयरी प्रौद्योगिकी/डेयरी सूक्ष्मजीव

	विज्ञान/डेयरी रसायन विज्ञान/डेयरी अभियांत्रिकी/तेल प्रौद्योगिकी/पशु चिकित्सा विज्ञान/होटल प्रबंधन एवं कैटरिंग प्रौद्योगिकी में डिग्री या डिप्लोमा, अथवा मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय या संस्थान से व्यवसाय की विशिष्ट आवश्यकताओं से संबंधित किसी अन्य विषय में डिग्री या डिप्लोमा या समकक्ष योग्यता होनी चाहिए।
5	प्रत्येक वर्ष 1 अप्रैल से 31 मार्च की अवधि का वार्षिक प्रतिवेदन 31 मई तक प्रस्तुत किया जाएगा। दूध एवं दुग्ध उत्पादों के संग्रहण/प्रसंस्करण/निर्माण के लिए अर्धवार्षिक प्रतिवेदन भी निर्दिष्ट अनुसार प्रस्तुत किए जाएंगे (1 अप्रैल से 31 सितंबर तक का प्रतिवेदन 30 नवंबर से पहले तथा 1 अक्टूबर से 31 मार्च तक का प्रतिवेदन)।
6	यह सुनिश्चित किया जाएगा कि इकाई में लाइसेंस/पंजीकरण में उल्लिखित उत्पाद के अतिरिक्त कोई अन्य उत्पाद का निर्माण न किया जाए।
7	कारखाने की स्वच्छता एवं स्वास्थ्य संबंधी मानकों तथा कर्मचारियों की स्वच्छता को खाद्य व्यवसाय की श्रेणी के अनुसार अनुसूची - 4 में निर्दिष्ट प्रावधानों के अनुसार बनाए रखा जाएगा।
8	उत्पादन, कच्चे माल के उपयोग तथा बिक्री का दैनिक अभिलेख अलग-अलग रखा जाएगा।
9	यह सुनिश्चित किया जाएगा कि प्रयुक्त कच्चे माल का स्रोत और मानक उत्तम गुणवत्ता के हों।
10	खाद्य व्यवसाय संचालक किसी ऐसे परिसर में किसी भी खाद्य पदार्थ का निर्माण, भंडारण या बिक्री हेतु प्रदर्शित नहीं करेगा और न ही बिक्री की अनुमति देगा, जो लाइसेंसिंग प्राधिकरण की संतुष्टि के अनुसार किसी शौचालय, मूत्रालय, गंदे पानी की निकासी, नाली या दुर्गंधयुक्त एवं अपशिष्ट पदार्थों के भंडारण स्थान से प्रभावी रूप से पृथक न हो।
11	जहाँ आवश्यक हो, मशीनों और उपकरणों की नियमित सफाई के लिए क्लीन-इन-प्लेस प्रणाली सुनिश्चित की जाएगी।
12	इन विनियमों के अनुसार खाद्य उत्पादों में संबंधित रासायनिक और/या सूक्ष्मजीव संबंधी संदूषकों की जाँच, ऐतिहासिक आँकड़ों और जोखिम आकलन के आधार पर जितनी बार आवश्यक हो उतनी बार कराई जाएगी, ताकि सुरक्षित खाद्य का उत्पादन और आपूर्ति सुनिश्चित हो सके। यह जाँच स्वयं की प्रयोगशाला या एनएबीएल मान्यता प्राप्त/एफएसएसए अधिसूचित प्रयोगशालाओं में कम से कम छह महीने में एक बार कराई जाएगी।
13	यथासंभव यह सुनिश्चित किया जाएगा कि आवश्यक तापमान खरीद या स्रोत स्थान से लेकर अंतिम उपभोक्ता तक पहुँचने तक पूरी आपूर्ति श्रृंखला में बनाए रखा जाए, जिसमें शीतलन, परिवहन, भंडारण आदि शामिल हैं।
14	निर्माता/आयातक/वितरक केवल लाइसेंस प्राप्त/पंजीकृत विक्रेताओं से ही खाद्य उत्पाद खरीदेंगे और उन्हें ही बेचेंगे तथा इसका अभिलेख सुरक्षित रखेंगे।
अन्य शर्तें	
1	होटल, रेस्तराँ और अन्य खाद्य स्टॉल के स्वामियों, जो नमकीन, मिठाई या अन्य खाद्य पदार्थों को बेचते हैं या बिक्री के लिए प्रदर्शित करते हैं, उन्हें एक सूचना-पट्ट लगाना होगा जिसमें अलग-

	अलग सूची दी जाएगी कि कौन-कौन से खाद्य पदार्थ घी, खाद्य तेल, वनस्पति तथा अन्य वसा में पकाए गए हैं, ताकि संभावित खरीदारों को जानकारी मिल सके।
2	पका हुआ या तैयार खाद्य बेचने वाले खाद्य व्यवसाय संचालक एक सूचना-पट्ट प्रदर्शित करेंगे जिसमें बिक्री के लिए रखे गए खाद्य पदार्थों की प्रकृति का उल्लेख होगा।
3	प्रत्येक निर्माता (घानी संचालक सहित) या थोक विक्रेता, जो मक्खन, घी, वनस्पति, खाद्य तेल, सॉल्वेंट-निष्कर्षित तेल, डी-ऑयल्ड मील, खाद्य आटा और अन्य वसा का व्यापार करते हैं, एक रजिस्टर रखेगा जिसमें निर्मित, प्राप्त या बेची गई मात्रा, प्रयुक्त तिलहन का प्रकार, उपयोग किए गए डी-ऑयल्ड मील और खाद्य आटे की मात्रा आदि (जैसा लागू हो) तथा कारखाने या व्यापार स्थल से भेजे गए प्रत्येक खेप के गंतव्य का विवरण दर्ज होगा, और लाइसेंसिंग प्राधिकरण द्वारा माँगे जाने पर यह रजिस्टर निरीक्षण हेतु प्रस्तुत किया जाएगा।
4	कोई भी वनस्पति तेल, खाद्य तेल और उनके उत्पादों का उत्पादक या निर्माता इस अधिनियम के अंतर्गत लाइसेंस का पात्र नहीं होगा, जब तक कि उसके पास नमूनों की विश्लेषणात्मक जाँच के लिए अपनी प्रयोगशाला सुविधा उपलब्ध न हो।
5	उत्पादक द्वारा सॉल्वेंट-निष्कर्षित तेल, 'अर्ध-परिष्कृत' या 'कच्चा ग्रेड-I', खाद्य मूंगफली का आटा या खाद्य नारियल का आटा अथवा दोनों का प्रत्येक विक्रय या भंडार का स्थानांतरण सीधे पंजीकृत उपयोगकर्ता को ही किया जाएगा, किसी अन्य व्यक्ति को नहीं, और ऐसा कोई भी विक्रय या स्थानांतरण किसी तृतीय पक्ष के माध्यम से नहीं किया जाएगा।
6	पंजीकृत उपयोगकर्ता द्वारा खरीदी गई सॉल्वेंट-निष्कर्षित तेल, खाद्य मूंगफली का आटा या खाद्य नारियल का आटा अथवा दोनों की प्रत्येक मात्रा का उपयोग उसके अपने कारखाने में पूर्णतः निर्धारित उद्देश्य के लिए किया जाएगा और उसे पुनः बेचा या किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित नहीं किया जाएगा।
	परंतु यह कि इस उप-धारा में निहित कोई भी प्रावधान निम्नलिखित के विक्रय या स्थानांतरण पर लागू नहीं होगा:
	(i) करंजिया तेल;
	(ii) कुसुम तेल;
	(iii) महुआ तेल
	(iv) नीम तेल
	(v) इमली बीज का तेल;
	(vi) खाद्य मूंगफली का आटा जिस पर आई.एस.आई. प्रमाणन चिह्न अंकित हो;
	(vii) खाद्य नारियल का आटा जिस पर आई.एस.आई. प्रमाणन चिह्न अंकित हो।

7	कोई भी खाद्य व्यवसाय संचालक किसी भी खाद्य तेल को तब तक नहीं बेचेगा, वितरित नहीं करेगा, बिक्री के लिए प्रस्तुत नहीं करेगा, प्रेषित या किसी व्यक्ति को बिक्री के उद्देश्य से उपलब्ध नहीं कराएगा, जब तक कि वह तेल विनियमों में निर्दिष्ट तरीके से पैक, चिह्नित और लेबलित न हो, सिवाय इसके कि सार्वजनिक हित में खाद्य सुरक्षा आयुक्त द्वारा राजपत्र में जारी अधिसूचना के माध्यम से विशेष परिस्थितियों में और निर्दिष्ट अवधि के लिए, लिखित कारणों के साथ, इस शर्त से विशेष छूट प्रदान की गई हो।

19. इसी प्रकार, रेस्टोरेंट के लिए स्वच्छता एवं सफाई संबंधी आवश्यकताएँ अनुसूची-4 के भाग-II में प्रदान की गई हैं। अनुसूची-4 के भाग-II का प्रासंगिक अंश निम्नानुसार उद्धृत किया जा रहा है:—

"अनुसूची-2

भाग-II

लाइसेंस के लिए आवेदन करने वाले सभी खाद्य व्यवसाय संचालकों द्वारा अपनाई जाने वाली स्वच्छ एवं साफ-सफाई संबंधी प्रथाओं के सामान्य आवश्यकताएँ

वह प्रतिष्ठान जहाँ खाद्य पदार्थों का संचालन, प्रसंस्करण, निर्माण, पैकिंग, भंडारण तथा वितरण खाद्य व्यवसाय संचालक द्वारा तथा उन्हें संभालने वाले व्यक्तियों द्वारा किया जाता है, उसे नीचे निर्दिष्ट स्वच्छता एवं साफ-सफाई संबंधी आवश्यकताओं, खाद्य सुरक्षा उपायों तथा अन्य मानकों का पालन करना होगा। आवश्यक आवश्यकताओं के अनुपालन को सुनिश्चित करना खाद्य व्यवसाय संचालक की जिम्मेदारी भी माना जाएगा।

नीचे निर्दिष्ट आवश्यकताओं के अतिरिक्त, खाद्य व्यवसाय संचालक खाद्य व्यवसाय की गतिविधियों में उन चरणों की पहचान करेगा जो खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण हैं, तथा यह सुनिश्चित करेगा कि सुरक्षा प्रक्रियाओं की पहचान की जाए, उन्हें लागू किया जाए, बनाए रखा जाए और समय-समय पर उनकी समीक्षा की जाए।

1. स्थान एवं परिवेश

.....

.....

5. खाद्य संचालन एवं नियंत्रण

5.1 कच्चे माल की खरीद—

5.1.1 किसी भी प्रतिष्ठान द्वारा कोई भी कच्चा माल या उसका कोई घटक स्वीकार नहीं किया जाएगा यदि यह ज्ञात हो कि उसमें परजीवी, अवांछित सूक्ष्म-जीव, कीटनाशक, पशु-चिकित्सकीय औषधियाँ या विषैले पदार्थ, सड़े-गले या बाहरी पदार्थ मौजूद हैं, जिन्हें सामान्य छंटाई और/या प्रसंस्करण द्वारा स्वीकार्य स्तर तक कम नहीं किया जा सकता।

5.1.2 सभी कच्चे माल, खाद्य योजक तथा अवयव, जहाँ भी लागू हो, अधिनियम के अंतर्गत निर्धारित सभी विनियमों एवं मानकों के अनुरूप होंगे।

5.1.3 कच्चे माल, खाद्य योजकों तथा अवयवों का अभिलेख तथा उनके क्रय के स्रोत का विवरण निरीक्षण हेतु एक रजिस्टर में संधारित किया जाएगा।

5.1.4 सभी कच्चे माल की भौतिक रूप से जाँच की जानी चाहिए तथा उन्हें अच्छी तरह साफ किया जाना चाहिए।

5.1.5 कच्चा माल ऐसी मात्रा में खरीदा जाना चाहिए जो भंडारण/संरक्षण क्षमता के अनुरूप हो।

5.1.6 पैकेज्ड कच्चे माल की 'समाप्ति तिथि'/'से पहले सर्वोत्तम' 'उपयोग तक तिथि, पैकेजिंग की स्थिति (संपूर्णता) तथा भंडारण की परिस्थितियों की जाँच की जानी चाहिए।

5.1.7 संभावित रूप से उच्च जोखिम वाले खाद्य पदार्थों का प्राप्ति तापमान 5°C या उससे कम होना चाहिए।

5.1.8 जमे हुए (फ्रोजन) खाद्य पदार्थों का प्राप्ति तापमान 8°C या उससे कम होना चाहिए।

5.2 कच्चे माल एवं खाद्य पदार्थों का भंडारण—

5.2.1 खाद्य भंडारण सुविधाओं का डिज़ाइन एवं निर्माण इस प्रकार होना चाहिए कि भंडारण के दौरान खाद्य पदार्थों को संदूषण से प्रभावी रूप से सुरक्षित रखा जा सके; साथ ही पर्याप्त रख-रखाव और सफाई की सुविधा हो, ताकि कीटों की पहुँच और उनके जमाव को रोका जा सके।

5.2.2 जहाँ आवश्यक हो, वहाँ कच्चे, प्रसंस्कृत/पैक किए गए खाद्य पदार्थों के लिए उनके प्रकार एवं आवश्यकता के अनुसार शीत भंडारण (कोल्ड स्टोरेज) की व्यवस्था की जानी चाहिए।

5.2.3 कच्चे, प्रसंस्कृत, अस्वीकृत, वापस मँगाए गए या लौटाए गए पदार्थों/उत्पादों के भंडारण के लिए अलग-अलग व्यवस्था (सेग्रिगेशन) की जानी चाहिए, जिन्हें स्पष्ट रूप से चिह्नित कर सुरक्षित रखा जाएगा। कच्चे माल एवं खाद्य पदार्थों को मुद्रित पैकेजिंग सामग्री, स्टेशनरी, हार्डवेयर तथा सफाई सामग्री/रसायनों से अलग क्षेत्रों में रखा जाएगा।

5.2.4 कच्चे खाद्य पदार्थ, विशेषकर मांस, पोल्ट्री तथा समुद्री खाद्य उत्पादों को कार्य-प्रगति, प्रसंस्कृत, पके हुए तथा पैक किए गए उत्पादों के क्षेत्र से अलग शीत भंडारण में रखा जाएगा। संबंधित खाद्य सामग्री/उत्पादों की शेल्फ लाइफ बढ़ाने के लिए आवश्यक तापमान एवं आर्द्रता की भंडारण स्थितियाँ बनाए रखी जाएँगी।

5.2.5 कच्चे माल, अवयवों, कार्य-प्रगति तथा प्रसंस्कृत/पके हुए या पैक किए गए खाद्य उत्पादों का भंडारण, जहाँ लागू हो, FIFO (पहले आना, पहले निकलना), तथा FEFO (पहले समाप्त होना, पहले निकलना) स्टॉक रोटेशन प्रणाली के अनुसार किया जाएगा।

5.2.6 कच्चे माल, कार्य-प्रगति तथा तैयार/परोसने के लिए तैयार उत्पादों के भंडारण के लिए गैर-विषैले पदार्थों से बने कंटेनरों की व्यवस्था की जाएगी। खाद्य सामग्री को रैक/पैलेट पर इस प्रकार रखा जाएगा कि वे फर्श के स्तर से पर्याप्त ऊपर और दीवार से कुछ दूरी पर हों, ताकि प्रभावी सफाई हो सके तथा किसी भी कीट, कीड़े-मकोड़े या कृन्तकों के पनपने से बचाव हो सके।

5.3 खाद्य प्रसंस्करण/तैयारी, पैकेजिंग तथा वितरण/सेवा—

5.3.1 समय एवं तापमान नियंत्रण।

5.3.1.1 खाद्य व्यवसाय में ऐसी प्रणालियाँ विकसित और बनाए रखी जाएँगी ताकि जहाँ खाद्य की सुरक्षा और उपयुक्तता के लिए आवश्यक हो, वहाँ समय और तापमान का प्रभावी नियंत्रण सुनिश्चित किया जा सके। इस

नियंत्रण में, जहाँ लागू हो, प्राप्ति, प्रसंस्करण, पकाने, ठंडा करने, भंडारण, पैकेजिंग, वितरण तथा उपभोक्ता तक खाद्य सेवा के समय और तापमान को शामिल किया जाएगा।

5.3.1.2 जब भी जमे हुए खाद्य पदार्थ/कच्चे माल का उपयोग, संभाल या परिवहन किया जाए, तो उचित सावधानी बरती जाएगी ताकि डीफ्रॉस्ट/पिघला हुआ पदार्थ खोलने के बाद भविष्य में उपयोग हेतु पुनः संग्रहित न किया जाए।

5.3.1.3 यदि डीफ्रॉस्ट (पिघलाना) आवश्यक हो, तो एक समय में केवल आवश्यक मात्रा में ही खाद्य पदार्थ को पिघलाया जाना चाहिए।

5.3.1.4 जहाँ भी खुले आग पर पकाने का कार्य किया जाता है, वहाँ धुएँ/भाप आदि के निकास के लिए चिमनी, एग्जॉस्ट फैन आदि की उचित व्यवस्था की जाएगी।

5.4 खाद्य पैकेजिंग—

20. खाद्य व्यवसाय संचालक (रेस्टोरेंट) के लिए ऊपर उल्लिखित शर्तों के अवलोकन से, यह स्पष्ट है कि अनुलग्नक -3 की शर्त संख्या 14 के अनुसार, निर्माता या वितरक केवल एक लाइसेंस प्राप्त/पंजीकृत विक्रेता से ही खाद्य उत्पाद खरीदेगा और उसका रिकॉर्ड बनाए रखेगा। इसी प्रकार, अनुलग्नक -3 की शर्त संख्या 9 प्रदान करती है कि खाद्य व्यवसाय संचालक यह सुनिश्चित करेगा कि उपयोग किए गए कच्चे माल के स्रोत और मानक इष्टतम गुणवत्ता के हैं। इसी प्रकार, खाद्य सुरक्षा और मानक (खाद्य व्यवसाय का लाइसेंस और पंजीकरण) विनियम, 2011 की अनुसूची 4 के भाग-II में उल्लिखित शर्त संख्या 5.1.2, 5.1.3 के साथ-साथ 5.1.6 के अनुसार, सभी कच्चे माल या सामग्री सभी मानकों और विनियमों के अनुरूप होंगे और उनकी खरीद के स्रोत के संबंध में रजिस्टर बनाए रखा जाना चाहिए, साथ ही यह निर्देश भी होना चाहिए कि कच्चे माल का उपयोग समाप्ति तिथि से पहले किया जाना चाहिए।

21. जहाँ तक दूसरे प्रश्न का संबंध है, जो एक ब्रांडेड कंपनी से खरीदे गए हल्दी पाउडर को केवल स्टोर करने मात्र पर आवेदक संख्या 2 के खाद्य व्यवसाय संचालक होने के नाते दायित्व के संबंध में है, उस उद्देश्य के लिए अधिनियम, 2006 की धारा 3(1)(o) स्वयं प्रदान करती है कि खाद्य व्यवसाय संचालक इस अधिनियम, नियमों और विनियमों के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार है। इसलिए, एक और प्रश्न उठता है कि क्या एक रेस्टोरेंट, एक ब्रांडेड कंपनी से इसकी गुणवत्ता के संबंध में वारंटी के साथ खरीदे गए सीलबंद हल्दी पाउडर को स्टोर करते समय, हल्दी पाउडर के उचित घटकों को सुनिश्चित करने के लिए अधिनियम, नियमों या विनियमों के अनुपालन के अधीन होगा ताकि यह "असुरक्षित भोजन" की परिभाषा के अंतर्गत न आए। खाद्य व्यवसाय संचालक की जिम्मेदारी अधिनियम, 2006 की धारा 26 में निर्धारित की गई है जिसमें असुरक्षित भोजन के भंडारण के विरुद्ध जिम्मेदारी शामिल है। अधिनियम, 2006 की धारा 26 नीचे उद्धृत की गई है:-

"26. खाद्य व्यवसाय संचालक की जिम्मेदारियां—(1) प्रत्येक खाद्य व्यवसाय संचालक यह सुनिश्चित करेगा कि भोजन की वस्तुएं उसके नियंत्रण वाले व्यवसायों के भीतर उत्पादन, प्रसंस्करण, आयात, वितरण और बिक्री के

सभी चरणों में इस अधिनियम और इसके तहत बनाए गए नियमों और विनियमों की आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। (2) कोई भी खाद्य व्यवसाय संचालक स्वयं या अपनी ओर से किसी व्यक्ति द्वारा भोजन की किसी भी वस्तु का निर्माण, भंडारण, बिक्री या वितरण नहीं करेगा— (i) जो असुरक्षित है; या (ii) जो भ्रामक ब्रांड या उप-मानक है या जिसमें बाहरी पदार्थ शामिल हैं; या (iii) जिसके लिए लाइसेंस की आवश्यकता है, सिवाय लाइसेंस की शर्तों के अनुसार; या (iv) जो सार्वजनिक स्वास्थ्य के हित में खाद्य प्राधिकरण या केंद्र सरकार या राज्य सरकार द्वारा फिलहाल प्रतिबंधित है; या (v) इस अधिनियम या इसके तहत बनाए गए किसी नियम या विनियम के किसी अन्य प्रावधान के उल्लंघन में। (3) कोई भी खाद्य व्यवसाय संचालक किसी ऐसे व्यक्ति को नियोजित नहीं करेगा जो संक्रामक, छूत की या घृणित बीमारी से पीड़ित हो। (4) कोई भी खाद्य व्यवसाय संचालक किसी भी विक्रेता को भोजन की किसी भी वस्तु की बिक्री या बिक्री की पेशकश तब तक नहीं करेगा जब तक कि वह विक्रेता को ऐसी वस्तु की प्रकृति और गुणवत्ता के बारे में विनियमों द्वारा निर्दिष्ट प्रपत्र में लिखित गारंटी न दे दे: बशर्ते कि खाद्य व्यवसाय संचालक द्वारा विक्रेता को दिए गए भोजन की किसी भी वस्तु की बिक्री के संबंध में बिल, कैश मेमो या चालान को इस धारा के तहत गारंटी माना जाएगा, भले ही निर्दिष्ट प्रपत्र में गारंटी बिल, कैश मेमो या चालान में शामिल न हो। (5) जहाँ कोई भोजन जो असुरक्षित है, उसी श्रेणी या विवरण के भोजन के बैच, लॉट या खेप का हिस्सा है, तो यह माना जाएगा कि उस बैच, लॉट या खेप का सारा भोजन भी असुरक्षित है, जब तक कि एक निर्दिष्ट समय के भीतर विस्तृत मूल्यांकन के बाद यह न पाया जाए कि इस बात का कोई सबूत नहीं है कि शेष बैच, लॉट या खेप असुरक्षित है: बशर्ते कि उस भोजन पर लागू विशिष्ट प्रावधानों के साथ भोजन की किसी भी अनुरूपता से सक्षम अधिकारियों द्वारा उस भोजन को बाजार में रखने पर प्रतिबंध लगाने या लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से बाजार से वापस लेने की आवश्यकता के लिए उचित उपाय करने पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा, जहाँ ऐसे अधिकारियों को संदेह है कि अनुरूपता के बावजूद भोजन असुरक्षित है।"

22. अधिनियम, 2006 की धारा 26 के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि खाद्य व्यवसाय संचालक की जिम्मेदारी उत्पादन, वितरण या बिक्री के सभी चरणों में अधिनियम, नियमों और उसमें बनाए गए विनियमों की आवश्यकताओं का पालन करना है और वह भोजन की किसी भी ऐसी वस्तु का भंडारण नहीं करेगा जो असुरक्षित है। अधिनियम, 2006 की धारा 26(4) आगे प्रदान करती है कि खाद्य व्यवसाय संचालक भोजन की किसी भी वस्तु को उसकी प्रकृति और गुणवत्ता के लिए लिखित गारंटी दिए बिना नहीं बेचेगा और भोजन की किसी भी वस्तु की बिक्री के संबंध में बिल, कैश मेमो या चालान को इस अधिनियम के तहत गारंटी माना जाएगा।

23. आवेदक के वकील द्वारा उद्धृत कई मामले खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम की धारा 19 से संबंधित हैं जिसे अधिनियम, 2006 द्वारा आज की तारीख में निरस्त कर दिया गया है, लेकिन मिलावटी भोजन की बिक्री के खिलाफ धारा 19 के तहत उपलब्ध बचाव, यदि वह विधिवत लाइसेंस प्राप्त निर्माता से खरीदा गया था, अधिनियम, 2006 की धारा 80 के तहत भी कुछ हद तक उपलब्ध है। अधिनियम, 2006 की धारा 80 नीचे उद्धृत की गई है:-

"80. बचाव जो इस अधिनियम के तहत अभियोजन में अनुमत हो सकते हैं या नहीं।—(A) विज्ञापनों के प्रकाशन से संबंधित बचाव—

(1) विज्ञापन के प्रकाशन के संबंध में इस अधिनियम के तहत किसी अपराध के लिए किसी भी कार्यवाही में, किसी व्यक्ति के लिए यह साबित करना एक बचाव है कि उस व्यक्ति ने विज्ञापनों को प्रकाशित करने या उनके प्रकाशन की व्यवस्था करने का व्यवसाय किया था और उस व्यक्ति ने प्रश्नगत विज्ञापन को उस व्यवसाय के सामान्य क्रम में प्रकाशित किया या उसके प्रकाशन की व्यवस्था की थी।

(2) खंड (1) लागू नहीं होता है यदि वह व्यक्ति—

(a) उचित रूप से उसे यह जानना चाहिए था कि विज्ञापन का प्रकाशन एक अपराध था; या

(b) प्रासंगिक प्राधिकारी द्वारा पहले लिखित रूप में सूचित किया गया था कि ऐसे विज्ञापन का प्रकाशन एक अपराध होगा; या

(c) वह खाद्य व्यवसाय संचालक है या अन्यथा किसी खाद्य व्यवसाय के संचालन में लगा हुआ है जिसके लिए संबंधित विज्ञापन प्रकाशित किए गए थे।

(B) उचित तत्परता (due diligence) का बचाव—

(1) किसी अपराध के लिए किसी भी कार्यवाही में, यह एक बचाव है यदि यह साबित हो जाता है कि व्यक्ति ने ऐसे व्यक्ति द्वारा या व्यक्ति के नियंत्रण में किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अपराध किए जाने को रोकने के लिए सभी उचित सावधानियां बरतीं और सभी उचित तत्परता का प्रयोग किया।

(2) उन तरीकों को सीमित किए बिना जिनसे एक व्यक्ति खंड (1) की आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है, एक व्यक्ति उन आवश्यकताओं को पूरा करता है यदि यह साबित हो जाता है—

(a) कि अपराध का होना निम्नलिखित के कारण था—

(i) किसी अन्य व्यक्ति का कार्य या चूक; या

(ii) किसी अन्य व्यक्ति द्वारा आपूर्ति की गई जानकारी पर भरोसा; और

(b)(i) व्यक्ति ने संबंधित भोजन की ऐसी सभी जाँच की जो सभी परिस्थितियों में उचित थी; या

(ii) उन परिस्थितियों में उस व्यक्ति द्वारा की गई जाँच पर भरोसा करना उचित था जिसने उस व्यक्ति को ऐसे भोजन की आपूर्ति की थी; और

(c) कि व्यक्ति ने दूसरे देश से क्षेत्राधिकार में भोजन का आयात नहीं किया था; और (d) भोजन की बिक्री से जुड़े अपराध के मामले में, कि—

(i) व्यक्ति ने भोजन को उसी स्थिति में बेचा जैसा और जब व्यक्ति ने इसे खरीदा था; या

(ii) व्यक्ति ने भोजन को उस स्थिति से अलग स्थिति में बेचा जिसमें व्यक्ति ने इसे खरीदा था, लेकिन उस अंतर के परिणामस्वरूप इस अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों और विनियमों का कोई उल्लंघन नहीं हुआ; और

(e) कि व्यक्ति नहीं जानता था और कथित अपराध के समय संदेह करने का कोई कारण नहीं था कि व्यक्ति का कार्य या चूक संबंधित धारा के तहत अपराध होगा।

(3) खंड (2) के उप-खंड (a) में, अन्य व्यक्ति में वह व्यक्ति शामिल नहीं है जो—

(a) प्रतिवादी का कर्मचारी या एजेंट था; या

(b) प्रतिवादी कंपनी होने के मामले में, उस कंपनी का निदेशक, कर्मचारी या एजेंट था। (4) उन तरीकों को सीमित किए बिना जिनसे एक व्यक्ति खंड (1) और खंड (2) के उप-खंड (b) के मद (i) की आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है, एक व्यक्ति उन आवश्यकताओं को यह साबित करके पूरा कर सकता है कि—

(a) खाद्य व्यवसाय से संबंधित अपराध के मामले में जिसके लिए विनियमों के अनुसार खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम तैयार किया जाना आवश्यक है, व्यक्ति ने खाद्य व्यवसाय के लिए एक खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम का पालन किया जो विनियमों की आवश्यकताओं का पालन करता है, या

(b) किसी अन्य मामले में, व्यक्ति ने एक योजना (उदाहरण के लिए, एक गुणवत्ता आश्वासन कार्यक्रम या उद्योग की आचार संहिता) का पालन किया जो—

(i) खाद्य सुरक्षा खतरों के प्रबंधन के लिए नामित थी और उस उद्देश्य के लिए डिज़ाइन किए गए राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय मानकों, कोड या दिशानिर्देशों पर आधारित थी, और

(ii) किसी तरह से प्रलेखित थी।

(C) गलत और उचित धारणा का बचाव उपलब्ध नहीं है— इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत किसी अपराध के लिए किसी भी कार्यवाही में, यह कोई बचाव नहीं है कि प्रतिवादी की उन तथ्यों के बारे में गलत लेकिन उचित धारणा थी जो अपराध का गठन करते थे।

(D) भोजन के रख-रखाव के संबंध में बचाव— धारा 56 के तहत अपराध की कार्यवाही में, यह एक बचाव है यदि यह साबित हो जाता है कि व्यक्ति ने उस भोजन को नष्ट करवा दिया या अन्यथा तुरंत निपटा दिया जिससे अपराध संबंधित है, जब भोजन को उस तरीके से संभाला गया था जिससे इसके असुरक्षित होने की संभावना थी।

(E) भोजन की प्रकृति, पदार्थ या गुणवत्ता के महत्व का बचाव— भोजन के किसी भी असुरक्षित या भ्रामक ब्रांड वाली वस्तु की बिक्री से संबंधित अपराध के अभियोजन में केवल यह आरोप लगाना कोई बचाव नहीं होगा कि खाद्य व्यवसाय संचालक उसके द्वारा बेचे गए भोजन की प्रकृति, पदार्थ या गुणवत्ता से अनभिज्ञ था या विश्लेषण के लिए किसी वस्तु को खरीदने वाले खरीदार को बिक्री से कोई नुकसान नहीं हुआ था।"

24.अधिनियम, 2006 की धारा 80 के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि अपराध होने से रोकने के लिए उचित तत्परता और उचित सुरक्षा के साथ-साथ किसी अन्य व्यक्ति के कार्य या चूक या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दी गई जानकारी पर भरोसा करने का बचाव अभी भी परीक्षण (trial) के दौरान उपलब्ध

है, जो साक्ष्य का विषय है, लेकिन जब शिकायत दर्ज करने के समय भी यह विवाद में नहीं है कि खाद्य व्यवसाय संचालक ने अधिनियम, 2006 के साथ-साथ उसमें बनाए गए विनियमों में उल्लिखित सभी शर्तों का पालन करके उचित तत्परता और उचित सावधानी बरती है, तो कार्यवाही को रद्द करने के लिए धारा 482 Cr.P.C./528 B.N.S.S. के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय ऐसी दलील पर विचार किया जा सकता है।

25. इसलिए, उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि यदि किसी रेस्टोरेंट जैसे किसी खाद्य व्यवसाय संचालक ने किसी पंजीकृत निर्माता से एक सीलबंद पैकेट में उचित चालान (invoice) के साथ कोई कच्चा माल या भोजन की सामग्री खरीदी है, तो यह माना जाएगा कि कच्चा माल या भोजन की सामग्री मानक गुणवत्ता की है। यदि सीलबंद पैकेट में भोजन की सामग्री असुरक्षित पाई जाती है, तो प्रथम दृष्टया उत्तरदायित्व इसके पंजीकृत निर्माता या इसके वितरक का होगा न कि रेस्टोरेंट का, जब तक कि पैकेट की सील या इसके चालान पर विवाद या संदेह न हो।

26. वर्तमान मामले में, यह विवाद में नहीं है कि आवेदक संख्या 2 ने निर्माता से चालान (invoice) के साथ मानक गुणवत्ता का हल्दी पाउडर खरीदा था। इसलिए, अधिनियम, 2006 की धारा 26(4) के आलोक में, आवेदक संख्या 2 द्वारा खरीदा गया हल्दी पाउडर अच्छी गुणवत्ता का माना जाएगा। अतः, हल्दी पाउडर की खरीद और उसकी गुणवत्ता के संबंध में खाद्य सेवाएं प्रदान करने वाले खाद्य व्यवसाय संचालक होने के नाते आवेदक द्वारा अधिनियम के साथ-साथ विनियम में उल्लिखित शर्तों का पर्याप्त अनुपालन किया गया है।

27. वर्तमान मामले में, यह विवाद में नहीं है कि आवेदक ने एक लाइसेंस प्राप्त/पंजीकृत निर्माता से हल्दी पाउडर खरीदा है और चालान (invoices) के आधार पर गुणवत्ता और मानक के बारे में हल्दी पाउडर के निर्माता द्वारा दी गई जानकारी पर भरोसा किया है, तो ऐसी परिस्थितियों में यदि हल्दी पाउडर इसके पंजीकृत/लाइसेंस प्राप्त निर्माता द्वारा इसकी गुणवत्ता की गारंटी के बावजूद असुरक्षित पाया जाता है, तो उस स्थिति में हल्दी पाउडर बेचने के व्यवसाय से जुड़ा खाद्य व्यवसाय संचालक या उसका वितरक उत्तरदायी होगा न कि रेस्टोरेंट या उसका मालिक या भोजन बेचने वाला उसका कोई कर्मचारी।

28. उपरोक्त के आलोक में, इस न्यायालय का यह मत है कि आवेदक संख्या 2 और आवेदक संख्या 1, जो आवेदक संख्या 2 का कर्मचारी है, के विरुद्ध विवादित कार्यवाही रद्द होने योग्य है। इसलिए, जहाँ तक वर्तमान आवेदकों का संबंध है, विवादित कार्यवाही को एतद्वारा रद्द किया जाता है।

29. तदनुसार, आवेदन स्वीकार किया जाता है।

30.हालाँकि, निचली अदालत हल्दी पाउडर के निर्माता/वितरक के विरुद्ध आगे बढ़ने के लिए स्वतंत्र है, जो इसकी गुणवत्ता के संबंध में चालान (invoice) जारी करने के बावजूद, इसके मानक का पालन करने में विफल रहे।

(2025) 2 ILRA 174

मूल अधिकारिता

आपराधिक पक्ष

दिनांक : इलाहाबाद, 24.02.2025

समक्ष

माननीय अरुण कुमार सिंह देशवाल, जे.

धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता संख्या - 27233 वर्ष 2024

अमित कुमार तिवारी एवं अन्य

...आवेदकगण

बनाम

राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य

...विपक्षी पक्षकारगण

आवेदकगण के अधिवक्ता :

इन्द्र देव मिश्रा, मनोज कुमार मिश्रा, पंकज कुमार तिवारी

विपक्षी पक्षकारगण के अधिवक्ता :

बृजेश कुमार, शासकीय अधिवक्ता, सुधांशु कुमार सिंह

आपराधिक विधि - दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धाराएँ 362 एवं 482 - भारतीय दण्ड संहिता, 1860 - धाराएँ 147, 354-खा, 323, 504 एवं 506 - लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 - धाराएँ 7 एवं 8 - धारा 482 के अंतर्गत आवेदन - विवादित आदेश निरस्तीकरण हेतु - प्राथमिकी - विपक्षी पक्षकार संख्या 4 द्वारा अपनी नाबालिग पुत्री के साथ यौन उत्पीड़न का आरोप - विवेचना - अंतिम प्रतिवेदन - मजिस्ट्रेट द्वारा नोटिस निर्गत - विपक्षी पक्षकार संख्या 4 उपस्थित नहीं हुए - अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार - प्रोटेस्ट प्रार्थना-पत्र सहित आदेश पुनःस्मरण - विचारण न्यायालय द्वारा पूर्व आदेश वापस लेकर परिवाद वाद के रूप में पंजीकरण का आदेश - चुनौती अधीन - तर्क कि अंतिम प्रतिवेदन की स्वीकृति संज्ञान लेने में बाधक नहीं यदि पर्याप्त सामग्री उपलब्ध हो - आपत्ति कि यदि सूचनाकर्ता को सुनकर अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार किया गया है तो धारा 362 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत उसे पुनःस्मरण नहीं किया जा सकता - विधिक प्रश्न कि क्या अंतिम प्रतिवेदन की स्वीकृति का पुनःस्मरण धारा 362 दण्ड प्रक्रिया संहिता का उल्लंघन है, जो न्यायालय को लिपिकीय त्रुटियों को छोड़कर अंतिम आदेश की समीक्षा से प्रतिबंधित करती है - धारा 362 दण्ड प्रक्रिया संहिता की

प्रयोज्यता - धारा 362 के अनुसार न्यायालय अंतिम आदेश की समीक्षा या परिवर्तन नहीं कर सकता, सिवाय लिपिकीय त्रुटि के, तथापि नवीन सामग्री के आधार पर संज्ञान लिया जा सकता है - न्यायालय का निष्कर्ष कि विचारण न्यायालय ने विपक्षी पक्षकार संख्या 4 को नोटिस तामील कराने के उपरांत अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार किया, परंतु बाद में बिना यह दर्शाए कि आदेश केवल प्रक्रियात्मक पुनःस्मरण था, न कि विषयगत पुनरावलोकन, उसे वापस ले लिया, जबकि अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार करने का आदेश केस डायरी में उपलब्ध सामग्री के आधार पर संज्ञान के प्रश्न का अंतिम निस्तारण था - अतः ऐसा आदेश धारा 362 दण्ड प्रक्रिया संहिता द्वारा प्रतिबंधित है - परिणामतः विवादित आदेश निरस्त किया जाता है तथा प्रकरण को पुनः विचारार्थ प्रत्यावर्तित किया जाता है - आवेदन स्वीकार। (पैरा - 17, 18, 19, 20, 21)

आवेदन स्वीकार किया जाता है। (E-11)

उद्धृत निर्णयों की सूची :

1. हाजी महमूद अली बनाम त्रिपुरा राज्य (2006 सीआरएलजे 4259),
2. किशोर कुमार ज्ञानचंदानी बनाम जीडी मेहरोत्रा (एआईआर 2002 एससी 483),
3. मुनीलाल ठाकुर एवं अन्य बनाम नवल किशोर ठाकुर एवं अन्य (1985 सीआरआईएलजे 437),
4. सफदर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2008 (6) एडीजे 64),
5. सुरेन्द्र सिंह बनाम बिहार राज्य (2005 12 एससीसी 361),
6. गणेश पटेल बनाम उमाकांत राजोरिया - एसएलपी (आपराधिक) संख्या 9313/2021,
7. सुब्रत चौधरी @ संतोष चौधरी एवं अन्य बनाम असम राज्य एवं अन्य (2024 SCC ऑनलाइन SC 3126).

(माननीय अरुण कुमार सिंह देशवाल, जे. द्वारा दिया गया)

1. आवेदकों की ओर से उपस्थित श्री इन्द्र देव मिश्रा, विद्वान अधिवक्ता, विपक्षी पक्ष संख्या-4 की ओर से उपस्थित श्री बृजेश कुमार, विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य की ओर से उपस्थित श्री पंकज सक्सेना, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना गया।

2. वर्तमान आवेदन अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश/विशेष न्यायाधीश, पॉक्सो अधिनियम, प्रयागराज द्वारा आपराधिक विविध वाद संख्या-79 सन् 2023 में पारित आदेश दिनांक 25.01.2024 को निरस्त/अपास्त किए जाने हेतु दाखिल किया गया है, जो कि केस क्राइम संख्या-415 सन् 2014 से उद्भूत है, जिसमें भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 147, 354(ख), 323, 504, 506 तथा पॉक्सो अधिनियम की धारा 7/8 अंतर्गत अभियोग पंजीकृत है। उक्त मामला थाना-मेजा, जनपद-इलाहाबाद से संबंधित है।

3 वर्तमान विवाद के उद्भव का संक्षिप्त तथ्य यह है कि विपक्षी पक्ष संख्या-4 द्वारा दिनांक 09.10.2014 को आवेदकों के विरुद्ध केस क्राइम संख्या-415 सन् 2014 में, धारा 147, 354(ख), 323, 504, 506 भारतीय दण्ड संहिता तथा धारा 7/8 पॉक्सो अधिनियम के अंतर्गत प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई गई, जिसमें यह आरोप लगाया गया कि आवेदकों द्वारा उसकी अवयस्क पुत्री के साथ लैंगिक उत्पीड़न किया गया है। पुलिस द्वारा विवेचना उपरांत दिनांक 24.08.2018 को अंतिम आख्या प्रस्तुत किया गया। अंतिम आख्या प्राप्त होने पर विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा विपक्षी पक्ष संख्या-4 को नोटिस जारी किया गया, किंतु वह न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हो सका। तत्पश्चात संबंधित न्यायालय ने दिनांक 19.10.2023 के आदेश द्वारा अंतिम आख्या को स्वीकार कर लिया। इसके उपरांत, विपक्षी पक्ष संख्या-4 ने दिनांक 18.12.2023 को आदेश दिनांक 19.10.2023 को पुनः आहूत किए जाने तथा अंतिम आख्या संख्या-238 सन् 2018 को निरस्त करने हेतु प्रार्थना-पत्र प्रोटेस्ट याचिका प्रस्तुत किया। अधीनस्थ न्यायालय ने विवादित आदेश दिनांक 25.01.2024 द्वारा पूर्व आदेश दिनांक 19.10.2023 को पुनः आहूत करते हुए विपक्षी पक्ष संख्या-4 की प्रोटेस्ट याचिका को परिवाद वाद (Complaint के रूप में पंजीकृत कर लिया, जिसे वर्तमान याचिका में चुनौती दी गई है।

4 आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता का कथन है कि केस क्राइम संख्या-415 सन् 2014 में, धारा 147, 354(ख), 323, 504, 506 भारतीय दण्ड संहिता तथा धारा 7/8 पॉक्सो अधिनियम के अंतर्गत आवेदकों के विरुद्ध पंजीकृत मुकदमे में विवेचना उपरांत पुलिस द्वारा अंतिम प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया। तत्पश्चात, नोटिस प्राप्त होने के बावजूद प्रथम सूचना दाता न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ और न्यायालय ने दिनांक 19.10.2023 के आदेश द्वारा अंतिम प्रतिवेदन को स्वीकार कर लिया। इसके उपरांत, विपक्षी पक्ष संख्या-2 द्वारा दिनांक 18.12.2023 को पुनः आह्वान प्रार्थना-पत्र प्रोटेस्ट याचिका सहित प्रस्तुत किया गया, जिसे स्वीकार कर लिया गया तथा दिनांक 19.10.2023 का वह आदेश, जिसके द्वारा अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार किया गया था, निरस्त कर दिया गया और बिना कोई कारण अभिलिखित किए प्रकरण को परिवाद वाद के रूप में पंजीकृत कर लिया गया। यह भी तर्क दिया गया कि उक्त कार्यवाही वस्तुतः दिनांक 19.10.2023 के आदेश की पुनर्विचार के समान है, जो दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 के अंतर्गत निषिद्ध है। अपने तर्क के समर्थन में आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता ने गुवाहाटी हाई कोर्ट की समन्वय पीठ द्वारा पारित निर्णय **हाजी महमूद अली बनाम त्रिपुरा राज्य (2006 0 CrLJ 4259)** पर भी भरोसा किया है, जिसमें यह प्रतिपादित किया गया है कि जब किसी आपराधिक न्यायालय द्वारा वाद के गुण-दोष पर आदेश पारित कर दिया गया हो, तो उसे दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 के प्रावधानों के कारण पुनः आहूत नहीं किया जा सकता।

5 प्रत्युत्तर में, विपक्षी पक्ष संख्या-4 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार किए जाने के पश्चात भी, यदि अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री उपलब्ध हो, तो मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान ग्रहण करने पर कोई विधिक प्रतिबंध नहीं है। अतः विवादित आदेश में कोई अवैधता नहीं है। अपने तर्क के समर्थन में विपक्षी पक्ष संख्या-4 के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय **किशोर कुमार ज्ञानचंदानी बनाम**

जी.डी. मेहरोत्रा एवं अन्य (एआईआर 2002 एससी 483) पर तथा मुनिलाल ठाकुर एवं अन्य बनाम नवल किशोर ठाकुर एवं अन्य (1985 क्रि.एल.जे. 437) पर भरोसा किया है। साथ ही, इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा पारित निर्णय सफदर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (2008 (6) एडीजे 64) का भी उल्लेख किया गया है, जिसमें यह प्रतिपादित किया गया है कि भले ही अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार कर लिया गया हो, तथापि प्रोटेस्ट याचिका के आधार पर अपराध का संज्ञान लेने में कोई विधिक बाधा नहीं है।

6 विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने यद्यपि विपक्षी पक्ष संख्या-4 के तर्कों का समर्थन किया, तथापि निष्पक्ष रूप से यह निवेदन किया कि विवादित आदेश दिनांक 25.01.2024 में, दिनांक 19.10.2023 के आदेश को पुनःआहूत करते समय प्रथम दृष्टया मामला पाए जाने के संबंध में कोई कारण अंकित नहीं किया गया है।

7 पक्षकारों के प्रतिवादों पर विचार करने तथा अभिलेख का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि अंतिम प्रतिवेदन प्राप्त होने के उपरांत विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा विपक्षी पक्ष संख्या-4 को नोटिस जारी किया गया था, जो उस पर तामील भी हुआ। तत्पश्चात संबंधित न्यायालय ने केस डायरी का अवलोकन कर दिनांक 19.10.2023 के आदेश द्वारा अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार कर लिया, किंतु केस डायरी में उपलब्ध सामग्री के संबंध में, उसके उपलब्ध या अनुपलब्ध होने के विषय में कोई संतोष अभिलिखित नहीं किया गया।

8 वर्तमान वाद में विचारार्थ जो विधिक प्रश्न उत्पन्न होता है, वह यह है कि क्या मजिस्ट्रेट द्वारा अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार करने का आदेश दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 के परिधि में आएगा, तथा क्या ऐसे आदेश को पुनःआहूत अथवा पुनरीक्षित किया जा सकता है।

9 दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 (जो कि भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 403 के समकक्ष है) ऐसे निर्णय या अंतिम आदेश के संबंध में प्रावधान करती है, जिसके द्वारा किसी वाद का निस्तारण किया गया हो, और जिसे संबंधित न्यायालय द्वारा परिवर्तित अथवा पुनरीक्षित नहीं किया जा सकता।

यहाँ धारा 362 दण्ड प्रक्रिया संहिता का उल्लेख करना समीचीन होगा, जो निम्नवत् उद्धृत है:

“362. न्यायालय द्वारा निर्णय में परिवर्तन न किया जाना—

इस संहिता अथवा वर्तमान में प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा अन्यथा उपबंधित होने के सिवाय, कोई भी न्यायालय, जब वह अपने निर्णय या किसी वाद के निस्तारण संबंधी अंतिम आदेश पर हस्ताक्षर कर चुका हो, तो वह उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन या पुनरीक्षण नहीं करेगा, सिवाय इसके कि किसी लिपिकीय या गणनात्मक त्रुटि का संशोधन किया जाए।”

10 धारा 362 दण्ड प्रक्रिया संहिता, जो कि भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 403 के समकक्ष है, के अवलोकन से स्पष्ट है कि जब किसी निर्णय अथवा वाद के निस्तारण संबंधी अंतिम आदेश पर न्यायालय

द्वारा हस्ताक्षर कर दिए जाते हैं, तब उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन अथवा पुनरीक्षण नहीं किया जा सकता। अब विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या पुलिस द्वारा प्रस्तुत अंतिम प्रतिवेदन को स्वीकार करने का आदेश, वाद के निस्तारण संबंधी अंतिम आदेश की श्रेणी में आएगा।

11 माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने किशोर कुमार ज्ञान चंदानी (सुप्रा) में यह प्रतिपादित किया है कि अंतिम प्रतिवेदन स्वीकार किए जाने के पश्चात भी, मजिस्ट्रेट प्रथम सूचना दाता द्वारा प्रस्तुत परिवाद पर अपराध का संज्ञान ग्रहण कर सकता है। उक्त निर्णय के अनुच्छेद-6 का उद्धरण निम्नवत् है—

“6. यह विधि द्वारा सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि जब पुलिस, संहिता की धारा 173 के अंतर्गत विवेचना के उपरांत अंतिम प्रपत्र प्रस्तुत करती है, तो मजिस्ट्रेट पुलिस द्वारा निकाले गए निष्कर्ष से असहमति व्यक्त करते हुए संहिता की धारा 190 के अंतर्गत अपने अधिकार का प्रयोग कर संज्ञान ग्रहण कर सकता है। मजिस्ट्रेट संज्ञान न लेकर संहिता की धारा 156 के अंतर्गत आगे की विवेचना का निर्देश भी दे सकता है। जहाँ मजिस्ट्रेट पुलिस द्वारा प्रस्तुत अंतिम प्रपत्र को स्वीकार कर लेता है, वहाँ शिकायतकर्ता का नियमित परिवाद दायर करने का अधिकार समाप्त नहीं होता है और ऐसे परिवाद दायर किए जाने पर मजिस्ट्रेट संहिता की धारा 200 (पाठ में उल्लिखित धारा 201) के अंतर्गत प्रक्रिया का पालन करता है तथा यदि शिकायतकर्ता द्वारा प्रस्तुत सामग्री से अपराध बनता है, तो संज्ञान ग्रहण करता है। यह प्रश्न इस न्यायालय द्वारा गोपाल विजय वर्मा बनाम भुनेश्वर प्रसाद सिन्हा [(1982) 3 एससीसी 510 : 1983 एससीसी (क्रि) 110] में विचारित एवं निर्णीत किया गया है, जिसमें पटना उच्च न्यायालय के विपरीत दृष्टिकोण को पलट दिया गया था। उक्त निर्णय में न्यायालय ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि अंतिम प्रपत्र की स्वीकृति, शिकायत कार्यवाही में प्रस्तुत सामग्री के आधार पर मजिस्ट्रेट को संज्ञान लेने से वंचित नहीं करती है।”

12 किशोर कुमार ज्ञानचंदानी बनाम जी.डी. मेहरोत्रा और अन्य (सुप्रा) के निर्णय पर इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने सफदर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (सुप्रा) के मामले में भी भरोसा किया।

13 माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सुरेन्द्र सिंह बनाम बिहार राज्य (2005) 12 SCC 361 में रिपोर्ट किया गया, के मामले में यह प्रतिपादित किया कि जब अंतिम प्रतिवेदन संबंधित मजिस्ट्रेट द्वारा प्रथम सूचना दाता को नोटिस जारी करने के पश्चात स्वीकार कर लिया गया हो, तो उसे पुनः आहूत नहीं किया जा सकता, क्योंकि ऐसा करने का प्रयास पूर्व आदेश की पुनरीक्षा के समान होगा, जो कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 के अंतर्गत विधिद्वत् निषिद्ध है। उक्त निर्णय के अनुच्छेद संख्या-6 एवं 7 का उद्धरण निम्नवत् है—

“6. हमने उपर्युक्त दोनों आदेशों का अवलोकन किया और यह देखा कि पहले आदेश में विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अभिलेख किया कि यद्यपि प्रथम सूचना दाता को पुलिस प्रतिवेदन के साथ नोटिस भेजा गया था, तथापि सूचना दाता की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ और अभियोजन ने अंतिम प्रतिवेदन प्रस्तुत किया

जिसमें 'सत्य अज्ञात' उल्लेखित था। उन्होंने आगे कहा कि प्रकरण वर्ष 1998 से लंबित है, अतः अंतिम प्रतिवेदन को स्वीकार करना आवश्यक था। अतः प्रकरण की वास्तविक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय ने पुलिस का अंतिम आख्या स्वीकार कर लिया।

7. आश्चर्यजनक रूप से और कारण स्पष्ट न होने के बावजूद उसी दिन के अगले आदेश में विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने उपर्युक्त अपराध का संज्ञान ग्रहण कर लिया। जैसा कि अपीलकर्ता के अधिवक्ता ने तर्क दिया, यह पूर्व आदेश की समीक्षा के समान है, जो कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 के अंतर्गत कानूनन निषिद्ध है। अतः संज्ञान लेने का उक्त पश्चात आदेश कानून के दृष्टिकोण से अवैध है।”

14 माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने गणेश पटेल बनाम उमाकांत राजोरिया SLP (क्रिमिनल) नंबर 9313 of 2021 में यह प्रतिपादित किया कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 के अंतर्गत केवल आदेश का सारगर्भित पुनरीक्षण निषिद्ध है, किंतु प्रक्रियागत पुनरीक्षण निषिद्ध नहीं है। उक्त निर्णय गणेश पटेल (सुप्रा) का प्रासंगिक उद्धरण निम्नवत् है—

“आदेश को पुनःआहूत (recall) करने का यह आवेदन स्वीकार्य था, क्योंकि यह प्रक्रियागत पुनरीक्षण (procedural review) के लिए किया गया था, न कि सारगर्भित पुनरीक्षण (substantive review) के लिए, जिस पर दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 362 लागू होती। [गिंडलेज बैंक लिमिटेड बनाम सेंट्रल गवर्नमेंट इंडस्ट्रियल ट्रिब्यूनल एंड ऑर्स. 1980 (सप्लिमेंट) SCC 420]

आदेश के रिकॉल और रिव्यू के बीच अंतर और कब रिकॉल आदेश पारित किया जा सकता है, इस पर बुधिया स्वैन एंड अदर्स बनाम गोपीनाथ देब एंड अदर्स, (1999) 4 SCC 396 का उल्लेख किया जा सकता है।”

15. पटना हाई कोर्ट ने मुनिलाल ठाकुर (सुप्रा) के केस में यह भी कहा है कि अंतिम आख्या स्वीकार करने के बाद भी, मजिस्ट्रेट पहले सूचना देने वाले की शिकायत या विरोध याचिका पर संज्ञान ले सकता है। मुनिलाल ठाकुर (सुप्रा) के केस का पैराग्राफ नंबर 8 नीचे दिया गया है:

“8. आखिर में, शुरु में पूछे गए सवाल का जवाब हाँ में दिया गया है और यह माना जाता है कि एक मजिस्ट्रेट, फाइनल रिपोर्ट स्वीकार करने के बाद भी, उसी या मिलते-जुलते आरोपों पर शिकायत या विरोध याचिका पर अपराध का संज्ञान ले सकता है।”

16 तथापि, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सुब्रत चौधरी उर्फ संतोष चौधरी और अन्य बनाम असम राज्य और अन्य 2024 SCC ऑनलाइन SC 3126 में रिपोर्ट किया गया के मामले में यह प्रतिपादित किया कि यदि पुलिस द्वारा प्रस्तुत अंतिम प्रतिवेदन को विरोध/प्रोटेस्ट याचिका पर विचार करने के पश्चात स्वीकार कर लिया

गया, तो उसी आधार पर दूसरा प्रोटेस्ट याचिका या शिकायत स्वीकार्य नहीं होगी, सिवाय उन मामलों के जहाँ दूसरी प्रोटेस्ट याचिका या दूसरी शिकायत **भिन्न आधारों** पर आधारित हो। **सुब्रत चौधरी के केस (सुप्रा)** के पैराग्राफ नंबर 23 और 27 को नीचे कोट किया जा रहा है:

“23. निर्णयों की बहुतायत को देखते हुए, इसमें कोई संदेह नहीं कि जब अंतिम रिपोर्ट (Final Report), जो किसी शिकायत (FIR) के आधार पर की गई जांच के बाद दाखिल की गई हो और जो किसी न्यायालय द्वारा धारा 156(3) Cr.P.C. के तहत जांच के लिए प्रेषित की गई थी, स्वीकार कर ली जाती है और उसके विरुद्ध प्रोटेस्ट याचिका खारिज कर दी जाती है, तब भी मजिस्ट्रेट दूसरी शिकायत या दूसरी प्रोटेस्ट याचिका पर उसी या समान आरोपों या तथ्यों के आधार पर कार्रवाई कर सकता है। परंतु यह स्थिति कुछ शर्तों के अधीन है।

27. अब हमें अपील की सुनवाई इस बात को ध्यान में रखते हुए करनी होगी कि समता नायडू (सुप्रा) के मामले (उपरोक्त) में कानून की व्याख्या यह है कि यदि किसी शिकायत का पूर्व निर्णय मेरिट पर आधारित और विधि के अनुसार किया गया हो, तो पहले शिकायत में उठाए गए लगभग समान तथ्यों ('almost identical facts') पर आधारित दूसरी शिकायत स्वीकार्य नहीं होगी। “यदि दोनों शिकायतों का मूल समान है, तो दूसरी शिकायत को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए,” ऐसा वहां और भी कहा गया। 11.11.2010 की मूल शिकायत के निस्तारण के संदर्भ में तथ्यात्मक विवरण और मजिस्ट्रेट के पास नकारात्मक रिपोर्ट प्राप्त होने पर उपलब्ध विकल्पों को ध्यान में रखते हुए तथा समता नायडू (सुप्रा) मामले में दूसरी शिकायत की स्वीकार्यता पर कानून की व्याख्या को लागू करते हुए, हमें यह निष्कर्ष निकालने में कोई संकोच नहीं कि दूसरी शिकायत दिनांक 20.07.2011, जिसे दूसरे प्रतिवादी ने दाखिल किया, की स्वीकार्यता इस प्रश्न पर निर्भर करेगी कि क्या 11.11.2010 की मूल शिकायत और 20.07.2011 की दूसरी शिकायत का मूल समान है या नहीं, क्योंकि 11.11.2010 की शिकायत का निस्तारण मेरिट पर आधारित और विधि के अनुसार हुआ था। इस संदर्भ में यह भी ध्यान देने योग्य है कि अंतिम रिपोर्ट, प्रोटेस्ट शिकायत, और स्पष्ट रूप से, शिकायतकर्ता के वकील की सुनवाई के बाद, प्रोटेस्ट याचिका केवल इसलिए खारिज कर दी गई थी कि जांच में कोई दोष नहीं पाया गया और जांच उचित ढंग से की गई थी, अतः आगे की जांच के लिए कोई आदेश देने की आवश्यकता नहीं पड़ी और यह भी पाया गया कि अभियोग लेने के लिए सामग्री पर्याप्त नहीं थी। जैसा कि पहले बताया गया, 06.06.2011 के आदेश की इस प्रकृति के बावजूद, दूसरे प्रतिवादी-शिकायतकर्ता ने इसे चुनौती नहीं दी, बल्कि केवल एक नई शिकायत, अर्थात् 20.07.2011 की दूसरी शिकायत दाखिल करने का विकल्प चुना।”

17. उपरोक्त निर्णयों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि भले ही अंतिम रिपोर्ट (Final Report) को किसी आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया गया हो, फिर भी संबंधित न्यायालय पहले सूचना दाता/शिकायतकर्ता द्वारा प्रस्तुत सामग्री के आधार पर प्रोटेस्ट याचिका या अलग शिकायत पर अपराध का संज्ञान ले सकता है। लेकिन यदि मजिस्ट्रेट ने पहले सूचना दाता को सुनवाई का अवसर देने के बाद मामले की मेरिट पर चर्चा करते हुए विस्तृत आदेश पारित कर अंतिम आदेश को स्वीकार कर लिया, तो यह आदेश उस मामले में केस डायरी की सामग्री

के आधार पर संज्ञान लेने के दृष्टिकोण से अंतिम आदेश माना जाएगा। इसलिए, इसे धारा 362 Cr.P.C. द्वारा प्रतिबंधित होने के कारण पुनः प्रत्याह्वान (recall) नहीं जा सकता।

18. उपरोक्त विश्लेषण से यह भी स्पष्ट है कि यदि अंतिम रिपोर्ट को संबंधित न्यायालय ने पहले सूचना दाता की प्रोटेस्ट याचिका को मेरिट पर विचार करने के बाद स्वीकार कर लिया हो, तो दूसरी प्रोटेस्ट याचिका/शिकायत के आधार पर संज्ञान नहीं लिया जा सकता, यदि दूसरी प्रोटेस्ट याचिका या शिकायत की सामग्री लगभग वही है जो पहली प्रोटेस्ट याचिका में थी।

19. उपरोक्त कानूनी स्थिति से स्पष्ट है कि संबंधित न्यायालय पहले सूचना दाता/शिकायतकर्ता द्वारा प्रस्तुत सामग्री के आधार पर अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करने वाले आदेश को पुनः प्रत्याह्वान (recall) किए बिना) संज्ञान ले सकता है। लेकिन यदि पहले सूचना दाता द्वारा प्रोटेस्ट याचिका के साथ दायर आवेदन पर न्यायालय अंतिम आदेश को स्वीकार करने वाले आदेश को खंगालता है और केस डायरी की सामग्री के आधार पर संज्ञान लेता है, तो ऐसे आदेश के प्रत्याह्वान (recall) पर धारा 362 Cr.P.C. (BNSS के संबंधित धारा 403) लागू होगी। हालांकि, अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करने वाले आदेश का प्रक्रियात्मक / समीक्षा / प्रत्याह्वान का प्रावधान सुप्रीम कोर्ट के गणेश पटेल (सुप्रा) के निर्णय के अनुसार मान्य है, जैसे उन मामलों में जहां पहले सूचना दाता को नोटिस नहीं दिया गया, जबकि वह कानूनी रूप से अनिवार्य था।

20. वर्तमान मामले की ओर लौटते हुए, आदेश दिनांक 19.10.2023 के अवलोकन से स्पष्ट है कि यह आदेश विपक्षी पक्ष संख्या 4 को नोटिस देने के बाद पारित किया गया था। लेकिन इसे विरोधाभासी आदेश दिनांक 25.01.2024 द्वारा खंगाल लिया गया, बिना किसी तर्क प्रस्तुत किए कि यह मामला केवल प्रक्रियात्मक समीक्षा/ प्रत्याह्वान का था, न कि सार्थक समीक्षा/ प्रत्याह्वान का। यह तथ्य देखते हुए कि 19.10.2023 का आदेश, जो अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करता है, केस डायरी में उपलब्ध सामग्री के आधार पर संज्ञान लेने के संबंध में मामला निपटाने वाला अंतिम आदेश था। अतः यह आदेश धारा 362 Cr.P.C. द्वारा प्रतिबंधित है, हालांकि विपक्षी पक्ष संख्या 4 की प्रोटेस्ट याचिका को शिकायत के रूप में दर्ज करने में कोई अवैधता नहीं है।

21. उपरोक्त तथ्यों के दृष्टिगत, दिनांक 25.01.2024 का आदेश रद्द किया जाना चाहिए और मामला अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश / विशेष न्यायाधीश, POC SO अधिनियम, प्रयागराज के न्यायालय में वापस भेजा जाता है, ताकि दोनों पक्षों की सुनवाई के बाद, यहाँ किए गए टिप्पणियों के प्रकाश में, एक नया आदेश पारित किया जा सके।

22. तदनुसार, वर्तमान आवेदन स्वीकार की जाती है।

(2025) 2 ILRA 180

मूल क्षेत्राधिकार

दीवानी पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 24.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति श्री महेश चंद्र त्रिपाठी

माननीय न्यायमूर्ति श्री प्रशांत कुमार

रिट सी संख्या - 6041 वर्ष 2024

सम्बद्ध

रिट सी संख्या - 8447 वर्ष 2024

मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य प्रतिपक्षीगण

याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता: अमी टंडन

प्रतिपक्षीगण के अधिवक्ता: मुख्य स्थायी अधिवक्ता, कौशलेंद्र नाथ सिंह

ए. दीवानी कानून -भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226- दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता, 2016- धारा 31 और 238 - मैसर्स एरिना और एक घर खरीदार ने नोएडा प्राधिकरण द्वारा नोएडा स्पोर्ट्स सिटी में "लोटस एरिना-1" आवास परियोजना के लेआउट मानचित्र को फिर से मान्य करने से इनकार करने को चुनौती दी। - यह विवाद राज्य सरकार के निर्देश के लंबित आंतरिक बोर्ड के समाधान पर नोएडा की निर्भरता पर केंद्रित था। कोड, 2016 के तहत एक अनुमोदित समाधान योजना के बावजूद नोएडा के सहयोग को अनिवार्य करता है - याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया कि एन.सी.एल.टी. द्वारा स्वीकृत और एन.सी.एल.ए.टी. द्वारा बरकरार रखी गई समाधान योजना, नोएडा को संहिता, 2016 की धारा 31 और 238 के तहत बाध्य करती है - नोएडा के इनकार ने सब-पट्टा विलेख और आई.बी.सी. के तहत अपने दायित्वों का उल्लंघन किया - अदालत ने सीएजी (कैंग) रिपोर्ट द्वारा उजागर की गई अनियमितताओं की जांच की, दिवालिया कार्यवाही में नोएडा की प्रतिवादयां, और घर खरीदारों के अधिकार, यह देखते हुए कि नोएडा ने सी.आई.आर.पी. में सक्रिय रूप से भाग लिया था और इसके दावों पर विचार किया गया था-समाधान योजना की बाध्यकारी प्रकृति और घर खरीदारों के लिए होने वाले पूर्वाग्रह पर जोर देते हुए, न्यायालय ने नोएडा के दिनांक 01.11.2023 के अस्वीकृति पत्र को रद्द कर दिया

और समाधान योजना के अनुसार परियोजना को पूरा करने में सक्षम बनाने के लिए लेआउट मानचित्र के पुनर्मूल्यांकन का निर्देश दिया। (प्रस्तर-1 से 195)

रिट याचिका का निपटारा कर दिया जाता है। (ई-6)

उद्धृत वादों / निर्णय विधियों की सूची:

1. सॉलोमन बनाम ए. सॉलोमन एंड कंपनी लिमिटेड (1897) ए.सी. 22
2. नंद किशोर गुप्ता और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (2010)1 एस.सी.सी.282
3. लिटिलवुड्स स्टोर्स बनाम आईआरसी(1969)1 डब्ल्यूएलआर 1241
4. उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम रेणुसागर पावर कंपनी और अन्य (1988)4 एस.सी.सी. 59
5. बलवंत राय सलूजा बनाम एयर इंडियन लिमिटेड (2014) 9 एस.सी.सी. 407
6. डीडीए बनाम स्किपर कॉन्स कंपनी और अन्य (1996) 4 एस.सी.सी. 622
7. राज की स्थिति। और अन्य बनाम गोटन लाइम स्टोन खनिज उद्योग प्राइवेट लिमिटेड और अन्य (2016) 4 एस.सी.सी. 469
8. आर्सेलरमिittel इंडिया प्राइवेट लिमिटेड बनाम सतीश कुमार गुप्ता और अन्य (2019) 2 एस.सी.सी. 1
9. शुभा मुखर्जी और अन्य बनाम भारत कोकिंग कोल लिमिटेड और अन्य (2003)3 एस.सी.सी. 312
10. एशिया फाउंडेशन एंड कॉन्स लिमिटेड बनाम राज्य गुजरात और एक अन्य (1985) एस.सी.सी. ऑनलाइन गुजरात 93
11. हाइटोन मर्चेंट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम शताब्दी इन्वेस्टमेंट कंसल्टेंट्स प्राइवेट लिमिटेड कंपनी एप्ल संख्या-258 वर्ष 2021
12. विदर्भ इंडस पावर लिमिटेड बनाम एक्सिस बैंक लिमिटेड (2022) 8 एस.सी.सी. 352
13. रास्टर इमेजेज प्राइवेट लिमिटेड बनाम यूपी राज्य (2023) एस.सी.सी. ऑनलाइन 3594
14. कलकत्ता क्रोमोटाइप लिमिटेड बनाम कॉलर। केंद्रीय उत्पाद शुल्क कोलकाता (1998) ए.आई.आर. एस.सी. 1631
15. न्यू होराइजन लिमिटेड और अन्य बनाम यू.ओ.आई. और अन्य (1995)1 एस.सी.सी. 478
16. सीआईटी बनाम मीनाक्षी मिल्स लिमिटेड मदुरा (1967) ए.आई.आर. एस.सी. 819
17. टेलको और अन्य बनाम बीएच राज्य (1965)ए.आई.आर. एस.सी.40 जुगगीलाल कमलापाल बनाम ए.आई.आर. (1969) एस.सी. 932
18. मनीष कुमार बनाम यू.ओ.आई. (2021) 5 एस.सी.सी. 1

- 2.इला मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य 233
19. अजय कुमार राधेश्याम गोयनका बनाम ट्रिजिम् फिन. कॉर्प ऑफ इंडिया लिमिटेड, सीआरएलए संख्या-170 वर्ष 2023
20. इनोवेटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आई.सी.आई.सी.आई. बैंक। (2018) 1 एस.सी.सी. 407
21. घनश्याम मिश्रा एंड संस प्राइवेट लिमिटेड के माध्यम से अधिकृत हस्ताक्षरकर्ता बनाम एडलवेस एसेट रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड के माध्यम से निदेशक और अन्य (2021) 9 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 657
22. श्रेई मल्टीपल एसेट इन्वेस्टमेंट ट्रस्ट विजन इंडिया फंड बनाम डेक्कन क्रॉनिकल मार्केटर्स (2023) एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 298 (सिविल अपील संख्या-1706 वर्ष 2023)
23. उदगर गगन प्रॉप्स लिमिटेड बनाम संत सिंह और अन्य (2016) 11 एस.सी.सी. 378
24. मधुकर सद्भाव शिवारकर (डी) एलआरएस बनाम महाराष्ट्र और अन्य (2015) 6 एस.सी.सी. 557
25. मेसर्स एम्बेसी प्रॉपर्टी डेव प्राइवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य (2020)13 एस.सी.सी. 308
26. भूपिंदर सिंह बनाम यूनितेक लिमिटेड (सिविल अपील संख्या-10856 वर्ष 2016)
27. जेपी ऑर्चर्ड रेजिडेंट वेलफेयर सोसी। बनाम यू.ओ.आई. और अन्य (सिविल रिट संख्या-854 वर्ष 2017)
28. चित्रा शर्मा बनाम यू.ओ.आई. (2018) 18 एस.सी.सी. 575
29. पायनियर अर्बन लैंड एंड इंफ्रा. बनाम यू.ओ.आई. (2019)8 एस.सी.सी. 416
30. मैसर्स इनोवेटिव इंडस लिमिटेड बनाम आई.सी.आई.सी.आई. बैंक (2018)1 एस.सी.सी. 407
31. मैसर्स इनोवेटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आई.सी.आई.सी.आई. बैंक।

**(माननीय न्यायमूर्ति श्री महेश चंद्र त्रिपाठी एवं
माननीय न्यायमूर्ति श्री प्रशांत कुमार द्वारा उद्घोषित))**

विषय-सूची

एस एन	शीर्षक	पृष्ठ संख्या	प्रस्तर
1	मामले का तथ्यात्मक मैट्रिक्स	03-08	03-19
2	दिवाला कार्यवाही	08-17	20-40
3	याचिकाकर्ताओं का तर्क (रिट-सी संख्या-6041 वर्ष 2024)	18-22	41-59
4	याचिकाकर्ताओं का तर्क (रिट-सी संख्या-8441 वर्ष 2024)	23-27	60-71
5	नोएडा प्राधिकरण की ओर से दलील	27-36	72-101
6	दिवाला कार्यवाही	36-37	102-104
7	कॉर्पोरेट घूँघट का भेदी	37-40	105-116

8	खेल सुविधाओं का गैर-विकास	41-41	117-119
9	घर खरीदारों के हित	41-42	120-120
10	किशतों के भुगतान के लिए सूचना	42-42	121-121
11	विभिन्न कंपनियों की शेयरधारिता में बदलाव	42-50	122-122
12	विश्लेषण	50-50	123-124
13	I-प्री-इन्सॉल्वेंसी पार्ट	50-54	125-128
14	आपराधिक शिकायत/आरोप-पत्र	54-55	129-132
15	कॉर्पोरेट घूँघट का भेदी	55-58	133-142
16	मनी लॉन्ड्रिंग	58-61	143-150
17	II-पोस्ट इन्सॉल्वेंसी	61-63	151-158
18	कपटी	63-66	159-165
19	घर खरीदारों का हित	67-69	166-174
20	उच्च न्यायालय का हस्तक्षेप	69-71	175-183
21	कंसोर्टियम पर प्रभाव जब कंसोर्टियम का कोई सदस्य दिवालियापन में जाता है	71-73	184-187
22	समाप्ति / निष्कर्ष	73-75	188-197

1. दोनों रिट याचिकाओं को सम्बद्ध किया गया है और एक साथ सुना गया है क्योंकि वे समान मुद्दे से जुड़े हैं, और इसलिए, उनका निर्णय इस संयुक्त निर्णय और आदेश द्वारा किया जा रहा है।

2. श्री शशि नंदन, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अमी टंडन, याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता, श्री रिताज विक्रम सिंह, संबंधित याचिका (रिट-सी संख्या-8447 वर्ष 2024) में याचिकाकर्ता के अधिवक्ता श्री रिताज विक्रम सिंह, राज्य-प्रतिपक्षीगण के स्थायी अधिवक्ता श्री मोहन श्रीवास्तव और प्रतिवादी-नोएडा के अधिवक्ता श्री कौशलेंद्र नाथ सिंह और सुश्री अंजलि गोखलानी को सुना और अभिलेखों का अवलोकन किया।

रिट-सी संख्या-6041 वर्ष 2024 का तथ्यात्मक मैट्रिक्स

3. याचिकाकर्ताओं मेसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड और मेसर्स पूर्वांचल प्रोजेक्ट प्राइवेट लिमिटेड ने अपने अधिकृत हस्ताक्षरकर्ता के माध्यम से प्रस्तुत रिट याचिका दायर की है।

4. वर्ष 2010-2011 में कुछ समय, न्यू ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण ने सेक्टर संख्या-78, 79, 101 और 150 में स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने के लिए एक नीति की कल्पना की और उसके बाद, एक योजना

शुरू की गई और ब्रोशर जारी किया गया। इसके अनुसरण में, डेवलपर्स द्वारा आवेदन आमंत्रित किए गए थे। ऐसा प्रतीत होता है कि एक परिसंघ ने इस भूमि के आवंटन के लिए आवेदन किया था और इसे 04-05-2011 को ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड के परिसंघ को आवंटित किया गया था। बाद में, लीड कंसोर्टियम के सदस्यों के अनुरोध पर, नोएडा ने भूखंडों को छह भागों में विभाजित किया। इन छह भागों में से। विभाजन इस प्रकार था:-

- 1). एस.सी.-01/ए सेक्टर-79 मैसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड - 1,00,000 वर्ग
- 2). एस.सी.-01/बी सेक्टर-79 मैसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड - 48,000 वर्गमीटर
- 3). एस.सी.-01/सी सेक्टर-79 मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर - 2,50,027.5 वर्ग मीटर
- 4). एस.सी.-01/डी सेक्टर-79 मैसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड - 1,00,000 वर्गमीटर
- 5). एस.सी.-01/ई सेक्टर -79 मैसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड - 80,000 वर्गमीटर।
- 6). एस.सी.-01 सेक्टर -78 मैसर्स ज़ानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड - 14, 272.50 वर्गमीटर,

5. प्लॉट नं० एस.सी.-01/ए, सेक्टर-79 को मैसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड को वर्ष 1,00,000 वर्ग मीटर क्षेत्र के साथ आवंटित किया गया था, जहां प्रमोटर निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज और सुरप्रीत सिंह सूरि थे और मैसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड की हिस्सेदारी 99.99% और 0.01% थी, जिसमें मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की ओर से सुरप्रीत सिंह सूरि नामांकित थे।

6. मैसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड ने फिर से नोएडा से भूखंड को 50,000 वर्ग मीटर मापने के दो भागों में उप-विभाजित करने के लिए कहा:

i) एम/एस सीक्वल बिल्डकॉन प्रा. लि. ने पुनः नोएडा प्राधिकरण से अनुरोध किया कि उक्त भूखण्ड को आगे दो भागों में विभाजित किया जाए, प्रत्येक भाग का क्षेत्रफल 50,000 वर्ग मीटर हो।

(ii) 50,000 वर्ग मीटर का दूसरा प्लॉट (प्लॉट सं 10) एस.सी.-01/ए2, सेक्टर 79 मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड को आवंटित किया गया था, जो लोटस एरिना-1 के नाम से परियोजना को विकसित करने का इरादा रखता था।

7. मैसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड, नोएडा ने 19.10.2012 को जो मूल आवंटि था, नए आवंटि मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड (इसके बाद संक्षिप्तता के लिए 'मैसर्स ए.एस.पी.एल.' के रूप में उल्लिखित) और नोएडा के बीच एक त्रिपक्षीय उप-पट्टा विलेख निष्पादित किया।

8. समझौते के अनुसार, मैसर्स ए.एस.पी.एल. को 60,37,50,000/- रुपये और किश्तों पर ब्याज का भुगतान करना था। पट्टा विलेख के अनुसार याचिकाकर्ता की भुगतान अनुसूची इस प्रकार थी:

क्रम संख्या	नियत तारीख	मूल राशि (रु.)	ब्याज @ 11% प्रति वर्ष (रु.)	कुल (रु.)
पहली छमाही के लिए अधिस्थगन ब्याज	04.11.2011		2,98,85,625	2,98,85,625
दूसरी छमाही के लिए मोहलत ब्याज	04.05.2012		2,98,85,625	2,98,85,625
तीसरी छमाही के लिए मोहलत ब्याज	04.11.2012		2,98,85,625	2,98,85,625
4 वीं छमाही के लिए मोहलत ब्याज	04.05.2013		2,98,85,625	2,98,85,625
1	04.11.2013	3,39,60,938	2,98,85,625	6,38, 46,563
2	04.05.2014	3,39,60,938	2,80,17,774	6,19,78,712
3	04.11.2014	3,39,60,938	2,61, 49,923	6,01,10,861
4	04.05.2015	3,39,60,938	2, 42,82,071	5,82, 43,009
5	04.11.2015	3,39,60,938	2, 24,14, 220	5,63,75,158
6	04.05.2016	3,39,60,938	2,05, 46,368	5, 45,07,306
7	04.11.2016	3,39,60,938	1,86,78,516	5, 26,39, 454
8	04.05.2017	3,39,60,938	1,68,10,665	5,07,71,603
9	04.11.2017	3,39,60,938	1, 49, 42,813	4,89,03,751
10	04.05.2018	3,39,60,938	1,30,74,962	4,70,35,900
11	04.11.2018	3,39,60,938	1,12,07,110	4,51,68,048
12	04.05.2019	3,39,60,938	93,39, 258	4,33,00,196
13	04.11.2019	3,39,60,938	74,71, 407	4,14,32,345
14	04.05.2020	3,39,60,938	56,03,555	3,95,64, 493
15	04.11.2020	3,39,60,938	37,35,704	3,76,96,642
16	04.05.2021	3,39,60,938	18,67,852	3,58, 28,790

79,69,02,831

9. पट्टा विलेख की अनुसूची के खिलाफ, याचिकाकर्ता ने निम्नलिखित भुगतान किया था: -

भूमि प्रीमियम		
क्रम सं	दिनांक	कुल धनराशि

1		6,03,75,000
2		4,67,00,000
3	12-मई-17	1,19,00,000
4	17-मई-17	41,00,000
5	13-जून-17	42,00,000
6	28-जून-17	67,00,000
7	07-जुलाई-17	50,00,000
8	09-अक्टूबर-17	1,51,00,000
9	14-नवंबर-17	75,00,000
10	12-दिसंबर-17	26,67,000
11	29-दिसंबर-17	30,00,000
12	05-जनवरी-18	1,00,00,000
13	19-जनवरी-18	41,00,000
15	01-फरवरी-18	49,00,000
16	26-फरवरी-18	43, 26,000
17	17-मार्च-18	65,00,000
18	28-मार्च-18	50,00,000
19	17-अप्रैल-18	85,00,000
20	26-अप्रैल-18	42,00,000
21	31-मई-18	21,00,000
22	03-जुलाई-18	45,00,000
23	17-जुलाई-18	53,00,000
25	04-अगस्त-18	25,00,000
28	31-अगस्त-19	5,00,000
29	11-सितंबर-19	1,50,00,000
	कुल	24, 46,68,000

10. बिल्डर मेसर्स ए.एस.पी.एल. को रजिस्टर्ड पट्टा विलेख के अनुसार ग्रुप हाउसिंग सोसाइटी का निर्माण 5 साल के भीतर और मल्टी पर्पज प्ले ग्राउंड का निर्माण 10 करोड़ रुपये की लागत से करना था।

11. स्पष्ट रूप से, मैसर्स ए.एस.पी.एल. ने परियोजना को पूरा करने के लिए लेआउट मैप की मंजूरी के लिए आवेदन किया था और इसे 29.04.2014 को पट्टा विलेख के निष्पादन की तारीख से 5 साल की अवधि के लिए मंजूरी दी गई थी।

12. नोएडा के स्वीकृत मानचित्र के अनुसार, मैसर्स ए.एस.पी.एल. को निम्नानुसार निर्माण करने की अनुमति दी गई थी: -

टावर नं.	मंजिलों की संख्या	आर.सी.सी. स्लैब पूरा हो गया	ईंट का काम	आंतरिक प्लास्टर	बाहरी प्लास्टर
			पूरा किया	पूरा किया	पूरा किया
टावर-I	स्टिल्ट + 32	32 स्लैब	भूतल- 25वीं मंजिल	शून्य	25%
टावर-II	स्टिल्ट + 32	32 स्लैब	भूतल-20वीं मंजिल	शून्य	शून्य
टावर-III	स्टिल्ट + 32	32 स्लैब	भूतल-23वीं मंजिल	शून्य	शून्य
टावर-IV	स्टिल्ट + 29	29 स्लैब	1 - 5 वीं मंजिल	शून्य	शून्य
टावर-V	स्टिल्ट + 29	29 स्लैब	पहली - चौथी मंजिल	शून्य	शून्य
टावर-VI	स्टिल्ट + 29	27 स्लैब	1 मंजिल	शून्य	शून्य
टावर-VII	स्टिल्ट + 31	10 स्लैब	शून्य	शून्य	शून्य
टावर-VIII	स्टिल्ट + 31	12 स्लैब	शून्य	शून्य	शून्य
टावर-IX	स्टिल्ट + 31	10 स्लैब	शून्य	शून्य	शून्य

13. एक बार जब पट्टा विलेख मैसर्स ए.एस.पी.एल. के पक्ष में निष्पादित हो गया और नोएडा द्वारा लेआउट मैप को मंजूरी दे दी गई, तो मैसर्स ए.एस.पी.एल. ने परियोजना का विपणन शुरू कर दिया। इस परियोजना में 1080 फ्लैट थे, जिनमें से मैसर्स ए.एस.पी.एल. ने 2014 से 2020 तक विभिन्न घर खरीदारों को 785 फ्लैट बेचे और बदले में लगभग 387 करोड़ रुपये एकत्र किए। इसके बाद कुछ कारणों से याचिकाकर्ता ने निर्माण रोक दिया।

14. स्वीकृत मानचित्र की अवधि 5 वर्ष थी जो 28.4.2019 को समाप्त हुई। लेकिन याचिकाकर्ता संख्या-1 निर्माण पूरा करने में विफल रहा और परियोजना ठप हो गई और स्पोर्ट्स सिटी परियोजना में खेल सुविधाएं प्रदान करने में भी विफल रही।

15. याचिकाकर्ता संख्या-1 ने लगभग 387 करोड़ रुपये एकत्र किए थे और पैसे का एक बड़ा हिस्सा हेराफेरी कर लिया था, और फिर परियोजना को छोड़ दिया था, जिन घर खरीदारों ने ठगा हुआ महसूस किया, उन्होंने मैसर्स ए.एस.पी.एल. के प्रभारी/प्रबंधन के खिलाफ धारा 120 बी, 406 और 420 भा.दं.वि. के तहत आपराधिक

शिकायत दर्ज की। यहां तक कि कुछ घर खरीदारों ने आर्थिक अपराध शाखा के समक्ष मामले दायर किए थे, जिसमें जांच के बाद आरोप पत्र दायर किया गया है और आपराधिक कार्यवाही अभी भी चल रही है।

16. स्पोर्ट्स सिटी के आवंटन और विकास में बड़े पैमाने पर घपले की कुछ रिपोर्ट आई थी, इसलिए मामला ऑडिट के लिए कंट्रोलर और ऑडिटर जनरल के पास गया। ऑडिट के बाद कैंग ने एक रिपोर्ट पेश की, जिसमें स्पोर्ट्स सिटी के आवंटन और विकास में विभिन्न अनियमितताओं की ओर इशारा किया गया, जिसके परिणामस्वरूप राज्य के खजाने को लगभग 9000 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ। बताई गई अनियमितताएं इस प्रकार थीं: -

- (I) किस प्रकार खेल नगर के गलत मूल्य निर्धारण के कारण नोएडा प्राधिकरण को लगभग 9000 करोड़ रुपये का घाटा हुआ।
- (II) विवरणिका के अनुसार केवल आवासीय और वाणिज्यिक भूखंडों को विभाजित किया जा सकता था, लेकिन नोएडा प्राधिकरण ने पूरे भूखंडों को उप-विभाजित कर दिया था, जिन्हें स्पोर्ट्स सिटी के लिए भी निर्धारित किया गया था।
- (III) आबंटी की बोलियों की जांच नहीं की गई थी और उम्मीदवारों के टर्नओवर पर विचार नहीं किया गया था।
- (IV) उच्चतम हिस्सेदारी वाले अग्रणी सदस्य को परियोजना से पूरी तरह से बाहर कर दिया गया था और उसके बाद, आवंटन विभिन्न अन्य कंपनियों को किया गया था, जो व्यक्तिगत रूप से वित्तीय बोली मूल्यांकन में अर्हता प्राप्त नहीं कर सकती थीं।
- (V) वित्त विभाग ने प्रत्येक आवंटी कंपनी को एक नए आवंटी के रूप में मानते हुए एक नई भुगतान योजना जारी की है।
- (VI) दूसरे और तीसरे स्थानांतरण के लिए स्थानांतरण प्रभार एकत्र नहीं किए गए थे।
- (VII) कुछ मामलों में अधिभोग प्रमाण-पत्र जारी कर दिया गया है, हालांकि खेल सुविधाएं पूरी तरह से विकसित नहीं की गई थीं।
- (VIII) आवंटी को ग्रुप हाउसिंग सोसाइटी का एफ.ए.आर. दिया गया था, हालांकि भूमि को विशिष्ट एफ.ए.आर. वर्ष 1.5 के साथ स्पोर्ट्स सिटी के लिए चिह्नित किया गया था।
- (IX) पट्टे का किराया भी वसूल नहीं किया गया था।

17. कैंग की रिपोर्ट से पता चलता है कि कैसे नोएडा प्राधिकरण के अधिकारी बिल्डरों के साथ मिलीभगत कर रहे थे और इतने बड़े घोटाले में लिप्त थे। नीति का पूरी तरह से उल्लंघन करते हुए नक्शे स्वीकृत किए गए और नोएडा प्राधिकरण ने आवंटियों को उक्त आवंटित भूमि पर निर्माण करने की अनुमति दी।

18. कैग रिपोर्ट की प्रतिक्रिया के रूप में, नोएडा ने 18.01.2021 (201वीं बोर्ड बैठक) को अपनी बोर्ड बैठक बुलाई, जिसमें यह संकल्प लिया गया है कि एक समिति का गठन किया जाना चाहिए जो बताई गई अनियमितताओं को देखेगी और अगली बोर्ड बैठक में एक रिपोर्ट पेश करेगी और मानचित्रों के पुनर्सत्यापन सहित स्पोर्ट्स सिटी में उठाए जाने वाले किसी भी कदम पर रोक लगा दी है। 26.07.2023 को अवधारित बोर्ड की अगली (202वीं बोर्ड बैठक) में यह संकल्प लिया गया कि इस मुद्दे को आवश्यक दिशा और मार्गदर्शन के लिए राज्य सरकार के समक्ष रखा जा सकता है। यह भी संकल्प लिया गया कि राज्य सरकार से निर्देश मिलने के बाद ही नोएडा स्पोर्ट्स सिटी से संबंधित सभी मुद्दों पर निर्णय लेगा।

19. स्थिति की गंभीरता को देखते हुए इस मुद्दे की जांच के लिए राज्य सरकार द्वारा विधान सभा की एक लोक लेखा समिति का गठन किया गया था।

दिवाला कार्यवाही

20. इस बीच मेसर्स ए.एस.पी.एल. परियोजना को पूरा नहीं कर सका और अपनी वित्तीय प्रतिबद्धताओं को पूरा नहीं कर सका, इसलिए वित्तीय लेनदारों में से एक ने नई दिल्ली में राष्ट्रीय कंपनी कानून न्यायाधिकरण 7 के समक्ष दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 के नियम 4 सपठित धारा 7 के तहत कार्यवाही शुरू की थी, जिसे 29.10.2020 को स्वीकार किया गया था और कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू की गई थी। प्रारंभ में, श्री पवन कुमार सिंघल को अंतरिम समाधान पेशवर के रूप में नियुक्त किया गया था, जिन्हें बाद में दिनांक 09.06.2024 के निर्णायक प्राधिकरण के आदेश द्वारा श्री अय्यंगरी विश्वनाथ द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था। इसके बाद, लेनदारों की समिति¹⁰ ने घर खरीदारों को समिति में भाग लेने की अनुमति दी और परियोजना में उनकी हिस्सेदारी के आधार पर वे सी.ओ.सी. में लेनदारों का 71.11% हो गए।

21. आई.आर.पी. ने सार्वजनिक घोषणाएं कीं और लेनदारों से दावों के लिए कॉल किया। ऋणदाताओं की समिति का गठन 02.12.2020 को किया गया था। घर खरीदारों का वोटिंग शेयर 71.11% था। नोएडा प्राधिकरण ने भी अपना दावा किया है। समय के साथ, सी.ओ.सी. की 20 बार बैठक हुई। इसके बाद, भारतीय दिवाला और शोधन अक्षमता बोर्ड (कॉर्पोरेट व्यक्तियों के लिए दिवाला समाधान प्रक्रिया) विनियम, 2016 के नियम 36A(1) सपठित संहिता की धारा 25 (2)(h) के अनुसार, संभावित समाधान आवेदकों से रुचि की अभिव्यक्ति के लिए फॉर्म 'G' में निमंत्रण 14.03.2021 और फिर 30.06.2021 को आमंत्रित किया गया था। यह नोटिस भारतीय दिवाला एवं ऋण शोधन अक्षमता बोर्ड की वेबसाइट पर भी प्रकाशित किया गया है। इसके जवाब में 19 अलग-अलग कंपनियों से एक्सप्रेसन ऑफ इंटरेस्ट प्राप्त हुए थे। मूल्यांकन मैट्रिक्स के बाद, 30.07.2021 को 17 संभावित समाधान आवेदकों (संक्षिप्त 'पी.आर.ए.' के लिए) को समाधान योजना के लिए अनुरोध जारी किया गया था, और संशोधित समाधान योजनाओं को प्रस्तुत करने की अंतिम तिथि 17.05.2021 को निर्धारित की गई थी जिसे बढ़ाकर 16.06.2022 कर दिया गया था। अंतिम तिथि तक पी.आर.ए. ने अपनी समाधान योजनाएं प्रस्तुत की थीं।

2.इला मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य 241

22. 01.07.2022 को आयोजित 19वीं सी.ओ.सी. बैठक में सभी 6 समाधान योजनाओं पर चर्चा की गई और जिनमें से 4 आई.बी.सी. प्रावधानों के अनुपालन में पाई गई और इसलिए, उन्हें मतदान के लिए अग्रेषित किया गया। पूर्वांचल द्वारा प्रस्तुत समाधान योजना को सी.ओ.सी. में 71.11% वोटिंग शेयर वाले सदस्यों द्वारा अनुमोदित किया गया था।

23. इसके बाद, सी.ओ.सी. द्वारा 09.07.2022 को याचिकाकर्ता संख्या-2 को "सफल समाधान अपीलकर्ता" (इसके बाद "एस.आर.ए." के रूप में संदर्भित) के रूप में एक आशय पत्र जारी किया गया था। समाधान योजना की शर्तों के अनुसार, 'एस.आर.ए.' को परियोजना का निर्माण पूरा करना था और तीन महीने के भीतर वित्तीय लेनदारों/घर खरीदारों को फ्लैट वितरित करना था। एस.आर.ए. को भी 20 करोड़ रुपये का निवेश करना था।

24. नोएडा ने सी.आई.आर.पी. की कार्यवाही में भाग लिया और 84,19,00, 446/- रुपये की राशि के लिए फॉर्म सी में समाधान पेशेवर को दावा प्रस्तुत किया। हालांकि, आरपी द्वारा स्वीकार किया गया दावा 68,90,93,950/- रुपये था।

25. समाधान योजना में नोएडा प्राधिकरण को दिवाला शुरू होने की तारीख के अनुसार उप-पट्टे के तहत अपने बकाया की संतुष्टि के लिए 8,61, 47,190 रुपये (आठ करोड़ इकसठ लाख सैंतालीस हजार एक सौ नब्बे मात्र) की राशि का भुगतान करने का प्रस्ताव है। प्रचालनात्मक लेनदारों के लिए प्रस्तावित कुल राशि 10,00,00,000 रुपये (केवल दस करोड़ रुपये) थी और आनुपातिक हिस्सा नोएडा प्राधिकरण को दिया जाना था।

26. इसके अलावा, समाधान योजना विशेष रूप से सेक्टर 78 और 79 में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के मास्टर लेआउट प्लान के अनुसार बड़े स्पोर्ट्स सिटी बुनियादी ढांचे के हिस्से के रूप में याचिकाकर्ता के हिस्से के भीतर आने वाले बहुउद्देशीय खेल के मैदान के विकास के लिए 10,00,00,000 रुपये (केवल दस करोड़ रुपये) की राशि निर्धारित करती है। उक्त प्रावधान यानी समाधान योजना का खंड 7.1(vi) नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है: -

"vi. समाधान आवेदक नोएडा द्वारा जारी दिनांक 16.08.2021 के पत्र और पट्टा विलेख/सब-पट्टा विलेख और अनुमोदित लेआउट प्लान के प्रावधानों से समझता है कि उक्त उद्देश्य के लिए निर्धारित परियोजना भूमि के एक हिस्से पर कॉर्पोरेट देनदार द्वारा 10,00,00,000 रुपये की लागत से एक बहुउद्देशीय खेल का मैदान विकसित किया जाना है, जो नोएडा के सेक्टर 79 में विकसित किए जाने वाले एकीकृत स्पोर्ट्स सिटी बुनियादी ढांचे का हिस्सा है। समाधान आवेदक ने तदनुसार उक्त उद्देश्य के लिए 10,00,00,000 रुपये तक की राशि निर्धारित की है और इसका उपयोग बहुउद्देशीय खेल के मैदान के निर्माण के लिए करेगा। इसके लिए किसी भी अतिरिक्त धन की आवश्यकता आवंटियों द्वारा उनके फ्लैट क्षेत्रों के अनुपात में वहन की जाएगी।

27. आरपी ने याचिकाकर्ता संख्या-1 का कार्यभार संभालने के बाद, नोएडा प्राधिकरण से दिनांक 03.08.2021 के ईमेल के माध्यम से कुछ प्रश्न मांगे, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ बड़े इंटीग्रेटेड स्पोर्ट्स सिटी कॉम्प्लेक्स के विवरण, उक्त परियोजना के मास्टर लेआउट प्लान और उसी के संबंध में कॉर्पोरेट देनदार के दायित्व से संबंधित थे। इसके जवाब में, नोएडा ने समाधान पेशेवर को दिनांक 16.08.2021 को एक पत्र जारी किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित शब्दों में प्रश्न संख्या-2 का उत्तर दिया गया है: -

"जवाब: खेल शहर के बुनियादी ढांचे के संबंध में, यह स्पष्ट किया जाता है कि उक्त उप-पट्टा विलेख के खंड (डीडी) और (ईई) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कॉर्पोरेट देनदार अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार एकीकृत खेल बुनियादी ढांचे को विकसित करने के लिए उत्तरदायी है। उक्त उप-पट्टा विलेख के अनुवादित खंड (डीडी) और (ईई) के प्रासंगिक भाग को यहां पुनः प्रस्तुत किया गया है

"(डीडी) आवंटी एजेंसी स्पोर्ट सिटी परियोजना के लिए सेक्टर -79 में टाइम प्राधिकरण द्वारा आवंटित भूमि पर स्पोर्ट सिटी परियोजना की एकीकृत योजना और निष्पादन के लिए संपूर्ण आवंटित भूमि (भूमि के उप-विभाजित भूखंडों को भी जोड़ना) के लिए प्राधिकरण से लेआउट प्लान (भुवनेश्वर मानचित्र) को एक साथ स्वीकृत कराएगी। इस योजना में भूमि के आवंटन के नियमों और शर्तों के अनुसार विभिन्न गतिविधियों की योजना प्रस्तावित की जाएगी। (ईई) परियोजना का निष्पादन आवंटी एजेंसी द्वारा प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित लेआउट प्लान (भुवनेश्वर मानचित्र) के अनुसार ही किया जाएगा। आवंटी एजेंसी के सदस्य किसी भी परिस्थिति में उप-विभाजित भूखंडों को किसी तीसरे व्यक्ति को हस्तांतरित नहीं करेंगे, जब तक कि प्राधिकरण द्वारा लेआउट प्लान (भुवनेश्वर मानचित्र) को मंजूरी नहीं दी जाती है। इसलिए, यह स्पष्ट किया जाता है कि खेल शहर के बुनियादी ढांचे का निर्माण लेआउट योजना के अनुसार किया जाना है। दिनांक 16.06.2014 की लेआउट योजना को पहले ही पिछले प्रस्तर में वर्तमान पत्र के साथ संलग्न किया जा चुका है।

28. आरपी ने एक समाधान योजना प्रस्तुत की, जिसमें यह कहा गया था कि नोएडा (ऑपरेशनल क्रेडिटर) को किया जाने वाला प्रस्तावित भुगतान अंतिम भुगतान होगा और नोएडा किसी भी तरह की अतिरिक्त राशि नहीं मांग सकता है या मांग नहीं कर सकता है। नोएडा किसी भी समय प्रदर्श शुल्क की मांग नहीं करेगा। परियोजना के लिए समय प्रदर्श प्रभारों की गणना के लिए पूरा होने की तिथि/समाप्ति को शून्य तिथि माना जाता है।

29. समाधान योजना में यह शामिल था कि सभी अवैतनिक दावों/ऋणों/बकायों/मांगों के साथ-साथ पट्टे के प्रीमियम और किराया, अतिरिक्त भूमि मुआवजा आदि के साथ-साथ उस पर कोई ब्याज या जुर्माना और नोएडा के अन्य सभी दावों को पूरी तरह से बट्टे खाते में डाल दिया जाना था और स्थायी रूप से समाप्त कर दिया जाना था, और कॉर्पोरेट देनदार को किसी भी समय इसके संबंध में जिम्मेदार या उत्तरदायी नहीं ठहराया जाएगा। नोएडा इस समाधान योजना के माध्यम से नियम और शर्तों, पट्टा विलेख और सब-पट्टा विलेख और सब-पट्टा विलेख और प्रभावी तिथि से पहले होने वाले सभी उल्लंघनों और/या डिफॉल्टों को पूर्ण प्रभाव देगा। नोएडा पट्टा विलेख को रद्द नहीं करेगा या कारपोरेट देनदार के खिलाफ कोई जबरदस्ती या प्रतिकूल कदम नहीं

उठाएगा। प्रभावी तिथि से पहले कॉर्पोरेट देनदार द्वारा पट्टा विलेख के सभी चूक, यदि कोई भी किए गए हैं, तो इस समाधान योजना के माध्यम से माफ/ठीक हो जाते हैं और नोएडा परियोजना भूमि के पट्टा विलेख/सब-पट्टा विलेख की शर्तों को पूरा प्रभाव देने के लिए बाध्य है।

30. इसमें यह भी निहित था कि टावरों/परियोजना के पूरा होने पर, नोएडा समयबद्ध तरीके से भाग/पूर्ण व्यवसाय/पूर्णता प्रमाण पत्र जारी करेगा और जब तक कि लागू कानूनों द्वारा प्रतिबंधित न हो, कुल भूमि पर किसी भी खेल या मनोरंजक सुविधाओं को पूरा करने पर जोर दिए बिना ऐसा किया जाएगा। कारपोरेट देनदार/समाधान आवेदक कुल भूमि के संबंध में किसी अन्य संस्था द्वारा किए गए किसी भी चूक/उल्लंघन के लिए उत्तरदायी नहीं होगा और इस तरह के किसी भी उल्लंघन या चूक से परियोजना के विकास/निर्माण और नोएडा द्वारा परियोजना के अंश/पूर्ण कब्जा/पूर्णता प्रमाण पत्र प्रदान करने में बाधा नहीं आएगी।

31. इसके अलावा, समाधान योजना में, सेक्टर 78 और 79 में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के मास्टर लेआउट प्लान के अनुसार बड़े स्पोर्ट्स सिटी बुनियादी ढांचे के हिस्से के रूप में याचिकाकर्ता के हिस्से के भीतर आने वाले विकास और बहुउद्देश्यीय खेल के मैदान के लिए 10,00,00,000 करोड़ रुपये निर्धारित किए गए थे।

32. एन.सी.एल.टी. की लंबित कार्यवाही में नोएडा ने आई.ए.संख्या-5361 वर्ष 2021 के तहत एक आवेदन किया, जिसमें मांग की गई थी कि नोएडा को कॉर्पोरेट देनदार के वित्तीय लेनदारों के रूप में वर्गीकृत किया जाना चाहिए और उन्हें सी.ओ.सी. की बैठक में भाग लेने की अनुमति भी दी जानी चाहिए और पट्टा विलेख के अनुसार बकाया राशि पर 11% ब्याज चाहता है और समय प्रदर्श शुल्क 64.07% किसान मुआवजा भी चाहता है और किराया/पट्टा किराए का दावा करना चाहता है।

इस आवेदन यानी आई.ए. संख्या-5361 वर्ष 2021 में नोएडा ने निम्नलिखित राहत मांगी थी: -

"ए- प्रतिवादी को आवेदक को कॉर्पोरेट देनदार के वित्तीय लेनदार के रूप में वर्गीकृत करने का निर्देश दें;

बी- प्रतिवादी को कॉर्पोरेट देनदार को वित्तीय लेनदार की श्रेणी में आवेदक द्वारा दायर किए गए दावे को पंजीकृत करने का निर्देश दें;

सी- प्रतिवादी को निर्देश दें कि वह आवेदक को कॉर्पोरेट देनदार की सीओसी की बैठकों में भाग लेने की अनुमति दें;

डी- प्रतिवादी को 11% प्रति वर्ष अनुसूचित ब्याज के संबंध में आवेदक के दावे को स्वीकार करने का निर्देश देना, जो दिवालियापन शुरू होने की तारीख के बाद की अवधि के लिए उप-पट्टा विलेख के तहत पट्टा प्रीमियम राशि का हिस्सा है;

ई- प्रतिवादी को दिवाला शुरू होने की तारीख के बाद की अवधि के लिए उप-पट्टा विलेख के तहत जमीन किराया/पट्टे के किराए के संबंध में आवेदक के दावे को स्वीकार करने का निर्देश दें;

एफ- प्रतिवादी को दिवाला शुरू होने की तारीख के बाद की अवधि के लिए उप-पट्टा विलेख के तहत समय प्रदर्श शुल्क के संबंध में आवेदक के दावे को स्वीकार करने का निर्देश दें;

जी- प्रतिवादी को 64.7% किसान मुआवजे के संबंध में आवेदक के दावे को स्वीकार करने का निर्देश दें;

एच- कोई अन्य राहत या राहत पारित करें जैसा कि यह माननीय न्यायाधिकरण न्याय, निष्पक्षता और अच्छे विवेक की प्रकृति में उचित समझता है।

33. नोएडा प्राधिकरण द्वारा समाधान योजना पर प्रतिवाद के रूप में I. A. सं-5979 वर्ष 2022 के रूप में एक और आवेदन दायर किया गया था, जिसमें नोएडा ने निम्नलिखित राहत मांगी थी:

"(i) समाधान योजना पर आवेदक की प्रतिवादियों को अभिलेखों पर ले जाना;

(ii) दिवाला और दिवालियापन संहिता की धारा 31(2) के संदर्भ में समाधान योजना को अस्वीकार करना;

(iii) कोई अन्य राहत या राहत पारित करना जैसा कि यह माननीय न्यायाधिकरण न्याय, निष्पक्षता और अच्छे विवेक की प्रकृति में उचित समझता है।

34. एन.सी.एल.टी. ने दिनांक 19.07.2023 के निर्णय के माध्यम से आई.बी.सी., 2016 की धारा 31 के तहत समाधान योजना को मंजूरी दे दी है और समाधान योजना के खिलाफ दायर सभी प्रतिवादियों को खारिज कर दिया है, जिसमें नोएडा द्वारा आई.ए. संख्या-5361/2021 और आई.ए. संख्या-5979/2022 में दायर प्रतिवाद भी शामिल हैं। आई.बी.सी., 2016 की धारा 31 के आधार पर समाधान योजना नोएडा सहित सभी हितधारकों के लिए बाध्यकारी है। एन.सी.एल.टी. ने याचिकाकर्ताओं को निर्देश दिया है कि वे आई.बी.सी., 2016 की धारा 31(4) के अनुसार एक वर्ष की अवधि के भीतर समाधान योजना को लागू करने के लिए आवश्यक वैधानिक अनुमोदन प्राप्त करें। दिनांक 19.07.2023 के आदेश का ऑपरेटिव भाग इस प्रकार है:-

"14. आदेश

14.1. इस आदेश में की गई टिप्पणियों के अधीन रहते हुए, 584,50,14,060/- रुपये (पांच सौ चौरासी करोड़ पचास लाख चौदह लाख और साठ रुपये मात्र) की संकल्प योजना एतद्वारा अनुमोदित की जाती है। समाधान योजना इस आदेश का हिस्सा होगी।

2.इला मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य 245

14.2. समाधान योजना कॉर्पोरेट देनदार और इसमें शामिल अन्य हितधारकों के लिए बाध्यकारी है ताकि देनदार कंपनी का पुनरुद्धार तत्काल प्रभाव से लागू हो सके।

14.3. संहिता की धारा 14 के तहत लगाई गई अधिस्थगन इस आदेश की तारीख से प्रभावी नहीं होगी।

14.4. रिजॉल्यूशन प्रोफेशनल कार्यवाही शुरू होने के दौरान एकत्र किए गए अभिलेखों को भारतीय दिवाला और शोधन अक्षमता बोर्ड को उनके अभिलेखों के लिए प्रस्तुत करेगा और समाधान आवेदक या नए प्रमोटरों को भी वापस करेगा।

14.5. आई.ए. (आईबी) 3392 (पीबी)/2022, आई.ए. संख्या-3556/2022, आईवीएन संख्या-04/2023 आई.ए. संख्या-5361/2021, आई.ए. संख्या-5979/2022 और आई.ए. संख्या-4615/2021 के साथ-साथ सीपी (आईबी) संख्या-875(पीबी) 2020 का तदनुसार निपटारा किया जाएगा ।

14.6. इस समाधान योजना के कार्यान्वयन के संबंध में यदि आवश्यक हो, तो किसी भी उपयुक्त आवेदन को स्थानांतरित करने के लिए स्वतंत्रता प्रदान की जाती है।

14.7. इस आदेश की एक प्रमाणित प्रति समाधान पेशेवर द्वारा कंपनी रजिस्ट्रार, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली और हरियाणा के पास दाखिल की जाएगी।

14.8. समाधान पेशेवर इस आदेश की तारीख से प्रभावी अपने कर्तव्यों से मुक्त हो जाएगा, उन कर्तव्यों को छोड़कर जो विशेष रूप से पी.यू.एफ.ई. लेनदेन के संबंध में इस आदेश के प्रस्तर-8 के अनुसार अनुमोदित समाधान योजना के कार्यान्वयन के लिए उस पर लगाए गए हैं।

14.9. समाधान पेशेवर को आगे निर्देश दिया जाता है कि वह अपने पास उपलब्ध सभी अभिलेखों, परिसर/कारखानों/दस्तावेजों को समाधान आवेदक को सौंप दे ताकि ऑपरेशन शुरू करने के लिए आवश्यक कार्रवाई की आगे की पंक्ति को अंतिम रूप दिया जा सके। समाधान आवेदक के पास कॉर्पोरेट देनदार के संचालन को शुरू करने के लिए आवश्यक कार्रवाई के आगे के प्रविधि को अंतिम रूप देने के लिए समाधान पेशेवर के माध्यम से सभी अभिलेखों, परिसरों/कारखानों/दस्तावेजों तक पहुंच होगी।

14.10. रजिस्ट्री को एतद्वारा निर्देश दिया जाता है कि वह सभी पक्षों और उनके एलडी अधिवक्ता को सूचना के लिए और आवश्यक कदम उठाने के लिए आदेश की ई-मेल प्रतियां तुरंत भेजे।

14.11. इस आदेश की प्रमाणित प्रति जारी की जा सकती है, यदि सभी अपेक्षित औपचारिकताओं के अनुपालन पर आवेदन किया जाता है।

14.12. फाइल को अभिलेखों में भेज दिया जाए।

35. एन.सी.एल.टी. के आदेश से व्यथित होकर, नोएडा ने राष्ट्रीय कंपनी कानून अपीलीय न्यायाधिकरण, नई दिल्ली के समक्ष अपील दायर की और एन.सी.एल.ए.टी. ने दिनांक 25.07.2023 के आदेश के माध्यम से नोएडा के पक्ष में कोई अंतरिम आदेश नहीं दिया, इसके विपरीत एन.सी.एल.ए.टी. ने निम्नानुसार कहा: -

"14. पक्षगण की इक्विटी को संतुलित करने के लिए, हमारा विचार है कि सफल समाधान आवेदक समाधान योजना के कार्यान्वयन को जारी रख सकता है, हालांकि, आवंटियों के साथ-साथ बिना बिकी इकाइयों से प्राप्तियों का उपयोग केवल 50% तक किया जाएगा और शेष 50% को एक अलग बैंक खाते में रखा जाएगा, जिसके संबंध में बाद में आदेश पारित किए जाएंगे। (महत्व सन्निविष्ट)

36. इस प्रकार, आदेश बहुत स्पष्ट है कि एस.आर.ए. को आरपी के कार्यान्वयन के साथ जारी रखना था। हालांकि, अपील अभी भी लंबित है, लेकिन नोएडा प्राधिकरण ने इस आदेश को कहीं भी चुनौती नहीं दी है और इसलिए, इसे नोएडा में स्वीकार कर लिया गया और इसे अंतिम रूप दिया गया है।

37. एन.सी.एल.ए.टी. द्वारा पारित आदेश के अनुपालन में, सी.आई.आर.पी. ने समाधान योजना में उल्लिखित सभी गतिविधियों को अंजाम दिया। हालांकि, परियोजना का निर्माण शुरू नहीं किया जा सका क्योंकि लेआउट योजना को पुनः मान्य नहीं किया गया था। इसलिए 30.10.2023 को लेआउट मैप के पुनः सत्यापन के लिए नोएडा से अनुरोध किया गया था, जिसे पहले ही मंजूरी दे दी जा चुकी थी।

38. हालांकि, नोएडा ने दिनांक 01.11.2023 के पत्र के माध्यम से लेआउट योजना के पुनर्मूल्यांकन के लिए याचिकाकर्ता के आवेदन को इस आधार पर खारिज कर दिया कि याचिकाकर्ता संख्या-1 ने उप पट्टा विलेख के अनुसार निर्धारित समय के भीतर सामान्य खेल शहर के बुनियादी ढांचे के अपने हिस्से का निर्माण नहीं किया है, और आगे यह मामला आवश्यक निर्देश के लिए राज्य सरकार के पास लंबित है और जब तक राज्य सरकार द्वारा कुछ निर्देश पारित नहीं किए जाते हैं, नोएडा लेआउट मानचित्र के पुनर्सत्यापन को निष्पादित नहीं करेगा।

39. दिनांक 01.11.2023 के आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ताओं ने निम्नलिखित प्रार्थना के साथ प्रस्तुत रिट याचिका दायर की है: -

"(i). प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा दिनांक 18.01.2021 की बोर्ड बैठक में लिए गए निर्णय को रद्द करने/रद्द करने के लिए सरशिओरेरी या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट, निर्देश या आदेश जारी करना, ताकि लेआउट मानचित्रों के अनुमोदन/पुनर्विधीकरण और स्पोर्ट्स सिटी की भूमि पर स्थित परियोजनाओं को व्यवसाय/पूर्णता प्रमाण पत्र प्रदान करने पर रोक लगाई जा सके, जहां तक कि यह याचिकाकर्ता संख्या-1 की

'लोटस एरिना-' परियोजना से संबंधित है। प्लॉट नं. एस.सी.-01/ए2,सेक्टर 79, नोएडा। (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या-17 के रूप में संलग्न)

(ii) प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा याचिकाकर्ता संख्या-1 को जारी किए गए दिनांक 01.11.2023 के आक्षेपित पत्र को अलग करने/रद्द करने के लिए सरशिओरेरी या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट,निर्देश या आदेश जारी करना। (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या-14 के रूप में संलग्न)

(iii) परमादेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट के रूप में एक उपयुक्त रिट या आदेश जारी करना जो प्रतिवादी संख्या-2 को 19.10.2012 के उप-पट्टा विलेख के प्रावधानों का पूर्ण अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए निर्देश/आदेश देता है और याचिकाकर्ता संख्या-1 द्वारा परियोजना के सफल समापन को सुनिश्चित करने के लिए पूर्ण समर्थन और सहयोग प्रदान करता है।

(iv) परमादेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट,निर्देश या आदेश जारी करना, जो प्रतिवादी संख्या-2 को 19.10.2012 के उप-पट्टा विलेख के तहत पिछले उल्लंघनों या चूक पर भरोसा करने से रोकता है, जो याचिकाकर्ता संख्या-1 के पूर्ववर्ती प्रबंधन द्वारा पूर्व-सी.आई.आर.पी. अवधि में किया गया था।

(v) 'लोटस एरिना- I' परियोजना के लेआउट मैप्स के पुनः सत्यापन के लिए याचिकाकर्ता संख्या-1 द्वारा प्रस्तुत 30.10.2023 के आवेदन/अनुरोध पर विचार करने और अनुमोदन करने के लिए तत्काल और अपेक्षित कदम उठाने के लिए प्रतिवादी संख्या-2 को परमादेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट,निर्देश या आदेश जारी करना।

(vi) परमादेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट या आदेश जारी करना/प्रतिवादी संख्या-2 को परियोजना के आंशिक/पूर्ण समापन पर और कानून के अनुसार याचिकाकर्ता संख्या-1/परियोजना को व्यवसाय/पूर्णता प्रमाण पत्र पर विचार करने और प्रदान करने के लिए आवश्यक कदम उठाने का निर्देश देना।

(vii) परमादेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट, निर्देश या आदेश जारी करना, जिसमें प्रतिवादी संख्या-1 को उप-पट्टा विलेख के तहत संबंधित पक्षों के दायित्वों की निरंतरता और घर खरीदारों के मूल्यवान अधिकारों और हितों को ध्यान में रखते हुए प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा संदर्भित मुद्दे पर तुरंत और शीघ्रता से निर्णय लेने का निर्देश दिया जाए।

40. इस परियोजना में घर खरीदारों में से एक, जो नोएडा प्राधिकरण द्वारा मानचित्र को पुनः मान्य करने से इनकार करने से भी व्यथित था, ने निम्नलिखित प्रार्थना के साथ रिट सी संख्या-8447 वर्ष 2024 के रूप में एक अलग रिट याचिका दायर की थी: -

"ए. प्रतिवादी संख्या-2, नोएडा द्वारा अपनी 201" बोर्ड बैठक वर्ष 18 जनवरी 2021 में लिए गए निर्णय को रद्द करने/रद्द करने के लिए सरशिओरेरी या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी करना, ताकि स्पोर्ट्स सिटी की भूमि पर स्थित परियोजनाओं को मानचित्र अनुमोदन/पुनर्सत्यापन और कब्जा/पूर्णता प्रमाण पत्र प्रदान करना बंद हो जाए, जहां तक निर्णय प्रतिवादी संख्या-3 की लोटस एरिना-1 परियोजना पर लागू होता है, एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड, प्लॉट संख्या-एस.सी.-01/ए2,सेक्टर 79, नोएडा में स्थित है;

बी प्रतिवादी संख्या-2, नोएडा द्वारा जारी 1 नवंबर 2023 के पत्र को रद्द करने/रद्द करने के लिए सरशिओरेरी या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी करता है;

सी- परमादेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट जारी करता है, जिसमें प्रतिवादी संख्या-2, नोएडा को प्रतिवादी संख्या-3 द्वारा प्रस्तुत 30 अक्टूबर 2023 के आवेदन पर शीघ्रता से विचार करने और अनुमोदन करने के लिए कदम उठाने का निर्देश दिया जाता है। एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड, प्लॉट संख्या-एस.सी.-01/ए2,सेक्टर 79, नोएडा में स्थित लोटस एरिना-1 परियोजना के संबंध में लेआउट मानचित्रों के पुनर्वैधीकरण के लिए;

डी- परमादेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट के रूप में एक उपयुक्त रिट या निर्देश जारी करना जिसमें प्रतिवादी संख्या-2, नोएडा को निर्देश दिया गया है कि वह 19 अक्टूबर 2012 के उप-पट्टा विलेख के प्रावधानों का पूरी तरह से पालन करे ताकि प्लॉट संख्या-SC-01/A2 में स्थित लोटस एरिना-1 परियोजना के विकास को सुनिश्चित करने के लिए पूर्ण समर्थन और सहयोग प्रदान किया जा सके, सेक्टर 79, नोएडा;

ई- घर खरीदारों और याचिकाकर्ता के हितों को ध्यान में रखते हुए, 18 जनवरी 2021 को बोर्ड की बैठक के माध्यम से प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा संदर्भित मुद्दे पर शीघ्रता से निर्णय लेने के लिए परमादेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त रिट या निर्देश जारी करना, और 19 अक्टूबर 2012 के उप-पट्टा विलेख और दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 के प्रावधानों दोनों के तहत सभी पक्षों के दायित्व;

एफ- परमादेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट की प्रकृति में एक उपयुक्त, रिट, आदेश या निर्देश जारी करना जिसमें प्रतिवादी संख्या-1 को समाधान योजना की शर्तों को लागू करने का निर्देश दिया गया है, जहां तक वे विशेष रूप से प्रधान खंडपीठ, एन.सी.एल.टी., नई दिल्ली द्वारा अनुमत समाधान योजना के कार्यान्वयन से संबंधित हैं;

जी- भूखंडों के आबंटन, स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के उप-विभाजन (जिससे परियोजना को प्रारंभ में अस्थिर बना दिया गया) में संलिप्त नोएडा के पदाधिकारियों और अधिकारियों की जांच का आदेश जारी करना और एक

उपयुक्त जांच एजेंसी द्वारा नोएडा के अधिकारियों द्वारा परियोजना के निष्पादन की निगरानी की प्रकृति, जैसा कि इस माननीय न्यायालय द्वारा उचित समझा जाए, जारी किया जाए।

याचिकाकर्ताओं का तर्क

(रिट-सी संख्या-6041 वर्ष 2024)

41. याचिकाकर्ताओं की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शशि नंदन ने प्रस्तुत किया कि प्रस्तुत रिट याचिका बाकी मामलों से अलग है और इस मामले को अलग से सुनने का अनुरोध किया क्योंकि इसमें शामिल मुद्दा बाकी मामलों से पूरी तरह से अलग है। उन्होंने कहा कि यह एकमात्र ऐसा मामला है जिसमें आईबी कोड के तहत मामले को एन.सी.एल.टी. को भेजे जाने के बाद सी.ओ.सी. ने एक बैठक की थी और विभिन्न कंपनियों से समाधान योजना प्राप्त करने के बाद समाधान योजना को मंजूरी दे दी थी और याचिकाकर्ता संख्या-2 सफल समाधान आवेदक (एस.आर.ए.) बन गया था। चूंकि परियोजना का कार्यान्वयन अब आईबी कोड के प्रावधानों के तहत था, इसलिए इस पर अलग से सुनवाई होनी चाहिए।

42. उन्होंने प्रस्तुत किया कि नोएडा द्वारा उठाए गए मुद्दे को राज्य सरकार को भेजे जाने के बारे में आक्षेपित पत्रों द्वारा उठाया गया है, और नोएडा पहली बार परिणाम की प्रतीक्षा करेगा, क्योंकि इस मुद्दे को एन.सी.एल.टी. के समक्ष नहीं उठाया गया था। लेकिन एन.सी.एल.टी. के आदेश के कार्यान्वयन को रोकने के लिए नोएडा ने अब लेआउट मैप के पुनर्विधीकरण पर इस मुद्दे / प्रतिवाद को उठाया है।

43. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि नोएडा एन.सी.एल.टी. और एन.सी.एल.ए.टी. के आदेश का पालन करने के लिए बाध्य है। चूंकि यह आदेश प्राधिकरण को सुनने के बाद पारित किया गया था जो न्यायाधिकरण के समक्ष पक्षकार थे और इसलिए नोएडा एन.सी.एल.टी. और एन.सी.एल.ए.टी. द्वारा दिए गए निर्देश से पीछे नहीं हट सकता है।

44. उन्होंने प्रस्तुत किया कि एक बार एन.सी.एल.टी. द्वारा समाधान योजना को मंजूरी दे दिए जाने के बाद, नोएडा आई.बी.सी., 2016 की धारा 31 (1) के तहत समाधान योजना की सामग्री से बाध्य है। समाधान योजना के खंड 7.3 (vi) (सी) के निम्नलिखित भाग नोएडा पर लागू होते हैं:

"घ. नोएडा परियोजना भूमि के पट्टा विलेख और सब-पट्टा विलेख के नियमों और शर्तों को पूर्ण प्रभाव देगा, और प्रभावी तिथि से पहले उत्पन्न होने वाले या अर्जित होने वाले किसी भी और सभी उल्लंघन और/या चूक को इस समाधान योजना के माध्यम से ठीक/माफ कर दिया जाएगा। नोएडा इस योजना के अंतर्गत दिए गए बाल कटवाने के परिणामस्वरूप प्रभावी तिथि से उत्पन्न होने या उपार्जित होने वाली कार्रवाई के किसी भी कारण के कारण परियोजना भूमि के पट्टा विलेख और सब-पट्टा विलेख को रद्द/निरस्त/समाप्त नहीं करेगा या कारपोरेट देनदार या परियोजना भूमि के विरुद्ध कोई बलपूर्वक या प्रतिकूल कदम नहीं उठाएगा। परियोजना

भूमि के पट्टा विलेख/सब-पट्टा विलेख के सभी उल्लंघनों और/या चूक, यदि प्रभावी तिथि से पहले कॉर्पोरेट देनदार द्वारा कोई किया गया हो, इस समाधान योजना के माध्यम से माफ/ठीक किया गया/ चक्रवृद्धि/नियमित किया जाता है और नोएडा परियोजना भूमि के पट्टा विलेख/सब-पट्टा विलेख की शर्तों को पूरा प्रभाव देने के लिए बाध्य है।

.....

जी- टावरों/परियोजना के पूरा होने पर, नोएडा समयबद्ध तरीके से आंशिक/पूर्ण व्यवसाय/पूर्णता प्रमाण पत्र जारी करेगा और यह प्रमाण-पत्र, जब तक कि लागू कानूनों द्वारा प्रतिबंधित न हो, कुल भूमि (जिसमें परियोजना भूमि एक भाग है) पर किसी भी खेल या मनोरंजन सुविधाओं को पूरा करने पर जोर दिए बिना किया जाएगा।

एच- समाधान आवेदक समझता है कि कुल भूमि को और उप-विभाजित किया गया था और तदनुसार विभिन्न संस्थाओं/व्यक्तियों के पक्ष में विभिन्न उप-पट्टा विलेख निष्पादित किए गए थे और सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड द्वारा नोएडा के मानदंडों के अनुसार पंजीकृत किए गए थे। एन.सी.एल.टी. द्वारा इस समाधान योजना के अनुमोदन पर, कॉर्पोरेट देनदार/समाधान आवेदक सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड, कॉर्पोरेट देनदार और/या कुल भूमि के संबंध में किसी अन्य इकाई द्वारा किए गए किसी भी चूक/उल्लंघन के लिए उत्तरदायी नहीं होगा और इस तरह का कोई उल्लंघन या चूक परियोजना के विकास/निर्माण और नोएडा द्वारा परियोजना के अंश/पूर्ण कब्जा/पूर्णता प्रमाण पत्र प्रदान करने में बाधा नहीं डालेगा।

i. इस योजना में प्रस्तावित भुगतान को ध्यान में रखते हुए, नोएडा बिना किसी शुल्क, लागत, व्यय, जुर्माने आदि के कॉर्पोरेट कंपनी के सभी व्यावसायिक परमिटों का नवीनीकरण और/या पुनर्सत्यापन करेगा।

(महत्व सन्निविष्ट)

45. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि समाधान योजना में नोएडा को याचिकाकर्ता कंपनी को कुछ अनुमतियां और लाइसेंस देने की भी आवश्यकता है। समाधान योजना के खंड 11.6 में कहा गया है:

"11.6. निर्माण गतिविधियों को शुरू करने के लिए अनुमोदन/लाइसेंस/परमिट परियोजना स्थल पर निर्माण गतिविधियों को शुरू करने के लिए निम्नलिखित अनुमोदन/लाइसेंस/परमिट की आवश्यकता हो सकती है, जिसे संबंधित अधिकारी आवेदन करने की तारीख से 60 दिनों के भीतर कॉर्पोरेट देनदार को अनुदान/नवीनीकरण/पुनर्विधीकरण करने का प्रयास करेंगे:

- i. पर्यावरण एन.ओ.सी.
- ii. प्रदूषण एन.ओ.सी.
- iii. एस.टी.ओ. और सी.टी.ओ. प्रदूषण एन.ओ.सी.
- iv. जल आपूर्ति और विच्छेद कनेक्शन एन.ओ.सी.

- v. भूमिगत जल एन.ओ.सी. (बोरवेल)
- vi. अग्निशमन विभाग से एन.ओ.सी.
- vii. लिफ्ट के लिए विद्युत सुरक्षा विभाग से एन.ओ.सी.
- viii. ट्रांसफार्मर और डीजी सेट के लिए विद्युत सुरक्षा विभाग से एन.ओ.सी.
- ix. नोएडा से अधिभोग और पूर्णता प्रमाण पत्र
- x. नोएडा द्वारा सभी अनुमोदनों का पुनर्वैधीकरण
- xi. कोई अन्य अनुमोदन/लाइसेंस/परमिट जो आवश्यक हो सकते हैं"

(महत्व सन्निविष्ट)

46. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि नोएडा प्राधिकरण के जवाबी हलफनामे के अनुसार, खेल सुविधा का निर्माण/विकास अन्य कंपनियों को दिया गया था और याचिकाकर्ता केवल बहुउद्देशीय क्षेत्र के विकास के लिए 10 करोड़ रुपये का भुगतान करने के लिए बाध्य था। याचिकाकर्ता खेल सुविधा को विकसित करने की अपनी जिम्मेदारियों से पीछे नहीं हट रहा है।

47. बोर्ड की बैठक में पूरे मामले को आवश्यक निर्देश/दिशा-निर्देश के लिए राज्य सरकार को भेजने का निर्णय उत्तर प्रदेश शहरी नियोजन एवं विकास अधिनियम, 1973 की धारा 41 के प्रावधानों के विपरीत है।

48. वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया कि नोएडा प्राधिकरण द्वारा परियोजना के लेआउट मैप को फिर से मान्य करने से इनकार करना उप-पट्टा विलेख के तहत अपने दायित्वों का उल्लंघन है। उप-पट्टा विलेख के खंड II (छ) के अनुसार, मैसर्स ए.एस.पी.एल. अनुमोदित लेआउट मानचित्र के अनुसार निर्माण कार्य करने के लिए बाध्य है। परियोजना के लेआउट मानचित्र नोएडा द्वारा 29.04.2014 को स्वीकृत किए गए थे और पांच साल के लिए वैध थे, इस अवधि के समाप्त होने के बाद, स्थिति को बहाल करने से पहले लेआउट मानचित्र को पुन मान्य करना अनिवार्य है।

49. यह प्रस्तुत किया गया था कि एन.सी.एल.टी. और एन.सी.एल.ए.टी. के निर्देश के अनुसार, याचिकाकर्ता ने सी.आई.आर.पी. के माध्यम से लेआउट मैप के पुनर्मूल्यांकन की मांग की थी जो समाधान योजना के अनुरूप था और एन.सी.एल.टी. और एन.सी.एल.ए.टी. द्वारा दिए गए निर्देश के अनुसार भी था। नोएडा ने एन.सी.एल.ए.टी. के समक्ष अपील दायर की है लेकिन 19.07.2023 के आदेश पर कोई रोक नहीं लगाई गई है। इसके विपरीत, एन.सी.एल.ए.टी. ने याचिकाकर्ताओं को दिनांक 25.07.2023 के आदेश के माध्यम से समाधान योजना को लागू करने का निर्देश/अनुमति दी है।

50. वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया कि अनुमोदित समाधान योजना आई.बी.सी. की धारा 31 के तहत नोएडा के लिए बाध्यकारी है। इसके अलावा, धारा 238 के अनुसार, आई.बी.सी. के प्रावधान किसी भी 'कानून' या 'लिखत' को ओवरराइड करते हैं जो प्रावधानों के साथ असंगत है।

51. वरिष्ठ अधिवक्ता ने स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया कि दिनांक 01.11.2023 का पत्र, जिसके द्वारा लेआउट मानचित्र के पुनर्सत्यापन को अस्वीकार कर दिया गया था, पूरी तरह से एन.सी.एल.टी. और एन.सी.एल.ए.टी. के निर्देश के विपरीत था। यहां तक कि पुनर्मान्य मानचित्रों के बिना रेरा पंजीकरण भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, नोएडा ने याचिकाकर्ताओं को उप-पट्टा विलेख और अनुमोदन समाधान योजना के संदर्भ में परियोजना को निष्पादित करने से प्रभावी ढंग से अक्षम कर दिया है।

52. कैंग ने राज्य सरकार को किसी भी मामले/मुद्दे को भेजने का निर्देश/सुझाव नहीं दिया है, बल्कि केवल "दोषी अधिकारियों के खिलाफ अनुकरणीय कार्रवाई" करने की सिफारिश की है।

53. कैंग की रिपोर्ट में नोएडा को ऐसा कोई निर्देश नहीं दिया गया है। यह निश्चित रूप से नोएडा को उप-पट्टा विलेख के तहत अपने दायित्वों का उल्लंघन करने का अधिकार या शक्ति नहीं देता है जैसा कि 201 वीं बोर्ड बैठक में लिए गए आक्षेपित निर्णय के माध्यम से किया गया है।

54. इसके विपरीत, सी.आई.आर.पी. में नोएडा के दावे में 'समय प्रदर्श शुल्क' भी शामिल था, इस प्रकार फिर से उप-पट्टा विलेख की निरंतरता और परियोजना को पूरा करने के लिए समय के प्रदर्श का अर्थ है। नोएडा ने अनुमोदित समाधान योजना की शर्तों के विपरीत रख अपनाने का विकल्प चुना है, जो अनुमेय है।

55. मास्टर लेआउट प्लान के साथ पढ़े गए दिनांक 16.08.2021 के पत्र के अनुसार, ए.एस.पी.एल. को 10 करोड़ रुपये की लागत से एक बहुउद्देश्यीय खेल का मैदान बनाना आवश्यक है।

56. राज्य सरकार तीन साल से अधिक समय से इस मामले पर विचार कर रही है और एन.सी.एल.टी. की मंजूरी के बावजूद परिणामी देरी ने परियोजना को पूरी तरह से रोक दिया है। हालांकि एन.सी.एल.टी. का आदेश दिनांक 19.07.2023 याचिकाकर्ताओं को एक वर्ष के भीतर सभी अनुमोदन/अनुमतियां प्राप्त करने का निर्देश देता है।

57. वरिष्ठ अधिवक्ता ने दृढ़ता से प्रस्तुत किया कि एन.सी.एल.टी. के आदेश को लागू न करने के कारण, याचिकाकर्ताओं को परियोजना के समयबद्ध पूरा करने के प्रावधान सहित समाधान योजना की शर्तों को पूरा करने में विफलता के लिए कठोर दंड और अन्य कानूनी परिणामों को भुगतने का जोखिम है।

58. वास्तव में बहस के दौरान, याचिकाकर्ता की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शशि नंदन ने बहुत ही निष्पक्ष रूप से कहा कि एस.आर.ए. उप-पट्टेदार को सौंपी गई खेल सुविधाओं को पूरा करने जा रहा है, जो 10 करोड़ रुपये की लागत से बहुउद्देश्यीय खेल सुविधाएं थीं, जो ब्रोशर के साथ-साथ पट्टा विलेख में भी बताई गई थीं और एक बार जब वे खेल सुविधाओं को पूरा कर लेंगे तभी वे पूरा करने के लिए कहे गए आवासीय टावरों का प्रमाण पत्र।

59. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि एस.आर.ए. पहले खेल सुविधा को पूरा करने का वचन देता है, जिसे वह परियोजना के पूर्णता प्रमाण पत्र के लिए पूछने से पहले ही बनाने के लिए बाध्य था। तथापि, खेल सुविधाओं का निर्माण शुरू करने के लिए नोएडा प्राधिकरण को उस योजना को पुनः मान्य करना होगा, जिसे पहले ही स्वीकृत किया जा चुका है लेकिन समय के प्रवाह के कारण यह समाप्त हो गया है।

याचिकाकर्ता का तर्क (रिट सी संख्या-8447 वर्ष 2024)

60. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि नोएडा और मेसर्स ए.एस.पी.एल. के बीच संघर्ष में घर खरीदार शिकार हो गए हैं। भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (कैग) ने अपनी रिपोर्ट में आरोप लगाया है कि स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के आवंटन और कार्यान्वयन में भारी असमानता है और नोएडा ने बिल्डरों की अवैध गतिविधियों पर आंखें मूंद ली हैं।

61. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि घर खरीदारों ने अपने जीवन भर की बचत को एक सपने के साथ लगाया है और आशा है कि उन्हें रहने के लिए अपना घर मिलेगा। यदि नोएडा/बिल्डरों द्वारा कोई घोटाला या अवैध आवंटन या अवैधता की गई है, तो उन्हें इसके लिए जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए और घर खरीदारों को इस तरह की कार्रवाई के लिए दंडित नहीं किया जाना चाहिए। याचिकाकर्ता ने फ्लैट बुक किया था और पैसे का निवेश किया था, इस आधार पर कि, परियोजना बिल्कुल स्पष्ट थी, क्योंकि नोएडा ने एक पंजीकृत उप-पट्टा विलेख निष्पादित किया था और लेआउट मानचित्र भी स्वीकृत किया गया था, उन्हें पूरी परियोजना में कोई अवैधता नहीं मिली।

62. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि मेसर्स ए.एस.पी.एल. ने घर खरीदारों से कुल राशि का 60% एकत्र किया है, जो मेसर्स ए.एस.पी.एल. की बैलेंस शीट के अनुसार 349.03 करोड़ रुपये था और इसमें से 113.45 करोड़ रुपये मेसर्स ए.एस.पी.एल. के प्रमुख प्रबंधकीय व्यक्तियों द्वारा अवैध रूप से दुरुपयोग किए गए हैं। यह डायवर्जन विभिन्न संबंधित पक्षों और सहयोगी कंपनियों की मिलीभगत से किया गया था, जिसमें घर खरीदारों को धोखा देने के एकमात्र इरादे से ब्याज मुक्त ऋण, बड़े हुए बिल आदि जैसे विभिन्न लेनदेन के माध्यम से राशि को डायवर्ट किया गया था। फंड का यह डायवर्जन और कुछ नहीं बल्कि होमबॉयर, बैंकों और नोएडा के साथ की जाने वाली धोखाधड़ी है। निधि के डायवर्जन के कारण, परियोजना पूरी नहीं हो सकी और अब तक केवल 32% निर्माण किया गया है।

63. घर खरीदारों ने मैसर्स ए.एस.पी.एल. के प्रभारी अधिकारी के खिलाफ धारा 120 बी, 406 और 420 भ०द०वि० के तहत आपराधिक शिकायतें भी दर्ज की हैं। यहां तक कि कुछ घर खरीदारों ने आर्थिक अपराध शाखा के समक्ष मामले दर्ज किए थे।

64. घर खरीदारों द्वारा दर्ज की गई शिकायतों पर, जांच के बाद मेसर्स ए.एस.पी.एल. के निदेशकों/प्रबंधन के खिलाफ साकेत न्यायालय (दक्षिण पूर्व जिला), दिल्ली में आरोप पत्र दायर किया गया था, जिसमें यह निम्नानुसार कहा गया था:

"ए- विज्ञापन के माध्यम से आरोपी व्यक्तियों ने जानबूझकर शिकायतकर्ता को धोखा देकर प्रेरित किया कि एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड, सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड का हिस्सा होने के नाते, और लोटस ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड ने सस्ती कीमतों पर उक्त परियोजना शुरू की है।

बी- शिकायतकर्ताओं को आरोपी कंपनी की परियोजना में इकाइयां खरीदने के लिए प्रेरित किया गया और आरोपी कंपनी द्वारा खरीदारों से एकत्र किए गए धन को हड़प लिया गया। इसलिए कंपनी के पास परियोजना के निर्माण और पूरा होने के लिए कोई धन नहीं बचा था। इससे परियोजना में अत्यधिक देरी हुई और शिकायतकर्ता अधर में लटक गए।

सी- फ्लैटों को जाली साइट प्लान के साथ बेचा गया था क्योंकि परियोजना की साइट प्लान जो यू.पी.आर.ई.आर.ए. साइट पर उपलब्ध है, बुकिंग के समय ब्रोशर में दिखाए गए और बी.बी.ए. के हिस्से के रूप में शिकायतकर्ताओं को आपूर्ति की गई थी।

65. संबंधित न्यायालय के समक्ष आपराधिक कार्यवाही अभी भी लंबित है।

66. धन की हेराफेरी के बाद, याचिकाकर्ता संख्या-1 (डब्ल्यू.पी.नं.-6041 वर्ष 2024) को देनदारों को कुछ सौ करोड़ रुपये के बकाया भुगतान से बचने के लिए दिवालिया में धकेल दिया गया था। यदि अवैध रूप से जमा किए गए साइफोन/डायवर्ट किए गए धन को वापस लाया जाता है तो यह नोएडा प्राधिकरण के पूरे बकाये के भुगतान के लिए और बहुउद्देशीय खेल सुविधा और आवासीय परियोजना को विकसित करने के लिए भी पर्याप्त होगा।

67. एन.सी.एल.टी. द्वारा अनुमोदित समाधान योजना नोएडा के लिए बाध्यकारी है। हालांकि नोएडा ने एन.सी.एल.टी. के आदेश के खिलाफ अपील दायर की है, लेकिन कोई रोक नहीं दी गई थी, इसलिए एन.सी.एल.टी. के आदेश को अंतिम रूप दे दिया गया है और यह बाध्यकारी है।

68. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि नोएडा के अधिकारी बिल्डरों द्वारा पैदा की गई पूरी समस्याओं के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार हैं। अब नोएडा इस आधार पर एन.सी.एल.टी. के आदेश का पालन करने से इनकार नहीं कर सकता है कि मामले को आवश्यक निर्देश और मार्गदर्शन के लिए राज्य सरकार को भेजा गया था। राज्य सरकार के समक्ष यह मामला 2021 से लंबित है और राज्य सरकार कोई कार्रवाई नहीं कर रही है। यह लेआउट मैप

2.इला मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य 255
की समीक्षा या पुनः सत्यापन के लिए एक आधार नहीं हो सकता है, खासकर जब एन.सी.एल.टी. द्वारा इसका
आदेश दिया गया हो।

69. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि परियोजना की वर्तमान स्थिति इस प्रकार है: -

(i) भूमि :

भूमि क्षेत्र	50000 वर्ग मीटर। प्लॉट संख्या-पर स्थित है। एस.सी.-01/ए2, सेक्टर 79, नोएडा, उत्तर प्रदेश-201301
अनुमेय एफ.ए.आर.	1, 44,375 वर्ग मीटर। (ग्रीन एफ.ए.आर. सहित)
बिक्री योग्य क्षेत्र	19,29,360 वर्ग फुट
निर्मित क्षेत्र	25,37,932 वर्ग फुट

ii. टावर वार प्रस्तावित फ्लैट:

टावर नं.	फर्श	नहीं। फ्लैटों की संख्या
टावर-I	स्टिल्ट + 32	384
टावर-II	स्टिल्ट + 32	
टावर-III	स्टिल्ट + 32	
टावर-IV	स्टिल्ट + 29	384
टावर-V	स्टिल्ट + 29	
टावर-VI	स्टिल्ट + 29	
टावर-VII	स्टिल्ट + 31	384
टावर-VIII	स्टिल्ट + 31	
टावर-IX	स्टिल्ट + 31	
कुल		1080

iii. वर्तमान निर्माण स्थिति:

टावर नं.	मंजिलों की संख्या	आर.सी.सी. स्लैब पूरा हो गया	ईंट का काम	आंतरिक प्लास्टर	बाहरी प्लास्टर
			पूरा किया	पूरा किया	पूरा किया
टावर-I	स्टिल्ट + 32	32 स्लैब	भूतल- 25वीं मंजिल	शून्य	25%
टावर-II	स्टिल्ट + 32	32 स्लैब	भूतल-20वीं मंजिल	शून्य	शून्य

टावर-III	स्टिल्ट + 32	32 स्लैब	भूतल-23वीं मंजिल	शून्य	शून्य
टावर-IV	स्टिल्ट + 29	29 स्लैब	1 - 5 वीं मंजिल	शून्य	शून्य
टावर-V	स्टिल्ट + 29	29 स्लैब	पहली - चौथी मंजिल	शून्य	शून्य
टावर-VI	स्टिल्ट + 29	27 स्लैब	1 मंजिल	शून्य	शून्य
टावर-VII	स्टिल्ट + 31	10 स्लैब	शून्य	शून्य	शून्य
टावर-VIII	स्टिल्ट + 31	12 स्लैब	शून्य	शून्य	शून्य
टावर-IX	स्टिल्ट + 31	10 स्लैब	शून्य	शून्य	शून्य

iv. उपयोगिताएँ और आंतरिक विकास: शून्य

v. बिके/न बिके फ्लैटों का विवरण:

बेचे गए फ्लैटों की संख्या	858
बिना बिके फ्लैटों की संख्या	222
तोरल बिक्री योग्य क्षेत्र की सूची (लगभग)	4,06,000 वर्ग फुट।
बेचे गए फ्लैटों का कुल बिक्री मूल्य (करों को छोड़कर)	7225,957,994 रुपये
बेचे गए फ्लैटों के लिए प्राप्त राशि (करों को छोड़कर)	3,872,125,141 रुपये
बेचे गए फ्लैटों के लिए प्राप्त शेष राशि (करों को छोड़कर)	3,353,832,853 रुपये

70. एन.सी.एल.टी. ने दिनांक 19.07.2023 के अपने आदेश के माध्यम से स्पष्ट रूप से कहा है कि समाधान योजना कॉर्पोरेट देनदार और इसमें शामिल अन्य 'हितधारकों' के लिए बाध्यकारी है, ताकि देनदार कंपनी का पुनरुद्धार तत्काल प्रभाव से लागू हो सके। मानचित्र को पुनः सत्यापित न करके, नोएडा, जो हितधारक है, वास्तव में देनदार कंपनी के पुनरुद्धार में "स्पोक इन द व्हील" डाल रहा है और जो घर खरीदारों के हित के लिए हानिकारक है। यहां तक कि 25.07.2023 को एन.सी.एल.टी. ने भी इस प्रकार निर्णय दिया है:-

"पक्षगण की इक्विटी को संतुलित करने के लिए, हमारा विचार है कि सफल समाधान आवेदक समाधान योजना के कार्यान्वयन को जारी रख सकता है, हालांकि, आवंटियों के साथ-साथ बिना बिकी इकाइयों से प्राप्तियों का उपयोग केवल 50% तक किया जाएगा और शेष 50% को एक अलग बैंक खाते में रखा जाएगा, जिसके संबंध में बाद में आदेश पारित किए जाएंगे।

71. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने अंत में प्रस्तुत किया कि योजना के खंड 11.6 में, यह विशेष रूप से कहा गया है कि परियोजना की निर्माण गतिविधि शुरू करने के लिए प्राधिकरण को आवेदन के 60 दिनों के भीतर अनुमोदन प्रदान करना होगा या पुनः मान्य करना होगा। हालांकि, नोएडा एन.सी.एल.टी. की कार्यवाही में एक पक्ष था और यह आदेश उन पर लागू और बाध्यकारी है, फिर भी वे आदेश का उल्लंघन कर रहे हैं।

नोएडा प्राधिकरण की ओर से दलील

72. श्री मनीष गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री कौशलेन्द्र नाथ सिंह और सुश्री अंजलि गोकलानी, नोएडा प्राधिकरण के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि मामले में आगे बढ़ने से पहले याचिकाकर्ता-कंपनी के कंसोर्टियम के साथ कनेक्शन और उनके पूर्ववृत्त का उल्लेख करना उचित है।

73. नोएडा प्राधिकरण की ओर से एक पूरक जवाबी हलफनामा दायर किया गया है। इस हलफनामे के माध्यम से, श्री गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि सेक्टर-78 और 79 में स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए योजना तैयार की गई थी और 03.03.2011 को शुरू की गई थी और इसे 24.03.2011 को बंद किया जाना था। स्पोर्ट्स सिटी योजना की मुख्य विशेषता अंतरराष्ट्रीय मानकों की अत्याधुनिक खेल सुविधाओं की स्थापना थी, जो एक एकीकृत परियोजना थी और इसे समग्र रूप से विकसित किया जाना है। यहां तक कि अगर एक कंसोर्टियम कंपनी ने परियोजना के लिए आवेदन किया था, तो यह एक पूरे के रूप में कंसोर्टियम था जिसे पट्टेदार माना जाता है और कोई व्यक्तिगत कंपनी नहीं थी, और परियोजना को विकसित करना था।

74. निविदा आमंत्रित करने की सूचना के अनुसरण में, कंसोर्टियम द्वारा एक आवेदन किया गया था जिसमें अन्य कंसोर्टियम सदस्यों के साथ प्रमुख सदस्य मैसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड थे। कंसोर्टियम की संरचना और उनके पंजीकरण की तारीख, निदेशकों और शेयरधारिता की सूची को दर्शाने वाला एक चार्ट इस प्रकार है: -

कर्म सं	कंपनी का नाम	प्रमुख सदस्य/संबंधित सदस्य	प्रतिशत आयु	निगमन की तिथि	निर्देशक
1	मैसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड	प्रमुख सदस्य	30%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुरप्रीत सिंह सूरी
2	मैसर्स मेरिटन इन्फोटेक प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक सदस्य	5%	19.10.2005	सुरप्रीत सिंह सूरी विदुर भारद्वाज निर्मल सिंह मयंक चौरसिया

					आनंद कुमार चौरसिया हरि वीरपनेनी कृष्णा
3	मेसर्स सतलज एग्रो प्रोडक्ट्स लिमिटेड	प्रासंगिक सदस्य	5%		निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी
4	मैसर्स ज़ानाडु इन्फ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुरप्रीत सिंह सूरी
5	मैसर्स ज़ानाडु इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुरप्रीत सिंह सूरी
6	मैसर्स ज़ानाडु रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुरप्रीत सिंह सूरी
7	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन	प्रासंगिक सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी
8		प्रासंगिक सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी
9		प्रासंगिक सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी

75. कंसोर्टियम की 9 कंपनियों में से 7 को 10.03.2011 को निगमित किया गया था, यहां तक कि लीड मेंबर को भी 10.03.2011 को निगमित किया गया था, जब योजना निदेशकों के समान सेट के साथ शुरू की गई थी। इससे पता चलता है कि सभी कंपनियों को निदेशकों के एक ही समूह द्वारा निगमित किया गया था जो वास्तविक प्रमोटर थे। आम तौर पर, कंसोर्टियम विभिन्न कंपनियों/बिल्डरों/डेवलपर्स का एक समूह होता है, जो एक परियोजना को पूरा करने के लिए एक साथ आते हैं, लेकिन यहां कई कंपनियों को मैसर्स थ्री-सी डेवलपर्स नामक कंपनी के प्रमोटरों द्वारा शामिल किया गया था और सभी कंपनियां, जो एक नई निगमित कंपनी थीं, एक ही समूह के लोगों के पास थीं।

2.इला मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य 259

76. योजना के पात्रता खंड के अवलोकन से पता चलता है कि, योजना में अनिवार्य किया गया है कि पट्टेदार को पट्टा विलेख के निष्पादन की तारीख से 3 साल की अवधि के भीतर खेल, संस्थागत और अन्य सुविधाओं के लिए निर्धारित अनुमेय क्षेत्र के न्यूनतम 15% का निर्माण पूरा करना होगा और परियोजना को 5 साल के भीतर पूरा करना होगा। इसके अलावा, पट्टेदार को मनोरंजक उपयोगों के लिए निर्धारित क्षेत्र के अनुपात में परियोजना में आवासीय और वाणिज्यिक घटक विकसित करना था।

77. इस कंसोर्टियम कंपनी की बोली, सबसे अधिक अनुपालन करने के कारण, सेक्टर-78 और 79 में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना आवंटित की गई थी, जो विज्ञापन-मापक क्षेत्र 7, 27,500 वर्गमीटर के लिए थी। तदनुसार, मैसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (कंसोर्टियम) को 04.05.2011 को आवंटन पत्र जारी किया गया था।

78. मैसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (कंसोर्टियम के प्रमुख सदस्य) ने दिनांक 11.10.2011 के पत्र के माध्यम से नोएडा से कंसोर्टियम के संबंधित सदस्यों के पक्ष में अलग-अलग पट्टा विलेख निष्पादित करने का अनुरोध किया। यह पूर्वोक्त अनुरोध के अनुसरण में था कि नोएडा ने 24.10.2011 को कंसोर्टियम के संबंधित सदस्यों के पक्ष में पट्टा विलेख निष्पादित किए। उपरोक्त पट्टा विलेख का विवरण नीचे संक्षेप में दिया जा रहा है: -

दिनांक 11.10.2011 के पत्र के माध्यम से पट्टा विलेख के उप-विभाजन/निष्पादन के लिए अनुरोध, जिसे प्राधिकरण द्वारा दिनांक 24.11.2011 के पत्र के माध्यम से अनुमोदित किया गया था;				
क्रम सं.	प्लॉट नं.	आवंटी	क्षेत्रफल (वर्ग मीटर)	पट्टे की तिथि
1.	एस.सी.-01/ए,सेक्टर-79	मैसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	100000.00	24.10.2011
2.	एस.सी.-01/बी,सेक्टर-79	मैसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड	48000	24.10.2011
3.	एस.सी.-01/सी,सेक्टर-79	मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड	250027.50	24.10.2011
4.	एस.सी.-01/डी,सेक्टर-79	मैसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	100000	24.10.2011
5.	एस.सी.-01/ई,सेक्टर-79	मैसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड	80000	24.10.2011

6.	एस.सी.-01,सेक्टर-79	मैसर्स ज़ानाडु इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	14272.50	24.10.2011

79. कंसोर्टियम के प्रमुख सदस्य ने यह भी अनुरोध किया था कि मैसर्स श्री-सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड प्लॉट संख्या-एस.सी.-01/सी,सेक्टर 79 के संबंध में स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए विशेष प्रयोजन कंपनी (एस.पी.सी.) होगी। समझौता ज़ापन पर 22-03-2011 को नौ कंपनियों द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे। कंपनी के अधिकृत प्रतिनिधियों के हस्ताक्षर, जो समझौता ज़ापन का हिस्सा थे,से पता चलता है कि सभी कंपनियों की ओर से केवल दो व्यक्तियों ने हस्ताक्षर किए हैं, जो यह दर्शाता है कि सभी नौ कंपनियों का स्वामित्व एक ही इकाई के पास था या सबसे अच्छा दो कंपनियों का था।

*** एस.पी.सी. मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की शेयरधारिता क्षेत्र 250027.50**

क्रम सं	कंपनी का नाम	निर्देशक	पट्टेदार
1.	श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	• निर्मल सिंह • विधुर भारद्वाज • सुरप्रीत सिंह • सूरी	• मैसर्स ज़ानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (62.50%) • मैसर्स मेरिटन इन्फोटेक प्राइवेट लिमिटेड (18.50%) • मैसर्स सतलज एगो प्रोडक्ट्स लिमिटेड (9.50%) • मैसर्स ज़ानाडु इंफ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (9.50%)

80. पूरे समूह का प्रतिनिधित्व करने वाले मूल आवंटी ने पूरे स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए एक मास्टर प्लान दायर किया। इसमें यह स्पष्ट किया गया था कि कंसोर्टियम की प्रत्येक व्यक्तिगत कंपनी/सदस्य की भूमिका क्या होगी और उन्हें कौन सी गतिविधियां/विकास करना होगा। मानचित्र को 16.06.2014 को अनुमोदित किया गया था, जिसमें प्रत्येक कंपनी की भूमिकाओं और दायित्वों को निर्धारित किया गया था और नोएडा प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित किया गया था। चार्ट में प्रत्येक कंपनी की भूमिका को दर्शाया गया है कि खेल सुविधाओं का निर्माण कौन करेगा और कौन आवासीय/वाणिज्यिक अपार्टमेंट का निर्माण करेगा, इसके अलावा विशिष्ट खेल सुविधा जिसे विशिष्ट कंपनियों द्वारा विकसित किया जाना था और लागत का भी उल्लेख विवरणिका के अनुसार किया गया था, जो इस प्रकार था:

खेल सुविधाएं			
सहायक	प्लॉट नं	भूमि पार्सल में होने वाली सुविधाएं	खर्च की जाने वाली न्यूनतम राशि (करोड़ में)
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एस.सी.- 01/सी1	गोल्फ कोर्स (9 होल)	40.00
मैसर्स एरिना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	एस.सी.- 01/ए2	बहुउद्देशीय खेल का मैदान	10.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एस.सी.- 01/सी1	टेनिस सेंटर	35.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एस.सी.- 01/सी1	स्विमिंग सेंटर	50.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एस.सी.- 01/सी1	प्रो-शॉप/खाद्य और पेय पदार्थ	30.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एस.सी.- 01/सी1	आईटी केंद्र/प्रशासन/मीडिया केंद्र	65.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एस.सी.- 01/सी1	इंडोर बहुउद्देशीय हॉल, जिमनास्टिक, टेबल टेनिस, स्क्वैश, बास्केट बॉल, वॉली बॉल सहित खेल हॉल बैडमिंटन, रॉक क्लाइम्बिंग	30.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एस.सी.- 01/सी1	क्रिकेट अकादमी	50.00
सब	-	आंतरिक सड़कें और पार्क	25.00
मैसर्स जानाडु इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	एस.सी.- 01, धारा - 78	अस्पताल/वरिष्ठ जीवन/चिकित्सा केंद्र	60.00

सब	-	परिसंचरण स्थान, कारपेटिंग, उपयोगिताओं आदि।	15.00

81. मैसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड के अनुरोध पर, जिसे 1,00,000 वर्ग मीटर भूमि आवंटित की गई थी, जिसे 30.10.2012 को अनुमोदित किया गया था, को फिर से निम्नलिखित तरीके से उपविभाजित किया गया था

क्रम सं	प्लॉट नं.	आवंटी	कार्य-क्षेत्र (वर्ग मीटर)	उप-विभाजन की तिथि	सब-पट्टा विलेख की तिथि
1.	एस.सी.- 01/ए1, सेक्टर- 79	मैसर्स सीक्वल ब्यूल्कॉन प्राइवेट लिमिटेड	50000	03.10.2012	19.10.2012 (सुधार विलेख)
2.	एस.सी.- 01/ए2, सेक्टर- 79	मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड	50000	03.10.2012	19.10.2012

82. यहां याचिकाकर्ता के पक्ष में उप पट्टा विलेख के निष्पादन के बाद, याचिकाकर्ता ने फिर से आवासीय ब्लॉक के नक्शे की मंजूरी के लिए आवेदन किया, जिसे याचिकाकर्ता को बनाना था। याचिकाकर्ता का नक्शा स्वीकृत कर दिया गया। स्वीकृत मानचित्र के अनुसार, याचिकाकर्ता को 21 से 28 तक के फ्लोर संख्या-के साथ 7 टावर विकसित करने थे।

83. भूमि का आवंटन और कब्जा पूरे कंसोर्टियम को दिया गया था, लेकिन कुछ समस्याओं के कारण एक छोटा सा हिस्सा कंसोर्टियम को नहीं सौंपा जा सका, हालांकि, स्पोर्ट्स सिटी में भूमि का बड़ा हिस्सा कंसोर्टियम को सौंप दिया गया था।

84. कंसोर्टियम ने 30.12.2016 को शून्य अवधि प्रदान करने के लिए अनुरोध किया क्योंकि पूरी भूमि का कब्जा कंसोर्टियम को नहीं दिया गया था। नोएडा प्राधिकरण ने 31.01.2017 तक स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के लिए शून्य अवधि घोषित की और एक नई भुगतान योजना भी सौंपी।

85. शून्य अवधि का लाभ उठाने के बावजूद, और नई भुगतान योजना के निष्पादन के बाद, याचिकाकर्ता कंपनी ने अभी भी नोएडा प्राधिकरण के देय का भुगतान नहीं किया, और बकाया राशि के भुगतान के लिए 31.03.2015, 24.07.2019 और 21.08.2019 को एक नोटिस जारी किया गया था।

86. हालांकि, जहां तक याचिकाकर्ता का संबंध है, उसे भूमि आवंटित की गई थी, और उन्हें कब्जा भी दिया गया था। एक बार जब याचिकाकर्ता के पास कब्जा हो गया, तभी वे मानचित्र की मंजूरी के लिए आवेदन कर सकते थे। यदि याचिकाकर्ता के पास जमीन का कब्जा नहीं होता, तो नक्शा लागू या अनुमोदित नहीं किया जा सकता था, न ही वे घर खरीदारों से बुकिंग और धन एकत्र करना शुरू कर सकते थे।

87. स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के आवंटन और विकास में बड़े पैमाने पर घपलेबाजी और धोखाधड़ी की खबरें आईं। अतः भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (कैग) ने सितंबर 2020 में पेश की गई अपनी रिपोर्ट में स्पोर्ट्स सिटी के आवंटन, कार्यान्वयन और विकास में घोटाले की ओर इशारा किया था।

88. इसके बाद, नोएडा की बोर्ड बैठक 18.01.2021 (201वीं बोर्ड बैठक) को आयोजित की गई जिसमें यह संकल्प लिया गया कि सीएजी (कैग) द्वारा बताई गई कमियों को देखने और एक रिपोर्ट देने के लिए लोक लेखा समिति को सिफारिश की जानी चाहिए। एक अंतरिम उपाय के रूप में, यह भी संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी के विकास की दिशा में कोई कदम नहीं उठाया जाना चाहिए, उप-विभाजन को आगे नहीं किया जाएगा, और न ही किसी नक्शे को फिर से सत्यापित किया जाना चाहिए। इसके अलावा, 25.06.2021 को आयोजित अगली बोर्ड बैठक (202) में प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर, यह संकल्प लिया गया कि मामले को आवश्यक मार्गदर्शन और निर्देश के लिए राज्य सरकार को भेजा जा सकता है।

89. बोर्ड की बैठक (201 वीं बैठक) का निर्णय इस न्यायालय में डेवलपर्स द्वारा दायर विभिन्न रिट याचिकाओं में चुनौती का मुख्य आधार है।

90. हालांकि, पट्टेदार कंसोर्टियम के पक्ष में एक व्यापक पट्टा विलेख के बजाय, कंसोर्टियम के सदस्यों के पक्ष में व्यक्तिगत पट्टा विलेख निष्पादित किए गए थे, यह अभ्यास कंसोर्टियम के प्रमुख सदस्य के अनुरोध पर किया गया था और यह आवंटन पत्र के साथ-साथ स्पोर्ट्स सिटी योजना के अनुसरण में था। इसके अलावा, स्पोर्ट्स सिटी को एक एकीकृत परियोजना के रूप में विकसित किया जाना था। उप-पट्टेदार कंसोर्टियम के नियमित सदस्यों की सभी 100% सहायक कंपनियां थीं और ब्रोशर, आवंटन पत्र और पट्टे में दिए गए नियमों और शर्तों से बंधी थीं। इसलिए, सभी सहायक कंपनियां स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को विकसित करने के लिए बाध्य थीं और वे पट्टा विलेख में उल्लिखित मूल नियमों और शर्तों से बंधे हैं। यह उप-मंडल परियोजना के उचित कार्यान्वयन के लिए आवंटियों के अनुरोध पर केवल आवंटन था और यह एक नए लेन-देन/आवंंटन का गठन नहीं करता है।

91. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि जिस तरह से आवंटन किया गया था, उप-विभाजन किए गए थे, देय किशतों की मांग कभी नहीं की गई थी और यहां तक कि भुगतान भी नहीं किया गया था; जिस तरह से नक्शा स्वीकृत किया गया था, आवंटियों को आनुपातिक खेल सुविधाओं का विकास शुरू किए बिना भी वाणिज्यिक और आवासीय क्षेत्रों में निर्माण शुरू करने की अनुमति दी गई थी, वे योजना या नियमों के अनुसार नहीं थे। उक्त

पट्टा विलेख का अवलोकन यह स्पष्ट करता है कि स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट को एक एकीकृत संपूर्ण के रूप में विकसित किया जाना था।

92. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सहायक कंपनी के पक्ष में उप-विभाजन सहायक कंपनी पर पूरी तरह से बाध्यकारी है और सहायक कंपनी को पट्टे की मूल शर्तों में निहित दायित्वों का पालन करना है और स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को विकसित करना है और एक स्वतंत्र परियोजना के लिए किसी भी स्वतंत्र अस्तित्व का दावा नहीं कर सकता है।

93. नोएडा प्राधिकरण को व्यक्तिगत रूप से उप-पट्टेदारों के पक्ष में लेआउट योजना को मंजूरी देने के लिए फटकार लगाई गई है और लक्षित किया गया है कि इन योजनाओं में इस आशय की कोई शर्त नहीं है कि उप-पट्टेदार द्वारा किसी भी खेल सुविधाओं को विकसित किया जाना था, क्योंकि याचिकाकर्ता की स्वीकृति लेआउट योजना में कोई खेल सुविधा निर्दिष्ट नहीं की गई है।

94. उप-पट्टेदारों द्वारा इस आधार पर किसी भी अभेद्य अधिकार का दावा नहीं किया जा सकता है कि उनके पक्ष में एक योजना स्वीकृत की गई है। योजना प्रस्तुत करना, जिसमें उप-पट्टेदारों ने 70 प्रतिशत ग्राउंड कवरेज को खाली रखते हुए खेल सुविधाओं को बाहर कर दिया था, उप-पट्टेदारों का अपना गलत काम था, जिसका वे लाभ नहीं उठा सकते थे। इसलिए अवैध रूप से स्वीकृत मानचित्र से कोई पवित्रता नहीं जोड़ी जा सकती है। मानचित्र की मंजूरी, भले ही वह मौजूद हो, को योजना और पट्टा विलेख के साथ-साथ वैधानिक प्रावधानों के साथ पढ़ा जाना चाहिए। अधिनियम, ब्रोशर, आवंटन और पट्टा विलेख के प्रावधानों के विपरीत कोई भी मंजूरी अपने आप में एक विचलन होगी और इस विचलन को कानून के तहत मान्यता नहीं दी जाएगी, इसलिए, गुंडनॉर्म सिद्धांत लागू होगा।

95. स्पोर्ट्स सिटी परियोजना की पूरी योजना से पता चलता है कि समूह आवास/आवासीय उद्देश्य खेल सुविधाओं के विकास के प्रमुख उद्देश्य के पूरक है। आवासीय उद्देश्य और व्यावसायिक उद्देश्य खेल सुविधा के विकास के पूरक होने के कारण, इसे केवल एक एकीकृत परियोजना के रूप में देखा जा सकता है।

96. अपने तर्क को पुष्ट करने के लिए उन्होंने नंद किशोर गुप्ता और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित एक निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें यमुना एक्सप्रेसवे के साथ पांच भूमि पार्सल के आवंटन से संबंधित मामले से निपटते हुए, उन्हें यमुना एक्सप्रेसवे के विकास का एक अभिन्न अंग मानते हुए, न्यायालय ने पांच भूमि पार्सल के अधिग्रहण और आवंटन को बरकरार रखा।

97. इसलिए, उप-पट्टेदार इस न्यायालय के साथ-साथ माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के आलोक में, केवल समूह आवास परियोजना के विकास के लिए बनाए जाने का दावा नहीं कर सकता है क्योंकि यह एकीकृत परियोजना योजना के विपरीत होगा जिसके तहत आवंटन किया गया था।

98. चूंकि, स्पोर्ट्स सिटी योजना के तहत एकल आधार पर समूह आवास परियोजना की श्रेणी में नहीं आता है, इसलिए खेल सुविधाओं के विकास के बिना इसे एक पूर्ण परियोजना के रूप में नहीं माना जा सकता है, क्योंकि खेल सुविधा प्राथमिक परियोजना है और समूह आवास खेल सुविधा परियोजना की मूल्यांकन कर रहा है और इस अर्थ में समूह आवास परियोजना का एक अभिन्न अंग बन जाता है।

99. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि घर खरीदारों, याचिकाकर्ता और आई.आर.पी. दिनांक 19.09.2023 के बीच दर्ज समझौता ज्ञापन/मास्टर समझौता स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि मेसर्स एका लाइफ लिमिटेड एक वैधानिक भागीदार है, जो समझौता ज्ञापन के खंड 4.1 के अनुसार 75 करोड़ रुपये की सीमा तक धन देने के लिए सहमत हो गया है। इसके अलावा, एमओयू के अनुसार, यह स्पष्ट है कि प्रमोटर को नोएडा प्राधिकरण से 4 महीने की अवधि (3 महीने की छूट अवधि के साथ) के भीतर सभी अनुमतियां मिल जाएंगी और समय के परिप्रेक्ष्य में एक नया समझौता होना चाहिए। हालांकि, इस मामले में समय अवधि बीत चुकी है और यह दिखाने के लिए अभिलेखों पर कुछ भी नहीं है कि पक्षगण ने एक नया समझौता ज्ञापन किया है, जिसका अर्थ है कि यह समझौता ज्ञापन समाप्त हो गया है और समझौता ज्ञापन के अभाव में, उसके बाद शुरू की गई सभी कार्यवाही पूरी तरह से निराधार है।

100. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि लोक लेखा समिति की बैठक में यह संकल्प लिया गया है कि बिल्डर एक नया नक्शा प्रस्तुत करेंगे जिसमें उनकी 70% भूमि, उन्हें खेल सुविधाओं के निर्माण के लिए एक खुले क्षेत्र के रूप में छोड़ना होगा। चूंकि याचिकाकर्ता 70% भूमि में खेल सुविधाओं को विकसित करने के लिए बाध्य है और जब तक प्राधिकरण को नया नक्शा प्रस्तुत नहीं किया जाता है, तब तक प्राधिकरण मौजूदा मानचित्र को फिर से मान्य नहीं कर सकता है, जो गलती से और प्राधिकरण की नीतियों के विपरीत और आवंटन पत्र के विपरीत जारी किया गया है।

101. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि जिस तरह से चीजों को संशोधित/बदला गया वह काफी संदिग्ध था। सरकार बदलने के बाद ही इस घोटाले का पता चला और लेखापरीक्षा को नियंत्रक और महालेखा परीक्षक के पास भेज दिया गया। राज्य सरकार ने बहुत सक्रिय रुख अपनाया और आवंटियों द्वारा की गई अवैधता के कारण मानचित्र का कोई प्रदर्श या पुनर्वैधीकरण नहीं किया।

दिवाला कार्यवाही

102. श्री मनीष गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि यहां याचिकाकर्ता के खिलाफ शुरू की गई कॉर्पोरेट दिवाला प्रक्रिया तैयार की गई थी और यह याचिकाकर्ता के प्रबंधन और परियोजना के विकास की पूरी जिम्मेदारी से दूर रखने के लिए किए गए धोखाधड़ी के प्रमोटरों के नापाक डिजाइन का परिणाम है। यहां मूल आवंटनी ने कंपनियों का एक जाल बनाया था और आवंटनी के अनुरोध पर कंपनियों द्वारा विभिन्न पट्टा विलेख पर हस्ताक्षर किए गए थे, जो पूरी तरह से प्रमोटरों (अर्थात् निर्मल सिंह, सुरप्रीत सिंह सूरी और विदुर भारद्वाज) के स्वामित्व और नियंत्रण में थे। उनके अनुरोध पर, नोएडा प्राधिकरण ने विभिन्न उप-पट्टों को निष्पादित

किया था, लेकिन ऐसा लगता है कि कुछ समय के साथ उन्होंने कंपनियों को बेच दिया है / नोएडा प्राधिकरण से अनुमति लिए बिना और परियोजना के पहले मील के पत्थर को पूरा किए बिना भी शेयरों को तीसरे पक्ष / संस्थाओं को हस्तांतरित कर दिया है, जो इस तरह के हस्तांतरण की पूर्व शर्त थी।

103. मैसर्स ए.एस.पी.एल. के खिलाफ निम्नलिखित राशि बकाया थी, जिसका दावा नोएडा द्वारा सी.आई.आर.पी. के समक्ष किया गया था: -

क्लेम हेड	दावा की गई राशि (INR)	स्वीकृत राशि (INR)
ब्याज के साथ पट्टा प्रीमियम	65,49,49,003	56,06,56,456
ब्याज के साथ किराए पर पट्टे पर	5,49,45,193	5,19,76,278
23.04.2021 तक समय प्रदर्श शुल्क	10,56,56,250	7,64,61,216
64.7% किसानों का मुआवजा	2,63,50,000	
कुल	84,19,00, 446	68,90,93,950

104. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि यह कॉर्पोरेट आवरण का छेदन और यह देखने का एक आदर्श मामला है कि क्या कंपनियों को अच्छी तरह से डिजाइन की गई नापाक योजना/घोटाले से शामिल किया गया था, या व्यापार के सामान्य प्रविधि में किया गया था।

कॉर्पोरेट घूँघट का भेदी

105. चूंकि इस मामले में एक ही प्रमोटरों द्वारा निगमित कंपनियों का एक जाल है और उनकी सभी नई निगमित कंपनियों ने एक कंसोर्टियम के रूप में आवेदन किया है।

106. मेसर्स श्री सी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड, स्पोर्ट्स सिटी (आर.ओ.सी. के अनुसार) विकसित करने के लिए स्थापित एक विशेष प्रयोजन कंपनी को 13.12.2010 को निगमित किया गया था, जो विज्ञापन की तारीख से बहुत पहले था। निगमन की तारीख से ही, निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज और सुरप्रीत सिंह सूरी नामक तीन निदेशक थे और पट्टा विलेख के निष्पादन की तारीख पर भी यही निदेशक थे, यहां तक कि कंसोर्टियम की अधिकांश संबंधित कंपनियों (सदस्यों) को स्पोर्ट्स सिटी योजना शुरू होने के बाद शामिल किया गया था और आश्चर्य है कि सभी कंपनियों का एक ही पता था और इन सभी कंपनियों के प्रवर्तक एक ही थे।

107- वर्तमान स्थिति के एक व्यापक और समावेशी विश्लेषण से पता चलता है कि लगभग व्यक्तियों के एक ही समूह ने स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट के विकास के लिए प्राधिकरण से पट्टे खरीदने के लिए कई कंपनियों को एक एकीकृत पूरे के रूप में शुरू किया। हालांकि, परियोजना के एकीकृत विकास के प्रति अपने दायित्व का निर्वहन

करने के बजाय, उपरोक्त व्यक्तियों का समूह जो स्वतंत्र कंपनियों की आड़ में कंसोर्टियम के सभी सदस्यों के पीछे प्रभावी रूप से था, ने केवल आवासीय विकास पर ध्यान केंद्रित किया और खेल सुविधाओं के विकास के लिए अपनी जिम्मेदारी को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया, और बाद में खुद को दिवालियापन में डाल लिया।

108. उप पट्टा विलेखों के आवंटन और निष्पादन के बाद कुछ कंपनियों में शेयर होल्डिंग बदल गई है, और कुछ कंपनियों ने चूक की है, जिसका प्रभाव यह था कि खेल शहर विकसित नहीं किया जा सका। इसलिए कॉर्पोरेट घूँघट को भेदना और यह देखना आवश्यक है कि पराजय के लिए जिम्मेदार लोग/इकाई कौन हैं।

109. हालांकि, प्रस्तुत मामले में, कंसोर्टियम का गठन करने वाली कंपनियों की अलग कानूनी पहचान का उपयोग कानूनी दायित्वों की चोरी की सुविधा के लिए किया गया है जो सदस्यों ने संयुक्त रूप से और अलग-अलग, एक एकीकृत पूरे के रूप में स्पोर्ट्स सिटी के विकास की दिशा में अवधारित किया था। तदनुसार, कंपनियों की वास्तविक प्रकृति को प्रकट करने और ऐसे व्यक्तियों को सीधे उत्तरदायी ठहराने के लिए उन पर वास्तविक नियंत्रण रखने वाले व्यक्तियों की पहचान करने के लिए कॉर्पोरेट आवरण का छेदन के लिए यह एक उपयुक्त मामला है।

110. चूंकि कंपनियों (स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट में शामिल डेवलपर्स) और उनके निदेशकों (वस्तुतः कई कंपनियों को फ्लोट करने वाले व्यक्तियों का एक ही सेट) के बीच अंतर की रेखा धुंधली है और कंपनियां केवल अपनी कानूनी जिम्मेदारी से बचने वाले मालिकों के अहंकार को बदलने के रूप में कार्य करती हैं, कॉर्पोरेट घूँघट को छेदने के लिए 'अहंकार को बदलना' का सिद्धांत लागू हो जाता है।

111. कानूनी सिद्धांत है कि एक कंपनी अपने सदस्यों से स्वतंत्र एक अलग कानूनी इकाई है और अपने स्वयं के अधिकारों और दायित्वों का आनंद लेती है, सॉलोमन बनाम ए सॉलोमन एंड कंपनी लिमिटेड में निर्धारित किया गया था।

112. इसके अतिरिक्त, चूंकि सभी व्यक्तिगत कंपनियों के पीछे निदेशकों का एक ही सेट कंपनियों द्वारा किए गए दायित्वों के निर्वहन के लिए इसका उपयोग करने के बजाय अपने स्वयं के लाभ के लिए अलग-अलग कॉर्पोरेट संस्थाओं का उपयोग कर रहा है, इसलिए कॉर्पोरेट घूँघट को छेदने के लिए 'साधन' का सिद्धांत भी लागू होता है।

113. वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि इस मामले में कॉर्पोरेट आवरण का छेदन का कारण नोएडा प्राधिकरण और राज्य के बकाया की चोरी को रोकना और अन्य संबद्ध कंपनियों को रोकना है, जो अटूट रूप से जुड़े हुए हैं और एक इकाई के रूप में बनते हैं, अवैध उद्देश्यों के लिए एक मोर्चे के रूप में उपयोग किए जाने से रोकना है, और इसमें शामिल लेनदेन की वास्तविक प्रकृति की पहचान करना और धोखाधड़ी को रोकने

और सार्वजनिक हित को सुरक्षित करना है। साथ ही घर खरीदारों की रुचि। अपने तर्क के समर्थन के लिए, उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:

- (i) उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम रेणुसागर पावर कंपनी और अन्य¹⁵
- (ii) दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी और अन्य¹⁶
- (iii) शुभा मुखर्जी बनाम भारत कोकिंग कोल लि.¹⁷
- (iv) राजस्थान राज्य बनाम गोटन चूना पत्थर खनिज उद्योग प्रांति और अन्य।

114. कई निर्णयों में निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए, ऐसे मामलों में दर्ज कॉर्पोरेट दिवालियापन के परिणामस्वरूप केवल कुल पट्टा क्षेत्र को कम किया जा सकता है और यदि ऐसा है तो स्पोर्ट्स सिटी कभी भी नहीं आ सकती है क्योंकि समाधान योजना केवल समूह आवास के लिए है, लेकिन चूंकि कंपनी पूरे पट्टा क्षेत्र के लिए दिवालिया हो गई है। नोएडा ऑपरेशनल क्रेडिटर बन जाता है और पूरे पट्टा एरिया के लिए सफल रिजॉल्यूशन आवेदक का नियंत्रण होता है।

115. यह एक क्लासिक मामला बन जाता है जहां 28% क्षेत्र का उपयोग निर्माण के लिए किया जा रहा है जिसके लिए समाधान योजना तैयार की जा रही है और 72% क्षेत्र सफल समाधान आवेदक के लिए उपलब्ध है, जिस पर कोई निर्माण नहीं है। सफल समाधान आवेदक एन.सी.एल.टी. को सही तथ्यात्मक स्थिति का खुलासा किए बिना इस तरह की परियोजनाओं में निवेश करने के लिए उत्सुक है, जिससे सार्वजनिक संपत्ति का अपव्यय होता है।

116. स्पोर्ट्स सिटी की परियोजना को कंसोर्टियम द्वारा एक पट्टेदार के रूप में पूरा किया जाना है और इसलिए, कंसोर्टियम यह आरोप लगाकर भाग नहीं सकता है कि यह दिवालियापन की एक वैधानिक प्रक्रिया के माध्यम से विघटित हो गया है। अपने तर्क को पुष्ट करने के लिए, उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय और एन.सी.एल.टी. द्वारा पारित निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है: -

- (i) एशिया फाउंडेशन्स एंड कंस्ट्रक्शंस लिमिटेड बनाम एशिया फाउंडेशन्स एंड कंस्ट्रक्शन्स लि० गुजरात राज्य और अन्य¹⁹
- (ii) हाइटोन मर्चेण्ट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम सताबादी इन्वेस्टमेंट कंसल्टेंट्स प्राइवेट लिमिटेड;
- (iii) विदर्भ इंडस्ट्रीज पावर लिमिटेड बनाम एक्सिस बैंक लिमिटेड;
- (iv) रास्टर इमेजेज प्राइवेट लिमिटेड बनाम रैस्टर इमेजेज प्रांति बनाम उत्तर प्रदेश का राज्य खेल सुविधाओं का विकास न होना

117. खेल सुविधाओं के विकास न होने से स्पोर्ट्स सिटी परियोजना विफल हो गई। खुली जगह छोड़ने से खेल सुविधाओं के विकास का उद्देश्य पूरा नहीं होता है, इसे ब्रोशर के अनुसार विकसित किया जाना चाहिए।

118. यहां तक कि याचिकाकर्ताओं के साथ-साथ याचिकाकर्ताओं ने कोई लेआउट योजना नहीं रखी है कि वे खेल सुविधा के विकास के लिए खुली जगह का उपयोग कैसे करेंगे। न्यायालय में दिया गया बयान कि वे 10 करोड़ रुपये के निवेश से बहुउद्देश्यीय खेल सुविधा विकसित करेंगे, यह भी उचित नहीं है, क्योंकि 2011 में जो बहुउद्देश्यीय खेल सुविधाएं स्थापित की जानी थीं, जब योजना शुरू की गई थी, कीमत में वृद्धि के कारण अब प्रदान नहीं की जा सकती है। इससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि खेल सुविधाओं को विकसित करने के लिए खुली जगह का उपयोग करने का कोई इरादा नहीं है, जिसे 2011 में विकसित किया जाना था।

119. इसके अलावा, इस बात का कोई दावा नहीं है कि यह खेल सुविधाएं जो वे विकसित कर रहे हैं, जनता के सदस्यों द्वारा उपयोग किए जाने के लिए हैं। हालांकि, यदि इन प्रस्तावित खेल सुविधाओं को निवासियों या उनके द्वारा निर्मित समूह आवास के प्रस्तावित निवासियों के लिए प्रतिबंधित किया जाता है, तो यह उस उद्देश्य को नकार देगा जिसके लिए खेल शहर तैयार किया गया था।

घर खरीदारों का हित

120. श्री मनीष गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि किसी भी घर खरीदार ने यह नहीं कहा है कि उन्होंने इस आश्वासन पर फ्लैट बुक किया है कि नक्शा नोएडा द्वारा स्वीकृत किया गया है। इसके अलावा, नोएडा को घर खरीदारों के हितों के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है क्योंकि नोएडा को घर खरीदारों और आवंटियों के बीच अनुबंध की जानकारी नहीं है। घर खरीदारों के प्रति कोई संविदात्मक दायित्व नहीं है, इसलिए उन्हें जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। घर खरीदारों के साथ गलत काम करने वाले आवंटी पूरी तरह से घर खरीदारों के लिए जिम्मेदार होंगे और नोएडा को घर खरीदारों के प्रति किसी भी दायित्व के साथ नहीं बांधा जा सकता है।

किशतों के भुगतान के लिए नोटिस

121. नोएडा ने बकाया राशि के भुगतान के लिए एस.पी.सी. (मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड) को दिनांक 01.11.2017, 26.12.2017, 06.10.2021 और 30.11.2022 को नोटिस जारी किया था। जहां तक याचिकाकर्ता का संबंध है, बकाया चूक भुगतान के भुगतान के लिए नोटिस 31.03.2015, 21.08.2019 और 12.09.2019 को भेजे गए थे। नोएडा प्राधिकरण के अनुसार, 31.10.2024 तक याचिकाकर्ता कंपनी पर कुल बकाया राशि ₹99,14,75,095/- है, इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि नोएडा प्राधिकरण ने बकाया राशि की बरामदगी के लिए कोई कदम नहीं उठाया था। यह भी प्रस्तुत किया गया कि याचिकाकर्ता कंपनी के खिलाफ शुरू की गई पूरी दिवालिया कार्यवाही नोएडा प्राधिकरण के बकाया भुगतान से बचने के लिए एक सुविचारित डिजाइन का परिणाम है।

विभिन्न कंपनियों की शेयरधारिता में बदलाव

122. आर.ओ.सी. के अनुसार, आवंटन के बाद आवंटी कंपनी की शेयर होल्डिंग बदल गई है, हालांकि योजना और स्पोर्ट्स सिटी के ब्रोशर में इसकी अनुमति नहीं थी। यह नोएडा प्राधिकरण की अनुमति के बिना किया गया

था। आर.ओ.सी. के अनुसार आवंटित कंपनियों, निदेशकों, शेयरधारिता और वर्तमान शेयरधारिता के नाम को दर्शाने वाला चार्ट इस प्रकार है: -

क्रम सं.	प्लॉट नं.	आवंटी का नाम	उप-विभाजन की तिथि	आवंटन के समय निदेशक और शेयरधारक	आर.ओ.सी. के अभिलेखों के अनुसार वर्तमान निदेशक	आर.ओ.सी. के अभिलेखों के अनुसार वर्तमान शेयरधारक
1-	एस.सी.- 01- 01/78	मैसर्स ज़ानाडु इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	24.10.201 1	मैसर्स ज़ानाडु इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड (मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की 100% शेयर होल्डिंग कंपनी)- निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2। विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी	अतिरिक्त निदेशक- 1- विनय कुमार मिश्रा 2- सतीश कुमार तिवारी 3- समीर सागर वशिष्ठ	शेयरधारक (31.3.2017 की स्थिति के अनुसार)
2.	एस.सी.- 01/ए- अल्फा/79	मैसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	16.06.201 4	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2- श विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी	निर्देशकों- 1. अनूप कुमार श्रीवास्तव 2. मनोज कुमार सिंह 3. दिलीप कुमार	शेयरधारक:(31.03.202 0 तक) मैसर्स अजानारा इंडिया लिमिटेड (99.94%) प्रमोद कुमार गुप्ता(0।01%) अशोक कुमार गुप्ता (0।01%)

						विनोद कुमार गुप्ता (0101%) श्रीमती ममता गुप्ता (0.01%) श्रीमती पद्मा गुप्ता (0.01%) श्रीमती गीता गुप्ता (0.01%)
3.	एस.सी.- 01/ए-आई (बीटा0/79)	मैसर्स पिनेकल सुपर स्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड	16.06.201 4	निर्देशक:- 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश कुमार पाहवा शेयरधारकों 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (नामांकित सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड) (00.01)	निर्देशकों:- 1. गुरिंदर सिंह सिक्का 2. अखिल गुप्ता	शेयरधारक: - (31.3.2019 तक) 1. सारा बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड (75%) 2. सिक्का प्रमोटर्स प्राइवेट लिमिटेड(25%)
4.	एस.सी.- 01/ए- 2/79	मैसर्स एरिना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	16.06.201 4	निर्देशक:- 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश कुमार पाहवा	निर्देशकों:- 1. शाह आलम 2। जगत सिंह ठाकुर	शेयरधारक (12.08.2023 तक) 1. शाह आलम-(9%)

				शेयरधारकों 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (नामांकित सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड)(00.01)	3. नीरज कुमार सिन्हा 4. जॉय जॉर्ज	2. पूर्वांचल प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (91%) एरिना सुपरस्ट्रक्चर दिवालिया प्रक्रिया में चला गया
5.	एस.सी.-01/बी-1/79	मैसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निर्देशक:- 1. श्री निर्मल सिंह 2। विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों 1. मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की	निर्देशक:- 1। भूपिंदर सिंह कोचर 2. अजय खेत्रपाल 3. आनंद गोयल 4. प्रशांत अग्रवाल 5. प्रदीप जैन 6. मुनीश खेर	शेयरधारक (31.3.2024 तक) प्रदीप जैन (22%) भूपिंदर सिंह कोचर (22%) अजय खेत्रपाल सिंह श्री आनंद गोयल (12%) मुनीश खेर(6%) श्रीमती मीनू खेर (5%) श्री प्रशांत अग्रवाल (6%) श्री पूजा अग्रवाल (5%)

				ओर से नामांकित व्यक्ति के रूप में) (00.01)		
6.	एस.सी.- 01/बी- 2/79	मैसर्स गोल्फ ग्रीन बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	03.10.201 2	शेयरधारकों	निर्देशकों:- 1. बबलू कुमार 2. दीना राम	शेयरधारक (31.3.2014 की स्थिति के अनुसार) 1. सिल्वर सैंड्स बिल्डमार्ट प्राइवेट लिमिटेड (25%) 2. जेफिर प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड- (25%) 3. अरुण कुमार घई- (50%)
7.	एस.सी.- 01/सी- 1/79	मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	16.09.201 4	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2 विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर) 2. सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	निर्देशकों:- 1. आनंद राम 2. गिरीश चंद जोशी	शेयरधारक (31.3.2018 तक) मैसर्स ज़ानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (75%) मैसर्स ज़ानाडु इंफ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)

				का नामिती (0.01% शेयर)		
8.	एस.सी.- 01/सी- 2/79	मैसर्स रोबल इनोवियन्स प्राइवेट लिमिटेड	16.09.201 4	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2।विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स थी सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स थी सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित।	निर्देशकों:- 1। अश्वनी कुमार गुप्ता 2. करण सागर अग्रवाल	शेयरधारक:- (31.3.2024 तक) श्री अरविंद गोयल (50%) अश्वनी कुमार गुप्ता (50%)
9.	एस.सी.- 01/सी- 3/79	मैसर्स पीयूष आईटी सॉल्यूशन प्राइवेट लिमिटेड	16.09.201 4	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2।विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स थी सी	निर्देशकों: 1. नवीन 2. गोपाल सिंह	शेयरधारक- (31.3.2020 तक) मैसर्स एमिनेंट होम्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) श्री निर्मल सिंह (मैसर्स एमिनेंट होम्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (0.01%)

				ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड का नामिती (0.01% शेयर)		
10	एस.सी.- 01/सी	मैसर्स श्री सी इन्फ्राक्रिएशन प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड का नामिती (0.01% शेयर)	निर्देशकों: 1. दीपक मल्होत्रा 2- हर्षित सिंह 3-अखिलेश मिश्रा	शेयरधारकों- मैसर्स अभि कॉर्पोरेशन प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) दीपक मल्होत्रा (मैसर्स एपीसीएल प्राइवेट लिमिटेड का नामांकित(0.01%)

11	एस.सी.- 01/सी- 5/79	मैसर्स श्री सी सिटी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	16.09.201 4	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2।विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड का नामिती (0.01% शेयर)	निर्देशकों: 1. जगदीप सिंह गिल 2. प्रदीप सिंह राठी	शेयरधारक-(2023- 2024) अजय कुमार (70%) प्रताप सिंह रथी (10%) प्रवीण कुरेले (20%)
12	एस.सी.- 01/सी- 6/79	मैसर्स वाटर ईपर्स इन्फोर्सऑफटे क प्राइवेट लिमिटेड	16.09.201 4	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2।विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स	निर्देशकों: 1. राकेश कुमार अग्रवाल 2- पंकज कुमार गर्ग 3- मधुर गर्ग 4. सुमित गर्ग 5. सचिन गोयल	शेयरधारक- (31.3.2024 तक) धनेश चंद अग्रवाल (9%) श्री धनेश चंद अग्रवाल एंड संस (एचयूएफ) (6%) श्रीमती अपर्णा अग्रवाल (5%) श्री महेश चंद गोयल (एचयूएफ) (5%)

				प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड का नामिती (0.01% शेयर)	6. सनी अग्रवाल 7. निकुंज गर्ग 8. खूशबू अग्रवाल 9. आकाश गर्ग	श्री महेश चंद गोयल (8%) अभिनव गोयल (75%) श्री सचिन गोयल (20%) दिनेश गर्ग (20%) श्रीमती नूतन गर्ग (2.5%) सुमित गर्ग (215%) मधुर गर्ग (215%) श्रीमती शिखा गर्ग (2.5%) राकेश कुमार अग्रवाल (10%)
13	एस.सी.- 01/सी- 7/79	मैसर्स श्री सी बिल्डर प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2।विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	अतिरिक्त निदेशक: 1- विनय कुमार मिश्रा 2। सतीश कुमार तिवारी 3. समीर सागर वशिष्ठ	शेयरधारक- (31.3.2017 की स्थिति में) मैसर्स लोटस ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स यासाली डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स लॉरेल रेसिडेंसी प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स इन्फ्राविज प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)

				का नामिती (0.01% शेयर)		
14	एस.सी.- 01/सी- 8/79	मैसर्स श्री सी बिल्डर प्राइवेट लिमिटेड	16.09.201 4	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2- विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड का नामिती (0.01% शेयर)	निर्देशकों: 1- विनय कुमार मिश्रा 2- सतीश कुमार तिवारी 3- समीर सागर वशिष्टीत	शेयरधारक- (31.3.2017 की स्थिति में) मैसर्स लोटस ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स यशली डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स लॉरेल रेसिडेंसी प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स इन्फ्राविज प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)
15	एस.सी.- 01/डी- 1/79	मैसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	03.10.201 2	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2।विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम	निर्देशकों: 1. पीयूष तिवारी 2. शिखा तिवारी 3. आस्था गुप्ता 4. हर्षदीप गांधी	शेयरधारक- (30.9.2014 की स्थिति के अनुसार) 1।पीयूष तिवारी (55%) 2. सुश्री शिखा तिवारी (5%) 3. मैसर्स सनव्हाइट इंफ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड (40%)

				से मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड का नामिती (0.01% शेयर)		
16	एस.सी.- 01/डी- 2/79	मेसर्स गोल्फ ग्रीन रेजिडेंस प्राइवेट लिमिटेड	03.10.201 2	निर्देशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा पट्टेदार:- 1. मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित (0.01% शेयर)	अतिरिक्त निदेशक: 1. अनिल प्रकाश शर्मा 2. कृष्ण कुमार 3. राहुल यादव 4. उषा सराफ	शेयरधारक- (31.3.2020 तक) मेसर्स सनशाइन इंप्राटेक प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) सनशाइन इंप्राहोम्स प्राइवेट लिमिटेड (0.01%)
17	एस.सी.- 01/डी- 3/79	मेसर्स गोल्फ ग्रीन एस्टेट प्राइवेट लिमिटेड	03.10.201 2	निर्देशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा पट्टेदार:-	निर्देशकों: 1. दिनेश कुमार जैन 2।राकेश कुमार जैन	शेयरधारक- (31.3.2023 तक) 1. एकसोटिका हाउसिंग एंड इंप्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड - (99.99%)

				1. मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित (0.01% शेयर)		2. श्री दिनेश कुमार जैन (एक्सोटिका हाउसिंग एंड इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित व्यक्ति के रूप में)(.01%)
18	एस.सी.- 01/डी- 4/79	मेसर्स गोल्फ ग्रीन मेशन प्राइवेट लिमिटेड	03.10.201 2	निर्देशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा पट्टेदार:- 1. श्री विदुर भारद्वाज के माध्यम से मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामिती (0.01% शेयर)	निर्देशकों- 1. विनोद बहल 2. प्रमोद बहल 3. विकास गुप्ता 4. उमा शंकर	श्रेहोल्डर्स (31.3.2024 तक) विनोद बहल (25%) प्रमोद बाल (25%) श्री उमा शंकर (25%) श्री अमिताभ गुप्ता (25%)

19	एस.सी.- 01/ई- 1/79	मैसर्स गौरसंस स्पोर्ट्सवुड प्राइवेट लिमिटेड	03.10.201 2	निर्देशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा पट्टेदार:- 1. श्री विदुर भारद्वाज के माध्यम से मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरभीत सिंह सूरि (मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामिती (0.01% शेयर)	निर्देशकों: 1. मनोज गौड़ 2। सरथक गौर	शेयरधारक- (31.3.2024 तक) 1। मनोज कुमार गौर- (4।65%) 2. श्रीमती मंजू गौड़ - 4.66% 3. गौरसंस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड- (41.92%) 4. श्री श्याम बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड- (41.92%) 5. श्री प्रदीप कुमार अग्रवाला- (6.85%)
20	एस.सी.- 01/ई- 2/79	मैसर्स गोल्फ ग्रीन इंफ्रा प्राइवेट लिमिटेड	03.10.201 2	निर्देशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा पट्टेदार:- 1. मैसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर)	निर्देशकों: 1. धीरज जैन 2. श्रुति जैन 3. दिव्या जैन 4. अमित जैन	शेयरधारक- (31.3.2023 तक) मैसर्स महागुन इंडिया प्राइवेट लिमिटेड (9.99%) आई.सी.आई.सी.आई. प्रूडेंशियल वेंचर कैपिटल फंड रियल एस्टेट्स (.01%) गौर संस स्पोर्ट्स वुड प्राइवेट लिमिटेड (90%)

				2. श्री दीपक खुराना (मेसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित व्यक्ति के रूप में (0.01% शेयर)		
21	एस.सी.- 01/ई- 3/79	मैसर्स गोल्फ ग्रीन सुपरस्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	03.10.201 2	पट्टेदार:- 1. मेसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (मेसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित व्यक्ति के रूप में (0.01% शेयर)	निर्देशकों: 1. जय प्रकाश गुप्ता 2. अलका गोयल	शेयरधारक- (31.3.2023 तक) 1. सिविलटेक हाउसिंग इंडिया प्राइवेट लिमिटेड (85.71%) 2. सुबोध गोयल (7.14%) 3. अलका गोयल (7.14%)
22	एस.सी.- 01/ए/101	मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	03.07.201 3	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:-	निर्देशकों- 1. आनंद राम 2. गिरीश चंद्र जोशी	शेयरधारकों: मैसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (75%) मैसर्स ज़ानाडू इन्फ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)

				1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड का नामिती (0.01% शेयर)		
23	एस.सी.- 01/बी/10 1	मैसर्स गोल्फ ग्रीन बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	03.07.2013	निर्देशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारकों:- 1. श्री निर्मल सिंह के माध्यम से मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	निर्देशकों- 1. आनंद राम 2. गिरीश चंद्र जोशी	शेयरधारकों:- मैसर्स ज़ानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (75%) मैसर्स ज़ानाडू इंफ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड (25%)

				का नामिती (0.01% शेयर)		

शेयरधारिता में यह परिवर्तन/निदेशक परिवर्तन/शेयर हस्तांतरण/सीआईसी याचिकाकर्ता द्वारा नोएडा प्राधिकरण की किसी भी मंजूरी के बिना किया गया था और यह ब्रोशर और पट्टा विलेख की शर्तों के विपरीत था।

विश्लेषण

123. हमने संबंधित पक्षों के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत प्रस्तुतियों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है। उनकी सक्षम सहायता से, हम याचिकाओं में लिए गए आधारों, उसके संलग्न अनुलग्नकों, प्रतिपक्षी द्वारा दायर उत्तर और अपीलकर्ताओं द्वारा दायर जवाबी हलफनामे का अवलोकन करने के लिए आगे बढ़े हैं।

124. प्रस्तुत पदार्थ का विश्लेषण दो भागों में किया जा सकता है, प्री इन्सॉल्वेंसी और पोस्ट इन्सॉल्वेंसी।

I-प्री इन्सॉल्वेंसी पार्ट

125. स्पोर्ट्स सिटी की योजना तैयार होने के बाद कुछ शर्तों के साथ ब्रोशर जारी किया गया, जिसके बाद सफल आवेदक को सेक्टर 78-79 में स्पोर्ट्स सिटी का आवंटन किया गया।

126. नोएडा और याचिकाकर्ता के बीच एक अलग पट्टा विलेख निष्पादित किया गया था, जिसमें परियोजना के निष्पादन के लिए और शर्तें निर्धारित की गई थीं, हालांकि, शर्तों का पालन नहीं किया गया था। आवंटियों/बिल्डरों को अनुचित लाभ प्रदान करना। पट्टा विलेख की कुछ प्रासंगिक शर्तें जिनका उल्लंघन किया गया था, वे इस प्रकार थीं :-

i) खंड III (ए) निर्धारित किया गया है कि प्रमुख सदस्य कंसोर्टियम में कम से कम 30% शेयर रखने वाला सबसे बड़ा शेयरधारक होना चाहिए। लीड सदस्य की शेयरधारिता का प्रतिशत तब तक न्यूनतम 30% रहेगा जब तक कि पट्टेदार से परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त नहीं हो जाता।

हालांकि, पट्टेदार ने लीड मैनबर के 30% हिस्से की इस शर्त का उल्लंघन किया, जिसे एक गॉबी दिया गया था।

ii) पट्टेदार को पट्टा विलेख के निष्पादन की तारीख से 3 साल की अवधि के भीतर खेल, संस्थागत और अन्य सुविधाओं के लिए निर्धारित अनुमेय क्षेत्र के न्यूनतम 15 प्रतिशत का निर्माण पूरा करना होगा और परियोजना को 5 वर्षों के भीतर चरणों में पूरा करना होगा।

यह भी निर्धारित समय के भीतर नहीं किया गया था, वास्तव में स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए कुछ भी नहीं किया गया था।

iii) पट्टेदार को मनोरंजक उपयोगों के लिए निर्धारित क्षेत्र के अनुपात में परियोजना में आवासीय और वाणिज्यिक घटक विकसित करना होता है।

इस शर्त का भी उल्लंघन किया गया था, कोई आनुपातिक मनोरंजन/खेल सुविधा कभी भी आनुपातिक रूप से विकसित नहीं की गई थी

iv) पट्टा विलेख के खंड II (j) के अनुसार, पट्टेदार परियोजना के कार्यान्वयन के लिए पूरी तरह से और पूरी तरह से जिम्मेदार था। इस परियोजना को पट्टेदार द्वारा विशेष प्रयोजन कंपनी और/या इसकी सहायक कंपनियों के माध्यम से कार्यान्वित किया जा सकता है।

इस परियोजना को कार्यान्वित करना पट्टेदार का कर्तव्य था, चाहे वह स्वयं या एस.पी.सी. द्वारा या इसकी किसी सहायक कंपनी के माध्यम से किया गया हो। इसमें, याचिकाकर्ता एक सहायक कंपनी होने के नाते परियोजना को पूरा करने के लिए जिम्मेदार था, उसके दायित्वों को इस आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है कि आवंटियों के बीच आपसी समझ बनी थी और सभी जिम्मेदारियां किसी अन्य सहायक कंपनी को दी गई थीं।

(v) पट्टेदार की प्रचलित नीति के रूप में अंतरण प्रभारों के भुगतान के बाद, पट्टेदार की पूर्व अनुमति से पूरे भूखंड और उस पर निमत भवनों को स्थानांतरित कर सकता है। हालांकि, पट्टेदार बिना कोई कारण बताए ऐसे किसी भी हस्तांतरण आवेदन को अस्वीकार करने का अधिकार सुरक्षित रखता है।

हालांकि, यहां प्रतिवादी प्राधिकरण द्वारा दायर आर.ओ.सी. वेबसाइट से यह स्पष्ट है कि कंपनी का कुछ हिस्सा बेच दिया गया है। प्राधिकरण की अनुमति के बिना शेषों को स्थानांतरित करके

(vi) विवरणिका के सभी निबंधन और शर्तें, आवंटन, हस्तांतरण प्रदान करने की अनुमति, पट्टा विलेख आदि पट्टेदार के साथ-साथ अंतरिती(ओं) पर बाध्यकारी होंगी।

इस शर्त के साथ, पट्टेदार स्पोर्ट्स सिटी को विकसित करने की अपनी आनुपातिक जिम्मेदारी से बच नहीं सकता है, हालांकि ब्रोशर और पट्टा विलेख की शर्तों का पालन नहीं किया गया था।

(viii) पट्टेदार को निम्नलिखित शर्तों को पूरा करने पर निर्मित स्थान को स्थानांतरित करने की अनुमति दी जाएगी: -

(i) पट्टेदार ने उस पर ब्याज के साथ भूखंड प्रीमियम का पूरा भुगतान कर दिया है और उस पर देय ब्याज, यदि कोई हो, के साथ अद्यतन पट्टे के किराए का भुगतान कर दिया है।

(ii) नियमों के अनुसार पट्टा विलेख को विधिवत निष्पादित किया गया है।

(iii) पट्टेदार ने पट्टेदार से भवन पूर्णता प्रमाण-पत्र प्राप्त कर लिया है।

(iv) उप-पट्टेदारों/अंतरितकर्ताओं को केवल मूल अनुमेय उपयोग के लिए परिसर का उपयोग करने का वचन दिया जाता है और स्थानांतरित किए जा रहे परिसर पूर्णता प्रमाण-पत्र के अनुसार हैं और किसी सामान्य क्षेत्र का हिस्सा नहीं हैं।

(v) पट्टेदार पट्टेदार, पट्टेदार और प्रस्तावित अंतरणकर्ताओं (उप-पट्टेदारों) के बीच एक उप-पट्टा विलेख भी निष्पादित करेगा। पट्टेदार/उप-पट्टेदार भी भवन नियमों और निर्देशों का पालन सुनिश्चित करेंगे। आवंटन और पट्टा विलेख के सभी नियम और शर्तें अंतरित/उप-पट्टेदारों पर भी लागू और बाध्यकारी होंगी।

(vi) अंतरितकर्ताओं/उप-पट्टेदारों को भी यथालागू आनुपातिक पट्टा किराया का भुगतान करना होगा। हस्तांतरणकर्ताओं/उप-पट्टेदारों को उप-पट्टे की तारीख से एक वर्ष के भीतर निर्मित स्थान को कार्यात्मक बनाना होगा और इसके प्रमाण में पट्टेदार को पर्याप्त दस्तावेज प्रस्तुत करने होंगे। इसके बाद, प्रदर्श शुल्क, जैसा भी लागू हो, देय होगा।

(vii) विवरणिका के सभी नियम और शर्तें, आवंटन, हस्तांतरण प्रदान करने की अनुमति, पट्टा विलेख आदि पट्टेदार के साथ-साथ अंतरितकर्ताओं (उप-पट्टेदारों) पर भी लागू होंगी।

(viii) पट्टेदार, उप-पट्टेदार नोएडा की विभिन्न स्कीमों के अंतर्गत आवासीय भूखंड अथवा मकान के किसी भी अधिमान्य आवंटन के लिए पात्र नहीं हैं।

इन शर्तों का भी खुले तौर पर उल्लंघन किया गया और उनका पालन नहीं किया गया। हालांकि पट्टेदार को केवल निर्मित स्थान को इस शर्त पर स्थानांतरित करने की अनुमति दी गई थी कि उस पर ब्याज के साथ भूखंड प्रीमियम का पूरा भुगतान और अप-टू-डेट पट्टा किराए का भुगतान किया जाए। लेकिन यहां बिल्ट अप एरिया के ट्रांसफर के बजाय मनोरंजन के लिए चिह्नित ओपन एरिया को भी बकाया (प्रीमियम और पट्टा रेंट) का भुगतान किए बिना ट्रांसफर कर दिया गया। परियोजना के पूरा होने और नोएडा से भवन पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त करने के बाद हस्तांतरण प्रभावित होना था, लेकिन यहां निर्माण शुरू होने से बहुत पहले ही स्थानांतरण कर दिया गया था। पट्टेदार/उप-पट्टेदारों ने आवंटन और पट्टा विलेख की अनिवार्य शर्तों का पालन नहीं किया, जिसका हस्तांतरण से पहले पालन किया जाना था। हालांकि बकाया राशि का भुगतान न करने पर परियोजना को तुरंत रद्द करने की मांग की जाती है, लेकिन ऐसा नहीं किया गया।

127. हालांकि पट्टा विलेख भुगतान योजना में उल्लेख किया गया था जिसमें एक अधिस्थगन अवधि थी, उसके बाद, आवंटन को ब्याज और अन्य बकाया राशि के साथ 16 छमाही किस्त में पूरे प्रीमियम का भुगतान करना पड़ा। मैसर्स ए.एस.पी.एल. ने समय पर किस्त का भुगतान करने में चूक की थी, तथापि, नोएडा प्राधिकरण को जो कारण अच्छी तरह से पता है, उन्होंने कभी भी आवंटियों को बकाया राशि का भुगतान करने के लिए नहीं कहा। जबकि याचिकाकर्ता संख्या-1 ने आवासीय अपार्टमेंट विकसित करना शुरू कर दिया, लेकिन उन्होंने खेल

सुविधाओं के लिए कुछ भी विकसित नहीं करने का फैसला किया, हालांकि, नोएडा प्राधिकरण द्वारा यह सुनिश्चित करने के लिए कोई गंभीर कार्रवाई नहीं की गई कि खेल सुविधाओं को पहले विकसित किया जाए।

128. प्राधिकरण के अधिकारियों ने बकाया राशि की बरामदगी के समय अपनी आँखें बंद रखीं। नक्शा स्वीकृत कराने के बाद आवंटियों ने घर खरीदारों से धन एकत्र किया, और परियोजना को पूरा करने के बजाय घर खरीदारों से पैसे निकाल लिए और नोएडा प्राधिकरण के बकाया का भुगतान भी नहीं किया, इसके बाद किसी भी नागरिक और कानूनी परिणाम से बाहर निकलने के लिए दिवालिया होने की योजना बनाई। ए.एस.पी.एल. की पूरी पिछली विफलता नोएडा प्राधिकरण की स्पष्ट मिलीभगत थी।

आपराधिक शिकायत/आरोप पत्र

129. घर खरीदारों ने मैसर्स ए.एस.पी.एल. के प्रभारी अधिकारी के खिलाफ धारा 120 बी, 406 और 420 भ०द०वि० के तहत आपराधिक शिकायतें भी दर्ज की हैं। यहां तक कि कुछ घर खरीदारों ने आर्थिक अपराध शाखा के समक्ष मामले दर्ज किए थे। जांच के बाद, मैसर्स ए.एस.पी.एल. के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया गया था, जिसमें यह माना गया था कि आरोपी व्यक्तियों ने धोखाधड़ी से यह दर्शाकर घर खरीदारों को विज्ञापन देना और जानबूझकर धोखा देना शुरू कर दिया था कि मैसर्स ए.एस.पी.एल. मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड का हिस्सा है और मैसर्स लोटस ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड ने सस्ती कीमत पर एक परियोजना शुरू की थी। घर खरीदारों को इकाइयों को खरीदने के लिए लुभाने के बाद आरोपी कंपनी ने घर खरीदारों से धन एकत्र किया और एक बड़ा हिस्सा हड़प लिया गया, जिसके परिणामस्वरूप परियोजना के निर्माण और पूरा होने के लिए कोई धन नहीं बचा था। इसके परिणामस्वरूप परियोजना को पूरा करने में अत्यधिक विलंब हुआ। इसके अलावा, फ्लैटों को जाली साइट प्लान के आधार पर बेचा गया था। चूंकि यूपी.रे.रा. के पास उपलब्ध योजना घर खरीदारों को बुकिंग के समय ब्रोशर में दिखाए गए प्लान से अलग थी।

130. अधिकारियों ने शुरुआत से ही अपनी आँखें बंद रखीं, कभी भी आवंटी/याचिकाकर्ता से किशतों, या भूमि प्रीमियम या किसानों के मुआवजे का भुगतान करने के लिए नहीं कहा, जो देय था। याचिकाकर्ता संख्या-1, मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड ने नोएडा प्राधिकरण द्वारा दी गई मंजूरी के आधार पर घर खरीदारों से 387 करोड़ रुपये एकत्र किए थे और उसका एक बड़ा हिस्सा लिया था और नोएडा प्राधिकरण को केवल मामूली राशि का भुगतान किया था। याचिकाकर्ता, अधिकारियों और नोएडा प्राधिकरण की मिलीभगत स्पष्ट रूप से दिखाई देती है क्योंकि उन्होंने याचिकाकर्ता को दिवालिया होने से मुक्त होने की अनुमति दी थी।

131. याचिकाकर्ता संख्या-1 कंपनी के प्रबंधन को इस आधार पर उनकी देनदारियों से मुक्त नहीं किया जा सकता है कि कंपनी दिवालिया हो गई है और वे अब कंपनी के मामलों के साथ जिम्मेदार नहीं थे। विवादास्पद प्रश्न यह देखना है कि क्या कंपनी वास्तव में दिवालिया हो गई है या ऋणदाताओं को भुगतान से बचने और अपने अन्य दायित्वों को पूरा करने के लिए निधि की साइफनिंग के बाद दिवालियापन को तैयार किया गया है।

132. इस तथ्य का पता लगाने का एकमात्र तरीका कॉर्पोरेट आवरण का भेदन है और यह देखना है कि प्रमुख व्यक्ति कौन हैं और कंपनी के वास्तविक प्रभारी कौन हैं और क्या उन व्यक्तियों द्वारा धोखाधड़ी की गई है और यह भी देखना है कि क्या वे अपनी धोखाधड़ी गतिविधियों को छिपाने की कोशिश कर रहे हैं और कंपनी के मुखौटे के नीचे खुद को एक अलग न्यायिक व्यक्तित्व होने के नाते, जो दिवालिया हो गया है।

कॉर्पोरेट आवरण का भेदन

133. यह तुच्छ कानून है कि कॉर्पोरेट आवरण का भेदन तब तक नहीं हटाया जा सकता जब तक कि कुछ अनुचित या धोखाधड़ी नहीं की जाती है, जिसे एक अलग न्यायिक इकाई के रूप में छिपाया जा रहा है। और यदि ऐसा पाया जाता है, तो यह देखने के लिए कॉर्पोरेट आवरण का भेदन किया जा सकता है कि कंपनी के वास्तविक नियंत्रण में कौन है और देनदारियों के भुगतान से बचने के लिए अवैध कार्रवाई को छिपाने के लिए एक मुखौटा और दिखावा बनाया है।

134. 'कॉर्पोरेट आवरण का भेदन' के सिद्धांत को शुरू में **सॉलोमन बनाम सॉलोमन एंड कंपनी लिमिटेड [सॉलोमन बनाम सॉलोमन एंड कंपनी लिमिटेड]**, में क्रिस्टलीकृत किया गया था, हाउस ऑफ लॉर्ड्स ने देखा था, कंपनी कानून में है, ग्राहक से पूरी तरह से अलग व्यक्ति। हालाँकि, अदालतों ने उक्त नियम के कई अपवादों को मान्यता दी है। हालांकि उन सभी का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है, हमारे लिए प्रासंगिक एक है 'जब कॉर्पोरेट व्यक्तित्व को धोखाधड़ी या अनुचित आचरण के लिए एक लबादे के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है'।

135. कॉर्पोरेट घूँघट उठाने के सिद्धांत को जब भी और जहां भी स्थिति की आवश्यकता होती है, उपयोग करने के लिए उकेरा गया था। **लिटिलवुड्स स्टोर्स बनाम आईआरसी, 1969 (1) डब्ल्यूएलआर 1241** में लॉर्ड डेनिंग में अवधारित किया गया: -

"सॉलोमन के मामले में प्रतिपादित सिद्धांत को अत्यंत सावधानीपूर्वक देखा जाना चाहिए। यह माना गया है कि इस सिद्धांत ने एक सीमित दायित्व वाली कंपनी के व्यक्तित्व पर एक ऐसा आवरण डाल दिया है, जिसके पार न्यायालय नहीं देख सकते। परंतु यह सत्य नहीं है। न्यायालय उस आवरण को हटाने में सक्षम हैं और प्रायः ऐसा करते भी हैं। वे उस मुखौटे को उतार सकते हैं और अक्सर उतारते भी हैं। यही स्थिति समूह लेखों तथा अन्य संबंधित मामलों में भी है। अतः न्यायालयों को भी उसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए....."

136. धोखाधड़ी और अनियमितताओं के उपरोक्त उदाहरणों की घटना के कारण, कानून ने अपने पहले के अपवाद के साथ बदलाव किया है कि कंपनी एक अलग न्यायिक व्यक्तित्व है और कंपनी की देयता निदेशकों की संपत्ति से वसूल नहीं की जा सकती है। समय के साथ, कंपनी के अलग न्यायिक व्यक्तित्व के सिद्धांत में कुछ अपवादों को उकेरा गया है, जिन्हें आगामी प्रस्तर में संदर्भित किया जा रहा है।

137. "कॉर्पोरेट आवरण का भेदन" के सिद्धांत पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रेणुसागर पावर कंपनी के मामले में माना है कि, आधुनिक न्यायशास्त्र के विस्तारित क्षितिज में, कॉर्पोरेट घूँघट को हटाने की न केवल अनुमति है, बल्कि इसकी सीमाएं असीमित हैं और लगातार विस्तारित हो रही हैं। यह भी महत्वपूर्ण रूप से देखा गया कि कॉर्पोरेट घूँघट को उठाना एक बदलती अवधारणा थी और क्षितिज का प्रदर्श करना था।

138. बलवंत राय सलूजा बनाम एयर इंडिया लिमिटेड के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि अदालतों को किसी कंपनी के अलग कानूनी व्यक्तित्व की अवहेलना करने और वास्तव में नियंत्रण में व्यक्ति पर देनदारियां लगाने का अधिकार होगा, कॉर्पोरेट आवरण के भेदन का आवश्यक इरादा कंपनी को नियंत्रित करने वाले व्यक्तियों द्वारा किए गए गलत काम को दूर करने की आवश्यकता से निर्देशित होना चाहिए और उक्त सिद्धांत प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर परीक्षण किया जाना चाहिए।

139. राजस्थान राज्य और अन्य बनाम गोटन लाइम स्टोन खनिज उद्योग प्राइवेट लिमिटेड और अन्य में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार व्यवस्था दी है: -

किसी कंपनी या उसके सदस्यों के विशिष्ट कॉर्पोरेट व्यक्तित्व के अपवाद के रूप में कॉर्पोरेट घूँघट उठाने का सिद्धांत न केवल कर चोरी को उजागर करने के लिए अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त है बल्कि जहां सार्वजनिक हित की सुरक्षा सर्वोपरि है और कॉर्पोरेट इकाई कानूनी दायित्वों से बचने का प्रयास है और कल्याणकारी कानून से बचने के लिए एक उपकरण को रोकने के लिए घूँघट उठाना आवश्यक है[8]। उन मामलों के वर्गों की गणना करना न तो आवश्यक है और न ही वांछनीय है जहां घूँघट उठाने की अनुमति है, क्योंकि यह आवश्यक रूप से प्रासंगिक वैधानिक या अन्य प्रावधानों पर निर्भर होना चाहिए, जिस उद्देश्य को प्राप्त करने की मांग की गई है, आक्षेपित आचरण, सार्वजनिक हित के तत्त्व की भागीदारी, प्रभावित होने वाले पक्षों पर प्रभाव आदि।

140. आर्सेलर मित्तल इंडिया प्राइवेट लिमिटेड बनाम सतीश कुमार गुप्ता और अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की है:

"35. इसी तरह बलवंत राय सलूजा और अन्य आदि बनाम एयर इंडिया लिमिटेड और अन्य, (2014) 9 एस.सी.सी. 407 में, इस न्यायालय ने निम्नलिखित एस्कॉर्ट्स लिमिटेड (उपरोक्त) में अवधारित किया:

"70. "कॉर्पोरेट आवरण का छेदन" का सिद्धांत इस सिद्धांत के अपवाद के रूप में खड़ा है कि एक कंपनी एक कानूनी इकाई है जो अपने स्वयं के कानूनी अधिकारों और दायित्वों के साथ अपने शेयरधारकों से अलग और अलग है। यह कंपनी के अलग व्यक्तित्व की अवहेलना करना चाहता है और कंपनी के कृत्यों का श्रेय उन लोगों को देता है जो कथित तौर पर इसके संचालन के सीधे नियंत्रण में हैं।

141. कॉर्पोरेट व्यक्तित्व के पर्दे को हटाने के सिद्धांत को सुभा मुखर्जी और अन्य बनाम भारत कुकिंग कोल लिमिटेड और अन्य (2003)3 एस.सी.सी. 312 में बरकरार रखा गया है; कलकत्ता क्रोमोटाइप लिमिटेड बनाम कलेक्टर ऑफ सेंट्रल एक्साइज कोलकाता ए.आई.आर. 1998 एस.सी. 1631, न्यू होराइजन लिमिटेड और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य, 1995 (1) एस.सी.सी. 478, सीआईटी बनाम मीनाक्षी मिल्स लिमिटेड मदुरा ए.आई.आर. 1967 एस.सी. 819; टेल्को और अन्य बनाम बिहार राज्य ए.आई.आर. 1965 एस.सी. 40; जुगगीलाल कमलापाल बनाम ए.आई.आर. 1969 एस.सी. 932 को संदर्भित करें।

142. कॉर्पोरेट आवरण का छेदन हमें केवल उस आरोपी तक ले जा सकता है जो साइफनिंग में शामिल है, लेकिन फिर सवाल यह है कि आरोपी पर मुकदमा कैसे चलाया जाए और अवैध रूप से जमा धन वापस कैसे लाया जाए।

मनी लॉन्ड्रिंग

143. धन शोधन निवारण अधिनियम (संक्षेप में 'पी.एम.एल.ए. अधिनियम') 2002 में अधिनियमित किया गया था। तैयार संदर्भ के लिए पी.एम.एल.ए. अधिनियम के अध्याय 1 के खंड 2 के उप-खंड (पी), (यू), (वी), (वाई) और (जेडए) को यहां उद्धृत किया गया है: -

(पी) "मनी लॉन्ड्रिंग" का अर्थ धारा 3 में इसे सौंपा गया है;

(यू) "अपराध की आय" का अर्थ है किसी भी व्यक्ति द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त या प्राप्त की गई कोई भी संपत्ति किसी भी अनुसूचित अपराध या ऐसी किसी भी संपत्ति के मूल्य से संबंधित आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप या जहां ऐसी संपत्ति देश के बाहर ली जाती है या अवधारित की जाती है, तो देश के भीतर या विदेश में अवधारित मूल्य के बराबर संपत्ति;

स्पष्टीकरण - शंकाओं के निवारण के लिए, एतद्वारा यह स्पष्ट किया जाता है कि "अपराध की आय" में न केवल अनुसूचित अपराध से प्राप्त या प्राप्त की गई संपत्ति शामिल है, बल्कि ऐसी संपत्ति भी शामिल है जो अनुसूचित अपराध से संबंधित किसी आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त की जा सकती है।

(व) "संपत्ति" का अर्थ है हर विवरण की कोई संपत्ति या संपत्ति, चाहे वह भौतिक या अमूर्त, चल या अचल, मूर्त या अमूर्त हो और इसमें ऐसी संपत्ति या संपत्ति के लिए शीर्षक या ब्याज का प्रमाण देने वाले कर्म और उपकरण शामिल हैं, जहां भी स्थित है;

स्पष्टीकरण— संदेह के निवारण के लिए, एतद्वारा यह स्पष्ट किया जाता है कि "संपत्ति" शब्द में इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के कमीशन में प्रयुक्त किसी भी प्रकार की संपत्ति या किसी अनुसूचित अपराध को शामिल किया जाता है; (y) "अनुसूचित अपराध" का अर्थ है-

(i) अनुसूची के भाग क के अंतर्गत विनिर्दिष्ट अपराध; नहीं तो

(ii) अनुसूची के भाग ख के अंतर्गत विनिर्दिष्ट अपराध यदि ऐसे अपराधों में शामिल कुल मूल्य एक करोड़ रुपए या उससे अधिक है; नहीं तो

(iii) अनुसूची के भाग ग के अंतर्गत विनिर्दिष्ट अपराध;

(जेडए) "हस्तांतरण" में बिक्री, खरीद, बंधक, प्रतिज्ञा, उपहार, ऋण या अधिकार, शीर्षक, कब्जे या ग्रहणाधिकार के हस्तांतरण का कोई अन्य रूप शामिल है;

144. निम्नलिखित प्रावधानों को अनुसूची के भाग ए, प्रस्तर-1 में शामिल किया गया था।

अनुसूची :-

भारत दंड संहिता के तहत अपराध (45 वर्ष 1860)

अपराध का अनुभाग विवरण

120B आपराधिक साजिश

.....

420 धोखाधड़ी और बेईमानी से संपत्ति की डिलीवरी सहित।

3. मनी लॉन्ड्रिंग का अपराध- जो कोई भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शामिल होने का प्रयास करता है या जानबूझकर सहायता करता है या जानबूझकर एक पक्ष है या वास्तव में अपराध की आय से जुड़ी किसी भी प्रक्रिया या गतिविधि में शामिल है, जिसमें इसे छिपाना, कब्जा, अधिग्रहण या उपयोग करना और इसे बेदाग संपत्ति के रूप में पेश करना या दावा करना शामिल है, वह धन-शोधन के अपराध का दोषी होगा।

स्पष्टीकरण.—शंकाओं के निवारण के लिए, एतद्वारा यह स्पष्ट किया जाता है कि, -

(i) कोई व्यक्ति धन-शोधन के अपराध का दोषी होगा यदि ऐसा व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से लिप्त होने का प्रयास करता है या जानबूझकर सहायता करता है या जानबूझकर एक पक्षकार है या वास्तव में अपराध की आय से जुड़ी निम्नलिखित प्रक्रियाओं या गतिविधियों में से एक या अधिक में शामिल है, अर्थात्: -

(ए) छिपाना; नहीं तो

(बी) कब्जा; नहीं तो

(ग) अधिग्रहण; नहीं तो

- (घ) उपयोग; नहीं तो
 (ङ) अदाग संपत्ति के रूप में प्रस्तुत करना; नहीं तो
 (च) किसी भी तरह से बेदाग संपत्ति के रूप में दावा करना;

(ii) अपराध की आय से जुड़ी प्रक्रिया या कार्यकलाप एक सतत् गतिविधि है और तब तक जारी रहती है जब तक कि कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराध की आय का लाभ उठाकर उसे छिपाकर या कब्जे में लेकर या उसे अदाग संपत्ति के रूप में उपयोग करके या उसे बेदाग संपत्ति के रूप में पेश करके या किसी भी प्रकार से बेदाग संपत्ति के रूप में दावा नहीं कर रहा हो।

145. पी.एम.एल.ए. अधिनियम में संशोधन के बाद धारा 120 बी भ०द०वि० और धारा 420 भ०द०वि० के तहत अपराध को पी.एम.एल.ए. अधिनियम, 2002 के दायरे में शामिल किया गया था और ये अपराध पी.एम.एल.ए. अधिनियम की धारा 2(वाई) के अनुसार एक अनुसूचित अपराध होंगे। चूंकि मैसर्स ए.एस.पी.एल. के निदेशकों/प्रमोटरों के खिलाफ आपराधिक शिकायतें दर्ज की गई थीं, जिसमें धारा 120 बी और 420 भ०द०वि० के तहत आरोप पत्र दायर किया गया है, इसलिए, ये लेनदेन पी.एम.एल.ए. अधिनियम के दायरे में आते हैं और न्यायालय की राय में, उपयुक्त एजेंसी, जो लेनदेन की जांच करने में सक्षम है, प्रवर्तन निदेशालय होगा।

146. आईबी कोड की धारा 32 ए इस प्रकार है: -

"32 ए. पूर्व अपराधों के लिए दायित्व, आदि- (1) इस संहिता या तत्समय लागू किसी अन्य कानून में निहित विपरीत किसी भी बात के होते हुए, कॉर्पोरेट दिवालिया समाधान प्रक्रिया शुरू होने से पहले किए गए अपराध के लिए कॉर्पोरेट देनदार की देयता समाप्त हो जाएगी, और कॉर्पोरेट देनदार पर धारा 31 के तहत निर्णायक प्राधिकरण द्वारा समाधान योजना को अनुमोदित करने की तारीख से ऐसे अपराध के लिए मुकदमा नहीं चलाया जाएगा, यदि समाधान योजना के परिणामस्वरूप कॉर्पोरेट देनदार के प्रबंधन या नियंत्रण में परिवर्तन होता है, तो एक ऐसे व्यक्ति के लिए जो नहीं था-

(ए) एक प्रमोटर या कॉर्पोरेट देनदार या ऐसे व्यक्ति से संबंधित पक्ष के प्रबंधन या नियंत्रण में; नहीं तो

(ख) कोई व्यक्ति जिसके संबंध में संबंधित अन्वेषण प्राधिकारी के पास अपने कब्जे में मौजूद सामग्री के आधार पर यह मानने का कारण है कि उसने अपराध करने के लिए उकसाया था या षड्यंत्र रचा था, और उसने संबंधित सांविधिक प्राधिकारी या न्यायालय को रिपोर्ट या शिकायत प्रस्तुत की है या दायर की है:

बशर्ते कि यदि ऐसे कॉर्पोरेट देनदार के खिलाफ कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया के दौरान एक अभियोजन स्थापित किया गया था, तो यह इस उप-धारा की आवश्यकताओं को पूरा करने के अधीन समाधान योजना के अनुमोदन की तारीख से मुक्त हो जाएगा:

बशर्ते कि प्रत्येक व्यक्ति जो सीमित देयता भागीदारी अधिनियम, 2008 (6 वर्ष 2009) की धारा 2 के खंड (जे) में परिभाषित "नामित भागीदार" था, या एक "अधिकारी जो डिफॉल्ट में है", जैसा कि कंपनी अधिनियम, 2013 (18 वर्ष 2013) की धारा 2 के खंड (60) में परिभाषित किया गया है, या किसी भी तरह से प्रभारी था, या अपने व्यवसाय के संचालन के लिए कॉर्पोरेट देनदार के प्रति जिम्मेदार या किसी भी तरह से कॉर्पोरेट देनदार सम्बद्ध और जो जांच प्राधिकारी द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट या शिकायत के अनुसार इस तरह के अपराध के कमीशन में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शामिल था, कॉर्पोरेट देनदार द्वारा किए गए ऐसे अपराध के लिए मुकदमा चलाने और दंडित होने के लिए उत्तरदायी रहेगा,भले ही इसके तहत कॉर्पोरेट देनदार की देयता समाप्त हो गई हो।

147. आई.बी.सी. की धारा 32 ए को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मनीष कुमार बनाम भारत संघ 29 में बरकरार रखा गया है। इस न्यायालय ने माना है कि उक्त धारा गलत काम करने वाले को भागने की अनुमति नहीं देती है। इस प्रकार, यदि समाधान योजना के अनुमोदन के बाद हस्ताक्षरकर्ता/निदेशक को स्कॉट-फ्री होने की अनुमति देने का तर्क स्वीकार कर लिया जाता है, तो यह धारा 32A के विधायी इरादे के विपरीत होगा, जिसे इस न्यायालय द्वारा निम्नानुसार बरकरार रखा गया है:

"326. हमारा स्पष्ट विचार है कि धारा 32-ए को अमान्य करने की मांग करने के लिए कोई भी मामला नहीं बनाया गया है। इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की सीमाएँ स्पष्ट हैं। कानून का ज्ञान न्यायिक समीक्षा के लिए खुला नहीं है। संहिता के उद्देश्य, संहिता के कामकाज के अनुभव, सभी हितधारकों के हितों को ध्यान में रखते हुए, जिसमें सबसे महत्वपूर्ण समाधान आवेदकों को आकर्षित करने की अनिवार्य आवश्यकता शामिल है, जो समाधान योजना के हिस्से के रूप में उचित और उचित मूल्य की पेशकश करने से नहीं कतराते हैं यदि विधायिका को लगता है कि कॉर्पोरेट देनदार के साथ-साथ उसकी संपत्ति को भी प्रतिरक्षा प्रदान की जानी चाहिए। यह इस न्यायालय के लिए हस्तक्षेप करने के लिए शायद ही कोई आधार प्रस्तुत करता है। प्रावधान पर सावधानीपूर्वक विचार किया गया है। ऐसा नहीं है कि गलत काम करने वालों को भागने दिया जाए। वे उत्तरदायी बने हुए हैं। कॉर्पोरेट देनदार की आपराधिक देयता को बुझाना स्पष्ट रूप से नए प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण है ताकि वह अतीत से एक साफ रिश्ता तोड़ सके और एक साफ स्लेट पर काम शुरू कर सके। हमें इस सिद्धांत को भी नजरअंदाज नहीं करना चाहिए कि आक्षेपित प्रावधान एक आर्थिक उपाय का हिस्सा है। अदालतें उचित रूप से ऐसे कानूनों को नहीं ठहराती हैं, लेकिन प्रस्तुत मामले में भी लागू नहीं हो सकती हैं। यह प्रावधान सी.आई.आर.पी. के शुरू होने से पहले किए गए अपराधों के संदर्भ से संबंधित है। आवेदन के प्रवेश के साथ, कॉर्पोरेट देनदार का प्रबंधन अंतरिम समाधान पेशेवर के हाथों में चला जाता है और उसके बाद समाधान पेशेवर के हाथों में चला जाता है, जो निस्संदेह लेनदारों की समिति द्वारा नियंत्रण के अधीन होता है। जहां तक संपत्ति को दी जाने वाली सुरक्षा का सवाल है, इसके पीछे स्पष्ट रूप से एक तर्क है। कानून के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, हम शायद ही प्रावधान में कोई स्पष्ट मनमानी देखते हैं।

148. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अजय कुमार राधेश्याम गोयनका बनाम ट्रिज्म फाइनेंस कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (उपरोक्त) (आपराधिक अपील संख्या-170 वर्ष 2023) के मामले में माना है कि दिवाला

दिवालियापन संहिता में एक संशोधन द्वारा एक धारा पेश की गई है जो कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू होने से पहले कॉर्पोरेट देनदार के निदेशकों द्वारा किए गए अपराधों के दायित्व पर केंद्रित है। न्यायालय ने आगे कहा कि प्रत्येक व्यक्ति जो किसी भी तरह से अपने व्यवसाय के संचालन के लिए कॉर्पोरेट देनदार का प्रभारी या जिम्मेदार था या किसी भी तरह से कॉर्पोरेट देनदार से जुड़ा था और जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस तरह के अपराध के कमीशन में शामिल था, उसके साथ कानून के अनुसार कार्रवाई की जाएगी। यह केवल कॉर्पोरेट देनदार कंपनी (नए प्रबंधन के साथ) को सुरक्षित किया जाएगा।

149. यह स्पष्ट है कि प्रमोटरों/पूर्ववर्ती प्रबंधन ने घर खरीदारों, नोएडा प्राधिकरण और राज्य के साथ धोखाधड़ी की है। यदि यह राशि जो अवैध रूप से अन्य कंपनियों में जमा की गई है/निवेश की गई है, उसे वापस लाया जाता है तो अधिकांश लेनदारों को भुगतान कर दिया जाएगा, लेकिन दुर्भाग्य से नोएडा प्राधिकरण के लिए बरामदगी करना मुश्किल होगा, और उस धन को वापस प्राप्त करना मुश्किल होगा जो याचिकाकर्ता संख्या-1 से पहले ही चुस्त हो चुका है। कॉर्पोरेट पर्दे को भेदने के बाद, यह स्पष्ट हो जाएगा कि किसी भी नागरिक या आपराधिक देनदारियों से बचने के लिए, और घर खरीदारों को धोखा देने और नोएडा प्राधिकरण के बकाया भुगतान से बचने के एकमात्र इरादे से धन की हेराफेरी और हितधारकों को धोखा देने के इस कार्य में निदेशक/प्रमुख कर्मियों के रूप में कौन जिम्मेदार थे।

150. यदि हम आंखें बंद रखते हैं और प्रमोटरों को सभी को धोखा देने और कंपनी से धन की हेराफेरी करने के बाद मुक्त होने की अनुमति देते हैं, तो हम अपने संवैधानिक दायित्व का निर्वहन करने में विफल रहेंगे।

II-पोस्ट इन्सॉल्वेंसी

151. दिवाला स्वीकार किए जाने के बाद, आई.आर.पी. की नियुक्ति की गई, सी.ओ.सी. का गठन किया गया और निर्णय प्राधिकरण द्वारा समाधान योजना को मंजूरी दी गई, जिसमें विद्वान एन.सी.एल.टी./एन.सी.एल.ए.टी. को दिनांक 19.07.2023 के आदेश के माध्यम से मंजूरी दी गई थी और यह देनदार/कंपनी के पुनरुद्धार के लिए अन्य सभी हितधारकों के लिए बाध्यकारी था। इस आदेश को नोएडा प्राधिकरण द्वारा एन.सी.एल.ए.टी. के समक्ष चुनौती दी गई थी और एन.सी.एल.ए.टी. ने 25.07.2021 को निर्देश दिया था कि सफल समाधान आवेदक समाधान योजना को जारी रख सकता है।

152. समाधान योजना के कार्यान्वयन के लिए याचिकाकर्ता संख्या-2 ने मानचित्र के पुनर्सत्यापन के लिए एक आवेदन किया, लेकिन इसे दिनांक 01.11.2023 के आदेश द्वारा इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि मैसर्स ए.एस.पी.एल. ने निर्धारित समय के भीतर खेल सुविधाओं के अपने हिस्से का निर्माण नहीं किया है। इसलिए, मानचित्र का पुनः सत्यापन नहीं किया जा सकता है।

153. इस आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ताओं ने प्रस्तुत रिट याचिका दायर की है, जिसमें बोर्ड के 08.10.2021 के फैसले और 01.11.2023 के आदेश को रद्द करने की परमादेश मांगी गई है, जिसके द्वारा

2.इला मैसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य 295
मानचित्र के पुनर्सत्यापन को खारिज कर दिया गया था और आगे समाधान योजना का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए एक परमादेश की मांग की गई थी, जिसके लिए मानचित्र का पुनर्मूल्यांकन आवश्यक था।

154. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **इनोवेटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आई.सी.आई.सी.आई. बैंक 30** के मामले में माना है कि, एक समाधान आवेदक को सूचना ज़ापन के आधार पर एक समाधान योजना तैयार करनी होगी, जिसे सूचना और प्रसारण संहिता की धारा 29 के अनुसार तैयार किया जाना आवश्यक है।

155. समाधान योजना को अनुमोदित करने की आवश्यकता है और उसके बाद और उसके बाद यह कॉर्पोरेट देनदार के साथ-साथ उसके कर्मचारियों, सदस्यों, लेनदारों और समाधान योजना में शामिल अन्य हितधारकों पर बाध्यकारी है।

156. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **घनश्याम मिश्रा एंड संस प्राइवेट लिमिटेड के मामले में प्राधिकृत हस्ताक्षरकर्ता बनाम एडलवेस एसेट रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड के माध्यम से निदेशक और अन्य के माध्यम से निम्नानुसार निर्णय दिया है: -**

102.1 एक बार जब एक समाधान योजना धारा 31 की उप-धारा (1) के तहत निर्णायक प्राधिकरण द्वारा विधिवत अनुमोदित हो जाती है, तो समाधान योजना में प्रदान किए गए दावे फ्रीज हो जाएंगे और कॉर्पोरेट देनदार और उसके कर्मचारियों, सदस्यों, लेनदारों, केंद्र सरकार, किसी भी राज्य सरकार या किसी भी स्थानीय प्राधिकरण, गारंटर्स और अन्य हितधारकों सहित बाध्यकारी होंगे। निर्णायक प्राधिकरण द्वारा समाधान योजना के अनुमोदन की तारीख पर, ऐसे सभी दावे, जो समाधान योजना का हिस्सा नहीं हैं, समाप्त हो जाएंगे और कोई भी व्यक्ति किसी दावे के संबंध में कोई कार्यवाही शुरू करने या जारी रखने का हकदार नहीं होगा, जो समाधान योजना का हिस्सा नहीं है;

157. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मल्टीपल एसेट इन्वेस्टमेंट ट्रस्ट विजन इंडिया फंड बनाम डेक्कन क्रॉनिकल मार्केटर्स एंड अन्य (सिविल अपील संख्या-1706 वर्ष 2023)32** के मामले में माना है कि एक बार समाधान योजना स्वीकृत हो जाने के बाद, कोई परिवर्तन/संशोधन की अनुमति नहीं है। इसे या तो अनुमोदित या अस्वीकृत किया जाना है, लेकिन सी.ओ.सी. द्वारा समाधान योजना के अनुमोदन के बाद कोई भी संशोधन, अपने वाणिज्यिक ज्ञान के आधार पर, न्यायिक समीक्षा के लिए खुला नहीं है, जब तक कि यह आई.बी.सी. संहिता के जनादेश के अनुरूप नहीं पाया जाता है।

158. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपर्युक्त निर्देश उन मामलों में हैं जहां दिवालियापन एक वास्तविक दिवालियापन है और आई.आर.पी. नियुक्त किया जाता है, जो एक समाधान योजना बनाता है, जिसे एक बार मंजूरी मिलने के बाद लागू किया जाना होता है। हालांकि, उपर्युक्त मामलों को उन मामलों से निपटने के लिए अनुपात पारित करते समय मौका नहीं मिला, जहां दिवाला कार्यवाही कॉर्पोरेट देनदार द्वारा शुरू की गई

अवास्तविक कार्यवाही थी, ताकि धन को बाहर निकालने के बाद नागरिक और आपराधिक देनदारियों से बचा जा सके।

धोखाधड़ी

159. विशेष रूप से दिवाला मामले में कॉर्पोरेट धोखाधड़ी तब होती है जब कंपनी के भीतर या उससे जुड़े प्रबंधन/व्यक्ति अवैध प्रथाओं में लगे होते हैं या अपने प्रत्ययी कर्तव्य को पूरा करने में विफल रहते हैं, जो अंततः दिवालियापन की ओर ले जाता है और ऐसे मामले में लेनदारों और उपभोक्ताओं सहित इस तरह की धोखाधड़ी से प्रभावित हितधारक इस तरह की धोखाधड़ी का शिकार हो जाते हैं। इस मुद्दे के समाधान के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। यह प्रथा विशेष रूप से रियल एस्टेट बिल्डरों के साथ बढ़ रही है, जो घर खरीदारों से पैसा इकट्ठा करने के बाद नोएडा प्राधिकरण या लेनदार के बकाया का भुगतान नहीं करना पसंद करते हैं और धन की हेराफेरी के बाद, कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग करते हैं, और आईबी कोड, 2016 का अनुचित लाभ उठाते हुए, कंपनी को दिवालिया होने की ओर धकेल देते हैं।

160. **फ़ाउस ओम्निया विटियाट- धोखाधड़ी सब कुछ खराब करती है** - कॉर्पोरेट धोखाधड़ी, जिसमें कदाचार, वित्तीय कर्तव्य का उल्लंघन, वित्तीय हेराफेरी, संपत्ति का विपथन, धन की हेराफेरी और सरकारी विफलता शामिल है, जिसके परिणामस्वरूप कंपनी में शॉर्ट्स कहने वाले लोगों को अनुचित लाभ और अवैध लाभ होता है, कॉर्पोरेट धोखाधड़ी के दायरे में आएगा।

161. उदगार गगन प्रॉपर्टीज लिमिटेड बनाम संत सिंह और अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत याचिका सुनवाई योग्य है क्योंकि यह विवेक के ठोस और उचित प्रयोग पर आधारित अभ्यास का एक नियम है। न्यायालय धोखाधड़ी या कानून की प्रक्रिया के दुरुपयोग के आधार पर किसी अवैध कार्यवाई को रद्द कर सकता है। (संदर्भ: **34 महाराष्ट्र राज्य और अन्य द्वारा मधुकर सद्भाव शिवारकर**)

162. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मेसर्स एम्बेसी प्रॉपर्टी डेवलपमेंट प्राइवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य** के मामले में माना है कि हालांकि राष्ट्रीय कंपनी कानून न्यायाधिकरण और राष्ट्रीय कंपनी कानून अपीलीय न्यायाधिकरण धोखाधड़ी वाले दावों को देख सकते हैं, लेकिन उन्हें सार्वजनिक कानून से संबंधित मामलों पर निर्णय लेने की अनुमति नहीं है या जिसमें अर्ध न्यायिक अधिकारियों द्वारा किया गया निर्णय शामिल है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्रकार व्यवस्था दी है:-

"50. इस संबंध में अपीलकर्ताओं की प्रतिवाद अच्छी तरह से स्थापित है। धारा 65 विशेष रूप से धोखाधड़ी या दुर्भावनापूर्ण कार्यवाही शुरू करने से संबंधित है। यह इस प्रकार है:

"65. कार्यवाही की धोखाधड़ी या दुर्भावनापूर्ण शुरुआत - (1) यदि, कोई व्यक्ति दिवालियापन या परिसमापन के समाधान के अलावा किसी अन्य प्रयोजन के लिए धोखाधड़ी से या दुर्भावनापूर्ण इरादे से दिवाला समाधान प्रक्रिया

या परिसमापन कार्यवाही शुरू करता है, जैसा भी मामला हो, तो निर्णायक प्राधिकारी ऐसे व्यक्ति पर जुर्माना लगा सकेगा जो एक लाख रुपये से कम नहीं होगा, लेकिन एक करोड़ रुपये तक बढ़ सकता है।

(2) यदि कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति को धोखा देने के इरादे से स्वैच्छिक परिसमापन की कार्यवाही शुरू करता है, तो न्यायनिर्णयन प्राधिकारी ऐसे व्यक्ति पर एक लाख रुपये से कम नहीं बल्कि एक करोड़ रुपये तक का जुर्माना लगा सकेगा।

51. यहां तक कि दिवाला समाधान के दौरान कॉर्पोरेट देनदार द्वारा किए गए धोखाधड़ी वाले ट्रेडों की भी धारा 66 के तहत निर्णायक प्राधिकरण द्वारा जांच की जा सकती है। धारा 69 के तहत कॉर्पोरेट देनदार के एक अधिकारी और कॉर्पोरेट देनदार को लेनदारों को धोखा देने के उद्देश्य से लेनदेन करने के लिए सजा का उत्तरदायी बनाया गया है। इसलिए, एन.सी.एल.टी. को (i) धोखाधड़ी से कार्यवाही शुरू करने के साथ-साथ (ii) धोखाधड़ी वाले लेनदेन की जांच करने की शक्ति निहित है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि धारा 65(1) ऐसी स्थिति से संबंधित है जहां सी.आई.आर.पी. को "दिवालियापन या परिसमापन के समाधान के अलावा किसी अन्य उद्देश्य के लिए" धोखाधड़ी से शुरू किया जाता है।

52. इसलिए, यदि, जैसा कि कर्नाटक सरकार द्वारा तर्क दिया गया है, सी.आई.आर.पी. को अलग-अलग अवतार लेने वाले एक ही व्यक्ति द्वारा शुरू किया गया था, दिवालियापन या परिसमापन के समाधान के वास्तविक उद्देश्य के लिए नहीं, बल्कि खदान और खनन पट्टे को घेरने के संपार्श्विक उद्देश्य के लिए, यह धारा 65(1) द्वारा संबोधित शरारत के भीतर पूरी तरह से आएगा। इसलिए, यह स्पष्ट है कि एन.सी.एल.टी. के पास धोखाधड़ी के आरोपों की जांच करने का अधिकार है। परिणाम के रूप में, एन.सी.एल.टी. के पास भी अधिकार क्षेत्र होगा। इसलिए, सी.आई.आर.पी. की धोखाधड़ी से शुरू करना धारा 61 में प्रदान की गई अपील के वैकल्पिक उपाय को दरकिनार करने का आधार नहीं हो सकता है।

163. श्री पी. रामनाथ अय्यर द्वारा लॉ लेक्सिकॉन, दूसरा संस्करण (पुनर्मुद्रण) 2001 में, इस बात पर जोर दिया गया है कि 'अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग आम तौर पर ईमानदारी से आगे बढ़ने पर लागू होता है और यह तुच्छ, कष्टप्रद या दमनकारी होता है जिसमें कोई व्यक्ति अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग करता है। इस तरह की कार्यवाही धोखाधड़ी के दायरे में आएगी। माननीय उच्चतम न्यायालय ने कई मामलों में कहा है कि धोखाधड़ी से सभी कार्यवाही दूषित हो जाती है।

164. इस मामले में, कुछ घर खरीदार याचिकाकर्ता को एन.सी.एल.टी. ले गए हैं, जिसमें याचिकाकर्ता कंपनी के पूर्व निदेशकों ने रिवर्स सी.आई.आर.पी. को अपनाने का विकल्प चुना और उनकी सिफारिश के आधार पर, विद्वान एन.सी.एल.टी. ने रिवर्स सी.आई.आर.पी. की अनुमति दी और आई.आर.पी. को परियोजना को पूरा करने का निर्देश दिया, जिसने बदले में नक्शे के पुनर्मूल्यांकन के लिए नोएडा को लिखा।

165. धोखाधड़ी का इरादा परियोजना की शुरुआत से ही स्पष्ट था। खेल सुविधा को पूरा करने की कोई इच्छा नहीं थी। न ही वे गंभीर डेवलपर थे। वास्तव में, मूल आवंटियों को अब तस्वीर में कहीं नहीं दिखाया गया है। आवंटियों ने पूरे स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट को उप-विभाजित कर दिया था और छोटे बिल्डरों को स्थानांतरित कर दिया था/बेच दिया था, जो परियोजना की बोली प्रक्रिया में भाग लेने के लिए भी योग्य नहीं थे। आवंटन के समय, मूल आवंटियों ने आवंटन प्राप्त करने के लिए प्रीमियम का न्यूनतम 10% भुगतान किया था और फिर नक्शा स्वीकृत करवाया था और परियोजना को पूरा करने के बिना घर खरीदारों से भारी राशि एकत्र करना शुरू कर दिया था। उन्होंने भूमि प्रीमियम की किस्तों का भुगतान नहीं करने का फैसला किया और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारी, जो धोखाधड़ी में मिलीभगत कर रहे थे, ने अपनी आँखें बंद रखी और बिल्डरों को किस्तों का भुगतान किए बिना घर खरीदारों से अधिक पैसे एकत्र करने की अनुमति दी। नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों द्वारा एक लंबी रस्सी दी गई थी, ताकि उन्हें घर खरीदारों को धोखा देने और अधिक धन इकट्ठा करने के लिए अधिक समय मिल सके और फिर कंपनी को दिवालिया होने में धकेल दिया जा सके।

घर खरीदारों के हित

166. जहां तक घर खरीदारों का सवाल है, वे सबसे बुरी तरह प्रभावित व्यक्ति हैं, उन्होंने अपनी जीवन भर की बचत का निवेश करके अपने फ्लैट बुक किए थे/या इस सपने के साथ बैंक ऋण लिया था कि एक दिन, उनके सिर पर छत होगी। चूंकि नक्शे को नोएडा प्राधिकरण द्वारा विधिवत अनुमोदित किया गया था, इसलिए उनके पास किसी बेईमानी का संदेह करने का कोई कारण नहीं था और वे जाल में फंस गए। फ्लैट की पूरी लागत का भुगतान करने के बाद, पूर्णता और बैंक योग्य स्वामित्व अभी भी एक मृगतृष्णा है। उनमें से अधिकांश के पास मामलों को लड़ने की क्षमता या वित्तीय सहायता नहीं है। इसके अलावा, यहां मुद्दे बहुत गड़बड़ हैं, जिन्हें सुलझाने की उन्हें बहुत कम उम्मीद है।

167. नियोजित और व्यवस्थित विकास सुनिश्चित करने के लिए नोएडा प्राधिकरण/विकास प्राधिकरणों का वैधानिक कर्तव्य है। इसमें रियल एस्टेट परियोजनाओं की प्रगति की निगरानी करना और उन्हें समय पर पूरा करना सुनिश्चित करना वैधानिक कर्तव्य शामिल है।

168. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **भूपिंदर सिंह बनाम यूनिटेक लिमिटेड (सिविल अपील संख्या-10856 वर्ष 2016)** के मामले में 26.04.2024 को निर्णय दिया है कि:-

“9.... यह घर खरीदारों के लिए सबसे अनुचित है। लेआउट योजनाओं और भवन योजनाओं को मंजूरी देने के अभाव में, यूनिटेक के घर खरीदारों की जरूरतों को पूरा करने के लिए निर्माण शुरू नहीं हो सकता है। यह न्यायालय चार वर्षों से अधिक समय से यूनिटेक के घर खरीदारों से संबंधित पूरे मुद्दे की निगरानी कर रहा है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि घर खरीदार, जिन्होंने इस उम्मीद में धन का निवेश किया है कि उन्हें निकट भविष्य में खरीदे गए फ्लैट मिलेंगे, उन्हें अधर में नहीं छोड़ा जाए। दुर्भाग्य से, नोएडा और ग्रेटर नोएडा

दोनों और उनके अधिकारियों ने इस प्रक्रिया को पत्थर की दीवार बना दिया है। वे अपना सहयोग देने में विफल रहे हैं।

10. इस न्यायालय के आदेशों के उत्तराधिकार के बावजूद, ऐसा प्रतीत होता है कि कोई समाधान नहीं मिला है। जब तक न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करता, इस स्तर पर, मामला अधर में लटका रहेगा और एक वास्तविक खतरा है कि घर खरीदार निराशा की भावना से सभी रुचि खो देंगे। घर खरीदारों ने खरीदे गए फ्लैटों के प्रति वित्तीय देनदारियां उठाई हैं और यह सार्वजनिक हित का मामला है कि उनकी चिंताओं को उचित रूप से संरक्षित किया जाना चाहिए।

169. यह एक अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि घर खरीदारों के हित को प्राथमिकता दी जानी चाहिए (बिक्रम चटर्जी (उपरोक्त) के फैसले में निर्धारित कानून के अनुसार, नोएडा प्राधिकरण इस फैसले से अच्छी तरह वाकिफ था, लेकिन फिर भी उसने घर खरीदारों के हितों की रक्षा के लिए कोई कार्रवाई नहीं की।

170. घर खरीदारों के हित को भी मान्यता दी गई है और इसे दिवाला कानून समिति 2018 की सिफारिशों के अनुरूप बनाया गया है, इसे बाद में दिवाला और दिवालियापन (संशोधन), 2018 के साथ संहिताबद्ध किया गया था, जिसमें प्रावधान किया गया था कि असफल अचल संपत्ति परियोजना के लिए गारंटीकृत अचल संपत्ति आवंटियों के वित्त का ऋण के समान व्यावसायिक प्रभाव होगा।

171. वास्तव में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय का भी जे.पी. ऑर्चर्ड रेजिडेंट वेलफेयर सोसाइटी बनाम भारत संघ और अन्य (रिट याचिका (सिविल) संख्या-854/2017) के मामले में भी यही विचार था, जिसमें उन्होंने कहा था कि, वे घर खरीदारों के हितों की रक्षा के लिए अपनी शक्ति में सब कुछ करने का प्रयास करेंगे।

172. इसके अलावा, चित्रा शर्मा बनाम भारत संघ में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने जेपी इंफ्राटेक लिमिटेड द्वारा शुरू की गई परियोजना में घर खरीदारों के हितों की रक्षा की और सी.ओ.सी. को दिवाला और दिवालियापन (संशोधन) अध्यादेश, 2018 के प्रावधानों के अनुसार नए सिरे से गठित करने का निर्देश दिया।

173. आवंटियों को वित्तीय लेनदारों के रूप में शामिल करने की संवैधानिक वैधता का परीक्षण पायनियर अर्बन लैंड एंड इंफ्रास्ट्रक्चर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया के मामले में किया गया था, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने चुनौती को खारिज कर दिया और दिवाला और दिवालियापन (संशोधन) अध्यादेश, 2018 को बरकरार रखा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा कि रियल एस्टेट कंपनी में दिवालियापन के मामले में आवंटियों के हितों की रक्षा की जानी चाहिए।

174. इस मामले में, नोएडा प्राधिकरण को घर खरीदार को दंडित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है क्योंकि खेल शहर की वर्तमान स्थिति वैधानिक कर्तव्य की अवहेलना और निर्माण प्रगति की निगरानी करने में

प्राधिकरण की विफलता के कारण है; चूककर्ता बिल्डरों के विरुद्ध समय पर कार्रवाई करना, परियोजना की समय-सीमा को पूरा करना लागू करना। नोएडा प्राधिकरण की विफलता का परिणाम घर खरीदारों पर नहीं डाला जा सकता है।

उच्च न्यायालय का हस्तक्षेप

175. प्रारंभ में, यह समझ थी कि न्यायालय को एन.सी.एल.टी. के आदेशों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आई.बी.सी., 2016 अपने आप में एक संपूर्ण संहिता है। आई.बी.सी. की धारा 231 उन मामलों के संबंध में हस्तक्षेप करने के लिए सिविल अदालत के अधिकार क्षेत्र को रोकती है, जिनसे निपटने के लिए एन.सी.एल.टी./एन.सी.एल.ए.टी. को अधिकार प्राप्त हैं।

176. जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मैसर्स इनोवेंटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आई.सी.आई.सी.आई. बैंक 38** में देखा है, यह कॉर्पोरेट संस्थाओं और अन्य के संबंध में दिवालियापन के विषय-वस्तु पर एक विस्तृत संहिता है। यह भी सच है कि आई.बी.सी., 2016 एक एकल एकीकृत अम्ब्रेला कोड है और बाद में एन.सी.एल.टी. के आदेश के खिलाफ रिट याचिका पर विचार करने में उच्च न्यायालय के कार्य पर सवाल उठाए जा रहे थे।

177. मैसर्स एम्बेसी प्रॉपर्टीज डेवलपमेंट्स प्राइवेट लिमिटेड (उपरोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि एन.सी.एल.टी. के पास सार्वजनिक कानून के दायरे में आने वाले मामलों के संबंध में निर्देश जारी करने का अधिकार क्षेत्र नहीं है, जिसमें एन.सी.एल.टी. ने सरकार को कॉर्पोरेट देनदार के पक्ष में पट्टा विलेख के पूरक/प्रदर्श को निष्पादित करने का निर्देश दिया था। चूंकि पट्टा विलेख का निष्पादन सार्वजनिक कानून के दायरे में था और इसलिए, एन.सी.एल.टी. के अधिकार क्षेत्र में नहीं आता है। एन.सी.एल.टी. एक वरिष्ठ न्यायालय नहीं होने के कारण न्यायिक समीक्षा की शक्ति के साथ निहित नहीं है। सार्वजनिक कानून के दावों के निर्णय के लिए उचित मंच उच्च न्यायालय का रिट क्षेत्राधिकार है।

178. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालयों को प्रदत्त शक्ति पूर्ण है। इस क्षेत्राधिकार का प्रयोग बिना किसी विशिष्ट चुनौती के किया जा सकता है। उच्च न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत पर्याप्त न्याय करने के लिए राहत को ढालने की शक्तियां प्रदान की गई हैं।

179. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित अनुपात को देखते हुए यह स्पष्ट है कि एन.सी.एल.टी. के पास मानचित्र को फिर से मान्य करने के लिए नोएडा प्राधिकरण को निर्देश जारी करने की शक्ति नहीं है। यह शक्ति केवल भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत माननीय सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के पास है।

180. मैसर्स इनोवेंटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आई.सी.आई.सी.आई. बैंक (उपरोक्त) के मामले में, इस अपील के मुद्दों में से एक यह था कि क्या कंपनी के निदेशक की अपील, जो अब एन.सी.एल.टी. के समक्ष दायर प्रबंधन में नहीं हैं, एक अंतरिम समाधान पेशेवर की नियुक्ति के बाद बनाए रखने योग्य है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि एक बार जब कंपनी का प्रबंधन करने के लिए एक दिवालिया पेशेवर नियुक्त किया जाता है, तो पूर्व निदेशक, जो अब कंपनी में नहीं था, कंपनी की ओर से अपील को बनाए नहीं रख सकता है। इसलिए, कंपनी के पूर्व निदेशकों द्वारा दायर अपील पर न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश, जिसमें उन्होंने रिवर्स इनसॉल्वेंसी की योजना दी थी, विचार योग्य नहीं था। यहां तक कि अगर एक रिवर्स इनसॉल्वेंसी मैकेनिज्म शुरू किया जाना था, तो इसे आई.आर.पी. के माध्यम से दायर किया जाना था।

181. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने घनश्याम मिश्रा एंड संस प्राइवेट लिमिटेड के मामले में अधिकृत हस्ताक्षरकर्ता बनाम एडलवाइस एसेट रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड के माध्यम से निदेशक और अन्य के माध्यम से माना है कि विधायिका ने सी.ओ.सी. के वाणिज्यिक ज्ञान को सर्वोपरि महत्व दिया है और निर्णायक प्राधिकरण द्वारा न्यायिक समीक्षा का दायरा आईबी संहिता की धारा 31 के तहत प्रदान की गई सीमा तक सीमित है। हालांकि, यह मुद्दों को देखने के लिए उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को प्रतिबंधित नहीं करता है। इस मामले में सी.ओ.सी. ने रिवर्स इनसॉल्वेंसी में कोई प्रस्ताव पारित नहीं किया है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि हाईन्यायालय इस तरह के मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है।

182. घनश्याम मिश्रा (उपरोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित अनुपात मौजूदा मामले में लागू नहीं होगा क्योंकि इस मामले में शुरू की गई दिवालिया कार्यवाही एक इंजीनियर कार्यवाही थी और पूरी कार्यवाही धोखाधड़ी के परिणाम के अलावा और कुछ नहीं थी।

समाप्ति / निष्कर्ष

183. प्रस्तुत रिट याचिका विशिष्ट प्रार्थना के साथ दायर की गयी है, लेकिन मामले के गुण-दोष में जाने के दौरान, न्यायालय ने महसूस किया कि याचिकाकर्ता कंपनी के पूर्व प्रबंधन द्वारा धोखाधड़ी की गई है। न्यायालय को कानूनी प्रावधानों की अवैधता और दुरुपयोग को ठीक करने और न्याय के हितों की रक्षा करने के लिए हस्तक्षेप करने के लिए यह एक उपयुक्त मामला लगता है, खासकर जब न्यायालय को पता चलता है कि संपूर्ण रिवर्स सी.आई.आर.पी. तंत्र कानून की प्रक्रिया का घोर दुरुपयोग और हितधारकों और न्यायाधिकरण पर हो रही धोखाधड़ी के अलावा और कुछ नहीं है।

कंसोर्टियम पर प्रभाव जब कंसोर्टियम का कोई सदस्य दिवालियापन में चला जाता है:

184. जहां तक एक संघ के सदस्य के दिवालियापन का संबंध है, पक्षगण द्वारा हमारे सामने कोई अधिकार नहीं रखा गया है। हम पाते हैं कि इससे संबंधित कोई महत्वपूर्ण विकास नहीं हुआ है, जो ऐसी स्थितियों में मार्गदर्शन प्रदान कर सके। इस प्रकार प्रस्तुत मामला एक बहुत ही रोचक, और उपन्यास, कानूनी प्रश्न प्रस्तुत करता है।

185. जब कंसोर्टियम का कोई सदस्य दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता, 2016 के तहत दिवालिया हो जाता है तो कंसोर्टियम पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

186. हम इस मामले में दिशानिर्देश पारित करने के लिए विवश हैं क्योंकि दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता, 2016 अन्य कंसोर्टियम सदस्यों के अधिकारों के बारे में चुप है, यदि सदस्यों में से एक दिवालिया हो जाता है। चूंकि कंसोर्टियम की कंपनियां मेगा परियोजनाओं के विकास में आवेदन करती हैं और यदि यह शून्य नहीं भरा जाता है, तो यहां तक कि सॉल्वेंट कंपनियां, जो कंसोर्टियम के सदस्य हैं, को कंसोर्टियम के सदस्यों में से एक के दिवालिया होने के कारण दिवालिया हो सकता है। चूंकि दिवालिया होने वाला सदस्य परियोजना के अपने हिस्से को पूरा करने में सक्षम नहीं होगा और परियोजना के पूरा न होने से निश्चित रूप से अन्य कंपनियों पर प्रभाव पड़ेगा, जो कंसोर्टियम के सदस्य हैं। आईबी कोड, 2016 का उद्देश्य एक विलायक कंपनी को दिवालिया होने की स्थिति में खींचना नहीं है।

187. यदि किसी कंसोर्टियम का सदस्य दिवालिया हो जाता है तो परियोजना और अन्य हितधारकों के हित में, विद्वान एन.सी.एल.टी. यांत्रिक तरीके से दिवाला कार्यवाही शुरू नहीं कर सकता है, लेकिन निम्नलिखित दिशानिर्देशों का पालन करने पर विचार कर सकता है: -

"(ए) पहले उपाय के एक उपाय के रूप में, आई.आर.पी. कंपनी और प्राधिकरण को उस कंसोर्टियम को दिए गए अनुबंध में अपने कार्यों/दायित्वों को पूरा करने के लिए कंपनी की इच्छा की तलाश करने के लिए सूचित करेगा, जिसका उक्त कंपनी एक सदस्य है। यह आई.बी.सी. की धारा 20 के तहत आई.आर.पी. के कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए होगा। यह संचार सी.आई.आर.पी. के शुरू होने के अधिकतम 4 सप्ताह की अवधि के भीतर किया जाएगा और सी.ओ.सी. के गठन से स्वतंत्र होगा। यदि उक्त अवधि के भीतर ऐसा कोई इरादा नहीं बताया जाता है, तो यह माना जाएगा कि कंपनी विषय परियोजना में भाग लेने के लिए तैयार नहीं है।

(बी) यदि आई.आर.पी., कंपनी (सी.आई.आर.पी. का सामना करने वाले कंसोर्टियम सदस्य) की क्षमताओं के आकलन पर, यह राय है कि उक्त कंपनी कंसोर्टियम के व्यवसाय में उपयोगी या सार्थक रूप से भाग नहीं ले सकती है, तो वह उपरोक्त प्रस्तर-(ए) में प्रदान की गई अवधि के भीतर अन्य कंसोर्टियम सदस्यों और प्राधिकरण (उक्त परियोजना के लिए) को सूचित करेगा। अन्य कंसोर्टियम सदस्यों (संयुक्त रूप से या अलग-अलग) के पास शेष परियोजना को अपने दम पर शुरू करने और उसे पूरा करने का विकल्प होगा। परियोजना को पूरा करने के लिए कंसोर्टियम के सदस्यों द्वारा विकल्प का प्रयोग 4 सप्ताह की अवधि के भीतर किया जाएगा, जो या तो ऊपर प्रस्तर-(ए) में उल्लिखित 4 सप्ताह की अवधि की समाप्ति से शुरू होगा (यदि आई.आर.पी. से कोई संचार प्राप्त नहीं होता है) या आई.आर.पी. के संचार से 4 सप्ताह के भीतर इस आशय के कि उक्त कंपनी भाग लेने की स्थिति में नहीं है। कंसोर्टियम का व्यवसाय।

(सी) यदि परिसंघ के सदस्य सी.आई.आर.पी. का सामना कर रहे सदस्य की भागीदारी के बिना परियोजना को स्वयं पूरा करने की अपनी इच्छा के बारे में सूचित करने में विफल रहते हैं या उक्त परियोजना को पूरा करने में असमर्थता व्यक्त करते हैं, तो प्राधिकरण परियोजना को समय पर पूरा करने के लिए वैकल्पिक व्यवस्था करेगा।

188. एन.सी.एल.टी./एन.सी.एल.ए.टी. द्वारा पारित आदेशों का निर्धारण और हस्तक्षेप करते समय न्यायालय हमेशा सतर्क रहता है, लेकिन ऐसा करते समय, न्यायालय अपने संवैधानिक कर्तव्य से पीछे नहीं हट सकता है और असहाय होकर एक कानून या आदेश की व्याख्या को मंजूरी नहीं दे सकता है जो सामाजिक लक्ष्यों को नष्ट करने और जनता की भलाई को खतरे में डालने के लिए निश्चित है।

189. याचिकाकर्ता ने नोएडा प्राधिकरण के बकाया के साथ-साथ पैसे से अन्य बकाया राशि का भुगतान नहीं किया, जो पैसे को बंद करने के बाद कंपनी में आया था, और कंपनी दिवालिया हो गयी है। यह पूरी कार्यवाही देनदारियों से बचने के लिए एक फ़र्जी दिवालियापन के अलावा और कुछ नहीं है। एन.सी.एल.टी. को बैलेंस शीट और अन्य दस्तावेजों से यह सुनिश्चित करना चाहिए कि इस तरह की “इंजीनियर्ड” दिवाला कार्यवाही शुरू नहीं की जानी चाहिए यदि यह दुर्भावनापूर्ण कार्यवाही है और देनदारियों से बाहर निकलने के लिए बड़े डिजाइन के एक हिस्से के रूप में दायर की गई है। यदि इस तरह के रिवर्स सी.आई.आर.पी. को जारी रखने की अनुमति दी जाती है तो यह वास्तव में प्रतिकूल होगा और आईबी कोड, 2016 के उद्देश्यों और लक्ष्यों के विपरीत होगा।

190. चूंकि स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ता कंपनी के प्रबंधन द्वारा धोखाधड़ी की गई है और धन का दुरुपयोग/हेराफेरी की गई है, इसलिए हम रिवर्स इन्सॉल्वेंसी को मंजूरी देने वाले एन.सी.एल.टी. द्वारा पारित आदेशों पर आंख मूंदकर मुहर नहीं लगा सकते हैं।

191. तथ्यों और परिस्थितियों में, “फ़ॉस ऑम्निया विटियाट” (अर्थात् *धोखा सब कुछ नष्ट कर देता है*) का सिद्धांत यहाँ लागू होता है। दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता, 2016 (आई.बी.सी., 2016) की धारा 7 के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन पर राष्ट्रीय कंपनी विधि अधिकरण (एन.सी.एल.टी.) द्वारा पारित आदेश को वर्तमान रिट याचिका में चुनौती नहीं दी गई है। अतः, न्यायिक शालीनता तथा क्षेत्राधिकार के आधार पर हम उक्त आदेश को निरस्त करने में असमर्थ हैं। हालाँकि, यह पक्षकारों के लिए खुला रहेगा कि वे वर्तमान आदेश की प्रति राष्ट्रीय कंपनी विधि अधिकरण (एन.सी.एल.टी.) के संज्ञान में लाएँ, ताकि वह यह ध्यान में रखते हुए एक तार्किक निर्णय ले सके कि यह परियोजना एक एकीकृत परियोजना है तथा यह संघ (कंसोर्टियम) के सदस्यों का दायित्व है कि वे यह सुनिश्चित करें कि योजना में निर्धारित सभी सुविधाओं का विकास नोएडा प्राधिकरण द्वारा खेल नगरी योजना (स्पोर्ट्स सिटी स्कीम) की पुस्तिका में निर्धारित विनिर्देशों के अनुरूप किया जा रहा है। यह भी स्पष्ट किया

जाता है कि गृह-क्रेताओं का हित सर्वोपरि है और उनके हितों का उचित रूप से संरक्षण किया जाना आवश्यक है।

192. यह उम्मीद की जाती है कि एक बिल्डर के खिलाफ शुरू की गई दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 के तहत एक कार्यवाही में, आवेदन स्वीकार करने से पहले, विद्वान एन.सी.एल.टी. यह सुनिश्चित कर सकता है और खुद को संतुष्ट कर सकता है कि क्या दिवालिया कार्यवाही वास्तविक है या इसे बिल्डर के इशारे पर, केवल धन को बाहर निकालने के बाद सिविल/आपराधिक देनदारियों से बचने के लिए, दुर्भावनापूर्ण रूप से दायर किया गया है। यदि निधियों की हेराफेरी होता है, तो ईडी को एक शिकायत भेजी जानी चाहिए, जो जांच करने में सक्षम है और ईडी को कंपनी के प्रबंधन द्वारा हेराफेरी किए गए धन को पुनः प्राप्त करने के लिए कानून के तहत पर्याप्त कार्रवाई करनी चाहिए।

193. एन.सी.एल.टी. इस तथ्य पर भी विचार कर सकता है कि परियोजना एक एकीकृत परियोजना थी और इसे स्पोर्ट्स सिटी के उद्देश्यों के अनुसार विकसित किया जाना चाहिए और डेवलपर को चुनते समय आई.आर.पी. को एक एकीकृत परियोजना के रूप में परियोजना के विकास को ध्यान में रखना चाहिए।

194. यह न्यायालय एक ही समय में महसूस करता है कि हम अपने कर्तव्य में विफल हो जाएंगे, यदि हम धोखाधड़ी को स्वीकार करते हैं, जो कि बड़े पैमाने पर है और बिल्डरों/डेवलपर्स और नोएडा प्राधिकरण के वरिष्ठ अधिकारियों के आचरण को स्वीकार करते हैं। खेल शहर योजना की शुरुआत के बाद से, नोएडा के अधिकारियों द्वारा बिल्डरों/विकासकर्ताओं को अनुचित लाभ प्रदान किए गए थे। परिस्थितियों के तथ्यों और समयता में, हम पाते हैं कि इस न्यायालय के पास प्रस्तुत मामले को प्रवर्तन निदेशालय को भेजने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है, जो जांच करने में सक्षम है। ईडी को कंपनी के पूर्ववर्ती प्रबंधन द्वारा गबन किए गए/लॉन्ड्रिंग किए गए धन को पुनः प्राप्त करने के लिए कानून में प्रदान किए गए निष्पक्ष जांच को भी सुनिश्चित करना चाहिए और इसके अलावा ईडी को दुरुपयोग किए गए धन का पता लगाने के लिए सभी प्रयास करने चाहिए ताकि इसे कंपनी में वापस लाया जा सके और इसके साथ ही नोएडा प्राधिकरण की बकाया राशि को वापस लाया जा सके, यथा राज्य सरकार, किसानों को अतिरिक्त मुआवजा और अन्य देय राशियों का भुगतान किया जा सकता है।

195. उपरोक्त टिप्पणियों के साथ, रिट याचिका का **निपटारा** किया जाता है।

196. रजिस्ट्रार (अनुपालन) को निर्देश दिया जाता है कि वह इस निर्णय की एक प्रति विद्वान एन.सी.एल.टी., दिल्ली और निदेशक, ईडी को सूचना और आवश्यक अनुपालन के लिए तुरंत भेजें।

(2025) 2 ILRA 229

मूल क्षेत्राधिकार

दीवानी पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 10.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति श्री अंजनी कुमार मिश्र

माननीय न्यायमूर्ति श्री जयंत बनर्जी

रिट सी संख्या-6744 वर्ष 2019

यांत्रिक विभाग प्राथमिक और अन्य याचिकाकर्ता

बनाम

भारत संघ और एक अन्य उत्तरदाता

याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता: सत्यवान शाही, शशि रंजन श्रीवास्तव, श्री शशि नंदन (वरिष्ठ अधिवक्ता)

याचिकाकर्ता के लिए अधिवक्ता: ए.एस.जी.आई. आदया प्रसाद तिवारी, गौरव गौतम, रमेश चंद्र पांडे, संजीव कुमार, शिव शंकर त्रिपाठी

ए. दीवानी कानून - भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226 - बहु-राज्य सहकारी समिति अधिनियम, 2002 - याचिकाकर्ताओं ने संबंधित रिट याचिकाओं में उच्च न्यायालय के पहले के निर्देशों के बावजूद अधिनियम, 2002 के तहत पंजीकरण के लिए उनके आवेदन को खारिज करने वाले केंद्रीय रजिस्ट्रार के आदेश को चुनौती दी - याचिकाकर्ताओं ने उत्तर प्रदेश सहित कई राज्यों में शाखाओं और सदस्यों के साथ 1919 से पंजीकरण और संचालन के एक लंबे इतिहास का दावा किया। बिहार, उत्तराखंड-ने जोर देकर कहा कि उनकी सोसायटी एक बहु-राज्य सहकारी समिति के रूप में योग्य है और इस तरह से व्यवहार करने के लिए परमादेश की मांग की गई है - न्यायालय ने 1912 से अधिनियम 2002 तक सहकारी समिति कानूनों के वैधानिक ढांचे की जांच की- एक सहकारी समिति का पंजीकरण, नियंत्रण और विघटन उसके संचालन के क्षेत्र पर निर्भर करता है, यदि उद्देश्य और सदस्यता एक से अधिक राज्यों में फैली हुई है, केवल राज्य का कानून पर्याप्त नहीं है-केंद्रीय कानून लागू हो जाता है - अदालत ने माना कि केंद्रीय रजिस्ट्रार ने बाध्यकारी न्यायिक निर्देशों की अवहेलना करने और कानून के डीम्ड पंजीकरण प्रावधान के तहत याचिकाकर्ता के ऐतिहासिक पंजीकरण, संचालन के क्षेत्र और कानूनी निरंतरता का ठीक से आकलन करने में विफल रहने में गलती की- (प्रस्तर-1 से 62)

रिट याचिका खारिज की जाती है। (ई-6)

उद्धृत मामलों की सूची:

1. अर्बन बैंक ऑफ मह का एपेक्स कोऑपरेटिव बैंक। और गोवा लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र स्टेट को-ऑप बैंक लिमिटेड और अन्य (2003)11 एस.सी.सी. 66
2. पांडुरंग गणपति चौगुले बनाम विश्वासराव पाटिल मुरगुद सहकारी बैंक लिमिटेड (2020)9 एस.सी.सी. 215
3. वीरेंद्र पाल सिंह बनाम रजिस्ट्रार ऑफ को-ऑप सोसायटी।
4. ग्रेटर बॉम्बे कॉप बैंक लिमिटेड यूनाइटेड यार्न टेक्स (प्रा) लिमिटेड (2007)6 एस.सी.सी.236
5. एपेक्स कॉप। बैंक ऑफ अर्बन बैंक ऑफ मह। और गोवा लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र स्टेट कॉप बैंक लिमिटेड और अन्य (2003) 11 एस.सी.सी. 66

(माननीय न्यायमूर्ति श्री जयंत बनर्जी द्वारा उद्धोषित)

1. इस याचिका में पक्षकारों की सरणी इस प्रकार है:-

1. मैकेनिकल डिपार्टमेंट प्राइमरी को-ऑपरेटिव बैंक लिमिटेड, पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर ने अपने सचिव श्री बलवंत कुमार शाही के माध्यम से हस्ताक्षर किए।
2. श्री बलवंत कुमार शाही, पुत्र स्वर्गीय प्रसिद्ध नारायण शाही, सचिव, यांत्रिक विभाग प्राथमिक सहकारी बैंक लिमिटेड, पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर।

..... याचिकाकर्तागण

बनाम

1. सचिव, कृषि और सहकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली के माध्यम से भारत संघ।
2. केंद्रीय रजिस्ट्रार, सहकारी नई दिल्ली/संयुक्त सचिव, भारत सरकार कृषि भवन, नई दिल्ली।
3. भारतीय रिज़र्व बैंक अपने प्रबंधक, 8-9 विपिन खंड, गोमती नगर, लखनऊ के माध्यम से।

..... उत्तरदाता।

2. यह रिट याचिका निम्नलिखित राहत की मांग करते हुए दायर की गई है:-

- "1. केंद्रीय रजिस्ट्रार, सहकारी नई दिल्ली/भारत सरकार के संयुक्त सचिव कृषि भवन, नई दिल्ली/प्रतिवादी संख्या-2 (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या-20) द्वारा पारित दिनांक 26.12.2018 के आक्षेपित आदेश को रद्द करने वाले उत्प्रेषण की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करता है।

II. बहु-राज्य सहकारी समिति अधिनियम, 2002 में याचिकाकर्ताओं के बैंक पंजीकरण का इलाज करने के लिए केंद्रीय रजिस्ट्रार, सहकारी नई दिल्ली/संयुक्त सचिव, भारत सरकार, कृषि भवन, नई दिल्ली/प्रतिवादी संख्या-2 के रूप में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।

3. कहा जाता है कि याचिकाकर्ता संख्या-11 को सहकारी समिति अधिनियम, 19122 के तहत 31.5.1919 को पंजीकरण संख्या-275 के तहत पंजीकृत किया गया था और उस समय, याचिकाकर्ता-बैंक का नाम "द मैकेनिकल डिपार्टमेंट क्रेडिट सोसाइटी लिमिटेड गोरखपुर" रखा गया था। यह कहा गया है कि समय-समय पर वर्ष 1962-1966 में आवश्यक संशोधन किए गए थे। केंद्रीय रजिस्ट्रार सहकारी समितियों, उत्तर प्रदेश लखनऊ द्वारा 3.5.1973 को फिर से संशोधन किया गया, जिससे याचिकाकर्ता-बैंक का नाम यांत्रिक विभाग प्राथमिक सहकारी बैंक लिमिटेड बन गया। 1982 में, भारतीय रिज़र्व बैंक ने याचिकाकर्ता-बैंक को बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 19493 की धारा 56 (पी) सपठित धारा 23 के तहत याचिकाकर्ता-बैंक को याचिकाकर्ता-बैंक के काम करने और काम करने के लिए गोरखपुर के अलावा जिला बरेली के इज्जत नगर में एक कार्यालय खोलने के लिए अनुज्ञप्ति प्रदान किया।

4. याचिकाकर्ता-बैंक ने प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा बहु-राज्य सहकारी समिति अधिनियम, 19844 के तहत नियामक नियंत्रण के अधीन होने का प्रदर्शन करने की मांग की है, जिसमें कहा गया है कि अधिनियम, 1984 की धारा 48 के तहत याचिकाकर्ता-बैंक के शासी निकाय के अधिक्रमण की पूर्व स्वीकृति के विषय पर सहकारी समितियों, उत्तर प्रदेश लखनऊ के रजिस्ट्रार द्वारा संयुक्त सचिव/केंद्रीय रजिस्ट्रार को दिनांक 14.3.1997 का एक पत्र भेजा गया था। दिनांक 31-3-1997 को पुनः एक अनुस्मारक पत्र जारी किया गया। इसके बाद, प्रतिवादी संख्या-2, केंद्रीय रजिस्ट्रार ने रजिस्ट्रार सहकारी समितियों, उत्तर प्रदेश को दिनांक 2.4.1997 को एक पत्र जारी किया, जिसमें अधिनियम, 1984 की धारा 48 के तहत याचिकाकर्ता-बैंक के निदेशक मंडल के खिलाफ कार्रवाई शुरू करने की स्वीकृति दी गई। दिनांक 10.4.1997 के एक आदेश द्वारा, प्रतिवादी संख्या-2, केंद्रीय रजिस्ट्रार ने याचिकाकर्ता-बैंक को अधिक्रमित कर दिया और याचिकाकर्ता-बैंक के मामलों को संचालित करने के लिए तीन प्रशासकों से युक्त एक प्रशासक बोर्ड नियुक्त किया। याचिकाकर्ता-बैंक ने तब एक रिट याचिका संख्या-43087 वर्ष 1998 दायर की जिसे 18.1.1999 के एक निर्णय और आदेश द्वारा निपटाया गया था।

5. यह कहा गया है कि इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त रिट याचिका वर्ष 1998 में यह माना गया था कि प्रशासक बोर्ड को कानूनी रूप से कार्यालय में रखा गया था; यह निर्देश दिया गया था कि मौजूदा प्रशासक बोर्ड, जो फरवरी 1999 के महीने के अंत तक नव निर्वाचित निदेशक मंडल का गठन होने तक ही कार्य करेगा, केवल याचिकाकर्ता-बैंक के दिन-प्रतिदिन के मामलों का प्रबंधन करेगा और कोई नीतिगत निर्णय नहीं लेगा और कोई नई नियुक्ति भी नहीं करेगा; मुख्य यांत्रिक अभियंता, पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर के साथ-साथ केन्द्रीय रजिस्ट्रार को यह सुनिश्चित करने का निदेश दिया गया था कि नए निदेशक मंडल के गठन के लिए चुनाव हों और मौजूदा प्रशासक मंडल को फरवरी, 1999 के अंत तक उनकी जिम्मेदारियों से सकारात्मक रूप से मुक्त कर दिया जाए।

6. अपर आयुक्त / अपर रजिस्ट्रार, सहकारी, उत्तर प्रदेश लखनऊ ने अवमानना आवेदन (दीवानी) संख्या-1573 वर्ष 2017 में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 13.4.2017 के एक आदेश के संबंध में याचिकाकर्ता-बैंक के सचिव को दिनांक 9.5.2017 को एक पत्र लिखा था, जिसमें कहा गया था कि याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा दायर रिट याचिका संख्या-60894 वर्ष 2016 के संबंध में, उस रिट याचिका में पारित निर्देश के परिणामस्वरूप, संयुक्त आयुक्त एवं संयुक्त रजिस्ट्रार, गोरखपुर मंडल ने दिनांक 30.01.2017 के एक पत्र के माध्यम से एक रिपोर्ट प्रस्तुत की थी जिसमें कहा गया था कि पंजीकरण रजिस्टर में उनके कार्यालय में मैकेनिकल डिपार्टमेंट कोऑपरेटिव क्रेडिट सोसाइटी लिमिटेड, गोरखपुर को 31.5.1919 को क्रम संख्या-275 पर पंजीकृत किया गया था; कि याचिकाकर्ता - बैंक मैकेनिकल डिपार्टमेंट प्राइमरी कोऑपरेटिव बैंक लिमिटेड, पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर से संबंधित पंजीकरण संख्या-275 3.5.1973 को पंजीकृत नहीं थी; कि उच्च न्यायालय के आदेश के अनुसार, दिनांक 31.1.2017 के एक पत्र द्वारा, मामले को पहले आयुक्त / रजिस्ट्रार द्वारा निपटाया गया था; कि याचिकाकर्ता-बैंक को 27.4.2017 के एक अन्य पत्र द्वारा घटनाक्रम के बारे में सूचित किया गया था, जिसकी एक प्रति उस पत्र के साथ संलग्न थी।

7. यह कहा गया है कि एक ओर अपने स्वयं के आदेश वर्ष 14.3.1997 में, रजिस्ट्रार, सहकारी समितियां कहती हैं कि यांत्रिक विभाग प्राथमिक सहकारी बैंक लिमिटेड (याचिकाकर्ता संख्या-1) को भंग किया जाना चाहिए, जबकि दूसरी ओर दिनांक 9.5.2017 का पत्र जारी किया गया था जिसमें कहा गया था कि याचिकाकर्ता-बैंक 3.5.1973 को क्रम संख्या-275 में पंजीकृत प्रतीत नहीं होता है।

8. भारतीय रिज़र्व बैंक की लखनऊ शाखा द्वारा दिनांक 9.8.2017 को एक आदेश पारित किया गया था, जिसके तहत पंद्रह दिनों के भीतर समस्तीपुर, बिहार में चल रहे भुगतान काउंटर को रोकने का निर्देश दिया गया था और याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा अन्य राज्यों में दी गई सदस्यता को रद्द करने का निर्देश दिया गया था। इस आदेश को याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा रिट-सी संख्या-38808 वर्ष 2017 के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी, जिसे 21.3.2018 के एक आदेश द्वारा उन पक्षों के अधिवक्ता द्वारा सहमत शर्तों पर निपटाया गया था, जिसमें बहु-राज्य सहकारी समिति अधिनियम, 2002 के प्रावधानों के तहत याचिकाकर्ता-बैंक के आवेदन को अधिनियम 1912 के प्रावधानों के तहत 1919 में मूल पंजीकरण के आधार पर नए सिरे से विचार करने का निर्देश दिया गया था। याचिकाकर्ताओं को क्रेडिट सोसाइटी के रूप में अपने पंजीकरण को दर्शाते हुए रजिस्टर का एक उद्धरण प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था। भारतीय रिज़र्व बैंक को यह भी निर्देश दिया गया था कि वह अधिनियम, 2002 के प्रावधानों के तहत पंजीकरण के बाद अनुज्ञप्ति प्रदान करने के याचिकाकर्ता के अनुरोध पर शीघ्रता से विचार करे। इस न्यायालय का दिनांक 21.03.2018 का आदेश नीचे उद्धृत किया गया है: -

"श्री शशि नंदन, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सत्यवान शाही, याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता, श्री रामानंद पांडे, प्रतिवादी-राज्य के लिए अतिरिक्त मुख्य स्थायी अधिवक्ता, श्री विकास बुधवार, प्रतिवादी संख्या-4 के अधिवक्ता, श्री ज्ञान प्रकाश, प्रतिवादी संख्या-2 के अधिवक्ता और श्री एपी तिवारी, हस्तक्षेपकर्ता के अधिवक्ता को सुना।

रिट याचिका प्रतिवादी संख्या-4-भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी दिनांक 9.8.2017 के आदेश के खिलाफ निर्देशित है। प्रस्तुत रिट याचिका में आक्षेपित आदेश का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:

“४- केन्द्रीय टैफकब की १६ वि बैठक दिनांक ०९ जून २०१७ की अनुशंसा के अनुसार आपके बैंक को uni-state बैंक में कन्वर्ट किया जाना है। अतः आपको यह निर्देश दिया जाता है कि इस पत्र की प्राप्ति से १५ दिनों के भीतर समस्तीपुर, बिहार में चल रहे अपने पेमेंट काउन्टर को बंद करना सुनिश्चित करें तथा अन्य राज्यों में विभिन्न लोगों को प्रदान की गई सदस्यता को निरस्त करें।

5- इसके अतिरिक्त उपरोक्त के संबंध में आपसे अपेक्षित है की बैंक अपने बाई-लाज़ का संशोधन करवाए तथा RCS, लखनऊ से अनमोदन के पश्चात उसकी एक प्रति भारतीय रिजर्व बैंक, लखनऊ को यथाशीघ्र प्रदान करें।”

भारतीय रिजर्व बैंक के पत्र में इस बात पर भी ध्यान दिया गया है कि याचिकाकर्ता सोसायटी बहु-राज्य सहकारी समाजों अधिनियम, 2002 (संक्षेप में 'अधिनियम, 2002') के प्रावधानों के तहत सहकारी समितियों के केंद्रीय रजिस्ट्रार के साथ पंजीकृत नहीं है। इसके मद्देनजर, याचिकाकर्ताओं ने केंद्रीय रजिस्ट्रार (प्रतिवादी संख्या-2) को यह निर्देश देने के लिए भी प्रार्थना की है कि वे अपनी सोसायटी को बहु-राज्य सहकारी समिति के रूप में बनाए रखें और अधिनियम, 2002 के प्रावधानों के तहत आवश्यक पंजीकरण प्रमाण पत्र जारी करें।

इस पृष्ठभूमि में, हमने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और उनकी सहायता से हमारे सामने रखी गई पूरी सामग्री का अध्ययन किया है।

यह विवाद में नहीं है कि याचिकाकर्ताओं को शुरू में उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1912 के प्रावधानों के तहत क्रेडिट सोसाइटी के रूप में पंजीकृत किया गया था। हमने राज्य के अतिरिक्त मुख्य स्थायी अधिवक्ता श्री रामानंद पांडे द्वारा प्रस्तुत रजिस्टर का भी अवलोकन किया है, जो याचिकाकर्ताओं के इस मामले का समर्थन करता है कि उन्हें 1919 में "मैकेनिकल डिपार्टमेंट क्रेडिट सोसाइटी लिमिटेड" के रूप में पंजीकृत किया गया था। क्रम संख्या-275 में रजिस्टर में प्रविष्टि से यह भी पता चलता है कि 1962 में, सोसायटी के संशोधित उप-नियमों को पंजीकृत किया गया था और 3.2.1966 को कुछ संशोधन भी दर्ज किए गए थे। रजिस्टर में प्रविष्टि से यह स्पष्ट नहीं है कि 1966 में कौन सा संशोधन दर्ज किया गया था।

याचिकाकर्ताओं के अनुसार, 1973 में, उनकी सोसायटी का नाम बदलकर "मैकेनिकल डिपार्टमेंट प्राइमरी को-ऑपरेटिव बैंक लिमिटेड" कर दिया गया था और इस आशय का प्रमाण पत्र केंद्रीय रजिस्ट्रार, सहकारी समितियां, उत्तर प्रदेश लखनऊ द्वारा 3.5.1973 को जारी किया गया था। दुर्भाग्य से, याचिकाकर्ताओं के अनुसार, दिनांक 3.5.1973 का मूल पंजीकरण प्रमाण पत्र गलत है। दूसरे शब्दों में, वे सहकारी बैंक के रूप में दिनांक 3.5.1973 के मूल पंजीकरण प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने की स्थिति में नहीं हैं। श्री पांडे, अतिरिक्त मुख्य स्थायी अधिवक्ता, प्रस्तुत करते हैं कि उनके अभिलेखों में भी, ऐसा प्रमाण पत्र उपलब्ध नहीं है।”

जो भी हो, मई, 1973 से याचिकाकर्ता एक सहकारी बैंक के रूप में कार्य कर रहे हैं और उनका दावा है कि पूर्वोत्तर रेलवे के कर्मचारी, न केवल उत्तर प्रदेश राज्य में बल्कि उत्तराखंड और बिहार राज्यों में, भी सदस्य हैं। उनकी कुल सदस्यता 18,933 है, जो पूर्वोत्तर रेलवे और पूर्व मध्य रेलवे के कर्मचारी हैं। याचिकाकर्ताओं के अनुसार, रेलवे के 577 कर्मचारी उत्तर प्रदेश राज्य के निवासी नहीं हैं। याचिकाकर्ताओं के अनुसार, उनकी सुविधा के लिए, उन्होंने समस्तीपुर में एक पे काउंटर/रिकवरी काउंटर खोला, जो बिहार राज्य में आता है। याचिकाकर्ता बैंक के पास कुल जमा 56,73,49,000 रुपये हैं। याचिकाकर्ता बैंक का संचालन और प्रबंधन एक निर्वाचित निदेशक मंडल द्वारा किया जाता है और वे केवल अपने सदस्यों की जरूरतों को पूरा करते हैं, जो रेलवे के कर्मचारी भी हैं। हम भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा दिनांक 12.5.2010 को जारी किए गए अनुज्ञप्ति और दिनांक 5.3.1982 के अनुज्ञप्ति (अनुलग्नक-2 सामूहिक रूप से) का भी संदर्भ दे सकते हैं, जो दर्शाता है कि भारतीय रिज़र्व बैंक ने बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 56(पी) सपठित धारा 23 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, याचिकाकर्ता बैंक को इज्जत नगर, जिला बरेली दिनांक 5.3.1982 के कार्यालय पत्र में उल्लिखित शर्तों के अधीन में एक कार्यालय खोलने के लिए अधिकृत किया। दिनांक 12.5.2010 के अनुज्ञप्ति से यह भी प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता सहकारी समिति को बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 56(ए) सपठित धारा 22(1) के तहत अनुज्ञप्ति दिया गया था।

हम यह भी देख सकते हैं कि पक्षकार इस आदेश के लिए इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सहमत हुए हैं कि याचिकाकर्ता सहकारी समिति को शुरू में 1919 में क्रेडिट सोसाइटी के रूप में पंजीकृत किया गया था और उसके बाद 1973 से, वे बिना किसी रुकावट के बैंक के रूप में कार्य कर रहे हैं और इसके कर्मचारियों के लिए, जो सभी रेलवे के कर्मचारी हैं और बैंक के कामकाज के बारे में किसी भी प्रकृति का कोई आरोप नहीं है। हम यह भी देख सकते हैं कि अधिनियम, 2002 के प्रावधानों के तहत केंद्रीय रजिस्ट्रार ने याचिकाकर्ताओं के पंजीकरण को केवल इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि वे यांत्रिक विभाग प्राथमिक सहकारी बैंक लिमिटेड के दिनांक 3.5.1973 के पंजीकरण प्रमाण पत्र का उत्पादन नहीं कर सकते थे और न ही प्रस्तुत किए थे।

हस्तक्षेपकर्ता ने इस बात पर विवाद नहीं किया है कि याचिकाकर्ता सोसाइटी उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1912 के प्रावधानों के तहत पंजीकृत थी और शुरू में उन्हें क्रेडिट सोसाइटी के रूप में पंजीकृत किया गया था, और मई 1973 से, वे एक सहकारी बैंक के रूप में काम कर रहे हैं।

इस पृष्ठभूमि में, पक्षों के अधिवक्ता उस आदेश के लिए सहमत हुए हैं जिसे हम पारित करने का प्रस्ताव करते हैं। इसलिए, हम निम्नलिखित आदेश द्वारा इस याचिका का निपटारा करते हैं:

केंद्रीय रजिस्ट्रार, सहकारी समितियां, अधिनियम, 2002 के प्रावधानों के तहत, उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1912 के प्रावधानों के तहत 1919 में मूल पंजीकरण के आधार पर याचिकाकर्ताओं के आवेदन पर नए सिरे से विचार करने के लिए आगे बढ़ेंगी और इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से चार सप्ताह की अवधि के भीतर उचित आदेश पारित करेंगी। याचिकाकर्ताओं को निर्देश दिया जाता है कि वे क्रेडिट सोसाइटी के रूप में उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1912 के प्रावधानों के तहत उनके पंजीकरण को दर्शाते हुए रजिस्टर

का एक उद्धरण प्रस्तुत करें। यह उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है कि प्रतिवादी संख्या-2-केंद्रीय रजिस्ट्रार मूल पंजीकरण प्रमाण पत्र दिनांक 3.5.1973 के लिए जोर नहीं देगा, जिसमें संख्या-275 है। अधिनियम, 2002 के प्रावधानों के तहत पंजीकरण के बाद, याचिकाकर्ताओं के लिए यह खुला है कि वे उत्तर प्रदेश राज्य के अंदर और बाहर व्यापार के नए स्थान खोलने की अनुमति प्राप्त करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक से संपर्क करें। जब तक भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 56 सपठित धारा 23 के तहत अपेक्षित अनुज्ञप्ति जारी नहीं किया जाता है, तब तक याचिकाकर्ता गोरखपुर में अपने प्रधान कार्यालय और बरेली जिले में इज्जत नगर में इसकी शाखा को छोड़कर उत्तर प्रदेश राज्य के अंदर और बाहर अपने काउंटर का संचालन नहीं करेंगे, जैसा कि पंजीकरण प्रमाण पत्र में उल्लेख किया गया है। हम प्रतिवादी संख्या-2-केंद्रीय रजिस्ट्रार को निर्धारित समय के भीतर याचिकाकर्ताओं के आवेदन पर विचार करने का निर्देश देते हैं। हम यह भी देखते हैं कि भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 2002 के प्रावधानों के तहत पंजीकरण के बाद अनुज्ञप्ति जारी करने के याचिकाकर्ताओं के अनुरोध पर भी शीघ्रता से विचार करेगा। हम याचिकाकर्ताओं को निर्देश देते हैं कि वे आज से एक सप्ताह के भीतर प्रतिवादी संख्या-2-केंद्रीय रजिस्ट्रार के समक्ष सभी आवश्यक दस्तावेजों के साथ इस आदेश की एक प्रति प्रस्तुत करें।

तदनुसार, याचिका का निपटारा किया जाता है।

9. दिनांक 20.4.2018 के एक आदेश द्वारा, प्रतिवादी संख्या-2 ने अधिनियम, 2002 के तहत पंजीकरण के लिए याचिकाकर्ता-बैंक के आवेदन को खारिज कर दिया।

10. प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा पारित दिनांक 20.4.2018 के आदेश को चुनौती देते हुए, याचिकाकर्ताओं ने रिट-सी संख्या-16029 वर्ष 2018 वाली एक रिट याचिका दाखल की, जिसे दिनांक 20.4.2018 के आदेश को रद्द करने के बाद दिनांक 12.10.2018 के एक आदेश द्वारा निपटाया गया था। इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश नीचे उद्धृत किया गया है: -

"याचिकाकर्ताओं की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता शशि नंदन और याचिकाकर्ताओं की ओर से अधिवक्ता श्री शशि रंजन श्रीवास्तव और प्रतिवादी के अधिवक्ता अजय सिंह को सुना।

यह रिट याचिका दूसरे प्रतिवादी द्वारा पारित दिनांक 20.04.2018 के आदेश को रद्द करती है, जिसमें बहु-राज्य सहकारी समिति अधिनियम, 2002 (संक्षिप्त 'अधिनियम, 2002' के प्रावधानों के तहत अपनी सोसायटी के पंजीकरण के लिए याचिकाकर्ताओं के आवेदन/दावे को खारिज कर दिया गया था)। यह आदेश इस न्यायालय द्वारा 21 मार्च 2018 को रिट-सी संख्या-38808 वर्ष 2017 में पारित आदेश के अनुसरण में पारित किया गया है। इस आदेश द्वारा, याचिकाकर्ताओं को अधिनियम, 2002 के प्रावधानों के तहत अपने पंजीकरण के लिए उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1912 के प्रावधानों के तहत 1919 में मूल पंजीकरण के आधार पर नए सिरे से आवेदन करने की अनुमति दी गई थी। केंद्रीय रजिस्ट्रार, सहकारी समितियों ने याचिकाकर्ताओं के आवेदन

को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि याचिकाकर्ताओं के पास एक से अधिक राज्यों में सदस्य नहीं हैं, जैसा कि उक्त अधिनियम की धारा 5 द्वारा माना गया है। उन्होंने यह भी कहा कि याचिकाकर्ता सोसायटी ने अपने मामले के समर्थन में कोई सामग्री पेश नहीं की। याचिकाकर्ताओं के वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आक्षेपित आदेश पारित करने से पहले केंद्रीय रजिस्ट्रार, सहकारी समितियों द्वारा याचिकाकर्ताओं को नहीं सुना गया था। इस सबमिशन पर याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने प्रतिवाद नहीं किया है। ऐसा होने के नाते और आक्षेपित आदेश में की गई टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए, विशेष रूप से प्रस्तर-3 और 4 में, हम इस रिट याचिका को आदेश द्वारा निपटाने का प्रस्ताव करते हैं, जिसके लिए दोनों पक्षों की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने सहमति दी है। इसलिए, हम निम्नलिखित आदेश द्वारा इस रिट याचिका का निपटारा करते हैं:

प्रस्तुत रिट याचिका में आक्षेपित दिनांक 28.04.2018 के आदेश को रद्द कर दिया जाता है। इस मामले को नए सिरे से निर्णय लेने के लिए केंद्रीय रजिस्ट्रार, सहकारी समितियों को सौंप दिया जाता है। याचिकाकर्ताओं को इस मामले के समर्थन में अपने पतों के साथ अपने सदस्यों की एक सूची प्रस्तुत करने की अनुमति है कि उनके एक से अधिक राज्यों में सदस्य हैं और "संचालन का क्षेत्र" राज्य के बाहर भी है, जहां से व्यक्तियों को उनके सदस्यों के रूप में प्रवेश दिया जाता है। केंद्रीय रजिस्ट्रार याचिकाकर्ताओं के मामले पर उनके द्वारा प्रस्तुत सामग्री के आलोक में विचार करेगा और उन्हें इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से दो महीने की अवधि के भीतर, कानून के अनुसार गुण-दोष के आधार पर सुनवाई का अवसर प्रदान करेगा। याचिकाकर्ताओं को निर्देश दिया जाता है कि वे आज से दो सप्ताह की अवधि के भीतर केंद्रीय रजिस्ट्रार के समक्ष रिट याचिका और अनुलग्नकों की एक प्रति के साथ इस आदेश की एक प्रति प्रस्तुत करें। इन टिप्पणियों के साथ, याचिका का निपटारा किया जाता है।

11. याचिकाकर्ताओं ने 22.10.2018 को उत्तर प्रदेश, बिहार और उत्तराखंड राज्य में याचिकाकर्ता-बैंक के सदस्यों की सूची के साथ प्रतिवादी संख्या-2 को एक विस्तृत अभ्यावेदन प्रस्तुत किया। इसके बाद दिनांक 26.12.2018 के आक्षेपित आदेश के माध्यम से, प्रतिवादी संख्या-2 ने एक बार फिर याचिकाकर्ताओं के दावे को खारिज कर दिया है।

12. याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया है कि प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा दिनांक 26.12.2018 को आक्षेपित आदेश इस न्यायालय द्वारा रिट-सी संख्या-16029 वर्ष 2018 में पारित दिनांक 12.10.2018 के निर्णय की पूरी तरह से अवहेलना करते हुए पारित किया गया है; कि रिट-सी संख्या-38808 वर्ष 2017 में पारित 21.3.2018 के निर्णय को अंतिम रूप दे दिया गया है और प्रतिवादी संख्या-2 दिनांक 21.3.2018 के निर्णय में दिए गए विस्तृत निर्देशों के अनुसार सख्ती से आगे बढ़ने के लिए बाध्य है; याचिकाकर्ता-बैंक अधिनियम, 2002 के तहत काम कर रहा है; कि प्रतिवादी संख्या-2 के समक्ष निर्णय के लिए एकमात्र प्रश्न यह था कि याचिकाकर्ता-बैंक एक राज्य में काम कर रहा है या नहीं, जिस मुद्दे पर उसके द्वारा बिल्कुल भी विचार नहीं किया गया था। इन परिस्थितियों में, यह प्रार्थना की जाती है कि केंद्रीय रजिस्ट्रार सहकारी, नई दिल्ली द्वारा पारित दिनांक 26.12.2018 के आक्षेपित आदेश को रद्द कर दिया जाए।

13. मुख्य रूप से, विचार के लिए उठने वाले प्रश्न हैं: -

- (1) क्या याचिकाकर्ता-बैंक के उद्देश्य एक राज्य तक ही सीमित नहीं थे, और यदि हां, तो कब से?
- (2) क्या याचिकाकर्ता-बैंक ने अधिनियम, 2002 के तहत अपने पंजीकरण का प्रदर्शन किया है?
- (3) क्या भारतीय रिज़र्व बैंक का परिपत्र याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा संशोधन द्वारा अपने उपनियमों में संशोधन करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक की पूर्व अनुमति को कानूनी रूप से अधिदेशित कर सकता है?

प्रश्न संख्या-1 और 2 पर विचार

14. इस याचिका के अभिलेखों से ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादी संख्या-2 ने दिनांक 24.7.2007 (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या-9) के अपने आदेश द्वारा बहु-राज्य सहकारी समिति नियमावली 2002 के नियम 19 के तहत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए याचिकाकर्ता सहकारी बैंक के निदेशक मंडल के चुनाव कराने के लिए एक रिटर्निंग अधिकारी नियुक्त किया। आदेश में, प्रतिवादी संख्या-2 ने कहा था कि रिटर्निंग अधिकारी अधिनियम, 2002 की धारा 45 सपठित धारा 43(2)(ए) के तहत अयोग्यता के प्रश्न पर निर्णय ले सकता है। जवाबी हलफनामे में इससे इनकार नहीं किया गया है।

15. रिट याचिका का अनुलग्नक-10 प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा जिला मजिस्ट्रेट, समस्तीपुर, बिहार को दिनांक 29.8.2007 को जारी किया गया एक पत्र है। इस पत्र में कहा गया है कि याचिकाकर्ता-बैंक अधिनियम, 2002 और नियमावली, 2002 के तहत पंजीकृत है। यह उल्लेख किया गया कि याचिकाकर्ता-बैंक के सदस्य पूर्वोक्त रेलवे के रेलवे कर्मचारी हैं और बैंक की शाखाएं इज्जतनगर (बरेली), लखनऊ, गोंडा, वाराणसी, गोरखपुर, समस्तीपुर, सोनपुर आदि में फैली हुई हैं। जिला मजिस्ट्रेट से अनुरोध किया गया था कि वे रिटर्निंग अधिकारी को राजकीय अतिथि गृह/सर्किट हाउस, समस्तीपुर में आवास प्रदान करें।

16. निदेशक (सहकारिता), कृषि और सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार का दिनांक 2.4.1997 (रिट याचिका का अनुलग्नक संख्या-14) का एक और पत्र है, जिसमें रजिस्ट्रार सहकारी समितियां, उत्तर प्रदेश लखनऊ को संबोधित किया गया है, जिसमें अधिनियम की धारा 48 के तहत याचिकाकर्ता-बैंक के निदेशक मंडल के खिलाफ कार्रवाई शुरू करने के लिए, अधिनियम, 1984 की धारा 3(सी) सपठित धारा 4(2) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, 1984 की धारा 1984 में केंद्रीय रजिस्ट्रार की मंजूरी दी गई है। इसके अलावा, दिनांक 10.4.1997 (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या-15) के एक आदेश द्वारा, रजिस्ट्रार सहकारी समितियां, उत्तर प्रदेश लखनऊ ने दिनांक 16.9.1985 की अधिसूचना के तहत केंद्रीय रजिस्ट्रार की शक्तियों का प्रयोग करते हुए, अधिनियम, 1984 की धारा 48(1) के प्रावधानों के तहत याचिकाकर्ता-बैंक की प्रबंधन समिति को हटा दिया और तीन व्यक्तियों के प्रशासकों के एक बोर्ड की नियुक्ति की, जिसे ऊपर उल्लिखित एक रिट याचिका में चुनौती दी गई थी।

17. भारतीय रिज़र्व बैंक ने याचिकाकर्ता-बैंक को बीआर अधिनियम की धारा 56(पी) सपठित धारा 23 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए बरेली के इज्जतनगर में एक कार्यालय खोलने की भी अनुमति दी।

18. दिनांक 26.12.2018 के आक्षेपित आदेश में, प्रतिवादी संख्या-2 ने देखा है कि याचिकाकर्ता-बैंक के मौजूदा उप-नियम वर्ष 1973 में राज्य अधिनियम के तहत पंजीकृत हैं और याचिकाकर्ता-बैंक ने ऐसा कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है जो यह प्रमाणित करता हो कि केंद्रीय रजिस्ट्रार द्वारा किसी भी समय इसके उपनियमों में संशोधन किया गया था।

19. इस स्तर पर, बहु-राज्य सहकारी समितियों को शासित करने वाले समय-समय पर बनाए गए कानूनों पर गौर करना उचित है। अधिनियम, 1912 को भारत के गवर्नर जनरल द्वारा परिषद में अधिनियमित किया गया था, जिसे 1 मार्च 1912 को गवर्नर जनरल की सहमति प्राप्त हुई थी और इसे 9.3.1912 को भारत के राजपत्र में प्रकाशन द्वारा प्रख्यापित किया गया था ताकि कृषकों और कारीगरों और सीमित साधनों के व्यक्तियों के बीच मितव्ययिता और स्वयं सहायता को बढ़ावा देने के लिए सहकारी समितियों के गठन की सुविधा मिल सके, और इस प्रयोजन के लिए सहकारी समितियों से संबंधित कानून में संशोधन करना है। अधिनियम, 1912 ने पूरे ब्रिटिश भारत में ऐसी समितियों के पंजीकरण, सदस्यों के अधिकारों और देनदारियों, पंजीकृत समितियों के कर्तव्यों और विशेषाधिकारों, उनके निरीक्षण, विघटन और पूरे या प्रांत के किसी भी हिस्से के लिए स्थानीय सरकार को शक्तियों के प्रत्यायोजन के प्रावधान किए, और किसी भी पंजीकृत सोसायटी या ऐसी समितियों के वर्ग के लिए अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए नियम बनाने के लिए प्रावधान किए। अधिनियम, 1912 की धारा 18 में प्रावधान किया गया है कि किसी सोसायटी का पंजीकरण इसे उस नाम से एक कॉर्पोरेट निकाय प्रदान करेगा जिसके तहत वह पंजीकृत है, स्थायी उत्तराधिकार और एक सामान्य मुहर के साथ, और संपत्ति धारण करने, अनुबंध में प्रवेश करने, मुकदमों और अन्य कानूनी कार्यवाही को स्थापित करने और बचाव करने और अपने संविधान के उद्देश्य के लिए आवश्यक सभी चीजें करने की शक्ति के साथ। धारा 39 से 42 किसी सोसायटी के विघटन/पंजीकरण को रद्द करने से संबंधित है।

20. याचिकाकर्ता समाज स्पष्ट रूप से 1919 में उत्तर प्रदेश में अधिनियम, 1912 के प्रावधानों के तहत पंजीकृत किया गया था, जो अधिनियम, जैसा कि कहा गया है, पूरे ब्रिटिश भारत में विस्तारित किया गया था।

21. बहु-इकाई सहकारी समिति अधिनियम, 1942 को 2-3-1942 को गवर्नर जनरल की सहमति प्राप्त हुई और इसे भारत के राजपत्र में दिनांक 7.3.1942 के भाग IV में प्रकाशित किया गया। इस अधिनियम की प्रस्तावना में कहा गया है कि 'एक प्रांत तक सीमित नहीं रहने वाली वस्तुओं के साथ सहकारी समितियों के निगमन, विनियमन और समापन का प्रावधान करने के लिए एक अधिनियम है। अधिनियम, 1942 का प्रदर्श पूरे ब्रिटिश भारत में किया गया और यह उन सभी सहकारी समितियों पर लागू होता है, जिनका उद्देश्य अधिनियम, 1942 के प्रारंभ से पहले निगमित एक प्रांत तक ही सीमित नहीं था, सहकारी समिति अधिनियम, 1912 के तहत, या किसी भी प्रांत में लागू सहकारी समितियों से संबंधित किसी अन्य अधिनियम के तहत,

और उन सभी सहकारी समितियों पर लागू होता है जिनके उद्देश्य अधिनियम के प्रारंभ के बाद निगमित किए जाने वाले एक प्रांत तक सीमित नहीं हैं। अधिनियम, 1942 के उद्देश्यों और कारणों के विवरण इस प्रकार थे-

"बहु-इकाई सहकारी समितियां, अर्थात् एक से अधिक प्रांतों में काम करने वाली सहकारी समितियां, भारत सरकार अधिनियम, 1935 की सातवीं अनुसूची की सूची 1 में प्रविष्टि 33 के अर्थ के भीतर निगम हैं, और उनके निगमन, विनियमन और समापन के संबंध में विधायी और कार्यकारी क्षेत्राधिकार विशेष रूप से केंद्रीय हैं। सहकारी समिति अधिनियम, 1912 या प्रांतीय सहकारी अधिनियमों के कोई भी उपबंध जो प्रांतों में ऐसी बहु-इकाई समितियों के संबंध में कार्यकारी क्षेत्राधिकार निहित करने का इरादा कर सकते हैं, का कोई वैध आधार नहीं हो सकता है। इसलिए, एक से अधिक प्रांतों में काम कर रही सहकारी समितियों के निगमन, विनियमन और समापन के लिए कानून बनाना आवश्यक है।

2. विधेयक बहु-इकाई समितियों पर लागू होता है, मौजूदा कानून एक ही प्रांत के भीतर संचालित समितियों पर लागू होता है। यह सभी बहु-इकाई समितियों पर लागू होगा, चाहे उनके काम की प्रकृति कुछ भी हो। सरकार को केन्द्रीय रजिस्ट्रार नियुक्त करने में सक्षम बनाने का प्रावधान किया गया है, लेकिन वर्तमान में अस्तित्व में मौजूद मल्टी-यूनिट सोसाइटियों की संख्या कम होने के कारण केन्द्रीय पंजीयक के कार्यों को प्रांतीय रजिस्ट्रार को तब तक सौंपने का प्रस्ताव है जब तक कि बहु-इकाई समितियों की संख्या में वृद्धि के कारण केन्द्रीय रजिस्ट्रार की नियुक्ति आवश्यक नहीं हो जाती। एक बहु-इकाई सोसायटी के शाखा कार्यालयों के निरीक्षण और लेखा परीक्षा की शक्तियां भी उन प्रांतों के रजिस्ट्रारों में निहित होंगी जहां ऐसे शाखा कार्यालय स्थित हैं, और उनके पास बहु-इकाई समितियों की शाखाओं से ऐसे रिटर्न और जानकारी मांगने की शक्ति भी होगी जैसा कि वे उनके द्वारा पंजीकृत एकल-इकाई समितियों से मांग सकते हैं।

22. अधिनियम, 1942 की धारा 2, 3 और 5, जैसा कि वे मूल रूप से खड़े थे, इस प्रकार पढ़ें-

"2. जिन सहकारी समितियों पर यह अधिनियम लागू होता है, वे इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व पंजीकृत हैं-
(1) कोई सहकारी समिति, जिस पर यह अधिनियम लागू होता है, जो उस प्रदेश में प्रवृत्त सहकारी समितियों से संबंधित कानून के अधीन किसी प्रांत में पंजीकृत है, किसी अन्य प्रांत में ऐसा समझा जाएगा जिसके उद्देश्य सहकारी समितियों से संबंधित वहां प्रवृत्त कानून के अधीन उस अन्य प्रांत में विधिवत पंजीकृत हैं, लेकिन उपधारा (2) और (3) में उपबंधित के अलावा वह उस प्रांत में उस समय प्रवृत्त सहकारी समितियों से संबंधित कानून के पंजीकरण, नियंत्रण और विघटन के सभी प्रयोजनों के अधीन होगा जिसमें वह वास्तव में पंजीकृत है।

(2) जहां ऐसी कोई सहकारी समिति इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व स्थापित की है या इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् किसी ऐसे प्रांत में जिस में वह वास्तव में पंजीकृत है, के अलावा किसी अन्य प्रांत में शाखा या व्यवसाय के स्थान की स्थापना करती है, वहां वह इस अधिनियम के प्रारंभ से या शाखा या व्यवसाय के स्थान की स्थापना की तारीख से छह माह के भीतर होगी, जैसा भी मामला हो, उस प्रांत की सहकारी समितियों

के रजिस्ट्रार को प्रस्तुत करेगा जिसमें ऐसी शाखा या व्यवसाय का स्थान स्थित है, उसके पंजीकृत उपनियमों की एक प्रति प्रस्तुत करेगा, और किसी भी समय उक्त रजिस्ट्रार द्वारा ऐसा करना अपेक्षित होगा और किसी भी सूचना की आपूर्ति करेगा जो उक्त रजिस्ट्रार को उस प्रांत में वास्तव में पंजीकृत सहकारी समिति द्वारा प्रस्तुत या आपूर्ति करने की आवश्यकता हो सकती है।

(3) उस प्रांत की सहकारी समितियों का रजिस्ट्रार, जिसमें कोई शाखा या व्यवसाय का स्थान, जैसा कि उपधारा (2) में निर्दिष्ट है, उस शाखा या व्यवसाय के स्थान के संबंध में लेखापरीक्षा और निरीक्षण की किसी भी शक्तियों का प्रयोग कर सकता है, जो वह वास्तव में प्रांत में पंजीकृत सहकारी समिति के संबंध में प्रयोग कर सकता है।

"3.

(1) कोई समाज, यदि उसका उद्देश्य एक प्रांत तक ही सीमित था, तो उसे उस प्रदेश में प्रवृत्त सहकारी समितियों से संबंधित कानून के अधीन किसी प्रांत में सहकारी समिति के रूप में पंजीकृत किया जा सकता है, इस बात पर भी कि उसके उद्देश्य उस प्रांत तक ही सीमित नहीं हैं जिसमें उसका व्यवसाय का मुख्य स्थान स्थित है, एक सहकारी समिति के रूप में पंजीकरण के प्रयोजनों के लिए उस प्रांत में पूरी तरह से स्थित समझा जाएगा, और उस प्रांत में उस समय लागू सहकारी समितियों से संबंधित कानून के अनुसार उस प्रांत के सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत किया जा सकता है, और यदि ऐसा पंजीकृत है तो किसी अन्य प्रांत में माना जाएगा जिसके लिए उसके उद्देश्य उस अन्य प्रांत में विधिवत पंजीकृत किए जा सकते हैं, जिसके तहत उस अन्य प्रांत में विधिवत पंजीकृत किया जा सकता है सहकारी समितियों से संबंधित कानून लागू है, लेकिन उपधारा (2) और (3) में उपबंधित के अलावा, उस प्रांत में उस समय के लिए प्रवृत्त सहकारी समितियों से संबंधित कानून के पंजीकरण, नियंत्रण और विघटन के सभी प्रयोजनों के अधीन होगा, जिसमें वह वास्तव में पंजीकृत है।

(2) जहां ऐसी कोई सहकारी समिति किसी ऐसे प्रांत में शाखा या व्यवसाय का स्थान स्थापित करती है जिसमें वह वास्तव में पंजीकृत है, वहां वह शाखा या व्यवसाय के स्थान की स्थापना की तारीख से छह माह के भीतर उस प्रांत की सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार को प्रस्तुत करेगी जिसमें ऐसी शाखा या व्यवसाय का स्थान स्थित है, अपने पंजीकृत उपनियमों की एक प्रति प्रस्तुत करेगी, और किसी भी समय उक्त रजिस्ट्रार द्वारा ऐसा करना आवश्यक है, कोई भी रिटर्न प्रस्तुत करना और किसी भी जानकारी की आपूर्ति करना आवश्यक है, जिसे उक्त रजिस्ट्रार को उस प्रांत में वास्तव में पंजीकृत सहकारी समिति द्वारा प्रस्तुत या आपूर्ति करने की आवश्यकता हो सकती है।

(3) जिस प्रांत की सहकारी समितियों का पंजीयक, जिसमें कोई शाखा या व्यवसाय का स्थान, जैसा कि उपधारा (2) में निर्दिष्ट है, उस शाखा या व्यवसाय के स्थान के संबंध में लेखापरीक्षा और निरीक्षण की किसी भी

शक्तियों का प्रयोग कर सकता है, जो वह किसी सहकारी समिति के संबंध में प्रयोग कर सकता है, वास्तव में उस प्रांत में पंजीकृत है।

5. इस अधिनियम के तहत आवश्यक जानकारी प्रस्तुत करने में विफलता के लिए दंड।- यदि कोई सहकारी समिति धारा 2 की उप-धारा (2) या धारा 3 की उप-धारा (2) द्वारा या उसके तहत प्रस्तुत करने के लिए आवश्यक जानकारी प्रस्तुत करने में विफल रहती है, या उन उप-खंडों में से किसी एक के तहत प्रस्तुत करने के लिए आवश्यक कोई रिटर्न प्रस्तुत करने के लिए, सोसायटी, और विफलता के लिए जिम्मेदार सोसायटी के किसी भी अधिकारी या सदस्य, प्रत्येक पर जुर्माना लगाया जा सकता है जो पचास रुपये तक का हो सकता है, और सोसायटी का पंजीकरण, उस प्रांत के सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार के विवेक पर, जिसमें सोसायटी वास्तव में पंजीकृत है, रद्द किया जा सकता है।

23. सहकारी समितियों के केंद्रीय रजिस्ट्रार की नियुक्ति और शक्तियां धारा 4 में निर्दिष्ट की गई थीं। धारा 5 दंड से संबंधित है। धारा 6 ने अधिनियम, 1942 के प्रावधानों को लागू करने के लिए आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियम बनाने के लिए केंद्र सरकार को शक्ति प्रदान की।

24. राज्यों के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप, कुछ सहकारी समितियां, जिनके उद्देश्य केवल एक राज्य तक ही सीमित थे, वे बहु-इकाई सहकारी समितियां बन गईं। राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 द्वारा अधिनियम, 1942 में धारा 5ए जोड़ी गई थी, जिसमें अंतर-राज्य सहकारी समितियों के रूप में ऐसी बहु-इकाई सहकारी समितियों के पुनर्गठन और पुनर्गठन और नई सहकारी समितियों के गठन और ऐसी बहु-इकाई सहकारी समितियों की परिसंपत्तियों और देनदारियों के हस्तांतरण का प्रावधान किया गया था।

25. याचिकाकर्ता-बैंक का रुख यह है कि उनकी एक शाखा समस्तीपुर में है, जो बिहार राज्य में है, और उत्तराखंड राज्य में भी शाखा है। यहां यह उल्लेख करना उचित है कि अधिनियम, 1942 के लागू होने से काफी पहले बिहार एक पृथक राज्य बन गया था। इसलिए, यह देखते हुए कि अधिनियम, 1942 को प्रांत से अधिक में संचालित सहकारी समितियों के निगमन, विनियमन और समापन के लिए अधिनियमित किया गया था, इस तरह याचिकाकर्ता-बैंक को केवल अधिनियम, 1942 के तहत आच्छादित किया जा सकता है, बशर्ते कि यह प्रदर्शित करे कि इसके 'उद्देश्य' एक राज्य तक ही सीमित नहीं थे।

केवल ऐसे मामले में, याचिकाकर्ता-बैंक अधिनियम, 1942 की धारा 2 में डीमिंग क्लॉज के संदर्भ में सहकारी समितियों से संबंधित कानून के तहत बिहार प्रांत में विधिवत पंजीकृत माना जाएगा, और परिणामस्वरूप, केवल पंजीकरण, नियंत्रण और विघटन के प्रयोजन के लिए, याचिकाकर्ता-बैंक तब सहकारी समितियों से संबंधित कानून के तहत आच्छादित होने का दावा कर सकता है। वह प्रांत जिसमें इसे वास्तव में पंजीकृत किया गया था, अर्थात् उत्तर प्रदेश राज्य। तथापि, धारा 2 की उप-धारा (1) के परंतुक में विनिर्दिष्ट किया गया है कि अन्य

प्रयोजन के लिए, अर्थात् उस प्रांत की सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार को प्रस्तुत करने के लिए, जिसमें कोई शाखा या व्यवसाय का स्थान स्थित है, जो उस शाखा के अलावा अन्य है जिसमें वह वास्तव में पंजीकृत है, इसके पंजीकृत उपनियमों की एक प्रति, रिटर्न और किसी भी सूचना की आपूर्ति करने के लिए, उसके उप-खंड (2) और (3) के अनुसार, जो उक्त रजिस्ट्रार को एक सहकारी द्वारा प्रस्तुत या उसे प्रदान करने की आवश्यकता हो सकती है, जो सोसायटी वास्तव में उस प्रांत में पंजीकृत है।

26. राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 के बाद, सहकारी समिति (उत्तर प्रदेश संशोधन) अधिनियम, 1956 [उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या-X वर्ष 1957] 9 को उत्तर प्रदेश विधानमंडल द्वारा पारित किया गया और 7 मार्च को राष्ट्रपति द्वारा सहमति दी गई और 12 मार्च, 1957 को उत्तर प्रदेश राजपत्र, असाधारण में प्रकाशित किया गया। इस अधिनियम का स्पष्ट उद्देश्य, जैसा कि इसकी प्रस्तावना में परिलक्षित होता है, अधिनियम, 1912 में संशोधन करना था। संशोधन अधिनियम, 1956 की धारा 2 के तहत, अन्य बातों के साथ-साथ, अधिनियम, 1912 की मौजूदा धारा 11 के बाद धारा 11-ए, 11-बी, 11-सी, 11-डी, 11-ई और 11-एफ के तहत जोड़े गए थे। अधिनियम, 1912 को उत्तर प्रदेश राज्य की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने के लिए संशोधन किए गए थे। इसके बाद, निश्चित रूप से, संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची II की प्रविष्टि 32 के तहत राज्य के विधायी अधिकार का प्रयोग करते हुए, उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 10 अधिनियमित किया गया था। उत्तर प्रदेश में लागू होने वाले अधिनियम, 1912 को निरस्त कर दिया गया था।

27. अधिनियम, 1942 में, धारा 5-ए और 5-बी को राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 105 द्वारा 1.11.1956 से प्रभावी बनाया गया था। राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 105 इस प्रकार है:

"105. अधिनियम 6 वर्ष 1942 का संशोधन - बहु-इकाई सहकारी समिति अधिनियम, 1942 (6 वर्ष 1942) में, धारा 5 के बाद, निम्नलिखित धाराएं जोड़ी जाएंगी, अर्थात्: -

"5ए (1) जहां राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 के भाग-2 के उपबंधों के आधार पर, कोई सहकारी समिति, जिसका उद्देश्य नवम्बर, 1956 के प्रथम दिन से ठीक पहले एक राज्य तक ही सीमित था, वह बहु-इकाई सहकारी समिति बन जाती है, क्योंकि उस दिन से वह बहु-इकाई सहकारी समिति बन जाती है, यह एक सहकारी समिति समझा जाएगा जिस पर यह अधिनियम लागू होता है और इसे वास्तव में उस राज्य में पंजीकृत माना जाएगा जिसमें सहकारी समिति के व्यवसाय का प्रमुख स्थान स्थित है।

(2) यदि सहकारी समितियों के केन्द्रीय पंजीयक को यह आवश्यक या समीचीन प्रतीत होता है कि ऐसी किसी सोसायटी का किसी रीति से पुनर्गठन किया जाना चाहिए या उसे भंग किया जाना चाहिए, तो केन्द्रीय पंजीयक, केन्द्रीय सरकार के अनुमोदन से, इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित रीति से अवधारित सोसायटी की सामान्य सभा की बैठक के समक्ष रख सकेगा, सोसायटी के पुनर्गठन या विघटन के लिए एक

योजना, जिसमें नई सहकारी समितियों के गठन और उस सोसायटी की संपत्ति और देनदारियों के हस्तांतरण के संबंध में प्रस्ताव शामिल हैं।

(3) यदि उक्त बैठक में उपस्थित सदस्यों के बहुमत द्वारा पारित संकल्प द्वारा, या तो बिना किसी संशोधन के या संशोधनों के साथ जिसके लिए केन्द्रीय पंजीयक सहमत है, वह योजना को प्रमाणित करेगा और ऐसे प्रमाणन पर, योजना, तत्समय प्रवृत्त किसी विधि, विनियम या उप-विधि में निहित किसी भी विपरीत बात के होते हुए, योजना से प्रभावित सभी सोसाइटियों के साथ-साथ ऐसी सभी समितियों के शेयरधारकों और लेनदारों के लिए बाध्यकारी हो।

(4) यदि उपधारा (3) के अधीन योजना स्वीकृत नहीं होती है, तो केन्द्रीय पंजीयक उस योजना को समुचित उच्च न्यायालय के ऐसे न्यायाधीश को भेज सकेगा जो उसके मुख्य न्यायमूर्त द्वारा इस निमित्त नामित किया जा सके, और योजना के संबंध में उस न्यायाधीश का निर्णय अंतिम होगा और योजना से प्रभावित सभी सोसायटियों के साथ-साथ ऐसी सभी सोसायटियों के शेयरधारकों और लेनदारों के लिए बाध्यकारी होगा।

स्पष्टीकरण- इस उप-धारा में "उपयुक्त उच्च न्यायालय" से उच्च न्यायालय अभिप्रेत है जिसके अधिकार क्षेत्र में बहु-इकाई सहकारी समिति के व्यवसाय का प्रमुख स्थान स्थित है।

5बी- प्रत्यायोजित करने की शक्ति -- केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, यह निदेश दे सकेगी कि इस अधिनियम के अधीन सहकारी समितियों के केन्द्रीय पंजीयक द्वारा प्रयोग की जाने वाली कोई शक्ति या प्राधिकार, ऐसे विषयों के संबंध में और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो निदेश में विनिर्दिष्ट की जाएं, किसी राज्य की सहकारी समितियों के ऐसे रजिस्ट्रार द्वारा या केन्द्र सरकार के अधीनस्थ ऐसे अधिकारी द्वारा भी प्रयोग किया जा सकेगा अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किया जाए।

28. तत्पश्चात्, अधिनियम, 1942 की धारा 5-क को बहु-इकाई सहकारी समिति (संशोधन) अधिनियम, 1962, संशोधन अधिनियम, 1962 की धारा 2 द्वारा संशोधित किया गया, जिसे नीचे उद्धृत किया गया है:-

"2. धारा 5A का संशोधन- बहु-इकाई सहकारी समिति अधिनियम, 1942 (6 वर्ष 1942) की धारा 5A में (इसके बाद मूल अधिनियम के रूप में संदर्भित), -

(i) उपधारा (2) में, "नई सहकारी समितियों के गठन और उस सोसायटी की आस्तियों और देनदारियों के अंतरण के संबंध में प्रस्तावों सहित" शब्दों के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाएगा, अर्थात्:-

"इसके संबंध में प्रस्तावों सहित, -

(क) नई सहकारी समितियों का गठन और उस सोसायटी की परिसंपत्तियों और देनदारियों का पूर्ण या आंशिक रूप से अंतरण; नहीं तो

(ख) सामान्य निकाय की उस बैठक की तारीख से ठीक पहले उस सोसायटी की परिसंपत्तियों और दायित्वों का पूर्णतया आंशिक रूप से किसी अन्य सहकारी समितियों को अंतरण;

(ii) उपधारा (4) के बाद, निम्नलिखित उप-धारा जोड़ी जाएगी, अर्थात्:-

"(4क) इस धारा में निहित किसी बात के होते हुए भी, जहां उपधारा (2) के अधीन किसी योजना में किसी सहकारी समिति की परिसंपत्तियों और देनदारियों को उसके खंड (ख) में निर्दिष्ट किसी अन्य मौजूदा सहकारी समिति को अंतरण करने के संबंध में कोई प्रस्ताव शामिल है, तो यह योजना उस मौजूदा सोसायटी या उसके शेयरधारकों और लेनदारों पर बाध्यकारी नहीं होगी, जब तक कि इस तरह के हस्तांतरण के संबंध में प्रस्ताव को मौजूदा सोसायटी द्वारा अपने सामान्य निकाय की बैठक में उपस्थित सदस्यों के बहुमत द्वारा पारित प्रस्ताव द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता है।

29. वर्ष 1984 में, अधिनियम, 1984 अधिनियमित और प्रख्यापित किया गया था, जिसका आवेदन उसकी धारा 2 में प्रदान किया गया था जो इस प्रकार है-

"2. आवेदन- यह अधिनियम निम्नलिखित पर लागू होगा -

(क) सभी सहकारी समितियां, जिनका उद्देश्य एक राज्य तक ही सीमित नहीं है, जिन्हें इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व निगमित किया गया था।

(i) सहकारी समिति अधिनियम, 1912 के तहत, या

(ii) किसी संविधि में प्रवृत्त सहकारी समितियों से संबंधित किसी अन्य कानून के अधीन या बहु-इकाई सहकारी समिति अधिनियम, 1942 के अनुसरण में और जिसका पंजीकरण ऐसे प्रारंभ से पहले रद्द नहीं किया गया है; और

(ख) सभी बहु-राज्य सहकारी समितियां,

30. अधिनियम, 1984 की धारा 3 के खंड (के) में "बहु-राज्य सहकारी समिति" को अधिनियम, 1984 के तहत पंजीकृत या पंजीकृत माना जाने वाली सोसायटी के रूप में परिभाषित किया गया है और इसमें एक राष्ट्रीय सहकारी समिति शामिल है।

31. अधिनियम, 1984 में, जिसने अधिनियम, 1942 को निरस्त कर दिया, एक सहकारी बैंक को बहु-राज्य सहकारी समिति के रूप में परिभाषित किया गया था जो बैंकिंग व्यवसाय करती है।

32. अधिनियम, 1984 की धारा 4 के तहत, एक केंद्रीय रजिस्ट्रार की नियुक्ति और शक्तियां निर्दिष्ट की गई थीं। धारा 5 में प्रावधान किया गया है कि अधिनियम के तहत कौन सी बहु-राज्य सहकारी समिति पंजीकृत की जा सकती है। पंजीकरण के लिए आवेदन धारा 6 के तहत किया जाना था, और धारा 7 में ऐसी सोसायटी के पंजीकरण का प्रावधान था। धारा 8 केंद्रीय रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकरण प्रमाण पत्र जारी करने से संबंधित है।

33. अधिनियम, 1984 की धारा 17 में उन मामलों का प्रावधान किया गया है जिनमें बहु-राज्य सहकारी समितियों का पंजीकरण प्रमाण पत्र रद्द किया जा सकता है। धारा 52 में बहु-राज्य सहकारी समितियों को उनके पंजीकरण पर निगमित निकाय होने का प्रावधान किया गया था, जिस नाम के तहत इसे पंजीकृत किया गया था, जिसके पास स्थायी उत्तराधिकार और एक सामान्य मुहर थी, और संपत्ति रखने की शक्ति के साथ, अनुबंध में प्रवेश करने, मुकदमों का बचाव करने और अन्य कानूनी कार्यवाही करने और जिस उद्देश्य के लिए इसका गठन किया गया था, उसके लिए आवश्यक सभी चीजें करने की शक्ति थी। अध्याय IX में बहु-राज्य सहकारी समितियों को बंद करने, परिसमापक की नियुक्ति और उसकी शक्तियां और परिसंपत्तियों के निपटान का प्रावधान है। इस अध्याय के तहत, केंद्रीय रजिस्ट्रार को परिसमापक की रिपोर्ट पर विचार करने के बाद एक बहु-राज्य सहकारी समिति के पंजीकरण को रद्द करने का अधिकार दिया गया था और यह प्रावधान किया गया था कि इस तरह के रद्दीकरण पर, सोसायटी भंग हो जाएगी।

34. अधिनियम, 1984 के अध्याय XII के तहत, उन समितियों से संबंधित मामलों को संदर्भित किया गया था जो राज्यों के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप बहु-राज्य सहकारी समितियां बन जाती हैं। धारा 95, जो इस अध्याय के अंतर्गत आती थी, में यह प्रावधान किया गया था कि राज्यों के पुनर्गठन से ठीक पहले कार्य करने वाली सहकारी समितियां, जिनका उद्देश्य एक राज्य तक ही सीमित था, उस दिन से एक बहु-राज्य सहकारी समिति बन गई, इसे अधिनियम, 1984 के संगत उपबंधों के अधीन पंजीकृत एक बहु-राज्य सहकारी समिति माना जाएगा। केंद्रीय रजिस्ट्रार की शक्ति और ऐसी किसी भी सोसायटी के पुनर्गठन या पुनर्गठन के लिए एक योजना की मंजूरी आदि, इस धारा में प्रदान की गई है।

35. यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि अधिनियम, 1984 में, धारा 103 ने मौजूदा बहु-राज्य सहकारी समितियों को बचाया। धारा 103 इस प्रकार है:-

"103. विद्यमान बहु-राज्य सहकारी समितियों की बचत- (1) इस अधिनियम के प्रारंभ से ठीक पूर्व विद्यमान प्रत्येक बहु-राज्य सहकारी समिति, जो सहकारी समिति अधिनियम, 1912 के अधीन अथवा किसी राज्य में प्रवृत्त सहकारी समितियों से संबंधित किसी अन्य अधिनियम के अधीन अथवा बहु-इकाई सहकारी समिति अधिनियम, 1942 के उपबंधों के अनुसरण में पंजीकृत है, इस अधिनियम के संगत उपबंधों के अधीन पंजीकृत

समझा जाएगा और ऐसी सोसायटी के उप-नियम, जहां तक वे इस अधिनियम या नियमों के उपबंधों से असंगत न हों, तब तक लागू रहेंगे जब तक कि परिवर्तित या निरस्त न कर दिया जाए।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट किसी अधिनियम के अधीन सभी नियुक्तियां, किए गए नियम और आदेश, जारी की गई सभी अधिसूचनाएं और नोटिस और सभी वाद और अन्य कार्यवाहियां, जहां तक वे इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत नहीं हैं, इस अधिनियम के अधीन क्रमशः की गई, जारी की गई और संस्थापित की गई समझी जाएंगी, सिवाय इसके कि एक बहु-राज्य सहकारी समिति के पंजीकरण को रद्द करने के आदेश को तब तक माना जाएगा, जब तक कि सोसायटी को पहले ही अंतिम रूप से समाप्त नहीं किया गया हो, इसे बंद करने के लिए धारा 77 के तहत किया गया आदेश माना जाएगा।

इसलिए, याचिकाकर्ता-बैंक को अधिनियम, 1912 के तहत पंजीकृत किया जा रहा है और यह प्रदर्शित करने पर कि इसे अधिनियम, 1942 की धारा 2 के तहत पंजीकृत माना जाएगा, को उपरोक्त धारा 103 और इसके परिणामस्वरूप, इसके उप-नियमों को ध्यान में रखते हुए अधिनियम, 1984 के संबंधित प्रावधानों के तहत पंजीकृत माना जा सकता है, जहां तक कि वे अधिनियम 1984 के प्रावधानों के साथ असंगत नहीं थे, या नियम, तब तक लागू रहेंगे जब तक कि उन्हें बदल या रद्द नहीं कर दिया जाता।

36. यहां यह उल्लेख करना उचित है कि जब तक अधिनियम, 1942 का बोलबाला नहीं था, अर्थात् अधिनियम, 1984 द्वारा इसके निरसन के समय तक, पंजीकरण, नियंत्रण और विघटन के सभी प्रयोजनों के लिए, सहकारी समितियां, जिनके उद्देश्य एक राज्य तक ही सीमित नहीं थे, वे उस प्रांत/राज्य में उस समय के लिए सहकारी समितियों से संबंधित कानून के अधीन होंगी जिसमें यह थी वास्तव में पंजीकृत अर्थात् उत्तर प्रदेश राज्य है। अतः, अधिनियम, 1942 के अधिनियम, 1984 द्वारा निरसन किए जाने तक, अधिनियम, 1912 के वे उपबंध, जो संशोधन अधिनियम, 1956 द्वारा संशोधित किए गए थे, प्रभावी रहे; तथा उसके निरसन के पश्चात्, उत्तर प्रदेश अधिनियम, 1965 के प्रवर्तन के उपरांत, ऐसी बहुराज्य सहकारी समितियों के संदर्भ में पंजीकरण, नियंत्रण एवं विघटन से संबंधित सभी विषयों के लिए उत्तर प्रदेश अधिनियम, 1965 के उपबंध प्रभावी एवं प्रचालित रहे।

37. अधिनियम, 2002, 19.8.2002 को लागू हुआ। एक सहकारी बैंक को एक बहु-राज्य सहकारी समिति के रूप में परिभाषित किया गया था जो बैंकिंग व्यवसाय करती है। एक बहु-राज्य सहकारी समिति को अधिनियम, 2002 की धारा 3 के खंड (पी) के तहत परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ उस अधिनियम के तहत पंजीकृत या पंजीकृत माना जाने वाली सोसायटी है और इसमें एक राष्ट्रीय सहकारी समिति और एक संघीय सहकारी समिति शामिल है।

38. अधिनियम, 2002 के अध्याय II की विभिन्न धाराएं केंद्रीय पंजीयक की नियुक्ति और शक्तियां और बहु-राज्य सहकारी समितियों के पंजीकरण का प्रावधान करती हैं। एक बहु-राज्य सहकारी समिति को अपने पंजीकरण पर उस नाम से निगमित निकाय प्रदान किया जाएगा जिसके तहत वह स्थायी उत्तराधिकार और सामान्य मुहर

के साथ पंजीकृत है, और चल और अचल दोनों तरह की संपत्ति का अधिग्रहण और धारण करने और निपटान करने की शक्ति के साथ, अनुबंध में प्रवेश करने, मुकदमों और बचाव और अन्य कानूनी कार्यवाहियों को स्थापित करने और उन उद्देश्यों के लिए आवश्यक सभी चीजें करने की शक्ति के साथ जिनके लिए इसका गठन किया गया है, और, उक्त नाम से, मुकदमा करेगा या मुकदमा दायर किया जाएगा; इसमें बहु-राज्य सहकारी समिति के उप-नियमों में संशोधन करने और इसके परिचालन में आने और केंद्रीय पंजीयक द्वारा इसके पंजीकरण का प्रावधान है। धारा 21 में कुछ मामलों में बहु-राज्य सहकारी समितियों के पंजीकरण प्रमाण-पत्र को रद्द करने का प्रावधान है। अध्याय X में बहु-राज्य सहकारी समितियों को बंद करने, मध्यस्थों की नियुक्ति और उनकी शक्तियों का प्रावधान है; संपत्ति का निपटान; केंद्रीय पंजीयक को बहु-राज्य सहकारी समिति के पंजीकरण को रद्द करने का आदेश देने की शक्ति है और इस तरह के रद्द होने पर वह सोसायटी भंग हो जाएगी। अध्याय XIII के अंतर्गत धारा 103 में यह प्रावधान है कि राज्यों के पुनर्गठन से ठीक पहले कार्य करने वाली सहकारी समिति, जिसके उद्देश्य एक राज्य तक ही सीमित थे, वह एक बहु-राज्य सहकारी समिति बन जाती है, क्योंकि उस दिन से वह इस अधिनियम के संगत उपबंधों के अधीन पंजीकृत एक बहु-राज्य सहकारी समिति समझी जाएगी। यह केंद्रीय रजिस्ट्रार को ऐसी समितियों के पुनर्गठन और पुनर्गठन आदि के लिए एक योजना तैयार करने की शक्ति भी प्रदान करता है।

39. धारा 126 अधिनियम, 2002 का निरसन और बचत खंड है। यह प्रावधान इस प्रकार है: -

"126. निरसन और बचत - (1) बहु-राज्य सहकारी समिति अधिनियम, 1984 (51 वर्ष 1984) एतद्वारा निरसित किया जाता है।

(2) निरसन के संबंध में सामान्य खंड अधिनियम, 1897 (10 वर्ष 1897) में निहित उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, कोई अधिसूचना, नियम, आदेश, अपेक्षा, पंजीकरण, प्रमाण पत्र, नोटिस, निर्णय, निदेश, अनुमोदन, प्राधिकार, सहमति, आवेदन, अनुरोध या बनाई गई, जारी, दी गई या की गई बात जो इस अधिनियम के प्रारंभ में लागू होगी, इस अधिनियम के संबंधित उपबंधों के तहत किए गए, जारी, दिए गए या किए गए रूप में प्रभावी हैं।

(3) प्रत्येक बहु-राज्य सहकारी समिति, जो इस अधिनियम के प्रारंभ से ठीक पहले विद्यमान है, जो सहकारी समिति अधिनियम, 1912 (2 वर्ष 1912) के अधीन या किसी राज्य में प्रवृत्त सहकारी समितियों से संबंधित किसी अन्य अधिनियम के अधीन या बहु-इकाई सहकारी समिति अधिनियम, 1942 (6 वर्ष 1942) के उपबंधों के अनुसरण में पंजीकृत है, या बहु-राज्य सहकारी समिति अधिनियम, 1984 (51 वर्ष 1984), को इस अधिनियम के संगत उपबंधों के अधीन पंजीकृत समझा जाएगा, और ऐसी सोसायटी के उपनियम, इस तक कि वे इस अधिनियम या नियमों के उपबंधों के साथ असंगत नहीं हैं, तब तक लागू रहेंगे जब तक कि परिवर्तित या निरस्त नहीं किया जाता है।

(4) उपधारा (1) में निर्दिष्ट किसी अधिनियम के अधीन स्थापित सभी नियुक्तियां, नियम और आदेश, जारी की गई सभी अधिसूचनाएं और नोटिस और सभी वाद और अन्य कार्यवाहियां, जहां तक वे इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों, इस अधिनियम के अधीन क्रमशः बनाई गई, जारी की गई और संस्थापित की गई समझी जाएंगी, सिवाय इसके कि बहु-राज्य सहकारी समिति के पंजीकरण को रद्द करने वाले आदेश को माना जाएगा, जब तक कि सोसायटी को पहले ही अंतिम रूप से समाप्त नहीं किया गया है, तब तक इसे बंद करने के लिए धारा 86 के तहत एक आदेश दिया गया है।

(5) इस अधिनियम के उपबंध निम्नलिखित पर लागू होंगे-

(क) बहु-राज्य सहकारी समिति के पंजीकरण के लिए कोई आवेदन;

(ख) बहु-राज्य सहकारी समिति के उप-नियमों में संशोधन के पंजीकरण के लिए कोई आवेदन, इस अधिनियम के प्रारंभ में लंबित और उसके परिणामस्वरूप होने वाली कार्यवाही और इसके अनुसरण में प्रदान किए गए किसी भी पंजीकरण के लिए।

(6) इस अधिनियम में अन्यथा उपबंधित के अलावा, इस अधिनियम के प्रारंभ में किसी न्यायालय में या केन्द्रीय पंजीयक या किसी अन्य प्राधिकारी के समक्ष लंबित कोई विधिक कार्यवाही उस न्यायालय में या केन्द्रीय पंजीयक या उस प्राधिकारी के समक्ष इस प्रकार जारी रहेगी मानो यह अधिनियम पारित नहीं किया गया हो।

40. इसलिए, अधिनियम, 2002 की धारा 126 के तहत, अधिनियम, 1984 की धारा 103 में प्रदान किया गया डीमड पंजीकरण लागू है और इसका प्रभाव अधिनियम, 2002 के संबंधित प्रावधानों के तहत किया गया, जारी, दिया या किया गया है।

इसके अलावा, धारा 126 की उप-धारा (3) के तहत, आच्छादित की गई सहकारी समिति को अधिनियम, 2002 के संगत प्रावधानों के तहत पंजीकृत माना जाएगा और ऐसी सोसायटी के उप-नियम, जहां तक वे अधिनियम, 2002 या नियमों के उपबंधों के साथ असंगत नहीं हैं, तब तक लागू रहेंगे जब तक कि उन्हें परिवर्तित या रद्द नहीं किया जाता है।

अधिनियम, 2002 की धारा 126 की उप-धारा (5) के तहत, अधिनियम, 2002 के प्रावधान निम्नलिखित पर लागू होते हैं -

(क) बहु-राज्य सहकारी समिति के पंजीकरण के लिए कोई आवेदन;

(ख) बहु-राज्य सहकारी समिति के उप-नियमों में संशोधन के लिए पंजीकरण के लिए कोई आवेदन,

(ख) अधिनियम, 2002 के प्रारंभ में लंबित है और उसके परिणामस्वरूप होने वाली कार्यवाहियों और उसके अनुसरण में प्रदान किए गए किसी भी पंजीकरण के लिए लंबित है।

अंत में, धारा 126 की उप-धारा (6) के तहत, अधिनियम, 2002 में अन्यथा उपबंधित के अलावा, अधिनियम, 2002 के प्रारंभ में किसी भी न्यायालय में या केंद्रीय पंजीयक या किसी अन्य प्राधिकरण के समक्ष लंबित कोई भी कानूनी कार्यवाही ऐसे जारी रहेगी जैसे कि अधिनियम, 2002 पारित नहीं किया गया था।

41. उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता-बैंक के पंजीकरण का पहलू, एक बहु-राज्य सहकारी समिति के रूप में, जो मूल रूप से 1919 में पंजीकृत किया गया था, अधिनियम, 1912 के प्रावधानों के साथ-साथ अधिनियम, 1942 की धारा 2 के मद्देनजर जारी नहीं हो सकता था, बशर्ते कि यह प्रदर्शित किया जाए कि इसके उद्देश्य एक प्रांत/राज्य तक ही सीमित नहीं थे और जिस तारीख से इसके उद्देश्य इस प्रकार प्रदान किए गए थे। इसके अलावा, ऐसे मामले में अधिनियम, 1984 की धारा 103 के उपबंधों और अधिनियम, 2002 की धारा 126 के उपबंधों को देखते हुए इसका पंजीकरण कोई मुद्दा नहीं हो सकता था।

42. एक बहु-राज्य सहकारी समिति के पंजीकरण के लिए एक आवेदन एक बहु-राज्य सहकारी समिति के नाम में परिवर्तन सहित इसके उप-नियमों के संशोधन के पंजीकरण के लिए एक आवेदन से अलग है। पिछली कार्यवाही और घटनाक्रम को अब इस न्यायालय के दिनांक 21.3.2018 के आदेशों की पृष्ठभूमि में देखा जा सकता है, जो रिट-सी संख्या-38808 वर्ष 2017 में पारित और दिनांक 12.10.2018 को रिट-सी संख्या-16029 वर्ष 2018 में पारित किया गया था।

43. प्रतिवादी संख्या-2 ने अपने जवाबी हलफनामे के प्रस्तर-6 और 8 में निम्नानुसार कहा है:

"6. रिट याचिका के प्रस्तर-6 और 7 के जवाब में यह प्रस्तुत किया जाता है कि दिनांक 3.5.1973 के उप-नियमों में संशोधन उत्तर प्रदेश राज्य सहकारी समिति अधिनियम, 1966 के तहत पंजीकृत किया गया है, जो राज्य सहकारी अधिनियम है, न कि मल्टी यूनिट अधिनियम, 1942 के तहत जो उस समय मौजूद केंद्रीय कानून था। मल्टी यूनिट एक्ट, 1942 के बाद एम.एस.सी.एस अधिनियम, 1984 और बाद में एम.एस.सी.एस अधिनियम, 2002 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है। और उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम का क्षेत्राधिकार केवल उत्तर प्रदेश राज्य तक फैला हुआ है और उससे आगे नहीं और उसके बाद उप-नियमों में कोई और संशोधन नहीं हुआ है। बैंक के मौजूदा उप-नियम संख्या-3 (i) के अनुसार, "अधिनियम" की परिभाषा "अधिनियम" के रूप में दी गई है, जिसका अर्थ है उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम 1965 (अधिनियम XI वर्ष 1966) समय-समय पर संशोधित और उप-कानून के तहत संख्या-3 (ix) "रजिस्ट्रार" को "रजिस्ट्रार का अर्थ है अधिनियम की धारा 3 के तहत सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार के रूप में नियुक्त व्यक्ति के रूप में" जिसका अर्थ है उत्तर प्रदेश अधिनियम।

8. याचिका के प्रस्तर-13 से 19 के जवाब में यह प्रस्तुत किया जाता है कि बैंक के उप-नियमों को उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम के तहत पंजीकृत किया गया है और उक्त अधिनियम का अधिकार क्षेत्र केवल उत्तर प्रदेश राज्य तक फैला हुआ है, न कि उससे आगे और उप-नियमों में और कोई संशोधन उसके बाद हुआ है। इसलिए बैंक उत्तर प्रदेश के बाहर के राज्यों के सदस्यों को स्वीकार करने के लिए अधिकृत नहीं है।

जहां तक जवाबी हलफनामे में दिए गए कथन किसी सोसायटी के पंजीकरण के संबंध में कानून से संबंधित हैं, वे समय-समय पर लागू कानून की उचित मूल्यांकन पर आधारित नहीं हैं। जैसा कि ऊपर कहा गया है, पंजीकरण, नियंत्रण और विघटन के सभी उद्देश्यों के लिए अधिनियम, 1942 की धारा 2 उप-धारा (1) के प्रावधान को ध्यान में रखते हुए, एक बहु-राज्य सहकारी सामाजिकता प्रांत में उस समय लागू सहकारी समितियों से संबंधित कानून के अधीन थी, जो कि उस राज्य में थी जिसमें यह वास्तव में पंजीकृत थी। अधिनियम, 1984 के अधिनियम, 1942 को निरस्त करने से पहले, अधिनियम, 1912 के प्रावधान, जैसा कि बाद में संशोधन अधिनियम, 1956 द्वारा संशोधित किया गया था और उसके बाद, वर्तमान में उत्तर प्रदेश अधिनियम, 1965 के प्रावधान, बहु-राज्य सहकारी समिति के पंजीकरण, नियंत्रण और विघटन के पहलुओं को नियंत्रित करते हैं। इसलिए, याचिकाकर्ता-बैंक के उप-नियमों में जो संशोधन कथित रूप से 1973 में किए गए थे, जहां तक वे उत्तर प्रदेश अधिनियम, 1965 और उसके तहत बनाए गए नियमों के प्रावधानों का उल्लेख करते हैं, उन्हें प्रासंगिक समय पर उत्तर प्रदेश राज्य में लागू कानून के अनुसार पंजीकृत किया जाना आवश्यक था, जो कि उत्तर प्रदेश अधिनियम 1965 है;

44. अर्बन बैंक ऑफ महाराष्ट्र एंड गोवा लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य सहकारी बैंक लिमिटेड और अन्य 12 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों का उल्लेख करना उचित होगा जो इस प्रकार हैं:

"28. बहु-इकाई अधिनियम के तहत यदि किसी सोसायटी की वस्तुएं एक राज्य तक ही सीमित नहीं थीं, तो ऐसी सोसायटी को अन्य राज्यों में भी पंजीकृत माना जाता था, लेकिन पंजीकरण, नियंत्रण और विघटन के प्रयोजनों के लिए यह राज्य का कानून था जहां इसे पहली बार पंजीकृत किया गया था जो काम करना जारी रखता था। इस प्रकार, बहु-इकाई अधिनियम के अधिनियमन के बाद यह स्पष्ट हो गया कि भले ही एक सोसायटी को बहु-इकाई अधिनियम के तहत पंजीकृत माना जा सकता है, लेकिन पंजीकरण, नियंत्रण और विघटन के प्रयोजनों के लिए यह उस समय के लिए सहकारी समितियों से संबंधित कानून से बंधा हुआ रहा जिसमें इसे पहली बार पंजीकृत किया गया था। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि मल्टी-यूनिट एक्ट के लागू होने के बाद, सहकारी समिति अधिनियम, 1912 केवल एक प्रांत तक सीमित सहकारी समितियों से संबंधित था। जिन वस्तुओं की वस्तुएं एक प्रांत तक सीमित नहीं हैं, उन्हें बहु-इकाई अधिनियम के तहत पंजीकृत माना जाता था। (महत्व सन्निविष्ट)

45. याचिकाकर्ताओं का कहना है कि वर्ष 1973 में, उनकी सोसायटी का नाम बदलकर "मैकेनिकल डिपार्टमेंट प्राइमरी कोऑपरेटिव बैंक लिमिटेड" कर दिया गया था और इस आशय का प्रमाण पत्र केंद्रीय रजिस्ट्रार, सहकारी

समितियां, उत्तर प्रदेश, लखनऊ द्वारा 3.5.1973 को जारी किया गया था। लेकिन, यह स्वीकार किया जाता है कि दिनांक 3-5-1973 का मूल पंजीकरण प्रमाण-पत्र और सोसायटी के उप-नियमों में किए गए संशोधनों की सूची उपलब्ध नहीं है। हालांकि याचिकाकर्ताओं का दावा है कि वे बिहार राज्य के सदस्य हैं, लेकिन उनके द्वारा यह प्रदर्शित नहीं किया गया है कि उन्हें भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा बिहार के समस्तीपुर में एक कार्यालय खोलने के लिए अनुज्ञप्ति दिया गया था। अभिलेखों से निर्णायक रूप से प्रदर्शित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि याचिकाकर्ता-समाज का 'उद्देश्य' एक राज्य तक ही सीमित नहीं था। इस न्यायालय द्वारा रिट-सी संख्या-38808 वर्ष 2017 में पारित दिनांक 21.3.2018 के आदेश का अवलोकन इंगित करता है कि यह याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा दी गई रियायतों पर पारित किया गया था। जाहिर है, कानून के मामलों पर अधिवक्ता द्वारा याचिकाकर्ता की ओर से ऐसी रियायतें दी गई थीं और वह भी संबंधित प्रतिवादी के विशिष्ट निर्देशों के बिना और इस तरह याचिकाकर्ता को बाध्य नहीं कर सकती हैं।

46. इस न्यायालय द्वारा रिट-सी संख्या-16029 वर्ष 2018 में पारित दिनांक 12.10.2018 का अन्य आदेश भी पक्षों के अधिवक्ता की सहमति के आधार पर पारित किया गया था। याचिकाकर्ता-बैंक के पंजीकरण या किसी अन्य राज्य के संबंध में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा अनुज्ञप्ति प्रदान करने के पहलू के संबंध में कोई निष्कर्ष न्यायालय द्वारा वापस नहीं किया गया था।

47. यहां यह उल्लेख करना उचित है कि याचिकाकर्ता-बैंक के उपनियमों में, जो खंड 2 में रिट याचिका के अनुलग्नक-1 में है, संचालन का क्षेत्र पूर्वोत्तर रेलवे द्वारा काम की जाने वाली पूरी रेलवे प्रणाली में विस्तारित होने के लिए कहा गया है, जिसमें वे स्थान भी शामिल हैं जहां पूर्वोत्तर रेलवे के कार्यालय हो सकते हैं। रजिस्टर्ड ऑफिस गोरखपुर बताया जा रहा है। खंड 5 के तहत, सदस्यता पात्रता मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग, पूर्वोत्तर रेलवे के सभी स्थायी कर्मचारियों, स्थायी पदों पर काम करने वाले मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग के अस्थायी कर्मचारियों और एक वर्ष से अधिक की सेवा करने आदि के लिए है।

केंद्रीय रजिस्ट्रार के दिनांक 20.04.2018 के आदेश में, जो रिट-सी संख्या-38808 वर्ष 2017 में पारित आदेश वर्ष 21.3.2018 के अनुसार पारित किया गया था, यह परिलक्षित होता है कि प्राधिकरण द्वारा रेलवे बोर्ड से पूर्वोत्तर रेलवे के अंतर्गत आने वाले डिवीजनों के नामों के साथ-साथ उन जिलों के विवरण के बारे में जानकारी मांगी गई थी जहां इन मंडलों के कार्यालय स्थित हैं। रेलवे बोर्ड ने अपने जवाब में बताया कि पूर्वोत्तर रेलवे का मुख्यालय गोरखपुर में है और इसके तीन मंडल हैं, लखनऊ मंडल, इज्जतनगर मंडल और वाराणसी मंडल, जिनके कार्यालय क्रमशः लखनऊ, बरेली और वाराणसी में हैं। केंद्रीय पंजीयक के उपरोक्त आदेश वर्ष 20.4.2018 को रिट-सी संख्या-16029 वर्ष 2018 में आदेश वर्ष 12.10.2018 में अलग रखा गया था। केंद्रीय रजिस्ट्रार के समक्ष दिनांक 22.10.2018 को पेश किए गए अपने अभ्यावेदन में, याचिकाकर्ता-बैंक ने कहा कि पूर्वोत्तर रेलवे के तीन मंडल उत्तर प्रदेश, बिहार के कुछ हिस्सों और उत्तराखंड को आच्छादित करते हैं। पूर्वोत्तर रेलवे प्रणाली का नक्शा और पूर्वोत्तर रेलवे की वेबसाइट के प्रासंगिक पृष्ठ का प्रिंटआउट और तीन राज्यों उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और बिहार में वर्तमान सदस्यता की सूची साक्ष्य के रूप में अभ्यावेदन के साथ संलग्न की गई थी।

48. हालांकि, दायर किए जाने के लिए बताए गए पूर्वोक्त साक्ष्य, याचिकाकर्ता-बैंक के संचालन के क्षेत्र के एक राज्य तक सीमित नहीं होने का सुझाव दे सकते हैं, विशेष रूप से केंद्रीय रजिस्ट्रार द्वारा रेलवे बोर्ड से प्राप्त उपरोक्त जानकारी को देखते हुए, निर्णायक प्रमाण नहीं है। इसके अलावा, उप-नियमों की किसी प्रमाणित प्रति या स्वीकृत प्रति या विधिवत पंजीकृत उप-नियमों में संशोधनों के अभाव में, याचिकाकर्ता-बैंक के संचालन के क्षेत्र या उद्देश्यों के बारे में कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है।

यहां तक कि याचिकाकर्ताओं की ओर से यह भी कहा गया है कि उत्तर प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम, 2000 के अनुसार गठित उत्तराखंड राज्य में वे क्षेत्र शामिल हैं जहां याचिकाकर्ता-बैंक का संचालन विस्तारित है, या तो अधिनियम, 1942 के तहत डीमंड पंजीकरण का प्रदर्शन करके बनाए रखा जा सकता है या इसके उद्देश्य उत्तराखंड राज्य के भीतर किसी भी क्षेत्र तक फैले हुए हैं। यह, जैसा कि इसके बाद भी कहा गया है, याचिकाकर्ता-बैंक प्रदर्शित करने में विफल रहा है।

49. जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, अधिनियम, 1942 की धारा 2 के तहत डीमिंग क्लॉज का लाभ उठाने के लिए, यह याचिकाकर्ताओं के लिए था कि वे ठोस सबूत देकर प्रदर्शित करें कि इसकी 'वस्तुएं' एक राज्य तक ही सीमित नहीं थीं। दुर्भाग्य से, वे ऐसा करने में विफल रहे हैं। इस प्रकार, अधिनियम, 1942 में उपर्युक्त डीमिंग क्लॉज के आधार पर या निरसित अधिनियम, 1984 की धारा 103 के आधार पर या यहां तक कि अधिनियम, 2002 की धारा 126 के आधार पर भी मल्टी स्टेट कोऑपरेटिव सोसाइटी के रूप में उनके पंजीकरण के पहलू को प्रदर्शित नहीं किया गया है। इसलिए, इस तरह के एक डीमंड पंजीकरण के अभाव में, याचिकाकर्ता-बैंक को यह प्रदर्शित करने की आवश्यकता थी कि यह अन्यथा एक बहु-राज्य सहकारी समिति के रूप में पंजीकृत था, जो कि वह भी करने में विफल रहा है। हालांकि यह न्यायालय इस तथ्य से अवगत है कि केंद्रीय रजिस्ट्रार द्वारा कई आदेश पारित किए गए हैं और याचिकाकर्ता-समाज के चुनावों के संचालन के संबंध में केंद्रीय रजिस्ट्रार को निर्देश देने वाले रिट न्यायालय के निर्णय हैं, तथ्य यह है कि अधिनियम के तहत पंजीकरण या डीमंड पंजीकरण का पहलू, इस याचिका में याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा 2002 का प्रदर्शन किया जाना आवश्यक था, जो उसने नहीं किया है। यह कहना नहीं है कि प्रबंधन समिति के अधिक्रमण और याचिकाकर्ता-बैंक के चुनावों से संबंधित मामलों के संबंध में केंद्रीय रजिस्ट्रार के पिछले निर्देश गैर-अनुमानित हो जाएंगे। हम यह स्पष्ट करते हैं कि केंद्रीय रजिस्ट्रार द्वारा पारित आदेश, जो आक्षेपित है और जो भारतीय रिज़र्व बैंक के परिपत्र पर आधारित है, विचाराधीन है और इसलिए, वर्तमान निर्णय विचाराधीन है।

दोनों प्रश्नों का उत्तर तदनुसार दिया जाता है।

प्रश्न संख्या-3 पर विचार

50. तीसरा प्रश्न यह है, 'क्या भारतीय रिज़र्व बैंक का परिपत्र याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा संशोधन द्वारा अपने उपनियमों में संशोधन करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक की पूर्व अनुमति को कानूनी रूप से अनिवार्य कर सकता है?'

51. पांडुरंग गणपति चौगुले बनाम विश्वासराव पाटिल मुरगुद सहकारी बैंक लिमिटेड के मामले में सर्वोच्च न्यायालय सहकारी बैंकों के 2002-15 वित्तीय परिसंपत्तियों के प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण और प्रतिभूति हित के प्रवर्तन अधिनियम की प्रयोज्यता पर विचार कर रहा था। संसद की यह क्षमता भी प्रश्नगत की गई कि क्या वह एस.ए.आर.एफ.ए.ई.एस.आई. अधिनियम (SARFAESI Act) की धारा 2(ग) में उपखंड (iva) – बहुराज्य सहकारी बैंक – को सम्मिलित कर संशोधन करने हेतु सक्षम थी। इस प्रसंग में यह प्रश्न उत्पन्न हुआ कि क्या बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 5(ग) में निहित 'बैंकिंग कंपनी' की परिभाषा में वे सहकारी बैंक सम्मिलित हैं जो राज्य कानून के अधीन पंजीकृत हैं, तथा क्या उक्त परिभाषा अधिनियम, 2002 के अंतर्गत स्थापित बहुराज्य सहकारी समितियों पर भी लागू होती है। सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित प्रश्नों पर विचार किया:

"(1) क्या 'सहकारी बैंक', जो सहकारी समितियां भी हैं, भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची I की प्रविष्टि 45 या सूची II की प्रविष्टि 32 द्वारा शासित होते हैं, और किस सीमा तक?

(2) क्या बीआर अधिनियम, 1949 की धारा 5 (सी) में परिभाषित 'बैंकिंग कंपनी' राज्य सहकारी कानूनों के तहत पंजीकृत सहकारी बैंकों और बहु-राज्य सहकारी समितियों को भी आच्छादित करती है?

(3)(क) क्या राज्य स्तर और बहु-राज्य स्तर पर सहकारी बैंक सरफेसी अधिनियम के प्रयोज्य बैंक हैं?

(3)(ख) क्या बहु-राज्य सहकारी बैंकों को शामिल करने के कारण सरफेसी अधिनियम की धारा 2(ग) (iva) के उपबंध और राज्य में सहकारी बैंकों को अधिसूचित करने वाली दिनांक 28-1-2003 की अधिसूचना अधिकारातीत है?

52. उपरोक्त प्रश्नों पर विचार करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने **पांडुरंग गणपति चौगुले (उपरोक्त)** में निम्नानुसार टिप्पणी की: -

"87. यह स्पष्ट है कि सहकारी समितियों के "निगमन, विनियमन और समापन" को भारत के संविधान की अनुसूची VII सूची II प्रविष्टि 32 के तहत आच्छादित किया गया है, जबकि "बैंकिंग" सूची I प्रविष्टि 45 द्वारा आच्छादित किया गया है। इस प्रकार, "निगमन, विनियमन और परिसमापन" के पहलू को सूची II प्रविष्टि 32 के तहत शामिल किया जाएगा। तथापि, ऐसी सहकारी समितियों/बैंकों की बैंकिंग कार्यकलाप सूची-I प्रविष्टि 45 द्वारा शासित होगी। उक्त बैंक सूची I प्रविष्टि 45, बीआर अधिनियम, 1949 के साथ-साथ सूची I की प्रविष्टि 38 के तहत भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम से संबंधित कानून द्वारा शासित और विनियमित होते हैं। लाइसेंसिंग और व्यापार करने के मामले में, बीआर अधिनियम, 1949 के प्रावधानों के तहत एक गहरा और व्यापक नियंत्रण बनाया जाता है और किसी भी संस्था, प्राथमिक क्रेडिट सोसाइटी द्वारा की जाने वाली बैंकिंग गतिविधि एक बैंक है और भारतीय रिजर्व बैंक को खातों को प्रस्तुत करना आवश्यक है, और उपरोक्त अधिनियम के तहत पूर्ण

नियंत्रण है। बैंकिंग के कार्यकलाप के लिए इन बैंकों को सूची 1 प्रविष्टि 45 के अंतर्गत कानून द्वारा शासित किया जाता है। इस प्रकार, बरामदगी बैंकिंग का एक अनिवार्य हिस्सा होने के कारण, सरफेसी अधिनियम की धारा 13 के तहत अतिरिक्त प्रक्रियाएं प्रदान करके कोई संघर्ष पैदा नहीं किया गया है। यह बैंक के लिए एक प्रक्रिया अपनाने के लिए खुला है जिसे वह चुन सकता है। जब सूची 1 प्रविष्टि 45 के तहत पिथ और पदार्थ में बैंकिंग को आच्छादित किया जाता है, तो यहां तक कि प्रविष्टि 32 सूची 11 के तहत राज्य के लिए आरक्षित क्षेत्र पर आकस्मिक खाई की भी अनुमति है।

88. किसी गतिविधि के विभिन्न पहलू हो सकते हैं। सहकारी समितियों का गठन राज्य सहकारी अधिनियमों के प्रावधानों के तहत किया जा सकता है। राज्य कानून सूची 11 प्रविष्टि 32 के तहत "निगमन, विनियमन और समापन का प्रावधान करता है, एक सदस्यता पंजीकरण, और अन्य मामलों को सूची 11 प्रविष्टि 32 द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है, और साथ ही, बैंकिंग, लाइसेंसिंग, खातों आदि से संबंधित पहलुओं को प्रविष्टि 45 सूची 1 के तहत आच्छादित किया जा सकता है।

89. **डब्ल्यूबी बनाम केसोराम इंडस्ट्रीज लिमिटेड राज्य [स्टेट ऑफ डब्ल्यूबी बनाम केसोराम इंडस्ट्रीज लिमिटेड, (2004) 10 एस.सी.सी. 201]** में, एक संविधान पीठ ने पहलुओं के सिद्धांत पर विचार किया और सूची 1 और 11 के तहत कराधान के क्षेत्र पर विचार किया और राय दी कि वास्तव में अतिव्यापी हो सकता है, लेकिन कानून में कोई अतिव्यापी नहीं होगा। केवल इसलिए कि मूल्यांकन और परिमाणीकरण के लिए अपनाई गई पद्धति या तंत्र समान है, दोनों करों को अतिव्यापी नहीं कहा जा सकता है। यह माना गया कि प्रविष्टियां 52, 53, और 54 कराधान के प्रमुख नहीं हैं। कराधान का क्षेत्र सूची 11 की प्रविष्टि 49 और 50 द्वारा आच्छादित किया गया है। यह माना गया कि एक ही लेनदेन में इसके विभिन्न पहलुओं में दो या दो से अधिक कर योग्य घटनाएं शामिल हो सकती हैं। केवल इसलिए कि पहलू ओवरलैप होते हैं, इस तरह के अतिव्यापी पहलुओं की विशिष्टता से अलग नहीं होते हैं। केवल एक ही लेनदेन के दो पहलुओं के कारण संघर्ष का कोई सवाल ही नहीं था, जिसका उपयोग दो विधायिकाओं द्वारा दो लेवी के लिए किया जा रहा था। न्यायालय ने कहा: (एस.सी.सी. पी. 330, प्रस्तर-141)

"141. जैसा कि गुडरिक ग्रुप लिमिटेड [गुडरिक ग्रुप लिमिटेड बनाम स्टेट ऑफ डब्ल्यूबी, 1995 पूरक(1) एस.सी.सी. 707] में अवधारित किया गया है, जिसे हमने सही ढंग से तय किया है, इस न्यायालय ने कई निर्णयों द्वारा अच्छी तरह से स्थापित कानून के सिद्धांत को नोट किया है कि कर का माप इसके आवश्यक चरित्र का निर्धारक नहीं है। एक ही लेनदेन में इसके विभिन्न पहलुओं में दो या दो से अधिक कर योग्य घटनाएं शामिल हो सकती हैं। केवल इसलिए कि पहलू ओवरलैप होते हैं, इस तरह के अतिव्यापी पहलुओं की विशिष्टता से अलग नहीं होते हैं। हमारी राय में, केवल एक ही लेनदेन के दो पहलुओं के कारण संघर्ष का कोई सवाल ही नहीं है, जो दो विधायिकाओं द्वारा दो लेवी के लिए उपयोग किए जा रहे हैं, जिनमें से दोनों कर या शुल्क हो सकते हैं, या जिनमें से एक कर हो सकता है और दूसरा एक शुल्क जो क्रमशः दो के लिए उपलब्ध कानून के दो क्षेत्रों के भीतर आता है।

90. कानून और प्रविष्टियों पर विचार किया जाना चाहिए और सार कानून के स्थापित सिद्धांत हैं, और आकस्मिक ट्रेडिंग की अनुमति है। इस प्रकार, हमारी राय है कि सरफेसी अधिनियम की धारा 2(सी)(iv)(ए) और 28-2-2003 की अधिसूचना को अधिकारातीत नहीं कहा जा सकता है। वे भारत के संविधान की अनुसूची VII सूची I प्रविष्टि 45 के दायरे में हैं।

52.1. 17वें संशोधन द्वारा संविधान में शामिल अनुच्छेद 243-जेडएल पर विचार करते समय, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की: -

"94. अनुच्छेद 243-जेडएल (1) का तीसरा प्रावधान स्पष्ट करता है कि बैंकिंग का व्यवसाय करने वाली सहकारी समिति के मामले में, बीआर अधिनियम, 1949 के प्रावधान राज्य अधिनियम के अलावा भी लागू होंगे। अनुच्छेद 243-जेडएल के खंड (1) के चौथे परंतुक में बैंकिंग का व्यवसाय करने वाली बहु-राज्य सहकारी समिति के संबंध में एक अपवाद भी शामिल है, इस खंड के प्रावधानों का प्रभाव इस तरह होगा जैसे कि "छह महीने" शब्दों के लिए, "एक वर्ष" शब्दों से प्रतिस्थापित किया गया था। इस प्रकार, संवैधानिक प्रावधान स्वयं एक सहकारी बैंक और अन्य सहकारी समितियों के बीच अंतर करता है और अनुसूची VII सूची I प्रविष्टि 45 के तहत अधिनियमित कानून लागू करता है। इसने सहकारी समितियों द्वारा संचालित बैंकों के लिए बीआर अधिनियम, 1949 की प्रयोज्यता से संबंधित किसी भी विवाद को समाप्त कर दिया। यह भी स्पष्ट करता है कि ऐसे बैंक अनुसूची VII सूची I प्रविष्टि 45 द्वारा शासित होते हैं।

52.2. **वीरेंद्र पाल सिंह बनाम सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार 16** के मामले में अपने निर्णय पर विचार करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की: -

"101. उपरोक्त निर्णय में, यह माना गया था कि उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम के तहत, राज्य सहकारी बैंकों के निगमन, विनियमन और समापन से निपटने के लिए सूची II प्रविष्टि 32 के तहत सक्षम था। तथापि, बैंकिंग से संबंधित सहकारी बैंक की कार्यकलाप का मुख्य पहलू बीआर अधिनियम, 1949 और भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम द्वारा आच्छादित किया गया था, जो कि कानून अनुसूची VII सूची I प्रविष्टि 45 और 38 से संबंधित हैं। "निगमन, विनियमन और परिसमापन के पहलुओं को अनुसूची VII सूची-II प्रविष्टियों 32 के अंतर्गत शामिल किया गया है। हमारी राय में, ऐसे बैंकों द्वारा बैंकिंग की गतिविधि को सूची I प्रविष्टि 45 द्वारा आच्छादित किया गया है, जिसमें सार के सिद्धांत पर विचार किया गया है, और राज्य के लिए आरक्षित क्षेत्र पर आकस्मिक अतिक्रमण पर भी विचार करना अनुमेय है।

102. समाज के गैर-बैंकिंग मामलों को विनियमित करने और समाज के बैंकिंग व्यवसाय को विनियमित करने की अवधारणा दो अलग-अलग पहलू हैं और अलग-अलग प्रविष्टियों के तहत आच्छादित किए गए हैं अर्थात् क्रमशः सूची II प्रविष्टि 32 और सूची I प्रविष्टि 45। बैंकिंग के विनियमन से संबंधित कानून सूची I प्रविष्टि

45 में पाया जा सकता है और केवल संसद ही कानून बनाने के लिए सक्षम है। संसद ने सरफेसी अधिनियम बनाया है। यह किसी निगम, कंपनी या सहकारी बैंक/सहकारी समिति के निगमन, विनियमन या समापन को विनियमित करने का इरादा नहीं रखता है। यह सहकारी बैंकों सहित बैंकों को देय राशि की बरामदगी का प्रावधान करता है, जो बैंकिंग गतिविधि का एक अनिवार्य हिस्सा है। यह अधिनियम किसी भी तरह से सूची II प्रविष्टि 32 के तहत आरक्षित क्षेत्र पर नहीं है और सूची I प्रविष्टि 45 के लिए पता लगाने योग्य कानून का एक टुकड़ा है। **वीरेंद्र पाल सिंह [वीरेंद्र पाल सिंह बनाम रजिस्ट्रार ऑफ कॉप सोसाइटीज, (1980) 4 एस.सी.सी. 109: 1980 एस.सी.सी. (एलएंडएस) 516]** में निर्णय सेवा विनियमों के संबंध में प्रस्तुत किया गया है। यह सूची I प्रविष्टि 45 के तहत आच्छादित किए गए "बैंकिंग" के विनियमन से संबंधित प्रस्तुत मामले पर लागू नहीं होता है। न्यायालय ने उक्त निर्णय में बैंकिंग के विनियमन के पहलू पर विचार नहीं किया क्योंकि इस पर निर्णय लेने की आवश्यकता नहीं थी। इस प्रकार, निर्णय का अनुपात एक अलग क्षेत्र में संचालित होता है। इसके अलावा, उत्तर प्रदेश सहकारी सेवा अधिनियम को एक अन्य सूची यानी प्रविष्टि 45 सूची 1 के विषय पर आकस्मिक खाई के आधार पर बचाया गया था, जो अनुमेय है।

52.3. ग्रेटर बॉम्बे कॉप बैंक लिमिटेड बनाम यूनाइटेड यार्न टेक्स (प्रा) लिमिटेड में सर्वोच्च न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा विभिन्न पहलुओं पर दर्ज निष्कर्षों पर अपनी असहमति दर्ज करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की: -

"120. सहकारी बैंक बैंकिंग व्यवसाय कर रहे हैं, इसे एक आकस्मिक गतिविधि नहीं कहा जा सकता है बल्कि मुख्य और एकमात्र गतिविधि है। हम **ग्रेटर बॉम्बे कॉप बैंक लिमिटेड [ग्रेटर बॉम्बे कॉप बैंक लिमिटेड बनाम यूनाइटेड यार्न टेक्स (पी) लिमिटेड, (2007) 6 एस.सी.सी. 236]** में लिए गए दृष्टिकोण की सदस्यता लेने में असमर्थ हैं क्योंकि प्रावधानों की सही ढंग से मूल्यांकन नहीं की गई थी।

121. ग्रेटर बॉम्बे कॉप बैंक लिमिटेड [ग्रेटर बॉम्बे कॉप बैंक लिमिटेड बनाम यूनाइटेड यार्न टेक्स (प्रा) लिमिटेड, (2007) 6 एस.सी.सी. 236] में कारण दिया गया है कि राज्य अधिनियम में व्यापक मशीनरी प्रदान की गई है, सूची I प्रविष्टि 45 में "बैंकिंग" के दायरे में बरामदगी के लिए एक कानून बनाने के लिए संसद के रास्ते में नहीं आ सकती थी क्योंकि यह इसका आवश्यक हिस्सा है। यहां तक कि अन्य क्षेत्रों में आकस्मिक खाई भी कानून को अमान्य नहीं कर सकती है। यह तर्क भी उतना ही व्यर्थ है कि संसद ने बीआर अधिनियम, 1949 की धारा 5(सी) में संशोधन नहीं किया; वास्तव में, संसद ने सहकारी बैंकों पर इसके आवेदन के संबंध में धारा 56(ए) के तहत ऐसा किया था। धारा 56 में संशोधन के माध्यम से अध्याय V में जोड़े गए बड़ी संख्या में प्रावधानों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है और उन्हें शून्य नहीं किया जा सकता है। बीआर अधिनियम, 1949 के भाग 5 में किए गए व्यापक संशोधनों को पूर्ण प्रभाव दिया जाना चाहिए। यदि सहकारी बैंकों को बीआर अधिनियम, 1949 और प्रविष्टि 45 और भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम के तहत अन्य कानूनों के दायरे से बाहर रखा जाता है, तो कोई अनुज्ञप्ति प्रदान नहीं किया जा सकता है, और वे बैंकिंग नहीं कर सकते हैं

क्योंकि बीआर अधिनियम, 1949 में किए गए विभिन्न प्रावधानों के अनुपालन के बिना इसकी अनुमति नहीं है। उन्हें तुरंत कारोबार बंद करना होगा और बंद करना होगा।

122. सहकारी बैंक, जो बीआर अधिनियम, 1949 द्वारा शासित हैं, धारा 5(बी) के अर्थ के भीतर बैंकिंग गतिविधियों में शामिल हैं। वे जनता से धन स्वीकार करते हैं, मांग पर या अन्यथा चुकाया जा सकता है और चेक, ड्राफ्ट, ऑर्डर या अन्यथा द्वारा निकासी की जा सकती है। केवल इस तथ्य से कि धन उधार देना सदस्यों तक ही सीमित है, उन्हें बैंकिंग के दायरे से बाहर नहीं कहा जा सकता है। वे व्यावसायिक कार्य करते हैं। एक सोसायटी सदस्यों और अन्य व्यक्तियों से जमा और ऋण प्राप्त करेगी। वे ऋण भी देते हैं और यह उनका प्राथमिक कार्य है। इस प्रकार, वे सूची I प्रविष्टि 45 में "बैंकिंग" के अंतर्गत आते हैं।

52.4. बैंक ऑफ अर्बन बैंक ऑफ महाराष्ट्र एंड गोवा लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र स्टेट कॉप बैंक लिमिटेड 18 में अपने निर्णय पर विचार करते हुए, जिसमें बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 के प्रावधानों के तहत बैंकिंग व्यवसाय करने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा सहकारी समितियों के अनुज्ञप्ति के संबंध में प्रश्न उठा था, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा:

"133. एपेक्स कॉप. बैंक ऑफ अर्बन बैंक ऑफ महाराष्ट्र एंड गोवा लिमिटेड [एपेक्स कॉप. बैंक ऑफ अर्बन बैंक ऑफ महाराष्ट्र एंड गोवा लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र स्टेट कॉप बैंक लिमिटेड, (2003)11 एस.सी.सी. 66] में बीआर अधिनियम 1949 के प्रावधानों के तहत बैंकिंग व्यवसाय करने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा सहकारी समितियों के अनुज्ञप्ति के संबंध में प्रश्न उठा। यह माना गया कि सहकारी बैंक, जो बीआर अधिनियम, 1949 की धारा 56 (सीसीआई) में परिभाषित राज्य सहकारी बैंक या केंद्रीय सहकारी बैंक या प्राथमिक सहकारी बैंक नहीं हैं, अनुज्ञप्ति के लिए पात्र नहीं थे। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा सहकारी बैंकों, जो बहु-राज्य सहकारी समिति अधिनियम, 1984 के तहत पंजीकृत नहीं थे, को अनुज्ञप्ति प्रदान करना न्यायोचित नहीं था। बहु-राज्य सहकारी समिति अधिनियम के तहत भारतीय रिजर्व बैंक की शक्तियां केवल सहकारी बैंकों के लिए प्रयोग योग्य थीं, न कि बैंकिंग का व्यवसाय करने वाली किसी अन्य सहकारी समितियों के लिए। यह राय दी गई थी:

(एस.सी.सी.पी.-82, प्रस्तर-25)

"25. एक अन्य पहलू जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए वह यह है कि भारत के संविधान में, सहकारी समितियों से संबंधित विषय राज्य सूची में है अर्थात् अनुसूची VII सूची II प्रविष्टि 32। संघ सूची में अनुसूची VII सूची I प्रविष्टि 44 है जो निगमों से संबंधित है। इस मामले में हम एक केंद्रीय कानून की वैधता से चिंतित नहीं हैं और इस प्रकार उस पहलू से निपटते नहीं हैं। निर्णय के प्रयोजन के लिए हम यह मानेंगे कि एक सहकारी समिति जिसकी उद्देश्य एक राज्य तक सीमित नहीं है, निगम शब्द के अंतर्गत आएगी, और इस प्रकार एक केंद्रीय कानून को बचाया जा सकता है। हालांकि, संवैधानिक प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि सहकारी समितियों से संबंधित मामले राज्य सूची में हैं। इस प्रकार, कई राज्यों ने सहकारी समितियों से संबंधित कानून बनाए हैं। हमने अन्य अधिनियमों को नहीं देखा है। हालांकि, चूंकि यह मामला महाराष्ट्र की एक सोसायटी से संबंधित है,

इसलिए महाराष्ट्र सहकारी समिति अधिनियम हमें दिखाया गया था। गौरतलब है कि यह कानून किसी सहकारी समिति को परिभाषित नहीं करता है। इसकी आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि इसके तहत पंजीकृत सोसायटी स्वचालित रूप से आच्छादित हो जाएगी। एक सहकारी समिति को परिभाषित करने की आवश्यकता केवल एक केंद्रीय कानून में उत्पन्न होती है जो सभी सहकारी समितियों को आच्छादित नहीं करता है और इस प्रकार यह इंगित करने की आवश्यकता है कि यह किस समाज पर लागू होता है।

52.5. अंत में, सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ ने संदर्भ का उत्तर इस प्रकार दिया: -

"142.1. (1)(ए) "बैंकिंग" के संबंध में राज्य कानून के तहत पंजीकृत सहकारी बैंक और एम.एस.सी.एस अधिनियम, 2002 के तहत पंजीकृत बहु-राज्य स्तरीय सहकारी समितियां भारत के संविधान की अनुसूची VII सूची I प्रविष्टि 45 से संबंधित कानून द्वारा शासित होती हैं।

142.1. (ख) राज्य विधान के तहत पंजीकृत सहकारी समितियों द्वारा चलाए जा रहे सहकारी बैंक, विशेष रूप से, उन मामलों के संबंध में जो भारत के संविधान की अनुसूची VII सूची I प्रविष्टि 45 के दायरे से बाहर हैं, भारत के संविधान की अनुसूची VII सूची II प्रविष्टि 32 से संबंधित उक्त विधान द्वारा शासित होते हैं।

142.2. (2) बैंकिंग से संबंधित गतिविधियों में शामिल सहकारी बैंकों को बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 56(ए) सपठित धारा 5(सी) के तहत परिभाषित "बैंकिंग कंपनी" के अर्थ के भीतर आच्छादित किया गया है, जो सूची I प्रविष्टि 45 से संबंधित कानून है। यह सहकारी समितियों द्वारा संचालित सहकारी बैंकों के "बैंकिंग" के पहलू को नियंत्रित करता है। सहकारी बैंक बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के उपबंधों और भारत के संविधान की सूची I प्रविष्टि 45 और भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम में बैंकिंग से संबंधित ऐसे बैंकों पर लागू किसी अन्य कानून के अनुपालन के बिना कोई गतिविधि नहीं कर सकते हैं।

142.3. (3)(ए) राज्य कानून के तहत सहकारी बैंक और बहु-राज्य सहकारी बैंक वित्तीय परिसंपत्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण और प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 2(1)(सी) के तहत "बैंक" हैं। बरामदगी बैंकिंग का एक अनिवार्य हिस्सा है; इस प्रकार, सरफेसी अधिनियम की धारा 13 के तहत निर्धारित बरामदगी प्रक्रिया, जो भारत के संविधान की अनुसूची VII सूची I प्रविष्टि 45 से संबंधित एक कानून है, लागू होती है।

142.4. (3)(बी) संसद के पास भारत के संविधान की अनुसूची VII सूची I प्रविष्टि 45 के तहत विधायी क्षमता है ताकि सहकारी बैंकों के संबंध में वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण और प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 13 के तहत बरामदगी के लिए अतिरिक्त प्रक्रियाएं प्रदान की जा सकें। वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण और प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 2(1)(सी) (iv-a) के प्रावधान, जिसमें "पूर्व बहु-राज्य सहकारी बैंक" को जोड़ते हुए "बहु-राज्य सहकारी बैंक"

अधिकारातीत नहीं है, साथ ही राज्य कानून के तहत पंजीकृत सहकारी बैंकों के संबंध में 28-1-2003 को जारी की गई अधिसूचना भी अधिकारातीत नहीं है।

53. हालांकि, प्रस्तुत मामले में, यह ध्यान रखना उचित है कि अधिनियम, 1984 के साथ-साथ मौजूदा अधिनियम, 2002 को भारत के संविधान की अनुसूची VII की प्रविष्टि 44 सूची-I के तहत संसद द्वारा शक्ति के कथित प्रयोग में अधिनियमित किया गया था।

54. पांडुरंग गणपति चौगुले (उपरोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए, जिसमें बीआर अधिनियम के भाग-V के प्रावधानों को प्रदर्श में संदर्भित किया गया था, अर्थात्, धारा 56 के प्रावधान, जो सहकारी बैंकों पर बीआर अधिनियम के आवेदन का प्रावधान करता है, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि बीआर अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, भारतीय रिज़र्व बैंक से अनुज्ञप्ति प्राप्त किए बिना कोई भी सहकारी समिति द्वारा कोई व्यवसाय नहीं किया जा सकता है। सहकारी बैंकों का उद्देश्य बैंकिंग का कार्य है, इसलिए यह भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम के साथ-साथ बीआर अधिनियम, जो भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची-I की प्रविष्टि 38 और प्रविष्टि 45 के अंतर्गत कानून हैं, द्वारा निर्भर और शासित है।

55. इस बात पर कोई प्रतिवाद नहीं हो सकता कि भारतीय रिज़र्व बैंक के परिपत्रों में सांविधिक बल है। कानून की उपरोक्त स्थिति की पृष्ठभूमि में, भारतीय रिज़र्व बैंक के दिनांक 2.7.2018 के परिपत्र के प्रावधानों के आधार पर केंद्रीय पंजीयक के दिनांक 26.12.2018 के आक्षेपित आदेश को देखा जाना चाहिए।

56. यह ध्यान दिया जाता है कि भारतीय रिज़र्व बैंक के दिनांक 09.08.2017 के आदेश, जिसे याचिकाकर्ताओं द्वारा रिट-सी संख्या-38808 वर्ष 2017 में चुनौती दी गई थी, को इस न्यायालय द्वारा दिनांक 21.3.2018 के अपने निर्णय में रद्द नहीं किया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता के अधिवक्ता की सहमति के आधार पर उसमें दिए गए निर्देशों के अनुसार याचिका का निपटारा किया गया था। केंद्रीय रजिस्ट्रार का 20.4.2018 का आदेश याचिकाकर्ता-बैंक को पंजीकरण प्रमाण पत्र जारी करने से इनकार करते हुए पारित किया गया था। याचिकाकर्ताओं द्वारा रिट-सी संख्या-16029 वर्ष 2018 में इसकी चुनौती सफल रही और याचिकाकर्ता के अधिवक्ता की सहमति पर केंद्रीय रजिस्ट्रार के 20.4.2018 के आदेश को रद्द कर दिया गया। हालांकि, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा पारित दिनांक 09.08.2017 का आदेश बरकरार रहा।

57. केंद्रीय पंजीयक के दिनांक 26.12.2018 के आक्षेपित आदेश द्वारा, जैसा कि भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा दिनांक 2.7.2012 के अपने परिपत्र में अनिवार्य किया गया था, को अधिनियम 2002 के तहत पंजीकरण और पंजीकरण प्रमाण पत्र जारी करने दोनों से इनकार करने के लिए एक आधार के रूप में लिया गया था।

58. भारतीय रिज़र्व बैंक की ओर से दायर जवाबी हलफनामे का अवलोकन दर्शाता है कि याचिकाकर्ता-बैंक की वित्तीय स्थिति खराब है। भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा पूरक जवाबी हलफनामे में कहा गया है कि याचिकाकर्ता-

बैंक भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा निर्धारित मानदंडों के अनुसार वित्तीय रूप से मजबूत और अच्छी तरह से प्रबंधित बैंक नहीं था। उसका शुद्ध मूल्य (Net Worth) ₹10.09 करोड़ मात्र था, जबकि भारतीय रिज़र्व बैंक के मास्टर परिपत्र संख्या DCBR.LS.(PCB) MC. No.16/07.01.000/2015-16, दिनांक 1.7.2015 के पैरा-1.6 के अनुसार न्यूनतम अपेक्षित शुद्ध मूल्य ₹50 करोड़ निर्धारित है। इस संबंध में याचिकाकर्ता-बैंक को सूचित भी किया गया था। भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा याचिकाकर्ता-बैंक को केन्द्रीय पंजीयक के समक्ष पंजीकरण कराने हेतु बार-बार समय प्रदान किया गया, परंतु याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा उक्त कार्यवाही नहीं की गई। इसलिए, याचिकाकर्ता-बैंक को बैंक को एक-राज्य सहकारी बैंक में परिवर्तित करने और उसे विचार के लिए प्रस्तुत करने की आवश्यकता थी। तदनुसार, याचिकाकर्ता-बैंक को भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा सलाह दी गई थी कि वह समस्तीपुर (बिहार) में अपने भुगतान काउंटर को 15 दिनों के भीतर बंद करना सुनिश्चित करे और याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा अन्य राज्यों में दी गई सदस्यता को रद्द कर दे। ऊपर यह नोट किया गया है कि भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा याचिकाकर्ता-बैंक को दिनांक 9.8.2017 को जारी किए गए निर्देश, जिसे रिट-सी संख्या-38808 वर्ष 2017 में चुनौती दी गई थी, को इस न्यायालय द्वारा रद्द नहीं किया गया था। यह अभी भी कायम है।

इसलिए, विशेष रूप से चूंकि याचिकाकर्ता-बैंक ने भी भारतीय रिज़र्व बैंक की आवश्यकताओं के अनुसार अपनी वित्तीय स्थिति का प्रदर्शन नहीं किया है, जैसा कि ऊपर उल्लिखित अपने परिपत्र में निर्धारित किया गया है, इस तथ्य को देखते हुए कि बीआर अधिनियम के प्रावधान याचिकाकर्ता-बैंक पर लागू होते हैं, हमें भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा जारी दिनांक 9.8.2017 के पत्र में कोई त्रुटि नहीं मिलती है। दिनांक 9.8.2017 के पत्र में दिए गए निर्देशों को **बरकरार** रखा जाता है।

59. जहां तक याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा अपनी पूर्व स्वीकृति (अनापत्ति प्रमाण पत्र) प्राप्त करने के लिए अपने परिपत्र में की आवश्यकता के अनुपालन का संबंध है, केन्द्रीय पंजीयक उप-नियमों में संशोधनों के पंजीकरण से इनकार करने के लिए उस परिपत्र पर भरोसा करने में न्यायसंगत है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अधिनियम, 2002 और भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम दोनों भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची-I की प्रविष्टि 44 और प्रविष्टि 38 के तहत संसद में निहित प्राधिकार का प्रयोग करते हुए बनाए गए विधान हैं।

60. भारतीय रिज़र्व बैंक का परिपत्र जिसमें सांविधिक बल है और सहकारी बैंकों पर भारतीय रिज़र्व बैंक के गहरे और व्यापक नियंत्रण को ध्यान में रखते हुए, बीआर अधिनियम के प्रावधानों को देखते हुए, भले ही परिपत्र संयोग से अधिनियम, 2002 के प्रावधानों पर निर्भर करता हो, (प्रस्तुत मामले में उप-नियमों में संशोधनों का पंजीकरण), **पांडुरंग गणपति चौगुले** (उपरोक्त) के मामले में उच्चतम न्यायालय की टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए इसकी **अनुमति** है।

61. इन परिस्थितियों में, याचिकाकर्ता-बैंक के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक के लागू परिपत्र के संदर्भ में उचित पूर्व अनुमोदन (अनापत्ति) के बाद अपने उप-नियमों में संशोधनों को एक-राज्य सहकारी बैंक के रूप में पंजीकृत करने

के लिए खुला है। जहां तक याचिकाकर्ता-बैंक के साथ किए गए किसी भी निवेश/जमा का संबंध है, जो उत्तर प्रदेश के अलावा किसी अन्य राज्य से संबंधित है, उसे याचिकाकर्ता-बैंक द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक के निर्देशों के अनुसार सख्ती से निपटा जाएगा। भारतीय रिज़र्व बैंक को निदेश दिया जाता है कि वह ऐसे कदम उठाए और ऐसे निदेश पारित करे जो वह सभी अभियानों के लिए उपयुक्त समझे।

62. उपरोक्त टिप्पणियों के अधीन, प्रस्तुत रिट याचिका **खारिज** की जाती है।

(2025) 2 ILRA 255

मूल अधिकार क्षेत्र

सिविल पक्ष

दिनांकित: इलाहाबाद 24.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति महेश चन्द्र त्रिपाठी

माननीय न्यायमूर्ति प्रशान्त कुमार

रिट सी संख्या 15604 सन् 2021

तथा अन्य सम्बद्ध वादों सहित

मे./एस. लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शन्स प्रा. लि. ...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

प्रतीक सिन्हा, राहुल सहाय

प्रतिवादीगण के अधिवक्ता:

सी.एस.सी., कौशलेन्द्र नाथ सिंह

क. कंपनी विधि - कॉर्पोरेट आवरण का उठाना - क्या होल्डिंग कंपनी को अपनी सहायक कंपनी के कार्यों और चूकों के लिए दायी ठहराया जा सकता है? - अपनी सहायक कंपनियों के संबंध में मूल आवंटिती का दायित्व - यह एक स्थापित विधिक स्थिति है कि सहायक कंपनी एक पृथक विधिक सत्ता होती है और अपनी होल्डिंग/मूल कंपनी से भिन्न होती है। तथापि, होल्डिंग कंपनियाँ और उनकी सहायक कंपनियाँ इस विधिक स्थिति की आड़ नहीं ले सकती कि वे दो पृथक विधिक सत्ताएँ हैं, जब कंपनी समूह की कृति है, जिसे विधि की दृष्टि से वास्तविक सत्ताओं को छिपाने के प्रयास में, केवल वास्तविक सत्ताओं को विधि की नजर से ओझल करने हेतु एवं उस व्यवसाय को आवरण प्रदान करने के लिए गठित किया गया है, जो वास्तव में उन्हीं लोगों के समूह

द्वारा संचालित किया जा रहा है। ऐसी स्थिति में न्यायालय सदैव कॉर्पोरेट आवरण को उठा सकता है और होल्डिंग कंपनी को अपनी सहायक कंपनी के कार्यों और चूकों के लिए दायी ठहरा सकता है। सदस्य/मूल कंसोर्टियम आवंटिती (मूल कंपनी) को अपनी सहायक कंपनियों द्वारा किए गए अपकार के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, विशेष रूप से जब उसे छद्म लेन-देन के भाग के रूप में, केवल मूल कंपनी के दायित्व से बचने के उद्देश्य से किया गया हो। प्रस्तुत प्रकरण में एक व्यापक योजना के भाग के रूप में समस्त दायित्व/उत्तरदायित्व 100% सहायक कंपनी को अंतरित कर दिया गया, जो कभी पूर्ण नहीं हुई, और परियोजना के समस्त लाभ/क्रीम को छोटी-छोटी कंपनियों में विभाजित कर अत्यधिक प्रीमियम पर विक्रय कर दिया गया। सहायक कंपनियों का संपूर्ण भ्रामक ढाँचा केवल अन्य हितधारकों को धोखा देने के लिए सृजित किया गया था। अतः, सहायक कंपनियों के दायित्वों को मूल कंपनी पर आरोपित करना अनुचित नहीं होगा। (पैरा 123, 124)

ख. सिविल विधि - भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226 - वाणिज्यिक संविदा - प्रश्न: क्या वे वाणिज्यिक संविदाएँ, जो नोएडा और राज्य सरकार की शासकीय नीति निर्णय से उत्पन्न होती हैं, न्यायिक पुनरीक्षण से आच्छादित हैं? यह प्रश्न अब पुनर्विचारणीय (रेस इंटेग्रा) नहीं है, और संविदाओं से संबंधित विषयों में भी रिट याचिकाओं की पोषणीयता पर कोई पूर्ण प्रतिबंध नहीं है। जब संविदात्मक शक्ति का प्रयोग लोक प्रयोजनों के लिए किया जाता है, तो राज्य एवं उसकी अभिकरण निकायों का यह दायित्व है कि वे निष्पक्षतापूर्वक, मनमानेपन अथवा मनोविकार से रहित होकर कार्य करें। ऐसी परिस्थितियों में न्यायालय न्यायिक पुनरीक्षण के माध्यम से हस्तक्षेप करने के लिए न्यायोचित हैं, ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि राज्य ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 में सन्निहित सिद्धांतों का पालन किया है, जो राज्य के कार्यों में निष्पक्षता और गैर-मनमानेपन को अनिवार्य बनाता है।

किसी लोक प्राधिकरण की भागीदारी के कारण यह आवश्यक हो जाता है कि यह सुनिश्चित किया जाए कि योजना या करार संवैधानिक सिद्धांतों को बनाए रखती है। ऐसी परिस्थितियों में, यह न्यायपालिका का पवित्र कर्तव्य बन जाता है, जिसे संविधान के अंतर्गत एक स्वतंत्र मध्यस्थ के रूप में सौंपा गया है, कि वह हस्तक्षेप करे और आमजन के हितों की रक्षा करे। यदि कोई सरकारी कार्रवाई लोक कल्याण की कीमत पर किसी निजी सत्ता को अनुपातहीन रूप से लाभान्वित करती है, तो उसे अवैध घोषित किए जाने के योग्य माना जाएगा। अनुच्छेद 226(1) के अंतर्गत, उच्च न्यायालयों को न केवल मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए, अपितु "किसी अन्य प्रयोजन" के लिए भी ऐसे निदेश, आदेश या रिट जारी करने की शक्ति है। उच्च न्यायालय उन विषयों का स्वयंप्रेरणा से संज्ञान ले सकता है, जो रिट याचिकाओं में नहीं उठाए गए हों, यदि वे विषय समाज को प्रभावित करते हों, विशेष रूप से लोक प्रशासन के क्षेत्र में, चाहे वे रिट याचिकाओं में नहीं उठाए गए हों। (पैरा 138, 139, 140, 146)

ग. सिविल विधि - भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226 - रिट याचिका की वापसी - याचिकाकर्ताओं को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत दायर की गई अपनी रिट याचिका वापस लेने का अधिकार है। यह अधिकार विधिक कार्यवाहियों में याचिकाकर्ताओं की स्वायत्तता को बनाए रखने के लिए मान्यता प्राप्त है।

यद्यपि याचिकाकर्ता वापसी का अनुरोध कर सकते हैं, न्यायालय के पास परिस्थितियों के आधार पर ऐसी वापसी को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने का विवेकाधिकार है। यदि न्यायालय द्वारा वाद में महत्वपूर्ण कदम उठाए जाने के पश्चात वापसी की माँग की जाती है, तो न्यायालय अनुमति देने से पूर्व इसके निहितार्थों पर विचार कर सकता है। वापसी न्यायालय के विवेकाधिकार के अधीन है, विशेष रूप से जहाँ न्याय या लोक हित प्रभावित हो सकता है। प्रस्तुत प्रकरण में, न्यायालय ने याचिकाकर्ताओं के आचरण की निंदा की। याचिकाकर्ताओं ने स्पोर्ट्स सिटी के आवंटन और विकास में कपट किया था। नोएडा प्राधिकरण, बैंकों और गृह-क्रेताओं को धोखा देने में सफलता से उत्साहित होकर, उन्होंने न्यायालय को भी गुमराह करने का प्रयास किया। निर्णय आरक्षित होने के पश्चात ही, उन्होंने प्रतिकूल निर्णय से बचने के लिए रिट याचिका वापस लेने का प्रयास किया। यदि याचिकाकर्ताओं का याचिकाएँ वापस लेने का वास्तविक आशय होता, तो वे पहले ऐसा कर सकते थे। न्यायालय ने रिट याचिकाएँ खारिज कर दीं, किन्तु याचिकाकर्ताओं को विषय को पुनः उठाने की कोई स्वतंत्रता नहीं दी। (पैरा 134, 135, 136, 159, 160, 162)

घ. सिविल विधि - भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226 - सी.बी.आई. जाँच - उच्च न्यायालय को अनुच्छेद 226 के अंतर्गत सी.बी.आई. द्वारा जाँच का आदेश देने की शक्ति है।

तथापि, ऐसी जाँच को स्थानांतरित करने की इस शक्ति का प्रयोग केवल दुर्लभ और असाधारण प्रकरणों में किया जाना चाहिए। जब अभियुक्त राज्य के अत्यंत वरिष्ठ अधिकारी हों, तो राज्य विवेचना अधिकारी द्वारा जाँच संतोषजनक रूप से नहीं की जा सकती। न्याय सुनिश्चित करने और पीड़ितों तथा जनसामान्य के मन में विश्वास जागृत करने के लिए, ऐसे प्रकरणों में जाँच किसी अन्य स्वतंत्र विवेचना अधिकारी अभिकरण को सौंपी जानी चाहिए। प्रस्तुत प्रकरण में, न्यायालय को निर्माणकर्ताओं और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के बीच एक कुत्सित मिलीभगत की जानकारी हुई, जिसमें स्पोर्ट्स सिटी योजना के विपरीत, संविदा, एमओए और स्पोर्ट्स सिटी योजना के कार्यान्वयन के सर्वथा विरुद्ध, निर्माणकर्ताओं को एक के बाद एक लाभ दिए गए। यद्यपि नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (CAG) ने 2021 में इस घोटाले को उजागर किया, नोएडा प्राधिकरण अथवा राज्य सरकार ने आज तक किसी भी संलिप्त अधिकारी के विरुद्ध एक भी प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज नहीं की। हानि की भरपाई हेतु कोई प्रयास नहीं किया गया, जो यह इंगित करता है कि निर्माणकर्ता लॉबी प्रभावशाली है और सरकारी तंत्र में गहरी पैठ बनाए हुए है। उन भ्रष्ट अधिकारियों और निर्माणकर्ताओं को आश्रय देने के प्रयास किए गए जिन्होंने राज्य सरकार और नोएडा प्राधिकरण को धोखा देकर अपार धनराशि अर्जित की थी। उच्च पदस्थ अधिकारियों की संभावित संलिप्तता तथा यह तथ्य कि कुल बकाया देय राशि ₹7,000 करोड़ से अधिक है एवं नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों का कदाचार स्पष्ट था - ऐसे अधिकारियों ने स्पोर्ट्स सिटी योजना के विरुद्ध याचिकाकर्ताओं और अन्य इसी प्रकार की स्थिति में स्थित निर्माणकर्ताओं/विकासकर्ताओं को अनुचित लाभ पहुँचाने हेतु कार्य किया - इन सब तथ्यों के दृष्टिगत, न्यायालय ने सी.बी.आई. को निर्देशित किया कि वह नोएडा प्राधिकरण के समस्त मिलीभगत करने वाले अधिकारियों तथा स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के आवंटन, विकास, स्वीकृति या किसी अन्य संबंधित विषयों में संलिप्त आवंटित/निर्माणकर्ताओं के विरुद्ध परिवाद दर्ज करे। सी.बी.आई. जाँच का निदेश दिया गया। (पैरा 148, 149, 157, 158)

खारिज। (ई-5)

उद्धृत वादों की सूची:

1.	सैलोमन बनाम सैलोमन एंड कं. लि. (1897) एसी 22
2.	एडम्स बनाम केप इंडस्ट्रीज पीएलसी (1990) सीएच 433
3.	गिलफोर्ड मोटर कं. बनाम हॉर्न [1933] सीएच 935। जोन्स बनाम लिपमैन [1962] 1 डब्ल्यूएलआर 832 में
4.	स्मिथ, स्टोन एंड नाइट लि. बनाम बर्मिंघम कॉर्पोरेशन [1939] 4 एअलएल ईआर 116
5.	डी.एच.एन. फूड डिस्ट्रीब्यूटर्स लि. बनाम लंदन बरो ऑफ टावर हैमलेट्स [1976] 1 डब्ल्यूएलआर 852
6.	न्यू साउथ वेल्स का प्रकरण: पायनियर कंक्रीट सर्विसेज बनाम येल्नाह पीटीवाई लि.
7.	उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रेनुसागर पावर कं. एवं अन्य 1988 (4) एससीसी 59
8.	लाइफ इंश्योरेंस कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया बनाम एस्कोर्ट्स लि. एवं अन्य (1985) सपली. 3 एससीआर 909
9.	वोडाफोन इंटरनेशनल होल्डिंग्स बी.वी. बनाम भारत संघ एवं अन्य (2012) 6 एससीसी 613
10.	स्मॉल इंडस्ट्रीज डेवलपमेंट बैंक ऑफ इंडिया बनाम क्रिएशन इन्वेस्टमेंट्स इक्विटास होल्डिंग्स एल.एल.सी. (ओए 1137/2019 में, दिनांक 6.10.2020 को निर्णीत)
11.	जोशी टेक्नोलॉजीज इंटरनेशनल इंक. बनाम भारत संघ 2015 (7) एससीसी 728
13.	नोएडा टोल ब्रिज कं. लि. बनाम फेडरेशन ऑफ नोएडा रेजिडेंट्स वेलफेयर एसोसिएशन एवं अन्य 2024 आईएनएससी 1027
14.	सिल्पी कंस्ट्रक्शन्स कांट्रैक्टर्स बनाम भारत संघ 2020 (16) एससीसी 489
15.	कस्तूरी लाल लक्ष्मी रेड्डी बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य 1980 (4) एससीसी 1
16.	सेंटर फॉर पब्लिक इंटरेस्ट लिटिगेशन बनाम भारत संघ 2012 (3) एससीसी 1
17.	एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ AIR 1987 एससी 965
18.	दिशा बनाम गुजरात राज्य (2011) 13 एससीसी 337
19.	पश्चिम बंगाल राज्य बनाम कमेटी फॉर प्रोटेक्शन ऑफ डेमोक्रेटिक राइट्स, पश्चिम बंगाल 2010 एससीसी ऑनलाइन एससी 297
20.	माइनर इरिगेशन एंड रूरल इंजी. सर्विसेज, उ.प्र. बनाम साहंगू राम (2002) 5 एससीसी 521

21.	के.वी. राजेन्द्रन बनाम सुपरिंटेंडेंट ऑफ पुलिस, सी.बी.सी.आई.डी. (2013) 12 एससीसी 480
22.	सकीरी वासु बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2008) 2 एससीसी 409
23.	रुबाबुद्दीन शेख बनाम गुजरात राज्य (2010) 2 एससीसी 200

(माननीय न्यायमूर्ति महेश चन्द्र त्रिपाठी एवं माननीय न्यायमूर्ति प्रशान्त कुमार द्वारा प्रदत्त)

विषय सूची

क्र.सं.	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1	मामले के तथ्य	3-7
2	सेक्टर 150 में वर्तमान स्पोर्ट्स सिटी स्कीम 02	7-17
3	सीएजी रिपोर्ट	17-19
4	नोएडा प्राधिकरण की बोर्ड बैठक	19-21
5	प्रमुख रिट याचिका में की गई प्रार्थनाएं	21-24
6	संबद्ध रिट याचिकाओं में की गई प्रार्थनाएं	24-33
7	याचिकाकर्ताओं की ओर से तर्क	33-37
8	प्रत्यर्थियों की ओर से तर्क	37-44
9	विभिन्न कंपनियों की शेयरधारिता में परिवर्तन	44-45
10	याचिकाकर्ताओं के अग्रिम तर्क	45
11	न्यायालय द्वारा विश्लेषण	45-46
	ए. विचलन	46-47
	(I) योजना का निर्माण	47-48
	(II) बोली की स्वीकृति	48
	(III) नोएडा प्राधिकरण की ओर से विफलता	48-51
	बी. अवैध बिक्री	51-52
	सी. स्पोर्ट्स सिटीज के बकाया देय	52-55
	डी. आवंटीगणों को अवैध लाभ	56-61
	ई. कॉर्पोरेट परदा उठाने की आवश्यकता	61-62
	एफ. अपनी सहायक कंपनियों के संबंध में मूल आवंटीगणों की देयताएं	62-66

क्र.सं.	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
	जी. याचिकाकर्ताओं का आचरण	67-70
	एच. रिट याचिकाओं का प्रत्याहरण	70
12	न्यायिक हस्तक्षेप का दायरा	70-73
13	सी.बी.आई. द्वारा दोषी अधिकारियों और अन्य षड्यंत्रकारियों के विरुद्ध जांच	73-77
14	निष्कर्ष	77-79

1. उपर्युक्त सभी रिट याचिकाओं को संयुक्त रूप से सुना गया है चूंकि इनमें समान मुद्दे सम्मिलित हैं, और इसलिए, इन्हें इस सामान्य निर्णय और आदेश द्वारा निस्तारित किया जा रहा है।

2. श्री शशि नंदन, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता और श्री अनूप त्रिवेदी, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता की सहायता से श्री प्रतीक सिन्हा, याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता, श्री एम.सी. चतुर्वेदी, विद्वान अपर महाधिवक्ता की सहायता से श्री देवेश विक्रम, विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता और श्री मोहन श्रीवास्तव, राज्य-प्रत्यर्थी संख्या 1 और 3 के लिए विद्वान स्थायी अधिवक्ता और श्री मनीष गोयल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता की सहायता से श्री कौशलेन्द्र नाथ सिंह और सुश्री अंजलि गोखलानी, प्रत्यर्थी संख्या 2-नोएडा प्राधिकरण के लिए विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

मामले के तथ्य

3. नवीन ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण (नोएडा) के बोर्ड ने 16.8.2004 को नोएडा में अंतर्राष्ट्रीय मानकों की खेल सुविधाएं विकसित करने का निर्णय लिया। अगली बैठक में 25.6.2007 को आयोजित बोर्ड इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि चूंकि नोएडा में कोई खेल सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं, अतः 311.60 हेक्टेयर के क्षेत्र को स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए चिह्नित किया गया। अगली बोर्ड बैठक में 8.4.2008 को आगामी राष्ट्रमंडल खेल-2010 को ध्यान में रखते हुए यह संकल्प लिया गया कि सेक्टर 76, 78, 79, 101, 102, 104 और 107 के भूमि उपयोग को स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए परिवर्तित किया जाए। हालांकि, स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने के लिए चिह्नित क्षेत्र को बढ़ाकर 346 हेक्टेयर कर दिया गया। तदनुसार, ग्रांड थार्नटन को योजना तैयार करने और भूमि आवंटन की शर्तें निर्धारित करने के लिए नियुक्त किया गया। अगली बोर्ड बैठकों में 18.9.2008 (154वीं बोर्ड बैठक) को नोएडा की संशोधित मास्टर योजना 2031 पर विचार किया गया, और पहली बार स्पोर्ट्स सिटी में क्या अपेक्षित है, इसका विवरण उल्लिखित किया गया। मास्टर योजना की धारा 5.9.3 में स्पोर्ट्स सिटी के विकास का विवरण निर्धारित किया गया था, जिसे नीचे उद्धृत किया गया है:-

नोएडा के मध्य-पूर्वी भाग में Dएससी रोड के साथ एक स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने का प्रस्ताव था। प्रस्तावित स्थल प्रस्तावित मास्टर प्लान सड़कों द्वारा एक्सप्रेसवे, राष्ट्रीय राजमार्ग-24, ग्रेटर नोएडा और शहर के अन्य

भागों को जोड़ने वाली सड़कों से अच्छी तरह से जुड़ा हुआ है। नोएडा स्पोर्ट्स सिटी देश में अपनी तरह की अनूठी होने की परिकल्पना करता है, जिसमें एक एकीकृत खेल विषय पर स्पष्ट और परिभाषित फोकस है, इसका स्वरूप नोएडा को एक मजबूत और स्पष्ट रूप से पहचान योग्य छवि प्रदान करता है, जहां खेल आयोजन पर्यटन, सामुदायिक बैठकों, प्रदर्शनियों, सम्मेलनों और उत्सवों जैसी अन्य गतिविधियों को उत्प्रेरित करते हैं। इस दृष्टि को प्रासंगिक बनाए रखने के लिए, स्पोर्ट्स सिटी में खेल और अन्य संबंधित मनोरंजक और संस्थागत सुविधाओं का प्रस्ताव किया गया था। स्पोर्ट्स-सिटी की बड़े आकार की परियोजना को कार्यान्वित नहीं किया जा सका। इसलिए, प्राधिकरण ने शहर के विभिन्न स्थानों पर कम आकार की एक से अधिक स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाएं रखने का निर्णय लिया। इन स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाओं में लगभग 50-100 हेक्टेयर या अधिक भूमि होगी। स्पोर्ट्स सिटी मूल रूप से मनोरंजक भूमि उपयोग का एक हिस्सा है और इसलिए इसका विकास मनोरंजक हरित क्षेत्र में प्रस्तावित है और नोएडा के भवन विनियमों में अनुमय भूमि कवरेज और F.A.R. के लिए एक अलग प्रावधान प्रस्तावित है। स्पोर्ट्स-सिटी की किसी भी परियोजना में निम्नलिखित खेल और संबंधित सुविधाओं, आवासीय, व्यावसायिक और अन्य सुविधाओं का प्रावधान हो सकता है जैसा कि प्राधिकरण द्वारा किसी विशेष परियोजना या योजना के लिए विशिष्ट आवश्यकता के अनुसार निर्णय लिया जाए:-

i. एक गोल्फ कोर्स, गोल्फ क्लब हाउस और ड्राइविंग रेंज, आवासीय और व्यावसायिक क्षेत्रों के साथ एकीकृत और कवर ग्रेडस्टैंड, इलेक्ट्रॉनिक स्कोरबोर्ड, टेलीविजन वीडियो स्क्रीन, प्रतियोगिता प्रकाश व्यवस्था, बैठक कक्ष, मीडिया सुविधाओं आदि के प्रावधान के साथ एक क्रिकेट स्टेडियम। एथलेटिक्स और फुटबॉल के लिए अभ्यास जाल और प्रतियोगिता प्रकाश व्यवस्था के साथ एक बहुउद्देश्यीय खेल मैदान, सिंथेटिक टर्फ बिछाया हॉकी मैदान, बैडमिंटन और टेबल टेनिस कोर्ट, भारोत्तोलन, मुक्केबाजी, जिमनास्टिक, कराटे आदि के लिए इनडोर स्टेडियम, इनडोर केंद्रीय कोर्ट टेनिस केंद्र, और प्रतियोगिता, वार्म-अप और ड्राइविंग पूल और अन्य संबंधित सुविधाओं के साथ इनडोर स्विमिंग सेंटर। आवश्यकताओं के अनुसार आगे इनडोर और आउटडोर स्टेडियम और खेल का मैदान जोड़ा जा सकता है।

ii. स्पोर्ट्स सिटी में क्रिकेट, टेनिस, स्विमिंग, एथलेटिक्स और गोल्फ आदि सहित विभिन्न खेलों के लिए विश्व स्तरीय सुविधाओं और सहायता सेवाओं के साथ 'खेल उत्कृष्टता केंद्र' के रूप में काम करने वाली एक खेल अकादमी शामिल हो सकती है। अभ्यास क्षेत्रों को खेल के मैदानों और प्रतियोगिता और प्रशिक्षण के लिए सुविधाओं के भीतर शामिल किया जा सकता है। अकादमी में कार्यालय आवास, प्रयोगशालाएं, व्याख्यान कक्ष और विशेषज्ञ सुविधाएं भी शामिल हो सकती हैं। स्पोर्ट्स सिटी में अत्याधुनिक खेल विज्ञान और खेल चिकित्सा सहायता प्रदान करने के लिए खेल चिकित्सा/स्वास्थ्य सुविधा केंद्र हो सकता है। इनमें नैदानिक सेवाएं, खेल विज्ञान, पोषण, एथलीट और करियर शिक्षा, प्रयोगशालाओं, कार्यालयों और कार्यशालाओं के प्रावधान के साथ अनुप्रयुक्त अनुसंधान केंद्र शामिल होना चाहिए। सभी स्थानों से चलने की दूरी के भीतर एकीकृत खेल छात्रावास, छात्रावास और सर्विस्ड अपार्टमेंट और अन्य आवासीय सुविधाएं जैसी अन्य सुविधाएं होंगी। खेल स्थलों के भीतर खेल क्लब, व्यवसाय और अवकाश सुविधाएं, बैठक कक्ष और कार्यालय आवास प्रदान किया जाएगा।

iii. स्पोर्ट्स सिटी की सेवा के लिए एक कार्यात्मक पदानुक्रम के रूप में सड़कों का एक नेटवर्क योजनाबद्ध किया जाएगा। अन्य सुविधाओं में परिवहन, प्रवेश और निकास द्वार, यात्री लाउंज, आवश्यकतानुसार पुल और अंडरपास के लिए स्थान शामिल हो सकते हैं। पूरे शहर में कार पार्किंग सुविधाओं की उपयुक्त योजना बनाई जाएगी। एक आईटी केंद्र/प्रशासन/मीडिया ब्लॉक होगा, और शहर के लिए खरीदारी सुविधाएं प्रदान करने वाला एक प्रमुख खुदरा केंद्र होगा। स्पोर्ट्स-सिटी क्षेत्र के भीतर आवासीय और व्यावसायिक सुविधाएं भी विकसित की जानी चाहिए।

स्पोर्ट्स-सिटी परियोजनाओं को सभी आधुनिक और विश्व स्तरीय खेल और अन्य संबंधित सुविधाओं के साथ एक एकीकृत लघु टाउनशिप के रूप में विकसित किया जाएगा। कुल क्षेत्र का न्यूनतम 70% खेल गतिविधियों के लिए उपयोग किया जाएगा। संस्थागत और अन्य सुविधाएं, खुले स्थान और अन्य मनोरंजक गतिविधियां। नोएडा प्राधिकरण समय-समय पर आवश्यकतानुसार स्पोर्ट्स-सिटी परियोजनाओं के विकास के लिए भूमि उपयोग पैटर्न, अनुमेय गतिविधियों, योजना मानदंडों और अन्य विनियमों का निर्धारण करेगा।"

4. स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए, ब्रोशर को 04.11.2008 को अंतिम रूप दिया गया था और भूमि उपयोग परिवर्तन की प्रक्रिया शुरू की गई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि योजना शुरू की गई थी लेकिन इसे अंतिम रूप नहीं दिया जा सका। तत्पश्चात, सितंबर 2010 में, स्पोर्ट्स सिटी के क्षेत्र को 311 हेक्टेयर से बदलकर 150 हेक्टेयर कर दिया गया, ग्रांड थार्नटन को एक नई विस्तृत परियोजना रिपोर्ट देने के लिए कहा गया और तत्पश्चात, आरक्षित मूल्य रु. 12,500/-प्रति वर्ग मीटर निर्धारित किया गया। 2010-11 से 2015-16 तक, कुल 798 एकड़ के क्षेत्र में चार स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाएं शुरू की गईं, जिनमें तीन गोल्फ कोर्स, एक क्रिकेट स्टेडियम और अंतर्राष्ट्रीय मानक की अन्य खेल सुविधाएं योजनाबद्ध थीं।

5. तत्पश्चात, नोएडा प्राधिकरण की मास्टर प्लान 2031 को संशोधित किया गया। संशोधन निम्नानुसार था:-

"1. नोएडा स्पोर्ट्स सिटी देश में अपनी तरह की अनूठी होने की परिकल्पना करता है, जिसमें एक एकीकृत खेल विषय पर स्पष्ट और परिभाषित फोकस है, इसका स्वरूप नोएडा को एक मजबूत और स्पष्ट रूप से पहचान योग्य छवि प्रदान करता है; जहां खेल आयोजन पर्यटन, सामुदायिक बैठकों, प्रदर्शनियों, सम्मेलनों और उत्सवों जैसी अन्य गतिविधियों को उत्प्रेरित करते हैं। इस दृष्टि को प्रासंगिक बनाए रखने के लिए, स्पोर्ट सिटी में खेल और अन्य संबंधित मनोरंजक और संस्थागत सुविधाओं का प्रस्ताव किया गया था।

2. स्पोर्ट्स-सिटी की बड़े आकार की परियोजना को कार्यान्वित नहीं किया जा सका। इसलिए, प्राधिकरण ने शहर के विभिन्न स्थानों पर कम आकार की एक से अधिक स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाएं रखने का निर्णय लिया। इन स्पोर्ट सिटी परियोजनाओं में लगभग 50-100 हेक्टेयर या अधिक भूमि होगी।

3. स्पोर्ट्स सिटी मूल रूप से मनोरंजक भूमि उपयोग का एक हिस्सा है और इसलिए इसका विकास मनोरंजक हरित क्षेत्र में प्रस्तावित है और नोएडा के भवन विनियमों में अनुमेय भूमि कवरेज और F.A.R. के लिए एक अलग प्रावधान प्रस्तावित है। स्पोर्ट्स-सिटी की किसी भी परियोजना में खेल और संबंधित सुविधाओं, आवासीय, व्यावसायिक और अन्य सुविधाओं का प्रावधान हो सकता है जैसा कि प्राधिकरण द्वारा किसी विशेष परियोजना या योजना के लिए विशिष्ट आवश्यकता के अनुसार निर्णय लिया जाए।

स्पोर्ट्स सिटी की किसी भी परियोजना में निम्नलिखित खेल और संबंधित सुविधाएं हो सकती हैं:-

1. एक गोल्फ कोर्स, गोल्फ क्लब हाउस और ड्राइविंग रेंज, आवासीय और व्यावसायिक क्षेत्रों के साथ एकीकृत और कवर ग्रेडस्टैंड, इलेक्ट्रॉनिक स्कोरबोर्ड, टेलीविजन वीडियो स्क्रीन, प्रतियोगिता प्रकाश व्यवस्था, बैठक कक्ष, मीडिया सुविधाओं आदि के प्रावधान के साथ एक क्रिकेट स्टेडियम। एथलेटिक्स और फुटबॉल के लिए अभ्यास जाल और प्रतियोगिता प्रकाश व्यवस्था के साथ एक बहुउद्देश्यीय खेल मैदान, सिंथेटिक टर्फ बिछाया हॉकी मैदान, बैडमिंटन और टेबल टेनिस कोर्ट, भारोत्तोलन, मुक्केबाजी, जिमनास्टिक, कराटे आदि के लिए इनडोर स्टेडियम, इनडोर केंद्रीय कोर्ट टेनिस केंद्र, और प्रतियोगिता, वार्म-अप और ड्राइविंग पूल और अन्य संबंधित सुविधाओं के साथ इनडोर स्विमिंग सेंटर। आवश्यकताओं के अनुसार आगे इनडोर और आउटडोर स्टेडियम और खेल का मैदान जोड़ा जा सकता है।

2. स्पोर्ट्स सिटी में क्रिकेट, टेनिस, स्विमिंग, एथलेटिक्स और गोल्फ आदि सहित विभिन्न खेलों के लिए विश्व स्तरीय सुविधाओं और सहायता सेवाओं के साथ 'खेल उत्कृष्टता केंद्र' के रूप में काम करने वाली एक खेल अकादमी शामिल हो सकती है। अभ्यास क्षेत्रों को खेल के मैदानों और प्रतियोगिता और प्रशिक्षण के लिए सुविधाओं के साथ शामिल किया जा सकता है। अकादमी में कार्यालय आवास, प्रयोगशालाएं, व्याख्यान कक्ष और विशेषज्ञ सुविधाएं भी शामिल हो सकती हैं। स्पोर्ट्स-सिटी में अत्याधुनिक खेल विज्ञान और खेल चिकित्सा सहायता प्रदान करने के लिए खेल चिकित्सा/स्वास्थ्य सुविधा केंद्र हो सकता है। इनमें प्रयोगशालाओं, कार्यालयों और कार्यशालाओं के प्रावधान के साथ नैदानिक केंद्र शामिल होना चाहिए। सभी स्थानों से चलने की दूरी के भीतर एकीकृत खेल छात्रावास, छात्रावास और सर्विस्ड अपार्टमेंट और अन्य आवासीय सुविधाएं जैसी अन्य सुविधाएं होंगी। खेल स्थलों के भीतर खेल क्लब, व्यवसाय और अवकाश सुविधाएं, बैठक कक्ष और कार्यालय आवास प्रदान किया जाएगा।

3. स्पोर्ट्स सिटी की सेवा के लिए एक कार्यात्मक पदानुक्रम के रूप में सड़कों का एक नेटवर्क योजनाबद्ध किया जाएगा। अन्य सुविधाओं में परिवहन, प्रवेश और निकास द्वार, यात्री लाउंज, आवश्यकतानुसार पुल और अंडरपास के लिए स्थान शामिल हो सकते हैं। पूरे शहर में कार पार्किंग सुविधाओं की उपयुक्त योजना बनाई जाएगी। एक आईटी केंद्र/प्रशासन/मीडिया ब्लॉक होगा, और शहर के लिए खरीदारी सुविधाएं प्रदान करने वाला एक प्रमुख खुदरा केंद्र होगा। स्पोर्ट्स-सिटी क्षेत्र के भीतर आवासीय और व्यावसायिक सुविधाएं भी विकसित की जानी चाहिए।

स्पोर्ट-सिटी परियोजनाओं को सभी आधुनिक और विश्व स्तरीय खेल और अन्य संबंधित सुविधाओं के साथ एक एकीकृत लघु टाउनशिप के रूप में विकसित किया जाएगा। कुल क्षेत्र का न्यूनतम 70% खेल गतिविधियों, संस्थागत और अन्य सुविधाओं, खुले स्थानों और अन्य मनोरंजक गतिविधियों के लिए उपयोग किया जाएगा। नोएडा प्राधिकरण समय-समय पर आवश्यकतानुसार स्पोर्ट-सिटी परियोजना के विकास के लिए भूमि उपयोग पैटर्न, अनुमेय गतिविधियों, योजना मानदंडों और अन्य विनियमों का निर्धारण करेगा।"

सेक्टर 150 में वर्तमान स्पोर्ट्स सिटी योजना 02

6. नोएडा ने, वर्ष 2014 में, "स्पोर्ट्स सिटी" नामक एक योजना शुरू की जिसे नोएडा के सेक्टर 150 में विकसित किया जाना था। यह योजना 07.6.2014 को शुरू की गई थी और 26.06.2014 को बंद होनी थी। योजना के अनुसार, सेक्टर 150 नोएडा में 12,00,000 वर्ग मीटर की भूमि पर एक स्पोर्ट्स सिटी विकसित की जानी थी। योजना के लिए आरक्षित मूल्य रु. 18,865/- प्रति वर्ग मीटर निर्धारित किया गया था।

7. विकासकर्ता को उन्हें आवंटित की गई पूरी भूमि के 70% पर खेल सुविधाएं बनानी थीं, जो विपणन योग्य नहीं थीं, और इस खर्च की भरपाई के लिए विकासकर्ता को कुल भूमि के 29.5% पर ग्रुप हाउसिंग और 0.5% व्यावसायिक निर्माण करने की अनुमति दी गई थी, जिसका FAR कुल भूमि क्षेत्र पर 2.0 था। योजना में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि इस स्पोर्ट्स सिटी में जनसंख्या घनत्व प्रति हेक्टेयर 1650 होगा। मनोरंजक घटक (अर्थात् गोल्फ कोर्स, स्टेडियम आदि जैसी खेल गतिविधियां और खुले स्थान) के खुले/हरित क्षेत्र को पूरी भूमि के लिए अन्य खुले हरित क्षेत्रों के रूप में माना जाना था।

8. ब्रोशर का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

"पात्रता मानदंड"

"8. यदि निविदाकर्ताओं ने एक कंसोर्टियम बनाया है:-

(ए) कंसोर्टियम के सदस्यों को एक प्रमुख सदस्य निर्दिष्ट करना होगा जो अकेले नोएडा के साथ पत्राचार करने के लिए अधिकृत होगा। प्रमुख सदस्य एकल सबसे बड़ा शेयरधारक होना चाहिए जिसका कंसोर्टियम में कम से कम 30% हिस्सा हो। कंसोर्टियम में प्रमुख सदस्य की शेयरधारिता परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाण पत्र नोएडा से प्राप्त होने तक कम से कम 30% बनी रहेगी। कंसोर्टियम के प्रत्येक सदस्य को कम से कम 05% की इक्विटी हिस्सेदारी के साथ 'प्रासंगिक सदस्य' माना जाएगा। कंसोर्टियम का प्रमुख सदस्य आवश्यक रूप से उपयुक्त वैधानिक प्राधिकरण के साथ भारत में पंजीकृत फर्म/कंपनी होना चाहिए।

(बी) प्रमुख सदस्य और प्रासंगिक सदस्यों को संयुक्त रूप से शुद्ध मूल्य, सॉल्वेंसी, टर्नओवर और अनुभव की न्यूनतम आवश्यकता को पूरा करना चाहिए। यदि निविदाकर्ता एक कंसोर्टियम है, तो प्रमुख सदस्य और प्रासंगिक

सदस्यों की होल्डिंग कंपनी(याँ) या उनकी सहायक कंपनियों की योग्यताओं को भी निविदाकर्ता की योग्यता के रूप में माना जाएगा।

(सी) कंसोर्टियम के मामले में, सदस्य एक समझौता जापन (एमओए) प्रस्तुत करेंगे जो योजना(ओं) के लिए संयुक्त रूप से आवेदन करने के उनके इरादे को व्यक्त करता है, और यदि उन्हें प्लॉट आवंटित किया जाता है, तो एमओए स्पष्ट रूप से कंसोर्टियम में प्रत्येक सदस्य की भूमिका और जिम्मेदारी को परिभाषित करेगा, विशेष रूप से परियोजना के लिए ऋण और इक्विटी की व्यवस्था करने और इसके कार्यान्वयन के संबंध में। एमओए उपयुक्त प्राधिकरण के साथ मूल रूप से ड्यूटी पंजीकृत/नोटरीकृत प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

(डी) सदस्य एक पंजीकृत/नोटरीकृत समझौता जापन (एमओए) प्रस्तुत करेंगे जो योजना के लिए संयुक्त रूप से आवेदन करने के उनके इरादे को व्यक्त करता है, और यदि उन्हें प्लॉट आवंटित किया जाता है, तो विशेष प्रयोजन कंपनी(याँ) बनाने के लिए, जिसे इसके बाद SPCs कहा जाएगा, जो बाद में आवंटीग के रूप में अपनी सभी जिम्मेदारियों को पूरा करेगी। पंजीकृत एमओए को प्रस्तावित SPCs में कंसोर्टियम के प्रत्येक सदस्य की इक्विटी शेयरधारिता निर्दिष्ट करनी होगी। SPCs आवश्यक रूप से उपयुक्त वैधानिक प्राधिकरण के साथ भारत में पंजीकृत फर्म/कंपनी(याँ) होनी चाहिए। आवंटीग और कंसोर्टियम के मामले में, प्रमुख सदस्य और/या प्रासंगिक सदस्य और/या उनके द्वारा निगमित SPC(s), संयुक्त रूप से, आवंटित क्षेत्र पर कुल अनुमेय FAR का न्यूनतम 30% अपने दम पर निर्माण करना होगा। कंसोर्टियम के मामले में, कुल अनुमेय FAR के इस 30% के निर्माण की जिम्मेदारी कंसोर्टियम द्वारा बोली दस्तावेज के साथ प्रस्तुत एमओए में स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट की जाएगी। आवंटीग और कंसोर्टियम के सदस्यों को एमओए में उनके द्वारा निर्दिष्ट व्यवस्था के अनुसार उन्हें आवंटित भूमि का अधिकतम 70% उप-पट्टे पर देने का विकल्प होगा।

(ई) प्रमुख सदस्य और/या प्रासंगिक सदस्य(याँ) और/या उनके द्वारा गठित विशेष प्रयोजन कंपनी(याँ) (SPCs) के पक्ष में प्लॉट को उप-विभाजित करके एक से अधिक पट्टा विलेखों का निष्पादन किया जा सकता है, जो भारत में पंजीकृत फर्म या निगमित कंपनी(याँ) होनी चाहिए। हालांकि, पट्टा विलेख के निष्पादन के लिए प्रस्तावित प्रत्येक ऐसे उप-विभाजित प्लॉट का क्षेत्र, जैसा कि ऊपर वर्णित है, 8,000 वर्ग मीटर से कम नहीं होना चाहिए और उक्त उप-विभाजन नोएडा के योजना मानदंडों के अनुसार होना चाहिए।

10. हालांकि, पट्टेदार/उप-पट्टेदार(याँ) को अपनी शेयरधारिता का 100% तक हस्तांतरण करने की अनुमति दी जाएगी, इस शर्त के अधीन कि "प्रमुख सदस्य" (निविदा प्रस्तुत करने की तारीख को) SPC में कम से कम 30% शेयरधारिता रखना जारी रखेगा जब तक कि परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाण पत्र नोएडा से प्राप्त नहीं हो जाता। कर और पंजीकरण विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा दिनांक 11 अक्टूबर, 2010 को जारी सरकारी आदेश संख्या 5007/11-5-2010500(50)/10 के अनुपालन में, शेयरधारकों के नाम में परिवर्तन कंपनी की संपत्ति के हस्तांतरण के बराबर नहीं है। कंपनियों में शेयर के हस्तांतरण के परिणामस्वरूप शेयरधारकों में परिवर्तन के संबंध में गठन परिवर्तन विलेख को पंजीकरण

अधिनियम, 1908 की धारा 17 के तहत पंजीकृत करना अनिवार्य नहीं है। इसके अतिरिक्त, स्टाम्प अधिनियम, 1899 की अनुसूची 1b की धारा 23 के तहत इस CIC विलेख पर कोई स्टाम्प ड्यूटी देय नहीं है। कंपनियों में शेयरों के हस्तांतरण पर कोई हस्तांतरण शुल्क देय नहीं होगा और शेयरों के हस्तांतरण के लिए नोएडा की पूर्व स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होगी।

भुगतान का तरीका और भुगतान योजना

1. सफल बोलीदाता को अधिग्रहीत क्षेत्र के लिए आवंटन पत्र और शेष अनधिग्रहीत क्षेत्र के लिए आरक्षण पत्र जारी किया जाएगा। पहले से अधिग्रहीत और आवंटित भूमि से सटे क्षेत्र(यों) के आवंटन पत्र(पत्रों) को जारी किया जाएगा जैसे ही शेष भूमि (पूर्ण या भागों में) अधिग्रहीत की जाती है और सफल बोलीदाता को कब्जा सौंपने के लिए उपलब्ध होती है।

7. **किश्तों या किसी भुगतान को जमा करने में चूक के मामले में, चूक की अवधि के लिए चूक की गई राशि पर 14% की दर से अर्धवार्षिक चक्रवृद्धि ब्याज देय होगा।**

कब्जा

पट्टा विलेख के निष्पादन और पंजीकरण के बाद आवंटित भूमि का कब्जा पट्टेदार को सौंप दिया जाएगा।

परियोजना का कार्यान्वयन और पूर्णता

कार्यान्वयन

1. पट्टेदार को पट्टा विलेख के निष्पादन की तारीख से 3 वर्षों की अवधि के भीतर खेल, संस्थागत और अन्य सुविधाओं के लिए चिह्नित अनुमेय क्षेत्र का न्यूनतम 15% निर्माण पूरा करना होगा और परियोजना को 5 वर्षों के भीतर चरणों में पूरा करना होगा। हालांकि, आवासीय और व्यावसायिक विकास/निर्माण 7 वर्षों के भीतर चरणों में पूरा किया जा सकता है। इसके अलावा, पट्टेदार को परियोजना में आवासीय और व्यावसायिक घटक को मनोरंजक उपयोगों के लिए चिह्नित क्षेत्र के अनुपात में विकसित करना होगा। हालांकि, असाधारण परिस्थितियों में विस्तार, ऐसे विस्तार की अनुमति देने के समय प्रचलित नीति के अनुसार विस्तार शुल्क के भुगतान पर नोएडा द्वारा दिया जा सकता है। अतिक्रमण, अप्रत्याशित घटना, स्थगन आदेश जैसे कानूनी मुद्दों के कारण विलंब को विस्तार के लिए विचार किया जाएगा।

2. भूमि पर निर्माण इन नियमों और शर्तों के तहत निर्धारित और नोएडा के भवन विनियमों और निर्देशों के अनुसार किया जाना होगा।

पूर्णता/ समापन

1. परियोजना या उसके भाग के चरणों में पूर्णता पर और परियोजना या उसके भाग की पूर्णता को प्रमाणित करने के लिए आवश्यक दस्तावेजों को प्रस्तुत करने पर नोएडा द्वारा 'पूर्णता प्रमाण पत्र' जारी किया जाएगा। क्षतिपूर्ति

पट्टेदार परियोजना के कार्यान्वयन और विकास/निर्माण की गुणवत्ता सुनिश्चित करने, सुविधाओं और सेवाओं के बाद के संचालन और रखरखाव के लिए पूर्णतः और एकमात्र रूप से उत्तरदायी होगा, जब तक कि ऐसे कार्य के लिए वैकल्पिक एजेंसी की पहचान नहीं हो जाती और पट्टेदार द्वारा नोएडा की पूर्व लिखित स्वीकृति के बाद कानूनी रूप से नियुक्त नहीं की जाती। पट्टेदार निम्नलिखित से उत्पन्न होने वाले सभी विवादों के विरुद्ध नोएडा को क्षतिपूर्ति करने वाला एक **क्षतिपूर्ति बंधपत्र** निष्पादित करेगा:

ए) परियोजना की गैर-पूर्णता।

बी) विकास, निर्माण, संचालन और रखरखाव की गुणवत्ता।

सी) अंतिम खरीदार(यों) को आवंटन, पट्टा और/या उप-पट्टा से उत्पन्न कोई कानूनी विवाद।

सामान्य नियम और शर्तें

* आवंटित भूमि के कुल सकल क्षेत्र पर 2.0 (राज्य सरकार की स्वीकृति के अधीन) का समय फ्लोर एरिया रेश्यो (FAR) अनुमेय होगा, जो निर्धारित विभिन्न भूमि उपयोग घटकों में विनिमयीय/हस्तांतरणीय है।

* खेल, संस्थागत और अन्य सुविधाओं के विकास के संबंध में विकासकर्ता के दायित्व इस दस्तावेज के अनुलग्नक 2 में निर्धारित हैं।

मास्टर प्लान और नोएडा के विनियमन के प्रावधान के अधीन:

पट्टेदार को नोएडा/पट्टाकर्ता की पूर्व स्वीकृति के साथ खेल, अन्य सुविधाओं और संस्थागत गतिविधि को उप-पट्टे पर देने का अधिकार होगा।

* व्यावसायिक और आवासीय क्षेत्र को त्रिपक्षीय समझौते के आधार पर बिना किसी अनुमोदन के उप-पट्टे पर दिया जा सकता है।

* संपूर्ण प्लॉट का हस्तांतरण और निर्मित क्षेत्र का उप-पट्टा ऐसे हस्तांतरण या निर्मित क्षेत्र के उप-पट्टे के समय प्रचलित हस्तांतरण नीति द्वारा शासित होगा।

* पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त किए बिना, पट्टेदार को आवंटित प्लॉट को केवल आवासीय और व्यावसायिक उपयोग के लिए उपलब्ध क्षेत्र के लिए नोएडा के योजना मानदंडों के अनुसार उपयुक्त छोटे प्लॉटों में उप-विभाजित करने और हस्तांतरण की तारीख को प्रचलित दर पर हस्तांतरण शुल्क के भुगतान पर नोएडा की पूर्व स्वीकृति के साथ इच्छुक पक्षों को, यदि कोई हो, हस्तांतरित करने का अधिकार होगा। हालांकि, प्रत्येक ऐसे उप-विभाजित प्लॉट का क्षेत्र 8,000 वर्ग मीटर से कम नहीं होना चाहिए।

*** पट्टाकर्ता/नोएडा प्राधिकरण की लिखित स्वीकृति के बाद, पट्टेदार अपनी कई सहायक कंपनियों के माध्यम से परियोजना को लागू/विकसित कर सकता है जिसमें आवंटित/पट्टेदार कंपनी की न्यूनतम 90% इक्विटी शेयर धारिता होगी (ऐसी सहायक कंपनियों को राज्य सरकार की अधिसूचना के अनुसार भारतीय स्टाम्प अधिनियम के प्रावधानों के तहत मूल कंपनी और सहायक कंपनी के बीच लेनदेन के लिए स्टाम्प ड्यूटी से छूट प्राप्त है)।**

*** उप-पट्टे के माध्यम से भूमि/निर्मित क्षेत्र के पहले हस्तांतरण के लिए पट्टेदार द्वारा नोएडा या किसी प्राधिकरण को कोई अतिरिक्त शुल्क या हस्तांतरण शुल्क देय नहीं होगा।**

*** भूमि/निर्मित क्षेत्र का उप-पट्टा नोएडा द्वारा अनुमोदित लेआउट और भवन योजनाओं के आधार पर अनुमति दी जाएगी।**

अन्य खंड

1. प्राधिकरण/पट्टाकर्ता समय-समय पर आवंटन/पट्टा विलेख/उप पट्टा विलेख की नियमों और शर्तों में ऐसे परिवर्धन/परिवर्तन या संशोधन करने का अधिकार सुरक्षित रखता है, जैसा कि उचित और समीचीन समझा जाए।

2. इन नियमों और शर्तों के संबंध में किसी स्पष्टीकरण या व्याख्या के मामले में, नोएडा का निर्णय अंतिम और बाध्यकारी होगा।

7. नोएडा परियोजना के कार्यान्वयन की निगरानी करेगा। जिन आवेदकों के पास निर्धारित समय सीमा के भीतर परियोजना को लागू करने की दृढ़ प्रतिबद्धता नहीं है, उन्हें आवंटन का लाभ नहीं लेने की सलाह दी जाती है।

11. पट्टाकर्ता/पट्टेदार(ओं) के सभी बकाया भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूली योग्य होंगे।

12. नोएडा बड़े सार्वजनिक हित में उचित मुआवजे का भुगतान करके भूमि/भवन का कब्जा वापस ले सकता है। इस संबंध में निर्णय अंतिम और पट्टेदार/उप-पट्टेदार(यों) पर बाध्यकारी होगा। (महत्व सन्निविष्ट)

9. प्रत्यर्थी संख्या 2-नोएडा ने सेक्टर-150, नोएडा में प्लॉट नं. एससी-02 पर स्पोर्ट्स सिटी के आवंटन के लिए आवेदन आमंत्रित किए। ब्रोशर के अनुसार, एक कंसोर्टियम को भी भाग लेने की अनुमति थी। ब्रोशर की शर्तों के अनुसार मेसर्स लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड का एक कंसोर्टियम निम्नलिखित छह कंपनियों के साथ प्रमुख सदस्य के रूप में गठित किया गया था, जिन्होंने 23.06.2014 को इस प्लॉट के आवंटन के लिए आवेदन किया: -

(i) मेसर्स श्री सी इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड

- (ii) मेसर्स श्री सी इन्फ्रा स्क्वेयर प्राइवेट लिमिटेड
- (iii) मेसर्स श्री सी बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड
- (iv) मेसर्स इलेट रियल्टर प्राइवेट लिमिटेड
- (v) मेसर्स श्री सी क्रेस्ट प्रमोटर्स प्राइवेट लिमिटेड और
- (vi) मेसर्स एलर डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड

10. प्रमुख सदस्य मेसर्स लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड, मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की एक सहायक कंपनी थी। आवेदन मेसर्स श्री सी इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड की योग्यता के आधार पर किया गया था, जो इसकी समूह कंपनी में से एक थी। आश्चर्यजनक रूप से, स्पोर्ट्स सिटी 01/78-79 भी उसी समूह की कंपनियों को उसी कंपनी अर्थात् मेसर्स श्री सी इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड की योग्यता के आधार पर आवंटित किया गया था।

11. निविदाओं का मूल्यांकन किया गया और कंसोर्टियम की बोली को सबसे अनुपालनशील (रु. 19,400/- प्रति वर्ग मीटर की दर पर) पाए जाने के बाद, परियोजना को कंसोर्टियम को आवंटित की गई और विभिन्न तारीखों पर आवंटन पत्र जारी किया गया, जैसे ही भूमि का कब्जा आवंटिंग को सौंपा जा सका।

12. कंसोर्टियम के प्रमुख सदस्य नामतः मेसर्स लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड (याचिकाकर्ता कंपनी) के नाम पर प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर-150, नोएडा के लिए। वर्ष 2014 में प्लॉट के लिए कुल प्रीमियम रु. 2,328,00,00,000/- (रुपये 2,328 करोड़) था। आवंटन-सह-आरक्षण पत्र 10.9.2014 को प्रमुख सदस्य को जारी किया गया था, जिसमें आवंटि को प्रीमियम का 20% भुगतान करने और शेष 80% को 16 अर्धवार्षिक किश्तों में (10.3.2015 से शुरू होकर 10.9.2022 को समाप्त होने वाली) भुगतान करने को कहा गया था।

13. प्रीमियम के अग्रिम 20% के भुगतान के बाद, 07.10.2014 को एक औपचारिक पत्र जारी किया गया और तत्पश्चात, नोएडा प्राधिकरण ने विभिन्न पट्टा विलेख निष्पादित किए और कुल 11,98,370.92 वर्ग मीटर भूमि आवंटित की। जिसका विवरण इस प्रकार है:-

"निष्पादित पट्टा विलेखों का विवरण निम्नानुसार है:-

क्र.सं.	पक्ष का नाम और पता	क्षेत्र (वर्ग मीटर)	पट्टा विलेख निष्पादन की तारीख
1.	मेसर्स लोटस ग्रीन्स कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड-एससी-01/A, सेक्टर-150, नोएडा	6,40,000.00	19.12.2014

क्र.सं.	पक्ष का नाम और पता	क्षेत्र (वर्ग मीटर)	पट्टा विलेख निष्पादन की तारीख
2.	मेसर्स एलर डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड-एससी-02/C, सेक्टर-150, नोएडा	60,000.00	19.12.2014
3.	मेसर्स इलेट रियल्टर्स प्राइवेट लिमिटेड-एससी-02/B, सेक्टर-150, नोएडा	1,00,000.00	19.12.2014
4.	मेसर्स क्रेस्ट प्रमोटर्स प्राइवेट लिमिटेड, एससी-02/F, सेक्टर-150, नोएडा	58,064.71	07.04.2015
5.	मेसर्स क्रेस्ट प्रमोटर्स प्राइवेट लिमिटेड, एससी-02/G, सेक्टर-150, नोएडा	60,000.54	07.04.2015
6.	मेसर्स श्री सी बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड, एससी-02/E, सेक्टर-150, नोएडा	32,519.22	07.04.2015
7.	मेसर्स श्री सी इन्फ्रा स्क्वेयर प्राइवेट लिमिटेड, एससी-02/D, सेक्टर-150, नोएडा	40,186.45	07.04.2015
8.	मेसर्स लोटस ग्रीन्स कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड एससी-01/A, सेक्टर-150, नोएडा	7,600.00	11.05.2015
9.	मेसर्स लोटस ग्रीन्स कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड-एससी-01/H और I, सेक्टर-150, नोएडा	72,000.00	20.11.2015
10.	मेसर्स लोटस ग्रीन्स कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड-एससी-01/J और K, सेक्टर-150, नोएडा	72,000.00	20.11.2015
11.	अभी तक पंजीकृत नहीं क्षेत्र	56,000.00	लागू नहीं
	कुल क्षेत्र	11,98,370.92	

14. 01.3.2016 को, नोएडा ने याचिकाकर्ताओं को 1,53,790 वर्ग मीटर अतिरिक्त भूमि आवंटित की।

15. याचिकाकर्ताओं द्वारा यह दावा किया गया है कि आज तक उन्हें सन्निहित भूमि का कब्जा नहीं दिया गया है। ग्राम मोमनथल में खसरा संख्या 86, 471, 94, 95, 109, 110, 171, 172, 181, 182, 187, 192, 200, 201, 208, 209, 211, 212, 218, 219, 234, 233 चक मार्ग, नाली, सरकारी भूमि और मुख्य नाली

के अंतर्गत आते हैं, जो अभी भी नोएडा प्राधिकरण द्वारा अधिग्रहीत नहीं किए गए थे और 10,07,000.00 वर्ग मीटर भूमि पार्सल के बीच में फैले हुए थे।

16. 6.9.2017 को नोएडा ने आवंटीग को उन किसानों के लिए अतिरिक्त मुआवजे के भुगतान के लिए एक पत्र जारी किया जिनकी भूमि अधिग्रहीत की गई थी।

17. समय सीमा को पुनर्निर्धारित करने के बावजूद आवंटीग पहले माइलस्टोन को पूरा करने में विफल रहा। इसलिए 4.2.2020 को नोएडा द्वारा एक नोटिस जारी किया गया लेकिन कुछ नहीं हुआ।

18. याचिकाकर्ता कंपनी का दावा है कि संपूर्ण भूमि के वास्तविक भौतिक कब्जे में कुछ समस्या थी, इसलिए, याचिकाकर्ता ने पट्टा विलेख के निष्पादन की तारीख से 30.06.2015 तक 8,07,600 वर्ग मीटर क्षेत्र के लिए शून्य अवधि के लाभ के लिए आवेदन किया। याचिकाकर्ता ने फिर से 18.12.2015/28.12.2015 दिनांकित आवेदन में 10,07,600 वर्ग मीटर क्षेत्र के लिए शून्य अवधि के लाभ की मांग की। नोएडा प्राधिकरण ने 12.09.2016 को 9,94,218 वर्ग मीटर मापने वाले क्षेत्र के लिए शून्य अवधि का लाभ प्रदान किया। इस पत्र में, यह उल्लेख किया गया था कि शून्य अवधि का लाभ आगे विस्तारित नहीं किया जाएगा। याचिकाकर्ता कंपनी ने 12.09.2016 दिनांकित इस पत्र का लाभ उठाया और इसे चुनौती नहीं दी।

19. कंसोर्टियम के प्रमुख सदस्य ने स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास के लिए एक समेकित नक्शा दाखिल किया, जिसे अनुमोदित किया गया।

20. आवंटीगणों (कंसोर्टियम के सदस्यों) के अनुरोध पर उनकी आवंटित भूमि को विभिन्न कंपनियों में उप-विभाजित किया गया, जो उनका दावा था कि आवंटीग कंपनियों की 100% सहायक थीं।

21. इसके बाद, आवंटीग सहायक कंपनियों ने नोएडा प्राधिकरण से उन कंपनियों के नाम पर अपने प्लॉटों को आगे उप-विभाजित करने का अनुरोध किया, जो आवंटीग कंपनियों की 100% सहायक थीं। इस उप-विभाजन से, मूल सात कंपनियां अब तक 24 कंपनियां बन गई थीं।

22. 8,07,600 वर्ग मीटर भूमि का कब्जा 26.12.2014 को सौंप दिया गया था। यद्यपि सेक्टर 150 में स्पोर्ट्स सिटी स्कीम-02, 12,00,000 वर्ग मीटर के क्षेत्र पर थी, लेकिन नोएडा प्राधिकरण ने आवंटीग को 1,13,375 वर्ग मीटर अतिरिक्त भूमि आवंटित की। इस अतिरिक्त भूमि के आवंटन के बाद, आवंटीग ने अनुमोदन के लिए एक संशोधित मास्टर लेआउट दाखिल किया, जिसे नोएडा प्राधिकरण द्वारा 17.1.2017 को स्वीकृत किया गया और परियोजना के पूर्णता के विभिन्न माइलस्टोन की समयसीमा अवधि बढ़ाई गई। विस्तारित समय सीमा निम्नानुसार थी:-

माइलस्टोन	आरंभ तिथि	पूर्णता तिथि
तीन वर्षों में मनोरंजक सुविधाओं का 15% विकास	1.10.2016	30.09.2019
पांच वर्षों में मनोरंजक सुविधाओं का 100% विकास	1.10.2016	30.09.2021
सात वर्षों में आवासीय और व्यावसायिक का 100% विकास	1.10.2016	30.09.2023

23. सेक्टर 150 में स्पोर्ट्स सिटी-02 के विकास के लिए एक एकीकृत नक्शा 17.01.2017 को अनुमोदित किया गया था (योजना की वैधता पांच वर्ष थी) जिसमें कंसोर्टियम के प्रत्येक सदस्य ने स्पोर्ट्स सिटी में अपने आवासीय/व्यावसायिक और खेल सुविधा के हिस्से को पूरा करने का दायित्व लिया। प्रत्येक कंपनी के दायित्वों को दर्शाने वाला अनुमोदित नक्शा निम्नानुसार था:-

प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर-150, नोएडा (उ.प्र.)

क्र.सं.	कंपनी	प्लॉट सं.	प्रत्येक को आवंटित प्लॉट क्षेत्रफल (वर्ग मी.)	कंपनी द्वारा विकसित FAR (वर्ग मी.)	प्रस्तावित भू-आच्छादन (वर्ग मी.)									
					खुला/हरित (IN SQM .)	(प्रति. %)	आवासीय I (IN SQM) (A)	(प्रति. %)	वाणिज्यिक (IN SQM) (B)	(प्रति. %)	खेल (IN SQM) (C)	(प्रति. %)	कुल (In Sqm) (E=A+B+C)	(प्रति. %)
1	मे./एस. लोटस ग्रीन्स कंस्ट्रक्शन्स प्रा. लि.	एस सी-02/A SE C-150	13444 1.00	16685 7.48	9410 8.70	70.00	2564 2.30	19.07	190.00	0.14	1450 0.00	10.79	4033 2.30	30.00
2	मे./एस. लैंड कार्ट बिल्ड	एस सी-02/A1, SE	83970 .00	19579 6.00	5877 9.00	70.00	2425 5.00	28.89	436.00	0.52	500.00	0.60	2519 1.00	30.00

	सं प्रा.लि.	C- 150												
3	मे./एस . बिल्ड वॉल बिल्ड सं प्रा. लि.	एस सी- 02/ A2, SE C- 150	65333 1.00	13164 3.92	4573 1.70	70. 00	1915 7.30	29. 32	180. 00	0. 2 8	262. 00	0. 40	1959 9.30	30. 00
4	मे./एस . विजटा उन प्लान सं प्रा. लि.	एस सी- 02/ A3, SE C- 150	27185 .00	31326 .09	1870 0.05	68. 79	0.00	0.0 0	221 2.01	8. 1 4	6272 .94	23 .0 8	8484. 95	31. 21
5	मे./एस . ग्रे वॉल डेवलप सं प्रा. लि.	एस सी- 02/ A4, SE C- 150	46846 .00	11540 6.36	3279 2.20	70. 00	0.00	0.0 0	185. 73	0. 4 0	1386 8.08	29 .6 0	1405 3.80	30. 00
6	मे./एस . ग्रे ब्रिक डेवलप सं प्रा. लि.	एस सी- 02/ A5, SE C- 150	8080. 00	36428 .53	3232. 00	40. 00	0.00	0.0 0	0.00	0. 0 0	4848 .00	60 .0 0	4848. 00	60. 00
7	मे./एस . ब्रिक टाउन	एस सी- 02/ A5, SE C- 150	37915 .00	10585 3.08	2654 0.50	70. 00	1124 4.50	29. 66	130. 00	0. 3 4	0.00	0. 00	1137 4.50	30. 00

	डेवलपर्स प्रा. लि.	A6, SE C-150												
8	मे./एस. स्ट्रॉन्ग बिज़ प्रॉपबिल्ड प्रा. लि.	एस सी-02/A7, SE C-150	50790.00	99818.81	35553.00	70.00	15057.00	29.65	180.00	0.35	0.00	0.00	15237.00	30.00
9	मे./एस. विशलैंड बिल्ड ज़ोन प्रा. लि.	एस सी-02/A8, SE C-150	50560.00	110323.36	35392.00	70.00	14944.00	29.56	224.00	0.44	0.00	0.00	151.68.00	30.00
10	मे./एस. वंडरस बिल्ड मार्ट प्रा. लि.	एस सी-02/A9, SE C-150	80857.00	138020.50	56599.90	70.00	23695.10	29.30	100.00	0.12	462.00	0.57	24257.10	30.00
11	मे./एस. एस्का र्पमेंट बिल्ड क्राफ्ट प्रा. लि.	एस सी-02/A10, SE C-150	108135.00	162309.32	78118.50	72.24	29826.50	27.58	190.00	0.18	0.00	0.00	30016.50	27.76

1 2 .	मे./एस . इलेट रियल्ट र्स प्रा. लि.	एस सी- 02/ B, SE C- 150	10000 0.00	20000 0.00	7000 0.00	70. 00	2950 0.00	29. 50	500. 00	0. 5 0	0.00	0. 00	3000 0.00	30. 00
1 3 .	मे./एस . अल्यूर डेवलप र्स प्रा. लि.	एस सी- 02/ C, SE C- 150	60000 .00	12000 0.00	4200 0.00	70. 00	1740 0.00	29. 00	300. 00	0. 5 0	300. 00	0. 00	1800 0.00	30. 00
1 4 .	मे./एस . समृ द्धि इन्फ्रा स्क्वा यर प्रा. लि.	एस सी- 02/ D, SE C- 150	40186 .45	80372 .90	2813 0.52	70. 00	1185 5.00	29. 50	200. 93	0. 5 0	0.00	0. 00	1205 5.94	30. 00
1 5 .	मे./एस . समृ द्धि बिल्ड मार्ट प्रा. लि.	एस सी- 02/ E, SE C- 150	32519 .22	65038 .44	2276 3.45	70. 00	9593. 17	29. 50	162. 60	0. 5 0	0.00	0. 00	9755. 77	30. 00
1 6 .	मे./एस . क्रेस्ट प्रमोट	एस सी- 02/ F,	58064 .71	11612 9.42	4064 5.30	70. 00	1712 9.09	29. 50	290. 32	0. 5 0	0.00	0. 00	1741 9.41	30. 00

	सं. प्रा. लि.	SE C- 150												
17	मे./एस क्रेस्ट प्रमोट सं. प्रा. लि.	एस सी- 02/ G, SE C- 150	60000 .54	12000 1.08	4200 0.38	70. 00	1770 0.16	29. 50	300. 00	0. 50	0.00	0. 00	1800 0.16	30. 00
18	मे./एस ब्रिक राइज़ डेवलप सं. प्रा. लि.	एस सी- 02/ H1, SE C- 150	72000 .00	14400 0.00	5040 0.00	70. 00	2124 0.00	29. 50	360. 00	0. 50	0.00	0. 00	2160 0.00	30. 00
19	मे./एस फेस्ट होम्स डेवलप सं. प्रा. लि.	एस सी- 02/ JK, SE C- 150	72000 .00	19521 9.39	5040 0.00	70. 00	2142 0.00	29. 75	180. 00	0. 25	0.00	0. 00	2160 0.00	30. 00
20	मे./एस श्री सी इन्फ्रा स्ट्रक्च र प्रा. लि.	एस सी- 02/ L, SE C- 150	42658 .00	85316 .00	2986 0.60	70. 00	1258 4.11	29. 50	213. 29	0. 50	0.00	0. 00	1279 7.40	30. 00
21	मे./एस अल्यूर	एस सी- 02/ 02/	22769 .00	45538 .00	1593 8.30	70. 00	6716. 86	29. 50	113. 85	0. 50	0.00	0. 00	6830. 70	30. 00

	डेवलपर्स प्रा. लि.	C1, SE C-150												
22	मे./एस. रेवरेंट डेवलपर्स प्रा. लि.	एस सी-02/M, SE C-150	37231.00	117679.14	26391.15	70.88	0.00	0.00	0.00	0.00	10839.85	29.12	10839.85	29.12
23	मे./एस. वेला स्टोन प्रा. लि.	एस सी-02/N, SE C-150	20863.00	41726.00	14604.10	70.00	6258.90	30.00	0.00	0.00	0.00	0.00	6258.90	30.00
	प्रॉपबिल्ड प्रा. लि.	SE C-150												
24	मे./एस. वाइसटेक डेवलपर्स प्रा. लि.	एस सी-02/P, SE C-150	17344.00	34688.00	12140.80	70.00	5203.20	30.00	0.00	0.00	0.00	0.00	5203.20	30.00
प्रस्तावित विकास			1329745.92	2659491.84	930822.14	70.00	340422.18	25.60	6648.73	0.50	51852.87	3.90	398923.78	30.00
अनुमत विकास			1329745.92	2659491.84	930822.14	70.00	392275.05	29.50	6648.73	0.50			398923.78	30.00

24. याचिकाकर्ता ने दावा किया कि नोएडा प्राधिकरण ने उप-विभाजित प्लॉटों के संबंध में पट्टा विलेख निष्पादित नहीं किया था और इस कारण से, वे अपने संबंधित प्लॉटों पर निर्माण और विकास कार्य शुरू करने में असमर्थ थे।

25. याचिकाकर्ता ने किसानों द्वारा अतिक्रमण और नोएडा प्राधिकरण द्वारा भारमुक्त भूमि प्रदान करने में असमर्थता के आधार पर फिर से शून्य अवधि के विस्तार का लाभ मांगा। इस अनुरोध को नोएडा प्राधिकरण द्वारा 25.02.2020 को अस्वीकार कर दिया गया था।

26. कंसोर्टियम का प्रमुख सदस्य (याचिकाकर्ता कंपनी) और साथ ही प्रासंगिक सदस्यों ने योजना में निर्धारित समय के भीतर स्पोर्ट्स सिटी और आवासीय अपार्टमेंट विकसित नहीं किए। तत्पश्चात, याचिकाकर्ता कंपनी (कंसोर्टियम का प्रमुख सदस्य) ने संशोधित मास्टर प्लान की स्वीकृति के लिए 05.12.2022 को एक आवेदन किया। हालांकि, इस संशोधित योजना में, गोल्फ कोर्स का क्षेत्र एकतरफा कम कर दिया गया था।

सीएजी रिपोर्ट

27. यह पता चलता है कि स्पोर्ट्स सिटी की योजना बनाने और इसके आवंटन और विकास में कुछ गड़बड़ी/घोटाला हुआ था। भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक (कैग) द्वारा एक लेखा परीक्षा की गई, जिन्होंने सितंबर, 2020 में रिपोर्ट प्रस्तुत की, जो दर्शाती है कि एक बड़ा घोटाला हुआ था, जिससे नोएडा प्राधिकरण और राज्य सरकार को लगभग ₹9,000 करोड़ का नुकसान हुआ। सीएजीद्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट का प्रासंगिक भाग नीचे उद्धृत किया गया है:-

सी.ए.जी. द्वारा उठाई गई मुख्य आपत्तियां

1.	स्पोर्ट्स सिटी में भूखण्डों की प्राइसिंग त्रुटिपूर्ण है, जिसके कारण प्राधिकरण को लगभग रु. 9000 करोड़ का नुकसान हुआ।
2.	ब्रोशर में भूखण्डों की मात्र आवासीय तथा व्यवसायिक प्रयोजन हेतु अंकित क्षेत्रफल को उपविभाजित किये जाने का प्रावधान था, लेकिन स्पोर्ट्स इन्फ्रास्ट्रक्चर हेतु अंकित क्षेत्रफल को भी उप-विभाजित कर दिया गया, जिसके फलस्वरूप स्पोर्ट्स इन्फ्रास्ट्रक्चर का क्षेत्रफल 36 भागों में बांटा दिया गया है।
3	ब्रोशर में उल्लेखित शर्तों के अनुसार प्राप्त बिड्स की स्क्रीनिंग - टेक्निकल क्वालिफिकेशन, टर्न ओवर नेटवर्थ आदि को नजर अन्दाज करते हुए स्पोर्ट्स सिटीज के भूखण्डों का आवंटन किया गया।
4	लीड मेम्बर जिसका कंसोर्शियम में हिस्सा सबसे अधिक था, वह कंसोर्शियम में बाहर हो गया। इस प्रकार आवंटन ऐसे विकासकर्ताओं को कर दिया गया, जो वित्तीय दृष्टि से योग्य नहीं थे।
5	विभाग द्वारा उप विभाजित भूखण्डों को अलग आवंटी मानते हुए उसका अलग पेमेंट प्लान जारी किया गया।
6	मार्क इवेन्ट्स आयोजित करने के लिए स्पोर्ट्स सिटीज के फील्ड में विशेषज्ञताप्राप्त संस्था की मदद से स्पोर्ट्स सिटीज का नियोजन किया जाना था, लेकिन विशेषज्ञताप्राप्त संस्था की मदद नहीं ली गई। ब्रोशर में स्पोर्ट्स गतिविधियों हेतु विनिर्देश निर्धारित नहीं किये।

7	उप विभाजित भूखण्डों को दूसरी इकाई को स्थानान्तरित करने से पूर्व ट्रांसफर चार्ज नहीं लिए गये, जिसके कारण स्पोर्ट्स सिटी भूखण्ड सं० एस०सी०-01, सैक्टर-78/79 में प्राधिकरण को लगभग रु० 295.70 करोड़ का नुकसान हुआ है। इस प्रकार स्पोर्ट्स सिटी भूखण्ड सं० एस०सी०-02, सैक्टर-150 में प्राधिकरण को लगभग 166.50 करोड़ का नुकसान हुआ है।
8	खेलकूद सुविधाओं के विकसित होने से पूर्व ही 02 परियोजनाओं में अधिभोग प्रमाणपत्र जारी कर दिये गये।
9	खेलकूद सुविधाओं का विकास होने से पूर्व ही इन सुविधाओं हेतु अनुमन्य एफ०ए०आर० को ग्रुप हाउसिंग सोसाइटीज में ट्रांसफर कर दिया गया।
10	स्पोर्ट्स सिटीज का विकास ग्रुप हाउसिंग योजनाओं की तरह किया गया है, जिसमें उप विभाजित भूखण्डों के मध्य खेल सुविधाएं प्रस्तावित की गयी है। खेल सुविधाओं को वरीयता प्रदान नहीं की गई है।
11	लीजरेन्ट की कम रिकवरी की गयी, जिससे प्राधिकरण को रु० 64.31 करोड़ की हानि हुई।

28. सीएजीद्वारा दी गई रिपोर्ट चौंकाने वाली थी और घोटाले का खुलासा करती है, यह उल्लेख करती है कि कैसे नोएडा प्राधिकरण और राज्य सरकार को रु. 9,000 करोड़ की राशि का नुकसान हुआ है, क्योंकि नोएडा प्राधिकरण ने स्पोर्ट्स सिटी के लिए चिह्नित भूमि की गलत मूल्य निर्धारण की है। ब्रोशर के अनुसार केवल आवासीय और व्यावसायिक प्लॉट विभाजित किए जा सकते थे लेकिन नोएडा प्राधिकरण ने पूरे प्लॉटों को उप-विभाजित कर दिया, जो स्पोर्ट्स सिटी के लिए भी चिह्नित किए गए थे। आवंटीग की बोलियों की जांच नहीं की गई और प्लॉट आवंटित करने से पहले उम्मीदवारों के टर्नओवर/योग्यता पर भी विचार नहीं किया गया। उच्चतम हिस्सेदारी वाले प्रमुख सदस्य को परियोजना से पूरी तरह से बाहर कर दिया गया और तत्पश्चात, विभिन्न अन्य कंपनियों को आवंटन किया गया, जो व्यक्तिगत रूप से वित्तीय बोली मूल्यांकन में योग्य नहीं थे। ऐसी संदिग्ध कार्यप्रणाली को अपनाकर, नोएडा प्राधिकरण ने उन लोगों को प्लॉट आवंटित किए थे, जो व्यक्तिगत रूप से आवेदन करने के भी हकदार नहीं थे। नोएडा प्राधिकरण ने किस्त की बकाया राशि एकत्र करने की भी जहमत नहीं उठाई और आवंटीगणों को अनुचित और अवैध लाभ देते हुए उनके द्वारा कभी कोई प्रयास नहीं किया गया। वित्त विभाग ने प्रत्येक आवंटीग कंपनी को एक नए आवंटीग के रूप में मानते हुए एक नई भुगतान योजना जारी की है। दूसरे और तीसरे हस्तांतरण के लिए हस्तांतरण शुल्क भी एकत्र नहीं किया गया। कुछ मामलों में, अधिभोग प्रमाण पत्र जारी कर दिया गया है हालांकि खेल सुविधाएं विकसित नहीं की गई थीं। पट्टा किराया भी वसूल नहीं किया गया था।

29. सीएजीकी रिपोर्ट के बाद, मामला अंततः सार्वजनिक लेखा समिति (पी ए सी) को भेजा गया, जहां कार्यवाही अभी भी चल रही है।

नोएडा प्राधिकरण की बोर्ड बैठक

30. सीएजीऑडिट पर घुटने-टेक प्रतिक्रिया के रूप में, नोएडा ने 18.01.2021 (201वीं बोर्ड बैठक) को अपनी बोर्ड बैठक की जिसमें यह संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी में खेल सुविधाओं को पूरा करने के लिए, एक समिति बनाई जानी चाहिए, जो स्थिति की जांच करेगी और अगली बोर्ड बैठक में एक रिपोर्ट प्रस्तुत करेगी, और पुनर्मान्यकरण सहित स्पोर्ट्स सिटी में कोई भी आगे की कार्रवाई करने को स्थगित कर दिया।

31. बोर्ड की अगली बैठक 25.06.2021 को आयोजित की गई थी, जिसमें निम्नलिखित संकल्प लिया गया:-

- i. इन्फ्रास्ट्रक्चर पर ₹ 100 करोड़ से अधिक की धनराशि व्यय की जा चुकी है।
- ii. उनके द्वारा स्पोर्ट्स सिटी के प्लॉट को Further sub-divide नहीं किया जायेगा।
- iii. भवन मानचित्र स्वीकृति संशोधित मानचित्र स्वीकृति समयवृद्धि रिवेलिडेशन ऑफ बिल्डिंग प्लान, आदि की अनुमति प्रदान की जाये।
- iv. कुछ लैंड पार्सल का कब्जा नहीं दिया गया है। कब्जा दिलवाया जाये।
- v. जहां किसानों के साथ विवाद है, उनसे समझौता कर अधूरे रोड नेटवर्क को पूर्ण कराया जाये।
- vi. स्पोर्ट्स सुविधाएं विकसित किये जाने हेतु समयसारणी दी गयी।

13. समिति द्वारा चारों स्पोर्ट्स सिटीज के स्थल के फोटोग्राफ्स भी प्राप्त किये गये। चारों स्पोर्ट्स सिटीज के फोटोग्राफ्स रिपोर्ट के साथ संलग्न हैं। फोटोग्राफ्स का अवलोकन करने से स्पष्ट है कि स्थल पर ग्रुप हाउसिंग के टॉवर विद्यमान हैं किन्तु अन्तराष्ट्रीय स्तर की खेल सुविधाएँ नगण्य हैं।

14. यह भी उल्लेखनीय है कि प्राधिकरण के पत्र सं० नोएडा/स्पोर्ट्स सिटी/2020/940, दिनांक 16.06.2021 द्वारा अपर मुख्य सचिव अवस्थापना एवं औद्योगिक विकास विभाग, उ०प्र० शासन को नोएडा में स्पोर्ट्स सिटीज परियोजना के विकास एवं क्रियान्वयन में आ रही बाधाओं का उल्लेख करते हुए शासन से उचित मार्गदर्शन प्रदान किये जाने का अनुरोध किया गया है। इस पत्र में निम्न बिन्दुओं पर निर्देश मांगे गये हैं:-

ए. सी०ए०जी० की रिपोर्ट में परिलक्षित आपतियों के क्रम में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को आगे कैसे बढ़ाया जाये।

बी. नोएडा क्षेत्र में स्थित स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाओं में अन्तराष्ट्रीय स्तर की खेलकूद सुविधाओं का विकास किस प्रकार किया जाये।

सी. स्पोर्ट्स फेसिलिटीज के विकास के अभाव में भूखण्डों के मानचित्र स्वीकृति/पुनर्वैधिकरण/अधिभोग प्रमाणपत्र की कार्यवाही किस प्रकार की जायें।

डी. स्पोर्ट्स सिटी के विकासकर्ताओं द्वारा कई छोटे-छोटे विकासकर्ताओं को इस योजना के अन्तर्गत भूमि सबलीज पर दे दी गयी है तथा स्थल पर इन विकासकर्ताओं द्वारा विकास एवं निर्माण कार्य प्रारम्भ कर दिये

गये हैं। इन विकासकर्ताओं द्वारा तृतीय पक्ष के अधिकारी भी सृजित किये जा चुके हैं एवं फ्लैट क्रेताओं से धनराशि वसूल कर ली गयी है। स्पोर्ट्स फेसिलिटीज के विकास के अभाव में अधिभोग प्रमाणपत्र जारी न होने की स्थिति में व भूखण्डों पर अत्यधिक देयकों के कारण क्रेताओं के पक्ष में उप पट्टा प्रलेख निष्पादन की कार्यवाही नहीं हो पा रही है।

स्थल निरीक्षण सी०ए०जी० की आपति तथा स्पोर्ट्स सिटी से सम्बन्धित अभिलेखों का अवलोकन करने के उपरांत समिति का यह मतव्य है कि निम्न कारणों से नौएडा में विकसित हुई स्पोर्ट्स सिटीज के सम्बन्ध में शासन स्तर से दिशा-निर्देश प्राप्त किया जाना उचित होगा:-

1. सी.ए.जी. द्वारा नौएडा में विकसित हुई स्पोर्ट्स सिटीज के संबंध में गम्भीर आपतियां उठाई गयी हैं, जो योजना की डिजाइन, बिडिंग, प्राइसिंग, मानचित्र स्वीकृति, क्रियान्वयन, आदि के संबंध में हैं। सी.ए. जी. द्वारा अपनी प्रारम्भिक रिपोर्ट शासन को प्रेषित कर दी गयी है।

2. सभी स्पोर्ट्स सिटीज में ब्रोशर की शर्तों में खेलकूद सुविधाएं विकसित किये जाने हेतु निर्धारित समय समाप्त हो चुका है, लेकिन चारों स्पोर्ट्स सिटीज में खेलकूद सुविधाओं का विकास नगण्य/बहुत कम हुआ है।

3. ब्रोशर में यह उल्लेखित था कि केवल आवासीय एवं व्यावसायिक प्रयोजन हेतु आरक्षित भूमि का ही सबडिवीजन किया जायेगा, लेकिन तीन स्पोर्ट्स सिटीज में गोल्फ कोर्स हेतु प्रस्तावित भूमि का सबडिवीजन भी कर दिया गया है।

4. सैक्टर-152 स्थित स्पोर्ट्स सिटी के अतिरिक्त अन्य तीन स्पोर्ट्स सिटीज का विकास ग्रुप हाउसिंग परियोजनाओं की भांति हुआ है। ग्रुप हाउसिंग योजनाओं में भी स्विमिंग पूल, बैडमिन्टन कोर्ट, टेनिस कोर्ट आदि का प्रावधान किया जाता है। इन तीनों स्पोर्ट्स सिटीज में भी उक्त श्रेणी की कई सुविधाएं संबंधित सब्सिडियरी द्वारा अपनी योजनाओं में की गयी हैं, जिनका उपयोग केवल उस योजना में रहने वाले निवासियों द्वारा ही किया जा सकता है, अन्य स्पोर्ट्स सिटीज अथवा नौएडा में रहने वाले आम निवासियों द्वारा इन सुविधाओं को उपयोग प्रैक्टिकली नहीं किया जा सकेगा, क्योंकि बिल्डरों द्वारा अपनी-अपनी योजनाओं में बाउण्ड्री वॉल का निर्माण कर लिया गया है।

5. चारों स्पोर्ट्स सिटीज के विकासकर्ताओं पर लगभग रु. 4000 करोड़ की देनदारी है।

6. ब्रोशर में दी गयी शर्तों के विपरीत लीड मेम्बर द्वारा कन्सोर्शियम से बाहर हो जाने के कारण खेल सुविधाएं विकसित किये जाने में कठिनाई हो रही है।

7. स्पोर्ट्स सिटीज का विकास इन्टीग्रेटेड रूप से नहीं हुआ है एवं उनका स्वरूप स्पोर्ट्स सिटी के स्थान पर हाउसिंग परियोजनाओं की भांति है।

समिति की उक्त रिपोर्ट प्राधिकरण बोर्ड के समक्ष अवलोकनार्थ एवं दिशा निर्देश प्रदान किये जाने हेतु प्रस्तुत की गयी थी, जिस पर प्राधिकरण बोर्ड द्वारा निम्नवत निर्णय लिया गया:-

संचालक मण्डल द्वारा समिति की आख्या को संज्ञान में लेते हुए सुविचारित प्रस्ताव मार्गदर्शन प्राप्ति हेतु शासन को प्रेषित करने का निर्णय लिया गया।

अतः प्राधिकरण बोर्ड द्वारा लिये गये उपरोक्त निर्णय एवं नौएडा प्राधिकरण के पूर्व प्रेषित पत्र दिनांक 16.06.2021 के क्रम में शासन स्तर से स्पोर्ट्स सिटीज के सम्बन्ध में दिशा-निर्देश प्रदान करने का कष्ट करें। प्राधिकरण बोर्ड के समक्ष स्पोर्ट्स सिटीज के सम्बन्ध में रखे गये प्रस्ताव एवं कार्यवृत्त की प्रति संलग्न कर प्रेषित की जा रही है।

संलग्नक यथोपरि।"

32. सीएजीरिपोर्ट के बाद, नौएडा ने स्पोर्ट्स सिटी में सभी गतिविधियों को स्थगित कर दिया और दिशा और मार्गदर्शन के लिए मामले को राज्य सरकार को भेजा कि क्या किया जाना है। स्थिति की गंभीरता को देखते हुए विधानसभा के सदस्यों से मिलकर एक सार्वजनिक लेखा समिति (पीएसी) का गठन किया गया।

प्रमुख रिट याचिका संख्या 15604/2021 में की गई प्रार्थनाएं

33. तब से, कुछ नहीं हुआ था, इसलिए कंसोर्टियम की ओर से प्रमुख सदस्य (याचिकाकर्ता कंपनी) ने तत्काल रिट याचिका अर्थात् रिट सी संख्या 15604/2021 (मेसर्स लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और 2 अन्य) निम्नलिखित राहत मांगते हुए दायर की:-

"I. प्रत्यर्थियों को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि याचिकाकर्ता को शून्य अवधि का लाभ न केवल स्वीकृत तिथि 17.08.2017 तक बल्कि प्रश्नगत भूमि अर्थात् सेक्टर 150, नौएडा में प्लॉट नं. स्पोर्ट्स सिटी एससी-02 का वास्तविक शांतिपूर्ण खाली भौतिक कब्जा याचिकाकर्ता को सौंपे जाने तक विस्तारित किया जाए।

II. प्रत्यर्थियों को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि प्रश्नगत भूमि अर्थात् सेक्टर 150, नौएडा में प्लॉट नं. स्पोर्ट्स सिटी-2 का वास्तविक शांतिपूर्ण खाली भौतिक कब्जा याचिकाकर्ता को सौंपे जाने तक पट्टा प्रीमियम पर किश्त और ब्याज की मांग/वसूली न करें।

III. प्रत्यर्थियों को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि स्वीकृत तिथि 17.08.2017 तक नहीं बल्कि प्रश्नगत भूमि अर्थात् सेक्टर 150, नौएडा में प्लॉट नं. स्पोर्ट्स सिटी-2 का वास्तविक शांतिपूर्ण खाली भौतिक कब्जा याचिकाकर्ता को सौंपे जाने तक पट्टा किराया मांग/शुल्क न लें।

IV. प्रत्यर्थियों को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि निर्माण समयसीमा के विस्तार को उस तारीख से गणना की जानी चाहिए जब प्रश्नगत भूमि अर्थात् सेक्टर 150, नोएडा में प्लॉट नं. स्पोर्ट्स सिटी-2 का वास्तविक शांतिपूर्ण खाली भौतिक कब्जा याचिकाकर्ता को सौंपा जाए।

V. प्रत्यर्थियों को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि याचिकाकर्ता को पुनर्भुगतान अनुसूची का पुनर्गठन प्रदान किया जाए ताकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अमरापाली बैंक मामले में 940/2017 में दिनांक 10.06.2020 और 10.07.2020 के आदेश के अनुसार याचिकाकर्ता को प्रश्नगत भूमि अर्थात् सेक्टर-150, नोएडा में प्लॉट नं. स्पोर्ट्स सिटी-2 के आवंटन के विरुद्ध नोएडा प्राधिकरण को राशि का भुगतान किया जाए।

VI. नोएडा प्राधिकरण द्वारा पारित दिनांक 15.03.2021 के मांग/सूचना पत्र को गलत होने के कारण रद्द करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए और प्रत्यर्थी प्राधिकरणों को याचिकाकर्ता के विरुद्ध प्रश्नगत भूमि अर्थात् सेक्टर 150, नोएडा में प्लॉट नं. स्पोर्ट सिटी-एससी-02 पर याचिकाकर्ता के कानूनी अधिकार के संबंध में कोई जबरदस्ती कार्रवाई करने से रोकने के लिए।

VII. प्रत्यर्थियों को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि किसानों को दिए गए अतिरिक्त मुआवजे के रूप में अतिरिक्त प्रीमियम की क्षतिपूर्ति और मुआवजा याचिकाकर्ता पर लगाया गया है और याचिकाकर्ता को प्रश्नगत भूमि के आवंटन की कुल लागत में शामिल किया गया है।

VIII. मामले की परिस्थितियों में माननीय न्यायालय द्वारा उचित और उपयुक्त समझे जाने वाले किसी अन्य आदेश या निर्देश को जारी करने के लिए।

IX. इस याचिका की लागत इस याचिकाकर्ता को देने के लिए।

X. प्रत्यर्थियों को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि याचिकाकर्ता को प्रश्नगत भूमि अर्थात् याचिकाकर्ता को प्लॉट नं. स्पोर्ट सिटी-2, सेक्टर 150, नोएडा के आवंटन के विरुद्ध पुनर्भुगतान अनुसूची का पुनर्गठन प्रदान किया जाए।

XI. प्रत्यर्थी संख्या 2 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि प्रश्नगत स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट का हिस्सा बनने वाले विभिन्न आवंटीगणों को आवंटित 1,23,854 वर्ग मीटर मापने वाली शेष भूमि के पट्टा विलेख निष्पादित करें।

XII. प्रत्यर्थी संख्या 2 के बोर्ड के दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक में लिए गए निर्णय को रद्द करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए जिसके द्वारा स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नं.

एससी-02, सेक्टर 150, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. के संबंध में सभी अनुमोदनों, मंजूरीयों, अनुमतियों और अन्य निर्णयों को होल्ड/फ्रीज कर दिया गया है;

XIII. प्रत्यर्थी संख्या 2 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि भवन योजनाओं को अनुमोदित करें, भवन योजनाओं में संशोधन, भवन योजनाओं का पुनर्मान्यकरण और स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को कुशलतापूर्वक निष्पादित करने के लिए आवश्यक हो सकने वाली बंधक की अनुमति, आवंटीगणों के गठन में परिवर्तन, हस्तांतरण अनुमोदन आदि से संबंधित अन्य अनुमोदन/मंजूरी/स्पष्टीकरण प्रदान करें।

XIV. प्रश्नगत प्लॉट अर्थात् एससी-02-, स्पोर्ट्स सिटी, सेक्टर 150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. के संबंध में अतिरिक्त किसान मुआवजे के भुगतान की ओर प्रतिकर के रूप में रु. 392.88/- (रुपये तीन सौ करोड़ और अठासी करोड़ केवल) की मांग करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा दिनांक 31-07-2020 के पत्र के साथ दिनांक 06-09-2017 के मांग पत्र को रद्द करने के लिए सर्विओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश के लिए;

XV. प्रत्यर्थी संख्या 2 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा जारी दिनांक 06-09-2017 के आक्षेपित मांग नोटिस के अनुसरण में कोई जबरदस्ती कदम/कार्रवाई न करें।

XVI. प्रत्यर्थी संख्या 2 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि प्रश्नगत स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट का हिस्सा बनने वाले प्लॉट नं. एससी-02/A के संबंध में शून्य-अवधि का लाभ उस अवधि के लिए प्रदान करें जो आवंटन की तारीख से उस तारीख तक चले जब तक; (i) उक्त प्लॉट नं. एससी-02/A से अतिक्रमण हटाया जाता है और अतिक्रमण भाग का खाली भौतिक और शांतिपूर्ण कब्जा प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा याचिकाकर्ता को सौंपा जाता है और (ii) उक्त प्लॉट एससी-02/A के अपट्टित भाग के संबंध में पट्टा विलेख प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा याचिकाकर्ता के पक्ष में निष्पादित किया जाता है।

XVII. प्रत्यर्थी संख्या 2 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि मेसर्स बिल्ड वॉल बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड को प्लॉट नं. एससी-02/A2 के संबंध में शून्य-अवधि का लाभ 01-10-2016 से उस तारीख तक की अवधि के लिए प्रदान करें जब तक उक्त प्लॉट नं. एससी-02/A2 से अतिक्रमण हटाया जाता है और अतिक्रमण भाग का खाली भौतिक और शांतिपूर्ण कब्जा प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा सौंपा जाता है।

XVIII. प्रत्यर्थी संख्या 2 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि ये वॉल, ब्रिक टाउन, विला स्टोन और वाइसटेक को प्रश्नगत स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट का हिस्सा बनने वाले प्लॉट नं., अर्थात् एससी-02/A4, एससी-02/A6, एससी-02/N और एससी-02/P के संबंध में शून्य अवधि का

लाभ 01-10-2016 से उस तारीख तक की अवधि के लिए प्रदान करें जब तक प्लॉट नं. एससी-02/P के संबंध में पट्टा विलेख प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा वाइसटेक के पक्ष में निष्पादित किया जाता है।

XIX. प्रत्यर्थी संख्या 2 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि मेसर्स एस्कार्पमेंट बिल्डक्राफ्ट प्राइवेट लिमिटेड को प्रश्नगत स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट का हिस्सा बनने वाले प्लॉट नं. एससी-02/A10 के संबंध में शून्य-अवधि का लाभ 01-10-2016 से उस तारीख तक की अवधि के लिए प्रदान करें जब तक प्लॉट नं. एससी-02A/A10 के अपट्टित भाग के संबंध में पट्टा विलेख प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा निष्पादित किया जाता है।

XX. प्रत्यर्थी संख्या 2 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि इलेट रियल्टर्स प्राइवेट लिमिटेड को प्लॉट नं. एससी-02/B के संबंध में 01-10-2016 से उस तारीख तक की अवधि के लिए शून्य-अवधि का लाभ प्रदान करें जब तक उक्त प्लॉट नं. एससी-02/B से अतिक्रमण हटाया जाता है और अतिक्रमण भाग का खाली भौतिक और शांतिपूर्ण कब्जा प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा सौंपा जाता है।

संबद्ध रिट याचिकाओं में की गई प्रार्थनाएं

(1) रिट-सी 30347/2023 (मेसर्स रेवरेंट डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में:-

"(i). प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए परमादेश की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर-150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. का हिस्सा बनने वाले 37,231 वर्ग मीटर मापने वाले प्रश्नगत प्लॉट अर्थात् एससी-02/M के संबंध में पट्टा विलेख निष्पादित और पंजीकृत करें और इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 2 के रूप में संलग्न स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट की अनुमोदित लेआउट योजना में विशेष रूप से दर्शाया और चिह्नित किया गया है जिसे लोटस ग्रीन्स में दर्शाया गया है।

(ii). प्रत्यर्थी संख्या 1 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाकर लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट से संबंधित मामले पर उचित निर्णय लें जो प्रत्यर्थी संख्या 3 के दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक के आक्षेपित निर्णय से उत्पन्न होता है।

(iii) लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नामतः प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की मंजूरी को रोकने/होल्ड पर रखने के प्रत्यर्थी संख्या 3 के निर्णय को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी या किसी अन्य उचित रिट की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए, जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक में लिया गया (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 3)।

(iv) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के निर्माण और विकास को दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार अनुमति दें (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 2) या वैकल्पिक रूप से मेंडमस या किसी अन्य उचित रिट की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश दें कि प्रत्यर्थी संख्या 4 द्वारा दिनांक 05-12-2022 को प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित मंजूर करें (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 4) और याचिकाकर्ता को प्रश्नगत प्लॉट में निर्माण शुरू करने में सक्षम बनाने के लिए समय-समय पर आवश्यक हो सकने वाली अन्य अनुमोदन/मंजूरी/अनुमतियां प्रदान करें जो उप-पट्टा विलेख और योजना ब्रोशर के अनुसार प्रश्नगत प्लॉट में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के निर्माण और विकास के लिए हों।

(v) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि (i) प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम और वार्षिक पट्टा किराए के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करें (ii) प्रश्नगत प्लॉट में परियोजना की पूर्णता के लिए बिना किसी शुल्क के समय विस्तार प्रदान करें, 01-03-2016 से उस तारीख तक की अवधि के लिए जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 याचिकाकर्ता के पक्ष में प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा विलेख निष्पादित करता है और आगे दिनांक 18-01-2021 से शुरू होने वाली अवधि के लिए अर्थात् वह तारीख जब प्रत्यर्थी संख्या 3 के बोर्ड ने लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की अनुमोदन/मंजूरी/संशोधन को निलंबित कर दिया है, उस तारीख तक जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाता है और दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास की अनुमति देता है या प्रत्यर्थी संख्या 4 द्वारा प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित करता है, जो भी बाद में हो।

(vi) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 याचिकाकर्ता के पक्ष में प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा विलेख निष्पादित करता है और आगे उस तारीख तक जब तक लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं की मंजूरी पर प्रतिबंध हटाया जाता है या संशोधित लेआउट योजना अनुमोदित की जाती है, जो भी बाद में हो, तब तक कोई मांग नोट या डिफॉल्ट नोटिस जारी न करें।

(vii) मामले की परिस्थितियों में न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस माननीय न्यायालय द्वारा उचित और उपयुक्त समझी जाने वाली कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।"

(2) रिट-सी संख्या 33174/2023 (मेसर्स विश लैंड बिल्डज़ोन प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में:-

(i) दिनांक 28-03-2023 के आक्षेपित मांग नोटिस (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 2) को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए जो स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. में स्थित 50,560 वर्ग मीटर मापने वाले प्लॉट नं. एससी-02/A-8 के संबंध में पट्टा प्रीमियम की किशतों की ओर रु. 142,26,78,663/- और वार्षिक पट्टा किराए की ओर रु. 21,08,14,796/- कुल रु. 163,34,93,459/- की कथित बकाया राशि के भुगतान के लिए प्रतीत होता है।

(ii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि दिनांक 28-03-2023 के मांग नोटिस के अनुसरण में कोई जबरदस्ती कदम/कार्रवाई न करें;

(iii) प्रत्यर्थी संख्या 1 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाकर लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट से संबंधित मामले पर उचित निर्णय लें जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक के आक्षेपित निर्णय से उत्पन्न होता है।

(iv) लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नामतः प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की मंजूरी को रोकने/होल्ड पर रखने के प्रत्यर्थी संख्या 3 के निर्णय को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए, जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक में लिया गया (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 3)।

(v) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के निर्माण और विकास को दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार अनुमति दें (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 5) या वैकल्पिक रूप से मैंडमस या किसी अन्य उचित रिट की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश दें कि प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा दिनांक 05-12-2022 को प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित मंजूर करें (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 6) और याचिकाकर्ता को उप-पट्टा विलेख और योजना ब्रोशर के अनुसार प्रश्नगत प्लॉट में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के निर्माण और विकास के लिए प्रश्नगत प्लॉट में निर्माण शुरू करने में सक्षम बनाने के लिए समय-समय पर आवश्यक हो सकने वाली अन्य अनुमोदन/मंजूरी/अनुमतियां भी प्रदान करें।

(vi) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि (i) प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम और वार्षिक पट्टा किराए के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करें (ii) प्रश्नगत प्लॉट में परियोजना की पूर्णता के लिए किसी अतिरिक्त शुल्क के भुगतान के बिना

समय विस्तार प्रदान करें, कोविड-19 महामारी के प्रकोप के कारण दिनांक 25-03-2020 से 31-12-2020 तक की अवधि के लिए और तत्पश्चात् दिनांक 18-01-2021 से शुरू होने वाली अवधि के लिए अर्थात् वह तारीख जब प्रत्यर्थी संख्या 3 के बोर्ड ने लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की अनुमोदन/मंजूरी/संशोधन को निलंबित कर दिया है, उस तारीख तक जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाता है और दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास की अनुमति देता है या प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित करता है, जो भी बाद में हो;

(vii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि जब तक प्रश्नगत स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं की मंजूरी पर प्रतिबंध हटाया जाता है या संशोधित लेआउट योजना अनुमोदित की जाती है, जो भी बाद में हो, तब तक कोई मांग नोट या कोई आगे या बाद में डिफॉल्ट नोटिस जारी न करें;

(viii) मामले की परिस्थितियों में न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस माननीय न्यायालय द्वारा उचित और उपयुक्त समझी जाने वाली कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।"

(3) रिट-सी संख्या 33182/2023 (मेसर्स एस्कार्पमेंट बिल्डक्राफ्ट प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में:-

"(i). दिनांक 27-03-2023 के आक्षेपित मांग नोटिस (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 2) को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश और/या निर्देश जारी करने के लिए जो स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. में स्थित प्रश्नगत प्लॉट अर्थात् प्लॉट एससी-02/A10 के संबंध में पट्टा प्रीमियम की किश्तों की ओर रु. 269,78,46,360/- और वार्षिक पट्टा किराए की ओर 39,33,82,733/- कुल रु. 309,12,29,093/- की कथित बकाया राशि के भुगतान के लिए प्रतीत होता है;

(ii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि दिनांक 27-03-2023 के आक्षेपित मांग नोटिस के अनुसरण में कोई जबरदस्ती कदम/कार्रवाई न करें।

(iii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि प्रश्नगत प्लॉट से अतिक्रमित भाग (सुपर-इम्पोज्ड शजरा मैप के अनुसार अर्थात् इस रिट याचिका के अनुलग्नक-4) का अतिक्रमण साफ करें और याचिकाकर्ता को उसका खाली, भौतिक और शांतिपूर्ण कब्जा सौंपें;

(iv) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि प्रश्नगत प्लॉट का हिस्सा बनने वाले 13842 वर्ग मीटर मापने वाले अपट्टित भाग के संबंध में पट्टा विलेख निष्पादित और पंजीकृत करें;

(v). प्रत्यर्थी संख्या 1 को निर्देश देते हुए मंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाकर लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट से संबंधित मामले पर उचित निर्णय लें जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक के आक्षेपित निर्णय से उत्पन्न होता है;

(vi) लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नामतः प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की मंजूरी को रोकने/होल्ड पर रखने के प्रत्यर्थी संख्या 3 के निर्णय को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिफिकेट की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए, जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक में लिया गया (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 3);

(vii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के निर्माण और विकास को दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार अनुमति दें (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 5) या वैकल्पिक रूप से मंडमस या किसी अन्य उचित रिट की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश दें कि प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा दिनांक 05-12-2022 को प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित मंजूर करें (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या P-6) और याचिकाकर्ता को पट्टा विलेख और योजना ब्रोशर के अनुसार प्रश्नगत प्लॉट में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के निर्माण और विकास के लिए प्रश्नगत प्लॉट में निर्माण शुरू करने में सक्षम बनाने के लिए समय-समय पर आवश्यक हो सकने वाली अन्य अनुमोदन/मंजूरी/अनुमतियां भी प्रदान करें;

(viii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए परमादेश की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि (i) प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम और वार्षिक पट्टा किराए के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करें (ii) प्रश्नगत प्लॉट में परियोजना की पूर्णता के लिए समय विस्तार प्रदान करें, कोविड-19 महामारी के प्रकोप के कारण दिनांक 25-03-2020 से 31-12-2020 तक की अवधि के लिए और तत्पश्चात् दिनांक 18-01-2021 से शुरू होने वाली अवधि के लिए अर्थात् वह तारीख जब प्रत्यर्थी संख्या 3 के बोर्ड ने लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की अनुमोदन/मंजूरी/संशोधन को निलंबित कर दिया है, उस तारीख तक जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाता है और दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट

योजना के अनुसार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास की अनुमति देता है या प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित करता है, जो भी बाद में हो;

(ix) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि (i) प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम, वार्षिक पट्टा किराए के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करें और (ii) प्रश्नगत प्लॉट में परियोजना की पूर्णता के लिए समय विस्तार प्रदान करें, दिनांक 01-10-2016 से उस तारीख तक की अवधि के लिए जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 (i) प्रश्नगत प्लॉट के अतिक्रमित भाग से अतिक्रमण हटाता है; और (ii) प्रश्नगत प्लॉट का हिस्सा बनने वाले अपट्टित भाग के संबंध में पट्टा विलेख निष्पादित करता है और (iii) लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाता है और दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास की अनुमति देता है या दिनांक 05-12-2022 की संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित करता है, जो भी बाद में हो;

(x). प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि जब तक प्रश्नगत प्लॉट अतिक्रमित रहता है या जब तक लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं की मंजूरी पर प्रतिबंध हटाया जाता है या संशोधित लेआउट योजना अनुमोदित की जाती है, जो भी बाद में हो, तब तक कोई मांग नोट या कोई आगे या बाद में डिफॉल्ट नोटिस जारी न करें;

(xi) मामले की परिस्थितियों में न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस माननीय न्यायालय द्वारा उचित और उपयुक्त समझी जाने वाली कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।"

(4) रिट-सी संख्या 33191/2023 (मेसर्स बिल्ड वॉल बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में:-

"(i). दिनांक 28-03-2023 के आक्षेपित मांग नोटिस (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या-2) को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए जो स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. में स्थित 65,331.00 वर्ग मीटर मापने वाले प्रश्नगत प्लॉट अर्थात् प्लॉट एससी-02/A-2 के संबंध में पट्टा प्रीमियम की किश्तों की ओर रु. 186,91,83,445/- और वार्षिक पट्टा किराए की ओर 28,29,17,744/- कुल रु. 215,21,01,189/- की कथित बकाया राशि के भुगतान के लिए प्रतीत होता है।

(ii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश, या निर्देश जारी करने के लिए कि दिनांक 28-03-2023 के आक्षेपित मांग नोटिस के अनुसरण में कोई जबरदस्ती कदम/कार्रवाई न करें।

(iii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश, या निर्देश जारी करने के लिए कि प्रश्नगत प्लॉट से अतिक्रमित भाग (सुपर-इम्पोज्ड शजरा मैप के अनुसार अर्थात् इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 4) का अतिक्रमण साफ करें और याचिकाकर्ता को उसका खाली, भौतिक और शांतिपूर्ण कब्जा सौंपें।

(iv) प्रत्यर्थी संख्या 1 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश, या निर्देश जारी करने के लिए कि भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाकर लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट से संबंधित मामले पर उचित निर्णय लें जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक के आक्षेपित निर्णय से उत्पन्न होता है।

(v). लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नामतः प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की मंजूरी को रोकने/होल्ड पर रखने के प्रत्यर्थी संख्या 3 के निर्णय को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश, या निर्देश जारी करने के लिए, जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक में लिया गया (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 3)।

(vi) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश, या निर्देश जारी करने के लिए कि लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के निर्माण और विकास को दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार अनुमति दें (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 5) या वैकल्पिक रूप से मेंडमस या किसी अन्य उचित रिट की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश दें कि प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा दिनांक 05-12-2022 को प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित मंजूर करें (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 6) और याचिकाकर्ता को पट्टा विलेख और योजना ब्रोशर के अनुसार प्रश्नगत प्लॉट में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के निर्माण और विकास के लिए प्रश्नगत प्लॉट में निर्माण शुरू करने में सक्षम बनाने के लिए समय-समय पर आवश्यक हो सकने वाली अन्य अनुमोदन/मंजूरी/अनुमतियां भी प्रदान करें।

(vii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश, या निर्देश जारी करने के लिए कि (i) प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम और वार्षिक पट्टा किराए के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करें (ii) प्रश्नगत प्लॉट में परियोजना की पूर्णता के लिए समय विस्तार प्रदान करें, कोविड-19 महामारी के प्रकोप के कारण दिनांक 25-03-2020 से 31-12-2020 तक की अवधि के लिए और तत्पश्चात् दिनांक 18-01-2021 से शुरू होने वाली अवधि के लिए अर्थात् वह तारीख जब प्रत्यर्थी संख्या 3 के बोर्ड ने लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की अनुमोदन/मंजूरी/संशोधन को निलंबित कर दिया है, उस तारीख तक जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाता है और दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना

के अनुसार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास की अनुमति देता है या प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित करता है, जो भी बाद में हो।

(viii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश, या निर्देश जारी करने के लिए कि (i) प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम, वार्षिक पट्टा किराए के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करें और (ii) प्रश्नगत प्लॉट में परियोजना की पूर्णता के लिए समय विस्तार प्रदान करें, दिनांक 01-10-2016 से उस तारीख तक की अवधि के लिए जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 (i) प्रश्नगत प्लॉट के अतिक्रमित भाग से अतिक्रमण हटाता है; और (ii) लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाता है और दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास की अनुमति देता है या दिनांक 05-12-2022 की संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित करता है, जो भी बाद में हो।

(ix) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश, या निर्देश जारी करने के लिए कि जब तक प्रश्नगत प्लॉट अतिक्रमित रहता है या जब तक लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं की मंजूरी पर प्रतिबंध हटाया जाता है या संशोधित लेआउट योजना अनुमोदित की जाती है, जो भी बाद में हो, तब तक कोई मांग नोट या कोई आगे या बाद में डिफॉल्ट नोटिस जारी न करें।

(x) मामले की परिस्थितियों में न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस माननीय न्यायालय द्वारा उचित और उपयुक्त समझी जाने वाली कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।

(5) रिट-सी संख्या 33193/2023 (मेसर्स ब्रिक टाउन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में:-

"(i) दिनांक 27-03-2023 के आक्षेपित मांग नोटिस (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 2) को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए जो स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. में स्थित 37,915 वर्ग मीटर मापने वाले प्लॉट नं. एससी-02/A-6 के संबंध में पट्टा प्रीमियम की किश्तों की ओर रु. 99,46,82,787/- और वार्षिक पट्टा किराए की ओर 15,80,90,928/- कुल रु. 115,27,73,715/- की कथित बकाया राशि के भुगतान के लिए प्रतीत होता है।

(ii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि दिनांक 27-03-2023 के आक्षेपित मांग नोटिस के अनुसरण में कोई जबरदस्ती कदम/कार्रवाई न करें।

(iii) प्रत्यर्थी संख्या 1 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाकर लोटस

ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट से संबंधित मामले पर उचित निर्णय लेें जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक के आक्षेपित निर्णय से उत्पन्न होता है।

(iv) लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नामतः प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की मंजूरी को रोकने/होल्ड पर रखने के प्रत्यर्थी संख्या 3 के निर्णय को रद्द और/या अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए, जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक में लिया गया (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 3)।

(v) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के निर्माण और विकास को दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार अनुमति दें (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 5) या वैकल्पिक रूप से मैंडमस या किसी अन्य उचित रिट की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश दें कि प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा दिनांक 05-12-2022 को प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित मंजूर करें (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 6) और याचिकाकर्ता को पट्टा विलेख और योजना ब्रोशर के अनुसार प्रश्नगत प्लॉट में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के निर्माण और विकास के लिए प्रश्नगत प्लॉट में निर्माण शुरू करने में सक्षम बनाने के लिए समय-समय पर आवश्यक हो सकने वाली अन्य अनुमोदन/मंजूरी/अनुमतियां भी प्रदान करें।

(vi) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि (i) प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम और वार्षिक पट्टा किराए के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करें (ii) प्रश्नगत प्लॉट में परियोजना की पूर्णता के लिए समय विस्तार प्रदान करें, कोविड-19 महामारी के प्रकोप के कारण दिनांक 25-03-2020 से 31-12-2020 तक की अवधि के लिए और तत्पश्चात् दिनांक 18-01-2021 से शुरू होने वाली अवधि के लिए अर्थात् वह तारीख जब प्रत्यर्थी संख्या 3 के बोर्ड ने लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की अनुमोदन/मंजूरी/संशोधन को निलंबित कर दिया है, उस तारीख तक जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाता है और दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास की अनुमति देता है या प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित करता है, जो भी बाद में हो।

(vii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि जब तक प्रश्नगत स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं की मंजूरी पर प्रतिबंध हटाया जाता है या संशोधित लेआउट योजना अनुमोदित की जाती है, जो भी बाद में हो, तब तक कोई मांग नोट या कोई आगे या बाद में डिफॉल्ट नोटिस जारी न करें।

(viii) मामले की परिस्थितियों में न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस माननीय न्यायालय द्वारा उचित और उपयुक्त समझी जाने वाली कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।"

(6) रिट-सी संख्या 33212/2023 (मेसर्स ग्रे ब्रिक डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में:-

"(i). दिनांक 27-03-2023 के आक्षेपित मांग नोटिस (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 2) को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए जो स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. में स्थित 8080 वर्ग मीटर मापने वाले प्लॉट नं. एससी-02/A-5 के संबंध में पट्टा प्रीमियम की किश्तों की ओर रु. 23,10,13,173/- और वार्षिक पट्टा किराए की ओर रु. 3,37,13,432/- कुल रु. 26,47,26,605/- की कथित बकाया राशि के भुगतान के लिए प्रतीत होता है;

(ii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि दिनांक 27-03-2023 के आक्षेपित मांग नोटिस के अनुसरण में कोई जबरदस्ती कदम/कार्रवाई न करें;

(iii) प्रत्यर्थी संख्या 1 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाकर लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट से संबंधित मामले पर उचित निर्णय लें जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक के आक्षेपित निर्णय से उत्पन्न होता है;

(iv) लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नामतः प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की मंजूरी को रोकने/होल्ड पर रखने के प्रत्यर्थी संख्या 3 के निर्णय को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए, जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक में लिया गया (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 3);

(v) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के निर्माण और विकास को दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार अनुमति दें (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 5) या वैकल्पिक रूप से मैंडमस या किसी अन्य उचित रिट की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश दें कि प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा दिनांक 05-12-2022 को प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित मंजूर करें (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 6) और याचिकाकर्ता को उप-पट्टा विलेख और योजना ब्रोशर के अनुसार प्रश्नगत प्लॉट में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के निर्माण और विकास के लिए प्रश्नगत प्लॉट में निर्माण शुरू करने

में सक्षम बनाने के लिए समय-समय पर आवश्यक हो सकने वाली अन्य अनुमोदन/मंजूरी/अनुमतियां भी प्रदान करें;

(vi) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि (i) प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम और वार्षिक पट्टा किराए के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करें (ii) प्रश्नगत प्लॉट में परियोजना की पूर्णता के लिए किसी अतिरिक्त शुल्क के भुगतान के बिना समय विस्तार प्रदान करें, कोविड-19 महामारी के प्रकोप के कारण दिनांक 25-03-2020 से 31-12-2020 तक की अवधि के लिए और तत्पश्चात् दिनांक 18-01-2021 से शुरू होने वाली अवधि के लिए अर्थात् वह तारीख जब प्रत्यर्थी संख्या 3 के बोर्ड ने लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की अनुमोदन/मंजूरी/संशोधन को निलंबित कर दिया है, उस तारीख तक जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाता है और दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास की अनुमति देता है या प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित करता है, जो भी बाद में हो;

(vii) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि जब तक प्रश्नगत स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं की मंजूरी पर प्रतिबंध हटाया जाता है या संशोधित लेआउट योजना अनुमोदित की जाती है, जो भी बाद में हो, तब तक कोई मांग नोट या कोई आगे या बाद में डिफॉल्ट नोटिस जारी न करें;

(viii). मामले की परिस्थितियों में न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस माननीय न्यायालय द्वारा उचित और उपयुक्त समझी जाने वाली कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।"

(7) रिट-सी संख्या 35911/2023 (मेसर्स वाइसटेक डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में:-

"(i). प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर-150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. का हिस्सा बनने वाले 17,344 वर्ग मीटर मापने वाले प्रश्नगत प्लॉट अर्थात् एससी-02/P के संबंध में पट्टा विलेख निष्पादित और पंजीकृत करें और इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 2 के रूप में संलग्न लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट की अनुमोदित लेआउट योजना में विशेष रूप से दर्शाया और चिह्नित किया गया है।

(ii) प्रत्यर्थी संख्या 1 को निर्देश देते हुए मैडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाकर लोटस

ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट से संबंधित मामले पर उचित निर्णय ले जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक के आक्षेपित निर्णय से उत्पन्न होता है।

(iii) लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नामतः प्लॉट नं. एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की मंजूरी को रोकने/होल्ड पर रखने के प्रत्यर्थी संख्या 3 के निर्णय को रद्द/अपास्त करते हुए सर्टिओरारी की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए, जो प्रत्यर्थी संख्या 3 की दिनांक 18-01-2021 की 201वीं बोर्ड बैठक में लिया गया (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 3)।

(iv) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के निर्माण और विकास को दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार अनुमति दें (इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 2) या वैकल्पिक रूप से मेंडमस या किसी अन्य उचित रिट की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश दें कि प्रत्यर्थी संख्या 4 द्वारा दिनांक 05-12-2022 को प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित मंजूर करें (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 4) और याचिकाकर्ता को योजना ब्रोशर के अनुसार प्रश्नगत प्लॉट में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के निर्माण और विकास के लिए प्रश्नगत प्लॉट में निर्माण शुरू करने में सक्षम बनाने के लिए समय-समय पर आवश्यक हो सकने वाली अन्य अनुमोदन/मंजूरी/अनुमतियां भी प्रदान करें।

(v) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि (i) प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम और वार्षिक पट्टा किराए के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करें (ii) प्रश्नगत प्लॉट में परियोजना की पूर्णता के लिए बिना किसी शुल्क के समय विस्तार प्रदान करें, 01-03-2016 से उस तारीख तक की अवधि के लिए जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 याचिकाकर्ता के पक्ष में प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा विलेख निष्पादित करता है और आगे दिनांक 18-01-2021 से शुरू होने वाली अवधि के लिए अर्थात् वह तारीख जब प्रत्यर्थी संख्या 3 के बोर्ड ने लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की अनुमोदन/मंजूरी/संशोधन को निलंबित कर दिया है, उस तारीख तक जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 भवन योजनाओं और लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में अन्य अनुमोदनों पर प्रतिबंध को हटाता है और दिनांक 17-01-2017 की अनुमोदित लेआउट योजना के अनुसार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के विकास की अनुमति देता है या प्रत्यर्थी संख्या 4 द्वारा प्रस्तुत संशोधित लेआउट योजना को अनुमोदित करता है, जो भी बाद में हो।

(vi) प्रत्यर्थी संख्या 3 को निर्देश देते हुए मेंडमस की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि जब तक प्रत्यर्थी संख्या 3 याचिकाकर्ता के पक्ष में प्रश्नगत प्लॉट के संबंध में पट्टा विलेख निष्पादित करता है और आगे उस तारीख तक जब तक लोटस ग्रीन्स स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं की मंजूरी

पर प्रतिबंध हटाया जाता है या संशोधित लेआउट योजना अनुमोदित की जाती है, जो भी बाद में हो, तब तक कोई मांग नोट या डिफॉल्ट नोटिस जारी न करें।

(vii) मामले की परिस्थितियों में न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस माननीय न्यायालय द्वारा उचित और उपयुक्त समझी जाने वाली कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।"

याचिकाकर्ताओं की ओर से तर्क

34. प्रारंभ में रिट याचिकाओं के समूह का तर्क श्री शशि नंदन, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता और श्री अनूप त्रिवेदी, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता की सहायता से श्री प्रतीक सिन्हा, याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किया गया। उन्होंने जोरदार तरीके से प्रस्तुत किया कि भूमि अधिग्रहण के संबंध में किसानों के बीच विवाद के कारण स्पोर्ट्स सिटी सेक्टर 150 के संपूर्ण पट्टेदार क्षेत्र का वास्तविक भौतिक कब्जा याचिकाकर्ताओं को नहीं सौंपा गया था। अतिरिक्त मुआवजे को भी प्रीमियम के रूप में जोड़ा गया है और वही याचिकाकर्ताओं द्वारा भुगतान किया गया है। इसके बावजूद नोएडा प्राधिकरण किसानों के साथ मुद्दे को सुलझा नहीं सका क्योंकि जब प्रीमियम का भुगतान किया गया था, तो कोई कारण नहीं था कि नोएडा प्राधिकरण स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए याचिकाकर्ताओं को भूमि क्यों नहीं सौंप सका।

35. याचिकाकर्ताओं के लिए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने, अपने तर्कों को पुष्ट करने के लिए, निम्नलिखित प्रस्तुतियां कीं।

36. नोएडा की एक नीति है जिसके तहत किसी परियोजना की कोई भी भूमि जो भारों से खतरे में है, शून्य अवधि नीति द्वारा कवर की जाएगी। उक्त भूमि/परियोजना के आवंटन को भू-किराया, ब्याज और अन्य लेवी का भुगतान करने से तब तक छूट दी जाती है जब तक कि ऐसे भार या विवाद मौजूद हैं। चूंकि, इस मामले में, प्रश्नगत प्लॉट पर विवाद और भार थे अतः, शून्य अवधि नीति का लाभ याचिकाकर्ताओं को विस्तारित किया जाना चाहिए।

37. यह आगे प्रस्तुत किया गया कि चूंकि सन्निहित भूमि याचिकाकर्ताओं को नहीं सौंपी गई थी, इसलिए वे स्पोर्ट्स सिटी के विकास के निष्पादन को शुरू करने की स्थिति में नहीं थे और इसीलिए याचिकाकर्ताओं ने प्रत्यर्थियों से शून्य अवधि की नीति का लाभ प्रदान करने का अनुरोध किया था।

38. नोएडा प्राधिकरण इन भारों और समस्याओं से अच्छी तरह अवगत था और इसीलिए उन्होंने आवंटन की तारीख से 30.09.2016 तक 9,94,218 वर्ग मीटर के क्षेत्र के लिए शून्य अवधि का लाभ प्रदान किया, लेकिन दिनांक 12.09.2016 के आदेश में शून्य अवधि का लाभ प्रदान करते हुए गलत तरीके से एक पंक्ति जोड़ी गई कि शून्य अवधि का लाभ विस्तारित नहीं किया जाएगा।

39. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता आज तक प्रश्नगत भूमि पर शून्य अवधि लाभ के हकदार हैं क्योंकि संपूर्ण भूमि का भौतिक कब्जा याचिकाकर्ताओं को नहीं सौंपा गया है। याचिकाकर्ता क्षति और मुआवजे के हकदार हैं क्योंकि विलंब नोएडा प्राधिकरण की ओर से था।

40. नोएडा प्राधिकरण ने इस मामले में याचिकाकर्ताओं को उक्त भूमि का कब्जा हुए बिना बहुत पहले 29.10.2016 को आवंटन पत्र जारी किया था। यहां तक कि भूमि आवंटित करते समय भी नोएडा प्राधिकरण ने याचिकाकर्ताओं को इन समस्याओं के बारे में सूचित नहीं किया था। उन्होंने याचिकाकर्ताओं को गुमराह किया और गलत बयान दिया और इसकी वजह से याचिकाकर्ता उस परेशानी में पड़ गए जिसमें वे अभी हैं।

41. यह नोएडा प्राधिकरण की स्वीकृत स्थिति है कि उन्होंने 17.08.2017 को आवंटित भूमि के केवल एक हिस्से का कब्जा सौंपा है, हालांकि, आज तक संपूर्ण भूमि का पूर्ण और खाली कब्जा याचिकाकर्ताओं को नहीं सौंपा गया है, और इसलिए, याचिकाकर्ता शून्य अवधि नीति के अनुसार शून्य अवधि के लाभ के हकदार हैं न केवल 17.08.2017 तक बल्कि आज तक या उस तारीख तक जब तक संपूर्ण भूमि का पूर्ण और खाली कब्जा उन्हें नहीं सौंपा जाता। हालांकि, प्राधिकरण शून्य अवधि विस्तारित नहीं कर रहा है केवल इस आधार पर कि दिनांक 12.09.2016 के आदेश में यह उल्लेख किया गया था कि शून्य अवधि का कोई और लाभ उन्हें नहीं दिया जाएगा। वह स्थिति जो उस समय विद्यमान है अब भी जारी है। चूंकि संपूर्ण आवंटित भूमि का कब्जा नहीं सौंपा गया था, वे शून्य अवधि के लाभ के हकदार हैं। इसके अलावा, नोएडा प्राधिकरण याचिकाकर्ताओं के हित के लिए अपनी खुद की गलती का लाभ नहीं उठा सकता है।

42. नोएडा प्राधिकरण ने 04.02.2020 को याचिकाकर्ताओं को एक नोटिस भेजा जिसमें प्रश्नगत भूमि पर मनोरंजक सुविधा के विकास पर अपडेट मांगा गया था, जिसके लिए याचिकाकर्ताओं ने विभिन्न मुद्दों को उजागर करते हुए प्रतिक्रिया दी थी और समयसीमा के विस्तार की मांग की थी और यह भी मांग की थी कि जब तक संपूर्ण आवंटित भूमि का कब्जा उन्हें नहीं सौंपा जाता तब तक याचिकाकर्ताओं को शून्य अवधि का लाभ विस्तारित किया जाए।

43. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि **बिक्रम चटर्जी और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य (2019(19) एससीसी 161)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्देशों का लाभ याचिकाकर्ताओं को विस्तारित किया जाना चाहिए, जिसमें आवंटीगणों पर 8.5% की कम ब्याज दर लागू की गई थी।

44. उन्होंने बताया कि नोएडा प्राधिकरण कार्यशील प्रणाली के साथ पहुंच मार्ग प्रदान करने में विफल रहा है, जो आवंटन के लिए एक शर्त थी। सामान्य बुनियादी ढांचा, जो प्रदान किया जाना था, याचिकाकर्ताओं को प्रदान नहीं किया गया था, और इसकी अनुपस्थिति में, याचिकाकर्ता स्पोर्ट्स सिटी का विकास नहीं कर सके।

45. नोएडा प्राधिकरण भूमि अधिग्रहण से संबंधित विवाद के बारे में याचिकाकर्ताओं को सूचित करने के लिए कदम उठाने में भी विफल रहा है। आवंटन के हितों की रक्षा करने में राज्य मशीनरी की पूर्ण विफलता के कारण, याचिकाकर्ताओं को भारी नुकसान हुआ है।

46. अतिरिक्त प्रीमियम, जो अतिरिक्त मुआवजे के भुगतान के लिए आवश्यक था, पहले से ही नोएडा प्राधिकरण द्वारा प्रश्नगत भूमि के आवंटन के समय याचिकाकर्ताओं पर शामिल किया गया था, और इस तरह, भूमि भारमुक्त दी जानी थी। हालांकि, आवंटित भूमि भारमुक्त नहीं थी और नोएडा प्राधिकरण के पास भूमि आवंटित करने के लिए भी कब्जा नहीं था, और इस प्रकार, नोएडा प्राधिकरण की कार्रवाई धोखाधड़ी और विश्वासघात के अलावा और कुछ नहीं है।

47. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि सभी बाधाओं के बावजूद, याचिकाकर्ता अभी भी स्पोर्ट्स सिटी विकसित करना जारी रखे हुए हैं। नोएडा के अतिरिक्त सीईओ ने स्थल का दौरा किया था और वे स्वयं परियोजनाओं की प्रगति, बुनियादी ढांचे के निर्माण और खेल सुविधा के विकास से संतुष्ट थे। याचिकाकर्ताओं ने स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के संबंध में भविष्य की योजना के साथ एक विस्तृत प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। पूर्व नक्शे को नोएडा प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित किया गया था लेकिन चूंकि याचिकाकर्ताओं के पास भूमि का कब्जा नहीं था, वे परियोजना को निष्पादित नहीं कर सके, इस बीच नक्शे की वैधता समाप्त हो गई थी। याचिकाकर्ताओं ने फिर से नक्शे के पुनर्मान्यकरण के लिए आवेदन किया है और वही लंबित है। नोएडा प्राधिकरण को सबसे अच्छे ज्ञात कारणों से, वे नक्शे को पुनर्मान्य नहीं कर रहे हैं, हालांकि संपूर्ण विलंब नोएडा प्राधिकरण के कारण है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि नोएडा प्राधिकरण की निष्क्रियता और भूमि का पूर्ण कब्जा प्रदान करने में इसकी विफलता के कारण, याचिकाकर्ता परियोजना को पूरा करने में असमर्थ हैं। अतः, रिट याचिका में मांगी गई राहत याचिकाकर्ताओं को दी जाए।

प्रत्यर्थियों की ओर से तर्क

48. श्री मनीष गोयल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता की सहायता से श्री कौशलेन्द्र नाथ सिंह और सुश्री अंजलि गोखलानी, नोएडा प्राधिकरण के लिए विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि मामले में आगे बढ़ने से पहले, याचिकाकर्ताओं के कंसोर्टियम के साथ संबंध और उनकी पूर्ववृत्त का उल्लेख करना उचित है।

49. श्री मनीष गोयल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि स्पोर्ट्स सिटी स्कीम की मुख्य विशेषता खेल सुविधाएं थीं, जो एक एकीकृत परियोजना है और इसे संपूर्णता में विकसित किया जाना है। भले ही एक कंसोर्टियम कंपनी ने परियोजना के लिए आवेदन किया हो, यह कंसोर्टियम समग्र रूप से है जिसे पट्टेदार माना जाता है न कि कोई व्यक्तिगत कंपनी।

50. अपने तर्कों को विस्तृत करने के लिए, नोएडा के लिए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने निम्नलिखित प्रस्तुतियां कीं।

51. नोएडा ने सेक्टर-150, नोएडा में स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नं. एससी-02 के आवंटन के लिए आवेदन आमंत्रित किए। ब्रोशर के अनुसार एक कंसोर्टियम को भी भाग लेने की अनुमति थी। इस प्लॉट के आवंटन के लिए कंसोर्टियम द्वारा एक आवेदन किया गया था जिसमें प्रमुख सदस्य मेसर्स लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड था, साथ ही मेसर्स श्री सी इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड; मेसर्स श्री सी इन्फ्रा स्क्वेयर प्राइवेट लिमिटेड; मेसर्स श्री सी बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड; मेसर्स इलेट रियल्टर प्राइवेट लिमिटेड; मेसर्स श्री सी क्रेस्ट प्रमोटर्स प्राइवेट लिमिटेड, और मेसर्स एलर डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड 23.6.2014 को।

52. आवेदन के अनुसार, प्रमुख सदस्य मेसर्स लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शन प्राइवेट लिमिटेड, मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की एक सहायक कंपनी थी। बोली मेसर्स श्री सी इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड की योग्यता के आधार पर की गई थी, जो इसकी समूह कंपनी में से एक थी। आश्चर्यजनक रूप से, स्पोर्ट्स सिटी 01/78-79 भी उसी समूह की कंपनियों को उसी कंपनी अर्थात् मेसर्स श्री सी इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड की योग्यता के आधार पर आवंटित किया गया था।

53. सामान्य रूप से, एक कंसोर्टियम विभिन्न कंपनियों/बिल्डरों/डेवलपर्स का एक समूह होता है, जो एक परियोजना को पूरा करने के लिए एक साथ आते हैं। हालांकि, इस मामले में कंसोर्टियम के अधिकांश सदस्य कंपनियां थीं, जो निदेशकों/प्रमोटरों के एक ही समूह द्वारा निगमित की गई थीं।

54. प्रमुख सदस्य के अनुरोध पर, नोएडा प्राधिकरण ने कंसोर्टियम के सदस्यों के पक्ष में अलग पट्टा विलेख निष्पादित किए। यहां मूल आवंटीग ने कंपनियों का एक जाल बनाया था और आवंटीग के अनुरोध पर, विभिन्न पट्टा विलेख उन कंपनियों द्वारा हस्ताक्षरित किए गए थे, जो प्रमोटरों अर्थात् निर्मल सिंह, सुरप्रीत सिंह सूरी और विदुर भारद्वाज द्वारा पूर्ण स्वामित्व और नियंत्रित थीं। हालांकि, उक्त पट्टा विलेख के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को एक एकीकृत संपूर्णता के रूप में विकसित किया जाना था।

55. संपूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करने वाले मूल आवंटीग ने संपूर्ण स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए एक मास्टर लेआउट योजना दाखिल की, जिसे अनुमोदित किया गया, जिसमें उन्होंने स्वयं परियोजना के विकास की ओर प्रत्येक कंपनियों की भूमिकाओं और दायित्वों को विभाजित किया था। यह निर्णय कंसोर्टियम सदस्यों के बीच एक आंतरिक व्यवस्था थी। जहां तक नोएडा प्राधिकरण का संबंध है, स्पोर्ट्स सिटी एक अभिन्न परियोजना है, जिसे कंसोर्टियम द्वारा योजना के अनुसार विकसित किया जाना था।

56. कंसोर्टियम ने शून्य अवधि के अनुदान के लिए एक अनुरोध किया क्योंकि संपूर्ण भूमि का कब्जा कंसोर्टियम को नहीं दिया गया था। नोएडा प्राधिकरण ने दिनांक 12.9.2016 के आदेश के तहत 30.09.2016 तक 9,94,218 वर्ग मीटर के क्षेत्र के लिए स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के लिए शून्य अवधि घोषित की। यह स्पष्ट किया गया था कि शून्य अवधि का कोई आगे का लाभ आवंटीगणों को विस्तारित नहीं किया जाएगा। याचिकाकर्ताओं द्वारा

इस पत्र/आदेश को कभी चुनौती नहीं दी गई और इसने अंतिमता प्राप्त कर ली है। एक बार लाभ लेने के बाद याचिकाकर्ताओं के लिए फिर से समान लाभ मांगना खुला नहीं है।

57. शून्य अवधि का लाभ उपलब्ध कराने और ताजा भुगतान योजना के निष्पादन के बावजूद, याचिकाकर्ताओं ने फिर भी देय किश्तों का भुगतान नहीं किया और देय राशि के भुगतान के लिए एक नोटिस जारी किया गया, जैसा कि अब है, स्पोर्ट्स सिटी के लिए 31.7.2020 तक बकाया राशि रु. **1215.14 करोड़** थी।

58. सीएजीद्वारा एक ऑडिट किया गया, जिसने स्पोर्ट्स सिटी के आवंटन, कार्यान्वयन और विकास में कुछ कमियों को इंगित किया। सीएजीकी रिपोर्ट सितंबर 2020 में प्रस्तुत की गई थी। तत्पश्चात्, नोएडा के बोर्ड की बैठक 18.01.2021 (201वीं बोर्ड बैठक) को आयोजित की गई थी जिसमें यह संकल्प लिया गया था कि सीएजीद्वारा इंगित की गई कमियों को देखने और रिपोर्ट देने के लिए पीएसी को सिफारिश की जानी चाहिए। एक अंतरिम उपाय के रूप में, यह आगे संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी के विकास की दिशा में कोई कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए और न ही कोई नक्शे पुनर्मान्य किए जाने चाहिए। इसके अलावा, अगली बोर्ड बैठक (202वीं) 25.06.2021 को आयोजित में प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर, यह संकल्प लिया गया कि आवश्यक मार्गदर्शन और निर्देश के लिए मामले को राज्य सरकार को भेजा जाए।

59. बोर्ड बैठक (201वीं बैठक) के निर्णय, और निर्णय के बाद के परिणाम इस न्यायालय में डेवलपर्स द्वारा दायर विभिन्न रिट याचिकाओं में चुनौती का मुख्य आधार हैं।

60. ब्रोशर के अवलोकन से, यह स्पष्ट है कि परियोजना में विकास के विभिन्न घटकों को प्रतिशत में स्पष्ट रूप से चिह्नित किया गया है। स्पोर्ट्स सिटी परियोजना की संपूर्ण योजना प्रकट करती है कि ग्रुप हाउसिंग/आवासीय उद्देश्य खेल सुविधाओं के विकास के प्रमुख उद्देश्य के पूरक है। आवासीय उद्देश्य और वाणिज्यिक उद्देश्य खेल सुविधा के विकास के पूरक होने के कारण, इसलिए इसे केवल एक एकीकृत परियोजना के रूप में देखा जा सकता है।

61. उप-पट्टेदार यह दावा नहीं कर सकते कि वे केवल ग्रुप हाउसिंग परियोजना के विकास के लिए बनाए गए हैं क्योंकि यह उस एकीकृत परियोजना योजना के विरोधाभास में होगा जिसके तहत आवंटन किया गया था।

62. चूंकि, ग्रुप हाउसिंग स्पोर्ट्स सिटी स्कीम के तहत स्टैंड अलोन आधार पर परियोजना की श्रेणी में नहीं आता है, इसलिए इसे खेल सुविधाओं के विकास के बिना एक पूर्ण परियोजना के रूप में नहीं माना जा सकता क्योंकि खेल सुविधा प्राथमिक परियोजना है और ग्रुप हाउसिंग खेल सुविधा परियोजना के पूरक है और उस अर्थ में ग्रुप हाउसिंग परियोजना का एक अभिन्न हिस्सा बन जाता है।

63. स्वीकृत नक्शे के अनुसार, एससी-02/सेक्टर-150 (मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स स्पोर्ट्स सिटी प्राइवेट लिमिटेड) में प्रत्येक कंपनी के लिए स्वयं पर लिए गए दायित्व निम्नानुसार थे:-

क्र.सं.	सब्सिडियरी कंपनी का नाम	सेक्टर नंबर	सब डिवाइडेड प्लॉट नंबर	प्लॉट एरिया(Sqm.)	स्पोर्ट्स एक्टिविटी ज़ अप्रूव्ड लेआउट प्लान के अनुसार	साइट के अनुसार स्टेटस
1	लैंड कार्ट बिल्डर्स प्र० ली०	150	एससी- 02/A1	83970.00	टेनिस सेंटर-1	टावर-1, G+1 टावर-2,3,4 ग्राउंड फ्लोर टावर19,20,21 फाउंडेशन और राफ्टिंग का काम
2	विज़टाउन प्लानर्स प्राइवेट लिमिटेड	150	एससी- 02/A3	27185.00	प्रो शॉप्स/ फूड और बेवरेज	साइट खाली है। काम शुरू नहीं हुआ है
3	ब्रिक टाउन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	150	एससी- 02/A6	37915.00		साइट खाली है। काम शुरू नहीं हुआ है
4	स्ट्रॉन्ग बिज़ प्रॉप बिल्ड प्राइवेट लिमिटेड		एससी- 02/A7	50790.00	---	टावर-A,B,C, फाउंडेशन का काम शुरू हो गया है। टावर-D,E,F,G फाउंडेशन की खुदाई का काम शुरू हो गया है।
5	विशलैंड बिल्डज़ोन प्राइवेट लिमिटेड	150	एससी- 02/A8	50560.00	---	साइट खाली है। काम शुरू नहीं हुआ है

6	वंडरस बिल्डमार्ट प्राइवेट लिमिटेड	150	एससी- 02/A9	80857.00	क्रिकेट अकादमी	टावर-लाइफ-1, B+S+3 टावर-लाइफ-2, B+S+3 टावर-वर्बे-1 B+S+1 टावर-वर्बे-2 B+S टावर-वर्बे-3 B+S टावर- वर्बे- 4 फाउंडेशन और राफ्टिंग।
7	ईलेट रियल्टर्स प्राइवेट लिमिटेड,	150	एससी- 02/B	100000.00	---	साइट खाली है।
8	समृद्धि इंफ्रा स्क्वायर प्राइवेट लिमिटेड,	150	एससी- 02/D	40186.50	---	टावर-D,E,F,G,H,I - स्ट्रक्चर पूरा, फिनिशिंग का काम चल रहा है। टावर JG+1 टावर C, K, L-G फ्लोर। टावर-A और B- कंस्ट्रक्शन शुरू नहीं हुआ। स्पोर्ट एक्टिविटी डेवलप नहीं हुई है।
9	समृद्धि बिल्डमार्ट प्राइवेट लिमिटेड	150	एससी- 02/E	32519.22	---	काम शुरू नहीं हुआ है, साइट खाली है।
10	एसीई इन्फ्रासिटी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	150	एससी- 02/F	58064.71	---	फाउंडेशन का काम शुरू हुआ

11	क्रेस्ट प्रमोटर्स प्राइवेट लिमिटेड लिमिटेड,	150	एससी-02/G	60000.00 -	---	काम शुरू नहीं हुआ है, साइट खाली है।
12.	ब्रिक राइज़ डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड,	150	एससी-02/H & 1	72000.00	---	टावर-A2-G+11 टावर-A1A-A2A- राफ्टिंग काम टावर-B1-G+5 टावर-B2 G+6 टावर-B3-G+7 टावर-C1-G+7 टावर-BIA,B2A, B3A,CIA, DIA &D1- फाउंडेशन का काम।
13.	फेस्ट होम्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड,	150	एससी-02/J & K	72000.00	टेनिस सेंटर-3	टावर-1 B+S+ टावर-2,3 बेसमेंट टावर-4-B+S+1 टावर-5, सिर्फ बेसमेंट टावर-6, B+5 टावर-7,8,9, 10,11 और 12 फाउंडेशन पाइलिंग का काम।

31.7.2020 तक स्पोर्ट्स सिटी (खेल शहरों) का बकाया

64. अलग-अलग स्पोर्ट्स सिटीज़ के डेवलपर्स का कुल बकाया इस तरह था:-

क्र.सं.	डेवलपर का नाम	प्लॉट / सेक्टर	बकाया राशि का विवरण (करोड़ों में)
1	मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	सेक्टर 78, 79 और 101	401.01
2	मेसर्स लॉजिक्स इंफ्रा डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/150	1685.74

3	मेसर्स थी सी ग्रीन डेवलपर्स स्पोर्ट्स सिटी प्राइवेट	एससी-02/150	1215.14
4	मेसर्स एटीएस होम्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/152	609.18
		कुल बकाया	3911.07

31.7.2020 तक यह बकाया रकम 3911.07 करोड़ रुपये है, जिसे जनवरी 2025 तक के कॉन्ट्रैक्ट के हिसाब से ब्याज दर के साथ मिलाकर कुल बकाया रकम **6300 करोड़ रुपये** से ज़्यादा हो जाएगी।

65. 31.7.2020 तक एससी-02 सेक्टर 150 का बकाया राशि का ब्यौरा इस प्रकार है :-

क्र.सं.	बिल्डर का नाम	प्लॉट संख्या	लीस डीड के अनुसार कुल बकाया राशि का विवरण
1	मेसर्स लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शन प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A/150	173.25
2	मेसर्स लैंड कार्ट बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A1/150	32.05
3	मेसर्स बिल्डवॉल बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A2/150	111.34
4	मेसर्स स्ट्रॉन्ग बिज़ प्रॉप बिल्ड प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A7/150	35.22
5	विशलैंड बिल्डज़ोन प्राइवेट लिमिटेड,	एससी-02/A8/150	84.38
6	वंडरस बिल्डमार्ट प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/ A 9/150	51.36
7	मेसर्स एस्कार्पमेंट बिल्डक्राफ्ट प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A 10/150	160.81
8	मेसर्स एलेट रियल्टर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/B/150	170.43
9	मेसर्स समृद्धि बिल्डमार्ट प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/E/150	50.4
10	मेसर्स ब्रिक राइज डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/H&I/150	44.79
11	मेसर्स फेस्टहोम डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/J&K/150	21.8
12	मेसर्स ब्रिक टाउन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A6/150	60.25
13	मेसर्स विला स्टोन प्रोपबिल्ड प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/N/150	19.4
14	मेसर्स ऐस इन्फ्रासिटी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/G/150	22.52
15	मेसर्स ऐस इन्फ्रासिटी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/F/150	14.15
16	मेसर्स एल्योर डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/C/150	94.58
17	मेसर्स निम्फेस इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/L/150	68.41

	कुल	1,215.14

66. 31.7.2020 तक एससी-02/150 के सभी आवंटियों का यह बकाया 1,215.14 करोड़ रुपये था, कॉन्ट्रैक्ट के हिसाब से ब्याज दर जोड़ने पर, जनवरी 2025 तक बकाया **2,700 करोड़ रुपये** से ज़्यादा हो जाएगा।

67. उन्होंने आगे कहा कि जिस तरह से लीज़ डीड के नियमों और ब्रोशर में स्कीम की शर्तों को बदला गया, वह काफी सवालिया था। राज्य सरकार बदलने के बाद ही घोटाला सामने आया और ऑडिट रिपोर्ट सीएजी को भेजी गई। राज्य सरकार ने बहुत एक्टिव रुख अपनाया और अलॉटीज़ द्वारा किए गए गैर-कानूनी कामों की वजह से कोई एक्सटेंशन या मैप को रीवैलिडेशन नहीं दिया।

भिन्न कंपनियों की शेयरहोल्डिंग में बदलाव

68. श्री मनीष गोयल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने कहा कि ROC के अनुसार, अलॉटी कंपनी की शेयर होल्डिंग्स अलॉटमेंट के बाद बदल गई हैं, जबकि स्कीम और ब्रोशर में इसकी इजाज़त नहीं थी। यह नोएडा अथॉरिटी की इजाज़त के बिना किया गया था।

69. उन्होंने आगे कहा कि स्पोर्ट्स सिटी एससी 02/150 को ब्रोशर की शर्तों और लीज़ डीड की शर्तों के अनुसार विकसित नहीं किया जा रहा था। आवंटी ने बड़े पैमाने पर नियम और शर्तों का उल्लंघन किया है, इसलिए वह किसी भी राहत का हकदार नहीं है।

70. याचिकाकर्ताओं ने पहले ही शून्य अवधि (Zero Period) का लाभ उठा लिया है और वे किसी अतिरिक्त अनुतोष के हकदार नहीं हैं। भूमि का कब्जा आबंटन पत्र के साथ ही दिया गया था, याचिकाकर्ताओं के पास कब्जा था और उन्होंने मानचित्र अनुमोदन के पश्चात् आवासीय भाग का निर्माण प्रारम्भ कर दिया था। जब कोई अवसंरचनात्मक सुविधा उपलब्ध नहीं थी अथवा भूमि पर अतिक्रमण था, तो आवासीय भाग का निर्माण कैसे किया जा सकता था? अतः उन्होंने यह निवेदन किया कि अतिक्रमण की दलील याचिकाकर्ताओं द्वारा केवल देय राशि के भुगतान से बचने एवं अपने दायित्वों की पूर्ति न करने के लिए उठाई गई है।

याचिकाकर्ताओं के अग्रिम तर्क

1. उपरोक्त निवेदनों के उत्तर में, श्री अनूप त्रिवेदी, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, जो याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित हुए, ने यह निवेदन किया कि परियोजना सलाहकार समिति (पीएसी), जो इस विषय पर पहले से ही विचार कर रही थी, ने इस मुद्दे का समाधान कर लिया है। तदनुसार, एक आवेदन भी इस आशय से दाखिल किया गया कि मुद्दों का समाधान पीएसी द्वारा पहले ही कर लिया गया है। अतः उन्होंने पीएसी के निर्देशों के अनुसार रिट याचिका के निस्तारण की प्रार्थना की।

न्यायालय द्वारा विवेचना

73. हमने सम्बन्धित पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत निवेदनों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है। सक्षम सहायता से हमने याचिका में दिये गये अभिकथनों, आधारों, शपथपत्रों एवं उनसे संलग्न अनुलग्नकों तथा सम्बन्धित पक्षकारों द्वारा दाखिल प्रत्युत्तर का अवलोकन किया है।

74. इस समूह की रिट याचिकाओं में अन्तर्निहित मुद्दों को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है:

- (ए) स्पोर्ट्स सिटी परियोजना में विचलन
- (बी) भूखण्डों की अवैध बिक्री / हस्तान्तरण
- (सी) बकाया देय राशि
- (डी) आबंटितियों को अवैध लाभ
- (ई) कॉर्पोरेट आवरण हटाने की आवश्यकता
- (एफ) मूल आबंटिती की अपनी अनुषंगी कम्पनियों के सन्दर्भ में देनदारियाँ
- (जी) याचिकाकर्ता का आचरण
- (एच) रिट याचिकाओं की वापसी
- (आई) न्यायिक हस्तक्षेप का क्षेत्र
- (जे) दोषी अधिकारियों एवं अन्य षड्यन्त्रकारियों के विरुद्ध C.B.I. द्वारा जाँच
- (के) उपसंहार

विचलन

74. स्पोर्ट्स सिटी के विवरण पत्र (Brochure) की शर्तों के अनुसार, पात्रता शर्तों के खण्ड 8 में संघ (Consortium) के रूप में आवेदन करने वाले आबंटितियों के लिए शर्तें निर्धारित की गई थीं। इसमें स्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया गया था कि संघ के सदस्यों को एक अग्रणी सदस्य (Lead Member) निर्दिष्ट करना होगा, जो संघ में कम से कम 30% हिस्सेदारी रखने वाला एकल सबसे बड़ा शेयरधारक होगा। संघ में अग्रणी सदस्य की शेयरधारिता नोएडा से परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाणपत्र प्राप्त होने तक कम से कम 30% बनी रहेगी।

75. परन्तु, मानचित्र अनुमोदन की तिथि पर, अग्रणी सदस्य की हिस्सेदारी समग्र परियोजना के 12% से भी कम थी। योजना के अन्तर्गत याचिकाकर्ताओं की हिस्सेदारी का उप-विभाजन सम्भव नहीं था, किन्तु वर्तमान मामले में यह किया गया है, जिसे नोएडा प्राधिकरण द्वारा मान्यता नहीं दी जा सकती। अग्रणी सदस्य का यह दावा कि शेष अंशों के हस्तान्तरण की अनुमति दी गई थी और वे उसकी अनुषंगी कम्पनी में धारित थे, केवल तभी प्रमाणित किया जा सकता है जब वे अनुषंगी कम्पनी के 100% अंश अभी भी धारित करते हों। यदि उसे घटाया गया है, तो विभाजन सुस्पष्ट रूप से अवैध और स्पोर्ट्स सिटी योजना/परियोजना की शर्तों के विपरीत होगा।

76. नोएडा प्राधिकरण को इस पहलू पर ध्यान देना होगा और यदि विभाजन योजना की शर्तों के विपरीत पाया जाता है, तो आबंटिती/अग्रणी सदस्य/याचिकाकर्ता के विरुद्ध उचित दण्डात्मक कार्रवाई तत्काल की जानी चाहिए।
(आई) योजना का गठन

77. योजना जिस प्रकार तैयार की गई वह भी पर्याप्त नहीं थी। योजना का उद्देश्य स्पोर्ट्स सिटी का उचित विकास था; भूखण्डों का विभाजन और उप-विभाजन तथा नोएडा प्राधिकरण की अनुमति के बिना हस्तान्तरण, योजना का भाग नहीं होता क्योंकि यह उसके उद्देश्यों के प्रतिकूल था।

78. तथापि, पट्टेदार/उप-पट्टेदारों को अपनी शेयरधारिता का 100% तक हस्तान्तरण करने की अनुमति दी गई थी, इस एकमात्र शर्त के अधीन कि टेण्डर प्रस्तुति की तिथि पर 'अग्रणी सदस्य' (Lead Member) नोएडा से परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाणपत्र प्राप्त होने तक SPC में कम से कम 30% शेयरधारिता धारित करता रहेगा। कर एवं पंजीकरण विभाग, उत्तर प्रदेश शासन द्वारा जारी शासनादेश संख्या 5007/11-5-2010500(50)/10 दिनांक 11 अक्टूबर, 2010 के अनुपालन में, कम्पनी के शेयरधारकों के नाम में परिवर्तन से कम्पनी की सम्पत्ति का हस्तान्तरण नहीं होता। कम्पनियों में शेयर के हस्तान्तरण के परिणामस्वरूप शेयरधारकों में परिवर्तन के सम्बन्ध में संविधान परिवर्तन विलेख (CIC Deed) का पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 17 के अन्तर्गत पंजीकृत होना अनिवार्य नहीं है। इसके अतिरिक्त, इस परिवर्तन विलेख (CIC Deed) पर स्टाम्प अधिनियम, 1899 की अनुसूची 1बी के खण्ड 23 के अन्तर्गत कोई स्टाम्प शुल्क देय नहीं है। कम्पनियों में शेयरों के हस्तान्तरण पर कोई हस्तान्तरण शुल्क देय नहीं होगा और शेयरों के हस्तान्तरण के लिए नोएडा की पूर्व अनुमति आवश्यक नहीं होगी।

(II) बोली का अनुमोदन

79. बोली मेसर्स श्री सी इन्फ्रस्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड की अर्हता के आधार पर अनुमोदित की गई थी और परियोजना मेसर्स लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शन प्राइवेट लिमिटेड के नेतृत्व वाली कम्पनी को आबंटित की गई थी। जिस कम्पनी के आधार पर परियोजना आबंटित की गई, वही कम्पनी अनुपस्थित पाई गई। परियोजना ऐसी कम्पनी को आबंटित की गई जो अपनी व्यक्तिगत क्षमता में बोली लगाने के लिए पात्र भी नहीं थी। संघ में नौ सदस्य थे, जिनमें से सात कम्पनियाँ योजना घोषित होने के पश्चात् निगमित की गई थीं और ये सातों कम्पनियाँ एक ही समुच्चय के प्रवर्तकों द्वारा एक ही पते पर निगमित की गई थीं।

80. यदि हम उसी व्यक्ति द्वारा नई कम्पनियाँ निगमित किये जाने के कारण की गहराई से जाँच करें, तो यह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है कि प्रवर्तकों का प्रारम्भ से ही इन कम्पनियों को विभिन्न संस्थाओं को हस्तान्तरित/बेचने का आशय था। यदि ऐसा आशय नहीं होता, तो इतनी सारी कम्पनियाँ निगमित करने और उनके नाम पर आबंटन करवाने का कोई अन्य कारण नहीं था।

81. अब अगला प्रश्न यह है कि नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने ऐसे विभाजन के लिए क्यों सहमति दी जो योजना एवं विवरण पत्र के विपरीत था, विशेष रूप से तब जब स्पोर्ट्स सिटी एक एकीकृत परियोजना थी।

(III) नोएडा प्राधिकरण की विफलता

82. इतने व्यापक घोटाले का घटित होना नोएडा प्राधिकरण के प्रमुख पदों पर आसीन अधिकारियों की संलिप्तता के बिना सम्भव नहीं है। यह अपराध वर्षों तक नियमित रूप से किया जाता रहा और आबंटितियों को अनुचित सुविधाएँ प्रदान की जाती रहीं। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि निर्णय लेने वाले समस्त अधिकारी जो 2011 से आज तक इस प्रक्रिया में शामिल रहे, वे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इसमें संलिप्त थे।

83. नोएडा प्राधिकरण के प्रमुख पदों पर आसीन अधिकारियों ने आँखें मूँद लीं, जबकि निर्माताओं द्वारा आवासीय अपार्टमेंट बेचे और विकसित किये जा रहे थे, किन्तु खेल सुविधाओं के विकास के सम्बन्ध में, जो उन्हें सर्वप्रथम विकसित करनी थीं, कुछ नहीं किया गया। जान-बूझकर निर्माताओं को खुली छूट दी गई ताकि वे गृहक्रेताओं से धन एकत्र करें और तत्पश्चात् उसे हड़प कर कम्पनी को दिवालियेपन में ले जाएँ और बेदाग बाहर निकल जाएँ।

84. प्रत्यक्षतः, सेक्टर 150 में स्पोर्ट्स सिटी एक संघ को आबंटित की गई थी। प्रासंगिक सदस्यों सहित समस्त संघ सदस्य ऐसी कम्पनियाँ थीं जो योजना आरम्भ होने के पश्चात् और बन्द होने से पूर्व निगमित की गई थीं। इन समस्त कम्पनियों में प्रवर्तक निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज और सुरप्रीत सिंह सूरी थे। इन तीन व्यक्तियों के पास इतनी नई कम्पनियाँ प्रासंगिक सदस्यों के रूप में निगमित करने का कोई कारण नहीं था, जब तक कि यह एक पूर्व नियोजित योजना न हो कि इन कम्पनियों को स्पोर्ट्स सिटी का आबंटन प्राप्त किये बिना ऊँचे प्रीमियम पर बेच दिया जाए।

85. इन प्रवर्तकों का दुराशय स्पष्ट था। स्पोर्ट्स सिटी परियोजना का आबंटन अपने पक्ष में होने के पश्चात्, उनका एकमात्र आशय सम्पूर्ण स्पोर्ट्स सिटी को विभिन्न भूखण्डों में विभाजित करके बाजार मूल्य पर निर्माताओं को बहुत ऊँचे प्रीमियम पर बेचना था, जबकि उन्होंने केवल 20% आबंटन राशि का भुगतान किया था और आगे की देय राशि का भुगतान न करने का निर्णय लिया था।

86. प्रथम दिन से ही प्रवर्तकों का आशय केवल परियोजना को अन्य कम्पनियों को बेचकर धन अर्जित करना था और अन्ततः जो कम्पनियाँ खेल सुविधाओं का विकास करने वाली थीं, उन्हें दिवालियेपन में धकेल दिया गया।

87. नोएडा प्राधिकरण के वे अधिकारी, जो इन प्रवर्तकों और परवर्ती क्रेताओं के साथ मिले हुए थे, उन्होंने जब भी किस्ते देय हुईं, उनकी माँग न करने का चुनाव किया। प्रवर्तकों का कभी भी स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने का इरादा नहीं था और इसीलिए मानचित्र स्वीकृत होने पर भी, समस्त खेल सुविधाओं के विकास का दायित्व दो या तीन कम्पनियों पर रखा गया और शेष कम्पनियों को आवासीय फ्लैट विकसित करने का लाभ दिया

गया। यह निर्णय इस प्रकार था कि इस परियोजना का सर्वोत्तम लाभ इन छोटी कम्पनियों को दिया गया और खेल सुविधा विकसित करने का समस्त दायित्व दो कम्पनियों पर रखा गया। स्पष्ट है कि इन दो कम्पनियों का खेल सुविधाएँ विकसित करने का कोई इरादा नहीं था।

88. माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनेक निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया है कि धोखाधड़ी के मामलों में और जहाँ आवश्यकता हो, न्यायालय कॉर्पोरेट आवरण को हटाकर यह देख सकता है कि क्या विभिन्न न्यायिक कम्पनियाँ एक ही व्यक्तियों द्वारा धारित हैं अथवा वे वास्तव में भिन्न न्यायिक व्यक्तित्व हैं। इस मामले में ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ कम्पनियों में शेयरधारिता हस्तान्तरित की गई है, किन्तु स्पोर्ट्स सिटी योजना एवं विवरण पत्र के अनुसार, स्पोर्ट्स सिटी के प्रथम चरण के पूर्ण होने तक कोई हस्तान्तरण नहीं हो सकता था। अतः स्पोर्ट्स सिटी के प्रवर्तकों द्वारा किया गया कोई भी हस्तान्तरण अमान्य है।

89. कॉर्पोरेट आवरण हटाने से यह स्पष्ट है कि दोनों स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाएँ अर्थात् एससी-01/सेक्टर 78 एवं 79 और एससी-02/सेक्टर 150 एक ही समुच्चय के लोगों को आबंटित की गई हैं। वर्तमान मामले में, विभिन्न छोटी कम्पनियों द्वारा, जो कथित रूप से इन प्रवर्तकों/कम्पनियों की 100% अनुषंगी हैं, अव्यवस्थित निर्माण किया गया है। यदि ऐसी स्थिति है जहाँ प्रस्तावित स्पोर्ट्स सिटी का विकास नहीं किया जा सकता, तो यह उचित होगा कि ऐसी खेल सुविधाएँ एससी-01, सेक्टर 78 एवं 79 और एससी-02, सेक्टर 150, नोएडा में विकसित की जाएँ क्योंकि दोनों स्पोर्ट्स सिटी एक ही डेवलपर्स/प्रवर्तकों को आबंटित हैं। वे धूम्रपद की आड़ लेकर स्वयं को भिन्न न्यायिक व्यक्तित्व के रूप में नहीं छुपा सकते और अन्य कम्पनियों की देनदारियाँ उन पर आरोपित नहीं की जा सकतीं।

(बी) अवैध बिक्री

90. वाद में किए गए तर्कों के दौरान याचिकाकर्ताओं ने यह सुझाव दिया कि अन्य प्रतिष्ठित निर्माता परियोजना को पूर्ण करने के लिए तैयार हैं। यह याचिकाकर्ताओं की उस सदाशयता की अनुपस्थिति को दर्शाता है जो परियोजना को अन्य निर्माताओं को बेचने की है।

91. स्पोर्ट्स सिटी का आशय आबंटिती को अनुचित लाभ देना नहीं था। याचिकाकर्ताओं को भी खेल सुविधाओं का निर्माण करना था जिसे तीन वर्ष के भीतर पूर्ण करना था, जबकि आवासीय फ्लैट सात वर्ष के भीतर पूर्ण करने थे। प्रवर्तकों का खेल सुविधाएँ विकसित करने का कोई इरादा नहीं था। प्रवर्तकों ने मानचित्र स्वीकृत करवाया, फिर परियोजना प्रारम्भ की और फ्लैटों की बुकिंग शुरू कर दी तथा गृहक्रेताओं से सैकड़ों करोड़ रुपये एकत्र किये और न तो आवासीय परियोजना पूर्ण की और न ही खेल सुविधाएँ विकसित कीं। समस्त धन का अपहरण कर लिया गया और अब धन हड़पने के पश्चात्, वे परियोजना को विभिन्न प्रतिष्ठित निर्माताओं को बेचकर परियोजना का अनुचित फायदा उठाना चाहते हैं और आगे और धन कमाना चाहते हैं।

92. इतना ही नहीं, उन्होंने नोएडा प्राधिकरण की किस्ते भी न देने का चुनाव किया है और परियोजना भूमि के मूल्य में वृद्धि का लाभ भी उठाना चाहते हैं।

93. याचिकाकर्ता ऐसे मध्यस्थता-लाभ (arbitrage) का फायदा नहीं उठा सकते जिसमें वे आंशिक राशि का भुगतान करके आबंटन करवा लें, फिर खेल सुविधाओं का निर्माण और आबंटन के साथ आने वाले अन्य दायित्वों का पालन न करें। प्रवर्तक निम्नलिखित प्रकार से अवैध रूप से स्वयं को लाभान्वित करते रहे हैं:

"(i) लगभग 13 लाख वर्ग मीटर भूमि प्राप्त करके जबकि स्वीकृत एवं नियत स्पोर्ट्स सिटी योजना 12 लाख वर्ग मीटर भूमि पर है।

(ii) नोएडा प्राधिकरण की देय राशि का भुगतान न करके।

(iii) परियोजना को समय पर पूर्ण न करके।

(iv) गृहक्रेताओं से धन एकत्र करके और आवासीय फ्लैट न बनाकर।

(v) सम्पूर्ण स्पोर्ट्स सिटी को इस प्रकार विभाजित करके कि खेल सुविधाएँ स्थापित करने का दायित्व केवल कुछ कम्पनियों पर रहे जबकि अन्य कम्पनियाँ स्पोर्ट्स सिटी के आवासीय भाग को विकसित और बेचकर लाभ प्राप्त करें।

(vi) भूमि के मूल्य में वृद्धि का लाभ उठाकर और अब इसे विभिन्न अन्य निर्माताओं को ऊँचे प्रीमियम पर बेचकर।"

94. यह न्यायालय प्रवर्तकों द्वारा नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के स्पष्ट सांठगाँठ से खेले जा रहे धोखाधड़ी के खेल का मूक दर्शक नहीं बन सकता। याचिकाकर्ताओं एवं अन्य निर्माताओं ने वर्ष 2021 एवं 2022 में विभिन्न रिट याचिकाएँ दाखिल कीं और जब ये याचिकाएँ विचाराधीन थीं, तब जुलाई 2023 में पीएसी का गठन किया गया। यद्यपि प्रारम्भ में पीएसी ने यह निर्णय लिया था कि वह उन मुद्दों को नहीं छुएगी जो उच्च न्यायालय अथवा NCLT के समक्ष विचाराधीन हैं, तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि पीएसी ने उन्हें कुछ लाभ दिये हैं और वे उसी पर बातचीत करना चाहते थे। नोएडा प्राधिकरण ने इसका विरोध नहीं किया और नोएडा प्राधिकरण ने भी निर्माताओं को लाभ देने का अनुरोध किया। परन्तु दिनांक 19.11.2024 के अपने शपथपत्र में राज्य सरकार ने पीएसी की सिफारिशों को लागू करने पर कुछ आपत्तियाँ व्यक्त की थीं।

(सी) स्पोर्ट्स सिटीज की बकाया देय राशि

1. दिनांक 31.07.2020 तक विभिन्न स्पोर्ट्स सिटीज के उनके डेवलपर्स द्वारा बकाया देय राशि इस प्रकार है:-

क्र.सं.	डेवलपर का नाम	भूखण्ड / सेक्टर	देय राशि का विवरण (करोड़ में)
i.	मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड.	सेक्टर 78, 79 एवं 101	401.01
ii.	मेसर्स लॉजिक्स इंफ्रा डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड.	एससी-01/150	1685.74
iii.	मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स स्पोर्ट्स सिटी प्राइवेट लिमिटेड.	एससी-02/150	1215.14
iv.	मेसर्स ए टी एस होमस प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/152	609.18
कुल बकाया देय राशि			3911.07

96. दिनांक 31.07.2020 तक यह बकाया राशि रु. 3911.07 करोड़ थी, जनवरी 2025 तक संविदात्मक ब्याज दर पर यह बकाया देय राशि रु. **6300 करोड़** से अधिक हो जाएगी।

97. दिनांक 31.07.2020 तक स्पोर्ट्स सिटी एससी-02 सेक्टर 150 में विभिन्न कम्पनियों की बकाया देय राशि निम्नानुसार है:-

क्र.सं.	निर्माता का नाम	भूखण्ड संख्या	पट्टा विलेख के अनुसार कुल देय (करोड़ में)
1.	मेसर्स मेसर्स लोटस ग्रीन कंस्ट्रक्शंस प्राइवेट लिमिटेड.	एससी-02/A/150	173.25
2.	मेसर्स लैंड कार्ट बिल्डर्स प्र० ली०	एससी-02/A1/150	32.05
3.	मेसर्स बिल्ड वॉल बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड.	एससी-02/A2/150	111.34
4.	मेसर्स स्ट्रॉन्ग बिज़ प्रॉप बिल्ड प्राइवेट लिमिटेड.	एससी-02/A7/150	35.22
5.	मेसर्स विशलैंड बिल्डज़ोन प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A8/150	84.38
6.	मेसर्स वंडरस बिल्डमार्ट प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A9/150	51.36

7	मेसर्स एस्कार्पमेंट बिल्डक्राफ्ट प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A/150	160.81
8	मेसर्स एलेट रियल्टर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/B/150	170.43
9	मेसर्स समृद्धि बिल्डमार्ट प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/E/150	50.4
10	मेसर्स ब्रिक राइज डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/H&I/150	44.79
11	मेसर्स फेस्टहोम डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/J&K/150	21.8
12	मेसर्स ब्रिक टाउन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/A6/150	60.25
13	मेसर्स विला स्टोन प्रोपबिल्ड प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/N/150	19.4
14	मेसर्स ऐस इन्फ्रासिटी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/G/150	22.52
15	मेसर्स ऐस इन्फ्रासिटी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/F/150	14.15
16	मेसर्स एल्योर डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/C/150	94.58
17	मेसर्स निम्फेस इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-02/L/150	68.41
		कुल	1,215.14

98. दिनांक 31.07.2020 को एससी-02/150 के समस्त आवंटितियों का बकाया, संविदागत ब्याज दर सहित, रु. 1215.14 करोड़ था, तथा जनवरी 2025 तक का बकाया रु. **2,700 करोड़** से अधिक होगा। यह बकाया राशि अदा नहीं की गई और आश्चर्यजनक रूप से, नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने उसकी वसूली हेतु कोई कदम नहीं उठाया।

99. समस्त कंपनियों ने यह वचन दिया कि वे अगले तीन वर्षों के भीतर खेल सुविधाओं से संबंधित अपना भाग पूर्ण कर लेंगी, परंतु ऐसा नहीं किया गया।

100. बाज़ार की परिस्थितियों एवं डेवलपर्स की समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुए, उत्तर प्रदेश राज्य ने दिनांक 09.06.2020 को शासनादेश जारी किया, जिसके द्वारा विकास परियोजनाओं पर लागू ब्याज दर में कमी की गई। उक्त शासनादेश इस प्रकार पठित होता है:-

"महत्वपूर्ण
संख्या-1587/77-4-20-36 एन/20

प्रेषक,

आलोक कुमार,
प्रमुख सचिव,
उत्तर प्रदेश शासन।

सेवा में

मुख्य कार्यपालक अधिकारी
नौएडा, ग्रेटर नौएडा, यमुना एक्सप्रेसवे
यूपीसीडा, गीडा, लीडा, सीडा एवं
डी०एम०आई०सी०-आई०आई०टी०जी०एन०एल०।

औद्योगिक विकास अनुभाग-4

लखनऊ: दिनांक 09 जून, 2020

विषय: औद्योगिक विकास प्राधिकरणों में लागू ब्याज दरों में कमी किए जाने के संबंध में।

महोदय,

उपर्युक्त विषयक अवगत कराना है कि कोविड-19 महामारी से निपटने के लिए एन.सी.आर. क्षेत्र के तीन औद्योगिक विकास प्राधिकरणों की समिति द्वारा औद्योगिक विकास प्राधिकरण में लागू ब्याज दरों को कम करने की संस्तुति की गयी है।

2. मुख्य कार्यपालक अधिकारी ग्रेटर नौएडा एवं यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण द्वारा की गयी संस्तुति पर सम्यक विचारोपरान्त सभी औद्योगिक विकास प्राधिकरणों को निम्नवत परामर्श दिया जाता है।

I. तीन वर्ष की अवधि के ऋण हेतु एस०बी०आई० के एम०सी०एल०आर० दर पर प्रशासनिक व्यय 1.00 प्रतिशत को शामिल करते हुए अगले 0.5 प्रतिशत के स्तर तक Round off करते हुए ब्याज दरें लागू की जाए। उक्त फार्मूले के अनुसार प्रत्येक वर्ष में 01 जनवरी और 01 जुलाई को ब्याज दरें पुनर्निधारित की जाए।

II. समय से देयों के भुगतान को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से डिफॉल्ट धनराशि पर डिफॉल्ट अवधि हेतु दण्ड ब्याज दर 03 प्रतिशत (प्रत्येक 06 माह में कम्पाउंडिंग करते हुए) लागू की जाए।

III. उपर्युक्त दरें आगामी प्रभाव से ही लागू की जाए ना कि भूतलक्षी प्रभाव से।

IV. एस०बी०आई० पी०एल०आर० पर आबंटित परिसम्पत्तियों के लिए उनके आवेदन पत्र लीज डीड उल्लिखित शर्तों के अनुसार ब्याज दर देय होगा।

3. इस सम्बन्ध में मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है कि कृपया उपर्युक्तानुसार आवश्यक कार्यवाही सुनिश्चित करने का कष्ट करें।

भवदीय
ह० अपठनीय
(आलोक कुमार)

प्रमुख सचिव।"

डी) आवंटितियों को अवैध लाभ

101. दिनांक 09.06.2020 के शासनादेश के संदर्भ में, नोएडा प्राधिकरण ने दिनांक 01.07.2020 को एक कार्यालय आदेश जारी किया, जिसमें ब्याज दर घटाकर 8.5% की गई, किंतु ग्रुप हाउसिंग परियोजनाओं को इससे अपवर्जित रखा गया। उक्त आदेश नीचे उद्धृत किया जाता है:-

"नवीन ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण

मुख्य प्रशासनिक भवन सेक्टर-6, नोएडा गौतम बुद्ध नगर

पत्रांक: नोएडा/वि०नि०/2020/3471

दिनांक: 01/07/2020

कार्यालय आदेश

प्रमुख सचिव, औद्योगिक विकास अनुभाग-4, उत्तर प्रदेश शासन लखनऊ के पत्र संख्या: 1567/77-4-20-36 एन/20 दिनांक 09 जून, 2020 के क्रम में 01 जुलाई, 2020 से ब्याज दरें पुनर्निधारित किये जाने के सम्बन्ध में प्राधिकरण द्वारा पूर्व में कार्यालय आदेश संख्या: नोएडा/मु०का०अ०/2020/3464 दिनांक 25.06.2020 जारी किया गया था। दिनांक 01 जुलाई, 2020 को स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की दरों के अनुसार ब्याज दरें निम्नानुसार हैं।

1. तीन वर्ष की अवधि के ऋण हेतु एस०बी०आई० के एम०सी०एल०आर० दर दिनांक 01 जुलाई, 2020 को 7.30 प्रतिशत है, जिस पर प्रशासनिक व्यय 1 प्रतिशत शामिल करते हुए अगले 0.5 प्रतिशत के स्तर तक Round off करने पर 8.50 प्रतिशत आगणित होता है।

2. समय से देयों को भुगतान को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से डिफाल्ट धनराशि पर डिफाल्ट अवधि हेतु दण्ड ब्याज दर 3 प्रतिशत प्रत्येक 06 माह में कम्पाउंडिंग करते हुए लागू की जाये।

अतः प्राधिकरण की सभी सम्पत्तियों के समस्त देयों पर (ग्रुप हाउसिंग को छोड़कर) उपरोक्त शर्तों के अनुसार ब्याज दर 8.50 प्रतिशत दिनांक 01 जुलाई, 2020 से लागू किया जाता है जो दिनांक 31 दिसम्बर, 2020 तक लागू रहेगा।

मा० सर्वोच्च न्यायालय में दायर रिट याचिका संख्या 940/2017 में योजित I.A. संख्या 49139 में Clarification आने के उपरान्त ग्रुप हाउसिंग के सम्बन्ध में निर्णय लिया जायेगा।

01 जनवरी, 2021 को स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के MCLR के अनुसार पुनः दरें निर्धारित की जायेंगी।

ह० अपठनीय

(रितु माहेश्वरी)

मुख्य कार्यपालक अधिकारी"

102. तत्पश्चात् दिनांक 05.01.2021 को नोएडा प्राधिकरण ने एक नया कार्यालय आदेश जारी किया, जिसके द्वारा यह स्पष्ट किया गया कि 8.5% की घटी हुई ब्याज दर का लाभ ग्रुप हाउसिंग एवं स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाओं पर लागू नहीं होगा। सन्दर्भ हेतु दिनांक 05.01.2021 का पत्र नीचे उद्धृत किया जाता है:-

"नवीन ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण
मुख्य प्रशासनिक भवन सेक्टर-6, नौएडा गौतम बुद्ध नगर

पत्रांक: नौएडा/वि०नि०/2021/09

दिनांक: 05/01/2021

कार्यालय आदेश

प्रमुख सचिव, औद्योगिक विकास अनुभाग-4, उत्तर प्रदेश शासन लखनऊ के पत्र संख्या: 1567/77-4-20-36 एन/20 दिनांक 09 जून, 2020 के क्रम में प्राधिकरण द्वारा कार्यालय आदेश संख्या: नौएडा/वि०नि०/2020/3471 दिनांक 01.07.2020 के द्वारा स्टेट बैंक आफ इंडिया की दरों के अनुसार ब्याज दरें निम्नानुसार निर्धारित की गई थी।

1. 3 वर्ष की अवधि के ऋण हेतु एस०बी०आई० के एम०सी०एल०आर० दर दिनांक 01 जुलाई, 2020 को 7.30 प्रतिशत है, जिस पर प्रशासनिक व्यय 1 प्रतिशत शामिल करते हुए अगले 0.5 प्रतिशत के स्तर तक Round off करने पर 8.50 प्रतिशत आगणित होता है।

2. समय से देयों को भुगतान को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से डिफाल्ट धनराशि पर डिफाल्ट अवधि हेतु दण्ड ब्याज दर 3 प्रतिशत (प्रत्येक 06 माह में कम्पाउंडिंग करते हुए) लागू की जाये।

अतः प्राधिकरण की सभी सम्पत्तियों के समस्त देयों पर (ग्रुप हाउसिंग स्पोर्ट सिटी को छोड़कर) उपरोक्त शर्तों के अनुसार ब्याज दर 8.50 प्रतिशत ही दिनांक 01 जनवरी, 2021 से दिनांक 30 जून, 2021 तक लागू रहेगी।

ग्रुप हाउसिंग/स्पोर्ट सिटी की ब्याज दरों के सम्बन्ध में निर्णय मा० सर्वोच्च न्यायालय में योजित रिट याचिका के अंतिम निर्णय के पश्चात् लिया जायेगा।

01 जुलाई, 2021 को स्टेट बैंक आफ इंडिया के एम०सी०एल०आर० के अनुसार पुनः दरें निर्धारित की जायेंगी।

ह० अपठनीय

(रितु माहेश्वरी)

मुख्य कार्यपालक अधिकारी"

103. तथापि, नौएडा प्राधिकरण के अधिकारी, जो बिल्डरों/डेवलपर्स को अनुचित लाभ प्रदान करने हेतु मिलीभगत कर रहे थे एवं तत्पर थे, ने अपने स्वयं के कार्यालय आदेशों के विरुद्ध तथा माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के प्रतिकूल, दिनांक 27.03.2023 को एक नोटिस जारी किया, जिसके द्वारा एक आवंटिती को दिनांक 09.06.2020 के शासनादेश का लाभ अवैध रूप से विस्तारित किया गया। दिनांक 27.03.2023 का उक्त पत्र नीचे पुनः उत्पादित किया जाता है:-

"नवीन ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण

मुख्य प्रशासनिक भवन सेक्टर-6, नौएडा

पत्र संख्या नौएडा/स्पोर्ट सिटी/2023/2944

दिनांक: 27/3/23

नोटिस

M/s Elate Realtors Pvt. Ltd.
D-107, Panchsheel Enclave,
New Delhi

विषय: स्पोर्ट सिटी योजना के अन्तर्गत आवंटित/उपविभाजित भूखण्ड संख्या एस०सी०-02/B, सैक्टर-150 के संबंध में।

कृपया स्पोर्ट सिटी योजना के अन्तर्गत आवंटित/उपविभाजित उक्त भूखण्ड का आवंटन/उपविभाजन आपके पक्ष में किया गया एवं पट्टा प्रलेख दिनांक 19.12.2014 को आपके पक्ष में निष्पादित किया गया है। आवंटन पत्र/उप विभाजन पत्र/पट्टा प्रलेख/उप पट्टा प्रलेख में इंगित पेमेंट शेड्यूल के अनुसार आपको किशतों की मद में देय धनराशि एवं भूभाटक का भुगतान करना था, किन्तु आपके द्वारा नियत अवधि में धनराशि का भुगतान नहीं किया गया है जो आवंटन की शर्तों तथा पट्टा प्रलेख/उप पट्टा प्रलेख की शर्तों का उल्लंघन है। वर्तमान में उक्त भूखण्ड के विरुद्ध दिनांक 31.03.2023 तक विभिन्न मदों में अतिदेय धनराशि का विवरण निम्नवत् है:

1	किशत/ब्याज	₹-283,69,89,418/-
2	भू-भाटक/ब्याज	₹-41,77,99,867/-
	कुल	₹-325,47,89,285/-

पट्टा प्रलेख/उप पट्टा प्रलेख में उल्लिखित प्राविधानों के अनुसार समयवृद्धि शुल्क देय होगा।

मा० सर्वोच्च न्यायालय में योजित Writ Petition (Civil) No 940 of 2017 Bikram Chatterji and Others v/s Union of India & Others में मा० सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 07.11.2022 को पारित आदेश एवं उत्तर प्रदेश शासन द्वारा जारी आदेश दिनांक 09.06.2020 के क्रम में जारी कार्यालय आदेश संख्या 915 दिनांक 17.11.2022 के अनुपालन में दिनांक 01.07.2020 से एम०सी०एल०आर० दरों के अनुसार उपरोक्त गणना की गई है।

अतः इस नोटिस के माध्यम से आपको सूचित किया जाता है कि भूखण्ड के विरुद्ध देयता का भुगतान इस पत्र के जारी होने की तिथि से 15 दिन के अन्दर करना सुनिश्चित करें। अन्य कोई विधिक अड़चन ना होने की दशा में यदि आपके द्वारा निर्धारित अवधि में देयो का भुगतान नौएडा प्राधिकरण को नहीं किया जाता है तो नियमानुसार आवंटन निरस्त करने की कार्यवाही की जाएगी।

नोट: भूमि प्रतिकर के मद में 64.7 प्रतिशत अतिरिक्त प्रतिकर की गणना करते हुए पृथक से इसकी मांग भेजी जा रहा है।

ह० अपठनीय

विशेष कार्याधिकारी/सहायक महाप्रबंधक (स्पोर्ट सिटी)''

104. नौएडा प्राधिकरण द्वारा अनुचित लाभ विस्तारित करने का कारण माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा बिक्रम चटर्जी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य {(2019) 19 एससीसी 161} के मामले में पारित निर्णय पर आधारित बताया गया। यह कारण पूर्णतः निराधार एवं अवैध है, क्योंकि माननीय उच्चतम न्यायालय ने बिक्रम चटर्जी (उपरोक्त) के मामले में दिनांक 07.11.2022 के निर्णय के पैराग्राफ 14, 17, 18, 20, 23, 24 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:-

"14. इन कार्यवाहियों में हम मुख्यतः अमरापाली ग्रुप ऑफ कंपनीज़ के फ्लैट धारकों की दुर्दशा से संबंधित हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि परियोजनाएं अवरुद्ध न रहें तथा समस्त फ्लैट खरीदारों द्वारा किया गया निवेश अनिश्चितता से बाहर आए, इस न्यायालय ने दिनांक 23.07.2019 के अपने आदेश में कुछ उपाय अंगीकृत किए। उन उपायों में नोएडा एवं ग्रेटर नोएडा प्राधिकरणों को विचाराधीन संपत्तियों को पुनः अधिगृहीत करने से रोकने के साथ-साथ अमरापाली ग्रुप ऑफ कंपनीज़ के पक्ष में निष्पादित पट्टाकार्यों को निरस्त करने एवं समस्त अधिकार न्यायालय के रसीवर में निहित करने तथा विभिन्न परियोजनाओं को पूर्ण करने हेतु NBCC की नियुक्ति शामिल थी। ये निर्देश अमरापाली परियोजनाओं की विशिष्ट तथ्य एवं परिस्थितियों में पारित किए गए थे। इन्हीं निर्देशों के प्रकाश में न्यायालय के समक्ष विचार हेतु आए मुद्दों में से एक ब्याज दर में कमी से संबंधित था। नोएडा या ग्रेटर नोएडा को अमरापाली ग्रुप ऑफ कंपनीज़ की परियोजनाओं के संबंध में देय बकाया, अन्यथा कुछ दरों पर ब्याज सहित देय होता। चूँकि इससे संपूर्ण परियोजना पर अतिरिक्त भार पड़ता, अतः ब्याज दर में कमी पर विचार करना उचित समझा गया।

x x x x

17. इसी समय राज्य सरकार ने दिनांक 09.06.2020 को सभी परियोजनाओं से संबंधित सभी बिल्डरों को सामान्यतः ब्याज दरों में कमी देने का निर्णय लिया। तथापि, दिनांक 09.06.2020 के आदेश की जानकारी इस न्यायालय को उस समय नहीं थी, जब पूर्व में आरक्षित मामले में दिनांक 10.06.2020 को आदेश सुनाया गया। यह सत्य है कि यद्यपि अन्य बिल्डरों के मामलों पर विचार करना वर्तमान मामलों की परिधि से पूर्णतः बाहर था, तथापि इस न्यायालय ने एसीई ग्रुप ऑफ कंपनीज़ जैसे बिल्डरों के मामले पर विचार किया और दिनांक 10.06.2020 के अपने आदेश में उससे निपटा। किंतु उस समय इस न्यायालय को यह ज्ञात नहीं था कि नोएडा एवं ग्रेटर नोएडा प्राधिकरणों के लिए रु. 33,000 -4,000 करोड़ से अधिक की विशाल राशि विवाद में होगी।

18. इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के परिणामस्वरूप बिल्डर अब पूर्व में अदा की गई राशि के समायोजन की मांग कर रहे हैं और कुछ मामलों में वे अधिक भुगतान की गई राशि की वापसी भी माँग रहे हैं। प्रत्येक मामले में संबंधित बिल्डर ने उस विवरणिका के आधार पर भूखंड आवंटन का विकल्प चुना था, जिसमें ब्याज दर स्पष्ट रूप से दर्शाई गई थी। आवंटन पत्र एवं तत्पश्चात् का पट्टाकार्य उसी आशय को प्रतिबिंबित करता है। अतः, प्रत्येक बिल्डर पूर्णतः जागरूक था और उसने नोएडा एवं ग्रेटर नोएडा प्राधिकरणों के साथ खुली आँखों से लेन-देन में प्रवेश किया था। उस ब्याज दर के कारण जो भी प्रभाव पड़ा, वह उस मूल्य में समाहित हो जाना चाहिए था जो निर्धारित किया गया था और प्रत्येक फ्लैट धारक द्वारा देय था।

x x x x

20. यदि सामान्य परिस्थितियों में भी संविदागत शर्तों में हस्तक्षेप का सहारा लेना सहज नहीं है, तो यह तर्कसंगत नहीं है कि इसे नोएडा एवं ग्रेटर नोएडा के बिल्डरों के संपूर्ण समूह तक विस्तारित किया जाए। कुछ अवरुद्ध परियोजनाओं का संदर्भ, जिनमें हमारे समक्ष उपस्थित बिल्डरों की कुछ परियोजनाएं भी शामिल हैं,

यह संकेत नहीं दे सकता कि अमरापाली ग्रुप ऑफ कंपनीज़ के फ्लैट खरीदारों को जो लाभ दिए जाने थे, वे नोएडा या ग्रेटर नोएडा की अन्य परियोजनाओं के फ्लैट खरीदारों को भी दिए जाएँ।

X X X X

23. निष्कर्षतः, यह कहना आवश्यक है कि इस न्यायालय ने दिनांक 10.06.2020, 19.08.2020 एवं 25.08.2020 के अपने आदेशों द्वारा अमरापाली ग्रुप ऑफ कंपनीज़ से भिन्न परियोजनाओं को राहत प्रदान करने में भूल की।

24. फलस्वरूप, प्रार्थनानुसार वर्तमान आवेदन स्वीकार किए जाते हैं तथा दिनांक 10.06.2020, 19.08.2020 एवं 25.08.2020 के आदेश वापस लिए जाते हैं। नोएडा एवं ग्रेटर नोएडा प्राधिकरणों को निर्देश दिया जाता है कि वे राज्य सरकार द्वारा जारी दिनांक 09.06.2020 के आदेश के प्रभाव को ध्यान में रखते हुए, अमरापाली ग्रुप ऑफ कंपनीज़ से भिन्न बिल्डरों के संबंध में देय राशि की गणना करें।" (महत्व सनन्विष्ट)

105. नोएडा प्राधिकरण उक्त मामले में एक पक्षकार था। वस्तुतः, नोएडा प्राधिकरण के अधिकारी माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिनांक 07.11.2022 को पारित निर्णय से भली-भाँति अवगत थे। दिनांक 09.06.2020 के शासनादेश का लाभ केवल उन पट्टेदारों के लिए था जो ग्रुप हाउसिंग एवं स्पोर्ट्स सिटी से भिन्न थे। इसे नोएडा प्राधिकरण ने अपने दिनांक 05.01.2021 के आदेश द्वारा स्पष्ट किया था, जिसमें यह स्पष्ट किया गया था कि दिनांक 09.06.2020 के शासनादेश का लाभ ग्रुप हाउसिंग परियोजनाओं तथा स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाओं तक विस्तारित नहीं किया जाएगा। इसके बावजूद, आश्चर्यजनक रूप से, नोएडा प्राधिकरण ने दिनांक 27.03.2023 को नोटिस जारी करके स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाओं के आवंटितियों को दिनांक 09.06.2020 के शासनादेश का लाभ प्रदान किया। डेवलपर को प्रदत्त यह लाभ, नोएडा के दिनांक 27.03.2023 के उक्त कार्यालय आदेश के विरुद्ध था तथा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **बिक्रम चटर्जी (उपरोक्त)** के मामले में पारित निर्णय के भी प्रतिकूल था।

106. जो बात अत्यंत आश्चर्यजनक है वह यह है कि नोएडा प्राधिकरण स्वयं माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष एक पक्षकार के रूप में उपस्थित था और माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिनांक 07.09.2022 के आदेश द्वारा स्पष्ट किया था कि दिनांक 09.06.2020 के शासनादेश का लाभ अन्य बिल्डरों पर लागू नहीं होगा और वे संविदागत देय राशि का भुगतान करने के लिए बाध्य होंगे। नोएडा प्राधिकरण के अधिकारी, जो इस निर्णय तथा अपने स्वयं के कार्यालय आदेश से भली-भाँति अवगत थे, फिर भी याचिकाकर्ताओं को यह लाभ विस्तारित करना चाहते थे।

107. यह देखकर आश्चर्य होता है कि नोएडा प्राधिकरण के अधिकारी अपने स्वयं के कार्यालय आदेशों के विरुद्ध तथा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के प्रतिकूल कार्य कर रहे हैं, केवल डेवलपर्स/बिल्डरों को अनुचित लाभ प्रदान करने के लिए।

एफ) कॉर्पोरेट आवरण हटाने की आवश्यकता

108. अब इस न्यायालय के समक्ष प्रश्न यह है कि क्या एक ऐसी कंपनी, जो विभिन्न सहायक कंपनियों के नाम पर दो स्पोर्ट्स सिटी का आवंटन प्राप्त करती है; विभिन्न सहायक कंपनियों के नाम पर पट्टाकार्य निष्पादित कराती है, उन्हें बेचती है, भारी लाभ कमाती है, प्राधिकरण को देय राशि का भुगतान नहीं करती, खेल सुविधा विकसित करने का दायित्व एक या दो कंपनियों पर छोड़ देती है, उसे विकसित नहीं करती और कंपनी को दिवालियेपन की ओर धकेल देती है – वह सहायक/बहन कंपनी के दायित्वों के लिए उत्तरदायी होगी? क्या स्पोर्ट्स सिटी के विकास हेतु निगमित इन सभी कंपनियों को एकल संस्था के रूप में माना जाए, क्योंकि इनका सामान्य स्वामित्व एवं सामान्य नियंत्रण है, आवंटन के समय इनकी अंशधारिता उसी इकाई के पास थी, अधिकांश सदस्यों में समान प्रवर्तक थे, उनका एकीकृत प्रबंधन था, सामान्य निदेशक थे, समान व्यावसायिक प्रचलन था, सहयोगी परियोजनाओं में परिचालन संलग्नता थी जो संस्थाओं के बीच की रेखाओं को धुंधला करती है, अंतर-संबंधित लेन-देन थे, रणनीतिक समन्वय था, सामान्य व्यावसायिक रणनीतियाँ थीं, समान विपणन रणनीतियाँ थीं, सामान्य ग्राहक आधार था, व्यापार के प्रति समन्वित दृष्टिकोण था, साझा व्यावसायिक योजनाएँ थीं – कंपनियों का यह सामान्य समन्वित व्यवसाय सामान्य नियंत्रण को प्रतिबिंबित करता है क्योंकि प्रवर्तक एवं स्वामित्व वही रहा। यहाँ समस्त सहायक कंपनियाँ अविभाज्य रूप से परस्पर-सम्बद्ध कॉर्पोरेट संस्थाएँ हैं, जिन्हें प्रवर्तकों द्वारा मात्र आवरण या छलावे के रूप में निगमित किया गया था और वस्तुतः व्यवसाय उसी समूह के लोगों द्वारा संचालित किया जा रहा था, न कि कंपनी द्वारा एक पृथक संस्था के रूप में।

109. ऐसे मामलों में, यह न्यायालय सदैव कॉर्पोरेट आवरण हटा सकता है और यह देख सकता है कि वास्तविक लाभार्थी कौन है। इस मामले में यह स्पष्ट है कि समस्त कंपनियाँ उन्हीं तीन व्यक्तियों द्वारा निगमित एवं प्रवर्तित की गई थीं। अंशधारिता भी उन्हीं के पास थी अथवा कंपनियाँ उनके द्वारा घनिष्ठ रूप से धारित थीं और वे अपनी सहायक कंपनियों के कृत्यों एवं लोप के लिए उत्तरदायी हैं।

जी) अपनी सहायक कंपनियों के संबंध में मूल आवंटिती का दायित्व –

अंग्रेजी विधि

110. अंग्रेजी विधि के अनुसार, किसी कंपनी की मूल विशेषता यह है कि वह एक पृथक विधिक संस्था है जिसका विशिष्ट विधिक व्यक्तित्व होता है। इस तीव्र परिवर्तनशील आर्थिक विश्व में यह स्वाभाविक है कि मूल कंपनी का सहायक कंपनी के प्रति दायित्व की अवधारणा से संबंधित समस्याएँ उत्पन्न होंगी।

111. मूल कंपनी के अपनी सहायक कंपनियों के प्रति दायित्व का विश्लेषण हाउस ऑफ लॉर्ड्स द्वारा **सैलोमन बनाम सैलोमन एंड कं. लि. {(1897) एसी 22}** के मामले में किया गया था, जिसे आगे चलकर **ऐडम्स बनाम केप इंडस्ट्रीज़ Plc {(1990) सीएच 433}** में अनुमोदित किया गया।

112. न्यायालय ने इस मामले में कॉर्पोरेट व्यक्तित्व के मुद्दे पर विचार-विमर्श किया और सैलोमन प्रकरण में मूल कंपनी के दायित्व के संबंध में प्रतिपादित अपवादों को अधिक बल दिया। इसने समूह दायित्व की अवधारणा के सृजन की नींव रखी। सहायक कंपनी एवं मूल कंपनी के मध्य संबंध को इंगित करने हेतु अनेक शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जैसे – होल्डिंग कंपनी या सहायक, प्रभावशाली प्रभुत्व आदि। समूह दायित्व से संबंधित मामलों में कॉर्पोरेट आवरण हटाना सर्वाधिक प्रचलित अवधारणा है। यद्यपि यह किसी विधि में विनिर्दिष्ट नहीं है, तथापि अंग्रेजी विधि ने सर्वप्रथम समूह दायित्व की अवधारणा से व्यवहार किया।

113. इस प्रयोजन हेतु न्यायालयों ने विभिन्न अपवाद सृजित किए हैं, जैसे दायित्वों से बचने के लिए छलावा या आवरण रचकर एक पृथक विधिक संस्था के रूप में स्वयं को भिन्न दर्शाने की कपटपूर्ण संव्यवहार। कॉर्पोरेट आवरण हटाने की कार्यवाही यह अभिनिश्चित करने के लिए की जा सकती है कि क्या कंपनी मात्र एक आवरण है, अथवा सहायक कंपनी मूल कंपनी की अभिकर्ता है।

114. जब कोई कंपनी किसी अन्य कंपनी के 90% से अधिक अंश धारण करती है और उस पर नियंत्रण रखती है, तो वह सहायक कंपनी होती है। सहायक कंपनियाँ अनेक कारणों से निगमित की जा सकती हैं; कभी-कभी वे मूल कंपनी की अवैध गतिविधियों के लिए धुआँदार पर्दा बनाने, या सत्य तथ्यों को छिपाने, या धोखाधड़ी करने, या किसी कुटिल परिस्थिति के लिए गठित की जाती हैं। जब भी न्यायालय ऐसी परिस्थिति से सामना करता है, तो सामान्य प्रचलन दायित्व निर्धारण हेतु कॉर्पोरेट आवरण हटाना होता है।

115. छलावा या कपट का अपवाद न्यायालयों द्वारा निम्नलिखित मामलों में विकसित किया गया:—

(i) **गिलफोर्ड मोटर कं. बनाम हॉर्न {[1933] सीएच 935}. जोन्स बनाम लिपमैन {[1962] 1 डब्ल्यूएलआर 832}** में न्यायाधीश रसेल ने मामले की परिस्थितियों में कंपनी की पृथक कॉर्पोरेट संस्था को मान्यता देने से इनकार किया और प्रतिवादी तथा कंपनी दोनों को संविदा के विशिष्ट पालन के लिए उत्तरदायी ठहराया।

(ii) **स्मिथ, स्टोन एंड नाइट लि. बनाम बर्मिंघम कॉर्प. {[1939] 4 एएलएल ईआर 116}**

(iii) **डीएचएन फूड डिस्ट्रीब्यूटर्स लि. बनाम लंदन बरो ऑफ टॉवर हैमलेट्स {[1976] 1 डब्ल्यूएलआर 852}**, जिसमें लॉर्ड डेनिंग ने कंपनियों के एक समूह को एकल आर्थिक इकाई के रूप में मानने की आवश्यकता पर बल दिया, क्योंकि वास्तव में वह एकल आर्थिक इकाई के रूप में कार्य करता है।

पायनियर कंक््रीट सर्विसेज़ बनाम येलनाह प्राइवेट लि.

(iv) *न्यू साउथ वेल्स के मामले पायनियर कंक््रीट सर्विसेज़ बनाम येलनाह प्राइवेट लि. {[20]} में न्यायाधीश यंग ने प्राधिकारियों पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि आवरण केवल तभी हटाया जाना चाहिए जब विधि में या वस्तुतः कंपनियों के मध्य साझेदारी हो, अथवा जहाँ कोई छलावा या आवरण हो।*

116. न्यायालय ने उद्यम दायित्व की अवधारणा विकसित करने की आवश्यकता अनुभव की, जिसमें कॉर्पोरेट आवरण हटाकर सहायक के कृत्य के लिए मूल निगम पर दायित्व आरोपित किया जाए।

भारतीय विधि

117. इस सिद्धांत का अनुसरण भारतीय न्यायालयों ने निम्नलिखित मामलों में किया:—

118. **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रेणुसागर पावर कं. एवं अन्य {(1988) 4 एससीसी 59}** में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह स्पष्ट था कि हिण्डालको ने अपनी पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कंपनी रेणुसागर को, दैनंदिन मामलों सहित, पूर्णतः नियंत्रित किया। रेणुसागर ने कोई स्वतंत्र इच्छा प्रदर्शित नहीं की। अतः, न्यायालय का मत था कि कॉर्पोरेट आवरण हटाया जाए और हिण्डालको तथा रेणुसागर को एकल संस्था के रूप में माना जाए। इसलिए, यह अभिनिर्धारित किया गया कि रेणुसागर का बिजली संयंत्र हिण्डालको का स्वयं का उत्पादन स्रोत था और उस आधार पर शुल्क देने के लिए उत्तरदायी था।

119. **भारतीय जीवन बीमा निगम बनाम एस्कोर्ट्स लि. एवं अन्य {(1985) सपली. 3 एससीआर 909}** के मामले में उच्चतम न्यायालय ने बल देकर कहा कि जहाँ संबंधित कंपनियाँ अविभाज्य रूप से परस्पर जुड़ी हों और एकल संस्था के रूप में प्रतीत हों, वहाँ कॉर्पोरेट आवरण हटाया जाना चाहिए। उच्चतम न्यायालय ने आगे यह भी अभिनिर्धारित किया कि यह संबंधित सांविधिक उपबंधों, आशय, लोक हित के संलग्नता की सीमा एवं पक्षकारों पर प्रभाव पर निर्भर करता है।

120. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **वोडाफोन इंटरनेशनल होल्डिंग्स बीवी बनाम भारत संघ एवं अन्य {(2012) 6 एससीसी 613}** के मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:—

"259. अमेरिकी उच्चतम न्यायालय ने यूनाइटेड स्टेट्स बनाम बेस्टफूड्स 524 यूएस 51 (1998) में स्पष्ट किया कि यह निगम विधि एवं विधिक व्यवस्थाओं का सामान्य सिद्धांत है कि मूल निगम अपनी सहायक कंपनी के कृत्यों के लिए उत्तरदायी नहीं है, किंतु न्यायालय ने आगे यह भी स्पष्ट किया कि कॉर्पोरेट आवरण हटाया जा सकता है और मूल कंपनी को अपनी सहायक के आचरण के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, यदि कुछ अनुचित उद्देश्यों को पूरा करने के लिए कॉर्पोरेट स्वरूप का दुरुपयोग किया गया हो, और जब मूल कंपनी शिकायत किए गए अपराध में प्रत्यक्ष प्रतिभागी हो। सहायक का मात्र स्वामित्व, मूल नियंत्रण, प्रबंधन

आदि उनके संबंध की स्थिति को भेदने और मूल कंपनी को उत्तरदायी ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। ऐडम्स बनाम केप इंस्ट्रूज पीएलसी {(1991) 1 एएलएल ईआर 929} में अपील न्यायालय ने बल देकर कहा कि जहाँ ऐसी विशेष परिस्थितियाँ हों जो यह संकेत दें कि यह सत्य तथ्यों को छिपाने वाला मात्र एक आवरण है, वहाँ कॉर्पोरेट आवरण हटाना उचित है।"

121. माननीय मद्रास उच्च न्यायालय ने स्मॉल इंस्ट्रूज डेवलपमेंट बैंक ऑफ इंडिया बनाम क्रिएशन इन्वेस्टमेंट्स इक्विटास होल्डिंग्स एलएलसी {ओए 1137 /2019, दिनांक 06.10.2020 को निर्णीत} के मामले में अभिनिर्धारित किया कि होल्डिंग कंपनी एवं सहायक कंपनी पृथक-पृथक संस्थाएँ हैं और होल्डिंग कंपनी सहायक कंपनी की परिसंपत्तियों की स्वामी नहीं होती। तथापि, इस मामले में, विधिक परिणामों से बचने के लिए होल्डिंग कंपनी एवं सहायक कंपनी दोनों को विघटित कर दिया गया था। वे संस्थाएँ न केवल एक ही थीं, बल्कि एक ही व्यक्ति द्वारा संचालित की जाती थीं। ऐसी कंपनियाँ बनाने वाले व्यक्ति का एकमात्र उद्देश्य देशों के बाहर के पक्षकारों के अधिकारों को विफल करना था। अतः, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वोडाफोन निर्णय में प्रतिपादित सिद्धांतों को अधिकारों को विफल करने एवं कपटपूर्ण गतिविधियों को प्रोत्साहित करने के लिए लागू नहीं किया जा सकता।

122. यहाँ उठने वाला प्रश्न यह है कि मूल आवंटिती/संघ कब अपनी सहायक कंपनियों के कृत्यों के लिए उत्तरदायी ठहराया जाएगा?

123. इसका उत्तर यह है कि यद्यपि यह एक स्थापित विधिक स्थिति है कि सहायक कंपनी एक पृथक विधिक संस्था है और अपनी होल्डिंग/मूल कंपनी से भिन्न है, तथापि होल्डिंग कंपनियाँ और उनकी सहायक कंपनियाँ इस विधिक स्थिति की आड़ नहीं ले सकती कि वे दो पृथक विधिक संस्थाएँ हैं, जब कंपनी समूह की कृति हो, विधि की दृष्टि से मान्यता से बचने के प्रयास में गठित की गई हो, केवल वास्तविक संस्थाओं को छिपाने और उसी समूह के लोगों द्वारा संचालित व्यवसाय को ढकने के लिए। तब न्यायालय सदैव कॉर्पोरेट आवरण हटा सकता है और होल्डिंग कंपनी को अपनी सहायक कंपनी के कृत्यों एवं लोप के लिए उत्तरदायी ठहरा सकता है।

124. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उपर्युक्त प्रतिपादित अनुपात से यह स्पष्ट है कि एक संघ सदस्य/मूल आवंटिती (मूल कंपनी) को उसकी सहायक कंपनियों द्वारा की गई गलती के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, विशेषकर तब जब यह मूल कंपनी के दायित्व से बचने के लिए मात्र एक छलावे भरे संव्यवहार के भाग के रूप में किया गया हो। यहाँ वृहत्तर अभिकल्प के भाग के रूप में समस्त दायित्व/उत्तरदायित्व एक 100% सहायक कंपनी को हस्तांतरित कर दिया गया, जो कभी पूर्ण नहीं हुई, और परियोजना का समस्त लाभ/सार छोटी-छोटी कंपनियों में बाँटकर बहुत ऊँचे प्रीमियम पर बेच दिया गया। सहायक कंपनियों का यह समूचा आवरण केवल अन्य हितधारकों को ठगने के लिए सृजित किया गया था। अतः, सहायक कंपनियों का दायित्व मूल कंपनी पर आरोपित करना अनुचित नहीं होगा।

एच) याचिकाकर्ताओं का आचरण

125. यह अभिलेख का विषय है कि इस न्यायालय ने इस मामले को विभिन्न तिथियों, अर्थात् दिनांक 15.07.2021, 31.08.2021, 16.10.2023, 30.09.2024, 16.10.2024, 24.10.2024 को विस्तारपूर्वक सुना।

126. दिनांक 24.10.2024 को इस न्यायालय ने निम्नानुसार आदेश पारित किया:—

"1. श्री शशि नंदन, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री राहुल सहाय के सहयोग से याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित हुए। श्री मनीष गोयल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री कौशलेन्द्र नाथ सिंह के सहयोग से प्रतिवाद-प्रतिवादी की ओर से उपस्थित हुए तथा श्री एम.सी. चतुर्वेदी, विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता, श्री देवेश विक्रम, विद्वान अतिरिक्त, मुख्य स्थायी अधिवक्ता तथा श्री मोहन श्रीवास्तव, विद्वान स्थायी अधिवक्ता राज्य-प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित हुए।

2. नोएडा प्राधिकरण की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनीष गोयल ने मुख्य कार्यकारी अधिकारी, नोएडा द्वारा दिनांक 23.10.2024 को प्रेषित संचार प्रस्तुत किया, जिसे अभिलेख पर लिया जाता है।

3. प्रारंभ में दिनांक 27.07.2023 का प्रति-शपथपत्र दाखिल किया गया था, किंतु दिनांक 23.10.2024 के संचार को देखते हुए, नोएडा प्राधिकरण के साथ-साथ राज्य सरकार द्वारा और अनुपूरक प्रति-शपथपत्र दाखिल किया जा सकता है।

4. नोएडा प्राधिकरण एवं राज्य सरकार के अधिवक्ता को निर्देशित किया जाता है कि वे अगली नियत तिथि से पूर्व मामले में अपना उत्तर दाखिल करें।

5. पक्षकारों के संयुक्त अनुरोध पर, इस मामले को संबद्ध मामले के साथ दिनांक 19.11.2024 को अपराह्न २ बजे सूचीबद्ध किया जाए।"

127. उक्त के उत्तर में, नोएडा प्राधिकरण ने अपने दिनांक 18.11.2024 के शपथपत्र में, जो दिनांक 26.11.2024 को न्यायालय के समक्ष दाखिल किया गया, कहा कि पीएसी ने दिनांक 29.08.2024 को आयोजित पीएसी बैठक में स्पोर्ट्स सिटी एससी-02, सेक्टर-150, नोएडा पर सीएजी द्वारा उठाई गई आपत्तियों को समाशोधित किया है। शपथपत्र के संबंधित पैरा निम्नानुसार हैं:—

"3. यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि दिनांक 29.08.2024 को आयोजित पीएसी बैठक में पीएसी द्वारा स्पोर्ट्स सिटी एससी-02, सेक्टर-150, नोएडा पर सीएजी द्वारा उठाई गई आपत्तियों को समाशोधित किया गया है।

4. याचिकाकर्ताओं ने स्पोर्ट्स सिटी एससी-02, सेक्टर-150, नोएडा जिला गौतमबुद्धनगर के लिए एक संशोधित मास्टर प्लान प्रस्तुत किया है। प्राधिकरण उसकी जाँच करेगा, जब बोर्ड राज्य सरकार से प्राप्त निर्देशों के बाद मामले को समाशोधित करेगा।

5. प्राधिकरण ने दिनांक 26.10.2024 को आयोजित 215वीं बोर्ड बैठक के समक्ष स्पोर्ट्स सिटी एससी-02, सेक्टर-150 का मामला रखा।

6. बोर्ड द्वारा इस मामले को विचार हेतु लिया गया। बोर्ड ने निर्णय लिया कि चूँकि यह मामला पीएसी के निर्देश से संबंधित है, अतः इस पर पीएसी के निर्देशों के अनुसरण में राज्य सरकार से निर्देश प्राप्त होने के बाद ही विचार किया जा सकता है।"

128. दूसरी ओर, राज्य ने अपने दिनांक 19.11.2024 के शपथपत्र में, जो दिनांक 26.11.2024 को न्यायालय के समक्ष दाखिल किया गया, याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा किए गए कथन का विरोध किया। इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि प्रस्तुत मामले में यह इंगित किया गया है कि स्पोर्ट्स सिटी के लिए भूखंड का अनियमित आवंटन हुआ, अनियमित उपविभाजन हुआ और स्पोर्ट्स सिटी में खेल सुविधाएँ आज तक विकसित नहीं हुई हैं। उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में, मामले में एक व्यापक जाँच आवश्यक है, जो की जा रही है। वर्तमान मामले की जाँच/परीक्षण के पश्चात्, कार्यवाही/निर्देश नोएडा प्राधिकरण को सूचित किए जाएँगे। शपथपत्र के संबंधित पैरा निम्नानुसार हैं:-

"4. इस संदर्भ में माननीय न्यायालय को सादर सूचित किया जाता है कि अतिरिक्त मुख्य कार्यकारी अधिकारी, नोएडा ने दिनांक 14.11.2024 के पत्र द्वारा सूचित किया कि दिनांक 26.10.2024 की 215वीं बोर्ड बैठक में, भूखंड संख्या एससी-02, सेक्टर-150 के प्रस्ताव को अवलोकन एवं आवश्यक मार्गदर्शन हेतु प्रस्तुत किया गया।

5. संचालक मंडल ने निर्देश दिया कि राज्य सरकार से आवश्यक मार्गदर्शन एवं निर्देश प्राप्त करने के पश्चात् प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाए।

6. उपर्युक्त बोर्ड के निर्देश के अनुसरण में, तथा नोएडा प्राधिकरण के दिनांक 14.11.2024 के उक्त पत्र के संबंध में, और वर्तमान रिट याचिका संख्या 15604 वर्ष 2021 में माननीय उच्च न्यायालय के दिनांक 24.10.2024 के आदेश के अनुपालन में, संबंधित को वांछित कदम/कार्यवाही करने हेतु राज्य सरकार से आवश्यक निर्देश के लिए अनुरोध किया गया है।

7. यह उल्लेख करना प्रासंगिक है 2021 कि प्रस्तुत मामले में यह इंगित किया गया है कि स्पोर्ट्स सिटी के लिए भूखंड का अनियमित आवंटन हुआ, अनियमित उपविभाजन हुआ और स्पोर्ट्स सिटी में खेल सुविधाएँ आज

तक विकसित नहीं की गई हैं। उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में, मामले में एक व्यापक जाँच आवश्यक है, जो की जा रही है। वर्तमान मामले की जाँच/परीक्षण के पश्चात्, कार्यवाही/निर्देश नोएडा प्राधिकरण को सूचित किए जाएंगे।"

129. तत्पश्चात्, मामले को पुनः दिनांक 19.11.2024, 21.11.2024, 25.11.2024 को अन्य याचिकाओं के साथ सुना गया।

130. दोनों पक्षों को सुनने के पश्चात्, निर्णय दिनांक 26.11.2024 को सुरक्षित किया गया। दिनांक 26.11.2024 का आदेश नीचे उद्धृत किया जाता है:-

"1. श्री सैयद फ़हीम अहमद, अधिवक्ता, जो श्री राहुल सहाय, विद्वान अधिवक्ता का संक्षिप्त कार्य संभाल रहे हैं, याचिकाकर्ता की ओर से, श्री मोहन श्रीवास्तव, विद्वान स्थायी अधिवक्ता राज्य-प्रतिवादियों की ओर से तथा श्री कौशलेन्द्र नाथ सिंह एवं सुश्री अंजलि गोखलानी, विद्वान अधिवक्ता प्रतिवादी-नोएडा की ओर से उपस्थित हुए।

2. विद्वान स्थायी अधिवक्ता द्वारा दाखिल संक्षिप्त प्रति-शपथपत्र एवं श्री के.एन. सिंह, विद्वान अधिवक्ता, प्रतिवादी-नोएडा द्वारा दाखिल प्रति-शपथपत्र अभिलेख पर लिए जाते हैं।

3. निर्णय सुरक्षित किया गया।"

131. तत्पश्चात्, याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा उल्लेख किया गया कि कुछ पहलुओं पर उनके द्वारा तर्क प्रस्तुत नहीं किए गए हैं और वे उन पर बहस करना चाहते हैं। यद्यपि निर्णय पहले ही सुरक्षित किया जा चुका था, किंतु उनके अनुरोध पर दिनांक 28.11.2024 के आदेश द्वारा मामले को आगे की सुनवाई हेतु पुनः दिनांक 02.12.2024 के लिए नियत किया गया।

132. ठीक अगली तिथि पर, श्री ध्रुव अग्रवाल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता उपस्थित हुए और रिट याचिका वापस लेने का आवेदन किया। वापसी आवेदन में माँगी गई राहत नीचे उद्धृत की जाती है:-

"अतः, सविनय प्रार्थना है कि माननीय न्यायालय इस आवेदन को स्वीकार करने तथा याचिकाकर्ता को इस स्तर पर वर्तमान रिट याचिका वापस लेने की अनुमति प्रदान करने की अनुग्रह करें। अन्यथा याचिकाकर्ता को अपूरणीय क्षति एवं हानि होगी। और/अथवा ऐसे अन्य एवं अतिरिक्त आदेश पारित करें जो माननीय न्यायालय मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में उचित एवं उपयुक्त समझे।"

133. याचिकाकर्ताओं के आचरण की कोई सराहना नहीं की जाती। वे आवंटन में, स्पोर्ट्स सिटी के विकास में धोखाधड़ी करते रहे। नोएडा प्राधिकरण, बैंकों, गृह खरीदारों को ठगने में अपनी सफलता से उत्साहित होकर, अब

उन्होंने न्यायालय के साथ भी धोखाधड़ी का प्रयास किया है। यदि याचिकाकर्ता याचिकाएँ वापस लेना चाहते थे, तो वे पहले कर सकते थे, किंतु निर्णय सुरक्षित होने के पश्चात् यह चाल वास्तव में निर्णय से बचने के लिए खेली गई।

आई) रिट याचिकाओं की वापसी

134. यद्यपि याचिकाकर्ताओं को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत संस्थित अपनी रिट याचिका वापस लेने का अधिकार है। यह अधिकार विधिक कार्यवाहियों में याचिकाकर्ताओं की स्वायत्तता को बनाए रखने के लिए सामान्यतः मान्यता प्राप्त है।

135. जहाँ याचिकाकर्ता वापसी का अनुरोध कर सकते हैं, वहाँ न्यायालय को परिस्थितियों के आधार पर वापसी को अनुमति देने या अस्वीकार करने का विवेकाधिकार है। यदि न्यायालय द्वारा मामले में महत्वपूर्ण कदम उठाए जाने के पश्चात् वापसी की माँग की जाती है, तो न्यायालय अनुमति देने से पूर्व परिणामों पर विचार कर सकता है।

136. सारांशतः, एक याचिकाकर्ता अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट याचिका वापस ले सकता है और न्यायालय सामान्यतः इस अधिकार का सम्मान करते हैं। तथापि, वापसी न्यायालय के विवेकाधिकार के अधीन है, विशेषकर न्याय या लोक हित पर पड़ने वाले किसी संभावित प्रभाव के संबंध में।

न्यायिक हस्तक्षेप की परिधि

137. तथापि, महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या ऐसे वाणिज्यिक संविदाएँ, जो नोएडा एवं राज्य सरकार के किसी नीति निर्णय से उत्पन्न हो सकती हैं, न्यायिक पुनर्विलोकन से मुक्त हैं।

138. यह मुद्दा अब अधिक प्रश्नगत नहीं है और संविदाओं से संबंधित मामलों में भी रिट याचिकाओं की पोषणीयता पर कोई पूर्ण अवरोध नहीं है। ऐसे मामलों में विवेकाधिकार न्यायालय में निहित है, जैसा कि **जोशी टेक्नोलॉजीज़ इंटरनेशनल इंक. बनाम भारत संघ** {(2015) 7 एससीसी 728} में अभिनिर्धारित किया गया, जिसमें लोक प्राधिकारियों और निजी पक्षकारों के मध्य संपन्न संविदाओं के न्यायिक पुनर्विलोकन पर विधिक स्थिति का सारांश प्रस्तुत किया गया। न्यायिक पुनर्विलोकन, जो कि एक स्थिर प्रक्रिया के विपरीत एक गतिशील प्रक्रिया है, ने संविदागत विवादों में न्यायिक हस्तक्षेप की मात्रा के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का अनुभव किया है, विशेषकर जब पक्षकारों में से एक राज्य या उसकी उपकरण संस्था हो। माननीय उच्चतम न्यायालय ने एसएलपी संख्या 33403 वर्ष 2016 (**नोएडा टोल ब्रिज कं. लि. बनाम फेडरेशन ऑफ नोएडा रेजिडेंट्स वेलफेयर एसोसिएशन एवं अन्य**) {2024 आईएनएससी 1027} में भी इसी मत को अंगीकार किया है।

139. यह इसलिए है क्योंकि जब संविदागत शक्ति का प्रयोग लोक प्रयोजनों के लिए किया जाता है, तो राज्य एवं उसकी उपकरण संस्थाओं पर स्वच्छता के साथ, बिना मनमानेपन या सनक के कार्य करने का उत्तरदायित्व

होता है **{सिल्पी कंस्ट्रक्शंस कॉन्ट्रैक्टर्स बनाम भारत संघ (2020) 16 एससीसी 489}**। ऐसी परिस्थितियों में, न्यायालय न्यायिक पुनर्विलोकन के माध्यम से यह निर्धारित करने के लिए हस्तक्षेप करने में उचित हैं कि क्या राज्य ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 में अंतर्निहित सिद्धांतों – जो राज्य के कार्यों में निष्पक्षता एवं अमनमानापन का आदेश देता है – का पालन किया है। लोक प्राधिकरण की संलग्नता यह सुनिश्चित करने के लिए संज्ञान की आवश्यकता उत्पन्न करती है कि योजना/करार संवैधानिक सिद्धांतों को बनाए रखे। ऐसे परिदृश्यों में, यह संविधान के अंतर्गत एक स्वतंत्र मध्यस्थ के रूप में न्यायपालिका का गंभीर दायित्व बन जाता है कि वह हस्तक्षेप करे और व्यापक जनसमूह के हितों की रक्षा करे।

140. आगे, यह पहचानना महत्वपूर्ण है कि जब नोएडा जैसी किसी राज्य उपकरण संस्था से जुड़ी कोई संविदा जनता पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाले, तो न्यायिक पुनर्विलोकन की सीमाएँ विस्तारित की जानी चाहिए। मार्गदर्शक सिद्धांत यह है कि प्रत्येक राज्य कार्य को लोक हित को प्राथमिकता देनी चाहिए। यदि कोई सरकारी कार्य लोक कल्याण की कीमत पर किसी निजी संस्था को अनुपातहीन रूप से लाभान्वित करता है, तो वह अवैध के रूप में अपास्त किए जाने योग्य है। **{कस्तूरी लाल लक्ष्मी रेड्डी बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य (1980) 4 एससीसी 1}**

141. राज्य समानतापूर्वक और लोक न्यास सिद्धांत के अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य है, यह सुनिश्चित करते हुए कि कोई भी कार्य व्यापक लोक हित को हानि न पहुँचाए। **{सन्दर्भ: सेंटर फॉर पब्लिक इंटरेस्ट लिटिगेशन बनाम भारत संघ (2012) 3 एससीसी 1}**

142. न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट याचिका की क्षेत्राधिकार परिधि का विस्तार कर सकता है, किंतु यह विस्तार कुछ विचारणाओं एवं सिद्धांतों के अधीन है। रिट याचिकाओं में क्षेत्राधिकार की परिधि के संबंध में मुख्य बातें निम्नानुसार हैं।

143. न्यायालयों ने अनुच्छेद 226 की लचीले ढंग से व्याख्या की है, जिससे वे पारंपरिक सीमाओं से परे विभिन्न शिकायतों का समाधान करने में सक्षम हुए हैं। उदाहरण के लिए, प्रशासनिक कार्यों, नीति निर्णयों और लोक हित से जुड़े मुद्दों को संबोधित किया जा सकता है।

144. अनुच्छेद 226(1) के अंतर्गत उच्च न्यायालयों को ऐसे निर्देश, आदेश या रिट जारी करने की शक्ति है, न केवल मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए बल्कि "किसी भी अन्य प्रयोजन" के लिए भी।

145. अनुच्छेद 226 की भाषा स्पष्ट करती है कि यह उच्च न्यायालयों को निर्देश, आदेश या रिट जारी करने की बहुत व्यापक शक्ति प्रदान करता है, न केवल संविधान के भाग III में अंतर्निहित मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए बल्कि किसी भी अन्य प्रयोजन के लिए भी। निस्संदेह, अतः अनुच्छेद 226 मूल अधिकारों के प्रवर्तन के अतिरिक्त अन्य प्रयोजनों के लिए भी निर्देशों, आदेशों या रिटों के जारी किए जाने की परिकल्पना करता है।

146. यह सुप्रतिष्ठित विधि है कि उच्च न्यायालय रिट याचिकाओं में उठाए गए मुद्दों के अतिरिक्त उन मुद्दों का भी स्वतः संज्ञान ले सकता है, यदि वे समाज को प्रभावित करने वाले हों, विशेषकर लोक प्रशासन के क्षेत्र में, भले ही वे मुद्दे रिट याचिकाओं में नहीं उठाए गए हों। {एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ (एआईआर 1987 एससी 965)}

147. अतः, उच्चतम न्यायालय ने निर्णयों की एक श्रृंखला में सातत्यपूर्वक अनुच्छेद 226 की परिधि का विस्तार करते हुए मनमाने या अवैध निर्णयों के विरुद्ध उपचार प्रदान किया है, जिन्हें रिट याचिका में चुनौती भी नहीं दी गई थी।

सीबीआई जाँच

148. यह मामला बिल्डरों एवं नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों की घृणित सांठगांठ का एक केस स्टडी हो सकता है, जहाँ स्पोर्ट्स सिटी योजना, एमओए और स्पोर्ट्स सिटी योजना के क्रियान्वयन के सर्वथा विपरीत बिल्डरों को एक के बाद एक लाभ दिए गए। पिछले इतने वर्षों में नोएडा प्राधिकरण में कितने ही अधिकारी आए और गए, परंतु आश्चर्यजनक रूप से किसी ने भी इस घोटाले के बारे में सीटी नहीं बजाई, या उनके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की, और बकाया राशि वसूल करने का कोई प्रयास नहीं किया तथा स्पोर्ट्स सिटी के समस्त आवंटितियों/उपपट्टाधारियों को नोएडा प्राधिकरण/बैंक एवं राज्य सरकार के हित के विरुद्ध अनुचित लाभ/सुविधाएँ देना जारी रखा।

149. सर्वाधिक आश्चर्यजनक यह है कि सीएजी ने 2021 में इस घोटाले का पर्दाफाश किया, किंतु आज तक नोएडा प्राधिकरण या राज्य सरकार ने इसमें शामिल किसी भी अधिकारी के विरुद्ध एक भी प्राथमिकी दर्ज नहीं की। नुकसान की वसूली के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया; केवल दिनांक 24.07.2023 को एक नोटिस भेजा गया, जिसमें बिल्डरों से बकाया प्रीमियम का भुगतान करने को कहा गया। तथापि, बकाया वसूली के लिए कोई कार्रवाई नहीं की गई। यह दर्शाता है कि बिल्डर लॉबी कितनी प्रभावशाली है और सरकारी तंत्र में कितनी गहरी पैठ रखती है।

150. सुनवाई के दौरान, न्यायालय के संज्ञान में एक रिट याचिका की अभिकथनाओं में संलग्न दिनांक 27.03.2023 का पत्र आया, जिसके द्वारा नोएडा प्राधिकरण ने याचिकाकर्ताओं को संविदागत ब्याज दर सहित देय प्रीमियम की माँग न करके अनुचित लाभ विस्तारित किया था।

151. न्यायालय यह कहने में गलत नहीं होगा कि भ्रष्ट अधिकारियों को तथा बिल्डरों को – जिन्होंने राज्य सरकार, नोएडा प्राधिकरण को ठगकर भारी धनराशि अर्जित की – बचाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

152. न्यायालय यह भी महसूस करता है कि समस्त जाँचें सीबीआई को नहीं सौंपी जा सकतीं। न्यायालयों को वास्तव में सीधे सीबीआई को मामले भेजने में संकोच करना चाहिए। तथापि, उच्च पदाधिकारियों की संलग्नता की संभावना को देखते हुए, सीबीआई जाँच अधिक वांछनीय है।

153. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **दिशा बनाम गुजरात राज्य {(2011) 13 एससीसी 337}** में मामलों को सीबीआई या अन्य विशेष अभिकरणों को हस्तांतरित करने में औचित्य पाया, जब शक्तिशाली एवं प्रभावशाली व्यक्ति या राज्य प्राधिकारी जाँच में शामिल हों और जहाँ जाँच के उचित दिशा में जाने की संभावना न हो या वह पक्षपातपूर्ण हो। माननीय न्यायालय का मत है कि यह उपाय अंतिम परिणाम की विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए अपनाया जाता है। यह देखते हुए कि नोएडा प्राधिकरण जैसी संस्था में विभिन्न महत्वपूर्ण पदों पर क्रमागत अधिकारियों ने और राज्य सरकार ने आवंटितियों की ओर से विशाल विफलता से आँखें मूँद लीं, और इनमें से कई अधिकारी अब महत्वपूर्ण एवं उच्च पदों पर हैं, मामले की जाँच के लिए एक स्वतंत्र अभिकरण को निर्देश देना उचित होगा। यह इसलिए भी है क्योंकि सीएजी की रिपोर्ट पर न तो राज्य ने और न ही नोएडा प्राधिकरण ने कोई कार्रवाई की है।

154. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **पश्चिम बंगाल राज्य बनाम पश्चिम बंगाल लोकतांत्रिक अधिकार संरक्षण समिति {(2010) एससीसी ऑनलाइन एससी 297}** के मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:—

"70. मामले से विदा लेने से पूर्व हम यह बल देकर कहना आवश्यक समझते हैं कि अनुच्छेद 32 एवं 226 द्वारा प्रदत्त व्यापक शक्तियों के बावजूद, कोई भी आदेश पारित करते समय न्यायालयों को इन संवैधानिक शक्तियों के प्रयोग पर स्वयं द्वारा अधिरोपित कुछ सीमाओं को ध्यान में रखना चाहिए। उक्त अनुच्छेदों के अंतर्गत शक्ति की असीमितता ही उसके प्रयोग में अत्यधिक सावधानी की माँग करती है। जहाँ तक सीबीआई को किसी मामले में जाँच करने का निर्देश देने का प्रश्न है, यद्यपि ऐसी शक्ति का प्रयोग करना है या नहीं यह तय करने के लिए कोई अनम्य दिशा-निर्देश नहीं दिए जा सकते, किंतु बार-बार यह दोहराया गया है कि ऐसा आदेश एक नियमित कार्य के रूप में या केवल इसलिए नहीं पारित किया जाना चाहिए कि किसी पक्षकार ने स्थानीय पुलिस के विरुद्ध कुछ आरोप लगाए हैं। इस असाधारण शक्ति का प्रयोग विरल रूप से, सावधानीपूर्वक और असाधारण परिस्थितियों में किया जाना चाहिए, जहाँ जाँच में विश्वसनीयता प्रदान करना और विश्वास जगाना आवश्यक हो, या जहाँ घटना के राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय निहितार्थ हों, या जहाँ पूर्ण न्याय करने एवं मूल अधिकारों को प्रवर्तित करने के लिए ऐसा आदेश आवश्यक हो। अन्यथा सीबीआई बड़ी संख्या में मामलों से भर जाएगी और सीमित संसाधनों के कारण, गंभीर मामलों की भी उचित जाँच करने में असमर्थ होगी और असंतोषजनक जाँचों के साथ अपनी विश्वसनीयता एवं उद्देश्य खो देगी।"

155. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **लघु सिंचाई एवं ग्रामीण अभियंत्रण सेवाएँ, उ.प्र. बनाम सहंगू राम {(२००२) ५ एससीसी ५२१}** के मामले में अभिनिर्धारित किया कि सीबीआई द्वारा जाँच का आदेश केवल तभी पारित किया जाना चाहिए जब उच्च न्यायालय अभिलेख पर विद्यमान सामग्री पर विचार करने के पश्चात् इस निष्कर्ष

पर पहुँचे कि ऐसी सामग्री सीबीआई या किसी अन्य इसी प्रकार की अभिकरण द्वारा जाँच की आवश्यकता वाला प्रथम दृष्ट्या मामला प्रकट करती है।

156. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **के.वी. राजेंद्रन बनाम पुलिस अधीक्षक, सीबीसीआईडी {(2013) 12 एससीसी 480}** के मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:—

"13. इसमें शामिल मुद्दा अब अधिक प्रश्नगत नहीं है। इस न्यायालय ने बार-बार इस मुद्दे पर विचार किया है कि किन परिस्थितियों में जाँच को राज्य अन्वेषण अभिकरण से किसी अन्य स्वतंत्र अन्वेषण अभिकरण जैसे सीबीआई को हस्तांतरित किया जा सकता है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि ऐसी जाँच हस्तांतरित करने की शक्ति का प्रयोग विरल एवं असाधारण मामलों में किया जाना चाहिए, जहाँ न्यायालय पाए कि पक्षकारों के बीच न्याय करने एवं जनमानस में विश्वास जगाने के लिए यह आवश्यक है, या जहाँ राज्य पुलिस द्वारा की जाने वाली जाँच में विश्वसनीयता का अभाव हो और 'एक निष्पक्ष, ईमानदार एवं पूर्ण जाँच' सुनिश्चित करना आवश्यक हो, और विशेषकर जब राज्य अभिकरणों के निष्पक्ष कार्यकरण में जनविश्वास बनाए रखना अनिवार्य हो।"

157. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **साकिरी वासु बनाम उत्तर प्रदेश राज्य {(2008) 2 एससीसी 409}** के मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:—

"31. ... इस न्यायालय या उच्च न्यायालय को अनुच्छेद 136 या अनुच्छेद 226 के अंतर्गत सीबीआई द्वारा जाँच का आदेश देने की शक्ति है। तथापि, यह केवल कुछ विरल एवं असाधारण मामलों में ही किया जाना चाहिए, अन्यथा सीबीआई बड़ी संख्या में मामलों से भर जाएगी और उन सभी की उचित जाँच करना असंभव जाएगी।"

158. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **रुबाबुद्दीन शेख बनाम गुजरात राज्य {(2010) 2 एससीसी २००}** के मामले में अभिनिर्धारित किया कि जब अभियुक्त राज्य के अत्यंत वरिष्ठ अधिकारी हों, तो राज्य अन्वेषण अभिकरण द्वारा जाँच संतोषजनक ढंग से नहीं हो सकती। अतः, न्याय करने एवं पीड़ितों तथा जनता के मन में विश्वास जगाने के लिए, राज्य पुलिस प्राधिकरण को जाँच जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती, जब आरोप एवं अपराध अधिकांशतः शीर्ष अधिकारियों के विरुद्ध हों। तब जाँच किसी अन्य स्वतंत्र अन्वेषण अभिकरण को सौंपी जानी चाहिए।

निष्कर्ष

159. चूँकि याचिकाकर्ताओं ने रिट याचिकाएँ वापस लेने हेतु वापसी आवेदन दाखिल किए हैं, अतः हम मामले के गुण-दोष में नहीं जाएँगे और हम उन मुद्दों को नहीं छुएँगे जिनकी रिट याचिकाओं में प्रार्थना की गई है, यद्यपि हमारे समक्ष दिनों तक उन पर बहस की गई। जहाँ तक रिट याचिकाओं में माँगी गई प्रार्थनाओं का

प्रश्न है, ये रिट याचिकाएँ खारिज की जाती हैं। तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि याचिकाकर्ताओं को उन्हीं विषयों को पुनः उठाने की कोई स्वतंत्रता प्रदान नहीं की जाती।

160. यह न्यायालय साथ ही यह भी महसूस करता है कि यदि हम याचिकाकर्ताओं को समस्त हितधारकों तथा न्यायालयों को ठगना जारी रखने दें, तो हम अपने दायित्व का निर्वहन करने में विफल होंगे, क्योंकि दिनांक 31.07.2020 को एससी-02/150 का बकाया रु. 1215.14 करोड़ था। तथापि, ब्याज एवं अन्य देय राशि सहित सटीक बकाया कभी न्यायालय के समक्ष नहीं रखा गया, क्योंकि इससे बिल्डरों एवं नोएडा प्राधिकरण की अपवित्र सांठगांठ का प्रभाव उजागर हो जाता। वर्ष 2024 में समस्त चार स्पोर्ट्स सिटी का कुल बकाया रु. 7,000 करोड़ से अधिक था, जिसमें से विभिन्न नोटिस भेजने के बाद केवल रु. 304 करोड़ ही वसूल किए जा सके। आज की स्थिति में यह बकाया रु. 7,000 करोड़ से अधिक होगा।

161. हम आगे यह पाते हैं कि नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों का आचरण स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है क्योंकि वे याचिकाकर्ताओं एवं अन्य समान स्थिति में स्थित बिल्डरों/डेवलपर्स को अनुचित लाभ प्रदान करने के लिए स्पोर्ट्स सिटी योजना के विरुद्ध गए।

162. तथ्यों एवं समस्त परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए, हम निम्नलिखित निर्देश जारी करते हैं:-

(i) तथ्यों एवं परिस्थितियों में इस न्यायालय के पास वर्तमान मामले को जाँच हेतु सीबीआई को प्रेषित करने के अतिरिक्त कोई अन्य विकल्प नहीं है। तदनुसार, सीबीआई को निर्देश दिया जाता है कि वह नोएडा प्राधिकरण के समस्त मिलीभगत में लिप्त अधिकारियों एवं स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के आवंटन, विकास, स्वीकृति में शामिल आवंटितियों/बिल्डरों तथा किसी भी अन्य व्यक्ति, जो वर्तमान घोटाले में शामिल हो, के विरुद्ध परिवाद दर्ज करे। हम आशा एवं विश्वास करते हैं कि जाँच अविलंब संचालित एवं पूर्ण की जाएगी।

(ii) इस पृष्ठभूमि में, नोएडा प्राधिकरण को निर्देशित किया जाता है कि वह स्पोर्ट्स सिटी-02/सेक्टर-150 के समस्त हितधारकों/कंपनियों को एक सप्ताह के भीतर संविदा के अनुसार ब्याज एवं दंडात्मक ब्याज सहित संपूर्ण बकाया राशि की माँग करते हुए नोटिस जारी करे। तत्पश्चात् याचिकाकर्ताओं एवं अन्य आवंटितियों को संपूर्ण बकाया राशि चुकाने के लिए कुछ उचित समय दिया जाता है, जिसके विफल रहने पर उनका आवंटन स्वतः निरस्त हो जाएगा।

(iii) यदि आवंटन निरस्त हो जाते हैं, तो नोएडा प्राधिकरण वर्तमान बाज़ार दर के अनुसार ताजे बोलियाँ आमंत्रित कर सकता है, जो निश्चित रूप से आवंटित दर से कहीं अधिक होगी। यह निर्देश इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए जारी किया जा रहा है कि सीएजी ने इंगित किया था कि नोएडा को रु. 9,000 करोड़ की हानि हुई, जिसमें अनुचित मूल्य निर्धारण एक प्रमुख कारण था।

(iv) तथापि, चूँकि यह न्यायालय इस बात के प्रति भी सचेत है कि गृह खरीदारों के हितों की रक्षा की जानी चाहिए, यदि याचिकाकर्ता परियोजना को स्पोर्ट्स सिटी योजना की विवरणिका शर्तों एवं पट्टाकार्य की शर्तों के अनुसार सख्ती से पूर्ण करने में असमर्थ हों, तो उनके द्वारा जमा की गई राशि जब्त की जाए और गृह खरीदारों को वापस करने के लिए उपयोग की जाए और यदि कोई कमी हो तो नोएडा प्राधिकरण उसका भुगतान करेगा। यह निर्देश नोएडा पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगा, इसमें इतना करने के पश्चात् भी नोएडा को कहीं अधिक धनराशि प्राप्त होगी, यदि वही योजना वर्तमान बाज़ार मूल्य पर पुनः प्रारंभ की जाए।

(v) यह स्पष्ट किया जाता है कि मूल आवंटिती/उप-आवंटितियों को भूमि बेचने या अंशधारिता हस्तांतरित करके कंपनियाँ हस्तांतरित करने की अनुमति तब तक नहीं दी जाएगी, जब तक कि स्पोर्ट्स सिटी का प्रथम चरण योजना की शर्तों एवं स्पोर्ट्स सिटी विवरणिका के अनुसार पूर्ण नहीं हो जाता। योजना के विरुद्ध किया गया कोई भी हस्तांतरण मान्य नहीं होगा। आवंटिती कोई और अनुचित लाभ नहीं ले सकते और परियोजना का प्रथम चरण पूर्ण होने तक उन्हें बिक्री, हस्तांतरण, पट्टे या अंशधारिता में परिवर्तन करने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

163. उपरोक्त निर्देशों के साथ, ये समस्त रिट याचिकाएँ अभिलेख में संग्रहीत की जाती हैं।

(2025) 2 ILRA 312

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 24.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति महेश चंद्र त्रिपाठी

माननीय न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार

रिट सी संख्या 31823 वर्ष 2019

मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य ... याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

... प्रतिवादी

याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता:

मोनिता वैश्य

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मुख्य स्थाई अधिवक्ता, कौशलेन्द्र नाथ सिंह

(क) प्रशासनिक विधि - धोखाधड़ी सब कुछ दूषित कर देती है - सार्वजनिक न्यास सिद्धांत - शहरी नियोजन और विकास - प्रशासनिक आवरण को भेदना - नोएडा मास्टर प्लान 2031 - न्यायिक समीक्षा - दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 - धारा 7 - एकीकृत परियोजना का सिद्धांत - सार्वजनिक अनुबंधों में मिलीभगत - घोटाला - सीएजी रिपोर्ट - सीबीआई जांच के निर्देश - न्यायालय धोखाधड़ी, तर्कहीनता या अवैधता से ग्रस्त प्रशासनिक निर्णयों में हस्तक्षेप कर सकते हैं - धोखाधड़ी वाली गतिविधियों के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों की पहचान करने के लिए कॉर्पोरेट आवरण को हटाया जा सकता है - बिल्डरों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के बीच धोखाधड़ी वाली मिलीभगत पूरे स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट को दूषित करती है, जो न्यायिक हस्तक्षेप और सीबीआई जांच की पुष्टि करती है। (पैरा - 101, 126, 130-140)

स्पोर्ट्स सिटी योजना 2010-11 के तहत नोएडा द्वारा भूमि का आवंटन नोएडा अधिकारियों और डेवलपर्स के बीच मिलीभगत से ग्रस्त था - योजना की शर्तों के अनुसार परियोजना की 70% भूमि पर अंतरराष्ट्रीय स्तर की खेल अवसंरचना का विकास करना आवश्यक था, जिसमें आवासीय/व्यावसायिक उपयोग सीमित रखा जाना था - डेवलपर्स ने भूमि का विखंडन करके, अपात्र संस्थाओं को उप-पट्टे देकर और खेल सुविधाओं का निर्माण न करके योजना का उल्लंघन किया - सीएजी रिपोर्ट ने ₹9000 करोड़ के नुकसान का खुलासा किया। (पैरा 44-47, 101, 126, 130-140, 152)

(ख) कंपनी विधि - कॉर्पोरेट आवरण को भेदना - अल्टर ईगो का सिद्धांत - उपकरण नियम - एकीकृत परियोजना सिद्धांत - वैधानिक अनुपालन न करना - घोटाला

समान प्रवर्तकों द्वारा बनाई गई कई कंपनियों का उपयोग कानूनी जिम्मेदारी से बचने के लिए 'अल्टर ईगो' (एक-दूसरे के पूरक) के रूप में किया गया - कॉर्पोरेट आवरण को हटाया गया - उन्हीं व्यक्तियों ने कंसोर्टियम बनाने वाली कई संस्थाओं को नियंत्रित किया - कंपनियों का उपयोग धोखाधड़ी और धन निकालने के उपकरण के रूप में किया गया - नोएडा की अनुमति के बिना अवैध रूप से शेरधारिता में बदलाव किए गए - योजना का उल्लंघन किया गया - कॉर्पोरेट संरचना का उपयोग वास्तविक दायित्व को छिपाने और सार्वजनिक दायित्वों को पूरा किए बिना परियोजना के मुद्दीकरण से लाभ उठाने के लिए किया गया। (पैरा - 55 से 61)

अभिनिर्णय: नोएडा के अधिकारियों की मिलीभगत से बिल्डरों द्वारा किए गए धोखाधड़ीपूर्ण कार्यों ने स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को दूषित कर दिया है। अतः, इस मामले में न्यायिक हस्तक्षेप पूर्णतः न्यायोचित है। इस धोखाधड़ी के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों और संस्थाओं की पहचान करने के लिए कॉर्पोरेट आवरण को हटाया गया है। मामले की सीबीआई जांच के निर्देश दिए गए हैं। साथ ही, कंसोर्टियम (संघ) द्वारा संचालित सार्वजनिक परियोजनाओं में दिवालियापन की कार्यवाही के संबंध में महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश जारी किए गए हैं। (पैरा - 152)

याचिका निस्तारित की जाती है। (ई-7)

उद्धृत वादों की सूची:

1. उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम रेनूसागर पावर कंपनी एवं अन्य, 1988 (4) एससीसी 59
2. डी.डी.ए. बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी एवं अन्य, 1996 (4) एससीसी 622
3. शुभा मुखर्जी बनाम बी.सी.सी.एल., 2000 (3) एससीसी 312
4. राजस्थान राज्य बनाम गोटन लाइमस्टोन खनिज उद्योग प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य, 2016 (4) एससीसी 469
5. ए.एफ.सी. लिमिटेड बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, 1985 एससीसी ऑनलाइन गुजरात 93
6. हाइटोन मर्चेंट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम एस.ए.सी. प्राइवेट लिमिटेड, कंपनी अपील (एटी) (दिवालियापन) संख्या 258, वर्ष 2021
7. वी.आई.पी. लिमिटेड बनाम एक्सिस बैंक लिमिटेड, (2022) 8 एससीसी 352
8. रास्टर इमेजेस प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2023 एससीसी ऑनलाइन 3594
9. सालोमन बनाम सालोमन एंड कंपनी लिमिटेड, 1897 एसी 22
10. लिटिलवुड्स स्टोर्स बनाम आई.आर.सी., 1969 (1) डब्ल्यूएलआर 1241
11. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रेनूसागर पावर कंपनी, (1988) 4 एससीसी 59
12. राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम जी.एल.एस.के.यू. प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य, (2016) 4 एससीसी 469
13. शुभा मुखर्जी एवं अन्य बनाम बी.सी.सी.एल. एवं अन्य, (2003) 3 एससीसी 312
14. कलकत्ता क्रोमोटाइप लिमिटेड बनाम कलेक्टर ऑफ सेंट्रल एक्साइज कोलकाता, एआईआर 1998 एससी 1631
15. न्यू होराइजन लिमिटेड एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, 1995 (1) एससीसी 478
16. सी.आई.टी. बनाम मीनाक्षी मिल्स लिमिटेड मदुरा, एआईआर 1967 एससी 819
17. टेल्को एवं अन्य बनाम बिहार राज्य, एआईआर 1965 एससी 40
18. जुग्गी लाल कमलापत बनाम सी.आई.टी., उत्तर प्रदेश, एआईआर 1969 एससी 932
19. डी.डी.ए. बनाम एस.सी.सी. (P) लिमिटेड एवं अन्य, 1996 (4) एससीसी 622
20. निर्मल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, रिट सी संख्या 41110, वर्ष 2019
21. उदगार गगन प्रॉपर्टीज लिमिटेड बनाम संत सिंह एवं अन्य, 2016 (11) एससीसी 378
22. मधुकर सधभा शिवरकर (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य, 2015 (6) एससीसी 557
23. सचिव, जे.डी.ए., जयपुर बनाम दौलत मल जैन एवं अन्य, (1997) 1 एससीसी 35
24. भारत संघ बनाम एच.डी.सी., (1993) 3 एससीसी 499

- 25 यू.जी.पी. लिमिटेड बनाम संत सिंह, 2016 (11) एससीसी 378
- 26 दिशा बनाम गुजरात राज्य, (2011) 13 एससीसी 337
- 27 पश्चिम बंगाल राज्य बनाम सी.पी.डी.आर., पश्चिम बंगाल, 2010 एससीसी ऑनलाइन एससी 297
- 28 लघु सिंचाई एवं ग्रामीण इंजीनियरिंग सेवाएँ, उत्तर प्रदेश बनाम शंगू राम, (2002) 5 एससीसी 521
- 29 के.वी. राजेंद्रन बनाम एस.पी., सीबीसीआईडी, (2013) 12 एससीसी 480
- 30 साकिरी वासु बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2008) 2 एससीसी 409
- 31 रुबाबुद्दीन शेख बनाम गुजरात राज्य, (2010) 2 एससीसी 200

(माननीय न्यायमूर्ति महेश चंद्र त्रिपाठी
एवं
माननीय न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार द्वारा पारित)

क्रम संख्या	विषय तालिका शीर्षक	पृष्ठ संख्या
क	तथ्यात्मक मैट्रिक्स और स्पोर्ट्स सिटी के विकास का इतिहास	02-03
ख	स्पोर्ट्स सिटी योजना 2010-2011	03-06
ग	स्पोर्ट्स सिटी का भूमि उपयोग	06-16
घ	याचिकाकर्ताओं की ओर से तर्क	16-18
ङ	नोएडा प्राधिकरण की ओर से तर्क	18-35
च	विश्लेषण	35
छ	पिछले आचरण का प्रभाव	35-36
ज	नोएडा में स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए योजना- 2010-2011 और उसका उल्लंघन	36-44
झ	दिवाला - कॉर्पोरेट आवरण हटाना	44-50
ञ	शून्य अवधि	50-51
ट	घोटाला	51-53
ठ	धोखाधड़ी	53-55
ड	प्रशासनिक आवरण को भेदना	55-57
ढ	न्यायिक हस्तक्षेप का दायरा	57-59
ण	सीबीआई जांच	59-63
त	कॉर्पोरेट दिवालियापन	63-65
थ	कंसोर्टियम पर प्रभाव जब कंसोर्टियम का कोई सदस्य दिवालिया हो जाता है	65

द	सिफारिशें	66
ध	दिशानिर्देश	67

1. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता श्री संजीव कुमार राय; राज्य-प्रतिवादियों के विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री मोहन श्रीवास्तव, और विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनीष गोयल, जिन्हें प्रतिवादी-नोएडा के विद्वान अधिवक्ता श्री कौशलेन्द्र नाथ सिंह और सुश्री अंजलि गोखलानी द्वारा सहायता प्रदान की गई, को सुना।

क. तथ्यात्मक मैट्रिक्स और स्पोर्ट्स सिटी के विकास का इतिहास

2. नोएडा प्राधिकरण के बोर्ड ने 16.8.2004 को नोएडा में अंतरराष्ट्रीय स्तर की खेल सुविधाएं विकसित करने का निर्णय लिया। 25.6.2007 को आयोजित बैठक में बोर्ड इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि नोएडा में कोई खेल सुविधा उपलब्ध नहीं है, इसलिए स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए 311.60 हेक्टेयर क्षेत्र चिह्नित किया गया। 8.4.2008 को आयोजित अगली बोर्ड बैठक में, 2010 में होने वाले आगामी राष्ट्रमंडल खेलों को ध्यान में रखते हुए यह संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए सेक्टर 76, 78, 79, 101, 102, 104 और 107 के भू-उपयोग को बदल दिया जाए। हालांकि, स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने के लिए निर्धारित क्षेत्र को बढ़ाकर 346 हेक्टेयर कर दिया गया। तदनुसार, योजना तैयार करने और भूमि आवंटन की शर्तें निर्धारित करने के लिए 'ग्रांट थॉर्नटन' को नियुक्त किया गया। 18.9.2008 को आयोजित अगली बोर्ड बैठकों में, नोएडा के संशोधित मास्टरप्लान-2031 पर विचार किया गया। यह पहली बार था जब स्पोर्ट्स सिटी में क्या अपेक्षित था, इसके विवरण का उल्लेख किया गया था। मास्टर प्लान की धारा 5.9.3 में स्पोर्ट्स सिटी का विवरण दिया गया था। 1.10.2008 और 4.11.2008 को स्पोर्ट्स सिटी के लिए ब्रोशर (विवरणिका) को अंतिम रूप दिया गया और भू-उपयोग परिवर्तन की प्रक्रिया शुरू की गई। ऐसा प्रतीत होता है कि योजना शुरू की गई थी और इसे 12.1.2009 तक बढ़ाया गया था, लेकिन इसे अंतिम रूप नहीं दिया गया। इसके बाद, सितंबर 2010 में, स्पोर्ट्स सिटी के क्षेत्रफल को 311 हेक्टेयर से बदलकर 150 हेक्टेयर कर दिया गया। ग्रांट थॉर्नटन को एक नई विस्तृत परियोजना रिपोर्ट देने के लिए कहा गया और उसके बाद आरक्षित मूल्य निर्धारित किया गया। 2010-11 से 2015-16 तक, कुल 798 एकड़ क्षेत्र में चार स्पोर्ट्स सिटी परियोजनाएं शुरू की गईं, जिनमें 3 गोल्फ कोर्स, अंतरराष्ट्रीय स्तर का एक क्रिकेट स्टेडियम और अंतरराष्ट्रीय स्तर की अन्य खेल सुविधाओं की योजना बनाई गई थी। यह मामला उन चार परियोजनाओं में से एक से संबंधित है जहाँ खेल सुविधा पर कोई विकास नहीं हुआ है, लेकिन आवंटियों/बिल्डरों ने परियोजना के उस हिस्से का मुद्रोकरण पहले ही कर लिया है जो खेल सुविधाओं के निर्माण में आने वाली लागत की वसूली के लिए था।

ख. स्पोर्ट्स सिटी योजना 2010-2011

3. तैयार की गई योजना के अनुसार, न्यू ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण ने वर्ष 2011 में किसी समय "स्पोर्ट्स सिटी" की परियोजना शुरू की थी, जिसे नोएडा के सेक्टर 78, 79 और 150 में विकसित किया जाना था। यह योजना 03.03.2011 को शुरू की गई और 24.03.2011 को बंद हुई। योजना के अनुसार, सेक्टर 78

और 79 में 72.75 हेक्टेयर (7,27,500 वर्ग मीटर) के भूखंड पर एक स्पोर्ट्स सिटी और सेक्टर 150 में एक अन्य स्पोर्ट्स सिटी विकसित की जानी थी।

4. योजना के लिए आरक्षित मूल्य 11,500/- रुपये प्रति वर्ग मीटर निर्धारित किया गया था। डेवलपर से पूरी भूमि के 70% क्षेत्र पर खेल सुविधाएं विकसित करने की अपेक्षा की गई थी, जो विपणन योग्य नहीं थी, और स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने में होने वाले इस खर्च की भरपाई करने के लिए, डेवलपर को कुल भूमि के 28% हिस्से पर ग्रुप हाउसिंग और 2% पर व्यावसायिक निर्माण करने की अनुमति दी गई थी, जिसका एफएआर 1.5 था। योजना में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि इस स्पोर्ट्स सिटी में जनसंख्या घनत्व 1650 व्यक्ति प्रति हेक्टेयर होगा। मनोरंजक घटक (जैसे गोल्फ कोर्स, स्टेडियम आदि खेल गतिविधियाँ और खुले स्थान) के खुले/हरे क्षेत्र को पूरी भूमि के लिए खुला हरा क्षेत्र माना जाना था। ब्रोशर (विवरणिका) में प्रासंगिक शर्तें इस प्रकार थीं:-

* कंसोर्टियम (संघ) में मुख्य सदस्य की हिस्सेदारी तब तक कम से कम 30% बनी रहेगी, जब तक कि नोएडा प्राधिकरण से परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त न हो जाए।

* एसपीसी (स्पेशल पर्पज कंपनियां) जो बाद में आवंटि के रूप में अपनी सभी जिम्मेदारियों का निर्वहन करेंगी, उन्हें आवंटित क्षेत्र पर कुल अनुमेय एफएआर के न्यूनतम 30% का निर्माण स्वयं करना होगा।

* "लीड मेंबर" (मुख्य सदस्य) एसपीसी में कम से कम 30% की हिस्सेदारी तब तक बनाए रखेगा, जब तक कि नोएडा से परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त न हो जाए।

* किस्तों को जमा करने या किसी भी भुगतान में चूक होने की स्थिति में, चूक की अवधि के लिए बकाया राशि पर 14% की दर से अर्ध-वार्षिक चक्रवृद्धि ब्याज देय होगा।

* पट्टाधारक को पट्टा विलेख के निष्पादन की तिथि से 3 वर्ष की अवधि के भीतर खेल, संस्थागत और अन्य सुविधाओं के लिए निर्धारित अनुमेय क्षेत्र का न्यूनतम 15% निर्माण कार्य पूरा करना आवश्यक होगा और 5 वर्ष के भीतर परियोजना को चरणों में पूरा करना होगा। हालांकि, आवासीय और व्यावसायिक विकास/निर्माण को 7 वर्षों के भीतर चरणों में पूरा किया जा सकता है।

* इसके अतिरिक्त, पट्टाधारक को परियोजना में आवासीय और व्यावसायिक घटक का विकास, मनोरंजक उपयोगों के लिए निर्धारित क्षेत्र के अनुपात में करना होगा।

* परियोजना या उसके किसी हिस्से के चरणों में पूरा होने पर और परियोजना या उसके हिस्से के पूरा होने को प्रमाणित करने के लिए आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत करने पर, नोएडा द्वारा 'पूर्णता प्रमाण पत्र' जारी किया जाएगा।

* पट्टाधारक परियोजना के पूरा न होने से उत्पन्न होने वाले सभी विवादों के विरुद्ध नोएडा को क्षतिपूर्ति देने के लिए एक क्षतिपूर्ति बांड निष्पादित करेगा।

* पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त किए बिना भी, पट्टाधारक के पास आवंटित भूखंड को नोएडा के नियोजन मानदंडों के अनुसार उपयुक्त छोटे भूखंडों में उप-विभाजित करने का अधिकार होगा, लेकिन यह केवल आवासीय और व्यावसायिक उपयोग के लिए उपलब्ध क्षेत्र तक सीमित होगा। इसके साथ ही, हस्तांतरण की तिथि पर प्रचलित दर पर हस्तांतरण शुल्क के भुगतान और नोएडा की पूर्व स्वीकृति के साथ, इसे इच्छुक पार्टियों (यदि कोई हो) को हस्तांतरित करने का अधिकार होगा।

* पट्टादाता/नोएडा प्राधिकरण की लिखित स्वीकृति के बाद, पट्टाधारक अपनी कई सहायक कंपनियों के माध्यम से परियोजना को कार्यान्वित/विकसित कर सकता है, जिसमें आवंटी/पट्टाधारक कंपनी की न्यूनतम 90% इक्विटी शेयर हिस्सेदारी होनी चाहिए।

* नोएडा द्वारा अनुमोदित लेआउट और भवन योजनाओं के आधार पर भूमि/निर्मित क्षेत्र के उप-पट्टे की अनुमति होगी।

* नोएडा परियोजना के कार्यान्वयन की निगरानी करेगा। ऐसे आवेदकों को सलाह दी जाती है कि वे आवंटन का लाभ न उठाएं जिनके पास निर्धारित समय सीमा के भीतर परियोजना को लागू करने की दृढ़ प्रतिबद्धता नहीं है।

(विशेष जोर दिया गया है)

5. आवेदन के जवाब में स्पोर्ट्स सिटी के आवंटन के लिए केवल दो कंपनियों ने आवेदन किया था, पहली मेसर्स वेव प्राइवेट लिमिटेड, जिसने आरक्षित मूल्य पर आवेदन किया था और दूसरी कंपनियों का एक कंसोर्टियम (संघ) था, जिसका नेतृत्व मेसर्स ज्ञानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (लीड मेंबर के रूप में) और 8 अन्य कंपनियां (प्रासंगिक सदस्यों के रूप में) कर रही थीं। मेसर्स ज्ञानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड के कंसोर्टियम की बोली सबसे अधिक होने के कारण उन्हें स्पोर्ट्स सिटी परियोजना (एससी-01 सेक्टर 78-79) आवंटित की गई थी।

6. नोएडा प्राधिकरण ने 28.03.2011 को एक स्वीकृति पत्र जारी किया और लीड मेंबर को आवंटन के बारे में सूचित किया, इसके बाद, नोएडा प्राधिकरण ने 04.05.2011 को आवंटन-सह-आरक्षण पत्र जारी किया और कंसोर्टियम को आरक्षण राशि जमा करने के लिए कहा। कंसोर्टियम को सूचित किया गया था कि योजना के नियमों और शर्तों के अनुसार सेक्टर 78 और 79 में प्लॉट नंबर एससी-01 के रूप में 7,27,500 वर्ग मीटर की कुल भूमि का पार्सल कंसोर्टियम के पक्ष में आरक्षित किया गया था।

7. दिनांक 11.10.2011 के पत्र के माध्यम से, कंसोर्टियम ने अधिकारियों से आवंटित भूखंड को कंसोर्टियम के उन सदस्यों के पक्ष में उप-विभाजित करने का अनुरोध किया, जिन्होंने एक साथ कंसोर्टियम के रूप में आवेदन

किया था। कंसोर्टियम के इस अनुरोध को नोएडा प्राधिकरण ने 24.10.2011 को मंजूरी दे दी और पूरी स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को निम्नानुसार विभाजित किया गया:-

- (1) एससी-01/ए सेक्टर 79, 1,00,000 वर्ग मीटर – मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड
- (2) एससी-01/बी सेक्टर 79, 48,000 वर्ग मीटर – मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड
- (3) एससी-01/सी सेक्टर 79, 2,50,027 वर्ग मीटर – मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड
- (4) एससी-01/डी सेक्टर 79, 1,00,000 वर्ग मीटर – मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड
- (5) एससी-01/ई सेक्टर 79, 80,000 वर्ग मीटर – मेसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड
- (6) एससी-01 सेक्टर-78, 14,272.50 वर्ग मीटर – जो कि प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर-78 नोएडा के कुल 14,519.00 वर्ग मीटर आवंटित क्षेत्र का हिस्सा है।
8. विचित्र बात यह है कि उक्त इकाई यानी मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट प्राइवेट लिमिटेड, जो कंसोर्टियम की लीड मेंबर थी और जिसकी पात्रता के आधार पर परियोजना देने पर विचार किया गया था, वह उस कंसोर्टियम का हिस्सा भी नहीं थी जिसे परियोजना आवंटित की गई थी।
9. कंसोर्टियम के लीड मेंबर के अनुरोध के अनुसार, 24 अक्टूबर 2011 को नोएडा प्राधिकरण और कंसोर्टियम के विभिन्न सदस्यों के बीच अलग-अलग पट्टा विलेख निष्पादित किए गए। पट्टा विलेख के प्रासंगिक प्रावधान निम्नलिखित थे:-

ग. स्पोर्ट्स सिटी का भूमि उपयोग

स्पोर्ट्स सिटी के अंतर्गत आने वाले कुल क्षेत्रफल का विभिन्न भू-उपयोगों के लिए अनुमेय व्यापक विभाजन निम्नानुसार होगा:

क. मनोरंजक (खेल, संस्थागत और अन्य सुविधाएं और खुले क्षेत्र) 70% से कम नहीं

ख. व्यावसायिक 2% से अधिक नहीं

ग. ग्रुप हाउसिंग सहित आवासीय 28% (केवल आवासीय/ग्रुप हाउसिंग क्षेत्र पर 1650 व्यक्ति प्रति हेक्टेयर के आधार पर), उपरोक्त भू-उपयोग पैटर्न को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित नियोजन मानदंड लागू होंगे:-

1. पूरी भूमि का अधिकतम अनुमेय ग्राउंड कवरेज 30% होगा।

2. कुल भूमि पर अधिकतम अनुमेय एफएआर 1.5 होगा।

3. मनोरंजक भू-उपयोग में एफएआर और ग्राउंड कवरेज प्रचलित उप-नियमों के अनुसार होगा।

कुल प्रीमियम के प्रतिफल में, 10% का भुगतान आवंटन के समय किया जाना था और शेष राशि का भुगतान पट्टाधारक द्वारा निर्धारित तिथियों पर किश्तों में किया जाना था, जिसमें आवंटन की तिथि से प्रत्येक छमाही में चक्रवृद्धि आधार पर 11% वार्षिक ब्याज शामिल था, जो समय पर भुगतान की गई शेष बकाया राशि पर देय था। किश्तों के भुगतान की समय-सारणी भी दी गई थी, जिसकी पहली किश्त 4.11.2011 से शुरू होकर पूरा भुगतान 4.5.2020 तक किया जाना था।

किश्त/पट्टा किराया जमा करने के लिए पट्टादाता द्वारा कोई अलग से नोटिस जारी नहीं किया जाना था। पट्टाधारक इस सख्त दायित्व के अधीन था कि देय किश्तें ब्याज सहित नियत तिथि पर जमा की जानी थीं।

नियत तिथि तक देय किश्त जमा करने में विफल रहने की स्थिति में, पट्टादाता आवंटन रद्द कर सकता है। हालांकि, असाधारण परिस्थितियों में, चूक की गई राशि पर और चूक की अवधि के लिए 14% वार्षिक (11% सामान्य ब्याज + 3% दंडात्मक ब्याज) की दर से छमाही चक्रवृद्धि ब्याज के भुगतान की शर्त पर किश्त के भुगतान के लिए समय विस्तार की अनुमति दी जा सकती थी।

नब्बे वर्षों का पट्टा "जैसा है जहाँ है" के आधार पर नीचे दी गई शर्तों और नियमों पर प्रदान किया गया था:-
(ए)....

(iii) नियत तिथि तक देय पट्टा किराया जमा करने में विफल रहने की स्थिति में, चूक की गई राशि पर और चूक की अवधि के लिए 14% वार्षिक (11% सामान्य ब्याज + 3% दंडात्मक ब्याज) की दर से छमाही चक्रवृद्धि ब्याज लिया जाएगा।

(iv) इस दस्तावेज़ के प्रयोजनों के लिए, आवंटन पत्र जारी करने की तिथि को आवंटन की तिथि माना जाएगा और पट्टा विलेख के निष्पादन की तिथि को कब्जे लेने की तिथि माना जाएगा।

II.

(ए) लीड मेंबर (मुख्य सदस्य) को कंसोर्टियम में कम से कम 30% हिस्सेदारी रखने वाला सबसे बड़ा एकल शेयरधारक होना चाहिए। लीड मेंबर की शेयरधारिता का प्रतिशत तब तक न्यूनतम 30% रहेगा जब तक कि पट्टादाता से परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त न हो जाए।

(एच) भूखंड पर भवन का निर्माण और विकास, योजना/भवन विनियमों के तहत निर्धारित विकास मानदंडों, नियंत्रणों और पट्टादाता के निर्देशों के अनुसार और पट्टादाता द्वारा भवन योजनाओं के पूर्व अनुमोदन के बाद ही किया जाना होगा।

(ए) सभी बुनियादी ढांचागत सेवाएँ पट्टाधारक द्वारा केवल भूखंड क्षेत्र के भीतर ही प्रदान की जानी होंगी।

(i) पट्टाधारक को पट्टा विलेख के निष्पादन की तिथि से 3 वर्ष की अवधि के भीतर खेल, संस्थागत और अन्य सुविधाओं के लिए निर्धारित अनुमेय क्षेत्र का न्यूनतम 15% निर्माण पूरा करना आवश्यक होगा और 5 वर्ष के भीतर परियोजना को चरणों में पूरा करना होगा। हालांकि, आवासीय और व्यावसायिक विकास/निर्माण को 7 वर्षों के भीतर चरणों में पूरा किया जा सकता है। इसके अलावा, पट्टाधारक को परियोजना में आवासीय और व्यावसायिक घटक का विकास, मनोरंजक उपयोग के लिए निर्धारित क्षेत्र के अनुपात में करना होगा। फिर भी, असाधारण परिस्थितियों में, नोएडा द्वारा विस्तार दिया जा सकता है, जिसके लिए विस्तार दिए जाने के समय प्रचलित नीति के अनुसार लागू विस्तार शुल्क का भुगतान करना होगा। अतिक्रमण, अपरिहार्य परिस्थितियों, कानूनी मुद्दों जैसे स्थगन आदेश आदि के कारण होने वाले विलंब पर विस्तार के लिए विचार किया जाएगा। भूमि पर निर्माण इन नियमों और शर्तों के तहत निर्धारित नियंत्रणों तथा नोएडा के भवन विनियमों और निर्देशों के अनुसार करना होगा।

(जे) पट्टाधारक परियोजना के कार्यान्वयन और विकास/निर्माण की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के साथ-साथ, भवन और सेवाओं के आगामी रखरखाव के लिए पूर्णतः और व्यक्तिगत रूप से तब तक जिम्मेदार होगा, जब तक कि पट्टादाता की पूर्व लिखित स्वीकृति के बाद पट्टाधारक द्वारा ऐसे कार्य के लिए किसी वैकल्पिक एजेंसी की पहचान और कानूनी रूप से नियुक्ति नहीं कर दी जाती। परियोजना को पट्टाधारक द्वारा 'विशेष प्रयोजन कंपनी' और/या अपनी सहायक कंपनियों के माध्यम से कार्यान्वित किया जा सकता है। विशेष प्रयोजन कंपनी और उसकी सहायक कंपनियों के बीच संबंध प्रचलित कानून, नियमों और विनियमों द्वारा शासित होंगे। हालांकि, पट्टादाता के प्रचलित नियमों और विनियमों के अनुसार परियोजना के कार्यान्वयन के लिए विशेष प्रयोजन कंपनी को बंधक की अनुमति दी जा सकती है।

(एल) पट्टाधारक, पट्टादाता की प्रचलित नीति के अनुसार हस्तांतरण शुल्क के भुगतान के बाद, पट्टादाता की पूर्व अनुमति से पूरे भूखंड और उस पर निर्मित भवनों को हस्तांतरित कर सकता है। हालांकि, पट्टादाता बिना कोई कारण बताए ऐसे किसी भी हस्तांतरण आवेदन को अस्वीकार करने का अधिकार सुरक्षित रखता है। पट्टादाता की प्रचलित नीति के अनुसार हस्तांतरण शुल्क के अतिरिक्त, पट्टाधारक प्रसंस्करण शुल्क के रूप में 10,000/- रुपये की राशि का भी भुगतान करेगा।

ब्रोशर, आवंटन, हस्तांतरण की अनुमति, पट्टा विलेख आदि के सभी नियम और शर्तें पट्टाधारक के साथ-साथ हस्तांतरिती पर भी बाध्यकारी होंगी।

पट्टादाता की प्रचलित नीति और योजना के ब्रोशर के नियमों और शर्तों के अनुसार संविधान/संस्थागत संरचना में परिवर्तन की अनुमति दी जाएगी।

यदि वाणिज्यिक भूखंड के निर्मित क्षेत्र का हस्तांतरण पट्टादाता द्वारा पूर्णता प्रमाण पत्र जारी करने की तिथि से दो वर्ष के भीतर किया जाता है, तो कोई हस्तांतरण शुल्क लागू नहीं होगा। तत्पश्चात, हस्तांतरण शुल्क लागू नीति के अनुसार यथानुपात आधार पर देय होगा। हस्तांतरण शुल्क के अतिरिक्त, प्रसंस्करण शुल्क के

2.इला मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य 425
रूप में 10,000/- रुपये की राशि भी देय होगी। पट्टाधारक को निम्नलिखित शर्तों को पूरा करने पर निर्मित क्षेत्र को हस्तांतरित करने की अनुमति दी जाएगी:-

(i) पट्टाधारक ने भूखंड के प्रीमियम का ब्याज सहित पूरा भुगतान कर दिया हो और उस पर देय अद्यतन पट्टा किराया और ब्याज (यदि कोई हो) चुका दिया हो।

(ii) नियमों के अनुसार पट्टा विलेख विधिवत निष्पादित किया गया हो।

(iii) पट्टाधारक ने पट्टादाता से भवन पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त कर लिया हो।

(iv) उप-पट्टाधारक/हस्तांतरिती यह वचन देते हैं कि वे परिसर का उपयोग केवल मूल अनुमेष उपयोग के लिए ही करेंगे और हस्तांतरित किए जा रहे परिसर पूर्णता प्रमाण पत्र के अनुसार हैं तथा किसी भी सामान्य क्षेत्र का हिस्सा नहीं हैं।

(v) पट्टाधारक, पट्टादाता और प्रस्तावित हस्तांतरितियों (उप-पट्टाधारकों) के बीच एक उप-पट्टा विलेख भी निष्पादित करेगा। पट्टाधारक/उप-पट्टाधारक भवन विनियमों और निर्देशों का अनुपालन सुनिश्चित करेंगे। आवंटन और पट्टा विलेख के सभी नियम और शर्तें हस्तांतरिती/उप-पट्टाधारकों पर भी लागू और बाध्यकारी होंगी।

(vi) हस्तांतरितियों/उप-पट्टाधारकों को लागू नियमों के अनुसार यथानुपात पट्टा किराया भी देना होगा। हस्तांतरितियों/उप-पट्टाधारकों को उप-पट्टे की तारीख से एक वर्ष के भीतर निर्मित क्षेत्र को कार्यात्मक बनाना होगा और उसके प्रमाण के रूप में पट्टादाता को पर्याप्त दस्तावेज प्रस्तुत करने होंगे। तत्पश्चात, लागू होने वाले विस्तार शुल्क देय होंगे।

(vii) ब्रोशर, आवंटन, हस्तांतरण की अनुमति, पट्टा विलेख आदि के सभी नियम और शर्तें पट्टाधारक के साथ-साथ हस्तांतरितियों (उप-पट्टाधारकों) पर भी लागू होंगी।

(viii) पट्टाधारक और उप-पट्टाधारक नोएडा की विभिन्न योजनाओं के तहत आवासीय भूखंड या घर के किसी भी अधिमाम्य आवंटन के पात्र नहीं होंगे।

(एम) पट्टाधारक और उप-पट्टाधारक (हस्तांतरिती) स्पोर्ट्स सिटी भूखंड का उपयोग उस उद्देश्य के अलावा किसी अन्य उद्देश्य के लिए नहीं करेंगे जिसके लिए भूखंड आवंटित किया गया है। आवंटन की किसी भी शर्त के उल्लंघन के मामले में, आवंटन रद्द किया जा सकता है और परिसर का कब्जा, उस पर निर्मित संरचनाओं (यदि कोई हो) के साथ, पट्टादाता द्वारा वापस लिया जा सकता है।

(एन) पट्टाधारक और उप-पट्टाधारक/हस्तांतरिती भूखंड और उस पर निर्मित भवनों के संबंध में, समय-समय पर इस संबंध में सशक्त किसी भी प्राधिकरण द्वारा लगाए गए सभी दरों, करों, शुल्कों और कर-निर्धारणों का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होंगे।

(o) यदि पट्टाधारक और/या उप-पट्टाधारक/हस्तांतरिती निर्धारित समय या पट्टादाता द्वारा अनुमत विस्तारित अवधि के भीतर देय राशि/किश्त जमा करने में विफल रहते हैं, या इस ब्रोशर, आवंटन पत्र, पट्टा विलेख में निर्धारित नियमों और शर्तों का कोई उल्लंघन करते हैं, तो आवंटन/पट्टा रद्द/समाप्त किया जा सकता है और भूखंड के कुल प्रीमियम का 30% या उस समय तक जमा किया गया प्रीमियम/किश्तें, साथ ही जमा किया गया पट्टा किराया, ब्याज, विस्तार शुल्क आदि, जो भी कम हो, पट्टादाता के पक्ष में जब्त कर लिया जाएगा। ऊपर बताए अनुसार राशि जब्त करने के बाद शेष राशि, यदि कोई हो, बिना ब्याज के वापस कर दी जाएगी। भूखंड का कब्जा, उस पर निर्मित संरचनाओं (यदि कोई हो) के साथ, पट्टादाता के पक्ष में वापस ले लिया जाएगा और पट्टाधारक इसके लिए किसी भी मुआवजे का दावा करने का हकदार नहीं होगा।

(पी) यदि यह पाया जाता है कि पट्टाधारक द्वारा किसी गलत बयानी, छिपाव या महत्वपूर्ण तथ्यों को दबाकर आवंटन प्राप्त किया गया है, तो भूखंड का आवंटन रद्द कर दिया जाएगा और/या पट्टा समाप्त कर दिया जाएगा, जैसा भी मामला हो। इसके अतिरिक्त, पट्टाधारक और उप-पट्टाधारक/हस्तांतरिती द्वारा जमा की गई पूरी राशि जब्त कर ली जाएगी और ऐसी गलत बयानी, छिपाव या महत्वपूर्ण तथ्यों को दबाने के लिए कानूनी कार्रवाई की जाएगी।

(विशेष जोर दिया गया है)

10. चूँकि आवंटित पूरी भूमि का कब्जा नहीं दिया जा सका था, इसलिए आवंटि ने आवंटन की तिथि से उस तिथि तक 'जीरो पीरियड' का लाभ देने के लिए एक अभ्यावेदन दिया, जिस तिथि को वास्तविक भौतिक कब्जा दिया गया था। विचार-विमर्श के बाद, नोएडा प्राधिकरण 16-07-2012 को इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि पट्टा विलेख की धारा 42 के अनुसार, स्पोर्ट्स सिटी एक एकीकृत परियोजना है और जब तक पूरी भूमि का कब्जा नहीं दिया जाता, तब तक स्पोर्ट्स सिटी की एकीकृत परियोजना शुरू करना संभव नहीं है। अतः, प्राधिकरण 'जीरो पीरियड' का लाभ देने के लिए सहमत हो गया।

11. नोएडा प्राधिकरण ने 09-08-2012 के पत्र के माध्यम से आवंटियों को सूचित किया कि नोएडा बोर्ड ने 25 जुलाई, 2012 को आयोजित अपनी बैठक में एक और निर्णय लिया है कि आवंटित भूमि के 80% (7,25,500 वर्ग मीटर का 80% यानी 5,82,000 वर्ग मीटर) का कब्जा सौंपने पर, इस मामले को बंद माना जाएगा क्योंकि आवंटन की मूल शर्तों में आवंटित भूमि के 20% तक के बदलाव का प्रावधान है और आवंटियों ने इस शर्त पर अपनी सहमति दी है। और, इसके बाद, पहले से आवंटित भूखंड से सटे हुए बगल के सेक्टर में शेष भूमि आवंटित की गई।

12. नोएडा प्राधिकरण ने अपने 16-09-2014 के पत्र के माध्यम से मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड को आवंटित प्लॉट संख्या एससी-01/सी, सेक्टर 79, जिसका क्षेत्रफल केवल 2,50,027 वर्ग मीटर था, के निम्नलिखित अनुसार उप-विभाजन की अनुमति दी:

कंपनी का नाम		क्षेत्रफल (वर्ग मी.)	भूखण्ड संख्या	दिनांक	स्वामित्व दस्तावेज़
मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एसपीसी	1,66,459.30	एससी-01/सी	17.11.14	शेष भूमि
पीयूष आईटी सॉल्यूशंस पी लिमिटेड (उप-पट्टेदार)		28,000.00	एससी-01/सी3	17.11.14	उप पट्टा विलेख
श्री सी इंफ्रा क्रिएशंस प्राइवेट लिमिटेड (उप-पट्टेदार)		24,000.00	एससी-01/सी4	17.11.14	उप पट्टा विलेख
श्री सी सिटी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (उप-पट्टेदार)		20,000.00	एससी-01/सी5	11.12.14	उप पट्टा विलेख
वाटर-ईपल-इन्फोटेक प्राइवेट लिमिटेड (उप-पट्टेदार)		24,000.00	एससी-01/सी6	17.11.14	उप पट्टा विलेख
श्री सी बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड (उप-पट्टेदार)		16,000.00	एससी-01/सी7	11.12.14	उप पट्टा विलेख
श्री सी बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड (उप-पट्टेदार)		25,750.00	एससी-01/सी8	11.12.14	उप पट्टा विलेख

13. इसके तुरंत बाद याचिकाकर्ता संख्या 1 ने फिर से नोएडा प्राधिकरण से प्लॉट संख्या एससी-1/सी2 को अपनी 100% सहायक कंपनी मेसर्स रोबस्ट इनोवेशन प्राइवेट लिमिटेड के पक्ष में 2 भागों में उप-विभाजित

करने का अनुरोध किया। इस अनुरोध को योजना के ब्रोशर, पट्टा विलेख और आवंटन पत्र के समान नियमों और शर्तों पर दिनांक 03-10-2012 के पत्र के माध्यम से स्वीकार कर लिया गया। तदनुसार, 19-10-2012 को नोएडा प्राधिकरण और याचिकाकर्ता के बीच एक शुद्धिपत्र विलेख निष्पादित किया गया, जिसमें भुगतान की एक नई समय-सारणी दी गई। इसके अनुसार, आवंटियों द्वारा पूरी किश्तों का भुगतान 4.11.2011 से 4.5.2021 के बीच किया जाना था।

14. याचिकाकर्ता ने कंसोर्टियम की ओर से स्पोर्ट्स सिटी एससी-01, सेक्टर-78 और 79 के विकास के लिए एकीकृत मानचित्र की मंजूरी के लिए आवेदन किया, जिसे 16.11.2012 को अनुमोदित किया गया, जिसमें आवंटियों ने स्वयं जिम्मेदारियों को विभाजित किया और आवासीय, वाणिज्यिक और खेल सुविधाओं के विकास के लिए अपने-अपने हिस्से निर्धारित किए।

15. नोएडा प्राधिकरण ने 27-05-2013 को अपनी 179वीं बैठक में प्रस्ताव पारित किया कि शेष भूमि जहाँ कब्ज़ा नहीं दिया जा सका था, उसके बदले में आस-पास के सेक्टर की 48,520 वर्ग मीटर भूमि आवंटित की जाए। तदनुसार, शेष भूमि के लिए 21-06-2013 को एक पत्र जारी किया गया, जिसमें 48,520 वर्ग मीटर भूमि आवंटित की गई। इस भूमि के आवंटन के साथ ही स्पोर्ट्स सिटी के लिए 80 प्रतिशत क्षेत्र का लक्ष्य प्राप्त कर लिया गया।

16. नोएडा प्राधिकरण ने अब तक सेक्टर 78 और 79 की पूरी स्पोर्ट्स सिटी को विभिन्न भूखंडों में विभाजित कर दिया था और उन विभिन्न कंपनियों के पक्ष में पट्टा विलेख निष्पादित कर दिए थे, जो आवंटी कंपनियों की 100% सहायक कंपनियाँ थीं। याचिकाकर्ता के साथ-साथ अन्य कंसोर्टियम भागीदारों की ओर से स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए एक संशोधित एकीकृत योजना दायर की गई थी, जिसके अनुसार उन्होंने पूरी स्पोर्ट्स सिटी (जिसमें खेल सुविधाएं, आवासीय और परियोजना का वाणिज्यिक हिस्सा शामिल था) को विकसित करने की जिम्मेदारी आपस में विभाजित कर ली थी। इस मानचित्र को नोएडा प्राधिकरण द्वारा 16.06.2014 को अनुमोदित किया गया था, जिसमें प्रत्येक उप-पट्टाधारक ने आवासीय, वाणिज्यिक और खेल सुविधाओं को विकसित करने की जिम्मेदारी अलग-अलग ली थी। आवासीय, वाणिज्यिक और खेल सुविधाओं को पूरा करने के लिए विभिन्न कंपनियों के दायित्व अनुमोदित मानचित्र में निर्धारित किए गए थे और वे निम्नानुसार थे:-

प्लॉट संख्या एससी-01, 01, सेक्टर 78, 79 एवं एससी-01/ए और बी, सेक्टर-101, नोएडा (उत्तर प्रदेश)।

क्रम संख्या	कंपनी, उनकी प्लॉट संख्या और (प्रत्येक कंपनी को	प्रत्येक कंपनी द्वारा वर्ग मीटर में विकसित किया	प्रस्तावित भू-आच्छादन (वर्ग मीटर)				प्रस्तावित एफ.ए.आर. (वर्ग मीटर)		
			स्पोर्ट्स (वर्ग मीटर में)	आवासीय (वर्ग मीटर में) (ए)	वाणिज्यिक (वर्ग मीटर में)	स्पोर्ट्स (वर्ग मीटर में)	आवासीय (वर्ग मीटर में) (पी)	वाणिज्यिक (वर्ग मीटर में)	स्पोर्ट्स (वर्ग मीटर में)

	वर्ग मीटर में दिया गया प्लॉट (क्षेत्र)	जाने वाला एफ.ए.आर .			मीटर में) (बी)	में) (सी)		में) (क्यू)	(आर)
1	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/ए1, सेक-79 (50,000.0 0)	137500. 00	35000. 00	15000. 00	0.00	0.00	137500 .00	0.00	0.00
3	मेसर्स एरीना सुपरस्ट्रक्च र प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/ए- 2,सेक-79 (50,000.0 0)	137500. 00	35000. 00	15000. 00	0.00	0.00	137500 .00	0.00	0.00
4	मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/बी- 1,सेक-79	66000.0 0	16800. 00	6735.0 0	465.00	0.00	65340. 00	680.00	0.00

	(24,000.00)								
5	मेसर्स गोल्फ ग्रीन बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/बी- 2,सेक-79 (24,000.00)	0.00	16800.00	7200.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00
6	मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/सी-1, सेक-79 (3,04,209.30)	257256.95	198390.51	101101.78	417.01	4300.00	250856.95	400.00	6000.00
9	मैसर्स रोबस्ट इनोवेशन प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/सी-2, सेक-79 (8000.00)	12000.00	5600.00	2400.00	0.00	0.00	12000.00	0.00	0.00
10	मैसर्स किंडल डेवलपर्स	78714.00	28000.00	11740.00	260.00	0.00	77814.00	900.00	0.00

	प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/डी- 1,सेक-79 (40,000.0 0)								
11	मैसर्स गोल्फ ग्रीन रेजिडेंसी प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/डी- 2,सेक-79 (10,000.0 0)	22500.0 0	7000.0 0	2830.0 0	170.00	0.00	22330. 00	170.00	0.00
12	मैसर्स गोल्फ ग्रीन एस्टेट प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/डी- 3,सेक-79 (25,000.0 0)	56250.0 0	17500. 00	7250.0 0	250.00	0.00	55750. 00	500.00	0.00
13	मैसर्स गोल्फ ग्रीन मेंशंस प्राइवेट लिमिटेड	62500.0 0	17500. 00	7175.0 0	325.00	0.00	61812. 50	687.50	0.00

	एससी- 01/डी- 4,सेक-79 (25,000.0 0)								
14	मेसर्स ज़ानाडू रीयलकॉन प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/ई1, सेक-79, (40,000.0 0)	110000. 00	28000. 00	11680. 00	300.00	0.00	108998 .00	1002.0 0	0.00
15	मैसर्स गोल्फ ग्रीन इन्फ्रा प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/ई- 2,सेक-79 (20,000.0 0)	55000.0 0	14000. 00	5795.0 0	205.00	0.00	54795. 00	205.50	0.00
16	मैसर्स गोल्फ ग्रीन सुपरस्ट्रक्च र प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/ई- 3,सेक-79	55000.0 0	14000. 00	5000.0 0	400.00	0.00	54450. 00	550.00	0.00

	(20,000.00)								
17	मैसर्स ज़ैनाडू इन्फ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड एससी-01, सेक-78 (14,272.50)	4281.5	9990.75	0.00	0.00	4781.75	0.00	0.00	4281.75
18	मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/ए, सेक- 101 (19,170.00)	0.00	19170.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00
19	मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/बी, सेक-101 (29,350.00)	0.00	29330.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00
	प्रस्तावित विकास 703001.80	1054502.70	----	----	----	28.38	----	5074.00	----

अनुमेय विकास	1054502	492161	198840	14060.	5881.	852038	5624.0	----
703001.80	.70	.26	.50	01	75	.18	1	

खेल सुविधाएँ			
सहायक कंपनियाँ	भूखंड संख्या	भूखंड में सुविधाएँ	न्यूनतम खर्च की जाने वाली राशि (करोड़ में)
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	गोल्फ कोर्स (9 होल)	40.00
मैसर्स एरिना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/ए2	बहुउद्देश्यीय खेल का मैदान	10.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	टेनिस केंद्र	35.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	स्विमिंग सेंटर (तैराकी केंद्र)	50.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	प्रो-शॉप्स/खाद्य एवं पेय पदार्थ	30.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	आईटी केंद्र/प्रशासन/मीडिया केंद्र	65.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	इंडोर बहुउद्देश्यीय हॉल, जिम्नास्टिक सहित खेल हॉल, टेबल टेनिस, स्क्वैश, बास्केटबॉल, वॉलीबॉल, बैडमिंटन, रॉक क्लाइंबिंग	30.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	क्रिकेट अकादमी	50.00
सभी	-	आंतरिक सड़कें और पार्क	25.00
मैसर्स ज़ानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01, सेक-78	अस्पताल/सीनियर लिविंग/चिकित्सा केंद्र	60.00
सभी	-	परिसंचरण स्थान, कारपेटिंग, उपयोगिताएँ आदि	15.00

17. याचिकाकर्ता ने पुनः 'जीरो पीरियड' के लाभ की मांग की, जिसे 30.12.2026 के पत्र के माध्यम से 5,50,729.30 वर्ग मीटर के भूखंड पर 31-01-2017 तक के लिए स्वीकार कर लिया गया। याचिकाकर्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि 48,520 वर्ग मीटर की अतिरिक्त भूमि आवंटित होने के बाद भी, वहाँ कुछ अतिक्रमण थे और भूखंडों का वास्तविक भौतिक कब्ज़ा सभी बाधाओं से मुक्त होकर नहीं सौंपा गया था।

18. इस जीरो पीरियड आदेश के बाद, 13-01-2017 के पत्र के माध्यम से, नोएडा प्राधिकरण ने याचिकाकर्ता के उप-पट्टे वाले भूखंड के लिए एक संशोधित भुगतान योजना जारी की, जिसके अनुसार नोएडा प्राधिकरण को भुगतान करने का आवंटि का दायित्व जीरो पीरियड के छह महीने बाद यानी 31 जनवरी 2017 से शुरू कर दिया गया; इस प्रकार संशोधित भुगतान योजना के तहत भुगतान 31 जुलाई 2017 से शुरू होकर 31 जनवरी 2025 तक होना था। जीरो पीरियड के इस निर्धारण और नोएडा प्राधिकरण द्वारा दी गई भुगतान योजना को उस समय चुनौती नहीं दी गई थी।

19. नोएडा प्राधिकरण ने 08-01-2018 के पत्र के माध्यम से 24,408 वर्ग मीटर अतिरिक्त भूमि और आवंटित की। इसके साथ ही याचिकाकर्ता को आवंटित कुल क्षेत्रफल 7,27,500 वर्ग मीटर हो गया।

20. याचिकाकर्ता ने एक अभ्यावेदन दिया जिसमें यह दावा किया गया कि स्पोर्ट्स सिटी के लिए पूरी भूमि बाधाओं से मुक्त आवंटित नहीं की गई थी, और आवंटित भूमि का कब्ज़ा भी नहीं दिया गया था। और इसलिए नोएडा प्राधिकरण को देय किशतों के भुगतान की मांग भी नहीं करनी चाहिए। चूंकि नोएडा प्राधिकरण द्वारा इस प्रतिवेदन पर कोई निर्णय नहीं लिया गया था, इसलिए याचिकाकर्ता ने निम्नलिखित राहतों की मांग करते हुए वर्तमान रिट याचिका दायर की है:-

"i. प्रतिपक्षी संख्या 3 को यह आदेश देने के लिए एक 'परमादेश' की प्रकृति में रिट या निर्देश जारी किया जाए कि वह प्लॉट नंबर एससी-01/ए2, एससी-01/बी1, एससी-01/सी1, एससी-01/सी3, एससी-01/सी4, एससी-01/सी5, एससी-01/सी6, एससी-01/सी7, एससी-01/सी8, सेक्टर 79 और प्लॉट नंबर 01/ए एवं प्लॉट नंबर 01/बी, सेक्टर 101, तथा प्लॉट नंबर एससी-01, सेक्टर 78, नोएडा की बाधा-मुक्त भूमि का कब्ज़ा सौंपे, जैसा कि प्रतिपक्षी संख्या 3 द्वारा याचिकाकर्ता को आवंटित और पट्टे पर दिया गया है, जिसे भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत अधिग्रहित किया गया था और अपर जिला मजिस्ट्रेट (भूमि अधिग्रहण) द्वारा प्रतिपक्षी संख्या 3 को पहले ही सौंपा जा चुका है।

i (ए). अभिलेखों को तलब करने और दिनांक 21-08-2019 एवं 12-09-2019 के आक्षेपित नोटिसों को रद्द करने के लिए 'उत्प्रेषण' रिट या निर्देश जारी करना।

ii. प्रतिपक्षी संख्या 3 को 01.02.2017 से आज तक कोई भी पट्टा किराया लगाने या वसूलने से रोकने के लिए एक उचित रिट, आदेश या 'परमादेश' की प्रकृति का निर्देश जारी करना।

iii. प्रतिपक्षी संख्या 3 को 01.02.2017 से आज तक भूमि प्रीमियम पर कोई भी ब्याज या दंडात्मक ब्याज लगाने या वसूलने से रोकने के लिए एक उचित रिट, आदेश या 'परमादेश' की प्रकृति का निर्देश जारी करना।

iv. कोई अन्य आदेश या निर्देश जारी करना जो माननीय न्यायालय मामले की परिस्थितियों में उचित और ठीक समझे।

v. इस याचिका का खर्च याचिकाकर्ता को दिलाना।"

21. ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता संख्या 1 ने डिबेंचर (ऋणपत्र) जारी करके कुछ ऋण लिया था। याचिकाकर्ता इस ऋण को चुकाने में सक्षम नहीं रहा है। परिणामस्वरूप, इस रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान डिबेंचर ट्रस्टी ने दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 की धारा 7 के तहत एक आवेदन दायर किया है। आईबी कोड, 2016 की धारा 7 के तहत आवेदन को एनसीएलटी द्वारा स्वीकार कर लिया गया है और एक आईआरपी नियुक्त किया गया है, जिसने याचिकाकर्ता का स्थान ले लिया है।

घ. याचिकाकर्ताओं की ओर से तर्क

22. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए 04-05-2011 के आवंटन पत्र के माध्यम से कंसोर्टियम को 7,27,500 वर्ग मीटर भूमि आवंटित की गई थी और केवल 5,92,300 वर्ग मीटर का ही कब्जा दिया गया था।

23. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह प्रस्तुत किया कि नोएडा ने उक्त आवंटन के तहत आवश्यक भूमि उपलब्ध न होने के बावजूद योजना जारी की और विभिन्न पक्षों के साथ संविदात्मक दायित्वों में प्रवेश किया। यह योजना 2011 में शुरू की गई थी जिसे 2017/2019 तक 100% विकसित किया जाना आवश्यक था। लेकिन तथ्य यह है कि भूमि की अनुपलब्धता के कारण कार्य शुरू नहीं किया जा सका। पूरी भूमि अभी भी नोएडा द्वारा उपलब्ध नहीं कराई गई है। नोएडा ने कुल परियोजना क्षेत्र के उप-पट्टे और उप-विभाजन की सुविधा प्रदान की है। हालांकि, स्पोर्ट्स सिटी के सभी पट्टेधारकों, सहायक कंपनियों और उप-विभाजित भूमि स्वामियों का एक एकीकृत और संयुक्त दायित्व होने के नाते, विकास के दृष्टिकोण से इसे एक समग्र परियोजना के रूप में देखा जाना चाहिए। सभी हितधारकों अर्थात् नोएडा स्पोर्ट्स सिटी-79 के आवंटियों, उप-आवंटियों, उप-पट्टेधारकों/सहायक कंपनियों को उनके द्वारा विकसित किए जा रहे एफ.ए.आर. के अनुपात में खेल के विकास के लिए आवश्यक राशि में योगदान देने का निर्देश दिया जाना चाहिए। नोएडा को स्पोर्ट्स सिटी की योजना और इच्छुक पक्षों द्वारा लिए जाने वाले योगदान पर विचार करते हुए किसी वरिष्ठ मध्यस्थ/सुलहकर्ता के तत्वावधान में एक सुलह प्रक्रिया के लिए सहमत होना चाहिए, ताकि 2011 की योजना के तहत स्पोर्ट्स सिटी को पूर्ण प्रभावी बनाया जा सके।

24. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि नोएडा प्राधिकरण, आज तक, याचिकाकर्ता को सन्निहित (एक साथ जुड़ी हुई) भूमि का खंड उपलब्ध कराने में सक्षम नहीं रहा है। स्पोर्ट्स सिटी योजना में जिस स्पोर्ट्स सिटी की परिकल्पना की गई है, उसे टुकड़ों में विकसित नहीं किया जा सकता है।

25. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि नोएडा पूरे भूमि खंड का कब्जा देने, स्पोर्ट्स सिटी के लिए आवश्यक बुनियादी ढांचे, पहुंच मार्ग और एप्रोच रोड का निर्माण, विकास और प्रावधान करने के लिए बाध्य था, जिसे नोएडा द्वारा अभी तक विकसित नहीं किया गया है।

26. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह दावा किया कि कुछ भूमि खंड, विशेष रूप से खसरा नंबर 770, जिस पर प्राधिकरण द्वारा स्पोर्ट्स सिटी के लिए बुनियादी ढांचा और पहुंच मार्ग बनाया जाना है, उसका अधिग्रहण नोएडा प्राधिकरण द्वारा किया जाना अभी शेष है। प्राधिकरण ने स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के लिए ऐसे किसी भी बुनियादी ढांचे, पहुंच मार्ग या एप्रोच रोड के अधिग्रहण, निर्माण और विकास के लिए कोई कार्रवाई नहीं की है।

27. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को आज तक सन्निहित भूमि का कब्जा नहीं दिया जा सका है। ग्राम सोहरखा जहिदाबाद, परगना, तहसील दादरी, जिला गौतम बुद्ध नगर के खसरा नंबर 765, 764, 124, 51, 49, 760, 755, 757, 758, 754, 746, 747, 70, 759, 753, 767, 770, 55, 67, 50 और 68 (जो नोएडा, जिला गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश के प्लॉट नंबर एससी-01-01, सेक्टर 78, 79 और 101 का हिस्सा हैं) अन्य व्यक्तियों की भूमि है, जो याचिकाकर्ता को पट्टे पर दिए गए भूमि खंड के बीच-बीच में और आर-पार फैली हुई है। सन्निहित भूमि खंड की अनुपलब्धता खेल सुविधाओं के विकास, विशेष रूप से अनिवार्य गोल्फ कोर्स के विकास को गंभीर रूप से प्रभावित कर रही है।

28. इसी पृष्ठभूमि में, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने पुरजोर तर्क दिया कि नोएडा प्राधिकरण को स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के लिए निर्धारित पूरी भूमि का कब्जा तुरंत याचिकाकर्ता को प्रदान करना चाहिए और तब तक किशतों तथा उन पर देय ब्याज के भुगतान की मांग नहीं करनी चाहिए, क्योंकि नोएडा प्राधिकरण अपने दायित्वों के हिस्से को पूरा करने में विफल रहा है।

ड. नोएडा प्राधिकरण की ओर से तर्क

29. नोएडा प्राधिकरण के विद्वान अधिवक्ता श्री कौशलेंद्र नाथ सिंह द्वारा सहायता प्राप्त विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनीष गोयल ने स्पोर्ट्स सिटी की योजना पर जोर दिया और निम्नलिखित दलीलें पेश कीं।

30. इस योजना के तहत, परियोजना प्रस्तावक से अंतरराष्ट्रीय मानकों को पूरा करने वाली एक अत्याधुनिक स्पोर्ट्स सिटी विकसित करना अपेक्षित था। इसके विकास से जुड़ी लागतों की प्रतिपूर्ति के लिए, कुल परियोजना

क्षेत्र का 30 प्रतिशत हिस्सा आवासीय और व्यावसायिक भाग के विकास के लिए आवंटित किया गया था, जिसका एफएआर 1.5 था।

31. यह परियोजना मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड की अध्यक्षता वाले एक कंसोर्टियम को आवंटित की गई थी। अग्रणी सदस्य होने के नाते मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट की कंसोर्टियम में 30 प्रतिशत हिस्सेदारी होनी चाहिए थी और शेष कंसोर्टियम आठ कंपनियों में विभाजित था, जिनमें मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्रा. लि., मेसर्स मेरिटन इन्फोटेक प्रा. लि., मेसर्स सतलज एगो प्रोडक्ट्स लि., मेसर्स ज़ानाडू इन्फ्राडेवलपर्स प्रा. लि., मेसर्स ज़ानाडू इन्फोटेक प्रा. लि., मेसर्स ज़ानाडू रीयलकॉन प्रा. लि., मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्रा. लि., मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्रा. लि. और मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्रा. लि. शामिल थे।

32. मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड का 100 प्रतिशत शेयर मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स नामक कंपनी के पास था (99.99 प्रतिशत शेयर और श्री सुप्रीत सिंह सूरी, जो मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स के नामांकित व्यक्ति थे, के पास 0.01% शेयर थे)।

33. कंसोर्टियम के सदस्य और कंसोर्टियम में उनकी शेयरधारिता निम्नानुसार थी:

क्रम संख्या	सदस्य	स्थिति	कंसोर्टियम (संघ) में प्रमुख और संबंधित सदस्य की शेयरधारिता का प्रतिशत
1	मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड	प्रमुख	30%
2	मेसर्स मेरिटन इन्फोटेक प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित	5%
3	मेसर्स सतलुज एगो प्रोडक्ट्स लिमिटेड	संबंधित	5%
4	मेसर्स ज़ानाडू इन्फ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित	10%
5	मेसर्स ज़ानाडू इन्फ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित	10%
6	मेसर्स ज़ानाडू रीयलकॉन प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित	10%
7	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित	10%
8	मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित	10%
9	मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित	10%
	योग		100%

34. इस स्पोर्ट्स सिटी के लिए 04-05-2011 को मूल आवंटन 7,27,500 वर्ग मीटर के लिए था। हालाँकि, कंसोर्टियम के सदस्यों को केवल 5,92,300 वर्ग मीटर भूमि ही सौंपी गई थी। शेष 1,07,595.20 वर्ग मीटर

भूमि अभी भी नोएडा प्राधिकरण के कब्जे में नहीं थी और इसलिए इसका कब्जा नहीं दिया जा सका और परियोजना प्रस्तावक को परियोजना भूमि का 80% आवंटित नहीं किया गया था।

35. 5,92,300 वर्ग मीटर में से केवल 5,33,528.80 वर्ग मीटर का कब्जा दिया गया था, इसलिए, 16-07-2012 को आयोजित बोर्ड बैठक (177वीं बैठक) में आवंटियों को 'जीरो पीरियड' का लाभ प्रदान किया गया। यह जीरो पीरियड आवंटन की तिथि से उस तिथि तक था जिस तिथि को परियोजना प्रस्तावक को 80 प्रतिशत भूमि का वास्तविक भौतिक कब्जा सौंपा जाना था।

36. तत्पश्चात, 19-10-2012 को नोएडा प्राधिकरण और आवंटियों के बीच एक शुद्धिपत्र विलेख निष्पादित किया गया, जिसमें जीरो पीरियड का लाभ दिया गया और भुगतान अनुसूची को भी पुनर्गठित किया गया।

37. 5,33,528.80 वर्ग मीटर भूमि पर, जो परियोजना प्रस्तावक को उपलब्ध कराई गई थी, परियोजना प्रस्तावक ने मास्टर ले-आउट योजना के अनुमोदन के लिए नोएडा प्राधिकरण को एक आवेदन दिया, जिसे प्राधिकरण द्वारा 16-11-2012 को अनुमोदित किया गया था।

38. नोएडा प्राधिकरण के बोर्ड ने 27-05-2013 को आयोजित अपनी 179वीं बैठक में यह प्रस्ताव पारित किया कि 48,520 वर्ग मीटर भूमि, जो कि निकटवर्ती सेक्टर 101 में थी, उसे अलग कर परियोजना प्रस्तावक को सौंप दिया जाए ताकि परियोजना भूमि की न्यूनतम 80% की आवश्यकता पूरी हो जाए और उसके पश्चात 'जीरो पीरियड' का लाभ समाप्त हो जाए। तदनुसार, नोएडा प्राधिकरण ने 21-06-2013 को याचिकाकर्ता संख्या 1 को अतिरिक्त भूमि के आवंटन और उसके कब्जे के साथ एक पत्र जारी किया, और इस आवंटन के साथ ही स्पोर्ट्स सिटी में परियोजना प्रस्तावक को आवंटित कुल भूमि 80% की सीमा से अधिक हो गई, जिसके परिणामस्वरूप 'जीरो पीरियड' लाभ की समाप्ति हो गई।

39. संपूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करने वाले मूल आवंटी ने पूरी स्पोर्ट्स सिटी में विकास के लिए एक मास्टर प्लान दायर किया। इसमें उन्होंने स्वयं कंसोर्टियम की प्रत्येक व्यक्तिगत कंपनी/सदस्य की भूमिका और उनके द्वारा किए जाने वाले विकास कार्यों को निर्धारित किया था। मानचित्र को 16.06.2014 को अनुमोदित किया गया था, जिसमें प्रत्येक कंपनी की भूमिका और दायित्वों को चिन्हित किया गया था और नोएडा प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित किया गया था। चार्ट, जो मानचित्र का हिस्सा है, प्रत्येक कंपनी की भूमिका और उनके दायित्वों को दर्शाता है, जिन्हें उन्होंने एक आंतरिक व्यवस्था के रूप में ब्रोशर के अनुसार लागत के साथ स्वयं को सौंपा था, जो कि निम्नानुसार थे:-

खेल सुविधाएँ			
सहायक कंपनियाँ	भूखंड संख्या	भूखंड में सुविधाएँ	न्यूनतम खर्च की जाने वाली

			राशि (करोड़ में)
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	गोल्फ कोर्स (9 होल)	40.00
मैसर्स एरिना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/ए2	बहुउद्देश्यीय खेल का मैदान	10.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	टेनिस केंद्र	35.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	स्विमिंग सेंटर (तैराकी केंद्र)	50.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	प्रो-शॉप्स/खाद्य एवं पेय पदार्थ	30.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	आईटी केंद्र/प्रशासन/मीडिया केंद्र	65.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	इंडोर बहुउद्देश्यीय हॉल, जिम्नास्टिक सहित खेल हॉल, टेबल टेनिस, स्क्वैश, बास्केटबॉल, वॉलीबॉल, बैडमिंटन, रॉक क्लाइंबिंग	30.00
मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	क्रिकेट अकादमी	50.00
सभी	-	आंतरिक सड़कें और पार्क	25.00
मैसर्स ज्ञानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01, सेक-78	अस्पताल/सीनियर लिविंग/चिकित्सा केंद्र	60.00
सभी	-	परिसंचरण स्थान, कारपेटिंग, उपयोगिताएँ आदि	15.00

40. हालाँकि, नोएडा प्राधिकरण ने एक बार फिर परियोजना प्रस्तावक को 'जीरो पीरियड' का लाभ प्रदान किया और जीरो पीरियड के लाभ को 31-01-2017 तक बढ़ा दिया गया।

41. इसी बीच, कुछ अन्य सदस्यों ने व्यक्तिगत रूप से अपनी परियोजना के आवासीय और व्यावसायिक हिस्से के निर्माण के लिए आवेदन किया था जिन्हें अनुमोदित कर दिया गया। ऐसा करते समय, किसी भी उप-

पट्टेदार/आवंटी ने कभी यह मुद्दा नहीं उठाया कि भूमि का कब्जा उनके पास नहीं था। वास्तव में, कुछ सदस्यों ने फ्लैटों का विज्ञापन और बुकिंग शुरू कर दी, और अपनी भूमि पर निर्माण कार्य भी शुरू कर दिया।

42. जीरो पीरियड का लाभ उठाने के बावजूद और नई भुगतान योजना के निष्पादन के बाद भी, याचिकाकर्ता कंपनी ने अभी तक देय किशतों का भुगतान नहीं किया और बकाया राशि के भुगतान के लिए 24.02.2015, 24.07.2023 और 30.08.2024 को नोटिस जारी किए गए। यहाँ याचिकाकर्ता पट्टा प्रीमियम का भुगतान करने में चूककर्ता रहे हैं और जब नोएडा प्राधिकरण ने उनसे पैसे देने के लिए कहा, तब यह वर्तमान याचिका केवल यह सुनिश्चित करने के लिए दायर की गई थी कि बकाया राशि का भुगतान न करने के कारण प्राधिकरण द्वारा उनके विरुद्ध कोई दंडात्मक/सख्त कार्रवाई न की जाए।

43. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि जिस तरह से नोएडा प्राधिकरण द्वारा चीजों को संशोधित/परिवर्तित किया गया था, वह काफी संदिग्ध था। सरकार बदलने के बाद ही इस घोटाले का खुलासा हुआ और ऑडिट को 'नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक' (बाद में सी.ए.जी. के रूप में संदर्भित) को सौंप दिया गया। राज्य सरकार ने एक बहुत ही सक्रिय रुख अपनाया और आवंटियों द्वारा की गई अवैधता के कारण मानचित्र का कोई विस्तार या पुनर्मूल्यांकन स्वीकार नहीं किया।

44. नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक ने मामले का मूल्यांकन किया और एक रिपोर्ट दी, जिसे सितंबर 2020 में पटल पर रखा गया। सी.ए.जी. द्वारा दी गई रिपोर्ट चौंकाने वाली थी और इसमें एक विशाल घोटाले का खुलासा हुआ। इसमें उल्लेख किया गया है कि कैसे नोएडा प्राधिकरण और राज्य सरकार को लगभग 9000 करोड़ रुपये का भारी नुकसान हुआ था। सी.ए.जी. द्वारा इंगित की गई कुछ स्पष्ट कमियां इस प्रकार हैं:-

"i. नोएडा प्राधिकरण ने स्पोर्ट्स सिटी का गलत मूल्य निर्धारण किया था।

ii. ब्रोशर के अनुसार केवल आवासीय और व्यावसायिक भूखंडों का ही विभाजन किया जा सकता था, लेकिन नोएडा प्राधिकरण ने उन पूरे भूखंडों का उप-विभाजन कर दिया, जो स्पोर्ट्स सिटी के लिए निर्धारित थे।

iii. आवंटियों की बोलियों की जांच नहीं की गई और भूखंड आवंटित करने से पहले उम्मीदवारों के टर्नओवर पर भी विचार नहीं किया गया।

iv. सबसे अधिक हिस्सेदारी रखने वाले अग्रणी सदस्य को परियोजना से पूरी तरह बाहर कर दिया गया था।

v. आवंटन विभिन्न अन्य कंपनियों को किया गया था, जो व्यक्तिगत रूप से वित्तीय बोली मूल्यांकन में योग्य नहीं हो सकती थीं; परिणामस्वरूप, ऐसी संदिग्ध पद्धति अपनाकर, नोएडा प्राधिकरण ने उन लोगों को भूखंड आवंटित कर दिए, जो व्यक्तिगत रूप से आवेदन करने के पात्र भी नहीं थे।

vi. नोएडा प्राधिकरण ने किशतों की बकाया राशि वसूलने की जहमत तक नहीं उठाई और आवंटियों को अनुचित और अवैध लाभ पहुँचाते हुए उनकी ओर से कभी कोई प्रयास नहीं किया गया।

vii. वित्त विभाग ने प्रत्येक आवंटी कंपनी को एक नया आवंटी मानते हुए एक नई भुगतान योजना जारी की। दूसरे और तीसरे हस्तांतरण के लिए हस्तांतरण शुल्क भी नहीं वसूला गया।

viii. पट्टा किराया भी वसूल नहीं किया गया था।

ix. सभी आवंटियों को व्यक्तिगत आवंटी मानते हुए उनके लिए अलग-अलग भुगतान योजनाएं जारी की गईं।"
(विशेष जोर दिया गया है)

45. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे यह प्रस्तुत किया कि संपूर्ण आवंटन और कुछ नहीं बल्कि एक घोटाला था, जिसमें तत्कालीन अधिकारियों ने बिल्डरों/आवंटियों को अनुचित लाभ पहुँचाने के लिए अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर कार्य किया। परियोजना के कार्यान्वयन का पूरा दायरा, योजना, स्पोर्ट्स सिटी ब्रोशर की शर्तों, आवंटन पत्र की शर्तों और पट्टा विलेखों के विपरीत था।

46. नीति, योजना और ब्रोशर के पूर्ण उल्लंघन में, आवंटियों को उक्त आवंटित भूमि पर निर्माण कार्य करने की अनुमति दी गई। सी.ए.जी. की रिपोर्ट उन बिल्डरों के साथ मिलीभगत से की गई अनुचितता को उजागर करती है जिसके परिणामस्वरूप इतना बड़ा घोटाला हुआ।

47. तत्पश्चात, 18.01.2021 को नोएडा की बोर्ड बैठक (201वीं बोर्ड बैठक) आयोजित की गई जिसमें यह संकल्प लिया गया कि सी.ए.जी. द्वारा इंगित की गई कमियों की जांच करने और रिपोर्ट देने के लिए 'लोक लेखा समिति' से सिफारिश की जानी चाहिए। एक अंतरिम उपाय के रूप में, यह भी संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी के विकास की दिशा में कोई कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए और न ही किसी मानचित्र को पुनर्मूल्यांकित किया जाना चाहिए। इसके अलावा, प्रस्तुत की गई रिपोर्ट के आधार पर, 25.06.2021 को आयोजित अगली बोर्ड बैठक (202वीं) में यह संकल्प लिया गया कि आवश्यक मार्गदर्शन और निर्देश के लिए मामले को राज्य सरकार को संदर्भित किया जाए।

48. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि कंसोर्टियम के अग्रणी सदस्य के अनुरोध पर ही इसके सदस्यों या इसकी सहायक कंपनियों के पक्ष में व्यक्तिगत पट्टा विलेख निष्पादित किए गए थे, और यह आवंटन पत्र के साथ-साथ स्पोर्ट्स सिटी योजना के अनुसरण में था। इसके अलावा, स्पोर्ट्स सिटी को एक एकीकृत परियोजना के रूप में विकसित किया जाना था। चूंकि, सभी उप-पट्टेदार कंसोर्टियम के नियमित सदस्यों की 100% सहायक कंपनियां थीं और ब्रोशर, आवंटन पत्र एवं पट्टे की शर्तों व नियमों से बाध्य थीं, इसलिए सभी सहायक कंपनियां स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को विकसित करने के दायित्व के अधीन थीं और वे पट्टा

विलेख में उल्लिखित मूल नियमों और शर्तों से बंधी हुई हैं। यह उप-विभाजन परियोजना के उचित कार्यान्वयन के लिए आवंटियों के अनुरोध पर किया गया महज एक आवंटन था और यह कोई नया लेनदेन/आवंटन नहीं है।

49. उप-पट्टेदारों के पक्ष में व्यक्तिगत रूप से लेआउट प्लान स्वीकृत करने के लिए नोएडा प्राधिकरण को कड़ी फटकार लगाई गई है। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सहायक कंपनी के पक्ष में किया गया उप-विभाजन स्वतंत्र रूप से उस सहायक कंपनी पर बाध्यकारी है। सहायक कंपनी को पट्टे की मूल शर्तों में निहित दायित्वों का पालन करना है और स्पोर्ट्स सिटी परियोजना का विकास करना है, और वह किसी स्वतंत्र परियोजना के लिए किसी स्वतंत्र अस्तित्व का दावा नहीं कर सकती है।

50. स्वीकृत योजना में स्पष्ट रूप से यह खंड शामिल है कि खेल सुविधाओं का विकास उप-पट्टेदार द्वारा किया जाना है। मास्टर लेआउट योजना याचिकाकर्ता मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्रा. लि. द्वारा प्रस्तुत की गई थी, जो 7.27 लाख वर्ग मीटर भूमि में से केवल 2.5 लाख वर्ग मीटर भूमि के लिए एक विशेष प्रयोजन कंपनी है। हालांकि, इसने संपूर्ण 7.27 लाख वर्ग मीटर भूमि के लिए मास्टर लेआउट योजना प्रदान करने की प्रक्रिया अपनाई। याचिकाकर्ता द्वारा इस आधार पर किसी भी अपरिहार्य अधिकार का दावा नहीं किया जा सकता कि उनके पक्ष में एक योजना स्वीकृत की गई है। योजना की प्रस्तुति याचिकाकर्ता की अपनी गलत कार्यप्रणाली थी जिसका वे लाभ नहीं उठा सकते।

51. याचिकाकर्ता अनुचित रूप से अधिकार का दावा नहीं कर सकता, विशेष रूप से तब, जब लेआउट योजना नोएडा प्राधिकरण द्वारा तैयार नहीं की गई थी, बल्कि याचिकाकर्ता द्वारा स्वयं तैयार की गई थी और जानबूझकर खेल सुविधा विकसित करने की जिम्मेदारी ली गई थी, हालांकि याचिकाकर्ता का ऐसा करने का कोई इरादा नहीं था।

52. मानचित्र की स्वीकृति, भले ही वह अस्तित्व में हो, उसे योजना और पट्टा विलेख के साथ-साथ वैधानिक प्रावधानों के साथ पढ़ा जाना चाहिए। अधिनियम, ब्रोशर, आवंटन और पट्टा विलेख के प्रावधानों के विपरीत कोई भी स्वीकृति अपने आप में एक विचलन होगी और इस विचलन को कानून के तहत मान्यता नहीं दी गई है। इसलिए, यहाँ 'ग्रंडनोर्म सिद्धांत' लागू होगा।

53. पिछले 10 वर्षों में, याचिकाकर्ता (मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर प्रा. लि.), या कंसोर्टियम के किसी अन्य सदस्य या उनके उप-पट्टेदार ने पूरी स्पोर्ट्स सिटी परियोजना में किसी भी खेल सुविधा का विकास नहीं किया था, जो कि याचिकाकर्ता के दुर्भावनापूर्ण इरादे के कारण था, जिसका शुरु से ही खेल सुविधा विकसित करने का कोई इरादा नहीं था।

54. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि यह 'कॉर्पोरेट आवरण हटाने' और यह देखने का एक सटीक मामला है कि क्या कंपनियों का गठन एक सुनियोजित कुटिल योजना/घोटाले के तहत किया गया था, या यह व्यवसाय के सामान्य क्रम में किया गया था।

55. श्री मनीष गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे यह प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध शुरू की गई 'कॉर्पोरेट दिवाला प्रक्रिया' एक सोची-समझी साजिश थी और यह याचिकाकर्ता की एक कुटिल योजना का परिणाम और स्पोर्ट्स सिटी परियोजना की खेल सुविधाओं के विकास की पूरी जिम्मेदारी से बचने के लिए किया गया एक छल मात्र है। यहाँ याचिकाकर्ता के प्रमोटरों ने कंपनियों का एक जाल बनाया था और उन्होंने अन्य सदस्यों/सहायक कंपनियों के पक्ष में विभिन्न पट्टा विलेखों को निष्पादित करने का अनुरोध किया था, जो पूरी तरह से प्रमोटरों (अर्थात् निर्मल सिंह, सुप्रीत सिंह सूरी और विदुर भारद्वाज) द्वारा स्वामित्व और नियंत्रित थीं। उनके अनुरोध पर, नोएडा प्राधिकरण ने विभिन्न उप-पट्टे निष्पादित किए थे, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि समय के साथ उन्होंने नोएडा प्राधिकरण से अनुमति लिए बिना और परियोजना के पहले मील के पथर को पूरा किए बिना ही, जो कि ऐसे हस्तांतरण की पूर्व-शर्त थी, कंपनियों को बेच दिया या उनके शेयर तीसरे पक्ष/संस्थाओं को हस्तांतरित कर दिए।

56. चूंकि इस मामले में एक ही प्रमोटरों द्वारा कंपनियों का एक जाल बनाया गया है और उनकी सभी नई निगमित कंपनियों ने एक कंसोर्टियम के रूप में आवेदन किया, और उसके बाद स्पोर्ट्स सिटी योजना के प्रावधानों के विपरीत, प्राधिकरण की अनुमति के बिना कुछ कंपनियों में शेयर होल्डिंग्स बदल दी गई हैं। इसलिए, कॉर्पोरेट आवरण को हटाना और यह देखना आवश्यक है कि इस विफलता के लिए कौन लोग/संस्था जिम्मेदार हैं।

57. हालाँकि, वर्तमान मामले में, कंसोर्टियम बनाने वाली कंपनियों की अलग कानूनी पहचान का उपयोग सदस्यों के उन कानूनी दायित्वों से बचने के लिए किया गया है, जो एक एकीकृत पूर्ण के रूप में स्पोर्ट्स सिटी के विकास के प्रति संयुक्त और व्यक्तिगत रूप से उनके पास थे। कॉर्पोरेट आवरण को हटाने से ही कंपनियों की वास्तविक प्रकृति का पता चलेगा और उन व्यक्तियों की पहचान होगी जो उन पर वास्तविक नियंत्रण रखते हैं, ताकि ऐसे व्यक्तियों को सीधे उत्तरदायी ठहराया जा सके।

58. वर्तमान स्थिति का एक व्यापक और समावेशी विश्लेषण यह प्रकट करता है कि वास्तव में व्यक्तियों के उसी समूह ने स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को एक एकीकृत पूर्ण के रूप में विकसित करने के लिए प्राधिकरण से पट्टे प्राप्त करने हेतु कई कंपनियां बनाईं। हालाँकि, परियोजना के एकीकृत विकास के प्रति अपने दायित्व का निर्वहन करने के बजाय, व्यक्तियों के उपर्युक्त समूह ने, जो प्रभावी रूप से कंसोर्टियम के सभी सदस्यों के पीछे थे, स्वतंत्र कंपनियां होने की आड़ में केवल छोटी कंपनियों को बहुत उच्च प्रीमियम पर बेचने पर ध्यान केंद्रित किया और फिर भी नोएडा प्राधिकरण के बकाया का भुगतान नहीं किया, और बाद में स्वयं को दिवालिया घोषित करवा लिया।

59. चूंकि कंपनियों और उनके निदेशकों (जो स्पष्ट रूप से व्यक्तियों का वही समूह थे जिन्होंने कई कंपनियां बनाई थीं) के बीच की भेद-रेखा धुंधली है और कंपनियां केवल अपने स्वामियों के 'ऑल्टर ईगो' (प्रतिरूप) के रूप में कार्य करती हैं जो अपनी कानूनी जिम्मेदारी से बच रहे हैं, इसलिए कॉर्पोरेट आवरण हटाने के लिए 'ऑल्टर ईगो' का सिद्धांत लागू हो जाता है।

60. इसके अतिरिक्त, चूंकि सभी व्यक्तिगत कंपनियों के पीछे निदेशकों का वही समूह कंपनियों द्वारा लिए गए दायित्वों को निभाने के बजाय अपने स्वयं के लाभ के लिए अलग-अलग कॉर्पोरेट संस्थाओं का उपयोग कर रहा है, इसलिए कॉर्पोरेट आवरण हटाने के लिए 'इंस्ट्रुमेंटैलिटी' (साधनता) का सिद्धांत भी लागू होता है।

61. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे यह प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामले में कॉर्पोरेट आवरण हटाने का कारण नोएडा प्राधिकरण और राज्य के बकाया की चोरी को रोकना है, और अन्य संबंधित कंपनियों (जो अटूट रूप से जुड़ी हुई हैं और एक इकाई के रूप में गठित हैं) को अवैध उद्देश्यों के लिए मुखौटे के रूप में उपयोग किए जाने से रोकना है; साथ ही इसमें शामिल लेनदेन की वास्तविक प्रकृति की पहचान करना, हो रहे छल को रोकना और सार्वजनिक हित के साथ-साथ घर खरीदारों के हितों को सुरक्षित करना है। अपने तर्क की पुष्टि करने के लिए, उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा जताया है:

(i) उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम रेनूसागर पावर कंपनी और अन्य

(ii) दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी और अन्य

(iii) शुभा मुखर्जी बनाम भारत कोकिंग कोल लिमिटेड

(iv) राजस्थान राज्य बनाम गोटेन लाइमस्टोन खनिज उद्योग प्राइवेट लिमिटेड और अन्य

62. स्पोर्ट्स सिटी की परियोजना को कंसोर्टियम द्वारा एक पट्टेदार के रूप में पूरा किया जाना है और इसलिए, कंसोर्टियम का कोई भी सदस्य यह आरोप लगाते हुए नहीं भाग सकता कि वह दिवालियापन की वैधानिक प्रक्रिया के माध्यम से विघटित हो गया है। अपने तर्क की पुष्टि करने के लिए, उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय और एन.सी.एल.ए.टी. द्वारा पारित निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा जताया है:

(i) एशिया फाउंडेशन्स एण्ड कंस्ट्रक्शंस लिमिटेड बनाम गुजरात राज्य और अन्य

(ii) हाइटोन मर्चेण्ट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम शताब्दी इन्वेस्टमेंट कंसल्टेंट्स प्राइवेट लिमिटेड

(iii) विदर्भ इंडस्ट्रीज पावर लिमिटेड बनाम एक्सिस बैंक लिमिटेड

(iv) रास्टर इमेजेस प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य

63. यद्यपि ब्रोशर के अनुसार, परियोजना का कार्यान्वयन नोएडा प्राधिकरण का कर्तव्य था, किन्तु चूंकि विकास कार्य नहीं किया गया और योजना एवं पट्टा विलेख के तहत अनिवार्य खेल सुविधाओं का विकास नहीं किया गया। चौंकाने वाली बात यह है कि कार्यान्वयन की निगरानी के लिए कुछ भी नहीं किया गया। इसके विपरीत, उनकी कार्रवाई ब्रोशर और स्पोर्ट्स सिटी परियोजना की योजना के पूरी तरह प्रतिकूल थी और आवंटन पत्र तथा पट्टा विलेख के नियमों व शर्तों के भी विपरीत थी। यह पूरा घोटाला, जिससे राज्य और नोएडा प्राधिकरण को लगभग 9000 करोड़ रुपये की हानि हुई, बिल्डरों/आवंटियों और नोएडा प्राधिकरण के तत्कालीन अधिकारियों की मिलीभगत से किया गया था।

64. आर.ओ.सी. के अनुसार, आवंटन के बाद आवंटी/उप-आवंटी कंपनियों की शेयर होल्डिंग में बदलाव हुआ है, जबकि योजना और ब्रोशर में इसकी अनुमति नहीं थी। यह नोएडा प्राधिकरण की अनुमति के बिना किया गया था। आवंटित कंपनियों के नाम, निदेशकों, आवंटन के समय शेयर होल्डिंग और आर.ओ.सी. के अनुसार वर्तमान शेयर होल्डिंग को दर्शाने वाला चार्ट निम्नानुसार है:-

क्रम संख्या	भूखण्ड संख्या	आवंटी का नाम	उप-विभाजन का दिनांक	आवंटन के समय निदेशक तथा शेयरहोल्डर	आरओसी के रिकॉर्ड के अनुसार वर्तमान निदेशक	आरओसी के रिकॉर्ड के अनुसार वर्तमान शेयरधारक
1	एससी-01-01/78	मेसर्स जैनाडू इन्फ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	24.10.2011	मेसर्स जैनाडू इन्फ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की 100% शेयर होल्डिंग कंपनी)- निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज	अतिरिक्त निदेशक - 1. विनय कुमार मिश्रा 2. सतीश कुमार तिवारी 3. समीर सागर वशिष्ठ	शेयरधारक (31.3.2017 तक)

				3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी		
2	एससी-01/ए-अल्फा/79	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	16.06.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी	निदेशक 1. अनूप कुमार श्रीवास्तव 2. मनोज कुमार सिंह 3. दिलीप कुमार	शेयरधारक: (31.03.2020 तक) मेसर्स अजनारा इंडिया लिमिटेड (99.94%) श्री प्रमोद कुमार गुप्ता (0.01%) श्री अशोक कुमार गुप्ता (0.01%) श्री विनोद कुमार गुप्ता (0.01%) श्रीमती ममता गुप्ता (0.01%) श्रीमती पद्मा गुप्ता (0.01%) श्रीमती गीता गुप्ता (0.01%)
3	एससी-01/ए-आई(बीटा0/79	मेसर्स पिनेकल सुपर स्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड	16.06.2014	निदेशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश कुमार पाहवा शेयरधारक 1. मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड, श्री निर्मल सिंह के माध्यम से (99.99 शेयर)	निदेशक:- 1. गुरिंदर सिंह सिक्का 2. अखिल गुप्ता	शेयरधारक:- (31.3.2019 तक) 1. सारा बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड (75%) 2. सिक्का प्रमोटर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)

				2. श्री दीपक खुराना (नामित, सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड) (00.01)		
4	एससी-01/ए-2/79	मेसर्स एरीना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	16.06.2014	निदेशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश कुमार पाहवा शेयरधारक 1. मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड, श्री निर्मल सिंह के माध्यम से (99.99 शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (नामित, सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड) (00.01)	निदेशक:- 1. शाह आलम 2. जगत सिंह ठाकुर 3. नीरज कुमार सिन्हा 4. जॉय जॉर्ज	शेयरधारक (12.08.2023 तक) 1. शाह आलम - (9%) 2. पूर्वचल प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (91%) एरीना सुपरस्ट्रक्चर दिवाला प्रक्रिया में चली गई
5	एससी-01/बी-1/79	मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक	निदेशक:- 1. भूपिंदर सिंह कोचर 2. अजय खेत्रपाल 3. आनंद गोयल 4. प्रशांत अग्रवाल	शेयरधारक (31.3.2024 तक) श्री प्रदीप जैन (22%) श्री भूपिंदर सिंह कोचर (22%) श्री अजय खेत्रपाल सिंह श्री

				1. मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर) 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की ओर से नामित के रूप में) (00.01)	5. प्रदीप जैन 6. मुनीश खेर	आनंद गोयल (12%) श्री मुनीश खेर (6%) श्रीमती मीनू खेर (5%) श्री प्रशांत अग्रवाल (6%) श्रीमती पूजा अग्रवाल (5%)
6	एससी-01/बी-2/79	मैसर्स गोल्फ ग्रीन बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	शेयरधारक	निदेशक: 1. बबलू कुमार 2. दीना राम	शेयरधारक (31.3.2014 तक) 1. सिल्वर सैंड्स बिल्डमार्ट प्राइवेट लिमिटेड - (25%) 2. जेफिर प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड - (25%) 3. अरुण कुमार घई - (50%)
7	एससी-01/सी-1/79	मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी	निदेशक:- 1. आनंद राम 2. गिरीश चंद जोशी	शेयरधारक (31.3.2014 तक) मैसर्स ज्ञानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (75%) मैसर्स ज्ञानाडू इन्फ्राडेवलपर्स

				शेयरधारक 1. मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)		प्राइवेट लिमिटेड (25%)
8	एससी-01/सी-2/79	मैसर्स रोबस्ट इनोवेशन प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक 1. मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के	निदेशक:- 1. अश्विनी कुमार गुप्ता 2. करन सागर अग्रवाल	शेयरधारक (31.3.2024 तक): श्री अरविंद गोयल (50%) श्री अश्वनी कुमार गुप्ता (50%)

				नामित) (00.01 शेयर)		
9	एससी-01/सी- 3/79	मैसर्स पीयूष आईटी सॉल्यूशन प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1. मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)	निदेशक:- 1. नवीन 2. गोपाल सिंह	शेयरधारक (31.3.2020 तक): मैसर्स एमिनेंट होम्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) श्री निर्मल सिंह (मैसर्स एमिनेंट होम्स प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित व्यक्ति) (0.01%)
10	एससी-01/सी- 4/79	मैसर्स श्री सी इन्फ्राक्रिएशन प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:-	निदेशक:- 1. दीपक मल्होत्रा 2. हर्षित सिंह 3. अखिलेश मिश्रा	शेयरधारक:- मैसर्स अभी कॉर्पोरेशन प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) दीपक मल्होत्रा (मैसर्स एपीसीएल प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित

				1. मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)		व्यक्ति) (0.01%)
11	एससी-01/सी-5/79	मेसर्स श्री सी सिटी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1. मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के	निदेशक:- 1. जगदीप सिंह गिल 2. प्रदीप सिंह राठी	शेयरधारक (2023-2024): श्री अजय कुमार (70%) श्री प्रताप सिंह राठी (10%) श्री प्रवीण कुरेले (20%)

				नामित) (00.01 शेयर)		
12	एससी-01/सी- 6/79	मैसर्स वॉटर पर्ल इन्फोसॉफ्ट टेक प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1. मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)	निदेशक:- 1. राकेश कुमार अग्रवाल 2. पंकज कुमार गर्ग 3. मधुर गर्ग 4. सुमित गर्ग 5. सचिन गोयल 6. सनी अग्रवाल 7. निकुंज गर्ग 8. खुशबू अग्रवाल 9. आकाश गर्ग	शेयरधारक (31.3.2024 तक): श्री धनेश चंद अग्रवाल (9%) श्री धनेश चंद अग्रवाल एवं पुत्र (हिंदू अविभाजित परिवार) (6%) श्रीमती अपर्णा अग्रवाल (5%) श्री महेश चंद गोयल (हिंदू अविभाजित परिवार) (5%) श्री महेश चंद गोयल (8%) श्री अभिनव गोयल (7.5%) श्री सचिन गोयल (20%) श्री दिनेश गर्ग (20%) श्रीमती नूतन गर्ग (2.5%) श्री सुमित गर्ग (2.5%) श्री मधुर गर्ग (2.5%) श्रीमती शिखा गर्ग (2.5%)

						श्री राकेश कुमार अग्रवाल (10%)
13	एससी-01/सी- 7/79	मैसर्स श्री सी बिल्डर प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1. मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)	अतिरिक्त निदेशक:- 1. विनय कुमार मिश्रा 2. सतीश कुमार तिवारी 3. समीर सागर वशिष्ठ	शेयरधारक (31.3.2017 तक) मैसर्स लोटस ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स यशाली डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स लॉरेल रेजिडेंसी प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स इंफ्राविज प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)
14	एससी-01/सी- 8/79	मैसर्स श्री सी बिल्डर प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:-	निदेशक:- 1. विनय कुमार मिश्रा 2. सतीश कुमार तिवारी 3. समीर सागर वशिष्ठ	शेयरधारक (31.3.2017 तक) मैसर्स लोटस ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स यशाली डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)

				1. मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)		मैसर्स लॉरेल रेजिडेंसी प्राइवेट लिमिटेड (25%) मैसर्स इंफ्राविज़ प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)
15	एससी-01/ डी-1/79	मैसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1. मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के	निदेशक:- 1. पीयूष तिवारी 2. शिखा तिवारी 3. आस्था गुप्ता 4. हर्षदीप गाँधी	शेयरधारक (30.9.2014 तक) 1. श्री पीयूष तिवारी (55%) 2. सुश्री शिखा तिवारी (5%) 3. मैसर्स सनव्हाइट इंफ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड (40%)

				नामित) (00.01 शेयर)		
16	एससी-01/ डी-2/79	मैसर्स गोल्फ ग्रीन रेजिडेंस प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा शेयरधारक:- 1. मैसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (मैसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट के नामित) (00.01 शेयर)	अपर निदेशक:- 1. अनिल प्रकाश शर्मा 2. कृष्ण कुमार 3. राहुल यादव 4. उषा सर्गाफ	शेयरधारक (31.3.2020 तक) मैसर्स सनशाइन इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) सनशाइन इंफ्राहॉम्स प्राइवेट लिमिटेड (0.01%)
17	एससी-01/ डी-3/79	मैसर्स गोल्फ ग्रीन एस्टेट प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा शेयरधारक:- 1. मैसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (मैसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित व्यक्ति) (0.01% शेयर)	निदेशक:- 1. दिनेश कुमार जैन राकेश कुमार 2. जैन	शेयरधारक (31.3.2023 तक) 1. एक्सोटिका हाउसिंग एंड इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) 2. श्री दिनेश कुमार जैन (एक्सोटिका हाउसिंग एंड इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित

						व्यक्ति के रूप में) (0.01%)
18	एससी-01/डी-4/79	मैसर्स गोल्फ ग्रीन मैशंस प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा शेयरधारक:- 1. मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री विदुर भारद्वाज 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)	निदेशक:- 1. विनोद बहल 2. प्रमोद बहल 3. विकास गुप्ता 4. उमा शंकर	शेयरधारक (31.3.2024 तक) श्री विनोद बहल (25%) श्री प्रमोद बहल (25%) श्री उमा शंकर (25%) श्री अमिताभ गुप्ता (25%)
19	एससी-01/ई-1/79	मैसर्स गौरसंस स्पोर्ट्सवुड प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा शेयरधारक:- 1. मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री विदुर भारद्वाज	निदेशक:- 1. मनोज गौर 2. सार्थक गौर	शेयरधारक (31.3.2024 तक) 1. मनोज कुमार गौड़ (4.65%) 2. श्रीमती मंजू गौड़ (4.66%) 3. गौड़संस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड (41.92%)

				2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)		4. श्री श्याम बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड (41.92%) 5. श्री प्रदीप कुमार अग्रवाला (6.85%)
20	एससी-01/ई-2/79	मैसर्स गोल्फ ग्रीन इन्फ्रा प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश पाहवा शेयरधारक:- 1. मैसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (मैसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित व्यक्ति के रूप में) (0.01% शेयर)	निदेशक:- 1. धीरज जैन 2. श्रुति जैन 3. दिव्या जैन 4. अमित जैन	शेयरधारक (31.3.2023 तक) मैसर्स महागुन इंडिया प्राइवेट लिमिटेड (9.99%) आईसीआईसीआई प्रूडेंशियल वेंचर कैपिटल फंड रियल एस्टेट्स (0.01%) गौड़ संस स्पोर्ट्स वुड प्राइवेट लिमिटेड (90%)
21	एससी-01/ई-3/79	मैसर्स गोल्फ ग्रीन सुपरस्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	शेयरधारक:- 1. मैसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (मैसर्स ज़ानाडू	निदेशक:- 1. जय प्रकाश गुप्ता 2. अल्का गोयल	शेयरधारक (31.3.2023 तक) 1. सिविलटेक हाउसिंग इंडिया प्राइवेट लिमिटेड (85.71%)

				रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड के नामांकित व्यक्ति के रूप में) (0.01% शेयर)		2. सुबोध गोयल (7.14%) 3. अलका गोयल (7.14%)
22	एससी-01/ए/101	मैसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	03.07.2013	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1. मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मैसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)	निदेशक:- 1. आनंद राम 2. गिरीश चंद्र जोशी	शेयरधारक: मैसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (75%) मैसर्स ज़ानाडू इंफ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)
23	एससी-01/बी/101	मैसर्स गोल्फ ग्रीन बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	03.07.2013	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज	निदेशक:- 1. आनंद राम 2. गिरीश चंद्र जोशी	शेयरधारक: मैसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (75%) मैसर्स ज़ानाडू इंफ्रास्ट्रक्चर

				3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1. मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर), द्वारा श्री निर्मल सिंह 2. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नामित) (00.01 शेयर)		प्राइवेट लिमिटेड (25%)

65. यह तालिका दर्शाती है कि कैसे आवंटियों ने योजना या पट्टे विलेख (लीज डीड) की शर्तों के पूर्ण उल्लंघन में, नोएडा प्राधिकरण से अनुमति लिए बिना, अत्यधिक प्रीमियम पर अन्य बिल्डरों को भूमि/परियोजना बेच दी है और नोएडा प्राधिकरण की कीमत पर इससे भारी लाभ कमाया है। वास्तव में यह दर्शाता है कि मूल प्रवर्तकों ने आवंटन राशि का केवल 10% भुगतान करके परियोजना आवंटित करवाई और फिर उसे विभाजित और उप-विभाजित किया, और उसके बाद, पूरी स्पोर्ट्स सिटी को विभिन्न छोटे बिल्डरों को बेच दिया और पूरी बिक्री राशि अपनी जेब में रख ली।

66. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने पुरजोर तर्क दिया कि वर्तमान रिट याचिका नोएडा प्राधिकरण को बकाया राशि का भुगतान न करने और आवासीय तथा वाणिज्यिक सुविधाओं के पूरा होने से पहले खेल सुविधाओं को पूरा न करने के कारण याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध कोई भी गंभीर कार्रवाई करने से रोकने का एक प्रयास मात्र है।

च. विश्लेषण

67. हमने संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत दलीलों पर ध्यानपूर्वक विचार किया है। उनकी सक्षम सहायता से, हमने याचिकाओं में ली गई दलीलों, आधारों और उनके साथ संलग्न अनुलग्नकों का अवलोकन किया है।

68. यह मामला बिल्डरों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के बीच भ्रष्टाचार के एक बड़े सांठगांठ को उजागर करता है, जिसके परिणामस्वरूप सार्वजनिक विश्वास का घोर उल्लंघन, धोखाधड़ीपूर्ण व्यवहार और कैग (CAG) की रिपोर्ट के अनुसार नोएडा प्राधिकरण को लगभग 9000 करोड़ रुपये की संभावित वित्तीय हानि हुई है। इस संदर्भ में, यह मामला हमें पिछली कार्रवाइयों और उनके परिणामों के साथ-साथ भविष्य के समाधानों पर ध्यान देने की मांग करता है।

छ. पिछले आचरण का प्रभाव

69. यदि हम नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों की मिलीभगत से बिल्डरों (उप-पट्टेदारों) द्वारा की गई अवैधताओं की अनदेखी करते हैं, तो हम अपने कर्तव्य में चूक करेंगे। यह मामला एक बड़े भूमी घोटाले में बदल गया है और कैग के अनुसार, इससे नोएडा प्राधिकरण, राज्य सरकार और आम जनता को भारी नुकसान हुआ है। हम कैग की रिपोर्ट पर प्राधिकरण द्वारा दिखाई गई चिंता की पूर्ण कमी को नोट करने के लिए मजबूर हैं और हमें आश्चर्य है कि इस बड़े पैमाने के घोटाले में शामिल बिल्डरों/आवंटियों/उप-पट्टेदारों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के खिलाफ कोई कार्रवाई क्यों नहीं की गई है।

70. घटनाओं का घटनाक्रम, नोएडा प्राधिकरण की पूर्ण निष्क्रियता और कैग की रिपोर्ट के सामने राज्य सरकार की उदासीनता हमें इस मामले में उपयुक्त आदेश पारित करने के लिए मजबूर करती है। एक अदालत, विशेष रूप से एक संवैधानिक अदालत, घोर अवैधताओं और स्पष्ट मिलीभगत के सामने असहाय होकर नहीं बैठ सकती। इस न्यायालय के पास, संविधान के अनुच्छेद २२६ के तहत, अकथनीय अवैधता और सार्वजनिक धन की हानि के मामले में उचित आदेश पारित करने की शक्ति है। यह न्यायालय, इन स्पष्ट तथ्यों के आधार पर, बिल्डरों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के बीच मिलीभगत के इस प्रत्यक्ष मामले का संज्ञान ले सकता है, और लेता भी है, जिसका उद्देश्य उन्हें अनुचित लाभ पहुँचाना और राज्य के खजाने को नुकसान पहुँचाना है, साथ ही कैग की रिपोर्ट के प्रति जानबूझकर आँखें मूँद लेना है। ऐसा करके, उन्होंने घर खरीदारों के लिए भी एक कठिन स्थिति पैदा कर दी है, जो समस्या को और अधिक जटिल बना रही है।

71. निम्नलिखित विश्लेषण, निष्कर्ष और हमारे आगामी निर्देश कदाचार को संबोधित करने और प्रभावित हितधारकों को राहत प्रदान करने के उद्देश्य से हैं:

ज. नोएडा में स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए योजना- 2010-2011 और उसका उल्लंघन

72. भारत के संविधान के अनुच्छेद 243क्यू के आधार पर नोएडा को एक औद्योगिक टाउनशिप घोषित किए जाने के कारण, यह न केवल उद्योगों को विकसित करने के लिए बल्कि एक पूर्ण टाउनशिप विकसित करने के लिए भी बाध्य है। 03.03.2011 को व्यापक रूप से प्रचारित स्पोर्ट्स सिटी योजना एक प्रशंसनीय उद्देश्य को पूरा करने के लिए थी। यह स्पष्ट है कि योजना का उद्देश्य अत्याधुनिक खेल सुविधाओं को विकसित करना था जिसका आनंद आम जनता उठा सके। यह योजना नोएडा में दो अलग-अलग स्थानों पर स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने के लिए शुरू की गई थी, जिनमें से पहला सेक्टर-78 और 79 में लगभग 7,27,500 वर्ग मीटर

क्षेत्र में है और दूसरा नोएडा के सेक्टर 150 में है। यह मामला सेक्टर 78 और 79 वाली पूर्व स्पोर्ट्स सिटी से संबंधित है।

73. विशाल भूखंड आवंटित करने का कारण अंतरराष्ट्रीय स्तर की खेल सुविधा विकसित करना था। परियोजना के आकार और लागत को देखते हुए, किसी अकेली कंपनी के लिए इसे पूरा करना व्यवहार्य नहीं रहा होगा। इसलिए कंपनियों के एक संघ (कंसोर्टियम) को स्पोर्ट्स सिटी परियोजना में भाग लेने और विकसित करने की अनुमति दी गई थी। योजना का उद्देश्य कभी भी स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को छोटे भूखंडों में विभाजित करना और छोटे बिल्डरों को स्पोर्ट्स सिटी में गुप हाउसिंग सोसाइटी बनाने की अनुमति देना नहीं था। लेकिन जिस तरह से प्राधिकरण ने गुप हाउसिंग के बेतरतीब विकास की अनुमति दी, उससे स्पोर्ट्स सिटी की पूरी अवधारणा और योजना विफल हो गई है।

74. योजना के अनुसार, एक विवरणिका (ब्रोशर) जारी की गई थी जिसमें कई शर्तें थीं, जिनका आवंटियों/उप-पट्टेदारों द्वारा महत्वपूर्ण रूप से उल्लंघन किया गया था, जो उन्हें परियोजना आवंटित किए जाने के लिए अयोग्य बनाते थे, लेकिन नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों की मिलीभगत से इन्हें नजरअंदाज कर दिया गया।

75. कुछ शर्तें और उनके स्पष्ट उल्लंघन इस प्रकार हैं :-

“कंसोर्टियम (संघ) के सदस्यों को एक मुख्य सदस्य (लीड मेंबर) निर्दिष्ट करना होगा, जो अकेले ही नोएडा प्राधिकरण के साथ पत्राचार करने के लिए अधिकृत होगा। मुख्य सदस्य को सबसे बड़ा एकल शेयरधारक होना चाहिए, जिसकी कंसोर्टियम में कम से कम 30% हिस्सेदारी हो।”

(जोर दिया गया है)

आवंटियों के अनुरोध पर, नोएडा प्राधिकरण द्वारा पहले कंसोर्टियम के व्यक्तिगत सदस्यों के पक्ष में अलग-अलग उप-पट्टे (सब-लीज) निष्पादित किए गए, और अलग भुगतान अनुसूची निर्धारित की गई। इसके बाद, इन सदस्यों ने नोएडा प्राधिकरण के साथ पत्राचार करना शुरू कर दिया और योजना के विपरीत अनुरोध भेजने लगे, जिन्हें त्रुटिपूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया गया। मुख्य सदस्य को कम से कम 30% हिस्सेदारी के साथ सबसे बड़ा एकल शेयरधारक होना चाहिए था। हालाँकि, इस मामले में कंसोर्टियम के सदस्यों के साथ पट्टे विलेख निष्पादित करते समय, आवंटियों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों (जिन्हें आगे सामूहिक रूप से मिलीभगत करने वाले पक्ष कहा गया है) द्वारा मुख्य सदस्य को पूरी तरह से बाहर कर दिया गया था।

76. “कंसोर्टियम (संघ) में मुख्य सदस्य (लीड मेंबर) की शेयरधारिता परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाणपत्र नोएडा प्राधिकरण से प्राप्त होने तक कम से कम 30% बनी रहेगी।”

(जोर दिया गया है)

इस शर्त का भी खुलेआम उल्लंघन किया गया। मिलीभगत करने वाले पक्षों की सहायता से आवंटियों द्वारा मुख्य सदस्य को पूरी तरह से बाहर कर दिया गया, जबकि परियोजना के पहले चरण का अस्थायी अधिभोग / पूर्णता प्रमाणपत्र प्राप्त करने में अभी बहुत समय शेष था।

77. "कंसोर्टियम (संघ) के मामले में, सदस्य अपनी संयुक्त रूप से योजना के लिए आवेदन करने की मंशा व्यक्त करते हुए एक समझौता जापन प्रस्तुत करेंगे, और यदि उन्हें भूखंड आवंटित किया जाता है, तो समझौता जापन स्पष्ट रूप से कंसोर्टियम के प्रत्येक सदस्य की भूमिका और जिम्मेदारी को परिभाषित करेगा, विशेष रूप से परियोजना के लिए ऋण और इक्विटी की व्यवस्था करने तथा इसके कार्यान्वयन के संबंध में।"

(जोर दिया गया है)

ऐसा कोई भी समझौता जापन निष्पादित नहीं किया गया था जिसमें प्रत्येक सदस्य की भूमिका और जिम्मेदारी परिभाषित की गई हो, और न ही नोएडा प्राधिकरण द्वारा कभी इसकी मांग की गई थी।

78. "कंसोर्टियम (संघ) के सदस्य एक पंजीकृत/नोटरीकृत समझौता जापन प्रस्तुत करेंगे, जिसमें योजना के लिए संयुक्त रूप से आवेदन करने की उनकी मंशा व्यक्त की गई हो, और यदि उन्हें भूखंड आवंटित किया जाता है, तो वे विशेष प्रयोजन कंपनी (कंपनियों) का गठन करेंगे, जिन्हें इसके बाद एसपीसी (SPCs) कहा जाएगा, जो बाद में आवंटी के रूप में अपनी सभी जिम्मेदारियों का निर्वहन करेगी।"

(जोर दिया गया है)

यद्यपि एसपीसी अस्तित्व में थी, लेकिन उसने कभी भी ऐसी कोई जिम्मेदारी नहीं ली, और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने इसके लिए कभी पूछा तक नहीं। इसके विपरीत, पूरी परियोजना को कई भूखंडों में विभाजित कर दिया गया और विभिन्न कंपनियों को आवंटित कर दिया गया। इनमें से प्रत्येक कंपनी ने परियोजना विकसित करने की विशिष्ट भूमिकाएँ स्वयं संभाल लीं, और विभाजन इस प्रकार किया गया कि परियोजना के सभी प्रमुख और लाभदायक हिस्से छोटी कंपनियों को सौंप दिए गए। कुल मिलाकर 21 कंपनियों को आवासीय/वाणिज्यिक परियोजना विकसित करने का लाभ मिला, और खेल सुविधाओं को पूरा करने की पूरी जिम्मेदारी याचिकाकर्ता संख्या 1 और एक अन्य कंपनी को सौंप दी गई। इन छोटी कंपनियों को बाद में उप-पट्टेदार कंपनियों के शेयरों को स्थानांतरित करके अन्य बिल्डरों (जो आवेदन करने के पात्र भी नहीं थे) को बेच दिया गया। सारा मुनाफा निकाल लिया गया, और खेल सुविधाओं के विकास के लिए कुछ भी निवेश नहीं किया गया या रोक कर नहीं रखा गया। इसने अपात्र व्यक्तियों को पिछले दरवाजे से आवंटन करने का एक माध्यम भी बना दिया।

79. आवंटी और कंसोर्टियम (संघ) के मामले में, मुख्य सदस्य और/या संबंधित सदस्य और/या उनके द्वारा गठित एसपीसी (SPC), सभी को मिलाकर, आवंटित क्षेत्र पर कुल अनुमेय एफएआर का न्यूनतम 30% स्वयं निर्माण करना होगा।

(जोर दिया गया है)

इस मामले में न तो मुख्य सदस्य और न ही संबंधित सदस्य ने आवंटित क्षेत्र पर कुल अनुमेय एफएआर का 30% स्वयं निर्माण किया। मुख्य सदस्य को तो शुरुआत में ही बाहर कर दिया गया था;

80. 'मुख्य सदस्य' (निविदा जमा करने की तिथि पर) के पास एसपीसी में कम से कम 30% शेयरधारिता तब तक बनी रहेगी जब तक कि नोएडा प्राधिकरण से परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाणपत्र प्राप्त न हो जाए।

(जोर दिया गया है)

इस मामले में मुख्य सदस्य के पास एसपीसी में 30% हिस्सेदारी नहीं थी और आज तक उन्होंने परियोजना का पहला चरण पूरा नहीं किया है। लेकिन नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने अपनी आँखें बंद रखीं और आवंटियों को उनके मनमाने ढंग से काम करने की अनुमति दी।

81. किस्ते जमा करने या किसी भी भुगतान में चूक के मामले में, चूक की अवधि के लिए चूक की गई राशि पर 14% की दर से छमाही चक्रवृद्धि ब्याज देय होगा।

(जोर दिया गया है)

आवंटी नोएडा प्राधिकरण के बकाया भुगतान में लगातार चूक करते रहे, लेकिन आवंटी से संविदात्मक ब्याज के साथ मूल राशि वसूलने का कोई प्रयास नहीं किया गया। एक दशक से अधिक समय में केवल 3 या 4 छिटपुट नोटिस भेजे गए। वे भी महज एक दिखावा थे। नोएडा प्राधिकरण के अधिकारी बकाया राशि वसूलने में पूरी तरह विफल रहे। यह मिलीभगत करने वाले पक्षों के बीच के तालमेल का ही परिणाम था, जिससे राज्य के खजाने को भारी नुकसान हुआ।

82. पट्टेदार के लिए पट्टा विलेख के निष्पादन की तिथि से 3 वर्ष की अवधि के भीतर खेल, संस्थागत और अन्य सुविधाओं के लिए निर्धारित अनुमेय क्षेत्र का न्यूनतम 15% निर्माण पूरा करना आवश्यक होगा और वह 5 वर्षों के भीतर चरणों में परियोजना को पूरा करेगा। हालाँकि, आवासीय और वाणिज्यिक विकास/निर्माण को 7 वर्षों के भीतर चरणों में पूरा किया जा सकता है।

(जोर दिया गया है)

यद्यपि पट्टेदार पट्टा विलेख के निष्पादन की तिथि से 3 वर्ष की अवधि के भीतर खेल आदि के लिए निर्धारित अनुमेय क्षेत्र का न्यूनतम 15% निर्माण पूरा करने के लिए बाध्य थे, लेकिन आज तक इसका कोई भी हिस्सा पूरा नहीं किया गया है। इसके अलावा, इस प्रावधान के अवलोकन से यह भी पता चलता है कि आवासीय हिस्से का विकास खेल सुविधाओं के विकास के बदले के रूप में किया जाना था। हालाँकि, आवंटित भूमि को तीसरे पक्षों को हस्तांतरित करके, आवंटियों द्वारा पैसा निकाल लिया गया, जबकि खेल सुविधाओं का ऐसा कोई विकास कभी नहीं किया गया। नोएडा प्राधिकरण ने भी कभी परियोजना के खेल सुविधाओं वाले हिस्से को पूरा करने के लिए नहीं कहा।

83. नोएडा द्वारा 'पूर्णता प्रमाणपत्र' परियोजना या उसके किसी हिस्से के चरणों में पूरा होने पर और परियोजना या उसके किसी हिस्से की पूर्णता को प्रमाणित करने के लिए आवश्यक दस्तावेजों को प्रस्तुत करने पर जारी किया जाएगा।

(जोर दिया गया है)

मिलीभगत करने वाले अधिकारियों द्वारा इस शर्त को भी शिथिल कर दिया गया था।

84. पूर्णता प्रमाणपत्र प्राप्त किए बिना, पट्टेदार को नोएडा के नियोजन मानदंडों के अनुसार आवंटित भूखंड को केवल आवासीय और वाणिज्यिक उपयोग के लिए उपलब्ध क्षेत्र के रूप में उपयुक्त छोटे भूखंडों में उप-विभाजित करने और नोएडा की पूर्व स्वीकृति से, हस्तांतरण की तिथि पर प्रचलित दर पर हस्तांतरण शुल्क के भुगतान पर, इसे इच्छुक पार्टियों को हस्तांतरित करने का अधिकार होगा।

(जोर दिया गया है)

यहाँ पट्टेदार के पास आवंटित भूखंड को केवल आवासीय और वाणिज्यिक उपयोग के लिए उपलब्ध क्षेत्र के लिए ही उपयुक्त छोटे भूखंडों में उप-विभाजित करने का अधिकार था, और वह भी पूर्णता प्रमाणपत्र प्राप्त करने के बाद। लेकिन यहाँ स्पोर्ट्स सिटी की पूरी परियोजना को ही उप-विभाजित कर दिया गया, और इसके अलावा, नोएडा की पूर्व स्वीकृति के बिना इसे अवैध रूप से तीसरे पक्षों को हस्तांतरित कर दिया गया, और न ही हस्तांतरण शुल्क का भुगतान किया गया।

85. नोएडा परियोजना के कार्यान्वयन की निगरानी करेगा।

(जोर दिया गया है)

नोएडा प्राधिकरण परियोजना के कार्यान्वयन की निगरानी करने में पूरी तरह विफल रहा है।

86. योजना में आवंटन मूल्य को उस समय के बाजार मूल्य से काफी नीचे रखा गया था, क्योंकि यह योजना खेल सुविधाओं के विकास के लिए थी। इस उद्देश्य के लिए, मूल्य जानबूझकर कम रखा गया था ताकि आवासीय अपार्टमेंट/वाणिज्यिक क्षेत्र विकसित करके खेल सुविधाओं को विकसित करने की लागत की भरपाई की जा सके। हालाँकि, आवंटियों ने कम कीमत का अनुचित लाभ उठाया, और आवंटन के बाद, अगली किश्तों (जो आवंटन लागत का 90% थी) का भुगतान किए बिना ही, नोएडा प्राधिकरण और आम जनता की कीमत पर भारी लाभ कमाकर इसे छोटे बिल्डरों को बेच दिया। नीति और विवरणिका से यह स्पष्ट था कि मुख्य सदस्य को कम से कम 30% हिस्सेदारी के साथ कंसोर्टियम में सबसे बड़ा एकल शेयरधारक होना चाहिए था और उसे अपनी 30% हिस्सेदारी तब तक बनाए रखनी थी जब तक कि उन्हें परियोजना के कम से कम पहले चरण का अस्थायी अधिभोग या पूर्णता प्रमाणपत्र प्राप्त न हो जाए। हालाँकि, कंसोर्टियम को परियोजना आवंटित होने के तुरंत बाद, नोएडा प्राधिकरण ने नीति और योजना का पूर्ण उल्लंघन करते हुए, भूखंडों को विभाजित/उप-विभाजित करना जारी रखा।

87. कंसोर्टियम (संघ) के सदस्यों का इरादा शुरुआत से ही स्पष्ट था, क्योंकि भूखंडों का उप-विभाजन स्पष्ट रूप से एक सुनियोजित योजना का हिस्सा था। उनका लक्ष्य स्पोर्ट्स सिटी के सभी लाभों और संपत्तियों को विभिन्न छोटी संस्थाओं के बीच वितरित करना था, जबकि देनदारियों-विशेष रूप से खेल सुविधाएं विकसित करने की बाध्यता-को विशेष रूप से दो कंपनियों में केंद्रित करना था, जिनमें से एक याचिकाकर्ता थी। याचिकाकर्ता कंपनी ने डिबेंचर जारी करके वित्तीय सहायता लेने का दावा किया है। चूंकि याचिकाकर्ता ने कुछ भी विकसित नहीं किया है, इसलिए यह आश्चर्य का विषय है कि पैसा कहाँ खर्च किया गया। याचिकाकर्ता कंपनी को नोएडा प्राधिकरण और राज्य के साथ धोखाधड़ी करने के एकमात्र इरादे से एक व्यापक रणनीति के तहत दिवालियापन की ओर धकेल दिया गया था। उक्त कंपनियों के पीछे के व्यक्तियों ने नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों की मिलीभगत से खेल सुविधाओं के निर्माण की लागत की वसूली के लिए निर्धारित भूमि का उपयोग तीसरे पक्षों के लिए किया, जिससे प्रभावी रूप से उन निधियों को वसूली के दायरे से बाहर कर दिया गया जो सार्वजनिक उपयोग के लिए निर्धारित थीं। ये ज़मीनें खेल सुविधाओं को पूरा करने के लिए राजस्व उत्पन्न करने के लिए थीं, जिनका उपयोग इच्छित कार्य के लिए किया जाना आवश्यक था।

88. इसमें कोई संदेह नहीं है कि भूखंड के उप-विभाजन की अनुमति थी, लेकिन इसके साथ कुछ शर्तें और प्रतिबंध जुड़े हुए थे, जिनका उनके वास्तविक अर्थ और भावना में कभी पालन नहीं किया गया। इस मामले में, नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने जानबूझकर जुड़ी हुई शर्तों के प्रति आँखें मूँदना चुना और केवल आवंटियों/बिल्डरों को अनुचित लाभ पहुँचाने के एकमात्र इरादे से पूरी स्पोर्ट्स सिटी को विभाजित करते चले गए।

89. मानचित्र की स्वीकृति, भले ही वह मौजूद हो, उसे योजना और पट्टे विलेख के साथ-साथ वैधानिक प्रावधानों के साथ पढ़ा जाना चाहिए। अधिनियम, विवरणिका (ब्रोशर), आवंटन और पट्टे विलेख के प्रावधानों के विपरीत कोई भी स्वीकृति अपने आप में एक विचलन होगी और चूंकि कानून के तहत इस विचलन को मान्यता नहीं दी गई है, इसलिए यहाँ 'ग्रंडनोर्म सिद्धांत' लागू होगा।

90. इसलिए, याचिकाकर्ता अनुचित तरीके से अधिकार का दावा नहीं कर सकता, विशेष रूप से तब, जब लेआउट योजना नोएडा प्राधिकरण द्वारा तैयार नहीं की गई थी, बल्कि याचिकाकर्ता द्वारा स्वयं तैयार की गई थी और जानबूझकर खेल सुविधा विकसित करने की जिम्मेदारी ली गई थी, जबकि याचिकाकर्ता का ऐसा करने का कोई इरादा नहीं था।

91. रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री से यह पता चलता है कि याचिकाकर्ता कंपनी के प्रवर्तक (प्रमोटर) वही हैं जो कंसोर्टियम के 9 में से 7 सदस्य कंपनियों के हैं। जिम्मेदारियों का आंतरिक विभाजन इस तरह से किया गया था कि परियोजना के सभी मलाईदार और लाभदायक हिस्से छोटी संस्थाओं में रखे गए, और परियोजना को पूरा करने की सभी देनदारियाँ दो कंपनियों पर डाल दी गईं। याचिकाकर्ता का इरादा शुरुआत से ही स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने का नहीं था, बल्कि केवल परियोजना के छोटे और लाभदायक हिस्सों को बेचना और पैसा कमाना था।

92. चूंकि इस मामले में उन्हीं प्रवर्तकों द्वारा गठित कंपनियों का एक जाल रहा है और उनकी इन सभी नई गठित कंपनियों ने एक कंसोर्टियम के रूप में आवेदन किया था, और उसके बाद स्पोर्ट्स सिटी योजना के प्रावधानों के विपरीत, प्राधिकरण की अनुमति के बिना कुछ कंपनियों में शेयरधारिता बदल दी गई है। इसलिए, 'कॉर्पोरेट आवरण' को हटाकर यह देखना आवश्यक है कि इस धोखाधड़ी/घोटाले के लिए कौन लोग/संस्था जिम्मेदार हैं।

झ. दिवाला - कॉर्पोरेट आवरण हटाना

93. इस मामले में परियोजना एक कंसोर्टियम (संघ) को आवंटित की गई थी। आश्चर्यजनक रूप से, कंसोर्टियम की सभी सदस्य कंपनियों का गठन योजना शुरू होने के बाद किया गया था और सभी कंपनियों के प्रवर्तक (प्रमोटर) एक ही थे। यह दर्शाता है कि यह कंसोर्टियम कोई वास्तविक संघ नहीं था, बल्कि एक ही व्यक्तियों के समूह के स्वामित्व वाली कंपनियों का एक समूह था। उन्होंने आवंटन प्राप्त करने के बाद इसे उप-विभाजित किया और विकास योजना को इस तरह से लागू और अनुमोदित करवाया कि स्पोर्ट्स सिटी की सभी संपत्तियां विभिन्न छोटी कंपनियों के पास रखी गईं और खेल सुविधाएं विकसित करने की जिम्मेदारी दो कंपनियों के पास रखी गई।

94. इस कंसोर्टियम की कुछ कंपनियां दिवालियापन में चली गई हैं। इन कंपनियों का दिवालिया होना केवल नोएडा प्राधिकरण, बैंकों/वित्तीय संस्थानों और उत्तर प्रदेश राज्य को भुगतान करने से बचने के लिए रचा गया था। इस धांधली/धोखाधड़ी में शामिल वास्तविक आरोपी व्यक्ति का पता लगाने के लिए, जिसके परिणामस्वरूप यह दिवालियापन हुआ, इन कंपनियों के जाल के 'कॉर्पोरेट आवरण' को उठाना आवश्यक है। साथ ही यह देखना भी जरूरी है कि क्या वे कंपनी के एक अलग कानूनी व्यक्तित्व होने के मुखौटे के नीचे अपनी धोखाधड़ी वाली गतिविधियों और स्वयं को छिपाने की कोशिश कर रहे हैं।

95. स्पोर्ट्स सिटी के विकास में शामिल सभी कंपनियों में से निम्नलिखित चार कंपनियां दिवालियापन में चली गई हैं, जो मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड, मेसर्स एरिना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड, मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड और मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (वर्तमान याचिकाकर्ता) हैं। ऊपर नामित पहली तीन कंपनियों को स्पोर्ट्स सिटी के आवासीय हिस्से को विकसित करने का कार्य सौंपा गया था। वे कंसोर्टियम के मूल सदस्य थे या आवंटियों की 100% सहायक कंपनियां थीं और उनका एकमात्र व्यवसाय स्पोर्ट्स सिटी विकसित करना था। आश्चर्यजनक रूप से, इन सभी कंपनियों में मूल प्रवर्तक समान थे (यानी निर्मल सिंह, सुरप्रीत सिंह सूरी और विदुर भारद्वाज)। उन्होंने विभिन्न अन्य संस्थाओं को परियोजना का हिस्सा बेचकर (विभिन्न छोटी होल्डिंग कंपनियों के शेयर हस्तांतरण द्वारा) भारी मात्रा में धन एकत्र किया है। जाहिर है, इसे किसी कीमत पर बेचा गया होगा। यह पैसा विक्रेता कंपनी या उसकी किसी अन्य सहयोगी संस्था या प्रवर्तकों (निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज और सुरप्रीत सिंह सूरी) के व्यक्तिगत खातों में आया होगा। अब सवाल यह है कि बिक्री का प्रतिफल कहाँ गया। यह पैसा उस जमीन के बदले में था जिसका उपयोग खेल सुविधाओं

के निर्माण हेतु राजस्व उत्पन्न करने के लिए किया जाना था। ऐसी कोई सुविधा नहीं बनाई गई है। बिक्री की पूरी आय निकाल ली गई और उसके बाद याचिकाकर्ता कंपनी को दिवालिया होने दिया गया। निश्चित रूप से, यह दिवालियापन केवल नागरिक और आपराधिक देनदारियों से बचने और बकाया भुगतान तथा स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने के दायित्व को पूरा करने से बचने के लिए तैयार किया गया एक दिवालियापन है। यह नोएडा प्राधिकरण के साथ-साथ राज्य और अन्य हितधारकों/लेनदारों के साथ की गई धोखाधड़ी के अलावा और कुछ नहीं है।

96. उपरोक्त धोखाधड़ी और अनियमितताओं की घटनाओं के कारण, कानून में अब उस पुराने अपवाद के साथ बदलाव आया है कि 'कंपनी एक अलग कानूनी व्यक्तित्व है और कंपनी की देनदारी निदेशकों की संपत्ति से वसूल नहीं की जा सकती'। समय के साथ, कंपनी के अलग कानूनी व्यक्तित्व के सिद्धांत में कुछ अपवाद निकाले गए हैं। 'कॉर्पोरेट आवरण छेदने' का सिद्धांत प्रारंभ में **'सोलोमन बनाम सोलोमन एंड कंपनी लिमिटेड'** के मामले में स्पष्ट हुआ था, जहाँ हाउस ऑफ लॉर्ड्स ने कहा था कि कानून की नज़र में कंपनी उसके सदस्यों से पूरी तरह से अलग व्यक्ति है। हालाँकि, न्यायालयों ने उक्त नियम के कई अपवादों को मान्यता देना शुरू कर दिया है। जबकि उन सभी का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है, हमारे लिए प्रासंगिक वह है - 'जब कॉर्पोरेट व्यक्तित्व का उपयोग स्पष्ट रूप से धोखाधड़ी या अनुचित आचरण के लिए एक चोगे के रूप में किया जा रहा हो'।

97. कॉर्पोरेट आवरण हटाने के इस सिद्धांत को तब और वहाँ उपयोग करने के लिए बनाया गया था, जब भी और जहाँ भी स्थिति इसकी मांग करे। **'लिटिलवुड्स स्टोर्स बनाम आई.आर.सी.'** के मामले में लॉर्ड डेनिंग ने निर्धारित किया :-

"सोलोमन के मामले में निर्धारित सिद्धांत पर बहुत सावधानी से नज़र रखनी होगी। यह माना गया है कि यह एक लिमिटेड कंपनी के व्यक्तित्व पर ऐसा आवरण डाल देता है जिसके पार न्यायालय नहीं देख सकते। लेकिन यह सच नहीं है। न्यायालय इस आवरण को एक तरफ हटा सकते हैं, और अक्सर ऐसा करते भी हैं। वे मुखौटा उतार सकते हैं, और अक्सर उतारते भी हैं। समूह खातों और अन्य मामलों में यही तरीका अपनाया जाता है। और न्यायालयों को इसी का अनुसरण करना चाहिए.....।"

98. 'कॉर्पोरेट आवरण हटाने' के सिद्धांत पर, **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रेणुसागर पावर कंपनी** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह निर्धारित किया है कि आधुनिक न्यायशास्त्र के विस्तार क्षितिज में, कॉर्पोरेट आवरण को हटाना न केवल अनुमेय है, बल्कि इसकी सीमाएं असीमित और निरंतर विस्तारशील हैं। न्यायालय ने आगे महत्वपूर्ण रूप से यह टिप्पणी की कि कॉर्पोरेट आवरण हटाना एक बदलती हुई अवधारणा और विस्तृत होता क्षितिज है।

99. माननीय उच्चतम न्यायालय ने राजस्थान राज्य और अन्य बनाम गोटन लाइम स्टोन खनिज उद्योग प्राइवेट लिमिटेड और अन्य के मामले में निम्नानुसार निर्णय दिया है :-

"कंपनी या उसके सदस्यों के अलग कॉर्पोरेट व्यक्तित्व के अपवाद के रूप में 'कॉर्पोरेट आवरण हटाने' का सिद्धांत न केवल कर चोरी [7] का पर्दाफाश करने के लिए अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त है, बल्कि वहां भी मान्य है जहां सार्वजनिक हित की रक्षा सर्वोपरि महत्व की है और कॉर्पोरेट इकाई कानूनी दायित्वों से बचने का एक प्रयास है। इसके अलावा, कल्याणकारी कानून [8] से बचने की युक्ति को रोकने के लिए आवरण हटाना आवश्यक है। उन श्रेणियों या मामलों को सूचीबद्ध करना न तो आवश्यक है और न ही वांछनीय है जहां आवरण हटाना अनुमेय है, क्योंकि यह अनिवार्य रूप से प्रासंगिक वैधानिक या अन्य प्रावधानों, प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य, विवादित आचरण, सार्वजनिक हित के तत्व की संलिप्तता और प्रभावित होने वाले पक्षों पर पड़ने वाले प्रभाव आदि पर निर्भर करता है।"

100. कॉर्पोरेट आवरण हटाने के सिद्धांत को शुभा मुखर्जी और अन्य बनाम भारत कोकिंग कोल लिमिटेड और अन्य; कलकत्ता क्रोमोटाइप लिमिटेड बनाम कलेक्टर ऑफ सेंट्रल एक्साइज कोलकाता; न्यू होराइजन लिमिटेड और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य; सी.आई.टी. बनाम मीनाक्षी मिल्स लिमिटेड मदुरा; टेल्को और अन्य बनाम बिहार राज्य; तथा जुगगी लाल कमलापत बनाम आयकर आयुक्त, उत्तर प्रदेश के मामलों में बरकरार रखा गया है।

101. माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी (प्रा.) लिमिटेड एवं अन्य के मामले में यह व्यवस्था दी है कि कंपनियों का 'कॉर्पोरेट आवरण' हटाना, और कॉर्पोरेट आवरण के पीछे छिपे बिल्डर द्वारा अवैध एवं भ्रष्ट साधनों से अर्जित संपत्ति को जब्त एवं कुर्क करने के साथ-साथ उनके परिवार के सदस्यों की संपत्तियों को भी कुर्क करने का आदेश न्यायालय द्वारा दिया जा सकता है।

102. याचिकाकर्ता कंपनी के प्रवर्तकों की कार्यप्रणाली एक जैसी रही है। वे नोएडा से भूखंड आवंटित करवाते हैं, नोएडा प्राधिकरण के बकाया का भुगतान नहीं करते, कंपनी से पैसा निकालते हैं और फिर उस कंपनी को दिवालियापन की ओर धकेल देते हैं, जिसे परियोजना के सार्वजनिक सुविधाओं वाले हिस्से को निष्पादित करना होता है। ऐसा परियोजना को लागू करने से बचने, लेनदारों को भुगतान न करने और नागरिक एवं आपराधिक देनदारियों से बचने के लिए किया जाता है। उच्च न्यायालय ने **निर्मल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (रिट सी संख्या 41110/2019)** के मामले में दिनांक 29.02.2024 के निर्णय और आदेश द्वारा इसी प्रवर्तक समूह की इसी प्रवृत्ति को रेखांकित किया था।

103. यह न्यायालय यह भी पाता है कि यद्यपि यह नोएडा प्राधिकरण को दिया गया एक अधिदेश था और स्पोर्ट्स सिटी का उचित कार्यान्वयन सुनिश्चित करना उनका कर्तव्य था, लेकिन नोएडा प्राधिकरण स्पोर्ट्स सिटी के कार्यान्वयन की निगरानी करने में विफल रहा है। पिछले कई वर्षों से ग्रुप हाउसिंग का निर्माण किया जा रहा

था और कोई भी खेल सुविधा विकसित नहीं की जा रही थी। फिर भी, नोएडा प्राधिकरण ने अपनी आँखें बंद रखीं और बिल्डरों को खेल सुविधाएं विकसित किए बिना ही ग्रुप हाउसिंग परियोजना को जारी रखने की अनुमति दी।

104. यह नोट करना काफी आश्चर्यजनक है कि यदि याचिकाकर्ता और अन्य कंसोर्टियम (संघ) सदस्यों के पास भूमि का भौतिक कब्जा नहीं था, तो उन्होंने उन मानचित्रों की स्वीकृति के लिए आवेदन कैसे किया जिन्हें नोएडा प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित किया गया था। दो अन्य बातें भी ध्यान देने योग्य हैं। पहली यह कि जिस भूमि पर आवासीय/वाणिज्यिक विकास होना है, वह खेल सुविधाओं के भूखंड से सटी हुई है, इसलिए यह कहना कि खेल सुविधाओं के लिए पहुंच मार्ग उपलब्ध नहीं कराया गया है, केवल न्यायालय को गुमराह करने का एक प्रयास है। दूसरी बात यह कि विवरणिका स्पष्ट रूप से खेल सुविधा में निर्मित की जाने वाली विभिन्न सुविधाओं का विवरण देती है, इसलिए याचिकाकर्ता अपनी नेकनियती प्रदर्शित करने के लिए इनमें से कुछ सुविधाओं को विकसित कर सकता था। लेकिन स्पष्ट रूप से स्पोर्ट्स सिटी में कोई खेल सुविधा निर्मित नहीं की गई थी।

105. स्पोर्ट्स सिटी योजना का उद्देश्य छोटे बिल्डरों/धोखेबाज ऑपरेटरों को छोटे भूखंड आवंटित करना नहीं था, तो फिर नोएडा प्राधिकरण ने भूखंडों को छोटी जोतों में विभाजित क्यों किया और विभिन्न कंपनियों को आवंटित क्यों किया। स्पोर्ट्स सिटी का उप-विभाजन किया गया और उन कंपनियों को उप-पट्टे दिए गए जो परियोजना के लिए बोली लगाने के पात्र तक नहीं थीं। नोएडा प्राधिकरण ने वह काम अप्रत्यक्ष रूप से करने की अनुमति दी जो प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जा सकता था।

106. निस्संदेह, याचिकाकर्ता पट्टा विलेख (लीज डीड) की शर्तों के अनुसार किस्तों के भुगतान हेतु प्रीमियम का भुगतान करने में विफल रहे थे। नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने कभी भुगतान के लिए नहीं कहा। रिकॉर्ड से पता चलता है कि याचिकाकर्ताओं को किस्तों का भुगतान करने के लिए एक नोटिस 2015 में, दूसरा 2019 में और तीसरा 2023 में भेजा गया था। ये नोटिस महज एक दिखावा थे। हम नोएडा प्राधिकरण के आचरण को देखकर स्तब्ध हैं कि बार-बार विफलताओं के बावजूद, नोएडा प्राधिकरण द्वारा अपना बकाया वसूलने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की गई, न ही उन्होंने आवंटन रद्द करने की कोई कार्रवाई की और न ही उन अधिकारियों के खिलाफ कोई कार्रवाई की गई, जो इस घोटाले में शामिल थे।

107. नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों की कार्रवाई अत्यधिक संदिग्ध है। वास्तव में, याचिकाकर्ताओं को स्पोर्ट्स सिटी आवंटित करने की पूरी प्रक्रिया और स्पोर्ट्स सिटी के कार्यान्वयन में बड़े पैमाने पर धांधली हुई और नोएडा प्राधिकरण के मिलीभगत करने वाले अधिकारियों द्वारा बिल्डरों को भारी लाभ पहुँचाया गया। चौंकाने वाली बात यह है कि बिल्डरों और उन मिलीभगत करने वाले अधिकारियों के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की गई है, जिनके कृत्यों के परिणामस्वरूप इतना बड़ा घोटाला हुआ है।

ज. शून्य अवधि

108. सबसे आश्चर्यजनक बात यह है कि भूमि क्षेत्र के 70% हिस्से पर खेल सुविधाएं विकसित की जानी थीं और शेष 30% हिस्से पर आवासीय/वाणिज्यिक गतिविधियों की अनुमति थी। प्रत्येक बिल्डर अतिक्रमण के आधार पर 'शून्य काल' का लाभ मांग रहा है। सवाल यह उठता है कि उस क्षेत्र में अतिक्रमण कैसे था जहाँ उसे खेल सुविधाएं विकसित करनी थीं, जबकि उस क्षेत्र में कोई अतिक्रमण नहीं था जहाँ आवासीय/वाणिज्यिक संरचनाएँ बननी थीं। जब आवासीय/वाणिज्यिक टावर लॉन्च करके पैसा इकट्ठा करने का अवसर था, तब नोएडा प्राधिकरण द्वारा बुनियादी ढांचे की अनुपलब्धता या अतिक्रमण की कोई समस्या नहीं थी, लेकिन जब खेल सुविधाएं विकसित करने की बात आई, तो अतिक्रमण का बहाना बना दिया गया। बिल्डरों द्वारा स्थापित यह सिद्धांत बिल्कुल भी विश्वसनीय नहीं है। यदि कोई बुनियादी ढांचा उपलब्ध नहीं था या अतिक्रमण था, तो उन्हें फ्लैट नहीं बेचने चाहिए थे या उनकी बुकिंग नहीं करनी चाहिए थी, और यदि वे घर खरीदारों को सूचित किए बिना ऐसा कर रहे थे, तो यह घर खरीदारों के साथ धोखाधड़ी करने के समान है।

109. इसके अलावा, नोएडा प्राधिकरण द्वारा दाखिल शपथ पत्र उन तारीखों को दर्शाता है जब प्रत्येक आवंटी को कब्जा दिया गया था और वह किसी भी अतिक्रमण से मुक्त था, केवल कुछ मामलों में बहुत छोटे अतिक्रमण थे। यदि बिल्डरों ने अन्य क्षेत्रों में खेल सुविधाओं का निर्माण शुरू कर दिया होता और वे साफ इरादे के साथ न्यायालय आए होते, तो यह न्यायालय निश्चित रूप से बिल्डरों के मामलों पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करता। लेकिन, यहाँ ऐसा मामला नहीं है, बिल्डर यह आधार केवल और समय लेने के लिए उठा रहे हैं। पहले दिन से ही उनका आचरण घर खरीदारों, बैंकों, नोएडा प्राधिकरण को धोखा देने, उन्हें भुगतान न करने और अपने दायित्वों को पूरा न करने का रहा है और इसके लिए वे हर संभव चाल चल रहे हैं।

110. योजना के अनुसार, पहले चरण के विकास के लिए तीन साल और पूरी खेल सुविधा के विकास के लिए पांच साल का समय दिया गया था। इस देरी का कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया जा सका। यदि यह मान भी लिया जाए कि कुछ अतिक्रमण थे, फिर भी स्पोर्ट्स सिटी परियोजना की अधिकांश भूमि आवंटियों को सौंप दी गई थी, और वे आवंटी, जिन्होंने आपस में भूमि का बंटवारा कर लिया था, उस भूमि पर परियोजना का विकास शुरू कर सकते थे जिस पर कोई अतिक्रमण नहीं था। हालाँकि, उन्होंने ऐसा न करना चुना और नोएडा प्राधिकरण ने भी उनसे ऐसा करने के लिए नहीं कहा।

ट. घोटाला

110. यह एक ऐसा मामला है जहां स्पोर्ट्स सिटी परियोजना की शुरुआत से ही नोएडा प्राधिकरण का प्रत्येक कार्य बिल्डरों के साथ मिलीभगत, भ्रष्टाचार और घोटाले की बू देता है। स्पोर्ट्स सिटी के विकास की पूरी प्रक्रिया, जिसमें योजना की परिकल्पना, आवंटन, पट्टा विलेख का निष्पादन, मानचित्र/योजना की स्वीकृति और स्पोर्ट्स सिटी के केवल एक हिस्से का कार्यान्वयन शामिल है, सभी दुर्भावनापूर्ण इरादों का परिणाम थे। आवंटियों/बिल्डरों ने नोएडा के अधिकारियों के साथ मिलीभगत करके एक बहुत बड़ा धोखा दिया है और इसके पीड़ित नोएडा प्राधिकरण, उत्तर प्रदेश राज्य और घर खरीदार हैं।

111. सबसे चौंकाने वाला हिस्सा यह है कि यह पूरा घोटाला और धोखाधड़ी नोएडा प्राधिकरण के तत्वावधान में की गई और एक के बाद एक अधिकारी चुप रहे और घोटाले को जारी रहने दिया। आवंटन वर्ष 2011 में किया गया था और पहली बार इसका खुलासा वर्ष 2020 के आसपास हुआ, जब सीएजी ने ऑडिट किया। चौंकाने वाली बात यह है कि पिछले 9 वर्षों से नोएडा प्राधिकरण और राज्य के वरिष्ठ अधिकारी इस घोटाले और धोखाधड़ी से अच्छी तरह वाकिफ थे और उन्होंने इन मामलों को जारी रहने दिया और उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की गई। वे यह देखने में विफल रहे कि आवंटी खेल सुविधा के विकास की दिशा में कुछ नहीं कर रहे थे, जबकि याचिकाकर्ता की समूह कंपनी सहायक कंपनियों को बेचना जारी रखे हुए थी, जिन्होंने भूमि की बिक्री (सहायक कंपनियों की शेयरधारिता हस्तांतरित करके) के माध्यम से भारी मात्रा में धन कमाया, लेकिन नोएडा प्राधिकरण के बकाया का भुगतान नहीं किया।

112. मास्टर प्लान 16.06.2014 को स्वीकृत होने के बाद भी, न तो परियोजना की भूमि पर किसी खेल सुविधा का विकास हुआ और न ही नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने आवंटियों/बिल्डरों से इसके लिए आग्रह करने की जहमत उठाई। जब पूरी जमीन दे दी गई थी, तो आवंटी ने निर्धारित समय के भीतर खेल सुविधा का निर्माण क्यों पूरा नहीं किया? खेल सुविधाओं के विकास के लिए कुछ भी नहीं किया गया और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने अपनी आँखें बंद रखीं और उनमें से किसी ने भी खेल सुविधाओं को विकसित करने का कोई गंभीर और ईमानदार प्रयास नहीं किया। साथ ही, उन्होंने मूक दर्शक बने रहना चुना और बिल्डरों/उप-पट्टेदारों को परियोजना के सहायक हिस्से (आवासीय) का निर्माण शुरू करने की अनुमति दी। उनकी नाक के नीचे बहुमंजिला इमारतों का निर्माण शुरू हो गया और फिर भी उन्होंने खेल सुविधाओं के विकास को सुनिश्चित करने का कोई प्रयास नहीं किया, जो कि परियोजना का मुख्य हिस्सा था।

ठ. धोखाधड़ी

113. कॉर्पोरेट धोखाधड़ी, विशेष रूप से दिवालियापन के मामलों में तब होती है जब कंपनी के भीतर या उससे जुड़े प्रबंधन/व्यक्ति अवैध प्रथाओं में संलग्न होते हैं और अपने प्रत्ययी कर्तव्य को निभाने में विफल रहते हैं, जो अंततः दिवालियापन की ओर ले जाता है और ऐसे मामले में लेनदारों और उपभोक्ताओं सहित इस तरह की धोखाधड़ी से प्रभावित हितधारक ऐसी धोखाधड़ी के शिकार बन जाते हैं। इस मुद्दे के समाधान के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

114. योजना से यह स्पष्ट है कि जब इसे तैयार किया गया था और आवंटन किया गया था, तो यह एक पूर्व-नियोजित योजना थी, जिसमें आवंटी केवल 10% भुगतान करके भूमि आवंटित करवाना चाहता था और फिर 'शून्य काल' का लाभ प्राप्त करना चाहता था, तथा इसी बीच विभिन्न वित्तीय संस्थानों से पैसा इकट्ठा करके और परियोजना विकसित किए बिना ही दिवालियापन में जाना चाहता था। नोएडा प्राधिकरण के अधिकारी इस भयावह योजना में पूरी तरह से मिले हुए थे। वे धोखाधड़ी का हिस्सा थे। उन्होंने पहली समेकित लेआउट योजना को मंजूरी दी थी जिसमें उन्होंने व्यक्तिगत रूप से अलग-अलग कंपनियों की भूमिका को मान्यता दी थी और जानबूझकर सभी खेल सुविधाओं का विकास दो कंपनियों के पास रखा था, स्पोर्ट्स सिटी में खेल सुविधाओं के

विकास पर कभी कोई अनुवर्ती कार्रवाई नहीं की, आवंटियों से उनका बकाया चुकाने के लिए कभी नहीं कहा, और उस बेतरतीब निर्माण की अनुमति दी जो योजना, विवरणिका की शर्तों और आवंटन एवं पट्टा विलेख की शर्तों के पूरी तरह से विपरीत था।

115. **धोखाधड़ी सब कुछ दूषित कर देती है:-** कॉर्पोरेट धोखाधड़ी, जिसमें कदाचार, वित्तीय कर्तव्य का उल्लंघन, वित्तीय हेरफेर, संपत्तियों का विचलन, धन की हेराफेरी और सरकार की विफलता शामिल है, जिसके परिणामस्वरूप कंपनी में निर्णय लेने वाले व्यक्तियों को अनुचित लाभ और अवैध लाभ प्राप्त होता है, वह कॉर्पोरेट धोखाधड़ी के दायरे में आएगा।

116. **उदगार गगन प्रॉपर्टीज लिमिटेड बनाम संत सिंह और अन्य** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह निर्धारित किया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत याचिका विचारणीय है, क्योंकि यह केवल विवेक के ठोस और उचित प्रयोग पर आधारित अभ्यास का एक नियम है, न कि अधिकार क्षेत्र का कोई प्रतिबंध। न्यायालय धोखाधड़ी या कानून की प्रक्रिया के दुरुपयोग पर आधारित किसी भी अवैध कार्रवाई को रद्द कर सकता है। (संदर्भ: **मधुकर सद्भा शिवरकर (मृत) विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य**)।

117. **श्री पी. रामनाथ अय्यर द्वारा रचित 'लॉ लेक्सिकॉन' (द्वितीय संस्करण, पुनर्मुद्रण 2001)** में यह देखा गया है कि "न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग का अर्थ आम तौर पर उन कार्यवाहियों से है जिसमें नेकनियती की कमी होती है और जो तुच्छ, कष्टप्रद या दमनकारी होती हैं, जहाँ एक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग करता है"। इस प्रकार की कार्यवाहियाँ धोखाधड़ी के दायरे में आएंगी।

118. बिल्डरों के धोखाधड़ीपूर्ण कार्यों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों की मिलीभगत के परिणामस्वरूप सरकारी खजाने और विशेष रूप से नोएडा प्राधिकरण को महत्वपूर्ण वित्तीय हानि हुई है, साथ ही घर खरीदारों का भारी शोषण हुआ है। इस धोखाधड़ी के प्रमुख तत्व इस प्रकार हैं:

(क) आवंटन प्रक्रिया में हेरफेर

बिल्डरों ने प्रीमियम का केवल 10% भुगतान करके बड़े भूखंड सुरक्षित कर लिए, और कम मूल्यांकित दरों पर आवंटन प्राप्त किया।

शेष किस्तों का भुगतान करने में विफल रहने के बावजूद, बिल्डरों को मानचित्र स्वीकृत कराने और घर खरीदारों से पैसा इकट्ठा करने की कार्यवाही जारी रखने की अनुमति दी गई।

नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने जानबूझकर इन उल्लंघनों की अनदेखी की और बिल्डरों को अनुचित छूट प्रदान की, जिससे उन्हें अपने दायित्वों को पूरा किए बिना योजना का अनुचित लाभ उठाने की अनुमति मिली।

(ख) खेल सुविधाएं विकसित करने में विफलता

बिल्डरों ने खेल सुविधाओं के निर्माण को शुरू करने का कोई प्रयास नहीं किया, जो स्पोर्ट्स सिटी परियोजना का प्राथमिक उद्देश्य था।

अतिक्रमण के दावों को खेल सुविधा निर्माण में देरी करने के बहाने के रूप में इस्तेमाल किया गया।

खेल सुविधाओं के निर्माण का दायित्व डमी कंपनियों को सौंपा गया था जिनका विफल होना पहले से ही तय था।

(ग) नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों की सक्रिय मिलीभगत

नोएडा प्राधिकरण के सभी स्तरों के अधिकारियों ने जानबूझकर इन धोखाधड़ी प्रथाओं को जारी रहने दिया।

वे परियोजना कार्यान्वयन की निगरानी करने, बकाया बकाया वसूलने, या योजना की शर्तों का अनुपालन लागू करने में विफल रहे।

बार-बार उल्लंघन के बाद भी उनकी निष्क्रियता ने सरकारी खजाने और घर खरीदारों के साथ व्यवस्थित धोखाधड़ी को सक्षम बनाया।

भूखंडों का उप-विभाजन और बिक्री

बिल्डरों ने आवंटित भूखंडों को उप-विभाजित किया और उन्हें अन्य व्यावसायिक घरानों या डेवलपर्स को प्रीमियम पर बेच दिया, जिससे नोएडा प्राधिकरण को पूर्ण प्रीमियम के भुगतान से बचते हुए पर्याप्त लाभ कमाया गया। यह प्रथा न केवल आवंटन की शर्तों का उल्लंघन थी, बल्कि इसके कारण सरकारी खजाने को भी महत्वपूर्ण नुकसान हुआ।

ड. प्रशासनिक आवरण को भेदना

119. यह केवल घोटाले के पीछे के खरीदारों के कॉर्पोरेट आवरण को हटाने का मामला नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा मामला है जहां 'प्रशासनिक आवरण' को भी हटाया जाना चाहिए और यह देखा जाना चाहिए कि वे कौन से अधिकारी/कर्मचारी शामिल थे जिन्होंने सभी नियमों और विनियमों को ताक पर रख दिया और इन घोटालेबाजों को नोएडा प्राधिकरण के साथ घोटाला करने की अनुमति दी। प्रशासनिक आवरण को हटाना यह देखने के लिए भी महत्वपूर्ण है कि शीर्ष पर कौन से अधिकारी थे जो इसमें शामिल थे, और किसके इशारे पर सब कुछ किया गया था। यदि हम केवल उस व्यक्ति के पीछे जाते हैं जिसने मानचित्र को मंजूरी दी या किस्तों का भुगतान कराने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की, तो यह छोटी मछलियों को पकड़ने और उन बड़ी मछलियों को बेदाग छोड़ देने जैसा होगा जो वास्तव में इतने बड़े घोटाले के लिए जिम्मेदार हैं। निर्णय लेने और कार्यान्वयन में शामिल, या अपनी आँखें बंद रखने और घोटाले को होने देने वाले प्रत्येक व्यक्ति को जवाबदेह ठहराया जाना चाहिए और उनके खिलाफ उचित कार्रवाई की जानी चाहिए। इस न्यायालय के लिए अत्यंत चौंकाने वाली बात यह है कि ऐसे अधिकारियों/कर्मचारियों के खिलाफ एक प्रथम सूचना रिपोर्ट तक दर्ज नहीं है। सरकार के मूल्यवान संसाधन नष्ट हो गए हैं।

120. आज तक, नोएडा प्राधिकरण द्वारा अपने बकाया या किस्तों की वसूली के लिए उस तारीख से कोई प्रयास नहीं किया गया है जब वे देय हुई थीं, और यह जांच का विषय है कि इन कंपनियों के खिलाफ बकाया भुगतान के लिए कोई कार्रवाई क्यों नहीं की गई। कोई भी यह सोचेगा कि क्या कारण था कि इतने लंबे समय तक इस मामले से जुड़े सभी तैनात अधिकारी चुप रहे और किसी ने भी देय किस्तों के भुगतान के लिए नहीं कहा, या स्पोर्ट्स सिटी के विकास का पीछा नहीं किया। जब नोएडा प्राधिकरण से यह सवाल पूछा गया, तो उनकी ओर से कोई भी तर्कसंगत कारण नहीं बताया गया।

121. पहला घोटाला नोएडा प्राधिकरण द्वारा भूखंडों को छोटे भूखंडों में विभाजित करने की अनुमति देकर और इसे अन्य छोटे बिल्डरों को बेचकर किया गया था, जो स्वतंत्र रूप से बोली लगाने के लिए पात्र भी नहीं थे, जिससे सरकारी खजाने को नुकसान हुआ, क्योंकि इसे 'ग्रुप हाउसिंग प्लॉट' मानकर नया आवंटन किया गया था, और हस्तांतरण के लिए कोई स्टाम्प शुल्क भी नहीं दिया गया था जिससे सरकारी खजाने को और अधिक नुकसान हुआ। भूखंड का आवंटन बहुत कम कीमत पर किया गया था। इसकी बिक्री निश्चित रूप से प्रीमियम पर हुई होगी।

122. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **सचिव, जयपुर विकास प्राधिकरण, जयपुर बनाम दौलत मल जैन एवं अन्य** के मामले में यह निर्धारित किया है कि जब सत्ता में बैठी सरकार लाक्षणिक रूप से अपनी शक्तियों का दुरुपयोग करती है, तो हमारा तात्पर्य व्यक्तिगत मंत्री/मंत्रिपरिषद से होता है जो सरकार के घटक होते हैं। सरकार अपने नौकरशाहों के माध्यम से कार्य करती है, जो सामाजिक स्थिरता और सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक प्रगति को बढ़ावा देने के लिए इसकी सामाजिक, आर्थिक और प्रशासनिक नीतियों को आकार देते हैं। सरकार के कार्यों को सामाजिक नैतिकता के लिए जवाबदेह होना चाहिए। इसलिए, व्यक्तियों के कार्य सरकार के कार्यों पर प्रतिबिंबित होंगे।

123. अनुपालन लागू करने, बकाया राशि वसूलने और परियोजना कार्यान्वयन की निगरानी करने में नोएडा प्राधिकरण की विफलता घोर लापरवाही को दर्शाती है। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की रिपोर्ट में अनियमितताओं को उजागर किए जाने के बावजूद दोषी अधिकारियों के विरुद्ध कोई कार्रवाई शुरू नहीं की गई है, जो नोएडा प्राधिकरण को इसके लिए जवाबदेह बनाता है। उच्चतम न्यायालय ने **भारत संघ बनाम हिंदुस्तान डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन** में यह व्यवस्था दी है कि सार्वजनिक अधिकारियों को ऐसी 'वैध अपेक्षाएं' पैदा करने के लिए जवाबदेह ठहराया जा सकता है जिनका बाद में उल्लंघन किया जाता है। विज्ञापन के बावजूद परियोजना सुविधा का निर्माण नहीं किया गया और न ही जनता को सुपुर्द किया गया।

ढ. न्यायिक हस्तक्षेप का दायरा

124. निर्धारण के लिए आने वाले बिंदुओं में से एक, प्रशासनिक निर्णयों और राज्य एवं उसके निकायों की प्रशासनिक कार्यवाही के मामलों में न्यायिक हस्तक्षेप का दायरा है। अब हमें यह सुनिश्चित करना है कि

परियोजना के आवंटन, कार्यान्वयन और विकास में प्राधिकरण के निर्णय का प्रयोग नेकनियती से किया गया था या बिल्डरों को अनुचित लाभ पहुँचाने के लिए दुर्भावनापूर्ण इरादे से किया गया था।

125. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **उदगार गगन प्रॉपर्टीज लिमिटेड बनाम संत सिंह** के मामले में यह निर्धारित किया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत याचिका विचारणीय है, क्योंकि यह केवल विवेक के ठोस और उचित प्रयोग पर आधारित अभ्यास का एक नियम है, न कि अधिकार क्षेत्र का कोई प्रतिबंध। न्यायालय धोखाधड़ी या कानून की प्रक्रिया के दुरुपयोग पर आधारित किसी भी अवैध कार्रवाई को रद्द कर सकता है।

126. सामान्यतः न्यायालय न तो प्रशासनिक निर्णयों में हस्तक्षेप करता और न ही रिट याचिका में की गई प्रार्थना से आगे जाता, लेकिन अभिवचनों में दिए गए तथ्यों को देखने से यह स्पष्ट है कि स्पोर्ट्स सिटी परियोजना की शुरुआत से ही नोएडा प्राधिकरण की कार्रवाई अन्यायपूर्ण, तर्कहीन, अवैध और धोखाधड़ी से भरी थी। लिए गए प्रशासनिक निर्णय पूरी तरह से परियोजना की योजना के विपरीत, विवरणिका की शर्तों, पट्टे की शर्तों और आवंटन पत्र के विपरीत थे, जिससे सरकारी खजाने को भारी नुकसान हुआ था, इसलिए हमारे पास इस मामले में हस्तक्षेप करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था।

127. इसमें शामिल सार्वजनिक हित को देखते हुए, न्यायालय इस रिट याचिका की सीमाओं को बढ़ा रहा है और याचिका में की गई प्रार्थना से आगे जा रहा है। न्यायालय के पास पूर्ण न्याय के लिए प्रार्थना से परे जाकर आदेश पारित करने और मामले के दौरान प्रस्तुत तथ्यों का न्यायिक संज्ञान लेने तथा उचित निर्देश पारित करने की शक्ति है। ये तथ्य दर्शाते हैं कि न केवल याचिकाकर्ता दुर्भावनापूर्ण इरादे के साथ न्यायालय आ रहा है, बल्कि नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के हाथ भी समान रूप से कलंकित हैं। इसके कारण संसाधनों की हानि (वह भूमि जिस पर खेल सुविधाओं के विकास के बदले में विकास की अनुमति दी गई थी), राजस्व की हानि (पट्टा किराया, ब्याज और जुर्माने का भुगतान) और सार्वजनिक सुविधाओं की हानि (क्योंकि खेल सुविधाएं नहीं बनाई गई हैं) हुई हैं।

128. सरकारी कार्यों और उद्देश्यों के पीछे का इरादा जन कल्याण और राष्ट्रीय हित को बढ़ावा देना है। 'जनहित' का अर्थ नागरिकों के हितों की रक्षा करना है, चाहे वह एक क्षेत्रीय इकाई के रूप में हो या संपूर्ण राष्ट्र के रूप में। इसका उद्देश्य सार्वजनिक नीतियों को आगे बढ़ाना भी है। नीतियों की सीमाएं जनहित के साथ इसलिए रखी जाती हैं ताकि व्यक्तिगत लाभ या अवैध परितोषण के लिए पद या कार्यकारी कार्यों के शोषण, दुरुपयोग या कुप्रयोग को रोका जा सके।

129. तथाकथित सार्वजनिक नीति, सार्वजनिक कर्तव्यों के पालन के लिए सार्वजनिक प्राधिकरण या लोक सेवक को सौंपी गई शक्ति और विश्वास के दुरुपयोग का छद्म आवरण नहीं हो सकती। दुरुपयोग का तात्पर्य कुछ अनुचित करने से है। अनुचितता का सार सार्वजनिक उद्देश्य के स्थान पर निजी उद्देश्य को रखना है। जब कर्तव्यों के पालन में मांगी गई संतुष्टि आपसी व्यक्तिगत लाभ के लिए होती है, तो उस दुरुपयोग को आमतौर

पर 'भ्रष्टाचार' कहा जाता है। सार्वजनिक पद धारण करने वाले व्यक्ति के बारे में तब कहा जाता है कि उसने अपने पद का दुरुपयोग किया है, जब सार्वजनिक हित के विपरीत, निजी संतुष्टि की तलाश में उसने ऐसा कुछ किया हो जो उसे नहीं करना चाहिए था।

ण. सीबीआई जांच

130. यह मामला बिल्डरों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के गंदे गठजोड़ का एक 'केस स्टडी' हो सकता है, जहां बिल्डरों को एक के बाद एक लाभ दिए गए, जो योजना, एमओए और स्पोर्ट्स सिटी योजना के कार्यान्वयन के पूरी तरह से विपरीत था। पिछले इतने वर्षों में नोएडा प्राधिकरण में कई अधिकारी आए और गए और आश्चर्यजनक रूप से किसी ने भी इस घोटाले के खिलाफ आवाज नहीं उठाई, या उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की, और बकाया राशि वसूलने का कोई प्रयास नहीं किया, तथा स्पोर्ट्स सिटी के सभी आवंटियों/उप-पट्टेदारों को अनुचित लाभ/मदद देना जारी रखा, जो नोएडा प्राधिकरण/बैंक और राज्य सरकार के हितों के प्रतिकूल था।

131. सबसे चौंकाने वाली बात यह है कि कैग (CAG) ने 2021 में इस घोटाले का खुलासा किया था, लेकिन आज तक नोएडा प्राधिकरण या राज्य सरकार ने इस घोटाले में शामिल किसी भी अधिकारी के खिलाफ एक भी प्रथम सूचना दर्ज नहीं की है। नुकसान की भरपाई के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया, केवल 24.07.2023 को एक नोटिस भेजा गया जिसमें बिल्डरों से बकाया प्रीमियम का भुगतान करने के लिए कहा गया था। हालांकि, बकाया राशि वसूलने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की गई है। यह दर्शाता है कि बिल्डर लॉबी कितनी प्रभावशाली है, और सरकारी व्यवस्था में उनकी पकड़ कितनी गहरी है।

132. न्यायालय यह कहने में गलत नहीं होगा कि भ्रष्ट अधिकारियों और उन बिल्डरों को बचाने के प्रयास किए जा रहे हैं जिन्होंने राज्य सरकार और नोएडा प्राधिकरण के साथ धोखाधड़ी करके भारी मात्रा में पैसा कमाया है।

133. न्यायालय यह भी समझता है कि सभी जांच सीबीआई को नहीं सौंपी जा सकती। वास्तव में न्यायालयों को सीधे मामलों को सीबीआई को भेजने में संकोच करना चाहिए। हालांकि, उच्च पदाधिकारियों की संलिप्तता की संभावना को देखते हुए, सीबीआई जांच अधिक वांछनीय है।

134. माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिशा बनाम गुजरात राज्य के मामले में, जांच को सीबीआई या अन्य विशेष एजेंसियों को स्थानांतरित करने को तब उचित ठहराया है जब शक्तिशाली और प्रभावशाली व्यक्ति या राज्य प्राधिकरण जांच में शामिल हों, और उन मामलों में जहाँ जांच के सही दिशा में जाने की संभावना न हो या उसके पक्षपाती होने की आशंका हो। माननीय न्यायालय का मानना है कि यह उपाय अंतिम परिणाम को विश्वसनीयता प्रदान करने के लिए है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि नोएडा प्राधिकरण और राज्य सरकार जैसे संस्थान में विभिन्न महत्वपूर्ण पदों पर रहे क्रमिक अधिकारियों ने आवंटियों की इस भारी विफलता के प्रति आँखें मूँद लीं, और इनमें से कई अधिकारी अब महत्वपूर्ण और उच्च पदों पर हैं, इस मामले की जांच के लिए

एक स्वतंत्र एजेंसी को निर्देश देना उचित होगा। यह विशेष रूप से कैग की रिपोर्ट के आलोक में और भी आवश्यक है, जिस पर न तो राज्य और न ही नोएडा प्राधिकरण द्वारा कोई कार्रवाई की गई है।

135. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **पश्चिम बंगाल राज्य बनाम कमेटी फॉर प्रोटेक्शन ऑफ डेमोक्रेटिक राइट्स, पश्चिम बंगाल** के मामले में निम्नलिखित व्यवस्था दी है:

"70. मामले से अलग होने से पहले, हम यह रेखांकित करना आवश्यक समझते हैं कि संविधान के अनुच्छेद 32 और 226 द्वारा प्रदत्त व्यापक शक्तियों के बावजूद, कोई भी आदेश पारित करते समय, न्यायालयों को इन संवैधानिक शक्तियों के प्रयोग पर कुछ स्व-आरोपित सीमाओं को ध्यान में रखना चाहिए। उक्त अनुच्छेदों के तहत शक्ति की प्रचुरता ही इसके प्रयोग में अत्यधिक सावधानी की अपेक्षा करती है। जहाँ तक किसी मामले में जांच करने के लिए सीबीआई को निर्देश जारी करने का प्रश्न है, हालांकि यह तय करने के लिए कोई लचीला दिशानिर्देश निर्धारित नहीं किया जा सकता कि ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए या नहीं, लेकिन समय-समय पर यह दोहराया गया है कि ऐसा आदेश नियमित रूप से या केवल इसलिए पारित नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि किसी पक्ष ने स्थानीय पुलिस के खिलाफ कुछ आरोप लगाए हैं। इस असाधारण शक्ति का प्रयोग संयम से, सावधानीपूर्वक और असाधारण स्थितियों में किया जाना चाहिए जहाँ जांच में विश्वसनीयता प्रदान करना और विश्वास जगाना आवश्यक हो जाए, या जहाँ घटना के राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव हो सकते हैं, या जहाँ पूर्ण न्याय करने और मौलिक अधिकारों को लागू करने के लिए ऐसा आदेश आवश्यक हो सकता है। अन्यथा सीबीआई बड़ी संख्या में मामलों से भर जाएगी और सीमित संसाधनों के साथ, गंभीर मामलों की भी ठीक से जांच करना उसके लिए कठिन हो सकता है और इस प्रक्रिया में असंतोषजनक जांच के कारण वह अपनी विश्वसनीयता और उद्देश्य खो सकती है।"

136. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **माइनर इरिगेशन एंड रूरल इंजीनियरिंग सर्विसेज, यू.पी. बनाम सांगू राम** के मामले में यह निर्धारित किया है कि सीबीआई द्वारा जांच का निर्देश देने वाला आदेश केवल तभी पारित किया जाना चाहिए जब उच्च न्यायालय, रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री पर विचार करने के बाद, इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि ऐसी सामग्री प्रथम दृष्टया एक ऐसा मामला प्रकट करती है जिसमें सीबीआई या किसी अन्य समान एजेंसी द्वारा जांच की आवश्यकता है।

137. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **के.वी. राजेंद्रन बनाम पुलिस अधीक्षक, सीबीसीआईडी** के मामले में निम्नलिखित व्यवस्था दी है:

"13. इसमें शामिल मुद्दा अब 'रेस इंटेग्रा' (नया या अननिर्णीत) नहीं रह गया है। इस न्यायालय ने समय-समय पर इस मुद्दे पर विचार किया है कि किन परिस्थितियों में जांच को राज्य की जांच एजेंसी से किसी अन्य स्वतंत्र जांच एजेंसी जैसे सीबीआई को स्थानांतरित किया जा सकता है। यह निर्धारित किया गया है कि ऐसी जांच को स्थानांतरित करने की शक्ति का प्रयोग दुर्लभ और असाधारण मामलों में ही किया जाना चाहिए, जहाँ

न्यायालय इसे पक्षों के बीच न्याय करने और जनता के मन में विश्वास जगाने के लिए आवश्यक पाता है, या जहाँ राज्य पुलिस द्वारा की गई जांच में विश्वसनीयता की कमी हो और "एक निष्पक्ष, ईमानदार और पूर्ण जांच" के लिए यह आवश्यक हो, और विशेष रूप से, जब राज्य की एजेंसियों के निष्पक्ष कामकाज में जनता का विश्वास बनाए रखना अनिवार्य हो।"

138. माननीय उच्चतम न्यायालय ने साकिरी वासु बनाम उत्तर प्रदेश राज्य के मामले में निम्नलिखित व्यवस्था दी है:

"31. ... इस न्यायालय या उच्च न्यायालय के पास अनुच्छेद 136 या अनुच्छेद 226 के तहत सीबीआई द्वारा जांच का आदेश देने की शक्ति है। हालाँकि, ऐसा केवल कुछ दुर्लभ और असाधारण मामलों में ही किया जाना चाहिए, अन्यथा सीबीआई बड़ी संख्या में मामलों से भर जाएगी और उसके लिए उन सभी की ठीक से जांच करना असंभव हो जाएगा।"

139. माननीय उच्चतम न्यायालय ने रुबाबउद्दीन शेख बनाम गुजरात राज्य के मामले में यह निर्धारित किया है कि जब आरोपी राज्य के बहुत वरिष्ठ अधिकारी हों, तब राज्य की जांच एजेंसी द्वारा जांच संतोषजनक ढंग से नहीं की जा सकती है। अतः, न्याय करने और पीड़ितों के साथ-साथ जनता के मन में विश्वास जगाने के लिए, राज्य पुलिस प्राधिकरण को जांच जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती जब आरोप और अपराध मुख्य रूप से शीर्ष अधिकारियों के खिलाफ हों। ऐसी स्थिति में जांच किसी अन्य स्वतंत्र जांच एजेंसी को सौंपी जानी चाहिए।

140. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय के पास जांच को सीबीआई को संदर्भित करने के अलावा और कोई विकल्प नहीं है। सीबीआई इस घोटाले में शामिल सभी व्यक्तियों की भूमिका की भी जांच करेगी। हमें उम्मीद और विश्वास है कि जांच शीघ्रता से की जाएगी और पूरी की जाएगी।

त. कॉर्पोरेट दिवालियापन

141. याचिकाकर्ता के मामले में, शुरू की गई कॉर्पोरेट दिवालियापन प्रक्रिया 'टेलर मेड' (विशेष रूप से तैयार की गई) प्रतीत होती है, और यह कुछ और नहीं बल्कि याचिकाकर्ता की एक कुटिल योजना और याचिकाकर्ता कंपनी के प्रवर्तक/प्रबंधन द्वारा की गई धोखाधड़ी का परिणाम है, ताकि स्पोर्ट्स सिटी परियोजना की खेल सुविधाओं के विकास की पूरी जिम्मेदारी से बचा जा सके। यहाँ याचिकाकर्ता के प्रवर्तकों ने कंपनियों का एक जाल बनाया था और उन्होंने अन्य सदस्य/सहायक कंपनियों के साथ विभिन्न पट्टा विलेख निष्पादित करने का अनुरोध किया था, जो पूरी तरह से प्रवर्तकों (अर्थात निर्मल सिंह, सुरप्रीत सिंह सूरी और विदुर भारद्वाज) के स्वामित्व और नियंत्रण में थीं। उनके अनुरोध पर, नोएडा प्राधिकरण ने विभिन्न उप-पट्टे निष्पादित किए थे, लेकिन ऐसा लगता है कि समय के साथ उन्होंने नोएडा प्राधिकरण से अनुमति लिए बिना और परियोजना के पहले मील के

पत्थर को पूरा किए बिना ही कंपनियों को बेच दिया या शेयरों को तीसरे पक्ष/संस्थाओं को हस्तांतरित कर दिया, जो कि ऐसे हस्तांतरण की पूर्व-शर्त थी।

142. दिवालियापन एक रणनीतिक पैंतरेबाज़ी थी जिसे केवल देनदारियों से बचने और वादा की गई खेल सुविधाएं प्रदान करने की जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ने के लिए तैयार किया गया था।

143. अब प्रश्न यह है कि क्या वह कंपनी जो दिवालियापन में चली गई है, उस पर नोएडा प्राधिकरण के साथ-साथ राज्य और अन्य हितधारकों/लेनदारों के साथ धोखाधड़ी करने के लिए किए गए अपराधों के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है।

144. दिवाला और दिवालियापन संहिता का इरादा अनैतिक प्रवर्तकों को पैसा निकालने और फिर कानून का अवैध लाभ उठाने तथा केवल अपने दायित्वों को पूरा करने से बचने और नागरिक एवं आपराधिक देनदारियों से बचने के लिए दिवाला कार्यवाही शुरू करने की अनुमति देना नहीं था। छोटी अवधि और विशिष्ट उद्देश्यों के लिए कंपनियों का निर्माण उनके समाधान और यहाँ तक कि दिवालियापन की निरर्थकता की ओर ले जाता है। यह केवल उन देनदारियों को वहन करता है जो समाधान/परिसमापन प्रक्रिया के साथ समाप्त हो जाएंगी या बहुत कम हो जाएंगी। आईबीसी के पीछे यह मंशा नहीं हो सकती थी।

145. कानून की प्रगति शायद ही कभी दुरुपयोग के तरीकों के साथ तालमेल बिठाने या हर संभावित स्थिति के लिए प्रावधान करने में सक्षम होती है। इस प्रकार, 'कॉमन लॉ' न्यायक्षेत्रों में, न्यायपालिका के पास कानून के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, मामले-दर-मामले के आधार पर उजागर होने वाली कमियों को भरने की शक्ति और कर्तव्य है। दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 का उद्देश्य, अन्य बातों के साथ-साथ, कॉर्पोरेट देनदार की संपत्ति के मूल्य का अधिकतम उपयोग करना, उद्यमिता को बढ़ावा देना, ऋण की उपलब्धता और सरकार सहित सभी हितधारकों के हितों को संतुलित करना है। सीआईआरपी का सहारा लेकर नुकसान या देनदारी को छिपाने और मिटाने की अनुमति देना आईबीसी का इरादा नहीं है। इस तरह की कार्रवाई कानून के साथ धोखाधड़ी होगी। आईबीसी का उद्देश्य राष्ट्रीय महत्व की परियोजना में बाधा डालना कभी नहीं है।

146. आईबीसी अभी भी भारत और विदेशों में विकसित हो रहा है। वास्तव में, 'संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कानून आयोग' ने उद्यम समूहों की दिवालियापन से संबंधित कानून की रिक्ति को भरने के लिए एक 'वर्किंग ग्रुप V' की स्थापना की है, जो विभिन्न देशों में फैले (कॉर्पोरेट) समूह के सदस्यों की अंतर्निर्भरता के मुद्दे पर सीमा-पार दिवालियापन कानून के दिशा-निर्देश प्रदान करने के लिए बनाया गया है। आई.बी. कोड में इस कमी को भरने की आवश्यकता को भारत सरकार के कॉर्पोरेट कार्य मंत्रालय द्वारा भी 18.06.2018 के सार्वजनिक नोटिस के माध्यम से स्वीकार किया गया है।

थ. जब कंसोर्टियम का कोई सदस्य दिवालिया हो जाता है तो कंसोर्टियम पर प्रभाव

147. जहाँ तक कंसोर्टियम (संघ) के किसी सदस्य के दिवालियापन का प्रश्न है, बहुत कम न्यायक्षेत्रों में इस विषय पर कोई कानून है। अंतर्राष्ट्रीय कानून में भी इस संबंध में कोई महत्वपूर्ण विकास नहीं हुआ है जो ऐसी स्थितियों में मार्गदर्शन दे सके। इस प्रकार, वर्तमान मामला एक बहुत ही दिलचस्प और नया कानूनी प्रश्न प्रस्तुत करता है।

148. जब कंसोर्टियम का कोई सदस्य दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 के तहत दिवालिया हो जाता है, तो कंसोर्टियम पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा?

149. हम इस मामले में दिशा-निर्देश पारित करने के लिए बाध्य हैं क्योंकि दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 कंसोर्टियम के एक सदस्य के दिवालिया होने की स्थिति में अन्य सदस्यों के अधिकारों के बारे में मौन है। चूँकि कंसोर्टियम की कंपनियाँ मेगा परियोजनाओं के विकास के लिए आवेदन करती हैं और यदि इस शून्यता को नहीं भरा गया, तो सक्षम कंपनियाँ भी, जो कंसोर्टियम की सदस्य हैं, केवल एक सदस्य के दिवालियापन के कारण दिवालियापन की ओर खिंच सकती हैं। चूँकि दिवालिया सदस्य परियोजना के अपने हिस्से को पूरा करने में सक्षम नहीं होगा, और परियोजना का पूरा न होना निश्चित रूप से अन्य कंपनियों को प्रभावित करेगा जो कंसोर्टियम की सदस्य हैं। आई.बी. कोड, 2016 का उद्देश्य किसी सक्षम कंपनी को दिवालियापन में खींचना नहीं है।

द. सिफारिशें

150. उपरोक्त अनुच्छेदों में किए गए कानून के विश्लेषण के आधार पर, हम पैरा 148 में तैयार किए गए प्रश्न के उत्तर में निम्नलिखित अनुशंसाएँ निर्धारित करना उचित समझते हैं:-

(क) प्रथम उपाय के रूप में, आईआरपी उस कंपनी और प्राधिकरण को यह सूचित करेगा कि वह यह जानना चाहता है कि क्या कंपनी उस कंसोर्टियम को दिए गए अनुबंध में अपने कार्यों/दायित्वों का पालन जारी रखने की इच्छुक है, जिसका वह कंपनी एक सदस्य है। यह आईबीसी की धारा 20 के तहत आईआरपी के कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए होगा। यह संचार सीआईआरपी शुरू होने के अधिकतम 4 सप्ताह की अवधि के भीतर किया जाएगा और यह सीओसी के गठन से स्वतंत्र होगा। यदि उक्त अवधि के भीतर ऐसी कोई मंशा सूचित नहीं की जाती है, तो यह मान लिया जाएगा कि कंपनी संबंधित परियोजना में भाग लेने की इच्छुक नहीं है।

(ख) यदि आईआरपी, कंपनी (सीआईआरपी का सामना कर रहे कंसोर्टियम सदस्य) की क्षमताओं के मूल्यांकन के आधार पर, इस राय का है कि उक्त कंपनी कंसोर्टियम के व्यवसाय में उपयोगी या सार्थक रूप से भाग नहीं ले सकती है, तो वह उपरोक्त पैरा (क) में दी गई अवधि के भीतर अन्य कंसोर्टियम सदस्यों और प्राधिकरण (उक्त परियोजना के लिए) को सूचित करेगा। ऐसी स्थिति में अन्य कंसोर्टियम सदस्यों के पास (संयुक्त रूप से या अलग-अलग) शेष परियोजना को अपने दम पर लेने और उसे पूरा करने का विकल्प होगा। कंसोर्टियम

सदस्यों द्वारा परियोजना को पूरा करने के विकल्प का प्रयोग 4 सप्ताह की अवधि के भीतर किया जाएगा, जो या तो उपरोक्त पैरा (क) में उल्लिखित 4 सप्ताह की अवधि की समाप्ति से (यदि आईआरपी से कोई संचार प्राप्त नहीं होता है) या आईआरपी के इस संचार के 4 सप्ताह के भीतर शुरू होगा कि उक्त कंपनी कंसोर्टियम के व्यवसाय में भाग लेने की स्थिति में नहीं है।

(ग) यदि कंसोर्टियम सदस्य सीआईआरपी का सामना कर रहे सदस्य की भागीदारी के बिना अपने दम पर परियोजना को पूरा करने की इच्छा व्यक्त करने में विफल रहते हैं या उक्त परियोजना को पूरा करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हैं, तो प्राधिकरण परियोजना को समय पर पूरा करने सुनिश्चित करने के लिए वैकल्पिक व्यवस्था करेगा।”

151. ये दिशानिर्देश परियोजना को पूरा करने और सभी हितधारकों के हितों को सुरक्षित करने को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किए गए हैं।

घ. दिशानिर्देश

152. उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय निम्नलिखित निर्देश जारी करता है:-

(क) इस निर्णय के पैरा 150 में दी गई अनुशंसाओं के अनुसार, संबंधित पक्षों को विषयगत परियोजना को शीघ्र पूरा करने के हित में कदम उठाने का निर्देश दिया जाता है; और

(ख) केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई) को एतद्वारा निर्देश दिया जाता है कि वह स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के आवंटन, विकास, स्वीकृति में शामिल नोएडा प्राधिकरण के सभी मिलीभगत करने वाले अधिकारियों और आवंटियों/बिल्डरों तथा वर्तमान घोटाले में शामिल होने वाले किसी भी अन्य व्यक्ति के खिलाफ शिकायत दर्ज करे।

(ग) हालांकि, पक्षों के समग्र आचरण को देखते हुए, हम वर्तमान रिट याचिका में मांगी गई किसी भी राहत को प्रदान करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से इनकार करते हैं।

(घ) उपर्युक्त निर्देशों के साथ, यह याचिका निस्तारित की जाती है।

(ङ) पक्ष अपना-अपना खर्च स्वयं वहन करेंगे।

(2025) 2 ILRA 360

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक : इलाहाबाद, 14.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति पीयूष अग्रवाल

रिट कर संख्या - 830 सन् 2024

एम/एस जुहूर इन्फ्राटेक प्रा० लि० ... याचिकाकर्ता

बनाम

अपर आयुक्त ग्रेड-2 एवं अन्य ... प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता : नितिन कुमार केसरवानी

प्रतिवादियों के अधिवक्ता : मुख्य स्थायी अधिवक्ता

A. कर विधि - वस्तुओं का अवरोधन एवं जब्ती - ई-कर चालान एवं ई-वे बिल - प्रेषण पते का स्थान भिन्न रूप से उल्लेखित - वस्तुओं की गुणवत्ता एवं मात्रा के संबंध में कोई दोष नहीं पाया गया - प्रभाव - अभिधारित किया गया कि यदि प्रेषण का स्थान गलत रूप से भरा गया है, तो यह मात्र एक तकनीकी त्रुटि है - ई-वे बिल अपनी वैधता अवधि के भीतर निरस्त नहीं किया गया, अतः याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई प्रतिकूल दृष्टिकोण नहीं अपनाया जा सकता - जब्ती अथवा दण्डासेपण नहीं किया जा सकता। (पैरा 10, 12 एवं 14)

रिट याचिका अनुमन्य। (E-1)

उद्धृत वादों की सूची :

एम/एस सन फ्लैग आयरन एण्ड स्टील कम्पनी लिमिटेड बनाम स्टेट ऑफ यू.पी. एवं अन्य;
2023:ए.एच.सी.:215906

(माननीय न्यायमूर्ति पीयूष अग्रवाल द्वारा प्रदत्त)

1. आज दाखिल की गई अनुपूरक शपथपत्र अभिलेख पर ग्रहण की जाती है।

2. याचिकाकर्ता की ओर से श्री नितिन कुमार केसरवानी तथा राज्य-प्रतिवादियों की ओर से श्री रवि शंकर पाण्डेय, विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता, को सुना गया।

3. वर्तमान याचिका के माध्यम से याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 23.01.2024 को अपर आयुक्त, ग्रेड-02 (अपील)-V, राज्य कर, कानपुर, प्रतिवादी संख्या-1 द्वारा पारित आदेश तथा दिनांक 20.12.2022 को सहायक आयुक्त, सेक्टर-2 (मोबाइल स्क्वॉड-4), कानपुर, प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा पारित आदेश को आक्षेपित किया गया है।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याचिकाकर्ता एक पंजीकृत व्यापारी है, जिसका जी.एस.टी.आई.एन. संख्या 19AACZ8741R1ZA है, तथा व्यवसाय के सामान्य क्रम में याचिकाकर्ता को कृष्णा कॉन्स्ट्रक्शन प्रा० लि०, नई दिल्ली से 16 मि.मी. टी.एम.टी. बार की आपूर्ति हेतु आदेश प्राप्त हुआ। उक्त आदेश के अनुपालन में याचिकाकर्ता ने एक निर्माता, अर्थात् रुड़गटा माइन्स लिमिटेड, झारखंड से संपर्क किया तथा स्पष्ट निर्देश के साथ उक्त आदेश प्रदान किया कि बिल याचिकाकर्ता के पक्ष में निर्गत किया जाए, किन्तु माल की डिलीवरी नई दिल्ली स्थित क्रेता पक्ष को की जाए। तत्पश्चात ई-कर चालान तथा ई-वे बिल उत्पन्न किए गए।

5. वे निवेदन करते हैं कि जब ई-कर चालान उत्पन्न किया गया, तब ई-वे बिल स्वतः ही भरा गया, अर्थात् ई-कर चालान की प्रविष्टियाँ जी.एस.टी. पोर्टल द्वारा निर्मित प्रणाली के माध्यम से ई-वे बिल में स्वतः अंकित हो गईं। वे आगे निवेदन करते हैं कि विवादित माल के साथ कर चालान, ई-वे बिल तथा प्रेषण-पत्र (कंसाइनमेंट नोट) संलग्न थे, तथापि झारखंड से नई दिल्ली की ओर परिवहन के दौरान उक्त माल को प्रतिवादी प्राधिकारी द्वारा इस आधार पर अवरोध किया गया कि ई-वे बिल में प्रेषण पत्र के स्थान पर पश्चिम बंगाल का पता (जो कि याचिकाकर्ता का पता है) अंकित है, जबकि कर चालान में प्रेषण का पता नई दिल्ली अंकित है। उक्त आधार पर याचिकाकर्ता के विरुद्ध वर्तमान कार्यवाही प्रारंभ की गई तथा दण्डादेश पारित किया गया। वे यह भी निवेदन करते हैं कि ई-वे बिल जी.एस.टी. पोर्टल द्वारा इलेक्ट्रॉनिक रूप से उत्पन्न किया जाता है तथा यह तथ्य रिट याचिका के पैरा संख्या 5 एवं 6 में स्पष्ट रूप से उल्लिखित है, जिसका प्रतिवादियों द्वारा खंडन नहीं किया गया है। वे आगे निवेदन करते हैं कि विवादित माल के संबंध में कर चालान में उल्लिखित विवरण तथा वास्तविक माल में न तो कोई भिन्नता है और न ही उसकी मात्रा या गुणवत्ता में कोई अंतर है, अपितु उपर्युक्त वर्णित तकनीकी त्रुटि के आधार पर ही याचिकाकर्ता के विरुद्ध कार्यवाही प्रारंभ की गई है, जो कि न्यायोचित नहीं है।

6. वे आगे निवेदन करते हैं कि ई-वे बिल का उद्देश्य मात्र यह है कि विभाग को किसी वस्तु के एक स्थान से दूसरे स्थान तक संचलन की जानकारी हो सके, जिससे कि संबंधित लेन-देन, यदि कोई कर देय हो, तो मूल निर्धारण आदेश पारित करते समय कराधान से वंचित न रह जाए। वे वर्तमान रिट याचिका को अनुमन्य किए जाने की प्रार्थना करते हैं।

7. इसके विपरीत, विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता आक्षेपित आदेशों का समर्थन करते हुए निवेदन करते हैं कि कार्यवाही विधि सम्मत रूप से प्रारंभ की गई है।

8. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के उपरांत न्यायालय ने अभिलेखों का अवलोकन किया।

9. यह विवादित नहीं है कि प्रश्नगत माल को झारखंड से नई दिल्ली की ओर परिवहन के दौरान इस तकनीकी आधार पर अवरुद्ध, निरुद्ध एवं जब्त किया गया कि ई-वे बिल में प्रेषण पते के स्थान पर पश्चिम बंगाल का पता अंकित था, जबकि ई-कर चालान में प्रेषण का पता नई दिल्ली अंकित है। तथापि, ई-कर चालान में उल्लिखित माल की मात्रा अथवा गुणवत्ता के संबंध में किसी प्रकार की अन्य कोई विसंगति इंगित नहीं की गई। रिट याचिका में स्पष्ट रूप से उल्लेखित है कि ई-कर चालान उत्पन्न करते समय प्रणाली ने ई-कर चालान से विवरण ग्रहण कर ई-वे बिल को स्वतः भर दिया था। यह तथ्य पैरा संख्या 4 एवं 5 में विशिष्ट रूप से उल्लिखित है, जिसका राज्य द्वारा दाखिल प्रतिशपथपत्र के पैरा संख्या 9 में खंडन नहीं किया गया है। जब ई-वे बिल में जी.एस.टी. पोर्टल द्वारा निर्मित ई-कर चालान से प्रणाली द्वारा स्वतः विवरण अंकित किए गए थे, तब याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।

10. आगे यह कि यदि प्रेषण का स्थान गलत रूप से अंकित हो गया है, तो यह मात्र एक तकनीकी त्रुटि है, बशर्ते कि भौतिक सत्यापन के समय ई-कर चालान तथा ई-वे बिल में वस्तुओं की गुणवत्ता अथवा मात्रा के संबंध में कोई अन्य दोष न पाया गया हो। अतः याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई प्रतिकूल दृष्टिकोण नहीं अपनाया जा सकता।

11. न्यायालय का मत है कि ई-वे बिल वह दस्तावेज है जो परिवहनाधीन वस्तुओं के साथ उत्पन्न होकर संलग्न रहता है, जिससे विभाग को वस्तुओं के एक स्थान से दूसरे स्थान तक संचलन की जानकारी हो सके, ताकि अंतिम निर्धारण करते समय संबंधित लेन-देन प्रचलित प्रावधानों के अनुसार जी.एस.टी. अधिनियम के अंतर्गत कराधान से वंचित न रह जाए।

12. आगे यह कि अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार ई-वे बिल को उसकी वैधता अवधि के भीतर निरस्त किया जा सकता है। वर्तमान वाद में ई-वे बिल दिनांक 14.12.2022 को स्वतः उत्पन्न किया गया था, जो दिनांक 16.12.2022 तक वैध था। वर्तमान प्रकरण में उक्त ई-वे बिल को उसकी वैधता अवधि के भीतर निरस्त नहीं किया गया, अतः याचिकाकर्ता के विरुद्ध यह प्रतिकूल दृष्टिकोण नहीं अपनाया जा सकता कि यदि माल को अवरुद्ध नहीं किया गया होता, तो संबंधित लेन-देन निर्धारण से बच सकता था।

13. इस न्यायालय ने एम/एस सन फ्लैग आयरन एण्ड स्टील कम्पनी लिमिटेड बनाम स्टेट ऑफ यू.पी. एवं अन्य; न्यूट्रल सिटेशन संख्या 2023:ए.एच.सी.:215906 के प्रकरण में अभिधारित किया है कि ई-वे बिल का उद्देश्य यह है कि विभाग को वस्तुओं के वास्तविक संचलन की जानकारी हो तथा जब ई-वे बिल

को निर्धारित अवधि के भीतर निरस्त नहीं किया गया हो, तब लेन-देन की वास्तविकता पर प्रश्न नहीं उठाया जा सकता।

उक्त निर्णय का प्रासंगिक अनुच्छेद निम्नवत् उद्धृत है :

11. जी.एस.टी. व्यवस्था के अंतर्गत समस्त विवरण जी.एस.टी. पोर्टल पर उपलब्ध रहते हैं तथा यह स्वीकृत है कि ई-कर चालान निर्गत किया गया था और ई-वे बिल उत्पन्न किया गया था तथा अधिनियम में प्रदत्त प्रावधान के अनुसार उसे 24 घंटे के भीतर निरस्त नहीं किया गया। जब उक्त तथ्य विवादित नहीं है और याचिकाकर्ता ने न तो कर चालान और न ही प्रश्नगत ई-वे बिल को वापस लेने का अपना अधिकार प्रयुक्त किया, तब विभाग के संज्ञान में यह तथ्य था कि प्रश्नगत वस्तुओं का संचलन याचिकाकर्ता द्वारा किया गया है। मात्र इस तकनीकी आधार पर कि प्रश्नगत वस्तुओं के साथ संलग्न ई-वे बिल दिनांक 01.06.2023 को समाप्त हो गया था, जबकि वाहन को दिनांक 02/03.06.2023 की मध्यरात्रि में अवरुद्ध किया गया।

12. ई-वे बिल का उद्देश्य यह है कि विभाग को वस्तुओं के संचलन की जानकारी हो। एक बार ई-वे बिल उत्पन्न कर दिया गया हो तथा अधिनियम के अंतर्गत निर्धारित अवधि के भीतर उसे याचिकाकर्ता द्वारा निरस्त न किया गया हो, तो प्रश्नगत वस्तुओं के संचलन तथा संबंधित लेन-देन की वास्तविकता को विवादित नहीं किया जा सकता।

14. अतः मात्र इस तकनीकी आधार पर कि प्रश्नगत वस्तुओं के साथ संलग्न ई-वे बिल में प्रेषण का स्थान गलत रूप से उल्लेखित है, जब्ती अथवा दण्डारोपण नहीं किया जा सकता।

15. उपर्युक्त तथ्यों एवं प्रकरण की परिस्थितियों के आलोक में, याचिकाकर्ता के विरुद्ध प्रारंभ की गई कार्यवाही विधि की दृष्टि में न्यायोचित नहीं है।

16. परिणामस्वरूप, रिट याचिका सफल होती है तथा अनुमन्य की जाती है। अपर आयुक्त, ग्रेड-02 (अपील)-V, राज्य कर, कानपुर, प्रतिवादी संख्या-1 द्वारा पारित दिनांक 23.01.2024 का आक्षेपित आदेश तथा सहायक आयुक्त, सेक्टर-2 (मोबाइल स्कॉड-4), कानपुर, प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा पारित दिनांक 20.12.2022 का आदेश, एतद्वारा निरस्त किए जाते हैं।

17. वर्तमान कार्यवाही में याचिकाकर्ता द्वारा जमा की गई किसी भी राशि को विधि के अनुसार उसे शीघ्रातिशीघ्र, अधिमानतः इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत किए जाने की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर, वापस किया जाएगा।

(2025) 2 ILRA 363

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 27.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति शेखर बी. सराफ

माननीय न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित

रिट टैक्स संख्या 2300 वर्ष 2024

मेसर्स रजत इंफ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड

...याचिकाकर्ता

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

...प्रत्यर्थी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

आशीष श्रीवास्तव, अतुल श्रीवास्तव

प्रत्यर्थी के अधिवक्ता:

ए.एस.जी.आई., अबरार अहमद, धनंजय अवस्थी, पर्व अग्रवाल, आर.वी. पांडे

सिविल विधि - उत्तर प्रदेश माल और सेवा कर अधिनियम, 2017 - धारा 83 - याचिकाकर्ता के बैंक खाते की अनंतिम कुर्की की गई - याचिकाकर्ता की आपतियों का प्रतिवादी प्राधिकारियों द्वारा निपटारा किया गया और अधिनियम की धारा 83 के तहत एक वर्ष की अवधि के लिए अनंतिम कुर्की को न्यायसंगत ठहराया गया - कारण बताओ नोटिस पर पहले ही निर्णय लिया जा चुका है और अधिनियम की धारा 74 के तहत आदेश पारित किया गया था - अधिनियम की धारा 107 के तहत अपील दायर करने का वैधानिक वैकल्पिक उपचार।

रिट याचिका खारिज। (ई-9)

उद्धृत वादों की सूची:

मेसर्स राधा कृष्ण इंडस्ट्रीज बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. 2021 सुप्रीम कोर्ट 2114 में प्रतिवेदित

(माननीय न्यायमूर्ति शेखर बी. सराफ एवं माननीय न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित द्वारा पारित)

1. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री सीताराम यादव; प्रतिवादी संख्या 1 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री अबरार अहमद; प्रतिवादी संख्या 2, 3 और 5 की ओर से उपस्थित विद्वान

अधिवक्ता, श्री धनंजय अवस्थी और प्रतिवादी संख्या 4 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री आर.वी. पांडेय को सुना गया।

2. यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक रिट याचिका है, जिसमें रिट याचिकाकर्ता प्रतिवादी अधिकारियों द्वारा 8 जुलाई, 2024 और 30 अक्टूबर, 2024 को पारित आदेशों से व्यथित है।

3. प्रथम आदेश दिनांक 8 जुलाई, 2024 का एक ऐसा आदेश है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता के बैंक खाते की अनंतिम कुर्की की गई थी। उत्तर प्रदेश माल और सेवा कर अधिनियम, 2017 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 83 के अधीन इस अनंतिम कुर्की आदेश को पारित करने के बाद याचिकाकर्ता ने उच्च न्यायालय का रुख किया और इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने दिनांक 15 अक्टूबर, 2024 के आदेश द्वारा अधिकारियों को निर्देश दिया था कि वे याचिकाकर्ता की आपत्तियों पर विचार करें, और उसके उपरांत विधि के अनुसार एक तर्कसंगत आदेश पारित करें। उसके बाद, याचिकाकर्ता द्वारा आपत्तियां योजित की गईं और याचिकाकर्ता को सुनवाई का अवसर प्रदान करने के बाद दिनांक 30 अक्टूबर, 2024 का आदेश पारित किया गया।

4. उक्त आदेश के अवलोकन पर यह प्रतीत होता है कि उक्त आदेश एक तर्कसंगत आदेश है, जो स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ता के तथ्यात्मक मैट्रिक्स को दर्शाता है कि उसने जिन व्यक्तियों को सेवाएं प्रदान की थीं, उनसे सेवा कर प्राप्त किया, लेकिन सेवा कर विभाग में उसे जमा करने में विफल रहा।

5. यह ध्यान देने योग्य है कि दिनांक 8 जुलाई, 2024 के अनंतिम कुर्की के आदेश के बाद, विभाग द्वारा 24 जुलाई, 2024 को एक कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। उक्त कारण बताओ नोटिस के अधीन कार्यवाही भी दिनांक 30 दिसंबर, 2024 को अधिनियम की धारा 74 के अधीन पारित आदेश में परिणत हुई है। उक्त आदेश का संबंधित भाग नीचे प्रदान दिया गया है:-

"43. उपरोक्त चर्चा और निष्कर्षों के दृष्टिगत, मैं निम्नलिखित आदेश पारित करता हूं:

आदेश

[क]

(i) मैं मेसर्स रजत इंफ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड, (जीएसटीआईएन-09AAFCR7861J2ZR), 545, लखनपुर, ख्योरा बंगर, विकास नगर, कानपुर नगर-208001 द्वारा जुलाई, 2017 से सितंबर, 2023 की अवधि के दौरान भुगतान न की गई ₹.2,23,73,267/- (रुपये दो करोड़ तेईस लाख तिहतर हजार दो सौ सड़सठ मात्र) की सीजीएसटी की मांग की पुष्टि करता हूं और पूर्वगामी प्रस्तरों में चर्चा के अनुसार सीजीएसटी अधिनियम, 2017 की धारा 74(1) के अधीन उनसे इसकी वसूली का आदेश देता हूं।

(ii) मैं मेसर्स रजत इंफ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड, (जीएसटीआईएन-09AAFCR7861J2ZR), 545, लखनपुर, ख्योरा बंगर, विकास नगर, कानपुर नगर 208001 द्वारा जुलाई, 2017 से सितंबर, 2023 की अवधि के दौरान भुगतान न की गई रु.2,23,73,267/- (रुपये दो करोड़ तेईस लाख तिहतर हजार दो सौ सड़सठ मात्र) की एसजीएसटी की मांग की पुष्टि करता हूं और पूर्वगामी प्रस्तरों में चर्चा के अनुसार यूपीजीएसटी अधिनियम, 2017 की धारा 74(1) के अधीन उनसे इसकी वसूली का आदेश देता हूं।

(iii) मैं उपरोक्त प्रस्तर (i) और प्रस्तर (ii) में उल्लिखित और पूर्वगामी प्रस्तरों में वर्णित जीएसटी मांग पर सीजीएसटी अधिनियम, 2017 की धारा 50 के प्रावधानों और यूपीजीएसटी अधिनियम, 2017 के संबंधित प्रावधानों के अधीन लागू दरों पर उनसे ब्याज की वसूली का आदेश देता हूं।

(iv) मैं पूर्वगामी प्रस्तरों में वर्णित सीजीएसटी अधिनियम, 2017 के विभिन्न उल्लंघनों के संबंध में, सीजीएसटी अधिनियम, 2017 की धारा 122(2)(b) सपठित धारा 74 के अधीन उन पर रु.2,23,73,267/- (रुपये दो करोड़ तेईस लाख तिहतर हजार दो सौ सड़सठ मात्र) का अर्थदंड अधिरोपित करता हूं।

(v) मैं पूर्वगामी प्रस्तरों में वर्णित यूपीजीएसटी अधिनियम, 2017 के विभिन्न उल्लंघनों के संबंध में, यूपीजीएसटी अधिनियम, 2017 की धारा 122(2)(ख) सपठित धारा 74 के अधीन उन पर रु.2,23,73,267/- (रुपये दो करोड़ तेईस लाख तिहतर हजार दो सौ सड़सठ मात्र) का अर्थदंड अधिरोपित करता हूं।

(vi) मैं पूर्वगामी प्रस्तरों में वर्णित सीजीएसटी अधिनियम, 2017 के विभिन्न उल्लंघनों के संबंध में सीजीएसटी अधिनियम, 2017 की धारा 125 के अधीन उन पर रु.25,000/- (रुपये पच्चीस हजार मात्र) का अर्थदंड अधिरोपित करता हूं।

(vii) मैं पूर्वगामी प्रस्तरों में वर्णित यूपीजीएसटी अधिनियम, 2017 के विभिन्न उल्लंघनों के संबंध में यूपीजीएसटी अधिनियम, 2017 की धारा 125 के अधीन उन पर रु.25,000/- (रुपये पच्चीस हजार मात्र) का अर्थदंड अधिरोपित करता हूं।

[ख] (i) मैं श्री प्रभाकांत श्री राम यादव, निदेशक, मेसर्स रजत इंफ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (जीएसटीआईएन-09AAFCR7861J2ZR), 545, लखनपुर ख्योरा बंगर, विकास नगर, कानपुर नगर, 208001 (यूपी) पर सीजीएसटी अधिनियम, 2017 की धारा 127 सपठित धारा 122 (1क), धारा 122 (3), धारा 125 के अधीन रु.2,23,73,267/- (रुपये दो करोड़ तेईस लाख तिहतर हजार दो सौ सड़सठ मात्र) का अर्थदंड अधिरोपित करता हूं।

(ii) मैं श्री प्रभाकांत श्री राम यादव, निदेशक, मेसर्स रजत इंफ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (जीएसटीआईएन-09AAFCR7861J2ZR), 545, लखनपुर ख्योरा बंगर, विकास नगर, कानपुर नगर, 208001 (यूपी) पर

यूपीजीएसटी अधिनियम, 2017 की धारा 127 सपठित धारा 122 (1क), धारा 122 (3), धारा 125 के अधीन रु.2,23,73,267/- (रुपये दो करोड़ तेईस लाख तिहतर हजार दो सौ सड़सठ मात्र) का अर्थदंड अधिरोपित करता हूँ।"

6. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता अधिनियम की धारा 74 के अधीन पारित आदेश के विरुद्ध अपील योजित करने की प्रक्रिया में है।

7. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने एक बार फिर अधिनियम की धारा 83 के अधीन अनंतिम कुर्की का सहारा लेने की मनमानी कार्रवाई के संबंध में आपत्ति उठाई है। वह **मेसर्स राधा कृष्ण इंडस्ट्रीज बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, AIR 2021 सुप्रीम कोर्ट 2114** के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा था कि अधिनियम की धारा 83 के अधीन शक्ति का उपयोग न तो निर्धारिती को परेशान करने के साधन के रूप में किया जाना चाहिए और न ही इसे ऐसे तरीके से उपयोग किया जाना चाहिए, जिसका निर्धारिती के व्यवसाय पर अपरिवर्तनीय हानिकारक प्रभाव हो सकता है। वास्तव में, सर्वोच्च न्यायालय ने यह कहा कि बैंक खाते और व्यापारिक संपत्तियों की कुर्की केवल अंतिम उपाय या तरीके के रूप में की जानी चाहिए। उक्त सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में, अनंतिम कुर्की को विधि में गलत माना गया था क्योंकि प्रतिवादी अधिकारियों ने उसमें याचिकाकर्ता को आपत्तियां योजित करने का अवसर नहीं दिया था और याचिकाकर्ता को नहीं सुना था। तदनुसार, सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णीत किया कि यह हिमाचल प्रदेश माल और सेवा कर नियम, 2017 के नियम 159(5) की अनिवार्य आवश्यकता का उल्लंघन था।

8. वर्तमान मामला तथ्यों पर **मेसर्स राधा कृष्ण इंडस्ट्रीज (उपरोक्त)** में आदेश पारित किए गए तथ्यात्मक मैट्रिक्स से अलग है। वर्तमान मामले में, अनंतिम कुर्की के बाद, याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय का रुख किया था और इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने प्रतिवादी अधिकारियों को निर्देश दिया था कि वे याचिकाकर्ता द्वारा योजित आपत्ति पर विचार करें और सुनवाई का अवसर प्रदान करें। याचिकाकर्ता ने उक्त अवसर का लाभ उठाया और अपनी आपत्तियां योजित कीं और प्रतिवादी अधिकारियों द्वारा उसे सुना गया, जो बाद में दिनांक 30 अक्टूबर, 2024 के आदेश में परिणत हुआ, जिसमें प्रतिवादी अधिकारियों द्वारा याचिकाकर्ता की आपत्तियों को खारिज कर दिया गया। इसके अलावा, वर्तमान मामले में अधिनियम की धारा 74 के अधीन जारी कारण बताओ नोटिस पर भी निर्णय लिया जा चुका है और ऊपर प्रदान किए गए अनुसार अधिनियम की धारा 74 के अधीन अंतिम आदेश पारित किया गया है।

9. मामले के उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में, हम इस विचार के हैं कि याचिकाकर्ता की आपत्तियों को प्रतिवादी अधिकारियों द्वारा निपटाया गया था और अनंतिम कुर्की अधिनियम की धारा 83 के अधीन एक वर्ष की अवधि के लिए उचित थी। उक्त अवधि 7 जुलाई, 2025 को समाप्त होगी। इस बीच, चूंकि कारण बताओ नोटिस पर पहले से ही निर्णय लिया जा चुका है और अधिनियम की धारा 74 के अधीन आदेश

पारित किया गया है, याचिकाकर्ता के पास उसी के विरुद्ध अपील योजित करने के लिए विधि के अधीन वैधानिक वैकल्पिक उपाय है।

10. हमने दिनांक 30 अक्टूबर, 2024 को पारित आदेश का भी बहुत विस्तार से परीक्षण और अवलोकन किया है, जो अनंतिम कुर्की के कारणों को दर्शाता है और जिस तरीके से याचिकाकर्ता ने सरकार के खजाने में माल और सेवा कर बकाया का भुगतान करने से बचा है।

11. इसी के आलोक में, यह रिट याचिका निरस्त की जाती है और याचिकाकर्ता को विधि के अनुसार अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष जाने की स्वतंत्रता दी जाती है।

(2025) 2 ILRA 366

मूल क्षेत्राधिकार

आपराधिक पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 20.02.2025

समक्ष

माननीया श्रीमती मंजू रानी चौहान, न्यायाधीश

धारा 482 के अधीन आवेदन संख्या-42213 वर्ष 2024

शानू सक्सेना व अन्य

...आवेदक

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...विपक्षी

आवेदकों के अधिवक्ता:

श्री अंजीत सिंह

विपक्षी के अधिवक्ता:

शासकीय अधिवक्ता

आपराधिक विधि-भारतीय दंड संहिता, 1860-धारा-323, 504, 498-ए और 506-दहेज निषेध अधिनियम, 1961-धारा 3/4- आपराधिक कार्यवाही-रद्द करना-न्यायिक आदेशों के निष्पादन में अक्षमताओं का संज्ञान लेते हुए, पुलिस अधीक्षक को व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने, व्यक्तिगत शपथ पत्र प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया-आदेश के अनुपालन में, अधिकारी उपस्थित, अनुपालन शपथ पत्र दायर किया, कर्तव्य की उपेक्षा के लिए स्पष्टीकरण प्रदान करने में विफल-न्यायालय ने स्पष्टीकरण मांगते हुए शासकीय अधिवक्ता को तलब किया-इसके अतिरिक्त, मामले की गहन जांच से गंभीर प्रक्रियात्मक अनियमितता सामने आई-शासकीय अधिवक्ता के

निजी सचिव को शपथ पत्र के पहले पृष्ठ में अवैध रूप से परिवर्तन करके न्यायालय के साथ धोखाधड़ी करने के लिए जिम्मेदार पाया गया, जिससे उस व्यक्ति की पहचान को गलत तरीके से प्रस्तुत किया गया, जिसने इसकी अंतर्वस्तु बोल कर लिखाई थी-यह कृत्य न्यायिक प्रक्रिया को गुमराह करने और विधिक रूप से प्रदत्त अधिकार से परे कार्यों करने के प्रयास को दर्शाता है-प्रशासनिक अधिकारी द्वारा बिना किसी विधिक मंजूरी के शक्तियों का ग्रहण करना, गंभीर चिंता का विषय है-विशुद्ध रूप से लिपिकीय है, आधिकारिक अभिलेखों में मूलभूत परिवर्तन करने तक विस्तारित नहीं होता है, विशेष रूप से वे जो न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाते हैं-शासकीय अधिवक्ता को शपथ पत्र दायर करने के लिए समय दिया गया, अंतरिम आदेश अगली नियत तिथि तक बढ़ाया गया। (प्रस्तर 2 से 5, 8, 10, 11)

आवेदन लंबित। (ई-13)

उद्धृत मामलों की सूची:

विजय कुशवाहा व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य, धारा 482 के अधीन आवेदन संख्या 32395 वर्ष 2024

(माननीया न्यायमूर्ति श्रीमती मंजू रानी चौहान द्वारा उद्धोषित)

1. पुलिस अधिकारियों की अपने वैधानिक दायित्वों को सावधानीपूर्वक रूप से पूरा करने में लगातार विफलता, विशेष रूप से सम्मन की त्वरित तामील और न्यायिक निर्देशों के निष्पादन में, विधिक प्रणाली के सुचारु संचालन में गंभीर रूप से बाधा डालती है। उनकी उदासीनता और अक्षमता अनावश्यक देरी कारित करती है, वादों के प्रचंड बैकलॉग को और बढ़ाती है और न्याय के शीघ्र वितरण को गंभीर रूप से बाधित करती है। कर्तव्य की यह उपेक्षा न केवल विधिक कार्यवाही को लंबा खींचती है, वादियों को अनुचित कठिनाई और वित्तीय तनाव कारित करती है, बल्कि न्यायिक प्रक्रिया की प्रभावशीलता और अखंडता में सार्वजनिक विश्वास को भी कम करती है। जब विधि प्रवर्तन अधिकारी अपनी मौलिक जिम्मेदारियों की उपेक्षा करते हैं, तो वे अनजाने में अक्षमता के एक चक्र को बनाते हैं, जिससे प्रणालीगत स्थिरता होती है, जो विधि के शासन को कमजोर करती है। न्यायपालिका, अपने सर्वोत्तम प्रयासों के बाद भी, अकेले प्रभावी ढंग से कार्य नहीं कर सकती है; यह न्याय के सिद्धांतों को बनाए रखने के लिए पुलिस सहित विभिन्न हितधारकों के निर्बाध समन्वय पर निर्भर करती है। इस संबंध में पुलिस की विफलता संस्थागत उदासीनता और अप्रभावीता की धारणा को बढ़ावा देती है, जो न्याय वितरण तंत्र में सार्वजनिक विश्वास की नींव को हिला देती है।

2. विजय कुशवाहा व 3 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य(1) में दिनांक 16.01.2025 को पारित आदेश के दृष्टिगत न्यायिक आदेशों के निष्पादन में स्पष्ट अक्षमताओं का संज्ञान लेते हुए, इस न्यायालय ने दिनांक 31.01.2025 के आदेश द्वारा पुलिस अधीक्षक को व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने और एक व्यक्तिगत

शपथ पत्र प्रस्तुत करने का निर्देश दिया, जिसमें उन चूकों का विवरण हो, जिनके कारण अनावश्यक देरी हुई थी।

3. उपर्युक्त आदेश के अनुपालन में, श्री धवल जायसवाल, पुलिस अधीक्षक, फतेहपुर इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित हैं। उन्होंने अनुपालन शपथ पत्र दाखिल किया है, जिसे अभिलेख पर लिया गया है। हालांकि, अधिकारी कर्तव्य की उपेक्षा के लिए कोई ठोस स्पष्टीकरण या औचित्य प्रदान करने में विफल रहे हैं, जो विधि प्रवर्तन के भीतर प्रणालीगत उदासीनता को और उजागर करता है।

4. अधिकारी की असंतोषजनक प्रतिक्रिया के आलोक में, इस न्यायालय ने मामले पर स्पष्टीकरण मांगते हुए विद्वान शासकीय अधिवक्ता श्री ए.के. संड को तलब किया। जब पूछताछ की गई, तो विद्वान शासकीय अधिवक्ता ने न्यायालय को आश्वासन दिया कि एक अधिक व्यापक शपथ पत्र प्रस्तुत किया जाएगा। हालांकि, यह स्पष्ट हो गया कि न तो पुलिस अधीक्षक और न ही विद्वान शासकीय अधिवक्ता, **विजय कुशवाहा (उपरोक्त)** में दिनांक 16.01.2025 को पारित पिछले आदेश से अवगत थे, जो वर्तमान प्रकरण के लिए प्रासंगिक था। जागरूकता की इस कमी के परिणामस्वरूप एक अपर्याप्त शपथ पत्र तैयार हुआ, जो न केवल अनुपालन में लापरवाही को प्रदर्शित करता है बल्कि न्यायिक निर्देशों के प्रति एक परेशान करने वाली उपेक्षा को भी दर्शाता है, जिससे विधिक प्रक्रिया की विश्वसनीयता और कमजोर होती है।

5. इसके अतिरिक्त, जब वर्तमान मामले में विद्वान शासकीय अधिवक्ता को तलब किया गया, तो मामले की गहन जांच से एक गंभीर प्रक्रियात्मक अनियमितता सामने आई। यह पता चला कि वास्तव में, विचाराधीन शपथ पत्र स्वयं विद्वान शासकीय अधिवक्ता श्री ए.के. संड द्वारा बोल कर लिखाया गया था। हालांकि, इस तथ्य को छिपाने के लिए एक जानबूझकर और भ्रामक प्रयास में, शपथ पत्र के पहले पृष्ठ—जहां सामग्री को बोल कर लिखने वाले व्यक्ति का नाम आमतौर पर दर्ज किया जाता है—को बदल दिया गया था। यह परिवर्तन श्री घनश्याम कुशवाहा, विद्वान शासकीय अधिवक्ता के निजी सचिव के कहने पर किया गया था, जो शपथ पत्र प्रस्तुत करने की प्रक्रिया की अखंडता और पारदर्शिता के बारे में गंभीर चिंताएं उठाता है। आधिकारिक रिकॉर्ड की ऐसी हेराफेरी ने न केवल प्राधिकार के अनुचित प्रत्यायोजन को प्रतिबिंबित किया बल्कि शासकीय अधिवक्ता के कार्यालय के भीतर प्रक्रियात्मक औचित्य के लिए एक स्पष्ट उपेक्षा को भी उजागर किया। आधिकारिक अभिलेखों के इस जानबूझकर परिवर्तन ने नैतिक जिम्मेदारी में एक गंभीर चूक की ओर इशारा किया, न्यायिक कार्यवाही की पवित्रता को कमजोर किया और राज्य सरकार की ओर से दायर शपथ पत्रों की विश्वसनीयता पर सवाल उठाया। न्यायालय, इस कदाचार को पहचानने पर, यह विचार करने के लिए मजबूर हुआ कि क्या ऐसे कार्य न्यायपालिका को गुमराह करने के प्रयास के समान थे, जो प्रणाली के भीतर अक्षमताओं और जवाबदेही की कमी के संबंध में चिंताओं को और बढ़ाते हैं।

6. जब विद्वान शासकीय अधिवक्ता से **विजय कुशवाहा (उपरोक्त)** के मामले में पहले पारित निर्णय के बारे में उनकी जागरूकता के संबंध में पूछताछ की गई, तो उन्होंने कहा कि उन्हें न्यायालय को नामित अपर

शासकीय अधिवक्ता द्वारा इसके बारे में सूचित नहीं किया गया था। इस प्रतिक्रिया ने शासकीय अधिवक्ता के कार्यालय के भीतर चोरी और जिम्मेदारी के विक्षेपण के एक परेशान करने वाले पैटर्न को रेखांकित किया। न्यायिक निर्देशों का पालन करने में विफलता के लिए एक विश्वसनीय औचित्य प्रदान करने के बजाय, उन्होंने दोष को अपने सहयोगी पर स्थानांतरित करने का प्रयास किया, जो कर्तव्य में चूक के लिए जवाबदेह होने की स्पष्ट अनिच्छा को प्रदर्शित करता है। एक अधिकारी से दूसरे अधिकारी को जिम्मेदारी देने की यह आदत न केवल सरकार के विधिक तंत्र के भीतर समन्वय और परिश्रम की कमी को उजागर करती है बल्कि न्यायिक आदेशों के प्रति संस्थागत उदासीनता के एक गहरे मुद्दे को भी दर्शाती है। ऐसा आचरण न केवल न्याय के प्रशासन में देरी करता है बल्कि विधि के शासन को बनाए रखने की राज्य की क्षमता में सार्वजनिक विश्वास को भी कम करता है, क्योंकि विधिक जिम्मेदारियों सौंपे गए अधिकारी अपनी कमियों को संबोधित करने और सुधारने के बजाय लगातार जवाबदेही से बचते हैं।

7. इसके अतिरिक्त, जब न्यायालय ने अंततः विद्वान शासकीय अधिवक्ता से पूछा कि क्या उन्होंने वर्तमान मामले में निर्णय पढ़ा है, जिसमें पहले से ही **विजय कुशवाहा** के मामले के संदर्भ शामिल थे, तो उन्होंने स्वीकार किया कि उन्होंने ऐसा नहीं किया था और न्यायालय के समक्ष माफी मांगी। यह खुलासा गहराई से परेशान करने वाला था, क्योंकि इसने उजागर किया कि शपथ पत्र को प्रासंगिक न्यायिक आदेशों के सरसरी तौर से पढ़े बिना ही बोल कर लिखाया गया था। ऐसी लापरवाही उन लोगों की क्षमता और जवाबदेही के बारे में गंभीर चिंताएं उठाती है, जिन्हें विधिक मामलों में राज्य का प्रतिनिधित्व करने का दायित्व दिया गया है। यदि विधि के शासन को बनाए रखने के लिए जिम्मेदार व्यक्ति ही इस तरह की लापरवाह रवैया प्रदर्शित करता है, तो यह राज्य के विधिक तंत्र की विश्वसनीयता पर एक प्रश्नचिह्न लगाता है और न्यायिक प्रक्रिया को गंभीर रूप से बाधित करता है। शासकीय अधिवक्ता की भूमिका केवल प्रक्रियात्मक नहीं है बल्कि यह सुनिश्चित करने का कर्तव्य है कि विधिक कार्यवाही परिश्रम और न्यायिक मिसाल के पालन के साथ आयोजित की जाती है। हालांकि, जब इस तरह के उच्च पदस्थ अधिकारी उचित प्रक्रिया के लिए ऐसी उपेक्षा प्रदर्शित करते हैं, तो यह विधिक प्रणाली में शामिल होने की इच्छा रखने वाले अन्य लोगों के लिए एक खतरनाक मिसाल कायम करता है। यह लापरवाही और गैर-जवाबदेही की संस्कृति को बढ़ावा देता है, जो विधि को प्रभावी ढंग से लागू करने की राज्य की क्षमता में बाधियों और न्यायपालिका के विश्वास को कम करता है। इसलिए, यह घटना सरकार के विधिक ढांचे के भीतर अधिक जिम्मेदारी, जांच और व्यावसायिकता स्थापित करने के लिए प्रणालीगत सुधारों की तत्काल आवश्यकता को रेखांकित करती है।

8. शासकीय अधिवक्ता के निजी सचिव, श्री घनश्याम कुशवाहा को शपथ पत्र के पहले पृष्ठ को अवैध रूप से बदलकर न्यायालय के साथ धोखाधड़ी करने के लिए जिम्मेदार पाया गया है, जिससे उस व्यक्ति की पहचान को गलत तरीके से प्रस्तुत किया गया, जिसने इसकी अंतर्वस्तु को बोल कर लिखाया था। यह कार्य, हालांकि मामूली लगता है, लेकिन एक गंभीर अनियमितता है, क्योंकि यह न्यायिक प्रक्रिया को गुमराह करने और अपने विधिक रूप से प्रदत्त अधिकार से परे कृत्य करने के प्रयास को दर्शाता है। एक प्रशासनिक अधिकारी द्वारा बिना किसी विधिक मंजूरी के ऐसी शक्तियों का ग्रहण करना गंभीर चिंता का विषय है। न्यायालय ने स्पष्ट रूप से

इस आचरण को अस्वीकृत किया है, इस बात पर बल देते हुए कि एक निजी सचिव की भूमिका विशुद्ध रूप से लिपिकीय है और आधिकारिक अभिलेखों में वास्तविक परिवर्तन करने तक विस्तारित नहीं होती है, विशेष रूप से वे जो विधि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाते हैं। ऐसे कार्य न केवल न्यायिक कार्यवाही की पवित्रता को कमजोर करते हैं बल्कि शासकीय अधिवक्ता के कार्यालय के कामकाज और जवाबदेही के बारे में गंभीर सवाल भी उठाते हैं। यह घटना यह सुनिश्चित करने के लिए कड़े सुधारात्मक उपायों की मांग करती है कि प्रक्रियात्मक अखंडता बनाए रखी जाए और अनधिकृत व्यक्ति विधिक महत्व के मामलों में हस्तक्षेप न करें।

9. इस न्यायालय के समक्ष जो घटनाएं सामने आई हैं, वे आश्चर्यजनक और गहराई से चिंताजनक दोनों हैं, जो न्यायिक प्राधिकार और प्रक्रियात्मक अखंडता के लिए स्पष्ट उपेक्षा को प्रकट करती हैं। जिम्मेदार अधिकारियों की सरासर लापरवाही, विधिक कार्यवाही में अनुचित हस्तक्षेप के साथ मिलकर, न्याय प्रणाली की नींव पर ही प्रहार करती है। ऐसा घोर कदाचार पूरी तरह से अक्षम्य है और भविष्य में किसी भी पुनरावृत्ति को रोकने के लिए तत्काल, बिना समझौता किए सुधारात्मक कार्रवाई की मांग करता है।

10. जैसा कि विद्वान शासकीय अधिवक्ता द्वारा प्रार्थना की गई है, बेहतर शपथ पत्र दाखिल करने के लिए समय दिया जाता है। इस वाद को अग्रेतर सुनवाई के लिए 12.03.2025 को नए वाद के रूप में सूचीबद्ध किया जाए। पुलिस अधीक्षक, फतेहपुर अगली तिथि पर इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित रहेंगे।

11. अंतरिम आदेश, जो पहले पारित किया गया था, सूचीबद्धता की अगली तिथि तक बढ़ाया जाता है।

12. निबंधक (अनुपालन) इस आदेश को विद्वान शासकीय अधिवक्ता, श्री ए.के. संड को तुरंत सूचित करेंगे।

(2025) 2 ILRA 369

अपीलीय क्षेत्राधिकार

आपराधिक पक्ष

दिनांक: लखनऊ 07.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी

आपराधिक प्रकीर्ण जमानत आवेदन संख्या 12654 वर्ष 2023

जसवंत सिंह

...आवेदक

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

...प्रतिपक्षी

आवेदक के अधिवक्ता:

विनीत कुमार मिश्रा

प्रतिपक्षी के अधिवक्ता:

शासकीय अधिवक्ता

आपराधिक विधि – जमानत – द्वितीय जमानत आवेदन – भारतीय दंड संहिता, 1860 – धाराएँ 302, 307, 286, 506 एवं 120-बी – विचारण में विलंब – आपराधिक कानून संशोधन अधिनियम, धारा 7 – संविधान के अनुच्छेद 21 की प्रयोज्यता – दंड प्रक्रिया संहिता, 1973, धारा 439 – भारत का संविधान, अनुच्छेद 21 – आवेदक पर आग्नेयास्त्र द्वारा दोहरे हत्याकांड का आरोप – सह-अभियुक्त पिता को वृद्धावस्था के आधार पर उच्चतम न्यायालय द्वारा जमानत प्रदान की गई – आवेदक 16.09.2018 से हिरासत में – अभियोजन के तेईस में से सात गवाहों का परीक्षण संपन्न – सभी गवाहों ने अभियोजन का समर्थन किया – अभियोजन के कारण कोई अनुचित विलंब नहीं – अभिनिर्धारित, यद्यपि लंबे समय तक कारावास असाधारण मामलों में जमानत का आधार हो सकता है, परंतु प्रत्येक जमानत आवेदन का परीक्षण उसके अपने तथ्यों के आधार पर किया जाना चाहिए – जब विचारण प्रगति पर हो और अभियोजन पक्ष के गवाह मामले का समर्थन कर रहे हों, तो केवल सह-अभियुक्त की रिहाई या सामान्य विलंब के आधार पर जमानत का कोई आधार नहीं बनता – जमानत खारिज। (पैराग्राफ 14, 16, 17 और 18)

अभिनिर्धारित:

यह स्थापित विधि है कि किसी नजीर को उस मामले के विशिष्ट तथ्यों के आलोक में ही समझा और लागू किया जाना चाहिए। (पैराग्राफ 14)

वर्तमान मामले में, विचारण चल रहा है। अभियोजन पक्ष के सात गवाहों का परीक्षण किया जा चुका है और उन सभी ने अभियोजन के मामले का समर्थन किया है। इसलिए, वर्तमान मामले के तथ्य आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत जावेद गुलाम नबी शेख और भंवर सिंह (उपरोक्त) के मामलों के तथ्यों के समान किसी भी प्रकार से नहीं हैं। (पैराग्राफ 16)

आवेदक के विद्वान अधिवक्ता अभियोजन पक्ष के गवाहों के बयानों में किसी भी बड़ी विसंगति की ओर संकेत नहीं कर सके। गवाहों के बयानों में कुछ मामूली विसंगतियों का होना स्वाभाविक है और इससे आवेदक को कोई लाभ नहीं मिलेगा। ऐसा कोई आरोप नहीं है कि अभियोजन पक्ष विचारण में अनुचित विलंब कर रहा है। (पैराग्राफ 17)

आवेदक के पिता सह-अभियुक्त कोमल सिंह को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जमानत प्रदान की गई है कि वह सत्तर वर्ष के हैं, जबकि आवेदक की आयु मात्र 42 वर्ष है और यह तथ्य कोमल सिंह के मामले को आवेदक के मामले से अलग करता है। (पैराग्राफ 18)

जमानत आवेदन खारिज। (ई-14)**उद्धृत वादों की सूची:**

1. जावेद गुलाम नबी शेख बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2024) 9 एससीसी 813
2. भंवर सिंह उर्फ कर्मवीर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2023 (6) एएलजे 19
3. भारत संघ बनाम के.ए. नजीब, (2021) 3 एससीसी 713
4. एक्स (X) बनाम राजस्थान राज्य, 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 3539
5. परसा राजा मणिक्याला राव बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (2003) 12 एससीसी 306

(माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी द्वारा पारित)

1. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता, श्री विनीत कुमार मिश्रा और विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता, श्री आनंद प्रताप सिंह को सुना गया।
2. यह मुकदमा अपराध संख्या 189 वर्ष 2018, धारा 307, 302, 286, 506, 120-B भा.दं.सं. और 7 आपराधिक विधि संशोधन अधिनियम, थाना बघराई, जिला प्रतापगढ़ में आवेदक की जमानत पर रिहाई की मांग करने वाला द्वितीय आवेदन है।
3. उपर्युक्त वाद 14.09.2018 को 20.30 बजे दर्ज एक प्राथमिकी के आधार पर पंजीकृत किया गया था, जो आवेदक, उसके पिता कोमल सिंह और एक राम सिंह के विरुद्ध थी, जिसमें आरोप लगाया गया था कि 14.09.2018 को लगभग 05.15 बजे कोमल सिंह और यशवंत सिंह (आवेदक) ने एक रास्ते को लेकर विवाद के कारण राइफल और रिवाल्वर से भीम सिंह और अरुण कुमार सिंह पर गोली चलाई। सूचनाकर्ता घायल अरुण सिंह और भीम सिंह को जिला अस्पताल ले गया, जहां अरुण सिंह को मृत घोषित कर दिया गया और भीम सिंह इलाज के दौरान मर गए।
4. आवेदक द्वारा योजित प्रथम जमानत आवेदन, आपराधिक प्रकीर्ण जमानत आवेदन संख्या-5915 वर्ष 2021 को आदेश दिनांक 17.10.2022 के द्वारा निरस्त कर दिया गया था, जिसमें उल्लेख किया गया है कि मृतकों की पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट मृत्यु पूर्व आग्नेयास्त्र की चोटों को प्रकट करती है। राइफल, जिसके बारे में आरोप है कि अपराध करने में उपयोग की गई थी, आवेदक के बताने पर बरामद की गई है।
5. आवेदक ने दिनांक 17.10.2022 के अस्वीकृति आदेश के विरुद्ध एसएलपी (आपराधिक) संख्या-597/2023 योजित की थी। एसएलपी को आदेश दिनांक 24.01.2023 के द्वारा निरस्त कर दिया गया था। हालांकि, एसएलपी को निरस्त करते समय, माननीय उच्चतम न्यायालय ने टिप्पणी की कि 'उच्च न्यायालय

द्वारा विचारण में शीघ्रता लाई गई है। सार्थक प्रगति के अभाव में, याचिकाकर्ता के लिए विचारण की प्रगति को देखते हुए नए सिरे से जमानत के लिए आवेदन करना उपलब्ध है।

6. यह द्वितीय आवेदन इस आधार पर योजित किया गया है कि यद्यपि आवेदक 16.09.2018 से जेल में बंद है, 23 साक्षियों में से केवल 7 का परीक्षण किया गया है। आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि सह-अभियुक्त कोमल सिंह को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा आपराधिक अपील संख्या-174/2025 में पारित आदेश दिनांक 10.01.2025 के द्वारा जमानत दे दी गई है।

7. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय उच्चतम न्यायालय के **जावेद गुलाम नबी शेख बनाम महाराष्ट्र राज्य: (2024) 9 SCC 813** के निर्णय पर भरोसा किया है। उन्होंने इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा **भंवर सिंह उर्फ करमवीर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य: 2023 (6) ALJ 19** में दिए गए निर्णय पर भी भरोसा किया है।

8. इसके विपरीत, विद्वान अ.शा.अधि. ने जमानत आवेदन का बलपूर्वक विरोध किया है और उन्होंने प्रस्तुत किया है कि विचारण न्यायालय द्वारा परीक्षित सभी सात अभियोजन साक्षियों ने अभियोजन पक्ष का समर्थन किया है। उनके बयानों में कोई बड़ी विसंगति नहीं है, जो आवेदक को कोई लाभ दे सके।

9. **जावेद गुलाम नबी शेख बनाम महाराष्ट्र राज्य: (2024) 9 SCC 813** में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने मामले के निम्नलिखित पहलुओं को ध्यान में रखते हुए अपीलकर्ता के पक्ष में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग किया:-

- (i) अपीलकर्ता चार साल से अधिक समय से विचाराधीन कैदी के रूप में जेल में है;
- (ii) आज तक, विचारण न्यायालय आरोप विरचित करने के लिए भी आगे नहीं बढ़ सका है; और
- (iii) जैसा कि राज्य के साथ-साथ एनआईए की ओर से उपस्थित अधिवक्ता द्वारा बताया गया है, अभियोजन पक्ष कम से कम अस्सी साक्षियों को परीक्षित करने का इरादा रखता है।

10. मामले की उपर्युक्त विशेष तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **जावेद गुलाम नबी शेख** (उपरोक्त) में निर्णय दिया कि:-

"17. यदि राज्य या किसी अभियोजन एजेंसी सहित संबंधित न्यायालय के पास संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन निहित त्वरित विचारण के अभियुक्त के मौलिक अधिकार को प्रदान या संरक्षित करने की कोई व्यवस्था नहीं है, तो राज्य या कोई अन्य अभियोजन एजेंसी को इस आधार पर जमानत की याचिका का विरोध नहीं करना चाहिए कि कारित अपराध गंभीर है। संविधान का अनुच्छेद 21 अपराध की प्रकृति की परवाह किए बिना लागू होता है।"

11. **भंवर सिंह** (उपरोक्त) में, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई निम्नलिखित प्रस्तुतियों के दृष्टिगत आवेदक को जमानत दी, जिसका राज्य अधिवक्ता द्वारा विवाद नहीं किया जा सका:-

- I. आवेदक एक विधि का पालन करने वाला नागरिक है और हमेशा जांच में सहयोग किया है और विचारण कार्यवाही में शामिल हुआ है।
- II. विचारण घोंघे की गति से आगे बढ़ रहा है और जल्दी समाप्त होने के कोई संकेत नहीं दिखाता है। विचारण में देरी के लिए आवेदक को दोषी नहीं ठहराया जा सकता है।
- III. विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा भेजी गई स्थिति रिपोर्ट दर्ज करती है कि विचारण में देरी पुलिस अधिकारियों द्वारा सम्मन तामील करने और विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा जारी बलपूर्ण उपायों को निष्पादित करने में विफलता के कारण भी हो रही है।
- IV. विचारण को समाप्त करने में अत्यधिक देरी के कारण आवेदक को अपराध में दोषसिद्ध करने के लिए कोई विश्वसनीय साक्ष्य के बिना व्यावहारिक रूप से अनिश्चितकालीन कारावास हुआ है और त्वरित विचारण के आवेदक के अधिकारों का उल्लंघन करता है।
- V. इस मामले के अलावा आवेदक का कोई आपराधिक इतिहास नहीं है।
- VI. आवेदक के भागने का जोखिम नहीं है। आवेदक ने एक विधि का पालन करने वाला नागरिक होने के नाते हमेशा जांच में सहयोग किया है और विचारण कार्यवाही में शामिल होने का वचन देता है। उसके द्वारा साक्षियों को प्रभावित करने, साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने या फिर से अपराध करने की कोई संभावना नहीं है।

(महत्व प्रदत्त)

12. **भारत संघ बनाम के.ए. नजीब**: (2021) 3 SCC 713 में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि:-

"15. इस न्यायालय ने कई निर्णयों में स्पष्ट किया है कि संविधान के भाग III द्वारा गारंटीकृत स्वतंत्रता अपने सुरक्षात्मक दायरे में न केवल उचित प्रक्रिया और निष्पक्षता बल्कि न्याय तक पहुंच और त्वरित विचारण को भी आच्छादित करेगी। सुप्रीम कोर्ट लीगल एड कमेटी (विचाराधीन कैदियों का प्रतिनिधित्व करते हुए) बनाम भारत संघ [(1994) 6 SCC 731] में, यह निर्णय दिया गया था कि विचाराधीनों को विचारण के लंबित रहते हुए अनिश्चितकाल तक हिरासत में नहीं रखा जा सकता है। आदर्श रूप से, किसी व्यक्ति को अपने कृत्यों के प्रतिकूल परिणाम नहीं भुगतने चाहिए जब तक कि एक तटस्थ मध्यस्थ के समक्ष इसे स्थापित नहीं किया जाता है। हालांकि, वास्तविक जीवन की व्यावहारिकताओं के कारण जहां एक प्रभावी विचारण को सुनिश्चित करने के लिए और विचारण के लंबित रहते हुए एक संभावित अपराधी को स्वतंत्र छोड़ने के मामले में समाज के जोखिम को कम करने के लिए, अदालतों को यह तय करने का काम सौंपा गया है कि क्या किसी व्यक्ति को विचारण के लंबित रहते हुए रिहा किया जाना चाहिए या नहीं। एक बार जब यह स्पष्ट हो जाता है कि

समय पर विचारण संभव नहीं होगा और अभियुक्त ने महत्वपूर्ण अवधि के लिए कारावास भुगता है, तो अदालतें सामान्य रूप से उन्हें जमानत पर बड़ा करने के लिए बाध्य होंगी।

13. हालांकि, **X बनाम राजस्थान राज्य**, 2024 SCC OnLine SC 3539 में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि:-

"14. सामान्य रूप से बलात्कार, हत्या, डकैती आदि जैसे गंभीर अपराधों में, एक बार विचारण शुरू हो जाता है और अभियोजन पक्ष अपने साक्षियों का परीक्षण प्रारंभ कर देता है, तो न्यायालय चाहे विचारण न्यायालय हो या उच्च न्यायालय, अभियुक्त के जमानत आवेदन पर विचार करने में अनिच्छुक होना चाहिए।

* * *

16. ...यह केवल उस स्थिति में है यदि विचारण में अनुचित रूप से देरी हो जाती है और वह भी अभियुक्त की किसी गलती के बिना, तो न्यायालय उसे इस आधार पर जमानत पर रिहा करने का आदेश देने में सही हो सकता है कि त्वरित विचारण के अभियुक्त के अधिकार का उल्लंघन किया गया है।"

14. यह सुस्थापित विधि है कि एक मिसाल को उस मामले के विशेष तथ्यों के प्रकाश में समझा और लागू किया जाना चाहिए।

15. **पराशा राजा मणिक्याला राव बनाम आंध्र प्रदेश राज्य**, (2003) 12 SCC 306: में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि:-

"9. प्रत्येक मामला, विशेष रूप से एक आपराधिक मामला, अपने स्वयं के तथ्यों पर निर्भर करता है और एक मामले और दूसरे के बीच निकट समानता समान उपचार को वारंट करने के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि एक महत्वपूर्ण विवरण पूरे पहलू को बदल सकता है। ऐसे मामलों का निर्णय करने में, किसी को (कॉर्डोजो के अनुसार) एक मामले के रंग को दूसरे मामले के रंग से मिलाकर मामलों का निर्णय करने के प्रलोभन से बचना चाहिए। इसलिए, यह तय करने के लिए कि एक मामला किस पक्ष में आता है, दूसरे मामले से व्यापक समानता बिल्कुल भी निर्णायक नहीं है..."

16. वर्तमान मामले में, विचारण आगे बढ़ रहा है। सात अभियोजन साक्षियों का परीक्षण किया गया है और उन सभी ने अभियोजन पक्ष का समर्थन किया है। इसलिए, वर्तमान मामले के तथ्य किसी भी तरह से **जावेद गुलाम नबी शेख और भंवर सिंह** (उपरोक्त) के तथ्यों के समान नहीं हैं, जिनका आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उल्लेख किया गया है।

17. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता अभियोजन साक्षियों के बयानों में किसी भी बड़ी विसंगति को इंगित नहीं कर सके। साक्षियों के बयानों में कुछ मामूली विसंगतियों का होना स्वाभाविक है और यह आवेदक को कोई लाभ नहीं देगा। ऐसा कोई आरोप नहीं है कि अभियोजन पक्ष विचारण में अनुचित देरी कर रहा है।

18. आवेदक के पिता सह-अभियुक्त कोमल सिंह को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जमानत दी गई है कि वह सत्तर वर्ष से अधिक आयु के हैं, जबकि आवेदक केवल 42 वर्ष की आयु का है और यह तथ्य कोमल सिंह के मामले को आवेदक के मामले से अलग करता है।

19. उपर्युक्त चर्चा के दृष्टिगत, मैं विचारित मत का हूँ कि ऊपर उल्लिखित वर्तमान मामले के विशिष्ट तथ्य इस न्यायालय को विवेकाधिकार का प्रयोग करके आवेदक को जमानत पर छोड़ने के लिए प्रेरित नहीं करते हैं। तदनुसार आवेदक की द्वितीय जमानत अस्वीकृत की जाती है।

(2025) 2 ILRA 373

अपीलीय क्षेत्राधिकार

आपराधिक पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 13.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति विवेक कुमार बिरला,
माननीय न्यायमूर्ति सैयद कमर हसन रिज़वी
आपराधिक अपील संख्या 2806 सन् 1983

रक्षपाल व अन्य

...अपीलकर्तागण

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

...विपक्षी

अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता:

श्री कुंदन सिंह, श्री ए.के. दीक्षित, श्री हरीश चंद्र तिवारी (न्या.मि.)

विपक्षी के अधिवक्ता:

डी.जी.ए., ए.जी.ए., श्री सुधीर मेहरोत्रा

आपराधिक विधि-भारतीय दंड संहिता-धारा 394, 397 एवं 460-वर्तमान मामले में स्पष्ट प्रत्यक्षदर्शी विवरण-अभि.सा.-1 और अभि.सा.-3 निकटतम परिवार के सदस्य होने के कारण घटना के स्वाभाविक प्रत्यक्षदर्शी हैं-

जीवित अभियुक्त, जिसके हाथ में देशी पिस्तौल थी, की उपस्थिति के संबंध में विशिष्ट कथन किया गया है- मृतक को आग्नेयास्त्र से चोट पहुंचाई गई।

अपील निरस्त। (ई-9)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

1. कृष्णा मोची व अन्य बनाम बिहार राज्य, (2002) 6 SCC 81,
2. मसालती बनाम उ.प्र. राज्य, AIR 1965 SC 202
3. दरिया सिंह बनाम पंजाब राज्य, AIR 1965 SC 328
4. अप्पाभाई व अन्य बनाम गुजरात राज्य, AIR 1988 SC 696
5. आं.प्र. राज्य बनाम एस. मतप्पा व अन्य, (2006) 4 SCC 512
6. सतबीर सिंह व अन्य बनाम उ.प्र. राज्य, (2009) 13 SCC 790
7. जयबलन बनाम पांडिचेरी संघ राज्य क्षेत्र, 2010 (68) ACC 308 (SC)
8. धर्मीधर बनाम उ.प्र. राज्य, (2010) 7 SCC 759
9. बाबन शंकर डफल व अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, 2025 SCC Online SC 137
10. शाहजा @ शाहजान इस्माइल मोहम्मद बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2023) 12 SCC 558
11. पहलवान सिंह व अन्य बनाम उ.प्र. राज्य, 2020 (6) ALJ 166
12. कप्तान सिंह बनाम उ.प्र. राज्य, 2020 (1) ADJ 106 (DB)
13. नीरज शर्मा बनाम छत्तीसगढ़ राज्य, (2024) 3 SCC 125

(माननीय न्यायमूर्ति विवेक कुमार बिरला द्वारा उद्धोषित)

1. यह आपराधिक अपील, सत्र परीक्षण संख्या 242 सन् 1983 में अपर सत्र न्यायाधीश, एटा द्वारा पारित निर्णय व आदेश दिनांक 15.11.1983 को चुनौती देते हुए योजित की गई है, जिसके द्वारा अपीलकर्ताओं को धारा 394 भा.दं.सं. सपठित धारा 397 भा.दं.सं. के अधीन सात वर्ष के सश्रम कारावास का दंड और धारा 460 भा.दं.सं. के अधीन आजीवन कारावास की सजा देते हुए दोषसिद्ध किया गया था और सभी सजाओं को एक साथ चलने का निर्देश दिया गया था।

2. दिनांक 18.11.1983 के आदेश द्वारा दोनों अपीलकर्ताओं को जमानत पर रिहा कर दिया गया था। मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, एटा द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर दिनांक 10.5.2024 की कार्यालय रिपोर्ट के अनुसार, अपीलकर्ता संख्या 2 जगदीश, पुत्र जयरथ सिंह की मृत्यु हो गई है, इसलिए अपीलकर्ता संख्या 2 के

संबंध में अपील उपशामित हो गई। अपील अब केवल अपीलकर्ता संख्या 1-रक्षपाल, पुत्र रघुवीर सिंह की ओर से बची है।

3. यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि सह-अभियुक्त रामेश्वर और मेहंदी ने इस न्यायालय के समक्ष आपराधिक अपील संख्या-2958 सन् 1983 (रामेश्वर व अन्य बनाम उ.प्र. राज्य) योजित की थी। अपील के लंबित रहने की अवधि में उसके अपीलकर्ता संख्या 2 मेहंदी की मृत्यु हो गई, इसलिए उसकी ओर से अपील उपशामित हो गई। उसमें अपीलकर्ता संख्या 1 रामेश्वर के संबंध में इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा दिनांक 28.3.2024 के आदेश द्वारा अपील आंशिक रूप से स्वीकार की गई। उक्त निर्णय में, संक्षिप्त अभियोजन कथा को उक्त निर्णय के प्रस्तर 6 में उचित रूप से वर्णित किया गया है, इसलिए उसको दोहराने की आवश्यकता नहीं है। उक्त निर्णय का प्रस्तर 6 निम्नानुसार उद्धृत है:

"6. संक्षेप में अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि 25/26.7.1982 की दरम्यानी रात, लगभग आधी रात को, थाना जैथारा, जिला एटा के गाँव नगला हिम्मत, चक रया की बस्ती में परिवादी शिवराज सिंह के घर पर एक सशस्त्र डकैती हुई, जिसमें परिवादी के भाई जोहरी को गोली मार दी गई और शिवराज सिंह के पिता राम चंद्र को बदमाशों के द्वारा लाठी से चोटें पहुंचाई गई। दुर्भाग्यपूर्ण रात को, परिवादी शिवराज सिंह अपने भतीजों अर्जुन सिंह और राम कुमार के साथ आंगन के उत्तर-पूर्वी कोने में एक छप्पर के नीचे सो रहे थे। मृतक जोहरी छत पर एक छप्पर में सो रहे थे। परिवादी के भाई जय सिंह और श्री राम आंगन के पश्चिम में एक अन्य छप्पर में सो रहे थे। परिवादी के पिता राम चंद्र और मां घर के पश्चिम-दक्षिण कोने में चौपाल के सामने एक अन्य छप्पर में सो रहे थे। महिलाएं और बच्चे एक दहलीज़ में सो रहे थे, जिसका मुख्य दरवाजा पूर्व में है और एक अन्य दरवाजा पश्चिम में आंगन की ओर जाता है। सीढ़ी की उत्तरी दीवार में लगी एक लोहे की छड़ पर एक जलती हुई लालटेन लटकी हुई थी जिससे पूरे घर में पर्याप्त रोशनी फैल रही थी। लगभग आधी रात को, कुछ बदमाश पश्चिमी दिशा से छत से होकर घर में घुस गए। कुछ आवाज सुनकर परिवादी व अन्य परिवार के सदस्य जाग गए और उन्होंने अपीलकर्ता संख्या 1 रामेश्वर को एस.बी.बी.एल. बंदूक से, अपीलकर्ता संख्या 2 मेहंदी को लाठी से और सह-अभियुक्त जगदीश और रक्षपाल को पिस्तौल से लेंस घर में देखा और पहचाना। अपीलकर्ता संख्या 1 रामेश्वर और मेहंदी ने घर के लोगों को घेर लिया और उन्हें चेतावनी दी कि वे भागें नहीं अन्यथा उन्हें गोली मार दी जाएगी, जबकि अभियुक्त रक्षपाल और जगदीश ने घर के विभिन्न कमरों से घरेलू सामान लूट लिया। जब गुंडे लूटी हुई संपत्ति लेकर भागने वाले थे, तो परिवादी के भाई जोहरी और शिवराज सिंह के पिता राम चंद्र ने चिल्लाते हुए भागने की कोशिश की, जिस पर रामेश्वर ने जोहरी पर गोलियां चलाईं, जो उसके पैरों में लगीं और वह दहलीज़ (कमरे) में गिर गया। अभियुक्त मेहंदी ने राम चंद्र पर लाठी से हमला किया। घर के लोगों की चीख-पुकार और गोलियों की आवाज ने बंदूक लाइसेंसधारी राम दुलारे और राम दयाल को आकर्षित किया, जो अपनी बंदूकों और टॉर्च के साथ वहां पहुंचे, और दलपत सिंह और राम नाथ लाठियों के साथ अपनी टॉर्च जलते हुए। कहा जाता है कि उन्होंने परिवादी के पशु घर की उत्तरी दिशा से एक पेड़ और बुर्जी (मवेशियों के लिए भूसा रखने की जगह) के पास खड़े होकर पूरी घटना को देखा। साक्षियों की चुनौती और बंदूक लाइसेंसधारियों द्वारा की गई गोलीबारी पर, बदमाश लूटे हुए माल के साथ घर के पूर्वी दरवाजे से बाहर आकर

दक्षिण की ओर भाग गए। बाद में घर के लोग दहलीज के अंदर गए और जोहरी को घायल पड़ा हुआ पाया जिसने यह भी बताया कि रामेश्वर ने उस पर गोली चलाई। कुछ समय बाद जोहरी उसी स्थान पर अपनी चोटों से दम तोड़ दिया। आरोप है कि घर के लोगों और साक्षियों ने आंगन में जलती लालटेन और भागते समय साक्षियों की टॉर्च की रोशनी में अभियुक्तों को अच्छी तरह से देखा और पहचाना।"

4. परिवादी की लिखित रिपोर्ट के आधार पर, चार अभियुक्त व्यक्तियों अर्थात् रामेश्वर, मेहंदी, रक्षपाल और जगदीश के विरुद्ध मुकदमा अपराध संख्या-91 सन् 1982, धारा 302, 302/34 और 397/394 भा.दं.सं. के अधीन प्राथमिकी दर्ज की गई। अभियुक्त रामेश्वर पर धारा 397 सपठित धारा 394 और 302 भा.दं.सं. के अधीन आरोप अधिरोपित किया गया है जबकि अभियुक्त मेहंदी, रक्षपाल (यहां अपीलकर्ता संख्या 1) और जगदीश (अपीलकर्ता संख्या 2, अब मृत) पर धारा 397 सपठित धारा 394 भा.दं.सं. और 302 धारा 34 भा.दं.सं. के साथ पठित के अधीन आरोपित किया गया है।

5. अभियोजन पक्ष के मामले को स्थापित करने के लिए, अभि.सा.-1 शिवराज सिंह, अभि.सा.-2 राम नाथ और अभि.सा.-3 राम चंद्र को घटना के प्रत्यक्षदर्शी के रूप में और अभि.सा.-4 डॉ. वी.के. शर्मा, जिन्होंने पोस्टमार्टम किया, अभि.सा.-5 कांस्टेबल रविंद्र पास, जो पोस्टमार्टम के लिए शव लाए, अभि.सा.-6 हेड कांस्टेबल जय चंद्र, जिन्होंने चिक एफआईआर तैयार की और जीडी में मामला दर्ज किया, अभि.सा.-7 एस.आई. श्री राम सेवक दुबे, जिन्होंने मामले का अन्वेषण किया और अभि.सा.-8 डॉ. लज्जा राम, मेडिकल ऑफिसर, प्रा.स्वा.कें., जैथारा, जिन्होंने घायल राम चंद्र की जांच औपचारिक साक्षी के रूप में की, को परीक्षित किया गया और संबंधित न्यायालय के समक्ष कुछ अभिलेख प्रदर्शित किए गए। इसके अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष ने कुछ अभिलेख प्रस्तुत किए, जिन्हें परीक्षण के दौरान निम्नानुसार प्रदर्शित किया गया:

(i) लिखित रिपोर्ट प्रदर्श क-1 के रूप में, (ii) लालटेन की बरामदगी मेमो और सुपुर्दगीनामा प्रदर्श क-2 के रूप में, (iii) टॉर्च की बरामदगी मेमो और सुपुर्दगीनामा प्रदर्श क-3 के रूप में, (iv) चोट रिपोर्ट प्रदर्श क-4 और 5 के रूप में, (v) पोस्टमार्टम रिपोर्ट प्रदर्श क-6 के रूप में, (vi) एफआईआर प्रदर्श क-7 के रूप में, (vii) पंचायतनामा प्रदर्श क-9 के रूप में, (viii) रक्त सने और साधारण मिट्टी की बरामदगी मेमो प्रदर्श क-15 के रूप में, (ix) रक्त सने जूते की बरामदगी मेमो प्रदर्श क-16 के रूप में, (x) खाली कारतूस प्रदर्श क-17 के रूप में, (xi) टॉर्च और कारतूस की बरामदगी मेमो और सुपुर्दगीनामा प्रदर्श क 18 के रूप में, (xii) टॉर्च और कारतूस की बरामदगी मेमो और सुपुर्दगीनामा प्रदर्श क-19 के रूप में, (xiii) घर की तलाशी मेमो प्रदर्श क-20 के रूप में (xiv) टॉर्च की बरामदगी मेमो और सुपुर्दगीनामा प्रदर्श क 21 के रूप में, (xv) अनुक्रमणिका के साथ साइट प्लान प्रदर्श क-22 के रूप में, (xvi) आरोपपत्र 'मूल' प्रदर्श क-27 के रूप में।

6. हमने अपीलकर्ताओं के लिए विद्वान न्याय-मित्र, श्री हरीश चंद्र तिवारी और राज्य प्रतिवादियों के लिए विद्वान अ.शा.अधि., श्री घनश्याम कुमार को सुना है।

7. विद्वान न्याय-मित्र, श्री हरीश चंद्र तिवारी ने प्रस्तुत किया कि सभी साक्षी हितबद्ध साक्षी हैं और तीन अभियोजन साक्षियों में से दो साक्षी, अर्थात्, अभि.सा.-1 मृतक के सगे भाई हैं और अभि.सा.-2 मृतक के पिता हैं, अतः उनके साक्ष्य पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता था; वर्तमान मामले में पूर्णतः दोषपूर्ण जांच हुई थी और प्रस्तुत करना चाहा कि साइट प्लान में दिखाए गए तरीके से अपराध नहीं किया जा सकता था। उन्होंने तर्क देना चाहा कि साइट प्लान के अनुसार अभियुक्त व्यक्तियों की उपस्थिति दर्शाने वाली दिशा से मृतक को आग्नेयास्त्र से चोट पहुंचाना संभव नहीं था; उन्होंने अपने तर्क के समर्थन में साइट प्लान की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। वे आगे प्रस्तुत करते हैं कि गोली चलाने की भूमिका सह-अभियुक्त रामेश्वर को सौंपी गई है और यह सिद्ध नहीं है कि अपीलकर्ता ने मृतक जोहरी को चोट पहुंचाई या उसकी मृत्यु का कारण बना, जो केवल आग्नेयास्त्र की चोट के कारण मरा। वे आगे प्रस्तुत करते हैं कि अन्वेषण अधिकारी ने जानबूझकर दहलीज में शव का स्थान दिखाया है, जिससे अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध आरोपित अपराध व आरोपों को सिद्ध किया जा सके, जबकि ऐसी कोई घटना नहीं हुई थी और साइट प्लान में घटना स्थल को गलत तरीके से दिखाया गया है। वे आगे प्रस्तुत करते हैं कि अपीलकर्ता रक्षपाल को झूठा फंसाया गया है, केवल इसलिए कि उसके एक परिचित सुरेश ने थाना जातरा के इंस्पेक्टर रामचरण के विरुद्ध एक शिकायत दर्ज की थी, जिसमें वह साक्षियों में से एक था, हालांकि उपरोक्त शिकायत में उसका बयान दर्ज नहीं किया गया था। वे आगे प्रस्तुत करते हैं कि अपीलकर्ता रक्षपाल फरार था, यह कारण अपने आप में उसके विरुद्ध यह अनुमान लगाने के लिए पर्याप्त नहीं है कि उसने कोई अपराध किया है। इसलिए, तर्क यह है कि अपीलकर्ता रक्षपाल के विरुद्ध कोई अपराध सिद्ध नहीं है और विचारण न्यायालय का निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है और जीवित अपीलकर्ता रक्षपाल सभी आरोपों से दोषमुक्त किए जाने योग्य है। उन्होंने अंत में प्रस्तुत किया कि धारा 460 भा.दं.सं. के अधीन कोई आरोप नहीं लगाया गया था और इसलिए, अभियुक्त रक्षपाल को उक्त धारा की सहायता से दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था; अतः, जीवित अपीलकर्ता रक्षपाल की दोषसिद्धि रद्द किए जाने योग्य है।

8. राज्य प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान अ.शा.अधि., श्री घनश्याम कुमार ने तर्क दिया है कि घटना 25/26.7.1982 की आधी रात के दौरान हुई थी और प्राथमिकी उसी रात सुबह 5:30 बजे तुरंत दर्ज की गई थी और चूंकि घटनास्थल से थाने की दूरी लगभग 5 किलोमीटर है; स्वाभाविक प्रत्यक्षदर्शियों द्वारा प्रत्यक्ष प्रत्यक्षदर्शी विवरण है; जांच में मामूली कमियां या दोष स्वयं में जीवित अपीलकर्ता रक्षपाल को दोषमुक्त करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं; कोई आरोप नहीं है कि अभियुक्त व्यक्तियों और मृतक और उसके परिवार के सदस्यों के बीच कोई दुश्मनी थी, जो प्रत्यक्षदर्शी भी थे, या वर्तमान मामले में किसी अन्य साक्षी के साथ भी; वर्तमान अपीलकर्ता रक्षपाल सहित सभी अभियुक्त व्यक्ति घटनास्थल पर मौजूद थे और उनकी उपस्थिति परिवार के सदस्य होने के कारण घटनास्थल पर मौजूद स्वाभाविक प्रत्यक्षदर्शियों के प्रत्यक्षदर्शी विवरण द्वारा सिद्ध की गई थी और घटना आधी रात के दौरान हुई थी और यह भी सिद्ध है कि अभियुक्त रक्षपाल, अन्य सभी अभियुक्त (अब मृत) के साथ अपने हाथ में घातक आग्नेयास्त्र लिए हुए था। इसलिए, तर्क यह है कि विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य की सही विवेचना पर अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध लगाए गए आरोप सिद्ध हो गए हैं और सभी अभियुक्त व्यक्तियों को धारा 460 भा.दं.सं. की सहायता से सही ढंग से दोषसिद्ध किया गया था, जो स्पष्ट रूप से प्रावधान करती है कि रात में ऐसी छिपकर घर में अतिचार या रात में घर तोड़ने में संयुक्त

रूप से संबंधित प्रत्येक व्यक्ति को आजीवन कारावास, या किसी भी प्रकार के कारावास से दंडित किया जाएगा, जो दस वर्ष तक की अवधि के लिए हो सकता है, और जुर्माने के लिए भी उत्तरदायी होगा। वे प्रस्तुत करते हैं कि धारा 222 दं.प्र.सं. के प्रावधानों के दृष्टिगत न्यायालय को ऐसा करने की शक्ति है। उन्होंने आगे बताया कि समन्वय पीठ ने श्री हरीश चंद्र तिवारी को सुनने के बाद, जो उपरोक्त अपील में भी न्याय-मित्र थे, विचारण न्यायालय के निर्णय को बनाए रखते हुए सह-अभियुक्त रामेश्वर की दोषसिद्धि को बरकरार रखा है, और उपरोक्त अपील में उपस्थित विद्वान अ.शा.अधि. को विस्तार से सुना। उन्होंने बताया कि संबंधित अपील में, न्यायालय ने स्पष्ट रूप से निर्णीत किया है कि विचारण न्यायालय के निर्णय में कोई बड़ी, विधिक या वास्तविक त्रुटि नहीं पाई गई है और अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान न्याय-मित्र द्वारा बताई गई अभियोजन पक्ष/साक्ष्य में मामूली और नगण्य विसंगति को अपीलकर्ता संख्या 1 को दोषमुक्त करने का आधार नहीं बनाया जा सकता, हालांकि, चूंकि अपीलकर्ता रामेश्वर 15.11.1983 से जेल में बंद था, अपीलकर्ता की दोषसिद्धि की पुष्टि करने के बाद, धारा 460 भा.दं.सं. के अधीन अवर न्यायालय द्वारा दी गई आजीवन कारावास की सजा में से उसकी सजा को पहले से भुगती गई अवधि तक कम कर दिया गया और धारा 394, 397 भा.दं.सं. के अधीन सात वर्ष की सजा और विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश को उस सीमा तक संशोधित किया गया। इसलिए, वे प्रस्तुत करते हैं कि वर्तमान आपराधिक अपील योग्यता से रहित है और विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश में कोई हस्तक्षेप उचित नहीं है।

9. हमने प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार किया है और पेपर बुक का अवलोकन किया है।

10. आगे बढ़ने से पहले, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के साथ-साथ इस न्यायालय के विभिन्न प्रासंगिक निर्णयों का संदर्भ देना उचित होगा।

11. **कृष्णा मोची व अन्य बनाम बिहार राज्य, (2002) 6 SCC 81** में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आपराधिक मुकदमे में साक्ष्य की विवेचना करते समय आपराधिक न्यायालयों द्वारा अपनाए जाने वाले यथार्थवादी दृष्टिकोण पर जोर दिया, जिसका प्रस्तर 32 निम्नानुसार उद्धृत है:

"32. साक्ष्य की विवेचना करते समय न्यायालय को जीवन की इन वास्तविकताओं को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए और हाथीदांत की मीनार में बैठकर अवास्तविक दृष्टिकोण नहीं अपना सकता। मुझे लगता है कि हाल के समय में अभियुक्त को आसानी से दोषमुक्त करने की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ रही है। निस्तारण के मानक को प्राप्त करने के लिए एक संक्षिप्त निर्णय द्वारा मामले में उठाए गए मामूली बिंदुओं के आधार पर दोषमुक्ति करने का आदेश पारित करना बहुत आसान है। प्रत्येक मामले में कुछ विसंगति होना निश्चित है, जिसका न्यायालय पर तब तक प्रभाव नहीं होनी चाहिए जब तक कि यह अभियोजन पक्ष को गंभीर रूप से प्रभावित न करे। यदि बताई गई विसंगतियां कंकड़ों के क्षेत्र में हैं, तो न्यायालय को उस पर चलना चाहिए, लेकिन यदि वह चट्टानें हैं, तो न्यायालय को उन पर कूदने का प्रयास नहीं करना चाहिए। इन दिनों जब अपराध बड़े पैमाने पर हो रहा है और मानवता पीड़ित है और समाज इससे बहुत प्रभावित है, न्यायालयों के कर्तव्य और जिम्मेदारियां

बहुत अधिक हो गई हैं। अब यह सूक्ति "सौ दोषी व्यक्तियों को बरी कर दो, लेकिन एक भी निर्दोष को दोषी न ठहराया जाए" व्यवहार में दुनिया भर में बदल रही है और न्यायालयों को यह स्वीकार करने के लिए मजबूर होना पड़ा है कि "समाज गलत दोषसिद्धियों से पीड़ित होता है और यह समान रूप से गलत बरी होने से पीड़ित होता है"। मुझे लगता है कि इस न्यायालय ने हाल के समय में समय-समय पर इन तथ्यों को ईमानदारी से नोटिस किया है....."

(महत्व प्रदत्त)

12. मसालती बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, AIR 1965 SC 202 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तर 14 में निम्नानुसार टिप्पणी की:

"14. लेकिन हमें लगता है कि यह तर्क देना अनुचित होगा कि साक्षियों द्वारा दिए गए साक्ष्य को केवल इस आधार पर निरस्त कर दिया जाना चाहिए कि यह पक्षपाती या हितबद्ध साक्षियों का साक्ष्य है। ... केवल इस आधार पर कि यह पक्षपाती है, ऐसे साक्ष्य की यांत्रिक अस्वीकृति अनिवार्य रूप से न्याय की विफलता का कारण बनेगी।"

(महत्व प्रदत्त)

13. दरिया सिंह बनाम पंजाब राज्य, AIR 1965 SC 328 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया है कि संबंधी साक्षी का मतलब आवश्यक रूप से हितबद्ध साक्षी के समान नहीं है। एक साक्षी को हितबद्ध तभी कहा जा सकता है, जब वह मुकदमे के परिणाम से कुछ लाभ प्राप्त करता है; एक दीवानी मामले में एक डिक्री, या आपराधिक मुकदमे में किसी व्यक्ति को दंडित होते देखने में, जिसका प्रस्तर 6 निम्नानुसार उद्धृत है:

6. सैद्धांतिक रूप में, हालांकि, यह स्वीकार करना कठिन है कि यदि कोई साक्षी मृतक का रिश्तेदार सिद्ध होता है और यह भी सिद्ध होता है कि उसने हमलावर के प्रति पीड़ित की शत्रुता साझा की थी, तो उसके साक्ष्य को तब तक स्वीकार नहीं किया जा सकता जब तक कि महत्वपूर्ण बिंदुओं पर इसकी पुष्टि न हो।

14. अप्पाभाई व अन्य बनाम गुजरात राज्य, AIR 1988 SC 696 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तर 11 में निम्नानुसार टिप्पणी की:

"11.....अनुभव हमें याद दिलाता है कि सभ्य लोग आम तौर पर असंवेदनशील होते हैं, जब उनकी उपस्थिति में भी कोई अपराध किया जाता है। वे पीड़ित और सतर्क दोनों लोगों से दूर हो जाते हैं। वे स्वयं को न्यायालय से दूर रखते हैं, जब तक कि यह अपरिहार्य न हो। वे सोचते हैं कि अपराध, सिविल विवाद की तरह, दो व्यक्तियों या पक्षों के बीच है और उन्हें स्वयं को शामिल नहीं करना चाहिए। आम जनता की इस प्रकार की उदासीनता वास्तव में दुर्भाग्यपूर्ण है, लेकिन यह हर जगह है, चाहे गांव में हो, कस्बों में हो या शहरों में। इस

बाधा को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता, जिसके साथ अन्वेषण एजेंसी को अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना होता है। इसलिए न्यायालय को स्वतंत्र साक्षी के अभाव के लिए अभियोजन पक्ष के मामले पर संदेह करने के बजाय अभियोजन संस्करण के व्यापक स्पेक्ट्रम पर विचार करना चाहिए और फिर उचित संभावना के साथ सत्य की खोज करनी चाहिए, यदि कोई हो, जो आरोपी द्वारा सुझाई गई हो। हालांकि, न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए कि एक गंभीर अपराध के साक्षी सामान्य तरीके से प्रतिक्रिया नहीं कर सकते हैं। न ही वे समान रूप से प्रतिक्रिया करते हैं। एक भयावह अपराध या घृणित प्रकृति के कार्य पर भयभीत साक्षी अलग तरह से प्रतिक्रिया कर सकते हैं। उनका आचरण सामान्य परिस्थितियों में सामान्य प्रकार का नहीं हो सकता है। इसलिए, न्यायालय केवल इसलिए उनके साक्ष्य को अस्वीकार नहीं कर सकता क्योंकि उन्होंने असामान्य तरीके से व्यवहार किया है या प्रतिक्रिया दी है...."

(महत्व प्रदत्त)

15. इसी तरह का विचार **आंध्र प्रदेश राज्य बनाम एस. मतप्पा व अन्य**, (2006) 4 SCC 512 में लिया गया है, जिसमें यह टिप्पणी की गई है कि अब यह लगभग एक फैशन है कि जनता विशेष रूप से आपराधिक मामलों में न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने और गवाही देने में अनिच्छुक है और इस कारण से ही मामले वर्षों तक खिंचते हैं, जिसका प्रस्तर 6 निम्नानुसार उद्धृत है:

"6.....अब तक, यह विधि का एक सुस्थापित सिद्धांत है कि एक साक्षी के साक्ष्य जो अन्यथा विश्वास को प्रेरित करती है, इस आधार पर निरस्त नहीं की जा सकती कि वह मृतक का रिश्तेदार होने के नाते एक हितबद्ध साक्षी है। एक करीबी रिश्तेदार, जो एक बहुत ही स्वाभाविक साक्षी है, उसे हितबद्ध साक्षी नहीं कहा जा सकता। हितबद्ध शब्द का अर्थ है कि संबंधित व्यक्ति का किसी न किसी तरह से आरोपी को दोषी ठहराने में कुछ प्रत्यक्ष हित होना चाहिए, चाहे वह शत्रुता के कारण हो या किसी अन्य कारण से।"

(महत्व प्रदत्त)

16. **पुलिचेर्ला नागराजु @ नागराज रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य**, (2006) 11 SCC 444 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तर 16 में निम्नानुसार निर्णीत किया है:

"16. इस मामले में, हम पाते हैं कि विचारण न्यायालय ने अभि.सा.1 और अभि.सा.2 के साक्ष्य को केवल इसलिए निरस्त कर दिया था क्योंकि वे मृतक के भाई और पिता होने के नाते हितबद्ध साक्षी थे। लेकिन यह अच्छी तरह से तय है कि किसी साक्षी के साक्ष्य को केवल इस आधार पर निरस्त नहीं किया जा सकता कि वह या तो पक्षपाती है या हितबद्ध है या मृतक से निकटता से संबंधित है, यदि यह अन्यथा, भरोसेमंद और विश्वसनीय पाया जाता है। इसके लिए केवल अधिक सावधानी और सतर्कता के साथ जांच की आवश्यकता है, जिससे न तो दोषी बच सके और न ही निर्दोष गलत तरीके से दोषी ठहराया जाए। यदि ऐसी सावधानीपूर्वक जांच पर, साक्ष्य विश्वसनीय और संभावित पाया जाता है, तो उस पर कार्यवाही की जा सकती है। यदि यह असंभावित या संदिग्ध पाया जाता है, तो इसे निरस्त कर दिया जाना चाहिए। जहां साक्षी के पास अभियुक्त को

झूठा फंसाने का उद्देश्य है, उसके साक्ष्य को स्वीकार किए जाने से पहले गंभीर विवरण के संबंध में समर्थन होना चाहिए।"

(महत्व प्रदत्त)

17. सतबीर सिंह व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2009) 13 SCC 790 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तर 26 में निम्नानुसार निर्णीत किया:

"26. अब यह विधि का एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि केवल इसलिए कि साक्षी स्वतंत्र नहीं हैं, अपने आप में अभियोजन पक्ष को निरस्त करने का आधार नहीं हो सकता। यदि अभियोजन पक्ष को साक्षियों द्वारा समर्थन दिया गया है और उनके बयानों को झूठ सिद्ध करने के लिए कोई विशिष्ट कारण नहीं दिखाया गया है, तो निश्चित रूप से दोषसिद्धि का निर्णय उस पर आधारित हो सकता है"

(महत्व प्रदत्त)

18. जयबलन बनाम पांडिचेरी संघ राज्य क्षेत्र, 2010 (68) ACC 308 (SC) में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तर 21 में निम्नानुसार निर्णीत किया:

"21. हम विचारित मत के हैं कि उन मामलों में, जहां न्यायालय को हितबद्ध साक्षियों के साक्ष्य से निपटने के लिए कहा जाता है, ऐसे साक्षियों के साक्ष्य की विवेचना करते समय न्यायालय का दृष्टिकोण पांडित्यपूर्ण नहीं होना चाहिए। न्यायालय को हितबद्ध साक्षियों द्वारा दिए गए साक्ष्य की विवेचना और स्वीकृति में सतर्क रहना चाहिए, लेकिन न्यायालय को ऐसे साक्ष्य पर संदेह नहीं करना चाहिए। न्यायालय का प्राथमिक प्रयास संगति की तलाश होना चाहिए। किसी साक्षी के साक्ष्य को केवल इसलिए नजरअंदाज या निरस्त नहीं किया जा सकता कि यह ऐसे व्यक्ति से आता है, जो पीड़ित से निकटता से संबंधित है।"

(महत्व प्रदत्त)

19. धरनीधर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2010) 7 SCC 759 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णीत किया कि कोई कठोर और सख्त नियम नहीं है कि परिवार के सदस्य घटना के सच्चे साक्षी कभी नहीं हो सकते और वे हमेशा न्यायालय के समक्ष झूठा गवाही देंगे। यह हमेशा किसी दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा, जिसका प्रस्तर 12 और 13 निम्नानुसार उद्धृत है:

"12. कोई कठोर और सख्त नियम नहीं है कि परिवार के सदस्य घटना के सच्चे साक्षी कभी नहीं हो सकते और वे हमेशा न्यायालय के समक्ष झूठा गवाही देंगे। यह हमेशा किसी दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। जयबलन बनाम पांडिचेरी संघ राज्य क्षेत्र [(2010)1 SCC 199] में, इस न्यायालय को विचार करने का अवसर मिला कि क्या हितबद्ध साक्षियों के साक्ष्य पर भरोसा किया जा सकता है। न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि हितबद्ध साक्षी के साक्ष्य से निपटने के दौरान पांडित्यपूर्ण दृष्टिकोण लागू नहीं किया जा

सकता। ऐसे साक्ष्य को केवल इसलिए नजरअंदाज या निरस्त नहीं किया जा सकता क्योंकि यह पीड़ित से निकटता से संबंधित व्यक्ति से आता है। न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णीत किया:

"23. हम विचारित मत के हैं कि उन मामलों में, जहां न्यायालय को हितबद्ध साक्षियों के साक्ष्य से निपटने के लिए कहा जाता है, ऐसे साक्षियों के साक्ष्य की विवेचना करते समय न्यायालय का दृष्टिकोण पांडित्यपूर्ण नहीं होना चाहिए। न्यायालय को हितबद्ध साक्षियों द्वारा दिए गए साक्ष्य की विवेचना और स्वीकृति में सतर्क रहना चाहिए लेकिन न्यायालय को ऐसे साक्ष्य पर संदेह नहीं करना चाहिए। न्यायालय का प्राथमिक प्रयास संगति की तलाश होना चाहिए। किसी साक्षी के साक्ष्य को केवल इसलिए नजरअंदाज या निरस्त नहीं किया जा सकता कि यह ऐसे व्यक्ति से आता है, जो पीड़ित से निकटता से संबंधित है।

.....

13. इसी तरह का मत राम भरोसे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [AIR 2010 SC 917] में इस न्यायालय द्वारा लिया गया था, जहां न्यायालय ने विधि का सिद्धांत बताया कि मृतक का करीबी रिश्तेदार, स्वयं, एक हितबद्ध साक्षी नहीं बन जाता। एक हितबद्ध साक्षी वह है, जो किसी व्यक्ति को बदले या दुश्मनी या विवादों के कारण दोषी ठहराने में रुचि रखता है और न्यायालय के समक्ष केवल उस इरादे से गवाही देता है न कि न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए। एक हितबद्ध साक्षी के साक्ष्य की विवेचना से संबंधित विधि अच्छी तरह से स्थापित है, जिसके अनुसार, एक हितबद्ध साक्षी के संस्करण को यही ही नहीं ठुकराया जा सकता, लेकिन उसे स्वीकार करने से पहले उसकी सावधानीपूर्वक जांच करनी होती है।

14. उपरोक्त निर्णयों के प्रकाश में, यह स्पष्ट है कि कथित हितबद्ध साक्षियों के बयानों को अभियोजन की कहानी के समर्थन में न्यायालय द्वारा सुरक्षित रूप से भरोसा किया जा सकता है। लेकिन इसे सावधानी से किए जाने की आवश्यकता है और यह सुनिश्चित करने के लिए कि आपराधिक न्याय के प्रशासन को उन व्यक्तियों द्वारा कमजोर नहीं किया जाता है, जो मृतक से निकटता से संबंधित हैं। जब उनके बयानों को अन्य साक्षियों, विशेषज्ञ साक्ष्य और मामले की परिस्थितियों द्वारा समर्थन मिलता है, जो स्पष्ट रूप से अभियुक्त के अपराध की ओर इशारा करते हुए साक्ष्य की श्रृंखला को पूरा करने का चित्रण करते हैं, तो हम कोई कारण नहीं देखते कि तथाकथित 'हितबद्ध साक्षियों' के बयान पर न्यायालय द्वारा भरोसा क्यों नहीं किया जा सकता।"

(महत्व प्रदत्त)

20. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **बाबन शंकर डफल व अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य**, 2025 SCC Online SC 137 में दिए गए एक अत्यंत हालिया निर्णय में साक्षी के साक्ष्य के संबंध में, जिसे केवल पीड़ित के साथ संबंध के कारण निरस्त नहीं किया जाना चाहिए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने, प्रस्तर 27 और 28 में, निम्नानुसार निर्णीत किया है:

"27. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता की एक दलील यह है कि घटना के प्रत्यक्षदर्शी सभी मृतक से निकटता से संबंधित थे और निष्पक्षता के लिए अभियोजन पक्ष को कुछ अन्य स्वतंत्र प्रत्यक्षदर्शी की भी परीक्षित करना चाहिए था, जो दुर्भाग्यपूर्ण घटना के समय मौजूद थे। यह विचारण न्यायालय द्वारा भी लिया गया दृष्टिकोण था, लेकिन उच्च न्यायले ने सही ढंग से ऐसे दृष्टिकोण को निरस्त कर दिया है और निर्णीत किया है कि केवल इसलिए कि कुछ और स्वतंत्र साक्षी भी थे, जो घटना स्थल पर पहुंचे थे, रिश्तेदारों के साक्ष्य पर अविश्वास नहीं किया जा सकता। विधि ऐसा कहीं नहीं कहती कि हितबद्ध साक्षी के साक्ष्य को पूरी तरह से ठुकरा देना चाहिए। विधि केवल यह आदेश देता है कि उनके साक्ष्य की सावधानी और सतर्कता के साथ विवेचना की जानी चाहिए। इस न्यायालय ने निर्णयों की श्रृंखला में माना है कि केवल यदि कोई साक्षी रिश्तेदार है, तो उनके साक्ष्य को केवल उस आधार पर निरस्त नहीं किया जा सकता।

28. आपराधिक मामलों में, साक्षियों की विश्वसनीयता, विशेष रूप से वे जो पीडित के करीबी रिश्तेदार हैं, की अक्सर जांच की जाती है। हालांकि, एक रिश्तेदार होना स्वचालित रूप से एक साक्षी को "हितबद्ध" या पक्षपाती नहीं बनाता। "हितबद्ध" शब्द उन साक्षियों को संदर्भित करता है, जिनका परिणाम में व्यक्तिगत हित है, जैसे कि बदला लेने की इच्छा या दुश्मनी या व्यक्तिगत लाभ के कारण अभियुक्त को झूठा फंसाना। दूसरी ओर, एक "संबंधित" साक्षी वह है जो स्वाभाविक रूप से अपराध स्थल पर मौजूद हो सकता है, और उनके साक्ष्य को केवल पीडित के साथ उनके संबंध के कारण ठुकराना नहीं चाहिए। न्यायालयों को उन्हें अविश्वसनीय बताने के बजाय उनके बयानों की विश्वसनीयता, संगति और सुसंगतता का आकलन करना चाहिए।

(महत्व प्रदत्त)

21. शहाजा @ शाहजान इस्माइल मोहम्मद बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2023) 12 SCC 558 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए एक हालिया निर्णय में देखा गया है कि चक्षुदर्शी साक्ष्य की विवेचना एक कठिन कार्य है और आपराधिक मामले में चक्षुदर्शी साक्ष्य की विवेचना के लिए न्यायिक रूप से विकसित सिद्धांतों को सारांशित किया है, जिसका प्रस्तर 29 और 30 निम्नानुसार उद्धृत है:

"29. चक्षुदर्शी साक्ष्य की विवेचना एक कठिन कार्य है। चक्षुदर्शी साक्ष्य की विवेचना के लिए कोई निश्चित या सीधा सिद्धांत नहीं है। आपराधिक मामले में चक्षुदर्शी साक्ष्य की विवेचना के लिए न्यायिक रूप से विकसित सिद्धांतों को निम्नानुसार देखा जा सकता है:

29.1 किसी साक्षी के साक्ष्य की विवेचना करते समय, दृष्टिकोण यह होना चाहिए कि क्या समग्र रूप से पढ़े गए साक्षी के साक्ष्य में सच्चाई की झलक दिखाई देती है। एक बार वह धारणा बन जाने पर, न्यायालय के लिए साक्ष्य की अधिक विशेष रूप से जांच करना निस्संदेह आवश्यक है, जो समग्र रूप से साक्ष्य में बताई गई कमियों, खामियों और दुर्बलताओं को ध्यान में रखते हुए और यह पता लगाने के लिए उनका मूल्यांकन करना है कि क्या यह साक्षी द्वारा दिए गए साक्ष्य की सामान्य प्रकृति के विरुद्ध है और क्या साक्ष्य का पहले का मूल्यांकन इस हद तक हिल गया है कि इसे विश्वास के अयोग्य बनाया जा सके।

29.2. यदि जिस न्यायालय के समक्ष साक्षी साक्ष्य देता है, उसे साक्षी द्वारा दिए गए साक्ष्य की सामान्य प्रकृति के बारे में मत बनाने का अवसर मिला था, तो अपीलीय न्यायालय जिसे यह लाभ नहीं मिला था, उसे विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य की विवेचना को उचित महत्व देना होगा और जब तक कि महत्वपूर्ण और प्रभावशाली कारण न हों, मामूली भिन्नताओं या तुच्छ विवरणों के मामले में दुर्बलताओं के आधार पर साक्ष्य को निरस्त करना उचित नहीं होगा।

29.3 जब प्रत्यक्षदर्शी का विस्तार में परीक्षण किया जाता है तो उसके लिए कुछ विसंगतियां करना काफी संभव है। लेकिन न्यायालयों को यह ध्यान रखना चाहिए कि न्यायालय किसी साक्षी को निरस्त करने में केवल तब न्यायोचित हो, जब उसके साक्ष्य में विसंगतियां उसके संस्करण की विश्वसनीयता के साथ इतनी असंगत हों।

29.4. मामले के मूल को नहीं छूने वाले तुच्छ मामलों पर मामूली विसंगतियां, साक्ष्य से यहां या वहां संदर्भ से बाहर निकाले गए वाक्यों को लेकर अति तकनीकी दृष्टिकोण, मामले की जड़ में न जाने वाली अन्वेषण अधिकारी द्वारा की गई किसी तकनीकी त्रुटि को महत्व देना सामान्यतः समग्र रूप से साक्ष्य को अस्वीकार करने की अनुमति नहीं देगा।

29.5. किसी घटना के वर्णन में पड़ने वाली केवल भिन्नताओं पर (या तो दो साक्षियों के साक्ष्य के बीच या एक ही साक्षी के दो बयानों के बीच) बहुत गंभीर दृष्टिकोण अपनाना न्यायिक जांच के लिए एक अवास्तविक दृष्टिकोण है।

29.6. सामान्यतः किसी साक्षी से फोटोग्राफिक स्मृति रखने और किसी घटना के विवरणों को याद रखने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। ऐसा नहीं है कि मानसिक स्क्रीन पर वीडियो टेप को फिर से चलाया जाता है।

29.7. सामान्यतः ऐसा होता है कि एक साक्षी घटनाओं से आगे निकल जाता है। साक्षी ने उस घटना का अनुमान नहीं लगाया हो सकता, जिसमें अक्सर आश्चर्य का तत्व होता है। इसलिए मानसिक क्षमताओं से विवरणों को अवशोषित करने के लिए तैयार रहने की उम्मीद नहीं की जा सकती।

29.8. अवलोकन की शक्तियां व्यक्ति से व्यक्ति में भिन्न होती हैं। एक व्यक्ति जो नोटिस कर सकता है, दूसरा नहीं कर सकता। एक वस्तु या गति एक व्यक्ति के दिमाग पर अपनी छवि उकेर सकती है, जबकि यह दूसरे की ओर से किसी का ध्यान नहीं जा सकती।

29.9. सामान्यतः लोग किसी बातचीत को सटीक रूप से याद नहीं कर सकते और उनके द्वारा उपयोग किए गए या उनके द्वारा सुने गए शब्दों को फिर से उत्पन्न नहीं कर सकते। वे केवल बातचीत के मुख्य आशय को याद कर सकते हैं। यह अपेक्षा करना अवास्तविक है कि एक साक्षी मानव टेप रिकॉर्डर हो।

29.10. किसी घटना के सटीक समय, या किसी घटना की समय अवधि के संबंध में, आमतौर पर, लोग पूछताछ के समय तुरंत अनुमान लगाकर अपना अनुमान लगाते हैं। और कोई भी लोगों से ऐसे मामलों में बहुत सटीक या विश्वसनीय अनुमान लगाने की उम्मीद नहीं कर सकता। फिर से, यह व्यक्तियों की समय भावना पर निर्भर करता है जो व्यक्ति से व्यक्ति में भिन्न होती है।

29.11. सामान्यतः एक साक्षी से उन घटनाओं के क्रम को सटीक रूप से याद रखने की उम्मीद नहीं की जा सकती, जो तेजी से या कम समय में घटित होती हैं। बाद में पूछताछ किए जाने पर एक साक्षी भ्रमित हो सकता है, या उलझ सकता है।

29.12. एक साक्षी, हालांकि पूरी तरह से सच्चा है, न्यायालय के वातावरण और अधिवक्ता द्वारा की गई तीक्ष्ण प्रतिपरीक्षा से अभिभूत हो सकता है और घबराहट के कारण तथ्यों को मिला सकता है, घटनाओं के क्रम के बारे में भ्रमित हो सकता है, या तुरंत कल्पना से विवरण भर सकता है। साक्षी का अवचेतन मन कभी-कभी मूर्ख दिखने या अविश्वास किए जाने के डर के कारण इस तरह काम करता है, हालांकि साक्षी उसके द्वारा देखी गई घटना का सच्चा और ईमानदार विवरण दे रहा है।

29.13. एक पूर्व कथन, हालांकि प्रतीत होता है कि साक्ष्य के साथ असंगत है, जरूरी नहीं कि विरोधाभास के लिए पर्याप्त हो। जब तक पूर्व कथन में बाद के कथन को ठुकराने की क्षमता नहीं है, भले ही बाद का कथन पूर्व के साथ कुछ हद तक भिन्न हो, यह उस साक्षी का खंडन करने में सहायक नहीं होगा।

[भारवाड़ा भोगीनभाई हीरजीभाई बनाम गुजरात राज्य, 1983 Cri LJ 1096 : AIR 1983 SC 753, लीला राम बनाम हरियाणा राज्य, AIR 1999 SC 3717, और तहसीलदार सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, AIR 1959 SC 1012 देखें]

30. सरल शब्दों में कहें तो, प्रत्यक्षदर्शियों के साक्ष्य के मूल्य का आकलन करने में, दो प्रमुख विचार हैं कि क्या, मामले की परिस्थितियों में, घटना स्थल पर या ऐसी स्थितियों में उनकी उपस्थिति पर विश्वास करना संभव है, जो उन्हें उनके द्वारा गवाही दिए गए तथ्यों को देखना संभव बनाएगा और दूसरा, क्या उनके साक्ष्य में कुछ भी स्वाभाविक रूप से असंभावित या अविश्वसनीय है। इन दोनों विचारों के संबंध में, या तो उन साक्षियों से स्वयं प्राप्त परिस्थितियां या अन्य साक्ष्य द्वारा स्थापित परिस्थितियां जो उनकी उपस्थिति को असंभव बनाने या उनके बयानों की सत्यता को बदनाम करने की प्रवृत्ति रखती हैं, न्यायालय द्वारा उनके साक्ष्य को जो मूल्य दिया जाएगा, उस पर प्रभाव पड़ेगा। हालांकि उन मामलों में जहां अभियुक्त की याचिका केवल एक इनकार है, फिर भी अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य की जांच उसकी अपनी योग्यता पर की जानी है, जहां अभियुक्त एक निश्चित याचिका उठाता है या एक सकारात्मक मामला प्रस्तुत करता है जो अभियोजन के साथ असंगत है, ऐसी याचिका या मामले की प्रकृति और उसके संबंध में संभावनाओं को भी अभियोजन साक्ष्य के मूल्य का आकलन करते समय ध्यान में रखना होगा।"

(महत्व प्रदत्त)

22. पहलवान सिंह व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2020 (6) ALJ 166 का प्रस्तर 48 निम्नानुसार उद्धृत है:

"48. इस प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों के दृष्टिगत, अब यह विधि की एक स्थापित स्थिति है कि अभियोजन की कहानी के समर्थन में हितबद्ध साक्षियों के बयानों पर न्यायालय द्वारा सुरक्षित रूप से भरोसा किया जा सकता है। लेकिन इसे सावधानी से किए जाने की आवश्यकता है और यह सुनिश्चित करने के लिए कि आपराधिक न्याय के प्रशासन को उन व्यक्तियों द्वारा कमजोर नहीं किया जाता है जो मृतक से निकटता से संबंधित हैं। जब उनके बयानों को अन्य साक्ष्य, विशेषज्ञ साक्ष्य द्वारा समर्थन मिलता है और मामले की परिस्थितियां स्पष्ट रूप से अभियुक्त के अपराध की ओर इशारा करते हुए साक्ष्य की श्रृंखला को पूरा करने का चित्रण करती हैं, तो कोई कारण नहीं है कि तथाकथित 'हितबद्ध साक्षियों' के बयान पर न्यायालय द्वारा भरोसा क्यों नहीं किया जा सकता। यह विश्वास करना कठिन होगा कि करीबी रिश्तेदार वास्तविक अपराधी को छोड़ देंगे और निर्दोष व्यक्तियों को झूठा फंसाएंगे केवल इसलिए कि अभियुक्त व्यक्तियों के साथ उनकी दुश्मनी है।

(महत्व प्रदत्त)

23. जहां तक घायल साक्षी के साक्ष्य का संबंध है, इस न्यायालय ने कप्तान सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2020 (1) ADJ 106 (DB) में, प्रस्तर 20 में निम्नानुसार टिप्पणी की है:

"20. साक्ष्य की बारीकी से जांच से पता चलता है कि (अभि.सा. 1) विमला देवी और (अभि.सा.-2) राम सिंगार पांडेय के बयान स्पष्ट, सुसंगत और विश्वसनीय हैं। उनकी प्रति-परीक्षा की गई है, लेकिन वे अभियोजन पक्ष के संस्करण पर अडिग रहे और ऐसा कोई तथ्य, विरोधाभास या असंगति उभर नहीं सकी, जिससे उनके साक्ष्य के बारे में कोई संदेह पैदा हो। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि घटना के बाद, मृतक और घायल को अस्पताल ले जाया गया और उन्हें वहां भर्ती कराया गया और उसी रात मृतक राम निवास राव की चोटों से मृत्यु हो गई, से यह स्पष्ट है कि घटना की प्रथम सूचना रिपोर्ट बिना किसी अनुचित देरी के दर्ज की गई थी। (अभि.सा.-1) विमला देवी का संस्करण (अभि.सा.-2) राम सिंगार पांडेय के साक्ष्य से पुष्टि पाता है और चिकित्सा साक्ष्य के साथ पूरी तरह से संगत है। यह भी ध्यान में रखना है कि (अभि.सा.-2) राम सिंगार पांडेय को उसी घटना में चोटें आयी हैं। जरनैल सिंह बनाम पंजाब राज्य, (2009) 9 SCC 719 में, सर्वोच्च न्यायालय ने घायल अभियुक्त के साक्ष्य को दी गई विशेष साक्ष्य स्थिति को दोहराया। यह तथ्य कि साक्षी को घटना के समय और स्थान पर चोटें आईं, उसकी इस गवाही का समर्थन करता है कि वह घटना के दौरान मौजूद था। यदि घायल साक्षी की लंबी प्रति-परीक्षा की जाती है और उसके साक्ष्य को ठुकराने के लिए कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है, तो उस पर भरोसा किया जाना चाहिए। इसी तरह का विचार कृष्णन बनाम हरियाणा राज्य, (2006) 12 SCC 459 के मामले में व्यक्त किया गया था।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आपराधिक अपील संख्या 513-514 of 2014 बलेश्वर महतो व अन्य बनाम बिहार राज्य व अन्य, जो 9.1.2017 को निर्णीत हुआ, में विधि को निम्नानुसार दोहराया है:

"28. एक ऐसे साक्षी के साक्ष्य को दिए जाने वाले महत्व का प्रश्न, जो स्वयं घटना के दौरान घायल हुआ था, इस न्यायालय द्वारा व्यापक रूप से चर्चा की गई है। जहां घटना का साक्षी स्वयं घटना में घायल हुआ है, ऐसे साक्षी के साक्ष्य को आम तौर पर बहुत विश्वसनीय माना जाता है, क्योंकि वह एक साक्षी है जो अपराध के स्थल पर अपनी उपस्थिति की अंतर्निहित गारंटी के साथ आता है और किसी को झूठा फंसाने के लिए अपने वास्तविक हमलावर को बख्शने की संभावना नहीं है।

"एक घायल साक्षी को बदनाम करने के लिए विश्वसनीय साक्ष्य की आवश्यकता होती है।" [देखें-रामलगन सिंह बनाम बिहार राज्य [(1973) 3 SCC 881:1973 SCC (Cri) 563:AIR 1972 SC 2593], मलखान सिंह बनाम उ.प्र. राज्य [(1975) 3 SCC 311 : 1974 SCC (Cri) 919 : AIR 1975 SC 12], मच्छी सिंह बनाम पंजाब राज्य [(1983) 3 SCC 470 : 1983 SCC (Cri) 681], अप्पाभाई बनाम गुजरात राज्य [1988 Supp SCC 241 : 1988 SCC (Cri) 559 : AIR 1988 SC 696], बोंक्या बनाम महाराष्ट्र राज्य [(1995) 6 SCC 447 : 1995 SCC (Cri) 1113], भाग सिंह [(1997) 7 SCC 712 : 1997 SCC (Cri) 1163], मोहर बनाम उ.प्र. राज्य [(2002) 7 SCC 606 : 2003 SCC (Cri) 121] (SCC p. 606b-c), दिनेश कुमार बनाम राजस्थान राज्य [(2008) 8 SCC 270 : (2008) 3 SCC (Cri) 472], विष्णु बनाम राजस्थान राज्य [(2009) 10 SCC 477 : (2010) 1 SCC (Cri) 302], अन्नारेड्डी संबशिव रेड्डी बनाम आं.प्र. राज्य [(2009) 12 SCC 546 : (2010) 1 SCC (Cri) 630] और बलराजे बनाम महाराष्ट्र राज्य [(2010) 6 SCC 673 : (2010) 3 SCC (Cri) 211]

29. इस बिन्दु का निर्णय करते समय, इसी तरह का विचार जरनैल सिंह बनाम पंजाब राज्य [(2009) 9 SCC 719 : (2010) 1 SCC (Cri) 107] में लिया गया था, जहां इस न्यायालय ने एक घायल अभियुक्त के साक्ष्य को दी गई विशेष साक्ष्य स्थिति को दोहराया और अपने पहले के निर्णयों पर भरोसा करते हुए निम्नानुसार निर्णय दिया: (SCC pp. 726-27, paras 28-29)

"29. दर्शन सिंह (अभि.सा. 4) एक घायल साक्षी था। डॉक्टर द्वारा उसकी जांच की गई थी। उसके साक्ष्य को हल्के में नहीं निरस्त किया जा सकता था। उसने घटना का पूरा विवरण दिया था, क्योंकि वह उस समय मौजूद था, जब हमलावर ट्यूबवेल पर पहुंचे। शिवलिंगप्पा कल्याणप्पा बनाम कर्नाटक राज्य [1994 Supp (3) SCC 235 : 1994 SCC (Cri) 1694] में इस न्यायालय ने निर्णीत किया है कि घायल साक्षी के बयान पर भरोसा किया जाना चाहिए जब तक कि प्रमुख विरोधाभासों और विसंगतियों के आधार पर उसके साक्ष्य को अस्वीकार करने के लिए मजबूत आधार न हों, इस कारण से कि उसकी घटनास्थल पर उपस्थिति स्थापित हो जाती है यदि यह सिद्ध हो जाता है कि उसे उक्त घटना के दौरान चोटे आयी थी।

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम किशन चंद [(2004) 7 SCC 629 : 2004 SCC (Cri) 2021] में इसी तरह के विचार को दोहराया गया है और यह टिप्पणी की गई है कि अच्छे साक्षी के साक्ष्य की अपनी प्रासंगिकता और प्रभावकारिता है। यह तथ्य कि साक्षी को घटना के समय और स्थान पर चोटें आयी, उसकी इस गवाही का समर्थन करता है कि वह घटना के समय उपस्थित था। यदि घायल साक्षी की लंबी प्रति-परीक्षा की जाती है और उसके साक्ष्य को ठुकराने के लिए कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है, तो उस पर भरोसा किया जाना चाहिए (कृष्णन बनाम हरियाणा राज्य [(2006) 12 SCC 459 : (2007) 2 SCC (Cri) 214] देखें)। इस प्रकार, हम विचारित मत के हैं कि दर्शन सिंह (अभि.सा. 4) के साक्ष्य पर अवर न्यायालयों द्वारा सही रूप से भरोसा किया गया है।"

30. इस बिंदु पर विधि को इस प्रभाव के लिए संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है कि घायल साक्षी के साक्ष्य को विधि में एक विशेष दर्जा दिया जाता है। यह इस तथ्य के परिणामस्वरूप है कि साक्षी को चोट अपराध के स्थल पर उसकी उपस्थिति की अंतर्निहित गारंटी है और क्योंकि साक्षी केवल किसी तीसरे पक्ष को अपराध के लिए झूठा फंसाने के लिए अपने वास्तविक हमलावर को बिना सजा के नहीं जाने देना चाहेगा। इस प्रकार, घायल साक्षी के बयान पर भरोसा किया जाना चाहिए, जब तक कि उसमें प्रमुख विरोधाभासों और विसंगतियों के आधार पर उसके साक्ष्य को अस्वीकार करने के लिए मजबूत आधार न हों।"

इसी निर्णय में, चिकित्सा साक्ष्य और प्रत्यक्ष साक्ष्य के बीच संबंध पर भी निम्नानुसार चर्चा की गई थी, जो पहले के कई निर्णयों पर आधारित थी, : "33. हरियाणा राज्य बनाम भगीरथ [(1999) 5 SCC 96 : 1999 SCC (Cri) 658] में निम्नानुसार निर्णय दिया गया था: (SCC p. 101, para 15)

"15. चिकित्सा साक्षी द्वारा दी गई मत इस विषय पर अंतिम शब्द होना आवश्यक नहीं है। ऐसी मत का न्यायालय द्वारा परीक्षण किया जाएगा। यदि मत तर्क या वस्तुनिष्ठता से रहित है, तो न्यायालय उस मत के अनुसार जाने के लिए बाध्य नहीं है। आखिरकार मत वह है जो किसी तथ्य स्थिति के संबंध में किसी व्यक्ति के मन में बनती है। यदि एक डॉक्टर एक मत बनाता है और दूसरा डॉक्टर उन्हीं तथ्यों पर एक अलग मत बनाता है तो न्यायाधीश के लिए उस दृष्टिकोण को अपनाना खुला है, जो अधिक वस्तुनिष्ठ या संभावित है। इसी तरह यदि एक डॉक्टर द्वारा दिया गया मत संभाव्यता के अनुरूप नहीं है तो न्यायालय के पास केवल इसलिए उस मत के साथ जाने की कोई मजबूरी नहीं है सिर्फ इसलिए कि वह डॉक्टर द्वारा कही गई है। बेशक, विशेष विषय के विशेषज्ञ व्यक्तियों द्वारा दी गई रायों को उचित महत्व दिया जाना चाहिए।"

शिवलिंगप्पा कल्याणप्पा बनाम कर्नाटक राज्य, 1994 Supp (3) SCC 235 : 1994 SCC (Cri) 1694 में, न्यायालय ने निर्णीत किया है कि घायल साक्षी के बयान पर भरोसा किया जाना चाहिए, जब तक कि प्रमुख विरोधाभासों और विसंगतियों के आधार पर उसके साक्ष्य को अस्वीकार करने के लिए मजबूत आधार न हों, इस कारण से कि उसकी घटनास्थल पर उपस्थिति स्थापित हो जाती है, यदि यह सिद्ध हो जाता है कि उसे उक्त घटना के दौरान चोट आयी थी।

यह निर्णीत किया गया है कि इस बिंदु पर विधि को इस प्रभाव के लिए संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है कि घायल साक्षी के साक्ष्य को विधि में एक विशेष दर्जा दिया जाता है। यह इस तथ्य के परिणामस्वरूप है कि साक्षी को चोट, अपराध स्थल पर उसकी उपस्थिति की अंतर्निहित गारंटी है और क्योंकि साक्षी केवल किसी तीसरे पक्ष को अपराध के लिए झूठा फंसाने के लिए अपने वास्तविक हमलावर को बिना सजा के नहीं जाने देना चाहेगा। इस प्रकार, घायल साक्षी के बयान पर भरोसा किया जाना चाहिए, जब तक कि उसमें प्रमुख विरोधाभासों और विसंगतियों के आधार पर उसके साक्ष्य को अस्वीकार करने के लिए मजबूत आधार न हों।"

(महत्व प्रदत्त)

24. **नीरज शर्मा बनाम छत्तीसगढ़ राज्य**, (2024) 3 SCC 125 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए एक हालिया निर्णय में आपराधिक मुकदमे में घायल साक्षी के महत्व के संबंध में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने, प्रस्तर 22 और 23 में, निम्नानुसार निर्णीत किया है:

"22. आपराधिक मुकदमे में घायल साक्षी के महत्व को बढ़ा कर नहीं बताया जा सकता। जब तक कि बचाव पक्ष द्वारा ऐसे साक्षी पर संदेह करने के लिए मजबूर परिस्थितियां या साक्ष्य न रखे गए हों, इसे आपराधिक मुकदमे में एक अत्यंत मूल्यवान साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।"

23. बालू सुदाम खलडे बनाम महाराष्ट्र राज्य 2023 SCC OnLine SC 355 में इस न्यायालय ने उन सिद्धांतों को संक्षेपित किया, जो एक घायल प्रत्यक्षदर्शी के साक्ष्य की विवेचना करते समय ध्यान में रखे जाने चाहिए। इस न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णीत किया:

"26. जब एक घायल प्रत्यक्षदर्शी के साक्ष्य की विवेचना की जानी है, तो न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित निम्नलिखित विधिक सिद्धांतों को ध्यान में रखा जाना आवश्यक है:

(क) घटना के समय और स्थान पर एक घायल प्रत्यक्षदर्शी की उपस्थिति पर संदेह नहीं किया जा सकता, जब तक कि उसके बयान में गंभीर विरोधाभास न हों।

(ख) जब तक कि साक्ष्य द्वारा अन्यथा स्थापित न किया गया हो, यह माना जाना चाहिए कि एक घायल साक्षी वास्तविक अपराधियों को बचने नहीं देगा और अभियुक्तों को झूठा फंसाएगा।

(ग) घायल साक्षी के साक्ष्य का साक्ष्य मूल्य अधिक होता है और जब तक कि मजबूत कारण मौजूद न हों, उनके बयानों को हल्के में अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए।

(ड) स्वाभाविक आचरण में कुछ अलंकरण या मामूली विरोधाभासों के कारण घायल साक्षी के साक्ष्य पर संदेह नहीं किया जा सकता।

(च) यदि किसी घायल साक्षी के साक्ष्य में कोई अतिशयोक्ति या सारहीन अलंकरण हो, तो ऐसे विरोधाभास, अतिशयोक्ति या अलंकरण को घायल के साक्ष्य से अलग कर दिया जाना चाहिए, लेकिन पूरा साक्ष्य नहीं।

(छ) अभियोजन संस्करण के व्यापक आधार को ध्यान में रखा जाना चाहिए और विसंगतियां जो सामान्यतः समय बीतने के साथ स्मृति की हानि के कारण आती हैं, उन्हें अलग कर दिया जाना चाहिए।"

(महत्व प्रदत्त)

25. हम पाते हैं कि वर्तमान मामले में स्पष्ट प्रत्यक्षदर्शी विवरण है। घटना रात में हुई है और अभि.सा.-1 शिवराज सिंह और अभि.सा.-3 रामचंद्र, क्रमशः सगे भाई और पिता, निकटतम परिवार के सदस्य होने के नाते घटना के स्वाभाविक प्रत्यक्षदर्शी हैं। सूचनाकर्ता अभि.सा.-1 के रूप में उपस्थित हुए हैं। घटना में उनके सगे भाई जोहरी को गोली मारी गई थी। इसी प्रभाव से, एक अन्य प्रत्यक्षदर्शी अभि.सा.-2 राम नाथ, जो एक पड़ोसी हैं और परिवार के सदस्यों द्वारा उठाए गए शोर और गोलीबारी की आवाज सुनकर टॉर्च के साथ घटनास्थल पर पहुंचे हैं, ने बयान दिया है। अभि.सा.-3 राम चंद्र एक घायल साक्षी हैं और उन्होंने भी प्रत्यक्षदर्शी विवरण दिया है और घटनास्थल पर उनकी उपस्थिति स्पष्ट रूप से सिद्ध है। सभी तीन प्रत्यक्षदर्शियों ने व्यक्तिगत रूप से और स्पष्ट रूप से बताया है कि सभी अभियुक्त व्यक्ति उन्हें ज्ञात थे और जीवित अभियुक्त रक्षपाल, जिसके हाथ में देशी पिस्तौल थी, की उपस्थिति के संबंध में विशिष्ट कथन भी दिया गया है। औपचारिक साक्षी अभि.सा.-4 डॉ. वी.के. शर्मा ने भी चोट रिपोर्ट और मृतक को पहुंचाई गई आग्नेयास्त्र की चोट को सिद्ध किया है। इस बात में कोई विवाद नहीं है कि कैसे और किस तरीके से चोट पहुंचाई गई थी, हालांकि अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने बहस के दौरान चोट की दिशा पर विवाद करना चाहा। यह कहना पर्याप्त है कि ऐसे क्षणों में, जब हमले के अधीन व्यक्तियों के लिए एक स्वतःस्फूर्त मोड़ लेना स्वाभाविक नहीं है। इसलिए, यह अभियोजन पक्ष के लिए घातक सिद्ध नहीं हो सकता। प्रकाश का स्रोत (लालटेन) दिया गया है और साइट प्लान में इसका स्थान भी निर्दिष्ट किया गया है। लालटेन (प्रदर्श क-2) और टॉर्च (प्रदर्श क-3, क-18 और क-19) की बरामदगी मेमो भी है। यह त्वरित एफआईआर और अन्वेषण का मामला है। कुछ भी असंगत या भौतिक रूप से अन्यथा सिद्ध करने वाला, प्रत्यक्षदर्शियों या औपचारिक साक्षियों की प्रतिपरीक्षा से सामने नहीं आया है। इस स्तर पर, हम देख सकते हैं कि विद्वान न्याय-मित्र, श्री हरीश चंद्र तिवारी भी रामेश्वर की अपील में उपस्थित हुए थे और बहस के दौरान उन्होंने बहुत निष्पक्ष रूप से स्वीकार किया कि ऐसे सभी तर्क, जो इस न्यायालय के समक्ष उठाए गए हैं, रामेश्वर की अपील में समन्वय पीठ के समक्ष उठाए गए थे लेकिन माननीय समन्वय पीठ ने उन्हें स्वीकार नहीं किया। हमने धारा 313 दं.प्र.सं. के अधीन दर्ज वर्तमान जीवित अपीलकर्ता रक्षपाल के बयान को भी देखा है। अपनी रक्षा में, कई प्रश्नों के जवाब में उन्होंने कहा था कि वह पूछे गए प्रश्नों के बारे में कुछ नहीं जानता जबकि कुछ अन्य प्रश्नों के संबंध में उन्होंने कहा है कि आरोप झूठा है। अपनी रक्षा में, उन्होंने कहा है कि उन्हें झूठा फंसाया गया है केवल इसलिए कि किसी सुरेश ने थाना जातरा के इंस्पेक्टर राम चरण के विरुद्ध एक शिकायत दर्ज की है, जिसमें वह साक्षियों में से एक था और इसलिए, पुलिसकर्मी की उसके साथ दुश्मनी थी और इस कारण से पुलिसकर्मी ने उसे झूठा फंसाया है। यह दर्शाता है कि उसने सूचनाकर्ता या मृतक या उसके परिवार के सदस्यों के विरुद्ध किसी दुश्मनी का दावा नहीं किया है, जो घटना के साक्षी भी थे। उन्होंने आगे स्वीकार किया है कि कथित शिकायत में उनका बयान भी दर्ज नहीं किया गया था। ऐसी कथित शिकायत का कोई और विवरण रिकॉर्ड पर नहीं आया है और इसलिए, यह बचाव कि उन्हें पुलिस द्वारा झूठा फंसाया गया है, विशेष रूप से, जब उक्त इंस्पेक्टर राम चरण वर्तमान मामले के अन्वेषण से जुड़े नहीं हैं,

प्रमाणित नहीं है। बहस के दौरान, विद्वान न्याय-मित्र, श्री तिवारी ने परिवार स्वीकार किया है कि न्यायालय को धारा 460 दं.प्र.सं. की सहायता से वर्तमान मामले में इस प्रकार दी गई सजा देने की शक्तियां हैं।

26. इसलिए, हम इस मत के हैं कि समन्वय पीठ द्वारा दर्ज निष्कर्षों से असहमत होने का कोई कारण नहीं है कि विद्वान न्याय-मित्र द्वारा बताए गए अनुसार अभियोजन पक्ष/साक्ष्य में कुछ मामूली और नगण्य विसंगति हो सकती है, हालांकि, विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य की विवेचना में कोई बड़ी, विधिक या वास्तविक त्रुटि नहीं दिखाई देती है, जो अभियोजन पक्ष के लिए घातक सिद्ध हो सकती है। समन्वय पीठ द्वारा निर्णय को बरकरार रखा गया है और अपीलकर्ता रामेश्वर की दोषसिद्धि की पुष्टि की गई है हालांकि उसकी कैद की अवधि के कारण उसे भुगती गई सजा के लिए राहत दी गई है। हम पाते हैं कि वर्तमान मामले में अपीलकर्ता रक्षपाल को इस न्यायालय द्वारा दिनांक 18.11.1983 के आदेश द्वारा जमानत दी गई थी और वह तब से जमानत पर है।

27. वर्तमान अपील में योग्यता की कमी है और तदनुसार निरस्त की जाती है। जीवित अपीलकर्ता रक्षपाल की दोषसिद्धि की पुष्टि की जाती है।

28. चूंकि जीवित अपीलकर्ता रक्षपाल जमानत पर है, उसके जमानत बांड रद्द किए जाते हैं और जमानतदारों को उन्मोचित किया जाता है।

29. अवर न्यायालय के रिकॉर्ड को संबंधित न्यायालय को भेजा जाए।

30. अनुपालन के लिए इस आदेश की एक प्रति संबंधित अवर न्यायालय को सूचित की जाए।

(2025) 2 ILRA 387

अपीलीय क्षेत्राधिकार

आपराधिक पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 06.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति सौमित्र दयाल सिंह

माननीय न्यायमूर्ति डॉ. गौतम चौधरी

आपराधिक अपील संख्या-8466/2022

मयंक पराशरी

...अपीलकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

....प्रतिवादी

अपीलकर्ता के अधिवक्ता:

प्रदीप कुमार

प्रतिवादी के अधिवक्ता:

शा.अधि.

आपराधिक विधि-भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872- धारा 145 और 155-दंड प्रक्रिया संहिता-धारा 162 - मृतक की मृत्यु आग्नेयास्त्र की चोट से हुई-भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 और 155 तथा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162, मुकदमे में दिए गए साक्ष्य से प्रतिकूल रूप से प्रभावित पक्ष को अनुमति देती है कि वह साक्षी (ऐसा साक्ष्य देने वाले) का सामना उनके पूर्व बयान से कराए, जिसमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज बयान भी शामिल है-डी.डब्ल्यू.-1 के साक्ष्य को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता-न तो अभियोजन पक्ष उक्त साक्षी के साक्ष्य में कोई विरोधाभास ला सका-और न ही उसकी विश्वसनीयता को खंडित करने में सफल रहा-अभियोजन पक्ष को डी.डब्ल्यू.-1 के साक्ष्य के साथ समजित करने में असमर्थ-उसने आगे सिद्ध किया कि अभियुक्त-अपीलकर्ता घटना के समय और स्थान पर उपस्थित नहीं था।

अपील स्वीकृत। (ई-9)**उद्धृत निर्णयों की सूची:**

1. तारा सिंह बनाम उ.प्र. राज्य, (1951) SCC OnLine SC 49
2. रड्डर बनाम राज्य, 1956 SCC OnLine All 141
3. इंदर देव और अन्य बनाम राज्य, (1958) SCC OnLine All 175
4. तहसीलदार सिंह और अन्य बनाम उ.प्र. राज्य, (1959) SCC OnLine SC 17
5. उ.प्र. राज्य बनाम नाहर सिंह, (1998) 3 SCC 561
6. रम्मी बनाम म.प्र. राज्य, (1999) 8 SCC 649
7. करण सिंह बनाम म.प्र. राज्य, (2003) 12 SCC 587
8. मुन्ना पांडेय बनाम बिहार राज्य, (2023) SCC OnLine SC 1103
9. बिरबल नाथ बनाम राज. राज्य और अन्य, (2023) SCC OnLine SC 1396
10. अलाउद्दीन और अन्य बनाम असम राज्य और अन्य, (2024) SCC OnLine SC 760
11. लवकुश बनाम उ.प्र. राज्य, (2024) SCC OnLine All 7674

(माननीय न्यायमूर्ति सौमित्र दयाल सिंह एवं माननीय न्यायमूर्ति डॉ. गौतम चौधरी द्वारा उद्धोषित)

1. यह वर्तमान अपील, सत्र विचारण संख्या 84/2011, राज्य बनाम मयंक पराशरी में श्री संजीव कुमार तिवारी, विशेष न्यायाधीश अनु.जाति/अनु.जनजाति (पी एंड ए) अधिनियम, रामपुर द्वारा पारित निर्णय व आदेश दिनांक 16.09.2022 से उत्पन्न हुई है, जिसमें अपीलकर्ता को दोषसिद्ध किया गया है और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन सश्रम कारावास और 50,000/- रुपये का अर्थदंड भुगतने तथा जुअर्थदंड भुगतान में व्यतिक्रम की स्थिति में दो वर्ष की अतिरिक्त साधारण कारावास की सजा सुनाई गई है; भारतीय दंड संहिता की धारा 452 के अधीन अपराध के लिए पांच वर्ष का सश्रम कारावास और 10,000/- रुपये का अर्थदंड तथा अर्थदंड भुगतान में व्यतिक्रम की स्थिति में छह माह की अतिरिक्त साधारण कारावास भुगतने की सजा सुनाई गई है। सत्र मुकदमा 85/2011, राज्य बनाम मयंक पराशरी में, अपीलकर्ता को आयुध अधिनियम की धारा 25(1) के अधीन अपराध के लिए तीन वर्ष का सश्रम कारावास और 5,000/- रुपये का अर्थदंड तथा अर्थदंड भुगतान में व्यतिक्रम की स्थिति में दो माह का साधारण कारावास भुगतने की सजा सुनाई गई है। अपीलकर्ता को आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27 के अधीन अपराध से दोषमुक्त किया गया है।

2. गीता देवी (विचारण में अभि.सा.-1) द्वारा दर्ज की गई प्रथम सूचना रिपोर्ट में वर्णित अभियोजन कथा के अनुसार, दिनांक 21.08.2010 को लगभग शाम 6:00 बजे, मृतक नवदुर्गेश मिश्रा, उनकी पत्नी पुष्पा देवी (विचारण में अभि.सा.-2) और उनकी माता गीता देवी (अभि.सा.-1) अपने घर के अंदर बैठे थे। उनका 'बटाईदार' भूरे सिंह दिवाकर (विचारण में डी.डब्ल्यू. 2) उनके घर के बाहर बैठा था। तभी अभियुक्त-अपीलकर्ता मयंक-पुष्पा देवी का एक रिश्तेदार, देशी तमंचा लेकर उस घर में दाखिल हुआ। उसने मृतक को दो पूर्व घटनाओं का संदर्भ दिया, जब कथित तौर पर मृतक ने अभियुक्त पर हमला किया था-एक बार पूर्व की शादी के उत्सव के दौरान और दूसरी बार मात्र 10-15 दिन पहले। अभियुक्त ने यह भी कहा कि पहले मृतक बच गया था, लेकिन अब वह उसे नहीं छोड़ेगा। इस पर अभियुक्त ने अपना देशी तमंचा मृतक के सिर पर, उसके कान से थोड़ा ऊपर तान दिया और बिल्कुल नजदीकी दूरी से उसे गोली मार दी। मृतक जमीन पर गिर गया। अभियुक्त हमले के हथियार के साथ घटनास्थल से भाग गया। उस बाद की घटना को नवल किशोर मिश्रा, राम किशोर मिश्रा, श्री पाल सिंह और अन्य अ-नामित व्यक्तियों (मुकदमे में परीक्षण नहीं किया गया) और भूरे सिंह दिवाकर (विचारण में डी.डब्ल्यू.-2) ने देखा। इसके अतिरिक्त, प्रथम सूचना रिपोर्ट में एक झगड़े का वर्णन किया गया था, जो पूर्व में, अभियुक्त और मृतक के बीच, जो उसकी शादी में हुआ था, जहां अभियुक्त को मृतक के मेहमानों द्वारा पीटा गया था क्योंकि अभियुक्त ने एक आग्नेयास्त्र से गोली चलाई थी। तहरीर नवल किशोर मिश्रा द्वारा लिखी गई थी। अभि.सा.-2 ने उस पर अपना अंगूठे का निशान लगाया। तहरीर दिनांक 21.08.2010 की है। यह प्रदर्श क-1 है। प्रथम सूचना रिपोर्ट भी दिनांक 21.08.2010 की है, जो रात 8.05 बजे दर्ज की गई थी। यह प्रदर्श क-2 है। 21.08.2010 को ही, थाना प्रभारी ने घटनास्थल से सादी और खून से सनी मिट्टी बरामद की। बरामदगी का जापन प्रदर्श क-21 है। पंचायतनामा 21.08.2010 को रात 9.30 बजे से 11.45 बजे के बीच तैयार किया गया था। यह प्रदर्श क-5 है। 22.08.2010 को, दोपहर 1.00 बजे, मृतक के शव का डॉ. पराग अग्रवाल (विचारण में अभि.सा.-4) द्वारा पोस्टमार्टम किया गया। पोस्टमार्टम रिपोर्ट में निम्नलिखित मृत्यु-पूर्व चोटें दर्ज हैं:

"1. दाहिने कान के ठीक ऊपर खोपड़ी के दाहिनी ओर 3 सेमी x 3 सेमी का चीरा घाव, सभी किनारे अंदर की ओर मुड़े हुए और काले रंग और टैटूइंग मौजूद।

2. खोपड़ी के शीर्ष पर 4 सेमी x 4 सेमी का चीरा घाव, धमनी के किनारे और अंदर की ओर मुड़े हुए घाव, दाहिनी आंख से लगभग 7 सेमी ऊपर।"

3. इसके अतिरिक्त, मृत्यु का समय दर्ज किया गया-"एक दिन के भीतर" और मृत्यु का कारण- "आग्नेयास्त्र की चोट या मृत्यु-पूर्व कोमा के कारण"। पोस्टमार्टम रिपोर्ट प्रदर्श क-5 है।

4. 05.09.2010 को, अभियुक्त को एक मुखबिर से प्राप्त सूचना पर गिरफ्तार किया गया। उस समय उसके पास से एक देशी तमंचा और दो जिंदा गोलियां भी बरामद की गईं। तलाशी और बरामदगी का वह ज्ञापन प्रदर्श क-17 है। इसके अतिरिक्त, 05.09.2010 को, अभियुक्त ने कथित तौर पर घटना में इस्तेमाल की गई गोली के खाली कारतूस की बरामदगी कराई, जो एक गांव के तालाब के पास यूकेलिप्टस की खेत के समीप झाड़ियों आदि के नीचे से निकाला गया। वह बरामदगी ज्ञापन प्रदर्श क-16 है। उन बरामदगियों पर, अभियुक्त के विरुद्ध 05.09.2010 को आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25/27 के अधीन एक और प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई। यह प्रदर्श क-21 है।

5. अन्वेषण पूरा होने पर, अन्वेषण अधिकारी ने 02.11.2010 और 10.10.2010 को दो आरोपपत्र प्रस्तुत किए। प्रथम प्रथम सूचना रिपोर्ट से उत्पन्न दो आरोपपत्रों में से पहले में, अन्य लोगों के साथ, भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-2) अभियोजन पक्ष द्वारा सूचीबद्ध एक साक्षी था। हालांकि, उसे विचारण के स्तर पर मुक्त करा दिया गया। इस पर, सत्र मुकदमा 84/2011 में अभियुक्त के विरुद्ध निम्नलिखित दो आरोप तय किए गए:

"प्रथम:-यह कि दिनांक 21-8-2010 को समय 6-00 बजे शाम बहद ग्राम अनवा थाना शाहबाद, जिला रामपुर में वादिनी मुकदमा श्रीमती गीता देवी के पुत्र नवदुर्गेश को आग्नेयास्त्र से फायर करके मृत्यु कारित करके हत्या की और उसके द्वारा अपना ऐसा अपराध किया जो धारा 302 भा.दं.सं. के अन्तर्गत दण्डनीय अपराध है एवं इस न्यायालय के संज्ञान में है।

द्वितीय:-यह कि उपरोक्त दिनांक, समय व स्थान पर आप अभियुक्त ने वादिनी मुकदमा श्रीमती गीतादेवी के घर में उपहति कारित करने की तैयारी करके अनाधिकृत प्रवेश करके गृह अतिचार किया जो धारा 452 भा.दं.सं. के अन्तर्गत दण्डनीय अपराध है एवं इस न्यायालय के प्रसंज्ञान में है।"

6. इसके अतिरिक्त, सत्र मुकदमा 85/2011 में अभियुक्त के विरुद्ध निम्नलिखित आरोप तय किया गया: "प्रथम:- यह कि दिनांक 05-09-2010 को समय 1530 बजे स्थान रामपुर बस स्टेण्ड थाना शाहबाद जिला रामपुर में पुलिस द्वारा आपको गिरफ्तार किया गया आपकी जामा तलाशी पर आपके कब्जे से एक अदद तमंचा देशी 315 बोर व 2 अदद कारतूस जिन्दा 315 बोर के नाजायज बरामद हुये जिनको रखने का आपके

पास लाइसेंस नहीं था और इस प्रकार आपने ऐसा अपराध किया जो धारा-25/27 आयुध अधिनियम के तहत दण्डनीय अपराध है एवं इस न्यायालय के संज्ञान में है।"

7. मुकदमे में, श्रीमती गीता देवी (अभि.सा.-1) जो मृतक की माता और प्रथम सूचनाकर्ता हैं, ने घटना का चक्षुदर्शी विवरण प्रस्तुत किया। इसमें, उन्होंने पहले तो प्रथम सूचना रिपोर्ट के आक्षेपों का समर्थन किया- अभियुक्त अपीलकर्ता द्वारा कारित घटना के तरीके के संबंध में और साथ ही यह तथ्य कि भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) जो उनका बटाईदार है, उनके आवास के बाहर बैठा था और उसने अपीलकर्ता को भागते हुए देखा था। उन्होंने यह भी कहा कि प्रथम सूचना रिपोर्ट उनकी बोलने पर दर्ज की गई थी, जैसा कि नवल किशोर द्वारा लिखा गया था। फिर भी, उक्त लेखक की परीक्षा नहीं की गई।

8. उनकी प्रतिपरीक्षा के दौरान, उनके मूल संस्करण के विरुद्ध कि मृतक को अभियुक्त अपीलकर्ता द्वारा उसके बगल में बैठे हुए बिल्कुल नजदीकी दूरी से गोली मारी गई थी, उन्होंने असंगत बयान दिए कि क्या मृतक को बिल्कुल नजदीकी दूरी से गोली मारी गई थी और यह भी कि घटना के समय अभियुक्त अपीलकर्ता खड़ा था जबकि मृतक बैठा था।

9. उसी समय, भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) की उपस्थिति के संबंध में, उन्होंने अपना रुख बनाए रखा, जैसा कि प्रथम सूचना रिपोर्ट में प्रकट किया गया था और उनकी मुख्य परीक्षा के दौरान सिद्ध किया गया था अर्थात् उक्त भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) अभियुक्त-अपीलकर्ता के आवास के बाहर बैठा था। अभियुक्त अपीलकर्ता को आगे घटनास्थल से भागते हुए वर्णित किया गया। इसके अतिरिक्त, उद्देश्य के संबंध में, उन्होंने मृतक की शादी के उत्सव के समय मृतक और अभियुक्त-अपीलकर्ता के बीच झगड़े की पूर्व घटना का वर्णन किया। इसमें, उन्होंने खुलासा किया कि अभियुक्त-अपीलकर्ता उनकी बहू, पुष्पा देवी (अभि.सा.-2) का चचेरा भाई है।

10. फिर, श्रीमती पुष्पा देवी (अभि.सा.-2) ने भी पहले प्रथम सूचना रिपोर्ट के आरोप का समर्थन किया और घटना का वर्णन किया, जैसा कि उसमें प्रकट किया गया था और श्रीमती गीता देवी (अभि.सा.-1) द्वारा सिद्ध किया गया था। इसके अतिरिक्त, उन्होंने घटना के समय भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) की उपस्थिति को भी अपने आवास के बाहर सिद्ध किया।

11. उनकी प्रतिपरीक्षा के दौरान, उन्होंने स्वीकार किया कि उनकी शादी लगभग 4 साल पहले हुई थी। उन्होंने उस घटना का भी वर्णन किया, जो घटना से 10-15 दिन पहले हुई हो सकती है, जिसमें मृतक को अभियुक्त-अपीलकर्ता को पीटते हुए वर्णित किया गया था। वास्तविक घटना के बारे में, उन्होंने वर्णन किया कि अभियुक्त अपीलकर्ता मृतक के बगल में बैठा था और अभियुक्त-अपीलकर्ता ने मृतक को इस प्रकार उसके बगल में बैठे हुए गोली मारी थी।

12. फिर, हेड कांस्टेबल बृज मोहन राणा का मुकदमे में अभि.सा.-3 के रूप में परीक्षण किया गया। उन्होंने प्रथम सूचना रिपोर्ट का पंजीकरण सिद्ध किया।

13. इसके बाद, डॉ. पराग अग्रवाल (अभि.सा.-4) का मुकदमे में परीक्षण किया गया। उन्होंने मृत्यु-पूर्व चोटों और मृत्यु के कारण सहित पोस्टमार्टम रिपोर्ट को सिद्ध किया। उन्होंने वर्णन किया कि प्रवेश घाव मृतक के दाएं कान के ऊपर हुआ था और निकास घाव दाएं भौंह की रेखा के ऊपर था। उन्होंने यह भी स्थापित किया कि मृतक के शरीर के अंदर कोई विदेशी वस्तु/प्रक्षेप्य आदि नहीं मिला।

14. इसके बाद, श्री मचल सिंह (विचारण में अभि.सा.-5) को परीक्षण किया गया। वह उप निरीक्षक थे, जिन्होंने पंचायतनामा आदि दर्ज किया। उन्होंने सिद्ध किया कि उन्हें घटना की सूचना लगभग रात 8:05 बजे प्राप्त हुई और वह लगभग आधे घंटे बाद घटनास्थल पर पहुंचे। उस प्रतिपरीक्षा के दौरान कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं निकला।

15. इसके बाद, श्री मोहन लाल (अभि.सा.-6), थाना शाहबाद के प्रभारी थाना अधिकारी का मुकदमे में परीक्षण किया गया। वह मामले के अन्वेषण अधिकारी थे। उन्होंने बरामदगियों और जांच के विभिन्न चरणों को सिद्ध किया। उनकी प्रतिपरीक्षा के दौरान, उन्होंने स्वीकार किया कि उन्होंने उस कमरे का उचित निरीक्षण किया था, जहां घटना का वर्णन किया गया है, फिर भी उन्होंने कोई गोली बरामद नहीं की।

16. इसके बाद, श्री भुवनेश दत्त शर्मा (विचारण में अभि.सा.-7) को परीक्षण किया गया। उन्होंने घटना में उपयोग किए गए वर्णित आग्नेयास्त्र की बरामदगी को सिद्ध किया। उन्होंने दोहराया कि कारतूस की बरामदगी एक खुली जगह से झाड़ी के नीचे से की गई थी।

17. इसके बाद, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त का बयान दर्ज किया गया। उसने अपने विरुद्ध उद्धृत प्रतिकूल परिस्थितियों से इनकार किया। इसके बाद, बचाव पक्ष का साक्ष्य दर्ज किया गया। इसमें, भूरे सिंह दिवाकर का डी.डब्ल्यू-1 के रूप में परीक्षण किया गया। उन्होंने कहा कि मृतक शराब का आदी था और 21.8.2010 को अर्थात् घटना की तारीख को उक्त साक्षी मृतक के आवास के बाहर बैठा था। उन्होंने आगे वर्णन किया कि उन्होंने मृतक के घर के अंदर से बंदूक की गोली की आवाज सुनी। वह अंदर भागे और पाया कि मृतक आंगन में अपने हाथ में देशी आग्नेयास्त्र पकड़े हुए पड़ा था। उन्होंने आगे कहा कि पुष्पा देवी (अभि.सा.-2) ने उन्हें बताया कि मृतक ने आत्महत्या कर ली है। इसके अतिरिक्त, उन्होंने विशेष रूप से इस बात से इनकार किया कि उन्होंने अन्वेषण अधिकारी को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन कोई बयान दिया था कि उन्होंने अभियुक्त अपीलकर्ता को मृतक के आवास में प्रवेश करते देखा था और उन्होंने आगे इस बात से इनकार किया कि उन्होंने अन्वेषण अधिकारी को कोई बयान दिया था कि उन्होंने अभियुक्त अपीलकर्ता को घटनास्थल से आग्नेयास्त्र लहराते हुए भागते देखा था। उन्होंने विशेष रूप से 21.8.2010 को किसी भी

समय अभियुक्त अपीलकर्ता को देखने से इनकार किया। उन्होंने दोहराया कि मृतक शराबी था और वह घरेलू झगड़े में लिप्त रहता था और आगे कि उसने आत्महत्या कर ली।

18. यहां, हमने रिकॉर्ड से जांच की है और यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि उक्त भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) का बयान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज है, जो प्रथम सूचना रिपोर्ट की कथा का समर्थन करता है। उन्हें अभियुक्त अपीलकर्ता के विरुद्ध प्रस्तुत आरोपपत्र में एक अभियोजन साक्षी के रूप में भी सूचीबद्ध किया गया था। हालांकि, जाहिर तौर पर, अभियोजन पक्ष ने उन्हें उन्मोचित कर दिया।

19. ऐसी परिस्थितियों में, प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत किए जाने पर, उन्होंने कहा कि अभियुक्त अपीलकर्ता मृतक के आवास पर मृतक की पत्नी श्रीमती पुष्पा देवी (अभि.सा.-1) का रिश्तेदार होने के कारण आता था। उन्होंने आगे कहा कि घटना के समय, वह अन्य लोगों के साथ मृतक के आवास के बाहर बैठे थे। इसके अतिरिक्त, उन्होंने दोहराया कि उन्होंने मृतक के हाथ में एक आग्नेयास्त्र देखा था। उन्होंने इनकार किया कि उनका बयान कभी पुलिस द्वारा दर्ज किया गया था, लेकिन फिर उन्होंने इसके संबंध में कुछ संदेह व्यक्त किया।

20. उस पर, उक्त साक्षी की प्रतिपरीक्षा बंद कर दी गई। उनसे कोई और सवाल नहीं पूछा गया और उक्त साक्षी का सामना उनके दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज पूर्व बयान से नहीं कराया गया। उनकी विश्वसनीयता और उनके विवरण की सत्यता को अभियोजन पक्ष द्वारा ऐसे पूर्व बयान से उनका सामना कराकर खंडित नहीं किया गया। उनके पूर्व बयान के किसी भी भाग को चिह्नित नहीं किया गया या अन्यथा उन्हें पढ़कर नहीं सुनाया गया या दिखाया नहीं गया और उनसे उस बयान को स्पष्ट करने के लिए कोई सवाल नहीं पूछा गया। इसके बाद, अभियुक्त अपीलकर्ता का डी.डब्ल्यू.-2 के रूप में परीक्षण किया गया। उन्होंने यह सिद्ध करने की कोशिश की कि उन्होंने मृतक को नकद में लगभग 45-46,000/- रुपये उधार दिए थे। चूंकि मृतक राशि वापस करने के लिए अनिच्छुक था, पक्षों के बीच संबंध खराब हो गए। हालांकि, उन्होंने अभियोजन पक्ष द्वारा वर्णित प्रकृति की किसी भी पूर्व घटना से इनकार किया अर्थात् पहले के झगड़े (एक लगभग चार साल पहले मृतक की शादी के समय और दूसरा घटना से 10-15 दिन पहले)। यहां, यह भी नोट किया जा सकता है कि अभि.सा.-1 और अभि.सा.-2 के मौखिक कथन के अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष द्वारा किसी भी स्वतंत्र साक्षी के माध्यम से उन दो घटनाओं में से किसी का कोई साक्ष्य नहीं दिया गया।

21. ऐसी परिस्थितियों में, विद्वान अवर न्यायालय ने चक्षुदर्शी साक्ष्य के बल पर अभियोजन पक्ष का मामला सिद्ध पाया है। इसने बचाव पक्ष की व्याख्या को अस्वीकार कर दिया है। तदनुसार, अभियुक्त अपीलकर्ता को दोषसिद्ध किया गया है और सजा सुनाई गई है।

22. अभियुक्त अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का निवेदन है कि अभियोजन कथा में उचित संदेह से अधिक संदेह मौजूद है। उन्हें स्पष्ट नहीं किया गया है। अभियुक्त अपीलकर्ता दाएं हाथ का होने के कारण,

उसने मृतक को गोली नहीं मारी होगी, जो बिस्तर पर बैठा था, उसके दाएं कान के ऊपर बिल्कुल नजदीकी दूरी से जैसा कि गोली के मृतक की दाहिनी भौंह के ऊपर माथे से बाहर निकलने का कारण बन सकता था। इसके बाद, यह निवेदन किया गया है कि अस्तित्वहीन या अत्यंत कमजोर उद्देश्य का हवाला दिया गया है। अभियुक्त अपीलकर्ता मृतक का साला है, जो पुष्पा देवी (अभि.सा.-2) का चचेरा भाई है। इस स्वीकृत तथ्य में कि मृतक की शादी चार साल पहले संपन्न हुई थी और उस लंबी अवधि के लिए अभियुक्त अपीलकर्ता के लिए जिम्मेदार किसी भी घटना की अनुपस्थिति में मृतक की शादी के समय देखे गए झगड़े का बदला लेने के लिए, अभियुक्त अपीलकर्ता को झूठा फंसाया गया है। अन्य झगड़े के संबंध में, पूर्णतः अधूरी और अस्पष्ट घटना का वर्णन किया गया है जो कभी भी अभियुक्त अपीलकर्ता को कोई उद्देश्य नहीं दे सकती।

23. फिर, चक्षुदर्शी साक्ष्य में कथित संघर्ष पर संदेह पैदा करने का प्रयास किया गया है क्योंकि एक चक्षुदर्शी ने घटना का वर्णन किया कि मृतक बिस्तर पर बैठा था और दूसरे ने एक असंगत विवरण दिया, जहां मृतक घटना के समय बैठा था या खड़ा था। उस संबंध में, यह भी निवेदन किया गया है कि अभियोजन पक्ष ने कोई सुसंगत रुख नहीं दिया है कि क्या मृतक को बिल्कुल नजदीकी दूरी से गोली मारी गई थी या कुछ दूरी से।

24. फिर, जैसे कि अभियोजन कथा में एक कमी निकालने करने के लिए, अभियुक्त अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि घटना के समय मृतक के आवास के बाहर भूरे सिंह दिवाकर (अभि.सा. 1) की उपस्थिति, दो अभियोजन तथ्य साक्षियों अर्थात् मृतक की माता गीता देवी (अभि.सा.-1) और मृतक की पत्नी पुष्पा देवी (अभि.सा.-2) द्वारा स्वीकार की गई रही। उनकी प्रतिपरीक्षा के दौरान, दोनों गवाहों ने स्वीकार किया कि भूरे सिंह दिवाकर (अभि.सा.-1) उनका 'बटाईदार' था और वह अन्य लोगों के साथ उनके आवास के बाहर बैठा था और उसने अभियुक्त अपीलकर्ता को मृतक के आवास में प्रवेश करते देखा था; बंदूक की गोली सुनी थी और; अभियुक्त अपीलकर्ता को मृतक के आवास से अपने हाथ में देशी आग्नेयास्त्र लहराते हुए भागते देखा था। ऐसी परिस्थितियों में, एक बार जब भूरे सिंह दिवाकर (अभि.सा.-1) साक्षी कटघरे में आया, हालांकि बचाव साक्षी के रूप में (अभियोजन पक्ष द्वारा मुक्त किए जाने के बाद), उसने स्पष्ट रूप से अभियोजन कथा से इनकार किया और वास्तव में मृतक द्वारा आत्महत्या से हुई मृत्यु को सिद्ध करने का प्रयास किया, अभियोजन पक्ष ने उस तथ्य को स्वीकार कर लिया जो बचाव साक्षी द्वारा सिद्ध किया गया था। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 145 के संदर्भ में, उक्त बचाव साक्षी के साक्ष्य पर न तो संदेह किया गया और न ही उसकी विश्वसनीयता को खंडित किया गया। अभियोजन पक्ष द्वारा प्रतिपरीक्षा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज उक्त चक्षुदर्शी के पूर्व बयान से उसका सामना कराने से कम रुक गई।

25. इसलिए, संपूर्ण अभियोजन कथा संदेह से भरी है और अपरिहार्य रूप से विरोधाभासी है। भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) के अखंडित साक्ष्य के सामने, अभियोजन कथा की सत्यता के बारे में उचित संदेह से अधिक संदेह मौजूद है।

26. दूसरी ओर, विद्वान अ.शा.अधि. ने निवेदन किया कि अभियोजन पक्ष ने दो चक्षुदर्शी विवरणों पर भरोसा करके घटना को विधिवत सिद्ध कर दिया है। उस वर्णन में मामूली विसंगतियों के अतिरिक्त, अभियोजन मामले में कोई मौलिक या स्पष्ट संदेह या दोष नहीं है, जो किसी अन्य अनुमान को उत्पन्न होने की अनुमति दे सके। बचाव साक्षी (डी.डब्ल्यू.-1) के साक्ष्य के संबंध में, यह आग्रह किया गया है कि स्पष्ट रूप से, उसे बचाव पक्ष द्वारा अपने पक्ष में कर लिया गया था। उस सीमा तक विद्वान अवर न्यायालय द्वारा उसके साक्ष्य को सही तरीके से अस्वीकार कर दिया गया था।

27. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और रिकॉर्ड का अवलोकन करने के बाद, सबसे पहले, इस बात पर संदेह नहीं किया जा सकता है कि मृतक की मृत्यु 21.08.2010 को लगभग शाम 6.00 बजे आग्नेयास्त्र की चोट से हुई थी। अभियोजन और बचाव दोनों पक्ष उस सीमा तक सहमत हैं। हेतुक के संबंध में, चक्षुदर्शी साक्ष्य के सामने, पहले हम हेतुक की कमी के कारण प्रत्यक्ष अभियोजन साक्ष्य को खंडित करने के लिए नहीं देख सकते। उसी समय, यह भी इनकार नहीं किया जा सकता कि अभियोजन कथा पूरी तरह से सुसंगत नहीं है कि क्या मृतक और अभियुक्त-अपीलकर्ता एक-दूसरे के बगल में बैठे थे, जब अभियुक्त-अपीलकर्ता ने मृतक पर गोली चलाकर घटना को अंजाम दिया था या अभियुक्त-अपीलकर्ता खड़ा था, जब उसने वह घटना को अंजाम दिया था। इसके अतिरिक्त, अभियोजन का वर्णन पूरी तरह से सुसंगत नहीं है कि मृतक को बिल्कुल नजदीकी दूरी से गोली मारी गई थी या कुछ दूरी से। उसी समय, बचाव पक्ष द्वारा यह सिद्ध किए जाने की अनुपस्थिति में कि अभियुक्त-अपीलकर्ता एक दाएं हाथ का व्यक्ति है, उस संबंध में कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता है और बचाव पक्ष की परिकल्पना कि अभियुक्त-अपीलकर्ता ने मृतक को उसकी दाहिनी कनपटी पर अपने दाएं हाथ से इस तरह से गोली नहीं मारी होगी कि इस प्रकार दागी गई गोली उसके माथे के दाहिनी ओर निकास घाव का कारण बनी, समान रूप से एक अनुमान या संभावना है, जो केवल सिद्ध तथ्यों के संदर्भ में अभियोजन और उससे उत्पन्न होने वाली चुनौती के संदर्भ में न्यायालय के साथ नहीं रह सकती।

28. उसी समय, वर्तमान मामले के तथ्यों में, भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) के साक्ष्य को हल्के में नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। बचाव पक्ष के लिए ऐसे साक्षी पेश करना आसान है, जो अभियोजन पक्ष द्वारा प्रकट की गई घटना को पूरी तरह से नकार सकते हैं या विवाद कर सकते हैं। न्यायालय ऐसे साक्ष्य पर भरोसा नहीं कर सकते क्योंकि यह ऐसे साक्षी की ओर से अभियुक्त व्यक्ति को बचाने के अंतर्निहित उद्देश्य और इरादे के कारण कम साक्ष्य मूल्य का रह सकता है।

29. उसी समय, वर्तमान तथ्यों में भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) एक साधारण बचाव साक्षी नहीं है। प्रथम सूचना रिपोर्ट में उसका नाम एक ऐसे व्यक्ति के रूप में है, जिसने अभियुक्त-अपीलकर्ता को मृतक के आवास में प्रवेश करते देखा था, अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा की गई बंदूक की गोली सुनी थी और आगे अभियुक्त-अपीलकर्ता को अपने हाथ में आग्नेयास्त्र लहराते हुए घटनास्थल से भागते देखा था। वह तथ्य पहली बार प्रथम सूचना रिपोर्ट में गीता देवी (अभि.सा. 1), मृतक की माता द्वारा वर्णित किया गया था। इसके अतिरिक्त, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज उक्त भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) का कथित बयान भी मौजूद

है। आरोपपत्र के अवलोकन से यह भी पता चलता है कि उक्त भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) को एक अभियोजन साक्षी के रूप में सूचीबद्ध किया गया था। स्पष्ट नहीं किए गए कारणों से, उसे अभियोजन पक्ष द्वारा उन्मोचित करा दिया गया।

30. ऐसे तथ्यों में, गीता देवी (अभि.सा.-1) और पुष्पा देवी (अभि.सा.-2) दोनों ने न्यायालय में साक्ष्य दिया और विशेष रूप से प्रथम सूचना रिपोर्ट के रुख पर कायम रहीं कि भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) अपीलकर्ता के आवास के बाहर मौजूद था। इसलिए, शुरुआत से ही अभियोजन पक्ष को उसकी उपस्थिति स्वीकार थी। ऐसी परिस्थितियों में ही उक्त भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) ने अभियोजन कथा को घटना के तरीके और अभियुक्त अपीलकर्ता की उपस्थिति और संलिप्तता दोनों के संबंध में खंडित करने के लिए आगे बढ़े। उनके अनुसार, मृतक की मृत्यु प्रथम सूचना रिपोर्ट में प्रकट आगनेयास्त्र की चोट से आत्महत्या से हुई थी। इसके अतिरिक्त, उन्होंने घटना के समय और स्थान पर अपीलकर्ता की उपस्थिति से पूरी तरह इनकार किया।

31. एक बार, उक्त बचाव साक्षी ने इस प्रकार गवाही दी, तो अभियोजन पक्ष के लिए उसकी गवाही को उसकी शुद्धता पर संदेह करके या साक्षी की विश्वसनीयता को खंडित करके या दोनों द्वारा ध्वस्त करना था।

32. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 नीचे दी गई है:

"162. पुलिस को दिए गए बयानों पर हस्ताक्षर नहीं किए जाने चाहिए: साक्ष्य में बयानों का उपयोग।

(1) इस अध्याय के अधीन जांच के दौरान किसी पुलिस अधिकारी को किसी व्यक्ति द्वारा दिया गया कोई भी बयान, यदि लिखित रूप में कम किया जाता है, तो उसे देने वाले व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित नहीं किया जाएगा; न ही ऐसा कोई बयान या उसका कोई रिकॉर्ड, चाहे पुलिस डायरी में हो या अन्यथा, या ऐसे बयान या रिकॉर्ड का कोई भाग, किसी भी उद्देश्य के लिए उपयोग किया जाएगा, सिवाय जैसा कि इसके बाद प्रदान किया गया है, जांच के अधीन किसी भी अपराध के संबंध में किसी भी जांच या मुकदमे में उस समय जब ऐसा बयान दिया गया था: बशर्ते कि जब किसी साक्षी को ऐसी जांच या मुकदमे में अभियोजन पक्ष के लिए बुलाया जाता है जिसका बयान उपरोक्त रूप में लिखित रूप में कम किया गया है, तो उसके बयान का कोई भी भाग, यदि विधिवत सिद्ध हो जाता है, तो आरोपी द्वारा और न्यायालय की अनुमति से, अभियोजन पक्ष द्वारा, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) की धारा 145 द्वारा प्रदान किए गए तरीके से ऐसे साक्षी का खंडन करने के लिए उपयोग किया जा सकता है; और जब ऐसे बयान का कोई भाग इस प्रकार उपयोग किया जाता है, तो उसका कोई भी भाग ऐसे साक्षी की पुनः परीक्षा में भी उपयोग किया जा सकता है, लेकिन केवल उसकी प्रतिपरीक्षा में संदर्भित किसी भी मामले को स्पष्ट करने के उद्देश्य से।

(2) इस धारा में कुछ भी भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) की धारा 32 के खंड (1) के प्रावधानों के अंतर्गत आने वाले किसी भी बयान पर लागू होने वाला नहीं माना जाएगा, या उस अधिनियम की धारा 27 के प्रावधानों को प्रभावित नहीं करेगा।

स्पष्टीकरण - उप-धारा (1) में संदर्भित बयान में किसी तथ्य या परिस्थिति को बताने में चूक विरोधाभास हो सकती है यदि वही महत्वपूर्ण प्रतीत होती है और अन्यथा उस संदर्भ को ध्यान में रखते हुए प्रासंगिक है जिसमें ऐसी चूक होती है और क्या कोई चूक विशेष संदर्भ में विरोधाभास है, यह तथ्य का प्रश्न होगा।"

33. इसके अतिरिक्त, अन्वेषण के दौरान अन्वेषण अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए बयान मुकदमे में पढ़े जाने वाले साक्ष्य नहीं हैं। फिर भी, वे साक्षी की सत्यता या विश्वसनीयता का पता लगाने के लिए महत्वपूर्ण और कई बार अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 145 निम्नानुसार है:

"145. लिखित में पूर्व बयानों के बारे में प्रतिपरीक्षा-एक साक्षी की प्रतिपरीक्षा उसके द्वारा लिखित में दिए गए या लिखित रूप में कम किए गए पूर्व बयानों के बारे में की जा सकती है, और प्रश्न में मामलों से संबंधित, बिना ऐसे लेखन को उसे दिखाए, या सिद्ध किए: लेकिन, यदि लेखन द्वारा उसका खंडन करने का इरादा है, तो लेखन को सिद्ध किए जाने से पहले, उसका ध्यान उसके उन भागों की ओर आकर्षित किया जाना चाहिए जिनका उपयोग उसका खंडन करने के उद्देश्य से किया जाना है।"

34. इसके अतिरिक्त, किसी भी साक्षी की विश्वसनीयता को धारा 155 दं.प्र.सं. के प्रावधानों के अनुसार चुनौती दी जा सकती है। विधि का वह प्रावधान निम्नानुसार है:

"155. गैर-संज्ञेय मामलों के बारे में जानकारी और ऐसे मामलों का अन्वेषण

(1) जब किसी पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी को ऐसे थाने की सीमा के भीतर किसी गैर-संज्ञेय अपराध के किए जाने की जानकारी दी जाती है, तो वह ऐसे अधिकारी द्वारा ऐसे प्रपत्र में रखी जाने वाली एक पुस्तक में जानकारी के सार को दर्ज करेगा या दर्ज करवाएगा, जैसा कि राज्य सरकार इस संबंध में निर्धारित कर सकती है, और सूचनादाता को मजिस्ट्रेट के पास भेजेगा।

(2) कोई भी पुलिस अधिकारी ऐसे मामले की सुनवाई करने या मामले को सुनवाई के लिए भेजने की शक्ति रखने वाले मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी गैर-संज्ञेय मामले की जांच नहीं करेगा।

(3) ऐसा आदेश प्राप्त करने वाला कोई भी पुलिस अधिकारी जांच के संबंध में वही शक्तियां (वारंट के बिना गिरफ्तारी की शक्ति को छोड़कर) प्रयोग कर सकता है जो एक पुलिस थाने का प्रभारी अधिकारी संज्ञेय मामले में प्रयोग कर सकता है।

(4) जहां कोई मामला दो या अधिक अपराधों से संबंधित है जिनमें से कम से कम एक संज्ञेय है, तो मामला संज्ञेय मामला माना जाएगा, इस तथ्य के बावजूद कि अन्य अपराध गैर-संज्ञेय हैं।"

35. **तारा सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1951) SCC OnLine SC 49** में, दो गवाहों ने मुकदमे में साक्षी बॉक्स में प्रवेश किया और धारा 288 दं.प्र.सं. के अधीन पहले दर्ज किए गए उनके बयानों के विपरीत बयान दिए। फिर भी, उनका उन पूर्व बयानों से सामना नहीं कराया गया, जो उनके द्वारा दिए गए थे। जब उन पूर्व बयानों (विचारण में) के बारे में पूछा गया, तो उन्होंने केवल यह उत्तर दिया कि वे दबाव में दिए गए थे। वह उत्तर भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 की आवश्यकता को पूरा करने वाला नहीं पाया गया। उस संबंध में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:

41. अब, यह स्पष्ट है कि पूर्व बयानों का उपयोग करने के मुख्य उद्देश्यों में से एक सत्र न्यायालय के समक्ष दिए गए साक्ष्य का खंडन करना और विस्थापित करना था क्योंकि जब तक उस साक्ष्य का खंडन और विस्थापन नहीं किया जाता, तब तक इस मामले में पूर्व बयानों को रिकॉर्ड पर लाने और धारा 288 के अधीन उपयोग करने की अनुमति देने के लिए कोई जगह नहीं थी। इसलिए, चूंकि ये बयान इन गवाहों के समक्ष नहीं रखे गए थे और चूंकि उनका ध्यान धारा 145, साक्ष्य अधिनियम द्वारा आवश्यक तरीके से उनकी ओर आकर्षित नहीं किया गया था, इसलिए वे साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं थे। बाल गंगाधर तिलक बनाम श्रीनिवास पंडित [बाल गंगाधर तिलक बनाम श्रीनिवास पंडित, (1914-15) 42 IA 135 पृष्ठ 147 पर : 1915 SCC OnLine PC 16] में प्रिवी काउंसिल की टिप्पणियां यहां प्रासंगिक हैं।

(महत्व प्रदत्त)

36. **रड्डर बनाम राज्य, 1956 SCC OnLine All 141** में, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने यह मत दिया कि न्यायालय में एक साक्ष्य को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दिए गए बयान के साथ समंजित किया जा सकता है या नहीं, केवल कथित चूक को साक्षी के नोटिस में लाए जाने के बाद और उसे समान को स्पष्ट करने का अवसर दिए जाने के बाद ही हो सकता है। उस संबंध में, निम्नानुसार टिप्पणी की गई:

"न्यायमूर्ति देसाई ने यह भी माना कि यदि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अधीन बयान को न्यायालय में साक्ष्य के साथ समंजित किया जा सकता है और उसके साथ खड़ा हो सकता है तो बिल्कुल कोई विरोधाभास नहीं है। यह प्रश्न कि न्यायालय में साक्ष्य को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज बयान के साथ समंजित किया जा सकता है या नहीं, केवल चूक को साक्षी के नोटिस में लाए जाने और साक्षी को अपना स्पष्टीकरण देने का अवसर मिलने के बाद ही तय किया जा सकता है। यदि स्पष्टीकरण के बाद यह प्रतीत होता है कि दोनों समंजित हो सकते हैं, तो यह विरोधाभास होना बंद हो जाएगा। लेकिन ऐसा न केवल चूक के मामले में हो सकता है, बल्कि साक्ष्य और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन बयान में शामिल सकारात्मक तथ्यों के स्पष्ट विरोधाभास के मामले में भी हो सकता है। न्यायालय में साक्ष्य और दंड प्रक्रिया

संहिता की धारा 161 के अधीन बयान के बीच विरोधाभास प्रतीत हो सकता है, लेकिन जब इसे साक्षी के सामने रखा जाता है, तो वह एक स्पष्टीकरण दे सकता है जो उन्हें समंजित कर सकता है, जिसके बाद विरोधाभास होना बंद हो सकता है। केवल यह तथ्य कि वह संभवतः दोनों बयानों को समंजित कर सकता है, ऐसी चूक के मामले में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के परंतुक की प्रयोज्यता को प्रभावित नहीं कर सकता जो ऐसी प्रकृति का है कि इसे विरोधाभास माना जा सकता है।"

37. **इंदर देव और अन्य बनाम राज्य, (1958) SCC OnLine All 175** में, यह मुद्दा उठा कि क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 288 के अधीन दर्ज बयान को साक्ष्य के रूप में माना जा सकता है, यदि साक्षी को (ऐसे बयान के दर्ज किए जाने के समय) यह प्रकट नहीं किया गया था कि न्यायालय बयान को साक्ष्य के रूप में उपयोग कर सकता है। मुद्दे पर विचार करते समय, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1875 की धारा 145 के गैर-अनुपालन को नोट किया। उसके बाद, **तारा सिंह बनाम उ.प्र. राज्य, (उपरोक्त)** पर भरोसा करते हुए, न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने निम्नानुसार टिप्पणी की:

"वर्तमान मामले में, अभी एक और कठिनाई है जो हमें ऊपर उल्लिखित दो गवाहों के बयानों को उचित रूप से स्वीकार्य, यदि हम उस अभिव्यक्ति का उपयोग कर सकते हैं, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 288 के अधीन मानने के रास्ते में मिली है और हमें जो कठिनाई मिली है वह यह है कि इन बयानों के संबंध में भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के प्रावधानों का अनुपालन नहीं किया गया था। धारा 288 स्वयं कहती है कि साक्ष्य भारतीय साक्ष्य अधिनियम के प्रावधानों के सभी उद्देश्यों के अधीन था। जैसा कि हमने पहले बताया है, विशिष्ट अंश या विशेष भाग जिन पर अभियोजन पक्ष गवाहों का खंडन करना चाहता था, गवाहों को नहीं पढ़े गए और उन्हें उन विशेष या विशिष्ट अंशों को स्पष्ट करने का अवसर नहीं दिया गया। संपूर्ण बयान गवाहों को पढ़े गए और उनसे पूछा गया कि उन्हें संपूर्ण बयानों के संबंध में क्या कहना है। हमारी राय में, यह भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के प्रावधानों का अनुपालन नहीं था। इन प्रावधानों का उचित अनुपालन तभी हो सकता है जब विशेष अंश गवाहों के सामने रखे जाएं। हम यहां तारा सिंह बनाम राज्य [1951 A.L.J. 640: A.I.R. S.C. 441.] में सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायमूर्तियों के निर्णय का उल्लेख कर सकते हैं, जिसमें माननीय न्यायमूर्तियों ने पृष्ठ 446-447 पर यह कहा:

"इस मामले के संबंध में उच्च न्यायालयों में कुछ मतभेद हैं। धारा 288 प्रावधान करती है कि अभियुक्त की उपस्थिति में सुपुर्दकर्ता मजिस्ट्रेट द्वारा दर्ज साक्ष्य, धारा में निर्धारित परिस्थितियों में, 'भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 के प्रावधानों के अधीन सभी उद्देश्यों के लिए मामले में साक्ष्य के रूप में माना जा सकता है।' तर्क की एक पंक्ति यह है कि धारा 145, साक्ष्य अधिनियम, आकर्षित नहीं होती है क्योंकि वह धारा लिखित में पूर्व बयानों से संबंधित है जो केवल विरोधाभास के उद्देश्य के लिए उपयोग किए जाने हैं। उस प्रकार के बयान मूल साक्ष्य नहीं बनते हैं और हालांकि मुकदमे में दिए गए साक्ष्य को उस प्रकार के विरोधाभास द्वारा नष्ट किया जा सकता है, पूर्व बयानों को मूल साक्ष्य के रूप में उपयोग नहीं किया जा सकता है और उन पर कोई निर्णय आधारित नहीं किया जा सकता है। लेकिन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 288 के अधीन पूर्व बयान

सभी उद्देश्यों के लिए साक्ष्य बन जाता है और दोषसिद्धि का आधार बन सकता है। इसलिए, इस तर्क पंक्ति के अनुसार धारा 145, साक्ष्य अधिनियम, आकर्षित नहीं होती है। जो न्यायाधीश उस दृष्टिकोण को रखते हैं, वे मानते हैं कि साक्ष्य अधिनियम के संदर्भित प्रावधान वे हैं जो सुनी-सुनाई और उस प्रकार के मामलों से संबंधित हैं जो मूल साक्ष्य को छूते हैं।"

मेरी राय में तर्क की दूसरी पंक्ति को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। मुझे कोई कारण नहीं दिखता कि धारा 145, साक्ष्य अधिनियम को क्यों बाहर रखा जाना चाहिए जब धारा 288 कहती है कि पूर्व बयान 'भारतीय साक्ष्य अधिनियम के प्रावधानों के अधीन' होने हैं। धारा 145 इन शब्दों के सादे अर्थ के भीतर उचित और पूर्ण रूप से आती है। इससे अधिक यह एक उचित और सही दृष्टिकोण है और उस निष्पक्षता की भावना के अनुरूप है जिसके न्यायालय अभ्यस्त हैं..... मैं मानता हूँ कि सुपुर्दकर्ता न्यायालय में साक्ष्य का उपयोग सत्र न्यायालय में तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि साक्षी का सामना उसके पूर्व बयान से धारा 145, साक्ष्य अधिनियम की आवश्यकता के अनुसार नहीं कराया जाता..... लेकिन यदि अभियोजन पक्ष आगे जाना चाहता है और विपरीत पूर्व गवाही को मूल साक्ष्य के रूप में उपयोग करना चाहता है, तो इसे, मेरी राय में, साक्षी का सामना उसके उन हिस्सों से कराना चाहिए जिन्हें उसका खंडन करने के उद्देश्य से उपयोग किया जाना है। तभी मामले को धारा 288 के अधीन मूल साक्ष्य के रूप में लाया जा सकता है।" (सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बोस और न्यायमूर्ति फ़ज़ल अली द्वारा दिया गया था, न्यायमूर्ति पतंजलि शास्त्री और न्यायमूर्ति दास उस निर्णय से सहमत थे।)"

(महत्व प्रदत्त)

38. तहसीलदार सिंह और अन्य बनाम उ.प्र. राज्य, (1959) SCC OnLine SC 17 में, सर्वोच्च न्यायालय की छह-न्यायाधीश पीठ को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 में किए गए परिवर्तनों पर विचार करने का अवसर मिला। सर्वोच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 में संशोधन को शामिल करने के उद्देश्य को मान्यता दी-अभियुक्त को केवल किसी पुलिस अधिकारी के समक्ष साक्षी द्वारा दिए गए किसी भी बयान से बचाने और अभियुक्त को मुकदमे में दिए गए किसी भी झूठे बयान साक्ष्य से बचाने के लिए। यह भी मान्यता दी गई कि पुलिस को दिया गया ऐसा पूर्व बयान अभियुक्त व्यक्ति द्वारा किसी भी विरोधाभास को सामने लाने के लिए उपयोग किया जा सकता है, जो अभियुक्त की मदद करेगा और/या न्यायालय के समक्ष कोई बयान देने वाले साक्षी को बदनाम करने के लिए। उस संबंध में, रिपोर्ट के प्रस्तर 17 में निम्नानुसार टिप्पणी की गई है:

"17. उसी समय, घटना के तुरंत बाद साक्षी के बयान का सबसे पहला रिकॉर्ड होने के कारण, उसमें पाया गया कोई भी विरोधाभास अभियुक्त को बयान देने वाले साक्षी की गवाही को अस्वीकार करने में अत्यधिक मदद करेगा। इसलिए धारा को एक सही माध्यम खोजने के प्रयास में परिकल्पित किया गया था, अर्थात्, जबकि यह पुलिस अधिकारी के समक्ष दिए गए बयान के विरुद्ध किसी भी उद्देश्य के लिए उपयोग किए जाने के विरुद्ध एक पूर्ण प्रतिबंध लागू करता है, यह अभियुक्त को भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 द्वारा प्रदान किए

गए तरीके से साक्षी का खंडन करने के सीमित उद्देश्य के लिए इस पर भरोसा करने में सक्षम बनाता है, जिसमें विरोधाभास के लिए इच्छित बयान के हिस्सों पर उसका ध्यान आकर्षित किया जाता है। इसका उपयोग अभियोजन या बचाव साक्षी या यहां तक कि न्यायालय के साक्षी की पुष्टि के लिए नहीं किया जा सकता है। न ही इसका उपयोग बचाव या न्यायालय के साक्षी का खंडन करने के लिए किया जा सकता है। संक्षेप में कहा जाए, तो अभियुक्त के हित में एक सीमित अपवाद के अधीन इसके उपयोग के विरुद्ध एक सामान्य प्रतिबंध है, और अपवाद का स्पष्ट रूप से प्रतिबंध को पार करने के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता है।"

(महत्व प्रदत्त)

39. फिर, **उ.प्र. राज्य बनाम नाहर सिंह, (1998) 3 SCC 561** में, सर्वोच्च न्यायालय ने ब्राउन बनाम इन, [(1893) 6 R 67] में लॉर्ड हर्शेल, एल.सी. द्वारा निर्धारित विधि के निम्नलिखित सिद्धांत का उल्लेख किया और लागू किया, जिसमें निम्नानुसार टिप्पणी की गई थी: "

मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि मुझे ऐसा लगता है कि किसी मुकदमे के उचित संचालन के लिए यह बिल्कुल आवश्यक है, जहां यह सुझाव देने का इरादा है कि एक साक्षी किसी विशेष बिंदु पर सच नहीं बोल रहा है, प्रतिपरीक्षा में पूछे गए कुछ प्रश्नों द्वारा उसका ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित करना कि वह आरोपण लगाया जाना है, न कि उसका साक्ष्य लेना और इसे पूरी तरह से बिना चुनौती के मामले के रूप में पारित करना, और फिर, जब उसके लिए स्पष्ट करना असंभव है, जैसा कि शायद वह सक्षम हो सकता था यदि ऐसे प्रश्न उससे पूछे गए होते, परिस्थितियां जो यह सुझाव देती हैं कि उसकी बताई गई कहानी पर विश्वास नहीं किया जाना चाहिए, यह तर्क देना कि वह एक विश्वास के अयोग्य साक्षी है। मेरे प्रभु, मैंने हमेशा समझा है कि यदि आप किसी साक्षी को दोषी ठहराने का इरादा रखते हैं, तो आप बाध्य हैं, जबकि वह कटघरे में है, उसे कोई भी स्पष्टीकरण देने का अवसर देने के लिए जो उसके लिए खुला है; और, जैसा कि मुझे लगता है, यह न केवल मामले के संचालन में पेशेवर अभ्यास का नियम है, बल्कि यह गवाहों के साथ निष्पक्ष व्यवहार के लिए आवश्यक है।"

(महत्व प्रदत्त)

40. फिर, **रम्मी बनाम म.प्र. राज्य, (1999) 8 SCC 649** में, सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 155 के दायरे की जांच की और माना कि साक्षी द्वारा दिया गया पूर्व बयान (जो बाद में न्यायालय के समक्ष साक्ष्य देता है), भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 155(3) के अनुसार उसकी विश्वसनीयता को खंडित करने के लिए उपयोग किया जा सकता है। उसमें, निम्नानुसार टिप्पणी की गई:

"25. विचारण न्यायालयों में प्रतिपरीक्षा के दौरान साक्षी का सामना करने के लिए साक्षी के पूर्व बयान से विरोधाभास निकालना एक आम प्रथा है। केवल इसलिए कि साक्ष्य में असंगति है, यह साक्षी के विश्वास को अस्वीकार करने के लिए पर्याप्त नहीं है। निस्संदेह साक्ष्य अधिनियम की धारा 155 असंगत पूर्व बयान के साक्ष्य द्वारा साक्षी के विश्वास को खंडित करने का दायरा प्रदान करती है। लेकिन धारा को पढ़ने से संकेत मिलता है

कि सभी असंगत बयान साक्षी के विश्वास को खंडित करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। धारा का महत्वपूर्ण भाग नीचे निकाला गया है:

155. साक्षी के विश्वास को खंडित करना—साक्षी का विश्वास प्रतिकूल पक्ष द्वारा, या न्यायालय की सहमति से, उसे बुलाने वाले पक्ष द्वारा निम्नलिखित तरीकों से खंडित किया जा सकता है—

(1)-(2)***

(3) पूर्व बयानों के साक्ष्य द्वारा जो उसके साक्ष्य के किसी भी हिस्से के साथ असंगत हैं जिसका खंडन किया जा सकता है;"

26. एक पूर्व बयान, हालांकि साक्ष्य के साथ असंगत प्रतीत होता है, विरोधाभास की राशि के लिए आवश्यक रूप से पर्याप्त नहीं होना चाहिए। केवल ऐसे असंगत बयान जो "खंडित" किए जाने के लिए उत्तरदायी हैं, साक्षी के विश्वास को प्रभावित करेंगे। साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 भी प्रतिपरीक्षक को साक्षी के किसी भी पूर्व बयान का उपयोग करने में सक्षम बनाती है, लेकिन यह सावधान करती है कि यदि साक्षी का "खंडन" करने का इरादा है तो प्रतिपरीक्षक को उसमें निर्धारित औपचारिकता का पालन करने का आदेश दिया जाता है। संहिता की धारा 162 भी प्रतिपरीक्षक को साक्षी के पूर्व बयान (संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज) का उपयोग करने की अनुमति देती है केवल सीमित उद्देश्य के लिए अर्थात् साक्षी का "खंडन" करने के लिए।"

(महत्व प्रदत्त)

41. **करण सिंह बनाम म.प्र. राज्य, (2003) 12 SCC 587** में, सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के उद्देश्य को स्पष्ट किया—साक्षी को विसंगति या असंगति को स्पष्ट करने या अस्पष्टता या विवाद के बिंदु को स्पष्ट करने का मौका देना। उसमें, निम्नानुसार टिप्पणी की गई:

"5. जब एक पूर्व बयान को स्वीकृति के रूप में सिद्ध किया जाना है, तो बयान को साक्षी के सामने रखा जाना चाहिए और यदि साक्षी ऐसा बयान देने से इनकार करता है तो यह किसी भी स्वीकृति के बराबर नहीं है और यदि यह सिद्ध हो जाता है कि उसने ऐसा बयान दिया था तो साक्षी का ध्यान उस बयान की ओर आकर्षित किया जाना चाहिए। साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 इस पहलू पर स्पष्ट है। उद्देश्य साक्षी को विसंगति या असंगति को स्पष्ट करने और अस्पष्टता या विवाद के विशेष बिंदु को स्पष्ट करने का मौका देना है। वर्तमान मामले में, प्रदर्श डी-4 बयान को साक्षी के सामने नहीं रखा गया था और न ही साक्षी को इसे स्पष्ट करने का अवसर दिया गया था। इसलिए, प्रदर्श डी-4 बयान, भले ही यह माना जाए कि यह पी.डब्ल्यू 1 हरि सिंह का बयान है, वह अपीलार्थियों को निजी बचाव के अपने मामले को सिद्ध करने में कोई सहायता नहीं करता है।"

(महत्व प्रदत्त)

42. फिर, मुन्ना पांडेय बनाम बिहार राज्य, (2023) SCC OnLine SC 1103 में, सर्वोच्च न्यायालय की तीन-न्यायमूर्ति पीठ को मुकदमे में प्रस्तुत अभियोजन साक्ष्य की विश्वसनीयता के मुद्दे पर विचार करने का अवसर मिला, ऐसे साक्ष्य को भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1875 की धारा 145 की कसौटी पर परीक्षण न किए जाने की अनुपस्थिति में-साक्षी का उनके पूर्व बयान (जांच के दौरान दर्ज) से खंडन करके। अभियोजन पक्ष की ओर से ऐसा न करने की प्रथा की निंदा करते हुए और उस संबंध में बचाव पक्ष की ओर से ढिलाई की सराहना न करते हुए, साथ ही न्यायालयों को उस पहलू पर सतर्क रहने की चेतावनी देते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:

41. बचाव पक्ष के अधिवक्ता का कर्तव्य था कि वह गवाहों का सामना उनके पुलिस बयानों से कराए जिससे महत्वपूर्ण चूक के रूप में विरोधाभासों को सिद्ध किया जा सके और उन्हें रिकॉर्ड पर लाया जा सके। हमें यह कहते हुए खेद है कि विद्वान बचाव पक्ष के अधिवक्ता को इस बारे में कोई जानकारी नहीं थी कि साक्ष्य अधिनियम, 1872 (संक्षेप में, 'साक्ष्य अधिनियम') की धारा 145 के अनुसार किसी साक्षी का उसके पुलिस बयानों से कैसे खंडन किया जाए।

42. लोक अभियोजक की ओर से चूक भी बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है। लोक अभियोजक को पता था कि साक्षी उससे विपरीत कुछ साक्ष्य दे रहे थे जो उन्होंने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज अपने बयानों में पुलिस के समक्ष कहा था। उनका कर्तव्य था कि वह गवाहों के नोटिस में लाएं और उन्हें शत्रुतापूर्ण घोषित किए बिना भी उनसे सामना कराएं।

43. विचारण न्यायालय का पीठासीन अधिकारी भी मूक दर्शक बना रहा। पीठासीन अधिकारी का कर्तव्य था कि वह साक्ष्य अधिनियम की धारा 165 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए इन गवाहों से प्रासंगिक प्रश्न पूछे। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 किसी न्यायाधीश को पुलिस जांच के रिकॉर्ड को देखने से नहीं रोकती है। बलात्कार और हत्या का मामला होने के कारण और चूंकि साक्ष्य संदेह से मुक्त नहीं था, विचारण न्यायाधीश को न्याय के हित में महत्वपूर्ण सामग्री से और उस बात से भी परिचित होना चाहिए था, जो अभियोजन पक्ष के एकमात्र महत्वपूर्ण गवाहों ने पुलिस जांच के दौरान कही थी। यदि उन्होंने ऐसा किया होता, तो वह बिना किसी अनुचितता के इन गवाहों द्वारा अन्वेषण अधिकारी को दिए गए बयानों और मुकदमे में उनके साक्ष्य के बीच विसंगतियों को पकड़ सकते थे, साक्ष्य अधिनियम की धारा 165 के अधीन गवाहों से प्रश्न पूछकर स्वयं रिकॉर्ड पर लाया जा सकता था। हमारी राय में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 में ऐसा कुछ भी नहीं है जो विचारण न्यायाधीश को, अभियोजन या बचाव से अलग, अभियोजन गवाहों से अन्यथा अनुमेय प्रश्न पूछने से रोकता है, यदि न्याय स्पष्ट रूप से ऐसे पाठ्यक्रम की मांग करता है। वर्तमान मामले में, हम दृढ़ता से मानते हैं कि न्याय के हित में, विचारण न्यायाधीश को यही करना चाहिए था लेकिन उन्होंने पुलिस जांच के रिकॉर्ड को तब तक नहीं देखा जब तक कि अन्वेषण अधिकारी की जांच नहीं हो गई और साक्षी के रूप में छुट्टी नहीं दे दी गई। इस चरण में भी, विचारण न्यायाधीश अधिकारी और अन्य गवाहों को वापस बुला सकते

थे और साक्ष्य अधिनियम की धारा 165 द्वारा प्रदान किए गए तरीके से उनसे प्रश्न पूछ सकते थे। यह खेदजनक है कि उन्होंने ऐसा नहीं किया।

(महत्व प्रदत्त)

43. **बीरबल नाथ बनाम राजस्थान राज्य और अन्य, (2023) SCC OnLine SC 1396** में, निम्नानुसार टिप्पणी की गई है:

"19. धारा 161 के अधीन जांच के दौरान पुलिस को दिया गया बयान "साक्ष्य" के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता है। दंड प्रक्रिया संहिता (दं.प्र.सं.) की धारा 162 के अधीन निर्धारित अनुसार विधि की अदालत में इसकी सीमित प्रयोज्यता है।

20. निस्संदेह धारा 161 के अधीन जांच के दौरान पुलिस के समक्ष दिए गए बयान साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के अधीन "पूर्व बयान" हैं और इसलिए किसी साक्षी की प्रति-परीक्षा के लिए उपयोग किए जा सकते हैं। लेकिन यह केवल एक सीमित उद्देश्य के लिए है, ऐसे साक्षी का "खंडन" करने के लिए। भले ही बचाव पक्ष किसी साक्षी का खंडन करने में सफल हो जाए, यह हमेशा यह नहीं होगा कि उसके दो बयानों में विरोधाभास के परिणामस्वरूप इस साक्षी की पूरी तरह से बदनामी होगी। यहीं पर हमें लगता है कि उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायमूर्ति गलत हो गए हैं।"

(महत्व प्रदत्त)

44. हाल ही में, **अलाउद्दीन और अन्य बनाम असम राज्य और अन्य, (2024) SCC OnLine SC 760** में, सर्वोच्च न्यायालय ने फिर से उस तरीके पर विचार किया, जिसमें एक अभियोजन साक्षी की उनके पूर्व बयान की सहायता से प्रति-परीक्षा की जा सकती है। दं.प्र.सं. की धारा 162 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 का संदर्भ देते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की है:

"6.....

धारा 162 की उप-धारा (1) में शामिल मूल सिद्धांत यह है कि जांच के दौरान किसी व्यक्ति द्वारा पुलिस अधिकारी को दिया गया कोई भी बयान, जो लिखित रूप में ले लिया गया है, किसी भी उद्देश्य के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता है सिवाय जैसा कि धारा 162 में प्रदान किया गया है। उप-धारा (2) में शामिल पहला अपवाद भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 ('संक्षेप में साक्ष्य अधिनियम') की धारा 32 के खंड (1) द्वारा आच्छादित किए गए बयानों का है। इस प्रकार, धारा 162 की उप-धारा (1) में जो प्रदान किया गया है वह मृत्यु-पूर्व कथन पर लागू नहीं होता है। धारा 162 की उप-धारा (1) में प्रदान किए गए सामान्य नियम का दूसरा अपवाद यह है कि आरोपी साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 द्वारा प्रदान किए गए तरीके से साक्षी का खंडन करने के लिए बयान का उपयोग कर सकता है। यहां तक कि अभियोजन पक्ष भी न्यायालय की पूर्व अनुमति से साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 में प्रदान किए गए तरीके से साक्षी का खंडन करने के लिए बयान का उपयोग कर सकता है। अभियोजन पक्ष आम तौर पर इस प्रावधान का सहारा तब लेता है जब उसका साक्षी

अभियोजन पक्ष का समर्थन नहीं करता है। खंडन के लिए पूर्व बयान का उपयोग करने के लिए एक महत्वपूर्ण शर्त है। शर्त यह है कि खंडन के लिए उपयोग किए गए बयान के भाग को विधिवत सिद्ध किया जाना चाहिए।"
(महत्व प्रदत्त)

45. विशेष रूप से, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के संबंध में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:

"8.....

यह धारा दो भागों में संचालित होती है। पहला भाग यह प्रदान करता है कि एक साक्षी से उसके लिखित रूप में दिए गए पूर्व बयानों के बारे में प्रति-परीक्षा की जा सकती है बिना ऐसे लेखन को उसे दिखाए। इस प्रकार, उदाहरण के लिए, एक साक्षी से यह पूछकर प्रति-परीक्षा की जा सकती है कि क्या उसका पूर्व बयान मौजूद है। दूसरा भाग साक्षी का खंडन करने के संबंध में है। विरोधाभासों को सिद्ध करने के लिए साक्षी का उसके पूर्व बयान से सामना कराते समय, साक्षी को उसका पूर्व बयान दिखाया जाना चाहिए। यदि न्यायालय के समक्ष साक्षी द्वारा दिए गए बयान और पुलिस द्वारा दर्ज किए गए बयान में दर्ज किए गए बयान के बीच विरोधाभास है, तो साक्षी का ध्यान उसके पूर्व बयान के विशिष्ट भागों की ओर आकर्षित किया जाना चाहिए, जिनका उपयोग उसका खंडन करने के लिए किया जाना है। धारा 145 यह प्रदान करती है कि प्रासंगिक भाग को लेखन के सिद्ध किए बिना साक्षी के समक्ष रखा जा सकता है। हालांकि, गवाहों का खंडन करने के लिए उपयोग किए गए पूर्व बयान को बाद में सिद्ध किया जाना चाहिए। केवल अगर उसके पूर्व बयान का विरोधाभासी भाग सिद्ध हो जाता है तो विरोधाभासों को सिद्ध किया जा सकता है। सामान्य अभ्यास यह है कि रिकॉर्ड पर प्रस्तुत उसके पूर्व बयान के उस भाग या हिस्से को चिह्नित किया जाता है जो साक्षी को दिखाया गया है। विभिन्न राज्यों में अलग-अलग तरीके से चिह्नित किया जाता है। कुछ राज्यों में, अभ्यास यह है कि साक्षी को दिखाए गए भाग की शुरुआत को एक वर्णमाला से चिह्नित किया जाता है और अंत को उसी वर्णमाला से चिह्नित करके। प्रति-परीक्षा की रिकॉर्डिंग करते समय, सुनवाई न्यायालय को यह दर्ज करना चाहिए कि एक विशेष भाग जो उदाहरण के लिए, AA के रूप में चिह्नित है, साक्षी को दिखाया गया था। पूर्व बयान का कौन सा भाग साक्षी को उसका खंडन करने के लिए दिखाया गया है, यह प्रति-परीक्षा में दर्ज किया जाना चाहिए। यदि साक्षी ऐसा पूर्व बयान देने को स्वीकार करता है, तो उस भाग को सिद्ध माना जा सकता है। यदि साक्षी अपने पूर्व बयान के उस भाग को स्वीकार नहीं करता है जिससे उसका सामना कराया गया है, तो यह पूछकर कि क्या साक्षी ने वह बयान दिया था जो साक्षी को दिखाया गया था, अन्वेषण अधिकारी के माध्यम से इसे सिद्ध किया जा सकता है। इसलिए, यदि साक्षी का उसके लिखित रूप में कम किए गए पूर्व बयान से सामना कराया जाना है, तो बयान के उस विशेष भाग को, इसके सिद्ध होने से पहले भी, विशेष रूप से साक्षी को दिखाया जाना चाहिए। उसके बाद, साक्षी का खंडन करने के लिए उपयोग किए गए पूर्व बयान के भाग को सिद्ध किया जाना है। जैसा कि पहले संकेत दिया गया है, यदि साक्षी ऐसा बयान देने को स्वीकार करता है तो इसे सिद्ध माना जा सकता है, या संबंधित पुलिस अधिकारी की प्रति-परीक्षा में इसे सिद्ध किया जा सकता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 में इस आवश्यकता का उद्देश्य कि साक्षी को उसके पूर्व बयान के प्रासंगिक भाग को दिखाकर उसका सामना कराया जाए, साक्षी को विरोधाभास की व्याख्या करने का मौका देना है। इसलिए, यह निष्पक्षता का एक नियम है।"

46. हाल ही में, **लवकुश बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2024) SCC OnLine All 7674** में, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ को भी भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1875 की धारा 145 के अनुसार, एक साक्षी के उसके पूर्व बयान से सामना कराने के तरीके पर विचार करने का अवसर मिला। उसमें, निम्नानुसार टिप्पणी की गई थी:

"37.....

धारा 162 की उप-धारा (1) में शामिल मूल सिद्धांत यह है कि अन्वेषण के दौरान किसी व्यक्ति द्वारा पुलिस अधिकारी को दिया गया कोई भी बयान, जो लिखित रूप में लिया गया है, किसी भी उद्देश्य के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता है सिवाय जैसा कि धारा 162 में प्रदान किया गया है। उप-धारा (2) में शामिल पहला अपवाद भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 ('साक्ष्य अधिनियम') की धारा 32 के खंड (1) द्वारा आच्छादित किए गए बयानों का है। इस प्रकार, धारा 162 की उप-धारा (1) में जो प्रदान किया गया है वह मृत्यु-पूर्व कथन पर लागू नहीं होता है। धारा 162 की उप-धारा (1) में प्रदान किए गए सामान्य नियम का दूसरा अपवाद यह है कि आरोपी साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 द्वारा प्रदान किए गए तरीके से साक्षी का खंडन करने के लिए बयान का उपयोग कर सकता है। यहां तक कि अभियोजन पक्ष भी न्यायालय की पूर्व अनुमति से साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 में प्रदान किए गए तरीके से साक्षी का खंडन करने के लिए बयान का उपयोग कर सकता है। अभियोजन पक्ष आम तौर पर इस प्रावधान का सहारा तब लेता है जब उसका साक्षी अभियोजन पक्ष का समर्थन नहीं करता है। खंडन के लिए पूर्व बयान का उपयोग करने के लिए एक महत्वपूर्ण शर्त है। शर्त यह है कि खंडन के लिए उपयोग किए गए बयान के भाग को विधिवत सिद्ध किया जाना चाहिए।

38. जब दो बयान एक साथ नहीं रह सकते, तो वे विरोधाभासी बयान बन जाते हैं। जब कोई साक्षी न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में एक बयान देता है जो उसके द्वारा पुलिस द्वारा दर्ज किए गए बयान में कहे गए से असंगत है, तो विरोधाभास होता है। जब एक अभियोजन साक्षी जिसका दं.प्र.सं. की धारा 161(1) या धारा 164 के अधीन बयान दर्ज किया गया है, न्यायालय के समक्ष तथ्यात्मक पहलुओं को बताता है जो उसने दं.प्र.सं. की धारा 161(1) या धारा 164 के अधीन दर्ज अपने पूर्व बयान में नहीं बताया है, तो यह कहा जाता है कि चूक है। यदि साक्षी ने पुलिस द्वारा दर्ज किए गए अपने बयान में किसी तथ्य को बताने में चूक की है, जो वह न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में बताता है, तो चूक होगी। धारा 162 दं.प्र.सं. के स्पष्टीकरण से संकेत मिलता है कि एक चूक विरोधाभास हो सकती है जब यह महत्वपूर्ण और प्रासंगिक हो। इस प्रकार, हर चूक विरोधाभास नहीं है। यह विरोधाभास बन जाता है बशर्ते यह धारा 162 के अधीन स्पष्टीकरण में निर्धारित परीक्षण को पूरा करता हो। इसलिए, जब कोई चूक विरोधाभास बन जाती है, तो प्रति-परीक्षा में गवाहों का खंडन करने के लिए धारा 162 की उप-धारा (1) के प्रावधान में प्रदान की गई प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए।

39.....

धारा दो भागों में संचालित होती है। पहला भाग प्रावधान करता है कि एक साक्षी की प्रतिपरीक्षा उसके पूर्व बयानों के बारे में लिखित रूप में की जा सकती है बिना उसे ऐसा लेखन दिखाए। इस प्रकार, उदाहरण के लिए, एक साक्षी से यह पूछकर प्रतिपरीक्षा की जा सकती है कि क्या उसका पूर्व बयान मौजूद है। दूसरा भाग साक्षी का खंडन करने के बारे में है। साक्षी का सामना उसके पूर्व बयान से विरोधाभासों को सिद्ध करने के लिए करते समय, साक्षी को उसका पूर्व बयान दिखाया जाना चाहिए। यदि न्यायालय के समक्ष साक्षी द्वारा दिए गए बयान और पुलिस द्वारा दर्ज बयान में दर्ज किए गए बीच विरोधाभास है, तो साक्षी का ध्यान उसके पूर्व बयान के विशिष्ट भागों की ओर आकर्षित किया जाना चाहिए, जिनका उपयोग उसका खंडन करने के लिए किया जाना है। धारा 145 प्रावधान करती है कि प्रासंगिक भाग को बिना लेखन को सिद्ध किए साक्षी के सामने रखा जा सकता है। हालांकि, गवाहों का खंडन करने के लिए उपयोग किए गए पूर्व बयान को बाद में सिद्ध किया जाना चाहिए। केवल अगर उसके पूर्व बयान के विरोधाभासी भाग को सिद्ध किया जाता है तो विरोधाभासों को सिद्ध किया जा सकता है। सामान्य अभ्यास है कि साक्षी को दिखाए गए उसके पूर्व बयान के भाग या हिस्से को रिकॉर्ड पर प्रस्तुत किया जाता है। अलग-अलग राज्यों में अंकन अलग-अलग तरीके से किया जाता है। कुछ राज्यों में, अभ्यास है कि साक्षी को दिखाए गए भाग की शुरुआत को एक वर्णमाला से चिह्नित किया जाता है और अंत को उसी वर्णमाला से चिह्नित करके। प्रतिपरीक्षा दर्ज करते समय, विचारण न्यायालय को यह दर्ज करना चाहिए कि एक विशेष भाग जो उदाहरण के लिए, एए के रूप में चिह्नित है, साक्षी को दिखाया गया था। साक्षी का खंडन करने के लिए पूर्व बयान का कौन सा हिस्सा दिखाया गया है, इसे प्रतिपरीक्षा में दर्ज किया जाना चाहिए। यदि साक्षी ऐसा पूर्व बयान देने को स्वीकार करता है, तो उस भाग को सिद्ध माना जा सकता है। यदि साक्षी अपने पूर्व बयान के उस भाग को स्वीकार नहीं करता है जिसका सामना उससे कराया गया है, तो इसे अन्वेषण अधिकारी के माध्यम से यह पूछकर सिद्ध किया जा सकता है कि क्या साक्षी ने वह बयान दिया था जो साक्षी को दिखाया गया था। इसलिए, यदि साक्षी का सामना उसके लिखित पूर्व बयान से कराने का इरादा है, तो उस बयान के विशेष हिस्से को, इसे सिद्ध करने से पहले भी, विशेष रूप से साक्षी को दिखाया जाना चाहिए। उसके बाद, साक्षी का खंडन करने के लिए उपयोग किए गए पूर्व बयान के हिस्से को सिद्ध किया जाना चाहिए। जैसा कि पहले संकेत दिया गया है, यदि साक्षी ऐसा बयान देने को स्वीकार करता है, तो इसे सिद्ध माना जा सकता है, या इसे संबंधित पुलिस अधिकारी की प्रतिपरीक्षा में सिद्ध किया जा सकता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 में साक्षी को उसके पूर्व बयान का प्रासंगिक भाग दिखाकर उसका सामना कराने की इस आवश्यकता का उद्देश्य साक्षी को विरोधाभास को स्पष्ट करने का मौका देना है। इसलिए, यह निष्पक्षता का नियम है।

40.....

यहां यह नोट किया जाना चाहिए कि प्रत्येक विरोधाभास या चूक साक्षी को अस्वीकार करने या उसकी/उसकी गवाही को अविश्वास करने का आधार नहीं है। रिकॉर्ड पर लाई गई एक मामूली या तुच्छ चूक या विरोधाभास साक्षी के संस्करण को अविश्वास करने के लिए पर्याप्त नहीं है। केवल जब कोई महत्वपूर्ण विरोधाभास या चूक होती है तो न्यायालय साक्षी के संस्करण को पूर्ण या आंशिक रूप से अविश्वास कर सकता है। महत्वपूर्ण विरोधाभास या चूक क्या है यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है। क्या कोई चूक एक विरोधाभास भी है यह प्रत्येक व्यक्तिगत मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है।"

47. इस प्रकार, हालांकि न तो अभियोजन और न ही बचाव पक्ष साक्ष्य के माध्यम से-दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज किसी भी पूर्व बयान पर भरोसा कर सकता है, उसी समय, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 और 155 और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162, मुकदमे में दिए गए साक्ष्य से प्रतिकूल रूप से प्रभावित पक्ष को अनुमति देती है कि वह साक्षी (ऐसा साक्ष्य देने वाले) का सामना उनके पूर्व बयान से कराए, जिसमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज बयान भी शामिल है, या तो साक्षी की विश्वसनीयता को खंडित करने के लिए या विरोधाभास को सामने लाने के लिए। यदि वह सामना (किसी भी पूर्व बयान के साथ) उस प्रभावित पक्ष द्वारा, साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 और/या 155 या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अधीन अनुमत तरीके से नहीं दिया जाता है, तो दिया गया साक्ष्य प्रत्येक मामले के व्यक्तिगत तथ्यों में अपने स्वयं के भार पर विचार किया जाना होगा और इसकी शुद्धता या सत्यता पर केवल इसलिए संदेह नहीं किया जा सकता क्योंकि यह दावा किया जा सकता है (उस साक्षी द्वारा दिए गए साक्ष्य से प्रभावित पक्ष द्वारा), कि दिए गए साक्ष्य के विपरीत उसी साक्षी का एक पूर्व बयान मौजूद है, जो इस प्रकार दिए गए साक्ष्य के विपरीत चलता है।

48. अजीब बात है कि अभियोजन पक्ष भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) का सामना उनके कथित तौर पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज पूर्व बयान से कराने में पूरी तरह विफल रहा। इस प्रकार अभियोजन पक्ष ने उक्त साक्षी का सामना उसके कथित पूर्व बयान के किसी भी हिस्से से न कराने का विकल्प चुना। इस प्रकार, इसने भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) से कथित तौर पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज उनके बयान और न्यायालय में दिए गए उनके साक्ष्य में कथित अपरिहार्य विरोधाभासों के संबंध में कोई स्पष्टीकरण देने के लिए नहीं कहा।

49. न केवल अभियोजन पक्ष इस प्रकार उस संबंध में अपने दायित्व को निभाने में बुरी तरह विफल रहा, अन्वेषण अधिकारी मोहन लाल (अभि.सा.-6) ने न तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) का उसके द्वारा दर्ज कोई बयान सिद्ध किया और न ही उसे साक्ष्य के उस भाग को सिद्ध करने के लिए वापस बुलाया गया। अभि.सा.-6 की गवाही के अवलोकन से केवल यह तथ्य सामने आता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन दर्ज भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) के कथित बयान के संदर्भ के बिना तथ्यों को सिद्ध किया गया है।

50. ऊपर उल्लिखित विधि के दृष्टिगत, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) के साक्ष्य को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। अभियोजन पक्ष द्वारा भरोसा किए गए केवल दो प्रत्यक्षदर्शियों द्वारा उनकी उपस्थिति स्वीकार की गई, तथ्य यह है कि न तो अभियोजन पक्ष उक्त साक्षी की गवाही में कोई विरोधाभास ला सका और यह उसकी विश्वसनीयता को बदनाम करने में भी विफल रहा, ऐसे साक्षी द्वारा सिद्ध तथ्यों को यदि संभव हो तो अभियोजन कथा के साथ समंजित किया जाना है। यहां, हम खुद को अभियोजन कथा को भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) के साक्ष्य के साथ समंजित करने में पूरी तरह से असमर्थ पाते हैं। जबकि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा कारित एक हत्या की घटना को सिद्ध करने की कोशिश

की, दूसरी कहानी को समंजित नहीं किया जा सकता कि घटना आत्महत्या थी जैसा कि भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1), चक्षुदर्शी ने सिद्ध किया, जिसकी उपस्थिति अभियोजन गवाहों द्वारा स्वयं स्थापित की गई है। दोनों संस्करण सह-अस्तित्व में नहीं रह सकते। भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) ने आगे यह सिद्ध किया कि अभियुक्त-अपीलकर्ता घटना के समय और स्थान पर उपस्थित नहीं था।

51. उस संदर्भ में, हम अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा संदर्भित असंगतियों और विरोधाभासों को भी देखते हैं (जो पहले इस आदेश में विचार नहीं किए गए थे), अभियोजन पक्ष द्वारा भरोसा किए गए चक्षुदर्शी साक्ष्य के सामने। एक बार जब चक्षुदर्शी साक्ष्य ही भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू. 1) की निस्संदेह गवाही पर संदिग्ध हो जाता है, तो वे विरोधाभास और असंगतियां विचार के योग्य हैं। उस प्रकाश में देखा जाए तो, हमने अभियुक्त-अपीलकर्ता (डी.डब्ल्यू.-2) के साक्ष्य के साथ-साथ भूरे सिंह दिवाकर (डी.डब्ल्यू.-1) द्वारा दिए गए अन्य साक्ष्य को भी देखा है कि मृतक शराब का आदी था और वह कथित तौर पर अभियुक्त-अपीलकर्ता का कर्जदार था। हम यह भी ध्यान में रख रहे हैं कि अभियोजन पक्ष द्वारा आरोपित मुख्य उद्देश्य घटना से चार साल पहले की एक घटना थी, जिसके बाद कोई अन्य बड़ी घटना या झगड़ा नहीं हुआ।

52. तथ्यों और परिस्थितियों की संपूर्णता में और ऊपर उल्लिखित कारणों से, वर्तमान अपील सफल होती है और संदेह के लाभ के आधार पर स्वीकृत की जाती है, जो अभियुक्त अपीलकर्ता के पक्ष में उत्पन्न हुआ है। अपीलकर्ता जमानत पर है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437-ए के अनुपालन के अधीन उसके जमानतदार और जमानत बंधपत्र उन्मोचित किए जाते हैं।

53. विचारण न्यायालय के अभिलेख को इस आदेश की प्रति के साथ तुरंत संबंधित न्यायालय को वापस किया जाए।

(2025) 2 ILRA 405

पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार

आपराधिक पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 19.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति राम मनोहर नारायण मिश्रा

आपराधिक पुनरीक्षण संख्या-2019 सन् 2024

रमेश तिवारी

...पुनरीक्षणकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...विपक्षीगण

पुनरीक्षणकर्ता के अधिवक्ता:

नरेन्द्र देव शुक्ला, विवेक शुक्ला

विपक्षीगण के अधिवक्ता:

शा.अधि., लोकेश कुमार द्विवेदी, रत्नेश कुमार पाठक

आपराधिक विधि-भारतीय दण्ड संहिता, 1860 - धारा 323, 325, 452, 504, 506 एवं 308 - दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 319, 397 एवं 401- धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन सम्मन करना-आरोपपत्रित अभियुक्त के विचारण की समाप्ति के पश्चात् पारित सम्मन आदेश की पोषणीयता-आवेदक आरोपपत्रित नहीं-सह-अभियुक्त के पहले से ही दोषसिद्ध और दंडित होने के पश्चात् अतिरिक्त अभियुक्त के रूप में सम्मन किया गया-निर्णीत, सुखपाल सिंह खैरा बनाम पंजाब राज्य, (2022) 17 SCC 246 में प्रतिपादित विधि के दृष्टिगत, धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन सम्मन करना विचारण की समाप्ति से पूर्व होना चाहिए-विचारण समाप्त होने और दंड की घोषणा के पश्चात् पारित सम्मन आदेश पोषणीय नहीं है-आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया। (प्रस्तर 15 से 19)

निर्णीत:

वर्तमान आपराधिक पुनरीक्षण के प्रयोजनार्थ सुसंगत प्रश्न संख्या 1 का उत्तर माननीय न्यायालय ने सकारात्मक में दिया और निम्नवत् अवलोकित किया:-"दं.प्र.सं. की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग दंड आदेश की घोषणा से पूर्व किया जाना है, जब अभियुक्त की दोषसिद्धि का निर्णय हो। दोषमुक्त होने की स्थिति में, शक्ति का प्रयोग दोषमुक्ति आदेश की घोषणा से पूर्व किया जाना चाहिए। अतः, सम्मन आदेश दोषसिद्धि के मामले में दंड अधिरोपित करके विचारण की समाप्ति से पूर्व होना चाहिए। यदि आदेश उसी दिन पारित किया जाता है, तो प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर इसकी जांच करनी होगी और यदि ऐसा सम्मन आदेश दोषमुक्ति आदेश के पश्चात् या दोषसिद्धि के मामले में दंड अधिरोपित करने के पश्चात् पारित किया जाता है, तो वह बने रहने योग्य नहीं होगा।" (प्रस्तर 16)

उपरोक्त अवलोकन के प्रकाश में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जहां सह-अभियुक्तों का विचारण उस समय पर, जब धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन किसी ऐसे व्यक्ति के संबंध में सम्मन आदेश पारित किया गया था, जो मामले में पहले अभियुक्त के रूप में विचारण का सामना नहीं कर रहा था, उन व्यक्तियों के विचारण की समाप्ति के पश्चात् जो पहले से ही मामले का अभियुक्त के रूप में सामना कर रहे थे और जिसके परिणामस्वरूप उनकी दोषसिद्धि और दंड का अधिरोपण हुआ, तो धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्तियों के प्रयोग में अतिरिक्त अभियुक्त के रूप में संबंधित व्यक्तियों का सम्मन आदेश बने रहने योग्य नहीं होगा। (प्रस्तर 17)

वर्तमान मामले के तथ्य माननीय उच्चतम न्यायालय के सुखपाल सिंह खैरा (उपरोक्त) के ऐतिहासिक निर्णय से पूर्णतः आच्छादित हैं और उपरोक्त विवेचन के दृष्टिगत, धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्तियों के प्रयोग में विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध पारित सम्मन आदेश विचारण की समाप्ति के पश्चात्, जिसके परिणामस्वरूप उन अभियुक्त व्यक्तियों की दोषसिद्धि और दंडादेश हुआ, जो मुख्य एस.टी. संख्या 84 सन् 2006 में पहले से ही विचारण का सामना कर चुके थे, बने रहने योग्य नहीं है और इस प्रकार पुष्ट नहीं किया जा सकता, आक्षेपित सम्मन आदेश सुखपाल सिंह खैरा (उपरोक्त) में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के विरोध में है, जैसा कि ऊपर विवेचित किया गया है और इस प्रकार विधि में दूषित है, परिणामस्वरूप आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है। (प्रस्तर 19)

पुनरीक्षण आवेदन स्वीकृत किया गया। (ई-14)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

1. सुखपाल सिंह खैरा बनाम पंजाब राज्य, (2022) 17 SCC 246
2. हरदीप सिंह बनाम पंजाब राज्य, AIR 2014 SC 1400
3. बृजेन्द्र सिंह बनाम राजस्थान राज्य, (2017) 7 SCC 706

(माननीय न्यायमूर्ति राम मनोहर नारायण मिश्रा द्वारा उद्धोषित)

1. वर्तमान आपराधिक पुनरीक्षण, धारा 397/401 दं.प्र.सं. के अधीन विद्वान सत्र न्यायाधीश, भदोही द्वारा प्रकीर्ण आपराधिक वाद संख्या-155 सन् 2018, रमेश तिवारी बनाम राज्य में पारित आदेश दिनांक 26.02.2024 के विरुद्ध योजित किया गया है, जिसके द्वारा पुनरीक्षणकर्ता को मुकदमा अपराध संख्या-186 सन् 2006, थाना सुरियावा, जिला भदोही से उद्भूत वाद में धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्तियों के प्रयोग में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 323, 325, 452, 504, 506, 308 के अधीन आरोप का विचारण करने के लिए सम्मन किया गया है। पुनरीक्षणकर्ता को मामले में सूचनाकर्ता प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा योजित आवेदन पर सम्मन किया गया है।

2. पुनरीक्षणकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता, प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता और राज्य-प्रतिवादी के लिए विद्वान अ.शा.अधि. को सुना गया और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया गया।

3. पुनरीक्षणकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि विद्वान अवर न्यायालय ने धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्तियों के प्रयोग में दिनांक 26.02.2024 को आक्षेपित आदेश पारित करते समय अपने संतुष्टि के संबंध में अपना निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया है, जिसके द्वारा पुनरीक्षणकर्ता को भारतीय दण्ड

संहिता की धारा 323, 325, 452, 504, 506, 308 के अधीन आरोप का विचारण करने के लिए सम्मन किया गया है।

4. पुनरीक्षणकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि यह स्थापित विधि है कि किसी व्यक्ति को विचारण न्यायालय द्वारा धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति के प्रयोग में नियमित रूप से सम्मन नहीं किया जाना चाहिए और शक्ति का प्रयोग सुसंगत और विश्वसनीय साक्ष्य के आधार पर किया जाना चाहिए। इस शक्ति का प्रयोग यांत्रिक रूप से इस आधार पर नहीं किया जाना चाहिए कि अभिलेख पर कुछ साक्ष्य आ गया है, जो उस व्यक्ति को अभियुक्त बनाने के लिए अभिलंबित करता है। इस प्रकार आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में बने रहने योग्य नहीं है। धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति विवेकाधीन है और इसका प्रयोग केवल इस तथ्य के कारण नहीं किया जाना चाहिए कि विचारण के दौरान कुछ साक्ष्य प्रस्तुत किया गया है, जो उसे आरोपित अपराध से जोड़ता है। न्यायालय को अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करना चाहिए, सभी सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात्, यह न्यायालय पर प्रदत्त एक असाधारण शक्ति है और इसका प्रयोग संयम से केवल तभी किया जाना चाहिए जब उस व्यक्ति के विरुद्ध संज्ञान लेने के लिए बाध्यकारी कारण विद्यमान हों, जिसे आरोपपत्र में अभियुक्त के रूप में नामित नहीं किया गया है। विचारण न्यायालय का बाध्यकारी कर्तव्य है कि वह **बृजेन्द्र सिंह व अन्य बनाम राजस्थान राज्य व अन्य, 2017 (7) SCC 706** में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय में प्रतिपादित सिद्धांत के अनुरूप अपनी संतुष्टि को अभिलिखित करे। मुख्य प्रश्न संतुष्टि की मात्रा है अर्थात् अपेक्षित संतुष्टि आरोप विरचन के समय प्रयुक्त प्रथम दृष्टया मामले से अधिक होनी चाहिए, लेकिन इस सीमा तक संतुष्टि से कम होनी चाहिए कि साक्ष्य, यदि खंडन नहीं किया जाता है, तो दोषसिद्धि की ओर ले जाएगा। ऐसी संतुष्टि के अभाव में, न्यायालय को धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति का प्रयोग करने से बचना चाहिए।

5. उन्होंने अंत में प्रस्तुत किया कि अन्वेषण अधिकारी ने अपराध में अभियुक्त पुनरीक्षणकर्ता की संलिप्तता नहीं पाई थी, और घटनास्थल पर उसकी उपस्थिति नहीं पाई गई थी। पुनरीक्षणकर्ता का नाम प्रथम सूचना रिपोर्ट में है, लेकिन प्रथम सूचना रिपोर्ट में उसका नामित होना अन्वेषण के दौरान झूठ पाया गया और अन्वेषण अधिकारी द्वारा आरोपपत्र से उसका नाम हटा दिया गया। अन्वेषण अधिकारी ने तीन नामित अभियुक्त व्यक्तियों दिनेश उर्फ कप्तान, सुरेश विश्वकर्मा और रमेश विश्वकर्मा के विरुद्ध आरोपपत्र प्रस्तुत किया कि वे एस.टी. संख्या 84 सन् 2006, राज्य बनाम दिनेश उर्फ कप्तान व अन्य में सत्र न्यायाधीश, भदोही के न्यायालय में विचारण का सामना करें और दिनांक 28.09.2017 के निर्णय व आदेश द्वारा उक्त आरोपों के लिए दोषसिद्ध और दंडित किए गए। अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण के दौरान पुनरीक्षणकर्ता की उपस्थिति कहीं और पाई थी न कि घटना स्थल पर। प्रतिवादी संख्या 2, सूचनाकर्ता राजीव विश्वकर्मा ने आरोपपत्रित अभियुक्त व्यक्तियों के विचारण के दौरान अभि.सा.-1 राजीव विश्वकर्मा और अभि.सा.-2-संजय विश्वकर्मा के साक्ष्य की अभिलेखन के पश्चात् धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन एक आवेदन योजित किया था, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 10.08.2007 के आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया गया और पुनरीक्षणकर्ता को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 323, 325, 452, 504, 506, 308 के अधीन आरोप का विचारण करने के लिए अभियुक्त के रूप में सम्मन

किया गया। पुनरीक्षणकर्ता ने आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 2486 सन् 2007 (रमेश तिवारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य) में उक्त सम्मन आदेश को चुनौती दी, जिसे माननीय न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अवलोकनों के साथ स्वीकार कर लिया गया:-

"उभय तर्कों को सुनने के पश्चात् ऐसा प्रतीत होता है कि इस न्यायालय और शीर्ष न्यायालय द्वारा स्थापित विधि से, जैसा कि ऊपर विवेचित किया गया है, धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन अभियुक्त को सम्मन करने से पूर्व विचारण न्यायालय द्वारा बहुत प्रबल संतुष्टि अभिलिखित किया जाना आवश्यक है। वर्तमान मामले में विचारण न्यायालय द्वारा केवल अभि.सा.-1 और अभि.सा.-2 के कथन का संदर्भ दिया गया है बिना यह विवेचित किए कि अभि.सा.-1 और अभि.सा.-2 के कथन में आवेदक के विरुद्ध क्या आया है, जिसने विचारण न्यायालय को धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करने और आवेदक को विचारण के लिए सम्मन करने के लिए प्रेरित किया।

उपरोक्त के दृष्टिगत, विचारण न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 10.08.2007 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। विचारण न्यायालय को निर्देश दिया जाता है कि वह इस आदेश की प्रमाणित प्रति की प्राप्ति से एक माह के भीतर धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन अपेक्षित संतुष्टि से संबंधित नया आदेश पारित करे बिना पुनरीक्षणकर्ता को कोई स्थगन प्रदान किए।"

6. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि इस माननीय न्यायालय द्वारा आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 2486 सन् 2007 में अंतिम आदेश पारित करने से पूर्व आरोपपत्रित अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध चल रहा सत्र विचारण, विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 28.09.2017 के निर्णय व आदेश द्वारा अंततः समाप्त हो गया और अभियुक्त व्यक्तियों को उक्त आरोपों के लिए दोषसिद्ध और दंडित किया गया। तथापि, विद्वान अवर न्यायालय ने सह अभियुक्त व्यक्तियों के विचारण की समाप्ति के पश्चात् पुनरीक्षणकर्ता के मामले को पृथक रूप से लिया और माननीय न्यायालय द्वारा दिनांक 27.07.2018 के आदेश द्वारा मामले को अवर न्यायालय को प्रतिप्रेषित किए जाने के पश्चात् प्रकीर्ण वाद संख्या-155 सन् 2018 में एस.टी. संख्या-84 सन् 2006 में सूचनाकर्ता द्वारा योजित आवेदन 26 ख पर नया आदेश पारित किया, जिसे वर्तमान आपराधिक पुनरीक्षण में चुनौती दी गई है। आक्षेपित आदेश विधि के विपरीत है और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के गलत विवेचन का परिणाम है, जहां तक पुनरीक्षणकर्ता को उन अभियुक्तों के विचारण की समाप्ति के पश्चात् धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन सम्मन किया जा सकता है, जो कथित अपराध के लिए पहले से ही विचारण का सामना कर चुके थे।

7. इसके विपरीत, प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए विद्वान अ.शा.अधि. ने प्रस्तुत किया कि विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता, अनियमितता या विकृति नहीं है। विद्वान अवर न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करते समय तथ्यों और अभिलेख पर साक्ष्य की विस्तार से विवेचना की है। पुनरीक्षणकर्ता का नाम प्रथम सूचना रिपोर्ट में है, उसे प्रथम सूचना रिपोर्ट में

अपराध में विशिष्ट भूमिका आरोपित की गई है, जिसमें सूचनाकर्ता ने कहा है कि घटना दिनांक 11.04.2006 को रात्रि 08:30 बजे घटित हुई जब सूचनाकर्ता का भाई संजय विश्वकर्मा मजदूरों के साथ अपनी गेहूं की फसल की कटाई के मामले पर बातचीत करने के पश्चात् घर लौट रहा था, जैसे ही वह अपने घर के दरवाजे पर आया, अभियुक्त व्यक्ति दिनेश उर्फ कप्तान, सुरेश विश्वकर्मा और रमेश विश्वकर्मा पुत्र खुर्बुद विश्वकर्मा और रमेश तिवारी पुत्र आशा राम, जो सूचनाकर्ता के घर के पास छिपे हुए थे, लाठी, डंडा और लोहे की छड़ से सशस्त्र होकर वहां उभरे। रमेश तिवारी के उकसावे पर सभी अभियुक्त व्यक्तियों ने संजय विश्वकर्मा पर संबंधित हथियारों से प्रहार किया। गीता देवी, संजय विश्वकर्मा की पत्नी, उसकी चीख सुनकर अपने पति को बचाने के लिए वहां दौड़ी, लेकिन अभियुक्त व्यक्तियों ने उस पर भी प्रहार किया जब संजय और उसकी पत्नी अपने आप को बचाने के लिए घर के अंदर भागे। अभियुक्त व्यक्ति घर में प्रविष्ट हुए और उन्हें फिर से पीटा, उन्होंने गीता देवी द्वारा पहनी हुई एक चेन भी छीन ली। घायल संजय विश्वकर्मा पर अभियुक्तों द्वारा किए गए प्रहार से उसके दोनों पैरों में फ्रैक्चर हो गया। उसके सिर पर भी कट भी गया, सूचनाकर्ता के भाई और भाभी अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा दिए गए गंभीर प्रहार के कारण गंभीर रूप से घायल हो गए और बेहोश हो गए, जब शिकायतकर्ता और साक्षी वहां पहुंचे तो वे घटनास्थल से भाग गए, घायलों को राजकीय अस्पताल, सुरियावा ले जाया गया, जहां से उन्हें जिला अस्पताल, भदोही संदर्भित किया गया, लेकिन डॉक्टरों ने उन्हें किसी उच्च केंद्र में रेफर किया और उन्हें होलिसिटी अस्पताल, पहड़िया, वाराणसी में भर्ती कराया गया, जब उक्त अस्पताल में उनकी स्थिति में सुधार हुआ तो उन्हें जीवन ज्योति अस्पताल, भदोही में स्थानांतरित किया गया। घायल संजय विश्वकर्मा और उसकी पत्नी गीता देवी की चिकित्सीय जांच में चोटें गंभीर पाई गईं। सूचनाकर्ता ने घायलों की स्थिति में सुधार होने पर दिनांक 20.04.2006 को संबंधित थाने में प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई। सूचनाकर्ता और घायल साक्षियों ने धारा 161 दं.प्र.सं. के अधीन अपने कथन में अभि.सा.-1 और अभि.सा.-2 रमेश विश्वकर्मा और संजय विश्वकर्मा में सह अभियुक्त व्यक्तियों के साथ पुनरीक्षणकर्ता को उकसावे और चोट पहुंचाने दोनों की भूमिका आरोपित की है। इन साक्षियों ने न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में पुनरीक्षणकर्ता को सक्रिय भूमिका आरोपित की है, उन्होंने कहा है कि रमेश तिवारी लोहे की छड़ से सशस्त्र होकर संजय विश्वकर्मा पर उसके सिर और बाएं हाथ पर प्रहार किया। धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन पूर्व आदेश पारित होने के पश्चात्, और वर्तमान पुनरीक्षणकर्ता के सम्मन के संबंध में धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन आवेदन पर पुनः सुनवाई से पूर्व, अभि.सा.-3 गीता देवी और अभि.सा.-4 मस्तु तिवारी का साक्ष्य भी अभिलिखित किया गया और इन साक्षियों ने भी अपराध में पुनरीक्षणकर्ता को विशिष्ट और सक्रिय भूमिका आरोपित की है, जिसके परिणामस्वरूप अभि.सा.-2 संजय विश्वकर्मा और अभि.सा.-3 गीता देवी को गंभीर और गंभीर चोटें आईं। घायलों की चोट रिपोर्ट साक्षियों की मौखिक गवाही की पुष्टि करती है। पुनरीक्षणकर्ता को उकसाने वाले और प्रहार करने वाले दोनों की भूमिका आरोपित की गई है।

8. विद्वान अवर न्यायालय ने अभि.सा.-1 और अभि.सा.-2 के साक्ष्य की विवेचना की है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा प्रतिप्रेषण प्रत्यावर्तन आदेश में इंगित किया गया है और उसमें कोई विधिक या तथ्यात्मक त्रुटि नहीं है। विद्वान अवर न्यायालय ने उक्त आरोपों के लिए विचारण का सामना करने के लिए पुनरीक्षणकर्ता

को सही ढंग से सम्मन किया है, क्योंकि अपराध में पुनरीक्षणकर्ता की संलिप्तता के समर्थन में अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य है।

9. घायल गीता देवी की दिनांक 16.04.2006 की चिकित्सीय-विधिक परीक्षण रिपोर्ट, उसके शरीर पर निम्नलिखित चोटों को प्रकट करती है:-

1. दाहिने अग्रबाहु पर 6 सेमी x 3 सेमी का आघात, दाहिनी कोहनी के जोड़ के 3 सेमी नीचे सूजन के लिए सलाह दाहिने अग्रबाहु का एक्स-रे, घायल को एस.एस.पी.जी. अस्पताल वाराणसी संदर्भित किया गया।

2. बाएं हथेली पर 6.5 सेमी x 5 सेमी का नीलगू बाईं कलाई के जोड़ के 5.5 सेमी नीचे सूजन सलाह बाईं हथेली का एक्स-रे।

3. बाएं पैर में दर्द की शिकायत।

4. दाहिने पैर में दर्द की शिकायत।

अवधि लगभग 6 दिन।

10. संजय विश्वकर्मा की चोट रिपोर्ट उसके शरीर पर उसके शरीर के विभिन्न भागों अर्थात् दाहिनी कलाई का जोड़, दाहिनी हथेली, बाईं ऊपरी भुजा, बाईं ऊपरी आंतरिक। दाहिना पैर, बायां पैर पर निम्नलिखित दृश्यमान चोटों को प्रकट करती है।

संजय विश्वकर्मा की एक्स-रे रिपोर्ट में

1. दाहिनी ओर अल्ना के निचले सिरे का फ्रैक्चर और त्रिज्या हड्डी के मध्य भाग में फ्रैक्चर देखा गया। दोनों हड्डियों की नेलिंग की गई है।

2. अंगूठे की दूरस्थ फालेंक्स के आधार का फ्रैक्चर, दूसरी मेटाकार्पल हड्डी के सिर पर फ्रैक्चर, दाहिनी हथेली की छोटी उंगली के समीपस्थ फालेंक्स का फ्रैक्चर।

3. बाईं भुजा के शाफ्ट का फ्रैक्चर।

4. दाहिने पैर के फिबुला के निचले सिरे का फ्रैक्चर देखा गया।

5. बाएं पैर के निचले सिरे पर फिबुला हड्डी का फ्रैक्चर देखा गया।

6. खोपड़ी के ललाट पार्श्विका जंक्शन पर बाहरी परत में भंग और आंतरिक अवसाद है।

11. गीता देवी की एक्स-रे रिपोर्ट में निम्नलिखित चोटें देखी गई:-

दाहिनी त्रिज्या हड्डी का फ्रैक्चर और दूसरी मेटाकार्पल हड्डी का फ्रैक्चर देखा गया।

12. **हरदीप सिंह बनाम पंजाब राज्य व अन्य, AIR 2014 SC 1400** में माननीय उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने अपराध में संलिप्त पाए गए व्यक्ति को अभियुक्त के रूप में जोड़ने के लिए धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन विचारण न्यायालय द्वारा शक्ति के प्रयोग की परिधि और विस्तार को निर्धारित किया। माननीय न्यायालय ने धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन निहित विभिन्न बिंदुओं को संबोधित किया और निर्णीत किया कि धारा रचनात्मक और उद्देश्यपूर्ण व्याख्या दिए जाने योग्य है, जो न्याय के कारण को आगे बढ़ाती है। माननीय न्यायालय ने निम्नवत् निर्णीत किया:-

11. धारा 319 दं.प्र.सं., जैसे कि आज विद्यमान है, नीचे उद्धृत है:

"319 दं.प्र.सं.-अपराध का दोषी प्रतीत होने वाले अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति.-

(1) जहां, किसी अपराध की किसी जांच या विचारण के दौरान, साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त से भिन्न किसी व्यक्ति ने कोई ऐसा अपराध किया है, जिसके लिए ऐसे व्यक्ति का अभियुक्त के साथ संयुक्त रूप से विचारण किया जा सकता है, तो न्यायालय उस अपराध के लिए ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है, जो उसने किया प्रतीत होता है।

(2) जहां ऐसा व्यक्ति न्यायालय में उपस्थित नहीं है, उसे उपरोक्त प्रयोजन के लिए, मामले की परिस्थितियों के अनुसार, गिरफ्तार या सम्मन किया जा सकता है।

(3) न्यायालय में उपस्थित कोई भी व्यक्ति, यद्यपि गिरफ्तारी के अधीन नहीं या सम्मन पर नहीं, उस अपराध की जांच या विचारण के प्रयोजन के लिए ऐसे न्यायालय द्वारा निरुद्ध किया जा सकता है, जो उसके द्वारा किया प्रतीत होता है।

(4) जहां न्यायालय उप-धारा (1) के अधीन किसी व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करता है, तब-

(क) ऐसे व्यक्ति के संबंध में कार्यवाही नए सिरे से प्रारंभ की जाएगी, और साक्षियों को पुनः सुना जाएगा;

(ख) खंड (क) के उपबंधों के अधीन, मामला ऐसे आगे बढ़ सकता है, मानो जब न्यायालय ने उस अपराध का संज्ञान लिया था, जिस पर जांच या विचारण प्रारंभ किया गया था तब ऐसा व्यक्ति अभियुक्त व्यक्ति था।"

12. धारा 319 दं.प्र.सं. सिद्धांत *judex damnatur cum nocens absoluitur* (जब दोषी बरी हो जाता है तो न्यायाधीश निर्दित होता है) से उत्पन्न होती है और धारा 319 दं.प्र.सं. के अधिनियमन के अंतर्निहित परिधि और भावना को स्पष्ट करते समय इस सिद्धांत का उपयोग प्रकाश स्तंभ के रूप में किया जाना चाहिए। वास्तविक अपराधी को दंडित करके न्याय करना न्यायालय का कर्तव्य है। जहां अन्वेषण एजेंसी किसी कारण से वास्तविक अपराधियों में से एक को अभियुक्त के रूप में नामित नहीं करती है, न्यायालय उक्त अभियुक्त को विचारण का सामना करने के लिए बुलाने में शक्तिहीन नहीं है। प्रश्न शेष रहता है कि किन परिस्थितियों में और किस चरण में न्यायालय को धारा 319 दं.प्र.सं. में प्रावधानित अपनी शक्ति का प्रयोग करना चाहिए? हमारे समक्ष उठाई गई प्रस्तुतियों ने बहुत व्यापक क्षेत्र को आच्छादित किया और विद्वान अधिवक्ता हमें दं.प्र.सं. के विभिन्न उपबंधों और निर्णयों से अवगत कराया है, जिन पर उक्त प्रयोजन के लिए भरोसा किया गया है। विवाद उस चरण के इर्द-गिर्द केंद्रित है, जिस पर ऐसी शक्तियों का न्यायालय द्वारा आह्वान किया जा सकता है और वह सामग्री जिसके आधार पर ऐसी शक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है।

.....15. धारा 319 दं.प्र.सं. न्यायालय को किसी भी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करने की अनुमति देती है, जो उसके समक्ष किसी मामले में अभियुक्त नहीं है। इस प्रकार, जिस व्यक्ति के विरुद्ध ऐसी शक्तियों के प्रयोग में सम्मन जारी किए जाते हैं, वह आवश्यक रूप से ऐसा व्यक्ति नहीं होगा, जो पहले से ही विचारण का सामना कर रहा अभियुक्त है। वह या तो धारा 173 दं.प्र.सं. के अधीन योजित आरोपपत्र के स्तंभ 2 में नामित व्यक्ति हो सकता है या ऐसा व्यक्ति हो सकता है जिसका नाम न्यायालय के समक्ष किसी सामग्री में प्रकट किया गया है जिसे अपराध के विचारण के प्रयोजन के लिए माना जाना है, लेकिन अन्वेषित नहीं। वह ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जिसकी संलिप्तता संकेत की जा सकती है और अपराध के किए जाने से संबंधित हो सकती है।

.....45. राज किशोर प्रसाद (उपरोक्त) में निर्णय का संदर्भ देना उचित हो सकता है जहां, मुकदमे में देरी से बचने के लिए, न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि ऐसी शक्ति का प्रयोग धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन "जांच" और "मुकदमा" शब्दों का उपयोग जिस संदर्भ में किया गया है, उसे ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि ऐसी शक्ति पूर्व-मुकदमा चरण में उपलब्ध नहीं है और केवल जांच के चरण में या साक्ष्य दर्ज होने के बाद ही इसका प्रयोग किया जाना चाहिए।

.....71. इसलिए, यह स्पष्ट है कि धारा 319 दं.प्र.सं. में "साक्ष्य" शब्द का अर्थ केवल ऐसा साक्ष्य है, जो न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया हो, कथनों के संबंध में, और न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया हो, अभिलेखों के संबंध में। केवल ऐसे साक्ष्य को ही मजिस्ट्रेट या न्यायालय द्वारा यह तय करने के लिए ध्यान में

रखा जा सकता है कि धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति का प्रयोग किया जाना है या नहीं और जांच के दौरान एकत्र की गई सामग्री के आधार पर नहीं।

.....98. धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति एक विवेकाधीन और असाधारण शक्ति है। इसका प्रयोग संयमपूर्वक और केवल उन मामलों में किया जाना चाहिए जहां मामले की परिस्थितियां ऐसा करना आवश्यक बनाती हैं। इसका प्रयोग इसलिए नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि मजिस्ट्रेट या सत्र न्यायाधीश की राय है कि कोई अन्य व्यक्ति भी उस अपराध को करने का दोषी हो सकता है। केवल जहां न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य से किसी व्यक्ति के विरुद्ध मजबूत और ठोस साक्ष्य आता है, तभी ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए न कि आकस्मिक और लापरवाह तरीके से।

.....99. इस प्रकार, हम निर्णीत करते हैं कि यद्यपि केवल एक प्रथम दृष्टया मामला न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य से स्थापित किया जाना है, जिसे प्रति-परीक्षा की कसौटी पर आवश्यक रूप से परखा जाना आवश्यक नहीं है, इसके लिए उसकी संलिप्तता की केवल संभावना से कहीं अधिक मजबूत साक्ष्य की आवश्यकता होती है। जो परीक्षण लागू किया जाना है वह आरोप तय करने के समय लागू प्रथम दृष्टया मामले से अधिक है, लेकिन इस सीमा तक संतुष्टि से कम है कि साक्ष्य, यदि खंडन नहीं किया जाता है, तो दोषसिद्धि की ओर ले जाएगा। ऐसी संतुष्टि के अभाव में, न्यायालय को धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति का प्रयोग करने से बचना चाहिए। धारा 319 दं.प्र.सं. में यदि 'साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त के अलावा किसी व्यक्ति ने कोई अपराध किया है' यह प्रावधान करने का उद्देश्य इन शब्दों से स्पष्ट है "जिसके लिए ऐसे व्यक्ति पर अभियुक्त के साथ मुकदमा चलाया जा सकता है।" जो शब्द प्रयुक्त हैं वे "जिसके लिए ऐसे व्यक्ति को दोषी ठहराया जा सकता है" नहीं हैं। इसलिए, धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन कार्य करने वाले न्यायालय के लिए अभियुक्त के अपराध के बारे में कोई राय बनाने की कोई गुंजाइश नहीं है।

प्रश्न (v) किन स्थितियों में इस धारा के अधीन शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है: प्र.सू.रि. में नामित नहीं; प्र.सू.रि. में नामित लेकिन आरोपपत्र दाखिल नहीं किया गया या उन्मुक्त कर दिया गया?

13. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने बृजेंद्र सिंह व अन्य बनाम राजस्थान राज्य व अन्य, 2017 (7) SCC 706 में निम्नानुसार टिप्पणी की:-

"12. मूल प्रश्न, हालांकि, संतुष्टि की वह डिग्री है जो धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्तियों का प्रयोग करने के लिए आवश्यक है और संबंधित प्रश्न यह है कि प्र.सू.रि. में नामित किंतु आरोपपत्र दाखिल नहीं किए गए व्यक्ति के संबंध में इस शक्ति का प्रयोग किन स्थितियों में किया जाना चाहिए। इन दोनों पहलुओं पर संविधान पीठ द्वारा हरदीप सिंह के मामले में विशेष रूप से विचार किया गया और निम्नलिखित तरीके से उत्तर दिया गया:

"95. संज्ञान लेते समय, न्यायालय को यह देखना होता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही आगे बढ़ाने के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं। धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन, यद्यपि प्रथम दृष्टया मामले की परीक्षा समान है, आवश्यक संतुष्टि की डिग्री बहुत अधिक कठोर है। इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ ने विकास बनाम राजस्थान राज्य [(2014) 3 एससीसी 321] में कहा कि न्यायालय की वस्तुनिष्ठ संतुष्टि पर किसी व्यक्ति को "गिरफ्तार" या "सम्मन" किया जा सकता है, जैसा कि मामले की परिस्थितियों में आवश्यक हो सकता है, यदि साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त के अलावा किसी ऐसे व्यक्ति ने कोई अपराध किया है जिसके लिए ऐसे व्यक्ति पर पहले से ही आरोपित अभियुक्त व्यक्तियों के साथ मुकदमा चलाया जा सकता है।

105. धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति एक विवेकाधीन और असाधारण शक्ति है। इसका प्रयोग संयमपूर्वक और केवल उन मामलों में किया जाना चाहिए जहां मामले की परिस्थितियां ऐसा करना आवश्यक बनाती हैं। इसका प्रयोग इसलिए नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि मजिस्ट्रेट या सत्र न्यायाधीश की राय है कि कोई अन्य व्यक्ति भी उस अपराध को करने का दोषी हो सकता है। केवल जहां न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य से किसी व्यक्ति के विरुद्ध मजबूत और ठोस साक्ष्य आता है, तभी ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए न कि आकस्मिक और लापरवाह तरीके से।

106. इस प्रकार, हम निर्णीत करते हैं कि यद्यपि केवल एक प्रथम दृष्टया मामला न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य से स्थापित किया जाना है, जिसे प्रति-परीक्षा की कसौटी पर आवश्यक रूप से परखा जाना आवश्यक नहीं है, इसके लिए उसकी सलिप्तता की केवल संभावना से कहीं अधिक मजबूत साक्ष्य की आवश्यकता होती है। जो परीक्षण लागू किया जाना है वह आरोप तय करने के समय लागू प्रथम दृष्टया मामले से अधिक है, लेकिन इस सीमा तक संतुष्टि से कम है कि साक्ष्य, यदि खंडन नहीं किया जाता है, तो दोषसिद्धि की ओर ले जाएगा।

ऐसी संतुष्टि के अभाव में, न्यायालय को धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति का प्रयोग करने से बचना चाहिए। धारा 319 दं.प्र.सं. में यदि "साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त के अलावा किसी व्यक्ति ने कोई अपराध किया है" यह प्रावधान करने का उद्देश्य इन शब्दों से स्पष्ट है "जिसके लिए ऐसे व्यक्ति पर अभियुक्त के साथ मुकदमा चलाया जा सकता है"। जो शब्द प्रयुक्त हैं वे "जिसके लिए ऐसे व्यक्ति को दोषी ठहराया जा सकता है" नहीं हैं। इसलिए, धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन कार्य करने वाले न्यायालय के लिए अभियुक्त के अपराध के बारे में कोई राय बनाने की कोई गुंजाइश नहीं है।

13. प्रश्न का उत्तर देने के लिए, हरदीप सिंह के मामले में प्रतिपादित कुछ सिद्धांतों को संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है: धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति का प्रयोग विचारण न्यायालय द्वारा विचारण के दौरान किसी भी चरण में किया जा सकता है, अर्थात्, विचारण के समापन से पहले, किसी भी व्यक्ति को अभियुक्त के रूप में सम्मन करने और चल रहे मामले में विचारण का सामना करने के लिए, एक बार जब विचारण न्यायालय

को ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध कुछ 'साक्ष्य' मिलता है जिसके आधार पर यह एकत्र किया जा सकता है कि वह अपराध का दोषी प्रतीत होता है। यहां 'साक्ष्य' का अर्थ वह सामग्री है जो विचारण के दौरान न्यायालय के समक्ष लाई जाती है। जहां तक जांच के चरण में आईओ द्वारा एकत्र की गई सामग्री/साक्ष्य का संबंध है, इसका उपयोग पुष्टिकरण के लिए और धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्य का समर्थन करने के लिए किया जा सकता है। निस्संदेह, मुख्य परीक्षा में सामने आए ऐसे साक्ष्य को भी, गवाहों की प्रति-परीक्षा के बिना, ध्यान में रखा जा सकता है। हालांकि, चूंकि यह धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन न्यायालय को दी गई एक विवेकाधीन शक्ति है और एक असाधारण भी है, इसका प्रयोग संयमपूर्वक और केवल उन मामलों में किया जाना है जहां मामले की परिस्थितियां ऐसा करना आवश्यक बनाती हैं। संतुष्टि की डिग्री उस डिग्री से अधिक है जो उन अन्य लोगों के विरुद्ध आरोप तय करते समय आवश्यक होती है जिनके संबंध में आरोपपत्र दाखिल किया गया था। केवल जहां न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य से किसी व्यक्ति के विरुद्ध मजबूत और ठोस साक्ष्य आता है, तभी ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए। इसका प्रयोग आकस्मिक या लापरवाह तरीके से नहीं किया जाना चाहिए। प्रथम दृष्टया राय जो बनाई जानी है, उसके लिए उसकी संलिप्तता की केवल संभावना से अधिक मजबूत साक्ष्य की आवश्यकता होती है।

14. प्रतिवादी संख्या 2, सूचनाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने एसटी संख्या 84 वर्ष 2006, उत्तर प्रदेश राज्य बनाम दिनेश उर्फ कप्तान व अन्य में पारित निर्णय की प्रमाणित प्रति की फोटो कॉपी प्रस्तुत की, जो अपराध संख्या 186 वर्ष 2006, थाना सुरियावा, जिला भदोही से उत्पन्न हुई, जो दर्शाती है कि वर्तमान अपराध में सह-अभियुक्तों को पहले ही दोषसिद्ध किया जा चुका है और उपरोक्त आरोपों के लिए अधिकतम सात वर्ष के कारावास और अर्थदंड की सजा दी गई है। धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा योजित आवेदन पर 10.08.2007 को पारित पूर्व सम्मन आदेश को इस न्यायालय द्वारा आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 2486 वर्ष 2007 में अपास्त कर दिया गया था और मामले को धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन आवेदन पर नया आदेश पारित करने के लिए एक महीने के भीतर विचारण न्यायालय में प्रतिप्रेषित कर दिया गया था, जो इस न्यायालय द्वारा 27.07.2018 को पारित आदेश के अनुसार था। इस न्यायालय ने टिप्पणी की कि आक्षेपित आदेश में विचारण न्यायालय द्वारा केवल अभि.सा.-1 और अभि.सा.-2 के बयान का संदर्भ दिया गया है, बिना यह चर्चा किए कि अभि.सा.-1 और अभि.सा.-2 के बयान में क्या आया है, जिसके कारण विचारण न्यायालय ने धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग किया और आवेदक को मुकदमे के लिए सम्मन किया। यह प्रतीत होता है कि जब इस न्यायालय द्वारा 27.07.2018 को आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 2486 वर्ष 2007 में अंतिम आदेश पारित किया गया, जो वर्तमान पुनरीक्षणकर्ता द्वारा धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन पूर्व सम्मन आदेश के विरुद्ध योजित किया गया था, तो सह-अभियुक्त व्यक्तियों के संबंध में सत्र मुकदमा पहले ही विचारण न्यायालय द्वारा 28.09.2017 को निर्णीत किया जा चुका था और शायद यह तथ्य किसी भी पक्ष के अधिवक्ताओं के ध्यान में नहीं लाया गया, अन्यथा यह महत्वपूर्ण तथ्य इस न्यायालय द्वारा पारित अंतिम आदेश में आता। इस प्रकार, स्थिति यह उभरती है कि धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन आवेदन पर 26.02.2024 को पुनरीक्षणकर्ता को अभियुक्त के रूप में सम्मन करने के संबंध में नया आदेश पारित करने की तिथि पर, सह-अभियुक्त व्यक्तियों के संबंध में मुकदमा, जिन पर आरोपपत्र दाखिल किया गया था और उक्त अपराध के लिए मुकदमे

का सामना किया था, 28.09.2017 को बहुत पहले समाप्त हो गया था और इसलिए पुनरीक्षणकर्ता की सह-अभियुक्त व्यक्तियों के साथ संयुक्त सुनवाई करने का कोई सवाल नहीं था, जो पहले से ही मामले में विचारण का सामना कर रहे थे, क्योंकि उनका मुकदमा पहले ही समाप्त हो चुका था और उन्हें उक्त आरोपों के लिए दोषी ठहराया गया था और सजा सुनाई गई थी।

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **सुखपाल सिंह खैरा बनाम पंजाब राज्य, 2022 (17) SCC 246** में विधि के तीन महत्वपूर्ण प्रश्नों को संविधान पीठ के समक्ष विचार के लिए उठाया, जो निम्नानुसार हैं:-

"I. क्या विचारण न्यायालय के पास दं.प्र.सं. की धारा 319 के अधीन अतिरिक्त अभियुक्तों को सम्मन करने की शक्ति है, जब अन्य सह-अभियुक्तों के संबंध में विचारण समाप्त हो चुका है और सम्मन आदेश पारित करने से पहले उसी तिथि को दोषसिद्धि का निर्णय दिया गया है?

II. क्या विचारण न्यायालय के पास दं.प्र.सं. की धारा 319 के अधीन अतिरिक्त अभियुक्तों को सम्मन करने की शक्ति है, जब कुछ अन्य फरार अभियुक्तों (जिनकी उपस्थिति बाद में सुनिश्चित की जाती है) के संबंध में विचारण चल रहा है/लंबित है, जिसे मुख्य विचारण से अलग कर दिया गया है?

III. धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति का प्रयोग करते समय सक्षम न्यायालय को किन दिशानिर्देशों का पालन करना चाहिए?"

16. माननीय न्यायालय ने प्रश्न संख्या 1 का उत्तर सकारात्मक रूप से दिया, जो वर्तमान आपराधिक पुनरीक्षण के उद्देश्यों के लिए प्रासंगिक है, और निम्नानुसार टिप्पणी की:-

"दं.प्र.सं. की धारा 319 के अधीन शक्ति का आह्वान व प्रयोग दंडादेश की उद्घोषणा से पहले किया जाना है, जहां अभियुक्त की दोषसिद्धि का निर्णय है। दोषमुक्ति के मामले में, दोषमुक्ति का आदेश उद्घोषित होने से पहले शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए। इसलिए, सम्मन आदेश को दोषसिद्धि में दंडादेश द्वारा विचारण के समापन से पहले होना चाहिए। यदि आदेश उसी दिन पारित किया जाता है, तो इसे प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर जांचा जाना होगा और यदि ऐसा सम्मन आदेश दोषमुक्ति के आदेश के बाद या दोषसिद्धि में दंडादेश के बाद पारित किया जाता है, तो वह बना नहीं रह सकता।"

17. उपरोक्त टिप्पणी के प्रकाश में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जहां धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन सम्मन आदेश पारित करने के समय सह-अभियुक्तों का विचारण उस व्यक्ति के संबंध में, जो पहले मामले में अभियुक्त के रूप में विचारण का सामना नहीं कर रहा था, उन व्यक्तियों के विचारण के समापन के बाद, जो पहले से ही मामले में अभियुक्त के रूप में सामना कर रहे थे, जिसके परिणामस्वरूप उनकी दोषसिद्धि और

सजा दी गई, धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्तियों के प्रयोग में अतिरिक्त अभियुक्त के रूप में संबंधित व्यक्तियों का सम्मन आदेश बना नहीं रह सकता।

18. माननीय न्यायालय ने धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्ति का प्रयोग करते समय सक्षम न्यायालय को पालन करने के लिए निम्नलिखित 12 दिशानिर्देश निर्धारित किए:

"(i) यदि सक्षम न्यायालय को साक्ष्य मिलता है या दं.प्र.सं. की धारा 319 के अधीन आवेदन योजित किया जाता है कि दोषमुक्ति या डोसहसिद्धि के आदेश पारित करने से पहले विचारण में किसी भी चरण में दर्ज साक्ष्य के आधार पर अपराध करने में किसी अन्य व्यक्ति की संलिप्तता है, तो वह उस चरण में विचारण को रोक देगा।

(ii) न्यायालय तब सबसे पहले अतिरिक्त अभियुक्त को सम्मन करने की आवश्यकता या अन्यथा तय करेगा और उस पर आदेश पारित करेगा।

(iii) यदि न्यायालय का निर्णय दं.प्र.सं. की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने और अभियुक्त को सम्मन करने का है, तो ऐसा सम्मन आदेश मुख्य मामले में विचारण को आगे बढ़ाने से पहले पारित किया जाएगा।

(iv) यदि अतिरिक्त अभियुक्त का सम्मन आदेश पारित किया जाता है, तो जिस चरण में इसे पारित किया जाता है, उसके आधार पर न्यायालय इस तथ्य पर भी अपना विवेक प्रयोग करेगा कि क्या ऐसे सम्मन किए गए अभियुक्त पर अन्य अभियुक्तों के साथ या अलग से विचारण किया जाना है।

(v) यदि निर्णय संयुक्त विचारण का है, तो नया विचारण केवल सम्मन किए गए अभियुक्त की उपस्थिति सुरक्षित करने के बाद ही शुरू किया जाएगा।

(vi) यदि निर्णय यह है कि सम्मन किए गए अभियुक्त पर अलग से विचारण चलाया जा सकता है, तो ऐसे आदेश पारित होने पर, न्यायालय के लिए उन अभियुक्तों के विरुद्ध विचारण जारी रखने और समाप्त करने में कोई बाधा नहीं होगी, जिनके साथ कार्यवाही की जा रही थी।

(vii) यदि उपरोक्त (i) में रोक दी गई कार्यवाही ऐसे मामले में है जहां विचारण चलाए गए अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना है और निर्णय यह है कि सम्मन किए गए अभियुक्त पर अलग से नए सिरे से विचारण चलाया जा सकता है, तो मुख्य मामले में दोषमुक्ति का निर्णय पारित करने में कोई बाधा नहीं होगी।

(viii) यदि मुख्य विचारण में इसके समापन तक शक्ति का प्रयोग या उपयोग नहीं किया जाता है और यदि कोई विभाजित (द्विभाजित) मामला है, तो दं.प्र.सं. की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग या उपयोग केवल तभी किया जा सकता है यदि उस आशय का साक्ष्य हो, जो विभाजित (द्विभाजित) विचारण में सम्मन किए जाने वाले अतिरिक्त अभियुक्त की संलिप्तता की ओर इशारा करता हो।

(ix) यदि, बहस सुनने के बाद और मामले को निर्णय के लिए आरक्षित करने के बाद न्यायालय के लिए दं.प्र.सं. की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग और उपयोग करने का अवसर उत्पन्न होता है, तो न्यायालय के लिए उचित तरीका यह है कि इसे पुनः सुनवाई के लिए निर्धारित किया जाए।

(x) पुनः सुनवाई के लिए निर्धारित करने पर, सम्मन करने के बारे में निर्णय लेने के लिए उपरोक्त निर्धारित प्रक्रिया; संयुक्त विचारण आयोजित करना या अन्यथा तय किया जाएगा और तदनुसार आगे बढ़ा जाएगा।

(xi) ऐसे मामले में भी, उस चरण में, यदि निर्णय अतिरिक्त अभियुक्तों को सम्मन करने और संयुक्त विचारण आयोजित करने का है, तो विचारण नए सिरे से आयोजित किया जाएगा और नई कार्यवाही की जाएगी।

(xii) यदि, उस परिस्थिति में, निर्णय पहले बताए अनुसार सम्मन किए गए अभियुक्त के मामले में अलग विचारण आयोजित करने का है;

(क) मुख्य मामले का निर्णय दोषसिद्धि और सजा की घोषणा करके किया जा सकता है और फिर सम्मन किए गए अभियुक्त के विरुद्ध नए सिरे से आगे बढ़ें।

(ख) दोषमुक्ति में मुख्य मामले में उस आशय का आदेश पारित किया जाएगा और फिर सम्मन किए गए अभियुक्त के विरुद्ध नए सिरे से आगे बढ़ें।

19. वर्तमान मामले के तथ्य माननीय सर्वोच्च न्यायालय के **सुखपाल सिंह खैरा** (उपरोक्त) में ऐतिहासिक निर्णय से पूर्ण रूप से आच्छादित हैं और उपरोक्त चर्चा के आलोक में, धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन शक्तियों के प्रयोग में विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध पारित सम्मन आदेश, मुख्य एसटी संख्या 84 वर्ष 2006 में पहले ही मुकदमे का सामना कर चुके अभियुक्त व्यक्तियों की दोषसिद्धि और सजा के परिणामस्वरूप मुकदमे के समापन के बाद, बने रहने योग्य नहीं है और इस प्रकार पुष्टि नहीं की जा सकती, आक्षेपित सम्मन आदेश **सुखपाल सिंह खैरा** (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि के विपरीत है, जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है और इस प्रकार विधि में दोषपूर्ण है, परिणामस्वरूप आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

20. धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध पारित आक्षेपित सम्मन आदेश अपास्त किया जाता है। पुनरीक्षण तदनुसार स्वीकार किया जाता है।

(2025) 2 ILRA 415

पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार

आपराधिक पक्ष

दिनांक: 07.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति राम मनोहर नारायण मिश्रा

आपराधिक पुनरीक्षण संख्या-3040 सन् 2023

नगेंद्र सिरौही

...पुनरीक्षणकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...विपक्षी

पुनरीक्षणकर्ता के अधिवक्ता:

चंदन शर्मा, राहुल अग्रवाल

विपक्षी के अधिवक्ता:

शा.अधि., संजीव कुमार

आपराधिक विधि-भारतीय दंड संहिता, 1860-धारा 302 और 307-दंड प्रक्रिया संहिता, 1973, धारा 439-जमानत-द्वितीय जमानत आवेदन-लंबी अवधि तक कारावास-विचारण में विलंब-भारत के संविधान का अनुच्छेद 21-अभियुक्त 7 वर्ष और 9 माह से अधिक समय से हिरासत में-सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष धारा 319 दं.प्र.सं. के अधीन सम्मन आदेश को चुनौती की लंबितता के कारण विचारण रुका रहा-16 अभियोजन साक्षियों में से केवल 3 का परीक्षण हुआ-निकट भविष्य में विचारण समाप्त होने की कोई संभावना नहीं-निर्णय: विचारण में प्रगति के बिना लंबी अवधि तक हिरासत अनुच्छेद 21 के अधीन शीघ्र विचारण के अधिकार का उल्लंघन है-जमानत को दंड के रूप में नहीं मना किया जाना चाहिए-जमानत स्वीकृत की गई। (प्रस्तर 16, 17 और 18)

निर्णय:

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कल्याण देव चौधरी बनाम रीता डे चौधरी नी नंदी, AIR (2017) SC 2383 में डॉ. कुलभूषण कुमार बनाम राज कुमारी व अन्य, (1970) 3 SCC 129 के पूर्ववर्ती निर्णय पर भरोसा करते हुए यह निर्णीत किया कि पति के शुद्ध वेतन का 25% प्रतिवादी-पत्नी को भरण-पोषण के रूप में दिया जाना

उचित और न्यायसंगत होगा। पत्नी को दिया गया स्थायी गुजारा भत्ता पक्षकारों की स्थिति और पति की भरण-पोषण देने की क्षमता के अनुरूप होना चाहिए। भरण-पोषण हमेशा मामले की तथ्यात्मक स्थिति पर निर्भर करता है और न्यायालय विभिन्न कारकों के आधार पर भरण-पोषण के दावे को निर्धारित करने में न्यायोचित होगा। इसलिए, विद्वान अवर न्यायालय द्वारा दिए गए तथ्यों के व्यापक निष्कर्षों में हस्तक्षेप किए बिना, आवेदक को दिए गए भरण-पोषण की राशि को निम्नानुसार संशोधित किया जा रहा है। (प्रस्तर 16)

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के प्रतिद्वंद्वी तर्कों, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता पर विचार करते हुए, यह नहीं कहा जा सकता कि अवर न्यायालय के समक्ष रजनीश बनाम नेहा व अन्य (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनिवार्य निर्देशों का अनुपालन न करने के कारण, आक्षेपित निर्णय व आदेश विधि में दूषित हो जाता है। इस न्यायालय ने पुनरीक्षण स्तर में प्रकरण के अंतिम निस्तारण में किसी अतिरिक्त विलंब से बचने के लिए रजनीश बनाम नेहा व अन्य (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनिवार्य निर्देशों का अनुपालन सुनिश्चित किया है। संपत्तियों और देनदारियों के शपथपत्र को दाखिल करने का उद्देश्य भरण-पोषण मामले में पक्षकारों की स्थिति, उनकी संपत्तियों, देनदारियों और आर्थिक स्थिति को स्पष्ट करना है, जिससे न्यायालय सत्य का पता लगाने और मामले में न्यायसंगत निर्णय लेने की स्थिति में हो सके। (प्रस्तर 17)

पुनरीक्षण आवेदन निरस्त। (ई-14)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

1. रजनीश बनाम नेहा व अन्य, 2021 (1) JIC 1 (SC)
2. कल्याण देय चौधरी बनाम रीता डे चौधरी नी नंदी, AIR (2017) SC 2383
3. डॉ. कुलभूषण कुमार बनाम राज कुमारी व अन्य, (1970) 3 SCC 129

(माननीय न्यायमूर्ति राम मनोहर नारायण मिश्रा द्वारा उद्धोषित)

1. वर्तमान आपराधिक पुनरीक्षण दिनांक 09.05.2023 को विद्वान अपर प्रधान न्यायाधीश पारिवारिक न्यायालय, अमरोहा द्वारा धारा 125 दं.प्र.सं. के अधीन भरण-पोषण वाद संख्या-326 सन् 2021, थाना राजतपुर, जनपद अमरोहा में पारित निर्णय व आदेश के विरुद्ध योजित किया गया है। आक्षेपित आदेश द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने आवेदिका श्रीमती शालिनी को पुनरीक्षणकर्ता से आवेदन दाखिल करने की तिथि 15.04.2021 से निर्णय की तिथि तक रु.8,000/- की दर से और उसके पश्चात् रु.15,000/- प्रति माह की दर से भरण-पोषण प्रदान किया है। आक्षेपित आदेश में यह भी निर्देशित किया गया है कि भरण-पोषण प्रत्येक कैलेंडर माह की 10 तिथि को देय होगा। मूल आवेदक को अपना बैंक खाता प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया है, जिससे प्रतिवादी बैंक खाते में भरण-पोषण की राशि जमा कर सके। आक्षेपित निर्णय में यह भी स्पष्ट किया गया है कि आवेदक

द्वारा किसी भी न्यायालय से भरण-पोषण के रूप में प्राप्त कोई भी राशि निर्णय में भरण-पोषण के प्रति समायोजित की जाएगी।

2. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता और राज्य-प्रतिवादी के लिए विद्वान अ.शा.अधि. को सुना और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया। अभिलेख के अवलोकन से प्रतीत होता है कि वर्तमान पुनरीक्षण के लंबित रहने की अवधि में इस न्यायालय ने आदेश दिनांक 12.10.2023 के द्वारा पुनरीक्षणकर्ता और प्रतिवादी संख्या 2 को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **रजनीश बनाम नेहा व अन्य, 2021 (1) JIC 1 (SC)** के निर्णय में निर्धारित प्रोफार्मा में संपत्तियों और देनदारियों से संबंधित अपने-अपने शपथपत्र दाखिल करने का निर्देश दिया था।

3. पुनरीक्षणकर्ता ने दिनांक 24.04.2024 के पूरक शपथपत्र के माध्यम से संपत्तियों और देनदारियों से संबंधित शपथपत्र दाखिल किया है। प्रतिवादी संख्या 2 ने भी दिनांक 05.11.2023 को संपत्तियों और देनदारियों से संबंधित अपना शपथपत्र दाखिल किया है। इस न्यायालय ने दिनांक 09.07.2024 को एक आदेश पारित किया, जो निम्नानुसार है:-

*"विपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने कहा है कि पत्नी के पक्ष में प्रदत्त भरण-पोषण का भुगतान पति द्वारा नहीं किया गया है, जो लगभग रु.4,50,000/- की बकाया में है।
अगली सुनवाई से पहले भरण-पोषण की बकाया राशि का निश्चित रूप से भुगतान किया जाए।
इसके अलावा, पुनरीक्षणकर्ता पति को अपनी वेतन पर्ची दाखिल करने का निर्देश दिया जाता है।
यह वाद 7 अगस्त, 2024 को नए वाद के रूप में सूचीबद्ध किया जाए।"*

4. पुनरीक्षणकर्ता ने एसएलपी (विशेष अनुमति याचिका) के माध्यम से माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष इस आदेश को चुनौती दी, जो डायरी संख्या S 34992/2024 के रूप में पंजीकृत हुई। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिनांक 08.11.2024 को निम्नलिखित टिप्पणियों के साथ उक्त एसएलपी को निस्तारित किया:-
*"हम इस विशेष अनुमति याचिका का निस्तारण यहां याचिकाकर्ता को या तो आक्षेपित आदेश में संशोधन की मांग करने या पुनरीक्षण याचिका के शीघ्र निस्तारण की मांग करने की स्वतंत्रता देते हुए करते हैं।
यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि यदि याचिकाकर्ता द्वारा ऐसा अनुरोध किया जाता है, तो उस पर शीघ्रता से और विधि के अनुसार विचार किया जाएगा।
लंबित आवेदन, यदि कोई हो, निस्तारित माना जाएगा।"*

5. अब इस स्तर पर पक्षकार सहमत हैं कि पुनरीक्षण का संबंधित पक्षकारों के तर्क सुनने के बाद गुणागुण के आधार पर निस्तारण किया जाए।

6. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यह स्वीकृत तथ्य है कि विद्वान अवर न्यायालय ने **रजनीश बनाम नेहा व अन्य** (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों का अनुपालन किए बिना प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा दाखिल आवेदन का निर्णय कर दिया, जिसमें यह निर्देशित किया गया है कि पति-पत्नी, या नागरिक संघ में साझेदार, लिव-इन रिलेशनशिप, सामान्य विधि विवाह के रूप में भरण-पोषण का दावा करने वाले पक्षकार को एक अनिवार्य आवश्यकता के रूप में सीमित याचिका के साथ अंतरिम भरण-पोषण के लिए एक संक्षिप्त आवेदन, संपत्तियों और देनदारियों से संबंधित शपथपत्र के साथ संबंधित न्यायालय के समक्ष दाखिल करना आवश्यक है।

7. दोनों पक्षकारों द्वारा दाखिल याचिकाओं और प्रकटीकरण शपथपत्रों के आधार पर, न्यायालय अंतरिम चरण में भरण-पोषण के रूप में दी जाने वाली अनुमानित राशि का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन करने की स्थिति में होगा।

(क) इस निर्णय के परिशिष्ट I, II और III में संलग्न संपत्तियों और देनदारियों के प्रकटीकरण शपथपत्र, जैसा भी हो, पूरे देश में संबंधित पारिवारिक न्यायालय/जिला न्यायालय/मजिस्ट्रेट न्यायालय के समक्ष लंबित कार्यवाही सहित सभी भरण-पोषण कार्यवाहियों में पक्षकारों द्वारा दाखिल किया जाएगा;

(ख) भरण-पोषण का दावा करने वाले आवेदक को संपत्तियों के प्रकटीकरण शपथपत्र के साथ एक संक्षिप्त आवेदन दाखिल करना होगा;

(ग) प्रतिवादी को अधिकतम चार सप्ताह की अवधि के भीतर प्रकटीकरण शपथपत्र के साथ उत्तर प्रस्तुत करना होगा। न्यायालय प्रतिवादी को संपत्तियों और देनदारियों के प्रकटीकरण शपथपत्र को प्रस्तुत करने के लिए दो से अधिक अवसर प्रदान नहीं कर सकते।

8. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ताओं ने प्रस्तुत किया कि माननीय न्यायालय ने अतिव्यापी क्षेत्राधिकार के मुद्दे को भी संबोधित किया और माना कि अतिव्यापी क्षेत्राधिकार के मुद्दे को दूर करने और विभिन्न कार्यवाहियों में परस्पर विरोधी आदेशों से बचने के लिए, इस संबंध में निर्देश जारी करना आवश्यक हो गया है, जिससे पूरे देश में पारिवारिक न्यायालयों/जिला न्यायालयों/मजिस्ट्रेट न्यायालयों द्वारा अपनाई जाने वाली प्रथा में एकरूपता हो। हम निर्देश देते हैं कि जहां किसी पक्षकार द्वारा विभिन्न अधिनियमों के अधीन भरण-पोषण के उत्तरोत्तर दावे किए जाते हैं, वहां न्यायालय बाद की कार्यवाही में कोई और राशि देय है या नहीं, यह निर्धारित करते समय पूर्व की कार्यवाही/कार्यवाहियों में दी गई राशि के समायोजन पर विचार करेगा; आवेदक के लिए बाद की कार्यवाही में पूर्व की कार्यवाही और उसमें पारित आदेशों का खुलासा करना अनिवार्य बनाया जाता है।

9. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामले में भी मूल आवेदक/पुनरीक्षणकर्ता ने घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 के प्रावधानों के अधीन शिकायत

दर्ज कराई है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ विपक्षी, पति से भरण-पोषण का भी दावा किया गया है। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि यद्यपि यह स्वीकृत मामला है कि किसी भी पक्षकार ने अवर न्यायालय के समक्ष संपत्तियों और देनदारियों के प्रकटीकरण का शपथपत्र दाखिल नहीं किया था, फिर भी **रजनीश बनाम नेहा व अन्य** (उपरोक्त) में माननीय शीर्ष न्यायालय के दिशानिर्देशों के अनुसार पक्षकारों को संपत्तियों और देनदारियों के प्रकटीकरण के अपने शपथपत्र दाखिल करने का निर्देश देना अवर न्यायालय के लिए अनिवार्य था।

10. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि प्रतिवादी संख्या 2 एक योग्य महिला है, उसने एम.कॉम., बी.एड. किया है और सरकारी स्कूलों में नियुक्ति के लिए टीईटी परीक्षा उत्तीर्ण की है, पुनरीक्षणकर्ता की जानकारी के अनुसार, वह घर पर ट्यूशन देती है और कोचिंग संस्थानों में पढ़ाती है, जिससे वह रु. 1 लाख प्रति माह कमाती है। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि पुनरीक्षणकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष दाखिल संपत्तियों और देनदारियों के प्रकटीकरण के अपने शपथपत्र में कुछ भी छिपाया नहीं है और कहा है कि वह इलेक्ट्रॉनिक और संचार में बी.टेक. है और उसका मासिक वेतन रु. 78,400/- है, उसने इस न्यायालय के समक्ष शपथपत्र में अपनी वेतन पर्ची भी संलग्न की है।

11. उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि पुनरीक्षणकर्ता को अवर न्यायालय के समक्ष सुनवाई का उचित अवसर नहीं दिया गया, लेकिन वह कुछ तारीखों पर अपरिहार्य कारणों से प्रति-परीक्षा के लिए उपस्थित नहीं हो सका और विद्वान अवर न्यायालय ने उसकी प्रति-परीक्षा बंद कर दी और जब पुनरीक्षणकर्ता ने न्यायालय के समक्ष अपनी प्रति-परीक्षा खोलने के बाद एक आवेदन दाखिल किया, तो उसे निरस्त कर दिया गया।

12. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि पुनरीक्षणकर्ता ने धारा 125 दं.प्र.सं. के अधीन वर्तमान याचिका दाखिल की है और अमरोहा में पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध अन्य आपराधिक कार्यवाही भी शुरू की है, जबकि वह गाजियाबाद में रहती है, केवल पुनरीक्षणकर्ता को परेशान करने के लिए। वास्तव में पुनरीक्षणकर्ता और प्रतिवादी संख्या 2 दोनों गाजियाबाद में रह रहे हैं और पुनरीक्षणकर्ता के लिए गाजियाबाद में प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा उसके विरुद्ध शुरू की गई विधिक कार्यवाही को जारी रखना सुविधाजनक होगा। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि यह कहना गलत है कि पुनरीक्षणकर्ता ने पुनरीक्षणकर्ता(?) का भरण-पोषण करने में उपेक्षा की है, पक्षकारों का विवाह दिनांक 04.08.2014 को जिला पुणे, महाराष्ट्र में संपन्न हुआ था और विशेष विवाह अधिकारी द्वारा विवाह प्रमाण पत्र जारी किया गया था, विवाह प्रमाण पत्र की प्रति, शपथपत्र के परिशिष्ट संख्या 1 के रूप में दाखिल की गई है। विवाह बिना दहेज का था, विवाह के तुरंत बाद प्रतिवादी संख्या 2 ने पुनरीक्षणकर्ता पर उसकी महंगी महंगी मौद्रिक मांगों को पूरा करने के लिए दबाव डालना शुरू कर दिया। विवाह के बाद प्रतिवादी संख्या 2 गर्भवती हो गई, लेकिन उसकी लापरवाही और अनुचित जीवन शैली के कारण जटिलताएं उत्पन्न हुईं, जिसके परिणामस्वरूप गर्भपात हो गया। प्रतिवादी संख्या 2 पुनरीक्षणकर्ता से पैसे की मांग करती थी, जो उसने अपने माता-पिता को दिया और जब पुनरीक्षणकर्ता ने उसे मना कर दिया तो वह आक्रामक हो गई और उससे दुर्व्यवहार करने लगी और समय के साथ प्रतिवादी संख्या 2 के आपत्तिजनक आचरण के कारण पक्षकारों के बीच वैवाहिक कलह हो गई।

13. पुनरीक्षणकर्ता ने कभी अपनी पत्नी के साथ दुर्यवहार नहीं किया और न ही दहेज की कोई मांग की गई। यह कहना गलत है कि उसके साथ वैवाहिक क्रूरता की गई। अवर न्यायालय द्वारा दी गई राशि अत्यधिक और अनुचित है क्योंकि इसके लिए कोई आधार नहीं दिया गया है। पुनरीक्षणकर्ता सचेत रूप से वैवाहिक विवाद को सुलझाने के लिए तैयार और तत्पर है, लेकिन प्रतिवादी संख्या 2 उसके साथ सहयोग करने के लिए आगे नहीं आ रही है जब उसने पक्षकारों के बीच वैवाहिक मुद्दे को सुलझाने का प्रयास किया।

14. इसके विपरीत, प्रतिवादी संख्या 2 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यह स्वीकृत तथ्य है कि पुनरीक्षणकर्ता का मासिक वेतन रु.78,000/- से अधिक है, क्योंकि निर्णय व आदेश में दी गई राशि पुनरीक्षणकर्ता की मासिक आय के 25% से कम है। इसलिए, किसी भी तरीके से आक्षेपित निर्णय और आदेश में भरण-पोषण के रूप में दी गई राशि अत्यधिक, अनुचित या अन्यायपूर्ण नहीं कही जा सकती।

15. प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि प्रतिवादी संख्या 2 को पुनरीक्षणकर्ता द्वारा दिए गए दुर्यवहार, उत्पीड़न और यातना के कारण अपने माता-पिता के घर आश्रय लेने के लिए मजबूर होना पड़ा। वह एक योग्य महिला है, लेकिन वह कामकाजी महिला नहीं है, उसके पास आय का कोई स्वतंत्र स्रोत नहीं है और वह अपने आवश्यक खर्चों के लिए अपने माता-पिता पर निर्भर है। प्रतिवादी संख्या 2 के पति के रूप में पुनरीक्षणकर्ता का दायित्व है कि वह उसका भरण-पोषण करे, लेकिन उसने उसे भरण-पोषण देने में उपेक्षा की है, जिसके परिणामस्वरूप माननीय न्यायालय के समक्ष धारा 125 दं.प्र.सं. के अधीन वर्तमान याचिका दाखिल की गई।

16. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **कल्याण देव चौधरी बनाम रीता डे चौधरी नौ नंदी**, AIR (2017) SC 2383 में **डॉ. कुलभूषण कुमार बनाम राज कुमारी व अन्य**, (1970) 3 SCC 129 के पूर्ववर्ती निर्णय पर भरोसा करते हुए यह निर्णीत किया कि पति के शुद्ध वेतन का 25% प्रतिवादी-पत्नी को भरण-पोषण के रूप में दिया जाना उचित और न्यायसंगत होगा। पत्नी को दिया गया स्थायी गुजारा भत्ता पक्षकारों की स्थिति और पति की भरण-पोषण देने की क्षमता के अनुरूप होना चाहिए। भरण-पोषण हमेशा मामले की तथ्यात्मक स्थिति पर निर्भर करता है और न्यायालय विभिन्न कारकों के आधार पर भरण-पोषण के दावे को निर्धारित करने में न्यायोचित होगा। इसलिए, विद्वान अवर न्यायालय द्वारा दिए गए तथ्यों के व्यापक निष्कर्षों में हस्तक्षेप किए बिना, आवेदक को दिए गए भरण-पोषण की राशि को निम्नानुसार संशोधित किया जा रहा है।

17. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के प्रतिद्वंद्वी तर्कों, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता पर विचार करते हुए, यह नहीं कहा जा सकता कि अवर न्यायालय के समक्ष **रजनीश बनाम नेहा व अन्य (उपरोक्त)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनिवार्य निर्देशों का अनुपालन न करने के कारण, आक्षेपित निर्णय और आदेश विधि में दूषित हो जाता है। इस न्यायालय ने पुनरीक्षण चरण में मामले के अंतिम निस्तारण में किसी भी और विलंब से बचने के लिए **रजनीश बनाम नेहा व अन्य (उपरोक्त)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनिवार्य निर्देशों का अनुपालन सुनिश्चित किया है। संपत्तियों और देनदारियों के प्रकटीकरण का शपथपत्र

दाखिल करने का उद्देश्य भरण-पोषण मामले में पक्षकारों की स्थिति, उनकी संपत्तियों, देनदारियों और आर्थिक स्थिति को स्पष्ट करना है, जिससे न्यायालय सत्य का पता लगाने और मामले में न्यायसंगत निर्णय लेने की स्थिति में हो सके।

18. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के तर्कों पर विचारपूर्वक विचार करने और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री की सूक्ष्म जांच के बाद, मुझे विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश में कोई अवैधता, अनियमितता या विकृति नहीं मिलती है, पुनरीक्षण योग्यता से रहित है और **निरस्त** किए जाने योग्य है।

19. हालांकि, पुनरीक्षणकर्ता को किस्तों में भरण-पोषण की बकाया राशि का भुगतान करने की छूट दी जाती है, यह निर्देशित किया जाता है कि आवेदन दाखिल करने की तिथि से आक्षेपित निर्णय की तिथि तक के भरण-पोषण की बकाया राशि का भुगतान तीन मासिक किस्तों में किया जाएगा, और पहली किस्त 27.02.2025 को देय होगी व अन्य दो किस्तें बाद के महीनों में देय होंगी।

20. पुनरीक्षणकर्ता नियमित रूप से आक्षेपित आदेश में निर्देशित अनुसार रु.15,000/- प्रति माह की दर से निर्णयोत्तर भरण-पोषण का भुगतान करेगा और करता रहेगा।

(2025) 2 ILRA 419

मूल क्षेत्राधिकार

आपराधिक पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 06.02.2025

समक्ष

माननीया न्यायमूर्ति सुश्री नंद प्रभा शुक्ला

स्थानांतरण आवेदन (आपराधिक) संख्या-672/2024

श्रीमती कविता चौधरी

...आवेदक

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

.....विपक्षी

आवेदक के अधिवक्ता:

मोहित कुमार जायसवाल, नसीरुज्जमान

विपक्षी के अधिवक्ता:

आदित्य गुप्ता, शा.अधि.

आपराधिक विधि-दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 407-साक्षी संरक्षण योजना, 2018- इस आधार पर स्थानांतरण आवेदन कि प्रतिवादी व्यवसायरत अधिवक्ता हैं और आवेदक एक गरीब विधवा होने के कारण उनकी धमकी से आशंकित है और अपने प्रकरण की पैरवी के लिए किसी सक्षम अधिवक्ता को नियुक्त करने में असमर्थ है-निर्देश जारी किया गया कि यदि आवेदक/प्रथम सूचनाकर्ता या कोई भी साक्षी माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा महेंद्र चावला व अन्य बनाम भारत संघ व अन्य, (2019) 14 SCC 615 में दिए गए निर्देशों के आलोक में साक्षी संरक्षण योजना, 2018 के अधीन संरक्षण मांगते हुए आवेदन योजित करके संबंधित अधिकारियों के पास जाता है, तो स्वतंत्र और निष्पक्ष सुनवाई के लिए, संबंधित अधिकारी यह सुनिश्चित करेंगे कि मुकदमे की समाप्ति तक आवेदक और साक्षियों को पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की जाए। **(प्रस्तर-7) (ई-15)**

उद्धृत निर्णयों की सूची:

महेंद्र चावला व अन्य बनाम भारत संघ व अन्य, (2019) 14 SCC 615

(माननीया न्यायमूर्ति सुश्री नंद प्रभा शुक्ला द्वारा उद्धोषित)

1. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता, श्री नसीरुज्जमान, विपक्षी संख्या 2 से 4 के लिए श्री आदित्य गुप्ता की सहायता से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री गोपाल चतुर्वेदी और राज्य के विद्वान अ.शा.अधि., श्री रतन सिंह को सुना और रिकॉर्ड का अवलोकन किया।
2. प्रस्तुत आवेदन, आवेदक द्वारा दं.प्र.सं.की धारा 407 के अधीन योजित किया गया है, जिसमें मुकदमा अपराध संख्या-547/2023, धारा 302/34, 120बी/302 भा.दं.सं. और शस्त्र अधिनियम की धारा 3/25/27, थाना सिहानी गेट, जिला गाजियाबाद से उत्पन्न सत्र परीक्षण संख्या-30/2024 (राज्य बनाम नितिन डागर व अन्य), जो अपर सत्र न्यायाधीश, न्यायालय संख्या-13, गाजियाबाद में लंबित है, को अलीगढ़ के किसी अन्य सक्षम न्यायालय में स्थानांतरित करने की मांग की गई है, मुख्यतः इस आधार पर कि प्रतिवादी संख्या 2 और 3 व्यवसायरत अधिवक्ता हैं और आवेदक एक गरीब विधवा होने के कारण उनकी धमकी से आशंकित है और अपने प्रकरण की पैरवी के लिए किसी सक्षम अधिवक्ता को नियुक्त करने में असमर्थ है।
3. आवेदक के लिए विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि विपक्षी संख्या-2, नितिन डागर द्वारा जेल से धमकियां दी गई हैं जबकि सह-अभियुक्त विपक्षी संख्या-3, अमित डागर और विपक्षी संख्या-4 अनुज @ पालू ने जेल के बाहर से धमकियां दी हैं। अमित डागर और नितिन डागर गाजियाबाद में व्यवसायरत अधिवक्ता हैं, जिसके कारण आवेदक किसी सक्षम अधिवक्ता को नियुक्त करने में सक्षम नहीं है। इसके अलावा, यह दावा किया गया है कि आवेदक एक गरीब विधवा होने के कारण अपने पिता विजय सिंह और अपने भाई दिनेश सिंह के साथ अलीगढ़ में रह रही है, जो उक्त सत्र परीक्षण में चक्षुदर्शी साक्षी है। आवेदक को अपने और अपने

परिवार की जान और माल की आशंका है और उसने पुलिस अधिकारियों से सुरक्षा गार्ड प्रदान करने के लिए भी संपर्क किया है।

4. इस संबंध में, 17.01.2025 को संबंधित पीठासीन अधिकारी से रिपोर्ट मांगी गई थी।

5. उसी के अनुसरण में, जिला न्यायाधीश, गाजियाबाद द्वारा पृष्ठांकित संबंधित पीठासीन अधिकारी की रिपोर्ट दिनांक 30.01.2025 प्राप्त हुई है। धारा 407 दं.प्र.सं. के अधीन आवेदन, आवेदक द्वारा योजित किया गया है, जिसमें मुकदमा अपराध संख्या-547/2023, धारा 302/34, 120बी/302 भा.दं.सं. और शस्त्र अधिनियम की धारा 3/25/27, थाना सिहानी गेट, जिला गाजियाबाद से उत्पन्न सत्र परीक्षण संख्या-30/2024 (राज्य बनाम नितिन डागर व अन्य) व अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, न्यायालय संख्या-13, गाजियाबाद में लंबित प्रकरण को अलीगढ़ के किसी अन्य सक्षम न्यायालय में स्थानांतरित करने की मांग की गई है, मुख्य रूप से इस आधार पर कि प्रतिवादी संख्या 2 और 3 व्यवसायरत अधिवक्ता हैं और आवेदक एक गरीब विधवा होने के कारण उनसे खतरे की आशंका में है तथा अपने प्रकरण को लड़ने के लिए किसी सक्षम अधिवक्ता को नियुक्त करने में असमर्थ है। आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि विपक्षी संख्या 2 नितिन डागर द्वारा जेल से धमकियां दी गई हैं जबकि सह-अभियुक्त विपक्षी संख्या 3 अमित डागर और विपक्षी संख्या 4 अनुज उर्फ पालू ने जेल के बाहर से धमकियां दी हैं। अमित डागर और नितिन डागर गाजियाबाद में व्यवसायरत अधिवक्ता हैं और इस कारण आवेदक किसी सक्षम अधिवक्ता को नियुक्त करने में सक्षम नहीं है। इसके अलावा, यह भी कहा गया है कि आवेदक एक गरीब विधवा होने के नाते, अपने पिता विजय सिंह और अपने भाई दिनेश सिंह के साथ अलीगढ़ में रह रही है, जो उक्त सत्र परीक्षण में चक्षुदर्शी साक्षी हैं। आवेदक को अपने जीवन और संपत्ति के लिए सशंकित है और उसने पुलिस अधिकारियों से सुरक्षा गार्ड प्रदान करने के लिए भी संपर्क किया है। गाजियाबाद से प्राप्त रिपोर्ट में बताया गया है कि तीन नामित अभियुक्तों में से दो बार के कार्यकारी सदस्य हैं। यह भी सूचित किया गया है कि आवेदक श्रीमती कविता चौधरी को पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की गई थी, जिनको पहले ही अभि.सा.-1 के रूप में परीक्षित किया जा चुका है और उनके साक्ष्य की रिकॉर्डिंग के दौरान गवाहों को सुरक्षा प्रदान करने का आश्वासन दिया गया है।

6. इसके विपरीत, विपक्षी संख्या 2 से 4 के विद्वान अधिवक्ता ने उक्त प्रार्थना का विरोध किया है लेकिन मुकदमे की कार्यवाही में सहयोग करने के लिए सहमत हुए हैं।

7. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने और संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद, यह पता चलता है कि मुकदमा साक्ष्य के चरण में है और आवेदक/सूचनाकर्ता को अभि.सा.-1 के रूप में साक्ष्य की रिकॉर्डिंग के समय पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की गई थी और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि आवेदक ने प्रतिवादी अभियुक्तों से प्राप्त धमकी की किसी वास्तविक आशंका को रिकॉर्ड पर नहीं लाया है, लेकिन पक्षकारों की सुविधा और न्याय के हित में यह प्रावधान किया जाता है कि यदि आवेदक/प्रथम सूचनाकर्ता या कोई भी साक्षी स्वतंत्र और निष्पक्ष सुनवाई के लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **महेंद्र चावला व अन्य**

बनाम भारत संघ व अन्य, (2019) 14 SCC 615 में दिए गए निर्देशों के आलोक में साक्षी संरक्षण योजना, 2018 के अधीन संरक्षण मांगते हुए आवेदन करके संबंधित अधिकारियों के पास जाता है, तो संबंधित अधिकारी यह सुनिश्चित करेंगे कि मुकदमे की समाप्ति तक आवेदक और गवाहों को पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की जाए।

8. उपरोक्त निर्देशों के साथ, प्रस्तुत आवेदन निस्तारित किया जाता है।

(2025) 2 ILRA 421

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 14.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अताउर रहमान मसूदी

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी

विशेष अपील संख्या-70/2025

प्रशांत कुमार मिश्रा व अन्य

...याचीगण

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादीगण

याचीगण के अधिवक्ता:

मोहम्मद मंसूर, मोहम्मद दानिश

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि., रिपु दमन शाही

ए. सेवा विधि-यूपी पुलिस रेडियो अधीनस्थ सेवा नियम, 2015 - भाग IV - विनियम 8 (सी)-ऑपरेटर/हेड ऑपरेटर (यांत्रिक) के पद-योग्यता-विज्ञापन में तीन वर्षीय डिप्लोमा की आवश्यकता-याचीगण, स्नातक डिग्री धारक होने के कारण, स्वयं को योग्य मानते हैं क्योंकि यह उच्च योग्यता है-अनुमति-निर्णीत किया गया, सार्वजनिक पदों पर किसी भी भर्ती को भर्ती नियमों में निहित प्रावधानों के अनुसार सख्ती से किया जाना चाहिए-स्नातक डिग्री धारक दिनांक 06.01.2022 की भर्ती अधिसूचना के अनुसरण में नियुक्ति की मांग के लिए पात्र नहीं हैं। (प्रस्तर 6, 19 और 35)

बी. सेवा विधि-अभ्यर्थन-निरस्तीकरण-आवेदन पत्र जमा करने के दौरान झूठी जानकारी दी गई-प्रभाव-निर्णीत किया गया, याचीगण ने अपनी योग्यता के बारे में झूठी जानकारी प्रस्तुत करके स्वयं प्रश्नगत पदों के चयन के लिए आवेदन किया, जिससे उनका अभ्यर्थन निरस्त होने योग्य हो जाता है। (प्रस्तर 25)

सी. सेवा विधि-योग्यता-समतुल्यता संबंधित बिन्दु-इसे निर्णीत करने की क्षमता-सार्वजनिक पदों पर नियुक्ति के उद्देश्य से योग्यता की समतुल्यता का निर्णय केवल नियोक्ता द्वारा लिया जा सकता है। वर्तमान मामले में नियोक्ता राज्य सरकार है-भर्ती बोर्ड को योग्यताओं की समतुल्यता के संबंध में कोई निर्णय लेने का अधिकार नहीं है। (प्रस्तर 21 और 39)

डी. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 -प्रकृति-यह नियमों पर किस सीमा तक अधिभावी है-निर्णीत किया गया, यह नीति भविष्य में शिक्षा प्रणाली में सुधार करने के लिए एक विजन अभिलेख है-केवल एक नीति भर्ती नियमों के विशिष्ट प्रावधानों पर अधिभावी नहीं हो सकती और जब तक भर्ती नियमों में संशोधन नहीं किया जाता। (प्रस्तर 32 और 33)

विशेष अपील आंशिक रूप से स्वीकृत। (ई-1)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

1. दीपक सिंह व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य; 2020 (1) ALJ 596: 2019 SCC OnLine All
2. महाराष्ट्र लोक सेवा आयोग बनाम संदीप श्रीराम वराडे; (2019) 6 SCC 362

(माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी द्वारा उद्धोषित)

1. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता, श्री मोहम्मद मंसूर और श्री मोहम्मद दानिश की सहायता से वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री जे. एन. माथुर को, राज्य/विपक्षी संख्या 1 से 4 की ओर से उपस्थित अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता, श्री प्रफुल्ल कुमार यादव की सहायता से विद्वान मुख्य स्थायी अधिवक्ता, श्री शैलेंद्र कुमार सिंह को, विपक्षी संख्या 5 से 19 के लिए विद्वान अधिवक्ता, श्री रत्नेश चंद्र को सुना और अभिलेखों का अवलोकन किया।

2. इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियम, 1952 के अध्याय VIII, नियम 5 के अधीन योजित वर्तमान अंतर-न्यायालीय अपील के माध्यम से अपीलकर्ताओं ने दिनांक 08.01.2025 के एक निर्णय व आदेश की वैधता को चुनौती दी है, जो इस न्यायालय की माननीय एकल न्यायमूर्ति पीठ द्वारा रिट-ए संख्या 4610/2024: रवि कुमार शुक्ला व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य में पारित किया गया था, जिसे रिट-ए संख्या 7284/2024: प्रभात कुमार पांडेय बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य के साथ निर्णीत किया गया था।

3. उपरोक्त रिट याचिका, 15 याचीकर्ताओं द्वारा योजित की गई थी, जिन्हें इस विशेष अपील में विपक्षी संख्या 5 से 19 के रूप में संयोजित किया गया है, अपीलकर्ताओं के विरुद्ध, जो रिट याचिका में विपक्षी संख्या 1 से 4 थे, जिसमें दिनांक 23.04.2024 को यू.पी. पुलिस भर्ती और पदोन्नति बोर्ड (जिसे इसके बाद 'भर्ती बोर्ड' कहा जाएगा) की बैठक में पारित एक संकल्प की वैधता को चुनौती दी गई थी, जिसके द्वारा भर्ती बोर्ड ने अपने पिछले संकल्प दिनांक 25.08.2021 में संशोधन किया था। दिनांक 25.08.2021 के पूर्व संकल्प में यह प्रावधान किया गया था कि 4 वर्षीय स्नातक डिग्री धारक व्यक्ति भी ऑपरेटर/हेड ऑपरेटर (यांत्रिक) के पद के लिए पात्र होने चाहिए और इस निर्णय को दिनांक 23.04.2024 के संकल्प द्वारा निरस्त कर दिया गया था।

4. संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि भर्ती बोर्ड ने ऑपरेटर/हेड ऑपरेटर (यांत्रिक) के 936 पदों पर सीधी भर्ती करने के लिए दिनांक 06.01.2022 का विज्ञापन जारी किया था। विज्ञापन में उल्लिखित शैक्षिक योग्यता इलेक्ट्रॉनिक्स/दूरसंचार/विद्युत/कंप्यूटर विज्ञान/सूचना प्रौद्योगिकी/ इंस्ट्रूमेंटेशन प्रौद्योगिकी/यांत्रिक इंजीनियरिंग में 3 वर्षीय डिप्लोमा थी, जो भारत में विधि द्वारा स्थापित किसी भी बोर्ड द्वारा प्रदान किया गया हो या सरकार द्वारा समतुल्य मानी गई किसी अन्य परीक्षा में उत्तीर्ण हो।

5. ऐसा प्रतीत होता है कि यांत्रिक इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री धारक कई उम्मीदवारों ने भी उपर्युक्त विज्ञापन के अनुसरण में अपनी योग्यता को डिप्लोमा के रूप में उल्लेख करते हुए आवेदन किया और उन्होंने लिखित परीक्षा में भाग लिया। तत्पश्चात, भर्ती बोर्ड ने दिनांक 23.04.2024 का आक्षेपित संकल्प पारित किया जिसमें कहा गया कि वह अपने पूर्व संकल्प को निरस्त कर रहा है कि 4 वर्षीय स्नातक डिग्री धारक अभ्यर्थी भी प्रश्नगत पद के लिए पात्र होंगे।

6. याचीगण ने तर्क दिया कि दिनांक 06.01.2022 के विज्ञापन जारी करने से पहले, भर्ती बोर्ड ने 25.08.2021 को आयोजित अपनी बैठक में एक निर्णय लिया था, जिसमें यह संकल्प लिया गया था कि इलेक्ट्रॉनिक्स/दूरसंचार/विद्युत/कंप्यूटर विज्ञान/सूचना प्रौद्योगिकी/इंस्ट्रूमेंटेशन प्रौद्योगिकी/ यांत्रिक इंजीनियरिंग जैसी शाखाओं में 4 वर्षीय स्नातक डिग्री धारक अभ्यर्थी चयन के लिए पात्र होंगे, क्योंकि उनके पास उच्चतर योग्यता है।

7. रिट याचिका में यह तर्क दिया गया था कि भर्ती बोर्ड द्वारा पारित दिनांक 25.08.2021 के संकल्प की प्रति, रिट याचिका योजित करने तक याचीगण के पास उपलब्ध नहीं थी। एक अभ्यर्थी विद्यासागर ने सूचना के अधिकार अधिनियम के अधीन दिनांक 01.03.2024 का एक आवेदन प्रस्तुत किया था और दिनांक 03.04.2024 के इसके उत्तर में सूचित किया गया कि अपने दिनांक 25.08.2021 के संकल्प में भर्ती बोर्ड ने निर्णय लिया था कि 4 वर्षीय स्नातक डिग्री धारक अभ्यर्थी भी पात्र होंगे।

8. राज्य ने रिट याचिका का विरोध करते हुए प्रति-शपथपत्र योजित किया, जिसमें कहा गया कि भर्ती, यूपी पुलिस रेडियो अधीनस्थ सेवा नियम, 2015 के प्रावधानों के अधीन की जा रही है; कि दिनांक 06.01.2022

की भर्ती अधिसूचना में विज्ञापित योग्यता 2015 के नियमों के नियम 8-सी में निहित प्रावधानों के अनुसार थी; कि नियमों के अनुसार योग्यताओं की समतुल्यता निर्धारित करने का अधिकार राज्य सरकार के पास है और राज्य सरकार ने उपर्युक्त नियमों के प्रयोजन के लिए स्नातक डिग्री को डिप्लोमा के समतुल्य मानने का कोई निर्णय नहीं लिया है; कि भर्ती बोर्ड के पास योग्यताओं की समतुल्यता निर्धारित करने का अधिकार नहीं है।

9. राज्य ने आगे तर्क दिया कि विज्ञापन में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि आवेदन पत्र में उल्लिखित शैक्षिक योग्यता की सटीकता, शुद्धता और समतुल्यता को सिद्ध करने के लिए अभिलेखीय साक्ष्य प्रस्तुत करना अभ्यर्थी की जिम्मेदारी होगी। सभी याचीगण ने अपने आवेदन ऑनलाइन मोड के माध्यम से प्रस्तुत किए और सभी ने अपनी शैक्षिक योग्यता को डिप्लोमा के रूप में उल्लेख किया, हालांकि उनके पास डिप्लोमा नहीं था और उनके पास स्नातक डिग्री थी। उम्मीदवारों को निर्गत प्रवेश पत्रों में यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि उन्हें अनंतिम आधार पर लिखित परीक्षा में उपस्थित होने की अनुमति दी जा रही है और अभिलेखों का परीक्षण और शारीरिक मानक परीक्षण के समय उम्मीदवारों के शैक्षिक प्रमाण पत्रों का परीक्षण किया जाना था। प्रति-शपथपत्र में आगे कहा गया है कि भर्ती अधिसूचना में भर्ती बोर्ड द्वारा पारित दिनांक 25.08.2021 के संकल्प का कोई उल्लेख नहीं है।

10. चार अपीलकर्ताओं और विपक्षी संख्या 20 से 27 सहित बारह व्यक्तियों ने, जिन्हें प्रोफार्मा रूप में पक्षकार बनाया गया है, रिट याचिका में पक्षकार बनाए जाने के लिए आवेदन योजित किया, जिस आवेदन को स्वीकार कर लिया गया। उन्होंने तर्क दिया कि उनके पास 2015 के सेवा नियमों द्वारा निर्धारित और दिनांक 06.01.2022 की भर्ती अधिसूचना में प्रकाशित योग्यता है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि इंजीनियरिंग की किसी भी शाखा में 4 वर्षीय स्नातक पाठ्यक्रम और 3 वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम पूर्णतः भिन्न हैं। उन्होंने इस न्यायालय के दीपक सिंह व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य: 2020 (1) ALJ 596: 2019 SCC OnLine All 4471 में पूर्ण पीठ के निर्णय पर भरोसा किया।

11. माननीय एकल न्यायमूर्ति ने दिनांक 08.01.2025 के आक्षेपित निर्णय व आदेश द्वारा रिट याचिका का निर्णय किया, जिसमें यह कहा गया कि: -

"16...आज जो नियम विद्यमान हैं, वे स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि केवल डिप्लोमा धारक ही हेड ऑपरेटर/हेड ऑपरेटर (मैकेनिक) के पद पर नियुक्ति के लिए पात्र हैं। बोर्ड, चयन प्रक्रिया को संचालित करने की अपनी शक्ति के प्रयोग में, एक कार्यकारी निकाय है, जिसे केवल भर्ती के प्रावधानों को लागू करने का कार्य सौंपा गया है। वे नियुक्ति प्राधिकारी या उन व्यक्तियों के नियंत्रण प्राधिकारी नहीं हैं, जिन्हें वे भर्ती करना चाहते हैं। उन्हें विभिन्न सेवा नियमों का पालन करना होगा, जो भर्ती किए जाने वाले उम्मीदवारों की पात्रता शर्तें प्रदान करते हैं। वे सेवा नियम की शर्तों से बाध्य हैं, और वे भर्ती प्रक्रिया में भाग लेने वाले उम्मीदवारों की पात्रता के संबंध में कोई स्पष्टीकरण जारी करने के लिए पूर्णतः अक्षम हैं। संबंधित भर्ती बोर्ड द्वारा पारित ऐसा आदेश आरंभ से ही मनमाना, अवैध और अधिकार क्षेत्र से बाहर था। इसके बाद, उन्होंने दिनांक 31.01.2024 के आदेश के

माध्यम से आदेश की पुष्टि की और बाद में, कुछ दिनों में उन्होंने यू-टर्न लिया और दिनांक 23.04.2024 के आक्षेपित आदेश के माध्यम से कहा कि उन्होंने दिनांक 25.08.2021 के पूर्व आदेश में काफी संशोधन किया है और यह घोषित करने के लिए आगे बढ़े कि इंजीनियरिंग की 4 वर्षीय डिग्री पाठ्यक्रम की योग्यता रखने वाले अभ्यर्थी उक्त भर्ती परीक्षा में भाग लेने के लिए पात्र नहीं होंगे। जब पुलिस भर्ती बोर्ड इस तथ्य से अवगत था कि वे पात्रता शर्तों को निर्धारित या संशोधित या परिवर्तित नहीं कर सकते थे, तब उन्हें दिनांक 23.04.2024 के आक्षेपित आदेश में डिग्री रखने वाले व्यक्तियों की पात्रता के संबंध में कोई बयान/घोषणा करने से बचना चाहिए था। केवल राज्य सरकार ही समतुल्यता से संबंधित कोई आदेश पारित कर सकती थी।

17. उपरोक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि केवल पुलिस भर्ती बोर्ड के अनधिकृत और गैरकानूनी हस्तक्षेप के कारण दिनांक 25.08.2021 का आदेश जारी करने और बाद में, 01.04.2024 और 23.04.2024 को आदेश जारी करने के कारण पूरी चयन प्रक्रिया पर सवाल उठाया गया है और अधिकांश अभ्यर्थी इस बात से अनजान हैं कि वे भाग लेने के लिए पात्र हैं या वे उक्त भर्ती परीक्षा में भाग लेने के लिए अपात्र हैं। हमें विद्वान स्थायी अधिवक्ता द्वारा सूचित किया गया है कि चयन प्रक्रिया में भाग लेने वाले 75% अभ्यर्थी इंजीनियरिंग डिग्री धारक हैं।

.....

25. इंजीनियरिंग डिग्री धारकों को पात्र घोषित करने वाला दिनांक 25.08.2021 का चयन बोर्ड का निर्णय संदिग्ध था, क्योंकि इंजीनियरिंग डिग्री और डिप्लोमा के बीच समतुल्यता का कोई भी निर्धारण केवल राज्य सरकार द्वारा उक्त नियमों के नियम 8 के अनुसार किया जाना चाहिए था। अपनी गलती को स्वीकार करते हुए, चयन बोर्ड ने आक्षेपित आदेश के माध्यम से त्रुटि को सुधारने का प्रयास किया, इंजीनियरिंग डिग्री धारकों को चयन प्रक्रिया में भाग लेने के लिए अपात्र घोषित कर दिया।

26. चयन प्रक्रिया के दौरान किया गया ऐसा अभ्यास, इसकी निष्पक्षता और पारदर्शिता की जड़ पर ही प्रहार करता है। चयन प्रक्रिया की शुरुआत के बाद उम्मीदवारों की पात्रता को निर्धारित करना या स्पष्ट करना स्वाभाविक रूप से त्रुटिपूर्ण है, क्योंकि ऐसे मामलों को विज्ञापन के प्रकाशन से पहले हल किया जाना चाहिए था। पात्रता शर्तों को समय पर अंतिम रूप देने में यह विफलता पूरी चयन प्रक्रिया को दूषित करती है।

.....

32. तदनुसार, हम पाते हैं कि संपूर्ण चयन, जो आयोजित किया गया है, पुलिस भर्ती बोर्ड द्वारा अनुचित हस्तक्षेप और आदेश पारित करने के कारण दूषित हो गया है और यह भी विचार करते हुए कि उम्मीदवारों का एक बड़ा प्रतिशत (लगभग 75%) चयन बोर्ड के अवैध और मनमाने हस्तक्षेप से प्रतिकूल रूप से प्रभावित है। तदनुसार, संपूर्ण चयन को निरस्त किया जाता है। प्रतिवादियों को पात्रता शर्तों को अंतिम रूप देने और यदि वे ऐसा करना चाहें तो सेवा नियमों में संशोधन करने का निर्देश दिया जाता है। एक बार जब वे इस संबंध में निर्णय ले लेते हैं, तो उन्हें एक नया विज्ञापन प्रकाशित करना चाहिए, जिसमें हेड ऑपरेटर/हेड ऑपरेटर (यांत्रिक) के पद के लिए योग्यता की पात्रता शर्तों को स्पष्ट रूप से इंगित किया जाना चाहिए और उक्त विज्ञापन प्रकाशित

करने के बाद उन्हें भर्ती प्रक्रिया का संचालन करना चाहिए और विधि के अनुसार जल्द से जल्द इसे पूरा करना चाहिए। चूंकि विज्ञापन जारी होने के बाद से ढाई वर्ष बीत चुके हैं और कई अभ्यर्थी आयु सीमा से ऊपर हो गए होंगे, और यह केवल प्रतिवादियों के कृत्यों/चूक के कारण है कि वर्तमान भर्ती को निरस्त किया जा रहा है, न्याय के हित में यह होगा कि ऐसे उम्मीदवारों को, जो आवश्यक शैक्षिक योग्यता रखते हैं और वर्तमान भर्ती प्रक्रिया में भाग लिए हैं, अगली भर्ती प्रक्रिया में भाग लेने की अनुमति दी जाए, केवल उनकी आयु की आवश्यकता को नजरअंदाज करते हुए।

12. उपर्युक्त आदेश की वैधता को चुनौती देते हुए अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि विद्वान रिट न्यायालय का यह निष्कर्ष कि केवल डिप्लोमा धारक ही प्रश्नगत पदों पर नियुक्त होने के लिए पात्र हैं, सही है और केवल इस निष्कर्ष पर ही रिट याचिका को निरस्त किया जाना चाहिए था। रिट न्यायालय ने रिट याचिका को स्वीकार करने और संपूर्ण चयन को यह मानते हुए निरस्त करने में त्रुटि की है कि यद्यपि याचीगण चयन प्रक्रिया में भाग लेने के लिए पात्र नहीं हैं क्योंकि इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री निर्धारित योग्यता नहीं थी, दिनांक 25.08.2021 के चयन बोर्ड के निर्णय द्वारा निर्देशित होकर उन्होंने आवेदन किया और निर्धारित पात्रता के विपरीत लिखित परीक्षा में भाग लेने की अनुमति दी गई।

13. राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता, श्री प्रफुल्ल कुमार यादव ने प्रस्तुत किया है कि भर्ती बोर्ड को 2015 के सेवा नियमों के अनुसार भर्ती करनी थी। नियमों के अनुसार, योग्यताओं की समतुल्यता के संबंध में कोई निर्णय लेने का अधिकार राज्य सरकार में निहित था और भर्ती बोर्ड के पास ऐसा कोई अधिकार नहीं था। भर्ती बोर्ड द्वारा विधि के किसी अधिकार के बिना लिया गया कोई भी निर्णय शून्य और निष्प्रभावी होगा और यह चयन प्रक्रिया के संबंध में किसी भी व्यक्ति के अधिकारों को प्रभावित नहीं करेगा।

14. विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता ने राज्य द्वारा योजित प्रति-शपथपत्र की एक प्रति प्रस्तुत की है और उन्होंने न्यायालय का ध्यान याचीगण द्वारा प्रस्तुत आवेदनों की ओर आकर्षित किया है, जिसमें उन्होंने अपनी योग्यता को इंजीनियरिंग में डिप्लोमा के रूप में उल्लेख किया था और उन्होंने यह उल्लेख नहीं किया कि उनके पास स्नातक डिग्री है।

15. यह अपील 12.02.2025 को एक नए वाद के रूप में सुनी गई थी, जिस तिथि को प्रतिवादी संख्या 5 से 19 के विद्वान अधिवक्ता, श्री रत्नेश चंद्र द्वारा किए गए अनुरोध पर इसे नहीं सुना गया था, जो रिट याचिका में याचीकर्ता थे और जो इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री धारक व्यक्ति हैं, कि वह रिट याचिका में याचीकर्ताओं की ओर से विशेष अपील योजित करने की प्रक्रिया में थे और दोनों अपीलों को 14.02.2025 को एक साथ सुना जा सकता है। आज भी उनके द्वारा एक अनुरोध किया गया था कि उन्होंने विशेष अपील योजित की है और उसे रजिस्ट्री से मंगाया जाना चाहिए और प्रस्तुत अपील के साथ सुना जाना चाहिए लेकिन बाद में उन्होंने न्यायालय को सूचित किया कि उनकी अपील आज योजित करने के लिए तैयार नहीं थी।

16. विद्वान अधिवक्ता, श्री रत्नेश चंद्र ने प्रतिवादी संख्या 5 से 19 की ओर से विशेष अपील का बलपूर्वक विरोध किया है और उन्होंने प्रस्तुत किया है कि याचीगण के पास 4 वर्षीय स्नातक डिग्री की उच्च योग्यता है, जिसमें 3 वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रमों में पढ़ाया जाने वाला पाठ्यक्रम शामिल है और इसलिए, याचीगण ऐसे पद पर नियुक्त होने के लिए पूरी तरह से पात्र हैं, जिसके लिए पात्रता योग्यता 3 वर्षीय डिप्लोमा है। उन्होंने प्रस्तुत किया है कि भारत सरकार द्वारा जारी राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के अनुसार इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री धारक व्यक्ति उन पदों पर नियुक्त होने के लिए पात्र होंगे, जिनके लिए पात्रता योग्यता इंजीनियरिंग में डिप्लोमा है।

17. विपक्षी संख्या 5 से 19 के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि एक बार जब भर्ती बोर्ड ने दिनांक 25.08.2021 का निर्णय लिया कि स्नातक डिग्री धारक अभ्यर्थी प्रश्नगत पदों पर नियुक्ति के लिए पात्र होंगे, तो याचीगण के पहले ही लिखित परीक्षा में भाग लेने के बाद दिनांक 23.04.2024 के बाद के निर्णय द्वारा इसे निरस्त नहीं किया जा सकता है।

18. हमने पक्षकारों के लिए विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत दलीलों पर विचार किया है और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया है।

19. यह स्थापित विधि है कि सार्वजनिक पदों पर किसी भी भर्ती को भर्ती नियमों में निहित प्रावधानों के सख्त अनुपालन में किया जाना चाहिए। हेड ऑपरेटर/हेड ऑपरेटर (यांत्रिक) के पद पर भर्ती उत्तर प्रदेश पुलिस रेडियो अधीनस्थ सेवा नियम, 2015 (जिसे इसके बाद '2015 के सेवा नियम' के रूप में संदर्भित किया जाएगा) द्वारा शासित है। उपरोक्त विनियमों का भाग-IV पात्रताओं से संबंधित है। उपरोक्त विनियम के भाग IV में आने वाला विनियम 8 (सी) ऑपरेटर/हेड ऑपरेटर (यांत्रिक) के पद के लिए निम्नलिखित पात्रता योग्यता प्रदान करता है:-

"अभ्यर्थी ने इलेक्ट्रॉनिक्स/दूरसंचार/विद्युत/कंप्यूटर विज्ञान/सूचना प्रौद्योगिकी/इंस्ट्रुमेंटेशन प्रौद्योगिकी/यांत्रिक इंजीनियरिंग में 3 वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम उत्तीर्ण किया हो, जो भारत में विधि द्वारा स्थापित किसी भी बोर्ड द्वारा प्रदान किया गया हो या सरकार द्वारा समतुल्य मानी गई किसी अन्य परीक्षा उत्तीर्ण की हो।"

20. 2005 के नियमों का नियम 3 (जी) परिभाषित करता है कि "सरकार" से आशय उत्तर प्रदेश सरकार से है।

21. यह स्थापित विधि है कि सार्वजनिक पदों पर नियुक्ति के उद्देश्य से योग्यता की समतुल्यता का निर्णय केवल नियोक्ता द्वारा लिया जा सकता है। वर्तमान मामले में नियोक्ता राज्य सरकार है। माननीय एकल न्यायमूर्ति ने सही ढंग से माना है कि भर्ती बोर्ड को संबंधित सेवा नियमों में निहित प्रावधानों और भर्ती

अधिसूचना में प्रकाशित शर्तों के अनुसार भर्ती करनी होती है। इसके पास योग्यताओं की समतुल्यता के संबंध में कोई निर्णय लेने का अधिकार नहीं है।

22. यह उपरोक्त नियम के अनुसार था कि दिनांक 06.01.2022 की भर्ती अधिसूचना में पात्रता योग्यता प्रकाशित की गई थी। स्पष्ट रूप से, इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री को 2015 के नियमों या भर्ती विज्ञापन में पात्रता शर्त में शामिल नहीं किया गया है। याचीगण और इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री रखने वाले कई अन्य व्यक्तियों ने प्रश्नगत पदों पर नियुक्त होने के लिए आवेदन किया और उन सभी ने अपनी योग्यता को इंजीनियरिंग में डिप्लोमा के रूप में उल्लेख किया। स्पष्ट रूप से, इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री रखने वाले उम्मीदवारों ने पात्रता योग्यता के संबंध में अपने आवेदनों में झूठी जानकारी प्रस्तुत की थी।

23. दिनांक 06.01.2022 की भर्ती अधिसूचना का खंड 10 (4) प्रावधान करता है कि यदि किसी भी चरण में यह पाया जाता है कि अभ्यर्थी के पास आवश्यक योग्यता नहीं है या उसने गलत/झूठी जानकारी/प्रमाण पत्र/अभिलेख प्रस्तुत किया है या उसने किसी तथ्य को छिपाया है, तो उसकी अभ्यर्थन निरस्त मानी जाएगी। यदि ऐसा कोई तथ्य अभ्यर्थी के कर्तव्यों में शामिल होने के बाद भी सामने आता है, तो उसकी सेवाएं समाप्त की जा सकती हैं और उसका चयन निरस्त किया जा सकता है और उसके विरुद्ध मुकदमा चलाया जाएगा।

24. इसके अतिरिक्त, भर्ती बोर्ड द्वारा पारित दिनांक 25.08.2021 का संकल्प कभी प्रकाशित नहीं किया गया और यह याचीगण या किसी अन्य अभ्यर्थी को कभी सूचित नहीं किया गया। यह संकल्प रिट याचिका योजित करने के समय भी याचीगण के पास उपलब्ध नहीं था, जैसा कि रिट याचिका के प्रस्तर 8 में विशेष रूप से अभिकथित किया गया है। इसलिए, याचीगण या कोई अन्य अभ्यर्थी यह दावा नहीं कर सकता कि यद्यपि सेवा नियम और भर्ती अधिसूचना में पात्रता योग्यता को इंजीनियरिंग में 3 वर्षीय डिप्लोमा के रूप में उल्लेख किया गया है, दिनांक 25.08.2021 के संकल्प ने उन्हें यह विश्वास दिलाया कि इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री धारक व्यक्ति भी पात्र होंगे क्योंकि यह योग्यता इंजीनियरिंग में डिप्लोमा के समतुल्य है।

25. याचीगण ने अपनी पात्रता योग्यता के संबंध में झूठी जानकारी प्रस्तुत करके स्वयं प्रश्नगत पदों के चयन के लिए आवेदन किया, जिससे उनका अभ्यर्थन निरस्त होने योग्य हो जाता है।

26. दीपक सिंह (उपरोक्त) में, इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा निम्नलिखित प्रश्नों का निर्णय किया गया था:-

"ए. क्या प्रश्नगत क्षेत्र में डिग्री को, उस क्षेत्र में डिप्लोमा की तुलना में उच्च योग्यता माना जा सकता है?

बी. क्या आलोक कुमार मिश्रा और कार्तिकेय में निर्णय, विधि में सही स्थिति निर्धारित करते हैं जब वे निर्णीत करते हैं कि एक डिग्री धारक को अवर अभियंता के रूप में नियुक्ति के लिए विचार के क्षेत्र से बाहर रखा गया है?

सी. क्या संबंधित वैधानिक नियमों के आलोक में एक डिग्री धारक को अवर अभियंता के लिए चयन प्रक्रिया में भाग लेने के लिए अपात्र माना जा सकता है?

डी. क्या डिग्री धारकों को विचार के क्षेत्र से बाहर करना उत्तराखंड राज्य बनाम दीप चंद्र तिवारी में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित परीक्षणों को पूरा करेगा?"

27. पूर्ण पीठ ने प्रश्नों के निम्नलिखित उत्तर दिए:-

"1) इंजीनियरिंग में डिप्लोमा और इंजीनियरिंग में डिग्री दो अलग-अलग योग्यताएं हैं और प्रश्नगत क्षेत्र में डिग्री को उस क्षेत्र में डिप्लोमा की तुलना में उच्च योग्यता नहीं माना जा सकता है।

2) आलोक कुमार मिश्रा (उपरोक्त) और कार्तिकेय (उपरोक्त) में निर्णय, सही विधि स्थिति निर्धारित की है कि प्रश्नगत डिप्लोमा के संबंध में डिग्री धारक को अवर अभियंता के रूप में नियुक्ति के लिए विचार के क्षेत्र से बाहर रखा गया है।

3) जारी किए गए विज्ञापन के आलोक में डिग्री धारक को अवर अभियंता की चयन प्रक्रिया में भाग लेने के लिए अपात्र माना गया है।

4) विचार के क्षेत्र से डिग्री धारकों का बहिष्करण उत्तराखंड राज्य बनाम दीप चंद्र तिवारी के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित परीक्षणों के अनुरूप है।

5) राज्य सरकार, आवश्यक योग्यताओं या वांछनीय योग्यताओं को निर्धारित करते समय, राज्य सरकार द्वारा आवश्यक कार्य की प्रकृति के लिए अभ्यर्थी का चयन करने की आवश्यकताओं को तय करने के लिए सबसे उपयुक्त होती है और न्यायालयों को पात्रता की शर्तों को निर्धारित करने से रोका जाता है। यदि नियमों में भाषा स्पष्ट है तो न्यायिक समीक्षा का उपयोग यह तय करने के लिए नहीं किया जा सकता कि नियोक्ता के लिए क्या सबसे उपयुक्त है।"

28. पूर्ण पीठ द्वारा निर्धारित उपरोक्त विधि इस न्यायालय पर बाध्यकारी है।

29. जहाँ तक विपक्षी संख्या 5 से 19 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई दलील का संबंध है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के अनुसार, इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री रखने वाला व्यक्ति उस पद पर नियुक्त होने का अधिकारी है जिसके लिए इंजीनियरिंग में डिप्लोमा आवश्यक योग्यता है, यह कहना पर्याप्त है कि यह एक नई दलील है जो पहली बार इस अपील में लिया गया है और यह तर्क रिट न्यायालय के समक्ष नहीं लिया गया था।

30. राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहा गया है कि "नीति शिक्षा संरचना के सभी पहलुओं के संशोधन और नवीकरण का प्रस्ताव करती है, जिसमें इसका विनियमन और शासन शामिल है, जिससे एक नई प्रणाली बनाई जा सके, जो 21वीं सदी के आकांक्षी लक्ष्यों के साथ संरेखित हो, जबकि भारत की परंपराओं और मूल्य प्रणालियों पर निर्माण करे।

31. नीति का अध्याय 11 'अधिक समग्र और बहुविषयक शिक्षा की ओर' शीर्षक से है और नीति का खंड 11.09, जिस पर श्री रत्नेश चंद्र द्वारा भरोसा किया गया है, निम्नानुसार प्रावधान करता है:

"11.9. डिग्री कार्यक्रमों की संरचना और अवधि को तदनुसार समायोजित किया जाएगा। स्नातक डिग्री 3 या 4 वर्ष की अवधि की होगी, इस अवधि के भीतर कई निकास विकल्पों के साथ, उपयुक्त प्रमाणन के साथ, जैसे व्यावसायिक और पेशेवर क्षेत्रों सहित किसी विषय या क्षेत्र में 1 वर्ष पूरा करने के बाद प्रमाण पत्र, या 2 वर्ष के अध्ययन के बाद डिप्लोमा, या 3 वर्षीय कार्यक्रम के बाद स्नातक की डिग्री। हालांकि, 4 वर्षीय बहुविषयक स्नातक कार्यक्रम पसंदीदा विकल्प होगा क्योंकि यह छात्र की पसंद के अनुसार चुने गए प्रमुख और लघु पर ध्यान केंद्रित करने के अतिरिक्त समग्र और बहुविषयक शिक्षा की पूरी श्रृंखला का अनुभव करने का अवसर प्रदान करता है। एक शैक्षिक क्रेडिट बैंक (एबीसी) स्थापित किया जाएगा, जो विभिन्न मान्यता प्राप्त उच्च शिक्षा संस्थानों से अर्जित शैक्षिक क्रेडिट को डिजिटल रूप से संग्रहीत करेगा जिससे अर्जित क्रेडिट को ध्यान में रखते हुए एक उच्च शिक्षा संस्थान से डिग्री प्रदान की जा सके। 4 वर्षीय कार्यक्रम 'अनुसंधान के साथ' डिग्री की ओर भी ले जा सकता है यदि छात्र उच्च शिक्षा संस्थान द्वारा निर्दिष्ट अपने अध्ययन के प्रमुख क्षेत्र (क्षेत्रों) में एक कठोर अनुसंधान परियोजना पूरी करता है।"

32. स्पष्ट रूप से, यह नीति भविष्य में शिक्षा प्रणाली में सुधार करने के लिए एक विजन अभिलेख है। इसके अतिरिक्त, यह दर्शाने के लिए रिकॉर्ड पर कुछ भी नहीं है कि खंड 11.9 में निहित डिप्लोमा और डिग्री के संबंध में राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रस्तावों को वास्तव में लागू किया गया है और याचीगण ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के अनुसार संशोधित पाठ्यक्रम का अध्ययन किया था, जिसके अधीन उन्होंने वह पाठ्यक्रम पढ़ा है, जो इंजीनियरिंग में 3 वर्षीय डिप्लोमा के छात्रों को पढ़ाया जाता है। न्यायालय द्वारा पूछे गए एक विशिष्ट प्रश्न के जवाब में श्री रत्नेश चंद्र ने कहा कि सभी याचीगण ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रारंभ होने से पहले अपनी स्नातक डिग्री प्राप्त की है।

33. केवल एक नीति भर्ती नियमों के विशिष्ट प्रावधानों पर अधिभावी नहीं हो सकती और जब तक भर्ती नियमों में संशोधन नहीं किया जाता, जिसमें 3 वर्षीय डिप्लोमा को पात्रता योग्यता के रूप में शामिल किया जाता है या जब तक राज्य सरकार इंजीनियरिंग में 4 वर्षीय स्नातक डिग्री को 3 वर्षीय डिप्लोमा के समतुल्य मानते हुए निर्णय नहीं लेती, भर्ती को भर्ती नियमों में निहित प्रावधानों और भर्ती अधिसूचना में उल्लिखित शर्तों के अनुसार किया जाना चाहिए। जिन व्यक्तियों के पास निर्धारित योग्यता नहीं है, वे प्रश्नगत पद के विरुद्ध नियुक्ति की मांग नहीं कर सकते।

34. इंजीनियरिंग में डिप्लोमा और इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री के पाठ्यक्रम से संबंधित प्रश्नों का निर्णय केवल संबंधित क्षेत्रों में विशेषज्ञता रखने वाले व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है और यह इस न्यायालय द्वारा न्यायिक समीक्षा के दायरे से बाहर है। **महाराष्ट्र लोक सेवा आयोग बनाम संदीप श्रीराम वराडे:** (2019) 6 SCC 362 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में इस सिद्धांत को दोहराया:-

"9. किसी पद पर नियुक्ति के लिए आवश्यक योग्यताएं नियोक्ता को तय करनी होती हैं। नियोक्ता अतिरिक्त या वांछनीय योग्यताएं निर्धारित कर सकता है, जिसमें किसी भी प्राथमिकता का अनुदान शामिल है। यह नियोक्ता है, जो नियोक्ता की जरूरतों और कार्य की प्रकृति के अनुसार अभ्यर्थी के पास आवश्यक आवश्यकताओं को तय करने के लिए सबसे उपयुक्त है। न्यायालय पात्रता की शर्तों को निर्धारित नहीं कर सकता, बहुत कम यह विज्ञापन की व्याख्यात्मक पुनर्लेखन द्वारा आवश्यक पात्रता के बराबर वांछनीय योग्यताओं के मुद्दे में तल्लीन हो सकता है। समतुल्यता के प्रश्न भी न्यायिक समीक्षा के क्षेत्र से बाहर आएंगे। यदि विज्ञापन और नियमों की भाषा स्पष्ट है, तो न्यायालय उसी पर निर्णय नहीं ले सकता। यदि विज्ञापन में कोई अस्पष्टता है या यह किसी नियम या विधि के विपरीत है, तो मामले को उचित आदेशों के बाद नियुक्ति प्राधिकारी को वापस जाना होगा, विधि के अनुसार आगे बढ़ने के लिए। किसी भी मामले में न्यायालय, न्यायिक समीक्षा की आड़ में, यह निर्णय करने के लिए नियुक्ति प्राधिकारी की कुर्सी पर नहीं बैठ सकता कि नियोक्ता के लिए क्या सबसे अच्छा है और विज्ञापन की शर्तों की सादी भाषा के विपरीत व्याख्या कर सकता है।"

(महत्व प्रदत्त)

35. इसलिए, हम रिट न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से सहमत हैं कि स्नातक डिग्री रखने वाले व्यक्ति दिनांक 06.01.2022 की भर्ती अधिसूचना के अनुसरण में नियुक्ति की मांग के लिए पात्र नहीं हैं। हालाँकि, हम स्वयं को रिट न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से सहमत नहीं पाते हैं कि संपूर्ण चयन को निरस्त करना और प्रतिवादियों को पात्रता शर्तों को अंतिम रूप देने और यदि वे ऐसा करना चाहें तो सेवा नियमों में संशोधन करने का निर्देश देना, और हेड ऑपरेटर/हेड ऑपरेटर (यांत्रिक) के पद के लिए योग्यता की पात्रता शर्तों को स्पष्ट रूप से दर्शाते हुए एक नया विज्ञापन प्रकाशित करना। ऐसा निर्देश केवल तभी जारी किया जा सकता था यदि विज्ञापन में कोई अस्पष्टता होती या यह किसी नियम या विधि के विपरीत होता, जो यहाँ नहीं है।

36. वर्तमान मामले में विज्ञापन और नियमों की भाषा स्पष्ट है, कि प्रश्नगत पदों के लिए पात्रता योग्यता यह है कि "अभ्यर्थी ने इलेक्ट्रॉनिक्स/दूरसंचार/विद्युत/कंप्यूटर विज्ञान/सूचना प्रौद्योगिकी/इंस्ट्रुमेंटेशन प्रौद्योगिकी/यांत्रिक इंजीनियरिंग में 3 वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम उत्तीर्ण किया हो, जो भारत में विधि द्वारा स्थापित किसी भी बोर्ड द्वारा प्रदान किया गया हो या सरकार द्वारा समतुल्य मानी गई किसी अन्य परीक्षा उत्तीर्ण की हो" और 2005 के नियमों का नियम 3 (जी) परिभाषित करता है कि "सरकार" से आशय उत्तर प्रदेश सरकार से है। न्यायालय उस पर निर्णय नहीं ले सकता। विज्ञापन में किसी भी अस्पष्टता की अनुपस्थिति में और किसी नियम के उल्लंघन की अनुपस्थिति में, चयन प्रक्रिया को निरस्त करने और पात्रता शर्तों को अंतिम

रूप देने और यदि वे ऐसा करना चाहें तो सेवा नियमों में संशोधन करने के लिए मामले को नियुक्ति प्राधिकारी को वापस भेजने का कोई औचित्य नहीं था।

37. भर्ती नियमों के अनुसार शुरू की गई भर्ती प्रक्रिया को पूरा करने की अनुमति दी जानी चाहिए और इसे केवल इस कारण से निरस्त नहीं किया जा सकता कि बड़ी संख्या में अपात्र व्यक्तियों ने चयन प्रक्रिया में भाग लिया है और वे लिखित परीक्षा में उपस्थित हुए हैं। जैसा कि ऊपर पहले ही उल्लेख किया गया है, स्नातक डिग्री रखने वाले अपात्र व्यक्तियों ने अपनी शैक्षिक योग्यताओं के बारे में झूठी जानकारी प्रस्तुत करके चयन प्रक्रिया में भाग लिया है, जिससे उनकी अभ्यर्थन निरस्त होने के लिए उत्तरदायी हो जाते हैं। केवल यह तथ्य कि उन्हें अपने ऑनलाइन आवेदन पत्रों में स्वयं द्वारा प्रस्तुत जानकारी के अनुसार अनंतिम रूप से लिखित परीक्षा में उपस्थित होने की अनुमति दी गई थी और यह तथ्य कि उनके पास पात्रता योग्यता नहीं है, केवल उनके अभिलेखों के परीक्षण पर ही प्रकट होगा, अधिकारियों को उनकी अभ्यर्थन निरस्त करने से रोकने वाला कोई एस्टॉपेल नहीं बनाएगा।

38. यदि इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री रखने वाले व्यक्ति विज्ञापन में इस योग्यता के उल्लेख न करने से व्यथित थे, तो उनके लिए उपलब्ध उचित तरीका इसे तुरंत चुनौती देना था अर्थात् जैसे ही विज्ञापन प्रकाशित किया गया था। वे चयन प्रक्रिया में भाग नहीं ले सकते थे, जब उनके पास निर्धारित योग्यता नहीं थी, और किसी भी स्थिति में, वे ऑनलाइन मोड के माध्यम से प्रस्तुत अपने आवेदन में अपनी योग्यता के संबंध में झूठी जानकारी प्रस्तुत करके भाग नहीं ले सकते थे।

39. भर्ती बोर्ड के पास सेवा नियमों के नियम 8 (सी) के अनुसार पात्रता योग्यताओं को तय करने का कोई अधिकार नहीं था और जहाँ तक भर्ती बोर्ड द्वारा पारित दिनांक 25.08.2021 के संकल्प का संबंध है, जो रिट याचिका में चुनौती के अधीन था, का कोई विधिक प्रभाव नहीं है। दिनांक 25.08.2021 का संकल्प न तो प्रकाशित किया गया था और न ही इसे उम्मीदवारों को किसी भी तरीके से सूचित किया गया था और इसने किसी भी व्यक्ति को कोई अधिकार या उसकी झलक भी प्रदान नहीं की। इसलिए, दिनांक 23.04.2024 के बाद के संकल्प द्वारा अप्रकाशित दिनांक 25.08.2021 के संकल्प को निरस्त करना, किसी भी अभ्यर्थी को कोई पूर्वाग्रह नहीं पहुंचाता और यह चयन प्रक्रिया को दूषित नहीं करता।

40. इसलिए, हम स्वयं को माननीय एकल न्यायमूर्ति द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से सहमत नहीं पाते हैं कि उपरोक्त संकल्प चयन प्रक्रिया को दूषित करते हैं।

41. उपरोक्त चर्चा के आलोक में, अंतर-न्यायालयीय अपील स्वीकार की जाती है। दिनांक 08.01.2025 का आक्षेपित निर्णय व आदेश उस हद तक बरकरार रखा जाता है कि यह निर्णीत करता है कि इंजीनियरिंग में स्नातक डिग्री रखने वाले व्यक्ति प्रश्नगत पदों पर नियुक्त होने के लिए पात्र नहीं हैं। हालाँकि, रिट न्यायालय के निर्णय का वह अंश, जिसके द्वारा संपूर्ण चयन प्रक्रिया को निरस्त कर दिया गया है और अधिकारियों को

पात्रता शर्तों को अंतिम रूप देने और यदि वे ऐसा करना चाहें तो सेवा नियमों में संशोधन करने का निर्देश दिया गया है, ऊपर की गई चर्चा के आलोक में विधि में बने रहने योग्य नहीं है और इसे निरस्त किया जाता है।व्यय नहीं।

(2025) 2 ILRA 431

मूल अधिकार क्षेत्र

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 04.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति सौरभ श्याम शमशेरी

रिट-ए संख्या-713/2025

श्रीमती दुर्गेश शर्मा व अन्य

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता:

श्री अभिषेक भूषण, श्री हिमांशु सिंह, श्री अनिल भूषण (वरिष्ठ अधिवक्ता)

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि.

सेवा विधि-वेतन-एक शिकायतकर्ता द्वारा की गई शिकायत के आधार पर-एक जांच शुरू की गई, जबकि उसी व्यक्ति द्वारा पहले की गई शिकायत निरस्त कर दी गई थी-आक्षेपित आदेश-वेतन रोका गया-यह कहते हुए कि याचिकाकर्ता की नियुक्ति रिट के अधीन थी, जिसे वापस लेने के रूप में निरस्त कर दिया गया था और अंतरिम आदेश को उन्मोचित कर दिया गया था, इसलिए अनुमोदन का आदेश स्वयं अप्रभावी हो जाता है और उनका वेतन रोक दिया गया-रिट याचिकाकर्ताओं की नियुक्ति रिट याचिका के लंबित रहने की अवधि में वित्त अनुभाग द्वारा विचार के आधार पर जिला विद्यालय निरीक्षक द्वारा अनुमोदित की गई थी, उक्त अनुमोदन आदेश को चुनौती नहीं दी गई-पदोन्नति देकर उस पर कार्रवाई की गई-आक्षेपित आदेश रद्द किया गया।

रिट याचिका निस्तारित।

उद्धृत निर्णयों की सूची:

अशोक कुमार द्विवेदी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य, 2025:AHC:6788

1. याचिकाकर्ताओं ने यह मामला स्थापित किया है कि प्रतिवादी, एक अल्पसंख्यक संस्थान ने, सहायक शिक्षक एलटी ग्रेड के पद के लिए तीन मूल रिक्तियों को भरने के लिए एक विज्ञापन जारी किया है। याचिकाकर्ताओं ने उक्त पद के लिए आवेदन किया था और विधिवत नियुक्त किए गए थे और अपने संबंधित नियुक्ति पत्रों के अनुसरण में, उन्होंने 1 अगस्त 1998 को सेवा में शामिल हुए। आगे का मामला यह है कि संबंधित संस्थान की प्रबंध समिति ने 7 अगस्त 1998 को अनुमोदन के लिए संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक को अभिलेख प्रस्तुत किए हैं।

2. याचिकाकर्ताओं का यह भी मामला है कि जब संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक ने संबंधित प्रावधानों के संदर्भ में कोई विशिष्ट आदेश पारित नहीं किया है, तो उनका अनुमोदन स्वीकृत माना जाना था और जब उनका वेतन नहीं दिया गया, तो वे रिट याचिका संख्या-9230/1999 योजित करके इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के लिए मजबूर हुए, जिसमें निम्नलिखित अनुतोष मांगे गए थे:-

"(i) प्रतिवादियों को निर्देश देते हुए परमादेश रिट, आदेश या निर्देश निर्गत करें कि याचिकाकर्ताओं के चयन दिनांक 19.07.1998 को स्वीकृत मानें और याचिकाकर्ताओं को 08.09.1998 से (याचिकाकर्ता संख्या 1 और 3) और 14.09.1998 से (याचिकाकर्ता संख्या 2) वेतन का नियमित रूप से महीने-दर-महीने भुगतान करें, जिसमें वेतन का बकाया भी शामिल है;

(ii) जिला विद्यालय निरीक्षक को निर्देश देते हुए एक परमादेश रिट, आदेश या निर्देश जारी करें कि एंग्लो बंगाली गर्ल्स इंटर कॉलेज, आगरा में सहायक शिक्षक एल.टी. ग्रेड के रूप में याचिकाकर्ताओं के चयन पर विचार व अनुमोदन करें, जिसे प्रबंधन ने दिनांक 07.08.1998 के पत्रों के माध्यम से जिला विद्यालय निरीक्षक, आगरा को प्रस्तुत किया है और तदनुसार याचिकाकर्ताओं को वेतन का भुगतान करें;

(iii) कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जारी करें, जो यह माननीय न्यायालय मामले की परिस्थितियों में उचित और उपयुक्त समझे।

(iv) रिट याचिका का व्यय याचिकाकर्ताओं को दिया जाए।"

3. इस न्यायालय ने उपरोक्त संदर्भित रिट याचिका में 12 मार्च 1999 को एक अंतरिम आदेश पारित किया था कि:-

‘इस न्यायालय के अग्रिम आदेशों तक प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाता है कि एंग्लो बंगाली गर्ल्स इंटर कॉलेज, आगरा में विधिवत अनुमोदित सहायक शिक्षक एल.टी. ग्रेड के रूप में इस एल.टी. ग्रेड शिक्षकों का वेतन भुगतान करें।’

4. श्री अनिल भूषण, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, जिन्हें याचिकाकर्ताओं के लिए अधिवक्ता श्री अभिषेक भूषण द्वारा सहायता प्रदान की गई, ने प्रस्तुत किया है कि उक्त मामले के लंबित रहने के दौरान, सर्वप्रथम याचिकाकर्ताओं की नियुक्तियों को दिनांक 18 मई 1999 के आदेश द्वारा जिला विद्यालय निरीक्षक द्वारा अनुमोदित किया गया था और उसके बाद दिनांक 19 मई 2000 के अलग-अलग आदेशों द्वारा उन्हें स्थायी घोषित किया गया था, और उसके बाद उन्हें पदोन्नत भी किया गया था।

5. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया है कि उपरोक्त परिस्थितियों में, चूंकि याचिकाकर्ताओं की व्यथा पर विचार किया गया था व अनुमोदन दिया गया था और उन्हें बिना किसी विधिक बाधा के स्थायी भी किया गया था, इसलिए उन्होंने अपने वाद की वापसी के लिए एक आवेदन योजित किया और तदनुसार दिनांक 30 जुलाई 2003 के आदेश द्वारा, उपरोक्त संदर्भित रिट याचिका को वापस लेने के रूप में निरस्त कर दिया गया। संदर्भ के लिए, उक्त आदेश नीचे उल्लिखित है:-

"याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने कहा कि याचिका को वापस लेने के रूप में निरस्त किया जाए।

याचिका को वापस लेने के रूप में निरस्त किया जाता है। यदि कोई स्थगन आदेश है, तो वह उन्मोचित हो जाएगा।"

6. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया है कि उसके बाद, याचिकाकर्ताओं ने शांतिपूर्वक सेवा की और नियमित वेतन प्राप्त किया और संबंधित प्रावधानों के संदर्भ में उन्हें पदोन्नत भी किया गया। हालांकि वर्ष 2023 में अर्थात् 2 दशकों के बाद, एक भूपेंद्र सिंह ने याचिकाकर्ताओं में से एक की नियुक्ति के संबंध में एक शिकायत दर्ज की, जिस पर संज्ञान लिया गया, हालांकि दिनांक 21 नवंबर 2023 के आदेश द्वारा इसे निरस्त कर दिया गया कि ऐसी शिकायत निराधार थी। यह भी नोट किया गया कि उसी शिकायतकर्ता का पूर्व प्रयास असफल रहा था।

7. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि ऐसे व्यक्ति की शिकायत निरस्त होने के बाद भी, फिर उसी शिकायत के आधार पर, संयुक्त शिक्षा निदेशक के स्तर पर दिनांक 15 अप्रैल 2023 के एक संचार द्वारा सभी याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक को संबोधित करते हुए एक जांच संस्थित की गई। कार्यवाही के दौरान, नोटिस जारी किए गए और याचिकाकर्ताओं ने अपने उत्तर प्रस्तुत किए और अंततः संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक ने दिनांक 31 दिसंबर 2024 को एक आदेश पारित किया, जिसके द्वारा याचिकाकर्ताओं का वेतन इस आधार पर रोक दिया गया कि याचिकाकर्ता की नियुक्ति का अनुमोदन उपरोक्त संदर्भित याचिका के परिणाम के अधीन था, जिसे वापस लेने के रूप में निरस्त कर दिया गया था और चूंकि

दिनांक 30 जुलाई 2003 के आदेश द्वारा अंतरिम आदेश को रद्द कर दिया गया था, इसलिए अनुमोदन का आदेश स्वयं अप्रभावी हो जाता है और उनका वेतन रोक दिया गया था। इसका संबंधित भाग नीचे उल्लिखित है:-

"निर्णय

माननीय उच्च न्यायालय में योजित याचिका संख्या 9230/1999 श्रीमती सरोज अग्रवाल और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और चार अन्य में पारित आदेश दिनांक 12.03.1999 और दिनांक 30.07.2003 का अनुपालन विभाग से कराये जाने हेतु श्री कूपेन्द्र सिंह निवासी ग्राम सूरौठी अछनेरा आगरा द्वारा की गयी शिकायत दिनांक 12.04.2023/01.08.2024 के सम्बन्ध में जिला विद्यालय निरीक्षक आगरा के कार्यालय पत्र दिनांक 07.08.2024 व 13.08.2024 के अनुसरण में याचिकाकर्ताओं द्वारा अपना अपना उत्तर दिनांक 17.08.2024 को प्रस्तुत किया गया जिसमें रिट याचिका संख्या 9230/1999 को वापिस लेने का कोई विशेष कारण नहीं बताया गया है। बल्कि कहा गया है कि शिकायतकर्ता शिक्षकों को परेशान करने एवं उनसे धन वसूलने के लिए झूठे आरोप लगा रहा है। न ही याचिकाकर्ताओं ने अपने उत्तर में यह खुलासा किया गया है कि रिट निरस्त होने का तथ्य उनके द्वारा विभाग को क्यों नहीं बताया गया क्योंकि याचिकाकर्ताओं की नियुक्ति की वित्तीय स्वीकृति तत्कालीन जिला विद्यालय निरीक्षक-2 आगरा द्वारा अपने पत्र संख्या मा०/310-11/999-2000 दिनांक 18.05.1999 के द्वारा माननीय उच्च न्यायालय में योजित याचिका संख्या 9230/1999 में पारित अन्तरिम आदेश दिनांक 12.03.1999 के अनुपालन में दी गयी थी, जिसे माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद द्वारा दिनांक 30.07.2003 के आदेश द्वारा वापिस ले लिया गया है। जिससे दिनांक 12.03.1999 का अन्तरिम आदेश निरस्त हो गया है। जिससे जिला विद्यालय निरीक्षक-2 आगरा द्वारा अपने पत्र संख्या मा०/310-11/99-2000 दिनांक 18.05.1999 के द्वारा किया गया वित्तीय अनुमोदन निरर्थक हो गया था सम्बन्धित शिक्षिकाओं द्वारा तथ्य गोपन कर विभाग में कार्य करते रहे एवं अद्यतन विभाग से वेतन प्राप्त करते रहे, जो कि शिक्षण संस्थाओं में ऐसा कृत्य वह भी एक शिक्षक/कार्यवाहक प्रधानाचार्य के रूप में किया जाना निंदनीय है। शैक्षणिक संस्थाओं में विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने आते हैं यदि शिक्षक द्वारा ऐसा आचरण अपनाया जाता है तो विद्यार्थियों को ऐसे शिक्षकों द्वारा दी जाने वाली शिक्षा किस दशा में उनका भविष्य तय करेगी। माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद में योजित याचिका संख्या 9230/1999 में पारित आदेश दिनांक 12.03.1999 निम्नवत है:

"इस न्यायालय के अग्रिम आदेश तक प्रतिवादियों को निर्देशित किया जाता है कि वे एंग्लोबंगाली इंटर कॉलेज आगरा में एल.टी. ग्रेड के शिक्षण उन्हें विधिवत अनुमोदित सहायक शिक्षक एल.टी ग्रेड के रूप में वेतन का भुगतान करें।"

माननीय उच्च न्यायालय में योजित याचिका संख्या 9230/1999 में पारित आदेश दिनांक 12.03.1999 के अनुक्रम में जिला विद्यालय निरीक्षक-2 आगरा द्वारा अपने पत्र संख्या 310-11/99-2000 दिनांक 18.05.1999

के द्वारा उक्त अध्यापिकाओं को अनुमोदित कर वेतन आहरित किया गया है। अन्त में माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद में योजित याचिका संख्या 9230/1999 में पारित अन्तिम आदेश 30.07.2003 निम्नवत् है: याचिकाकर्ता के अधिवक्ता कहा कि याचिका को वापस लेने के रूप में निरस्त किया जाए। याचिका को वापस लेने के रूप में निरस्त किया जाता है। स्थगन आदेश यदि कोई है तो उन्मोचित हो जाएगा।

उक्त के क्रम में मा० उच्च न्यायालय में योजित याचिका संख्या 9230/1999 में पारित अन्तरिम आदेश दिनांक 12.03.1999 के द्वारा याचिकाकर्ता श्रीमती सरोज अग्रवाल, श्रीमती दुर्गेश मिश्रा (वर्तमान नाम श्रीमती दुर्गेश शर्मा), श्रीमती इन्दूबाला कोहल स०अ० एंग्लो बंगाली गर्ल्स इण्टर कालेज रकाबगंज आगरा का विभाग द्वारा किया गया स्नातक वेतनक्रम में वित्तीय अनुमोदन दिनांक 18.05.1999 जो माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद में योजित याचिका संख्या 9230/1999 में पारित अन्तिम आदेश दिनांक 30.07.2003 के द्वारा निरस्त हो जाने पर स्वतः ही निरर्थक/ निरस्त हो चुका था, को निरर्थक/निरस्त किया जाता है तथा सम्बन्धित अध्यापिकाओं का स्नातक वेतनक्रम में विभाग द्वारा दिनांक 18.05.1999 को किये गये अनुमोदन को अमान्य हो जाने के फलस्वरूप सम्बन्धित याचिकाकर्ता श्रीमती सरोज अग्रवाल, स०अ० वर्तमान पद स०अ०, श्रीमती दुर्गेश मिश्रा, स०अ० वर्तमान पद प्रवक्ता / कार्यवाहक प्रधानाचार्य (वर्तमान नाम श्रीमती दुर्गेश शर्मा), श्रीमती इन्दूबाला कोहल, स०अ० वर्तमान पद प्रवक्ता एंग्लो बंगाली गर्ल्स इण्टर कालेज रकाबगंज आगरा से तत्काल प्रभाव से एंग्लो बंगाली गर्ल्स इण्टर कालेज आगरा विद्यालय में काम लिया जाना एवं उपरोक्त याचिकाकर्ताओं द्वारा विभाग से तथ्य गोपन कर जो वेतन प्राप्त किया जा रहा है पर रोक लगाई जाती है।"

8. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया है कि न केवल याचिकाकर्ताओं की सेवा को एक भूपेंद्र सिंह द्वारा की गई एक अस्पष्ट शिकायत के आधार पर दांव पर लगाया गया था, बल्कि याचिकाकर्ताओं द्वारा योजित पूर्व की रिट याचिका में पारित आदेश की गलत व्याख्या की गई थी। उन्होंने दिनांक 18 मई 1999 के आदेश के अवयव का उल्लेख किया है, जिसके द्वारा रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, याचिकाकर्ताओं की सेवाओं को अनुमोदित किया गया था कि यह बिना शर्त था और रिट याचिका की वापसी के आदेश का ऐसे आदेश पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं होगा। संदर्भ के लिए, उक्त आदेश नीचे उद्धृत किया गया है:-

“प्रेषक:

जिला विद्यालय निरीक्षक-2,

बेसिक शिक्षा आगरा

सेवा में,

प्रबन्धक (अल्पसंख्यक संस्था)

एंग्लो बंगाल कन्या इण्टर कालेज

आगरा

पत्रांक: मा0-320-21/99-2000

दिनांक: 18.5.1999

विषय: रिट याचिका संख्या 9230/99 श्रीमती सरोज अग्रवाल व अन्य बनाम जिला विद्यालय निरीक्षक-2 बेसिक शिक्षा आगरा व अन्य में माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद के आदेश दिनांक 12.3.99 के अनुपालन में एल.टी.ग्रेड की नियुक्तियों के प्रति अनुमोदन के सम्बन्ध में।

महोदय,

उपर्युक्त विषयक आपके पत्रांक- 26/ए.बी.एम./ नियुक्ति /98-99 दिनांक 7-8-98 के संदर्भ में अवगत कराना है कि रिट याचिका संख्या 9230/99 श्रीमती सरोज अग्रवाल व अन्य, एग्लो बंगाल कन्या इण्टर कालेज आगरा बनाम जिला विद्यालय निरीक्षक-2 बेसिक शिक्षा आगरा व अन्य में माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद के आदेश दिनांक 12.3.99 के समादर में एल.टी.ग्रेड की नियुक्तियों को अनुमोदनार्थ किये जाने के सम्बन्ध में। उक्त के सम्बन्ध में कहना है कि आपके द्वारा श्रीमती सरोज अग्रवाल, कु.दुर्गेश मिश्रा तथा श्रीमती इन्दुबाला कोहल के चयन के फलस्वरूप नियुक्तियों का अनुमोदन हेतु प्रस्तुत अभिलेखों के परीक्षणोपरान्त वित्त एवं लेखाधिकारी (मा.) कार्यालय जिला विद्यालय निरीक्षक आगरा के पत्रांक 14311/40/99-2000 दिनांक 17.5.99 द्वारा दी गई वित्तीय सहमति के आधार पर तथा रिट याचिका संख्या 9230/99 में निर्गत आदेश दिनांक 12.3.99 जिसमें वेतन भुगतान के स्पष्ट आदेश है, के आधार पर उक्त आदेश दिनांक 12.3.99 के समादर में संस्था में स्थायी वेतनक्रम 4500-7000 में तीन मौलिक रिक्त पदों पर नियुक्तियां इस पत्र के निर्गत तिथि से अनुमन्य की जाती हैं जो निम्नवत हैं:-

क्र.सं.	पूर्व पद धारक का नाम	रिक्त का कारण	प्रस्तावित नियुक्ति
1	श्रीमती आर.दुआ	संवनिवृत्त दिनांक 30.06.98	श्रीमती सरोज अग्रवाल
2	श्रीमती सुषमा राय	तदैव	कु.दुर्गेश मिश्रा
3	श्रीमती आई. इकबाल	प्रवक्ता पद पर पदोन्नति होने से	श्रीमती इन्दुबाला कोहर

यदि इसमें कोई गोपन किया गया पाया गया तो नियुक्ति स्वतः निष्प्रभावी हो जायेगी जिसका उत्तरदायित्व आपका होगा।

9. इसके विपरीत, विद्वान स्थायी अधिवक्ता के साथ-साथ श्री अशोक खरे, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, जिन्हें प्रतिवादी-3 के लिए विद्वान अधिवक्ता, श्री कौंटेय सिंह द्वारा सहायता प्रदान की गई, ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया है कि उपलब्ध सामग्री के आधार पर, याचिकाकर्ताओं की नियुक्ति का अनुमोदन रिट याचिका के परिणाम के अधीन था और जब उक्त याचिका बिना किसी विशिष्ट आदेश के वापस ली गई थी और अंतरिम आदेश को भी उन्मोचित कर दिया गया था, इसलिए अनुमोदन का परिणामी आदेश अप्रभावी हो जाता है।

याचिकाकर्ता ऐसी जानकारी को रोकने के दोषी थे, जो शिकायत के आधार पर प्रकाश में आई थी और इसलिए आक्षेपित आदेश पारित किया गया था, जिसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

10. मैंने उपरोक्त प्रस्तुतियों पर विचार किया है और अभिलेख का अवलोकन किया है।

11. यह एक दूसरा प्रकरण है, जहां एक शिकायतकर्ता (वर्तमान मामले में एक भूपेंद्र सिंह) द्वारा की गई शिकायत के आधार पर, एक जांच संस्थित की गई, जबकि उसी व्यक्ति द्वारा पहले की गई शिकायत को निरस्त कर दिया गया था और याचिकाकर्ताओं द्वारा योजित रिट याचिका को वापस लेने के रूप में निरस्त करते समय न्यायालय द्वारा पारित आदेश की एक बिल्कुल गलत व्याख्या की गई थी, बिना इसकी सामग्री को देखे। शिकायतकर्ता इस न्यायालय के समक्ष पक्षकार नहीं है।

12. मैंने सावधानीपूर्वक दिनांक 18 मई 1999 के आदेश का अवलोकन किया है, जो याचिकाकर्ताओं द्वारा योजित रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान पारित किया गया था। उक्त आदेश, उपलब्ध अभिलेखों के आधार पर वित्त अनुभाग द्वारा विचार के आधार पर पारित किया गया था और उसके बाद ही उनकी सेवाओं को अनुमोदित किया गया था। उक्त आदेश यह संकेत नहीं देता है कि वह याचिकाकर्ताओं द्वारा योजित रिट याचिका के परिणाम के अधीन था। आज तक, दिनांक 18 मई 1999 के आदेश को शिकायतकर्ता सहित किसी भी पक्ष द्वारा चुनौती नहीं दी गई है। दिनांक 18 मई 1999 के आदेश पर आगे कार्रवाई की गई और याचिकाकर्ताओं को पदोन्नति भी दी गई। आक्षेपित आदेश में इस बात का कोई संदर्भ नहीं है कि याचिकाकर्ता योग्य नहीं थे या उनकी चयन प्रक्रिया संबंधित नियमों के विरुद्ध थी।

13. आक्षेपित आदेश में केवल यह कारण बताया गया था कि रिट याचिका को वापस लेने के रूप में निरस्त कर दिया गया था और अंतरिम आदेश को उन्मोचित कर दिया गया था, हालांकि जैसा कि ऊपर संदर्भित है, अनुमोदन का आदेश उपलब्ध अभिलेखों के आधार पर था और निर्णय सामग्री के आधार पर लिया गया था और न केवल न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश के आधार पर अर्थात् वेतन की अनुमति के लिए।

14. उपरोक्त परिस्थितियों में, न्यायालय का विचारित मत है कि आक्षेपित आदेश बना नहीं रह सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि शिकायतकर्ता की शिक्षा विभाग के अधिकारियों के साथ अच्छा संबंध है कि पहले की शिकायत निरस्त होने के बाद भी, दो दशकों के बाद भी एक जांच संस्थित की गई और आक्षेपित आदेश पारित किया गया।

15. इस न्यायालय ने **अशोक कुमार द्विवेदी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य, 2025:AHC:6788** में निर्देश दिया है कि ऐसे मामलों में, शिकायतकर्ता को एक शपथ पत्र दाखिल करना चाहिए कि यदि आरोप झूठे पाए जाते हैं, तो उसके विरुद्ध विधिक कार्रवाई की जा सकती है।

16. उपरोक्त परिस्थितियों में, न केवल आक्षेपित आदेश को निरस्त किया जाता है, बल्कि यह निर्देश दिया जाता है कि माध्यमिक शिक्षा सचिव, शिकायतकर्ता के विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही शुरू करेंगे, जिसने याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध फर्जी आवेदन योजित किया है, जिसने न केवल एक अवैध आक्षेपित आदेश को जन्म दिया, बल्कि याचिकाकर्ताओं को इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के लिए भी मजबूर किया और शिकायतकर्ता का विवरण इस प्रकार है:-

"भूपेन्द्र सिंह

गांव-सुरोटी, तहसील-अछनेरा

जिला-आगरा"

17. संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक को सावधान किया जाता है कि उन्हें बिना किसी दबाव के और बिना किसी स्पष्टीकरण की मांग किए, यदि ऐसा आवश्यक हो, न्यायालय द्वारा पारित आदेशों की कोई अनावश्यक व्याख्या दिए बिना आदेश पारित करना होगा।

18. शिकायतकर्ता इस न्यायालय के समक्ष नहीं है, हालांकि यह निर्देश दिया जाता है कि प्रतिवादी-1 उसे स्पष्टीकरण मांगने के लिए नोटिस जारी करेगा कि क्यों न उस पर रु. 1,00,000/- का जुर्माना लगाया जाए क्योंकि उसकी शिकायत ने न केवल आक्षेपित आदेश को आमंत्रित किया है, बल्कि याचिकाकर्ताओं को परेशान किया है, जो पिछले दो दशकों से अधिक समय से शांतिपूर्वक अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर रहे थे।

19. आक्षेपित आदेश खंडित किया जाता है और इसका विधिक परिणाम अनुसरण करेगा और रिट याचिका उपरोक्त टिप्पणियों और निर्देशों के साथ निस्तारित की जाती है।

20. रजिस्ट्रार (अनुपालन) आवश्यक कदम उठाएंगे।

(2025) 2 ILRA 437

मूल अधिकार क्षेत्र

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 17.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अताउर रहमान मसूदी

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी

रिट-ए संख्या-1940/2025

भारत संघ एवं अन्य

...याचिकाकर्ता

बनाम

धर्मेन्द्र कुमार साहू

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता:

अजीत कुमार द्विवेदी

प्रतिवादी के अधिवक्ता:

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति-न्यायाधिकरण ने याचिकाकर्ताओं को निर्देश दिया कि वे प्रतिवादी को 90 दिनों की वैधानिक अवधि की समाप्ति पर स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति प्रदान करें-और उन्हें सभी सेवानिवृत्ति बकाया राशि का भुगतान करें-पुनरीक्षण निरस्त-वापस लेना मना-वर्तमान रिट-याचिकाकर्ता ने इस आधार पर स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति मांगी कि उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं है-पहले कार्य से उसकी अनधिकृत अनुपस्थिति के कारण दो दंड अधिरोपित किए गए थे-उस दंड में यह प्रावधान नहीं था कि उसकी अनुपस्थिति की अवधि को उसकी सेवा में नहीं गिना जाएगा या उसे उन अवधियों के लिए वेतन नहीं दिया जाएगा-उक्त अवधि के लिए प्रतिवादी की अनुपस्थिति के कारण कोई अन्य प्रतिकूल परिणाम नहीं होगा।

रिट याचिका निरस्त।

(माननीय न्यायमूर्ति अताउर रहमान मसूदी और
माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी द्वारा उद्घोषित)

1. श्री एस. बी. पांडे, भारत के विद्वान उप महान्यायवादी, जिन्हें याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता, श्री अजीत कुमार द्विवेदी द्वारा सहायता प्रदान की गई, और प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता, श्री अमित वर्मा को सुना गया।
2. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन योजित वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ताओं ने मूल आवेदन संख्या-332/00254/2021 में केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, लखनऊ द्वारा पारित आदेश दिनांक 04.08.2023 की वैधता को चुनौती दी है। याचिकाकर्ताओं ने निर्णय व आदेश दिनांक 04.08.2023 के पुनर्विचार के लिए पुनरीक्षण आवेदन संख्या-332/00006/2024 योजित किया था, जिस आवेदन को आदेश दिनांक 05.07.2024 के द्वारा निरस्त कर दिया गया है। उसके बाद, याचिकाकर्ताओं ने दिनांक 05.07.2024 के आदेश को वापस लेने के लिए एक आवेदन योजित किया, जिसे भी दिनांक 10.01.2025 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया है। याचिकाकर्ताओं ने इस रिट याचिका के माध्यम से उपरोक्त सभी आदेशों की वैधता को चुनौती दी है।
3. प्रतिवादी ने स्वास्थ्य समस्याओं के कारण स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की मांग करते हुए एक आवेदन योजित किया था। जब उस आवेदन पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया, तो उन्होंने उक्त मूल आवेदन योजित किया था, जिसमें अधिकारियों को स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की मांग करने वाले उनके आवेदन पर उचित निर्णय लेने का निर्देश मांगा गया था।

4. मूल आवेदन के प्रस्तर 4.2 में, विपक्षी पक्ष ने विशेष रूप से यह अभिकथित किया है कि उन्होंने 22 साल से अधिक की सेवा पूरी कर ली है। याचिकाकर्ताओं ने न्यायाधिकरण के समक्ष एक प्रति-शपथ पत्र योजित किया है जिसमें उन्होंने अपने मूल आवेदन में विपक्षी पक्ष द्वारा लिए गए उक्त अभिकथन को स्वीकार किया है। प्रति-शपथ पत्र में यह कहा गया था कि प्रतिवादी को दिनांक 19.02.2020 के आदेश द्वारा दो लघु दंड दिए गए थे। एक वर्ष के लिए वार्षिक वेतन वृद्धि की रोक की पहली सजा 30.06.2021 को पूरी हो गई और एक वर्ष और दो महीने के लिए वार्षिक वेतन वृद्धि की रोक की दूसरी सजा 30.08.2020 को पूरी हो गई, जिसके कारण स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए उनके आवेदन पर विचार नहीं किया जा सका और यह स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है।

5. न्यायाधिकरण ने मूल आवेदन को स्वीकार कर लिया और याचिकाकर्ताओं को निर्देश दिया कि वे 06.03.2021 से प्रभावी 90 दिनों की वैधानिक अवधि की समाप्ति पर स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की अनुमति के लिए विपक्षी पक्ष के अनुरोध को स्वीकार करें और उन्हें सभी सेवानिवृत्ति बकाया राशि का भुगतान करें।

6. याचिकाकर्ताओं द्वारा योजित एक पुनरीक्षण आवेदन को भी निरस्त कर दिया गया।

7. उसके बाद याचिकाकर्ताओं ने दिनांक 05.07.2024 के आदेश को वापस लेने के लिए एक आवेदन योजित किया, जिसमें उन्होंने पहली बार यह पक्ष लिया कि विपक्षी ने 22 वर्ष की अर्हक सेवा पूरी नहीं की है, जो मास्टर परिपत्र के खंड 11.1 में निहित प्रावधानों के अनुसार स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के अनुरोध को स्वीकार करने के लिए एक पूर्व शर्त है।

8. विद्वान उप महान्यायवादी ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता काफी लंबे समय तक सेवा से अनधिकृत रूप से अनुपस्थित रहा है और उनके द्वारा योगदान की प्रभावी सेवा केवल 18 वर्ष 5 महीने और 24 दिनों की है। वह अवधि, जिसके दौरान विपक्षी कार्य से अनधिकृत रूप से अनुपस्थित रहा, उसे उस अवधि के रूप में नहीं माना जा सकता है, जिसके दौरान वह सेवा में था। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया है कि भारत सरकार द्वारा दिनांक 26.02.2010 को जारी एक कार्यालय ज्ञापन में नियंत्रक और महालेखा परीक्षक द्वारा जारी कुछ आदेशों का उल्लेख किया गया है, जो इस प्रकार हैं:-

"5. एक अधिकारी, जो बिना किसी अधिकार के कर्तव्य से अनुपस्थित रहता है, के संबंध में परिणाम और अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया को एफ.आर. 17(1) और 17-ए के अधीन लाया गया है। एफ.आर. 17-ए (iii) के अनुसार केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 के नियम 27 के प्रावधानों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, बिना किसी अधिकार के अनुपस्थित रहना या पद का त्याग करना, कर्मचारी की सेवा में एक रुकावट या विच्छेद का कारण माना जाएगा, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा छुट्टी यात्रा रियायत, अर्ध-स्थायित्व और विभागीय परीक्षाओं में उपस्थित होने की पात्रता के उद्देश्य से अन्यथा निर्णय नहीं लिया जाता है, जिसके लिए निरंतर सेवा की न्यूनतम अवधि आवश्यक होती है।

6. नियंत्रक और महालेखा परीक्षक ने आदेश जारी किए हैं कि छुट्टी की अनुमति द्वारा कवर नहीं की गई अनुपस्थिति की अवधि को सभी उद्देश्यों अर्थात् वेतन वृद्धि, छुट्टी और पेंशन के लिए "डाईज नॉन" के रूप में माना जाना होगा। बिना छुट्टी की ऐसी अनुपस्थिति जहां यह अकेली खड़ी है और किसी अधिकृत अनुपस्थिति छुट्टी के जारी नहीं है, पेंशन के उद्देश्य से सेवा में एक रुकावट का गठन करेगी और जब तक पेंशन स्वीकृत करने वाला प्राधिकारी सिविल सेवा विनियम के अनुच्छेद 421 [अब सी.सी.एस. (पेंशन) नियमों के नियम 27] के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करके अवधि को बिना भत्ते की छुट्टी के रूप में नहीं मानता है, तब तक संपूर्ण पिछली सेवा जब्त हो जाएगी।"

9. दिनांक 26.02.2010 के कार्यालय जाप का खंड 5 प्रावधान करता है कि बिना किसी अधिकार के अनुपस्थित रहना या पद का त्याग करना, कर्मचारी की सेवा में एक रुकावट या विच्छेद का कारण माना जाएगा, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा छुट्टी यात्रा रियायत, अर्ध-स्थायित्व और विभागीय परीक्षाओं में उपस्थित होने की पात्रता के उद्देश्य से अन्यथा निर्णय नहीं लिया जाता है, जिसके लिए निरंतर सेवा की न्यूनतम अवधि आवश्यक होती है।

10. दिनांक 26.02.2010 के कार्यालय जाप का खंड 6 विशेष रूप से उल्लेख करता है कि छुट्टी की अनुमति द्वारा कवर नहीं की गई अनुपस्थिति की अवधि को सभी उद्देश्यों अर्थात् वेतन वृद्धि, छुट्टी और पेंशन के लिए "डाईज नॉन" के रूप में माना जाना होगा।

11. दिनांक 26.02.2010 के कार्यालय जाप के खंड 5 और 6 में स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति का कोई उल्लेख नहीं है और इसलिए, इस कार्यालय जाप के प्रावधान स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के अनुरोधों का निर्णय लेने के लिए प्रासंगिक नहीं हैं।

12. जब मास्टर परिपत्र का खंड 11.1 विशेष रूप से 20 वर्षों की अर्हक सेवा की अवधि के साथ-साथ सेवा का भी उल्लेख करता है, जिसका तात्पर्य अर्हक सेवा के अलावा अन्य सेवा से है और जब याचिकाकर्ताओं ने विपक्षी पक्ष के इस विशिष्ट आग्रह का खंडन नहीं किया कि उन्होंने 22 वर्ष से अधिक की सेवा पूरी कर ली है, तो यह न्यायालय याचिकाकर्ताओं को विपक्षी पक्ष के स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के अनुरोध को स्वीकार करने का निर्देश जारी करके न्यायाधिकरण द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से अलग दृष्टिकोण लेने का कोई कारण नहीं पाता है।

13. समय-समय पर रेलवे बोर्ड मास्टर परिपत्र जारी करता है, जो विषय वस्तुओं पर रेलवे बोर्ड के समेकित निर्देश हैं। रेलवे बोर्ड सभी संबंधितों की जानकारी और मार्गदर्शन के लिए इन समेकित निर्देशों को मास्टर परिपत्र के रूप में जारी करता है।

14. रेलवे बोर्ड द्वारा जारी मास्टर परिपत्र संख्या 35 में सेवानिवृत्तियों के संबंध में प्रावधान हैं और इस परिपत्र का भाग डी स्वैच्छिक सेवानिवृत्तियों से संबंधित है। इस मास्टर परिपत्र का खंड 11 स्वैच्छिक सेवानिवृत्तियों से संबंधित है और इसका संबंधित भाग नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

"11. प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिशों के आधार पर, रेलवे सेवकों की स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की योजना, उनके द्वारा अर्हक सेवा/सेवा के बीस वर्ष प्रदान करने के बाद, आनुपातिक पेंशन और ग्रेच्युटी/विशेष योगदान भविष्य निधि के लिए आनुपातिक राशि के साथ, अर्हक सेवा/सेवा के प्रति अधिकतम पांच वर्ष तक की वेटेज के साथ 9.11.77 से प्रभावी शुरू की गई है। इस योजना के अधीन, जो पूरी तरह से स्वैच्छिक है, पहल रेलवे सेवक के पास है और सरकार के पास अपने दम पर रेलवे सेवकों की सेवानिवृत्ति का आदेश देने का पारस्परिक अधिकार नहीं है।

(संदर्भ: बोर्ड का पत्र E(P&A)/I-77/RT-46 दिनांक 9.11.1977)

नोटिस की अवधि

11.1 एक रेलवे सेवक जो बीस वर्षों की अर्हक सेवा/सेवा के बाद स्वैच्छा से सेवानिवृत्त होना चाहता है, उसे नियुक्ति प्राधिकारी को लिखित रूप में तीन महीने का नोटिस देना चाहिए। योग्य मामलों में नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा तीन महीने से कम का नोटिस भी स्वीकार किया जा सकता है। स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति का नोटिस देने से पहले, एक रेलवे सेवक को उपयुक्त प्रशासनिक प्राधिकारी के संदर्भ के माध्यम से खुद को संतुष्ट करना चाहिए कि उसने पेंशन/सेवा के लिए योग्य बीस वर्ष की सेवा पूरी कर ली है, जैसा भी मामला हो, भविष्य निधि में विशेष योगदान के उद्देश्यों के लिए बीस वर्ष की सेवा पूरी कर ली है।

* * *

11.3. जहां रेलवे सेवक (अनुशासन और अपील) नियमों के अधीन कार्यवाही लंबित है या उस रेलवे सेवक के विरुद्ध एक बड़ी सजा के लिए विचार किया जा रहा है जिसने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति का नोटिस दिया है और अनुशासनात्मक प्राधिकारी, मामले की परिस्थितियों को देखते हुए, इस विचार का है कि मामले में सेवा से हटाने या बर्खास्तगी की सजा उचित होगी या उन मामलों में जहां संबंधित रेलवे सेवक के विरुद्ध अभियोजन का विचार किया जा रहा है या विधि न्यायालय में शुरू किया गया हो सकता है, नोटिस की स्वीकृति के लिए समूह 'ए' और 'बी' रेलवे सेवकों के संबंध में प्रभारी मंत्री की और समूह 'सी' और 'डी' रेलवे सेवकों के मामलों में महाप्रबंधक की स्वीकृति की आवश्यकता होगी। इसलिए, समूह 'ए' और 'बी' अधिकारियों के मामलों में, महाप्रबंधक, रेलवे बोर्ड को सलाह के लिए संदर्भ देते समय, यह संकेत करना चाहिए कि क्या संबंधित अधिकारियों के विरुद्ध एक बड़ी सजा लगाने के लिए विभागीय/सतर्कता/एसपीई जांच या परिणामी डी.ए.आर. कार्यवाही लंबित है या विचार किया जा रहा है और क्या मामले (मामलों) में सेवा से हटाने या बर्खास्तगी उचित होगी। (संदर्भ: बोर्ड के पत्र संख्या E(P&A)/I-77/RT-46 दिनांक 9.11.1977 और 26.5.1980)

11.4 एक रेलवे सेवक जो स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति का नोटिस देता है, जिसकी स्वीकृति के लिए नियुक्ति प्राधिकारी की स्वीकृति की आवश्यकता होती है, वह नोटिस की स्वीकृति मान सकता है और सेवानिवृत्ति नोटिस की शर्तों के अनुसार प्रभावी होगी, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी नोटिस की अवधि की समाप्ति से पहले विपरीत आदेश जारी नहीं करता है। (संदर्भ: बोर्ड का पत्र संख्या E(P&A)/I-77/RT-46 दिनांक 9.11.1977)"

15. मास्टर परिपत्र के खंड 11.1 और 11.2 में 'अर्हक सेवा' वाक्यांश का उपयोग करने के बाद केवल 'सेवा' अभिव्यक्ति का उपयोग, रेलवे बोर्ड के इरादे को स्पष्ट करता है कि स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की अनुमति के अनुरोध पर विचार करते समय 'अर्हक सेवा' के अलावा 'सेवा' को भी ध्यान में रखा जाएगा।

16. मास्टर परिपत्र के खंड 11.3 और 11.2 के अनुसार, स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए एक अनुरोध को तब भी स्वीकार किया जा सकता है जब रेलवे सेवक के विरुद्ध एक वृहद शास्ति के लिए कार्यवाही लंबित हो और अनुशासनात्मक प्राधिकारी का विचार हो कि मामले में सेवा से हटाने या बर्खास्तगी की सजा उचित होगी या उन मामलों में भी जहां रेलवे सेवक के विरुद्ध अभियोजन का विचार किया जा रहा है या शुरू किया गया है। ऐसी स्थिति में केवल एक शर्त यह है कि इसके लिए समूह 'ए' और 'बी' रेलवे सेवकों के संबंध में प्रभारी मंत्री की और समूह 'सी' और 'डी' रेलवे सेवकों के मामलों में महाप्रबंधक की स्वीकृति की आवश्यकता होगी। स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के अनुरोध की स्वीकृति को माना जाएगा और सेवानिवृत्ति नोटिस की शर्तों के अनुसार प्रभावी होगी, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी नोटिस की अवधि की समाप्ति से पहले विपरीत आदेश जारी नहीं करता है।

17. मास्टर परिपत्र संख्या 35 यह प्रावधान नहीं करता है कि एक व्यक्ति के स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के अनुरोध को स्वीकार नहीं किया जा सकता है, जिसे एक लघु शास्ति दी गई है।

18. प्रतिवादी ने इस आधार पर स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति मांगी है कि उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है। पहले, कर्तव्य से उनकी अनधिकृत अनुपस्थिति के लिए उन्हें दो आरोप पत्र जारी किए गए थे। 18.02.2020 को, कर्तव्यों के प्रदर्शन में लापरवाही के लिए दो अलग-अलग दंड आदेश पारित किए गए थे। एक आदेश ने संचयी प्रभाव के बिना एक वर्ष के लिए वेतन वृद्धि की रोक की सजा लगाई और दूसरे आदेश ने उन्हें संचयी प्रभाव के बिना एक वर्ष और 2 महीने के लिए वेतन वृद्धि की रोक की सजा दी। स्पष्ट रूप से, प्रतिवादी को पहले ही कर्तव्य से उनकी अनधिकृत अनुपस्थिति के लिए दंडित किया जा चुका है और उस सजा में यह प्रावधान नहीं था कि जिन अवधियों के दौरान विपक्षी पक्ष अनुपस्थित रहा, उन्हें उनकी सेवा में नहीं गिना जाएगा या उन्हें उन अवधियों के लिए वेतन नहीं दिया जाएगा। इन परिस्थितियों में, उक्त अवधि के लिए प्रतिवादी की अनुपस्थिति के कारण कोई अन्य प्रतिकूल परिणाम नहीं होगा।

19. उपरोक्त चर्चा को देखते हुए, हम विचारित मत के हैं कि प्रतिवादी द्वारा योजित मूल आवेदन को स्वीकार करते हुए केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण द्वारा पारित आक्षेपित आदेशों में कोई अवैधता नहीं है। रिट याचिका में योग्यता का अभाव है और इसे प्रवेश चरण में ही निरस्त किया जाता है।

(2025) 2 ILRA 441

मूल अधिकार क्षेत्र

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 18.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अत्ताउर रहमान मसूदी

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी

रिट-ए संख्या-1977/2025

भारत संघ एवं अन्य

...याचिकाकर्ता

बनाम

श्री संतोष कुमार एवं अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता:

विनय त्रिपाठी

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

ए. सेवा विधि-अनुकंपा नियुक्ति-योग्यता में छूट-मास्टर परिपत्र संख्या 16 और कार्यालय ज्ञाप दिनांक 11.12.2009-माता-पिता की क्रमिक मृत्यु के बाद एकमात्र संतान का अधिकार-रेलवे ने दावा किया कि छूट केवल विधवा को दी जा सकती है, शेष आश्रितों को नहीं-अनुमति-निर्णय दिया गया, रेलवे बोर्ड द्वारा जारी मास्टर परिपत्र में निहित प्रावधान सभी व्यक्तियों पर लागू होता है, जो एक मृत कर्मचारी पर आश्रित थे और यह अपने आवेदन में मृत कर्मचारियों की विधवाओं तक सीमित नहीं है-उच्च न्यायालय ने मामले के तथ्यों को प्रथम दृष्टया असाधारण परिस्थितियां निर्मित करते हुए पाया, जिन पर दिनांक 11.12.2009 के कार्यालय ज्ञाप में निहित उपरोक्त प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए शैक्षिक योग्यता में छूट देकर अनुकंपा नियुक्ति के लिए उनके दावे पर विचार करते समय विचार किया जाना चाहिए था। (प्रस्तर 17 और 18)

रिट याचिका निरस्त। (ई-1)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

1. उदित नारायण सिंह मालपहरिया बनाम राजस्व बोर्ड के अतिरिक्त सदस्य; AIR 1963 SC 786

2. सावित्री देवी बनाम जिला न्यायाधीश, गोरखपुर; (1999) 2 SCC 577

3. जोगेन्द्र सिंह जी विजय सिंह जी बनाम गुजरात राज्य; (2015) 9 SCC 1

(माननीय न्यायमूर्ति अताउर रहमान मसूदी और
माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी द्वारा उद्धोषित)

1. याचिकाकर्ताओं-भारत संघ के लिए विद्वान अधिवक्ता, श्री विनय त्रिपाठी को सुना गया।

2. वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ताओं ने मूल आवेदन संख्या-332/00317/2021 में केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, लखनऊ पीठ, लखनऊ द्वारा निर्णय व आदेश दिनांक 29.11.2024 की वैधता को चुनौती दी है।

3. प्रारंभ में, हमने नोट किया कि केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, लखनऊ पीठ, लखनऊ को इस रिट याचिका में प्रतिवादी संख्या 2 के रूप में पक्षकार बनाया गया है, हालांकि न्यायालयों और न्यायाधिकरणों को पक्षकार बनाने की प्रथा को बार-बार अस्वीकृत किया गया है।

4. उदित नारायण सिंह मालपहरिया बनाम राजस्व बोर्ड के अतिरिक्त सदस्य: AIR 1963 SC 786 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के चार माननीय न्यायमूर्तियों की पीठ ने निर्णीत किया था कि परमादेश रिट में न केवल वह न्यायाधिकरण या प्राधिकारी, जिसका आदेश रद्द किया जाना है, बल्कि वे पक्ष भी, जिनके पक्ष में उक्त आदेश जारी किया गया है, आवश्यक पक्षकार हैं।

5. हालांकि, सावित्री देवी बनाम जिला न्यायाधीश, गोरखपुर: (1999) 2 SCC 577 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दो माननीय न्यायमूर्तियों की पीठ ने निम्नानुसार टिप्पणी की थी:—

"14. इस मामले को समाप्त करने से पहले, हमारे लिए इस मामले के एक पहलू की ओर इशारा करना आवश्यक है, जो कुछ हद तक चिंताजनक है। उच्च न्यायालय में योजित रिट याचिका के साथ-साथ इस न्यायालय में योजित विशेष अनुमति याचिका में, जिला न्यायाधीश, गोरखपुर और चतुर्थ अपर सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन), गोरखपुर को प्रतिवादियों के रूप में संयोजित किया गया है और विशेष अनुमति याचिका में, उन्हें विरोध करने वाले प्रतिवादियों के रूप में दिखाया गया है। जब उच्च न्यायालय में रिट याचिका योजित की गई थी, तो न्यायिक अधिकारियों को पक्षकार बनाने की कोई आवश्यकता नहीं थी, जिन्होंने सिविल कार्यवाही में मामले का निस्तारण किया; न ही विशेष अनुमति याचिका में उन्हें पक्षकार के रूप में पक्षकार बनाने और उन्हें विरोध करने वाले प्रतिवादियों के रूप में संयोजित करने का कोई औचित्य है। हम याचिकाकर्ता द्वारा अपनाए गए तरीके को स्वीकार नहीं करते हैं, जो संबंधित न्यायिक अधिकारियों के कार्यों में अनावश्यक व्यवधान पैदा

करेगा। उन्हें किसी भी तरह से सरकार के अधिकारियों के समान नहीं माना जा सकता है। यह समय आ गया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिकाओं या भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष अनुमति याचिकाओं में सिविल कार्यवाही का निस्तारण करने वाले न्यायिक अधिकारियों को पक्षकार बनाने की प्रथा को बंद किया जाए। हम ऐसी प्रथा की कड़ी निंदा कर रहे हैं।"

(महत्व प्रदत्त)

6. यह नोट करना प्रासंगिक है कि उपरोक्त टिप्पणियां सावित्री देवी (उपरोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय के दो माननीय न्यायमूर्तियों की पीठ द्वारा की गई थीं, बिना उदित नारायण सिंह मालपहरिया (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के चार माननीय न्यायमूर्तियों की वृहद पीठ द्वारा दिए गए पूर्व निर्णय का संदर्भ दिए।

7. जोगेन्द्रसिंहजी विजयसिंहजी बनाम गुजरात राज्य: (2015) 9 SCC 1 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दो माननीय न्यायमूर्तियों की एक अन्य पीठ ने इस बिन्दु पर कई पूर्ववर्ती निर्णयों पर चर्चा की, जिसमें उदित नारायण सिंह मालपहरिया और सावित्री देवी (उपरोक्त) के निर्णय शामिल हैं और विधि को निम्नानुसार समझाया:—

"43. जैसा कि हम देख सकते हैं, हरि विष्णु कामथ [AIR 1955 SC 233], उदित नारायण सिंह [AIR 1963 SC 786] और सावित्री देवी [(1999) 2 SCC 577] में दिए गए निर्णयों को ठीक से समझा जाना चाहिए। हरि विष्णु कामथ में, वृहद पीठ एक ऐसे मामले से निपट रही थी, जो चुनाव न्यायाधिकरण से उत्पन्न हुआ था जो अस्तित्व में नहीं रहा था और यह विचार व्यक्त किया कि वह एक उचित पक्ष कैसे है। उदित नारायण सिंह में, न्यायालय वास्तव में उन पक्षों को पक्षकार बनाने के संबंध में विवाद पर चर्चा कर रहा था, जिनके पक्ष में आदेश पारित किए गए थे और उस संदर्भ में टिप्पणी की कि न्यायाधिकरण एक आवश्यक पक्ष है। सावित्री देवी में, न्यायालय ने न्यायालयों और न्यायाधिकरणों को पक्षकार बनाए जाने पर आपत्ति की। यहां यह नोट करना उचित है कि प्रत्येक मामले में निर्धारित सिद्धांतों को उचित परिप्रेक्ष्य में समझा जाना चाहिए। सिविल न्यायालय, जो मामलों का निर्णय करते हैं, शब्द के सख्त अर्थ में न्यायालय हैं। न तो न्यायालय और न ही पीठासीन अधिकारी उच्च न्यायालय के समक्ष आदेश का बचाव करता है, यह विवाद नहीं करता है। यदि उच्च न्यायालय, अपने रिट अधिकार क्षेत्र या पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में, जैसा भी हो, अभिलेख मांगता है, तो वह हमेशा उच्च न्यायालय द्वारा सदैव मंगाया जा सकता है, बिना न्यायालय या पीठासीन अधिकारी को पक्षकार बनाए। इसी तरह, समय के साथ कई न्यायाधिकरण रहे हैं, जो केवल निर्णय देते हैं और उनका विवाद से कोई लेना-देना नहीं है। हम कुछ उदाहरण उद्धृत कर सकते हैं: प्रशासनिक न्यायाधिकरण अधिनियम, 1985 के अधीन गठित न्यायाधिकरण, सीमा शुल्क, उत्पाद शुल्क और सेवा कर अपीलीय न्यायाधिकरण, आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण, बिक्री कर न्यायाधिकरण और ऐसे अन्य। प्रत्येक निर्णयकर्ता प्राधिकारी, को न्यायाधिकरण के रूप में नामित किया जा सकता है, लेकिन उक्त प्राधिकारी (प्राधिकरण) शुद्ध और सरल निर्णयकर्ता प्राधिकारियों से अलग हैं और यही कारण है कि उन्हें प्राधिकारी कहा जाता है। एक आयकर आयुक्त, चाहे वह किसी भी रैंक

को धारण कर रहा हो, जब वह निर्णय देता है, तो उसे पक्षकार बनाया जाना चाहिए, क्योंकि वह अपने आदेश का बचाव कर सकता है। वह विवाद करने का हकदार है। कई विधियों के अधीन कई प्राधिकारी हैं। इसलिए, सिद्धांत जो सुरक्षित रूप से निकाला जा सकता है, वह यह है कि प्राधिकारी या न्यायाधिकरण, जो विधि में अपने द्वारा पारित आदेशों का बचाव करने के हकदार हैं, आवश्यक पक्षकार हैं और यदि उन्हें पक्षकारों के रूप में पक्षकार नहीं बनाया जाता है, तो रिट याचिका को पोषणीय नहीं माना जा सकता है या न्यायालय अपने विवेक के प्रयोग में उन्हें पक्षकारों के रूप में पक्षकार बनाने की स्वतंत्रता दे सकता है। ऐसे न्यायाधिकरण हैं, जिन्हें अपने स्वयं के आदेश का बचाव करने की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है, और उस स्थिति में ऐसे न्यायाधिकरणों को पक्षकारों के रूप में पक्षकार बनाने की आवश्यकता नहीं है। एक और उदाहरण देने के लिए: कुछ अधिनियमों में, जिला न्यायाधीश चुनाव न्यायाधिकरणों के रूप में कार्य करते हैं, जिनके आदेशों से एक पुनरीक्षण या रिट अधिनियम के प्रावधानों के आधार पर हो सकती है। ऐसी स्थिति में, उच्चतर न्यायालय, अर्थात् उच्च न्यायालय, भले ही अभिलेखों को मंगाने की आवश्यकता हो, जिला न्यायाधीश को पक्षकार बनाने की आवश्यकता नहीं है...

(महत्व प्रदत्त)

8. केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, जो एक मामले का निर्णय करता है, इस न्यायालय के समक्ष अपने आदेश का बचाव करने का अधिकारी नहीं है और इसलिए, जोगेन्द्रसिंहजी विजयसिंहजी (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्पष्ट किए गए विधि को लागू करते हुए, केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण को इसके आदेश के विरुद्ध योजित रिट याचिका में विपक्षी के रूप में पक्षकार नहीं बनाया जाना चाहिए। इसलिए, यह याचिका पक्षों के गलत संयोजन के दोष से ग्रस्त है।

9. हालांकि, चूंकि उपरोक्त दोष एक ठीक किए जाने योग्य दोष है, हम यह पता लगाने के लिए मामले की गुणवत्ता की जांच करने के लिए आगे बढ़ते हैं कि क्या याचिका को स्वीकार किए जाने के योग्य है।

10. उपरोक्त मूल आवेदन प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दिनांक 17.04.2021 को उसके पिता की मृत्यु के परिणामस्वरूप अनुकंपा नियुक्ति की मांग करते हुए योजित किया गया है, जबकि वह याचिकाकर्ता प्राधिकारियों के अधीन एक बेयरर के रूप में काम कर रहे थे। प्रतिवादी संख्या 1 के पिता की मृत्यु के बाद उनकी विधवा और पुत्र बचे थे, लेकिन दुर्भाग्य से प्रतिवादी संख्या 1 की मां का भी दिनांक 23.04.2021 को निधन हो गया। दिनांक 10.05.2021 को, प्रतिवादी संख्या 1 ने अनुकंपा नियुक्ति के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया और बाद में उन्होंने अनुस्मारक भी प्रस्तुत किए। जब उस पर कोई कार्रवाई नहीं की गई, तो उन्होंने उक्त मूल आवेदन योजित किया।

11. याचिकाकर्ताओं ने न्यायाधिकरण के समक्ष तर्क दिया कि प्रतिवादी संख्या 1 केवल कक्षा 8वीं उत्तीर्ण है, जबकि किसी भी पद पर भर्ती के लिए न्यूनतम शैक्षिक योग्यता कक्षा 10वीं की परीक्षा उत्तीर्ण करना है।

12. न्यायाधिकरण ने कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग, भारत सरकार द्वारा दिनांक 11.12.2009 को निर्गत एक कार्यालय ज्ञाप का संदर्भ दिया, जिसमें कहा गया है कि छठे केंद्रीय वेतन आयोग की सिफारिशों के आलोक में अनुकंपा नियुक्ति के लिए तत्कालीन मौजूदा योजना के संशोधन पर विचार किया गया था और व्यय विभाग के परामर्श से यह निर्णय लिया गया था कि अनुकंपा आधार पर नियुक्ति के लिए, असाधारण परिस्थितियों में, सरकार न्यूनतम शैक्षिक मानकों को पूरा नहीं करने वाले व्यक्तियों की भर्ती पर विचार कर सकती है। सरकार उन्हें प्रशिक्षु के रूप में नियुक्त कर सकती है, जिन्हें भर्ती नियमों के अधीन निर्धारित न्यूनतम योग्यता प्राप्त करने के बाद ही नियमित वेतन-बैंड और ग्रेड-वेतन दिया जाएगा।

13. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि रेलवे बोर्ड द्वारा दिनांक 09.12.2011 को जारी परिपत्र के अनुसार, केवल मृत कर्मचारी की विधवा/पत्नी को अनुकंपा नियुक्ति दी जा सकती है, भले ही उसके पास निर्धारित शैक्षिक योग्यता न हो। वर्ष 2013 में न्यूनतम शैक्षिक योग्यता को कक्षा 8वीं से बढ़ाकर कक्षा 10वीं कर दिया गया था और तब से न्यूनतम शैक्षिक योग्यता में छूट केवल रेलवे कर्मचारियों की विधवाओं को दी गई है और किसी अन्य व्यक्ति को नहीं।

14. हमने याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता के उपरोक्त प्रस्तुतियों पर विचार किया है।

15. कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग द्वारा दिनांक 11.12.2009 को जारी कार्यालय ज्ञाप विशेष रूप से प्रावधान करता है कि:-

"अनुकंपा आधार पर नियुक्ति के लिए, असाधारण परिस्थितियों में, सरकार न्यूनतम शैक्षिक योग्यता मानकों को पूरा नहीं करने वाले व्यक्तियों की भर्ती पर विचार कर सकती है। सरकार उन्हें प्रशिक्षुओं के रूप में नियुक्त कर सकती है, जिन्हें भर्ती नियमों के अधीन निर्धारित न्यूनतम योग्यता प्राप्त करने पर ही नियमित वेतन बैंड और ग्रेड वेतन दिया जाएगा।"

16. रेलवे बोर्ड द्वारा जारी मास्टर परिपत्र संख्या 16 में शैक्षिक योग्यता में छूट के लिए एक प्रावधान था, जो कहता है कि:-

"पद के लिए निर्धारित शैक्षिक योग्यता में छूट नहीं दी जानी चाहिए। हालांकि, यदि व्यक्तिगत मामले की गुणवत्ता के आधार पर, महाप्रबंधक को लगता है कि न्यूनतम योग्यता पर ऐसी छूट बिल्कुल आवश्यक है, तो ऐसे मामलों को रेलवे मंत्रालय को भेजा जा सकता है। रेलवे बोर्ड इस शर्त के अधीन गुणवत्ता के आधार पर इन मामलों पर विचार करेगा कि उम्मीदवार निर्धारित समय सीमा के भीतर आवश्यक योग्यता प्राप्त करेंगे। ऐसे मामलों में नियुक्ति के प्रस्ताव में निम्नलिखित शर्तें होंगी:-

(i) योग्यता प्राप्त करने के लिए दी जाने वाली अवधि दो वर्ष होगी।

(ii) ऐसे व्यक्ति की सेवा में तब तक पुष्टि नहीं की जाएगी जब तक कि वह योग्यता प्राप्त नहीं कर लेता।

(iii) जब तक वह योग्यता प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक वह पदोन्नति के लिए पात्र नहीं होगा।

(iv) यदि किसी कनिष्ठ को वरिष्ठ अनुकंपा नियुक्त व्यक्ति द्वारा योग्यता प्राप्त करने से पहले पदोन्नत किया जाता है, तो कनिष्ठ की ऐसी पदोन्नति को नियमित माना जाएगा। दूसरे शब्दों में, अनुकंपा नियुक्त व्यक्ति उच्च ग्रेड में अपने कनिष्ठों के प्रति वरिष्ठता खो देगा, जिन्हें उसके द्वारा निर्धारित योग्यता प्राप्त करने से पहले अगले उच्च ग्रेड में पदोन्नत किया गया हो।

(महत्व प्रदत्त)

17. रेलवे बोर्ड द्वारा जारी मास्टर परिपत्र में निहित यह प्रावधान सभी व्यक्तियों पर लागू होता है, जो एक मृत कर्मचारी पर आश्रित थे और यह अपने आवेदन में मृत कर्मचारियों की विधवाओं तक सीमित नहीं है।

18. प्रतिवादी संख्या 1 अपने माता-पिता की एकमात्र संतान था। उसके पिता की दिनांक 17.04.2021 को मृत्यु हो गई और उसकी मां की भी दिनांक 23.04.2021 को मृत्यु हो गई। उपरोक्त तथ्य याचिकाकर्ता के मामले में प्रथम दृष्टया असाधारण परिस्थितियां बनाते हैं, जिन पर कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग द्वारा दिनांक 11.12.2009 को जारी कार्यालय ज्ञाप और रेलवे बोर्ड द्वारा जारी मास्टर परिपत्र संख्या 16 में निहित उपरोक्त प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए शैक्षिक योग्यता में छूट देकर अनुकंपा नियुक्ति के लिए उनके दावे पर विचार करते समय विचार किया जाना चाहिए था।

19. हम विचारित मत के हैं कि केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण ने सही ढंग से मूल आवेदन को स्वीकार किया है और याचिकाकर्ताओं को निर्देश दिया है कि वे उपरोक्त कार्यालय ज्ञाप और मास्टर परिपत्र के आलोक में अनुकंपा नियुक्ति के लिए प्रतिवादी संख्या 1 के मामले पर पुनर्विचार करें।

20. तदनुसार, रिट याचिका में योग्यता का अभाव है और इसे प्रवेश चरण में ही निरस्त किया जाता है।

(2025) 2 ILRA 445

मूल अधिकार क्षेत्र

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 19.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति आलोक माथुर

रिट-ए संख्या-2077/2025

गोरखनाथ शुक्ला

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

प्रदीप कुमार शुक्ला, मनीष कुमार राय

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि.

ए. सेवा विधि-वित्तीय हस्तपुस्तिका-नियम 53 और 54-सेवा में बहाली-पिछले वेतन का अधिकार-प्रासंगिक बिन्दु, जिस पर विचार करना आवश्यक है-अनुशासनात्मक कार्यवाही के शीघ्र निस्तारण में देरी करने का कोई आरोप नहीं था-प्रभाव-प्रतिवादी ने बर्खास्तगी के बाद लाभकारी रोजगार किया-अनुमति-निर्णय दिया गया, यदि कोई हो, बर्खास्तगी, सेवा से हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति के बाद उसकी बहाली पर सरकारी कर्मचारी को दिए जाने वाले पिछले वेतन को कम करने में केवल प्रासंगिक तथ्य यह होगा कि उसने अनुशासनात्मक कार्यवाही के शीघ्र निस्तारण में बाधा नहीं डाली थी-प्रतिवादियों द्वारा विचार किया गया आधार, पिछले वेतन की अनुमति के उद्देश्य से पूरी तरह से अप्रासंगिक था-याचिकाकर्ता उसके निलंबन की तिथि से उसकी बहाली की तिथि तक पूर्ण पिछले वेतन का अधिकारी होगा। (प्रस्तर 14, 15 और 18)

रिट याचिका स्वीकृत। (ई-1)

(माननीय न्यायमूर्ति आलोक माथुर द्वारा उद्घोषित)

1. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता, श्री मनीष कुमार राय और प्रतिवादियों के स्थायी अधिवक्ता को सुना गया।
2. वर्तमान रिट याचिका में परिवेदना, आक्षेपित आदेश दिनांक 28.2.2023 के संबंध में है, जिसके द्वारा उप-परगना मजिस्ट्रेट, मनकापुर ने याचिकाकर्ता के वेतन का 30 प्रतिशत पिछले वेतन के रूप में रोक लिया है, जो बर्खास्तगी के आदेश को निरस्त करने के बाद उसकी बहाली के परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता को दिया जाना है, साथ ही दिनांक 27.11.2024 के आदेश के द्वारा याचिकाकर्ता की आदेश दिनांक 28.2.2023 के विरुद्ध अपील को निरस्त कर दिया गया है।
3. संक्षेप में तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता संग्रह अमीन के रूप में काम कर रहा था, जब उसे विभागीय कार्यवाही की प्रत्याशा में आदेश दिनांक 7.12.2000 के द्वारा निलंबित कर दिया गया था। बाद में अनुशासनात्मक कार्यवाही के समापन पर याचिकाकर्ता को दिनांक 12.2.2002 के आदेश द्वारा सेवा से हटा दिया गया था, जिसके विरुद्ध याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका संख्या-3592/2003 (एस/एस) योजित की थी। उक्त रिट याचिका को आदेश दिनांक 12.5.2008 के द्वारा स्वीकार कर लिया गया था और सेवा से हटाने

के आदेश के साथ-साथ अपीलीय आदेश को भी निरस्त कर दिया गया था और मामले को जांच अधिकारी को याचिकाकर्ता द्वारा उतर प्रस्तुत करने के चरण से आगे बढ़ने के लिए प्रतिप्रेषित कर दिया गया था।

4. निर्णय व आदेश दिनांक 12.5.2008 के अनुपालन में फिर से एक जांच की गई और छह में से दो आरोप आंशिक रूप से सिद्ध हुए, लेकिन अनुशासनात्मक प्राधिकारी का मत था कि जो आरोप सिद्ध हुए हैं, वे इतने गंभीर नहीं हैं और तदनुसार दिनांक 21.8.2008 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता को बिना कोई दंड दिए सेवा में बहाल कर दिया गया और दिनांक 21.8.2008 के आदेश के प्रकाश में वह अपनी सेवानिवृत्ति तक सेवा में बना रहा।

5. यह प्रस्तुत किया गया है कि दिनांक 21.8.2008 का आदेश पारित करते समय अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता को उसके निलंबन की तिथि से उसकी बहाली की तिथि तक पिछले वेतन के भुगतान से संबंधित कोई आदेश पारित नहीं किया और तदनुसार याचिकाकर्ता ने जिला मजिस्ट्रेट को एक प्रत्यावेदन देते हुए कहा कि पिछला वेतन जब्त नहीं किया गया है और परिणामस्वरूप वह पिछले वेतन के पूर्ण भुगतान का अधिकारी है। जिला मजिस्ट्रेट ने आदेश दिनांक 17.3.2012 के द्वारा याचिकाकर्ता के प्रत्यावेदन को केवल इस आधार पर निरस्त कर दिया कि उक्त अवधि के दौरान याचिकाकर्ता ने काम नहीं किया था।

6. याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका संख्या 3845/2012 (एस/एस) योजित करके उक्त अस्वीकृति को चुनौती दी, जिसे दिनांक 18.7.2018 को स्वीकार कर लिया गया और जिला मजिस्ट्रेट को इस न्यायालय द्वारा अपने दिनांक 18.7.2018 के आदेश द्वारा जारी निर्देशों के संदर्भ में प्रत्यावेदन पर नए सिरे से निर्णय लेने का निर्देश दिया गया। याचिकाकर्ता के प्रत्यावेदन को उप-परगना मजिस्ट्रेट द्वारा दिनांक 21.8.2008 के आदेश द्वारा फिर से यह मानते हुए निरस्त कर दिया गया कि निलंबन की अवधि से उसकी बहाली तक वेतन के भुगतान के विचार के लिए 'काम नहीं तो वेतन नहीं' का सिद्धांत लागू होगा और परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता किसी पूर्व वेतन का अधिकारी नहीं होगा।

7. उक्त आदेश दिनांक 21.8.2008 को याचिकाकर्ता द्वारा फिर से इस न्यायालय के समक्ष रिट ए संख्या-6064/2019 योजित करके चुनौती दी गई, जिसमें यह न्यायालय इस मत का था कि प्रतिवादियों ने विधि के अनुसार मामले का निर्णय नहीं किया है और न ही निलंबन की उक्त अवधि के दौरान याचिकाकर्ता के लाभकारी रोजगार के संबंध में कोई कथन था और परिणामस्वरूप मामले को विधि के अनुसार नए सिरे से विचार के लिए वापस भेज दिया। यह इस न्यायालय के निर्णय व आदेश दिनांक 17.10.2022 के अनुपालन में आदेशों का वर्तमान सेट पारित किया गया है, जिनके द्वारा प्रत्यावेदन को फिर से निरस्त किया गया है।

8. यह उल्लेख करना आवश्यक है कि आदेशों के नए दौर में, जो प्रतिवादियों द्वारा पारित किए गए हैं, यह माना गया है कि वास्तव में यह याचिकाकर्ता की गलती है, जिसने इस आशय का कोई शपथ पत्र प्रस्तुत नहीं किया कि जब वह निलंबन के दौरान था, तो वह लाभकारी रूप से नियोजित नहीं था और चूंकि याचिकाकर्ता

ने स्वयं इस आशय का कोई प्रमाण पत्र नहीं दिया है कि वह लाभकारी रूप से नियोजित नहीं था, इसलिए पिछले पूर्ण वेतन के भुगतान के लिए कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता है और तदनुसार उक्त प्रत्यावेदन को निरस्त कर दिया है।

9. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि दिनांक 28.2.2023 और 27.11.2024 के आदेश अवैध और मनमाने हैं और वित्तीय हस्तपुस्तिका खंड II से IV में निहित नियमों के प्रावधानों के विपरीत हैं। उन्होंने प्रस्तुत किया है कि इस बारे में वास्तविक तथ्य कि क्या बहाली पर एक सरकारी कर्मचारी पिछले पूर्ण वेतन या पिछले वेतन के एक हिस्से का अधिकारी होगा, का निर्णय वित्तीय हस्तपुस्तिका खंड II से IV के नियम 54 के संदर्भ में किया जाना है।

10. एक बार जब एक सरकारी कर्मचारी को बहाल कर दिया गया है तो साधारण नियम यह है कि वह पिछले पूर्ण वेतन के भुगतान का अधिकारी होगा और केवल एक आधार, जो संबंधित प्राधिकारी को पिछले पूर्ण वेतन के भुगतान के लिए आदेश पारित नहीं करने के लिए प्रेरित कर सकता है, वह यह तथ्य होगा कि अपचारी सरकारी कर्मचारी अनुशासनात्मक कार्यवाही को लंबा खींचने के लिए जिम्मेदार था और यदि यह सिद्ध हो जाता है तो वह पिछले वेतन से एक निश्चित राशि काटते हुए उचित आदेश पारित कर सकता है। उन्होंने प्रस्तुत किया है कि प्रतिवादियों ने निलंबन की अवधि से उसकी बहाली की तिथि तक याचिकाकर्ता के लाभकारी रोजगार के पहलू पर विचार करके स्वयं को गलत दिशा दी है। उन्होंने प्रस्तुत किया है कि लाभकारी रोजगार का यह पहलू केवल तभी प्रासंगिक होगा, जब प्रतिवादी उसके निलंबन की अवधि के दौरान अपचारी सरकारी कर्मचारी को निर्वाह भत्ते के भुगतान पर विचार कर रहे हों। उन्होंने प्रस्तुत किया है कि मामले के इस पहलू का प्रावधान नियम 53, उप खंड 2 में किया गया है, जहां जब सरकारी कर्मचारी द्वारा एक प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया जाता है कि वह व्यवसाय या पेशे या व्यवसाय में लाभकारी रूप से नियोजित नहीं था, तभी निर्वाह भत्ता दिया जा सकता है। यह प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान मामले में कोई विवाद नहीं है कि वास्तव में याचिकाकर्ता को निर्वाह भत्ता दिया गया था, इस तथ्य के बाद भी कि उसने संबंधित प्राधिकारी की संतुष्टि के लिए प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया। निर्वाह भत्ता रोका जा सकता था, लेकिन याचिकाकर्ता द्वारा इस तथ्य से संबंधित किसी भी ऐसे प्रमाण पत्र के प्रस्तुत न होने पर कि वह किसी अन्य व्यवसाय, पेशे या व्यवसाय में संलग्न नहीं था, उक्त बाधा को पार कर लिया गया जब याचिकाकर्ता को फिर से निर्वाह भत्ता दिया गया और बाद में उस चरण में जब याचिकाकर्ता को हटाने की सजा नहीं दी गई थी, तो मामले का केवल एक पहलू जो विचार किए जाने के लिए शेष रहता है, वह अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान याचिकाकर्ता द्वारा हुई देरी से संबंधित है। यह उक्त तथ्य में है कि उन्होंने प्रस्तुत किया है कि आक्षेपित आदेश विवेक के गैर-अनुप्रयोग से ग्रस्त है और अवैध, मनमाना है और तदनुसार बनाए नहीं रखा जा सकता है।

11. दूसरी ओर, विद्वान राज्य अधिवक्ता ने रिट याचिका का विरोध किया है लेकिन उक्त तथ्यों पर विवाद नहीं करते हैं।

12. प्रतिद्वंद्वी तर्कों को सुनने के बाद, केवल एक बिन्दु, जो इस न्यायालय द्वारा विचार के लिए आता है, वह यह है कि क्या जब एक सरकारी कर्मचारी को बर्खास्तगी या हटाने की सजा दी जाने के बाद सेवा में बहाल किया जाता है, तो दो प्रावधान, जो विचार के लिए आवश्यक हैं, वे वित्तीय हस्तपुस्तिका के 53 और 54 हैं, जो तत्काल संदर्भ के लिए यहां निम्नानुसार उद्धृत किए गए हैं:-

"53. (1) नियुक्ति प्राधिकारी के आदेश द्वारा निलंबन के अधीन या निलंबन के अधीन माने जाने वाले सरकारी कर्मचारी, निम्नलिखित भुगतानों के अधिकारी होंगे, अर्थात्:-

(ए) निर्वाह भत्ता, जो उस छुट्टी वेतन के बराबर राशि होगी, जो सरकारी कर्मचारी को मिली होती यदि वह आधे औसत वेतन पर या आधे वेतन पर छुट्टी पर होता और इसके अलावा, महंगाई भत्ता, यदि ऐसे छुट्टी वेतन के आधार पर देय हो:

परंतु जहां निलंबन की अवधि तीन महीने से अधिक हो, वहां वह प्राधिकारी, जिसने निलंबन का आदेश दिया है या माना जाता है कि उसने दिया है, पहले तीन महीनों की अवधि के बाद की किसी भी अवधि के लिए निर्वाह भत्ते की राशि को निम्नानुसार बदलने में सक्षम होगा:-

(i) निर्वाह भत्ते की राशि को उचित राशि में बढ़ाया जा सकता है, जो पहले तीन महीनों की अवधि के दौरान स्वीकार्य निर्वाह भत्ते के 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होगी, यदि उक्त प्राधिकारी की राय में, निलंबन की अवधि को लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए लंबा किया गया है, जिसके लिए सरकारी कर्मचारी जिम्मेदार नहीं है;

(ii) निर्वाह भत्ते की राशि को उचित राशि में कम किया जा सकता है, जो पहले तीन महीनों की अवधि के दौरान स्वीकार्य निर्वाह भत्ते के 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होगी, यदि उक्त प्राधिकारी की राय में, निलंबन की अवधि को लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के कारण लंबा किया गया है, जिसके लिए सरकारी कर्मचारी जिम्मेदार हैं;

(iii) महंगाई भत्ते की दर उप-खंड (i) और (ii) के अधीन स्वीकार्य निर्वाह भत्ते की बढ़ी हुई या घटी हुई राशि पर आधारित होगी।

(बी) समय-समय पर वेतन के आधार पर स्वीकार्य कोई अन्य प्रतिपूरक भत्ता, जो सरकारी कर्मचारी को निलंबन की तिथि को प्राप्त था:

परंतु सरकारी कर्मचारी प्रतिपूरक भत्तों का अधिकारी नहीं होगा, जब तक कि उक्त प्राधिकारी संतुष्ट नहीं है कि सरकारी कर्मचारी उस व्यय को पूरा करना जारी रखता है, जिसके लिए वे दिए गए हैं।

(2) उप-नियम (1) के अधीन कोई भुगतान नहीं किया जाएगा, जब तक कि सरकारी कर्मचारी एक प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं करता है कि वह किसी अन्य रोजगार, व्यवसाय, पेशे या व्यवसाय में संलग्न नहीं है:

परंतु सेवा से बर्खास्त या हटाए गए सरकारी कर्मचारी के मामले में, जिसे ऐसी बर्खास्तगी या हटाने की तिथि से निलंबन के अधीन रखा गया माना जाता है या जारी रखा जाता है और जो किसी अवधि या अवधियों के लिए ऐसा प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने में विफल रहता है, जिसके दौरान वह निलंबन के अधीन रखा गया माना जाता है या जारी रखा जाता है, वह निर्वाह भत्ते और अन्य भत्तों के बराबर राशि का अधिकारी होगा, जो उसकी आय से कम है, ऐसी अवधि या अवधियों के दौरान, जैसा भी हो, निर्वाह भत्ते और अन्य भत्तों की राशि से कम है जो अन्यथा उसके लिए स्वीकार्य होते; जहां उसके लिए स्वीकार्य निर्वाह और अन्य भत्ते उसके द्वारा अर्जित राशि के बराबर या उससे कम हैं, इस प्रावधान में कुछ भी उस पर लागू नहीं होगा।

(यह संशोधन 26 दिसंबर 1981 से प्रभावी माना जाएगा)।

राज्यपाल के नियम 53 के संबंध में आदेश

1. निलंबन प्राधिकारी, निलंबन के अधीन सरकारी कर्मचारी के स्थान पर एक प्रतिस्थापन नियुक्त कर सकता है, बशर्ते निलंबन की अवधि छह महीने से अधिक न हो। यहां 'प्रतिस्थापन' शब्द का अर्थ परिणामी रिक्ति में या व्यवस्थाओं की शृंखला में सबसे नीचे नियुक्त प्रतिस्थापन से है।

2. सरकार के विभागों को छह महीने से अधिक निलंबन के अधीन सरकारी कर्मचारी के स्थान पर एक प्रतिस्थापन नियुक्त करने के लिए अधिकृत किया गया है।

3. राजस्व बोर्ड को हर तीन महीने में सरकार को सूचना के अधीन छह महीने से अधिक निलंबन के अधीन सरकारी कर्मचारी के स्थान पर एक प्रतिस्थापन नियुक्त करने के लिए अधिकृत किया गया है।

4. मंडल के आयुक्तों को हर तीन महीने में राजस्व बोर्ड को सूचना के अधीन छह महीने से अधिक निलंबन के अधीन सरकारी कर्मचारी के स्थान पर एक प्रतिस्थापन नियुक्त करने के लिए अधिकृत किया गया है।

नोट-ऐसे रोजगार को स्वीकृत करने वाला प्राधिकारी, महालेखाकार का विशेष ध्यान स्वीकृति की ओर आकर्षित करेगा।

(13 जुलाई 1974 से प्रभावी)

*54. (1) जब एक सरकारी कर्मचारी, जिसे बर्खास्त, हटाया गया या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया गया है, अपील या पुनर्विचार के परिणामस्वरूप बहाल किया जाता है या बहाल किया गया होता लेकिन निलंबन के दौरान या नहीं, सेवानिवृत्ति पर उसकी सेवानिवृत्ति के लिए, बहाली का आदेश देने में सक्षम प्राधिकारी विचार करेगा और एक विशिष्ट आदेश करेगा-

(ए) उसकी बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले निलंबन की अवधि सहित कर्तव्य से उसकी अनुपस्थिति की अवधि के लिए सरकारी कर्मचारी को दिए जाने वाले वेतन और भत्तों के संबंध में; और

(बी) क्या उक्त अवधि को कर्तव्य पर बिताई गई अवधि के रूप में माना जाएगा या नहीं।

(2) जहां बहाली का आदेश देने में सक्षम प्राधिकारी की राय है कि जिस सरकारी कर्मचारी को बर्खास्त, हटाया गया या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया गया था, उसे पूरी तरह से बरी कर दिया गया है, सरकारी कर्मचारी को, उप-नियम (6) के प्रावधानों के अधीन, पूर्ण वेतन और भत्ते दिए जाएंगे जो उसे मिले होते, यदि उसे बर्खास्त, हटाया या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त नहीं किया गया होता या ऐसी बर्खास्तगी, हटाने या सेवानिवृत्ति से पहले निलंबित नहीं किया गया होता:

परंतु जहां ऐसा प्राधिकारी की राय है कि सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध शुरू की गई कार्यवाही की समाप्ति सीधे सरकारी कर्मचारी के लिए जिम्मेदार कारणों से विलंबित हुई थी, वह उसे उस तिथि से साठ दिनों के भीतर अपना प्रत्यावेदन देने का अवसर देने के बाद जिस पर इस संबंध में संचार उस पर दिया गया है और यदि कोई हो, उसके द्वारा प्रस्तुत प्रत्यावेदन पर विचार करने के बाद, लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए निर्देश दे सकता है कि सरकारी कर्मचारी को, उप-नियम (7) के प्रावधानों के अधीन, ऐसी देरी की अवधि के लिए केवल ऐसे वेतन और भत्तों की राशि (पूरी नहीं) का भुगतान किया जाएगा जैसा कि वह निर्धारित कर सकता है।

*यह संशोधित नियम 3 मई 1980 से प्रभावी है।

कि उप-नियम (7) के प्रावधानों के अधीन, सरकारी सेवक को ऐसा वेतन व भत्तों में से वह राशि (जो पूर्ण न हो) विलंब की अवधि के लिए भुगतान की जाएगी, जैसा वह उचित समझे,

(3) उप-नियम (2) के अधीन आने वाले मामले में, बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले निलंबन की अवधि सहित कर्तव्य से अनुपस्थिति की अवधि को सभी उद्देश्यों के लिए कर्तव्य पर बिताई गई अवधि के रूप में माना जाएगा।

(4) *उप-नियम (2) द्वारा आच्छादित मामलों के अलावा अन्य मामलों में [जिसमें वे मामले शामिल हैं जहां बर्खास्तगी, हटाने या सेवा से अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को अपीलीय या समीक्षा प्राधिकारी द्वारा केवल संविधान के अनुच्छेद 311 के खंड (1) या खंड (2) की आवश्यकताओं के गैर-अनुपालन के आधार पर निरस्त कर दिया जाता है और कोई आगे की जांच का प्रस्ताव नहीं है], सरकारी कर्मचारी को, उप-नियमों (6) और (7) के प्रावधानों के अधीन, वेतन और भत्तों की ऐसी राशि (पूरी नहीं) का भुगतान किया जाएगा जो उसे मिली होती यदि उसे बर्खास्त, हटाया या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त नहीं किया गया होता या ऐसी बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले निलंबित नहीं किया गया होता, जैसा भी मामला हो, जैसा कि सक्षम प्राधिकारी

निर्धारित कर सकता है, प्रस्तावित मात्रा की सूचना सरकारी कर्मचारी को देने के बाद और इस संबंध में उसके द्वारा प्रस्तुत प्रत्यावेदन पर विचार करने के बाद, यदि कोई हो, ऐसी अवधि के भीतर (जो किसी भी स्थिति में नोटिस दिए जाने की तिथि से साठ दिनों से अधिक नहीं होगी) जैसा कि नोटिस में निर्दिष्ट किया जा सकता है।

(5) उप-नियम (4) के अधीन आने वाले मामले में, बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले निलंबन की अवधि सहित कर्तव्य से अनुपस्थिति की अवधि को कर्तव्य पर बिताई गई अवधि के रूप में नहीं माना जाएगा, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी विशेष रूप से निर्देश नहीं देता है कि इसे किसी निर्दिष्ट उद्देश्य के लिए ऐसा माना जाएगा:

परंतु यदि सरकारी कर्मचारी ऐसा चाहता है तो ऐसा प्राधिकारी निर्देश दे सकता है कि बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले निलंबन की अवधि सहित कर्तव्य से अनुपस्थिति की अवधि को सरकारी कर्मचारी के लिए देय और स्वीकार्य किसी भी प्रकार की छुट्टी में परिवर्तित किया जाएगा।

(6) उप-नियम (2) या उप-नियम (4) के अधीन भत्तों का भुगतान उन सभी अन्य शर्तों के अधीन होगा जिनके अधीन ऐसे भत्ते स्वीकार्य हैं।

(7) उप-नियम (2) के प्रावधान के अधीन या उप-नियम (4) के अधीन निर्धारित राशि, नियम 53 के अधीन स्वीकार्य निर्वाह भत्ते और अन्य भत्तों से कम नहीं होगी।

(8) इस नियम के अधीन एक सरकारी कर्मचारी को उसकी बहाली पर किया गया कोई भी भुगतान, यदि कोई हो, उसकी हटाने, बर्खास्तगी या अनिवार्य सेवानिवृत्ति की तिथि के बीच की अवधि के दौरान रोजगार के माध्यम से अर्जित राशि के समायोजन के अधीन होगा, जैसा भी मामला हो,

*यह संशोधित नियम 19 फरवरी 1986 से प्रभावी है

और बहाली की तिथि-जहां इस नियम के अधीन स्वीकार्य परिलब्धियां कहीं और रोजगार के दौरान अर्जित राशियों के बराबर या उससे कम हैं, सरकारी कर्मचारी को कुछ भी नहीं दिया जाएगा।

नोट-जहां सरकारी कर्मचारी बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति के बाद बहाली के आदेशों के जारी होने के बाद उचित समय के भीतर कर्तव्य के लिए रिपोर्ट नहीं करता है, उसे ऐसी अवधि के लिए कोई वेतन और भत्ते नहीं दिए जाएंगे जब तक कि वह वास्तव में प्रभार नहीं ले लेता है।"

13. नियम 53 उस अवधि के दौरान निर्वाह भत्ते के भुगतान का प्रावधान करता है, जब सरकारी कर्मचारी को निलंबन के अधीन रखा गया है, जबकि नियम 52 प्रावधान करता है कि कोई भुगतान नहीं किया जाएगा जब तक कि सरकारी कर्मचारी प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं करता है कि वह लाभकारी रूप से नियोजित नहीं था,

जबकि नियम 54 पिछले वेतन के भुगतान का प्रावधान करता है, जब एक सरकारी कर्मचारी, जिसे बर्खास्त, हटाया या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया गया है, अपील या समीक्षा में हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप बहाल किया जाता है और खंड 2 प्रावधान करता है कि जब उक्त सरकारी कर्मचारी को पूरी तरह से बरी करके बहाल किया जाता है तो वह पूर्ण भत्ते का भुगतान किया जाना है जो उसे मिला होता यदि उसे बर्खास्त, हटाया या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त नहीं किया गया होता। ऐसे खंड 6 की सीमा के अधीन जो प्रावधान करता है कि भत्ते का भुगतान उन अन्य शर्तों के अधीन होगा जिनके अधीन ऐसे भत्ते स्वीकार्य हैं। उप-खंड 2 के प्रावधान में यह प्रावधान है कि जहां ऐसा प्राधिकारी की राय है कि सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध शुरू की गई कार्यवाही की समाप्ति सीधे सरकारी कर्मचारी के लिए जिम्मेदार कारणों से विलंबित हुई थी, वह उसे उस तिथि से साठ दिनों के भीतर अपना प्रत्यावेदन देने का अवसर देने के बाद जिस पर इस संबंध में संचार उस पर दिया गया है और यदि कोई हो, उसके द्वारा प्रस्तुत प्रत्यावेदन पर विचार करने के बाद, लिखित रूप से दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए निर्देश दे सकता है कि सरकारी कर्मचारी को ऐसी देरी की अवधि के लिए केवल ऐसे वेतन और भत्तों की राशि (पूरी नहीं) का भुगतान किया जाएगा जैसा कि वह निर्धारित कर सकता है।

14. तदनुसार, यदि कोई हो, बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति के बाद उसकी बहाली पर सरकारी कर्मचारी को दिए जाने वाले पिछले वेतन को कम करने में केवल प्रासंगिक विचार यह तथ्य होगा कि उसने अनुशासनात्मक कार्यवाही के शीघ्र निस्तारण में बाधा नहीं डाली थी।

15. वर्तमान मामले में, प्रतिवादियों द्वारा पारित आदेशों के अवलोकन से यह पता नहीं चलता है कि इस मुद्दे को प्राधिकारी द्वारा किसी भी समय उठाया या विचार किया गया था, लेकिन केवल एक बिन्दु, जो उनके द्वारा विचार किया गया था, वह याचिकाकर्ता द्वारा उसके निलंबन की तिथि से उसकी बहाली की तिथि तक लाभकारी रोजगार से संबंधित था। यह न्यायालय विचारित मत का है कि प्रतिवादियों द्वारा विचार किया गया आधार पिछले वेतन की अनुमति के उद्देश्य से पूरी तरह से अप्रासंगिक था।

16. जैसा कि हमने पहले ही चर्चा की है, प्रासंगिक बिन्दु मात्र अनुशासनात्मक कार्यवाही में देरी के लिए सरकारी कर्मचारी की जिम्मेदारी ही है। पूर्व वेतन के उक्त बिन्दु को इस तथ्य पर विचार करते हुए निस्तारित किया जाना है कि किसी भी आदेश में याचिकाकर्ता के विरुद्ध ऐसे आरोप नहीं लगाए गए हैं। हम याचिकाकर्ता के निलंबन की तिथि से उसकी बहाली की तिथि तक पूर्व वेतन को रोकने का कोई कारण नहीं पाते हैं। तदनुसार, जिला मजिस्ट्रेट, गोंडा द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 27.11.2024 और उप-परगना मजिस्ट्रेट, मनकापुर, जिला गोंडा द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 28.2.2023 खंडित किए जाते हैं।

17. रिट याचिका स्वीकार की जाती है।

18. याचिकाकर्ता उसके निलंबन की तिथि से उसकी बहाली की तिथि तक पूर्व पूर्ण वेतन का अधिकारी होगा, जो उसे शीघ्रता से, अधिमानतः इस आदेश की प्रमाणित प्रति सक्षम प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किए जाने की तिथि से दो महीने की अवधि के भीतर दिया जाएगा।

19. उक्त परिस्थितियों में, हमें कोई संदेह नहीं है कि एक बार जब याचिकाकर्ता को कोई सजा नहीं दी गई है, तो निलंबन के अधीन बिताई गई अवधि को नियम 54 के प्रावधान में प्रदान किए गए अनुसार कर्तव्य पर बिताई गई अवधि के रूप में विधिवत माना जाना है। उपरोक्त के अलावा, प्रतिवादियों के लिए नियम 54 के उप-खंड 3 में प्रदान किए गए लाभ को नहीं देने का कोई कारण नहीं है, जो याचिकाकर्ता द्वारा उसके निलंबन से उसकी बहाली की तिथि तक की अवधि को सभी उद्देश्यों के लिए कर्तव्य पर बिताई गई अवधि के रूप में माना जाए। इसलिए, यह प्रावधान किया जाता है कि याचिकाकर्ता द्वारा निलंबन के अधीन बिताई गई अवधि को कर्तव्य पर बिताई गई अवधि मानी जाएगी।

(2025) 2 ILRA 452

मूल अधिकार क्षेत्र

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 24.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति आलोक माथुर

रिट-ए संख्या-2211/2025

दिनेश्वर मिश्रा

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

सूर्य मणि सिंह, अरुण प्रताप वर्मा

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि., अभिनव त्रिवेदी

ए. सेवा विधि-उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन एवं अपील) नियमावली, 1999-नियम 9-दंड- दो वेतन वृद्धियों की रोक-जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी-हालांकि, अनुशासनात्मक अधिकारी ने याचिकाकर्ता को दोषी मानते हुए, किसी अन्य अधिकारी की किसी स्वतंत्र रिपोर्ट पर भरोसा किया- अनुमति-निर्णीत किया गया, अनुशासनात्मक अधिकारी केवल उस सामग्री पर विचार करने के लिए बाध्य है, जो जांच कार्यवाही के दौरान प्रस्तुत की गई है। यदि जांच कार्यवाही के दौरान प्रस्तुत की गई सामग्री के अवलोकन पर, उसे जांच अधिकारी

द्वारा दर्ज किए गए रुख से अलग रुख अपनाने के लिए प्रेरित करता है, तो वह जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होते हुए याचिकाकर्ता को नोटिस जारी करने में अपनी क्षमता के भीतर है, लेकिन इस स्तर पर वह जांच के दायरे को नहीं बढ़ा सकता है और किसी तीसरे व्यक्ति से राय नहीं ले सकता है और उक्त सामग्री पर भरोसा करते हुए सरकारी कर्मचारी पर दंड नहीं लगा सकता है-1999 की नियमावली के नियम 9 का घोर उल्लंघन किया गया है। (प्रस्तर 13, 15 और 16)

रिट याचिका स्वीकृत। (ई-1)

(माननीय न्यायमूर्ति आलोक माथुर द्वारा उद्घोषित)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, श्री सूर्य मणि के साथ-साथ प्रतिवादी के लिए स्थायी अधिवक्ता को सुना गया।
2. पक्षकारों की सहमति से, याचिका को प्रवेश पर ही निर्णीत किया जा रहा है।
3. याचिकाकर्ता ने प्रमुख सचिव, गन्ना विभाग द्वारा पारित आदेश दिनांक 23.9.2024 से व्यथित होकर इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है, जिसके द्वारा दो वेतन वृद्धियों की स्थायी रोक का दंड दिया गया है, और याचिकाकर्ता को निंदा प्रविष्टि भी दी गई है।
4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने बलपूर्वक तर्क दिया है कि याचिकाकर्ता पर दंड अधिरोपित करते समय प्रतिवादियों द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया, उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन एवं अपील) नियमावली, 1999 (जिसे इसके बाद 1999 की नियमावली के रूप में संदर्भित किया जाएगा) के घोर उल्लंघन में है, विशेष रूप से नियम 9, जहां जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता को सभी आरोपों से बरी कर दिया था। जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता के नियंत्रण अधिकारी की राय मांगी और बिना कोई अवसर दिए उक्त दंड दिया। उन्होंने प्रस्तुत किया है कि संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन करने के अतिरिक्त, उक्त दंड 1999 की नियमावली के नियम 9 के प्रावधानों के विपरीत है और इसलिए खंडित किए जाने योग्य है।
5. रिट याचिका में बताए गए मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता को सहारनपुर में उप गन्ना आयुक्त के पद पर तैनात किया गया था, जब उसके विरुद्ध टैगिंग आदेशों का प्रभावी ढंग से पालन नहीं करने के लिए कुछ आरोप लगाए गए थे, जो जिला मजिस्ट्रेट द्वारा गन्ना मूल्य के भुगतान को सुनिश्चित करने के लिए चीनी मिलों के उत्पाद के विरुद्ध जारी किए जाते हैं और जांच कार्यवाही दिनांक 13.9.2023 को याचिकाकर्ता को समान प्रकृति के चार आरोपों वाली आरोप पत्र जारी करके शुरू हुई।

6. यह प्रस्तुत किया गया है कि हालांकि जिला मजिस्ट्रेट का आदेश निर्देश देता है कि गन्ना अधिकारी द्वारा गन्ना और गुड़ आदि की बिक्री से एकत्रित सभी राजस्व का उपयोग इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे किसानों को गन्ना मूल्य का 85 प्रतिशत भुगतान किया जाए, प्रभावी ढंग से पर्यवेक्षण नहीं किया गया था और तदनुसार उक्त लापरवाही के लिए याचिकाकर्ता पर आरोप लगाया गया था।

7. याचिकाकर्ता ने दिनांक 26.5.2022 को आरोप पत्र का अपना उत्तर दायर किया था और उक्त आरोपों से इनकार किया था। जांच अधिकारी ने दिनांक 9.1.2023 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और याचिकाकर्ता को सभी आरोपों से बरी कर दिया और इस संबंध में प्रस्तुत सभी सामग्रियों से निपटा और पाया कि यह जिला गन्ना अधिकारी, शामिल है, जिसने जिला मजिस्ट्रेट के निर्देशों का पालन नहीं किया है, जिसके कारण किसानों को गन्ना मूल्य के भुगतान की कोई प्रभावी वसूली नहीं हुई।

8. याचिकाकर्ता के अनुशासनात्मक अधिकारी ने दिनांक 7.6.2023 को एक कारण बताओ नोटिस जारी किया, जिसमें कहा गया कि हालांकि जांच अधिकारी के अनुसार याचिकाकर्ता को सभी चार आरोपों से बरी कर दिया गया है, लेकिन आगे दर्ज किया कि याचिकाकर्ता ने पर्याप्त सबूत नहीं दिए और तदनुसार वह लापरवाही का दोषी है और याचिकाकर्ता से इसका उत्तर प्रस्तुत करने के लिए कहा गया है। यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता को जांच कार्यालय द्वारा सभी आरोपों से बरी कर दिया गया था और इसका कोई उल्लेख नहीं है कि अनुशासनात्मक अधिकारी ने कारण बताओ नोटिस जारी करने के चरण में जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होते हुए याचिकाकर्ता को अपना उत्तर प्रस्तुत करने का निर्देश दिया था कि उसे लापरवाही का दोषी क्यों नहीं माना जाना चाहिए।

9. याचिकाकर्ता ने दिनांक 8.1.2023 को अपना उत्तर प्रस्तुत किया और सभी आरोपों से इनकार किया और दिनांक 23.9.2024 के आक्षेपित आदेश के माध्यम से याचिकाकर्ता पर दंड लगाया गया है, जिसे वर्तमान रिट याचिका में चुनौती दी गई है।

10. आक्षेपित आदेश में, यह कहा गया है कि जांच रिपोर्ट को आगे याचिकाकर्ता के नियंत्रण अधिकारी, जो गन्ना आयुक्त है, को भेजा गया था और मामले में उनकी राय भी मांगी गई थी, उक्त राय की एक प्रति याचिकाकर्ता को कभी नहीं दी गई थी और उक्त राय जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद मांगी गई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि गन्ना आयुक्त ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध राय दी और कहा कि वास्तव में यह याचिकाकर्ता है, जो उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों का दोषी है और केवल गन्ना आयुक्त की राय पर भरोसा करते हुए याचिकाकर्ता पर वर्तमान दंड अधिरोपित किया गया है।

11. संपूर्ण सामग्री से हम पाते हैं कि जांच रिपोर्ट के उसके आदेश में गन्ना आयुक्त की राय का कोई उल्लेख नहीं है, जो स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि जांच कार्यवाही के दौरान कोई अन्य राय अभिलेख पर उपलब्ध नहीं थी। यह अनुशासनात्मक अधिकारी है, जिसने जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद राय प्राप्त की और

याचिकाकर्ता को कभी सामग्री से अवगत नहीं कराया गया। तदनुसार, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि संपूर्ण जांच दूषित हो गई है और रद्द किए जाने योग्य है।

12. दूसरी ओर, विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता को सुनवाई का पूरा अवसर दिया गया था। उन्होंने आरोप पत्र का जवाब प्रस्तुत किया था और जांच अधिकारी ने उन गवाहों की प्रति-परीक्षा करने का पूरा अवसर दिया था, जिन्होंने उक्त जांच में बयान दिया था। वह इस तथ्य पर विवाद नहीं करते हैं कि जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता को सभी आरोपों से बरी कर दिया था, लेकिन प्रस्तुत करते हैं कि अनुशासनात्मक अधिकारी नियम 9 उप खंड 2 के अनुसार अपनी क्षमता के भीतर था कि वह अनुशासनात्मक अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत हो और मामले में एक और दृष्टिकोण ले सकता है। उन्होंने प्रस्तुत किया है कि केवल इसलिए कि जांच कार्यवाही ने याचिकाकर्ता को बरी कर दिया, इसका मतलब यह नहीं है कि अनुशासनात्मक अधिकारी ने भी उसे बरी कर दिया और तदनुसार प्रस्तुत करते हैं कि अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री थी, जो इंगित करती थी कि याचिकाकर्ता उसके विरुद्ध तय किए गए आरोपों का दोषी था और रिट याचिका को खारिज करने की प्रार्थना करते हैं।

13. प्रतिद्वंद्वी तर्कों को सुनने के बाद, विचार के लिए केवल एक बिंदु जो वर्तमान याचिका में आता है, वह यह है कि क्या अनुशासनात्मक अधिकारी जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद, गन्ना आयुक्त से राय के रूप में कोई स्वतंत्र रिपोर्ट मांग सकता था। वर्तमान मामले में, ऐसा प्रतीत होता है कि गन्ना आयुक्त ने अनुशासनात्मक अधिकारी को अपनी राय दी है, जिसमें उनके अनुसार याचिकाकर्ता उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों का दोषी था, केवल गन्ना आयुक्त द्वारा दर्ज निष्कर्षों पर भरोसा करते हुए, याचिकाकर्ता को दोषी माना गया है।

14. यह देखा गया है कि जांच कार्यवाही में अपचारी सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध आरोपों को जांच कार्यवाही के दौरान ही सामग्री प्रस्तुत करके सिद्ध करने की अपेक्षा की जाती है। यह अभियोजन का कर्तव्य है कि वह सभी अभिलेख और साक्ष्य जांच अधिकारी के समक्ष रखे, जो सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को सिद्ध कर सकते हैं, जबकि दूसरी ओर, सरकारी कर्मचारी को उसके विरुद्ध लगाए गए सभी आरोपों और आक्षेपों का खंडन करने का पूरा अवसर दिया जाता है। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया है कि उन सभी गवाहों की प्रति-परीक्षा करने का अधिकार, जिन्होंने अभियोजन के पक्ष में बयान दिया है और यह केवल जांच के दौरान उपलब्ध सामग्री के विस्तृत विचार के बाद है कि जांच अधिकारी अनुशासनात्मक अधिकारी को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करता है। अनुशासनात्मक अधिकारी 1999 की नियमावली के नियम 9 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए, उन साक्ष्यों और सामग्री को स्वीकार करना है, जो उक्त जांच के दौरान सामने आई हैं अर्थात् वह सामग्री जो जांच अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत की गई है। तदनुसार, नियम 9 के अधीन उसे जांच अधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्षों से असहमत होने का अधिकार है, जिस स्थिति में वह अपनी असहमति या असहमति के कारणों को दर्शाते हुए एक नया कारण बताओ नोटिस जारी करने के लिए बाध्य है और यह केवल सरकारी कर्मचारी से प्रतिक्रिया प्रस्तुत करने के बाद ही है कि वह एक निर्णय लेगा, जो जांच अधिकारी की रिपोर्ट से अलग है, यदि

उसे लगता है कि जांच अधिकारी ने कुछ पहलुओं से निपटा नहीं है या कुछ साक्ष्य दर्ज किए हैं, तो अनुशासनात्मक अधिकारी अपनी क्षमता के भीतर होगा कि वह मामले को नई जांच के लिए वापस भेज दे या जांच अधिकारी द्वारा कोई और रिपोर्ट दी जाती है और तदनुसार वह जांच रिपोर्ट को स्वीकार कर सकता है जहां अपचारी सरकारी कर्मचारी को आरोपों से बरी कर दिया गया है और जांच कार्यवाही को अपना सकता है।

15. वर्तमान मामले में, यह देखते हुए कि जांच अधिकारी द्वारा गन्ना आयुक्त की राय मांगने के लिए एक प्रक्रिया का पालन किया गया है। ऐसी राय की मांग करना नियम 9 के प्रावधानों के विपरीत है और अनुशासनात्मक अधिकारी केवल उस सामग्री पर विचार करने के लिए बाध्य है, जो जांच कार्यवाही के दौरान प्रस्तुत की गई है। यदि जांच कार्यवाही के दौरान प्रस्तुत की गई सामग्री के अवलोकन पर, उसे जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए से अलग रख अपनाने के लिए प्रेरित करता है, तो वह जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होते हुए याचिकाकर्ता को नोटिस जारी करने में अपनी क्षमता के भीतर है, लेकिन इस स्तर पर वह जांच के दायरे को नहीं बढ़ा सकता है और किसी तीसरे व्यक्ति से राय नहीं ले सकता है और उक्त सामग्री पर भरोसा करते हुए सरकारी कर्मचारी पर दंड नहीं लगा सकता है।

16. तदनुसार, वर्तमान मामले में, 1999 की नियमावली के नियम 9 का घोर उल्लंघन किया गया है क्योंकि एक नई सामग्री, जो जांच अधिकारी के समक्ष अभिलेख पर नहीं थी, अनुशासनात्मक अधिकारी द्वारा याचिकाकर्ता पर दंड लगाने के लिए विचार की गई है, जो नहीं किया जा सकता है और इसलिए यह न्यायालय इस मत का है कि नियुक्ति अधिकारी द्वारा शक्तियों का ऐसा प्रयोग अवैध और मनमाना है और रद्द किए जाने योग्य है।

17. उपरोक्त के अतिरिक्त, हम पाते हैं कि उसके द्वारा अपनाई गई उक्त प्रक्रिया प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के घोर उल्लंघन में है, जो अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान कर्मचारी को पूरा अवसर दिए जाने का प्रावधान करती है, वह राय जो प्रथम दृष्टया अभिलेख पर नहीं ली जा सकती थी, याचिकाकर्ता को सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना विचार की गई।

18. याचिकाकर्ता को उक्त राय नहीं दी गई और केवल जांच अधिकारी द्वारा उस पर भरोसा करना स्पष्ट रूप से प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन में है और तदनुसार, प्रक्रिया 1999 की नियमावली के नियम 9 का उल्लंघन करने के कारण प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के प्रावधान के विरुद्ध भी है और परिणामस्वरूप रद्द की जाती है।

19. उपरोक्त परिस्थितियों में, रिट याचिका के संलग्नक संख्या 1 के रूप में संलग्न आदेश दिनांक 23.9.2024 खंडित किया जाता है। मामले को अनुशासनात्मक अधिकारी को प्रतिप्रेषित किया जाता है, जिससे वह याचिकाकर्ता को जारी कारण बताओ नोटिस के उत्तर की प्रस्तुति के चरण से आगे बढ़े और विधि के अनुसार नया आदेश पारित करे।

20. यह और स्पष्ट किया जाता है कि अनुशासनात्मक अधिकारी नया आदेश पारित करते समय आक्षेपित आदेश से प्रभावित नहीं होगा।

21. यह देखते हुए कि बहुत समय बीत चुका है, उसे निर्देश दिया जाता है कि वह शीघ्रता से, अधिमानतः इस आदेश की प्रमाणित प्रति उसके समक्ष प्रस्तुत किए जाने की तिथि से छह सप्ताह के भीतर विधि के अनुसार नया आदेश पारित करे।

22. उपरोक्त के प्रकाश में, रिट याचिका स्वीकार की जाती है।

(2025) 2 ILRA 456

मूल अधिकार क्षेत्र

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 19.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति आलोक माथुर

रिट-ए संख्या-6576/2023

विद्या किशोर

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

राम चरित्र पांडे, शशांक पांडे

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि., राज कुमार उपाध्याय (आर.के. उपाध्याय)

ए. सेवा विधि-अनुशासनात्मक कार्यवाही-दंड-मूल पद पर प्रत्यावर्तन-रिश्वत की मांग का आरोप-वीडियो उपलब्ध होने का आरोप है, लेकिन जांच के दौरान सीडी की प्रति कभी प्रस्तुत नहीं की गई-याचिकाकर्ता को भी सीडी की अंतर्वस्तु से कभी अवगत नहीं कराया गया-प्रभाव-सीडी जांच के चरण तक उपलब्ध नहीं थी, लेकिन वही अनुशासनात्मक अधिकारी द्वारा विचार में ली गई-अनुमति-निर्णीत किया गया, भले ही अनुशासनात्मक अधिकारी को सीडी की अंतर्वस्तु पर विचार करना हो, उसके लिए याचिकाकर्ता को सीडी की एक प्रति के साथ नोटिस देना और याचिकाकर्ता को इसकी अंतर्वस्तु के संबंध में अवगत कराना आवश्यक था-सीडी की प्रति प्रदान नहीं करने

और दूसरी ओर याचिकाकर्ता के विरुद्ध उसकी अंतर्वस्तु पर विचार करने से संपूर्ण जांच कार्यवाही दूषित हो गई है-उच्च न्यायालय ने दंड आदेश को रद्द कर दिया। (प्रस्तर 11, 12 और 15)

रिट याचिका स्वीकृत। (ई-1)

(माननीय न्यायमूर्ति आलोक माथुर द्वारा उद्घोषित)

1. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता, श्री राम चरित्र पांडे के साथ-साथ राज्य प्रतिवादियों के लिए विद्वान स्थायी अधिवक्ता, श्री संदीप चंद्रा, श्री संदीप शर्मा के साथ प्रतिवादी संख्या 6 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री राज कुमार उपाध्याय को सुना गया।
2. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता प्रासंगिक समय पर जिला-रामपुर में सर्किल ऑफिसर के पद पर काम कर रहा था, जो इस न्यायालय की शरण में आया है और उसने अनुशासनात्मक कार्यवाही में उसके विरुद्ध पारित दंड आदेश दिनांक 11.08.2023 को चुनौती दी है, जिसके द्वारा उसे मूल पद पर प्रत्यावर्तन का दंड दिया गया है।
3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे प्रस्तुत किया गया है कि जब याचिकाकर्ता को जिला रामपुर में सर्किल ऑफिसर के रूप में तैनात किया गया था, अनुशासनात्मक कार्यवाही, जो दिनांक 05.04.2021 को हुई एक घटना से संबंधित थी, जहां एक श्रीमती साधना सिंह निवासी जिला बरेली ने दिनांक 05.04.2021 को सर्किल ऑफिसर (याचिकाकर्ता) को पुलिस स्टेशन-पुलिस लाइंस में प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने के लिए एक आवेदन दिया, लेकिन याचिकाकर्ता ने उक्त आवेदन पर कोई कार्रवाई नहीं की। बाद में, शिकायतकर्ता ने पुलिस अधीक्षक, रामपुर और उच्च अधिकारियों को भी एक आवेदन दिया, लेकिन फिर भी प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज नहीं की गई और बाद में है, जब पुलिस अधीक्षक को स्थानांतरित किया गया था कि उक्त प्रथम सूचना रिपोर्ट को मुकदमा अपराध संख्या 404/2021, धारा 376डी, 323, 326, 506, 406 भादं.सं, पुलिस स्टेशन-गंज, जिला-रामपुर के रूप में दर्ज किया गया।
4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे प्रस्तुत किया गया है कि उक्त अपराध के अन्वेषण के लिए एसआईटी का भी गठन किया गया था। एसआईटी अन्वेषण के माध्यम से, यह अधिकारियों के ज्ञान में आया कि सर्किल ऑफिसर द्वारा रु.35,00,000/- की रिश्वत ली गई थी और उक्त वीडियो में यह देखा गया कि यह याचिकाकर्ता था, जिसने रिश्वत की मांग की और जब उपरोक्त तथ्य प्रकाश में आए, तो प्रतिवादियों द्वारा याचिकाकर्ता के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का निर्णय लिया गया।
5. जांच कार्यवाही शुरू की गई और याचिकाकर्ता को अपना बचाव करने का अवसर दिया गया और उसने सभी आरोपों से इनकार करते हुए उत्तर भी प्रस्तुत किया और जांच अधिकारी ने दिनांक 08.08.2022 को अपनी

रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें याचिकाकर्ता को उसके विरुद्ध लगाए गए दोनों आरोपों का दोषी पाया गया। याचिकाकर्ता को जांच रिपोर्ट की प्रति के साथ कारण बताओ नोटिस जारी किया गया, जिसका उसने दिनांक 19.09.2022 को उत्तर दिया और अंततः दिनांक 11.08.2023 को आक्षेपित दंड का आदेश पारित किया गया।

6. यह प्रस्तुत किया गया है कि दंड आदेश पारित होने से पहले राज्य सरकार ने संबंधित नियमों के प्रावधान ले अनुसार उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग की स्वीकृति ली थी।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे प्रस्तुत किया गया है कि जांच रिपोर्ट के साथ-साथ दंड आदेश दूषित हैं, इस कारण से भी कि राज्य सरकार ने अपने ट्विटर हैंडल पर प्रकाशित किया है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध दिनांक 11.11.2022 को ही दंड का आदेश पारित किया गया है, जो दिनांक 11.08.2023 को आक्षेपित आदेश पारित करने से पहले था। यह प्रस्तुत किया गया है कि स्पष्ट रूप से प्रतिवादियों ने पहले ही याचिकाकर्ता को दंडित करने का निर्णय ले लिया था और उसके विरुद्ध की गई कार्यवाही केवल प्रतिवादियों द्वारा लिए गए निर्णय का अनुक्रम थी, और तदनुसार संपूर्ण कार्यवाही अवैध और मनमाना था और बिना किसी विवेक के अनुप्रयोग के था।

8. याचिकाकर्ता द्वारा उक्त कार्यवाही को चुनौती देने के लिए लिया गया दूसरा आधार यह है कि एक बार सभी सामग्री, जिसके आधार पर याचिकाकर्ता को अनुशासनात्मक कार्यवाही में दंड दिया गया है, वह कॉम्पैक्ट डिस्क (सीडी) है, जिस के संबंध में यह आक्षेप है कि उसमें याचिकाकर्ता को उक्त बिन्दु पर चर्चा करते हुए और रिश्वत की मांग करते हुए भी देखा जा सकता है, और इसकी प्रति याचिकाकर्ता को कभी प्रदान नहीं की गई और वह जांच रिपोर्ट का हिस्सा नहीं है।

9. इस संबंध में यह कहा गया है कि इसमें कोई विवाद नहीं है कि मूल सीडी को इसकी प्रामाणिकता के लिए फॉरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला को भेजा गया था, लेकिन जब तक जांच की गई, फॉरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट उपलब्ध नहीं थी और इसलिए अनुरोध किए जाने के बावजूद उक्त सीडी की प्रति याचिकाकर्ता को कभी प्रदान नहीं की गई। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि जांच कार्यवाही विभिन्न बयानों पर विचार करके समाप्त हुई, जो जांच अधिकारी के पास उपलब्ध थे और जांच अधिकारी द्वारा अपनी संपूर्ण रिपोर्ट में सीडी का कोई उल्लेख नहीं है। यह इस कारण से है कि जांच अधिकारी ने सीडी पर उपलब्ध सामग्री पर कभी विचार नहीं किया। यह निर्विवाद है कि फॉरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट दिनांक 27.01.2023 को प्राप्त हुई थी, जो दिनांक 08.08.2022 को जांच रिपोर्ट की प्रस्तुति के बहुत बाद है। आश्चर्यजनक रूप से, यह याचिकाकर्ता द्वारा उत्तर प्रस्तुत करने के बाद है कि अनुशासनात्मक अधिकारी ने आक्षेपित आदेश में सीडी के सभी पहलुओं पर विचार किया है और माना है कि उसमें निहित आरोपों को सत्यापित किया जाना है और जिससे उसने याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों की सत्यता को बरकरार रखा है।

10. इस तथ्य के संबंध में कोई विवाद नहीं है कि याचिकाकर्ता को कभी भी सीडी की अंतर्वस्तु से अवगत नहीं कराया गया और न ही उसे जांच कार्यवाही के दौरान इसकी एक प्रति प्रदान की गई।

11. उपरोक्त तर्कों पर विचार करते हुए यह भी स्पष्ट है कि अनुशासनात्मक अधिकारी ने खुद को जांच अधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्षों तक सीमित रखने के बजाय आगे बढ़ते हुए सीडी की अंतर्वस्तु पर भी विचार किया है, जो जांच कार्यवाही के चरण तक उपलब्ध नहीं है।

12. हम याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए तर्कों में बल पाते हैं कि भले ही अनुशासनात्मक अधिकारी को सीडी की अंतर्वस्तु पर विचार करना हो, उसके लिए याचिकाकर्ता को सीडी की एक प्रति के साथ नोटिस देना और याचिकाकर्ता को इसकी अंतर्वस्तु के संबंध में अवगत कराना आवश्यक था और केवल याचिकाकर्ता की प्रतिक्रिया प्राप्त करने के बाद, वह अपने दंड के आदेश में सीडी की अंतर्वस्तु से निपटने के लिए आगे बढ़ सकता था। सीडी की प्रति प्रदान नहीं करने और दूसरी ओर याचिकाकर्ता के विरुद्ध उसकी अंतर्वस्तु पर विचार करने से संपूर्ण जांच कार्यवाही दूषित हो गई है।

13. याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए अन्य आधार पर विचार करते हुए, जो ट्विटर हैंडल पर प्रस्तावित दंड के प्रकाशन के संबंध में है, हम अधिक बल नहीं पाते हैं क्योंकि निस्संदेह जांच रिपोर्ट दिनांक 08.08.2022 को प्रस्तुत की गई थी और चूंकि याचिकाकर्ता का नियुक्ति अधिकारी राज्य सरकार है, इसलिए याचिकाकर्ता के दंड के संबंध में आदेश पारित करना उनके क्षेत्र के भीतर था।

14. राज्य सरकार ने दिनांक 09.11.2022 के पत्र के माध्यम से याचिकाकर्ता पर लगाए जाने वाले दंड के संबंध में निर्णय लिया और इसकी स्वीकृति के लिए उच्च प्रदेश लोक सेवा आयोग को अपना प्रस्ताव भेजा। स्पष्ट रूप से, दिनांक 09.11.2022 तक, याचिकाकर्ता पर लगाए गए दंड के संबंध में निर्णय लिया गया है और यह केवल लोक सेवा आयोग की स्वीकृति के बाद है कि दिनांक 11.08.2023 को औपचारिक आदेश जारी किया गया था। यह न्यायालय विचारित मत का है कि यह उपरोक्त परिस्थितियों में है कि राज्य सरकार द्वारा निर्णय लिया गया था, लेकिन वह निर्णय अंतिम नहीं था और लोक सेवा आयोग की स्वीकृति के अधीन था और ट्विटर हैंडल पर प्रकाशित नहीं किया जा सकता था। भले ही सरकार का निर्णय प्रकाशित किया गया हो, यह संकेत नहीं देता है कि निर्णय दुर्भावनापूर्ण है या कार्यवाही दूषित हो गई है, क्योंकि इसमें कोई संदेह नहीं है कि वास्तव में याचिकाकर्ता पर लगाए गए दंड के संबंध में राज्य सरकार द्वारा निर्णय लिया गया था।

15. तदनुसार, उपरोक्त तथ्य और विशेष रूप से इस तथ्य पर विचार करते हुए कि उपरोक्त परिस्थितियों में प्रासंगिक सामग्री, जो सीडी में निहित है, याचिकाकर्ता को नहीं दी गई थी, यह अपने आप में जांच कार्यवाही को रद्द करने के लिए पर्याप्त आधार है और तदनुसार, दिनांक 11.08.2023 का आक्षेपित आदेश खंडित किया जाता है।

16. मामला जांच अधिकारी को आरोप पत्र प्रस्तुत करने के चरण से जांच के साथ आगे बढ़ने के लिए प्रतिप्रेषित किया जाता है। यदि प्रतिवादी सीडी सहित किसी अन्य सामग्री पर भरोसा करना चाहते हैं, तो उनके लिए विधि के अनुसार जांच के साथ आगे बढ़ने से पहले याचिकाकर्ता को इसकी एक प्रति देना आवश्यक होगा।

17. यह देखते हुए कि याचिकाकर्ता पर दंड अधिरोपित करने के बाद से बहुत समय बीत चुका है, प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाता है कि वे इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत करने की तिथि से शीघ्रता से, अधिमानतः चार महीने के भीतर, विधि के अनुसार जांच कार्यवाही को पूरा करें।

18. रिट याचिका स्वीकार की जाती है।

(2025) 2 ILRA 459

प्रारंभिक क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 24.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति आलोक माथुर

रिट-ए संख्या 9193 वर्ष 2023

सम्बद्ध

रिट-ए संख्या 5381 वर्ष 2024

शिव दत्त जोशी एवं अन्य

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...याचिकाकर्तागण

...प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता:

रानी सिंह, गौरव मेहरोत्रा, रितिका सिंह

प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता:

मुख्य स्थाई अधिवक्ता, अखिलेश कुमार कालरा, ज्योतिरेश पांडे, पूजा सिंह, राजेश चंद्र मिश्रा, संतोष कुमार मिश्रा, वरदराज श्रीदत्त ओझा

क. सेवा विधि - उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक ज्येष्ठता नियमावली, 1991 - नियम 8 एवं 9 - ज्येष्ठता (वरिष्ठता) - आपत्तियों के निस्तारण के पश्चात पूर्व अंतर-वरिष्ठता को अंतिम रूप दिया गया था - ज्येष्ठता सूची प्रकाशित की गई थी और उस पर कार्यवाही भी की गई थी - प्रभाव - यह किस सीमा तक अधिकारों का सृजन करती है

- इसकी समीक्षा की स्वीकार्यता - अभिनिर्धारित, ज्येष्ठता सूची जारी होने से एक निहित अधिकार सृजित होता है क्योंकि एक सरकारी सेवक पदोन्नति के लिए विचार किए जाने का अधिकार प्राप्त कर लेता है यदि ज्येष्ठता सूची में उससे नीचे के किसी व्यक्ति को पदोन्नत किया जाता है, इसी प्रकार वह ज्येष्ठता के आधार पर वेतनमान और अन्य सेवा लाभों में समानता का दावा कर सकता है - इसमें अर्ध-न्यायिक कार्यवाही के सभी लक्षण मौजूद हैं, और राज्य सरकार को दिनांक 13/07/2016 के आदेश और उसके बाद की ज्येष्ठता सूची की गुण-दोष के आधार पर आगामी चरण में समीक्षा करने की उसकी शक्तियों से वंचित कर दिया गया था। (पैराग्राफ 36 और 42)

ख. सेवा विधि - उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक ज्येष्ठता नियमावली, 1991 - नियम 8 एवं 9 - ज्येष्ठता (वरिष्ठता) - लंबे समय से चली आ रही ज्येष्ठता - सीधी भर्ती वाले व्यक्तियों और पदोन्नत व्यक्तियों के बीच अंतर-वरिष्ठता का निर्धारण किया गया था - समीक्षा का दायरा - फंकटस ऑफिसियो का सिद्धांत - प्रयोज्यता - अभिनिर्धारित, एक बार जब अनंतिम ज्येष्ठता सूची के विरुद्ध संबंधित पक्षों द्वारा दायर आपत्तियों का निस्तारण करने के बाद अंतिम ज्येष्ठता सूची जारी कर दी जाती है, तो निर्णय लेने वाला प्राधिकारी 'फंकटस ऑफिसियो' (कार्य-मुक्त) हो जाता है और उसके पास व्यक्तियों के उसी समूह के बीच बार-बार ज्येष्ठता को फिर से निर्धारित करने के लिए उसी शक्ति का बार-बार प्रयोग करने की कोई शक्ति शेष नहीं रह जाती है - लंबे समय से चली आ रही ज्येष्ठता जो 3-4 वर्षों से अस्तित्व में है, उसे अस्थिर नहीं किया जाना चाहिए। (पैराग्राफ 52 और 78)

ग. सेवा विधि - ज्येष्ठता (वरिष्ठता) - इसके निर्धारण की प्रक्रिया - प्रकृति - अभिनिर्धारित, नियुक्ति प्राधिकारी ज्येष्ठता के निर्धारण की अर्ध-न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करता है और उसके कार्य उन्हीं सीमाओं के अधीन होंगे जो एक न्यायिक/अर्ध-न्यायिक प्राधिकारी के होते हैं। (पैराग्राफ 55)

घ. न्यायिक समीक्षा- दायरा - प्रशासनिक कार्य - अनुसचिवीय कार्य और प्रशासनिक निर्णय - अंतर - अनुसचिवीय कार्य में, तर्क प्रक्रिया न्यूनतम और लगभग नियमित होती है - दूसरी ओर, प्रशासनिक निर्णय वह प्रक्रिया है जिसमें निर्णय वस्तुनिष्ठ मानक के आधार पर लिया जाता है, जिसके निर्धारण पर राय भिन्न हो सकती है। तर्क प्रक्रिया प्रतिस्पर्धी तर्कों पर विचार करती है और उसके बाद निर्णय लिया जाता है। यह अंतर महत्वपूर्ण है क्योंकि एक प्रशासनिक कार्य हमेशा समीक्षा योग्य होता है, जबकि एक प्रशासनिक निर्णय विशेष परिस्थितियों में ही समीक्षा योग्य होता है। (पैराग्राफ 33)

च. प्राङ्गन्याय का सिद्धांत- न्यायिक निर्णय और प्रशासनिक निर्णय पर अलग-अलग प्रयोज्यता - अभिनिर्धारित, एक न्यायिक निर्णय पक्षों के बीच 'प्राङ्गन्याय' (res judicata) के रूप में प्रभावी होता है और इसी कारण न केवल पक्षकार उक्त निर्णय को दोबारा नहीं खोल सकते, बल्कि निर्णय देने वाला न्यायिक प्राधिकारी भी गुण-दोष के आधार पर इसकी समीक्षा करने से वर्जित होता है। दूसरी ओर, एक प्रशासनिक निर्णय जो दो पक्षों के बीच विवाद पर आधारित नहीं है और जो पक्षों को सुनने के बाद नहीं दिया गया है, वह 'प्राङ्गन्याय' के रूप में प्रभावी नहीं होता है। (पैराग्राफ 33)

छ. प्राङ्गन्याय का सिद्धांत (Res judicata) - प्रकृति और प्रयोज्यता - अभिनिर्धारित, प्राङ्गन्याय का सिद्धांत विबंध के सिद्धांत का ही एक प्रकार है। जब किसी विशेष वाद-कारण पर आधारित कार्यवाही अंतिमता प्राप्त कर लेती है, तो प्राङ्गन्याय का सिद्धांत पूर्णतः लागू होगा। (पैराग्राफ 44)

ज. विबंध (Estoppel) - वाद-कारण विबंध और विवादक विबंध - अंतर - वाद-कारण विबंध वहां उत्पन्न होता है जहां बाद की कार्यवाहियों में वाद-कारण पिछली कार्यवाहियों के समान होता है, और बाद वाली कार्यवाही उन्हीं पक्षों या उनके उत्तराधिकारियों के बीच हो तथा उसमें वही विषय-वस्तु शामिल हो। ऐसे मामले में, धोखाधड़ी या मिलीभगत का आरोप न होने तक, तय किए गए सभी बिंदुओं के संबंध में यह रोक पूर्ण होती है - विवादक विबंध वहां उत्पन्न हो सकता है जहां एक विशेष विवादक, जो वाद-कारण का एक आवश्यक घटक है, पर मुकदमा लड़ा गया और निर्णय लिया गया हो, और उन्हीं पक्षों के बीच बाद की कार्यवाहियों में, जिसमें एक अलग वाद-कारण शामिल हो लेकिन वही विवादक प्रासंगिक हो, उनमें से एक पक्ष उस विवादक को फिर से खोलने का प्रयास करता है। यहाँ भी पुनः मुकदमेबाजी पर रोक पूर्ण होती है, लेकिन कुछ परिस्थितियों में इसके संचालन को विफल किया जा सकता है। (पैराग्राफ 50)

झ. अभिव्यक्ति 'फंकटस ऑफिसियो'- अर्थ - एक व्यक्ति जिसने अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर दिया है, या जिसका पद या अधिकार समाप्त हो गया है। (पैराग्राफ 53)

ञ. ज्येष्ठता (वरिष्ठता) - उसका निर्धारण - मौलिक नियुक्ति की तिथि - प्रासंगिकता - पिछली तिथि से नियुक्ति - इसे करने की सरकार की सक्षमता - अभिनिर्धारित, नियम 8 का परंतुक सरकार को पिछली तिथि से नियुक्तियाँ करने का अधिकार देता है जिसे मौलिक नियुक्ति की मानी गई तिथि माना जाएगा - वैधानिक नियमों में इसके लिए प्रावधान होने के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि यह अवैध या अधिकार क्षेत्र के बिना होगा। (पैराग्राफ 67)

ट. कानून की व्याख्या - उत्तर प्रदेश साधारण खंड अधिनियम, 1897 - धारा 13 - शब्द 'व्यक्ति'- एकवचन में बहुवचन शामिल है - प्रयोज्यता - अभिनिर्धारित, वह व्याख्या जो उचित है और संवैधानिक योजना के अनुरूप है, उसे स्वीकार किया जाना और उसका पालन किया जाना चाहिए, बजाय ऐसी किसी व्याख्या के जो निरर्थकता और मनमानेपन की ओर ले जाए - नियम 8 के परंतुक की व्याख्या करने में, पिछली तिथि से नियुक्तियाँ या तो किसी एक व्यक्ति को या व्यक्तियों के समूह को दी जा सकती हैं। (पैराग्राफ 73)

ठ. नजीर का सिद्धांत - 'स्टेयर डिसेसिस एट नॉन क्विंटा मोवेरे'- अर्थ - तय किए गए मामलों पर कायम रहना और स्थापित बिंदुओं को अशांत/परिवर्तित न करना। (पैराग्राफ 75)

ड. व्यवहार और प्रक्रिया - पक्षकार का कुसंयोजन - पदोन्नति आदेश को चुनौती - सभी प्रभावित व्यक्तियों को पक्षकार नहीं बनाया गया - प्रभाव - अभिनिर्धारित, पक्षकारों की एक लंबी सूची को पक्षकार बनाने से न केवल

न्याय प्रदान करने की प्रक्रिया अनावश्यक रूप से खिंच जाएगी बल्कि सभी पक्षों को तामील करने में अत्यधिक खर्च भी शामिल होगा। जिन मामलों में बड़ी संख्या में कर्मचारियों की एक सामान्य शिकायत होती है, वहां कुछ प्रभावित कर्मचारियों को पक्षकार बनाना पक्षकारों के संयोजन के सिद्धांत का पर्याप्त अनुपालन होगा। (पैराग्राफ 81)

रिट याचिका स्वीकार। (ई-1)

उद्धृत वादों की सूची:

1. सिविल अपील संख्या 1712 - 1713 वर्ष 2002; पी. सुधाकर राव एवं अन्य बनाम यू. गोविंद राव एवं अन्य, उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णित
2. हरियाणा स्टेट इंडस्ट्रियल डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम मवासी एवं अन्य; एआईआर एससीडब्ल्यू 2012, 4222
3. सिविल अपील संख्या 02608 वर्ष 2011; यू.पी. पावर कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजेश कुमार, दिनांक 27.04.2012 को निर्णीत
4. स्वामी आत्मानंद एवं अन्य बनाम श्री रामकृष्ण तपोवनम् एवं अन्य; जेटी (2005) 4 एससीसी 472
5. पी. सुधाकर राव बनाम यू. गोविंद राव; (2013) 8 एससीसी 693
6. एन.के. चौहान बनाम गुजरात राज्य; (1977) 1 एससीसी 308
7. पवन प्रताप सिंह बनाम रीवन सिंह; (2011) 3 एससीसी 267
8. तिलोकचंद मोतीचंद बनाम एच.बी. मुंशी; (1969) 1 एससीसी 110
9. रवींद्रनाथ बोस बनाम भारत संघ; (1970) 1 एससीसी 84
10. मैल्कम लॉरेस सेसिल डी'सूजा बनाम भारत संघ; (1976) 1 एससीसी 599
11. बी.एस. बाजवा बनाम पंजाब राज्य; (1998) 2 एससीसी 523
12. शिबा शंकर महापात्रा बनाम उड़ीसा राज्य; (2010) 12 एससीसी 471
13. अजय कुमार शुक्ला बनाम अरविंद राय; (2022) 12 एससीसी 579

(माननीय न्यायमूर्ति आलोक माथुर द्वारा पारित)

1. याचिकाकर्ताओं की विद्वान अधिवक्ता, सुश्री रितिका सिंह की सहायता से श्री गौरव मेहरोत्रा के साथ-साथ प्रतिवादी संख्या 1, 2 और 3 के लिए विद्वान अपर महाधिवक्ता, श्री कुलदीप पति त्रिपाठी के साथ-साथ निजी प्रतिवादियों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अखिलेश कुमार कालरा को सुना गया।

2. चूंकि दोनों रिट याचिकाओं में विधि और तथ्यों के सामान्य प्रश्न निहित हैं, इसलिए उन्हें इस सामान्य निर्णय और आदेश द्वारा निर्णीत किया जा रहा है।

3. सीधी भर्ती वालों और पदोन्नति वालों के बीच ज्येष्ठता के संबंध में विवाद एक बार फिर रिट याचिकाओं के समूह में विचार के लिए आया है, जो पदोन्नति वालों द्वारा दिनांक 06/08/2023 के आदेश को चुनौती देते हुए योजित की गई हैं, जिसके द्वारा नियुक्ति की तिथि को 30/06/2016 से 13/07/2016 में बदल दिया गया है और दिनांक 06/09/2023 को निर्गत बाद की ज्येष्ठता सूची, जिसके द्वारा उन्हें ज्येष्ठता में पीछे कर दिया गया है, और पदोन्नति आदेश, जिसमें याचिकाकर्ताओं के अनुसार सीधी भर्ती वालों को, जो उनसे कनिष्ठ थे, पदोन्नति दी गई है।

4. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि रिट याचिका ए संख्या 9193/23 के याचिकाकर्ताओं को 1990 में सचिवालय प्रशासन विभाग में जूनियर ग्रेड क्लर्क के पद पर नियुक्त किया गया था और उनकी ज्येष्ठता के आधार पर वर्ष 2005 में सहायक समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नत किया गया था। सहायक समीक्षा अधिकारी के पद के संतोषजनक प्रदर्शन और पर्याप्त समय तक सेवा करने के बाद वे समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नत होने के योग्य हो गए। याचिकाकर्ताओं की पदोन्नति की कार्यवाही सचिव, सचिवालय प्रशासनिक विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा दिनांक 27/06/2016 को सचिव, उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग को लिखे गए पत्र के माध्यम से शुरू हुई, जिसमें उन्हें चयन वर्ष 2015-16 के लिए पदोन्नति कोटा में समीक्षा अधिकारियों के रिक्त और नवसृजित पदों पर चयन करने के उद्देश्य से चयन समिति की बैठक बुलाने के लिए कहा गया था। यह भी बल दिया गया कि प्रक्रिया 30 जून 2016 तक पूरी की जाए, जिससे चयन वर्ष में ही पदोन्नति की जा सके।

5. उक्त निर्देशों के अनुसरण में, विभागीय पदोन्नति समिति ने दिनांक 30/06/2016 को अपनी बैठक आयोजित की और राज्य सरकार को इसके परिणाम बताए, और उसके बाद प्रकरण दिनांक 08/07/2016 को इसकी स्वीकृति के लिए उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग को भेजा गया। उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग की स्वीकृति प्राप्त करने के बाद 144 व्यक्तियों को दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी पदोन्नत करने के आदेश दिनांक 13/07/2016 को निर्गत किए गए। यह आगे प्रावधान किया गया कि उक्त आदेश द्वारा पदोन्नत व्यक्तियों को 2 वर्षों की अवधि के लिए परिवीक्षा पर रखा जाएगा और समीक्षा अधिकारी के संवर्ग में ज्येष्ठता पर अलग से विचार किया जाएगा।

6. समीक्षा अधिकारियों संवर्ग की ज्येष्ठता सूची तैयार करने के लिए, दिनांक 23/07/2016 को एक अस्थायी ज्येष्ठता सूची निर्गत की गई थी, जिसमें उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक ज्येष्ठता नियमावली, 1991 में निहित प्रावधानों के अनुसार आपत्तियां आमंत्रित की गई थीं। 2013 बैच की सीधी भर्ती वालों से याचिकाकर्ताओं को पूर्व तिथि से पदोन्नति देने के संबंध में कई आपत्तियां प्राप्त हुईं। अस्थायी ज्येष्ठता सूची के संबंध में प्राप्त आपत्तियों पर विचार करने के लिए एक तीन सदस्यीय समिति का गठन किया गया, जिसमें विशेष सचिव, खाद्य और रसद विभाग, विशेष सचिव/सहायक विधिक सलाहकार, विधि और विधायी विभाग और विशेष सचिव, आईआरएलए सचिवालय शामिल थे। समिति ने दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी समीक्षा अधिकारी के पद पर

याचिकाकर्ताओं की पदोन्नति के संबंध में प्राप्त आपत्तियों पर विधिवत विचार किया और सभी आपत्तियों को निरस्त कर दिया और अंतिम ज्येष्ठता सूची दिनांक 05/08/2016 को प्रकाशित की गई।

7. समीक्षा अधिकारियों संवर्ग की ज्येष्ठता सूची को नए सिरे से तैयार करने की मांग की गई, जिसके उद्देश्यों के लिए अस्थायी ज्येष्ठता सूची दिनांक 18/08/2018 को आपत्तियां आमंत्रित करते हुए निर्गत की गई। फिर से, 2013 बैच की सीधी भर्ती वालों द्वारा याचिकाकर्ताओं की नियुक्ति की तिथि के संबंध में कई आपत्तियां उठाई गईं। आपत्तियों पर विचार करने के लिए 4 सदस्यीय समिति का गठन किया गया, जिसमें विशेष सचिव, कार्मिक विभाग, विशेष सचिव, सचिवालय प्रशासन शामिल थे, और एक सेवानिवृत्त विशेष सचिव को भी शामिल किया गया था। आपत्तियों पर विधिवत विचार किया गया और निरस्त कर दिया गया, और याचिकाकर्ताओं के पक्ष में निष्कर्ष दिया गया, जिसमें दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी उन्हें दी गई ज्येष्ठता को बरकरार रखा गया। अंतिम ज्येष्ठता सूची दिनांक 03/04/2019 को प्रकाशित की गई।

8. यह प्रस्तुत किया गया कि फिर से तीसरी बार समीक्षा अधिकारी के पद की ज्येष्ठता सूची को अंतिम रूप देने की कार्यवाही की गई और दिनांक 15/07/2022 को एक अस्थायी ज्येष्ठता सूची निर्गत की गई। फिर से, आपत्तियां आमंत्रित की गईं, और दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी याचिकाकर्ताओं को पदोन्नति देने के विरुद्ध आपत्तियों पर विचार किया गया और निरस्त कर दिया गया और अंतिम ज्येष्ठता सूची दिनांक 11/08/2022 को निर्गत की गई।

9. तीन अवसरों पर ज्येष्ठता सूची को संशोधित करने और दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी याचिकाकर्ता की पदोन्नति को लगातार बनाए रखने के बाद, राज्य सरकार ने पूर्व तिथि से समीक्षा अधिकारी के पद पर याचिकाकर्ताओं को पदोन्नति देने के बिन्दु पर पुनर्विचार करना चाहा। यह महसूस किया गया कि पूर्व तिथि से प्रभावी उक्त पदोन्नति त्रुटिपूर्ण और नियमों के विरुद्ध थी। यह पाया गया कि विभागीय पदोन्नति समिति दिनांक 30/06/2016 को आयोजित की गई थी, और उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा दिनांक 08/07/2016 को स्वीकृति दी गई थी और पदोन्नति आदेश दिनांक 13/07/2016 को निर्गत किए गए थे, जिसमें कहा गया था कि वह दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी होंगे। तदनुसार, दिनांक 14/07/2023 का नोटिस निर्गत किया गया, जिसमें उक्त तथ्यों को दर्ज किया गया, और याचिकाकर्ताओं से 7 दिनों की अवधि के भीतर इसका उत्तर देने के लिए कहा गया कि उनकी पदोन्नति को दिनांक 30/06/2016 की पूर्व तिथि के बजाय दिनांक 13/07/2016 से प्रभावी क्यों न किया जाए।

10. याचिकाकर्ताओं ने उत्तर प्रस्तुत किया कि सरकार द्वारा चयन वर्ष 2015-16 के भीतर समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नति करने का निर्णय लिया गया था। याचिकाकर्ता, जो पदोन्नति के लिए योग्य थे, ने बार-बार प्रत्यावेदन दिए थे, जिसमें प्रतिवादियों से विभागीय पदोन्नति समिति का गठन करने और याचिकाकर्ताओं को पदोन्नत करने के लिए आगे बढ़ने की प्रार्थना की थी, जो प्रासंगिक समय पर सहायक समीक्षा अधिकारी के पद पर काम कर रहे थे। यह याचिकाकर्ताओं द्वारा किए गए बार-बार प्रत्यावेदनों पर है कि प्रतिवादियों ने कहा कि

पदोन्नति की प्रक्रिया भर्ती वर्ष की समाप्ति से पूर्व अर्थात् 30/06/2016 तक पूरी की जाए, और यह तथ्य दिनांक 27/06/2016 के पत्र में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था, जब उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग को कार्यवाही करने और इसे पूरा करने के लिए कहा गया था, जिससे भर्ती वर्ष के भीतर ही पदोन्नति की जा सके। यह आगे तर्क दिया गया कि मामले के इस पहलू पर समितियों द्वारा आपत्तियों पर विचार करने के लिए ज्येष्ठता सूची के अंतिम रूप देने के समय विचार और निर्णय लिया गया है। यह आगे कहा गया कि पूर्व तिथि से पदोन्नति अवैध, मनमानी या नियमों के विपरीत नहीं है क्योंकि 1991 के ज्येष्ठता नियमों के नियम 8 में स्पष्ट रूप से प्रावधान है कि पदोन्नति पूर्व तिथि से की जा सकती है।

11. प्रतिवादियों ने याचिकाकर्ताओं द्वारा की गई आपत्तियों को निरस्त कर दिया और दिनांक 09/08/2023 के आदेश के माध्यम से याचिकाकर्ताओं के दिनांक 30/06/2016 के पदोन्नति आदेश को संशोधित किया और प्रावधान किया कि उनकी पदोन्नति दिनांक 13/07/2016 के आदेश पारित करने की तिथि से प्रभावी होगी। उक्त निर्णय लेते समय उन्होंने सिविल अपील संख्या 1712-1713/2002, **पी. सुधाकर राव व अन्य बनाम यू. गोविंद राव व अन्य** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया, जहां यह निर्णित किया गया था "हम भी इस विचार के हैं कि उस तिथि से कोई पूर्वव्यापी पदोन्नति या ज्येष्ठता नहीं दी जा सकती है, जब कर्मचारी संवर्ग में आया भी नहीं था..."

12. यह आगे देखा गया कि उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग ने अपनी स्वीकृति में पूर्व तिथि अर्थात् 30.06.2016 से पदोन्नति देने की अनुशंसा नहीं की थी और उन्हें उक्त लाभ देने वाले आदेश में कोई ऐसा नियम उद्धृत नहीं किया गया था और परिणामस्वरूप वह नियमों के विपरीत था और इसलिए दिनांक 13/07/2016 के आदेश में संशोधन किया गया और मूल नियुक्ति को आदेश की तिथि से ही माना जाना था।

13. याचिकाकर्ताओं के पदोन्नति आदेश में संशोधन करने पर, प्रतिवादियों ने फिर से दिनांक 10/08/2023 को एक अस्थायी ज्येष्ठता सूची निर्गत की, जिसमें याचिकाकर्ताओं की ज्येष्ठता को अवनत किया गया और आपत्तियां आमंत्रित की गईं। याचिकाकर्ताओं ने फिर से अस्थायी ज्येष्ठता सूची के विरुद्ध अपनी आपत्तियां प्रस्तुत कीं और दिनांक 30/06/2016 से ज्येष्ठता देने का समर्थन किया और दिनांक 06/09/2023 के आदेश द्वारा उनकी आपत्तियों को निरस्त कर दिया गया और अंतिम ज्येष्ठता सूची प्रकाशित की गई।

14. यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि दिनांक 08/09/2023 को एक विभागीय पदोन्नति समिति बुलाई गई थी और सीधी भर्ती वालों को, जो पिछली ज्येष्ठता सूची दिनांक 05/08/2016, 03/04/2019 और 11/08/2022 में याचिकाकर्ता के नीचे रखे गए थे, उन्हें अनुभाग अधिकारी के पद पर पदोन्नत किया गया है।

15. प्रतिवादियों की उक्त कार्यवाही से व्यथित होकर, दो रिट याचिकाएं योजित की गई हैं। रिट याचिका ए संख्या 9193/2023 (शिव दत्त जोशी व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य) उन व्यक्तियों द्वारा योजित की गई है जिन्हें दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी ज्येष्ठता दी गई थी, जिस आदेश को दिनांक 09/08/2023

को संशोधित किया गया था और उन्हें अवनत किया गया था और पदोन्नति की नई तिथि दिनांक 13/07/2016 थी, जिसका अर्थ है कि उनके चयन वर्ष में परिवर्तन हुआ, और परिणामस्वरूप वे उन व्यक्तियों से कनिष्ठ हो गए, जो चयन वर्ष 2015-16 में नियुक्त किए गए थे और उन्हें उनके नीचे रखा गया है। उन्होंने निम्नलिखित प्रार्थनाएं की हैं:-

(i) दिनांक 25/10/2023 के आक्षेपित पदोन्नति आदेश को रद्द करते हुए उत्प्रेषण की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश निर्गत करें, जिसकी प्रति इस रिट याचिका में अनुलग्नक-3 के रूप में संलग्न है।

(ii) प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा निर्गत आक्षेपित कार्यालय जाप दिनांक 06/09/2023 को रद्द करते हुए उत्प्रेषण की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश निर्गत करें, जिसकी प्रति इस रिट याचिका में अनुलग्नक 1 के रूप में संलग्न है।

(iii) प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा निर्गत आक्षेपित आदेश दिनांक 09/08/2023 को रद्द करते हुए उत्प्रेषण की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश निर्गत करें, जिसकी प्रति इस रिट याचिका में अनुलग्नक 2 के रूप में संलग्न है।

(iv) प्रतिवादी अधिकारियों को याचिकाकर्ताओं के सापेक्ष आक्षेपित पदोन्नति आदेश दिनांक 25/10/2023 को प्रभावी न करने का आदेश देते हुए परमादेश की प्रकृति में रिट निर्गत करें।

(v) प्रतिवादी अधिकारियों को याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध दिनांक 06/09/2023 के आक्षेपित कार्यालय जाप को प्रभावी न करने का आदेश देते हुए परमादेश की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश निर्गत करें।

(vi) प्रतिवादी अधिकारियों को याचिकाकर्ताओं के सापेक्ष आक्षेपित आदेश दिनांक 09/08/2023 को प्रभावी न करने का आदेश देते हुए परमादेश की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश निर्गत करें।

(vii) याचिकाकर्ता के अधिकारों और हितों की रक्षा के लिए ऐसी अन्य रिट, आदेश निर्गत करें।"

16. दूसरी रिट याचिका, जिसका नंबर रिट याचिका ए संख्या 5381/2024 (संजीव कुमार सिन्हा और 2 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य) है, उन व्यक्तियों द्वारा योजित की गई है, जिन्हें 1999 में सीधी भर्ती के माध्यम से टाइपिस्ट के पद पर नियुक्त किया गया था और 2013 में सहायक समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नत किया गया था, और आगे दिनांक 22/02/2017 को समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नत किया गया था। उन्हें दिनांक 22/02/2019 / 23/02/2019 को उक्त पद पर स्थायी किया गया और दिनांक 11/08/2022 को प्रकाशित ज्येष्ठता सूची में विधिवत रखा गया। वे दिनांक 06/09/2023 को प्रकाशित ज्येष्ठता सूची से भी

व्यथित हैं, जिसके द्वारा उन्हें 2013 की सीधी भर्ती वालों के नीचे रखा गया है। उन्होंने निम्नलिखित अनुतोषों के लिए प्रार्थना की है:-

(i) प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा निर्गत आक्षेपित कार्यालय ज्ञाप दिनांक 06/09/2023 (जिसमें आक्षेपित अंतिम ज्येष्ठता सूची और आक्षेपित अस्वीकृति आदेश शामिल हैं) को रद्द करते हुए उत्प्रेषण की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश निर्गत करें, जिसकी प्रति इस रिट याचिका में अनुलग्नक-1 के रूप में संलग्न है।

(ii) प्रतिवादी अधिकारियों को याचिकाकर्ताओं के सापेक्ष आक्षेपित कार्यालय ज्ञाप दिनांक 06/09/2023 को प्रभावी न करने का आदेश देते हुए परमादेश की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश निर्गत करें।

(iii) ऐसी अन्य रिट, आदेश या निर्देश पारित करें, जो माननीय न्यायालय याचिकाकर्ता के अधिकारों और हितों की रक्षा के संबंध में उचित और उपयुक्त समझे।"

17. वर्तमान मामले में विवाद की उत्पत्ति राज्य सरकार के दिनांक 09/08/2023 के निर्णय में निहित है, जिसके द्वारा उन्होंने दिनांक 13/07/2016 के आदेश को परिवर्तित और महत्वपूर्ण रूप से संशोधित किया है, जिसके द्वारा 144 व्यक्तियों को समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नत किया गया था और प्रावधान किया था कि उक्त पदोन्नति पूर्व तिथि अर्थात् 30/06/2016 के बजाय दिनांक 13/07/2016 से ही प्रभावी होगी। तदनुसार, याचिकाकर्ताओं सहित ऐसे 144 व्यक्तियों की पदोन्नति की तिथि अब दिनांक 30/06/2016 के बजाय दिनांक 13/07/2016 होगी।

18. यह आदेश याचिकाकर्ता सहित 144 व्यक्तियों की ज्येष्ठता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। उत्तर प्रदेश सचिवालय मंत्रिस्तरीय सेवा नियम, 1999 प्रावधान करता है कि "भर्ती का वर्ष कैलेंडर वर्ष के 1 जुलाई से शुरू होने वाली 12 महीनों की अवधि को दर्शाता है, और इसलिए एक विशेष भर्ती वर्ष में भर्ती किए गए व्यक्ति, बाद के भर्ती वर्ष में नियुक्त व्यक्तियों से वरिष्ठ होंगे। इसलिए, दिनांक 09/08/2023 के आक्षेपित आदेश को पारित करने से समीक्षा अधिकारी के पद पर याचिकाकर्ताओं का भर्ती वर्ष 2015-16 के बजाय 2016-17 हो जाता है।

19. याचिकाकर्ता, जो सहायक समीक्षा अधिकारी के पद पर काम कर रहे थे, उन्होंने समीक्षा अधिकारी के पद पर अपनी पदोन्नति के लिए विभिन्न प्रत्यावेदन दिए थे। यह तर्क दिया गया कि वे पदोन्नत होने के लिए पूरी तरह से योग्य थे, लेकिन कुछ कारणों से विभागीय पदोन्नति समिति का गठन नहीं किया जा सका, जिसके कारण उनके पदोन्नति प्रकरण पर विचार नहीं किया जा सका और डीपीसी के गठन के लिए प्रार्थना की, जिससे उन्हें भर्ती वर्ष 2015-16 में ही पदोन्नत किया जा सके। राज्य सरकार ने अनुरोध पर विधिवत विचार किया और दिनांक 27/06/2016 को उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग को विभागीय पदोन्नति समिति के गठन और भर्ती वर्ष के भीतर ही अर्थात् 30/06/2016 तक पदोन्नति की कार्यवाही को पूरा करने के लिए लिखा। यह कहा गया

है कि राज्य सरकार का इरादा शुरू से ही बहुत स्पष्ट था, जो भर्ती वर्ष 2015-16 में ही पदोन्नति करना था, जिसके उद्देश्य के लिए डीपीसी का गठन किया गया था और दिनांक 30/06/2016 को अपनी बैठक बुलाई थी, और इसकी सिफारिशों को इसकी स्वीकृति के लिए उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग को अग्रेषित किया गया था। दिनांक 08/07/2016 को स्वीकृति दी गई, और पदोन्नति आदेश दिनांक 13/07/2016 को निर्गत किए गए। दिनांक 13/07/2016 के पदोन्नति आदेश ने प्रावधान किया कि याचिकाकर्ता की पदोन्नति दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी होगी। तिथि 30/06/2016, इस तथ्य को देखते हुए प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है कि यह भर्ती वर्ष का अंतिम दिन था, और दिनांक 01/07/2015 से 30/06/2016 तक की गई सभी भर्ती/पदोन्नति दिनांक 30/06/2016 के बाद की गई किसी भी भर्ती या पदोन्नति से वरिष्ठ होंगी।

20. निजी प्रतिवादी, जो 2013 बैच के समीक्षा अधिकारी के पद पर सीधी भर्ती वाले हैं, को 2015-16 में नियुक्त किया गया था और उक्त भर्ती वर्ष में ज्येष्ठता दिए जाने के अधिकारी हैं, ने बलपूर्वक तर्क दिया है कि याचिकाकर्ताओं को अवैध और मनमाने ढंग से दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नति दी गई है, इस तथ्य के बावजूद कि पदोन्नति के आदेश दिनांक 13/07/2016 को पारित किए गए थे और उस तिथि से प्रभावी नहीं किए जा सकते थे, जब याचिकाकर्ता संवर्ग में पैदा भी नहीं हुए थे। यह आगे कहा गया कि पदोन्नति की तिथि को पूर्वदिनांकित नहीं किया जा सकता है और वह सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कई निर्णयों से स्थापित विधिक सिद्धांतों के विपरीत है। चूंकि याचिकाकर्ताओं को दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नत माना गया था और इसलिए वे भर्ती वर्ष 2015-16 में ज्येष्ठता देने के लिए विचार किए जाने के अधिकारी थे और उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक ज्येष्ठता नियम 1991 के प्रावधानों के अनुसार उनसे वरिष्ठ रखे गए थे। सीधी भर्ती वाले, याचिकाकर्ताओं की नियुक्ति के बाद से बार-बार अपनी शिकायत उठा रही हैं, और 3 अवसरों पर अस्थायी ज्येष्ठता सूची पर आपत्तियां आमंत्रित की गई थीं, जहां उन्होंने अपनी आपत्तियां उठाई थीं, लेकिन दिनांक 09/08/2023 के आक्षेपित आदेश को पारित करने और याचिकाकर्ताओं को नीचे धकेलते हुए और 2013 बैच की सीधी भर्ती वालों वाले निजी प्रतिवादियों के नीचे रखते हुए एक नई नोटिस सूची तैयार करने तक इसे निरस्त कर दिया गया था।

21. याचिकाकर्ताओं ने दिनांक 09/08/2023 के आदेश को चुनौती देते हुए प्रस्तुत किया है कि उनके पदोन्नति आदेश में तिथि में परिवर्तन और ज्येष्ठता सूची में उन्हें अवनत करना और उन्हें सीधी भर्ती वालों के नीचे रखना 7 वर्षों की लंबी अवधि के बाद विचलित नहीं किया जा सकता था, विशेष रूप से इस तथ्य को देखते हुए कि 3 अवसरों पर राज्य सरकार ने दिनांक 30/06/2016 से प्रभावी समीक्षा अधिकारी के पद पर याचिकाकर्ता को पदोन्नति देने पर विधिवत विचार और अनुमोदन किया था।

22. यह आगे प्रस्तुत किया गया कि एक बार जब राज्य सरकार ने निजी प्रतिवादियों द्वारा की गई आपत्तियों को निरस्त करके याचिकाकर्ताओं की पदोन्नति की तिथि के संबंध में अपने निर्णय को बार-बार पुष्टि की थी, तो निर्णय को यह कहते हुए निरस्त नहीं किया जा सकता था कि प्रारंभिक निर्णय नियमों के विपरीत

था। यह कहा गया कि राज्य सरकार द्वारा लिया गया निर्णय अंतिम हो चुका था और केवल न्यायिक आदेश द्वारा ही निरस्त किया जा सकता था और *रेस ज्यूडिकेटा* के सिद्धांत लागू होंगे।

23. आक्षेपित आदेशों को चुनौती देते हुए, याचिकाकर्ताओं की ओर से यह तर्क दिया गया कि कुछ निजी प्रतिवादियों ने रिट याचिका योजित करके ज्येष्ठता के संबंध में याचिकाकर्ताओं के पक्ष में लिए गए निर्णय को चुनौती देते हुए इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था। याचिका संख्या-3717/2017 (नवीन कुमार व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य), जो विचाराधीन थी, और याचिका के लंबित रहने की अवधि में राज्य सरकार ने स्वयं के लिए न्यायनिर्णयन का कार्य ले लिया और अपने पिछले निर्णय को निरस्त कर दिया, जो स्पष्ट रूप से अवैध मनमाना और बिना क्षेत्राधिकार के है।

24. निर्णय के गुण के आधार पर, यह प्रस्तुत किया गया कि याचिकाकर्ताओं की समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नति 30/06/2016 से प्रभावी की गई थी, राज्य द्वारा उचित विचार-विमर्श के बाद, जो दिनांक 27/06/2016 के पत्र से स्पष्ट है, जो उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग को संबोधित किया गया था, उन्हें भर्ती वर्ष के अंदर अर्थात् 30/06/2016 तक पदोन्नति की कार्यवाही को पूरा करने का अनुरोध किया गया था। विभागीय पदोन्नति समिति ने विधिवत बैठक की और 30/06/2016 को याचिकाकर्ताओं की उम्मीदवारी पर विचार किया, और अनुमोदन का कार्यालय कार्य बाद में किया गया था। इसलिए यह प्रस्तुत किया गया था कि पदोन्नति का पूर्व तिथि से पदोन्नति की तिथि के साथ सीधा संबंध है, जो अवैध मनमाना नहीं है। यह भी प्रस्तुत किया गया था कि पूर्व तिथि से पदोन्नति प्रदान करना, उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक ज्येष्ठता नियम, 1999 के प्रावधानों के विपरीत या विरुद्ध नहीं है क्योंकि नियम 8 का प्रावधान स्पष्ट रूप से इसके लिए प्रावधानित करता है। यह भी प्रस्तुत किया गया था कि आक्षेपित आदेश में संदर्भित सर्वोच्च न्यायालय का विभेदनीय है और सर्वोच्च न्यायालय का निषेध केवल रिक्तियों उत्पन्न होने की तिथि से की जाने वाली पदोन्नति के संबंध में था, जो याचिकाकर्ताओं का मामला नहीं था और तदनुसार प्रतिवादियों ने सर्वोच्च न्यायालय के अधिदेश पर भरोसा करते हुए स्वयं को गलत निर्देशित किया है, जो वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है, और तदनुसार पूरी कार्यवाही अवैध व मनमानी है और खंडित किए जाने योग्य है।

25. याचिकाकर्ताओं की ओर से यह भी प्रस्तुत किया गया था कि पदोन्नति की तिथि में बदलाव के लिए राज्य द्वारा दिए गए नोटिस के विरुद्ध याचिकाकर्ताओं द्वारा आपतियां योजित की गई थीं, और उक्त आपतियों में विभिन्न बिंदु उठाए गए थे, जिनमें से किसी पर भी प्रत्यावेदन को निरस्त करते समय प्रतिवादियों द्वारा विचार नहीं किया गया था, और प्रतिवादियों ने पूर्वनिर्धारित तरीके से कार्य किया, जो कारण बताओ नोटिस से ही स्पष्ट है, और तदनुसार इस आधार पर आक्षेपित आदेशों को चुनौती दिया है।

26. राज्य सरकार ने रिट याचिका का विरोध किया है। श्री कुलदीप पति त्रिपाठी, विद्वान अपर महाधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि 2013-14 बैच के सीधी भर्ती वालों से कई प्रत्यावेदन प्राप्त हुए थे, जिनमें यह कहा गया था कि याचिकाकर्ताओं को पूर्वव्यापी पदोन्नति नहीं दी जा सकती थी और बिन्दु का राज्य सरकार द्वारा परीक्षण किया गया और यह पाया गया कि विभागीय पदोन्नति समिति ने 30/06/2016 को याचिकाकर्ताओं के मामले पर

विधिवत विचार किया, जिसके बाद उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग की 08/07/2016 को अनुमोदन हुआ, और तदनुसार प्रस्तुत किया है कि उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग से मांगी गई अनुमोदन से पहले पदोन्नति नहीं की जा सकती थी, और यहां तक कि लोक सेवा आयोग ने 30/06/2016 से याचीकर्ता की पदोन्नति की अनुशंसा नहीं की थी।

27. यह भी प्रस्तुत किया गया था कि अनजाने में पदोन्नति कोटा के अधीन याचीकर्ताओं की पदोन्नति 30/06/2016 से प्रभावी की गई है। आगे प्रस्तुत किया गया कि राज्य सरकार ने पाया कि याचीकर्ताओं की पदोन्नति की तिथि में एक गलती हुई है, जिसे याचीकर्ताओं को सुनवाई का अवसर देकर सुधारा जा सकता था और उसके बाद ही दिनांक 13/07/2016 के आदेश को 09/08/2016 को संशोधित किया गया था। बलपूर्वक तर्क दिया गया कि राज्य के पास किसी भी आदेश को संशोधित और सही करने के लिए पर्याप्त शक्ति है, यदि यह उसकी जानकारी में आता है कि उनके द्वारा पारित कोई आदेश अवैध है या नियमों के विपरीत है। वर्तमान मामले में यह कहा गया था कि सुनवाई का उचित अवसर देने के बाद दिनांक 13/07/2016 के अवैध आदेश को उचित रूप से संशोधित किया गया है।

28. प्रतिवादी संख्या 12-22 द्वारा पक्षकार बनने के लिए एक आवेदन योजित किया गया था, जिसमें कहा गया था कि उन्होंने रिट याचिका संख्या-9193 सन् 23 में दिनांक 14/12/2023 को इस न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश के विरुद्ध एक विशेष अपील योजित की थी, जिसका अपीलकर्ता के अधिवक्ता के बयान को रिकॉर्ड करने के बाद कि वे रिट न्यायालय के समक्ष पक्षकार बनाने के लिए एक आवेदन योजित करेंगे, दिनांक 09/01/2024 के आदेश द्वारा निस्तारण किया गया था, और आगे रिट न्यायालय को इस पर विचार करने और आवश्यक आदेश पारित करने की स्वतंत्रता दी गई, ऐसे कि याचीकर्ताओं द्वारा इसके विरुद्ध कोई आपत्ति नहीं उठाई गई है। पक्षकार बनने का आवेदन 02/07/2024 को स्वीकार किया गया था, और याचीकर्ताओं द्वारा किए गए दावे का विरोध करते हुए एक विस्तृत प्रति-शपथ पत्र योजित किया गया था।

29. याचीकर्ताओं द्वारा उठाए गए पहले मुद्दे के संबंध में प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर विचार करते हुए कि राज्य सरकार के पास निपटाए गए ज्येष्ठता सूची को विचलित करने की कोई शक्ति नहीं थी, और विशेष रूप से इसलिए कि तीन अवसरों पर उन्होंने निजी प्रतिवादियों द्वारा योजित आपत्तियों पर विचार किया व उन्हें निरस्त किया था, और बाद में वह इस संबंध में किसी विशिष्ट प्रावधान की अनुपस्थिति में समीक्षा नहीं कर सकते या कोई अलग पक्ष नहीं ले सकते थे।

30. दूसरी ओर राज्य प्रतिवादियों ने प्रस्तुत किया है कि 1999 के नियमों में कोई परिसीमा निर्धारित नहीं है, और अस्थायी ज्येष्ठता सूची पर आपत्तियों का निर्णय करने के चरण में राज्य उठाई गई आपत्तियों का निर्णय करने और उचित आदेश पारित करने की अपनी क्षमता के भीतर था। यह भी प्रस्तुत किया गया था कि यदि उनकी प्रशासनिक शक्ति के प्रयोग में कोई त्रुटि पाई जाती है, तो उन्हें इसे सुधारने का पूरा अवसर है और ऐसी शक्ति के प्रयोग में कोई प्रतिबंध नहीं है और तदनुसार आक्षेपित आदेशों को सही ठहराने की मांग की।

31. वर्तमान कार्यवाही में इस न्यायालय को दिनांक 06/09/2023 की ज्येष्ठता सूची की वैधता पर निर्णय लेना है, विशेष रूप से इस तथ्य के आलोक में कि याचीकर्ताओं और निजी प्रतिवादियों की परस्पर ज्येष्ठता 1999 के ज्येष्ठता नियमों के नियम 8 के प्रावधानों के आलोक में तीन विभिन्न अवसरों पर 05/08/2016, 03/04/2019 और 11/08/2022 को निर्धारित की गई है, जहां याचीकर्ता के तर्क को स्वीकार किया गया था, और पक्षों के प्रस्तुतियों पर विधिवत विचार करने और उन्हें सुनवाई का अवसर देने के बाद याचीकर्ताओं की ज्येष्ठता को चुनौती देने वाले आधारों को निरस्त कर दिया गया था।

32. इस विवाद का निर्णय करने के लिए हमें ज्येष्ठता सूची की तैयारी के चरण में राज्य द्वारा प्रयोग की गई शक्ति की प्रकृति को देखना होगा कि क्या यह प्रशासनिक शक्ति के प्रयोग में है, जिसे बार-बार उपयोग किया जा सकता है और प्रशासनिक निर्णय लेने की शक्ति से अलग आधार पर खड़ा है, जो अर्ध-न्यायिक निर्णय लेने की शक्ति या न्यायिक शक्ति के समान प्रतिबंधों के अधीन हो सकता है।

33. प्रशासनिक कार्यवाई को दो व्यापक वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। एक ओर कार्यालय कार्यवाई है, जहां तर्क प्रक्रिया न्यूनतम और लगभग नियमित है। इसके साथ विवेकाधीन शक्ति के प्रयोग को भी समूहित किया जा सकता है, जहां प्रशासनिक अधिकारी कार्यवाई के वैकल्पिक मार्ग चुनने में सक्षम हैं। दूसरी ओर, प्रशासनिक निर्णय वह प्रक्रिया है, जिसमें निर्धारण के उद्देश्य मानक पर निर्णय लिया जाता है जिसके बारे में राय भिन्न हो सकती है। तर्क प्रक्रिया प्रतिद्वंद्वी तर्कों को ध्यान में रखती है और फिर एक निर्णय आता है। यह अंतर महत्वपूर्ण है क्योंकि एक प्रशासनिक कार्यवाई हमेशा समीक्षा योग्य है, जबकि एक प्रशासनिक निर्णय विशेष परिस्थितियों में समीक्षा योग्य है। एक ओर अंतर एक प्रशासनिक कार्य की आवश्यक प्रतिसंहरणीयता और न्यायिक या अर्ध-न्यायिक निर्णय की अंतिमता या निर्णायकता के बीच है। एक न्यायिक निर्णय पक्षों के बीच *रेस-जुडीकेटा* है और यही कारण है कि न केवल पक्ष उक्त निर्णय को फिर से नहीं खोल सकते हैं बल्कि न्यायिक अधिकारी भी जिसने निर्णय लिया है, उसे योग्यता पर समीक्षा करने से रोका जाता है। दूसरी ओर एक प्रशासनिक निर्णय, जो दो पक्षों के बीच विवाद पर आधारित नहीं है और जो पक्षों को सुनने के बाद नहीं दिया गया है, *रेस-जुडीकेटा* के रूप में संचालित नहीं होता है। (डी स्मिथ, न्यायिक समीक्षा प्रशासनिक कार्यवाई चौथा संस्करण पीपी 106-108)

"व्यक्तियों के प्रति निष्पक्षता का विचार, जिनकी रुचि अन्यथा प्रत्यक्ष और पूर्वाग्रहपूर्वक प्रभावित होगी, न्यायालयों को प्रशासनिक कृत्यों और निर्णयों को बाध्यकारी प्रभाव देने के लिए प्रेरित कर सकता है, जिन्हें सक्षम अधिकारी अस्वीकार या रद्द करना चाहता है। वास्तव में, यह प्रतीत होता है कि अपने निर्णयों को रद्द करने के लिए प्रशासनिक निकायों की विधिक क्षमता (इस मामले के लिए वैधानिक प्रावधान की अनुपस्थिति में) कम से कम इक्विटी में सार्वजनिक नीति के विचारों पर उतनी ही निर्भर करती है जितनी कि अवधारणात्मक वर्गीकरण पर।"

34. ज्येष्ठता, उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक ज्येष्ठता नियमावली, 1991 के नियम 9 के अधीन प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में निर्धारित की जाती है। ज्येष्ठता नियमों का नियम 9 यहां उद्धृत किया गया है:-

भाग III: ज्येष्ठता का निर्धारण

ज्येष्ठता सूची

ज्येष्ठता सूची की तैयारी.- (1) किसी सेवा में नियुक्तियां किए जाने के बाद जितनी जल्दी हो सके, नियुक्ति अधिकारी इन नियमों के प्रावधानों के अनुसार सेवा में स्थायी रूप से नियुक्त व्यक्तियों की एक अस्थायी ज्येष्ठता सूची तैयार करेगा।

(2) अस्थायी ज्येष्ठता सूची को संबंधित व्यक्तियों के बीच परिचालित किया जाएगा, जो एक उचित अवधि के नोटिस द्वारा आपतियों को आमंत्रित करते हैं, जो अस्थायी ज्येष्ठता के परिचालन की तिथि से सात दिनों से कम नहीं होगी।

(3) इन नियमों की वैधता या संवैधानिकता के विरुद्ध कोई आपतियां पोषणीय नहीं होंगी।

(4) नियुक्ति अधिकारी आपति का निस्तारण करने के बाद, एक तर्कपूर्ण आदेश द्वारा, एक अंतिम ज्येष्ठता सूची निर्गत करेगा।

(5) ऐसे संवर्ग की ज्येष्ठता सूची तैयार करना आवश्यक नहीं होगा, जिसमें केवल एकल फीडिंग संवर्ग से पदोन्नति द्वारा नियुक्तियों की जाती हैं।

35. सूची की तैयारी के चरण में एक अस्थायी ज्येष्ठता सूची तैयार की जानी चाहिए और प्रभावित पक्षों से आपतियों को आमंत्रित करते हुए परिचालित किया जाना चाहिए। अस्थायी ज्येष्ठता सूची सभी पक्षों को नोटिस के उद्देश्य के रूप में कार्य करती है, जो प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकते हैं, जिन्हें अपनी आपतियों को देने का अधिकार है, और नियुक्ति/सक्षम अधिकारी को एक तर्कपूर्ण आदेश द्वारा आपतियों का निर्णय करने का अधिदेश दिया गया है। निस्संदेह, ज्येष्ठता सूची को 1991 के नियमों के अन्य प्रावधानों के अनुसार तैयार किया जाना चाहिए, जहां भाग II ज्येष्ठता के निर्धारण से संबंधित है, जो इस पर निर्भर करता है कि ज्येष्ठता सूची में केवल सीधी भर्तियां या पदोन्नत शामिल हैं, जहां नियम 5-7 के प्रावधानों का पालन किया जाना है, जबकि मामले में ज्येष्ठता सूची में पदोन्नत और सीधी भर्तियां दोनों शामिल हैं, नियम 8 के प्रावधानों का पालन किया जाना है। उपर्युक्त प्रावधानों के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि ज्येष्ठता का निर्धारण प्रभावित व्यक्तियों द्वारा योजित आपतियों पर विवेक के उचित प्रयोग के बाद किया जाना है, और प्रासंगिक नियमों पर विचार करने के बाद नियुक्ति अधिकारी को आपतियों का निर्णय करने के लिए एक तर्कपूर्ण आदेश पारित करना है। तदनुसार, हमें यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि नियमों में निर्धारित प्रक्रिया, नियुक्ति अधिकारी द्वारा एक प्रशासनिक निर्णय के समान है और विधि, नियम और नजीर, ऐसी निर्णय लेने की प्रक्रिया पर लागू होंगे।

36. इसलिए, एक बार आपतियों का निर्णय हो जाने के बाद और अंतिम ज्येष्ठता सूची प्रकाशित हो जाने के बाद, इस पर अधिकारियों द्वारा कार्रवाई की जाती है, जिससे ऐसे सरकारी कर्मचारियों की ज्येष्ठता से जुड़ी पदोन्नति या कोई अन्य सेवा लाभ दिया जा सके, तो उस ज्येष्ठता सूची निर्गत करने से एक निहित अधिकार सृजित होता, क्योंकि एक सरकारी कर्मचारी को पदोन्नति के लिए विचार किए जाने का अधिकार प्राप्त होता है, यदि ज्येष्ठता सूची में से कोई कनिष्ठ पदोन्नत होता है, इसी तरह वह ज्येष्ठता के आधार पर वेतनमान व अन्य सेवा लाभों में समानता का दावा कर सकता है। नियम नियुक्ति अधिकारी को अपने निर्णय की समीक्षा करने का अधिकार नहीं देते हैं, और न ही अंतिम ज्येष्ठता सूची के विरुद्ध अपील योजित करने का कोई प्रावधान है। तदनुसार, अंतिम ज्येष्ठता सूची से अंतिमता जुड़ी हुई है, यह तथ्य ध्यान में रखते हुए कि वह संबंधित पक्षों को सुनवाई का उचित अवसर देने के बाद तर्कपूर्ण आदेश द्वारा आपतियों का निर्णय करने के बाद पारित किया गया है और इसलिए एक अर्ध-न्यायिक आदेश का हिस्सा है। कोई भी व्यक्ति जो अंतिम ज्येष्ठता सूची से व्यथित है, उसे या तो उत्तर प्रदेश लोक सेवा न्यायाधिकरण या उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका योजित करनी होगी।

37. अंतिम ज्येष्ठता सूची के प्रकाशन के बाद क्या राज्य सरकार अपने स्वयं पर ज्येष्ठता सूची की समीक्षा कर सकती है, विशेष रूप से जहां इस संबंध में कोई वैधानिक प्रावधान या नियम नहीं बनाया गया है, यह विचार करने योग्य है।

38. **हरियाणा राज्य औद्योगिक विकास निगम लिमिटेड बनाम मवासी व अन्य, AIR SCW 2012, 4222** में यह निर्णीत किया गया था:-

9. इस चरण में यह देखना उचित होगा कि समीक्षा की शक्ति विधि की संरचना है और कोई भी न्यायालय या अर्ध-न्यायिक निकाय या प्रशासनिक अधिकारी अपने निर्णय या आदेश या निर्णय की समीक्षा नहीं कर सकता है, जब तक कि वह विधिक रूप से ऐसा करने के लिए सशक्त न हो। अनुच्छेद 137 इस न्यायालय को संसद द्वारा बनाए गए किसी भी विधि या संविधान के अनुच्छेद 145 के अधीन बनाए गए किसी भी नियम के प्रावधानों के अधीन अपने निर्णयों की समीक्षा करने का अधिकार देता है।

39. वर्तमान मामले में समीक्षा अधिकारी के पद पर याचीकर्ता की पदोन्नति के तुरंत बाद अस्थायी ज्येष्ठता सूची के लिए आपतियों को आमंत्रित किया गया था, जहां याचीकर्ताओं को 2013 बैच की सीधी भर्ती वालों से ज्येष्ठता सूची में उच्च रखा गया था। आपतियों को विधिवत समिति के समक्ष रखा गया था, जिसने याचीकर्ता के पक्ष में अपनी सिफारिशें प्रस्तुत कीं, जिन्हें सरकार द्वारा स्वीकार किया गया और 05/08/2016 को अंतिम ज्येष्ठता सूची प्रकाशित की गई। याचीकर्ताओं को दी गई ज्येष्ठता के विरुद्ध उठाई गई आपतियों पर विचार करते हुए यह माना गया कि याचीकर्ताओं को रिक्ति की तिथि से ज्येष्ठता नहीं दी गई है। यह भी कहा गया कि याचीकर्ताओं का चयन भी भर्ती वर्ष 2015-16 से संबंधित है और भर्ती वर्ष 2015-16 में चयन में पदोन्नत माने जाने पर उन्हें ज्येष्ठता देने में कोई कमी नहीं है।

40. अस्थायी ज्येष्ठता सूची के लिए आपतियों को आमंत्रित करके 18/08/2018 को ज्येष्ठता सूची तैयार करने फिर से कार्यवाही की गई थी। यह कार्यवाही, 27/04/2012 को निर्णीत सिविल अपील संख्या-02608/11, **उत्तर प्रदेश पावर कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजेश कुमार** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के कारण की गई थी, जहां ज्येष्ठता नियम, 1991 के नियम 8 को असंवैधानिक माना गया था। 2013-14 बैच की सीधी भर्ती वालों द्वारा याचीकर्ताओं की ज्येष्ठता की नियुक्ति के विरुद्ध फिर से आपतियां उठाई गईं। आपतियों को इसके विचार के लिए समिति को भेजा गया था, और 04/09/2018 और 05/09/2018 को प्रभावित पक्षों को व्यक्तिगत सुनवाई भी दी गई थी और 27/03/2019 को विस्तृत और तर्कसंगत आदेश द्वारा अपनी सिफारिशें प्रस्तुत कीं। फिर से, याचीकर्ताओं की ज्येष्ठता के विरुद्ध 2013-14 बैच की सीधी भर्ती वालों की आपतियों पर विचार किया गया और निरस्त कर दिया गया और ज्येष्ठता सूची में याचीकर्ताओं की नियुक्ति में कोई कमी नहीं पाई गई।

41. यह कार्यवाही किशोर टंडन के प्रकरण में विशेष अपील में निर्गत निर्देशों के अनुसरण में तीसरे अवसर पर आयोजित की गई थी, अस्थायी ज्येष्ठता सूची 15/07/2022 को निर्गत की गई थी और आपतियां प्राप्त हुई थीं, और आपतियों का निर्णय करते हुए 11/08/2022 को अंतिम ज्येष्ठता सूची निर्गत की गई थी। याचीकर्ताओं के विरुद्ध सीधी भर्ती वालों द्वारा दी गई आपतियों का निर्णय करते समय यह नोटिस किया गया था कि लखनऊ पीठ के समक्ष एक रिट याचिका संख्या-3717 सन् 2017, नवीन कुमार व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य, लंबित थी और परिणामस्वरूप उपर्युक्त कार्यवाही के लंबित रहने के कारण यह पाया गया कि ज्येष्ठता सूची में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए और पहले से निर्णीत गई आपतियों में भी नहीं।

42. राज्य सरकार ने उपरोक्त चर्चा के अनुसार तीन अवसरों पर अपने निर्णय को बनाए रखा कि 30/06/2016 से प्रभावी, याचीकर्ताओं को ज्येष्ठता का अनुदान सही था और लगातार 2013-14 बैच की सीधी भर्ती वालों द्वारा उठाई गई आपतियों को निरस्त कर दिया। हम यह भी नोटिस करते हैं कि आपतियों का निर्णय करने के चरण में पक्षों को सुनवाई का उचित अवसर दिया गया था और सभी आदेशों में कारणों का खुलासा किया गया है। तदनुसार, यह सभी पक्षों को सुनने के बाद एक तर्कपूर्ण निर्णय था, और तदनुसार इस न्यायालय को यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि इसमें एक अर्ध-न्यायिक कार्यवाही के सभी अवयव हैं, और राज्य सरकार बाद के चरण में योग्यता पर दिनांक 13/07/2016 के आदेश और बाद की ज्येष्ठता सूची की समीक्षा शुरू करने की अपनी शक्तियों से वंचित थी।

43. आक्षेपित ज्येष्ठता सूची की तैयारी का कारण संयुक्त सचिव, सचिवालय प्रशासन विभाग द्वारा दिनांक 09/08/2023 को निर्गत आदेश है, जिसके द्वारा याचीकर्ताओं की पदोन्नति से संबंधित मुद्दे की पुनः परीक्षा पर विशेष रूप से, जिस तिथि से पदोन्नति को प्रभाव दिया गया है, गलत और नियमों के विपरीत पाया गया, और परिणामस्वरूप पदोन्नति की प्रभावी तिथि को उस तिथि में संशोधित करने का निर्णय लिया गया, जिस पर आदेश पारित किया गया था, जो 13/07/2016 है।

44. रेस-जुडीकेटा का सिद्धांत एस्टॉपल सिद्धांत की एक प्रजाति है। जब कार्रवाई के एक विशेष कारण पर आधारित कार्यवाही अंतिमता प्राप्त कर लेती है, तो रेस-जुडीकेटा का सिद्धांत पूरी तरह से लागू होगा।

45. इस संबंध में वेड और फोर्सिथ ऑन एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ, 9वां संस्करण, पृष्ठ 243 का संदर्भ दिया जा सकता है, जिसमें कहा गया है:

"एस्टॉपल की एक विशेष किस्म रेस-जुडीकेटा है। यह उस नियम से निकलता होता है, जो न्यायिक निर्धारण के पक्षों को एक ही प्रश्न पर फिर से मुकदमा करने से रोकता है, भले ही निर्धारण प्रदर्शनीय रूप से गलत हो। अपील के तरीके से कार्यवाही को छोड़कर, निर्णय से बंधे पक्षों को इसे चुनौती देने से रोका जाता है। एक दूसरे के बीच वे न तो फिर से कार्रवाई के समान कारण का पीछा कर सकते हैं, और न ही वे किसी भी मुद्दे पर फिर से मुकदमा कर सकते हैं, जो निर्णय में एक आवश्यक तत्व था। इन दो पहलुओं को कभी-कभी 'कार्रवाई एस्टॉपल का कारण' और 'मुद्दा एस्टॉपल' के रूप में प्रतिष्ठित किया जाता है। रेस-जुडीकेटा और एस्टॉपल पर विधि अच्छी तरह से समझा जाता है और इन विषयों पर विभिन्न न्यायालयों द्वारा पर्याप्त आधिकारिक घोषणाएं हैं। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, रेस-जुडीकेटा की दलील, हालांकि तकनीकी, मुकदमेबाजी को समाप्त करने के लिए सार्वजनिक नीति पर आधारित है। हालांकि, यह अलग है, यदि एक मुद्दा जो पहले की मुकदमेबाजी में तय किया गया था, फिर से एक नए कार्रवाई के कारण पर आधारित मुकदमे में समान पक्षों के बीच निर्धारण के लिए उत्पन्न होता है या जहां निरंतर कार्रवाई का कारण है। पक्ष तब पहले किए गए निर्धारण से बंधे नहीं हो सकते हैं यदि इस बीच, विधि बदल गया है या उच्च मंच द्वारा अलग तरह से व्याख्या की गई है..."

46. जॉर्ज स्पेंसर बोवर और टर्नर द्वारा 'द डॉक्ट्रिन ऑफ रेस-जुडीकेटा' दूसरे संस्करण में, यह कहा गया है:

"एक न्यायिक निर्णय को अंतिम माना जाता है, जब यह कुछ भी न्यायिक रूप से निर्धारित या पता लगाने के लिए नहीं छोड़ता है, इसे प्रभावी और निष्पादन में सक्षम बनाने के लिए, और पूर्ण, पूर्ण और निश्चित है, और जब यह विधिक रूप से बाद के निरसन, समीक्षा, या न्यायाधिकरण द्वारा संशोधन के अधीन नहीं है, जिसने इसे घोषित किया..."

47. स्वामी आत्मानंद व अन्य बनाम श्री रामकृष्ण तपोवनम व अन्य, JT (2005) 4 SC 472 में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा:-

"सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 में निहित रेस-जुडीकेटा के सिद्धांत का उद्देश्य समान पक्षों के बीच हर बाद के मुकदमे में, पहले तय किए गए तथ्य के बिंदुओं, या विधि के, या तथ्य और विधि के निर्णय की निर्णायकता के नियम को बनाए रखना है। एक बार जब मामला जो लिस का विषय-वस्तु था, एक सक्षम

न्यायालय द्वारा निर्धारित हो गया, तो कोई भी पक्ष बाद में इसे बाद की मुकदमेबाजी में फिर से खोलने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इस तरह का एक नियम मुकदमेबाजी को समाप्त करने के दृष्टिकोण से विधि की पुस्तक में लाया गया था, जिससे दूसरे पक्ष को उत्पीड़न में न डाला जा सके।

48. रस-जुडीकेटा का सिद्धांत यह परिकल्पना करता है कि एक बिंदु पर सीधे समवर्ती क्षेत्राधिकार के न्यायालय का एक दलील के संबंध में निर्णय, समान पक्षों के बीच किसी अन्य न्यायालय में किसी अन्य मामले में, जहां उक्त दलील बिल्कुल उसी बिंदु को फिर से उठाने की कोशिश करती है, जो पहले के फैसले में निर्धारित किया गया था, को बाधित करता है।"

49. यह भी नोटिस किया गया:

"ईश्वरदास बनाम मध्य प्रदेश राज्य व अन्य, AIR (1979) SC 551 में, सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णीत किया: "...रस-जुडीकेटा की दलील को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दो मुकदमेबाजी के सभी पक्ष सामान्य होने चाहिए। जो आवश्यक है वह यह है कि मुद्दा समान पक्षों के बीच या उन पक्षों के बीच होना चाहिए, जिनके अधीन वे या उनमें से कोई भी दावा करता है..."

50. अर्नोल्ड बनाम नेशनल वेस्टमिंस्टर बैंक पीएलसी, [1991] 3 ALL ER 41 में फिर से, हाउस ऑफ लॉर्ड्स ने कार्रवाई एस्टॉपल के कारण और मुद्दा एस्टॉपल के बीच अंतर को नोटिस किया। कार्रवाई एस्टॉपल का कारण उत्पन्न होता है, जहां बाद की कार्यवाही में कार्रवाई का कारण पहले की कार्यवाही में समान है, बाद वाला समान पक्षों या उनके प्राइवी के बीच रहा है और समान विषय-वस्तु शामिल है। ऐसे मामले में, बार सभी बिंदुओं के संबंध में पूर्ण है, जब तक कि धोखाधड़ी या मिलीभगत का आरोप नहीं लगाया जाता है, जैसे कि पहले के निर्णय को रद्द करने का औचित्य साबित करना। नए तथ्यात्मक मामले की खोज जो पहले की कार्यवाही में उपयोग के लिए उचित परिश्रम से नहीं मिल सकती थी, इंग्लैंड के विधि के अनुसार, बाद को फिर से खोलने की अनुमति नहीं देती है। मुद्दा एस्टॉपल उत्पन्न हो सकता है, जहां एक कार्रवाई के कारण में एक आवश्यक घटक बनाने वाला एक विशेष मुद्दा मुकदमा किया गया है और तय किया गया है और बाद की कार्यवाही में समान पक्षों के बीच एक अलग कार्रवाई के कारण शामिल है जिसमें समान मुद्दा प्रासंगिक है, पक्षों में से एक उस मुद्दे को फिर से खोलने की कोशिश करता है। यहां भी बार पूर्ण है लेकिन इसका संचालन कुछ परिस्थितियों में विफल किया जा सकता है।

51. तदनुसार उपर्युक्त चर्चा के आलोक में यह न्यायालय सुविचारित दृष्टिकोण का है कि एक बार 30/06/2016 से प्रभावी याचीकर्ताओं की पदोन्नति से संबंधित मुद्दे का निर्धारण हो गया और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए ज्येष्ठता सूची भी तैयार की गई, और आगे दो अन्य अवसरों पर अर्थात् 03/04/2019 और 11/08/2022 को, जहां समान मुद्दे पर फिर से निर्णय लिया गया और दोहराया गया, उक्त निर्णय अंतिमता में था, और प्रतिवादियों को दिनांक 09/08/2023 के आक्षेपित आदेश द्वारा फिर से समान मुद्दे पर पुनर्विचार

और निर्णय करने से रोका गया था। इस संबंध में प्रतिवादियों द्वारा किया गया तर्क तदनुसार निरस्त किया जाता है।

52. उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक ज्येष्ठता नियमावली, 1991 के अवलोकन पर, हम पाते हैं कि अंतिम ज्येष्ठता सूची की समीक्षा के लिए कोई प्रावधान नहीं है, जो एक बार नियम 5 के अधीन निर्धारित प्रक्रिया का पालन करने के बाद तैयार की गई है, जिसका अर्थ है कि एक बार अंतिम ज्येष्ठता सूची, अस्थायी ज्येष्ठता सूची के विरुद्ध संबंधित पक्षों द्वारा योजित आपत्तियों का निर्णय करने के बाद निर्गत की गई है, तो अधिकार को टूटना *फंकशस ऑफिशियो* बन जाता है और व्यक्तियों के समान समूह के बीच ज्येष्ठता को फिर से निर्धारित करने के लिए बार-बार समान शक्ति का प्रयोग करने की कोई शक्ति नहीं रखता है। *फंकशस ऑफिशियो* का सिद्धांत एक स्पष्ट बिंदु प्रदान करने के लिए मौजूद है, जहां न्यायिक प्रक्रिया समाप्त होती है और विवाद को शांत करने के लिए। इसके बिना, निर्णय लेने वाली संस्थाएं जैसे न्यायालय अपने निर्णयों पर अंतहीन रूप से फिर से विचार कर सकते हैं। एक न्यायालय या अर्ध-न्यायिक अधिकारी के समक्ष एक मामले के एक निश्चित समापन बिंदु के साथ, पक्ष न्यायिक समीक्षा की तलाश करने के लिए स्वतंत्र हैं या अपील को प्राथमिकता देने के लिए। वैकल्पिक रूप से, उनके अधिकार अंतिमता के साथ निर्धारित होते हैं। समान विचार राज्य द्वारा निर्णयों पर लागू नहीं होते हैं जो पूरी तरह से नीति या समीचीनता पर आधारित हैं। **नलित नारायण मिश्रा बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य व अन्य, 2016 SCC OnLine HP 2866** में, हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने माना है कि "*फंकशस ऑफिशियो*" एक लैटिन शब्द है, जिसका अर्थ है अपने कार्यालय का कार्य करना। एक अधिकारी या आधिकारिक निकाय के संबंध में, इसका मतलब है आगे के अधिकार या विधिक क्षमता के बिना क्योंकि मूल कर्तव्यों और कार्यों को पूरी तरह से पूरा किया गया है। "*फंकशस*" का अर्थ है प्रदर्शन करना और "*ऑफिशियो*" का अर्थ है कार्यालय। इस प्रकार, वाक्यांश *फंकशस ऑफिशियो* का अर्थ है अपने कार्यालय के कार्य को करना है, जो बदले में इसका मतलब है कि सार्वजनिक अधिकारी आगे के अधिकार या विधिक क्षमता के बिना है, क्योंकि मूल आयोग के कर्तव्यों और कार्यों को पूरी तरह से पूरा किया गया है।

53. ट्रेनर्स लैटिन मैक्सिमस, चौथा संस्करण *फंकशस ऑफिशियो* अभिव्यक्ति को निम्नलिखित अर्थ देता है "*एक व्यक्ति जिसने अपने आधिकारिक कर्तव्य का निर्वहन किया है*"। यह ऐसे किसी के बारे में कहा जाता है, जो एक निश्चित पद धारण करता है, जब उसने कार्यालय के कर्तव्यों का निर्वहन किया गया है। इस प्रकार एक न्यायाधीश, जिसने अपने सामने लाए गए एक विवाद का निर्णय किया है, *फंकशस ऑफिशियो* है और अपने स्वयं के निर्णय की समीक्षा नहीं कर सकता है। वार्टन के लॉ लेक्सिकॉन, 14वें संस्करण में, *फंकशस ऑफिशियो* अभिव्यक्ति को अर्थ दिया गया है: "*एक व्यक्ति जिसने अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया है, या जिसका कार्यालय या प्राधिकार समाप्त हो गया है*" पी. रामनाथ अय्यर का लॉ लेक्सिकॉन अभिव्यक्ति को अर्थ देता है: "एक शब्द किसी ऐसी चीज़ पर लागू होता है, जिसमें एक बार जीवन और शक्ति थी, लेकिन जो किसी भी गुण का नहीं रह गया है। इस प्रकार जब एक एजेंट ने व्यवसाय को पूरा किया है, जो उसे सौंपा गया था तो उसकी एजेंसी *फंकशस ऑफिशियो* है।"

54. ब्लैक के लॉ डिक्शनरी दसवें संस्करण में, *फंक्शंस ऑफिशियो* का अर्थ है: "अपने कार्यालय के कार्य का निर्वहन करना (एक अधिकारी या आधिकारिक निकाय का) आगे के अधिकार या विधिक क्षमता के बिना, क्योंकि मूल आयोग के कर्तव्यों और कार्यों को पूरी तरह से पूरा किया गया है।" दूसरे शब्दों में, अधिकारी, जिसका जीवन और शक्ति थी, उद्देश्य/गतिविधियों/कार्य के पूरा होने के कारण सब कुछ खो दिया है।

55. ज्येष्ठता सूची को फिर से तैयार करने के अवसर हो सकते हैं, ज्येष्ठता सूची में कुछ समूहों या व्यक्तियों को शामिल करने या बाहर करने के लिए, न्यायिक निर्धारण के अनुसार, या कुछ अन्य आकस्मिक परिस्थिति, जो उक्त कार्यवाही को आवश्यक बनाती है, लेकिन ज्येष्ठता सूची तैयार करते समय एक बार निर्णीत की गई आपत्तियों को बाद में फिर से नहीं खोला जा सकता है। यह तर्क इस तथ्य पर विचार करने के बाद आया है कि नियुक्ति अधिकारी ज्येष्ठता के निर्धारण की अर्ध-न्यायिक शक्तियों का प्रयोग कर रहा है और उसके कार्य एक न्यायिक/अर्ध-न्यायिक अधिकारी के समान सीमाओं के अधीन होंगे, और एक बार जब वह एक निर्णय ले लेता है, तो फिर यह केवल समीक्षा के अधीन अंतिम होगा, जहां इस संबंध में विशेष रूप से एक निर्देश है।

56. याचीकर्ताओं की ओर से यह भी तर्क दिया गया था कि 05/08/2016 और 18/05/2022 को निर्गत ज्येष्ठता सूची के विरुद्ध 2013-14 बैच की सीधी भर्ती वालों द्वारा दो रिट याचिकाएं योजित की गई थीं, जो इस आधार पर ज्येष्ठता सूची में उनसे ऊपर याचीकर्ताओं की नियुक्ति को चुनौती देती थीं कि उन्हें 30/06/2016 से प्रभावी समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नति का लाभ दिया गया है। ये रिट याचिकाएं नवीन कुमार व 12 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य के साथ-साथ रिट याचिका संख्या 3717 सन् 2017, संगीता मिश्रा व 86 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य, रिट याचिका संख्या 5909 सन् 2022, हैं, जो आक्षेपित आदेश पारित किए जाने की तिथि को इस न्यायालय के समक्ष लंबित थीं।

57. यह नोट करना भी प्रासंगिक है कि जब 15/07/2022 को अस्थायी ज्येष्ठता सूची प्रकाशित की गई थी, आपत्तियों को आमंत्रित करते हुए, और फिर से 2013-14 के सीधी भर्ती वालों ने 30/06/2016 से प्रभावी याचीकर्ताओं को दी गई नियुक्ति के लाभ के विरुद्ध अपनी आपत्तियां योजित की थीं और मामले को सभी आपत्तियों पर विचार करने के लिए एक समिति के समक्ष रखा गया था और समिति ने कार्मिक विभाग से परामर्श करने के बाद इस तथ्य को संज्ञान में लिया कि रिट याचिका संख्या 3717 सन् 2017 (नवीन कुमार व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य) लंबित था और कि समान मुद्दा उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित है, उक्त परिस्थितियों में यह निर्णय लिया गया कि आपत्तियों पर कोई आदेश पारित नहीं करना चाहिए। समिति की सिफारिशों को राज्य सरकार द्वारा विधिवत स्वीकार किया गया था और ज्येष्ठता सूची 11/08/2022 को प्रकाशित की गई थी। उच्च न्यायालय के निर्णय की प्रतीक्षा करने का निर्णय लेने के बावजूद, उनके स्वयं के निर्णय के अचानक उलटफेर के लिए कोई कारण नहीं बताया गया है और एक नया आदेश पारित किया गया है। विशिष्ट परिस्थितियों में राज्य के लिए न्यायिक फैसले के परिणाम की प्रतीक्षा करना उचित होता और कम

से कम उच्च न्यायालय में लंबित रिट याचिकाओं के परिणाम की प्रतीक्षा किए बिना पूरे मुद्दे पर फिर से विचार करने की अचानक आवश्यकता के लिए कारण अभिलेख पर लाना चाहिये था।

58. श्री गौरव मेहरोत्रा, याचीकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि दिनांक 09/08/2023 का आक्षेपित आदेश **पी. सुधाकर राव बनाम यू.गोविंद राव** (2013) 8 SCC 693 में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर गलत तरीके से भरोसा करते हुए पारित किया गया है। यह प्रस्तुत किया गया था कि आक्षेपित आदेश का संपूर्ण आधार मनमाना है और तथ्यों और विधि की गलत विवेचना पर है। उक्त मामला सीधी भर्ती वालों द्वारा उस रिक्ति की घटना की तिथि से ज्येष्ठता का दावा करने के संबंध में था, जिस पर उन्हें नियुक्त किया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने **एन.के. चौहान बनाम गुजरात राज्य** (1977) 1 SCC 308 में निर्णय पर भरोसा किया और निर्णीत किया कि सीधी भर्तियां उस समय से प्रभावी ज्येष्ठता के लिए नियुक्ति की समझी गई तिथि का दावा नहीं कर सकती हैं, जब सीधी भर्ती रिक्ति उत्पन्न हुई थी। ज्येष्ठता सेवा की लंबाई पर निर्भर करती है। याचीकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि उक्त निर्णय तथ्यों पर अलग है, क्योंकि यहां याचीकर्ता रिक्ति उत्पन्न होने की तिथि से ज्येष्ठता का दावा नहीं कर रहे हैं।

59. यह भी प्रस्तुत किया गया था कि **पी. सुधाकर राव बनाम यू.गोविंद राव** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **पवन प्रताप सिंह बनाम रीवन सिंह** (2011) 3 SCC 267 में निर्णय पर भी विचार किया था, जहां माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्वयं माना था कि सामान्य तौर पर, प्राकल्पिक ज्येष्ठता पूर्व तिथि से नहीं दी जा सकती है और यदि यह किया जाता है, तो उसे वस्तुनिष्ठ विचारों पर आधारित होना चाहिए और एक वैध वर्गीकरण का आदेश होना चाहिए और वैधानिक नियमों से जुड़ा होना चाहिए। तदनुसार यह प्रस्तुत किया गया था कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सभी शर्तें वर्तमान प्रकरण में पूरी होती हैं और तदनुसार, प्रतिवादियों ने सही परिप्रेक्ष्य में सर्वोच्च न्यायालय के उपर्युक्त निर्णय पर विचार किए बिना केवल उक्त निर्णय के एक हिस्से पर भरोसा किया है, बिना सही तरीके से उस संदर्भ की विवेचना किए, जिसमें वही कहा गया था।

60. प्रतिवादी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं ने याचीकर्ता की दलील का विरोध करते हुए आक्षेपित आदेशों का समर्थन किया है और प्रस्तुत किया है कि वे नियमित रूप से पूर्व तिथि से प्रभावी याचीकर्ताओं को निर्गत अवैध और मनमाने नियुक्ति आदेशों के विरुद्ध प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। यह प्रस्तुत किया गया था कि न तो नियम पूर्व तिथि से नियुक्ति के ऐसे आदेश का समर्थन करते हैं, और न ही ऐसा कोई उचित विचार है, जिसके आधार पर केवल याचीकर्ताओं को भर्ती वर्ष 2015-16 में भर्ती किया गया माना जाए, ऐसा आदेश पारित किया जा सकता था।

61. प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार करते हुए, विचार के लिए जो प्रश्न आता है वह यह है कि क्या राज्य 30/06/2016 से प्रभावी आदेश दिनांक 13/07/2016 के द्वारा याचीकर्ताओं को वैध रूप से नियुक्त कर सकता था?

62. निर्विवाद तथ्यों के अनुसार याचीकर्ता सहायक समीक्षा अधिकारियों के पद पर कार्यरत थे और समीक्षा अधिकारी के पद पर पदोन्नत होने वाले थे। कार्यवाही 07/06/2016 को उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग के सचिव को एक पत्र लिखकर प्रारंभ हुई, जहां स्पष्ट रूप से कहा गया था कि विभागीय पदोन्नति समिति की बैठक इस तरह से आयोजित की जाए कि अनुशंसित कर्मियों को 30/06/2016 से पहले, यानी चयन वर्ष 2015-16 में पदोन्नत किया जा सके।

63. तदनुसार विभागीय पदोन्नति समिति का गठन किया गया और चयन वर्ष के अंतिम दिन 30/06/2016 को इसकी बैठक हुई, और सरकार को अपनी सिफारिशें कीं, और बाद में नियमों के अनुसार उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग से अनुमोदन मांगा गया, जो दिनांक 08/07/2016 के पत्र द्वारा दिया गया और 30/06/2016 से प्रभावी बनाते हुए 13/07/2016 को पदोन्नति के आदेश पारित किए गए।

64. उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक ज्येष्ठता नियमावली, 1991 ज्येष्ठता के निर्धारण के लिए प्रदान करते हैं, जहां नियुक्तियां पदोन्नति के साथ-साथ सीधी भर्ती द्वारा की जाती हैं, जो सुविधा के लिए नीचे उद्धृत किए गए हैं:-

ज्येष्ठता, जहां पदोन्नति और सीधी भर्ती द्वारा नियुक्तियां- (1) जहां सेवा नियमों के अनुसार नियुक्तियां पदोन्नति और सीधी भर्ती दोनों द्वारा की जाती हैं, नियुक्त व्यक्तियों की ज्येष्ठता, निम्नलिखित उप-नियमों के प्रावधानों के अधीन, उनकी मूल नियुक्तियों के आदेश की तिथि से निर्धारित की जाएगी, और यदि दो या अधिक व्यक्ति एक साथ नियुक्त किए जाते हैं, तो उस क्रम में, जिसमें उनके नाम नियुक्ति आदेश में व्यवस्थित हैं:

परंतु यदि नियुक्ति आदेश एक विशेष पूर्व तिथि निर्दिष्ट करता है, जिससे प्रभावी एक व्यक्ति को मूल रूप से नियुक्त किया जाता है, तो उस तिथि को मूल नियुक्ति के आदेश की तिथि माना जाएगा और, अन्य मामलों में, इसका मतलब आदेश निर्गत करने की तिथि होगी:-

.....

65. दिनांक 13/07/2016 के नियुक्ति पत्र में विभागीय पदोन्नति समिति की सिफारिशों के अनुसरण में और लोक सेवा आयोग से परामर्श करने के बाद 30/06/2016 से प्रभावी समीक्षा अधिकारियों के मूल पद पर पदोन्नति की जा रही है, ऐसा उल्लेख किया गया है। इस तथ्य का कोई उल्लेख नहीं है कि समीक्षा अधिकारी के संवर्ग में रिक्ति उत्पन्न होने की तिथि से नियुक्तियों की गई हैं, और न ही दिनांक 13/07/2016 का समीक्षा अधिकारी के संवर्ग में रिक्ति उत्पन्न होने की तिथि के साथ कोई संबंध है। **पी.सुधाकर राव व अन्य बनाम यू. गोविंद राव व अन्य** में सर्वोच्च न्यायालय इस मुद्दे पर विचार कर रहा था कि क्या उस तिथि से कोई पूर्वव्यापी ज्येष्ठता दी जा सकती है, जब व्यक्ति अवर अभियंताओं के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र भी नहीं हैं। उक्त मामले में पर्यवेक्षकों को अवर अभियंता के अगले उच्च पद पर पदोन्नति के विचार के लिए पिछली सेवा का भारांक दिया गया था। उक्त भारांक शासनदेशों के अनुसार दिया गया था, और तदनुसार सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि पर्यवेक्षकों को दिया गया सेवा का भारांक केवल सहायक अभियंता के पद पर पदोन्नति के लिए पात्रता

के उद्देश्य के लिए लाभ उठाया जा सकता है और ज्येष्ठता के लिए नहीं। सर्वोच्च न्यायालय के उक्त निर्णय ने पवन प्रताप सिंह बनाम रीवन सिंह, (2011) 3 SCC 267 में की गई टिप्पणियों को भी ध्यान में रखा और विचार किया है:-

45. उपर्युक्त से, सेवा में ज्येष्ठता के निर्धारण के संबंध में विधिक स्थिति को निम्नानुसार संक्षेपित किया जा सकता है:

(i) चयन की प्रभावी तिथि को सेवा नियमों के संदर्भ में समझा जाना चाहिए, जिसके अधीन नियुक्ति की जाती है। इसका मतलब वह तिथि हो सकती है, जिस पर चयन की प्रक्रिया विज्ञापन निर्गत करने के साथ शुरू होती है या चयन सूची की तैयारी का तथ्य, जैसा भी हो।

(ii) किसी विशेष सेवा में परस्पर ज्येष्ठता को सेवा नियमों के अनुसार निर्धारित किया जाना चाहिए। किसी विशेष सेवा में प्रवेश की तिथि या मूल नियुक्ति की तिथि एक अधिकारी या दूसरे के बीच या विभिन्न स्रोतों से भर्ती किए गए अधिकारियों के एक समूह और दूसरे के बीच परस्पर ज्येष्ठता तय करने के लिए सबसे सुरक्षित मानदंड है। वैधानिक नियमों, कार्यकारी निर्देशों या अन्यथा में इससे किसी भी प्रस्थान को संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 की आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए।

(iii) सामान्य तौर पर, प्राकल्पिक ज्येष्ठता पूर्व तिथि से नहीं दी जा सकती है और यदि यह किया जाता है, तो यह उद्देश्य विचारों पर आधारित होना चाहिए और एक वैध वर्गीकरण पर होना चाहिए और वैधानिक नियमों के लिए पता लगाने योग्य होना चाहिए।

(iv) रिक्ति उत्पन्न होने की तिथि से ज्येष्ठता की गणना नहीं की जा सकती है और पूर्वव्यापी रूप से नहीं दी जा सकती है, जब तक कि यह प्रासंगिक सेवा नियमों द्वारा स्पष्ट रूप से प्रदान नहीं किया जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि ज्येष्ठता पूर्वव्यापी आधार पर नहीं दी जा सकती है, जब एक कर्मचारी को संवर्ग में भी नहीं रखा गया है और ऐसा करने से यह कर्मचारियों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकता है, जो इस बीच वैध रूप से नियुक्त किए गए हैं।

66. उपर्युक्त निर्णय में स्पष्ट रूप से माना गया है कि प्राकल्पिक ज्येष्ठता सामान्य रूप से पूर्व तिथि से नहीं दी जा सकती है, लेकिन यदि ऐसा किया जाता है, तो इसे वस्तुनिष्ठ विचार पर आधारित होना चाहिए और एक वैध वर्गीकरण पर होना चाहिए और वैधानिक नियमों से उत्पन्न होना चाहिए। तदनुसार, यह नहीं कहा जा सकता है कि पूर्व तिथि से ज्येष्ठता प्रदान करना स्वयं में अवैध और मनमाना है, लेकिन यदि ऐसा किया जाता है तो यह वैधानिक नियमों से उत्पन्न होना चाहिए और उसमें निर्धारित शर्तों के अनुसार पूरा किया जाना चाहिए। पवन प्रताप सिंह के प्रकरण पर विचार करने के बाद भी, पी. सुधाकर राव के प्रकरण में सर्वोच्च ने उत्तरांचल राज्य बनाम दिनेश कुमार शर्मा (2007) 1 SCC 683 में निर्णय पर आगे विचार किया, जहां न्यायालय

विचार कर रहा था कि क्या जिस वर्ष में रिक्ति उत्पन्न होती है, वह इस तथ्य की परवाह किए बिना कि व्यक्तियों को कब भर्ती किया जाता है, ज्येष्ठता के निर्धारण के उद्देश्य के लिए कोई प्रासंगिकता हो सकती है, और निर्णीत किया कि नियमों के अधीन नियुक्ति के आदेश को कोई पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं दिया जा सकता है और न ही ऐसा तर्क सामान्य अर्थ में उचित है।

67. सर्वोच्च न्यायालय ने पी.सुधाकर राव में निष्कर्ष पर पहुंचते समय नियुक्ति पत्रों को पूर्वव्यापी प्रभाव देने के संबंध में सभी मामलों से निपटा, और नियम स्थिति को ध्यान में रखते हुए मुद्दे का न्याय करने की आवश्यकता पर जोर दिया, साथ ही मामले में ऐसा लाभ दिए जाने की स्थिति में एक वस्तुनिष्ठ विचार और वैध वर्गीकरण की आवश्यकता पर। इस स्तर पर यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि पी. सुधाकर राव के प्रकरण में हमें किसी भी नियम का कोई उल्लेख नहीं मिलता है, जिसके आधार पर ज्येष्ठता में भारांक दिया जा सकता था, और इसलिए यह हमें उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक ज्येष्ठता नियमावली, 1991 के नियम 8 के प्रावधानों के आलोक में वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करने के लिए प्रेरित करता है। नियम 8 के अनुसार ज्येष्ठता मूल नियुक्ति की तिथि से दी जाएगी और परस्पर ज्येष्ठता भी उसी आधार पर निर्धारित की जाएगी, लेकिन नियम 8 का प्रावधान सरकार को पूर्व तिथि से नियुक्तियां करने का अधिकार देता है, जो मूल नियुक्ति की मानी गई तिथि होगी। इसलिए, नियम 8 के प्रावधान के अनुसार नियुक्ति पूर्व तिथि से की जा सकती है, और यदि ऐसा किया जाता है, तो वह तिथि नियुक्ति की मानी हुई तिथि होगी और वैधानिक नियमों ने इसके लिए प्रावधान किया है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि वह अवैध या क्षेत्राधिकार के बिना होगा।

68. पूर्व तिथि से नियुक्ति करने से संबंधित वैधानिक नियमों पर विचार करने के बाद हम यह परीक्षित करने के लिए आगे बढ़ते हैं कि क्या याचीकर्ताओं की नियुक्ति **पवन प्रताप सिंह** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित शर्तों के अनुरूप है।

69. वर्तमान मामले में, याचीकर्ताओं की पदोन्नति की प्रक्रिया राज्य सरकार द्वारा उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग को 27.6.2016 को लिखे गए पत्र से शुरू हुई थी, जिसमें उसे समीक्षा अधिकारियों के पद पर याचीकर्ताओं की पदोन्नति की कार्यवाही करने के लिए कहा गया था और इसमें यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि प्रक्रिया को 30.6.2016 तक अंतिम रूप दिया जाना चाहिए, जिससे चयन वर्ष के भीतर पदोन्नति की जा सके। उपर्युक्त पत्र के आधार पर विभागीय पदोन्नति समिति को भी 30.6.2016 को बुलाया गया था, जिसने पदोन्नति के लिए याचीकर्ताओं के मामले पर विचार किया और 30.6.2016 को ही राज्य सरकार को विधिवत सिफारिशें कीं। उपर्युक्त तथ्यों से, यह स्पष्ट है कि यह राज्य सरकार का विचारित निर्णय था, जो उनके द्वारा किए गए विभिन्न प्रत्यावेदनों के साथ-साथ समीक्षा अधिकारी के संवर्ग में मौजूद रिक्तियों को देखते हुए कि याचीकर्ताओं को भर्ती वर्ष 2015-16 में पदोन्नत किया जाना चाहिए। तदनुसार, यह नहीं कहा जा सकता है कि 30.6.2016 से प्रभावी याचीकर्ताओं को नियुक्ति देने का निर्णय बिना किसी आधार के या बिना किसी तर्कसंगत संबंध के है।

70. वर्तमान मामले में, समीक्षा अधिकारियों के संवर्ग में उत्पन्न हुई रिक्तियों की संख्या को इस तथ्य के साथ देखते हुए कि इस बीच, सीधी भर्ती भी की गई थी, यह उपयुक्त था कि राज्य सरकार ने याचीकर्ताओं को भर्ती वर्ष 2015-16 में ही समीक्षा अधिकारियों के अगले उच्च पद पर पदोन्नत करने का निर्णय लिया था। हम ऐसी निर्णय लेने की प्रक्रिया में कोई कमी नहीं पाते हैं और प्रतिवादियों द्वारा ऐसी कोई कमी नहीं बताई गई है। केवल यह तथ्य कि संपूर्ण चयन प्रक्रिया 30.6.2016 से परे अगले भर्ती वर्ष में चली गई, 30.6.2016 से प्रभावी याचीकर्ताओं की पदोन्नति देने में सरकार की शक्ति को चुनौती देने के लिए अपने आप में एक आधार नहीं होगा।

71. इस न्यायालय ने 1991 के ज्येष्ठता नियमों के नियम 8 के प्रावधान पर भी ध्यान दिया है, जो स्पष्ट रूप से प्रावधानित करता है कि पूर्व तिथि से पदोन्नति दी जा सकती है और तदनुसार हम पाते हैं कि 30.6.2016 से नियुक्ति का लाभ देने में औचित्य है, क्योंकि पत्र दिनांक 27.6.2016 में ही आशय को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया था और यह भी कि इसका अनुपालन किया गया और डीपीसी को भी 30.6.2016 को बुलाया गया था। बाद में, 08/07/2016 को उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा अनुमोदन दिया गया, और अंततः 13/07/2016 को पदोन्नति आदेश निर्गत किया गया। स्पष्ट रूप से पदोन्नति की प्रक्रिया भर्ती वर्ष के भीतर शुरू हो गई और यहां तक कि डीपीसी को भी उसी भर्ती वर्ष में बुलाया गया था, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि भर्ती वर्ष 2015-16 में पदोन्नति देने का कोई उचित आधार नहीं है।

72. 1991 के ज्येष्ठता नियमों के नियम 8 के प्रावधान की व्याख्या में प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता का तर्क था कि प्रावधान में आने वाला शब्द "व्यक्ति" उक्त नियम के संचालन को एक व्यक्ति के बजाय एक से अधिक व्यक्ति तक सीमित करेगा। उक्त आपत्तियों पर उचित विचार के बाद हम पाते हैं कि वह निरस्त किए जाने योग्य है क्योंकि, सबसे पहले, नियुक्ति एक व्यक्तिगत अधिकार है न कि सामूहिक अधिकार, भले ही नियुक्ति के आदेश एक बैच या कई व्यक्तियों से संबंधित हों, व्यक्तिगत अधिकार बना रहता है और सामूहिक अधिकार नहीं, और आगे विवाद की स्थिति में प्रत्येक नियुक्ति को व्यक्तिगत रूप से देखा जाना है और हम प्रतिवादियों के तर्कों को स्वीकार करने के लिए कोई ठोस कारण नहीं पाते हैं कि सभी याचीकर्ताओं को पूर्व तिथि से नियुक्ति नहीं दी जा सकती थी, लेकिन केवल एक व्यक्ति को ऐसा दिया जा सकता था।

73. उपर्युक्त के अतिरिक्त, उत्तर प्रदेश सामान्य खंड अधिनियम की धारा 13 के अवलोकन से संकेत मिलेगा कि एकवचन में बहुवचन शामिल है और जहां नियम पूर्व तिथि से नियुक्ति देने के लिए "व्यक्ति" को संदर्भित करता है, वह भी उस मामले में विस्तारित होगा, जहां एक से अधिक व्यक्ति हैं। उक्त प्रावधान की अन्यथा व्याख्या करना अनुचित और मनमाना होगा, क्योंकि यह पूर्व तिथि से नियुक्ति देने के लाभ को केवल एक व्यक्ति (व्यक्ति) तक सीमित कर देगा और समान स्थिति वाले अन्य व्यक्तियों को समान लाभ मांगने से वंचित कर देगा। जो व्याख्या उचित है और संवैधानिक योजना के अनुरूप है, उसे स्वीकार और अनुसरण किया जाना चाहिए न कि किसी ऐसी व्याख्या को, जो बेतुकापन और मनमानी की ओर ले जाएगी। तदनुसार, यह न्यायालय इस विचार का है कि नियम 8 के प्रावधान की व्याख्या में पूर्व तिथि से नियुक्तियां या तो एकल

व्यक्ति को या व्यक्तियों के समूह को दी जा सकती हैं और, इसलिए, इस संबंध में प्रतिवादियों के तर्क निरस्त किए जाते हैं।

74. याचीकर्ता द्वारा उठाया गया एक और मुद्दा यह है कि लंबे समय की अवधि के बाद ज्येष्ठता को विचलित किया गया है, और यह इस न्यायालय के साथ-साथ सर्वोच्च न्यायालय का एक सुसंगत दृष्टिकोण है कि लंबे समय की अवधि के बाद ज्येष्ठता की स्थापित स्थिति को विचलित नहीं किया जा सकता है। ज्येष्ठता को पहले 2016 में विधि के अनुसार निर्णीत किया गया था, और बाद में दो अन्य अवसरों पर आपत्तियां प्राप्त करने के बाद, राज्य प्रतिवादियों ने 30/06/2016 से प्रभावी याचीकर्ता को ज्येष्ठता के अनुदान में किया था। सात वर्षों के बाद ज्येष्ठता का यह विचलन अवैध और मनमाना है। दूसरी ओर प्रतिवादियों ने प्रस्तुत किया है कि यदि ज्येष्ठता विधि के प्रावधानों के विपरीत निर्णीत की गई है, तो उसको किसी भी समय सुधारा जा सकता है, जब इसका पता चलता है।

75. यह न्यायालय प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर विचार करने के बाद इस सुविचारित दृष्टिकोण का है कि विधिक सिद्धांत कि "एक बार स्थापित ज्येष्ठता, कई वर्षों के बाद विचलित नहीं की जा सकती है" "स्टेयर डेसीसिस एट नॉन क्विटा मोवरे" एक लैटिन वाक्यांश है, जिसका अर्थ है "निर्णीत मामलों के साथ खड़े होना और निपटाए गए बिंदुओं को विचलित नहीं करना"। यह पूर्ववर्ती के विधिक सिद्धांत का आधार है, जिसके लिए न्यायालयों और निर्णय लेने वाले अधिकारियों को समान मामलों के उत्पन्न होने पर पिछले निर्णयों का पालन करने की आवश्यकता होती है। यह सिद्धांत कर्मचारियों के अधिकारों की रक्षा करता है, जिन्होंने अपने करियर की प्रगति के लिए अपनी ज्येष्ठता पर भरोसा किया है, सहयोगियों के बीच सामंजस्य बनाए रखने में मदद करता है और मुकदमेबाजी को रोकता है, जो महंगी और समय लेने वाली हो सकती है। इसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा बार-बार बरकरार रखा गया है। इसी को बरकरार रखने वाले प्रासंगिक मामला विधि इसके बाद उल्लिखित हैं:-

76. तिलोकचंद मोतीचंद बनाम एच.बी. मुंशी, (1969) 1 SCC 110 में यह निर्णीत किया गया था:-

"7. ... मौलिक अधिकारों का दावा करने वाले पक्ष को अन्य अधिकार अस्तित्व में आने से पहले न्यायालय की शरण में जाना चाहिए। अदालतों की कार्यवाही, निर्दोष पक्षों को नुकसान नहीं पहुंचा सकती है यदि उनके अधिकार न्यायालय की शरण में जाने वाले व्यक्ति की ओर से देरी के कारण उत्पन्न होते हैं।"

रवींद्रनाथ बोस बनाम भारत संघ, (1970) 1 SCC 84

"33. ... प्रतिवादियों को उन अधिकारों से वंचित करना अन्यायपूर्ण होगा, जो उन्हें प्राप्त हुए हैं। प्रत्येक व्यक्ति को आराम से बैठने और विचार करने का अधिकार होना चाहिए कि उसकी नियुक्ति और पदोन्नति, जो बहुत पहले हो चुकी है, वह कई वर्षों के बीत जाने के बाद रद्द नहीं की जाएगी।"

मैलकॉम लॉरेंस सेसिल डी'सूजा बनाम भारत संघ, (1976) 1 SCC 599

"9. यद्यपि सेवा की सुरक्षा का उपयोग एक सार्वजनिक सेवक की चूक के लिए प्रशासनिक कार्रवाई के विरुद्ध ढाल के रूप में नहीं किया जा सकता है, बड़े पैमाने पर सार्वजनिक सेवाओं में संतोष और दक्षता की आवश्यक आवश्यकताओं में से एक सुरक्षा की भावना है। इसकी सभी विभिन्न पहलुओं में ऐसी सुरक्षा की गारंटी देना निस्संदेह मुश्किल है, कम से कम यह सुनिश्चित करना संभव होना चाहिए कि एक बार के लिए तय होने के बाद ज्येष्ठता सूची में किसी की स्थिति जैसी चीजें कई वर्षों के बीत जाने के बाद एक पक्ष के उदाहरण पर फिर से खोली जाने के लिए उत्तरदायी नहीं होनी चाहिए, जिसने हस्तक्षेप की अवधि के दौरान चुप रहने का विकल्प चुना है। लंबे समय के बाद ज्येष्ठता जैसे पुराने मामलों को उठाने से प्रशासनिक जटिलताओं और कठिनाइयों का परिणाम होने की संभावना है। इसलिए, यह सेवा की सहजता और दक्षता के हित में प्रतीत होता है कि ऐसे मामलों को कुछ समय बीतने के बाद शांत किया जाना चाहिए।"

बी.एस. बाजवा बनाम पंजाब राज्य, (1998) 2 SCC 523

"7. ... यह अच्छी तरह से तय है कि सेवा मामलों में ज्येष्ठता के प्रश्न को ऐसी स्थितियों में उचित अवधि बीतने के बाद फिर से नहीं खोला जाना चाहिए, क्योंकि इसके परिणामस्वरूप निपटाई गई स्थिति परेशान होती है जो उचित नहीं है। ऐसी शिकायत करने में वर्तमान मामले में अत्यधिक देरी थी। यह अकेला अनुच्छेद 226 के अधीन हस्तक्षेप को अस्वीकार करने और रिट याचिका को निरस्त करने के लिए पर्याप्त था।"

77. **शिबा शंकर मोहापात्रा बनाम उड़ीसा राज्य** (2010) 12 SCC 471 में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार पाया:-

"30. इस प्रकार, उपरोक्त के दृष्टिगत, स्थापित विधिक सिद्धांत, जो उभरता है वह यह है कि एक बार ज्येष्ठता निर्णीत हो गई और यह उचित अवधि के लिए अस्तित्व में रहती है, तो उसके विरुद्ध किसी भी चुनौती को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। के.आर. मुदगल में, इस न्यायालय ने स्फटिक स्पष्ट शब्दों में निर्धारित किया है कि एक ज्येष्ठता सूची, जो 3 से 4 वर्षों के लिए अस्तित्व में रहती है, बिना चुनौती के, विचलित नहीं होनी चाहिए। इस प्रकार, 3-4 वर्ष ज्येष्ठता को चुनौती देने के लिए एक उचित अवधि है और यदि कोई इस अवधि से परे ज्येष्ठता के मुद्दे को छेड़ता है, तो उसे संतोषजनक स्पष्टीकरण प्रस्तुत करके, निर्णयात्मक मंच तक पहुंचने में देरी और त्रुटियों की व्याख्या करनी होगी।"

78. तदनुसार, विधिक सिद्धांत अच्छी तरह से स्थापित है कि लंबे समय से चली आ रही ज्येष्ठता जो 3-4 वर्षों के लिए अस्तित्व में है, विचलित नहीं हो सकती है। वर्तमान मामले में इसे 7 वर्षों के लंबे बीत जाने के बाद विचलित किया गया है, और यह मामला नहीं है कि प्रतिवादी उस तरीके से अवगत नहीं थे, जिस तरह से याचीकर्ताओं को पूर्व तिथि से नियुक्ति दी गई थी। निजी प्रतिवादियों द्वारा योजित आपत्तियों पर विधिवत विचार किया गया और ऊपर चर्चा किए गए कम से कम तीन अवसरों पर निरस्त कर दिया गया, और परिणामस्वरूप आक्षेपित आदेश के माध्यम से जो पर्याप्त देरी के बाद पारित किया गया है, याचीकर्ताओं की

निर्णीत ज्येष्ठता की स्थिति को विचलित नहीं किया जा सकता था, तदनुसार यह न्यायालय इस दृष्टिकोण का है कि इस आधार पर भी आक्षेपित आदेश अवैध और मनमाना है और रद्द किए जाने योग्य है।

79. प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने एक आपत्ति उठाई है कि केवल 6 व्यक्तियों को प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाया गया है अर्थात् प्रतिवादी 4-9। वे प्रस्तुत करते हैं कि पदोन्नति आदेश को चुनौती सूची में सभी व्यक्तियों को प्रभावित करेगी लेकिन सभी को आवश्यक पक्ष के रूप में पक्षकार नहीं बनाया गया है, जो याचिका को पक्षों के असंयोजन के लिए निरस्त किए जाने योग्य बनाता है।

80. इसके विपरीत, याचीकर्ता के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि सबसे पहले रिट याचिकाओं के वर्तमान सेट में मुख्य चुनौती सरकार के दिनांक 09/08/2023 के आदेश के लिए है, जिसके द्वारा याचीकर्ताओं की नियुक्ति की तिथि बदल दी गई है, और तिथि में बदलाव के आधार पर उन्हें ज्येष्ठता सूची में नीचे रख दिया गया है। यदि आदेश दिनांक 09/08/2023 को रद्द कर दिया जाता है, तो संपूर्ण ज्येष्ठता सूची को याचीकर्ताओं को ज्येष्ठता सूची में उच्च रखते हुए फिर से तैयार करना होगा, और यदि अवैध और मनमानी ज्येष्ठता सूची के आधार पर परिणामस्वरूप कोई पदोन्नति की गई है, तो उसे पूर्ववत करना होगा। यह भी बल दिया गया कि किसी विशेष व्यक्ति की व्यक्तिगत ज्येष्ठता के लिए कोई चुनौती नहीं है और यदि कुछ प्रभावित व्यक्तियों को प्रतिनिधि क्षमता में पक्ष बनाया गया है तो बाद में पदोन्नत सभी व्यक्तियों को वर्तमान रिट याचिका में प्रतिवादियों के रूप में बनाने की कोई आवश्यकता नहीं होगी।

81. वर्तमान मामले में दिए गए तथ्यों पर उचित विचार के बाद, यह न्यायालय इस विचार का है कि पक्षों की एक लंबी सूची को पक्षकार बनाना न केवल न्याय वितरण की प्रक्रिया को अनावश्यक रूप से खींचेगा बल्कि सभी पक्षों को तामील करने में अत्यधिक खर्च भी शामिल होगा। उन मामलों में, जहां बड़ी संख्या में कर्मचारियों की एक सामान्य शिकायत है, कुछ प्रभावित कर्मचारियों को पक्षकार बनाना पक्षों के संयोजन के सिद्धांत का पर्याप्त अनुपालन होगा। उपर्युक्त के अतिरिक्त 2013 बैच की सीधी भर्ती वालों द्वारा पक्षकार बनने के लिए एक आवेदन किया गया था, जिसे स्वीकार किया गया था और उन्हें रिट याचिका के विरोध में व्यापक रूप से सुना गया है।

82. उपरोक्त दृष्टिकोण को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **अजय कुमार शुक्ला बनाम अरविंद राय, (2022) 12 SCC 579** के हालिया मामले सहित निर्णयों की श्रृंखला में बरकरार रखा गया है। प्रासंगिक प्रस्तर इसके बाद उल्लिखित हैं:

"50. मुकुल कुमार त्यागी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [मुकुल कुमार त्यागी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2020) 4 SCC 86: (2020) 1 SCC (L&S) 736] के हालिया मामले में, न्यायमूर्ति अशोक भूषण ने बल दिया कि जब उम्मीदवारों की एक लंबी सूची है, जिसके विरुद्ध मामला आगे बढ़ा है, तो प्रत्येक और हर उम्मीदवार को पक्षकार बनाना अनावश्यक और अप्रासंगिक हो जाता है। यदि कुछ उम्मीदवारों को पक्षकार बनाया जाता है, तो

उन्हें शेष उम्मीदवारों के हित का प्रतिनिधित्व करने के लिए कहा जाएगा। निर्णय से प्रस्तर 81 का प्रासंगिक भाग नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है: (SCC पृ. 119)

"81. ... हम आगे नोट कर सकते हैं कि खंडपीठ [दीपक शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2019 SCC OnLine All 5970] ने भी रिट याचिका में सभी चयनित उम्मीदवारों के असंयोजन के उपरोक्त तर्क को नोट किया लेकिन खंडपीठ ने उपरोक्त तर्क पर अपने निर्णय को आधारित नहीं किया है। जब चयन सूची में बड़ी संख्या में उम्मीदवारों को शामिल करना एक मनमाने या अवैध प्रक्रिया के आधार पर है, तो पीड़ित पक्ष शिकायत कर सकते हैं और ऐसे मामलों में प्रत्येक और हर व्यक्ति के पक्षकार बनाने की आवश्यकता पर बल नहीं दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, जब चयन सूची में 2211 उम्मीदवारों के नाम शामिल हैं, तो चुनौती की प्रकृति को देखते हुए हर उम्मीदवार को पक्षकार बनाना अनावश्यक हो जाता है, जो रिट याचिका में दी गई थी। इसके अतिरिक्त, कुछ चयनित उम्मीदवारों को भी प्रतिनिधि क्षमता में रिट याचिकाओं में पक्षकार बनाया गया था।"

83. इस पहलू पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अजय कुमार शुक्ला बनाम अरविंद राय, (2022) 12 SCC 579 में भी विचार किया गया था:-

"81. ... हम आगे नोट कर सकते हैं कि खंडपीठ [दीपक शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2019 SCC OnLine All 5970] ने भी रिट याचिका में सभी चयनित उम्मीदवारों के असंयोजन के उपरोक्त तर्क को नोट किया लेकिन खंडपीठ ने उपरोक्त तर्क पर अपने निर्णय को आधारित नहीं किया है। जब चयन सूची में बड़ी संख्या में उम्मीदवारों को शामिल करना एक मनमाने या अवैध प्रक्रिया के आधार पर है, तो पीड़ित पक्ष शिकायत कर सकते हैं और ऐसे मामलों में प्रत्येक और हर व्यक्ति के पक्षकार बनाने की आवश्यकता पर बल नहीं दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, जब चयन सूची में 2211 उम्मीदवारों के नाम शामिल हैं, तो चुनौती की प्रकृति को देखते हुए हर उम्मीदवार को पक्षकार बनाना अनावश्यक हो जाता है, जो रिट याचिका में दी गई थी। इसके अतिरिक्त, कुछ चयनित उम्मीदवारों को भी प्रतिनिधि क्षमता में रिट याचिकाओं में पक्षकार बनाया गया था।"

51. वर्तमान मामला ज्येष्ठता सूची की तैयारी का मामला है और वह भी ऐसी स्थिति में, जहां अपीलकर्ता (मूल रिट याचिकाकर्ता) यह भी नहीं जानते थे कि उनके द्वारा प्राप्त अंक या आयोग द्वारा आयोजित परीक्षा में उनकी प्रवीणता क्या है। चुनौती इस आधार पर थी कि ज्येष्ठता सूची की तैयारी में नियमों का पालन नहीं किया गया था। रिट याचिका में 18 निजी प्रतिवादी थे। मूल याचिकाकर्ता यह नहीं जान सकते थे कि कौन कौन प्रभावित होंगे। इस प्रकार उन्होंने मोटे तौर पर ऐसे 18 अवर अभियंताओं को पक्षकार बनाया, जो प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकते थे। सेवा न्यायशास्त्र से संबंधित मामलों में, बार-बार यह माना गया है कि प्रत्येक और हर एक को पक्षकार बनाना आवश्यक नहीं है, जो प्रभावित हो सकता है लेकिन यदि ऐसे प्रभावित कर्मचारियों के एक वर्ग को पक्षकार बनाया जाता है, तो सभी का हित प्रतिनिधित्व और संरक्षित होता है। उपरोक्त के दृष्टिगत, यह अच्छी तरह से निर्णीत है कि कुछ प्रभावित कर्मचारियों को पक्षकार बनाना पक्षों के संयोजन के

सिद्धांत का पर्याप्त अनुपालन होगा और वे अपनी प्रतिनिधि क्षमता में सभी प्रभावित व्यक्तियों के हित की रक्षा कर सकते हैं। सभी पक्षों के संयोजन में विफलता को घातक नहीं माना जा सकता है।

84. तदनुसार, हम प्रतिवादियों द्वारा उठाई गई प्रारंभिक आपति में कोई गुण नहीं पाते हैं और याचीकर्ता ने प्रतिनिधि क्षमता में 6 प्रतिवादियों को पक्षकार बनाया है, जबकि 10 अन्य उम्मीदवारों के पक्षकार बनाने के आवेदन को विधिवत अनुमति दी गई थी और वर्तमान रिट याचिका में सुना गया है। शेष व्यक्तियों का असंयोजन, जिन्हें परिणामस्वरूप पदोन्नत किया गया है, वर्तमान रिट याचिका के लिए घातक नहीं हो सकता है और इसलिए रिट याचिकाओं की पोषणीयता पर आपति निरस्त की जाती है।

85. यहां ऊपर दर्ज कारणों के लिए, रिट याचिकाओं स्वीकार की जाती है। आदेश दिनांक 09/08/2023, ज्येष्ठता सूची दिनांक 06/09/2023 और परिणामी पदोन्नति आदेश दिनांक 25/10/2023 खंडित किए जाते हैं, और प्रतिवादियों को याचीकर्ताओं को 13/07/2016 से प्रभावी समीक्षा अधिकारियों के पद पर पदोन्नत किया गया मानने का निर्देश दिया जाता है और आगे उन्हें उक्त तिथि से ज्येष्ठता का लाभ देने का निर्देश दिया जाता है। प्रतिवादियों को इस न्यायालय द्वारा निर्गत निर्देशों के आलोक में एक नई ज्येष्ठता सूची तैयार करने और विधि के अनुसार पदोन्नति के लिए याचीकर्ताओं के मामले पर आगे विचार करने का निर्देश दिया जाता है।

(2025) 2 ILRA 482

मूल अधिकार क्षेत्र

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 06.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अजय भनोट

रिट-ए संख्या 10045/2020

शिवकर सिंह

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

आकाश खरे, हरि ओम

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

अभिषेक श्रीवास्तव, बलेश्वर चतुर्वेदी, मु.स्था.अधि.

सिविल विधि-सेवा विधि-कारावास की अवधि के दौरान पूर्व वेतन-"काम नहीं वेतन नहीं" का सिद्धांत-याचिकाकर्ता को 23.01.2015 से 18.12.2018 तक कारावास में रखा गया था, जब उसके विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अधीन भ्रष्टाचार विरोधी विभाग द्वारा एक निजी बिजली उपभोक्ता की शिकायत पर आपराधिक मामला दर्ज किया गया था। आपराधिक मामला निगम/नियोक्ता के आग्रह पर संस्थित नहीं किया गया था। आक्षेपित आदेश द्वारा, याचिकाकर्ता को 23.01.2015 से 18.12.2018 तक की अवधि के लिए वेतन बकाया "काम नहीं वेतन नहीं" के सिद्धांत पर अस्वीकार कर दिया गया। निर्णय: "काम नहीं वेतन नहीं" का सिद्धांत केवल दुर्लभ मामलों में अपवाद के अधीन है, जैसे कि जब कोई नियोक्ता किसी कर्मचारी को कर्तव्यों के निर्वहन से रोकता है या उसमें बाधा उत्पन्न करता है। इस मामले में, याचिकाकर्ता को अपनी कारावास की अवधि के दौरान पूर्व वेतन का कोई वैध अधिकार नहीं है। निगम/नियोक्ता ने न तो कोई बाधा उत्पन्न की और न ही याचिकाकर्ता को अपने कर्तव्यों का पालन करने से रोका। "काम नहीं वेतन नहीं" के सिद्धांत के उल्लंघन में पूर्व वेतन देना याचिकाकर्ता के अनुचित संवर्धन और राज्य के खजाने को अनुचित हानि के समान होगा। पूर्व वेतन देने की प्रार्थना अस्वीकृत; हालांकि, याचिकाकर्ता पेंशन के उद्देश्यों के लिए उक्त अवधि में सेवा की निरंतरता का अधिकारी है। (प्रस्तर 11)

निरस्त। (ई-5)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

1. भारतीय रिजर्व बैंक बनाम भोपाल सिंह पांचाल 1994 SCC (1) 541
2. रांछोदजी चतुर्जी ठाकोर बनाम अधीक्षण अभियंता, गुजरात विद्युत बोर्ड, हिम्मतनगर (गुजरात) व अन्य (1996) 11 SCC 603
3. भारत संघ व अन्य बनाम जयपाल सिंह (2004) 1 SCC 121
4. राज नारायण बनाम भारत संघ व अन्य (2019) 5 SCC 809
5. अनिल कुमार सिंह बनाम उ.प्र. राज्य व अन्य 2024 (6) ADJ 223

(माननीय न्यायमूर्ति अजय भनोट द्वारा उद्धोषित)

1. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री आकाश खरे, प्रतिवादी संख्या 1-राज्य के लिए विद्वान स्थायी अधिवक्ता और प्रतिवादी संख्या 2 और 3 के लिए विद्वान अधिवक्ता, श्री अभिषेक श्रीवास्तव को सुना।
2. याचिकाकर्ता, आदेश दिनांक 23.04.2020 से व्यथित है, जिसमें याचिकाकर्ता को 23.01.2015 से 18.12.2018 तक की अवधि के लिए वेतन बकाया का भुगतान करने से इनकार किया गया है। आक्षेपित आदेश में दर्ज है कि याचिकाकर्ता को 23.01.2015 से 18.12.2018 तक कारावास में रखा गया था, जब उसके विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(ख) और धारा 13(2) सपठित धारा 13(1) के अधीन एक

आपराधिक मामला दर्ज किया गया था। प्रथम सूचना रिपोर्ट भ्रष्टाचार विरोधी विभाग के पुलिस अधीक्षक, श्री एस.एस. चौधरी द्वारा एक निजी बिजली उपभोक्ता से प्राप्त शिकायत पर याचिकाकर्ता के विरुद्ध दर्ज की गई थी। वेतन "काम नहीं वेतन नहीं" के सिद्धांत के आवेदन पर अस्वीकार किया गया है।

3. संक्षेप में कहें तो, प्रथम सूचना रिपोर्ट में अभियोजन पक्ष का मामला यह था कि याचिकाकर्ता ने एक उपभोक्ता से बिजली कनेक्शन के लिए रिश्वत की मांग की थी। याचिकाकर्ता को उसके बाद मुकदमे के दौरान 23.01.2015 से 18.12.2018 तक जेल में निरुद्ध कर दिया गया था। याचिकाकर्ता ने उक्त तीन वर्ष की अवधि के लिए अपने कर्तव्यों का निर्वहन नहीं किया। स्वीकृत रूप से, आपराधिक मामला प्रतिवादी निगम के आग्रह पर स्थापित नहीं किया गया था। प्रतिवादी-निगम, जो याचिकाकर्ता का नियोक्ता है, ने कोई बाधा उत्पन्न नहीं की और न ही याचिकाकर्ता को उसके पद पर काम करने से रोका। प्रतिवादी निगम/उसके नियोक्ता द्वारा उक्त मामले में याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई विभागीय कार्यवाही नहीं की गई।

4. विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या याचिकाकर्ता, जो लगभग तीन वर्ष की उक्त अवधि के लिए ड्यूटी से अनुपस्थित था और उक्त अवधि के दौरान कोई काम नहीं किया था, पूर्व वेतन और बकाया का अधिकारी है और क्या "काम नहीं वेतन नहीं" के सिद्धांत को इस मामले में शिथिल किया जा सकता है।

5. "काम नहीं वेतन नहीं" का सिद्धांत सेवा न्यायशास्त्र में सामान्य अनुप्रयोग का एक लाभकारी सिद्धांत है। यह सिद्धांत केवल दुर्लभ मामलों में अपवादित है, जैसे कि जब कोई नियोक्ता किसी कर्मचारी को उसके कर्तव्यों के निर्वहन से रोकता है या उस संबंध में बाधाएं उत्पन्न करता है।

6. चर्चा के इस बिंदु को निर्णयों का लाभ है। सर्वोच्च न्यायालय ने **भारतीय रिजर्व बैंक बनाम भोपाल सिंह पांचाल** के प्रकरण में अनुपस्थित व्यक्ति को पूर्व वेतन देने के बिन्दु पर विचार किया, जिसे उसके नियोक्ता द्वारा उसके कर्तव्यों से नहीं रोका गया था, और निम्नानुसार निर्णय दिया:

"हमने पहले ही विनियम 39, 46 और 47 के संबंधित प्रावधानों के प्रभाव को इंगित किया है। उक्त विनियम एक साथ पढ़े जाने पर कोई संदेह नहीं छोड़ते हैं कि एक कर्मचारी के मामले में, जो किसी अपराध के लिए गिरफ्तार किया जाता है, जैसा कि वर्तमान मामले में है, उसके ड्यूटी से अनुपस्थिति की अवधि को उसके नियंत्रण से परे परिस्थितियों में नहीं माना जाना है। ऐसी परिस्थितियों में, जब उसे उक्त अवधि के दौरान निलंबित माना जाता है, तो वह निर्वाह भत्ते का अधिकारी है। हालांकि, उसे भुगतान किया गया निर्वाह भत्ता उसके वेतन और भत्तों के विरुद्ध समायोजित होने के लिए उत्तरदायी है, यदि सक्षम प्राधिकारी द्वारा उसे उनका अधिकारी माना जाता है। सक्षम प्राधिकारी यह तय करते समय कि क्या ऐसी परिस्थितियों में निलंबित कर्मचारी अपने वेतन और भत्तों का अधिकारी है या नहीं और किस सीमा तक, यदि कोई हो, और क्या अवधि को ड्यूटी पर या छुट्टी पर माना जाना है, प्रत्येक मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखना होगा। यह केवल तभी है जब ऐसे कर्मचारी को सभी दोषों से बरी कर दिया जाता है और सक्षम प्राधिकारी द्वारा निलंबन की अवधि के

दौरान इयूटी पर माना जाता है कि ऐसा कर्मचारी उक्त अवधि के लिए पूर्ण वेतन और भत्तों का अधिकारी है। दूसरे शब्दों में, विनियम बैंक में विशेष रूप से ऐसे निलंबन की अवधि को इयूटी पर या छुट्टी पर या अन्यथा मानने की शक्ति निहित करते हैं। इस प्रकार निहित शक्ति को वैध रूप से चुनौती नहीं दी जा सकती। इस अवधि के दौरान, कर्मचारी कोई काम नहीं करता है। वह अपने स्वयं के कदाचार के कारणों से अनुपस्थित है और बैंक किसी भी तरह से उसे अपने कर्तव्यों से दूर रखने के लिए जिम्मेदार नहीं है। इसलिए, बैंक को अवधि के लिए उसके वेतन और भत्तों का भुगतान करने की देनदारी नहीं दी जा सकती है। यह 'काम नहीं वेतन नहीं' के सिद्धांत के विरुद्ध होगा और उन लोगों के लिए सकारात्मक रूप से अन्यायपूर्ण होगा, जिन्हें काम करना है और अपना वेतन अर्जित करना है। जैसा कि है, यहां तक कि ऐसी अवधि के दौरान भी, कर्मचारी विनियमों के आधार पर निर्वाह भत्ता अर्जित करता है। परिस्थितियों में, उस संबंध में बैंक की शक्ति अप्रतिरोध्य है।" (महत्व प्रदत्त)

7. एक कर्मचारी द्वारा किए गए पूर्व वेतन के दावे को, जो एक अपराध में शामिल था जिसमें उसे बाद में बरी कर दिया गया था, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **रांछोदजी चतुर्जी ठाकोर बनाम अधीक्षण अभियंता, गुजरात विद्युत बोर्ड, हिम्मतनगर (गुजरात) व अन्य(2)** में यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया गया:

"3. सेवा में याचिकाकर्ता की बहाली का आदेश पहले ही उच्च न्यायालय द्वारा दिया जा चुका है। एकमात्र सवाल यह है: क्या वह पूर्व वेतन का अधिकारी है? यह अपराध में शामिल होने का उसका आचरण था, जिसे प्रतिवादी की सेवा में नहीं रहने के लिए ध्यान में रखा गया था। उसकी बरी होने के परिणामस्वरूप, वह बहाली का अधिकारी है इस कारण से कि स्थिति पर लागू होने वाले वैधानिक नियमों के प्रावधान के संचालन द्वारा दोषसिद्धि के आधार पर उसकी सेवा समाप्त कर दी गई थी। पूर्व वेतन के सवाल पर विचार केवल तभी किया जाएगा जब प्रतिवादियों ने अनुशासनात्मक कार्यवाही के माध्यम से कार्रवाई की हो और कार्रवाई विधि में असंवहनीय पाई गई हो और उसे कर्तव्यों के निर्वहन से गैरकानूनी रूप से रोका गया हो। उस संदर्भ में, उसका आचरण प्रासंगिक हो जाता है। प्रत्येक मामले को उसकी अपनी पृष्ठभूमि में विचार करने की आवश्यकता है। इस मामले में, चूंकि याचिकाकर्ता खुद को एक अपराध में शामिल कर चुका था, हालांकि बाद में उसे बरी कर दिया गया, उसने दोषसिद्धि और जेल में कैद के कारण सेवा प्रदान करने से खुद को अक्षम कर दिया था। इन परिस्थितियों में, याचिकाकर्ता पूर्व वेतन के भुगतान का अधिकारी नहीं है। विद्वान एकल न्यायमूर्ति और खंडपीठ ने हस्तक्षेप की आवश्यकता वाली विधि की कोई त्रुटि नहीं की है।"

8. **भारत संघ और अन्य बनाम जयपाल सिंह(3)** में सर्वोच्च न्यायालय ने रांछोदजी चतुर्जी ठाकोर (उपरोक्त) में निर्धारित विधि पर निर्भर करते हुए एक कर्मचारी को पूर्व वेतन देने से इनकार कर दिया, जिसे इस आधार पर सेवा में बहाल किया गया था कि आपराधिक मामला विभाग के आग्रह पर नहीं था:

"4. मामले पर सावधानीपूर्वक विचार करने और रिकॉर्ड पर सामग्री, जिसमें हमारे ध्यान में लाए गए निर्णय और आदेश शामिल हैं, पर विचार करने के बाद, हम इस विचार के हैं कि यह अच्छी तरह से स्वीकृत

है कि प्रारंभ में विस्तृत कारणों के बिना विशेष अनुमति याचिका को अस्वीकार करने वाला आदेश इस न्यायालय द्वारा विधि की कोई घोषणा का गठन नहीं करता है या एक बाध्यकारी मिसाल का गठन नहीं करता है। इसके विपरीत, अपीलकर्ता द्वारा संदर्भित निर्णय, विशिष्ट रूप से दर्ज कारणों व गुण-दोष पर है और एक बाध्यकारी मिसाल के रूप में कार्य करता है। उसे पढ़ने पर, हम [1996] 11 SCC 603 (उपरोक्त) में लिए गए दृष्टिकोण से सम्मानपूर्वक सहमत हैं। यदि अभियोजन, जिसके परिणामस्वरूप अंततः संबंधित व्यक्ति की दोषमुक्ति हुई, विभाग के आग्रह पर या विभाग द्वारा ही था, तो शायद विभिन्न विचार उत्पन्न हो सकते हैं। दूसरी ओर, यदि एक नागरिक के रूप में कर्मचारी या सार्वजनिक सेवक एक आपराधिक मामले में शामिल हो गया और प्रारंभिक दोषसिद्धि के बाद, वह बाद में अपील पर बरी हो जाता है, तो विभाग को किसी भी तरह से इसका दोषी नहीं माना जा सकता है कि उसे सेवा से बाहर रखा गया, क्योंकि विधि किसी अपराध के दोषी व्यक्ति को इस प्रकार बाहर रखने के लिए बाध्य करता है और सेवा में बनाए नहीं रखा जाता है। परिणामस्वरूप, अपीलकर्ताओं द्वारा संदर्भित निर्णय में दिए गए कारण न केवल आश्वस्त करने वाले हैं बल्कि उचितता के अनुरूप भी हैं। यद्यपि पुनः नियुक्ति का निर्देश देने वाले आदेश के उस हिस्से पर लिया गया अपवाद बना र नहीं रह सकता है और प्रतिवादी को सेवा में बहाल किया जाना है, इस कारण से कि पूर्व उन्मोचन केवल उन आपराधिक कार्यवाहियों और दोषसिद्धि के कारण थी, अपीलकर्ता अपने अधिकारों के भीतर हैं कि वे प्रतिवादी को उस अवधि के लिए पूर्व वेतन से इनकार करें, जब वह सेवा में नहीं था। अपीलकर्ताओं को उस अवधि के लिए भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है, जिसके लिए वे प्रतिवादी की सेवाओं का लाभ नहीं उठा सके थे। हमारे विचार में, उच्च न्यायालय ने पूर्व वेतन की अनुमति देने में एक गंभीर त्रुटि की है, ऐसे सभी प्रासंगिक पहलुओं और विचारों का ध्यान दिए बिना। परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय का आदेश, जहां तक यह पूर्व वेतन के भुगतान का निर्देश देता है, अपास्त होने योग्य है व किया जाता है।"

9. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा **राज नारायण बनाम भारत संघ और अन्य(4)** संदर्भित निर्णय, तथ्यात्मक संदर्भ में दिया गया था, जहां संबंधित कर्मचारी के विरुद्ध विभागीय जांच शुरू की गई थी, जो एक आपराधिक मामले के लंबित होने के कारण कारावास में भी था। उस मामले में याचिकाकर्ता को अनुशासनात्मक कार्यवाही की प्रत्याशा में निलंबित कर दिया गया था। बाद में विभागीय जांच कार्यवाही को छोड़ दिया गया। उस तथ्यात्मक संदर्भ में निलंबन की अवधि के लिए पूर्व वेतन का दावा किया गया था और दिया गया था। राज नारायण (उपरोक्त) तथ्यों पर भिन्न है और इस मामले पर लागू नहीं है।

10. इसी तरह, विद्वान एकल न्यायमूर्ति द्वारा **अनिल कुमार सिंह बनाम उ.प्र. राज्य व 4 अन्य(5)** में दिया गया निर्णय पूरी तरह से राज नारायण (उपरोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि पर आधारित है और इसलिए याचिकाकर्ता के लिए सहायक नहीं है।

11. निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में उल्लिखित तथ्यों और ऊपर चर्चा की गई विधि की स्थिति के दृष्टिगत इस प्रकरण में "काम नहीं वेतन नहीं" के सिद्धांत को शिथिल नहीं किया जा सकता है। वास्तव में "काम नहीं वेतन नहीं" के सिद्धांत के विपरीत पूर्व वेतन देना याचिकाकर्ता के अनुचित संवर्धन और राज्य के खजाने को अनुचित

हानि की ओर ले जाएगा। याचिकाकर्ता को अपनी कारावास की अवधि के दौरान किसी भी पूर्व वेतन की अवधि का कोई वैध अधिकार नहीं है।

12. तदनुसार, पूर्व वेतन देने की प्रार्थना अस्वीकृत की जाती है।
13. उस सीमा तक आक्षेपित आदेश दिनांक 23.04.2020 में कोई त्रुटि नहीं है।
14. हालांकि, याचिकाकर्ता पेंशन के उद्देश्यों के लिए उक्त अवधि के लिए सेवा में निरंतरता का अधिकारी होगा।
15. उक्त निर्देशों के साथ, रिट याचिका अंतिम रूप से निस्तारित की जाती है।

(2025) 2 ILRA 486

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 17.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति प्रकाश पांडेया

रिट-ए संख्या-15433/2024

यधुवीर सिंह

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...याचिकाकर्ता

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

अंकित शुक्ला, विनायक मिथल

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

परिजात मिश्रा, अल्का उपाध्याय, अवनीश त्रिपाठी, सी.एस.सी., गगन मेहता, मनीष तिवारी, प्रभाकर कुमार श्रीवास्तव अवस्थी, योगेन्द्र ए.

सेवा/शिक्षा विधि-नियुक्ति-जब चयनित अभ्यर्थी को एक कॉलेज में नियुक्त किया जाता है, तो उसे अपनी कार्यस्थल बदलने का कोई अधिकार नहीं है। (प्रस्तर 23)

डॉ. सच्चिदानंद शर्मा को आयोग द्वारा की गई अनुशंसा के आधार पर संस्थान में स्थायी प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया गया था। उन्होंने उक्त पद से त्यागपत्र दे दिया और डॉ. अंजलि मित्तल, जो संस्थान में वरिष्ठतम शिक्षिका थीं, को कार्यवाहक प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया गया। उनकी सेवानिवृत्ति पर, याचिकाकर्ता को 14.6.2024 को कार्यवाहक प्राचार्य का प्रभार दिया गया। डॉ. सच्चिदानंद शर्मा के त्यागपत्र के बाद, उच्च शिक्षा निदेशक ने आदेश दिनांक 15.01.2024 पारित किया, जिसमें प्रबंधन समिति के सचिव/प्रबंधक को निर्देश दिया गया कि वे प्रतिवादी संख्या 6, जो चयनित अभ्यर्थी की प्रतीक्षा सूची में क्रम संख्या 59 पर था, को प्रश्नगत संस्थान में प्राचार्य के रूप में नियुक्त करें। (प्रस्तर 19)

यह विवादित नहीं है कि उच्च शिक्षा निदेशक, उ.प्र. प्रयागराज द्वारा दिनांक 15.01.2024 के पत्र जारी करने से पहले, प्रतिवादी संख्या 6 को बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया के प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया गया था और उच्च शिक्षा निदेशक द्वारा दिनांक 03.08.2022 का एक पत्र उक्त संस्थान की प्रबंधन समिति को प्रतिवादी संख्या 6 को नियुक्ति पत्र जारी करने के लिए जारी किया गया था। (प्रस्तर 19)

यह भी विवादित नहीं है कि उच्च शिक्षा निदेशक और शिक्षा संयुक्त निदेशक की ओर से दिनांक 17.08.2023 का एक आदेश विशेष सचिव, उच्च शिक्षा, अनुभाग-2, लखनऊ को सूचित किया गया है कि मनोज कुमार रावत, प्रतिवादी संख्या 6, जो विज्ञापन संख्या 49/2019 के चयनित अभ्यर्थी की प्रतीक्षा सूची में था, को बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया आवंटित किया गया था और तदनुसार नियुक्ति 03.08.2022 को पूरी की गई थी। निदेशक द्वारा यह और सूचित किया गया है कि अधिनियम या शासनदेश में कॉलेज के आवंटन में परिवर्तन के लिए कोई प्रावधान नहीं है। इसके अतिरिक्त उच्च शिक्षा निदेशक ने दिनांक 13.12.2023 के पत्र द्वारा सूचित किया है कि 1980 के अधिनियम में आवंटन/कॉलेज के स्थान में परिवर्तन के लिए कोई प्रावधान नहीं है। इस प्रकार, उच्च शिक्षा निदेशक ने कॉलेज के आवंटन में परिवर्तन के लिए प्रतिवादी संख्या 6 की प्रार्थना को पहले ही अस्वीकार कर दिया है। इसके अतिरिक्त, प्रतिवादी संख्या 6 ने अपने प्रति-शपथपत्र में उक्त आदेशों के बारे में कुछ भी नहीं कहा है, जो वास्तव में कॉलेज के परिवर्तन के लिए प्रतिवादी संख्या 6 के दावे/अनुरोध को अस्वीकार करता है। (प्रस्तर 20)

बी. वाद अधिकार (लोकस स्टैंडर्ड)-याचिकाकर्ता के कार्यवाहक प्राचार्य के रूप में नियुक्त होने के कारण, प्रतिवादी संख्या 6 की नियुक्ति को चुनौती देने का अधिकार रखता है। (प्रस्तर 25)

वर्तमान मामले में, उच्च शिक्षा निदेशक ने प्रतिवादी संख्या 6 की बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया में नियुक्ति के लिए आदेश पारित कर दिया है, नियुक्ति प्रक्रिया समाप्त हो गई है और निदेशक के पास ऐसे अभ्यर्थी को किसी अन्य कॉलेज में अनुशंसा या नियुक्ति करने की शक्ति समाप्त हो गई है, जैसा कि कुमारी रागिनी श्रीवास्तव (इन्फ्रा) में निर्णीत किया गया है। इसके अतिरिक्त चूंकि निदेशक ने स्वयं दिनांक 17.8.2023 और 13.12.2023 के आदेशों द्वारा प्रतिवादी संख्या 6 के बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया से मेरठ कॉलेज, मेरठ में स्थानांतरण के दावे को अस्वीकार कर दिया है, इसलिए बाद का आदेश दिनांक 15.1.2024,

जो प्रबंधन को प्रतिवादी संख्या 6 को प्राचार्य के रूप में नियुक्त करने का निर्देश देता है, पूरी तरह से क्षेत्राधिकार से बाहर है और बना नहीं रह सकता, अतः खंडित किया जाता है। (प्रस्तर 26)

रिट याचिका स्वीकृत। (ई-4)

अनुसरित निर्णय:

1. जगदीश सिंह बनाम उ.प्र. राज्य व अन्य, 2012 (3) ADJ 1 (प्रस्तर 23)
2. कमलेश कुमार शर्मा बनाम योगेश कुमार गुप्ता व अन्य, AIR 1998 SC 1021 (प्रस्तर 25)
3. कृष्णा कांत जायसवाल बनाम बनारस हिंदू विश्वविद्यालय व अन्य, AIR 1984 All. 350 (प्रस्तर 14)
4. कुमारी रागिनी श्रीवास्तव बनाम उ.प्र. राज्य व अन्य, 1997 (1) ESC 649 (प्रस्तर 14)

विभेदित निर्णय:

एम.सी. यादव बनाम शिक्षा निदेशक (उच्च शिक्षा), इलाहाबाद व अन्य, 2001(2) UPLBEC 1435 (प्रस्तर 13)

(माननीय न्यायमूर्ति प्रकाश पांडेया द्वारा उद्धोषित)

1. वर्तमान रिट याचिका याचिकाकर्ता द्वारा निम्नलिखित अनुतोषों के लिए योजित की गई है:

"(i) प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित आक्षेपित पत्र/आदेश दिनांक 15.1.2024 (संलग्नक-1) को खंडित करते हुए उत्प्रेषण की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करें:

(ii) प्रतिवादियों को आयोग द्वारा नियमित नियुक्ति करने तक मेरठ कॉलेज, मेरठ के कार्यवाहक प्राचार्य के रूप में याचिकाकर्ता के कार्य में हस्तक्षेप न करने का आदेश देते हुए परमादेश की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश करें;

(iii) कोई अन्य उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी करें, जो यह माननीय न्यायालय प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों में उचित और उपयुक्त समझे।

(iv) इस याचिका का व्यय याचिकाकर्ता को प्रदत्त करें।

(v) सचिव, मेरठ कॉलेज, मेरठ द्वारा पारित आक्षेपित ज्वाइनिंग पत्र दिनांक 3.10.2024 को खंडित करते हुए एक उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।"

2. रिट याचिका में अभिकथित तथ्य यह हैं कि उत्तर प्रदेश उच्च शिक्षा सेवा आयोग (जिसे इसके बाद 'आयोग' कहा जाएगा) ने विज्ञापन संख्या 49/2019 निर्गत किया, जिसमें उत्तर प्रदेश राज्य में अनुदानित स्नातकोत्तर कॉलेजों में प्राचार्य के 219 पदों पर नियुक्ति के लिए आवेदन आमंत्रित किए गए, जिसमें मेरठ कॉलेज, मेरठ में प्राचार्य का पद शामिल था। आयोग ने चयन प्रक्रिया पूरी की और 219 चयनित उम्मीदवारों की सूची के साथ 73 उम्मीदवारों की प्रतीक्षा सूची जारी की। उक्त सूची 5.10.2021 को प्रकाशित की गई थी।
3. डॉ. सच्चिदानंद शर्मा को आयोग द्वारा मेरठ कॉलेज, मेरठ में नियुक्ति के लिए चयनित किया गया था और आयोग की अनुशंसा के आधार पर, डॉ. सच्चिदानंद शर्मा को दिनांक 23.10.2021 के नियुक्ति पत्र द्वारा संस्थान के प्राचार्य के रूप में नियुक्ति दी गई थी।
4. डॉ. सच्चिदानंद शर्मा ने संस्थान में कार्यभार संभाला और उसके बाद उन्होंने 28.5.2023 को अपना त्यागपत्र प्रस्तुत किया। उनका त्यागपत्र प्रबंधन समिति ने अपने संकल्प दिनांक 8.6.2023 के द्वारा स्वीकार कर लिया और तदनुसार दिनांक 9.6.2023 के पत्र द्वारा, डॉ. सच्चिदानंद शर्मा को संस्थान के प्राचार्य के पद से मुक्त कर दिया गया।
5. डॉ. सच्चिदानंद शर्मा को मुक्त करने के बाद, एक डॉ. अंजलि मित्तल, जो संस्थान में वरिष्ठतम शिक्षिका थीं, को संस्थान के कार्यवाहक प्राचार्या के रूप में नियुक्त किया गया। डॉ. अंजलि मित्तल सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने पर 30.6.2024 को सेवानिवृत्त भी हुई हैं और संस्थान में प्राचार्य का पद फिर से रिक्त हो गया है।
6. डॉ. सच्चिदानंद शर्मा के त्यागपत्र के बाद, उच्च शिक्षा निदेशक, उ.प्र. प्रयागराज ने आदेश दिनांक 15.1.2024 पारित किया, जिसमें डॉ. मनोज कुमार रावत, प्रतिवादी संख्या 6, जो 5.10.2021 को प्रकाशित प्रतीक्षा सूची में क्रम संख्या 59 पर थे, को संस्थान के प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया।
7. डॉ. अंजलि मित्तल, जो संस्थान की कार्यवाहक प्राचार्या के रूप में कार्य कर रही थीं, ने प्रतिवादी संख्या 3, अर्थात् संस्थान की प्रबंधन समिति के समक्ष दिनांक 29.1.2024 का प्रत्यावेदन प्रस्तुत किया, जिसमें निदेशक के आदेश पर आपत्ति जताई और प्रबंधन समिति से प्रार्थना की कि वह प्रतिवादी संख्या 6 के पक्ष में कोई नियुक्ति पत्र जारी न करे।
8. रिट याचिका में यह भी अभिकथित किया गया है कि याचिकाकर्ता को प्रश्नगत संस्थान में वरिष्ठतम शिक्षक होने के कारण, आदेश दिनांक 14.6.2024 के द्वारा संस्थान के कार्यवाहक प्राचार्या के रूप में नियुक्त किया गया है।

9. रिट याचिका में यह भी अभिकथित किया गया है कि प्रतिवादी संख्या 6 को पहले दिनांक 3.8.2022 के आदेश द्वारा बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया के प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया गया था। प्रतिवादी संख्या 6 की नियुक्ति का उक्त आदेश रिट याचिका में संलग्नक-9 के रूप में संलग्न किया गया है।

10. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया है कि एक बार प्रतीक्षा सूची में से किसी अभ्यर्थी को नियुक्ति की पेशकश की जाती है, तो उसका अधिकार समाप्त हो जाता है और उसे आगे नियुक्ति नहीं दी जा सकती है। याचिकाकर्ता ने अपने प्रतिउत्तर-शपथपत्र में उच्च शिक्षा निदेशक द्वारा विशेष सचिव, उच्च शिक्षा, अनुभाग-2, उ.प्र. लखनऊ को संबोधित पत्र दिनांक 17.8.2023 भी संलग्न किया है, जिसके द्वारा डॉ. मनोज कुमार रावत, प्रतिवादी संख्या 6 के बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया से मेरठ कॉलेज, मेरठ में नियुक्ति के परिवर्तन के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया गया था। याचिकाकर्ता ने दिनांक 13.12.2023 का आदेश भी रिकॉर्ड पर लाया है, जिसमें उम्मीदवारों की सूची है, जिसके द्वारा प्रतिवादी संख्या 6 के बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया से नियुक्ति/आवंटन में परिवर्तन के अनुरोध को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया है कि उत्तर प्रदेश उच्च शिक्षा सेवा आयोग अधिनियम, 1980 में नियुक्ति के स्थान में परिवर्तन के लिए कोई प्रावधान नहीं है।

11. वर्तमान रिट याचिका के लंबित रहने की अवधि में, प्रबंधन समिति ने 3.10.2024 को प्रतिवादी संख्या 6 की नियुक्ति का आदेश इस शर्त के साथ निर्गत किया है कि उक्त नियुक्ति आदेश, वर्तमान रिट याचिका के परिणाम के अधीन है।

12. प्रतिवादी संख्या 6 द्वारा एक प्रति-शपथपत्र योजित किया गया है। प्रति-शपथपत्र में, यह अस्वीकार नहीं किया गया है कि आयोग द्वारा की गई अनुशंसा के आधार पर, याचिकाकर्ता को संस्थान, अर्थात् बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया आवंटित किया गया था। प्रति-शपथपत्र में यह कहा गया है कि 1980 के अधिनियम के अधीन की गई अनुशंसा और निर्देशों के अनुसरण में, उपरोक्त कॉलेज के नियुक्ति अधिकारी द्वारा नियुक्ति पत्र जारी नहीं किया गया था। यह भी कहा गया है कि एक डॉ. जितेंद्र कुमार ने भी दिनांक 15.1.2024 की प्रतिवादी संख्या 6 की अनुशंसा को रिट-ए संख्या-1350/2024 योजित करके चुनौती दी थी, लेकिन बाद में, दिनांक 16.5.2024 के आदेश द्वारा उक्त रिट याचिका को वापस लेने के रूप में निरस्त कर दिया गया, क्योंकि डॉ. जितेंद्र कुमार को अग्रसेन पी.जी. कॉलेज, सिकंदराबाद में प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया गया था। यह भी कहा गया है कि डॉ. अंजलि मित्तल ने भी रिट-ए संख्या-3989/2024 योजित करके अनुशंसा दिनांक 15.1.2024 को चुनौती दी है, जो रिट याचिका अभी भी लंबित है।

13. प्रतिवादी संख्या 6 का पक्ष यह है कि चयनित अभ्यर्थी की सूची, प्रतीक्षा सूची के साथ तब तक वैध है जब तक कि आयोग द्वारा अगली चयन सूची प्रकाशित नहीं हो जाती है। प्रतिवादी संख्या 6 ने 1980 के अधिनियम की धारा 13(4) पर भी भरोसा किया है और कहा है कि 1980 के अधिनियम की धारा 13(4) के दृष्टिकोण से, जहां उप-धारा (2) में संदर्भित सूची की वैधता की अवधि के दौरान मृत्यु, त्यागपत्र या अन्यथा

के कारण रिक्ति होती है और ऐसी रिक्ति को धारा 12 की उप-धारा (3) के अधीन आयोग को सूचित नहीं किया गया है, तो निदेशक ऐसी रिक्ति में नियुक्ति के लिए ऐसी सूची से किसी अभ्यर्थी का नाम प्रबंधन को सूचित कर सकता है। मेरठ कॉलेज, मेरठ में रिक्ति डॉ. सच्चिदानंद शर्मा के त्यागपत्र के कारण उत्पन्न हुई है, इसलिए, मेरठ कॉलेज, मेरठ में याचिकाकर्ता की नियुक्ति 1980 के अधिनियम की धारा 13 की उप-धारा (4) के अनुसार है। प्रतिवादी संख्या 6 ने 2001(2) UPLBEC 1435; एम.सी. यादव बनाम शिक्षा निदेशक (उच्च शिक्षा), इलाहाबाद व अन्य के निर्णय पर भी भरोसा किया है।

14. प्रतिवादी संख्या 4/सचिव, उ.प्र. उच्च शिक्षा सेवा आयोग, प्रयागराज की ओर से लिखित कथन दाखिल किया गया है। प्रतिवादी संख्या 4 ने 1980 के अधिनियम की धारा 13(4) पर भरोसा किया है और कहा है कि याचिकाकर्ता कार्यवाहक प्राचार्य होने के नाते, नियमित अभ्यर्थी के चयन को चुनौती देने का कोई अधिकार नहीं रखता है। यह भी कहा गया है कि प्रतिवादी संख्या 6 की अनुशंसा विधि के अनुसार है और इस सिद्धांत के आधार पर कार्यवाहक प्राचार्य के आग्रह पर नियमित रूप से चयनित अभ्यर्थी की नियुक्ति को चुनौती देने वाली रिट याचिका पोषणीय नहीं है। उन्होंने AIR 1984 All. 350; कृष्णा कांत जायसवाल बनाम बनारस हिंदू विश्वविद्यालय व अन्य में रिपोर्ट किए गए एक निर्णय पर भरोसा किया है और 1997(1) ESC 649; कुमारी रागिनी श्रीवास्तव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य के कुछ प्रस्तारों पर भी भरोसा किया है।

15. न तो प्रतिवादी संख्या 6 और न ही प्रतिवादी संख्या 4 ने इस तथ्य से इनकार किया है कि उच्च शिक्षा निदेशक ने आदेश दिनांक 13.12.2023 के द्वारा और शिक्षा संयुक्त निदेशक ने आदेश दिनांक 17.8.2023 के द्वारा स्पष्ट रूप से कहा है कि 1980 के अधिनियम में निहित प्रावधान के अधीन चयनित अभ्यर्थी की नियुक्ति में परिवर्तन की अनुमति नहीं है और प्रतिवादी संख्या 6 के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया गया था।

16. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, श्री विनायक मिथल व श्री अंकित शुक्ला की सहायता से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री अशोक खरे, प्रतिवादी संख्या 1 और 2 की ओर से उपस्थित विद्वान स्थायी अधिवक्ता की सहायता से विद्वान अपर महाधिवक्ता, श्री एम.सी. चतुर्वेदी, प्रतिवादी संख्या 3 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री परिजात मिश्रा के साथ-साथ प्रतिवादी संख्या 4 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री गगन मेहता, प्रतिवादी संख्या 5 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री अवनीश त्रिपाठी और प्रतिवादी संख्या 6 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री प्रभाकर अवस्थी को सुना गया।

17. पक्षकारों की सहमति से, वर्तमान रिट याचिका का निर्णय प्रवेश स्तर में ही किया जा रहा है।

18. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि डॉ. सच्चिदानंद शर्मा को आयोग द्वारा की गई अनुशंसा के आधार पर संस्थान में स्थायी प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया गया था। डॉ. सच्चिदानंद शर्मा ने उक्त पद से त्यागपत्र दे दिया, इसलिए, संस्थान के प्राचार्य का पद रिक्त हो गया और तदनुसार, डॉ. अंजलि मित्तल, जो संस्थान में वरिष्ठतम शिक्षिका थीं, को संस्थान की कार्यवाहक प्राचार्या के रूप में नियुक्त किया

गया। वह सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने पर सेवानिवृत्त हो गई हैं और तदनुसार, याचिकाकर्ता को 14.6.2024 को कार्यवाहक प्राचार्य का प्रभार दिया गया। डॉ. सच्चिदानंद शर्मा के त्यागपत्र के बाद, उच्च शिक्षा निदेशक ने आदेश दिनांक 15.1.2024 पारित किया, जिसमें प्रबंधन समिति के सचिव/प्रबंधक को निर्देश दिया गया कि वे प्रतिवादी संख्या 6, जो चयनित अभ्यर्थी की प्रतीक्षा सूची में क्रम संख्या 59 पर था, को प्रश्नगत संस्थान में प्राचार्य के रूप में नियुक्त करें।

19. यह विवादित नहीं है कि उच्च शिक्षा निदेशक, उ.प्र. प्रयागराज द्वारा पत्र दिनांक 15.1.2024 करने से पहले, प्रतिवादी संख्या 6 को बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया के प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया गया था और उच्च शिक्षा निदेशक द्वारा उक्त संस्थान की प्रबंधन समिति को प्रतिवादी संख्या 6 को नियुक्ति पत्र जारी करने के लिए पत्र दिनांक 3.8.2022 निर्गत किया गया था।

20. यह भी विवादित नहीं है कि उच्च शिक्षा निदेशक और शिक्षा संयुक्त निदेशक की ओर से आदेश दिनांक 17.8.2023, विशेष सचिव, उच्च शिक्षा, अनुभाग-2, लखनऊ को सूचित किया गया है कि मनोज कुमार रावत, प्रतिवादी संख्या 6, जो विज्ञापन संख्या 49/2019 के चयनित अभ्यर्थी की प्रतीक्षा सूची में था, को बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया आवंटित किया गया था और तदनुसार नियुक्ति 3.8.2022 को पूरी की गई थी। निदेशक द्वारा यह और सूचित किया गया है कि अधिनियम या शासनदेश में कॉलेज के आवंटन में परिवर्तन के लिए कोई प्रावधान नहीं है। इसके अतिरिक्त उच्च शिक्षा निदेशक ने दिनांक 13.12.2023 के पत्र द्वारा सूचित किया है कि 1980 के अधिनियम में आवंटन/कॉलेज के स्थान में परिवर्तन के लिए कोई प्रावधान नहीं है। इस प्रकार, उच्च शिक्षा निदेशक ने कॉलेज के आवंटन में परिवर्तन के लिए प्रतिवादी संख्या 6 की प्रार्थना को पहले ही अस्वीकार कर दिया है। इन दोनों आदेशों को न तो प्रतिवादी संख्या 1 और 2 के अधिवक्ता द्वारा और न ही प्रतिवादी संख्या 6 द्वारा अस्वीकार किया गया है। इसके अतिरिक्त, प्रतिवादी संख्या 6 ने अपने प्रति-शपथपत्र में उक्त आदेशों के बारे में कुछ भी नहीं कहा है, जो वास्तव में कॉलेज के परिवर्तन के लिए प्रतिवादी संख्या 6 के दावे/अनुरोध को अस्वीकार करता है। इन दोनों आदेशों को किसी भी अधिकारी या विधि न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दी गई है।

21. उपरोक्त दोनों आदेशों के आधार पर, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि एक बार उच्च शिक्षा निदेशक ने प्रतिवादी संख्या 6 के दावे को अस्वीकार कर दिया है, तो उक्त आदेश की समीक्षा करने का कोई कारण नहीं है और किसी भी संदर्भ के बिना और यहां तक कि उपरोक्त आदेशों को वापस लिए या रद्द किए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया गया है, इसलिए, प्रतिवादी उच्च शिक्षा निदेशक के पास दिनांक 14.1.2024 का आदेश पारित करने और अपने पूर्व आदेश की समीक्षा करने का कोई अधिकार नहीं है।

22. इस न्यायालय नैन कुमारी रागिनी श्रीवास्तव (उपरोक्त) में निर्णीत किया है कि जहां धारा 13 की उप-धारा (4) किसी रिक्ति पर लागू होती है, वहाँ नामांकन शिक्षा निदेशक द्वारा उन उम्मीदवारों में से किया जाना है, जिनके नाम किसी कॉलेज के प्रबंधन को पहले से सूचित नहीं किए गए हैं और उन लोगों में से नहीं, जिनके

नाम किसी कॉलेज के प्रबंधन को पहले से सूचित किए गए हैं, उनके द्वारा इंगित वरीयता को उचित ध्यान में रखते हुए। उपरोक्त निर्णय का प्रासंगिक प्रस्तर नीचे प्रस्तुत किया गया है:

"7. हम इस विचार के भी हैं कि जहां धारा 13 की उप-धारा (4) किसी रिक्ति पर लागू होती है, नामांकन शिक्षा निदेशक द्वारा उन उम्मीदवारों में से किया जाना है, जिनके नाम किसी कॉलेज के प्रबंधन को पहले से सूचित नहीं किए गए हैं और उन लोगों में से नहीं, जिनके नाम किसी कॉलेज के प्रबंधन को पहले से सूचित किए गए हैं, उनके द्वारा इंगित वरीयता को उचित ध्यान में रखते हुए। कारण यह है कि नियुक्ति प्रक्रिया तब समाप्त हो जाती है, जब अधिनियम में परिकल्पित चयन प्रक्रिया से गुजरा गया है और संबंधित कॉलेज द्वारा शिक्षा निदेशक की अनुशंसा के अनुसरण में नियुक्ति पत्र जारी किया गया है या जहां निदेशक द्वारा धारा 13(3) के अधीन सूचना भेजे जाने के बाद अभ्यर्थी यह कहकर नियुक्ति पत्र जारी करने को विफल कर देता है कि उसके लिए कॉलेज में कार्यभार ग्रहण करना संभव नहीं है। कोई अन्य दृष्टिकोण पूरी योजना को अकार्यशील बना देगा, जिससे उच्च शिक्षा का कारण गड़बड़ा जाएगा। यदि एक अभ्यर्थी, जिसे चुना गया है और नियुक्त किया गया है, उसे उस पद पर कार्यभार ग्रहण न करने की अनुमति दी जाती है, जिस पर उसे अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार नियुक्त किया गया था, जिससे उसे अपनी पसंद के कॉलेज में रिक्ति के उत्पन्न होने की प्रतीक्षा करने की अनुमति मिल जाए, तो यह केवल एक व्यक्ति के व्यक्तिगत हित के लिए कॉलेज और छात्रों के हित और उच्च शिक्षा के हेतुक की पूर्ण उपेक्षा के समान होगा। इसलिए, श्री आशुतोष द्विवेदी की इलाहाबाद डिग्री कॉलेज में नियुक्ति अधिनियम की धारा 13(4) के अनुसार नहीं है और परिणामस्वरूप, अधिनियम की धारा 12(1) के अधीन शून्य है। उनका यह आरोप कि प्रारंभ में अवकाश रिक्ति में कार्यभार ग्रहण करने से, उन्हें सेवा का अवसर खोने का जोखिम था, उनकी शून्य नियुक्ति को वैध में बदलने की क्षमता नहीं रखता है।"

23. यह न्यायालय जगदीश सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य, 2012 (3) ADJ 1 में भी इस सिद्धांत को दोहराया है कि जब चयनित अभ्यर्थी को एक कॉलेज में नियुक्त किया जाता है, तो उसे अपना कार्यस्थल बदलने का कोई अधिकार नहीं है। उपरोक्त निर्णय का प्रासंगिक प्रस्तर नीचे प्रस्तुत किया गया है:

"20. चमन सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (उपरोक्त) में इस न्यायालय ने निर्णय में, जिसमें हम में से एक सदस्य थे, निर्णीत किया:

"उपरोक्त तथ्यों पर, हम याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क में कोई बल नहीं पाते हैं कि दिगंबर जैन पी.जी. कॉलेज अधिनियम के अधीन परिभाषित एक कॉलेज नहीं है, और इसमें रु. 16,400-22,400/- के वेतनमान में प्राचार्य का स्वीकृत पद नहीं है, जिसके लिए याचिकाकर्ता का चयन किया गया था। याचिकाकर्ता के चयनित, नियुक्त होने और दिगंबर जैन पी.जी. कॉलेज बुलंदशहर द्वारा नियुक्ति पत्र जारी किए जाने के बाद, उसे किसी अन्य कॉलेज में नियुक्ति का दावा करने का कोई अधिकार नहीं था, जिसमें गोचर महाविद्यालय, रामपुर मनीहरन, जिला सहारनपुर शामिल है, जहां वह पहले पढ़ा रहे थे। श्री बाबू लाल कुशवाहा की गोचर महाविद्यालय, रामपुर मनीहरन, जिला सहारनपुर

के प्राचार्य के रूप में काम करने की अनिच्छा, बाद में और उसके बाद डॉ. चंद्र शेखर-प्रतिवादी संख्या 4 की इसके प्राचार्य के रूप में नियुक्ति, याचिकाकर्ता को अपनी नियुक्ति बदलने का अधिकार नहीं देती है। उन्हें प्राचार्य, दिगंबर जैन पी.जी. कॉलेज बुलंदशहर के रूप में नियुक्त किए जाने और नियुक्ति पत्र जारी किए जाने के बाद समायोजन या नई नियुक्ति का दावा करने का कोई अधिकार नहीं है। डॉ. बाबू लाल कुशवाहा और डॉ. चंद्र शेखर सिंह, दोनों अपने-अपने कॉलेजों में चयनित और नियुक्त, ने आपसी सहमति से अदला-बदली की थी, जिसके लिए शिक्षा निदेशक (उच्च शिक्षा) उ.प्र. को कोई आपत्ति नहीं थी, उच्च शिक्षा निदेशालय, उ.प्र. में संयुक्त निदेशक डॉ. हर्ष वर्धन के प्रति-शपथपत्र के प्रस्तर-29 के अनुसार।"

24. प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत एम.सी. यादव (उपरोक्त) का निर्णय वर्तमान प्रकरण में लागू नहीं है, क्योंकि उक्त मामला चयन सूची की वैधता की अवधि और 1980 के अधिनियम की धारा 13 की उप-धारा (4) की व्याख्या से संबंधित है।

25. जहां तक प्रतिवादी संख्या 6 की नियुक्ति को चुनौती देने के लिए याचिकाकर्ता के अधिकार का संबंध है, याचिकाकर्ता कार्यवाहक प्राचार्य के रूप में नियुक्त होने के कारण, प्रतिवादी संख्या 6 की नियुक्ति को चुनौती देने का अधिकार रखता है, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कमलेश कुमार शर्मा बनाम योगेश कुमार गुप्ता व अन्य, AIR 1998 SC 1021 में निर्णीत किया गया है।

26. वर्तमान मामले में, उच्च शिक्षा निदेशक ने प्रतिवादी संख्या 6 की बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया में नियुक्ति के लिए आदेश पारित कर दिया है, नियुक्ति प्रक्रिया समाप्त हो गई है और निदेशक के पास ऐसे अभ्यर्थी को किसी अन्य कॉलेज में अनुशंसा या नियुक्ति करने की शक्ति समाप्त हो गई है, जैसा कि कुमारी रागिनी श्रीवास्तव (उपरोक्त) में निर्णीत किया गया है। इसके अतिरिक्त चूंकि निदेशक ने स्वयं दिनांक 17.8.2023 और 13.12.2023 के आदेशों द्वारा प्रतिवादी संख्या 6 के बजरंग पी.जी. कॉलेज, दादर आश्रम, बलिया से मेरठ कॉलेज, मेरठ में स्थानांतरण के दावे को अस्वीकार कर दिया है, इसलिए बाद का आदेश दिनांक 15.1.2024, जो प्रबंधन को प्रतिवादी संख्या 6 को प्राचार्य के रूप में नियुक्त करने का निर्देश देता है, पूरी तरह से क्षेत्राधिकार के बाहर है और बनाए नहीं रखा जा सकता है और उसे खंडित किया जाता है।

27. चूंकि प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा याचिकाकर्ता की नियुक्ति, आदेश दिनांक 3.10.2024 के माध्यम से वर्तमान रिट याचिका के परिणाम के अधीन थी, इसलिए अवैध आदेश दिनांक 15.1.2024 पर आधारित उक्त नियुक्ति आदेश भी खंडित किया जाता है।

28. रिट याचिका स्वीकार की जाती है। व्यय के बारे में कोई आदेश नहीं।

(2025) 2 ILRA 493

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 07.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति जे.जे. मुनीर

रिट-ए संख्या 17707 सन् 2023

अमर पाल सिंह

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

श्री रमेश उपाध्याय (वरिष्ठ अधिवक्ता), श्री राजन उपाध्याय, सुश्री अतिप्रिया गौतम

प्रतिवादी के अधिवक्ता:

सुश्री मोनिका आर्या (अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता), श्री रूपेश तिवारी

क. सेवा कार्यवाही विधि-अनुशासनात्मक कार्यवाही-उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन और अपील) नियम, 1999-नियम 7-उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता, 2006 धारा 98-उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक आचरण नियम, 1956 - नियम 3-उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता नियम, 2016 - नियम 99

सिद्धांत यह है कि विधि या तथ्यों पर निर्णय की त्रुटियों, या यहां तक कि विकृत निष्कर्षों या एक अर्ध-न्यायिक अधिकारी या न्यायिक अधिकारी की लापरवाही के लिए, अनुशासनात्मक क्षेत्राधिकार में कार्यवाही नहीं की जानी चाहिए। यदि उसकी त्रुटियों या विकृतियों को भी अनुशासनात्मक क्षेत्राधिकार में दंडनीय कदाचार माना जाता है, तो न्याय वितरण या अर्ध-न्यायिक कार्य निस्तारण रुक जाएंगे। यह निश्चित रूप से, घोंघे की गति तक धीमा हो जाएगा, और जिस उद्देश्य के लिए यह है, उसे कभी हासिल नहीं कर पाएगा। (प्रस्तर 15, 18)

वर्तमान मामले में, आरोप को केवल निर्णय की त्रुटि, गलती या याचिकाकर्ता द्वारा अपने अर्ध-न्यायिक आदेश पारित करने में मात्र लापरवाही के रूप में नहीं कहा जा सकता है। आरोप याचिकाकर्ता की संलिप्तता के बारे में है, स्पष्ट रूप से बाहरी कारणों से या अनुचित उद्देश्य के कारण। यह सत्य है कि जिस तरह से आरोप को अंत में और इसके औपचारिक समापन में शब्दबद्ध किया गया है, यह याचिकाकर्ता द्वारा अपने अर्ध-न्यायिक कार्यों के निर्वहन में लापरवाही के आरोप से अधिक कुछ नहीं प्रतीत होता है। लेकिन, आरोप इससे कहीं आगे है, इसके मुख्य भाग में पर्याप्त आरोपों के विवरण के साथ, जो याचिकाकर्ता द्वारा हस्तांतरण की अनुमति देने

में अर्ध-न्यायिक शक्तियों के प्रयोग में अनुचित उद्देश्य और बाह्य कारणों दोनों का सुझाव देते हैं। याचिकाकर्ता वर्ष 1985 में नहीं रहा होगा, जब भूमिधारकों के पक्ष में बोगस पट्टे दिए गए थे, जिनके माध्यम से यह दावा किया जा रहा है कि गांव सभा की भूमि अनुसूचित जाति से संबंधित न होने वाले विक्रेताओं को हस्तांतरित की गई थी और फिर यूपीईआईडीए को बेच दी गई थी, लेकिन वह निश्चित रूप से मौजूद था, जैसा कि प्रतीत होता है, जब कई पट्टा धारकों के अधिकारों को मिलीभगत करने वाले राजस्व अधिकारियों द्वारा समाप्त कर दिया गया था। ऐसे तथ्यों पर, उन्होंने तहसीलदार या एसडीएम की रिपोर्ट को देखे बिना या इस तथ्य पर विचार किए बिना कि कुछ फाइलों में प्रासंगिक प्रमाण पत्र थे, लेकिन एसडीएम की रिपोर्ट के माध्यम से नहीं रखे गए थे, अनुसूचित जाति के भूमिधर द्वारा धारित भूमि को उस वर्ग के न होने वाले विक्रेताओं को हस्तांतरित करने की अनुमति देने का आदेश पारित किया। (प्रस्तर 27)

यह एक ऐसा आरोप है, जिसे जांच में सिद्ध करने की आवश्यकता है, जिसे अपना स्वयं का मार्ग लेना होगा। इस प्रकार, यह शायद इसी कारण से है कि याचिकाकर्ता वैकल्पिक प्रार्थना के साथ आया है कि उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही को शीघ्रता से समाप्त करने के लिए एक परमादेश जारी किया जाए। जबकि हमारा विचार है कि इस मामले में आरोप-पत्र को शुरुआत में खंडित नहीं किया जा सकता है, इस तथ्य को देखते हुए कि याचिकाकर्ता की पदोन्नति देय है, यह अनिवार्य है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही (न कि केवल जांच) को तेज किया जाए। (प्रस्तर 28)

रिट याचिका का निपटारा किया गया। (ई-4)

अनुसरण किया गया पूर्ववर्ती:

जमुना व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, अपर मुख्य सचिव, प्रधान सचिव, राजस्व सिविल सचिवालय, लखनऊ व अन्य के माध्यम से, 2023 AHC-LKO 81272 DB (प्रस्तर 12)

विभेदित पूर्ववर्ती:

1. राजकुमार द्विवेदी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, अपर मुख्य सचिव, नियुक्ति, लखनऊ व अन्य के माध्यम से 2024 AHC-LKO 60811 (प्रस्तर 11)
2. श्री प्रकाश गुप्ता बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, अपर मुख्य सचिव, नियुक्ति, लखनऊ व अन्य के माध्यम से रिट-ए संख्या 29828 सन् 2021, 13.07.2022 को निर्णीत (प्रस्तर 11)
3. उत्तर प्रदेश राज्य, अपर मुख्य सचिव, नियुक्ति विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार, सिविल सचिवालय, लखनऊ व अन्य के माध्यम से बनाम श्री प्रकाश गुप्ता व अन्य, 2022 AHC-LKO 59147 DB (प्रस्तर 11)
4. शिवानी सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ व अन्य के माध्यम से, 2024 AHC-LKO 54832 (प्रस्तर 11)

वर्तमान याचिका, आरोप-पत्र दिनांक 18.08.2023 को चुनौती देती है, जो राज्य सरकार द्वारा उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन और अपील) नियम, 1999 के नियम 7 के अधीन कार्यवाही शुरू करते हुए उन्हें जारी किया गया था। और वैकल्पिक रूप से याचिकाकर्ता के विरुद्ध शुरू की गई अनुशासनात्मक कार्यवाही को शीघ्रता से समाप्त करने के लिए एक आदेश के लिए प्रार्थना करती है।

(माननीय न्यायमूर्ति जे.जे. मुनीर द्वारा उद्घोषित)

याचिकाकर्ता राज्य की प्रांतीय सिविल सेवा का सदस्य है। वह अपने विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही के संस्थित होने से व्यथित है और प्रार्थना करता है कि राज्य सरकार द्वारा उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन और अपील) नियम, 1999 के नियम 7 के अधीन कार्यवाही शुरू करते हुए उन्हें जारी किया गया आरोप-पत्र दिनांक 18.08.2023 खंडित किया जाए। एक और प्रार्थना है कि प्रतिवादियों को एक परमादेश जारी किया जाए, जिसमें उन्हें याचिकाकर्ता के विरुद्ध शुरू की गई अनुशासनात्मक कार्यवाही को शीघ्रता से समाप्त करने का आदेश दिया जाए। हालांकि दूसरी प्रार्थना को वैकल्पिक रूप से की गई प्रार्थना के रूप में व्यक्त नहीं किया गया है, लेकिन दोनों एक-दूसरे के इतने विपरीत हैं कि उन्हें वैकल्पिक रूप से की गई प्रार्थनाओं के रूप में माना जाना चाहिए।

2. याचिकाकर्ता को उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा राज्य के पीसीएस के लिए चुना गया था और 04.06.2005 को उप-जिला मजिस्ट्रेट नियुक्त किया गया था। वह यूपीपीएससी के 2004 बैच का अधिकारी है। उसे अगली बार वर्ष 2015 में सिटी मजिस्ट्रेट के पद पर पदोन्नत किया गया, और फिर, वर्ष 2016 में अपर जिला मजिस्ट्रेट। उन्हें वर्ष 2022 में अपर आयुक्त के रूप में तैनात किया गया था और तब से, वे बांदा में चित्रकूट धाम डिवीजन के अपर आयुक्त (प्रशासन) के रूप में कार्यरत हैं।

3. 1999 के नियमों के नियम 7 के अधीन, 18 अगस्त, 2023 को याचिकाकर्ता को एक आरोप-पत्र जारी किया गया था। याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप-पत्र में दिए गए आरोप का सार यह है कि अपर जिला मजिस्ट्रेट (प्रशासन), लखनऊ के रूप में तैनात रहते हुए, उन्होंने उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता, 2006 की धारा 98 के अधीन अनुसूचित जाति से संबंधित भूमिधर को अनुसूचित जाति के सदस्यों के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों को भूमि हस्तांतरित करने की अनुमति दी, एसडीएम की रिपोर्ट की अनदेखी करते हुए कि विक्रेता द्वारा धारित भूमि का कोई विवरण नहीं था, चिकित्सा आवश्यकता प्रमाण पत्र और गैर-भार प्रमाण पत्र नहीं था। हस्तांतरण से संबंधित फाइलों में से एक में एसडीएम द्वारा कोई रिपोर्ट नहीं थी। आरोप यह भी है कि हालांकि ये प्रमाण पत्र हस्तांतरण के लिए अनुमति प्राप्त करने के लिए स्थानांतरित की गई प्रासंगिक फाइलों के साथ संलग्न हैं, याचिकाकर्ता द्वारा हस्तांतरण की अनुमति देने वाले आदेश में न तो इन प्रमाण पत्रों का उल्लेख है और न ही एसडीएम की रिपोर्ट का, यह कहते हुए कि प्रमाण पत्र वहां नहीं हैं। अनुसूचित जाति के सदस्यों से हस्तांतरण प्राप्तकर्ताओं ने बाद में अपनी भूमि को उत्तर प्रदेश एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास अधिकारी को मूल्यवान प्रतिफल के लिए बेच दिया, जिससे एक ओर गांव सभा की भूमि को अनधिकृत और छलपूर्वक हस्तांतरित करके गांव सभा को

नुकसान हुआ, और दूसरी ओर, राज्य खजाने को नुकसान हुआ। आरोप अंततः यह है कि यदि याचिकाकर्ता हस्तांतरण की अनुमति देने में सतर्क रहा होता, गांव सभा के अभिलेख की सावधानीपूर्वक जांच करता, तो विचाराधीन भूमि नहीं बेची जाती और खजाने को धन की हानि से बचाया जा सकता था। आरोप-पत्र के अनुसार, लापरवाही ने गंभीर लापरवाही और बड़ी अनियमितता का गठन किया, जो याचिकाकर्ता को उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक आचरण नियम, 1956 के नियम 3 के अधीन कदाचार के लिए प्रथम दृष्टया दोषी दर्शाता है।

4. याचिकाकर्ता का कहना है कि यह एक ऐसा मामला है, जहाँ उसके विरुद्ध जांच योग्य कोई आरोप प्रकट नहीं होता है, और इसलिए, आरोप-पत्र को खंडित किया जाना चाहिए। याचिकाकर्ता का पक्ष यह है कि उसने कोई कदाचार नहीं किया है और अपने कर्तव्यों का निर्वहन अत्यंत ईमानदारी और सच्चाई से किया है। उसने स्थानांतरण की अनुमति देते हुए आदेश पारित किए, अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण सामग्री पर विचार करने के बाद, अर्ध-न्यायिक क्षमता में नियमों और विनियमों का पालन करते हुए। इस बात पर बल दिया गया है कि संहिता की धारा 98 के अधीन नियम 99 उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता नियम, 2016 के साथ पठित शक्तियाँ, जो इस मामले में प्रयोग की गई हैं, अर्ध-न्यायिक प्रकृति की हैं, और इसलिए, स्थापित सिद्धांत के अनुसार, याचिकाकर्ता को केवल निर्णय की त्रुटि के लिए, यदि कोई हो, दंडित नहीं किया जा सकता।

5. याचिकाकर्ता का पक्ष यह है कि आरोप-पत्र जारी करने से पूर्व आयुक्त, लखनऊ मंडल, लखनऊ की अध्यक्षता में एक समिति द्वारा प्रारंभिक जांच की गई थी। यह प्रारंभिक जांच, श्री विनय कुमार सिंह और श्री शोभित शुक्ला, अधिवक्ताओं की शिकायत पर हुई थी। शिकायत 24.09.2021 दिनांकित है, जो अध्यक्ष, राजस्व परिषद, उ.प्र. लखनऊ को संबोधित थी। ऐसा प्रतीत होता है कि आयुक्त, लखनऊ मंडल, लखनऊ द्वारा आयुक्त और सचिव, राजस्व परिषद, उ.प्र., लखनऊ को दिनांक 16.01.2023 के एक जापन के माध्यम से प्रारंभिक जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी। प्रारंभिक जांच में, याचिकाकर्ता को दोषी ठहराया गया। आयुक्त और सचिव, राजस्व परिषद ने अपर मुख्य सचिव, नियुक्ति और कार्मिक विभाग, उ.प्र. सरकार, लखनऊ को दिनांक 21.04.2023 का एक जापन प्रस्तुत किया, जिसमें अनुरोध किया गया कि एसडीएम सूर्यकांत त्रिपाठी, डॉ. संतोष कुमार और शंभु शरण, के साथ-साथ मनीष कुमार नाहर, धर्मेन्द्र सिंह और संदीप कुमार, पूर्व अपर जिला अधिकारी (प्रशासन) के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही संस्थित करने के उद्देश्य से, नियमों के अनुसार अनुमति प्रदान की जाए।

6. सरकार द्वारा 10.05.2023 को राजस्व परिषद को कुछ निर्देश जारी किए गए थे, जिसके अनुसरण में, आयुक्त, लखनऊ मंडल, लखनऊ ने दिनांक 12.06.2023 के अपने पत्र के साथ परिषद को संशोधित जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की। उक्त जांच रिपोर्ट के आधार पर ही याचिकाकर्ता के विरुद्ध सरकार द्वारा दिनांक 03.08.2023 के आदेश द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही संस्थित की गई, जिसमें आयुक्त, कानपुर मंडल, कानपुर को पदेन जांच अधिकारी नामित किया गया। उसी आदेश द्वारा यह निर्देशित किया गया कि नियमों के अनुसार एक आरोप-पत्र जारी किया जाएगा। इस प्रकार दिनांक 18.08.2023 का आक्षेपित आरोप-पत्र आयुक्त, कानपुर मंडल, कानपुर और अपर मुख्य सचिव, नियुक्ति और कार्मिक विभाग, उ.प्र. सरकार, लखनऊ द्वारा संयुक्त रूप से

हस्ताक्षरित करके जारी किया गया। उक्त आरोप-पत्र याचिकाकर्ता को उपर्युक्त अंतिम तिथि पर आयुक्त, कानपुर मंडल, कानपुर के पत्र के माध्यम से 14.09.2023 को दिया गया। याचिकाकर्ता का यह भी पक्ष है कि वर्ष 2022 में राज्य पीसीएस से भारतीय प्रशासनिक सेवा में पदोन्नति के लिए उम्मीदवारों की चयन सूची तैयार करने के लिए 21.08.2023 को एक चयन समिति बुलाई गई थी। उक्त तिथि तक, याचिकाकर्ता को कोई आरोप-पत्र जारी नहीं किया गया था, लेकिन चयन सूची में, याचिकाकर्ता के कनिष्ठों को केंद्रीय सेवा में पदोन्नत किया गया है।

7. आक्षेपित आरोप-पत्र और याचिकाकर्ता के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही के संस्थित होने से व्यथित होकर, यह याचिका संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन योजित की गई है।

8. प्रतिवादी संख्या 1 की ओर से दिनांक 17.01.2024 का एक प्रति-शपथपत्र योजित किया गया, जिसके उत्तर में, याचिकाकर्ता ने दिनांक 07.05.2024 का एक प्रत्युत्तर योजित किया। याचिकाकर्ता ने दिनांक 06.07.2024 का एक पूरक शपथपत्र और दिनांक 21.07.2024 का एक और शपथपत्र योजित किया। विशेष सचिव, नियुक्ति और कार्मिक विभाग, उ.प्र. सरकार द्वारा भी दिनांक 19.08.2024 को इस न्यायालय के आदेश के अनुपालन में एक प्रति-शपथपत्र दाखिल किया गया है, जिसके उत्तर में याचिकाकर्ता ने 21.08.2024 को एक प्रत्युत्तर दाखिल किया है। इस याचिका को 31.08.2024 को सुनवाई के लिए स्वीकार किया गया, जो उसके बाद आगे बढ़ी। मामले की सुनवाई 24.09.2024 को और अंत में, 27.09.2024 को हुई, जब निर्णय सुरक्षित रखा गया।

9. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, श्री राजन उपाध्याय की सहायता से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री रमेश उपाध्याय और राज्य की ओर से उपस्थित, श्री रूपेश तिवारी, विद्वान स्थायी अधिवक्ता के साथ सुश्री मोनिका आर्या, विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता को सुना गया।

10. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री रमेश उपाध्याय द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि आयुक्त, लखनऊ मंडल, लखनऊ द्वारा प्रस्तुत जांच रिपोर्ट में याचिकाकर्ता के संहिता की धारा 98 के अधीन अनुमति देने के कार्य को कदाचार के रूप में निंदा करने के लिए "विधि विरुद्ध" शब्दों का प्रयोग किया गया है। संदर्भित अनुमति देते समय याचिकाकर्ता ने विधि के किस प्रावधान का उल्लंघन किया है, यह उनके निष्कर्षों में कहीं भी उल्लिखित नहीं है। यह आग्रह किया गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा अनुमति प्रदान करने वाले आदेश, संहिता की धारा 98 के अधीन अर्ध-न्यायिक शक्तियों का प्रयोग थे। अनुमति दी गई, क्योंकि आवेदक द्वारा धारा 98 में दी गई सभी शर्तें पूरी की गई थीं। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, धारा 98 अनुमति देने का प्रावधान करती है, और 2016 के नियमों का नियम 99 उन शर्तों का प्रावधान करता है, जिनके अधीन अनुमति दी जानी है। श्री उपाध्याय ने न्यायालय का ध्यान दिनांक 21.08.2024 के प्रत्युत्तर शपथपत्र की ओर आकर्षित किया है और बताया है कि भूमि के हस्तांतरण के लिए आवश्यक अनुमति प्राप्त करने के लिए याचिकाकर्ता के समक्ष प्रस्तुत किए गए आवेदनों की प्रतियां यह दर्शाती हैं कि अनुमति प्रदान करने के लिए आवश्यक सभी तत्व संतुष्ट थे।

याचिकाकर्ता के लिए अनुमति से इनकार करने का कोई अवसर नहीं था। इस बात पर बल दिया गया है कि आयोग की प्रारंभिक जांच रिपोर्ट में एक आरोप है कि याचिकाकर्ता ने पत्रावली को काफी लंबी अवधि तक अपने पास रखा, जिस दौरान, उसने इसे पूर्ण कराया, अर्थात्, सभी कमियों को दूर कराया, और फिर बिक्री के लिए आवश्यक अनुमति दी। यह प्रस्तुत किया गया है कि यह आरोप प्रथम दृष्टया निरस्त किए जाने योग्य है, क्योंकि याचिकाकर्ता ने आदेश-पत्रक की एक प्रति अभिलेख पर लाई है, जो दर्शाती है कि उसे सौंपे गए सभी मामलों को याचिकाकर्ता ने जिला अधिकारी से स्थानांतरण द्वारा प्राप्त करने के अगले दिन निर्णित किया। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा यह बताया गया है कि इस न्यायालय की लखनऊ पीठ द्वारा एक नई प्रारंभिक जांच के संचालन के लिए दिनांक 11.12.2023 को पारित आदेश के अनुपालन में, अध्यक्ष, राजस्व परिषद की अध्यक्षता में एक नई प्रारंभिक जांच आयोजित की गई। दिनांक 13.08.2024 की एक जांच रिपोर्ट बनाई गई, जिसमें याचिकाकर्ता के संबंध में, यह टिप्पणी की गई कि उसके द्वारा दी गई अनुमति विधि के विरुद्ध। अध्यक्ष, राजस्व परिषद द्वारा उक्त रिपोर्ट में यह भी टिप्पणी की गई है कि याचिकाकर्ता को अनुमति देने से पहले अधिक सावधानी बरतनी चाहिए थी। उपर्युक्त जांच रिपोर्ट में, धर्मेन्द्र सिंह के बारे में कहा गया है, जो प्रासंगिक समय पर लखनऊ में याचिकाकर्ता के साथ तैनात अपर जिला अधिकारी, भूमि अधिग्रहण थे, कि उन्होंने मुआवजे के वितरण के लिए तहसील में राजस्व अधिकारियों जैसे अन्य लोगों के साथ मिलीभगत की, जिससे सरकार को वित्तीय हानि हुई। धर्मेन्द्र सिंह को भी 13.09.2023 को आरोप-पत्र दिया गया था। ये कार्यवाही 18.09.2023 को वापस ली गई और धर्मेन्द्र सिंह को भारतीय प्रशासनिक सेवा में पदोन्नत किया गया।

11. श्री उपाध्याय ने बल देकर कहा है कि निर्णायक सिद्धांत द्वारा, इस न्यायालय द्वारा यह निर्णित किया गया है कि अर्ध-न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करने वाले एक अधिकारी के विरुद्ध केवल निर्णय की त्रुटि, लापरवाही, या उसके कर्तव्यों के निष्पादन में लापरवाही के आधार पर विभागीय कार्यवाही संस्थित नहीं की जा सकती है। इसे केवल तभी संस्थित की जा सकती है, जब इसमें नैतिक पतन, गैरकानूनी व्यवहार, निषिद्ध कार्य आदि शामिल हों। उन्होंने राजकुमार द्विवेदी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा अपर मुख्य सचिव, नियुक्ति, लखनऊ व एक अन्य¹⁰, श्री प्रकाश गुप्ता बनाम उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा अपर मुख्य सचिव, नियुक्ति, लखनऊ व अन्य¹¹ के निर्णयों का संदर्भ दिया है। यह भी बताया गया है कि श्री प्रकाश गुप्ता (उपरोक्त) को अपील, उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा अपर मुख्य सचिव, नियुक्ति विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार, सिविल सचिवालय, लखनऊ व एक अन्य बनाम श्री प्रकाश गुप्ता व अन्य में खंडपीठ द्वारा पुष्ट किया गया है। आगे शिवानी सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ व अन्य¹³ पर भरोसा किया गया है। इन निर्णयों का बल, जो सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर भी भरोसा करते हैं, यह है कि जब तक अर्ध-न्यायिक आदेश प्रदान करने में कुछ बाह्य कारणों न हों, मात्र निर्णय की त्रुटि, गलती या यहां तक कि लापरवाही अर्ध-न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करने वाले एक अधिकारी के विरुद्ध आरोप को जन्म नहीं देगी। इसलिए, प्रस्तुति यह है कि इस प्रकार की अनुशासनात्मक कार्यवाही, और उस आरोप पर जो याचिकाकर्ता के विरुद्ध शुरू किए गए हैं, आरंभ में ही खंडित किए जाने चाहिए।

12. सुश्री मोनिका आर्या, विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता और श्री रूपेश तिवारी, विद्वान स्थायी अधिवक्ता, दूसरी ओर, प्रस्तुत करते हैं कि **जमुना व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा अपर मुख्य सचिव, प्रमुख सचिव, राजस्व सिविल सचिवालय, लखनऊ व अन्य**¹⁴ में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के अधीन एक प्रारंभिक जांच आयोजित की गई थी। रिपोर्ट की एक प्रति, एक विशाल अभिलेख, राज्य की ओर से योजित प्रति-शपथपत्र दिनांक 20.08.2024 के संलग्नक संख्या सीए-3 के रूप में संलग्न की गई है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि एसडीएम ने एक रिपोर्ट बनाई कि गैर-भार प्रमाण पत्र, विक्रेताओं द्वारा धारित भूमि का प्रमाण और चिकित्सा प्रमाण पत्र वहां नहीं थे। याचिकाकर्ता, इन सभी प्रासंगिक तथ्यों को जानते हुए, उन व्यक्तियों के पक्ष में हस्तांतरण की अनुमति दी, जिन्हें 2-3 महीने की अवधि के भीतर हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ भूमिधर के रूप में माना जाता था, उन्हें विक्रेताओं के रूप में कार्य करने के लिए प्राप्त किया गया था। अपर जिला मजिस्ट्रेट के अभिलेख में, यानी, याचिकाकर्ता, जिसने कुछ फाइलों पर अनुमति दी, आवश्यक चिकित्सा प्रमाण पत्र, गैर-भार प्रमाण पत्र और विक्रेताओं द्वारा धारित भूमि का प्रमाण संलग्न है। राज्य के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता ने यह नहीं देखा कि जबकि ये प्रमाण पत्र कुछ फाइलों में अभिलेख पर थे, वे एसडीएम की रिपोर्ट के साथ संलग्न नहीं आए थे। उन्होंने यह जांचने की परवाह नहीं की कि ये प्रमाण पत्र फाइलों पर कैसे दिखाई दिए, जब वे एसडीएम द्वारा अग्रेषित नहीं किए गए थे। विद्वान राज्य अधिवक्ता द्वारा यह भी जोर दिया गया है कि गांव सभा भूमि के पट्टे के कुछ आवंटितों को भी, जिन्हें हस्तांतरण की अनुमति के लिए आवेदन करने से कुछ दिन पहले हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ भूमिधर घोषित किया गया था, हस्तांतरण की अनुमति दी गई थी। कुछ मामलों में, बिक्री की अनुमति के लिए आवेदन तब किया गया था, जब विक्रेता को हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ भूमिधर घोषित किया जाना था। पट्टे पर भूमि धारण करने वाले कुछ कथित आवंटितों ने झूठा बयान दिया कि वे किसी अनुबंध में प्रवेश नहीं किए थे, यानी, उस अधिकारी के समक्ष जो उन्हें हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ भूमिधर घोषित करना था, जबकि, अभिलेख दिखाते हैं कि उनके बीच अनुबंध और बेचने के लिए समझौते हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ भूमिधारी में उनके अधिकारों के विस्तार से पहले किए गए थे।

13. यह भी तर्क दिया गया है कि 2016 के नियमों के नियम 99(4) अनिवार्य करते हैं कि नायब तहसीलदार के पद से नीचे नहीं के एक अधिकारी द्वारा परिस्थितियों के बारे में एक जांच की जाए, जो अनुसूचित जाति से संबंधित एक भूमिधर को उस श्रेणी के व्यक्ति के अतिरिक्त किसी अन्य को भूमि हस्तांतरित करने का अधिकारी बनाती है, लेकिन परिस्थितियां बहुत संदिग्ध होने के बाद भी ऐसी कोई जांच नहीं की गई। यह विशेष रूप से तर्क दिया गया है कि 2016 के नियमों के नियम 99(8)(बी) प्रावधानित करते हैं कि यदि एक भूमिधर या उसके परिवार का कोई सदस्य घातक बीमारी से पीड़ित है और इस संबंध में एक चिकित्सक या सर्जन द्वारा एक प्रमाण पत्र जारी किया गया है, तो कलेक्टर हस्तांतरण के लिए अनुमति देते समय तथ्य पर विचार कर सकता है। यहां, याचिकाकर्ता ने न तो स्वयं इन प्रासंगिक तथ्यों में कोई जांच की और न ही इस बात की जांच कराई कि विक्रेता या उनके परिवार के सदस्य किसी घातक बीमारी से पीड़ित थे, जैसा कि नियमों के अधीन प्रावधानित किया गया है। यह आगे तर्क दिया गया है कि हस्तांतरण/बिक्री की अनुमति कागजों पर दी गई थी, जहां चिकित्सा प्रमाण पत्र फाइल पर एक संदिग्ध तरीके से दिखाई दिया, जिसके लिए अनिवार्य रूप से, नायब

तहसीलदार या उस पद से ऊपर के एक अधिकारी द्वारा जांच की आवश्यकता थी, जैसा कि नियमों के अधीन अनिवार्य है। यह तर्क दिया गया है कि जांच या सत्यापन के बिना अनुमति दी गई थी और या तो आवश्यक प्रमाण पत्र और अभिलेखों की अनुपस्थिति में या अभिलेखों की उपस्थिति में, जिनकी अभिलेख पर उपस्थिति अस्पष्ट थी। यह सब गांव सभा की भूमि के मुआवजे को हड़पने की साजिश थी। यदि वैधानिक आवश्यकताओं की अनिवार्यताओं का पालन किया जाता, तो पूरी साजिश का पर्दाफाश हो सकता था और खजाने को हुई हानि से बचाया जा सकता था। यह भी जोर दिया गया है कि विधि के प्रावधानों, अधिनियम और नियम दोनों का पालन किए बिना, एक सतही तरीके से अनुमति देने में याचिकाकर्ता का कार्य, जिसके बाद यूपीईआईडीए से प्राप्त सरकारी धन वितरित करना, बाह्य कारणों के लिए अन्य अधिकारियों के साथ उसकी दुर्भावना और मिलीभगत को प्रकट करता है।

14. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है। इस मामले में विचार के लिए उत्पन्न होने वाला बिंदु यह है कि क्या याचिकाकर्ता ने, प्रथम दृष्टया, संहिता की धारा 98 के अधीन अनुमति देने के लिए अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए, तथ्यों या विधि पर निर्णय की मात्र त्रुटि की, या हो सकता है, एक घोर त्रुटि, या अपने तर्क के साथ विकृत हो गया या उसने अनुचित उद्देश्य से या बाह्य कारणों के लिए कार्य किया।

15. यह सत्य है कि एक न्यायिक अधिकारी की तरह एक अर्ध-न्यायिक अधिकारी को उन आदेशों के संबंध में सुरक्षित किया जाना चाहिए, जो वह बनाता है, जो वास्तव में विधि या तथ्यों में त्रुटिपूर्ण हैं। ऐसे आदेश, भले ही विकृत हों, गलत आदेशों की तरह, अपील और पुनरीक्षण मंचों द्वारा सुधारे जाने चाहिए। लेकिन, एक अर्ध-न्यायिक अधिकारी या एक न्यायिक अधिकारी, जो तथ्यों और विधि पर गलत तर्क देता है, या विकृत भी, उसे कदाचार का आरोप लगाकर दंडित नहीं किया जाना चाहिए। यदि उसकी त्रुटियों या यहां तक कि विकृतियों को अनुशासनात्मक क्षेत्राधिकार में दंडनीय कदाचार माना जाता है, तो न्याय के वितरण या अर्ध-न्यायिक कार्य का निस्तारण ठप हो जाएंगे। यह, निश्चित रूप से, घोंघे की गति तक धीमा हो जाएगा, और जिस उद्देश्य के लिए यह है उसे कभी हासिल नहीं करेगा। हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि जहां, स्पष्ट रूप से, एक अर्ध-न्यायिक अधिकारी ने अनुचित उद्देश्य से या बाह्य कारणों के कारण कार्य किया है, उसके आचरण की जांच नहीं की जानी चाहिए। यह काफी अलग मामला है कि दिखावे झूठे हो सकते हैं, और एक विभागीय जांच के आयोजन पर, जो अनुचित उद्देश्य से पैदा हुई कार्रवाई के रूप में प्रतीत होता है या बाह्य कारणों पर आधारित होता है, वह लापरवाही से अधिक कुछ नहीं हो सकता है। एक प्रशासनिक अधिकारी या एक न्यायिक अधिकारी द्वारा उसके अर्ध-न्यायिक कार्यों के प्रदर्शन में लापरवाही भी किसी अनुशासनात्मक कार्यवाही की शुरुआत का कारण नहीं बन सकती है।

16. संहिता की धारा 98 निम्नानुसार है:

98. अनुसूचित जाति से संबंधित भूमिधरों द्वारा हस्तांतरण पर प्रतिबंध-(1) इस अध्याय के प्रावधानों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, अनुसूचित जाति से संबंधित कोई भूमिधर, बिक्री, उपहार, बंधक या पट्टे के तरीके से अनुसूचित जाति से असंबंधित व्यक्ति को कोई भूमि हस्तांतरित करने का अधिकार नहीं रखेगा, सिवाय कलेक्टर की लिखित में पूर्व अनुमति के: परंतु कलेक्टर द्वारा अनुमति केवल तभी दी जा सकती है जब-

(क) अनुसूचित जाति से संबंधित भूमिधर का धारा 108 की उप-धारा (2) के खंड (क) या धारा 110 के खंड (क) में निर्दिष्ट कोई जीवित उत्तराधिकारी नहीं है, जैसा भी हो; या

(ख) अनुसूचित जाति से संबंधित भूमिधर ने उस जिले के अतिरिक्त, जिसमें हस्तांतरित की जाने वाली भूमि स्थित है या किसी अन्य राज्य में किसी सेवा या किसी व्यापार, व्यवसाय, पेशे या व्यवसाय के उद्देश्य से बसा है या सामान्य रूप से निवास कर रहा है; या

(ग) कलेक्टर, निर्धारित कारणों के लिए, संतुष्ट है कि भूमि के हस्तांतरण के लिए अनुमति देना आवश्यक है।

(2) इस धारा के अधीन अनुमति देने के उद्देश्यों के लिए, कलेक्टर ऐसी जांच कर सकता है जो निर्धारित की जा सकती है।

17. 2016 के नियमों का नियम 99, जो संहिता की धारा 98 के अधीन शक्ति के प्रयोग का मार्गदर्शन करता है, निम्नानुसार है:

99. अनुसूचित जाति भूमिधर की भूमि के हस्तांतरण के लिए कलेक्टर की अनुमति। (धारा 98)- (1) धारा 98 (1) के अधीन या धारा 98 (1) को धारा 107 के साथ पढ़ने पर, बिक्री या उपहार के तरीके से भूमि हस्तांतरित करने की अनुमति के लिए या वसीयत द्वारा भूमि को वसीयत करने की अनुमति के लिए एक आवेदन, जैसा भी हो, अनुसूचित जाति से संबंधित हस्तांतरणीय अधिकारों वाले एक भूमिधर द्वारा कलेक्टर को आर.सी. फॉर्म-27 में किया जाएगा।

(2) धारा 98 (1) के अधीन, भूमि में अपने हित को बंधक करने की अनुमति के लिए एक आवेदन अनुसूचित जाति से संबंधित एक भूमिधर द्वारा कलेक्टर को आर.सी. फॉर्म-28 में किया जाएगा।

(3) धारा 98 (1) के अधीन, भूमि को किराए पर देने की अनुमति के लिए एक आवेदन अनुसूचित जाति से संबंधित एक भूमिधर द्वारा कलेक्टर को आर.सी. फॉर्म-29 में किया जाएगा।

(4) धारा 98 (1) के अधीन आवेदन प्राप्त करने पर, कलेक्टर ऐसी जांच करेगा जो वह, मामले की परिस्थितियों में, आवश्यक समझे। वह इसके लिए नायब तहसीलदार के पद से नीचे नहीं के एक अधिकारी को नियुक्त भी कर सकता है:

(क) आवेदन में दिए गए तथ्यों का सत्यापन; और

(ख) उन परिस्थितियों पर आख्या, जिनमें हस्तांतरण के लिए अनुमति मांगी गई है।

(5) इस नियम के उप-नियम (4) में संदर्भित जांच अधिकारी ऐसी जांच के आदेश प्राप्त करने की तिथि से पंद्रह दिनों की अवधि के भीतर दो प्रतियों में रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

(6) रिपोर्ट की एक प्रति आवेदक को कलेक्टर के कार्यालय से निःशुल्क प्रदान की जाएगी, जहां ऐसी रिपोर्ट प्रस्तुत की गई है।

(7) आवेदक रिपोर्ट की प्रति प्राप्त करने की तिथि से सात दिनों की अवधि के भीतर जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के विरुद्ध आपति योजित कर सकता है।

(8) उप-नियम (3) के अधीन प्रस्तुत रिपोर्ट और आपति, यदि कोई हो, प्राप्त करने के बाद, यदि कलेक्टर संतुष्ट है कि-

(क) धारा 98 की उप-धारा (1) के खंड (क) या खंड (ख) की शर्तें पूरी होती हैं; या

(ख) खाता धारक या उसके परिवार का कोई सदस्य किसी घातक बीमारी से पीड़ित है, जिसके संबंध में संबंधित बीमारी में विशेषज्ञ किसी चिकित्सक या सर्जन द्वारा प्रमाण पत्र जारी किया गया है और ऐसी बीमारी के उपचार के खर्च को पूरा करने के लिए हस्तांतरण के लिए अनुमति आवश्यक है; या

(ग) आवेदक ऐसे प्रस्तावित हस्तांतरण के विचार से कोई अन्य भूमि खरीदने के लिए प्रस्तावित हस्तांतरण के लिए संहिता की धारा 98(1) के अधीन अनुमति मांग रहा है और इस संबंध में आवेदन में तथ्य आवेदक के पक्ष में बेचने के लिए एक पंजीकृत समझौते की प्रमाणित प्रति के साथ समर्थित हैं; या

(घ) आवेदन की तिथि पर आवेदक द्वारा धारित भूमि का क्षेत्र, ऐसे हस्तांतरण के बाद, 1.26 हेक्टेयर से कम नहीं होता है, और

(ड) यदि बिक्री द्वारा हस्तांतरण के लिए अनुमति मांगी जा रही है, तो भूमि के हस्तांतरण के लिए प्रतिफल कलेक्टर द्वारा निर्धारित सर्कल दर के अनुसार गणना की गई राशि से कम नहीं है; वह कारणों को अभिलेख करके अनुमति दे सकता है।

स्पष्टीकरण-संदेह को दूर करने के लिए इसे एतद्वारा स्पष्ट किया गया है कि यदि इस उप-नियम के खंड (घ) में दी गई शर्त पूरी नहीं होती है, लेकिन इस नियम के खंड (क) से (ग) में दी गई कोई शर्त पूरी होती है तो कलेक्टर द्वारा संहिता की धारा 98(1) के अधीन अनुमति दी जा सकती है।

(9) बंधक करने या भूमि को किराए पर देने की अनुमति के लिए नियम 99 के उप-नियम (2) या उप-नियम (3) में संदर्भित आवेदन, जैसा भी हो, कलेक्टर द्वारा इस बात से संतुष्ट होने पर दिया जा सकता है कि बंधक या किराए पर देना, जैसा भी हो, अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित व्यक्ति के पक्ष में संभव नहीं है।

(10) वसीयत द्वारा भूमि को वसीयत करने की अनुमति के लिए नियम 99 के उप-नियम (1) में संदर्भित आवेदन, कलेक्टर द्वारा इस बात से संतुष्ट होने पर दिया जा सकता है कि भूमि की वसीयत अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित व्यक्ति के पक्ष में संभव नहीं थी।

(11) कलेक्टर जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट प्राप्त करने की तिथि से पंद्रह दिनों की अवधि के भीतर धारा 98(1) के अधीन आवेदन का निस्तारण करने का प्रयास करेगा और यदि आवेदन का ऐसी अवधि के भीतर निस्तारण नहीं किया जाता है तो उसका कारण दर्ज किया जाएगा।

18. जैसा कि आरंभ में ही देखा गया, याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा बहुत निर्णयों पर भरोसा किया गया है, अधिकतर इस न्यायालय के पीठ निर्णय और अकेले बैठे न्यायमूर्तिगण के हैं, यह निर्णीत करते हुए कि अर्ध-न्यायिक अधिकारी, निर्णय में उनके द्वारा की गई त्रुटियों के लिए, चाहे वे घोर या लापरवाही से हों, उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही संस्थित होने के बाद, उन त्रुटियों को कदाचार मानते हुए उन्हें दंड के परिणाम नहीं दिए जाने चाहिए। यह सत्य है, जैसा कि हम वर्तमान में देखेंगे, कि उन निर्णयों में से अधिकांश में, सिद्धांत यह है कि विधि या तथ्यों पर निर्णय की त्रुटियों, या यहां तक कि विकृत निष्कर्षों या एक अर्ध-न्यायिक अधिकारी या एक न्यायिक अधिकारी की लापरवाही के लिए, अनुशासनात्मक क्षेत्राधिकार में आगे नहीं बढ़ा जाना चाहिए। यह ध्यान देने योग्य है कि संदर्भित निर्णयों में, तथ्य दिखाते हैं कि अधिकारियों के विरुद्ध पहले से ही अनुशासनात्मक क्षेत्राधिकार में कार्रवाई की गई थी और दंड लगाया गया था, जब वे न्यायालय में आए, चुनौती देते हुए। अनुशासनात्मक कार्यवाही का पूरा मार्ग विस्तृत खुला होने और सभी साक्ष्य वहां होने के साथ, न्यायालय ने, निस्संदेह, उन अधिकारियों में निष्कर्ष निकाला कि अनुशासनात्मक कार्यवाही कभी शुरू नहीं होनी चाहिए थी। यह भी सत्य है कि यदि अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू नहीं होनी चाहिए, तो उन्हें पूरा करने की अनुमति देने का कोई मतलब नहीं है और फिर एक निष्कर्ष पर पहुंचें, जैसे कि पश्चाताप

में, कि कार्यवाही कभी शुरू नहीं होनी चाहिए थी। यह, शायद, उक्त कारण के कारण है कि याचिकाकर्ता, इस बात से आश्वस्त होकर कि उसने निर्णय की त्रुटि, घोर या तुच्छ, से अधिक कुछ नहीं किया है, इस न्यायालय को स्थानांतरित किया है, आरोप-पत्र को खंडित करने की मांग करते हुए। मूल रूप से, वह कार्यवाही को खंडित करने की मांग करता है। हो सकता है, वह एक उत्प्रेषण के बजाय एक निषेध के लिए आवेदन कर सकता था। लेकिन, समकालीन समय में रिट क्षेत्राधिकार में प्रारूप को विधि द्वारा बहुत पसंद नहीं किया जाता है, जब तक कि एक अच्छे कारण पर कार्यवाही करने के लिए एक उपाय है, और रिट याचिका पोषणीय है।

19. **राजकुमार द्विवेदी** में याचिकाकर्ता की ओर से संदर्भित निर्णयों को संक्षेप में देखना बहुत लाभदायक होगा। तथ्य बहुत विस्तार से निर्धारित नहीं हैं, लेकिन, निर्णय को पढ़ने से जो प्रतीत होता है, वह यह है कि उस मामले में याचिकाकर्ता, उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम, 1901 की धारा 33/39 के अधीन आवेदनों का निर्णय करने के लिए सशक्त अधिकारी था। उन्होंने कुछ आदेश पारित किए, जिन्हें त्रुटिपूर्ण कहा गया था। उत्तर प्रदेश चकबंदी अधिनियम, 1953 की धारा 48(3) के अधीन चकबंदी के उप निदेशक के समक्ष आदेशों को चुनौती दी गई और झूठी प्रविष्टियों को हटा दिया गया। **राजकुमार द्विवेदी** में याचिकाकर्ता द्वारा 22.01.2016 को पारित आदेश इस कारण से खंडित किया गया कि उपर्युक्त आदेश पारित करते समय उस पर भरोसा किए गए अभिलेख जाली थे। उसका आदेश खंडित होने के बाद, याचिकाकर्ता को 25.01.2018 को निलंबन के अधीन रखा गया था और जांच लंबित होने तक सेवा से निलंबन को बाद में 07.09.2021 को खंडित कर दिया गया था। उन्हें, बाद में, कुछ दंड लगाकर दंडित किया गया, जिसका निर्णय में उल्लेख नहीं है। इन तथ्यों के संदर्भ में यह देखा गया था:

7. शीर्ष न्यायालय ने **जुंजराओ भीकाजी नागरकर (उपरोक्त)** के प्रस्तर संख्या 29 में निर्णीत किया है कि यदि अर्ध-न्यायिक निर्णय में राजस्व अधिकारी ने गलत तरीके से अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया है, तो उस गलत को अपील में सही किया जा सकता है। यह हमेशा एक अधिकारी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का आधार नहीं बन सकता है, जबकि वह एक अर्ध-न्यायिक अधिकारी के रूप में कार्य कर रहा है। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि एक अर्ध-न्यायिक अधिकारी होने के नाते, वह हमेशा अपील में न्यायिक पर्यवेक्षण के अधीन है।

8. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया है कि यदि कोई अर्ध-न्यायिक अधिकारी कोई आदेश पारित करता है, जो अपील योग्य या पुनरीक्षण योग्य है, तो उस आदेश को कदाचार के रूप में नहीं माना जा सकता है और यदि एक कर्मचारी के आचरण को कदाचार के रूप में नहीं माना जाता है, तो उसे विभागीय कार्यवाही के अधीन नहीं किया जा सकता है।

9. माननीय शीर्ष न्यायालय ने अभय जैन बनाम राजस्थान उच्च न्यायालय व एक अन्य, 2022 SCC OnLine Supreme Court 319 में निम्नानुसार निर्णीत किया है:

"71. हम इस न्यायालय के उपरोक्त प्रकरण में दृष्टिकोण से सहमत हैं कि केवल इसलिए कि अपीलकर्ता द्वारा एक गलत आदेश पारित किया गया है या उसके द्वारा की गई कार्रवाई भिन्न हो सकती थी, यह न्यायिक अधिकारी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही संस्थित करने का कारण नहीं है।

.....

74. उपरोक्त न्यायिक घोषणाओं के आलोक में, हम मानते हैं कि अपीलकर्ता इस अर्थ में लापरवाही का दोषी हो सकता है कि उसने केस फाइल को सावधानीपूर्वक नहीं देखा और उच्च न्यायालय के आदेश को नोटिस नहीं लिया जो उसकी फाइल पर था। इस लापरवाही को कदाचार के रूप में नहीं माना जा सकता है....."

10. वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता ने उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम, 1901 की धारा 33/39 के अधीन आदेश पारित किए हैं और उन आदेशों के विरुद्ध, वैधानिक उपाय उपलब्ध हैं। रिट याचिका के प्रस्तर संख्या 34 में, इस प्रभाव का विशिष्ट अभिकथन किया गया है कि उन आदेशों को उत्तर प्रदेश चकबंदी अधिनियम की धारा 48(3) के अधीन चकबंदी के उप निदेशक/जिला कलेक्टर के समक्ष चुनौती दी गई है और झूठी प्रविष्टियों को हटा दिया गया था और याचिकाकर्ता द्वारा 22.01.2016 को पारित किया जा रहा आदेश दिनांक 17.11.2017 के आदेश के माध्यम से इस कारण से खंडित कर दिया गया कि उपर्युक्त आदेश पारित करते समय याचिकाकर्ता द्वारा भरोसा किए गए अभिलेख जाली थे।

11. इसलिए, उपर्युक्त पर विचार किए गए के आलोक में, यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता द्वारा 22.01.2016 को पारित आदेश को 17.11.2017 को उच्चतर अर्ध-न्यायिक अधिकारी द्वारा खंडित कर दिया गया था और बाद में, याचिकाकर्ता को 25.01.2018 को निलंबन के अधीन रखा गया था। हालांकि, उपर्युक्त निलंबन आदेश को 07.09.2020 को खंडित कर दिया गया है।

12. इसलिए, शीर्ष न्यायालय द्वारा निर्णयों की श्रृंखला में निर्धारित विधि के स्थापित सिद्धांत के आलोक में, जिनमें से कुछ का ऊपर उल्लेख किया गया है, विपक्षी संख्या 2 द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 14.08.2024 स्पष्ट रूप से अवैध, मनमाना और अनावश्यक है, इसलिए, उसे एतद्वारा खंडित/निरस्त किया जाता है।

20. वास्तव में यह प्रकट नहीं होता है कि क्या याचिकाकर्ता पर आरोपित कदाचार, अधिनियम 1901 की धारा 33/39 के अधीन आवेदन का निर्णय करने में विधि की त्रुटि मात्र थी या घोर त्रुटि या एक विकृत आदेश, या आरोप से परे गया, यानी कहना है, कि यह अनुचित उद्देश्य के साथ या बाह्य कारणों के कारण बनाया गया आदेश था। इस प्रकार, हमारी राय में, **राजकुमार द्विवेदी** ऐसे प्रकरण में सहायक नहीं होगा जहां, जैसा कि यहां यह तर्क दिया गया है कि आदेश अनुचित उद्देश्य से या बाह्य कारणों के कारण पारित किया गया था, निश्चित रूप से, परिस्थितियों से अनुमान लगाया जाना है जो अनदेखा करने के लिए बहुत मुश्किल हैं।

21. अगला **श्री प्रकाश गुप्ता** का निर्णय है, जहां, निर्णय को पढ़ने से, यह प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता वर्ष 1999 में तहसील सदर, जिला मऊ में तैनात एक उप कलेक्टर था। अधिनियम 1901 की धारा 33/39 के अधीन उनके समक्ष एक आवेदन किया गया था, जो गैर-जमींदारी उन्मूलन से जमींदारी उन्मूलन में भूमि के रूपांतरण की मांग कर रहा था। याचिकाकर्ता ने, तहसीलदार से आपत्तियां और रिपोर्ट आमंत्रित करने के बाद, और अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण सामग्री पर विचार करने के बाद, अपने आदेश दिनांक 07.11.2009 के माध्यम से आवेदन की अनुमति दी। **श्री प्रकाश गुप्ता** में तथ्यों को माननीय न्यायमूर्ति के शब्दों में सबसे अच्छा संक्षेपित किया जा सकता है, जैसा कि ये निर्णय में हैं:

6. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि उक्त आवेदन का निर्णय करते समय, यह उल्लेख किया गया था कि कुछ धोखाधड़ी प्रविष्टियां की गई हैं और सुधारी गई हैं। उक्त भूमि जो वास्तव में जेडए भूमि थी, को गैर-जेडए भूमि के रूप में दर्ज किया गया था और केवल राजस्व अभिलेख को सुधारने और सही करने के लिए, याचिकाकर्ता को भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए कहा गया था।

7. याचिकाकर्ता द्वारा पारित आदेश दिनांक 17.11.2009 को आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण में चुनौती दी गई, जिन्होंने उक्त पुनरीक्षण को स्वीकार किया और याचिकाकर्ता द्वारा पारित आदेश को खंडित कर दिया। उक्त पुनरीक्षण को स्वीकार करते समय आयुक्त ने निर्णीत किया कि याचिकाकर्ता को गैर-जेडए भूमि को जेडए भूमि में परिवर्तित करने के लिए भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। याचिकाकर्ता द्वारा पारित आदेश को खंडित करते समय, आयुक्त ने यह भी दर्ज किया कि उसके निर्णय की प्रति मुख्य सचिव, नियुक्ति के समक्ष उक्त मामले में जांच करने के लिए रखी जाए। यह अपर आयुक्त द्वारा जारी निर्देश के आधार पर है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही संस्थित की गई और 05.02.2018 को उन्हें आरोप पत्र जारी किया गया। आरोप पत्र आयुक्त, आजमगढ़ मण्डल, आजमगढ़ द्वारा जारी किया गया था, जिन्हें जांच अधिकारी नियुक्त किया गया था।

8. जांच कार्यवाही समाप्त हुई और 19.06.2018 को जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई, जिसमें याचिकाकर्ता को सभी आरोपों से मुक्त किया गया। जांच रिपोर्ट में निष्कर्ष दिया गया कि कोई दुर्भावनापूर्ण आशय नहीं था न ही यह आरोप लगाया जा सकता है और न ही सिद्ध किया जा सकता है, जिसके लिए याचिकाकर्ता को उसके न्यायिक कार्यों के प्रयोग में आरोपित किया जा सकता है।

9. दिनांक 19.06.2018 की जांच रिपोर्ट पर, राजस्व परिषद से राय मांगी गई, जिसके अनुसरण में राजस्व परिषद ने भी 22.03.2019 को याचिकाकर्ता के विरुद्ध कार्यवाही को समाप्त करने के लिए अपनी राय दी।

10. तथ्यों की उपरोक्त पृष्ठभूमि में, जहां जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता के पक्ष में निष्कर्ष भी दर्ज किया है और यहां तक कि राजस्व परिषद ने भी निष्कर्ष दिया था कि याचिकाकर्ता द्वारा पारित आदेश में कोई कमी नहीं है, मामले पर राज्य सरकार द्वारा विचार किया गया और आश्चर्यजनक रूप से दिनांक 31.07.2019 के आदेश के माध्यम से, जांच अधिकारी को विशेष रूप से यह बताते हुए अपनी रिपोर्ट देने के लिए कहा गया कि किन तथ्यों पर याचिकाकर्ता का अपराध उक्त जांच के दौरान सिद्ध नहीं हो सका।

11. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि उक्त आदेश अपने आप प्रतिवादियों की दुर्भावना दर्शाता है क्योंकि उक्त आदेश स्वयं अधिकार क्षेत्र के बिना है और एक बार जांच अधिकारी ने एक आदेश पारित कर दिया, तो वह *फंक्टस ऑफिशियो* हो जाता है और केवल पुनः जांच के निर्देश के मामले में, वह जांच अधिकारी की अपनी क्षमता में नई जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए कोई अधिकार क्षेत्र नहीं रख सकता है। अधिकार क्षेत्र का ऐसा प्रयोग सेवा न्यायशास्त्र के लिए अनजाना है।

12. राज्य सरकार के आदेश के दृष्टिगत, जांच अधिकारी ने फिर से राज्य सरकार को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जहां उन्होंने अपनी पहले की राय से थोड़ा विभेद किया और अब उन्होंने कहा कि याचिकाकर्ता द्वारा पारित आदेश त्रुटिपूर्ण था। दूसरी जांच रिपोर्ट में भी ऐसा कोई आरोप नहीं है कि याचिकाकर्ता ने या तो खुद कदाचार किया है या उक्त आवेदन का निर्णय करने के लिए कोई बाह्य कारणों था। उक्त रिपोर्ट में यह भी दर्ज किया गया था कि मामले के सभी पहलुओं पर जांच अधिकारी द्वारा विचार किया गया है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णय हैं और इसलिए, यह कहा गया था कि इस संबंध में राज्य सरकार के विधि विभाग से विधिक राय ली जाए।

13. दूसरी जांच रिपोर्ट के अनुसरण में, याचिकाकर्ता को सुनवाई का अवसर दिया गया और परिणामस्वरूप, दिनांक 02.12.2021 का आक्षेपित आदेश पारित किया गया, जिसमें याचिकाकर्ता को 'निंदा की लघु शास्ति अधिरोपित की गई।

22. विद्वान न्यायमूर्ति ने श्री प्रकाश गुप्ता में यह निर्णीत किया:

18. संपूर्ण सामग्री में या तो जांच रिपोर्ट में, आरोप पत्र में, दूसरी जांच रिपोर्ट में, यह लेश मात्र आरोप नहीं है कि याचिकाकर्ता ने स्वयं कोई कदाचार किया या कोई प्रत्यक्ष कार्य या चूक थी, जो अनुशासनात्मक कार्यवाही को संस्थित कर सकती है। यह प्रस्तुत किया गया है कि इस संबंध में विधि को शीर्ष न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला में स्थापित किया गया है और उनमें से अधिकांश को **अभय जैन बनाम राजस्थान के उच्च न्यायालय और एक अन्य, 2022 SCC OnLine Supreme Court 319** में शीर्ष न्यायालय के हालिया निर्णय में विचार किया गया है, जिसमें न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णीत किया है:

"71. हम इस न्यायालय के उपरोक्त मामले में दृष्टिकोण से सहमत हैं कि केवल इसलिए कि अपीलकर्ता द्वारा एक गलत आदेश पारित किया गया है या उसके द्वारा की गई कार्रवाई भिन्न हो सकती थी, यह न्यायिक अधिकारी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही संस्थित करने का कारण नहीं हो सकती है।

.....

74. उपरोक्त न्यायिक घोषणाओं के आलोक में, हम मानते हैं कि अपीलकर्ता इस अर्थ में लापरवाही का दोषी हो सकता है कि उसने केस फाइल को सावधानीपूर्वक नहीं देखा और उच्च न्यायालय के आदेश को नोटिस नहीं लिया जो उसकी फाइल पर था। इस लापरवाही को कदाचार के रूप में नहीं माना जा सकता है।

....."

.....

20. संपूर्ण कार्यवाही से यह नहीं देखा जा सकता है कि याचिकाकर्ता द्वारा उक्त आदेश पारित करते समय कोई बाह्य कारण था। याचिकाकर्ता ने भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया था, यह एक मामला हो सकता है कि उक्त आवेदन का निर्णय करना विशेष रूप से इस तथ्य को देखते हुए प्रतीत होता है कि उक्त भूमि गैर-जेडए भूमि थी और इसका जेडए भूमि में रूपांतरण याचिकाकर्ता द्वारा रखे गए अधिकार क्षेत्र के अधीन अनुमेष नहीं हो सकता है, लेकिन यह तथ्य स्वयं याचिकाकर्ता के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही की शुरुआत के लिए एकमात्र आधार नहीं हो सकता है।

21. माननीय शीर्ष न्यायालय ने जुंजरीओ भीकाजी नागरकर बनाम भारत संघ व अन्य, (1999) 7 SCC 409 में, प्रस्तर 29 में निम्नानुसार निर्णीत किया है:

"29. पंजाब राज्य बनाम पूर्व कास्टेबल राम सिंह में इस न्यायालय ने ब्लैक के लॉ डिक्शनरी और अय्यर के लॉ लेक्सिकॉन में दी गई "कदाचार" की परिभाषा का उल्लेख किया और निम्नानुसार कहा:

"6. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि 'कदाचार' शब्द हालांकि सटीक परिभाषा में सक्षम नहीं है, प्रतिबिंब पर संदर्भ से इसका अर्थ प्राप्त करता है, इसके प्रदर्शन में अपराध और अनुशासन पर इसका प्रभाव और कर्तव्य की प्रकृति। इसमें नैतिक पतन शामिल हो सकता है, यह अनुचित या गलत व्यवहार होना चाहिए; गैरकानूनी व्यवहार, चरित्र में जानबूझकर; निषिद्ध कार्य, कार्रवाई या आचरण की स्थापित और निश्चित नियम का उल्लंघन लेकिन निर्णय की मात्र त्रुटि नहीं, कर्तव्य के प्रदर्शन में लापरवाही; शिकायत किया गया कार्य निषिद्ध गुणवत्ता या चरित्र रखता है। इसके दायरे का निर्माण विषय-वस्तु और संदर्भ के संदर्भ में किया जाना चाहिए जिसमें शर्तें होती हैं, विधि के दायरे और सार्वजनिक उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए जो इसे सेवा करने की कोशिश करता है।"

22. ऊपर बताए गए शीर्ष न्यायालय के विभिन्न निर्णयों में, वर्तमान मामला शीर्ष न्यायालय के उपर्युक्त निर्णय द्वारा पूर्ण रूप से आच्छादित है और इसलिए इस तथ्य को देखते हुए कि उन्होंने अपने अर्ध-न्यायिक कार्यों के प्रयोग में उक्त आदेश पारित किया, याचिकाकर्ता के विरुद्ध जांच कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती थी।

23. खंडपीठ के समक्ष राज्य की अपील पर, माननीय न्यायमूर्तिगण द्वारा टिप्पणी की गई:

14. तदनुसार, जब हम दिनांक 05.02.2018 के आरोप पत्र की जांच करते हैं, तो हम जो पाते हैं वह यह है कि प्रतिवादी संख्या 1 याचिकाकर्ता को उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन पीड़ित व्यक्ति द्वारा योजित आवेदन पर उसके द्वारा की गई न्यायिक कार्यवाही में आदेश पारित करते समय कुछ त्रुटि करने के लिए आरोपित किया गया था। यह देखा जा सकता है कि यदि किसी अधिकारी को न्यायिक मामलों में उसके द्वारा किए गए या निर्वहन किए गए कर्तव्यों और कार्यों के संबंध में आरोपित किया जाना है, तो प्रक्रिया की मात्र त्रुटि या निर्णय की त्रुटि कोई कदाचार नहीं स्थापित करेगी, जब तक कि, निश्चित रूप से, कर्तव्य या शक्ति का ऐसा प्रयोग, एक न्यायिक मामले में भी, सिद्ध बाह्य कारणों से रंगा हुआ हो, जिस पर ऐसे अधिकारी का निर्णय आधारित हो सकता है।

15. जब हम उपर्युक्त विधिक सिद्धांतों की कसौटी पर आरोप-पत्र दिनांक 05.02.2018 पर विचार करते हैं, तो हम पाते हैं कि 1956 के उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक आचरण नियम के नियम 3 में निहित प्रावधान के संदर्भ में भी कोई कदाचार स्थापित करने के लिए आरोप संख्या 1 में आवश्यक तत्वों में से कोई भी उपलब्ध नहीं है। 1956 के नियमों का नियम 3 सामान्य प्रकृति का है, जो प्रावधानित करता है कि प्रत्येक सरकारी कर्मचारी हर समय पूर्ण अखंडता और कर्तव्य के प्रति समर्पण बनाए रखेगा और आगे कि प्रत्येक सरकारी कर्मचारी सरकार के विशिष्ट या निहित आदेशों के अनुसार आचरण करेगा, जो व्यवहार और आचरण को नियंत्रित करते हैं, जो लागू हो सकते हैं।

16. दिनांक 05.02.2018 का आरोप पत्र यह आरोप प्रकट नहीं करता है कि प्रतिवादी संख्या 1-याचिकाकर्ता ने किसी बाह्य कारणों पर या किसी बाहरी कारणों के लिए संबंधित मामले में उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 33/30 के अधीन आदेश पारित किया था। आरोप पत्र के अनुसार केवल आरोप यह है कि उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन कार्यवाही में, राजस्व अभिलेख में लंबे समय से चली आ रही प्रविष्टियों को सही नहीं किया जा सकता था, जो केवल लिपिकीय और अंकगणितीय त्रुटि के सुधार के लिए है और इस तरह प्रतिवादी संख्या 1-याचिकाकर्ता ने गैरकानूनी रूप से कार्य किया था। आरोप आगे कहता है कि गैर-जेडए भूमि के संबंध में राजस्व प्रविष्टियों को उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन सही नहीं किया जा सकता था; बल्कि ऐसी त्रुटियों को उत्तर प्रदेश शहरी क्षेत्र जमींदारी उन्मूलन अधिनियम के प्रावधानों के अधीन सही किया जा सकता है और इस तरह प्रतिवादी संख्या 1 याचिकाकर्ता

ने संबंधित व्यक्ति द्वारा योजित किए गए आवेदन पर राजस्व अभिलेख को सही करने वाले आदेश को पारित करते समय अधिकार क्षेत्र के बिना कार्य किया था।

17. प्रतिवादी संख्या 1-याचिकाकर्ता द्वारा पारित आदेश गलत या गैरकानूनी भी हो सकता है, जो हमेशा उच्चतर अपीलीय/पुनरीक्षण न्यायालयों द्वारा सुधार और समीक्षा के अधीन होता है। उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की योजना के अधीन, उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन पारित आदेश से व्यथित कोई भी व्यक्ति दो पुनरीक्षण याचिकाओं का उपाय रखता है, सबसे पहले, वह मण्डल के आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण याचिका योजित कर सकता है और उसके बाद भी यदि वह व्यथित है, तो वह राजस्व परिषद के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का आह्वान कर सकता है।

18. तदनुसार, इस मामले में निंदा (सिक) प्रविष्टि के साथ प्रतिवादी संख्या 1 याचिकाकर्ता को दंडित करने के लिए पालन की गई प्रक्रिया पर विचार करने से पहले भी, हम यह राय दे सकते हैं कि आरोप स्वयं किसी भी आरोप की अनुपस्थिति में कोई कदाचार निर्मित नहीं करता है, जिसमें प्रतिवादी संख्या 1 याचिकाकर्ता ने बाह्य कारणों पर या बाहरी कारणों के लिए कार्य किया है।

.....

24. हमने पहले ही देखा है कि प्रतिवादी संख्या 1-याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप में भी कदाचार का कोई आरोप नहीं था, जिसमें यह प्रभाव हो कि प्रतिवादी संख्या 1-याचिकाकर्ता ने कुछ बाहरी कारणों के लिए या बाह्य कारणों पर कार्य किया था। जांच के दौरान भी कोई सामग्री एकत्र नहीं की जा सकी जो किसी भी तरीके से यह इंगित कर सके कि प्रतिवादी संख्या 1-याचिकाकर्ता ने न्यायिक कार्यवाही में आदेश पारित करते समय बाह्य कारणों के लिए कार्य किया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *अभय जैन (उपरोक्त)* में स्पष्ट रूप से राय दी है कि केवल इसलिए कि एक गलत आदेश पारित किया गया है या केवल इसलिए कि आरोपित अधिकारी द्वारा की गई कार्रवाई अलग होती, अनुशासनात्मक कार्यवाही की शुरुआत का वारंट नहीं करेगी। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *अभय जैन (उपरोक्त)* के उक्त मामले में न्यायिक मामलों में उसके कर्तव्यों के निर्वहन के संबंध में एक अधिकारी को आरोपित करने से संबंधित संपूर्ण विधि की समीक्षा की है।

25. हमने पहले ही नोट किया है कि न तो आरोप में प्रतिवादी संख्या 1 याचिकाकर्ता के बाह्य कारणों के लिए कार्य करने के संबंध में कोई आरोप था और न ही अनुशासनात्मक कार्यवाही के अभिलेख पर कोई सामग्री उपलब्ध है जो यह स्थापित कर सके कि उसने बाह्य कारणों पर कार्य किया था। यहां तक कि जांच अधिकारी के साथ-साथ अनुशासनात्मक अधिकारी को भी ऐसी कोई सामग्री नहीं मिली, जो बाह्य कारणों पर कार्य करने वाले प्रतिवादी संख्या 1 याचिकाकर्ता के संदेह का कारण भी बन सके।

(न्यायालय द्वारा महत्व प्रदत्त)

24. याचिकाकर्ता की ओर से इस निमित्त संदर्भित अंतिम निर्णय, यानी, **शिवानी सिंह (उपरोक्त)** तथ्यों पर यह दिखाने के लिए बहुत वाक्पटु नहीं है कि सिद्धांत को कैसे लागू किया गया था। इसलिए, इसका पालन करना मुश्किल है। हालांकि, जहां तक विद्वान न्यायमूर्ति द्वारा **श्री प्रकाश गुप्ता** में निर्धारित विधि का सवाल है, और निश्चित रूप से, **श्री प्रकाश गुप्ता** में निर्णय से उत्पन्न अपील में खंडपीठ द्वारा, सिद्धांत दूरगामी परिणाम के हैं। मामले का सार, जिसे विद्वान न्यायमूर्ति और खंडपीठ के दोनों माननीय न्यायमूर्तियों द्वारा नोट किया गया है, स्पष्ट रूप से यह है कि एक अर्ध-न्यायिक अधिकारी द्वारा निर्णय की त्रुटि, कितनी भी घोर हो, एक विकृत निष्कर्ष का परिणाम भी हो सकता है, अधिकारी के विरुद्ध दोष स्थापित नहीं करेगी या उसे अनुशासनात्मक कार्यवाही के खतरे में नहीं डालेगी। लेकिन, यह केवल तब तक है जब तक यह आरोप नहीं है कि अधिकारी ने बाह्य कारणों या बाहरी कारणों या अनुचित उद्देश्य के लिए कार्य किया।

25. यह सत्य है कि हालांकि याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप औपचारिक रूप से उसे घोर लापरवाही और गंभीर अनियमितता के लिए आरोपित करता है, जो 1956 के नियमों के नियम 3 के अधीन दंडनीय है, लेकिन यह आरोप का चेहरा या मुखौटा है। आरोप-पत्र में किए गए आरोपों के अवयव यह कहने के लिए बहुत लंबा रास्ता तय करता है कि जिला लखनऊ के गांव भाटगांव, तहसील सरोजिनीनगर में, रक्षा गलियारे के लिए भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया में थी, और गांव सभा/सरकारी भूमि के लिए प्रतिफल में करोड़ों रुपये को अवैध रूप से निकालने के इरादे से, राजस्व विभाग के कर्मचारियों और कुछ भूमि माफियाओं ने बोगस पट्टा फाइलें बनवाईं और गैर-मौजूद अधिकारों के बारे में राजस्व अभिलेख में बोगस प्रविष्टियां करवाईं। ये विसंगतियां श्री विनय कुमार दुबे और श्री शोभित शुक्ला, अधिवक्ताओं द्वारा रिपोर्ट की गईं। इस शिकायत को राजस्व परिषद, उत्तर प्रदेश, लखनऊ द्वारा आयुक्त, लखनऊ मण्डल, लखनऊ की अध्यक्षता में एक समिति को जांच के लिए सौंपा गया था। समिति की रिपोर्ट के अनुसार, गांव भाटगांव, सरोजिनीनगर, लखनऊ में बोगस पट्टा बोगस पट्टा संबंधित फाइलों का निर्माण करने के बाद, वर्ष 1985 में कुछ व्यक्तियों के पक्ष में निष्पादित दिखाया गया था। इन व्यक्तियों को तहसीलदार और एसडीएम द्वारा अवैध रूप से किए गए आदेशों द्वारा गैर-हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ भूमिधरी, और फिर हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ प्रदान किया गया था। इन व्यक्तियों में से, आवंटितों या उनके उत्तराधिकारियों, जिनके नाम क्रम संख्या 8, 48 (02 फाइलें), 53 और 56 पर दिखाई देते हैं, ने अनुसूचित जाति के सदस्यों के अतिरिक्त अन्य विक्रेताओं को अपनी भूमि के हस्तांतरण के लिए आवेदन किए। ये पट्टा धारक भूमिधर में अपग्रेड किए गए अनुसूचित जाति के सदस्य थे, जैसा कि पहले ही कहा गया है। उन्हें कलेक्टर की अनुमति की आवश्यकता थी, इससे पहले कि वे अपनी भूमि को अनुसूचित जाति से असंबंधित विक्रेता को हस्तांतरित करें।

26. अनुसूचित जाति से असंबंधित विक्रेताओं के पक्ष में हस्तांतरण की अनुमति मांगने वाले आवेदनों पर, एसडीएम ने इस प्रभाव की प्रविष्टि की कि विक्रेता द्वारा धारित भूमि इसका विवरण नहीं देती है, चिकित्सा प्रमाण पत्र और गैर-भार प्रमाण पत्र की अनुपस्थिति के अतिरिक्त। फाइलों में से एक में, एसडीएम ने कोई प्रविष्टि या रिपोर्ट नहीं किया था। अंतिम उल्लिखित फाइल में, अन्य फाइलों में अनुपस्थित नोट किए गए प्रमाण पत्र संलग्न हैं, लेकिन, याचिकाकर्ता द्वारा हस्तांतरण की अनुमति देने वाले आदेश में, उपलब्ध प्रमाण

पत्रों का कोई उल्लेख नहीं है। आरोप यह है कि प्रथम दृष्टया, ये तथ्य दिखाते हैं कि प्रमाण पत्र प्राप्त करने से पहले और एसडीएम की रिपोर्ट की संज्ञान लिए बिना, जहां उपलब्ध हो, याचिकाकर्ता ने अनुसूचित जाति के सदस्यों द्वारा धारित भूमि को अन्य वर्गों के विक्रेताओं को बेचने की अनुमति दी। उन विक्रेताओं ने भूमि खरीदी, जिसे उन्होंने बाद में यूपीईआईडीए को मूल्यवान बिक्री प्रतिफल के लिए बेच दिया। आरोप यह कहने के लिए आगे बढ़ता है कि इस प्रकार से, एक ओर गांव सभा से संबंधित भूमि को अनधिकृत और धोखाधड़ी से बेचा गया, और दूसरी ओर, खजाने को नुकसान हुआ। यह इस पृष्ठभूमि में है कि आरोप कहता है कि यदि याचिकाकर्ता अपने कर्तव्यों के प्रति सतर्क रहा होता और सावधानी के साथ अभिलेख की विधिवत जांच की होती, तो गांव सभा की भूमि नहीं बेची जाती और खजाने को हुए नुकसान से बच जाता।

27. समग्र रूप से पढ़ा जाए तो, याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप, प्रथम दृष्टया, एक साधारण निर्णय की त्रुटि, अनियमितता या एक अर्ध-न्यायिक आदेश करने में मात्र लापरवाही का नहीं है। यह प्रथम दृष्टया एक विकृत आदेश पारित होने का मामला भी नहीं है। आरोप याचिकाकर्ता की संलिप्तता के बारे में है, स्पष्ट रूप से बाह्य कारणों से या अनुचित उद्देश्य के कारण। यह न्यायालय यह बिल्कुल नहीं कहना चाहता है कि आरोप सत्य है। यह प्रतिवादियों के लिए है कि वे जांच के समय प्रस्तुत साक्ष्य द्वारा आरोप स्थापित करें। यह प्रतिवादियों के लिए है कि वे आरोप को सिद्ध करने के लिए अभिलेखीय और मौखिक दोनों साक्ष्य प्रस्तुत करने का भार वहन करें और यह याचिकाकर्ता के लिए नहीं है कि वह इसे वहन करे। फिर भी, हम याचिकाकर्ता से सहमत नहीं हैं कि यह निर्णय की मात्र त्रुटि, गलती या यहां तक कि उनके द्वारा एक अर्ध-न्यायिक न्यायिक आदेश पारित करने में लापरवाही का मामला है। कम से कम, यह उसके विरुद्ध आरोप नहीं है। यह सत्य है कि जिस तरह से आरोप को अंत में और इसके औपचारिक समापन में शब्दबद्ध किया गया है, यह याचिकाकर्ता द्वारा उसके अर्ध-न्यायिक कार्यों के निर्वहन में लापरवाही के आरोप से अधिक कुछ नहीं प्रतीत होता है। लेकिन, जैसा कि ऊपर पहले ही बताया गया है, आरोप इससे कहीं आगे है, इसके मुख्य भाग में आरोपों के पर्याप्त विवरण के साथ, जो याचिकाकर्ता द्वारा हस्तांतरण की अनुमति देने में अर्ध-न्यायिक शक्तियों के प्रयोग में अनुचित उद्देश्य और बाह्य कारणों दोनों का सुझाव देते हैं। याचिकाकर्ता वर्ष 1985 में नहीं रहा होगा, जब भूमि धारकों के पक्ष में बोगस पट्टे दिए गए थे, जिनके माध्यम से यह दावा किया जाता है कि गांव सभा की भूमि अनुसूचित जाति से संबंधित न होने वाले विक्रेताओं को हस्तांतरित की गई थी और फिर यूपीईआईडीए को बेच दी गई थी, लेकिन वह निश्चित रूप से मौजूद था, जैसा कि प्रतीत होता है, जब कई पट्टा धारकों के अधिकारों को मिलीभगत करने वाले राजस्व अधिकारियों द्वारा समाप्त किया गया था। ऐसे तथ्यों पर, उन्होंने तहसीलदार या एसडीएम की रिपोर्ट को देखे बिना या इस तथ्य पर विचार किए बिना कि कुछ फाइलों में प्रासंगिक प्रमाण पत्र थे, लेकिन एसडीएम की रिपोर्ट के माध्यम से नहीं रखे गए थे, अनुसूचित जाति के भूमिधर द्वारा धारित भूमि को उस वर्ग के न होने वाले विक्रेताओं को हस्तांतरित करने की अनुमति देने का आदेश पारित किया। इसलिए, आरोप को यह नहीं कहा जा सकता है कि यह याचिकाकर्ता द्वारा उसके अर्ध-न्यायिक आदेशों को पारित करने में निर्णय की त्रुटि, गलती या मात्र लापरवाही के बारे में है।

28. हम एक बार फिर बल देते हैं कि हम यह नहीं कह रहे हैं कि आरोप सही या सत्य है। हम जो बल दे रहे हैं, वह यह है कि यह एक ऐसा आरोप है जो, सिली गंभीरता में, याचिकाकर्ता के बारे में आरोपों को आक्षेपित करता है कि उसने अपने अर्ध-न्यायिक आदेशों के निर्वहन में जिस तरीके से कार्य किया, वह अनुचित उद्देश्य या बाह्य कारणों से था, हालांकि उसे आरोपित करने वाले औपचारिक शब्दों में नहीं कहा गया। आक्षेप, जो आरोप का आधार हैं, उन्हें या या उस तरह के आक्षेप को फिर भी, अनदेखा नहीं किया जा सकता है। इसलिए, निर्णय, जिन पर विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता भरोसा करते हैं, जैसा कि **राजकुमार द्विवेदी, श्री प्रकाश गुप्ता और उत्तर प्रदेश राज्य बनाम श्री प्रकाश गुप्ता व अन्य** (उपरोक्त) में निर्धारित किया गया है, याचिकाकर्ता के लिए बहुत सहायक नहीं हो सकता है। यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि इनमें से अधिकांश मामले, जिन पर याचिकाकर्ता ने तथ्यों पर भरोसा किया है, ने अभिलेख पर सभी सामग्री के साथ जांच को देखा है। यहां, याचिकाकर्ता चाहता है कि आरोप-पत्र को खंडित किया जाए और कार्यवाही को आरंभ में ही समाप्त कर दिया जाए। यह निश्चित रूप से एक मामले में संभव है, यदि यह स्वयं में, आरोप एक अर्ध-न्यायिक अधिकारी द्वारा निर्णय की त्रुटि या मात्र लापरवाही या यहां तक कि निर्णय लेने में विकृति से अधिक नहीं है। लेकिन, यहां ऐसा मामला नहीं है। यह एक ऐसा आरोप है, जिसे जांच में निर्धारित करने की आवश्यकता है, जिसे अपना स्वयं का मार्ग लेना होगा। इस प्रकार, यह शायद इसी कारण से है कि याचिकाकर्ता वैकल्पिक प्रार्थना के साथ आया है कि उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही को शीघ्रता से समाप्त करने के लिए एक परमादेश जारी किया जाए। जबकि हमारी राय है कि इस मामले में आरोप-पत्र को आरंभ में खंडित नहीं किया जा सकता है, इस तथ्य को देखते हुए कि याचिकाकर्ता की पदोन्नति देय है, यह अनिवार्य है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही (न कि केवल जांच) को तेज किया जाए।

29. इसलिए, हम निर्देश देते हैं कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही को अपर मुख्य सचिव (राजस्व), उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ द्वारा इस आदेश की प्रति प्राप्त करने की तिथि से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर विधि के अनुसार और जांच आयोजित करने के तरीके के बारे में इस निर्णय में मार्गदर्शन के अनुसार समाप्त किया जाए। अनुशासनात्मक मामले में अंतिम आदेश आठ सप्ताह की अवधि के भीतर पारित किए जाएंगे और याचिकाकर्ता कार्यवाही में सहयोग करेगा।

30. यह याचिका उपर्युक्त आदेशों के संदर्भ में **निस्तारित** जाती है।

31. व्यय के रूप में कोई आदेश नहीं होगा।

32. निबंधक (अनुपालन) को निर्देश दिया जाता है कि वह इस आदेश को विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, लखनऊ के माध्यम से अपर मुख्य सचिव (राजस्व), उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ को सूचित करें।

(2025) 2 ILRA 509

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 20.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अजय भनोट

रिट-ए संख्या-19167/2024

शीतल चौधरी

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

विनय कुमार

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि., मनोज कुमार सिंह, सुरेश कुमार मौर्य

ए. प्रशासनिक विधि-राज्य और समाज की भूमिका और जिम्मेदारी-रक्षा कर्मियों के परिवारों को राज्य द्वारा परित्यक्त या उनके अपने भरोसे पर नहीं छोड़ा जा सकता है। राज्य की पवित्र प्रतिज्ञा और राज्य अधिकारियों का पुनीत कर्तव्य इस प्रकार उन सैन्य कर्मियों के परिवारों की सुरक्षा, कल्याण और भलाई सुनिश्चित करना है, जो सैन्य सेवा की आवश्यकताओं के कारण अलग हैं। (प्रस्तर 15)

राज्य अधिकारियों/स्थानीय प्रशासन को यह सुनिश्चित करना होगा कि कहीं और तैनात रक्षा कर्मियों के परिवार के सदस्यों द्वारा सामना की जा रही उत्पीड़न या अन्य समस्याओं या कल्याण मुद्दों के संबंध में सेवारत सैन्य अधिकारी/फॉर्मेशन कमांडर/कमांडिंग ऑफिसर द्वारा भेजे गए किसी भी संचार पर सक्षम राज्य अधिकारियों द्वारा तुरंत ध्यान दिया जाए और प्रभावी ढंग से निवारण किया जाए। यह कर्तव्य की पंक्ति में शहादत को गले लगाने वाले सैन्य कर्मियों के परिवार के सदस्यों के लिए भी सत्य है। इस उद्देश्य के लिए राज्य सरकार में जवाबदेही की एक प्रणाली भी मौजूद होनी चाहिए। (प्रस्तर 17)

बी. शिकायत निवारण की मौजूदा प्रणाली में कमियां-आपातकालीन स्थिति की मांगों को पूरा करने के लिए एक उचित प्रणाली स्थापित की जानी चाहिए और कार्य करनी चाहिए।

विभिन्न शासनादेश दिनांक 17.09.2008, 30.03.2015, 06.05.2015 और 30.06.2016, जो स्थानीय प्रशासन को रक्षा कर्मियों की शिकायतों पर तुरंत कार्यवाही करने का निर्देश देते हैं, राज्य द्वारा अभिलेख पर लाए गए हैं। (प्रस्तर 21)

उपरोक्त शासनदेशों की प्रणाली स्पष्ट रूप से अपर्याप्त है और वांछित परिणाम नहीं दे रही है। मौजूदा प्रणाली में कमियां ये हैं। एक उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति की कोई निगरानी नहीं है। सैन्य अधिकारियों का उचित प्रतिनिधित्व अनुपस्थित है। नागरिक प्रशासन और सैन्य अधिकारियों की बैठकें निर्धारित नियमितता के साथ नहीं होती हैं। उक्त समितियों के कामकाज में कोई जवाबदेही नहीं है। (प्रस्तर 22)

सी. अंतर सेवा समन्वय-तीनों सेवाओं को सेवारत कर्मियों के अलग हुए परिवारों की भलाई को सुरक्षित करने के लिए पूर्ण अंतर सेवा समन्वय स्थापित करना चाहिए। शांति में समन्वय युद्ध में तालमेल का अग्रदूत है। तीनों सेवाओं को अपने कमांडिंग ऑफिसरों के माध्यम से विभिन्न सेवारत सशस्त्र बल कर्मियों के प्रत्यावेदनों/शिकायतों को संबंधित समितियों को भेजने के लिए उचित एसओपी बनाने चाहिए। देश में सभी कमांडिंग ऑफिसरों और सैन्य कर्मियों को उपरोक्त समितियों के अस्तित्व और उनके उद्देश्य के बारे में विधिवत सूचित किया जाए। (प्रस्तर 42)

डी. निष्कर्ष-उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा बनाया गया मॉडल देश के अन्य राज्यों के लिए उत्कृष्टता का मानदंड और एक टेम्पलेट बने। (प्रस्तर 43)

रिट याचिका निस्तारित। (ई-4)

(माननीय न्यायमूर्ति अजय भनोट द्वारा उद्धोषित)

1. चर्चा को सुविधाजनक बनाने के लिए निर्णय को निम्नलिखित वैचारिक ढांचे में संरचित किया जा रहा है:

I.	प्रस्तावना	
II.	प्रस्तुतियां	
III.	कमांडिंग ऑफिसर का पत्र और राज्य सरकार की कार्यवाही	
IV.	सशस्त्र बल:	
		ए. भूमिका: सशस्त्र बलों का योगदान
		बी. सैन्य सेवा के कारण पृथक रह रहे रक्षा कर्मियों के परिवारों द्वारा सहन की गई की गई कठिनाइयां

V.	राज्य और समाज की भूमिका और जिम्मेदारी		
VI	राज्य सरकार को निर्देश		
VII	राज्य सरकार और जिला प्रशासन की प्रतिक्रिया:		
		ए.	जिला प्रशासन की प्रतिक्रिया
		बी.	राज्य सरकार का उत्तर
		बी I.	शिकायत निवारण की वर्तमान प्रणाली में कमियां:
		बीII.	राज्य द्वारा स्थापित नई शिकायत निवारण और कल्याण प्रणाली की रूपरेखा राज्य द्वारा स्थापित नई शिकायत निवारण और कल्याण प्रणाली की रूपरेखा
VII	उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति: संरचना, बैठकें और कोरम		
IX	जिला स्तरीय समिति: संरचना, बैठकें और कोरम		
X	अंतर सेवा समन्वय		
XI	निष्कर्ष		

I. प्रस्तावना:

2. याचिकाकर्ता एक सहायक अध्यापिका हैं। याचिकाकर्ता के पति एक सेवारत सैन्यकर्मि हैं, जो एक संवेदनशील सीमा क्षेत्र में तैनात हैं। याचिकाकर्ता का दावा है कि उसके परिवार के पुरुष सदस्य की अनुपस्थिति ने उसे उत्पीड़न का आसान लक्ष्य बना दिया है और उसे एक शिक्षा मित्र द्वारा परेशान किया जा रहा है। राज्य के विभिन्न अधिकारियों के समक्ष उसके प्रत्यावेदन व्यर्थ रहे हैं। उसके पति की बटालियन के कमांडिंग ऑफिसर द्वारा लिखे गए पत्र पर भी स्थानीय राज्य अधिकारियों द्वारा कार्रवाई नहीं की गई है।

3. इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में विचारणीय प्रश्न सार्वजनिक विधि का एक बड़ा प्रश्न भी उठाता है, जो राज्य सरकार द्वारा सेवारत सशस्त्र बल कर्मियों और सशस्त्र बलों के शहीदों के समान रूप से स्थित परिवारों को प्रदान की जाने वाली सहायता प्रणालियों की प्रकृति के संबंध में है।

II. प्रस्तुतियां:

4. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता, श्री विनय कुमार ने निम्नलिखित प्रस्तुतियां की हैं:

i) याचिकाकर्ता गंभीर कठिनाइयों और उत्पीड़न से गुजर रही हैं क्योंकि उसके पति, जो एक सैनिक हैं, कर्तव्य परायण में दूर तैनात हैं। जिला प्रशासन ने उसकी दुर्दशा पर कोई ध्यान नहीं दिया है। उसकी शिकायतों का निवारण नहीं किया गया है, भले ही उसके पति के कमांडिंग ऑफिसर द्वारा सक्षम नागरिक अधिकारियों को एक संचार भेजा गया हो।

ii). सैन्य कर्मियों के पृथक रह रहे परिवारों द्वारा सामना की जाने वाली समस्याओं का निवारण करने में नागरिक प्रशासन की विफलता एक प्रणालीगत है। राज्य सरकार ने इसके लिए कोई प्रतिक्रिया विकसित नहीं की है। समस्या के गंभीर परिणाम हैं और इसे तत्कालता के साथ संबोधित किया जाना चाहिए।

5. राज्य के लिए विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता, श्री सुभांशु शेखर द्वारा सहायता प्राप्त विद्वान अपर महाधिवक्ता, श्री अशोक मेहता ने प्रस्तुत किया है कि राज्य सरकार सेवारत सैन्य कर्मियों से पृथक रह रहे परिवारों की शिकायतों के निवारण और कल्याण के लिए एक प्रभावी प्रणाली प्रदान करने के लिए पूरी तरह से संकल्पित है। इस संबंध में राज्य सरकार द्वारा एक समिति स्थापित की जाएगी, जो वरिष्ठ राज्य अधिकारियों और सैन्य अधिकारियों से बनी है। इस संबंध में न्यायालय के निर्देशों का विधिवत क्रियान्वयन किया जाएगा। याचिकाकर्ता की शिकायतों की जांच की गई है और विधि के अनुसार कार्रवाई की जाएगी।

6. विद्वान केंद्रीय सरकार अधिवक्ता, श्री मनोज कुमार सिंह द्वारा सहायता प्राप्त भारत के विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल, श्री शशि प्रकाश सिंह ने प्रस्तुत किया है कि सेवारत सैन्य कर्मियों के कल्याण के लिए राज्य सरकार द्वारा उपरोक्त समिति के गठन की आवश्यकता है और सशस्त्र बल उक्त समिति के गठन का पूर्णतः समर्थन करते हैं।

III. कमांडिंग ऑफिसर का पत्र और राज्य सरकार की कार्यवाही:

7. भारतीय सेना की 20वीं बटालियन राजपुताना राइफल्स के कमांडिंग ऑफिसर, जहां याचिकाकर्ता के पति सेवारत हैं, उसके द्वारा सामना की जा रही चुनौतियों से अवगत थे। कर्नल आनंद ए. शिराली, कमांडिंग ऑफिसर, 20वीं राजपुताना राइफल्स ने परिवार को उचित कदम लेने और निराकरण करने के लिए इस संबंध में जिला कलेक्टर, फिरोजाबाद, पुलिस अधीक्षक, फिरोजाबाद को दिनांक 10.09.2024 का एक पत्र भेजा था।

8. पत्र का प्रासंगिक भाग, जो नेतृत्व के सर्वोच्च रूप और भाषा की अद्भुत कमान को दर्शाते हैं, नीचे दिया गया है:

"सैनिक परिवार का कल्याण"

"1. जेसी-473099X सूबेदार हमवीर सिंह पुत्र श्री बिजेंद्र सिंह, निवासी-ग्राम-नगला तुलसी, डाकघर-टुंडला, तहसील-टुंडला, जिला-फिरोजाबाद (उत्तर प्रदेश) का आवेदन दिनांक 08 सितंबर 2024, आपकी समीक्षा और आवश्यक कार्रवाई हेतु अग्रेषित किया जा रहा है।

2. सूबेदार हमवीर सिंह 12 जनवरी 1999 से भारतीय सेना की राजपुताना राइफल्स की 20वीं बटालियन के साथ सेवारत हैं और वर्तमान में जम्मू और कश्मीर में नियंत्रण रेखा के साथ एक संवेदनशील क्षेत्र में तैनात हैं। उनकी पत्नी, श्रीमती शीतल चौधरी, सिरोलिया में एक प्राथमिक विद्यालय में सहायक अध्यापिका के रूप

में कार्यरत हैं। ग्राम-कुटुंबुर जरखी के निवासी श्री नेपाल सिंह, जाहिर तौर पर श्रीमती शीतल चौधरी को परेशान और धमकी दे रहे हैं, अपशब्दों का प्रयोग कर रहे हैं। इससे उनको अपने कर्तव्यों के निर्वहन में घोर कष्ट हुआ है और उसके पति की सैन्य कर्तव्यों को निभाने की क्षमता पर भी गंभीर प्रभाव पड़ा है।

3. इसलिए मैं आप सम्मानीय से अनुरोध करता हूँ कि आवेदन में उल्लिखित प्रकरण की जांच करे और इस सेवारत सैनिक के परिवार द्वारा सामना किए जा रहे बिन्दु को हल करने में सहायता करे। यह भी अनुरोध किया जाता है कि जिला शिक्षा अधिकारी के साथ समन्वय किया जाए जिससे या तो श्रीमती शीतल चौधरी को बेहतर कार्य परिस्थितियों वाले अधिक उपयुक्त स्थान पर स्थानांतरित किया जाए, जहां वह बिना किस हताशा के अपनी पूरी क्षमता से काम कर सकें या श्री नेपाल सिंह के विरुद्ध उचित कार्रवाई की जाए, जिससे विवाद को सौहार्दपूर्ण ढंग से हल किया जा सके।

4 .आपसे अनुरोध है कि कृपया इस कार्यालय को सेवारत सैनिक के लाभ के लिए इस आवेदन पर की गई कार्रवाई के बारे में अवगत कराएं।

5. इस मामले में आपके सहयोग की अत्यधिक सराहना की जाएगी।"

9. पत्र भारतीय सेना के स्थायी लोकाचार से प्रेरित है, जिसे चेटवोडियन आदर्शों के हिंदी प्रतिपादन में बेहतर ढंग से संक्षेपित किया गया है, जो नीचे दिया गया है:

**"सबसे पहले देश सुरक्षा मान और सम्मान,
तदनन्तर वो वीर सिपाही जिनपर तुली कमान
अधिकार समर्पित अधिनायक है कर्तव्य हमारी शान"**

10. उक्त पत्र कमांडिंग ऑफिसर की स्थिति को कमान के अधीन सभी अधिकारियों और सैनिकों के पितृसत्तात्मक प्रमुख के रूप में भी सारांशित करता है। कमांडिंग ऑफिसर सैन्य नेतृत्व के रीढ़ की हड्डी की प्रमुख कशेरुका है। कमांडिंग ऑफिसरों द्वारा कमान के अधीन लोगों के परिवारों के कल्याण से संबंधित संचारों का उत्तर देने में राज्य अधिकारियों की विफलता के गंभीर परिणाम होंगे। उक्त संचारों पर शीघ्रता से कार्य करने में राज्य अधिकारियों की अक्षमता कमांडिंग ऑफिसर के कार्यालय की पवित्रता को कम करेगी और अंततः सेवाओं के मनोबल से समझौता करेगी।

11. याचिकाकर्ता के अनुसार, उपरोक्त संचार के साथ-साथ उसके द्वारा किए गए प्रत्यावेदनों पर कोई कार्रवाई नहीं की गई थी।

IV. सशस्त्र बल:

ए. भूमिका: सशस्त्र बलों का योगदान

बी. सैन्य सेवा के कारण पृथक रह रहे रक्षा कर्मियों के परिवारों द्वारा सहन की गई की गई कठिनाइयां

ए. भूमिका: सशस्त्र बलों का योगदान:

12. सशस्त्र बल देश की संप्रभुता और अखंडता के संरक्षक हैं। रक्षा कर्मी अपने जीवन के जोखिम पर भी अपने उच्च कर्तव्यों का पालन करते हैं। भारतीय सशस्त्र बलों का गौरवशाली इतिहास उन पुरुषों और महिलाओं के जीवन के बारे में है, जो वर्दी में हमेशा हमारे राष्ट्र की रक्षा के लिए कोई भी कीमत चुकाने, सभी कठिनाइयों को सहने और सर्वोच्च बलिदान देने के लिए तैयार रहे हैं और हमें सुरक्षित रखने के लिए।

13. इस राष्ट्र की मिट्टी उसके शहीदों के खून से पोषित है। सैन्य कर्मियों का पसीना, आंसू और परिश्रम भूमि की हवा और पानी में व्याप्त है। शहीदों के सर्वोच्च बलिदान हमारी जाति की शाश्वत स्मृति में अंकित हैं। वर्दी में रहने वालों द्वारा दिन-प्रतिदिन किए जा रहे बलिदान हमारे राष्ट्र की सार्वजनिक चेतना में अंतर्निहित हैं।

बी. सैन्य सेवा के कारण पृथक रह रहे रक्षा कर्मियों के परिवारों द्वारा सहन की गई की गई कठिनाइयां

14. सैन्य कर्मियों के परिवार अक्सर सैन्य सेवा की आवश्यकताओं के कारण पृथक हो जाते हैं। इन अलगावों से परिवारों के लिए कठिनाइयां पैदा होती हैं। इस प्रकार पृथक किए गए सैन्य कर्मियों के परिवार एक गैर-उत्तरदायी प्रशासन के कारण कमजोर हो जाते हैं, और सेवा कर्मी एक व्यक्तिगत नौकरशाही के साथ बातचीत करते हुए निराश हो जाते हैं। इन स्थितियों में सेवारत सैन्य कर्मियों के पृथक परिवार उत्पीड़न, वंचन और विधि द्वारा निहित अधिकारों से वंचित हो सकते हैं।

V. राज्य और समाज की भूमिका और जिम्मेदारी:

15. इस प्रकार पृथक रह रहे रक्षा कर्मियों के परिवारों को राज्य द्वारा परित्यक्त या उनके अपने भरोसे पर नहीं छोड़ा जा सकता है। राज्य की पवित्र प्रतिज्ञा और राज्य अधिकारियों का पुनीत कर्तव्य इस प्रकार उन सैन्य कर्मियों के परिवारों की सुरक्षा, कल्याण और भलाई सुनिश्चित करना है, जो सैन्य सेवा की आवश्यकताओं के कारण अलग हैं।

16. सभी रक्षा कर्मियों के लिए राज्य की प्रतिज्ञा अटल है। प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए राज्य अधिकारियों का कर्तव्य अनुल्लंघनीय है। यह आश्वासन उन रक्षा कर्मियों के दिलों को गर्म करना चाहिए और आत्माओं को मजबूत करना चाहिए, जो हमारी सीमाओं की रक्षा करते हैं।

17. राज्य अधिकारियों/स्थानीय प्रशासन को यह सुनिश्चित करना होगा कि कहीं और तैनात रक्षा कर्मियों के परिवार के सदस्यों द्वारा सामना की जा रही उत्पीड़न या अन्य समस्याओं या कल्याण मुद्दों के संबंध में सेवारत सैन्य अधिकारी/फॉर्मेशन कमांडर/कमांडिंग ऑफिसर द्वारा भेजे गए किसी भी संचार पर सक्षम राज्य अधिकारियों द्वारा तुरंत ध्यान दिया जाए और प्रभावी ढंग से निवारण किया जाए। यह कर्तव्य की पंक्ति में शहादत को गले लगाने वाले सैन्य कर्मियों के परिवार के सदस्यों के लिए भी सत्य है। इस उद्देश्य के लिए राज्य सरकार में जवाबदेही की एक प्रणाली भी मौजूद होनी चाहिए।

VI. राज्य सरकार को निर्देश:

18. 04.12.2024 को इस न्यायालय द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया:

"राज्य सरकार को उन परिवारों के कल्याण, सुरक्षा और भलाई के लिए एक नीति तैयार करने का निर्देश दिया जाता है, जो सैन्य सेवा की आवश्यकताओं के कारण अपने रिश्तेदारों से अलग हैं। नीति देश के विभिन्न हिस्सों में सेवारत सैन्य कर्मियों या जो राष्ट्र के लिए लड़ते हुए नष्ट हो जाते हैं, उनके परिवार के सदस्यों को हो रहे उत्पीड़न और धमकियों की शिकायतों से तुरंत निपटने के लिए संरचनाएं बनाएगी। नीति जिला मजिस्ट्रेटों और जिलों के पुलिस प्रमुखों और विभिन्न मंत्रालयों में अन्य नोडल अधिकारियों सहित उपरोक्त योजना को लागू करने के लिए अधिकारियों की पहचान/नामित करेगी।

राज्य इन दायित्वों को केवल तभी निभा सकता है, जब राज्य सरकार, स्थानीय प्रशासन और सैन्य अधिकारियों के बीच पूर्ण समन्वय हो या कर्तव्य के श्रेणी में हों। वरिष्ठ राज्य और सैन्य अधिकारियों को मिलाकर एक संयुक्त समिति नियमित रूप से मिलेगी और उपरोक्त निर्देशों के अनुपालन की लगातार निगरानी करेगी। सैन्य अधिकारी भी एक संरचना विकसित करेंगे, जिसमें शिकायतों को निकटतम सैन्य संरचनाओं में अग्रेषित किया जाएगा, जहां पृथक रूप से परिवार रह रहे हैं और प्रत्येक शिकायत पर की गई कार्रवाई की प्रगति की निगरानी की जाएगी।

मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ और जनरल ऑफिसर कमांडिंग-इन-चीफ सेंट्रल कमांड 10 दिनों के भीतर एक बैठक आयोजित करेंगे और उपरोक्त निर्देशों के अनुपालन के लिए एक उपयुक्त तंत्र विकसित करेंगे।"

19. जिला प्रशासन को भी वर्तमान वाद के तथ्यों में एक उत्तर दाखिल करने का निर्देश दिया गया था।

VII. राज्य सरकार और जिला प्रशासन का उत्तर:

ए. जिला प्रशासन का उत्तर:

20. जिला प्रशासन ने न्यायालय को सूचित किया है कि याचिकाकर्ता की शिकायत पर पूरी तरह से विचार किया गया है और उस पर कार्रवाई की गई है। शिक्षा मित्र को अब दूसरे संस्थान में स्थानांतरित कर दिया गया

है। जांच के बाद कुछ आरोप सही नहीं पाए गए हैं। दूसरे स्कूल में स्थानांतरण के लिए याचिकाकर्ता की प्रार्थना पर विधि के अनुसार और नियमित स्थानांतरणों के समय संस्थागत हितों में विचार किया जाएगा।

बी. राज्य सरकार का उत्तर:

बी-I. शिकायत निवारण की वर्तमान प्रणाली में कमियां:

21. विद्वान अपर महाधिवक्ता, श्री अशोक मेहता द्वारा विभिन्न शासनादेश दिनांक 17.09.2008, 30.03.2015, 06.05.2015 और 30.06.2016, जो स्थानीय प्रशासन को रक्षा कर्मियों की शिकायतों पर तुरंत कार्यवाही करने का निर्देश देते हैं, अभिलेख पर लाए गए हैं।

22. उपरोक्त शासनदेशों की प्रणाली स्पष्ट रूप से अपर्याप्त है और वांछित परिणाम नहीं दे रही है। मौजूदा प्रणाली में कमियां ये हैं। एक उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति की कोई निगरानी नहीं है। सैन्य अधिकारियों का उचित प्रतिनिधित्व अनुपस्थित है। नागरिक प्रशासन और सैन्य अधिकारियों की बैठकें निर्धारित नियमितता के साथ नहीं होती हैं। उक्त समितियों के कामकाज में कोई जवाबदेही नहीं है। आपातकालीन स्थिति की मांगों को पूरा करने के लिए एक उचित प्रणाली स्थापित की जानी चाहिए और कार्य करनी चाहिए।

बी-II. राज्य द्वारा स्थापित नई शिकायत निवारण और कल्याण प्रणाली की रूपरेखा:

23. राज्य सरकार और मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ ने अवसर पर उठकर और सेवाओं को आश्वासन देकर कि उत्तर प्रदेश की राज्य सरकार रक्षा सेवाओं के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ी है और हर समय सैन्य कर्मियों का समर्थन करती है, उच्च प्रशंसा के साथ स्वयं को निर्दोष सिद्ध किया है।

24. विद्वान अपर महाधिवक्ता, श्री अशोक मेहता द्वारा यह कहा गया है कि राज्य सरकार सैन्य कर्मियों के परिवारों की शिकायतों के निवारण और उनके कल्याण के लिए एक अच्छी तरह से संरचित और प्रभावी प्रणाली के लिए बिना शर्त प्रतिबद्ध है। प्रणाली सशस्त्र बलों के कमांडिंग ऑफिसरों द्वारा भेजी गई शिकायतों या प्रत्यावेदनों को तुरंत संसाधित करेगी। इस संबंध में सेवाओं के सभी सुझावों की जांच की जाएगी, और न्यायालय के निर्देशों का बिना आपत्ति के विधिवत पालन किया जाएगा।

25. इस न्यायालय के निर्देश के अनुपालन में, मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश राज्य, जीओसी-इन-सी, सेंट्रल कमांड और भारतीय वायु सेना के प्रतिनिधियों के बीच एक बैठक आयोजित की गई। बैठक ने उपरोक्त उद्देश्य के लिए बनाई जाने वाली संगठनात्मक संरचना और प्रक्रियात्मक व्यवस्थाओं पर विचार किया।

26. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 17.01.2025 को एक उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति (सशस्त्र बलों के सेवारत सैन्य कर्मियों और शहीदों की शिकायतों और कल्याण को देखने के लिए) की रचना करने वाला शासनादेश शीघ्रता से निर्गत किया गया।

27. उक्त उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति, जिसकी अध्यक्षता मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार करते हैं, राज्य सरकार के विभिन्न अपर मुख्य सचिवों और प्रमुख सचिव रैंक के अधिकारियों और सदस्यों के रूप में जीओसी-इन-सी, सेंट्रल कमांड से गठित है।

28. अध्यक्ष के रूप में मुख्य सचिव के साथ वरिष्ठ राज्य अधिकारियों की उपस्थिति उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति को वर्तमान मुद्दों को संबोधित करने के लिए अच्छी तरह से सुसज्जित करती है। हालांकि, सेवाओं का प्रतिनिधित्व कुछ वांछित छोड़ देता है। इस संबंध में राज्य सरकार से एक प्रतिक्रिया मांगी गई थी।

29. राज्य के विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता, श्री सुभांशु शेखर द्वारा सहायता प्राप्त विद्वान अपर महाधिवक्ता, श्री अशोक मेहता द्वारा प्रस्तुत किया गया था कि राज्य सरकार उपरोक्त समिति में सेवाओं के हितों में आवश्यक रक्षा सेवाओं के किसी भी अन्य सदस्यों को शामिल करने के विचार के लिए खुली है। इस न्यायालय द्वारा सैन्य के साथ-साथ वायु सेना अधिकारियों से भी सुझाव आमंत्रित किए गए थे।

VIII. उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति: संरचना, बैठकें और कोरम

30. उक्त समिति में सेवा सदस्यों के प्रतिनिधित्व को राज्य सरकार की सहमति से पुनर्गठित किया जा रहा है। दिनांक 17.01.2025 के शासनादेश के अधीन गठित उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति की संरचना को सैन्य प्रतिनिधित्व की सीमा तक संशोधित किया गया है:

उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति के अध्यक्ष:

I. मुख्य सचिव, उ.प्र. सरकार उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति के अध्यक्ष हैं।

राज्य प्रशासन से समिति के सदस्य:

- I. अपर मुख्य सचिव, गृह विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार (राज्य सरकार का सदस्य अधिकारी);
- II. अपर मुख्य सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार;
- III. प्रमुख सचिव, राजस्व विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार;
- IV. प्रमुख सचिव, सैन्य कल्याण विभाग
- V. निदेशक, सैनिक कल्याण और पुनर्वास विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

भारतीय सेना से समिति के सदस्य:

1. जनरल ऑफिसर कमांडिंग इन-चीफ, सेंट्रल कमांड;

2. जनरल ऑफिसर कमांडिंग, मध्य उत्तर प्रदेश सब-एरिया;
3. ब्रिगेडियर प्रशासन, एचक्यू सेंट्रल कमांड;
4. सहायक सहायक जनरल, एचक्यू सेंट्रल कमांड;

भारतीय वायु सेना का प्रतिनिधित्व करने वाली समिति के सदस्य:

1. एयर ऑफिसर कमांडिंग-इन चीफ, सेंट्रल एयर कमांड (एओसी-इन-सी सीएसी);
2. वरिष्ठ अधिकारी-प्रभारी प्रशासन, सेंट्रल एयर कमांड (एसओए सीएसी)।

भारतीय नौसेना से समिति के सदस्य:

31. भारतीय नौसेना के हितों की रक्षा नौसेना मुख्यालय में सक्षम अधिकारी के साथ उचित परामर्श के बाद समिति में भारतीय सेना के अधिकारियों द्वारा की जाएगी। यह नौसेना के लिए इस संबंध में किसी भी अधिकारी को नियुक्त करने के लिए भी खुला है।

32. यह और स्पष्ट किया जाता है कि जीओसी-इन-सी, सेंट्रल कमांड, एओसी-इन सी सेंट्रल एयर कमांड और भारतीय नौसेना भविष्य में सेवा आवश्यकताओं के आधार पर सैन्य प्रतिनिधित्व की संरचना को (शक्ति बढ़ाए बिना) भिन्न कर सकते हैं।

33. मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश राज्य/समिति के अध्यक्ष भी, यदि आवश्यक हो तो समिति में राज्य अधिकारियों की संख्या बढ़ा सकते हैं।

34. पहली बैठक इस आदेश की प्रमाणित प्रति की प्राप्ति की तिथि से एक महीने की अवधि के भीतर आयोजित की जाएगी।

35. इस प्रकार गठित उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति आपसी परामर्श के बाद अपनी स्वयं की प्रक्रियाओं और बैठकों की आवृत्ति विकसित करेगी। बैठकें नियमित रूप से बुलाई जाएंगी और किसी भी पक्ष के कहने पर बुलाई जा सकती हैं।

36. बैठकों का कोरम निम्नानुसार होगा:

A). समिति के 50% सदस्य, बैठकों के लिए कोरम है।

B). कोरम को संतुष्ट करने के लिए सदस्य के रूप में रक्षा सेवाओं के कम से कम एक अधिकारी की उपस्थिति अनिवार्य होगी।

37. अध्यक्ष/मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश राज्य के पास उक्त समिति के उद्देश्य और प्रयोजन को प्राप्त करने के लिए अधिभावी शक्तियां होंगी।

IX. जिला स्तरीय समिति: संरचना, बैठकें और कोरम

38. जिला स्तरीय समिति का गठन, उत्तर प्रदेश राज्य के प्रत्येक जिले में निम्नानुसार किया जाएगा:

- ए. जिला मजिस्ट्रेट (अध्यक्ष);
- बी. पुलिस अधीक्षक/वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक/पुलिस आयुक्त/जिले के पुलिस प्रमुख;
- सी. कोई अन्य अधिकारी, जैसा कि जिला मजिस्ट्रेट द्वारा नामित किया जा सकता है;
- डी. स्थानीय सैन्य अधिकारियों के प्रतिनिधियों को सक्षम मुख्यालय द्वारा नामित किया जा सकता है।

39. जिला स्तरीय समितियों की पहली बैठक इस आदेश की प्रमाणित प्रति की प्राप्ति की तिथि से एक महीने के भीतर आयोजित की जाएगी।

40. इस प्रकार गठित जिला स्तरीय समितियां आपसी परामर्श के बाद अपनी स्वयं की प्रक्रियाओं और बैठकों की आवृत्ति विकसित करेंगी। बैठकें नियमित रूप से बुलाई जाएंगी और किसी भी पक्ष के कहने पर बुलाई जा सकती हैं।

41. बैठकों का कोरम निम्नानुसार होगा:

- ए). समिति के 50% सदस्य, बैठकों के लिए कोरम है।
- बी). कोरम को संतुष्ट करने के लिए सदस्य के रूप में रक्षा सेवाओं के कम से कम एक अधिकारी की उपस्थिति अनिवार्य होगी।

X. अंतर सेवा समन्वय:

42. तीनों सेवाओं को सेवारत कर्मियों के पृथक रह रहे परिवारों की भलाई को सुरक्षित करने के लिए पूर्ण अंतर सेवा समन्वय स्थापित करना चाहिए। शांति में समन्वय युद्ध में तालमेल का अग्रदूत है। तीनों सेवाओं को अपने कमांडिंग ऑफिसरों के माध्यम से विभिन्न सेवारत सशस्त्र बल कर्मियों के प्रत्यावेदनों/शिकायतों को संबंधित समितियों को भेजने के लिए उचित एसओपी बनाने चाहिए। देश में सभी कमांडिंग ऑफिसरों और सैन्य कर्मियों को उपरोक्त समितियों के अस्तित्व और उनके उद्देश्य के बारे में विधिवत सूचित किया जाए।

XI. निष्कर्ष:

43. उक्त उच्च शक्ति प्राप्त राज्य स्तरीय समिति को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा बनाया गया मॉडल देश के अन्य राज्यों के लिए उत्कृष्टता का मानदंड और एक टेम्पलेट बने।

44. न्यायालय मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ द्वारा लिए गए रुख और राज्य के लिए विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता श्री सुभांशु शेखर द्वारा सहायता प्राप्त विद्वान अपर महाधिवक्ता, श्री अशोक मेहता द्वारा प्रदान की गई सहायता की प्रशंसा करना चाहता है। उनके रचनात्मक दृष्टिकोण के कारण सैनिकों से पृथक रह रहे परिवारों और शहीदों के रिश्तेदारों के कल्याण के कार्य को एक बड़ी प्रोत्साहन मिला है।

45. विभिन्न मुद्दों की विवेचना करने में न्यायालय की सहायता करने में मेजर स्टीव बैरेटो, ओआईसी, विधि प्रकोष्ठ एचक्यू पूर्व यूपी और एमपी सब एरिया की सहायता की अत्यधिक सराहना की जाती है। उनके योगदान को सैन्य अधिकारियों द्वारा नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

46. इस आदेश की प्रतियां विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल ऑफ इंडिया द्वारा चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ, चीफ ऑफ आर्मी स्टाफ, चीफ ऑफ एयर स्टाफ, चीफ ऑफ नेवल स्टाफ को अग्रेतर कार्रवाई के लिए, यदि कोई हो, और देश के अन्य राज्यों में उपरोक्त उत्तर प्रदेश मॉडल ऑफ हाई पावर्ड स्टेट लेवल कमेटी को दोहराने की व्यवहार्यता की जांच करने के लिए भेजी जाएं।

47. विद्वान अपर महाधिवक्ता इस आदेश को मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ को सूचित करें।

48. ओआईसी, विधि प्रकोष्ठ एचक्यू पूर्व यूपी और एमपी सब एरिया को इस आदेश की एक प्रति कमांडिंग ऑफिसर 20वीं राजपुताना राइफल्स को सूचित करनी है।

49. रिट याचिका तदनुसार निस्तारित की जाती है।

(2025) 2 ILRA 518

मूल क्षेत्राधिकार

दीवानी पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 17.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति चंद्र कुमार राय

रिट-बी संख्या 4491 सन् 1999

लालसा यादव

...याचिकाकर्ता

बनाम

राजस्व परिषद व अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

श्री आर.पी. यादव

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

श्री तरुण गौड़, स्थायी अधिवक्ता

दीवानी विधि-उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम, 1901-राजस्व अभिलेखों में नाम दर्ज-विवादित भूखंड को ग्राम सभा के नाम पर दर्ज करने का आदेश पारित-याचिकाकर्ता द्वारा पुनरीक्षण योजित-यह कहते हुए स्वीकार किया गया कि चकबंदी अधिकारी का आदेश अंतिम हो चुका है-विपक्षी ने राजस्व परिषद के समक्ष पुनरीक्षण योजित किया-अपर आयुक्त के आदेश को निरस्त किया गया-कि आयुक्त पुनरीक्षण को स्वीकार नहीं कर सकता बल्कि वह पुनरीक्षण को स्वीकार या खारिज करने के लिए राजस्व परिषद को संदर्भ दे सकता है-अपर आयुक्त के क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधि के अनुसार है-उ.प्र. अधिनियम संख्या XX सन् 1997 द्वारा उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम में किए गए संशोधन की प्रवर्तन तिथि 18.8.1997 है और वर्तमान मामले में पुनरीक्षण 3.11.1997 को योजित किया गया है-राजस्व परिषद को संदर्भित करने के स्थान पर गुणागुण के आधार पर पुनरीक्षण का निर्णय करने में कोई अवैधता नहीं है।

रिट याचिका स्वीकृत। (ई-9)

उद्धृत निर्णय की सूची:

राम कैलाश यादव बनाम उ.प्र. राज्य व अन्य, 2002(93) RD 236

(माननीय न्यायमूर्ति चंद्र कुमार राय द्वारा उद्धोषित)

दीवानी विविध पक्षकार संयोजन आवेदन संख्या-8/2024 पर आदेश

1. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।
2. पक्षकार संयोजित करने का कोई आधार नहीं बनता।
3. आवेदन निरस्त किया जाता है।

रिट याचिका पर आदेश

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री आर.पी. यादव और राज्य-प्रतिवादियों के विद्वान स्थायी अधिवक्ता, श्री तरुण गौड़ को सुना गया।
2. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता के पिता जंगी यादव को भूखंड संख्या 228, 117, 119, 120, 121 और 122 का पट्टा आवंटित किया गया था। याचिकाकर्ता के पिता के पक्ष में निष्पादित पट्टे के आधार पर, उनका नाम तदनुसार केवल भूखंड संख्या 228 के संबंध में राजस्व अभिलेखों में दर्ज किया गया

था लेकिन शेष भूखंडों पर याचिकाकर्ता के पिता का नाम दर्ज नहीं किया गया, तदनुसार, उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन कार्यवाही में, राजस्व अधिकारी द्वारा याचिकाकर्ता के पिता का नाम दर्ज करने के लिए आदेश पारित किया गया लेकिन बाद में आदेश वापस ले लिया गया। प्रश्नगत गांव को 27.6.1981 को उ.प्र. चकबंदी अधिनियम, 1953 (इसके बाद "उ.प्र. सी.एच. अधिनियम" के रूप में संदर्भित) की धारा 4(2) के अधीन जारी अधिसूचना द्वारा चकबंदी कार्यवाही के अधीन लाया गया था। मूल वर्ष की प्रविष्टि के विरुद्ध, याचिकाकर्ता के पिता द्वारा प्रश्नगत भूखंड के संबंध में उ.प्र. सी.एच. अधिनियम की धारा 9(ए)2 के अधीन आपत्ति योजित की गई थी। चकबंदी अधिकारी ने दिनांक 25.9.1986 के आदेश द्वारा, उनके पक्ष में निष्पादित पट्टे के आधार पर याचिकाकर्ता के पिता जंगी यादव का नाम प्रश्नगत भूखंड पर दर्ज करने का निर्देश दिया। रिट याचिका के प्रस्तर संख्या 8 में उल्लेख किया गया है कि ग्राम पंचायत/भूमि प्रबंधन समिति द्वारा दिनांक 25.9.1986 के चकबंदी अधिकारी के आदेश के विरुद्ध कोई अपील और पुनरीक्षण योजित नहीं किया गया है। सी.एच. फॉर्म संख्या 45 में, याचिकाकर्ता के पिता का नाम प्रश्नगत भूखंड पर दर्ज किया गया था। याचिकाकर्ता के पिता की वर्ष 1990 में मृत्यु हो गई और याचिकाकर्ता के पिता की मृत्यु के बाद, याचिकाकर्ता और उसके भाइयों को प्रश्नगत भूखंड पर दर्ज किया गया है। गांव सराय हाजी के निवासी साहबदीन द्वारा दिनांक 26.6.1997 को जिलाधिकारी/जिला उप-चकबंदी निदेशक के समक्ष एक आवेदन योजित किया गया था, जिसमें प्रार्थना की गई थी कि उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन वाद संख्या-45 का अभिलेख मंगाया जाए और याचिकाकर्ता के पिता के पक्ष में की गई प्रविष्टि को निरस्त किया जाए। मुख्य राजस्व अधिकारी ने दिनांक 24.7.1997 के आदेश द्वारा विवादित भूखंड को ग्राम सभा के नाम पर दर्ज करने का निर्देश दिया। याचिकाकर्ता ने रिट याचिका संख्या-34748 सन् 1997 के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष दिनांक 24.7.1997 के आदेश को चुनौती दी, जिसे इस न्यायालय ने वैकल्पिक उपचार के आधार पर दिनांक 20.10.1997 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया। याचिकाकर्ता ने 3.11.1997 को आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण के माध्यम से दिनांक 24.7.1997 के आदेश को चुनौती दी। उपर्युक्त पुनरीक्षण को अपर आयुक्त द्वारा दिनांक 12.5.1998 के आदेश द्वारा सुना और स्वीकार किया गया, इस आधार पर दिनांक 24.7.1997 के आदेश को निरस्त करते हुए कि चकबंदी अधिकारी ने हक कार्यवाही में याचिकाकर्ता के पिता का नाम प्रश्नगत भूखंड पर दर्ज करने का आदेश पारित किया था और आदेश अंतिम हो गया है। दिनांक 12.5.1998 के आदेश के विरुद्ध, साहबदीन ने राजस्व परिषद के समक्ष पुनरीक्षण योजित किया और राजस्व परिषद ने दिनांक 17.8.1998 के आदेश द्वारा दिनांक 12.5.1998 के अपर आयुक्त के आदेश को इस आधार पर निरस्त कर दिया कि अधिनियम के अधीन निहित प्रावधानों के दृष्टिगत, आयुक्त द्वारा पारित आदेश बना नहीं रह सकता क्योंकि आयुक्त पुनरीक्षण को स्वीकार नहीं कर सकता बल्कि वह पुनरीक्षण को स्वीकार या खारिज करने के लिए राजस्व परिषद को संदर्भित कर सकता है। अतः, याचिकाकर्ता की ओर से निम्नलिखित अनुतोष के लिए वर्तमान रिट याचिका:-

"1. इस रिट याचिका के संलग्नक संख्या 14 के रूप में संलग्न प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा पारित आदेश दिनांक 17.8.1998 को खंडित करते हुए उत्प्रेषण की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।

2. प्रतिवादी को आदेश देते हुए कि वह उपर्युक्त संदर्भित किसी भी तरीके को प्रभावी न करे, परमादेश की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी करें।"

3. इस न्यायालय ने 10.5.1999 को मामले को सुन और आक्षेपित आदेश दिनांक 17.8.1998 के प्रभाव और संचालन को स्थगित कर दिया। आदेश दिनांक 10.5.1999 के अनुसरण में, राज्य और गांव सभा द्वारा कोई प्रति-शपथपत्र योजित नहीं किया गया है।

4. इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियम, 1952 के अध्याय XII नियम 4 के अधीन प्रतिवादी संख्या 4 के विरुद्ध वर्तमान याचिका को खारिज कर दिया गया था, जो प्रकरण में शिकायतकर्ता था, इस प्रकार, प्रस्तुत याचिका को गुणागुण के आधार पर तय करने में कठिनाई है क्योंकि रिट याचिका उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन कार्यवाही से उत्पन्न होती है और राज्य/ग्राम पंचायत वर्तमान याचिका में पक्षकार हैं।

5. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उ.प्र. सी.एच. अधिनियम की धारा 9-ए(2) के अधीन स्वामित्व कार्यवाही में चकबंदी अधिकारी द्वारा पारित दिनांक 25.9.1986 के आदेश के दृष्टिगत, उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन कार्यवाही में याचिकाकर्ता की प्रविष्टि को हटाने के लिए पारित आदेश विधि में बना नहीं रह सकता। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि अपर आयुक्त ने मामले के प्रत्येक पहलू पर विचार करने के बाद, पुनरीक्षण को स्वीकार किया है और उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन कार्यवाही में पारित आदेश को निरस्त कर दिया है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि पुनरीक्षण आयुक्त के समक्ष योजित किया गया था और अधिनियम में किए गए संशोधन के बाद, आयुक्त राजस्व परिषद के समक्ष संदर्भ देने के बजाय गुणागुण के आधार पर पुनरीक्षण को स्वीकार करने के लिए सक्षम था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि राजस्व परिषद ने अवैध रूप से आदेश को निरस्त कर दिया है और मामले को फिर से आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण का निर्णय करने के लिए प्रतिप्रेषित कर दिया है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि रिट याचिका के प्रस्तर संख्या 8 में विशिष्ट अभिकथन किया गया है कि चकबंदी अधिकारी द्वारा पारित आदेश अंतिम हो गया है क्योंकि किसी के द्वारा कोई अपील/पुनरीक्षण योजित नहीं किया गया है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि सी.एच. फॉर्म संख्या 45 रिट याचिका के साथ संलग्न है जिससे यह प्रदर्शित किया जा सके कि चकबंदी अधिकारी द्वारा पारित आदेश के आधार पर याचिकाकर्ता के पिता को प्रश्नगत भूखंड पर दर्ज किया गया था, इस प्रकार, अपर आयुक्त के आदेश में कोई अवैधता नहीं है, जिसने याचिकाकर्ता द्वारा योजित पुनरीक्षण को स्वीकार किया। उन्होंने प्रस्तुत किया कि राजस्व परिषद द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को निरस्त किया जाना चाहिए और दिनांक 12.5.1998 को अपर आयुक्त द्वारा पारित आदेश की पुष्टि की जानी चाहिए।

6. दूसरी ओर, विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि दिनांक 17.8.1998 के आक्षेपित आदेश के विरुद्ध किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है क्योंकि आक्षेपित आदेश के अधीन केवल मामले को अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार पुनरीक्षण का निर्णय करने के लिए आयुक्त के समक्ष प्रतिप्रेषित किया गया है। उन्होंने

प्रस्तुत किया कि मुख्य राजस्व अधिकारी ने याचिकाकर्ता की प्रविष्टि को सही ढंग से हटा दिया है, जिसे अपर आयुक्त द्वारा पुनरीक्षण में अवैध रूप से निरस्त कर दिया गया था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि मामले में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य है।

7. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार किया है और अभिलेखों का अवलोकन किया है।

8. इस तथ्य के बारे में कोई विवाद नहीं है कि उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम की धारा 33/39 के अधीन कार्यवाही में, मुख्य राजस्व अधिकारी द्वारा 24.7.1997 को आदेश पारित किया गया था लेकिन पुनरीक्षण में मुख्य राजस्व अधिकारी द्वारा पारित आदेश को निरस्त कर दिया गया और याचिकाकर्ता के पिता की प्रविष्टि को बनाए रखा गया। इस तथ्य के बारे में भी कोई विवाद नहीं है कि राजस्व परिषद ने अपर आयुक्त के आदेश को निरस्त कर दिया है और मामले को फिर से आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण का निर्णय करने के लिए प्रतिप्रेषित कर दिया है।

9. प्रकरण में निहित विवाद की विवेचना करने के लिए, अपर आयुक्त द्वारा दर्ज निष्कर्ष का अवलोकन प्रासंगिक होगा जो निम्नानुसार है:-

न्यायालय अपर आयुक्त आजमगढ़ मण्डल

आजमगढ़

निगरानी संख्या 465/ए सन् 1997 जनपद

आजमगढ़

अन्तर्गत धारा 219 भू-राजस्व अधिनियम

लालता आदि बनाम गाँव सभा

निर्णय

प्रस्तुत निगरानी अवर न्यायालय के आदेश दिनांक 24/7/97 के विरुद्ध दिनांक 3/11/97 को दायर की गयी है। संक्षेप में विवाद के तथ्य इस प्रकार हैं।

उभय पक्ष के विद्वान अधिवक्ता की बहस सुनी गयी। पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि पुनरीक्षणकर्ता के पक्ष में आराजीयातनेजाई का पट्टा दिनांक 15/5/64 को हुआ था। परगनाधिकारी के द्वारा दाखिल खारिज का आदेश दिनांक 30/9/64 को हुआ था। एक पट्टे के कुछ नम्बरान पर जंगी का नाम अंकित होने से छूट गया था। जिसके लिए जंगी ने धारा 33/39 एल.आर.एक्ट के अन्तर्गत कागजात दुरुस्तगी का प्रार्थनापत्र परगनाधिकारी के समक्ष दिया जिस पर दिनांक 21/1/81 को आदेश पारित हो गया। इसके विरुद्ध राममूरत ने पुनरीक्षण किया जो चकबंदी के कारण दिनांक 10/12/81 को अबेट हो गयी। फिर चकबंदी अधिकारी के द्वारा दिनांक 25/9/8/86 को जंगी के पक्ष में आदेश पारित हुआ। साहबदीन ने धारा 52 के प्रकाशन के वाद

मुख्य राजस्व अधिकारी के समक्ष दिनांक 26/6/97 को एक प्रार्थनापत्र दिया। मुख्य राजस्व अधिकारी ने गलत तरीके से जंगी के पक्ष में चला आ रहा इंड्राज़ दिनांक 24/7/97 को निरस्त कर दिया। जबकि चकबंदी अधिकारी द्वारा उनके पक्ष में जो आदेश पारित हुआ था उसकी कोई अपील या पुनरीक्षण किसी न्यायालय में नहीं की गयी थी। साहबदीन के प्रार्थनापत्र दिनांक 26/6/97 के सम्बन्ध में कोई नोटिस जंगी अथवा उनके वारिसान को नहीं दी गयी। उक्त आधार पर विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि मुख्य राजस्व अधिकारी का आदेश दिनांक 24/7/97 क्षेत्राधिकार के बाहर पारित किया गया आदेश है। जो निरस्त किये जाने योग्य है।

इसके प्रति उत्तर में उत्तरवादी के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि अवर न्यायालय का आदेश दिनांक 24/7/97 बिल्कुल सही है। पुनरीक्षणकर्ता को सुनने की आवश्यकता नहीं थी। क्योंकि अराजीनेजाई से सम्बन्धित वाद पहले अबेट हो गया था। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी कहा कि पट्टे के आधार पर जंगी का नाम दर्ज करने का आदेश हुआ था। जिसके विरुद्ध पुनरीक्षण लम्बित होने के ही दौरान चकबंदी अधिकारी की धारा 4 के अन्तर्गत अधिसूचना जारी हुई अतः विवादित आराजी से जंगी का नाम खारिज करने का आदेश दिया जाना आवश्यक था। जिसे अवर न्यायालय ने दिनांक 24/7/97 को पारित किया है।

उभय पक्ष को सुनने के बाद अवर न्यायालय की वाद पत्रावली के अवलोकन से स्पष्ट है कि पट्टे के आधार पर पुनरीक्षणकर्ता के पिता जंगी ने धारा 33/39 के अन्तर्गत छूटे नम्बरान पर अपना नाम अंकित करने का प्रार्थनापत्र दिया और कहा कि परगनाधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 30/9/64 के संदर्भ में आराजी नेजाई पर भूमिधर अंकित किया जाय। अवर न्यायालय ने दिनांक 21/1/81 को उक्त प्रार्थनापत्र के संदर्भ में कागजात दुरुस्तगी का आदेश पारित किया। जिसके विरुद्ध आयुक्त न्यायालय गोरखपुर में पुनरीक्षण संख्या 252/192/ए 1981 राममूरत बनाम जंगी दायर हुई जो धारा 4(2) जोत चकबंदी अधिनियम के अन्तर्गत प्रकाशन के कारण दिनांक 10/12/81 को अबेट हो गयी। इसके बाद जंगी ने चकबंदी न्यायालय में चकबंदी अधिनियम की धारा 9क(2) के अन्तर्गत आपत्ति दाखिल किया। जिसमें दिनांक 25/9/86 को यह आदेश पारित हुआ कि जंगी का नाम उक्त आराजीयात पर पट्टे के आधार पर दर्ज किया गया था अतः नायब तहसीलदार की रिपोर्ट दिनांक 28/1/80 तथा उसके आधार पर पारित परगनाधिकारी के आदेश दिनांक 21/1/81 को सत्य मानते हुए भू-अभिलेखों में समन्वय करने का आदेश दिया तथा तदनुसार अमलदरामद का आदेश भी दिया। इस आदेश के विरुद्ध कोई भी अपील अथवा पुनरीक्षण किसी के द्वारा दाखिल नहीं की गयी। धारा 52 के प्रकाशन के बाद जिलाधिकारी के न्यायालय में साहबदीन ने दिनांक 26/6/97 को प्रार्थनापत्र देकर जंगी के नाम दर्ज इन्नाज को निरस्त करने का निवेदन किया। जिलाधिकारी ने मुख्य राजस्व अधिकारी को जाँच करके आवश्यक कार्यवाही करने के लिए दिनांक 27/6/97 को लिखा। मुख्य राजस्व अधिकारी ने प्रश्नगत आदेश दिनांक 24/7/97 को पारित करके जंगी के नाम इंड्राज़ निरस्त कर दिया। जबकि चकबंदी अधिकारी के आदेश दिनांक 25/9/86 की कोई अपील अथवा पुनरीक्षण नहीं की गयी थी। मुख्य राजस्व अधिकारी उप-संचालक चकबंदी नहीं होते हैं। चकबंदी अधिकारी का आदेश दिनांक 25/9/86 फजी होना साबित नहीं है। उक्त आदेश को निरस्त करने का अधिकार मुख्य राजस्व अधिकारी को नहीं था। चकबंदी अधिकारी का आदेश दिनांक 25/9/86 कायम रहने के दौरान आराजीनेजाई पर जंगी अथवा उनके वारिसान का नाम निरस्त करने का आदेश दिया जाना उचित नहीं

है। साहबदीन के प्रार्थनापत्र दिनांक 26/6/97 के सम्बन्ध में जंगी अथवा उनके वारिसान को नोटिस भी नहीं भेजी गयी है। उपरोक्त आधार पर अवर न्यायालय का आदेश दिनांक 24/7/97 निरस्त किये जाने योग्य है।

आदेश

निगरानी स्वीकार की जाती है। अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 24/7/97 निरस्त किया जाता है। आदेश की प्रति के साथ अवर न्यायालय की पत्रावली वापस भेजी जाय। यहाँ की पत्रावली दाखिल दफ्तर हो। आज यह निर्णय मेरे द्वारा खुले न्यायालय में हस्ताक्षरित दिनांकित कर उद्घोषित किया गया।
(सत्य-प्रतिलिपि)

ह. अपठनीय

12/5/98

अपर आयुक्त

ह. अपठनीय

12/5/98 अपर आयुक्त।

10. अपर आयुक्त द्वारा दर्ज तथ्य के निष्कर्ष का अवलोकन पूरी तरह से प्रदर्शित करता है कि याचिकाकर्ता के पिता को स्वामित्व कार्यवाही में प्रश्नगत भूखंड पर दर्ज करने का आदेश दिया गया था, इस प्रकार, प्रश्नगत भूखंड के संबंध में सारांश कार्यवाही की शुरुआत विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। अपर आयुक्त ने याचिकाकर्ता द्वारा योजित पुनरीक्षण को सुना है और पुनरीक्षण को स्वीकार किया है, मुख्य राजस्व अधिकारी के आदेश को निरस्त करते हुए। अपर आयुक्त द्वारा क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधि के अनुसार है, इस प्रकार, मामले को फिर से अपर आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण का निर्णय करने के लिए प्रतिप्रेषित करने का कोई अवसर नहीं था।

11. जहां तक उ.प्र. अधिनियम संख्या XX सन् 1997 द्वारा उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम में किए गए संशोधन का संबंध है, संशोधन की प्रवर्तन तिथि 18.8.1997 है और प्रस्तुत मामले में पुनरीक्षण 3.11.1997 को आयुक्त के समक्ष योजित किया गया है, इस प्रकार, राजस्व परिषद के समक्ष संदर्भ देने के जगह गुणागुण के आधार पर पुनरीक्षण का निर्णय करने में कोई अवैधता नहीं थी। आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण योजित करने की तिथि दिनांक 12.5.1998 के पुनरीक्षण आदेश के पहले प्रस्तर में उल्लिखित है, जो प्रदर्शित करती है कि पुनरीक्षण उ.प्र. अधिनियम संख्या XX सन् 1997 द्वारा संशोधन के बाद योजित किया गया था।

12. इस न्यायालय ने 2002(93) RD 236, राम कैलाश यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य में उ.प्र. अधिनियम संख्या XX सन् 1997 द्वारा किए गए संशोधन के दायरे पर विचार किया है और निर्णीत किया है कि आयुक्त गुणागुण के आधार पर पुनरीक्षण का निर्णय कर सकता है भले ही संदर्भ/पुनरीक्षण 18.8.1997 से पहले योजित किया गया हो, लेकिन 18.8.1997 तक संदर्भ नहीं दिया गया हो। राम कैलाश यादव (उपरोक्त) में दिए गए निर्णय का प्रस्तर संख्या 6 अवलोकन के लिए प्रासंगिक होगा, जो निम्नानुसार है:-

"6. उपर्युक्त प्रावधान से, यह स्पष्ट है कि पहले धारा 219 के अधीन राजस्व परिषद द्वारा पुनरीक्षण की कोई शक्ति का प्रयोग नहीं किया गया था और धारा 218 के अधीन अपर आयुक्त, कलेक्टर, रिकॉर्ड अधिकारी या बंदोबस्त अधिकारी को अपने अधीनस्थ किसी अधिकारी द्वारा तय किए गए किसी मामले या की गई कार्यवाही के रिकॉर्ड को मांगने और जांच करने का क्षेत्राधिकार था, इस उद्देश्य से कि वह स्वयं को पारित आदेश की वैधता या औचित्य और कार्यवाही की नियमितता के बारे में संतुष्ट कर सके, और यदि यह राय में था कि ऐसे अधीनस्थ अधिकारी द्वारा की गई कार्यवाही या पारित आदेश को बदला जाना चाहिए, निरस्त किया जाना चाहिए या अपास्त किया जाना चाहिए, तो राजस्व परिषद को संदर्भ देना आवश्यक था। उ.प्र. अधिनियम संख्या XX सन् 1997 द्वारा संदर्भ के प्रावधान को हटाने से, अब धारा 219 को प्रतिस्थापित किया गया है, जो राजस्व परिषद और आयुक्त या अपर आयुक्त या कलेक्टर या रिकॉर्ड अधिकारी या बंदोबस्त अधिकारी दोनों को पुनरीक्षण की शक्ति देता है। संदर्भ की पूर्व शक्ति को भी हटा दिया गया है और पुनरीक्षण की शक्ति दी गई है। अब अपर आयुक्त, यदि वह संतुष्ट है कि अधीनस्थ अधिकारी द्वारा पारित कोई आदेश निरस्त किया जाना आवश्यक है, तो वह पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग कर सकता है और राजस्व परिषद को संदर्भ देने की कोई आवश्यकता नहीं है। जिस समय वर्ष 1992 में पुनरीक्षण योजित किया गया था, उक्त पुनरीक्षण उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम की धारा 218 के अधीन संदर्भ की शक्ति के अनुप्रयोग में था। उ.प्र. अधिनियम संख्या XX सन् 1997 की धारा 10 ने केवल उन संदर्भों को सुरक्षित रखा है, जो 18.8.1997 से पहले ही राजस्व परिषद को संदर्भित किए गए थे। इस प्रकार, भले ही संदर्भ धारा 218 के अधीन 18.8.1997 से पहले योजित किया गया हो, जिसमें राजस्व परिषद को कोई संदर्भ नहीं दिया गया था, वह धारा 218 के अधीन संदर्भ के रूप में बना नहीं रह सकता था। अब आयुक्त में धारा 219 के अधीन पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार की शक्ति निहित की गई है। पुनरीक्षण संख्या 41 सन् 1992 में जो आयुक्त के समक्ष लंबित है, आयुक्त में अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए किसी क्षेत्राधिकार की कमी नहीं है। अब क्षेत्राधिकार का प्रयोग धारा 218 के बजाय धारा 219 के अधीन किया जाना है। केवल इसलिए कि पुनरीक्षण के जापन में पहले धारा 218 का उल्लेख किया गया था, यह आयुक्त को उ.प्र. भू-राजस्व अधिनियम की धारा 219 के अधीन अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से नहीं रोकेगा।"

13. यह उल्लेख करना भी महत्वपूर्ण है कि राज्य द्वारा पिछले 25 वर्षों से अधिक समय से कोई प्रति-शपथपत्र योजित नहीं किया गया है, इस प्रकार, उपर्युक्त रूप में रिट याचिका में किए गए अभिकथन के आधार पर प्रस्तुत याचिका का निर्णय करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है।

14. तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, विशेष रूप से, स्वामित्व कार्यवाही में चकबंदी अधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 25.9.1986, जो अंतिम हो गया है, दिनांक 12.5.1998 को अपर आयुक्त द्वारा पारित आदेश में कोई अवैधता नहीं है, तदनुसार, प्रतिवादी संख्या 1/राजस्व परिषद द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 17.8.1998 आदेश निरस्त किए जाने योग्य है और इसे निरस्त किया जाता है।

15. रिट याचिका स्वीकार की जाती है और दिनांक 12.5.1998 को अपर आयुक्त द्वारा पारित आदेश की पुष्टि की जाती है।

16. व्यय के रूप में कोई आदेश नहीं।

(2025) 2 ILRA 524

मूल क्षेत्राधिकार

दीवानी पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 19.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति शेखर बी. सराफ

माननीय न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित

रिट सी संख्या-3948 सन् 2025

रजनीता

...याचिकाकर्ता

बनाम

भारत संघ व अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

श्री मोहम्मद दानिश, मोहम्मद इलियास

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

ए.एस.जी.आई., मु.स्था.अधि., श्री विवेक कुमार सिंह

(ए) संवैधानिक विधि-पीड़िता प्रतिकर-तेजाब हमले की पीड़िता को अतिरिक्त मुआवजे का भुगतान न करना-प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष-कार्यकारी निर्देश-अधिकारियों के लिए जनता की सेवा करने के अपने प्राथमिक कर्तव्य को पूरा करना आवश्यक है, विशेष रूप से उन लोगों की, जो हिंसा के जघन्य कृत्यों द्वारा अपंग हो गए हैं-राज्य सरकार को सभी जिलाधिकारियों को एक परिपत्र जारी करने का निर्देश दिया गया जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि भविष्य में इस प्रकार की देरी दोहराई न जाए-शिथिल दृष्टिकोण-अक्षमता और करुणा की कमी-युद्ध स्तर पर-अधिकारियों को निर्देश दिया गया कि वे निर्धारित समय के भीतर तेजाब हमले की पीड़िता को अतिरिक्त मुआवजे का भुगतान सुनिश्चित करें। (प्रस्तर -6,7, 8)

याचिकाकर्ता, वर्ष 2013 में तेजाब हमले की पीड़िता-कुछ मुआवजा प्राप्त किया लेकिन प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष के अधीन देय रु.1,00,000/- का अतिरिक्त मुआवजा नहीं मिला-भारत संघ के निर्देशों के बाद भी, जिलाधिकारी द्वारा आवश्यक प्रोफार्मा और अभिलेखों के संबंध में कोई कार्यवाही नहीं की गई। (प्रस्तर-2 से 7)

निर्णय:-न्यायालय ने अधिकारियों को निर्देश दिया कि वे भारत संघ द्वारा याचिकाकर्ता को अतिरिक्त मुआवजे के शीघ्र भुगतान को सुनिश्चित करें और राज्य सरकार के लिए अनिवार्य किया कि वह भविष्य में देरी को रोकने के लिए सभी जिलाधिकारियों को एक परिपत्र जारी करे। (प्रस्तर- 6 से 8)

याचिका निस्तारित। (ई-7)

(माननीय न्यायमूर्ति शेखर बी. सराफ और माननीय न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित द्वारा उद्घोषित)

1. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित अधिवक्ता, मोहम्मद इलियास, भारत संघ की ओर से उपस्थित अधिवक्ता, श्री विवेक कुमार सिंह और राज्य-प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित स्थायी अधिवक्ता, श्री के.के. सिंह को सुना गया।
2. प्रस्तुत रिट याचिका में, याचिकाकर्ता प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष के अधीन तेजाब हमले की पीड़िताओं को देय रु.1,00,000/- के अतिरिक्त मुआवजे को प्राप्त करने के लिए इधर से उधर भटक रही है।
3. अभिलेखों के अवलोकन पर, यह प्रतीत होता है कि दिनांक 3 सितंबर, 2024 के एक पत्र द्वारा, अवर सचिव, भारत सरकार, गृह मंत्रालय, महिला सुरक्षा प्रभाग, नई दिल्ली ने जिलाधिकारी, मेरठ को संलग्न प्रोफार्मा में विशिष्ट उत्तर प्रदान करने के लिए लिखा है, साथ ही याचिकाकर्ता और एक और पीड़िता पर तेजाब हमले की चिकित्सा रिपोर्ट और प्रथम सूचना रिपोर्ट की स्पष्ट प्रति के साथ।
4. राज्य-प्रतिवादियों की ओर से अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि उनके पास इस मामले में कोई निर्देश नहीं है।
5. यह प्रतीत होता है कि भारत संघ द्वारा लिखे गए पत्र के बाद भी, जिलाधिकारी, मेरठ द्वारा कोई उत्तर नहीं भेज गया है। हमें स्थिति अत्यंत चिंताजनक लगती है, क्योंकि मामला तेजाब हमले की पीड़िता को मुआवजे के संबंध में है।
6. यह ध्यान देने योग्य है कि तेजाब हमले की घटना वर्ष 2013 में हुई थी और याचिकाकर्ता द्वारा कुछ मुआवजा प्राप्त किया गया था। हालांकि, अभिलेखों से यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता को आवश्यक शल्य चिकित्सा और चिकित्सा सहायता का व्यय याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए मुआवजे से कहीं अधिक है। इसी के प्रकाश

में, अधिकारियों को यह सुनिश्चित करने के लिए निर्देश देना अनिवार्य हो जाता है कि भारत संघ द्वारा प्रदान किया जाने वाला अतिरिक्त मुआवजा याचिकाकर्ता को शीघ्रातिशीघ्र सौंपा जाना चाहिए।

7. जिलाधिकारी, मेरठ का वर्तमान शिथिल दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से अक्षमता और करुणा की कमी को इंगित करता है। अधिकारियों को लोगों की सेवा करने के अपने प्राथमिक कर्तव्य को पूरा करना आवश्यक है, विशेष रूप से उन लोगों की जो वर्तमान मामले की तरह हिंसा के जघन्य कृत्यों द्वारा अपंग हो गए हैं। हम राज्य अधिकारियों द्वारा कहीं अधिक तत्परता और सहानुभूति दिखाए जाने की अपेक्षा करेंगे। तदनुसार, राज्य सरकार को निर्देश दिया जाता है कि वह सभी जिलाधिकारियों को एक परिपत्र जारी करे जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि भविष्य में इस प्रकार की देरी दोहराई न जाए। इस न्यायालय के निबंधक (अनुपालन) को निर्देश दिया जाता है कि वह इस आदेश को प्रमुख सचिव (गृह), उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ को संप्रेषित करें।

8. वर्तमान मामले के संबंध में, जिलाधिकारी, मेरठ को निर्देश दिया जाता है कि वह आज की तिथि से एक सप्ताह की अवधि के भीतर दिनांक 3 सितंबर, 2024 के पत्र का अनुपालन सुनिश्चित करें। ऐसा अनुपालन किए जाने पर, भारत संघ के संबंधित विभाग को निर्देश दिया जाता है कि वह युद्ध स्तर पर कार्य करे और उसके बाद जिलाधिकारी, मेरठ से अभिलेख प्राप्ति की तिथि से छह सप्ताह के भीतर याचिकाकर्ता को अतिरिक्त मुआवजे का भुगतान करे।

9. उपरोक्त निर्देशों के साथ, रिट याचिका निस्तारित की जाती है।

10. इस आदेश को इस न्यायालय के निबंधक (अनुपालन) द्वारा गृह मंत्रालय, महिला सुरक्षा प्रभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली और जिलाधिकारी, मेरठ को भी संप्रेषित किया जाए।

(2025) 2 ILRA 526

मूल क्षेत्राधिकार

दीवानी पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 19.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति विक्रम डी. चौहान

रिट सी संख्या-7948 सन् 2019

संजीव कुमार

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

धर्मवीर सिंह

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि.

आपराधिक विधि-शस्त्र अधिनियम, 1959-धारा 17(1)(बी)-अनुज्ञापन अधिकारी लिखित आदेश द्वारा लाइसेंस को निरस्त कर सकता है, यदि अनुज्ञापन अधिकारी सार्वजनिक शांति की सुरक्षा या सार्वजनिक सुरक्षा के लिए लाइसेंस को निरस्त करना आवश्यक समझता है-जिलाधिकारी ने पुलिस को धमकी देने में हथियार के दुरुपयोग के कारण शस्त्र लाइसेंस को निरस्त कर दिया। उसी घटना के संबंध में प्राथमिकी दर्ज की गई। उक्त आपराधिक मामले में याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया और आरोप विरचित किए गए। याचिकाकर्ता के विरुद्ध आपराधिक वाद लंबित है। **निर्णय:** आपराधिक वाद में दर्ज निष्कर्षों का याचिकाकर्ता के शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण के संबंध में महत्वपूर्ण प्रभाव हो सकता है क्योंकि वर्तमान कार्यवाही सारांश कार्यवाही है। हालांकि, यदि मुकदमे में याचिकाकर्ता को दोषसिद्ध किया जाता है, तो वह शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण के लिए राज्य द्वारा लिए गए पक्ष को बल प्रदान कर सकता है। हालांकि, दोषमुक्ति का आदेश भी शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण को समान रूप से प्रभावित करेगा। शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण के संबंध में याचिकाकर्ता के बचाव को याचिकाकर्ता द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करके सिद्ध करना आवश्यक था। याचिकाकर्ता ने कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया, इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता कि याचिकाकर्ता ने आग्नेयास्त्र का दुरुपयोग नहीं किया है। यह भी प्रदर्शित नहीं किया गया कि वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक की रिपोर्ट गलत थी। आक्षेपित आदेश में कोई त्रुटि नहीं। (प्रस्तर 9, 11)

निरस्त। (ई-5)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

1. नागेश कुमार बनाम उ.प्र. राज्य व अन्य, रिट-सी संख्या 53252 सन् 2015
2. प्रताप उर्फ राम प्रताप बनाम उ.प्र. राज्य द्वारा प्रमुख सचिव गृह लखनऊ व अन्य, प्रकीर्ण एकल संख्या 28781 सन् 2017

(माननीय न्यायमूर्ति विक्रम डी. चौहान द्वारा उद्धोषित)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता और राज्य-प्रतिवादियों के विद्वान स्थायी अधिवक्ता को सुना गया।

2. रिट याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ता आयुक्त, अलीगढ़ मंडल, अलीगढ़ द्वारा पारित आदेश दिनांक 20.7.2018 और जिलाधिकारी, एटा द्वारा पारित आदेश दिनांक 29.5.2017 को चुनौती दे रहा है, जिसमें याचिकाकर्ता के आग्नेयास्त्र लाइसेंस को निरस्त किया गया है।

3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता का शस्त्र लाइसेंस जिलाधिकारी, एटा द्वारा पारित आदेश दिनांक 29.5.2017 के द्वारा निरस्त कर दिया गया था। शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण का आधार यह बताया गया कि याचिकाकर्ता ने पुलिस कर्मियों के साथ दुर्व्यवहार किया है और बैरियर चेकिंग पर चालान बुक को फाड़ दिया है और पुलिस को धमकाने के लिए अपने आग्नेयास्त्र का दुरुपयोग किया है। इस संबंध में, वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक, एटा द्वारा 3.11.2016 को एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी। दूसरी ओर याचिकाकर्ता ने अपना उत्तर प्रस्तुत किया कि वह एक होटल चला रहा है और पुलिस कर्मी याचिकाकर्ता के होटल पर आए और बिना पैसे दिए भोजन किया है। पुलिस कर्मी होटल में शराब पी रहे थे, जिस पर याचिकाकर्ता ने आपत्ति की। भोजन की कीमत की मांग की गई, जिसके परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता के विरुद्ध वर्तमान झूठा मामला दर्ज किया गया है।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय द्वारा **रिट-सी संख्या 53252 सन् 2015, नागेश कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य** में पारित निर्णय पर भरोसा किया है, यह प्रस्तुत करने के लिए कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध आपराधिक मामले की मात्र लंबितता आग्नेयास्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण का आधार नहीं होगी।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि उपर्युक्त घटना के संबंध में याचिकाकर्ता के विरुद्ध एक आपराधिक वाद, मुकदमा अपराध संख्या 368 सन् 2016, धारा 332, 353, 504, 506, 427 भा.दं.सं. के अधीन दर्ज किया गया था। अन्वेषण के बाद, एक आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया है और याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए हैं। हालांकि, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का एकमात्र तर्क यह है कि मात्र आपराधिक वाद का लंबित होना, शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण का आधार नहीं हो सकता।

6. विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने रिट याचिका का विरोध किया है और प्रस्तुत किया है कि आपराधिक मामले के लंबित रहने के आधार पर शस्त्र लाइसेंस को निरस्त नहीं किया गया है। याचिकाकर्ता पुलिस कर्मियों को धमका रहा था और बैरियर चेकिंग पर पुलिस की चालान बुक को फाड़ दिया है और अपने आग्नेयास्त्र से धमकी दी है। याचिकाकर्ता की ओर से उपर्युक्त कार्रवाई के परिणामस्वरूप आग्नेयास्त्र के दुरुपयोग के आधार पर आग्नेयास्त्र लाइसेंस का निरस्तीकरण हुआ है।

7. वर्तमान मामले में, देखा यह जाना है कि याचिकाकर्ता का शस्त्र लाइसेंस जिलाधिकारी, एटा द्वारा दिनांक 29.5.2017 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया है और उसके बाद, याचिकाकर्ता की अपील को भी आयुक्त, अलीगढ़ मंडल, अलीगढ़ द्वारा पारित आदेश दिनांक 20.7.2018 के द्वारा खारिज कर दिया गया है।

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की प्रस्तुति यह है कि याचिकाकर्ता का शस्त्र लाइसेंस आपराधिक मामले के लंबित रहने के आधार पर निरस्त किया गया है, जो इस न्यायालय द्वारा *नागेश कुमार (उपरोक्त)* में निर्धारित विधि के विपरीत है। उपर्युक्त निर्णय ने *प्रताप उर्फ राम प्रताप बनाम उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा प्रमुख सचिव गृह लखनऊ व अन्य, प्रकीर्ण एकल संख्या 28781 सन् 2017* में पारित निर्णय पर भरोसा किया था।

8. जिलाधिकारी, एटा द्वारा पारित दिनांक 29.5.2017 के आदेश का अवलोकन मात्र यह दर्शाएगा कि जिलाधिकारी, एटा ने पुलिस को धमकी देने में हथियार के दुरुपयोग के कारण याचिकाकर्ता के शस्त्र लाइसेंस को निरस्त किया है। यद्यपि, आदेश में, याचिकाकर्ता के विरुद्ध लंबित आपराधिक मामले का संदर्भ दिया गया है। हालांकि, शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण का आदेश स्वयं दर्ज करता है कि याचिकाकर्ता कोई दोषमुक्ति का आदेश नहीं दिखा सका है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा स्वीकार किया गया है कि आपराधिक मामले में याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया है और आरोप विरचित किए गए हैं। प्रथम सूचना रिपोर्ट उसी घटना के संबंध में थी, जिसके परिणामस्वरूप शस्त्र लाइसेंस का निरस्तीकरण हुआ।

9. आगे यह देखा जाना है कि आपराधिक मामले में दर्ज निष्कर्षों का याचिकाकर्ता के शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण के संबंध में महत्वपूर्ण प्रभाव हो सकता है, क्योंकि वर्तमान कार्यवाही सारांश कार्यवाही है। हालांकि, यदि मुकदमे में याचिकाकर्ता को दोषसिद्ध किया जाता है, तो वह शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण के लिए राज्य द्वारा लिए गए पक्ष को बल प्रदान कर सकता है। हालांकि, दोषमुक्ति का आदेश भी शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण को समान रूप से प्रभावित करेगा और इसीलिए अनुज्ञापन अधिकारी ने एक विशिष्ट निष्कर्ष दर्ज किया है कि याचिकाकर्ता द्वारा कोई दोषमुक्ति का आदेश प्रस्तुत नहीं किया गया है।

10. वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता का बचाव इस सीमा तक था कि याचिकाकर्ता एक होटल चला रहा है, जहां पुलिस कर्मी आए और शराब सहित भोजन का उपभोग किया। हालांकि, याचिकाकर्ता ने होटल में शराब के उपभोग पर आपत्ति की। भोजन के पैसे की मांग की गई और वह अस्वीकार कर दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई।

11. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता से एक प्रश्न किए जाने पर कि याचिकाकर्ता के बचाव के समर्थन में क्या साक्ष्य प्रस्तुत किया गया था कि पुलिस कर्मियों ने अपने अधिकार का दुरुपयोग किया है और भोजन के लिए पैसे नहीं दिए हैं, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता रिकॉर्ड से कोई महत्वपूर्ण साक्ष्य नहीं दिखा सके। शस्त्र लाइसेंस के निरस्तीकरण के संबंध में याचिकाकर्ता के बचाव को याचिकाकर्ता द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करके सिद्ध करना आवश्यक था। चूंकि याचिकाकर्ता ने कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है, इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता कि याचिकाकर्ता ने आग्नेयास्त्र का दुरुपयोग नहीं किया है। यह भी प्रदर्शित नहीं किया गया है कि वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक, एटा की दिनांक 3.11.2016 की रिपोर्ट गलत है।

12. उपरोक्त के दृष्टिगत, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आक्षेपित आदेशों में कोई त्रुटि नहीं दिखाई गई है। रिट याचिका में गुणागुण का अभाव है और तदनुसार, निरस्त की जाती है।

13. हालांकि, इस घटना में, यदि आपराधिक मुकदमे में याचिकाकर्ता के पक्ष में दोषमुक्ति का आदेश पारित किया जाता है, तो याचिकाकर्ता को विधि के अनुसार शस्त्र लाइसेंस की बहाली के लिए अनुज्ञापन अधिकारी के समक्ष आवेदन करने की स्वतंत्रता होगी।

(2025) 2 ILRA 528

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 19.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति पंकज भाटिया

रिट सी संख्या-10598/2024

मेसर्स श्री शंकर मेडिकल्स ...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य ...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के लिए अधिवक्ता:

अयोध्या प्रसाद मिश्रा, ए.पी. मिश्रा, जयलक्ष्मी उपाध्याय, ऋतुराज मिश्रा, शेष राम वर्मा

प्रतिवादियों के लिए अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि.

ए. सिविल विधि-भारत का संविधान, 1950 अनुच्छेद 226, 14 और 19(1)(छ)-औषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940-धारा 23-नियम, 1945 -औषधि लाइसेंस का निरसन-अनुचित नमूनाकरण- कारण बताओ नोटिस में कमी-याचिकाकर्ता ने अपने खुदरा औषधि लाइसेंस के निरसन और अपनी वैधानिक अपील के निरस्तीकरण को चुनौती दी-न्यायालय ने निर्णीत किया कि नमूनाकरण प्रक्रिया अधिनियम, 1940 की धारा 23 के अनिवार्य प्रावधानों का उल्लंघन करती है क्योंकि आवश्यक तीन या चार के बजाय केवल एक नमूना लिया गया था-दूसरी कारण बताओ नोटिस में निरसन का प्रस्ताव करने या यह आरोप लगाने में विफल रहा कि याचिकाकर्ता निम्न मानक की औषधि का निर्माता था-अंतिम आदेश ने याचिकाकर्ता द्वारा अवैध निर्माण की धारणा बनाई, बिना किसी समर्थन साक्ष्य या विरोधाभासी वितरक उत्तरों के साथ सामना किए-न्यायालय ने निर्णीत किया कि यह संविधान के अनुच्छेद 14 और 19(1)(छ) के अधीन याचिकाकर्ता के अधिकारों का उल्लंघन

था और नियम, 1945 के नियम 66 का स्पष्ट उल्लंघन था-परिणामस्वरूप, निरसन और अपीलीय दोनों आदेश खंडित कर दिए गए और याचिकाकर्ता का लाइसेंस बहाल किया गया। (प्रस्तर 1 से 21)

रिट याचिका स्वीकार की गई। (ई-6)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

UMC Technologies (P) Ltd. बनाम FCI (2021) 2 SCC 551

(माननीय न्यायमूर्ति पंकज भाटिया द्वारा उद्धोषित)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता और राज्य-प्रतिवादियों के लिए विद्वान स्थायी अधिवक्ता को सुना।
2. वर्तमान याचिका, आदेश दिनांक 12.06.2023 को चुनौती देते हुए योजित की गई है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को औषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) के अधीन औषधियों की खुदरा बिक्री के लिए दिए गए लाइसेंस को रद्द कर दिया गया था, साथ ही दिनांक 05.06.2024 के अपीलीय आदेश को भी चुनौती दी गई है, जिसके द्वारा अपील निरस्त कर दी गई थी। याचिकाकर्ता ने कारण बताओ नोटिस को भी चुनौती दी है, जो रिट याचिका का संलग्नक संख्या 1 है।
3. संक्षेप में तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता दिनांक 09.11.2004 को लाइसेंस प्राप्त करने के बाद औषधियों और प्रसाधन सामग्री की बिक्री के लिए एक खुदरा दुकान चला रहा था, जिसके द्वारा दवाओं की खुदरा बिक्री की अनुमति दी गई थी। उक्त लाइसेंस को बाद में 30 अक्टूबर, 2019 को नवीनीकृत किया गया और वर्ष 2024 तक वैध था। हालांकि, 22.12.2022 को, दवाओं के एक निर्माता, अर्थात् डॉ. रेड्डी द्वारा की गई कुछ शिकायत के आधार पर याचिकाकर्ता की दुकान पर एक निरीक्षण किया गया। औषधि निरीक्षक ने एक निरीक्षण किया और कुछ अनियमितताएं नोट कीं, जिसके लिए उसी तिथि को एक जब्ती ज़ापन भी तैयार किया गया, जो पेपर बुक के पृष्ठ संख्या 51 पर अभिलेख में है। उक्त जब्ती ज़ापन की शर्तों में, शिकायतकर्ता के नाम का भी उल्लेख किया गया था और छह दवाओं के नमूने बरामद किए गए थे। उक्त निरीक्षण के अनुसरण में, 03.01.2023 को एक कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था, जिसमें याचिकाकर्ता को निरीक्षण में पाई गई अनियमितताओं को स्पष्ट करने के लिए कहा गया था। यह दावा किया गया है कि 17.01.2023 को, याचिकाकर्ता ने कथित अनियमितताओं से इनकार करते हुए जवाब दिया। उक्त अनियमितताएं छह दवाओं से संबंधित नहीं थीं, जिन्हें जब्ती ज़ापन के माध्यम से जब्त किया गया था। दिनांक 03.01.2023 के पहले कारण बताओ नोटिस के जवाब में याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए उत्तर के बाद भी, 31.01.2023 को एक आदेश पारित किया गया, जिसमें औषधि और प्रसाधन सामग्री नियम, 1945 (इसके बाद "नियम" के रूप में संदर्भित) के नियम 66 के द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में याचिकाकर्ता के औषधि लाइसेंस को निलंबित कर दिया गया। अभिलेख

से प्रतीत होता है कि 06.02.2023 को, जब्त किए गए छह नमूनों में से एक के संबंध में एक रासायनिक परीक्षण रिपोर्ट दी गई थी, जिसमें यह पाया गया था कि नमूना ओमेप्राजोल और डोम्पेरिडोन की सामग्री के संबंध में घोषित फॉर्मूले की पुष्टि नहीं करता है। उक्त रिपोर्ट के अनुसरण में, जिसे पेपर बुक के पृष्ठ संख्या 59 पर देखा जा सकता है, उक्त रासायनिक परीक्षण रिपोर्ट के आधार पर 03.03.2023 को मेसर्स भगत डिस्ट्रीब्यूटर्स को एक कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था, जिनसे, याचिकाकर्ता के दावे के अनुसार, उसने दवा खरीदी गई थी और बिक्री के लिए रखी थी। याचिकाकर्ता को 31.03.2023 को दूसरा कारण बताओ नोटिस दिया गया था, जिसमें याचिकाकर्ता को तीन कार्य करने के लिए कहा गया था। पहला, उक्त औषधि के वितरण को रोकना और लाइसेंस प्रस्तुत करना; दूसरा, प्रमाण के साथ निर्माता का नाम प्रकट करना और बाजार में पहले से बेची गई दवाओं को वापस मंगाना; और तीसरा, साक्ष्यों के साथ उक्त दवा के वितरण के तरीके को दिखाना करना और यह भी स्पष्ट करना कि उक्त दवा बिल वाउचर आदि के साथ किसे बेची गई थी। उक्त नोटिस में यह संकेत दिया गया था कि तीन पहलुओं के संबंध में वांछित उत्तर देने की अनुपस्थिति में, अधिनियम के प्रावधानों के अधीन उपयुक्त कार्रवाई की जाएगी। रिपोर्ट की एक प्रति भी याचिकाकर्ता को दी गई थी। याचिकाकर्ता ने एक बार फिर 11.04.2023 को उक्त दूसरे कारण बताओ नोटिस का जवाब दिया और आरोपों से इनकार किया। उसने यह भी कहा कि उसने थोक वितरक मेसर्स भगत डिस्ट्रीब्यूटर्स के उत्तर दिए गए चालान नंबरों के माध्यम से उक्त दवाएं खरीदी थीं। प्रतीत होता है कि 20 अप्रैल, 2023 को, उक्त मेसर्स भगत डिस्ट्रीब्यूटर्स ने भी एक उत्तर दिया और याचिकाकर्ता के दावे के उसे दवा की बिक्री से इनकार किया। उसके बाद, 12.06.2023 को याचिकाकर्ता के औषधि लाइसेंस को रद्द करते हुए एक आदेश पारित किया गया। उक्त आदेश रिट याचिका का संलग्नक संख्या 2 है। याचिकाकर्ता ने, उसके बाद विधि अनुसार उक्त आदेश के विरुद्ध अपील की। दिनांक 21.05.2024 के आदेश द्वारा इसे भी निरस्त कर दिया गया, जो रिट याचिका का संलग्नक संख्या 3 है और वर्तमान याचिका में भी चुनौती दी गई है।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, श्री अयोध्या प्रसाद मिश्रा की प्रस्तुति यह है कि नमूनाकरण का तरीका अधिनियम की धारा 23(4) में निहित अनिवार्य प्रावधानों के विपरीत था। उन्होंने तर्क दिया है कि धारा 23 की उप-धारा 4 के अधीन निर्धारित तीन नमूने नहीं लिए गए थे और केवल एक नमूना लिया गया था। वह अधिनियम की धारा 25 में निहित प्रावधानों पर निर्भर करते हुए तर्क देते हैं कि यदि नमूने गलत तरीके से लिए गए थे, तो याचिकाकर्ता को अधिनियम की धारा 25(4) द्वारा प्रावधानित निष्कर्ष को चुनौती देने के अवसर से वंचित किया गया है, जो वर्तमान मामले में अनुपस्थित है।

5. वह आगे तर्क देते हैं कि दूसरे कारण बताओ नोटिस में, जिसके कारण निरसन आदेश पारित किया गया, निरसन प्रत्याशित नहीं था और याचिकाकर्ता को केवल दूसरे कारण बताओ नोटिस में उल्लिखित तीन कार्यों के संबंध में उत्तर देने के लिए कहा गया था और इस प्रकार, निरसन का आदेश किसी भी कारण बताओ नोटिस के बिना है, जो नियमों के नियम 66 की शर्तों में अनिवार्य है। वह आगे तर्क देते हैं कि मेसर्स भगत डिस्ट्रीब्यूटर्स द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट/उत्तर कभी भी याचिकाकर्ता को प्रदान नहीं किया गया था और न ही उसे इसके साथ सामना कराया गया था, इस प्रकार, यह याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए एक उत्तर और वितरक द्वारा दिए

गए विपरीत उत्तर का मामला था, जिसे आक्षेपित आदेश पारित करने से पहले सत्यापित किया जाना चाहिए था।

6. वह आगे तर्क देते हैं कि नियमों के नियम 66 के आधार पर प्रावधानित लाइसेंस निरसन की शक्ति को यांत्रिक तरीके से प्रयोग नहीं किया जाना है, क्योंकि यह अधिकारी को लाइसेंस को पूरी तरह से या कुछ पदार्थों के संबंध में रद्द करने का अधिकार देता है। वह यह भी तर्क देते हैं कि निरसन की शक्ति का प्रयोग लाइसेंस में लगाई गई शर्तों के संबंध में किया जाना है, जबकि निरसन का आदेश यह मानते हुए पारित किया गया है कि याचिकाकर्ता उक्त दवा का निर्माता था, जबकि इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए न तो साक्ष्य के रूप में कुछ था न तो यह सिद्ध हुआ था कि याचिकाकर्ता निर्माता था और इस प्रकार, आक्षेपित आदेश वैधानिक निर्देशों का स्पष्ट उल्लंघन हैं और खंडित किए जाने योग्य हैं।

7. उनका यह भी तर्क है कि उक्त दोनों आदेशों के कारण, प्रदत्त लाइसेंस के अनुसार व्यवसाय करने के याचिकाकर्ता के अधिकार का उल्लंघन होता है, जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 का भी उल्लंघन करते हैं। इस प्रकार, दोनों आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 और अनुच्छेद 14 का उल्लंघन के दोष से ग्रस्त हैं और खंडित किए जाने योग्य हैं।

8. प्रतिवादियों की ओर से विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि औषधि निरीक्षक द्वारा निरीक्षण के समय औषधि की जब्ती के आधार पर आदेश पारित किया गया है, जो निरीक्षण करने के लिए पूर्ण रूप से व विधिवत सशक्त है और उक्त निरीक्षण में, छह दवाओं सहित वह दवा, जो मानक से कम पाई गई थी, को जब्त किया गया था और उसी को विश्लेषण के लिए भेजा गया था। विश्लेषण में, वे गुणवत्ता से कम पाए गए। उनका तर्क है कि लाइसेंसिंग अधिकारी ने उस वितरक से तथ्य की पुष्टि करने के बाद आदेश पारित किया है, जिससे याचिकाकर्ता ने दवाएं खरीदने का दावा किया था और चूंकि उसने ऐसी दवाएं बेचने से इनकार किया था, एकमात्र तार्किक निष्कर्ष लाइसेंस को रद्द करना था, जो आक्षेपित निर्णय के माध्यम से किया गया है, इस प्रकार, रिट याचिका निरस्त किए जाने योग्य है।

9. ऊपर दर्ज किए गए तथ्यात्मक प्रस्तुतियों पर ध्यान देने से पहले, औषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 के अधिदेश को देखना आवश्यक है, जो भारत में औषधियों और प्रसाधन सामग्री की बिक्री को विनियमित करने के लिए अधिनियमित किया गया है। उक्त अधिनियम का अध्याय IV, अनिवार्य रूप से भारत में औषधियों और प्रसाधन सामग्री के निर्माण और बिक्री के विनियमन से संबंधित है। अधिनियम, 1940 की धारा 6(2), 12, 33 और 33(N) के आधार पर प्रदत्त शक्तियों की शर्तों में, केंद्र सरकार ने औषधि और प्रसाधन सामग्री नियम, 1945 के रूप में जाने जाने वाले नियम बनाए गए हैं।

10. वर्तमान मामले के लिए, उक्त नियमों का भाग VI प्रासंगिक नियम हैं, जो औषधियों की बिक्री के तरीके को निर्धारित करते हैं। प्रतिबंध, जो निर्धारित हैं और कार्रवाई करने की शक्ति यदि उल्लंघन देखे जाते हैं।

11. अधिनियम, 1940 की धारा 23, 24, 25 और नियम, 1945 के नियम 66, जो वर्तमान मामले के उद्देश्य के लिए प्रासंगिक हैं, नीचे प्रस्तुत किए गए हैं:-

"धारा 23. निरीक्षकों की प्रक्रिया।

(1) जहां कोई निरीक्षक इस अध्याय के अधीन किसी औषधि या प्रसाधन सामग्री का कोई नमूना लेता है, वह उसका उचित मूल्य देगा और उसके लिए लिखित पावती की मांग कर सकता है।

(2) जहां उप-धारा (1) के अधीन दिए गए मूल्य को अस्वीकार कर दिया जाता है, या जहां निरीक्षक धारा 22 के खंड (सी) के अधीन किसी औषधि या प्रसाधन सामग्री के स्टॉक को जब्त करता है, वह निर्धारित फॉर्म में उसके लिए रसीद देगा।

(3) जहां कोई निरीक्षक परीक्षण या विश्लेषण के उद्देश्य से किसी औषधि या प्रसाधन सामग्री का नमूना लेता है, वह निर्धारित फॉर्म में लिखित रूप में इस उद्देश्य को उस व्यक्ति को सूचित करेगा, जिससे वह इसे लेता है और, ऐसे व्यक्ति की उपस्थिति में जब तक वह स्वेच्छा से अनुपस्थित न हो, नमूने को चार भागों में विभाजित करेगा और प्रभावी रूप से सील करेगा और उपयुक्त रूप से चिह्नित करेगा और ऐसे व्यक्ति को सील और चिह्नित सभी या किसी भी भाग में अपनी सील और चिह्न जोड़ने की अनुमति देगा:

परंतु जहां नमूना उन परिसरों से लिया जाता है जहां औषधि या प्रसाधन सामग्री का निर्माण किया जा रहा है, तो नमूने को केवल तीन भागों में विभाजित करना आवश्यक होगा:

परंतु यह भी कि जहां औषधि या प्रसाधन सामग्री छोटी मात्रा के कंटेनरों में बनाई गई है, उपरोक्त नमूने को विभाजित करने के बजाय, निरीक्षक उपयुक्त रूप से चिह्नित करने के बाद और, जहां आवश्यक हो, उन्हें सील करने के बाद, उक्त कंटेनरों में से तीन या चार, जैसा भी हो, ले सकता है और यदि औषधि या प्रसाधन सामग्री ऐसी है कि उसके जोखिम से खराब होने या अन्यथा क्षतिग्रस्त होने की संभावना है तो लेगा।

(4) निरीक्षक इस प्रकार विभाजित नमूने का एक भाग या एक कंटेनर, जैसा भी हो, उस व्यक्ति को वापस करेगा, जिससे वह इसे लेता है, और शेष को बनाए रखेगा और निम्नानुसार निस्तारित करेगा:

(i) एक भाग या कंटेनर वह तुरंत परीक्षण या विश्लेषण के लिए सरकारी विश्लेषक को भेजेगा;

(ii) दूसरा वह उस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करेगा जिसके समक्ष, यदि कोई हो, औषधि या प्रसाधन सामग्री के संबंध में कार्यवाही शुरू की जाती है;

(iii) तीसरा, जहां लिया गया हो, वह उस व्यक्ति को भेजेगा, यदि कोई हो, जिसका नाम, पता व अन्य विवरण धारा 18ए के अधीन प्रकट किए गए हैं।

(5) जहां कोई निरीक्षक धारा 22 के खंड (सी) के अधीन कोई कार्रवाई करता है,

(ए) वह यह पता लगाने में सभी तत्परता का उपयोग करेगा कि क्या औषधि या प्रसाधन सामग्री धारा 18 के किसी भी प्रावधान का उल्लंघन करती है या नहीं और, यदि यह पता चलता है कि औषधि या प्रसाधन सामग्री ऐसा उल्लंघन नहीं करती है, तो तुरंत उक्त खंड के अधीन पारित आदेश को रद्द कर देगा या, जैसा भी हो, जब्त किए गए स्टॉक की वापसी के लिए आवश्यक कार्रवाई करेगा;

(बी) यदि वह औषधि या प्रसाधन सामग्री के स्टॉक को जब्त करता है, तो वह जल्द से जल्द न्यायिक मजिस्ट्रेट को सूचित करेगा और उसकी हिरासत के संबंध में उसके आदेश लेगा;

(सी) किसी भी अभियोजन की स्थापना के पूर्वग्रह के बिना, यदि कथित उल्लंघन ऐसा है कि दोष औषधि या प्रसाधन सामग्री के अधिकारी द्वारा ठीक किया जा सकता है, तो वह, यह संतुष्ट होने पर कि दोष इस प्रकार ठीक कर दिया गया है, तुरंत उक्त खंड के अधीन अपने आदेश को रद्द कर देगा।

(6) जहां कोई निरीक्षक धारा 22 की उप-धारा (1) के खंड (सीसी) के अधीन किसी रिकॉर्ड, रजिस्टर, अभिलेख या किसी अन्य महत्वपूर्ण वस्तु को जब्त करता है, वह जल्द से जल्द न्यायिक मजिस्ट्रेट को सूचित करेगा और उसकी हिरासत के संबंध में उसके आदेश लेगा।

धारा 24. औषधियाँ या प्रसाधन सामग्री के निर्माण या रखे जाने के स्थान को प्रकट करने के लिए बाध्य व्यक्ति।

किसी भी परिसर के प्रभारी प्रत्येक व्यक्ति, जहां कोई औषधि या प्रसाधन सामग्री का निर्माण किया जा रहा है या बिक्री या वितरण के लिए रखी गई है, किसी निरीक्षक द्वारा ऐसा करने की आवश्यकता पर, निरीक्षक को उस स्थान को प्रकट करने के लिए कानूनी रूप से बाध्य होगा जहां औषधि या प्रसाधन सामग्री का निर्माण किया जा रहा है या रखी गई है, जैसा भी हो।

धारा 25. सरकारी विश्लेषकों की रिपोर्ट।

(1) सरकारी विश्लेषक जिसे धारा 23 की उप-धारा (4) के अधीन परीक्षण या विश्लेषण के लिए किसी औषधि या प्रसाधन सामग्री का नमूना प्रस्तुत किया गया है, निरीक्षक को इसे प्रस्तुत करने वाले को निर्धारित फॉर्म में तीन प्रतियों में हस्ताक्षरित रिपोर्ट प्रदान करेगा।

(2) निरीक्षक उसकी प्राप्ति पर रिपोर्ट की एक प्रति उस व्यक्ति को प्रदान करेगा जिससे नमूना लिया गया था और दूसरी प्रति उस व्यक्ति को, यदि कोई हो, जिसका नाम, पता व अन्य विवरण धारा 18ए के अधीन प्रकट किए गए हैं, और नमूने के संबंध में किसी भी अभियोजन में उपयोग के लिए तीसरी प्रति को बनाए रखेगा।

(3) कोई भी अभिलेख, जो इस अध्याय के अधीन सरकारी विश्लेषक द्वारा हस्ताक्षरित रिपोर्ट होने का दावा करता है, उसमें बताए गए तथ्यों का साक्ष्य होगा, और ऐसा साक्ष्य निर्णायक होगा जब तक कि वह व्यक्ति जिससे नमूना लिया गया था या वह व्यक्ति जिसका नाम, पता व अन्य विवरण धारा 18ए के अधीन प्रकट किए गए हैं, ने रिपोर्ट की प्राप्ति के अट्ठाईस दिनों के भीतर, निरीक्षक या न्यायालय को लिखित रूप में सूचित नहीं किया है जिसके समक्ष नमूने के संबंध में कोई कार्यवाही लंबित है कि वह रिपोर्ट के खंडन में साक्ष्य प्रस्तुत करने का इरादा रखता है।

(4) जब तक नमूना पहले से ही केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला में परीक्षण या विश्लेषण नहीं किया गया है, जहां किसी व्यक्ति ने उप-धारा (3) के अधीन सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट के खंडन में साक्ष्य प्रस्तुत करने के अपने इरादे की सूचना दी है, न्यायालय, स्वयंभू या अपने विवेक से शिकायतकर्ता या आरोपी के अनुरोध पर, धारा 23 की उप-धारा (4) के अधीन मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत औषधि या प्रसाधन सामग्री के नमूने को परीक्षण या विश्लेषण के लिए उक्त प्रयोगशाला में भेज सकता है, जो परीक्षण या विश्लेषण करेगा और केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला के निदेशक द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन हस्ताक्षरित लिखित रूप में उसके परिणाम की रिपोर्ट करेगा, और ऐसी रिपोर्ट उसमें बताए गए तथ्यों का निर्णायक साक्ष्य होगा।

(5) उप-धारा (4) के अधीन केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला द्वारा किए गए परीक्षण या विश्लेषण की व्यय का भुगतान शिकायतकर्ता या आरोपी द्वारा किया जाएगा, जैसा कि न्यायालय निर्देशित करेगा।

नियम 66. लाइसेंस का निरसन और निलंबन। (1) लाइसेंसिंग अधिकारी, लाइसेंसधारी को यह दिखाने का अवसर देने के बाद कि ऐसा आदेश क्यों पारित नहीं किया जाना चाहिए, लिखित रूप में कारणों को बताते हुए एक आदेश द्वारा, इस भाग के अधीन जारी किए गए लाइसेंस को रद्द कर सकता है या उसे ऐसी अवधि के लिए निलंबित कर सकता है जैसा वह उचित समझे, या तो पूरी तरह से या उन कुछ पदार्थों के संबंध में जिनसे यह संबंधित है, यदि उसकी राय में, लाइसेंसधारी लाइसेंस की किसी भी शर्त या अधिनियम या उसके अधीन नियमों के किसी भी प्रावधान का पालन करने में विफल रहा है:

परंतु, जहां ऐसी विफलता या उल्लंघन किसी एजेंट या कर्मचारी की ओर से किसी कार्य या चूक का परिणाम है, लाइसेंस रद्द या निलंबित नहीं किया जाएगा यदि लाइसेंसधारी लाइसेंसिंग अधिकारी को संतुष्ट करता है

(ए) यह कि कार्य या चूक उसके द्वारा प्रेरित या मिलीभगत नहीं की गई थी या, यदि लाइसेंसधारी एक फर्म या कंपनी है, फर्म के एक भागीदार या कंपनी के एक निदेशक द्वारा, या

(बी) यह कि वह या उसका एजेंट या कर्मचारी उस तिथि से बारह महीने पहले किसी समान कार्य या चूक का दोषी नहीं था, जिस दिन प्रश्नगत कार्य या चूक हुई थी, या जहां उसका एजेंट या कर्मचारी किसी ऐसे कार्य या

चूक का दोषी था, लाइसेंसधारी को उस पिछली कार्य या चूक का ज्ञान नहीं था या उचित रूप से नहीं हो सकता था, या

(सी) यदि कार्य या चूक एक सतत कार्य या चूक थी, तो उसे उस पिछली कार्य या चूक का ज्ञान नहीं था या उचित रूप से नहीं हो सकता था, या

(डी) यह कि उसने यह सुनिश्चित करने के लिए उचित परिश्रम किया था कि लाइसेंस की शर्तों या अधिनियम या उसके अधीन नियमों के प्रावधानों का पालन किया गया था।

(2) एक लाइसेंसधारी जिसका लाइसेंस निलंबित या रद्द किया गया है, उप-नियम (1) के अधीन आदेश की तिथि से तीन महीने के भीतर, उस आदेश के विरुद्ध राज्य सरकार को अपील कर सकता है, जो इसका फैसला करेगी।"

12. वर्तमान मामले में जिस तरीके से नमूना लिया गया था वह स्पष्ट रूप से अधिनियम की धारा 23 के अधिदेश के विपरीत है।

13. वर्तमान मामले में, अभिकथित और ऊपर दर्ज किए गए तथ्यों से यह भी स्पष्ट है कि एक निरीक्षण किया गया था और 03.01.2023 को पाई गई अनियमितताओं के संबंध में एक कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था, जिसके लिए याचिकाकर्ता द्वारा एक उत्तर प्रस्तुत किया गया था। हालांकि, जब्त की गई दवाओं में से एक के संबंध में रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद, उक्त रासायनिक परीक्षण रिपोर्ट के आधार पर 31.03.2023 को दूसरा कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। उक्त दूसरे कारण बताओ नोटिस में, यह उल्लेख किया गया था कि विश्लेषण के आधार पर, नमूना उक्त दवाओं के संबंध में घोषित फॉर्मूले की पुष्टि नहीं करता है और याचिकाकर्ता को तीन शर्तों का पालन करने के लिए कहा गया था, जो निम्नानुसार हैं:-

"1. विषयांकित औषधि का अद्यतन भण्डार बताएं तथा उक्त औषधि का वितरण न करें साथ ही अपनी फर्म का लाइसेंस प्रस्तुत करें।

2. विषयांकित औषधि का क्रय विवरण एवं निर्माता का नाम पता प्रमाण के साथ प्रस्तुत करें तथा वितरित की गई औषधि को वापस मंगाएं।

3. विषयांकित औषधि का वितरण विवरण, निम्न सूचनाओं के साथ प्रस्तुत करें यथा वाउचर संख्या, दिनांक औषधि की मात्रा, उस व्यक्ति/फर्म का नाम पता जिसको विवादग्रस्त औषधि वितरित की गई हो।"

14. याचिकाकर्ता को तीन दिनों की अवधि के भीतर जवाब देने के लिए भी कहा गया था, ऐसा करने में विफल रहने पर, यह कहा गया था कि विधि के अनुसार कार्रवाई की जाएगी। पूरे कारण बताओ नोटिस में, इस बात का कोई उल्लेख नहीं था कि याचिकाकर्ता दवाओं के निर्माण के लिए जिम्मेदार था और न ही याचिकाकर्ता

को दवाओं के निर्माण के संबंध में उसके द्वारा उठाए गए किसी भी कदम के संबंध में स्पष्ट करने के लिए कहा गया था। याचिकाकर्ता द्वारा उक्त कारण बताओ नोटिस का भी विधिवत उत्तर प्रस्तुत किया गया था। हालांकि, आक्षेपित आदेश यह दर्ज करता है कि एक धारणा थी कि याचिकाकर्ता ने दवाओं का निर्माण किया था, क्योंकि आदेश में यह दर्ज किया गया है कि उपरोक्त के अनुसार, यह स्थापित हो गया था कि याचिकाकर्ता अवैध तरीके से दवाओं का निर्माण कर रहा था और उन्हें बेच रहा था, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक था। उक्त निष्कर्ष बिना किसी साक्ष्य के दर्ज किया गया है। कारण बताओ नोटिस में याचिकाकर्ता द्वारा किसी भी दवा का निर्माण करने के आरोप के संबंध में मौन था। न तो आदेश में और न ही कारण बताओ नोटिस में कोई साक्ष्य पाया जाता है, जो यह सुझाव दे कि याचिकाकर्ता दवाओं के निर्माण का दोषी था।

15. यह बहुत अच्छी तरह से स्थापित है कि किसी भी आरोप, विशेष रूप से उस प्रकृति के जो वर्तमान मामले में लगाए गए हैं जितने गंभीर हैं, कारण बताओ नोटिस के साथ दिए जाने चाहिए। कारण बताओ नोटिस की सामग्री आरोपों की शर्तों में स्पष्ट और साफ होनी चाहिए। कारण बताओ नोटिस अस्पष्ट नहीं हो सकता है और दवाओं के निर्माण के संबंध में कोई स्पष्ट आरोप नहीं होने के अभाव में, कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया जा सकता था, जैसा कि दिनांक 12.06.2023 के निरसन आदेश के माध्यम से किया गया है। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि एक कारण बताओ नोटिस को उन विशेष आधारों को निर्दिष्ट करना चाहिए, जिन के आधार पर कार्रवाई करने की प्रत्याशा है, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने **(2021) 2 SCC 551 UMC Technologies (P) Ltd. बनाम Food Corporation of India** में निर्णीत किया है।

16. जहां तक उक्त दवाओं की बिक्री का संबंध है, कोई निष्कर्ष नहीं है कि याचिकाकर्ता द्वारा दिया गया उत्तर सही है या मेसर्स भगत डिस्ट्रीब्यूटर्स का सही है। उस प्रभाव का कोई निष्कर्ष नहीं होने के साथ-साथ इस तथ्य के साथ कि याचिकाकर्ता को वितरक मेसर्स भगत डिस्ट्रीब्यूटर्स द्वारा प्रस्तुत उत्तर के साथ कभी भी सामना नहीं कराया गया था। यहां तक कि उक्त दवाओं की बिक्री के संबंध में निष्कर्ष भी विकृत है।

17. अधिनियम की धारा 19(3) के अधिदेश को नोट करना आवश्यक है, जिसके द्वारा उस व्यक्ति को, जो इससे खरीदी गई दवाओं का वितरण कर रहा है, एक लाइसेंस प्राप्त वितरक को उक्त अधिनियम की धारा 19(3) के अधिदेश द्वारा अभियोजन से भी छूट दी गई है। इस बात का कोई निष्कर्ष नहीं होने के अभाव में कि बिक्री वितरक के कहने पर या याचिकाकर्ता के कहने पर अवैध थी, उस प्रभाव का निष्कर्ष बनाए नहीं रखा जा सकता है।

18. वर्तमान मामले में, जहां अधिनियम की धारा 23, 24 और 25 के अधिदेश का पालन नहीं करने से औषधि निरीक्षक का गंभीर उल्लंघन है, क्योंकि नमूना लेने का तरीका, जो अनिवार्य है, का पालन नहीं किया गया है। नमूनाकरण धारा 23 के अधिदेश के अनुसार नहीं होने के अभाव में, उसके बल पर कोई भी उल्लंघन बनाए नहीं रखा जा सकता है।

19. यहां ऊपर दर्ज किए गए सभी कारणों के लिए, दोनों आदेश बने नहीं रह सकते हैं और खंडित किए जाते हैं।

20. याचिकाकर्ता का लाइसेंस 08.11.2024 तक वैध माना जाएगा और याचिकाकर्ता द्वारा नवीनीकरण के लिए आवेदन करने पर, उसपर विधि के अनुसार विचार किया जाएगा।

21. रिट याचिका स्वीकार की जाती है।

(2025) 2 ILRA 535

मूल क्षेत्राधिकार

दीवानी पक्ष

दिनांक: लखनऊ 13.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अताउल रहमान मसूदी

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी

रिट सी संख्या-10671 वर्ष 2024

मेसर्स अल-हक फूड्स प्राइवेट लिमिटेड

... याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

... प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

अभिनव सिंह, लालता प्रसाद मिश्रा

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि., अशोक कुमार वर्मा

A. पर्यावरण विधि-अनुज्ञा का निरसन-बूचड़खाना-जल (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम, 1974 - वायु (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम, 1981।

विधि किसी व्यक्ति को वह करने के लिए बाध्य नहीं करती, जो वह संभवतः नहीं कर सकता। पशुओं के वध और बूचड़खाने का प्रबंधन अधिक कुशलता से करने के लिए प्रासंगिक विधियों की एक सूची तैयार करके सभी संबंधितों में परिचालन करने के माननीय उच्चतम न्यायालय के आदेश की किसी भी तरह से इस तरीके से

व्याख्या नहीं की जा सकती कि संग्रह में उल्लिखित सभी 24 विधियों की आवश्यकताओं को बूचड़खाने की स्थापना से पहले पूरा करना होगा। (प्रस्तर 64, 66)

बी. किसी पूर्व शासनादेश के अधिक्रमण मात्र से कोई बाद का शासनादेश पूर्वव्यापी रूप से प्रभावी नहीं हो जाएगा और राज्य द्वारा निर्गत किसी भी शासनादेश का भावी प्रयोग होता है। दिनांक 07.07.2017 का शासनादेश, जिला स्तरीय समिति द्वारा दिनांक 21.05.2015 को प्रदान किए गए अनापत्ति प्रमाण पत्र, राज्य स्तरीय समिति द्वारा दिनांक 21.10.2016 को प्रदान किए गए अनापत्ति प्रमाण पत्र और उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा दिनांक 04.01.2017 को जारी सी.टी.ई. को निरस्त नहीं करता है। (प्रस्तर 67, 68)

सी. पूर्व रिट याचिका में समन्वय पीठ द्वारा दिया गया निर्णय पूर्व निर्णय में उठाए गए और निर्णीत बिंदुओं के संबंध में बाद की पीठों पर एक पूर्व उदाहरण के रूप में बाध्यकारी होगा। लेकिन उन बिंदुओं के संबंध में बाध्यकारी पूर्व उदाहरण के रूप में संचालित नहीं होगा, जिन पर उसमें निर्णय नहीं लिया गया है। दिनांक 07.07.2017 के शासनादेश का दायरा और प्रभाव और इसका भावी संचालन दिनांक 31.05.2023 के निर्णय में निर्णीत नहीं किया गया है। इसलिए, उपरोक्त निर्णय उन बिंदुओं के संबंध में बाध्यकारी पूर्व उदाहरण नहीं होगा, जिन पर उस निर्णय में निर्णय नहीं लिया गया है और यह इस न्यायालय को इस रिट याचिका में उठाए गए बिंदुओं का परीक्षण करने से नहीं रोकेगा। (प्रस्तर 71)

याचिकाकर्ता के सी.टी.ओ. प्रदान करने के आवेदनों को बार-बार अस्वीकार कर दिया गया और अंततः दिनांक 11.07.2020 के अस्वीकरण आदेश की वैधता को चुनौती देते हुए योजित रिट-सी संख्या-4368 वर्ष 2022 को भी दिनांक 31.05.2023 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया, बिना यह निर्णीत किए कि क्या दिनांक 07.07.2017 का शासनादेश पूर्वव्यापी प्रभाव रखता था और क्या उद्योग को सी.टी.ओ. प्रदान करने से पहले दिनांक 07.07.2017 के शासनादेश में अनुक्रमित सभी 24 विधियों की आवश्यकताओं का अनुपालन किया जा सकता था। (प्रस्तर 74)

पूर्व रिट याचिका का विषय सीटीओ प्रदान करने से इनकार करने का आदेश था, जबकि वर्तमान रिट याचिका का विषय याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.टी.ओ. को निरस्त करने का आदेश है। पिछली रिट याचिका में निहित बिन्दु सी.टी.ओ. निर्गत करने से इनकार करने वाले आदेश की वैधता के बारे में था जबकि वर्तमान रिट याचिका में निहित बिन्दु याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.टी.ओ. को निरस्त करने वाले आदेश की वैधता के बारे में है।

डी. न्याय-निर्णीत (रेस-जुडिकेटा) का प्रतिबंध तब लागू होता है, जब किसी मामले में प्रत्यक्ष और मुख्य रूप से विवादित विषय का पूर्व कार्यवाही में न्यायालय द्वारा अंतिम निर्णय किया गया हो। वर्तमान रिट याचिका और पिछली रिट याचिका में निहित बिन्दु समान नहीं हैं, जिससे न्याय-निर्णीत का प्रतिबंध लागू हो सके। (प्रस्तर 70)

ई. अनुच्छेद 19 (1) (छ) के अधीन कोई भी व्यवसाय, व्यापार या कारोबार करने का मौलिक अधिकार राज्य द्वारा बनाए गए किसी भी विधि द्वारा लगाए गए उचित प्रतिबंधों के अधीन है। इसे केवल राज्य द्वारा बनाए गए विधि द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है और इसे केवल एक शासनादेश द्वारा नहीं हटाया जा सकता, विशेष रूप से जब वह पूर्वव्यापी रूप से संचालित नहीं हो सकता। रिट-सी संख्या 4368 वर्ष 2022 में दिनांक 31.05.2023 को पारित निर्णय व आदेश में इस न्यायालय द्वारा इस बिन्दु पर विचार नहीं किया गया था। (प्रस्तर 79, 80)

एफ. उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को याचिकाकर्ता को पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र प्राप्त करने का निर्देश देने का कोई अधिकार नहीं है। उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के पास वायु अधिनियम और जल अधिनियम के अधीन केवल वायु और जल प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए उचित आदेश पारित करने का अधिकार है। उसके पास किसी भी ऐसे विषय के बारे में कोई आदेश पारित करने का अधिकार नहीं है, जो वायु और जल प्रदूषण से संबंधित नहीं है। जिस अधिकारी ने दिनांक 21.05.2015 का अनापति प्रमाण पत्र प्रदान किया था, वह जिला मजिस्ट्रेट है, जिसने अनापति प्रमाण पत्र को निरस्त नहीं किया है और जिसने याचिकाकर्ता को अनापति प्रमाण पत्र को पुनर्मान्य कराने का निर्देश नहीं दिया है, जिसकी दिनांक 07.07.2017 के शासनादेश के अनुसार भी कोई आवश्यकता नहीं है। (प्रस्तर 82, 83)

जी. विपक्षीयों ने याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.सी.ए. को निरस्त करने में याचिकाकर्ता के साथ द्वेषपूर्ण भेदभाव का व्यवहार किया है, क्योंकि याचिकाकर्ता ने पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किया था-उद्योग के सफल परीक्षण के बाद याचिकाकर्ता को सी.सी.ए. प्रदान किया गया था। हालांकि, इसमें वाणिज्यिक संचालन शुरू नहीं हो सका क्योंकि यह एक निर्यात उन्मुख उद्योग है, जिसे कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (APEDA) के साथ अनिवार्य रूप से पंजीकृत होना आवश्यक है। याचिकाकर्ता को उपरोक्त प्राधिकरण के साथ पंजीकृत करने के लिए APEDA के अधिकारियों द्वारा पूर्ण रूप से संचालित संयंत्र का निरीक्षण आवश्यक है। दिनांक 13.01.2016 के शासनादेश में निहित प्रावधानों के अनुसार याचिकाकर्ता के उद्योग में पशु पालन विभाग द्वारा एक पशु चिकित्सक की नियुक्ति आवश्यक है। यद्यपि पशु पालन विभाग ने दिनांक 27.12.2024 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता के उद्योग में एक पशु चिकित्सक को सम्बद्ध किया था, यह आदेश दिनांक 31.12.2024 के एक अन्य आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया और याचिकाकर्ता सरकारी पशु चिकित्सक की नियुक्ति के अभाव में APEDA के साथ पंजीकृत नहीं हो सका। यह ऐसा प्रकरण नहीं है कि याचिकाकर्ता उद्योग का संचालन नहीं कर रहा है, बल्कि अधिकारी याचिकाकर्ता को उसके संचालन में बाधाएं उत्पन्न करके उद्योग चलाने की अनुमति नहीं दे रहे हैं। (प्रस्तर 85, 86)

आक्षेपित आदेश, रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने व राज्य में विदेशी मुद्रा के प्रवाह को आकर्षित करने के लिए राज्य में उद्योगों को बढ़ावा देने की राज्य की नीति की अवहेलना में उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा पारित किया गया है। यह माननीय राज्यपाल द्वारा दिनांक 22.02.2018 को हस्ताक्षरित समझौता ज्ञापन

की पूर्ण अवहेलना में पारित किया गया है, जो उद्योग की स्थापना को सुविधाजनक बनाने के लिए हुए थे। (प्रस्तर 88)

रिट याचिका स्वीकृत। (ई-4)

अनुसरित पूर्व निर्णय:

1. कॉमन कॉज, ए रजिस्टर्ड सोसाइटी बनाम भारत संघ व अन्य: रिट याचिका (सिविल) संख्या 330 वर्ष 2001 (प्रस्तर 11)
2. केनरा बैंक व अन्य बनाम एम. महेश कुमार, (2015) 7 SCC 412 (प्रस्तर 41)
3. ओम गुरुसाई कंस्ट्रक्शन कंपनी बनाम वी.एन. रेड्डी, 2023 SCC OnLine SC 1051 (प्रस्तर 64)
4. खड़क सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, AIR 1963 SC 1295 (प्रस्तर 79)

(माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी द्वारा उद्घोषित)

प्रस्तावना:

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, डॉ. लालता प्रसाद मिश्रा और श्री अभिनव सिंह, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर महाधिवक्ता, श्री विनोद कुमार शाही, जिनकी सहायता विद्वान मुख्य स्थायी अधिवक्ता, श्री शैलेंद्र कुमार सिंह और विद्वान स्थायी अधिवक्ता, श्री आकाश सिन्हा कर रहे हैं, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सतीश चन्द्र मिश्रा, जिनकी सहायता अधिवक्ता, श्री अशोक कुमार वर्मा, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता कर रहे हैं, को सुना और अभिलेख का अवलोकन किया।
2. वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ता ने मुख्य पर्यावरण अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (जिसे इसके बाद 'बोर्ड' के रूप में संदर्भित किया जाएगा) द्वारा दिनांक पारित आदेश 14.11.2024 की वैधता को चुनौती दी है, जिसमें पशु बूचड़खाना चलाने के लिए दिनांक 23.08.2024 को याचिकाकर्ता को जारी 'समेकित संचालन की सहमति और अनुज्ञा' (जिसे इसके बाद 'सी.सी.ए.' के रूप में संदर्भित किया जाएगा) को निरस्त किया गया है।
3. याचिकाकर्ता कंपनी सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय (MSME), उत्तर प्रदेश सरकार के साथ एक पंजीकृत लघु उद्योग है। याचिकाकर्ता ने जिला स्तरीय समिति, जिसकी अध्यक्षता जिलाधिकारी, उन्नाव करते हैं, को यूपीएसआईडीसी औद्योगिक क्षेत्र, साइट-II, उन्नाव में आधुनिक पशु बूचड़खाना स्थापित करने के लिए अनापत्ति प्रमाण पत्र (NOC)/अनुमोदन प्रदान करने के लिए आवेदन किया। जिला स्तरीय समिति ने विभिन्न विभागों से रिपोर्ट प्राप्त की, जिनमें अधिशासी अभियंता, विद्युत विभाग, खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (FSSAI), मुख्य अग्निशमन अधिकारी, जिला उद्योग केंद्र, मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी, उप-

परगना मजिस्ट्रेट, प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के क्षेत्रीय उप प्रभागीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश और पुलिस अधीक्षक, उन्नाव निहित हैं। उपरोक्त प्राधिकारियों से रिपोर्ट प्राप्त करने के बाद, जिलाधिकारी, उन्नाव ने आधुनिक निर्यात उन्मुख पशु बूचड़खाना स्थापित करने के लिए याचिकाकर्ता को दिनांक 21.05.2015 का प्रशासनिक/स्थानीय अनापत्ति प्रमाण पत्र प्रदान किया।

4. याचिकाकर्ता को प्रमाण पत्र में उल्लिखित 69 शर्तों के अधीन अनापत्ति प्रदान की गई, जिसमें यह शर्त निहित है कि याचिकाकर्ता पशुओं की संख्या में संतुलन बनाए रखने के लिए पशु पालन की व्यवस्था करेगा; याचिकाकर्ता भैंसों के बछड़ों का पालन केंद्र स्थापित करेगा, यह पालन केंद्रों को चलाने के लिए योजनाओं को लागू करने में पशु पालकों को सहायता प्रदान करेगा; याचिकाकर्ता जिला उन्नाव की सीमा के भीतर से पशुओं का वध नहीं करेगा; यह पशुओं के प्रति क्रूरता निवारण (बूचड़खाना) नियम, 2001 में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए बूचड़खाना का निर्माण करेगा; इसे एक आधुनिक यांत्रिक संयंत्र स्थापित करना होगा, जो कोई ठोस अपशिष्ट सामग्री उत्पन्न नहीं करता; इसे पशुओं के प्रति क्रूरता निवारण अधिनियम, 1980 और उसके अधीन बनाए गए पशु पालन नियम, 2000 के प्रावधानों का अनुपालन करना होगा। अनापत्ति प्रमाण पत्र में यह भी प्रावधान था कि बूचड़खाने का संचालन करने से पहले, याचिकाकर्ता को निदेशक, पशु पालन, अग्निशमन विभाग, भूजल विभाग से अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त करना होगा; इसे उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से इकाई स्थापित करने की सहमति (CTE) प्राप्त करनी होगी; इकाई का संचालन करने से पहले खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम, 2006 और विनियम, 2011 के अधीन लाइसेंस प्राप्त करना होगा; इसे कच्चे माल के स्रोतों के बारे में जिलाधिकारी को सूचित करना होगा और यह व्यापार शुरू करने से पहले व्यक्तिगत स्वच्छता और स्वास्थ्य सुरक्षा नीति के बारे में भी जिलाधिकारी को सूचित करेगा; औद्योगिक संचालन शुरू करने से पहले याचिकाकर्ता को अनापत्ति प्रमाण पत्र में उल्लिखित सभी प्रावधानों का अनुपालन करना होगा और इस संबंध में एक लिखित वचनबद्धता देनी होगी। याचिकाकर्ता उत्तर प्रदेश औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम के प्रावधानों का पालन करेगा। संयंत्र का निरीक्षण किसी भी समय जिलाधिकारी, अतिरिक्त जिलाधिकारी या उनके द्वारा अधिकृत किसी भी प्रशासनिक/पुलिस अधिकारी द्वारा, साथ ही खाद्य और औषधि प्रशासन के अभिहित अधिकारी, अग्निशमन अधिकारी, क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और विद्युत विभाग द्वारा भी किया जा सकता है। याचिकाकर्ता को भविष्य में जारी किए जा सकने वाले सभी निर्देशों का पालन करना होगा और यदि याचिकाकर्ता कोई अनियमितता करता है या अनापत्ति प्रमाण पत्र में उल्लिखित किसी भी शर्त का उल्लंघन करता है, तो अनापत्ति प्रमाण पत्र स्वतः निरस्त माना जाएगा।

5. अनापत्ति प्रमाण पत्र में उल्लेख है कि आधुनिक पशु बूचड़खाना स्थापित करने के लिए अनापत्ति प्रमाण पत्र प्रदान करने के याचिकाकर्ता के अनुरोध पर विभिन्न विभागों से रिपोर्ट मांगी गई थी। उप आयुक्त, उद्योग, जिला उद्योग केंद्र उन्नाव द्वारा दिनांक 03.09.2014 को प्रस्तुत रिपोर्ट के अनुसार, उत्तर प्रदेश सरकार ने दिनांक 10.07.2014 को याचिकाकर्ता को 22,500 टन की क्षमता वाली वध और मांस प्रसंस्करण इकाई स्थापित करने की स्वीकृति निर्यात उन्मुख इकाई के रूप में दी थी, जिससे लगभग 1,200 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित होने की उम्मीद थी। भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार की औद्योगिक नीतियों के अनुसार, निवेश

के लिए खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना को प्रोत्साहित किया गया था। इसलिए कुछ शर्तों के अधीन उद्योग को अनापति प्रमाण पत्र प्रदान करने की सिफारिश की गई।

6. अधिशासी अभियंता, वितरण प्रभाग-I, उन्नाव, मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी, उन्नाव, अग्निशमन अधिकारी, उन्नाव, क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव, पुलिस अधीक्षक, उन्नाव, उप परगना मजिस्ट्रेट, उन्नाव और अभिहित अधिकारी, खाद्य सुरक्षा और औषधि प्रशासन, उन्नाव द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर, राज्य स्तरीय समिति ने रोजगार क्षमता में वृद्धि, विदेशी मुद्रा के अधिग्रहण और क्षेत्रीय औद्योगिक क्षमता के विकास के हितों को ध्यान में रखते हुए, आधुनिक बूचड़खाना स्थापित करने के लिए याचिकाकर्ता को दिनांक 21.10.2016 का कार्यालय ज्ञापन जारी किया।

7. राज्य स्तरीय समिति ने उसमें उल्लिखित 12 शर्तों के अधीन अनापति प्रदान की, जिसमें यह शर्त निहित है कि याचिकाकर्ता के लिए स्थानीय निकायों की आवश्यकता के अनुसार स्थानीय उपभोग के लिए मांस की आपूर्ति करना अनिवार्य होगा; इकाई के संचालन शुरू करने से पहले तीन महीने के भीतर अनापति प्रमाण पत्र प्राप्त करना होगा और जिलाधिकारी, उन्नाव द्वारा प्रदान किए गए अनापति प्रमाण पत्र में उल्लिखित सभी शर्तों का पालन करना होगा।

8. राज्य स्तरीय समिति द्वारा जारी दिनांक 21.10.2016 के अनापति प्रमाण पत्र में आगे उल्लेख है कि राज्य स्तरीय समिति द्वारा इस अनापति प्रमाण पत्र के प्रदान करने के बाद, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा अनापति प्रमाण पत्र प्रदान करने के लिए आवेदन किया जाना चाहिए और सदस्य सचिव, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड तीन महीने के भीतर इकाई के संचालन के लिए अनापति प्रमाण पत्र प्रदान करेंगे और उपरोक्त अवधि के भीतर राज्य स्तरीय समिति को अनुपालन रिपोर्ट प्रस्तुत करेंगे।

9. उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने दिनांक 04.01.2017 के आदेश के माध्यम से उद्योग के लिए 'स्थापना की सहमति' (C.T.E.) प्रदान की। सी.टी.ई. उसमें उल्लिखित 17 शर्तों के अधीन प्रदान की गई थी। सी.टी.ई. में इसकी वैधता की अवधि दो वर्ष होने का उल्लेख है जिसके भीतर आधुनिक बूचड़खाने का निर्माण करना था। सी.टी.ई. में उल्लेख है कि जल (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम, 1974 (जिसे इसके बाद 'जल अधिनियम' के रूप में संदर्भित किया जाएगा) और वायु (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम, 1981 (जिसे इसके बाद 'वायु अधिनियम' के रूप में संदर्भित किया जाएगा) के अधीन राज्य बोर्ड से संचालन की सहमति प्राप्त होने तक इकाई का संचालन शुरू नहीं किया जा सकता। इस संबंध में आवेदन संचालन शुरू करने से कम से कम दो महीने पहले प्रस्तुत किया जाना चाहिए। सी.टी.ई. में आगे उल्लेख है कि किसी भी शर्त के उल्लंघन की स्थिति में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत 10,00,000/- रुपये की बैंक गारंटी जब्त की जा सकती है और सी.टी.ई. निरस्त की जा सकती है। बोर्ड ने सी.टी.ई. की शर्तों को संशोधित करने या इसे निरस्त करने का अपना अधिकार सुरक्षित रखा। अनुपालन रिपोर्ट प्रस्तुत करने में विफलता की स्थिति में भी सी.टी.ई. निरस्त की जा सकती थी।

10. दिनांक 22.02.2018 को उत्तर प्रदेश निवेशक शिखर सम्मेलन, 2018 के दौरान याचिकाकर्ता और उत्तर प्रदेश के राज्यपाल के बीच एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए, जिसमें उत्तर प्रदेश के राज्यपाल राज्य की मौजूदा सुविधाओं और विनियमों के अनुसार आवश्यक अनुमतियां/पंजीकरण/अनुमोदन/मंजूरी आदि प्राप्त करने के लिए याचिकाकर्ता को सुविधा प्रदान करने और जहां भी लागू हो, राज्य/केंद्र सरकार की विभिन्न योजनाओं के अधीन प्रोत्साहन प्राप्त करने में याचिकाकर्ता की सहायता करने के लिए सहमत हुए। राज्यपाल याचिकाकर्ता को समयबद्ध तरीके से परियोजना स्थापित करने के लिए सुविधा प्रदान करने के लिए सहमत हुए।

11. इस बीच, राज्य सरकार ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **कॉमन कॉज, ए रजिस्टर्ड सोसाइटी बनाम भारत संघ व अन्य**: रिट याचिका (सिविल) संख्या 330 वर्ष 2001 व अन्य सम्बद्ध प्रकरणों में दिनांक 27.02.2017 को पारित निर्णय को ध्यान में रखते हुए दिनांक 07.07.2017 का शासनादेश जारी किया था। शासनादेश में 24 नियमों/विनियमों/अधिनियमों की एक सूची निहित की गई थी और यह कहा गया कि पशु बूचड़खाने के संचालन के लिए दिनांक 26.11.2014 का पूर्व शासनादेश अधिक्रमित किया जाता है और निम्नलिखित निर्देश जारी किए गए:

"(1) खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 की धारा-89 में दी गयी व्यवस्था-इस अधिनियम के उपबंध, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में या इस अधिनियम से भिन्न किसी विधि के आधार पर प्रभावी किसी साधन में अंतर्विष्ट किसी असंगत बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे। समस्त प्रचलित अधिनियमों पर ओवरराइडिंग इफेक्ट रखती है। ऐसी स्थिति में किसी भी कारोबार को लाइसेन्स निर्गत करने का दायित्व, खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 की धारा-89 के अन्तर्गत खाद्य सुरक्षा एवं औषध प्रशासन विभाग का है, जो खाद्य सुरक्षा और मानक (खाद्य व्यवसायों का अनुज्ञापन और रजिस्ट्रीकरण) विनियम, 2011 के 2.1.2 (1)(5) के शेड्यूल-IV के अन्तर्गत हाइजीन एवं सैनेटरी आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए ए लोकल अथारिटी से अनापति प्रमाण-पत्र प्राप्त करते हुए लाइसेन्स/पंजीकरण निर्गत किये जाने की व्यवस्था है।

(2) खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 एवं खाद्य सुरक्षा और मानक (खाद्य व्यवसायों का अनुज्ञापन और रजिस्ट्रीकरण) विनियम, 2011 के 2.1.2(1)(5) के शेड्यूल-IV के अन्तर्गत हाइजीन एवं सैनेटरी आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए लोकल अथारिटी से अनापति प्रमाण-पत्र प्राप्त कर खाद्य सुरक्षा एवं औषध प्रशासन विभाग के सम्बंधित अधिकारी द्वारा लाइसेन्स/ पंजीकरण निर्गत किये जाने की कार्यवाही की जायेगी।

(3) खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 के दिनांक 05.08.2011 से प्रभावी हो जाने के फलस्वरूप उ०प्र० नगर निगम अधिनियम, 1959 एवं नगर पालिका अधिनियम, 1916 में खाद्य लाइसेन्स दिये जाने सम्बन्धी प्रावधान निष्प्रभावी हो गये हैं।

(4) अद्यतन पशुधन गणना को आधार में लेते हुए सम्बन्धित लोकल एथारिटी यदि पशुवधशाला की स्थापना का औचित्य पाती है, तो डी.पी.आर. मा. उच्चतम न्यायालय के निर्देशों व सुसंगत अधिनियमों/नियमों/ आदेशों के अधीन तैयार करायेगी। सम्बन्धित लोकल एथारिटी जनपद के जिलाधिकारी के समक्ष डी.पी.आर. सहित आवेदन-पत्र प्रस्तुत करेगी, जिसे जिलाधिकारी की अध्यक्षता में गठित समिति, जिसमें सदस्य के रूप में सम्बन्धित जनपद के वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक/ पुलिस अधीक्षक, मुख्य पशु चिकित्साधिकारी, सम्बन्धित स्थानीय निकाय के नगरायुक्त/अधिशाली अधिकारी/अपर मुख्य अधिकारी एवं उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के क्षेत्रीय अधिकारी होंगे, मा.सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में उल्लिखित अधिनियमों/ नियमों को दृष्टिगत रखते हुए परीक्षण करेंगी यदि सम्बन्धित लोकल एथारिटी द्वारा मा.सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में वर्णित दिशा-निर्देशों के अनुसार डी.पी.आर.तैयार की गयी हो, और अद्यतन पशुधन गणना के अनुसार वहाँ पर पशुवधशाला की स्थापना का औचित्य पाया जाता है, तो जिला स्तरीय समिति द्वारा अपनी स्पष्ट संस्तुति सहित प्रस्ताव प्रमुख सचिव, नगर विकास विभाग की अध्यक्षता में गठित राज्य स्तरीय समिति के विचारार्थ प्रस्तुत किया जाय। राज्य स्तरीय समिति द्वारा प्रस्ताव प्राप्त होने पर 03 माह के अन्दर परियोजना की स्वीकृति दिये जाने पर विचार कर यथोचित निर्णय लेगी।

(5) अतः इस सम्बन्ध में मुझे यह कहने का निर्देश हुआ कि उपर्युक्त संशोधित दिशा निर्देशों के अनुसार अग्रिम कार्यवाही करने का कष्ट करें।

भवदीय
कुमार कमलेश
प्रमुख सचिव"

12. दिनांक 04.01.2017 को याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.टी.ई. के अनुसरण में, इसने एक आधुनिक पशु बूचड़खाना स्थापित किया और दिनांक 12.06.2019 को जल अधिनियम की धारा 25 (1) (ख) और 26 और वायु अधिनियम की धारा 21 के साथ पठित धारा 22 के अधीन 'संचालन की सहमति' (CTO) प्रदान करने के लिए उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को एक आवेदन प्रस्तुत किया। आवेदन को दिनांक 06.11.2019 के आदेश द्वारा इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि याचिकाकर्ता ने शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में उल्लिखित 24 बिंदुओं के संग्रह के अनुपालन के संबंध में आवश्यक स्पष्टीकरण/जानकारी प्रस्तुत नहीं की थी।

13. दिनांक 06.06.2020 को याचिकाकर्ता ने फिर से सी.टी.ओ. प्रदान करने के लिए आवेदन किया और उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने दिनांक 11.07.2020 के आदेश के माध्यम से फिर से अनुरोध को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि याचिकाकर्ता को शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के अनुसार विभिन्न विभागों के साथ-साथ राज्य स्तरीय समिति से पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना आवश्यक था।

14. याचिकाकर्ता ने रिट-सी संख्या 4368 वर्ष 2022: मेसर्स अल हक फूड प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य योजित करके दिनांक 11.07.2020 के अस्वीकरण आदेश को चुनौती दी, जिसे इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा दिनांक 31.03.2023 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया।

15. तदनुसार याचिकाकर्ता ने जिलाधिकारी, उन्नाव को दिनांक 02.06.2023 का आवेदन प्रस्तुत किया जिसमें कहा गया कि इसने 24 बिंदुओं के संग्रह में उल्लिखित आधुनिक पशु बूचड़खाने की स्थापना के लिए सभी आवश्यकताओं का अनुपालन किया है और दिनांक 11.07.2020 के आदेश में भी यह नहीं कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने 24 बिंदुओं के संग्रह में उल्लिखित किसी भी प्रावधान का अनुपालन नहीं किया था। शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के खंड 4.1, 4.2 और 4.3 में उल्लिखित खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम, 2006 के अधीन अनुमोदन/सहमति/अनापत्ति प्रमाण पत्र केवल उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा संचालन की सहमति जारी करने के बाद प्रदान किए जाते हैं और याचिकाकर्ता ने पहले ही खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम, 2006 के अधीन अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी करने के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया था। शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के खंड 4.4 के संबंध में याचिकाकर्ता ने कहा कि पशुधन गणना वर्ष 2012 और 2019 में आयोजित की गई थी और मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी द्वारा पारित दिनांक 06.05.2020 का आदेश दर्शाता है कि उत्तर प्रदेश राज्य में भैंसों की संख्या में 6,56,492 की वृद्धि हुई थी। जिलाधिकारी ने दिनांक 21.05.2015 का अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी किया था और राज्य स्तरीय समिति ने सभी आवश्यक औपचारिकताओं को पूरा करने के बाद दिनांक 21.10.2016 का अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी किया था। याचिकाकर्ता ने राज्य सरकार द्वारा आयोजित निवेशक शिखर सम्मेलन में राज्य सरकार की अपनी औद्योगिक नीति को प्रोत्साहन देने के इरादे के अनुसार अपनी डी.पी.आर. (विस्तृत परियोजना रिपोर्ट) प्रस्तुत की थी और उसके बाद राज्य सरकार और याचिकाकर्ता के बीच एक समझौता ज्ञापन (MOU) निष्पादित किया गया था। आधुनिक बूचड़खाने की स्थापना के लिए जिला स्तरीय समिति, राज्य स्तरीय समिति, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और विभिन्न अन्य विभागों से अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त करने के बाद, याचिकाकर्ता ने उद्योग की स्थापना के लिए ₹200 करोड़ का निवेश किया है। याचिकाकर्ता ने जिलाधिकारी, उन्नाव द्वारा जारी दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण का अनुरोध किया और दिनांक 21.10.2016 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए मामले को राज्य स्तरीय समिति को भेजने का अनुरोध किया।

16. दिनांक 19.07.2023 को, राज्य सरकार ने जिलाधिकारी, उन्नाव को एक पत्र लिखा जिसमें कहा गया कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में उल्लिखित 24 बिंदुओं के संग्रह की शर्तों/नियमों के आलोक में विस्तृत जांच की जाए, याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए दिनांक 21.05.2015 के पूर्व अनापत्ति प्रमाण पत्र को पुनर्मान्य किया जाए और जिला स्तरीय समिति की सिफारिश के साथ यथाशीघ्र सरकार को एक रिपोर्ट/प्रस्ताव भेजा जाए।

17. दिनांक 03.07.2023 को, उप आयुक्त, उद्योग, जिला उद्योग संवर्धन और उद्यमिता विकास केंद्र, उन्नाव ने (i) मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी, उन्नाव, (ii) सहायक क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी, उन्नाव, (iii) अभिहित अधिकारी/सहायक आयुक्त, खाद्य सुरक्षा और औषधि प्रशासन उन्नाव और (iv) क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर

प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव को एक पत्र भेजा, जिसमें राज्य सरकार द्वारा भेजे गए उपरोक्त दिनांक 19.07.2023 के पत्र की एक प्रति संलग्न करते हुए उन्हें निम्नलिखित बिंदुओं के बारे में रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया:-

क्र.सं.	विभाग/अधिकारी का नाम	संग्रह के बिंदु संख्या
1	मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी	1, 3, 4, 5, 6, 12, 21, 22, 23
2	सहायक मंडलीय परिवहन अधिकारी	2, 7, 8
3	निर्धारित अधिकारी / सहायक आयुक्त खाद्य सुरक्षा और औषधि प्रशासन विभाग	9, 10, 11
4	क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव	13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 24

18. उप आयुक्त, उद्योग ने अपर जिलाधिकारी (वित्त और राजस्व), उन्नाव को एक लिखित नोट भेजा जिसमें कहा गया कि दिनांक 24.06.2023 के पत्र के माध्यम से क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव से यह जानकारी प्राप्त की गई कि क्या दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए एक नई डी.पी.आर. की आवश्यकता है। क्षेत्रीय अधिकारी ने दिनांक 07.07.2023 के पत्र के माध्यम से सूचित किया कि दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए एक नई डी.पी.आर. की आवश्यकता नहीं थी और इसने याचिकाकर्ता द्वारा पहले से प्रस्तुत डी.पी.आर. की एक प्रति प्रदान की। यह प्रस्तावित किया गया कि उपरोक्त तालिका में उनके सामने उल्लिखित बिंदुओं के विरुद्ध विभागों से बिंदुवार रिपोर्ट प्राप्त की जाए और उसके बाद रिपोर्टों को जिला स्तरीय समिति के समक्ष रखा जाए।

19. ऐसा प्रतीत होता है कि जिलाधिकारी ने याचिकाकर्ता को जारी दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के संबंध में दिनांक 20.11.2023 और 16.11.2023 के पत्र लिखे, जिसके बाद एक स्थल सत्यापन किया गया और शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में उल्लिखित 24 बिंदुओं के संग्रह के अनुसार संबंधित विभागों द्वारा बिंदुवार रिपोर्ट प्रस्तुत की गई। संबंधित विभागों की रिपोर्टों के आधार पर निष्कर्ष दर्शाते हैं कि याचिकाकर्ता ने पहले ही उस चरण तक आवश्यक कदम उठाए हैं, जो लिए जा सकते थे और यह संचालन शुरू होने के बाद उद्योग के संचालन से संबंधित अन्य प्रावधानों का अनुपालन करेगा। सहायक आयुक्त (खाद्य)-II, खाद्य सुरक्षा और औषधि प्रशासन, उन्नाव, सहायक क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी, उन्नाव, क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव और मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी, उन्नाव से मिलकर बनी समिति द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में उल्लेख है कि इकाई ने शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में उल्लिखित 24 बिंदुओं के संग्रह के आधार पर उद्योग की स्थापना के लिए बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा कर लिया है।

20. दिनांक 27.02.2024 को, जिलाधिकारी, उन्नाव ने (i) मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी, उन्नाव, (ii) क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव, (iii) सहायक आयुक्त (खाद्य) खाद्य सुरक्षा और औषधि प्रशासन, उन्नाव और (iv) सहायक क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी, उन्नाव को संबोधित एक पत्र लिखा जिसमें कहा गया कि याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के संबंध में उपरोक्त अधिकारियों द्वारा प्रस्तुत रिपोर्टों के अनुसार, संग्रह के निम्नलिखित बिंदुओं के संबंध में निर्णय केवल उद्योग के परीक्षण के बाद ही संभव होगा जबकि उपरोक्त अधिकारियों के संयुक्त हस्ताक्षरों के अधीन प्रस्तुत रिपोर्ट उद्योग के परीक्षण का कोई उल्लेख नहीं करती:-

"1. मुख्य पशु चिकित्साधिकारी उन्नाव की आख्या दिनांक 24.08.2023 द्वारा अवगत कराया गया है कि उद्योग द्वारा 24 बिन्दु कम्पेडियम के बिन्दु संख्या-1, 23 का अनुपालन सुनिश्चित कर लिया गया है तथा शेष बिन्दु संख्या-1, 4, 5, 6, 12, 21, 22 का अनुपालन ट्रायल संचालन के उपरान्त ही किया जाना सम्भव होगा।

2. अभिहित अधिकारी/सहायक आयुक्त खाद्य सुरक्षा एवं औषधि प्रशासन विभाग उन्नाव- दिनांक रहित आख्या प्रस्तुत अवगत कराया गया है कि 24 बिन्दु कम्पेडियम के बिन्दु संख्या-9, 10, 11 के अनुपालन का परीक्षण/जाँच ट्रायल संचालन के उपरान्त ही किया जाना सम्भव होगा।

3. सहायक सम्भागीय परिवहन अधिकारी उन्नाव-आख्या दिनांक 23.08.2023 द्वारा अवगत कराया गया है कि 24 बिन्दु कम्पेडियम के बिन्दु संख्या-2, 7 व 8 का परीक्षण/अनुपालन संचालन के उपरान्त ही किया जाना सम्भव होगा।

4. क्षेत्रीय अधिकारी उ.प्र.प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड उन्नाव-आख्या दिनांक 14.08.2023 द्वारा अवगत कराया गया है कि उद्योग द्वारा 24 बिन्दु कम्पेडियम के बिन्दु संख्या-13, 16, 17, 18, 19, 21, 22 व 23 का अनुपालन कर लिया गया है तथा शेष बिन्दु संख्या-14, 15, 20 व 24 की जाँच/परीक्षण ट्रायल संचालन के उपरान्त ही किया जाना सम्भव होगा।"

जिलाधिकारी ने आगे लिखा कि:-

(i) मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी, उन्नाव द्वारा प्रस्तुत दिनांक 24.08.2024 की रिपोर्ट में कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने 24 बिंदुओं के संग्रह के बिंदु संख्या 1 और 23 का अनुपालन किया है और बिंदु संख्या 1, 4, 5, 6, 12, 21, 22 का अनुपालन केवल पूर्व-परीक्षण के बाद ही किया जा सकता है;

(ii) अभिहित अधिकारी/सहायक आयुक्त खाद्य सुरक्षा और औषधि प्रशासन विभाग उन्नाव- अ-दिनांकित रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए सूचित किया गया है कि 24 बिंदुओं के संग्रह के बिंदु संख्या 9, 10, 11 के अनुपालन का परीक्षण/जांच केवल पूर्व-परीक्षण के बाद ही संभव होगा।

(iii) सहायक मंडलीय परिवहन अधिकारी उन्नाव-दिनांक 23.08.2023 की रिपोर्ट द्वारा सूचित किया गया है कि 24 बिंदुओं के संग्रह के बिंदु संख्या 2, 7 और 8 का परीक्षण/अनुपालन केवल पूर्व-परीक्षण के बाद ही संभव होगा।

(iv) क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव-दिनांक 14.08.2023 की रिपोर्ट द्वारा सूचित किया गया है कि उद्योग ने 24 बिंदुओं के संग्रह के बिंदु संख्या 13, 16, 17, 18, 19, 21, 22 और 23 का अनुपालन कर लिया है और शेष बिंदु संख्या 14, 15, 20 और 24 की जांच/परीक्षण केवल पूर्व-परीक्षण के बाद ही की जा सकती है।"

21. पत्र ने उपरोक्त अधिकारियों को यह स्पष्ट करने का निर्देश दिया कि रिपोर्ट में उद्योग के पूर्व-परीक्षण का कोई उल्लेख क्यों नहीं है और यदि पूर्व-परीक्षण के लिए अनुमति सरकार/जिला स्तर द्वारा दी जानी है, तो अधिकारी को उन नियमों/शासनादेशों को सूचित करना चाहिए, जिनके अधीन उद्योग को पूर्व-परीक्षण के लिए अनुमति दी जानी है और रिपोर्ट के साथ संलग्न रिपोर्ट/शासनादेश की प्रति होनी चाहिए।

22. दिनांक 18.04.2024 को याचिकाकर्ता ने सदस्य सचिव, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को जल अधिनियम की धारा 25/26 और वायु अधिनियम की धारा 21 के अधीन समेकित सहमति और अनुज्ञा प्रदान करने के लिए आवेदन किया। दिनांक 05.08.2024 को, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने जल अधिनियम की धारा 25 और वायु अधिनियम की धारा 21 के अधीन संचालन की समेकित सहमति और अनुज्ञा (सी.सी.ए.) और पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के अधीन अधिसूचित खतरनाक (प्रबंधन व अन्य अपशिष्ट और अंतर-सीमा आवाजाही) नियम, 2016 के नियम 6 (2) के अधीन अनुज्ञा याचिकाकर्ता को दिनांक 05.08.2024 से 19.08.2024 की अवधि के लिए प्रदान किया।

23. सी.सी.ए., उसमें उल्लिखित कुछ विशिष्ट शर्तों के अधीन प्रदान किया गया, जिसमें निम्नलिखित निहित हैं:-

विशिष्ट शर्तें:-

यह सी.टी.ओ. दो सप्ताह के लिए संयंत्र का केवल पूर्व-परीक्षण करने के लिए प्रदान किया गया है और यह पूर्व-परीक्षण नगर विकास अनुभाग-8, पत्र संख्या 3710/नो-8-2017 2सीए/12टीसी दिनांक 07.07.2017 के अनुपालन में 24 संग्रह की पुनर्मन्यकरण रिपोर्ट के आधार पर है और जिलाधिकारी, उन्नाव द्वारा दिनांक 21.05.2015 को प्रदान किए गए अनापति प्रमाण पत्र के अनुसरण में है, जो जिला स्तरीय समिति उन्नाव द्वारा प्रस्तुत किया गया था। इकाई समय-समय पर भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा जारी सभी आदेशों का अनुपालन करेगी। इकाई माननीय उच्चतम न्यायालय, माननीय उच्च न्यायालय, माननीय एनजीटी, सीपीसीबी और यूपीसीबी द्वारा जारी सभी निर्देशों का अनुपालन करेगी।

24. दिनांक 13.08.2024 को याचिकाकर्ता ने क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को एक ई-मेल भेजा, जिसमें कहा गया कि पूर्व-परीक्षण दिनांक 12.08.2024 को सफलतापूर्वक शुरू किया गया था और क्षेत्रीय अधिकारी से अंतिम उत्पादन के लिए जल अधिनियम और वायु अधिनियम के अधीन सी.टी.ओ. प्रदान करने का अनुरोध किया।

25. याचिकाकर्ता की इकाई के पूर्व-परीक्षण के निरीक्षण के बाद, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने दिनांक 23.08.2024 के आदेश के माध्यम से याचिकाकर्ता को सी.सी.ए. प्रदान किया, जो दिनांक 23.08.2024 से 31.12.2028 की अवधि के लिए वैध था। सी.सी.ए. आदेश में उल्लिखित 12 सामान्य शर्तों और 27 विशिष्ट शर्तों के अधीन प्रदान किया गया था।

26. दिनांक 23.08.2024 के सी.सी.ए. प्रदान करने के केवल लगभग दो महीने बाद, मुख्य पर्यावरण अधिकारी, सर्कल-5, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने याचिकाकर्ता को दिनांक 25.10.2024 का पत्र लिखा जिसमें कहा गया कि याचिकाकर्ता ने 'पशु बूचड़खाने की स्थापना' के लिए जिला स्तरीय समिति और राज्य स्तरीय समिति से पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किया था और याचिकाकर्ता से पूछा गया कि दिनांक 23.08.2024 के सी.सी.ए. को तत्काल प्रभाव से क्यों निरस्त नहीं किया जाना चाहिए।

27. दिनांक 28.10.2024 को याचिकाकर्ता ने मुख्यमंत्री के प्रमुख सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार और मुख्य पर्यावरण अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को पत्र लिखे, जिसमें कहा गया कि उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा प्रदान किए गए दिनांक 23.08.2024 के सी.सी.ए. के अनुसरण में, इसने स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के साथ ₹50 करोड़ की निर्यात कार्यशील पूंजी की व्यवस्था की थी और राज्य के 1,000 श्रमिकों को रोजगार नामांकन दिया था। इसने 40 मिलियन डॉलर (लगभग ₹350 करोड़) के निर्यात आदेश प्राप्त किए हैं, संयंत्र स्थापना में ₹100 करोड़ के निवेश के अतिरिक्त। उसके बाद इसे दिनांक 25.10.2024 का नोटिस प्राप्त हुआ। याचिकाकर्ता ने सरकार से राज्य में उद्योग को 'व्यापार करने में आसानी' की सुविधा प्रदान करने और सभी हितधारकों की निवेश भावना को जीवित रखने और याचिकाकर्ता की पहल को प्रोत्साहित करने का अनुरोध किया, जिससे राज्य में विदेशी मुद्रा के प्रवाह के साथ-साथ प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रोजगार सृजन में योगदान दिया जा सके।

28. दिनांक 14.11.2024 को, मुख्य पर्यावरण अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए दिनांक 23.08.2024 के सी.टी.ओ. को निरस्त करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया। आदेश में उल्लेख है कि याचिकाकर्ता ने शासनादेश दिनांक 07.07.2017 की शर्तों के अनुसार और रिट-सी संख्या 4368 वर्ष 2022 में इस न्यायालय द्वारा दिनांक 31.05.2023 को पारित आदेश के अनुपालन में पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र प्राप्त नहीं किया है। याचिकाकर्ता ने जिला स्तरीय समिति की एक रिपोर्ट प्रस्तुत की थी, जिसमें शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में उल्लिखित विभागों के सदस्य निहित नहीं थे। इस प्रकार, याचिकाकर्ता ने यह झूठा बयान दिया था कि जिला स्तरीय समिति की रिपोर्ट एक पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र है।

29. दिनांक 12.12.2024 को इस प्रकरण में एक अंतरिम आदेश पारित किया गया, जिसके द्वारा सी.सी.ए. को निरस्त करने वाले दिनांक 14.11.2024 के आक्षेपित आदेश को स्थगित किया गया।

30. क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव ने एक प्रति-शपथपत्र योजित किया है जिसमें कहा गया है कि रिट-सी संख्या 4368 वर्ष 2022 में इस न्यायालय द्वारा दिनांक 31.05.2023 को पारित निर्णय, जिसमें इस न्यायालय ने निर्णीत किया है कि याचिकाकर्ता के लिए शासनादेश दिनांक 07.07.2017 की सभी शर्तों का अनुपालन करना अनिवार्य था-जिसमें जिलाधिकारी, उन्नाव, राज्य स्तरीय समिति और उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से 'संचालन की सहमति' के लिए अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त करना निहित है। यह निर्णय न्याय-निर्णीत के रूप में संचालित होता है।

31. सहायक वैज्ञानिक अधिकारी, सहायक पर्यावरण अधिकारी और क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से मिलकर बनी 3 सदस्यीय समिति द्वारा प्रस्तुत निरीक्षण रिपोर्ट दिनांक 22.08.2024 की एक प्रति, जिसे मुख्य पर्यावरण अधिकारी को भेजा गया था, प्रति-शपथपत्र के साथ संलग्न की गई है। इसमें कहा गया है कि दिनांक 18.08.2024 को उद्योग में स्थापित सभी इकाइयों का भौतिक निरीक्षण किया गया था। निरीक्षण के समय कोई उत्पादन गतिविधि नहीं की जा रही थी। सभी संयंत्र और मशीनरी क्रम में पाई गई। निरीक्षण के समय उपस्थित याचिकाकर्ता के प्रतिनिधि ने स्वयं कहा कि उद्योग लंबी अवधि के लिए गैर-कार्यात्मक था। इस कारण से आवश्यक मामूली मरम्मत पूरी की गई थी। निरीक्षण रिपोर्ट में कहा गया है कि रिपोर्ट में बताए गए तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अंतिम सी.टी.ओ. प्रदान करने पर विचार किया जा सकता है।

32. क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा मुख्य पर्यावरण अधिकारी (सर्कल-5) को भेजे गए पत्र दिनांक 19.11.2024 की भी एक प्रति प्रति-शपथपत्र के साथ संलग्न की गई है, जिसमें कहा गया है कि दिनांक 19.11.2024 को क्षेत्रीय कार्यालय के अधिकृत अधिकारी द्वारा उद्योग का निरीक्षण किया गया, जिसके दौरान उद्योग में उत्पादन का कोई साक्ष्य नहीं मिला और उद्योग बंद था।

33. याचिकाकर्ता ने एक प्रतिउत्तर शपथपत्र योजित किया है जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ कहा गया है कि 24 बिंदुओं का संग्रह कोई नया मानदंड नहीं है, जो शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के माध्यम से प्रस्तावित किया गया है। संग्रह में उल्लिखित नियम और विनियम पूर्व-विद्यमान नियम हैं, जिनका किसी भी उद्योग द्वारा अन्यथा भी अनुपालन किया जाना है। शासनादेश दिनांक 07.07.2017 ने केवल पूर्व-विद्यमान विधियों को संकलित किया है। यह किसी का भी पक्ष नहीं है कि याचिकाकर्ता ने शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में उल्लिखित 24 बिंदुओं के संग्रह के किसी विशेष प्रावधान का अनुपालन नहीं किया है। प्रतिवादी याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.सी.ए. को निरस्त करने के लिए विधि के किसी भी प्रावधान को इंगित करने में विफल रहे हैं, जब उसमें उल्लिखित किसी भी शर्त के उल्लंघन का कोई आरोप नहीं है। याचिकाकर्ता ने आगे कहा है कि इसे दिनांक 04.01.2017 को सी.टी.ई. प्रदान किया गया था और उसके बाद इसने उद्योग स्थापित किया और

दिनांक 03.01.2019 को पहली बार सी.टी.ओ. प्रदान करने के लिए आवेदन किया अर्थात् दो वर्ष की अवधि के भीतर। सी.टी.ओ. प्रदान करने के उसके आवेदन को दिनांक 03.06.2019, 09.03.2020 और 11.07.2020 के आदेशों द्वारा अस्वीकार कर दिया गया और उपरोक्त आदेशों में से कोई भी सी.टी.ई. की किसी भी शर्त के उल्लंघन का उल्लेख नहीं करता और दिनांक 14.11.2014 के आक्षेपित आदेश में भी ऐसा कोई आरोप नहीं है।

34. याचिकाकर्ता ने एक पूरक शपथपत्र योजित किया है, जिसमें कहा गया है कि इसे आवश्यक अनुमोदन प्रदान किए गए हैं जैसे (i) यूपीपीसीबी द्वारा सीटीओ/सी.सी.ए.; (ii) आईएसओ 22000:2018, खाद्य सुरक्षा प्रबंधन प्रणाली (एफएसएमएस) के अधीन सुरक्षित उत्पादों और सेवा प्रदान करने का अंतर्राष्ट्रीय मानक; (iii) संयंत्र का एचएसीसीपी/खाद्य सुरक्षा प्रबंधन प्रणाली-एफएसएमएस के अनुपालन में खतरा विश्लेषण और महत्वपूर्ण नियंत्रण बिंदु; (iv) जलशक्ति मंत्रालय, भारत सरकार के अधीन केंद्रीय भूजल प्राधिकरण से अनापत्ति प्रमाण पत्र; (v) श्रम मंत्रालय के अधीन कारखाना निदेशक, उत्तर प्रदेश के कार्यालय से कारखाना अधिनियम 1948 की धारा 6 के अधीन लाइसेंस और (vi) केंद्र सरकार, नई दिल्ली से एफएसएस अधिनियम, 2006 के अधीन एफएसएसआई लाइसेंस।

35. याचिकाकर्ता ने पूरक शपथपत्र में यह भी कहा है कि इसने एक निर्यात उन्मुख उद्योग स्थापित किया है जिसे कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (APEDA) के साथ अनिवार्य रूप से पंजीकृत होना आवश्यक है। याचिकाकर्ता को उपरोक्त प्राधिकरण के साथ पंजीकृत करने के लिए APEDA के अधिकारियों द्वारा पूर्ण रूप से संचालित संयंत्र का निरीक्षण आवश्यक है। दिनांक 12.12.2024 के अंतरिम आदेश पारित होने के बाद, APEDA ने दिनांक 03.01.2025 का पत्र लिखा, जिसमें याचिकाकर्ता को सूचित किया कि उसके अधिकारी शीघ्र ही याचिकाकर्ता के उद्योग का निरीक्षण करेंगे। दिनांक 13.01.2016 का एक शासनादेश प्रावधानित करता है कि मांस के निर्यात के उद्देश्य से वध किए जाने वाले पशुओं के स्वास्थ्य की जांच के लिए पशु पालन विभाग से एक सरकारी पशु चिकित्सक को उद्योग में ड्यूटी पर रहना होगा। पशु पालन विभाग ने दिनांक 27.12.2024 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता के उद्योग में उपरोक्त ड्यूटी करने के लिए एक पशु चिकित्सक को नामित किया था, लेकिन यह आदेश दिनांक 31.12.2024 के एक अन्य आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया। याचिकाकर्ता सरकारी पशु चिकित्सक की नियुक्ति के अभाव में APEDA के साथ पंजीकृत नहीं हो सका। याचिकाकर्ता ने कहा कि विपक्षीय याचिकाकर्ता के उद्योग के संचालन में बाधाएं उत्पन्न करने के सभी प्रयास कर रहे हैं, जो एक निर्यात उन्मुख उद्योग है। याचिकाकर्ता ने आगे कहा है कि दिनांक 08.11.2024 के पूरक शपथपत्र के प्रस्तर 19 में उल्लिखित 8 उद्योगों को जिला स्तरीय समिति या राज्य स्तरीय समिति से अनापत्ति प्रमाण पत्र के किसी भी पुनर्मान्यकरण की मांग किए बिना नियमित सी.टी.ओ. प्रदान किया गया है और उन उद्योगों को प्रदान किए गए सी.टी.ओ. की प्रतियां पूरक शपथपत्र के साथ संलग्न की गई हैं।

36. पूरक शपथपत्र में यह भी कहा गया है कि एक समान कारण बताओ नोटिस दिनांक 15.07.2024 एक अन्य उद्योग अर्थात् मेसर्स मर्या फ़ोजन एगो फूड प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड को जारी किया गया था और

उद्योग को सील कर दिया गया था। इसने रिट-सी संख्या 6643 वर्ष 2024 योजित की। रिट याचिका के लंबित रहते हुए, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने दिनांक 02.09.2024 के आदेश के माध्यम से कारण बताओ नोटिस वापस ले लिया, बिना उपरोक्त उद्योग द्वारा कोई पुनर्मान्य अनापत्ति प्रमाण पत्र प्रस्तुत किए, और उपरोक्त विकास को दर्ज करने के बाद दिनांक 04.09.2024 के आदेश द्वारा रिट याचिका का निस्तारण कर दिया गया।

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के तर्क:-

37. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, डॉ. एल.पी. मिश्रा ने प्रस्तुत किया है कि दिनांक 24.11.2024 का आदेश क्षेत्राधिकार के बिना पारित किया गया है क्योंकि याचिकाकर्ता को जल अधिनियम की धारा 25 और वायु अधिनियम की धारा 21 और खतरनाक व अन्य अपशिष्ट (प्रबंधन और अंतर-सीमा आवाजाही) नियम, 2016 के नियम 7 के अधीन सी.सी.ए. प्रदान किया गया था। उपरोक्त अधिनियम और नियम मुख्य पर्यावरण अधिकारी को सी.सी.ए. में लगाई गई किसी भी शर्त के उल्लंघन का आरोप होने तक सी.सी.ए. को निरस्त करने का कोई अधिकार प्रदान नहीं करते हैं।

38. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के अनुसार सी.टी.ओ. प्राप्त करने के लिए जिलाधिकारी या राज्य स्तरीय समिति से पुनर्मान्य अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नहीं है। शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में एक नए बूचड़खाने की स्थापना और डी.पी.आर. की स्वीकृति के उद्देश्य से प्रावधान हैं। उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने स्वयं कहा है कि एक नई डी.पी.आर. प्रस्तुत करने की कोई आवश्यकता नहीं है। शासनादेश दिनांक 07.07.2017 केवल 24 बिंदुओं के संग्रह द्वारा निर्धारित मानदंडों का अनुपालन करना अनिवार्य बनाता है लेकिन यह जिला स्तरीय समिति या राज्य स्तरीय समिति द्वारा जारी अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण का प्रावधान नहीं करता है। 24 बिंदुओं के संग्रह के अधीन कई लाइसेंस/पंजीकरण संबंधित प्राधिकारियों द्वारा सी.सी.ए. जारी करने के बाद जारी किए जाते हैं और सी.सी.ए. को तब तक निरस्त नहीं किया जा सकता जब तक कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में एक विशिष्ट प्रावधान न हो जो उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को पुनर्मान्य अनापत्ति प्रमाण पत्र के अभाव में सी.सी.ए. को निरस्त करने के लिए अधिकृत करता हो।

39. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि रिट-सी संख्या 4368 वर्ष 2022 में इस न्यायालय द्वारा दिनांक 31.05.2023 को पारित निर्णय केवल याचिकाकर्ता को शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के प्रावधानों का अनुपालन करने का निर्देश देता है। उपरोक्त दिनांक 31.05.2023 के निर्णय में याचिकाकर्ता का प्रस्तुतीकरण दर्ज किया गया है कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 की 24 बिंदुओं के संग्रह की प्रयोज्यता को मुख्य रूप से तीन शीर्षों के अधीन वर्गीकृत किया जाना है, अर्थात् - (i) पूर्व-स्थापना (ii) पोस्ट स्थापना और (iii) परिचालन चरण। याचिकाकर्ता ने पूर्व-स्थापना और पोस्ट स्थापना शर्तों को पूरा कर लिया है और परिचालन शर्तों का अनुपालन केवल उद्योग उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा सी.सी.ए. प्रदान करने के बाद अपने संचालन शुरू करने के बाद ही किया जा सकता है। याचिकाकर्ता की इकाई 2017 से पहले ही स्थापित की जा

चुकी थी और शासनादेश दिनांक 07.07.2017 पूर्वव्यापी रूप से संचालित नहीं होता है। इन बिंदुओं पर दिनांक 31.05.2023 के निर्णय में निर्णय नहीं लिया गया है।

40. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने बाध्यकारी परिस्थितियों के अधीन अनापति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए आवेदन किया था, क्योंकि उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड सी.सी.ए. प्रदान नहीं कर रहा था, हालांकि याचिकाकर्ता ने दिनांक 04.01.2017 को इसे प्रदान किए गए सी.टी.ई. के अधीन उद्योग स्थापित किया था और इसने उद्योग की स्थापना में भारी निवेश किया था। इन बाध्यकारी परिस्थितियों में अनापति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए आवेदन का केवल प्रस्तुतीकरण याचिकाकर्ता के विरुद्ध एस्टॉपेल के रूप में संचालित नहीं होगा जब 24 बिंदुओं के संग्रह के मानदंड पूरे हो जाते हैं तब सी.सी.ए. मांगने के लिए। उद्योग की स्थापना के बाद पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र के अभाव में सी.सी.ए. का निरसन घड़ी को पीछे मोड़ने और एक कार्यकारी आदेश के माध्यम से याचिकाकर्ता के अर्जित अधिकार को छीनने के बराबर होगा, जो **केनरा बैंक व अन्य बनाम एम. महेश कुमार**: (2015) 7 SCC 412 में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा स्थापित विधि के दृष्टिकोण में अनुमन्य नहीं है।

41. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र की मांग किए बिना कई अन्य उद्योगों को सी.सी.ए. जारी किया है और इसने याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.सी.ए. को इस कारण से निरस्त करने में याचिकाकर्ता के साथ द्वेषपूर्ण भेदभाव का व्यवहार किया है कि याचिकाकर्ता ने पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किया था।

42. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि 24 बिंदुओं के संग्रह के अनुपालन को सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी राज्य स्तरीय समिति पर है न कि उत्तर प्रदेश राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड पर। इसलिए, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड 24 बिंदुओं के संग्रह की आवश्यकता की कथित कमी के लिए सी.सी.ए. को निरस्त नहीं कर सकता।

43. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत अगला बिंदु यह है कि एक बार जब उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने याचिकाकर्ता को सी.सी.ए. प्रदान किया है और सी.सी.ए. प्रदान किए बिना अनापति प्रमाण पत्र का पुनर्मान्यकरण नहीं किया जा सकता था, तो उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के लिए याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.सी.ए. को निरस्त करना खुला नहीं था क्योंकि विधि किसी व्यक्ति को कुछ ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं करता, जो असंभव है (*lex non cogit ad impossibilia*)।

प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता के तर्क:-

44. इसके विपरीत, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के लिए उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री एस. सी. मिश्रा ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता को दिनांक 21.05.2015 के अनापति प्रमाण पत्र प्रदान करने के बाद, शासनादेश दिनांक 07.07.2017 निर्गत किया गया था जिसके माध्यम से दिनांक 26.11.2014 के पूर्व

शासनादेश को अधिक्रमित किया गया और बूचड़खाने की स्थापना/मांस की दुकानों के संचालन के लिए शासनादेश में 24 विधियों की एक सूची दी गई। उपरोक्त शासनादेश के खंड 4 (4) में प्रावधान है कि यदि संबंधित स्थानीय प्राधिकरण अद्यतन पशु गणना को ध्यान में रखते हुए पशु बूचड़खाने की स्थापना को उचित मानता है, तो यह माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्देशों और प्रासंगिक अधिनियमों/नियमों/आदेशों के अधीन एक डी.पी.आर. तैयार कराएगा। स्थानीय प्राधिकरण जिलाधिकारी के समक्ष डी.पी.आर. के साथ एक आवेदन प्रस्तुत करेगा, जिसकी जांच जिलाधिकारी की अध्यक्षता में गठित समिति द्वारा की जाएगी और जिसमें वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक/पुलिस अधीक्षक/मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी/संबंधित स्थानीय निकाय के आयुक्त/अधिशाली अधिकारी और उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के क्षेत्रीय अधिकारी इसके सदस्य होंगे। यदि समिति पाती है कि डी.पी.आर., माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों के अनुसार तैयार की गई है और नवीनतम पशु गणना के अनुसार पशु बूचड़खाना स्थापित करना उचित होगा, तो यह प्रमुख सचिव, नगर विकास विभाग की अध्यक्षता में गठित राज्य स्तरीय समिति के विचार के लिए एक स्पष्ट अनुशंसा के साथ अपना प्रस्ताव प्रस्तुत करेगी। राज्य स्तरीय समिति प्रस्ताव की प्राप्ति से तीन महीने के भीतर परियोजना की मंजूरी के लिए उचित निर्णय लेगी।

45. श्री एस.सी. मिश्रा ने प्रस्तुत किया कि जिस रिपोर्ट को याचिकाकर्ता पूर्व अनापति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के रूप में दावा कर रहा है, वह सहायक आयुक्त (खाद्य), सहायक क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी, क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी से मिलकर बनी समिति द्वारा प्रस्तुत की गई है। पुलिस अधीक्षक और स्थानीय निकाय के कार्यकारी अधिकारी इस समिति के सदस्य नहीं हैं और इसलिए यह रिपोर्ट शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के खंड 4 (4) की आवश्यकताओं को पूरा नहीं करती।

46. प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र की आवश्यकता है या नहीं, यह प्रश्न इस न्यायालय द्वारा परीक्षण के लिए खुला नहीं है क्योंकि इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने पहले ही रिट-सी संख्या 4368 वर्ष 2022 में दिनांक 31.05.2023 को पारित निर्णय में निर्णीत किया है कि याचिकाकर्ता के लिए शासनादेश दिनांक 07.07.2017 की सभी शर्तों का अनुपालन करना अनिवार्य था, जिसमें जिलाधिकारी, उन्नाव, राज्य स्तरीय समिति और उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से 'संचालन की सहमति' के लिए अनापति प्रमाण पत्र निहित है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि इस न्यायालय के पास एक समन्वय पीठ द्वारा दिए गए दिनांक 31.05.2013 के निर्णय की समीक्षा करने की कोई शक्ति नहीं है और उपरोक्त निर्णय में दर्ज निष्कर्ष और वही इस पीठ पर बाध्यकारी हैं।

47. श्री एस.सी. मिश्रा ने आगे प्रस्तुत किया कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के पूर्वव्यापी संचालन का प्रश्न नहीं उठता क्योंकि इसने दिनांक 26.11.2014 के पूर्व शासनादेश को अधिक्रमित किया है। इस प्रकार, अस्तित्व में एकमात्र शासनादेश दिनांक 07.07.2017 का शासनादेश है और याचिकाकर्ता को इसके प्रावधानों का पालन करना होगा।

48. न्यायालय द्वारा पूछे गए एक विशिष्ट प्रश्न के उत्तर में कि क्या शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के जारी होने पर याचिकाकर्ता व अन्य सभी उद्योगों को एक उद्योग स्थापित करने की सहमति समाप्त हो गई, विपक्षी पक्षों के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि सभी उद्योगों को नोटिस भेजे गए थे लेकिन उन्होंने यह नहीं बताया कि किसी अन्य उद्योग को प्रदान किया गया सी.टी.ओ. वास्तव में निरस्त किया गया था या नहीं।

49. विपक्षी पक्षों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने स्वयं जिलाधिकारी को दिनांक 02.06.2023 का आवेदन प्रस्तुत किया था, जिसमें दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण का अनुरोध किया गया था और अब वह पुनर्मान्य अनापत्ति प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने की आवश्यकता को चुनौती देने से वंचित है। याचिकाकर्ता के उपरोक्त पत्र पर रिपोर्ट चार सदस्यीय समिति द्वारा प्रस्तुत की गई थी जिसमें पुलिस अधीक्षक और स्थानीय निकाय के कार्यकारी अधिकारी निहित नहीं थे और इस रिपोर्ट में उद्योग के परीक्षण संचालन के बारे में कोई उल्लेख नहीं था।

50. श्री एस. सी. मिश्रा ने न्यायालय का ध्यान जिलाधिकारी द्वारा मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी, सहायक आयुक्त, खाद्य सुरक्षा और औषधि प्रशासन, सहायक क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी और क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को लिखे गए दिनांक 27.02.2024 के पत्र की ओर आकर्षित किया, जिसमें कहा गया था कि उपरोक्त अधिकारियों से मिलकर बनी समिति द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में उद्योग के पूर्व-परीक्षण का कोई उल्लेख नहीं है जबकि 24 बिंदुओं के संग्रह के विभिन्न बिंदुओं का अनुपालन केवल उद्योग के पूर्व-परीक्षण के बाद ही जांचा जा सकता है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि उपरोक्त पत्र इंगित करता है कि चार सदस्यीय समिति द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट 24 बिंदुओं के संग्रह के प्रावधानों के अनुपालन को प्रमाणित नहीं करती।

51. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की एस्टॉपेल के सिद्धांत पर आधारित प्रस्तुति के संबंध में, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को पुनर्मान्य अनापत्ति प्रमाण पत्र प्रस्तुत किए बिना गलत तरीके से सी.सी.ए. प्रदान किया गया था और इसलिए मुख्य पर्यावरण अधिकारी और क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, जो सी.सी.ए. प्रदान करने के लिए जिम्मेदार थे, को निलंबित कर दिया गया है और उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि उपरोक्त अधिकारियों का यह कार्य कि पुनर्मान्य अनापत्ति प्रमाण पत्र प्रस्तुत किए बिना याचिकाकर्ता को गलत तरीके से सी.सी.ए. जारी करना उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के विरुद्ध कोई एस्टॉपेल उत्पन्न नहीं करेगा।

52. याचिकाकर्ता की इस दलील के उत्तर में कि पुनर्मान्य अनापत्ति प्रमाण पत्र प्रस्तुत किए बिना 8 अन्य इकाइयों को सी.टी.ओ. प्रदान किया गया है, श्री एस.सी. मिश्रा ने कहा कि वे आठ इकाइयां चल रही इकाइयां हैं जबकि याचिकाकर्ता की इकाई परिचालित नहीं हुई है।

53. विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा पक्षकारों के लिए अपने प्रस्तुतियों के लिखित नोट भी योजित किए गए हैं।

प्रस्तुतियों का विश्लेषण:-

54. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों की जांच करने के लिए आगे बढ़ने से पहले, शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के प्रावधानों को समझना उचित होगा, जो माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा रिट याचिका (सिविल) संख्या 330 वर्ष 2001 व अन्य सम्बद्ध प्रकरणों में दिनांक 17.02.2017 को पारित आदेश के अनुपालन में निर्गत किया गया है। उपरोक्त आदेश दिनांक 26.09.2016 और 28.10.2016 के पिछले आदेशों का संदर्भ देता है। दिनांक 26.09.2016 का आदेश इस प्रकार है:-

"हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और हम यह मानते हैं कि यह अधिक उचित होगा कि विद्वान अधिवक्ता, अर्थात्, श्री आनंद गोवर, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री विजय पंजवानी और श्री प्रणब कुमार मल्लिक, विद्वान अधिवक्ता अगले सप्ताह के भीतर विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल के साथ बैठक करें और हमारे समक्ष बिन्दु के संबंध में पशुओं के वध और बूचड़खानों के प्रबंधन को नियंत्रित करने वाले विभिन्न मानकों, नियमों और कानूनों की एक सूची तैयार करें। सूची चार सप्ताह की अवधि के भीतर तैयार की जाएगी। सूची तैयार करने का उद्देश्य अंततः उस सूची के आधार पर एक संग्रह तैयार करना है, जिसे तब सभी संबंधितों को परिचित किया जा सकता है जिससे पशुओं के वध और बूचड़खानों का प्रबंधन अधिक कुशलता से किया जाए। वार्दों को 28 अक्टूबर, 2016 को सूचीबद्ध करें।"

55. दिनांक 28.10.2016 का आदेश इस प्रकार है:-

"श्री विजय पंजवानी, सीपीसीबी के विद्वान अधिवक्ता का कहना है कि उन्हें विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल द्वारा बैठक के लिए नहीं बुलाया गया था। श्री आनंद गोवर, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का कहना है कि उन्होंने संग्रह में कुछ जोड़ने का सुझाव दिया है। श्री प्रणब कुमार मल्लिक, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का कहना है कि वे विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल को कुछ अतिरिक्त अभिलेख देंगे। हम आशा करते हैं कि संग्रह पर अंतिम निर्णय दो सप्ताह के भीतर लिया जाएगा। उसके तुरंत बाद सूचीबद्ध करें।"

56. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 17.02.2017 का आदेश इस प्रकार है:-

"हमारे दिनांक 26.09.2016 और 28.10.2016 के आदेशों के अनुसरण में, सभी हितधारकों के परामर्श से सभी प्रासंगिक सामग्री के साथ भारतीय मानकों का एक संग्रह तैयार किया गया है। भारत संघ को संग्रह को पर्याप्त संख्या में छापने और अनुपालन के लिए सभी राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों को परिचित करने का निर्देश दिया जाता है। भारत संघ आज से छह सप्ताह के भीतर हमारे आदेशों का अनुपालन करेगा।

भारतीय मानकों, अन्य नियमों और विनियमों के साथ अनुपालन न करने की स्थिति में, याचिकाकर्ता किसी दिए गए विशिष्ट मामले में, यथास्थिति, संबंधित जिला कलेक्टर या न्यायिक अधिकारियों से संपर्क करने के अधिकारी हैं।

डब्ल्यू.पी. (सी) संख्या 44 वर्ष 2004 में याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता याचिका वापस लेने की अनुमति चाहते हैं।

डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 44 वर्ष 2004 को वापस लेने के रूप में निरस्त किया जाता है।

डब्ल्यू.पी. (सी) संख्या 330 वर्ष 2001 निस्तारित की गई।

लंबित आवेदन, यदि कोई हो, निस्तारित किए गए।"

57. उपरोक्त आदेशों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने पशुओं के वध और बूचड़खानों के प्रबंधन के संबंध में बिन्दु को नियंत्रित करने वाले विभिन्न मानकों, नियमों और कानूनों की एक सूची तैयार करने का निर्देश दिया था। सूची तैयार करने का उद्देश्य एक संग्रह तैयार करना था, जिसे सभी संबंधितों को परिचालित किया जा सके जिससे बूचड़खानों का प्रबंधन अधिक कुशलता से किया जा सके। तदनुसार संग्रह तैयार किया गया और माननीय उच्चतम न्यायालय ने भारत संघ को संग्रह को पर्याप्त संख्या में छापने और अनुपालन के लिए सभी राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों को परिचालित करने का निर्देश दिया।

58. शासनादेश दिनांक 07.07.2017 का खंड 4.4, जिस पर उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया है:-

"अद्यतन पशुधन गणना को आधार में लेते हुए सम्बन्धित लोकल एथारिटी यदि पशुवधशाला की स्थापना का औचित्य पाती है, तो डी.पी.आर. मा.उच्चतम न्यायालय के निर्देशों व सुसंगत अधिनियमों/नियमों/आदेशों के अधीन तैयार करायेगी। संबंधित लोकल एथारिटी जनपद के जिलाधिकारी के समक्ष डी पी आर सहित आवेदन-पत्र प्रस्तुत करेगी जिसे जिलाधिकारी की अध्यक्षता में गठित समिति, जिसमें सदस्य के रूप में सम्बन्धित जनपद के वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक, मुख्य पशु चिकित्साधिकारी, सम्बन्धित स्थानीय निकाय के नगर आयुक्त/अधिशाली अधिकारी/अपर मुख्य अधिकारी एवं उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के क्षेत्रीय अधिकारी होंगे, मा.सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में उल्लिखित अधिनियमों/नियमों को दृष्टिगत रखते हुए परीक्षण करेगी, यदि सम्बन्धित लोकल एथारिटी द्वारा मा.सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में वर्णित दिशा-निर्देशों के अनुसार डी.पी.आर. तैयार की गई हो, और अद्यतन पशुधन गणना के अनुसार वहाँ पर पशुवधशाला की स्थापना का औचित्य पाया जाता है, तो जिलास्तरीय समिति द्वारा अपनी स्पष्ट संस्तुति सहित प्रस्ताव प्रमुख सचिव नगर विकास विभाग की अध्यक्षता में गठित राज्य स्तरीय समिति के विचारार्थ प्रस्तुत किया जाय। राज्य स्तरीय समिति द्वारा प्रस्ताव प्राप्त होने पर 03 माह में अंदर परियोजना की स्वीकृति दिए जाने पर विचार कर यथोचित निर्णय लेगी। ."

59. शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के खंड 4.4 के महत्वपूर्ण बिंदु निम्नलिखित हैं:-

- (i) अद्यतन पशुधन गणना को आधार में लेते हुए, यदि संबंधित स्थानीय प्राधिकरण बूचड़खाना स्थापित करना उचित पाता है, तो उसे डी.पी.आर. तैयार करानी होगी।
- (ii) माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित आदेश में उल्लिखित अधिनियमों/नियमों को ध्यान में रखते हुए जिलाधिकारी की अध्यक्षता में गठित समिति द्वारा डी.पी.आर. की जांच की जाएगी।
- (iii) यदि संबंधित स्थानीय प्राधिकरण ने उच्चतम न्यायालय के आदेश में दिए गए दिशानिर्देशों के अनुसार डी.पी.आर. तैयार की है, तो जिला स्तरीय समिति अपनी स्पष्ट सिफारिश के साथ राज्य स्तरीय समिति के विचार के लिए अपना प्रस्ताव प्रस्तुत करेगी।
- (iv) राज्य स्तरीय समिति प्रस्ताव की प्राप्ति से 03 महीने के भीतर परियोजना की स्वीकृति पर विचार करेगी और उचित निर्णय लेगी।

60. शासनादेश दिनांक 07.07.2017 का खंड 4.4 "बूचड़खाने की स्थापना" के लिए डी.पी.आर. की स्वीकृति से संबंधित है। याचिकाकर्ता को डी.पी.आर. की स्वीकृति के बाद दिनांक 21.05.2015 को बूचड़खाना स्थापित करने के लिए अनापति प्रमाण पत्र पहले ही प्रदान किया जा चुका था और इसे दिनांक 04.01.2017 के आदेश द्वारा बूचड़खाना स्थापित करने के लिए सी.टी.ई. पहले ही प्रदान किया जा चुका है, अर्थात् दिनांक 07.07.2017 के शासनादेश जारी होने से पहले।

61. दूसरे, पशु बूचड़खाने की स्थापना का प्रस्ताव स्थानीय निकाय द्वारा डी.पी.आर. प्रस्तुत करके शुरू किया जाना है, और यह उस व्यक्ति द्वारा नहीं किया जाना है, जो बूचड़खाना स्थापित करने का इरादा रखता है। इसलिए, शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के खंड 4.4 के अनुसार, याचिकाकर्ता एक नई डी.पी.आर. प्रस्तुत करने के लिए बाध्य नहीं था।

62. तीसरे, जब याचिकाकर्ता के सी.टी.ओ. प्रदान करने के आवेदन को बार-बार इस आधार पर अस्वीकार किया गया था कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के अनुसार विभिन्न विभागों के साथ-साथ राज्य स्तरीय समिति से पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना आवश्यक था और इसके द्वारा योजित रिट-सी संख्या 4368 वर्ष 2022 को भी दिनांक 31.05.2023 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया था, तो याचिकाकर्ता ने दिनांक 02.06.2023 का आवेदन जिलाधिकारी को प्रस्तुत किया था, जिसमें दिनांक 21.05.2015 के अनापति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण का अनुरोध किया गया था। दिनांक 19.07.2023 को, राज्य सरकार ने जिलाधिकारी को एक पत्र लिखा, जिसमें कहा गया कि 24 बिंदुओं के संग्रह की शर्तों/नियमों के आलोक में विस्तृत जांच की जाए, याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए दिनांक 21.05.2015 के पूर्व अनापति प्रमाण पत्र को पुनर्मान्य किया जाए और जिला स्तरीय समिति की सिफारिश के साथ यथाशीघ्र सरकार को एक रिपोर्ट/प्रस्ताव भेजा जाए। उप आयुक्त, उद्योग ने अपर जिलाधिकारी (वित्त और राजस्व), उन्नाव को एक नोट लिखा था, जिसमें कहा गया था कि दिनांक 24.06.2023 के पत्र के माध्यम से क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव से यह जानकारी प्राप्त की गई थी कि क्या दिनांक 21.05.2015 के अनापति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए एक नई डी.पी.आर. की आवश्यकता है। क्षेत्रीय अधिकारी ने दिनांक 07.07.2023 के पत्र के माध्यम से

सूचित किया कि दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए एक नई डी.पी.आर. की आवश्यकता नहीं थी और इसने याचिकाकर्ता द्वारा पहले से प्रस्तुत डी.पी.आर. की एक प्रति प्रदान की, जिसे पहले ही अनुमोदित किया जा चुका था। जब उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के क्षेत्रीय अधिकारी ने दिनांक 07.07.2023 के पत्र में लिखा था कि एक नई डी.पी.आर. की आवश्यकता नहीं थी, तो शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के खंड 4.4 के अनुसार एक नई डी.पी.आर. की स्वीकृति का कोई अवसर नहीं था, जिसका संचालन भावी था।

63. जिलाधिकारी ने याचिकाकर्ता को जारी दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के संबंध में दिनांक 20.11.2023 और 16.11.2023 के पत्र लिखे, जिसके बाद एक स्थल सत्यापन किया गया और शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में उल्लिखित 24 बिंदुओं के संग्रह के अनुसार संबंधित विभागों द्वारा बिंदुवार रिपोर्टें प्रस्तुत की गईं। दिनांक 27.02.2024 के पत्र में (i) मुख्य पशु चिकित्सा अधिकारी, उन्नाव, (ii) क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उन्नाव, (iii) सहायक आयुक्त (खाद्य) खाद्य सुरक्षा और औषधि प्रशासन, उन्नाव और (iv) सहायक क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी, उन्नाव को संबोधित करते हुए, जिलाधिकारी, उन्नाव ने स्वयं लिखा है कि याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के संबंध में उपरोक्त अधिकारियों द्वारा प्रस्तुत रिपोर्टों के अनुसार, संग्रह के कुछ बिंदुओं के संबंध में निर्णय केवल उद्योग के पूर्व-परीक्षण के बाद ही संभव होगा। इस प्रकार स्वीकार्य रूप से, अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी करने के समय 24 बिंदुओं के संग्रह की सभी आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जा सकता। सी.टी.ई. के लिए आवश्यक मानदंड एक बार पूरे हो जाने पर, एक संरचना के रूप में खड़े हो जाते हैं जिसके आधार पर सी.सी.ए. प्रदान किया जाता है। सी.सी.ए. जारी होने पर एक उद्योग परिचालन हो जाता है, जिसके बाद शासनादेश दिनांक 07.07.2017 की योजना के अनुसार 24 बिंदुओं का संग्रह लागू हो जाता है।

64. ओम गुरुसाई कंस्ट्रक्शन कंपनी बनाम वी.एन. रेड्डी: 2023 SCC OnLine SC 1051 में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने निर्णीत किया कि:-

"20. यह एक ऐसा मामला है जहां अपीलकर्ता ने जल्द से जल्द संभव समय में अतिरिक्त प्रदर्शन सुरक्षा प्रस्तुत करने की शर्त का अनुपालन किया है, जो वह संभवतः अनुपालन कर सकता था। कि किसी को एक असंभव कार्य करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता-Lex non cogit ad impossibilia-एक अच्छी तरह से स्वीकृत विधिक सिद्धांत है।

21. इस न्यायालय ने राज कुमार देव बनाम तारापद देव, (1987) 4 SCC 398 में, उस मामले के तथ्यों पर सूत्र को उद्धृत, अनुमोदित और लागू करते हुए, निम्नलिखित कहा था:

"6. ... दूसरा सूत्र है lex non cogit ad impossibilia (ब्रूम्स लीगल मैक्सिमस - पृष्ठ 162) - विधि किसी व्यक्ति को वह करने के लिए बाध्य नहीं करता जो वह संभवतः नहीं कर सकता। सर डब्ल्यू. स्कॉट ने राजस्व

विधियों के कथित उल्लंघन के संदर्भ में कहा, विधि स्वयं और इसका प्रशासन, उस चीज के आगे झुकना चाहिए जिसके आगे सब कुछ झुकना चाहिए, आवश्यकता के आगे; विधि, अपने सबसे सकारात्मक और अनिवार्य आदेशों में, असंभवताओं को बाध्य करने के सभी इरादों को अस्वीकार करने के लिए समझा जाता है, जैसा कि यह अपने सामान्य सूत्रों में करता है, और विधियों का प्रशासन सभी विशेष मामलों के विचार में उस सामान्य अपवाद को अपनाता चाहिए।"

(मूल में महत्व प्रदत्त)"

65. याचिकाकर्ता एक नए/पुनर्मान्य अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए प्रस्ताव शुरू नहीं कर सकता दो कारणों से-(i) शासनादेश दिनांक 07.07.2017 प्रदान करता है कि पशु बूचड़खाने की स्थापना का प्रस्ताव स्थानीय निकाय द्वारा डी.पी.आर. प्रस्तुत करके शुरू किया जाना है, और यह याचिकाकर्ता द्वारा नहीं किया जा सकता और (ii) जिलाधिकारी ने स्वयं लिखा है कि उद्योग के संचालन शुरू होने से पहले संग्रह के सभी 24 बिंदुओं की आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जा सकता। इन परिस्थितियों में, *lex non cogit ad impossibilia* का सिद्धांत वर्तमान मामले में पूरी तरह से लागू है।

66. माननीय उच्चतम न्यायालय का आदेश कि सभी संबंधितों को परिचालन के लिए प्रासंगिक विधियों की एक सूची तैयार की जाए, जिससे पशुओं के वध और बूचड़खाने का प्रबंधन अधिक कुशलता से किया जाए, किसी भी तरह से इस तरीके से व्याख्या नहीं किया जा सकता कि संग्रह में उल्लिखित सभी 24 विधियों की आवश्यकताओं को बूचड़खाने की स्थापना से पहले पूरा करना होगा।

67. इसलिए, हम सुविचारित मत के हैं कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 जिला स्तरीय समिति द्वारा प्रदान किए गए दिनांक 21.05.2015 के अनापत्ति प्रमाण पत्र, राज्य स्तरीय समिति द्वारा प्रदान किए गए दिनांक 21.10.2016 के अनापत्ति प्रमाण पत्र और उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा जारी दिनांक 04.01.2017 के सी.टी.ई. को निरस्त नहीं करता।

68. जहां तक उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता की इस प्रस्तुति का संबंध है कि चूंकि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 ने दिनांक 26.11.2014 के पूर्व शासनादेश को अधिक्रमित कर दिया है और शासनादेश दिनांक 07.07.2017 ही संचालन में एकमात्र शासनादेश है, इसके पूर्वव्यापी संचालन का प्रश्न निहित नहीं है, यह कहना पर्याप्त है कि किसी पूर्व शासनादेश के केवल अधिक्रमण से कोई बाद का शासनादेश पूर्वव्यापी रूप से प्रभावी नहीं हो जाएगा और राज्य द्वारा जारी किसी भी शासनादेश का भावी प्रयोग होता है।

69. अब, हम रिट-सी संख्या 4368 वर्ष 2022 में दिनांक 31.05.2023 को पारित निर्णय और आदेश में दर्ज निष्कर्षों के आलोक में न्याय-निर्णीत के सिद्धांत की प्रयोज्यता के बारे में याचिका का परीक्षण करने के लिए आगे बढ़ते हैं। उपरोक्त रिट याचिका, याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 11.07.2020 के आदेश की वैधता को चुनौती देते हुए योजित की गई थी, जिसके द्वारा वायु अधिनियम और जल अधिनियम के अधीन पशु बूचड़खाने

का संचालन करने की सहमति प्रदान करने के उसके आवेदन को अस्वीकार कर दिया गया था। इस न्यायालय ने याचिकाकर्ता की इस प्रस्तुति को दर्ज किया था कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 पूर्व शासनादेश दिनांक 26.11.2014 के संचालन के दौरान प्रदान की गई पूर्व-स्थापना सहमति या पोस्ट स्थापना लेकिन पूर्व-परिचालन सहमति के लिए उठाए जाने वाले कदमों का प्रावधान नहीं करता और कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 पूर्वव्यापी रूप से संचालित नहीं होता, विशेष रूप से क्योंकि यह पहले से संचालित उद्योगों के आधुनिकीकरण और नए उद्योगों की स्थापना के लिए भी प्रदान करता है। यह याचिकाकर्ता की इस प्रस्तुति को भी दर्ज करता है कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 यह आवश्यक नहीं करता कि जिलाधिकारी या राज्य स्तरीय समिति द्वारा पहले जारी अनापति प्रमाण पत्र को किसी पुनर्मान्यकरण की आवश्यकता होगी। न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला है कि:-

"(38) उपरोक्त शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के एक अवलोकन से यह प्रकट होता है कि आधुनिक बूचड़खाने की स्थापना/संचालन की सहमति के लिए उपरोक्त शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के प्रस्तर-3 में उल्लिखित 24 संग्रह के साथ अनुपालन करना सभी बूचड़खाना इकाइयों के लिए अनिवार्य है। हम यह भी देखते हैं कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 का खंड 4 (3) स्पष्ट रूप से देखता है कि खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम, 2006 के दिनांक 05.08.2011 से प्रभावी होने के बाद, उत्तर प्रदेश नगर पालिका अधिनियम, 1916 और उत्तर प्रदेश नगर निगम अधिनियम, 1959 के अधीन लाइसेंस प्रदान करने से संबंधित प्रावधान निरर्थक हो गए हैं।

(39) स्पष्ट रूप से, जिलाधिकारी, उन्नाव द्वारा याचिकाकर्ता को आधुनिक बूचड़खाना संयंत्र स्थापित करने के लिए अनापति प्रमाण पत्र प्रदान करते हुए जारी दिनांक 21.05.2015 का आदेश शर्त संख्या 68 में स्पष्ट रूप से उल्लेख करता है कि याचिकाकर्ता के लिए भविष्य में जारी निर्देशों का पालन करना अनिवार्य होगा और शर्त संख्या 69 स्पष्ट रूप से किसी अनियमितता या किसी भी शर्त के उल्लंघन की स्थिति में उक्त अनापति प्रमाण पत्र के मानित रद्दीकरण के परिणामी प्रभाव को बताती है। उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा जारी दिनांक 04.01.2017 का आदेश स्पष्ट रूप से उल्लेख करता है कि जिलाधिकारी, उन्नाव द्वारा उपरोक्त दिनांक 21.05.2015 के आदेश द्वारा दिए गए अनापति प्रमाण पत्र में परिगणित शर्तों का पत्र और भावना में अनुपालन किया जाएगा। इसका अर्थ यह है कि याचिकाकर्ता भविष्य में जिलाधिकारी, उन्नाव द्वारा प्रदान किए गए अनापति प्रमाण पत्र की निरंतरता के लिए सभी निर्देशों का पालन करने के लिए बाध्य है। हालांकि, बिन्दु यहीं नहीं रुकता क्योंकि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 विशेष रूप से शासनादेश दिनांक 26.11.2014 के अधिक्रमण का उल्लेख करता है और तदनुसार सभी बूचड़खाना इकाइयों को बूचड़खाने की स्थापना/संचालन की सहमति के लिए उपरोक्त शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के प्रस्तर-3 में उल्लिखित 24 बिंदुओं के संग्रह का अनुपालन करने का निर्देश देता है। इस प्रकार, चूंकि दिनांक 21.05.2015 का पूर्व अनापति प्रमाण पत्र मौजूदा शासनादेश दिनांक 26.11.2014 को ध्यान में रखते हुए जारी किया गया था, जो शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के अनुसार अधिक्रमित है, यह सभी बूचड़खाना इकाइयों के लिए अनिवार्य था कि 'संचालन की सहमति' प्राप्त करने के लिए, उपरोक्त शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के प्रस्तर-3 में उल्लिखित 24 बिंदुओं के संग्रह का पालन किया जाए। इस प्रकार, स्पष्ट रूप से, मामले के दो पहलू हैं; पहला इकाई स्थापित करने के लिए शासनादेश

दिनांक 07.07.2017 के अनुसार अनापति प्रमाण पत्र लिया जाना चाहिए था; और दूसरा इकाई की स्थापना पर, इकाई को शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के अनुसार 'संचालन की सहमति' के लिए आवेदन करना चाहिए था।

(40) वर्तमान मामले में, जिलाधिकारी, उन्नाव का अनापति प्रमाण पत्र शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के जारी होने से पहले प्रदान किया गया था। यद्यपि याचिकाकर्ता आधुनिक बूचड़खाना इकाई स्थापित करने के लिए आया था, हालांकि, वही परिचालन में नहीं था और इस तरह याचिकाकर्ता के लिए शासनादेश दिनांक 07.07.2017 की सभी शर्तों का अनुपालन करना अनिवार्य था, जिसमें जिलाधिकारी, उन्नाव, राज्य स्तरीय समिति और उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से 'संचालन की सहमति' के लिए अनापति प्रमाण पत्र निहित है।

(41) यह एक स्वीकृत तथ्य है कि याचिकाकर्ता ने जिलाधिकारी, उन्नाव से अनापति प्रमाण पत्र नहीं लिया है और न ही शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के प्रावधानों का अनुपालन करने के लिए उक्त अनापति प्रमाण पत्र का पुनर्मान्यकरण प्राप्त किया है, जो अनिवार्य प्रकृति के हैं क्योंकि यह कॉमन कॉज बनाम भारत संघ व अन्य (उपरोक्त) और लक्ष्मी नारायण मोदी बनाम भारत संघ (उपरोक्त) में शीर्ष न्यायालय के निर्णय के अनुसरण में जारी किए गए हैं, आधुनिक बूचड़खाना चलाने के लिए। इसलिए, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने अभिलेखित आदेशों के माध्यम से 'संचालन की सहमति' प्रदान करने से सही रूप से इनकार किया है।"

70. स्पष्ट रूप से, पूर्व रिट याचिका का विषय सीटीओ प्रदान करने से इनकार करने का आदेश था, जबकि वर्तमान रिट याचिका का विषय याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.टी.ओ. को निरस्त करने का आदेश है। पिछली रिट याचिका में निहित बिन्दु सी.टी.ओ. जारी करने से इनकार करने वाले आदेश की वैधता के बारे में था, जबकि वर्तमान रिट याचिका में निहित बिन्दु याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.टी.ओ. को निरस्त करने वाले आदेश की वैधता के बारे में है। न्याय-निर्णीत का प्रतिबंध तब आकर्षित होता है, जब किसी मामले में प्रत्यक्ष और मुख्य रूप से विवादित विषय का पूर्व कार्यवाही में न्यायालय द्वारा अंतिम निर्णय किया गया हो। वर्तमान रिट याचिका और पिछली रिट याचिका में निहित बिन्दु समान नहीं हैं, जिससे न्याय-निर्णीत का प्रतिबंध आकर्षित हो सके।

71. इसके अतिरिक्त, पूर्व रिट याचिका में समन्वय पीठ द्वारा दिया गया निर्णय पूर्व निर्णय में उठाए गए और निर्णीत बिंदुओं के संबंध में बाद की पीठों पर एक पूर्व उदाहरण के रूप में बाध्यकारी होगा। हालांकि, पूर्व निर्णय उन बिंदुओं के संबंध में बाध्यकारी पूर्व उदाहरण के रूप में संचालित नहीं होगा, जिन पर उसमें निर्णय नहीं लिया गया है। शासनादेश दिनांक 07.07.2017 का दायरा और प्रभाव और इसका भावी संचालन दिनांक 31.05.2023 के निर्णय में तय नहीं किया गया है। इसलिए, हम विचारित मत के हैं कि उपरोक्त निर्णय उन बिंदुओं के संबंध में बाध्यकारी पूर्व उदाहरण नहीं होगा, जिन पर उस निर्णय में निर्णय नहीं लिया गया है और यह इस न्यायालय को इस रिट याचिका में उठाए गए बिंदुओं का परीक्षण करने से नहीं रोकेगा।

72. जैसा कि पूर्ववर्ती प्रस्तरों के तथ्यों से प्रकट होता है, जिलाधिकारी उन्नाव ने याचिकाकर्ता को दिनांक 21.05.2015 को उसमें उल्लिखित 69 शर्तों के अधीन आधुनिक निर्यात उन्मुख पशु बूचड़खाने की स्थापना के लिए अनापति प्रमाण पत्र प्रदान किया था। राज्य स्तरीय समिति ने याचिकाकर्ता को दिनांक 21.10.2016 के कार्यालय जापन के माध्यम से उसमें उल्लिखित 12 शर्तों के अधीन अनापति प्रमाण पत्र प्रदान किया था, जिसमें यह शर्त निहित थी कि जिलाधिकारी द्वारा जारी अनापति प्रमाण पत्र में उल्लिखित सभी शर्तों का अनुपालन करना होगा। उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने दिनांक 04.01.2017 को याचिकाकर्ता को पशु बूचड़खाना स्थापित करने की सहमति प्रदान की थी। इसके बाद शासनादेश दिनांक 07.07.2017 जारी किया गया था।

73. यह शासनादेश दिनांक 07.07.2017 जारी होने के बाद था कि उत्तर प्रदेश के राज्यपाल ने याचिकाकर्ता के साथ दिनांक 22.02.2018 का समझौता जापन किया, जिसमें आश्वासन दिया गया कि राज्यपाल राज्य की मौजूदा सुविधाओं और विनियमों के अनुसार आवश्यक अनुमतियां/पंजीकरण/अनुमोदन/मंजूरी आदि प्राप्त करने के लिए याचिकाकर्ता को सुविधा प्रदान करेंगे और याचिकाकर्ता को समयबद्ध तरीके से परियोजना स्थापित करने के लिए सुविधा प्रदान करेंगे। यह सब स्पष्ट रूप से राज्य की नीति के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए किया गया था, जिससे राज्य में उद्योगों को बढ़ावा दिया जा सके और रोजगार के अवसरों में वृद्धि हो और राज्य में विदेशी मुद्रा के प्रवाह को आकर्षित किया जा सके।

74. हालांकि, याचिकाकर्ता के सी.टी.ओ. प्रदान करने के आवेदनों को बार-बार अस्वीकार कर दिया गया और अंततः दिनांक 11.07.2020 के अस्वीकरण आदेश की वैधता को चुनौती देते हुए इसके द्वारा योजित रिट-सी संख्या 4368 वर्ष 2022 को भी दिनांक 31.05.2023 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया, बिना इन प्रश्नों पर निर्णय लिए कि क्या शासनादेश दिनांक 07.07.2017 का पूर्वव्यापी प्रभाव था और क्या उद्योग को सी.टी.ओ. प्रदान करने से पहले शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में अनुक्रमित सभी 24 विधियों की आवश्यकताओं का अनुपालन किया जा सकता था।

75. याचिकाकर्ता स्पष्ट रूप से वर्ष 2015 से उद्योग स्थापित करने और संचालित करने के प्रयास कर रहा है। इस तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में उसने अनापति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए दिनांक 02.06.2023 का आवेदन प्रस्तुत किया। उपरोक्त परिस्थितियों में अनापति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए आवेदन का प्रस्तुतीकरण याचिकाकर्ता के विरुद्ध एस्टॉपेल के रूप में संचालित नहीं होगा जिससे इसे अनापति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण की आवश्यकता को चुनौती देने से रोका जा सके।

76. प्रतिवादी तर्क देते हैं कि शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में निहित प्रावधानों के अनुसार अनापति प्रमाण पत्र का पुनर्मान्यकरण आवश्यक है, जो रिट याचिका (सिविल) संख्या 330 वर्ष 2001: (कॉमन कॉज, ए रजिस्टर्ड सोसाइटी बनाम भारत संघ व अन्य) में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिनांक 17.02.2017 को पारित आदेश के अनुपालन में जारी किया गया है।

77. उपरोक्त दिनांक 17.02.2017 के आदेश के साथ-साथ उसके कथित अनुपालन में जारी शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित आदेश या शासनादेश दिनांक 07.07.2017 में आधुनिक पशु बूचड़खाने की स्थापना के लिए पहले प्रदान किए गए अनापत्ति प्रमाण पत्रों के पुनर्मान्यकरण का कोई प्रावधान नहीं है। यह स्थापित विधि है कि विधि के विरुद्ध कोई एस्टॉपेल नहीं हो सकता। जब विधि अनापत्ति प्रमाण पत्रों के पुनर्मान्यकरण को अनिवार्य नहीं बनाता, तो अनापत्ति प्रमाण पत्र के पुनर्मान्यकरण के लिए आवेदन का केवल प्रस्तुतीकरण विधि के प्रावधानों के विरुद्ध एस्टॉपेल के सिद्धांत को आकर्षित नहीं कर सकता।

78. आक्षेपित आदेश पारित करने का प्रभाव यह है कि याचिकाकर्ता के उद्योग का संचालन उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा प्रदान किए गए सी.टी.ई. के अधीन स्थापित होने के बाद और दिनांक 31.12.2028 को समाप्त होने वाली अवधि के लिए उद्योग के पूर्व-परीक्षण को संतोषजनक पाए जाने के बाद इसे सी.सी.ए. प्रदान किए जाने के बाद प्रतिबंधित कर दिया गया है। किसी भी व्यवसाय, व्यापार या कारोबार को करने का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (छ) द्वारा गारंटीकृत एक मौलिक अधिकार है। संविधान का अनुच्छेद 19 (6) प्रदान करता है कि:-

"उक्त खंड के उप-खंड (छ) में कुछ भी किसी मौजूदा विधि के संचालन को प्रभावित नहीं करेगा, जहां तक कि यह लगाता है, या राज्य को सामान्य जनता के हित में, उक्त उप-खंड द्वारा प्रदत्त अधिकार के प्रयोग पर उचित प्रतिबंध लगाने वाला कोई विधि बनाने से रोकता है, और विशेष रूप से, उक्त उप-खंड में कुछ भी किसी मौजूदा विधि के संचालन को प्रभावित नहीं करेगा जहां तक कि यह संबंधित है, या राज्य को संबंधित कोई विधि बनाने से रोकता है,-

(i) किसी पेशे का अभ्यास करने या किसी व्यवसाय, व्यापार या कारोबार को करने के लिए आवश्यक पेशेवर या तकनीकी योग्यताएं, या

(iii) राज्य द्वारा, या राज्य के स्वामित्व या नियंत्रण वाले निगम द्वारा, किसी व्यापार, कारोबार, उद्योग या सेवा को चलाना, चाहे नागरिकों के पूर्ण या आंशिक बहिष्करण के लिए हो या अन्यथा।"

79. इस प्रकार अनुच्छेद 19 (1) (छ) के अधीन किसी भी व्यवसाय, व्यापार या कारोबार को करने का मौलिक अधिकार राज्य द्वारा बनाए गए किसी भी विधि द्वारा लगाए गए उचित प्रतिबंधों के अधीन है। **खड़क सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य:** AIR 1963 SC 1295 में, यह निर्णीत किया गया कि पुलिस विनियमों के प्रावधान पुलिस अधिकारियों के मार्गदर्शन के लिए केवल कार्यकारी या विभागीय निर्देश थे। इसलिए वे "एक विधि" नहीं होंगे जिसे राज्य अनुच्छेद 19 की संबंधित खंड 2 से 6 के अधीन बनाने का अधिकारी है जिससे अनुच्छेद 19(1) के कई उप-खंडों द्वारा गारंटीकृत मौलिक अधिकारों को विनियमित या कम किया जा सके, न ही वही अनुच्छेद 21 के भीतर "विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया" होगी।

80. अनुच्छेद 19 (1) (छ) के अधीन मौलिक अधिकार को केवल राज्य द्वारा बनाए गए विधि द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है और इसे केवल एक शासनादेश द्वारा नहीं हटाया जा सकता, विशेष रूप से जब वह पूर्वव्यापी रूप से संचालित नहीं हो सकता। रिट सी संख्या 4368 वर्ष 2022 में दिनांक 31.05.2023 को पारित निर्णय और आदेश में इस न्यायालय द्वारा इस पहलू पर विचार नहीं किया गया था।

81. उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का गठन जल अधिनियम, 1974 की धारा 4 के अधीन राज्य में धाराओं और कुओं के प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण या उपशमन के लिए किया गया था। बाद में वायु अधिनियम, 1981 अधिनियमित किया गया और वायु अधिनियम की धारा 4 प्रदान करती है कि जहां किसी राज्य सरकार ने जल अधिनियम की धारा 4 के अधीन राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का गठन किया है, ऐसे राज्य बोर्ड को वायु प्रदूषण के निवारण और नियंत्रण के लिए भी राज्य बोर्ड माना जाएगा। इस प्रकार, राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का प्राथमिक उद्देश्य वायु और जल प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए उचित उपाय करना है। माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिनांक 17.02.2017 को पारित आदेश के अनुपालन में तैयार किया गया 24 बिंदुओं का संग्रह केवल पशुओं के वध और बूचड़खानों के प्रबंधन के संबंध में विभिन्न मानकों, नियमों और कानूनों की एक सूची है जो विभिन्न विषयों से संबंधित हैं, जो केवल प्रदूषण तक सीमित नहीं हैं।

82. उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के पास वायु अधिनियम और जल अधिनियम के अधीन केवल वायु और जल प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए उचित आदेश पारित करने का अधिकार है। उसके पास किसी भी ऐसे विषय के बारे में कोई आदेश पारित करने का अधिकार नहीं है जो वायु और जल प्रदूषण से संबंधित नहीं है। जिस अधिकारी ने दिनांक 21.05.2015 का अनापति प्रमाण पत्र प्रदान किया था, वह जिलाधिकारी है, जिसने अनापति प्रमाण पत्र को निरस्त नहीं किया है और जिसने याचिकाकर्ता को अनापति प्रमाण पत्र को पुनर्मान्य कराने का निर्देश नहीं दिया है, जिसकी शासनादेश दिनांक 07.07.2017 के अनुसार भी कोई आवश्यकता नहीं है।

83. इन परिस्थितियों में उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को याचिकाकर्ता को पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र प्राप्त करने का निर्देश देने का कोई अधिकार नहीं है।

84. एक अन्य उद्योग अर्थात् मेसर्स मर्या फ़ोजन एगो फूड प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के विरुद्ध इसी तरह की कार्रवाई शुरू की गई थी और उद्योग को सील कर दिया गया था, लेकिन उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने उक्त उद्योग को जारी कारण बताओ नोटिस वापस ले लिया, बिना उपरोक्त उद्योग द्वारा कोई पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र प्रस्तुत किए। उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने पुनर्मान्य अनापति प्रमाण पत्र की मांग किए बिना 8 अन्य उद्योगों को सी.सी.ए. जारी किया है। बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दी गई व्याख्या कि वे उद्योग चल रहे उद्योग थे, जबकि याचिकाकर्ता ने अपने संचालन शुरू नहीं किए हैं, विधिक रूप से स्वीकार्य औचित्य प्रदान नहीं करती क्योंकि प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने याचिकाकर्ता के साथ-साथ अन्य उद्योगों को

सी.टी.ओ./सी.सी.ए. प्रदान किया है सभी उद्योगों के उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा दिए गए प्राधिकार के अधीन स्थापित होने के बाद। सी.सी.ए. जारी होने के बाद, याचिकाकर्ता भी उद्योग का संचालन करने का अधिकारी हो गया था।

85. उद्योग के सफल पूर्व-परीक्षण के बाद याचिकाकर्ता को सी.सी.ए. प्रदान किया गया था। हालांकि, इसके वाणिज्यिक संचालन शुरू नहीं हो सके क्योंकि इसने एक निर्यात उन्मुख उद्योग स्थापित किया है जिसे कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (APEDA) के साथ अनिवार्य रूप से पंजीकृत होना आवश्यक है। याचिकाकर्ता को उपरोक्त प्राधिकरण के साथ पंजीकृत करने के लिए APEDA के अधिकारियों द्वारा पूर्ण रूप से संचालित संयंत्र का निरीक्षण आवश्यक है। दिनांक 13.01.2016 के एक शासनादेश में निहित प्रावधानों के अनुसार याचिकाकर्ता के उद्योग में पशु पालन विभाग से एक पशु चिकित्सक की नियुक्ति आवश्यक है। यद्यपि पशु पालन विभाग ने दिनांक 27.12.2024 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता के उद्योग में एक पशु चिकित्सक को संलग्न किया था, यह आदेश दिनांक 31.12.2024 के एक अन्य आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया और याचिकाकर्ता सरकारी पशु चिकित्सक की नियुक्ति के अभाव में APEDA के साथ पंजीकृत नहीं हो सका। यह मामला नहीं है कि याचिकाकर्ता उद्योग का संचालन नहीं कर रहा है, बल्कि अधिकारी याचिकाकर्ता को उसके संचालन में बाधाएं उत्पन्न करके उद्योग चलाने की अनुमति नहीं दे रहे हैं।

86. उपरोक्त तथ्य याचिकाकर्ता के इस तर्क का समर्थन करते हैं कि विपक्षी पक्षकारों ने याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.सी.ए. को इस कारण से निरस्त करने में याचिकाकर्ता के साथ शत्रुतापूर्ण भेदभाव का व्यवहार किया है कि याचिकाकर्ता ने पुनर्मान्य अनापत्ति प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किया था।

87. उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा दिनांक 23.08.2024 को याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए सी.सी.ए., जो दिनांक 23.08.2024 से 31.12.2028 की अवधि के लिए वैध था, को निरस्त करते हुए दिनांक 25.11.2024 को पारित आदेश, बिना किसी ऐसे आरोप के था कि याचिकाकर्ता प्रदूषण विधियों का उल्लंघन कर रहा था या उसने 24 बिंदुओं के संग्रह के किसी प्रावधान या किसी अन्य कानून/नियम/विनियम के किसी प्रावधान का उल्लंघन किया था, स्पष्ट रूप से अनुचित और अन्यायपूर्ण है। उपरोक्त के अतिरिक्त, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की इस कार्रवाई के परिणामस्वरूप एक निर्यात उन्मुख उद्योग बंद हो गया है, जिसके संबंध में राज्य के राज्यपाल ने दिनांक 22.02.2018 का समझौता जापन किया था, जिसमें राज्य की मौजूदा सुविधाओं और विनियमों के अनुसार आवश्यक अनुमतियां/पंजीकरण/अनुमोदन/मंजूरी आदि प्राप्त करने के लिए याचिकाकर्ता को सुविधा प्रदान करने और जहां भी लागू हो, राज्य/केंद्र सरकार की विभिन्न योजनाओं के अधीन प्रोत्साहन प्राप्त करने में याचिकाकर्ता की सहायता करने के लिए सहमति व्यक्त की गई थी। यह समझौता जापन राज्य में उद्योगों को बढ़ावा देने की राज्य की नीति के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए किया गया था, जिससे रोजगार के अवसरों में वृद्धि हो और राज्य में विदेशी मुद्रा के प्रवाह को आकर्षित किया जा सके।

88. आक्षेपित आदेश, रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने व राज्य में विदेशी मुद्रा के प्रवाह को आकर्षित करने के लिए राज्य में उद्योगों को बढ़ावा देने की राज्य की नीति की अवहेलना में उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा पारित किया गया है। यह माननीय राज्यपाल द्वारा दिनांक 22.02.2018 को हस्ताक्षरित समझौता जापन की पूर्ण अवहेलना में पारित किया गया है, जो उद्योग की स्थापना को सुविधाजनक बनाने के लिए हुए थे ।

89. उपरोक्त चर्चा के दृष्टिगत, हम विचारित मत के हैं कि उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के मुख्य पर्यावरण अधिकारी द्वारा दिनांक 14.11.2024 को पारित आक्षेपित आदेश विधि में अस्थिर है।

90. तदनुसार, रिट याचिका स्वीकार की जाती है। उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के मुख्य पर्यावरण अधिकारी द्वारा दिनांक 14.11.2024 को पारित आक्षेपित आदेश, जिसके द्वारा पशु बूचड़खाना चलाने के लिए दिनांक 23.08.2024 को याचिकाकर्ता को जारी समेकित संचालन की सहमति और अनुज्ञा को निरस्त किया गया था, निरस्त किया जाता है। विपक्षी पक्षकारों को याचिकाकर्ता को समेकित संचालन की सहमति और अनुज्ञा दिनांक 23.08.2024 के अनुसरण में आधुनिक पशु बूचड़खाने का संचालन करने की अनुमति देने का निर्देश दिया जाता है और राज्य में उद्योगों को बढ़ावा देने की राज्य की नीति को ध्यान में रखते हुए उद्योग के संचालन में इसे सुविधा प्रदान करने का निर्देश दिया जाता है, जिससे रोजगार के अवसरों में वृद्धि हो और राज्य में विदेशी मुद्रा के प्रवाह को आकर्षित किया जा सके, साथ ही राज्य के माननीय राज्यपाल और याचिकाकर्ता के बीच दिनांक 22.02.2018 को किए गए समझौता जापन को ध्यान में रखते हुए, जिसमें आश्वासन दिया गया था कि राज्यपाल याचिकाकर्ता को समयबद्ध तरीके से परियोजना स्थापित करने के लिए सुविधा प्रदान करेंगे।

91. पक्षकार वाद का अपना व्यय स्वयं वहन करेंगे।

(2025) 2 ILRA 561

मूल अधिकार क्षेत्र

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 24.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति महेश चंद्र त्रिपाठी

माननीय न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार

रिट सी संख्या-21238 वर्ष 2024

मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...याचिकाकर्ता

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

श्री गौरांग कुलश्रेष्ठ, श्री रोहन गुप्ता, श्री शिखर कौशल, श्री अनुज चौहान, श्री अनिल तिवारी (वरिष्ठ अधिवक्ता)

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मु.स्था.अधि., श्री कौशलेंद्र नाथ सिंह, सुश्री अंजलि गोखलानी, श्री मनीष गोयल (वरिष्ठ अधिवक्ता)

(ए) संवैधानिक विधि-कॉर्पोरेट दिवालियापन और धोखाधड़ी-शहरी नियोजन और विकास/रियल एस्टेट-दिवालियापन और शोधन अक्षमता-मानचित्र का पुनः सत्यापन-दिवालियापन समाधान प्रक्रिया (आईआरपी)-कॉर्पोरेट दिवालियापन समाधान प्रक्रिया (सीआईआरपी)-भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 254 - दिवालियापन और शोधन अक्षमता संहिता, 2016-धारा 7, 14, 29ए, 65 और 238-दिवालियापन और शोधन अक्षमता (संशोधन), 2018, उ.प्र. औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1976-धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 - अध्याय 1 के खंड 2 के उप खंड (पी), (यू), (वी), (वाई) और (जेडए)-विरोधाभास का सिद्धांत-स्थगन-दुरुपयोग की प्रक्रिया के रूप में रिवर्स सीआईआरपी -कपटपूर्ण दिवालियापन-एकीकृत परियोजना दायित्व-सार्वजनिक हित और धोखाधड़ी रोकथाम-संघ दायित्व-कॉर्पोरेट पर्दा खोलने का सिद्धांत-समवर्ती क्षेत्र में संघ विधि और राज्य विधि के बीच संघर्ष की स्थिति में, पूर्व बाद पर प्रबल होता है-आईबीसी, 2016 के अधीन पारित एनसीएलटी/एनसीएलएटी के आदेश उ.प्र. औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम के अधीन राज्य प्राधिकरणों के निर्णयों को अधिक्रमित करते हैं-एकीकृत परियोजना के अधीन देय राशि और दायित्वों से बचने के लिए रचे गए कपटपूर्ण दिवालियापन के मामलों में रिवर्स सीआईआरपी का आह्वान नहीं किया जा सकता है। (प्रस्तर - 45 से 49, 120 से 123, 136)

नोएडा ने 2011 में एक स्पोर्ट्स सिटी योजना शुरू की-याचिकाकर्ता, एक संघ सदस्य, को भूमि आवंटित की गई-उप-विभाजन और पट्टा विलेख निष्पादित किए गए-परियोजना वितरित करने में विफलता के बाद, घर खरीदारों ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध दिवालियापन दायर किया-एनसीएलटी/एनसीएलएटी आदेशों के अधीन रिवर्स सीआईआरपी शुरू की गई-आईआरपी और हितधारकों ने नोएडा से मानचित्र पुनः सत्यापन मांगा-जिसे बोर्ड प्रस्तावों और सीएजी रिपोर्ट का संदर्भ देते हुए अस्वीकार कर दिया गया-अस्वीकृति को चुनौती देते हुए याचिका दायर की गई। (प्रस्तर- 2 से 28)

निर्णय:-एनसीएलटी और एनसीएलएटी द्वारा पारित आदेशों का पालन किया जाना है और नोएडा प्राधिकरण, आदेश के अनुपालन में कोई आपत्ति नहीं उठा सकता न कोई बाधा नहीं उत्पन्न कर सकता। देय राशि और परियोजना दायित्वों से बचने के लिए रचे गए कपटपूर्ण दिवालियापन के मामलों में रिवर्स सीआईआरपी लागू नहीं है। दिवालियापन में धकेली गई कंपनियों का कॉर्पोरेट पर्दा खोला जा सकता है जिससे निदेशकों पर धन के दुरुपयोग और एकीकृत परियोजना कर्तव्यों की उपेक्षा के लिए धोखाधड़ी करने का मुकदमा चलाया जा सके। धोखाधड़ी और सीएजी निष्कर्षों को देखते हुए मानचित्रों को पुनः सत्यापित करने से नोएडा का इनकार उचित है। (प्रस्तर-50, 120 से 123, 136)

याचिका निस्तारित। (ई-7)**उद्धृत निर्णयों की सूची:**

1. एम.सी. मेहता बनाम कमलनाथ, (1997) 1 एससीC 388
2. एम.आई. बिल्डर्स बनाम राधेश्याम साहू, 1999 (6) एससीC 464
3. राजीव सूरी बनाम डी.डी.ए., (2022) 11 एससीC 1
4. आर.एन.आर. लिमिटेड बनाम आर.आई. लिमिटेड, 2010 (7) एससीC 1
5. सेंटर फॉर पी.आई.एल. बनाम यू.ओ.आई., 2012 (3) एससीC 1
6. मनमोहन लाल छड्डा बनाम यू.ओ.आई., 2014 (9) एससीC 516
7. सी.आई.टी. बनाम मोनेट इस्पात एंड एनर्जी लिमिटेड, एसएलपी संख्या 6483-2018 व अन्य
8. इनोवेटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आईसीआईसीआई बैंक व अन्य, (2018) 1 एससीC 407
9. मेसर्स ई.पी.डी. प्राइवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य व अन्य, 2019 एससीC OnLine एससी 1542
10. पी.यू.एल.आई. लिमिटेड व अन्य बनाम यू.ओ.आई. व अन्य, (2019) 8 एससीC 416
11. नंद किशोर गुप्ता व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य, 2010 (1) एससीC 282
12. उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य बनाम रेणुसागर पावर कंपनी व अन्य, 1988 (4) एससीC 59
13. डी.डी.ए. बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी व अन्य, 1996 (4) एससीC 622
14. शुभा मुखर्जी बनाम बी.सी.सी.एल., 2000 (3) एससीC 312
15. राजस्थान राज्य बनाम जी.एल.के.यू. प्राइवेट लिमिटेड व अन्य, 2016 (4) एससीC 469
16. आई.आई.टी. लिमिटेड बनाम मोटोरोला इनकॉर्पोरेटेड व अन्य, 2011 (1) एससीC 74
17. एशिया फाउंडेशन एंड कंस्ट्रक्शंस लिमिटेड बनाम गुजरात राज्य व अन्य, 1985 एससीC Online Guj 93
18. हाईटोन मर्चेण्ट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम सताबादी इन्वेस्टमेंट कंसल्टेंट्स प्राइवेट लिमिटेड, कंपनी अपील (एटी) (दिवालियापन) संख्या 258 वर्ष 2021
19. वी.आई.पी. लिमिटेड बनाम एक्सिस बैंक लिमिटेड, (2022) 8 एससीC 352
20. रास्टर इमेजेज प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2023 एससीC Online 3594
21. बिक्रम चटर्जी व अन्य बनाम यू.ओ.आई. व अन्य, (2019) 19 एससीC 161
22. घनश्याम मिश्रा एंड संस प्राइवेट लिमिटेड बनाम ई.ए.आर. कंपनी लिमिटेड व अन्य, (2021) 9 एससीC 657
23. फ्लैट बायर्स एसोसिएशन विंटर हिल्स बनाम उमंग रियलटेक प्राइवेट लिमिटेड, 2020 एससीC Online NCLAT 1199
24. सैलोमन बनाम सैलोमन एंड कंपनी लिमिटेड, 1897 AC 22:(1895-99) All ER

25. लिटिलवुड्स स्टोर्स बनाम आई.आर.सी., 1969 (1) WLR 1241
26. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रेणुसागर पावर कंपनी, (1988) 4 एससीC 59
27. राजस्थान राज्य व अन्य बनाम जी.एल.एस.के.यू. प्राइवेट लिमिटेड व अन्य, (2016) 4 एससीC 469
28. सुभा मुखर्जी व अन्य बनाम बी.सी.सी.एल. व अन्य, (2003) 3 एससीC 312
29. कलकत्ता क्रोमोटाइप लिमिटेड बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कोलकाता के कलेक्टर, AIR 1998 एससी 1631
30. न्यू होराइजन लिमिटेड व अन्य बनाम यू.ओ.आई. व अन्य, 1995 (1) एससीC 478
31. सी.आई.टी. बनाम मीनाक्षी मिल्स लिमिटेड मदुरा, AIR 1967 एससी 819
32. टेलको व अन्य बनाम बिहार राज्य, AIR 1965 एससी 40
33. जुगगी लाल कमलापत बनाम सी.आई.टी., उ.प्र., AIR 1969 एससी 932
34. आर्सेलर मित्तल इंडिया प्राइवेट लिमिटेड बनाम सतीश कुमार गुप्ता व अन्य, 2019 (2) एससीC1
35. डी.डी.ए. बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी (पी) लिमिटेड व अन्य, 1996 (4) एससीC 622
36. उदगर गगन प्रॉपर्टीज लिमिटेड बनाम संत सिंह व अन्य, 2016 (11) एससीC 378
37. माधुकर सदभा शिवरकर (मृतक) द्वारा एलआरएस बनाम महाराष्ट्र राज्य व अन्य, 2015 (6) एससीC 557
38. मेसर्स ई.पी.डी. प्राइवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य व अन्य, (2020) 13 एससीC 308
39. नोएडा टोल ब्रिज कंपनी लिमिटेड बनाम एफ.एन.आर.डब्ल्यू.ए. व अन्य, सिविल अपील संख्या.../2024 [एसएलपी(सी) संख्या 33403/2016]
40. जेपी ऑर्चर्ड रेजिडेंट वेलफेयर सोसायटी बनाम यू.ओ.आई. व अन्य, रिट याचिका (सिविल) संख्या 854/2017
41. चित्रा शर्मा बनाम यू.ओ.आई., 2018 (18) एससीC 575
42. पायनियर अर्बन लैंड एंड इंफ्रास्ट्रक्चर बनाम यू.ओ.आई., 2019 (8) एससीC 416
43. मेसर्स इनोवेंटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आईसीआईसीआई बैंक, (2018) 1 एससीC 407
44. घनश्याम मिश्रा एंड संस प्राइवेट लिमिटेड बनाम ई.ए.आर. कंपनी लिमिटेड, 2021 (9) एससीC 657
45. रतन चंद हीरा चंद बनाम अस्कर नवाज जंग, (1991) 3 एससीC 67

(माननीय न्यायमूर्ति महेश चंद्र त्रिपाठी एवं माननीय न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार द्वारा उद्धोषित)

विषय-सूची

क्र.सं.	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1	वाद के तथ्य	02-14
2	याचिकाकर्ता की ओर से तर्क	14-20
3	प्रतिवादियों की ओर से तर्क	21-28

4	दिवालियापन कार्यवाही	28-29
5	रिवर्स सीआईआरपी लागू नहीं है और कॉर्पोरेट पर्दा खोलना	29-31
6	कॉर्पोरेट पर्दा का उल्टा खोलना	32-33
7	खेल सुविधाओं का गैर-विकास	34
8	घर खरीदारों का हित	34-35
9	किशतों के भुगतान के लिए नोटिस	35
10	विभिन्न कंपनियों की शेयरधारिता में परिवर्तन	35-40
11	याचिकाकर्ता की ओर से पुनः तर्क	41-43
12	न्यायालय द्वारा विश्लेषण	43
13	ए. नोएडा में स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए योजना-2010-2011	43-44
14	बी. एक संघ को आवंटन और उप-विभाजन	44-47
15	सी. दिवालियापन	47-48
16	डी. रिवर्स दिवालियापन	48-50
17	ई. कॉर्पोरेट पर्दा उठाना	50-54
18	एफ. धन शोधन निवारण अधिनियम का कार्यान्वयन	54-55
19	जी. धोखाधड़ी	56-58
20	एच. सार्वजनिक न्यास का सिद्धांत	58-59
21	आई. मिलीभगत	59-62
22	जे. घर खरीदारों का हित	62-64
23	के. उच्च न्यायालय का हस्तक्षेप	66
24	एल. निष्कर्ष	66-67
25	एम. जब संघ का एक सदस्य दिवालियापन में जाता है तो संघ पर प्रभाव	68-69

1. याचिकाकर्ता की ओर से श्री शिखर कौशल और श्री अनुज चौहान, विद्वान अधिवक्ता की सहायता से श्री अनिल तिवारी, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, राज्य-प्रतिवादी संख्या 1 के लिए श्री देवेश विक्रम, विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता और श्री मोहन श्रीवास्तव, विद्वान स्थायी अधिवक्ता की सहायता से श्री एम.सी. चतुर्वेदी, विद्वान अपर महाधिवक्ता और प्रतिवादी संख्या 2 के लिए श्री कौशलेंद्र नाथ सिंह और सुश्री अंजलि गोखलानी, विद्वान अधिवक्ता की सहायता से श्री मनीष गोयल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता को सुना गया।

वाद के तथ्य

2. नवीन ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण¹ ने वर्ष 2011 में "स्पोर्ट्स सिटी-II" के नाम से एक योजना शुरू की, जो नोएडा के सेक्टर 78, 79 और 150 में विकसित की जानी थी। यह योजना 03.03.2011 को शुरू की गई थी और 24.03.2011 को बंद की गई थी। योजना के अनुसार, नोएडा के सेक्टर 78, 79 में 72.75 हेक्टेयर और सेक्टर 150 में अन्य 80 हेक्टेयर भूमि पर एक स्पोर्ट्स सिटी विकसित की जानी थी। योजना के लिए आरक्षित मूल्य रु.11,500/- प्रति वर्ग मीटर निर्धारित किया गया था। मूल्य को जानबूझकर कम रखा गया था क्योंकि डेवलपर को उन्हें आवंटित की गई कुल भूमि के 70% पर खेल सुविधाएं बनानी थीं, जो विपणन योग्य नहीं थी, और इसके अतिरिक्त, डेवलपर को इसे विकसित करने के लिए अपने फंड खर्च करने थे। शेष 30% भूमि में, 28% समूह आवास और 2% वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए था। योजना में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि इस स्पोर्ट्स सिटी में जनसंख्या घनत्व प्रति हेक्टेयर 1650 होगा। इस योजना में कुल भूमि का अधिकतम स्वीकार्य फ्लोर एरिया रेशियो² 1.5 था। मनोरंजन घटक (अर्थात् गोल्फ कोर्स, स्टेडियम आदि जैसी खेल गतिविधियाँ और खुले स्थान) के खुले/हरे क्षेत्र को संपूर्ण भूमि के लिए खुले हरे क्षेत्र के रूप में माना जाना था।

3. उपर्युक्त योजना के जवाब में, केवल दो कंपनियों ने स्पोर्ट्स सिटी के आवंटन के लिए आवेदन किया, पहली मेसर्स वेव प्राइवेट लिमिटेड थी, जिसने आरक्षित मूल्य पर आवेदन किया था और दूसरी मेसर्स जानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड के नेतृत्व में कंपनियों का एक संघ था (मुख्य सदस्य) 8 अन्य कंपनियों के साथ जो संबंधित सदस्य थे। मेसर्स जानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड के संघ की बोली स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए सबसे अनुपालन योग्य पाई गई, और इसलिए, परियोजना उन्हें आवंटित की गई। नोएडा प्राधिकरण ने 28.03.2011 को एक स्वीकृति पत्र जारी किया और मुख्य सदस्य को आवंटन के बारे में सूचित किया। इसके बाद, नोएडा प्राधिकरण ने दिनांक 04.05.2011 का आवंटन-सह-आरक्षण पत्र जारी किया और संघ को 60 दिनों के भीतर रु.35,76,01,125/- की आवंटन राशि जमा करने के लिए कहा, जिसमें विफल रहने पर ब्रोशर की शर्तों और नियमों के अनुसार कार्रवाई की जाएगी। आवंटन पत्र में, संघ को सूचित किया गया था कि ब्रोशर में उल्लिखित शर्तों और नियमों के अनुसार प्लॉट संख्या एससी 01-01, सेक्टर 78 और 79, नोएडा में कुल 7,27,500 वर्ग मीटर भूमि संघ के पक्ष में आरक्षित की गई थी।

4. दिनांक 11.10.2011 के पत्र द्वारा, संघ ने अधिकारियों से अनुरोध किया कि आवंटित प्लॉट को संघ के सदस्यों के पक्ष में उप विभाजित किया जाए, जिन्होंने एक संघ के रूप में एक साथ आवेदन किया था। संघ के अनुरोध को 24.10.2011 को नोएडा प्राधिकरण ने स्वीकार कर लिया और पूरे स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को छह भागों में विभाजित किया गया। स्वीकृति पत्र का प्रासंगिक भाग इस प्रकार था:-

"उपरोक्त विषयक आपके दिनांक 11 अक्टूबर, 2011 के पत्र के संदर्भ में, मुझे आपको सूचित करने का निर्देश दिया गया है कि योजना के ब्रोशर की शर्तों और नियमों को देखते हुए, उक्त प्लॉट को निम्नलिखित तरीके से छह (6) भागों में उप-विभाजित करने के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा आपका अनुरोध स्वीकार कर लिया गया है;

प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर-79 का 5 भागों में और प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर-78 में उप-विभाजन, जो प्लॉट नं. एससी-01 सेक्टर-79 नोएडा के कुल 712981.00 वर्ग मीटर आवंटित क्षेत्र का हिस्सा है अर्थात्

(1) एससी-01/ए, जो 71,00,000 वर्ग मीटर है

(2) एससी-01/बी जो 48,000 वर्ग मीटर है

(3) एससी-01/सी जो 2,50,027 वर्ग मीटर है

(4) एससी-01/डी जो 1,00,000 वर्ग मीटर है और

(5) एससी-01/ई जो 80,000 वर्ग मीटर है (कुल 5,78,027.50 वर्ग मीटर)

(6) एससी-01 सेक्टर-78 जो 14,272.50 वर्ग मीटर है, जो प्लॉट नं. एससी-01 सेक्टर 78 नोएडा के कुल 14,519.00 वर्ग मीटर आवंटित क्षेत्र का हिस्सा है।

साथ ही योजना के ब्रोशर की शर्तों और नियमों को देखते हुए, प्लॉट संख्या एससी-01/सी सेक्टर-79 जो 2,50,027.50 वर्ग मीटर है के लिए एसपीसी अर्थात् मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड जिसमें संघ सदस्य शामिल हैं (1) मेसर्स जानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड-62.5%, (2) मेसर्स मेरिटन इन्फोटेक प्राइवेट लिमिटेड-18.50%, (3) मेसर्स सतलुज एगो प्रोडक्ट्स लिमिटेड-9.5% (4) मेसर्स जानाडू इन्फ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड-9.50%-2,50,027.50 वर्ग मीटर, को पट्टा विलेख के निष्पादन के लिए स्वीकृत किया गया है।

उप विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01/ए सेक्टर 79 के पट्टा विलेख का निष्पादन संबंधित सदस्य अर्थात् मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के पक्ष में-48,000 वर्ग मीटर स्वीकृत किया गया है।

उप विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01/बी सेक्टर 79 के पट्टा विलेख का निष्पादन संबंधित सदस्य अर्थात् मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के पक्ष में - 48,000 वर्ग मीटर स्वीकृत किया गया है।

उप विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01/डी सेक्टर-79 के पट्टा विलेख का निष्पादन संबंधित सदस्य मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नाम पर - 1,00,000 वर्ग मीटर स्वीकृत किया गया है।

उप विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01/ई सेक्टर-79 के पट्टा विलेख का निष्पादन संबंधित सदस्य मेसर्स जानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड के नाम पर - 80,000 वर्ग मीटर स्वीकृत किया गया है।

उप विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर-79 के पट्टा विलेख का निष्पादन संबंधित सदस्य मेसर्स जानाडू इन्फ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड के नाम पर - 14,272.50 वर्ग मीटर जो प्लॉट नं. एससी-01 सेक्टर 78 नोएडा के कुल 14519.00 वर्ग मीटर आवंटित क्षेत्र का हिस्सा है स्वीकृत किया गया है।"

5. इसके बाद, नोएडा प्राधिकरण और संघ के विभिन्न सदस्यों के बीच अलग-अलग पट्टा विलेख निष्पादित किए गए। तदनुसार, नोएडा प्राधिकरण ने 24.10.2011 को मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड³ के पक्ष में एससी-01/ए सेक्टर-79 के संबंध में 1,00,000 वर्ग मीटर भूमि के लिए स्पोर्ट्स सिटी योजना के अधीन समूह आवास परियोजना के विकास के लिए एक पट्टा विलेख निष्पादित किया। नोएडा प्राधिकरण ने याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में 11.11.2011 को एक कब्जा प्रमाण पत्र भी जारी किया था।

6. याचिकाकर्ता कंपनी ने फिर से नोएडा प्राधिकरण से अनुरोध किया कि याचिकाकर्ता कंपनी के प्लॉट को 50,000 वर्ग मीटर प्रत्येक के दो हिस्सों में विभाजित किया जाए, प्लॉट संख्या एससी-01/ए1, याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा रखा गया था और प्लॉट संख्या एससी-02/ए2 मेसर्स एरीना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड को आवंटित किया गया था, जो याचिकाकर्ता कंपनी की 100% सहायक कंपनी है। तदनुसार, उन दो कंपनियों के लिए 50,000 वर्ग मीटर प्रत्येक के लिए प्राधिकरण द्वारा नई उप पट्टे निष्पादित की गईं।

7. नोएडा प्राधिकरण ने अब तक पूरे सेक्टर 78 और 79 के स्पोर्ट्स सिटी को विभिन्न प्लॉटों में विभाजित कर दिया था और उसी को विभिन्न कंपनियों को आवंटित किया था, जो आवंटित कंपनियों की 100% सहायक कंपनियां थीं। स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए आवंटितों द्वारा एक साथ एक एकीकृत योजना दाखिल की गई थी, जिसमें खेल, वाणिज्यिक और साथ ही आवासीय क्षेत्र विकसित किया जाना था और 16.06.2014 को नोएडा प्राधिकरण द्वारा स्वीकृत किया गया था। प्रत्येक उप पट्टेदार/कंपनियों को आवासीय, वाणिज्यिक और साथ ही खेल सुविधाओं को विकसित करने के लिए अलग से क्षेत्र सौंपे गए थे। स्वीकृत मानचित्र के चार्ट में, आवासीय, वाणिज्यिक और खेल सुविधाओं के पूरा होने के लिए विभिन्न कंपनियों के दायित्व अंकित किए गए थे, जो इस प्रकार थे:-

प्लॉट नंबर एससी-01, 01, सेक्टर 78, 79 और एससी -01/ए&बी, सेक्टर-101, नोएडा (यूपी)									
क्र. सं.	कंपनी, उसका प्लॉट नंबर और (हर कंपनी को दिया गया प्लॉट एरिया वर्ग मीटर में)	हर कंपनी द्वारा विकसित किया जाने वाला एफएआर वर्ग मीटर में	प्रस्तावित भूमि कवरेज (वर्ग मीटर)				प्रस्तावित एफएआर (वर्ग मीटर)		
			खेल (वर्ग मीटर में)	आवासीय (वर्ग मीटर में) (ए)	व्ययसा यिक (वर्ग मीटर में) (बी)	खेल (वर्ग मीटर में) (सी)	आवासीय (वर्ग मीटर में) (पी)	व्यवसा यिक (वर्ग मीटर में) (क्यू)	खेल (वर्ग मीटर में) (आर)
1	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड एससी-01/ए1, खंड 79	1,37,500.00	35000.00	15000.00	0.00	0.00	137500.00	0.00	0.00

	(50,000.00)								
3	मेसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर यूरेस प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/ए2, खंड-79 (50,000.00)	1,37,500.00	35000.00	15000.00	0.00	0.00	137500.00	0.00	0.00
4	मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कान्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/बी1, खंड 79, (24,000.00)	66,000.00	16800.00	6735.00	465.00	0.00	65340.00	680.00	0.00
5	मेसर्स गोल्फग्रीन बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/बी2, खंड 79, (24,000.00)	0.00	16800.00	7200.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00

6	मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/सी1, खंड 79, (3,04,209 .30)	2,57,256. 95	198390 .51	101101 .78	417.01	4300. 00	250856 .95	400.00	6000. 00
9	मेसर्स रोबस्ट इनोवेशन प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/सी2, खंड 79, (8000.00)	12,000.0 0	5600.0 0	2400.0 0	0.00	0.00	12000. 00	0.00	0.00
10	मेसर्स किन्डल देवेलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/डी1, खंड 79, (40,000.0 0)	78,714.0 0	28000. 00	11740. 00	260.00	0.00	77814. 00	900.00	0.00
11	मेसर्स गोल्फग्रीन रेजीडेंसी प्राइवेट लिमिटेड	22,500.0 0	7000.0 0	2830.0 0	170.00	0.00	22330. 00	170.00	0.00

	एससी- 01/डी2, खंड 79, (10,000.0 0)								
12	मेसर्स गोल्फग्रीन एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/डी3, खंड 79, (25,000.0 0)	56,250.0 0	17500. 00	7250.0 0	250.00	0.00	55750. 00	500.00	0.00
13	मेसर्स गोल्फग्रीन मैन्शन्स प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/डी4, खंड79, (25,000.0 0)	62,500.0 0	17500. 00	7175.0 0	325.00	0.00	61812. 50	687.50	0.00
14	मेसर्स ज्ञानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/ई1, खंड 79,	1,10,000. 00	28000. 00	11680. 00	300.00	0.00	108998 .00	1002.0 0	0.00

	(40,000.00)								
15	मेसर्स गोल्फ ग्रीन इंफ्रा प्राइवेट लिमिटेड एससी- 01/ई2, खंड 79, (20,000.00)	55,000.00	14000.00	5795.00	205.00	0.00	54795.00	205.50	0.00
16	मेसर्स गोल्फग्रीन सुपरस्ट्रक्चर र यूरेस प्राइवेट लि. एससी- 01/ई3, खंड 79, (20,000.00)	55,000.00	14000.00	5000.00	400.00	0.00	54450.00	550.00	0.00
17	मेसर्स ज़ानाडू इन्फ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड एससी-01, एसईसी- 78, (14,272.50)	4,281.75	9990.75	0.00	0.00	4781.75	0.00	0.00	4281.75

18	मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एससी-01/ए, खंड 101, (19,170.00)	0.00	19170.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00
19	मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड एससी-01/बी, खंड 101, (29,350.00)	0.00	29330.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00
	प्रस्तावित विकास 7,03,001.80	10,54,502.70				28.38		5074.00	
	अनुमेय विकास 7,03,001.80	10,54,502.70	492161.26	198840.50	14060.01	5881.75	852038.18	5624.01	
खेल सुविधाएं									
सहायक				प्लॉट संख्या		लैंड पार्सल में होने वाली सुविधाएं		न्यूनतम खर्च होने वाली राशि (करोड़ में)	
मेसर्स श्री सी ग्रीन				एससी-01/सी1		गोल्फ कोर्स (9 होल)		40.00	

डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड			
मेसर्स एरिना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/ए2	मल्टीपर्स प्लेफील्ड	10.00
मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	टेनिस सेंटर	35.00
मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	स्विमिंग सेंटर	50.00
मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	प्रो-शॉप्स/फूड और बेवरेज	30.00
मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1 आईटी	सेंटर/एडमिनिस्ट्रेशन/मेडिकल ए सेंटर	65.00
मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	इनडोर मल्टीपर्स हॉल, स्पोर्ट्स हॉल जिसमें शामिल हैं जिम्नास्टिक, टेबल टेनिस, स्क्वैश, बास्केटबॉल, वॉलीबॉल, बैडमिंटन, रॉक क्लाइंबिंग	30.00
मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01/सी1	क्रिकेट अकादमी	50.00
सभी		आंतरिक सड़कें और पार्क	25.00
मेसर्स ज़ानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	एससी-01, खंड-78	हॉस्पिटल/सीनियर लिविंग/मेडिसिन सेंटर	60.00
सभी		सर्कुलेशन स्पेस, कालीन, उपयोगिताएँ आदि।	15.00

8. 16.6.2014 के स्वीकृत एकीकृत मानचित्र के अनुसार, याचिकाकर्ता कंपनी का दायित्व प्लॉट संख्या एससी-01/ए-1 सेक्टर 79 पर 50,000 वर्ग मीटर के क्षेत्र में था, जिसमें 1,37,500 वर्ग मीटर का एफएआर था, जिसमें आवासीय के लिए 30% कवरेज (कुल भूमि का 30% होने के कारण 15,000 वर्ग मीटर) और उनके द्वारा विकसित की जाने वाली खेल सुविधा 0.00 वर्ग मीटर थी। इस प्रकार, भूमि का 70% खेल सुविधा के

लिए खुला छोड़ा जाना था। याचिकाकर्ता कंपनी को न तो किसी वाणिज्यिक क्षेत्र का विकास आवंटित किया गया था और न ही उसे खेल सुविधा विकसित करने का दायित्व था।

9. फिर से, याचिकाकर्ता कंपनी ने नोएडा प्राधिकरण से अनुरोध किया कि सेक्टर 79 में अपने प्लॉट संख्या एससी-1/ए1 को दो प्लॉटों में उप विभाजित किया जाए जिनमें एससी-01/ए-1 अल्फा, सेक्टर 79, नोएडा 30,000.00 वर्ग मीटर है, जो याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा रखा गया था, और एससी-01/ए1-बीटा, सेक्टर-79, नोएडा, 20,000.00 वर्ग मीटर है, जिसे बाद में मेसर्स पिनेकल सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड के पक्ष में स्थानांतरित किया गया था। नोएडा प्राधिकरण ने आवंटन और पट्टे की समान शर्तों पर 11.12.2014 को इसके पक्ष में एक अलग पट्टा विलेख निष्पादित किया।

10. 02.02.2015 को याचिकाकर्ता कंपनी ने प्लॉट संख्या एससी 01/ए1-अल्फा के लिए भवन योजना की स्वीकृति के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया, जो 30,000.00 वर्ग मीटर था और याचिकाकर्ता को आवंटित था। 13.03.2015 को इस शर्त के साथ भवन मानचित्र स्वीकृत किया गया कि स्वीकृत मानचित्र पांच वर्ष की अवधि (यानी 12.03.2020 तक) के लिए वैध होगा।

11. स्वीकृत मानचित्र के अनुसार, याचिकाकर्ता को 27 मंजिलों के सात टावर बनाने थे। इन टावरों की स्वीकृत योजना के साथ-साथ याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा परियोजना के पूरा होने की वर्तमान स्थिति इस प्रकार है:-

क्र.सं.	प्लॉट संख्या	क्षेत्रफल (वर्ग मीटर में)	आवंटी का नाम	स्वीकृत टावर	निर्मित टावर	खेल गतिविधि के निर्माण की अद्यतन स्थिति
2	एससी-01/ए- 1 (अल्फा)/79	30000	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	07 टावर ए=एस+27 बी=एस+25 सी=एस+23 डी=एस+21 ई=एस+24 एफ=एस=26 जी=एस+28 21 विला	07 टावर एस+17 एस+17 एस+19 एस+19 एस+1 एस+5 एस+6 निर्मित नहीं	ओपन एरिया कहल गतिविधि का हिस्सा है, जिसे विकसित नहीं किया गया है

12. याचिकाकर्ता कंपनी ने 660 फ्लैटों वाले सात टावर बनाने का प्रस्ताव रखा था, जिनमें से उन्होंने 342 फ्लैट बेचे। यद्यपि याचिकाकर्ता कंपनी को समय पर परियोजना पूरी करनी थी लेकिन उनके द्वारा उद्धृत कुछ कारणों से, उन्होंने परियोजना पूरी नहीं की। दूसरी ओर, याचिकाकर्ता कंपनी ने घर खरीदारों से पैसा एकत्र करने के बावजूद, नोएडा प्राधिकरण को बकाया राशि नहीं देने का विकल्प चुना।

शून्य अवधि

13. भूमि का स्पष्ट कब्जा सौंपने में देरी के बारे में कुछ मुद्दे थे, इसलिए आवंटीों ने नोएडा प्राधिकरण से शून्य अवधि देने का अनुरोध किया क्योंकि नोएडा प्राधिकरण वास्तविक भौतिक कब्जा प्रदान करने में विफल रहा, जिसके कारण बिल्डर निर्माण शुरू नहीं कर सके।

14. उचित विचार-विमर्श के बाद, नोएडा प्राधिकरण ने कुछ क्षेत्र के लिए 31.01.2017 तक शून्य अवधि का लाभ देने पर सहमति व्यक्त की, और उसके बाद नई भुगतान योजना के साथ भूमि सौंपी जिसके द्वारा भुगतान को 31.01.2025 तक बढ़ा दिया गया।

15. यह पता चलता है कि स्पोर्ट्स सिटी के विकास में घोटाले की कुछ रिपोर्ट थीं, इसलिए पूरे मुद्दे को नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक⁴ को भेजा गया था। सीएजी ने मामले का गहन मूल्यांकन किया और एक रिपोर्ट प्रस्तुत की। सीएजी द्वारा दी गई रिपोर्ट चौंकाने वाली थी और पूरे घोटाले को उजागर किया। रिपोर्ट में शामिल है कि कैसे नोएडा प्राधिकरण और राज्य सरकार को ₹9000/- करोड़ की भारी हानि हुई है, क्योंकि नोएडा प्राधिकरण ने योजना बनाते समय स्पोर्ट्स सिटी का गलत मूल्य निर्धारण किया है।

16. ब्रोशर के अनुसार केवल आवासीय और वाणिज्यिक प्लॉटों को विभाजित किया जा सकता था लेकिन नोएडा प्राधिकरण ने उन सभी प्लॉटों को उप-विभाजित कर दिया, जो स्पोर्ट्स सिटी के लिए भी चिह्नित किए गए थे। आवंटीों की बोलियों की जांच नहीं की गई थी और प्लॉट आवंटित करने से पहले उम्मीदवारों के टर्नओवर पर भी विचार नहीं किया गया था। सबसे अधिक हिस्सेदारी वाले मुख्य सदस्य को परियोजना से पूरी तरह से बाहर कर दिया गया था और उसके बाद, आवंटन विभिन्न अन्य कंपनियों को किया गया था, जो व्यक्तिगत रूप से वित्तीय बोली मूल्यांकन में योग्य नहीं हो सकते थे। नोएडा प्राधिकरण द्वारा अपनाई गई इस संदिग्ध पद्धति के परिणामस्वरूप उन लोगों को प्लॉटों का आवंटन हुआ, जो व्यक्तिगत रूप से आवेदन करने के लिए भी पात्र नहीं थे। नोएडा प्राधिकरण ने किशतों की बकाया राशि एकत्र करने की जहमत भी नहीं उठाई और इस संबंध में उनकी ओर से कोई प्रयास नहीं किए गए, जिससे आवंटीों को अनुचित और अवैध लाभ मिला। नोएडा के वित्त विभाग ने प्रत्येक आवंटी कंपनी को एक नई आवंटी मानते हुए एक नई भुगतान योजना जारी की है। दूसरे और तीसरे हस्तांतरण के लिए हस्तांतरण शुल्क भी एकत्र नहीं किया गया था। कुछ मामलों में खेल सुविधाओं के विकास के बिना भी अधिभोग प्रमाण पत्र जारी किया गया है। नोएडा द्वारा पट्टा किराया भी वसूल नहीं किया गया था।

17. सीएजी रिपोर्ट की प्रतिक्रिया स्वरूप, नोएडा प्राधिकरण ने 18.01.2021 (201वीं बोर्ड बैठक) को अपनी बोर्ड बैठक आयोजित की, जिसमें यह संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी में खेल सुविधाओं को पूरा करने के लिए, एक समिति का गठन किया जाना चाहिए, जो स्थिति को देखेगी और अगली बोर्ड बैठक में एक रिपोर्ट पेश करेगी और मानचित्रों के पुनः सत्यापन सहित स्पोर्ट्स सिटी में उठाए जाने वाले किसी भी अगले कदम को स्थगित कर दिया।

18. बोर्ड की अगली बैठक 26.07.2021 को आयोजित की गई थी, जिसमें यह संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी में प्लॉटों का कोई और उप-विभाजन नहीं किया जाएगा, और आगे मामले को निर्देश और मार्गदर्शन के लिए राज्य सरकार को भेजा गया था।

19. सीएजी रिपोर्ट के बाद, स्थिति की गंभीरता को देखते हुए विधान सभा के सदस्यों से मिलकर एक लोक लेखा समिति⁵ का गठन किया गया था, जिससे प्रकरण को देखा जा सके। सुनवाई के दौरान, पीएसी ने निर्णय लिया कि वह उन मुद्दों पर नहीं जाएगी, जो उच्च न्यायालय और राष्ट्रीय कंपनी विधि अपीलीय न्यायाधिकरण⁶ के समक्ष लंबित हैं।

20. चूंकि बोर्ड की बैठक के बाद कुछ नहीं हो रहा था और राज्य सरकार द्वारा कोई निर्णय नहीं लिया गया था, और गतिरोध के कारण आवंटियों को वादा किए गए प्लॉट नहीं दिए जा सके, इसलिए कुछ प्लॉट मालिकों ने एनसीएलटी, दिल्ली के समक्ष दिवालियापन और बैंकिंग संहिता, 2016⁷ की धारा 7 के अधीन एक याचिका दायर करने का विकल्प चुना, (श्री नीरव भटनागर व अन्य बनाम मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड व अन्य) जिसे 16.06.2023 को अंगीकृत किया गया था और आईबीसी, 2016 की धारा 14 के संदर्भ में स्थगन अवधि घोषित की गई थी और श्री अमर पाल को अंतरिम समाधान पेशेवर⁸ के रूप में नियुक्त किया गया था।

21. याचिकाकर्ता-कंपनी के निलंबित निदेशक ने एनसीएलटी के समक्ष अपील संख्या 823/2023 दायर की, जिसमें 'रिवर्स कॉर्पोरेट दिवालियापन समाधान प्रक्रिया' की मांग की गई थी, जिसमें कहा गया था कि बिल्डर/प्रमोटर और होम बायर्स एसोसिएशन के बीच एक समझौता हुआ है, जिसमें याचिकाकर्ता ने अंतरिम वित्त की व्यवस्था करने पर सहमति व्यक्त की है और परियोजना को आईआरपी की देखरेख में जारी रखा जा सकता है। उनके अनुरोध पर, अपील पर विचार किया गया और सुनवाई की अगली तिथि तक 'कंपनी ऑफ क्रेडिटर्स'⁹ के गठन को रोक दिया गया।

22. इसके बाद, 12.07.2023 को, आईआरपी, घर खरीदारों, याचिकाकर्ता और तीसरे पक्ष मेसर्स एका लाइफ लिमिटेड के बीच एमओयू निष्पादित किया गया, जो अंतरिम वित्त लाने और इसे परियोजना में लगाने पर सहमत हुए थे।

23. विद्वान एनसीएलएटी ने पक्षकारों के बीच पहुंचे एमओयू के संदर्भ में आदेश पारित किया, जिसमें यह प्रावधानित किया गया था कि तीसरे पक्ष मेसर्स एका लाइफ लिमिटेड द्वारा आईआरपी द्वारा अनुमोदित एस्करो खाते में रु.20 करोड़ जमा किए जाएंगे और आगे यह कहा कि कॉर्पोरेट देनदार पर स्थगन जारी रहेगा और आईआरपी कॉर्पोरेट देनदार को रखना जारी रखेगा और निष्पादन प्राधिकरण के साथ त्रैमासिक आधार पर परियोजना की प्रगति पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

24. 28.07.2023 को, अंतरिम समाधान पेशेवर ने नोएडा से लंबित बकाया राशि का विवरण प्रदान करने का अनुरोध किया जिससे भुगतान करने की संभावना का पता लगाया जा सके। अनुरोध पर, नोएडा प्राधिकरण ने याचिकाकर्ता की बकाया राशि का विवरण दिया था।

25. यह 01.08.2023 को था, जब आईआरपी ने नोएडा से मानचित्र पुनर्मान्यता के लिए अनुरोध किया और इसे फरवरी, 2026 तक बढ़ाने की मांग की जिससे एनसीएलएटी के आदेश का अनुपालन किया जा सके।

26. 16.10.2023 को, एनसीएलएटी ने पुनः एक आदेश पारित किया, जिसमें सभी संबंधित हितधारकों को कदम उठाने का निर्देश दिया गया। उक्त आदेश का प्रासंगिक भाग नीचे उद्धृत किया गया है:-

"(iii) सभी संबंधित पक्षों को हमारे दिनांक 25.07.2023 के आदेश के अनुसरण में कार्य करने के लिए कदम उठाने हैं। आईआरपीको प्रमोटर की सहायता से परियोजना के पंजीकरण के नवीनीकरण के लिए कदम उठाने हैं और निर्माण शुरू करने के लिए सभी अन्य आवश्यक अनुमति प्राप्त करनी है, जो आज से 30 दिनों के भीतर पूरी की जा सकती है। इसके तुरंत बाद परियोजना का निर्माण शुरू हो सकता है।"

27. नोएडा ने 30.10.2023 को एक पत्र दिया जिसमें कहा गया कि, स्पोर्ट्स सिटी में सीएजी ने कुछ आपत्तियां उठाई हैं और नोएडा के बोर्ड ने मामले को राज्य सरकार को उसके आदेश और निर्देशों के लिए अनुशंसित किया है, जो अभी भी लंबित है। यह भी कहा गया कि यह मुद्दा पीएसी के समक्ष भी लंबित है। केवल उनके निर्णय के बाद ही मानचित्र की पुनर्मान्यता पर कोई कार्रवाई की जाएगी।

28. नोएडा प्राधिकरण की कार्रवाई से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता कंपनी ने निम्नलिखित राहतों की मांग करते हुए यह रिट याचिका प्रस्तुत की है:-

"1. उत्प्रेषण की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करना या प्रतिवादी संख्या 2 की दिनांक 18.01.2021 की 201वीं बोर्ड बैठक में लिए गए निर्णय को रद्द करना, जो स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की मंजूरी/पुनर्मान्यता को रोकने/स्थगित करने के संबंध में है; और

II. परमादेश की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करना जिसमें प्रतिवादी संख्या 2 को निर्देश दिया जाए कि वह याचिकाकर्ता द्वारा 25.06.2021 को प्रस्तुत मानचित्र/भवन योजनाओं की पुनर्मान्यता के लिए आवेदन के संबंध में अनुमोदन प्रदान करे, जो प्लॉट संख्या एससी-01/01 ए, जिसका क्षेत्रफल 30000 वर्ग मीटर है, जो स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट नंबर एससी-01-01, सेक्टर 78/79, नोएडा गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. में स्थित है, पर "बेल्वेडरे" नामक एक समूह आवास परियोजना के निर्माण और विकास के उद्देश्य से है; और

III. परमादेश की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करना जिसमें प्रतिवादी संख्या 2 को निर्देश दिया जाए कि वह विषयगत प्लॉट के संबंध में पट्टा प्रीमियम, वार्षिक पट्टा किराया, ब्याज, किस्त, और समय विस्तार शुल्क के भुगतान के संबंध में शून्य अवधि प्रदान करे, जो 25.06.2021 से आरंभ होती हुई अर्थात् जिस तिथि को याचिकाकर्ता ने उक्त प्लॉट के संबंध में मानचित्रों/भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की स्वीकृति/मंजूरी/पुनर्मान्यता के लिए आवेदन किया था, उस तिथि तक जब तक प्रतिवादी संख्या 2 विषयगत प्लॉट के संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत मानचित्र/भवन योजनाओं की पुनर्मान्यता के आवेदन के संबंध में अनुमोदन जारी नहीं करता; और

IV. परमादेश की प्रकृति में एक रिट आदेश या निर्देश जारी करना, जिसमें प्रतिवादी संख्या 2 को निर्देश दिया जाए कि वह पट्टा विलेख में परियोजना को पूरा करने के लिए निर्धारित समय अवधि के संबंध में समय का विस्तार प्रदान करे, जो 25.06.2021 से शुरू हो अर्थात् जिस तिथि को प्रतिवादी संख्या 2 के बोर्ड ने नोएडा में स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट के संबंध में मानचित्र/भवन योजनाओं और अन्य अनुमोदनों की स्वीकृति/मंजूरी/पुनर्मान्यता को निलंबित कर दिया था, उस तिथि तक जब तक प्रतिवादी संख्या 2 विषयगत प्लॉट के संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत भवन योजनाओं के सशोधन के आवेदन के संबंध में अनुमोदन जारी नहीं करता; और

V. परमादेश की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करना जिसमें प्रतिवादी संख्या 2 को निर्देश दिया जाए कि वह कोई मांग नोटिस या कोई अन्य या बाद का डिफॉल्ट नोटिस जारी न करे जब तक कि विषयगत प्लॉट के संबंध में मानचित्र/भवन योजनाओं की पुनर्मान्यता के लिए याचिकाकर्ता के आवेदन को प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा अनुमोदित नहीं किया जाता; और

VI. एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करना जिसमें याचिकाकर्ता को मुआवजा दिया जाए कि मानचित्रों की स्वीकृति, आवश्यक समय योजनाओं में लागू कानूनों के अनुसार मानचित्रों की पुनर्मान्यता पर विचार नहीं करने के लिए; और

VII. कोई अन्य आदेश या निर्देश जारी करना जो माननीय न्यायालय मामले की परिस्थितियों में उचित और उपयुक्त समझे;"

29. उक्त रिट याचिका के अभिकथनों के उत्तर में, नोएडा ने एक विस्तृत प्रति-शपथपत्र दाखिल किया है, जिसके उत्तर में याचिकाकर्ता द्वारा एक प्रतिउत्तर भी दाखिल किया गया है।

याचिकाकर्ता की ओर से तर्क

30. याचिकाकर्ता कंपनी के लिए उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री अनिल तिवारी ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता, कंपनी का प्रतिनिधित्व करने वाला आईआरपी है। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि नोएडा प्राधिकरण ने 18.01.2021 को आयोजित अपनी 201वीं बोर्ड बैठक में यह संकल्प लिया कि स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के लिए खेल सुविधाओं के पूरा होने को सुनिश्चित करने के लिए, एक समिति का गठन किया जाना चाहिए और उक्त समिति, सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद, अगली बैठक में संशोधित स्पोर्ट्स सिटी प्रस्ताव रखेगी और तब तक, स्पोर्ट्स सिटी में किसी भी बिल्डर/आवंटी को भवन योजना के लिए कोई अनुमोदन नहीं दिया जाएगा। इसके बाद, दूसरी बोर्ड बैठक में नोएडा प्राधिकरण ने निर्देश और दिशा-निर्देश प्राप्त करने के लिए मामले को राज्य सरकार को भेज दिया लेकिन आज तक, उनके द्वारा कोई कार्रवाई नहीं की गई है और नोएडा प्राधिकरण/राज्य सरकार की निष्क्रियता के कारण, याचिकाकर्ता भारी नुकसान उठा रहे हैं।

31. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि सेक्टर 78-79 की स्पोर्ट्स सिटी में बने 23 विभाजनों में से, केवल 12 प्लॉटों पर मानचित्र अनुमोदित किए गए हैं और उनमें से केवल 11 प्लॉटों पर निर्माण शुरू हुआ है, इसलिए 70% से अधिक भूमि अभी भी खाली है जिस पर खेल सुविधाएं उन कंपनियों द्वारा विकसित की जा सकती हैं, जिन्हें स्पोर्ट्स सिटी में खेल सुविधा विकसित करने की जिम्मेदारी सौंपी गई है।

32. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि जिस तरह से स्पोर्ट्स सिटी को विभाजित किया गया है, योजना और ब्रोशर में उल्लिखित खेल सुविधाओं को विकसित करना मुश्किल है।

33. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि प्रतिवादी संख्या 1 और 2 की निष्क्रियता के कारण, याचिकाकर्ता कंपनी परियोजना को पूरा नहीं कर सकी और इसलिए, एक बार जब देनदार ने याचिकाकर्ता कंपनी के विरुद्ध दिवालियापन कार्यवाही शुरू की, तो नोएडा प्राधिकरण ने 24.03.2023 को डिफॉल्ट नोटिस जारी करने की हद तक जाकर याचिकाकर्ता से उक्त प्लॉट के संबंध में 31.03.2023 तक बकाया के रूप में रु.16,61,73,510/- का भुगतान करने के लिए कहा। राष्ट्रीय कंपनी विधि न्यायाधिकरण ने दिनांक 16.06.2023 के आदेश द्वारा कॉर्पोरेट दिवालियापन समाधान प्रक्रिया शुरू करने का निर्देश दिया और श्री अमर पाल को अंतरिम समाधान पेशेवर नियुक्त किया और अधिस्थगन की भी घोषणा की।

34. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता कंपनी का पूर्व प्रबंधन, जिसका परियोजना को पूरा करने और घर खरीदारों को फ्लैट सौंपने का पूरा इरादा था, आईबीसी, 2016 के अधीन चल रही कार्यवाही में, रिवर्स आईआरपी शुरू करने के लिए एक आवेदन दायर किया क्योंकि यह उनकी कंपनी को बचाने

और परियोजना को पूरा करने और फ्लैट मालिकों को फ्लैट सौंपने का एकमात्र तरीका था। परियोजना को पूरा करने के लिए पूर्व निदेशकों ने अंतरिम वित्तपोषण की व्यवस्था की थी, और उसके लिए उन्होंने घर खरीदारों और आईआरपीके माध्यम से कंपनी और तीसरे पक्ष, मेसर्स एका लाइफ लिमिटेड के बीच समझौता ज्ञापन किया था, जो परियोजना को पूरा करने के लिए धन निवेश करने के लिए तैयार था।

35. उन्होंने प्रस्तुत किया कि एनसीएलएटी, दिल्ली ने एमओयू और रिकॉर्ड पर उपलब्ध अन्य अभिलेखों की सामग्री की जांच करने के बाद, संतुष्ट हुआ कि कंपनी, घर खरीदारों और अन्य कॉर्पोरेट देनदारों के सर्वोत्तम हित में, रिवर्स सीआईआरपी शुरू किया जाना था और, तदनुसार, रिवर्स सीआईआरपी की अनुमति दी और आईआरपीको परियोजना को पूरा करने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाने का निर्देश दिया।

36. इस पृष्ठभूमि में, उन्होंने प्रस्तुत किया कि यह याचिका आईआरपीद्वारा दायर की गई है, जिसने एनसीएलटी के आदेश के अनुपालन में, नोएडा प्राधिकरण से मानचित्र को पुनर्मान्य करने के लिए संपर्क किया था, जिससे आगे का निर्माण किया जा सके और परियोजना को पूरा किया जा सके और घर खरीदारों को सौंपा जा सके। चूंकि, नोएडा प्राधिकरण द्वारा तुच्छ आधारों पर पुनर्मान्यता से इनकार कर दिया गया था, याचिकाकर्ता के पास यह रिट याचिका दायर करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं बचा था।

37. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता कंपनी याचिकाकर्ता कंपनी और नोएडा प्राधिकरण के बीच निष्पादित पट्टा विलेख की शर्तों द्वारा शासित है, और आगे, उसे नोएडा प्राधिकरण द्वारा स्वीकृत लेआउट योजना के अनुसार निर्माण करना था। स्वीकृत मानचित्र/अनुमोदित योजना के अनुसार, याचिकाकर्ता स्पोर्ट्स सिटी में किसी भी खेल सुविधा को विकसित करने के लिए बाध्य नहीं था। योजना में कोई विचलन नहीं था और आगे नोएडा प्राधिकरण के लिए लेआउट योजना को पुनर्मान्य नहीं करने का कोई कारण नहीं था।

38. यह प्रस्तुत किया गया कि चूंकि नोएडा प्राधिकरण एनसीएलटी और एनसीएलएटी के समक्ष एक पक्ष था, एनसीएलटी और एनसीएलएटी द्वारा पारित सभी आदेश इस पर बाध्यकारी हैं। नोएडा प्राधिकरण अच्छी तरह से जानता था कि मानचित्र की पुनर्मान्यता समाधान प्रक्रिया योजना का एक हिस्सा थी और मानचित्र को पुनर्मान्य नहीं करके वे वस्तुतः कंपनी के पुनरुद्धार में बाधा डाल रहे हैं और एनसीएलटी और एनसीएलएटी द्वारा पारित आदेशों/निर्देशों की खुलेआम अनदेखी कर रहे हैं।

39. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि एनसीएलटी ने आईआरपीकी रिपोर्ट पर संज्ञान लिया और माना कि लेआउट योजना की पुनर्मान्यता में नोएडा प्राधिकरण की निष्क्रियता के कारण, लेआउट योजना की स्वीकृति के अभाव में निर्माण शुरू नहीं हो सका। एनसीएलटी ने स्पष्ट रूप से निर्देश दिया कि "जो भी हो", आईआरए के साथ परियोजना के पंजीकरण की बहाली और नोएडा की मंजूरी परियोजना में किसी भी निर्माण को शुरू करने के लिए आवश्यक शर्तें हैं। मामला संबंधित प्राधिकरणों अर्थात् नोएडा, आईआरए और राज्य सरकार के समक्ष

लंबित होने के कारण, एनसीएलटी का विचार था कि संबंधित प्राधिकरण त्वरित कदम उठा सकते हैं, और आईआरपीको रिकॉर्ड पर बाद के विकास को लाते हुए आगे स्थिति रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश दिया गया।

40. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि नोएडा प्राधिकरण के स्पष्टीकरण पत्र के अनुसार, स्पोर्ट्स सिटी में खेल सुविधाओं का निर्माण केवल दो कंपनियों (अर्थात मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड और जानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड) को सौंपा गया था। वास्तव में, सेक्टर-78 और 79 में संपूर्ण स्पोर्ट्स सिटी को 24 भागों (कंपनियों) में विभाजित किया गया था, और अन्य सभी कंपनियों को स्पोर्ट्स सिटी स्थापित करने की जिम्मेदारी नहीं सौंपी गई थी। हालांकि, आवंटियों को खेल सुविधाओं के लिए भुगतान करने के लिए सौंपा गया था, इसलिए, याचिकाकर्ता कंपनी का खेल सुविधाओं को विकसित करने का कोई दायित्व नहीं है, लेकिन नोएडा प्राधिकरण द्वारा निर्देशित के अनुसार ऐसी सुविधाओं के विकास के लिए भुगतान करना है, जिसके लिए याचिकाकर्ता कंपनी तैयार और इच्छुक है।

41. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि घर खरीदारों, याचिकाकर्ता कंपनी और दिनांक 19.09.2023 के आईआरपीके बीच हुआ एमओयू/मास्टर समझौता, स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि मेसर्स एका लाइफ लिमिटेड एक वैधानिक साझेदार है, जिसने एमओयू के खंड 4.1 के अनुसार रु.75 करोड़ की राशि तक धन निवेश करने के लिए सहमति व्यक्त की है। समझौते के खंड 4.1.1 के अनुसार, रु.20 करोड़ की राशि मेसर्स एका लाइफ लिमिटेड द्वारा एमओयू के परिशिष्ट संख्या 1 में निर्धारित पूर्व शर्त की पूर्ति पर वितरित की जाएगी और केवल इसकी पूर्ति पर, रु.55 करोड़ की एक और किश्त अंतरिम वित्तपोषण के रूप में निवेश की जाएगी। एमओयू के खंड ए(1) और नियमों और जिम्मेदारियों के अनुसार, यह स्पष्ट है कि प्रमोटर चार महीने की अवधि (तीन महीने की छूट अवधि के साथ) के भीतर नोएडा प्राधिकरण से सभी अनुमति प्राप्त करेगा।

42. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने बलपूर्वक दंग से प्रस्तुत किया कि नोएडा प्राधिकरण और उसके अधिकारियों की ओर से अंतहीन कमियां हुई हैं, इसलिए, यह उचित समय है कि कॉर्पोरेट पर्दा खोलने की तरह, इस बड़े पैमाने की गड़बड़ी/घोटाले के असली अपराधियों का पता लगाने के लिए प्रशासनिक पर्दा भी खोला जाना चाहिए।

43. अपने तर्कों को सुदृढ़ करने के लिए, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **एम.सी. मेहता बनाम कमलनाथ**¹³ व इसके बाद पारित निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है; **एम.आई.बिल्डर्स बनाम राधेश्याम साहू**¹⁴, **राजीव सूरी बनाम दिल्ली डेवलपमेंट अथॉरिटी**¹⁵, **रिलायंस नेचुरल रिसोर्सज लिमिटेड बनाम रिलायंस इंडस्ट्रीज लिमिटेड**¹⁶, **सेंटर फॉर पब्लिक इंटरेस्ट लिटिगेशन बनाम यूनियन ऑफ इंडिया**¹⁷, **मनमोहन लाल चड्ढा बनाम यूनियन ऑफ इंडिया**¹⁸ में।

44. उन्होंने प्रस्तुत किया कि प्रशासनिक विधि की अखंडता को संरक्षित करने के लिए और किसी भी आगे की क्षति से बचने के लिए, और स्पोर्ट्स सिटी के विकास को आगे बढ़ाने के लिए, एनसीएलटी/एनसीएलटी द्वारा पारित आदेशों का पूर्णतः अनुपालन किया जाना है, और मानचित्रों को पुनर्मान्य किया जाना चाहिए।

विरोधाभास का सिद्धांत अनुच्छेद 254 - संसद द्वारा बनाए गए विधि और राज्य विधानसभा द्वारा बनाए गए कानूनों के बीच असंगति।

45. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि समवर्ती क्षेत्र में संघ विधि और राज्य विधि के बीच संघर्ष की स्थिति में, पूर्व उत्तरार्द्ध पर हावी होता है। वर्तमान मामले में भी, नोएडा द्वारा 201वीं बोर्ड बैठक में लिया गया स्पोर्ट्स सिटी के किसी भी आगे के विकास को रोकने का निर्णय सीधे एनसीएलटी और एनसीएलएटी द्वारा पारित आदेशों से टकराता है।

46. उन्होंने प्रस्तुत किया कि आईबीसी, 2016 की धारा 238 और भारतीय संविधान के अनुच्छेद 254 के आधार पर, कोई भी राज्य अधिनियम या नियम संहिता के अधीन कॉर्पोरेट दिवालियापन समाधान प्रक्रिया के रास्ते में खड़ा नहीं हो सकता है जो विद्वान एनसीएलएटी के आदेशों के अनुपालन में है, जो सर्वोपरि है। चूंकि स्पोर्ट्स सिटी योजना का पट्टा विलेख और ब्रोशर उत्तर प्रदेश औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1976 द्वारा शासित है, और एनसीएलटी के आदेश दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 अर्थात् एक केंद्रीय अधिनियम के अधीन पारित किए जा रहे हैं, इसलिए, एनसीएलटी और एनसीएलएटी के आदेश अधिनियम, 1976 के अधीन पारित किसी भी आदेश पर प्रभावी होंगे।

47. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि आईबीसी, 2016 की धारा 238 स्पष्ट रूप से यह प्रावधानित करती है कि आईबीसी के प्रावधान, किसी अन्य प्रवृत्त विधि या ऐसे विधि के आधार पर प्रभावी किसी साधन में निहित किसी भी चीज़ पर अधिभावी होंगे। यह प्रावधान स्पष्ट रूप से आईबीसी, 2016 के प्रावधानों को सर्वोच्चता प्रदान करता है, यदि यह किसी अन्य विधि के साथ असंगत है।

48. अपने तर्क को सुदृढ़ करने के लिए, याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता ने **आयकर आयुक्त बनाम मोनेट इस्पात एंड एनर्जी लिमिटेड²¹** के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णीत किया है कि आईबीसी, 2016, आयकर अधिनियम, 1961 सहित किसी अन्य अधिनियम में निहित किसी भी असंगत चीज़ को अधिभावी करेगा।

49. उन्होंने **इनोवेटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आईसीआईसीआई बैंक और अन्य²²** के निर्णय पर भी भरोसा किया है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णीत किया है कि यदि कोई अधिनियम आईबीसी के प्रतिकूल है, और यदि दो विधियों के अधीन अधिस्थगनों के बीच सीधा टकराव है, तो आईबीसी का गैर-बाधक खंड राज्य अधिनियम के गैर-बाधक खंड पर अधिभावी होगा। **मेसर्स एम्बेसी प्रॉपर्टी डेवलपमेंट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य²³** में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि यह स्पष्ट है कि आईबीसी अपने आप में एक पूर्ण संहिता है। यह कॉर्पोरेट संस्थाओं और अन्य के संबंध में दिवालियापन पर एक विस्तृत संहिता है। यह भी सत्य है कि आईबीसी एक एकल एकीकृत छतरी संहिता है, जो एक समयबद्ध तरीके से कॉर्पोरेट व्यक्तियों और अन्य के दिवालियापन समाधान से संबंधित सभी कानूनों को शामिल करती है।

50. उन्होंने पायनियर अर्बन लैंड एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य²⁴ के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णीत किया है कि आरईआरए को संहिता के साथ सामंजस्यपूर्ण ढंग से पढ़ा जाना है, जैसा कि संशोधन अधिनियम द्वारा संशोधित किया गया है। केवल संघर्ष की स्थिति में ही संहिता आरईआरए पर हावी होगी। फ्लैटों/अपार्टमेंटों के आवंटियों को दिए गए उपचार, इसलिए, समवर्ती हैं, और फ्लैटों/अपार्टमेंटों के ऐसे आवंटी उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986, आरईआरए के अधीन उपचारों का लाभ उठाने की स्थिति में हैं। इसलिए, राज्य द्वारा लिए गए किसी भी निर्णय के मामले में, जो आईबीसी, 2016 के प्रावधानों से टकराव में है, आईबीसी, 2016 के प्रावधान हावी होंगे, विशेष रूप से, जब वही अंतिमता प्राप्त कर चुका है क्योंकि नोएडा प्राधिकरण ने इसे चुनौती नहीं देने का विकल्प चुना। यह प्रस्तुत किया गया कि एनसीएलटी/एनसीएलएटी द्वारा पारित आदेशों का अनुपालन किया जाना है और नोएडा प्राधिकरण आदेश के अनुपालन में कोई आपत्ति नहीं उठा सकता है या कोई बाधा नहीं पैदा कर सकता है।

प्रतिवादियों की ओर से तर्क

51. नोएडा प्राधिकरण के लिए उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री मनीष गोयल ने प्रस्तुत किया कि मामले में आगे बढ़ने से पहले, याचिकाकर्ता-कंपनी के संघ के साथ संबंध और उनकी पूर्ववृत्तियों का उल्लेख करना उचित है। अपने तर्कों को सुदृढ़ करने के लिए, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ कीं।

52. नोएडा प्राधिकरण की ओर से एक पूरक प्रति-शपथपत्र दाखिल किया गया है। इस शपथपत्र के माध्यम से, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री गोयल ने प्रस्तुत किया कि सेक्टर-78 और 79 में स्पोर्ट्स सिटी के विकास की योजना तैयार की गई और 03.03.2011 को शुरू की गई और इसे 24.03.2011 को बंद होना था। स्पोर्ट्स सिटी योजना की मुख्य विशेषता खेल सुविधा प्रदान करना था, जो एक एकीकृत परियोजना है और इसे संपूर्ण रूप से विकसित किया जाना है। यहां तक कि अगर कोई संघ कंपनी परियोजना के लिए आवेदन करती है, तो यह संपूर्ण संघ है, जिसे पट्टेदार माना जाता है न कि कोई व्यक्तिगत कंपनी।

53. संघ द्वारा एक आवेदन किया गया था जिसमें लीड मेंबर मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड अन्य संघ सदस्यों के साथ था। संघ की संरचना और उनके पंजीकरण की तिथि, निदेशकों की सूची और शेयरधारिता को दर्शाने वाला चार्ट इस प्रकार है:-

क्र.सं.	कंपनी का नाम	लीड मेंबर/संबंधित सदस्य	प्रतिशत	निगमन की तिथि	निदेशक	कंपनी की होल्डिंग
1	मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड	लीड मेंबर	30%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज	

					सुरप्रीत सिंह सूरी	
2	मेसर्स मेरिटॉन इन्फोटेक प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित सदस्य	05%	19.10.2005	सुरप्रीत सिंह सूरी विदुर भारद्वाज निर्मल सिंह मयंक चौरसिया आनंद कुमार चौरसिया हरि वीरपनेनी कृष्णा	
3	मेसर्स सतलज एगो प्रोडक्ट्स लिमिटेड	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी	
4	मेसर्स जानाडू इंफ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी	
5	मेसर्स जानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी	

6	मेसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी	
7	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी	
8	मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट्स	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी	
9	मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह विदुर भारद्वाज सुप्रीत सिंह सूरी	

54. उन्होंने प्रस्तुत किया कि संघ की नौ कंपनियों में से सात को 10.03.2011 को निगमित किया गया था और यहां तक कि लीड मेंबर को भी योजना शुरू होने के बाद 10.03.2011 को निदेशकों के समान समूह के साथ निगमित किया गया था। यह दर्शाता है कि सभी कंपनियों को निदेशकों के समान समूह द्वारा निगमित किया गया था, जो वास्तविक प्रमोटर थे। इस संघ कंपनी की बोली सबसे अनुपालक थी और संघ कंपनी को सेक्टर-78 और 79 में स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट आवंटित किया गया था, जो 7,27,500 वर्ग मीटर क्षेत्र के लिए था। तदनुसार, आवंटन पत्र 04.05.2011 को मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (संघ) के पक्ष में जारी किया गया था।

55. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि, जिस तरह से आवंटन किया गया, उप-विभाजन किए गए, देय किशतों की कभी मांग नहीं की गई और न ही भुगतान किया गया; जिस तरह से मानचित्र को स्वीकृत किया गया,

आवंटियों को खेल सुविधाओं के विकास को शुरू किए बिना भी वाणिज्यिक और आवासीय क्षेत्रों में निर्माण शुरू करने की अनुमति दी गई, योजना या ब्रोशर की शर्तों या पट्टा शर्तों के अनुसार नहीं थे।

56. यह प्रस्तुत किया गया कि सामान्य रूप से, एक संघ विभिन्न कंपनियों/बिल्डरों/डेवलपर्स का एक समूह होता है, जो एक परियोजना को पूरा करने के लिए एक साथ आते हैं, लेकिन यहां मेसर्स श्री-सी डेवलपर्स नामक कंपनी के प्रमोटरों द्वारा कई कंपनियां निगमित की गईं और सभी कंपनियां नवगठित कंपनियां थीं और शेयरधारिता एक ही लोगों के समूह द्वारा धारित की गई थी।

57. उन्होंने प्रस्तुत किया कि मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (संघ के लीड मेंबर) ने दिनांक 11.10.2011 के पत्र के माध्यम से नोएडा प्राधिकरण से संघ के संबंधित सदस्यों के पक्ष में अलग पट्टा विलेख निष्पादित करने का अनुरोध किया। यह उपरोक्त अनुरोध के अनुसरण में था कि नोएडा ने 24.10.2011 को संघ के संबंधित सदस्यों के पक्ष में पट्टा विलेख निष्पादित किए। इसके बाद, याचिकाकर्ता के अनुरोध पर, उसकी 1,00,000 वर्ग मीटर भूमि को निम्नलिखित तरीके से उप-विभाजित किया गया:-

"मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड,

प्लॉट ए एससी -01/ए, सेक्टर-79, क्षेत्र-100000 वर्ग मीटर

- मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड द्वारा दिनांक 28.08.2012 के पत्र के माध्यम से दो भागों में उप-विभाजन के लिए अनुरोध, जिसे 3.10.2012 को अनुमोदित किया गया।

क्र.सं.	प्लॉट नं.	आवंटी	क्षेत्र (वर्ग मीटर)	उप-विभाजन की तिथि	उप-पट्टा विलेख की तिथि
1	एससी-01/ए1, सेक्टर-79	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	50000	03.10.2012	19.10.2012 (सुधार विलेख)
2	एससी-01/ए2, सेक्टर-79	मेसर्स एरिना सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड	50000	03.10.2012	19.10.20

- याचिकाकर्ता मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड ने आगे दिनांक 02.04.2014 के पत्र के माध्यम से प्लॉट एससी-01/ए1, क्षेत्र-50000 वर्ग मीटर, सेक्टर-79, को दो भागों में उप-विभाजित करने का अनुरोध किया, जिसे 16.6.2014 को अनुमोदित किया गया, और आगे का विभाजन निम्नानुसार था:

क्र.सं.	प्लॉट नं.	आवंटी	क्षेत्र (वर्ग मीटर)	उप-विभाजन की तिथि	उप-पट्टा विलेख की तिथि
1	एससी-01/ए1 अल्फा, सेक्टर-79	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	30000	16.06.2014	कोई उप-पट्टा निष्पादित नहीं किया गया
2	एससी-01/ए2, सेक्टर-79	मेसर्स पिनेकल सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड	20000	16.06.2014	11.12.2014

58. उन्होंने प्रस्तुत किया कि अपने पक्ष में उप पट्टा विलेख के निष्पादन के बाद, याचिकाकर्ता कंपनी ने फिर से आवासीय ब्लॉक के मानचित्र की स्वीकृति के लिए आवेदन किया, जिसे याचिकाकर्ता को बनाना था। याचिकाकर्ता के मानचित्र को स्वीकृत किया गया। स्वीकृत मानचित्र के अनुसार, याचिकाकर्ता को 21 से 28 तक की मंजिल संख्याओं वाले सात टावर विकसित करने थे। हालांकि, उक्त पट्टा विलेख (विशेष रूप से खंड 42 और 43) की जांच से स्पष्ट होता है कि स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट को एक एकीकृत संपूर्णता के रूप में विकसित किया जाना था।

59. उन्होंने प्रस्तुत किया कि संपूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करने वाले मूल आवंटी ने संपूर्ण स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए एक मास्टर ले आउट प्लान दाखिल किया। मानचित्र को 16.06.2014 को अनुमोदित किया गया था, जिसमें प्रत्येक कंपनी की भूमिकाओं और दायित्वों को निर्धारित किया गया था और नोएडा प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित किया गया था। यह निर्णय संघ सदस्यों के बीच एक आंतरिक व्यवस्था थी। जहां तक नोएडा प्राधिकरण का संबंध है, स्पोर्ट्स सिटी एक अभिन्न परियोजना है, जिसे योजना के अनुसार संघ द्वारा विकसित किया जाना था। नोएडा प्राधिकरण ने कभी भी परियोजना को विभाजित नहीं किया है या व्यक्तिगत कंपनियों को जिम्मेदारियां नहीं सौंपी हैं।

60. यह प्रस्तुत किया गया कि संघ ने 30.12.2016 को शून्य अवधि की मंजूरी के लिए अनुरोध किया क्योंकि संपूर्ण भूमि का कब्जा संघ को नहीं दिया गया था। नोएडा प्राधिकरण ने 31.01.2017 तक स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के लिए शून्य अवधि घोषित की और एक नई भुगतान योजना भी सौंपी। शून्य अवधि का लाभ उठाने के बावजूद, और नई भुगतान योजना के निष्पादन के बाद, याचिकाकर्ता कंपनी ने अभी भी देय किश्तों का भुगतान नहीं किया और नोएडा प्राधिकरण द्वारा 24.02.2015, 24.07.2023 और 30.08.2024 को बकाया के भुगतान के लिए नोटिस जारी किए गए।

61. उन्होंने प्रस्तुत किया कि सीएजी द्वारा एक ऑडिट किया गया, जिसने अपनी रिपोर्ट के माध्यम से आवंटन, कार्यान्वयन और स्पोर्ट्स सिटी के विकास में कुछ कमियों की ओर इशारा किया, जो सितंबर 2020 में प्रस्तुत की गई थी। इसके बाद, 18.01.2021 (201वीं बोर्ड बैठक) को नोएडा की बोर्ड बैठक आयोजित की गई जिसमें यह संकल्प लिया गया कि सार्वजनिक लेखा समिति को सिफारिश की जानी चाहिए कि वह सीएजी द्वारा बताई गई कमियों को देखे और एक रिपोर्ट दे। एक अंतरिम उपाय के रूप में, यह भी संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी के विकास की दिशा में कोई कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए और न ही किसी मानचित्र को पुनर्मान्य किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, अगली बोर्ड बैठक (202वीं) में प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर 25.06.2021 को आयोजित, यह संकल्प लिया गया कि मामले को आवश्यक मार्गदर्शन और निर्देश के लिए राज्य सरकार को भेजा जा सकता है। बोर्ड बैठक (201वीं बैठक) का निर्णय इस न्यायालय में डेवलपर्स द्वारा दायर विभिन्न रिट याचिकाओं में चुनौती का मुख्य आधार है।

62. उन्होंने प्रस्तुत किया कि नोएडा प्राधिकरण को उप-पट्टेदारों के पक्ष में व्यक्तिगत रूप से लेआउट योजना को स्वीकृत करने के लिए निंदा की गई है और यह लक्षित किया गया है कि इन योजनाओं में इस आशय का कोई प्रावधान नहीं है कि उप-पट्टेदार द्वारा कोई खेल सुविधा विकसित की जानी थी, क्योंकि, याचिकाकर्ता की स्वीकृति लेआउट योजना में कोई खेल सुविधा निर्दिष्ट नहीं की गई है। स्वीकृति योजना में स्पष्ट रूप से यह खंड शामिल है कि उप-पट्टेदार द्वारा खेल सुविधाएं विकसित की जानी हैं। उप-पट्टेदारों द्वारा इस आधार पर कोई अखंडनीय अधिकार का दावा नहीं किया जा सकता है कि उनके पक्ष में एक योजना स्वीकृत की गई है।

63. उन्होंने प्रस्तुत किया कि मानचित्र की स्वीकृति, भले ही वह मौजूद हो, योजना और पट्टा विलेख के साथ-साथ वैधानिक प्रावधानों के साथ पढ़ी जानी है। अधिनियम, ब्रोशर, आवंटन और पट्टा विलेख के प्रावधानों के विपरीत कोई भी स्वीकृति, अपने आप में एक विचलन होगी और यह विचलन विधि के अधीन मान्यता प्राप्त नहीं होने के कारण। इसलिए, *गुंडनॉर्म* सिद्धांत लागू होगा।

64. उन्होंने प्रस्तुत किया कि ब्रोशर की जांच से, यह स्पष्ट है कि परियोजना में विकास के विभिन्न घटकों को प्रतिशत में स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया है। स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट की संपूर्ण योजना प्रकट करती है कि समूह आवास/आवासीय उद्देश्य खेल सुविधाओं के विकास के प्रमुख उद्देश्य के पूरक हैं। आवासीय उद्देश्य और वाणिज्यिक उद्देश्य खेल सुविधा के विकास के पूरक होने के कारण, इस प्रकार स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को केवल एक एकीकृत परियोजना के रूप में देखा जा सकता है।

65. अपने तर्क को सुदृढ़ करने के लिए, उन्होंने नंद किशोर गुप्ता और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य²⁵ में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित एक निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें यमुना एक्सप्रेसवे के साथ पांच भूमि पार्सल के आवंटन से संबंधित मामले से निपटते हुए, शीर्ष न्यायालय ने पांच भूमि पार्सल के अधिग्रहण और आवंटन को बरकरार रखा और उन्हें यमुना एक्सप्रेसवे के विकास का एक अभिन्न अंग माना।

उन्होंने प्रस्तुत किया कि इस न्यायालय के साथ-साथ माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि के प्रकाश में उप-पट्टेदार, इसलिए, केवल समूह आवास परियोजना के विकास के लिए बनाए गए होने का दावा नहीं कर सकते क्योंकि यह उस एकीकृत परियोजना योजना के विरोधाभासी होगा जिसके अधीन आवंटन किया गया था।

66. उन्होंने प्रस्तुत किया कि चूंकि, समूह आवास स्पोर्ट्स सिटी योजना के अधीन स्टैंडअलोन आधार पर परियोजना की श्रेणी में नहीं आता है, इसे खेल सुविधाओं के विकास के बिना एक पूर्ण परियोजना के रूप में नहीं माना जा सकता है, क्योंकि, खेल सुविधा प्राथमिक परियोजना है और समूह आवास खेल सुविधा परियोजना के पूरक है और उस अर्थ में समूह आवास परियोजना का एक अभिन्न हिस्सा बन जाता है। यह आगे यह दर्शाता है कि एसपीसी उस संघ कंपनी के अतिरिक्त कुछ नहीं था, जिसने परियोजना के लिए आवेदन किया था। संघ के एमओयू में, सभी पक्षों ने संयुक्त और व्यक्तिगत रूप से समझौते की शर्तों के अनुसार परियोजना को निष्पादित करने के लिए सहमति व्यक्त की है और संघ के लीड मेंबर को कुल अनुमेय एफएआर के कम से कम 30% का निर्माण करने के लिए जिम्मेदार बनाया गया था और पक्षों ने पुष्टि की कि वे उक्त विकास को निष्पादित करेंगे। इन कंपनियों द्वारा संपूर्ण रूप से स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए एक साइट प्लान दिया गया था।

67. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि जिस तरह से, चीजों को संशोधित/परिवर्तित किया गया था, वह काफी संदिग्ध था। केवल राज्य सरकार के बदलने के बाद, घोटाला उजागर हुआ, और ऑडिट को सीएजी को भेजा गया। राज्य सरकार ने बहुत सक्रिय रुख अपनाया और आवंटियों द्वारा की गई अवैधता के कारण किसी भी विस्तार या मानचित्र की पुनर्मान्यता की मंजूरी नहीं दी।

68. यह तर्क दिया गया कि मेसर्स श्री सी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड., एक विशेष उद्देश्य कंपनी जो स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने के लिए स्थापित की गई थी (कंपनियों के रजिस्ट्रार के अनुसार), को 13.12.2010 को निगमित किया गया था, जो विज्ञापन की तिथि से बहुत पहले था। निगमन की तिथि से ही, तीन निदेशक थे अर्थात्, निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज और सुरप्रीत सिंह सूरी और वही पट्टा विलेख के निष्पादन की तिथि पर भी निदेशक थे।

69. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि यह कॉर्पोरेट पर्दा खोलने और यह देखने का एक आदर्श मामला है कि क्या कंपनियां एक अच्छी तरह से डिजाइन की गई नापाक योजना/घोटाले से निगमित की गई या व्यवसाय के सामान्य क्रम में की गईं। घर खरीदारों, याचिकाकर्ता और दिनांक 19.09.2023 के आईआरपीके बीच हुआ एमओयू/मास्टर समझौता स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि मेसर्स एका लाइफ लिमिटेड एक वैधानिक साझेदार है, जिसने एमओयू के खंड 4.1 के अनुसार रु.75 करोड़ की राशि तक धन निवेश करने के लिए सहमति व्यक्त की है। एमओयू के अनुसार, यह स्पष्ट है कि प्रमोटर चार महीने की अवधि (तीन महीने की छूट अवधि के साथ) के भीतर नोएडा प्राधिकरण से सभी अनुमति प्राप्त करेगा और समय के विस्तार के मामले में, यह एक

नया समझौता होना चाहिए। हालांकि, इस मामले में समय अवधि समाप्त हो गई है और रिकॉर्ड पर यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि पक्षों ने एक नया एमओयू किया है। इसका मतलब है कि यह एमओयू समाप्त हो गया है और एमओयू की अनुपस्थिति में, इसके बाद शुरू की गई सभी कार्यवाही बिल्कुल आधारहीन है।

70. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि पीएसी की बैठक में यह संकल्प लिया गया है कि बिल्डर्स एक नया मानचित्र प्रस्तुत करेंगे, जिसमें उनकी 70% भूमि पर, उन्हें खेल सुविधाओं के निर्माण के लिए खुले क्षेत्र के रूप में छोड़ना होगा। चूंकि याचिकाकर्ता 70% भूमि में खेल सुविधाओं को विकसित करने के लिए बाध्य है और जब तक प्राधिकरण को नया मानचित्र प्रस्तुत नहीं किया जाता है, प्राधिकरण मौजूदा मानचित्र को पुनर्मान्य नहीं कर सकता है, जो त्रुटिपूर्ण ढंग से और प्राधिकरण की नीतियों के विपरीत और आवंटन पत्र के विपरीत जारी किया गया है।

दिवालियापन कार्यवाही

71. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री मनीष गोयल ने आगे प्रस्तुत किया कि यहां याचिकाकर्ता के विरुद्ध शुरू की गई कॉर्पोरेट दिवालियापन प्रक्रिया तैयार की गई थी और यह प्रमोटरों/याचिकाकर्ता के पूर्व प्रबंधन की नापाक योजना का परिणाम और परियोजना के विकास की संपूर्ण जिम्मेदारी से दूर रहने के लिए किए गए धोखाधड़ी के अतिरिक्त कुछ नहीं था। यहां मूल आवंटनी ने कंपनियों का एक जाल बनाया था और आवंटनी के अनुरोध पर, विभिन्न पट्टा विलेख उन कंपनियों द्वारा हस्ताक्षरित किए गए थे, जो पूरी तरह से प्रमोटरों (अर्थात्, निर्मल सिंह, सुरप्रीत सिंह सूरी और विदुर भारद्वाज) के स्वामित्व और नियंत्रण में थीं।

72. यह प्रस्तुत किया गया कि याचिकाकर्ता कंपनी को मूल रूप से 1,00,000 वर्ग मीटर भूमि आवंटित की गई थी, जिसे उसके अनुरोध पर विभाजित किया गया था। आवंटित भूमि में से, 70,000 (50,000 + 20,000) वर्ग मीटर को दो अलग-अलग कंपनियों में रखा गया था, जिन्हें शुरू में याचिकाकर्ता की कंपनी की 100% सहायक कंपनी के रूप में दिखाया गया था। ये दोनों कंपनियां, कंपनियों के रजिस्ट्रार की वेबसाइट के अनुसार, नोएडा प्राधिकरण से अनुमति लिए बिना और परियोजना के पहले मील के पत्थर को पूरा किए बिना भी, जो ऐसे हस्तांतरण की पूर्व शर्त थी, कंपनियों को बेच दी हैं/शेयरों को तीसरे पक्ष/संस्थाओं को हस्तांतरित कर दी हैं। बिक्री की आय को मोड़ दिया गया/निकाल लिया गया और नोएडा प्राधिकरण की बकाया राशि और किसानों को अतिरिक्त मुआवजा नहीं दिया गया। बिल्डर यहीं नहीं रुके, उन्होंने आगे घर खरीदारों से पैसा एकत्र किया, जिसका एक बड़ा हिस्सा फिर से मोड़ दिया गया/निकाल लिया गया, और उसके बाद कंपनी के प्रबंधन ने कंपनी को दिवालियापन में धकेल दिया। इसलिए याचिकाकर्ता कंपनी का दिवालियापन एक वास्तविक दिवालियापन नहीं है और इसे बड़े धोखाधड़ी वाले डिजाइन के एक हिस्से के रूप में, प्रबंधन के कहने पर, केवल अपनी बकाया राशि का भुगतान करने से बचने के लिए शुरू किया गया है। यह लेनदारों को धोखा देने का एक नया तरीका है।

रिवर्स सीआईआरपी लागू नहीं है

73. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनीष गोयल ने प्रस्तुत किया कि रिवर्स कॉर्पोरेट दिवालियापन समाधान प्रक्रिया या "रिवर्स सीआईआरपी" की अवधारणा अपेक्षाकृत नई है और हाल ही में 2019 में भारतीय न्यायालयों द्वारा मान्यता प्राप्त हुई है। यह वह प्रक्रिया है जो विशेष रूप से रियल एस्टेट परियोजनाओं में अभ्यास की जाती है। रिवर्स सीआईआरपी में, परियोजना के प्रमोटर, जिसके विरुद्ध सीआईआरपी शुरू की गई है, को परियोजना के वित्तीय ऋणदाता (बाहर से) के रूप में कार्य करने और कुछ शर्तों के अधीन परियोजना के शेष निर्माण को पूरा करने के लिए धन निवेश करने की अनुमति दी जा सकती है। रिवर्स सीआईआरपी की अवधारणा को अपनाने के पीछे मूल उद्देश्य आवंटियों (वित्तीय लेनदार होने के नाते) के हित की रक्षा करना था, जो सीआईआरपी की सामान्य प्रथा में प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकते हैं।

74. उन्होंने प्रस्तुत किया कि चूंकि वर्तमान मामले में परियोजना एकीकृत स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट है, परियोजना में शामिल एक व्यक्तिगत डेवलपर का दिवालियापन रिवर्स सीआईआरपी तंत्र के आह्वान को उचित नहीं ठहरा सकता है। चूंकि परियोजना को एक संघ को सौंपा गया था, व्यक्तिगत डेवलपर्स के दिवालियापन की स्थिति में, परियोजना के अधीन उनकी जिम्मेदारियां संघ के शेष सदस्यों द्वारा ग्रहण की जानी हैं। वर्तमान मामले में सीक्वल बिल्डकॉन जैसे डेवलपर्स द्वारा रिवर्स सीआईआरपी तंत्र का आह्वान उचित नहीं है।

कॉर्पोरेट पर्दे का भेदन

75. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री मनीष गोयल ने प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामले में, संघ का गठन करने वाली कंपनियों की अलग विधिक पहचान सदस्यों के विधिक दायित्वों की चोरी को सुविधाजनक बनाने के लिए बनाई गई है, जो स्पोर्ट्स सिटी के विकास की ओर एक एकीकृत परियोजना के रूप में संयुक्त और व्यक्तिगत रूप से जिम्मेदार थे। तदनुसार, यह केवल कॉर्पोरेट पर्दे को खोलने के बाद ही होगा कि कंपनियों की वास्तविक प्रकृति और उन पर वास्तविक नियंत्रण रखने वाले व्यक्तियों की पहचान प्रकट होगी।

76. उन्होंने प्रस्तुत किया कि वर्तमान स्थिति का एक व्यापक और समावेशी विश्लेषण प्रकट करता है कि वस्तुतः व्यक्तियों के समान समूह ने स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट के एक एकीकृत संपूर्णता के रूप में विकास के लिए प्राधिकरण से पट्टे प्राप्त करने के लिए कई कंपनियां बनाईं। हालांकि, परियोजना के एकीकृत विकास की ओर अपने दायित्व का निर्वहन करने के बजाय, व्यक्तियों के उपरोक्त समूह, जो स्वतंत्र कंपनियां होने की आड़ में संघ के सभी सदस्यों के पीछे प्रभावी रूप से थे, केवल आवासीय विकास पर ध्यान केंद्रित किया और खेल सुविधाओं के विकास के लिए अपनी जिम्मेदारी को पूरी तरह से नजरअंदाज किया, और बाद में खुद को दिवालियापन में डाल दिया।

77. उन्होंने प्रस्तुत किया कि चूंकि कंपनियों (स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट में शामिल डेवलपर्स) और उनके निदेशकों (वस्तुतः व्यक्तियों का समान समूह, जिन्होंने कई कंपनियां बनाईं) के बीच अंतर की रेखा धुंधली है और कंपनियां केवल अपनी विधिक जिम्मेदारी से बचने के लिए मालिकों के वैकल्पिक अहंकार के रूप में कार्य करती हैं, कॉर्पोरेट पर्दे को खोलने के लिए 'वैकल्पिक अहंकार' का सिद्धांत लागू हो जाता है। इसके अतिरिक्त, चूंकि

सभी व्यक्तिगत कंपनियों के पीछे निदेशकों का समान समूह कंपनियों द्वारा किए गए दायित्वों का निर्वहन करने के लिए उपयोग करने के बजाय अपने लाभ के लिए अलग कॉर्पोरेट संस्थाओं का उपयोग कर रहा है, कॉर्पोरेट पर्दे को खोलने के लिए 'साधनता' का सिद्धांत भी लागू होता है।

78. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामले में कॉर्पोरेट पर्दे को खोलने का कारण नोएडा प्राधिकरण और राज्य की बकाया राशि की चोरी को रोकना है और अन्य संबद्ध कंपनियों को, जो अटूट रूप से जुड़ी हुई हैं और एक इकाई हैं, अवैध उद्देश्यों के लिए एक मोर्चे के रूप में उपयोग किए जाने से रोकना है, और शामिल लेनदेन की वास्तविक प्रकृति की पहचान करना और धोखाधड़ी को रोकना और सार्वजनिक हित के साथ-साथ घर खरीदारों के हित को सुरक्षित करना है। अपने तर्क को सुदृढ़ करने के लिए, उन्होंने स्टेट ऑफ़ यू.पी. और अन्य बनाम रेणुसागर पावर कंपनी और अन्य²⁷, दिल्ली डेवलपमेंट अथॉरिटी बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी और अन्य²⁸, शुभा मुखर्जी बनाम भारत कोकिंग कोल लिमिटेड²⁹ और स्टेट ऑफ़ राजस्थान बनाम गोटन लाइमस्टोन खनिज उद्योग प्राइवेट लिमिटेड और अन्य³⁰ में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया है।

79. उन्होंने प्रस्तुत किया कि वर्तमान दिवालियापन एक वास्तविक दिवालियापन नहीं है बल्कि इसे दुर्भावना के साथ शुरू किया गया है, केवल नोएडा प्राधिकरण की बकाया राशि और किसानों के अतिरिक्त मुआवजे के भुगतान से बचने के लिए, और खेल सुविधाओं को विकसित नहीं करने के लिए जिसके लिए परियोजना आवंटित की गई थी। संपूर्ण दिवालियापन कार्यवाही धोखाधड़ी पर बने महल के अतिरिक्त कुछ नहीं है। प्रबंधन ने पैसे के बड़े हिस्से को निकाल लिया था और कॉर्पोरेट दिवालियापन के मुखौटे के पीछे छिपना चाहते हैं। इसलिए, धोखाधड़ी के ऐसे मामलों में कॉर्पोरेट पर्दे को भेदना और यह देखना आवश्यक है कि धोखाधड़ी के असली अपराधी कौन हैं।

कॉर्पोरेट पर्दे का रिवर्स भेदन

80. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि कॉर्पोरेट पर्दे का रिवर्स भेदन, कॉर्पोरेट पर्दे के भेदन के सिद्धांत का विरोधाभास है। कॉर्पोरेट पर्दे के भेदन के विपरीत जहां एक व्यक्ति को कंपनी के नाम पर किए गए गलत कामों के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है, कॉर्पोरेट पर्दे के रिवर्स भेदन का सिद्धांत मूल कंपनी या कंपनी को नियंत्रित करने वाले व्यक्ति के कार्यों के लिए सहायक या नियंत्रित कंपनी पर दायित्व डालता है।

कॉर्पोरेट पर्दे के रिवर्स भेदन को अंदरूनी रिवर्स भेदन और बाहरी रिवर्स भेदन में वर्गीकृत किया जा सकता है। जब कॉर्पोरेट पर्दे के भेदन को कंपनी के एक अंदरूनी व्यक्ति के हित में लागू किया जाता है, तो यह अंदरूनी रिवर्स भेदन है और जब ऐसा भेदन कंपनी के तीसरे पक्ष या बाहरी व्यक्ति के हित में लागू किया जाता है, तो यह बाहरी रिवर्स भेदन है।

81. उन्होंने विस्तार से बताया कि कॉर्पोरेट पर्दे के रिवर्स भेदन की अवधारणा 'कॉर्पोरेट पर्दे के भेदन' के न्यायसंगत सिद्धांत से ली गई है जो उन मामलों में लागू किया गया है जहां एक शेयरधारक ने निगम के ऋणों के लिए दायित्व से अपनी व्यक्तिगत संपत्ति को बचाने का प्रयास किया है। कॉर्पोरेट पर्दे के भेदन के सिद्धांत के अधीन, न्यायालय एक निगम की अलग विधिक इकाई की अनदेखी कर सकते हैं और शेयरधारकों को निगम के ऋणों और दायित्वों के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहरा सकते हैं यदि शेयरधारकों ने कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 339, धारा 464 आदि के अनुसार कॉर्पोरेट रूप का दुरुपयोग किया है।

82. उन्होंने प्रस्तुत किया कि कॉर्पोरेट पर्दे के रिवर्स भेदन की अवधारणा उस सीमा तक समान है क्योंकि इसमें एक निगम की अलग विधिक इकाई की अनदेखी करना शामिल है, लेकिन इसे एक अलग संदर्भ में लागू किया जाता है। कॉर्पोरेट पर्दे के रिवर्स भेदन का सिद्धांत एक व्यक्तिगत सदस्य के कार्यों के लिए निगम को उत्तरदायी ठहराता है। चूंकि वर्तमान मामला ऊपर बताए गए व्यक्तिगत कंपनियों के कॉर्पोरेट रूप के स्पष्ट दुरुपयोग का एक चमकदार उदाहरण है, यह कंपनियों के पीछे गलती करने वाले निदेशकों को उनके द्वारा बनाई गई कंपनियों के ऋणों और दायित्वों के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराने के लिए कॉर्पोरेट पर्दे के रिवर्स भेदन के सिद्धांत के आवेदन की भी गारंटी देता है।

83. अपने तर्क को सुदृढ़ करने के लिए, उन्होंने **इरिडियम इंडिया टेलीकॉम लिमिटेड बनाम मोटोरोला इनकॉर्पोरेटेड और अन्य**³¹ में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित एक निर्णय पर भरोसा किया है।

84. उन्होंने प्रस्तुत किया कि यह एक क्लासिक मामला बन जाता है, जहां 28% क्षेत्र का उपयोग निर्माण के लिए किया जा रहा है, जिसके लिए समाधान योजना तैयार की जा रही है और 72% क्षेत्र सफल समाधान आवेदक के लिए उपलब्ध है, जिस पर बिल्कुल कोई निर्माण नहीं है। सफल समाधान आवेदक एनसीएलटी/एनसीएलएटी को सही तथ्यात्मक स्थिति का खुलासा किए बिना ऐसी तरह की परियोजनाओं में निवेश करने के लिए उत्सुक है, जिससे सार्वजनिक संपत्तियों का अपव्यय हो रहा है।

85. स्पोर्ट्स सिटी की परियोजना को पट्टेदार के रूप में संघ द्वारा पूरा किया जाना है और संघ इसलिए, यह आरोप लगाते हुए नहीं भाग सकता है कि यह दिवालियापन की एक वैधानिक प्रक्रिया के माध्यम से विघटित हो गया है। अपने तर्क को सुदृढ़ करने के लिए, उन्होंने **एशिया फाउंडेशन्स एंड कंस्ट्रक्शन्स लिमिटेड बनाम गुजरात राज्य और अन्य**³², **हाइटोन मर्चेन्ट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम सताबादी इन्वेस्टमेंट कंसल्टेंट्स प्राइवेट लिमिटेड**³³, **विदर्भ इंडस्ट्रीज पावर लिमिटेड बनाम एक्सिस बैंक लिमिटेड**³⁴ और **रैस्टर इमेजेज प्राइवेट लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य**³⁵ में माननीय सर्वोच्च न्यायालय और एनसीएलएटी द्वारा पारित निर्णयों पर भरोसा किया है।

86. कई निर्णयों में निर्धारित विधि के दृष्टिगत, ऐसे मामलों में बनाया गया कॉर्पोरेट दिवालियापन, केवल एक नए रुझान में परिणत होगी जहां सभी बिल्डर्स, राज्य, नोएडा प्राधिकरण, किसानों के अतिरिक्त मुआवजे

की अपनी बकाया राशि का भुगतान करने के बजाय रिवर्स दिवालियापन की दिवालियापन कार्यवाही शुरू करेंगे और अपनी देनदारियों से बच जाएंगे। यह प्रक्रिया जो एक अच्छे उद्देश्य के लिए बनाई गई है, उसका घोर दुरुपयोग किया जाएगा।

खेल सुविधाओं का गैर-विकास

87. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री मनीष गोयल ने प्रस्तुत किया कि खेल सुविधाओं के गैर-विकास ने स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट को विफल कर दिया। खुली जगह छोड़ना खेल सुविधाओं को विकसित करने के उद्देश्य को संतुष्ट नहीं करता है, इसे ब्रोशर के अनुसार विकसित किया जाना है। रिट याचिका के साथ भी याचिकाकर्ता ने कोई लेआउट योजना नहीं रखी है कि वह खेल सुविधा के विकास के लिए खुली जगह का उपयोग कैसे करेगा और न ही इस माननीय न्यायालय के विचार के लिए कोई प्रस्तावित लेआउट योजना रखी गई है। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि खेल सुविधाओं को विकसित करने के लिए खुली जगह का उपयोग करने का कोई इरादा नहीं है।

घर खरीदारों का हित

88. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनीष गोयल ने आगे प्रस्तुत किया कि नोएडा को घर खरीदारों के हित के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है और यह केवल आवंटी है, जिसे घर खरीदारों से झूठे वादे करने के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

89. उन्होंने प्रस्तुत किया कि नोएडा घर खरीदारों और आवंटियों के बीच अनुबंध का पक्षकार नहीं है। किसी तीसरे पक्ष के हित की निगरानी करने का कोई संबिदात्मक दायित्व मौजूद नहीं है। नोएडा प्राधिकरण ने केवल बंधक की अनुमति दी है लेकिन किसी ने भी (आवंटी या घर खरीदार) उनके पक्ष में उप-पट्टा विलेख के निष्पादन के लिए नोएडा से संपर्क नहीं किया है। आवंटी ने घर खरीदारों के साथ गलत किया है, वह घर खरीदारों के प्रति अकेले जिम्मेदार होगा और नोएडा को घर खरीदारों के प्रति किसी भी दायित्व से नहीं बांधा जा सकता है।

90. यह तथ्य कि इस न्यायालय के समक्ष कोई घर खरीदार नहीं हैं, स्पष्ट रूप से इस तथ्य को प्रकट करता है कि घर खरीदार नोएडा प्राधिकरण की कार्रवाई से व्यथित नहीं हैं बल्कि वे आवंटी द्वारा किए गए झूठे वादों के कारण व्यथित हैं।

किशतों के भुगतान के लिए नोटिस

91. जहां तक मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड का संबंध है, पट्टा विलेख 30,000 वर्ग मीटर क्षेत्र के लिए दिनांक 24.10.2011 का है और आवंटन की तिथि 16.03.2010 है। बकाया डिफॉल्ट भुगतान के भुगतान के लिए नोटिस 24.02.2015, 24.07.2023 और 30.08.2024 को भेजे गए थे। नोएडा प्राधिकरण के

अनुसार, 31.10.2024 तक याचिकाकर्ता कंपनी पर बकाया ₹25,29,11,918/- है। इनके अतिरिक्त अन्य बकाया भी हैं।

विभिन्न कंपनियों की शेयरधारिता में परिवर्तन

92. उन्होंने यह भी बलपूर्वक तर्क दिया कि आरओसी के अनुसार आवंटी कंपनी की शेयर होल्डिंग्स आवंटन के बाद बदल गई हैं, हालांकि यह योजना और ब्रोशर में अनुमेय नहीं था। यह नोएडा प्राधिकरण की अनुमति के बिना किया गया था। आवंटित कंपनियों के नाम, निदेशकों, आवंटन के समय शेयरधारिता, और आरओसी के अनुसार वर्तमान शेयरधारिता को दर्शाने वाला चार्ट इस प्रकार है:-

क्र.सं	प्लॉट सं.	आवंटी का नाम	उप-विभाजन की तिथि	आवंटन के समय निदेशक और शेयरधारक	आरओसी रिकॉर्ड के अनुसार वर्तमान निदेशक	आरओसी के रिकॉर्ड के अनुसार वर्तमान शेयरधारक
1	एससी-01-01/78	मेसर्स जानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड	24.10.2011	मेसर्स जानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड. (मेसर्स श्री सी यूनियर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की 100% शेयरधारक कंपनी)- निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज 3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी	अतिरिक्त निदेशक- 1. विनय कुमार मिश्रा 2. सतीश कुमार तिवारी 3. समीर सागर वशिष्ठ	शेयरधारक (31.3.2017 तक)
2	एससी-01/ए-अल्फा/79	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	16.06.2014	निदेशक 1. श्री निर्मल सिंह 2. श्री विदुर भारद्वाज	निदेशक- 1. अनूप कुमार श्रीवास्तव 2. मनोज कुमार सिंह	शेयरधारक: (31.03.2020 तक) मेसर्स अजनारा इंडिया लिमिटेड. (99.94%)

				3. श्री सुरप्रीत सिंह सूरी	3. दिलीप कुमार	श्री प्रमोद कुमार गुप्ता(0.01%) श्री अशोक कुमार गुप्ता (0.01%) श्री विनोद कुमार गुप्ता (0.01%) श्रीमती ममता गुप्ता (0.01%) श्रीमती पद्मा गुप्ता (0.01%) श्रीमती गीता गुप्ता (0.01%)
3	एससी-01/ए-1 (बीटा0/79)	मेसर्स पिनेकल सुपर स्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड	16.06.2014	निदेशक :- 1. श्री दीपक खुराना 2. दिनेश कुमार पहवा शेयरधारक 1. मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड द्वारा श्री निर्मल सिंह (99.99 शेयर) 2. श्री दीपक खुराना (सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी)(00.01)	निदेशक:- गुरिंदर सिंह सिक्का अखिल गुप्ता	शेयरधारक:- (31.3.2019 तक) 1. सारा बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड (75%) 2. सिक्का प्रमोटर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)
4	एससी-01/ए-2/79	मेसर्स एरिना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	16.06.2014	निदेशक :- 1.श्री दीपक खुराना 2.दिनेश कुमार पहवा शेयरधारक	निदेशक:- 1.शाह आलम 2.जगत सिंह ठाकुर	शेयरधारक (12.08.2023 तक) 1.शाह आलम- (9%)

				1.मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड द्वारा श्री निर्मल सिंह (99.99 शेयर) 2.श्री दीपक खुराना (सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी) (00.01)	3.नीरज कुमार सिन्हा जाँय जाँय	2.पूर्वचल प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड(91%) एरिना सुपर स्ट्रक्चर दिवालियापन प्रक्रिया में चला गया
5	एससी-01/बी-1/79	मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक:- 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरि शेयरधारक 1.मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर) 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरि (श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड की ओर से नॉमिनी के रूप में) (00.01)	निदेशक:- 1.भूपिंदर सिंह कोचर 2.अजय खेत्रपाल 3.आनंद गोयल 4.प्रशांत अग्रवाल 5.प्रदीप जैन 6.मुनीश खेर	शेयरधारक (31.3.2024 तक) श्री प्रदीप जैन (22%) श्री भूपिंदर सिंह कोचर (22%) श्री अजय खेत्रपाल सिंह श्री आनंद गोयल(12%) श्री मुनीश खेर(6%) श्रीमती मीनू खेर(5%) श्री प्रशांत अग्रवाल(6%) श्रीमती पूजा अग्रवाल (5%)
6	एससी-01/बी-2/79	मेसर्स गोल्फ ग्रीन बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	शेयरधारक	निदेशक:- 1.बब्लू कुमार 2.दीना राम	शेयरधारक (31.3.2014 तक)

						1.सिल्वर सैंड्स बिल्डमार्ट प्राइवेट लिमिटेड (25%) 2.ज़ेफिर प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड -(25%) 3.अरुण कुमार घई-(50%)
7	एससी-01/सी-1/79	मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99 शेयर) 2.द्वारा श्री निर्मल सिंह 3.सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)	निदेशक:- 1.आनंद राम 2.गिरीश चंद जोशी	शेयरधारक (31.3.2018 तक) मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (75%) मेसर्स ज़ानाडू इंफ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)
8	एससी-01/सी-2/79	मेसर्स रोबस्ट इन्वोवेशंस प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी	निदेशक:- 1.अश्वनी कुमार गुप्ता 2.करन सागर अग्रवाल	शेयरधारक:- (31.3.2024 तक) श्री अरविंद गोयल (50%)

				शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री निर्मल सिंह 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)		श्री अश्वनी कुमार गुप्ता (50%)
9	एससी-01/सी-3/79	मेसर्स पीयूष आईटी सॉल्यूशन प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री निर्मल सिंह 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)	निदेशक: 1.नवीन 2.गोपाल सिंह	शेयरधारक- (31.3.2020 तक) मेसर्स एमिनेंट होम्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) श्री निर्मल सिंह (मेसर्स एमिनेंट होम्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी(0.01%)

10	एससी-01/सी-4/79	मेसर्स श्री सी इंफ्राक्रिएशन प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री निर्मल सिंह 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर))	निदेशक: 1.दीपक मल्होत्रा 2.हर्षित सिंह 3.अखिलेश मिश्रा	शेयरधारक- मेसर्स अभि कॉर्पोरेशन प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) दीपक मल्होत्रा (मेसर्स एपीसीएल प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01%))
11	एससी-01/सी-5/79	मेसर्स श्री सी सिटी डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री निर्मल सिंह 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी	निदेशक: 1.जगदीप सिंह गिल 2.प्रदीप सिंह राठी	शेयरधारक- (2023-2024) श्री अजय कुमार (70%) श्री प्रताप सिंह राठी (10%) श्री प्रवीण कुरेले (20%)

				ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)		
12	एससी-01/सी-6/79	मेसर्स वाटर ईपल इन्फोसॉफ्टेक प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री निर्मल सिंह 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर))	निदेशक: 1.राकेश कुमार अग्रवाल 2.पंकज कुमार गर्ग 3.मधुर गर्ग 4.सुमित गर्ग 5.सचिन गोयल 6.सनी अग्रवाल 7.निकुंज गर्ग 8.खूशबू अग्रवाल 9.आकाश गर्ग	शेयरधारक-(31.3.2024 तक) श्री धनेश चंद अग्रवाल (9%) श्री धनेश चंद अग्रवाल एंड संस (एचयूएफ)(6%) श्रीमती अपर्णा अग्रवाल (5%) श्री महेश चंद गोयल (एचयूएफ) (5%) श्री महेश चंद गोयल (8%) श्री अभिनव गोयल (75) श्री सचिन गोयल (20%) श्री दिनेश गर्ग (20%) श्रीमती नूतन गर्ग (2.5%) श्री सुमित गर्ग (2.5%) श्री मधुर गर्ग (2.5%) श्रीमती शिखा गर्ग (2.5%)

						श्री राकेश कुमार अग्रवाल (10%)
13	एससी- 01/सी- 7/79	मेसर्स श्री सी बिल्डर प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री निर्मल सिंह 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)	अतिरिक्त निदेशक: 1.विनय कुमार मिश्रा 2.सतीश कुमार तिवारी 3.समीर सागर वशिष्ठ	शेयरधारक- (31.3.2017 तक) मेसर्स लोटस ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मेसर्स यशाली डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मेसर्स लॉरेल रेजीडेंसी प्राइवेट लिमिटेड (25%) मेसर्स इन्फ्राविज़ प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)
14	एससी- 01/सी- 8/79	मेसर्स श्री सी बिल्डर प्राइवेट लिमिटेड	16.09.2014	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री निर्मल सिंह	निदेशक: 1.विनय कुमार मिश्रा 2.सतीश कुमार तिवारी 3.समीर सागर वशिष्ठ	शेयरधारक- (31.3.2017 तक) मेसर्स लोटस ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मेसर्स यशाली डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%) मेसर्स लॉरेल रेजीडेंसी प्राइवेट लिमिटेड (25%) मेसर्स इन्फ्राविज़

				2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)		प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)
15	एससी- 01/डी- 1/79	मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री निर्मल सिंह 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)	निदेशक: 1.पीयूष तिवारी 2.शिखा तिवारी 3.आस्था गुप्ता 4.हर्षदीप गांधी	शेयरधारक- (30.9.2014 तक) 1.श्री पीयूष तिवारी (55%) 2.सुश्री शिखा तिवारी (5%) 3.मेसर्स सनव्हाइट इंफ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड (40%)
16	एससी- 01/डी- 2/79	मेसर्स गोल्फ ग्रीन रिसिडेंस प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1.श्री दीपक खुराना 2.दिनेश पहवा शेयरधारक:- 1.मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर)	अतिरिक्त निदेशक: 1.अनिल प्रकाश शर्मा 2.कृष्ण कुमार 3.राहुल यादव 4.उषा सराफ	शेयरधारक- (31.3.2020 तक) मेसर्स सनशाइन इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड (99.99%) सनशाइन इंफ्राहोम्स प्राइवेट

				2.श्री दीपक खुराना (मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)		लिमिटेड (0.01%)
17	एससी- 01/डी- 3/79	मेसर्स गोल्फ ग्रीन एस्टेट प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1.श्री दीपक खुराना 2.दिनेश पहवा शेयरधारक:- 1.मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2.श्री दीपक खुराना (मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)	निदेशक: 1.दिनेश कुमार जैन 2.राकेश कुमार जैन	शेयरधारक- (31.3.2023 तक) 1.एक्सोटिका हाउसिंग एंड इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड.- (99.99%) 2.श्री दिनेश कुमार जैन (एक्सोटिका हाउसिंग एंड इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी के रूप में)(.01%)
18	एससी- 01/डी- 4/79	मेसर्स गोल्फ ग्रीन मेंशन्स प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1.श्री दीपक खुराना 2.दिनेश पहवा शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर)	निदेशक- 1.विनोद बहल 2.प्रमोद बहल 3.विकास गुप्ता 4.उमा शंकर	शेयरधारक (31.3.2024 तक) श्री विनोद बहल (25%) श्री प्रमोद बहल (25%) श्री उमा शंकर (25%) श्री अमिताभ गुप्ता (25%)

				द्वारा श्री विदुर भारद्वाज 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)		
19	एससी- 01/ई- 1/79	मेसर्स गौरसन्स स्पोर्ट्सवुड प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1.श्री दीपक खुराना 2.दिनेश पहवा शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री विदुर भारद्वाज 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी यूनिवर्सल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)	निदेशक: 1.मनोज गौर 2.सार्थक गौर	शेयरधारक- (31.3.2024 तक) 1.मनोज कुमार गौर-(4.65%) 2.श्रीमती मंजू गौर -4.66% 3.गौरसंस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड- (41.92%) 4.श्री श्याम बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड- (41.92%) 5.श्री प्रदीप कुमार अग्रवाल- (6.85%)
20	एससी- 01/ई- 2/79	मेसर्स गोल्फ ग्रीन इंफ्रा प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	निदेशक 1.श्री दीपक खुराना 2.दिनेश पहवा शेयरधारक:-	निदेशक: 1.धीरज जैन 2.श्रुति जैन 3.दिव्या जैन 4.अमित जैन	शेयरधारक- (31.3.2023 तक) मेसर्स महागुन इंडिया प्राइवेट लिमिटेड

				1.मेसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2.श्री दीपक खुराना (मेसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी के रूप में (0.01% शेयर)		(9.99%) आईसीआईसीआई प्रूडेंशियल वेंचर कैपिटल फंड रियल एस्टेट्स (.01%) गौर सन्स स्पोर्ट्स वुड प्राइवेट लिमिटेड (90%)
21	एससी-01/ई-3/79	मेसर्स गोल्फ ग्रीन सुपरस्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड	03.10.2012	शेयरधारक:- 1.मेसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) 2.श्री दीपक खुराना (मेसर्स ज़ानाडू रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी के रूप में (0.01% शेयर)	निदेशक:- 1.जय प्रकाश गुप्ता 2.अलका गोयल	शेयरधारक- (31.3.2023 तक) 1.सिविटेक हाउसिंग इंडिया प्राइवेट लिमिटेड (85.71%) 2.सुबोध गोयल (7.14%) 3.अलका गोयल (7.14%)
22	एससी-01/ए/101	मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	03.07.2013	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर)	निदेशक- 1.आनंद राम 2.गिरीश चंद्र जोशी	शेयरधारक:- मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड(75%) मेसर्स ज़ानाडू इंफ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (25%)

				द्वारा श्री निर्मल सिंह 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)		
23	एससी- 01/बी/ 101	मेसर्स गोल्फ ग्रीन बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	03.07.2013	निदेशक 1.श्री निर्मल सिंह 2.श्री विदुर भारद्वाज 3.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी शेयरधारक:- 1.मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड (99.99% शेयर) द्वारा श्री निर्मल सिंह 2.श्री सुरप्रीत सिंह सूरी (मेसर्स श्री सी ग्रीन्स डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड के नॉमिनी (0.01% शेयर)	निदेशक- 1.आनंद राम 2.गिरीश चंद्र जोशी	शेयरधारक:- मेसर्स ज़ानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (75%) मेसर्स ज़ानाडू इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड (25%)

93. चूंकि वर्तमान दिवालियापन एक वास्तविक दिवालियापन नहीं है, इसलिए याचिकाकर्ता को कोई लाभ नहीं दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, रिवर्स दिवालियापन की ऐसी प्रथा को हतोत्साहित किया जाना चाहिए, यदि दिवालियापन केवल बकाया राशि के भुगतान से बचने के लिए शुरू किया गया है, और विशेष रूप से उन मामलों में जहां पैसे को कंपनी से निकाल लिया गया है।

याचिकाकर्ता की ओर से प्रतिउत्तर तर्क

94. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री अनिल तिवारी ने प्रस्तुत किया कि कंपनी और घर खरीदार बिल्डरों द्वारा खेले गए धोखाधड़ी के शिकार हैं। नोएडा की ओर से किए गए प्रस्तुतीकरण के उत्तर में, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने निम्नानुसार प्रस्तुत किया:-

95. सेक्टर 78 और 79 की संपूर्ण स्पोर्ट्स सिटी को अब 23 कंपनियों/बिल्डरों में विभाजित कर दिया गया है। इन 23 कंपनियों/बिल्डरों में से, 12 बिल्डरों के मानचित्र अनुमोदित किए गए थे। हालांकि, केवल 11 प्लॉटों पर निर्माण किया गया। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि एससी-01, सेक्टर-78, 79 में इस स्पोर्ट्स सिटी का कुल क्षेत्र 703001.8 वर्ग मीटर था। जिसमें से 3,31,000 वर्ग मीटर भूमि पर योजनाएं अनुमोदित की गईं। प्रत्येक स्वीकृत मानचित्र में 70% क्षेत्र खुला छोड़ा गया था और किसी भी स्थिति में, नोएडा प्राधिकरण के पास अभी भी 70% से अधिक भूमि अर्थात् खुला क्षेत्र है, जिसे वे अभी भी जारी रख सकते हैं और खेल सुविधाओं का विकास कर सकते हैं जैसा कि मूल योजना में निर्धारित किया गया था। और इन खेल सुविधाओं को उन कंपनियों द्वारा विकसित किया जाना है जिन्हें विकास का कार्य सौंपा गया था। अनुमोदित मास्टर लेआउट प्लान के अनुसार खेल सुविधाओं का विकास याचिकाकर्ता का दायित्व नहीं था।

96. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि इस मामले में, आवंटी एक संघ था। योजना (भुगतान की विधि के खंड 5) के अनुसार, यदि आवंटी संघ है तो उसे पट्टा विलेख के निष्पादन के लिए स्टाम्प पेपर जमा करना होगा लेकिन इस मामले में, नोएडा प्राधिकरण और संघ के बीच पहला पट्टा कभी निष्पादित नहीं किया गया था। संघ के साथ निष्पादित करने के बजाय याचिकाकर्ता और अन्य समान संस्थाओं के साथ सीधे पट्टे निष्पादित किए गए। स्पोर्ट्स सिटी योजना के ब्रोशर में तीन अलग-अलग शब्द थे अर्थात् आवंटी, पट्टेदार और उप पट्टेदार। हालांकि, पट्टा विलेख निष्पादित करते समय मुख्य आवंटी गायब पाया गया, और नोएडा प्राधिकरण और उप-पट्टेदारों द्वारा पट्टे निष्पादित किए गए।

97. उन्होंने प्रस्तुत किया कि नोएडा प्राधिकरण के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा किया गया तर्क कि उप पट्टे लीड मेंबर मेसर्स ज्ञानाडू की ओर से निष्पादित किए गए थे, यह भी सही नहीं है क्योंकि ज्ञानाडू के पत्र पर, छह अलग-अलग पट्टा विलेख छह नई कंपनियों के पक्ष में निष्पादित किए गए थे और इन सभी पट्टों को अलग-अलग भुगतान योजनाएं दी गई थीं, जो दर्शाता है कि नोएडा प्राधिकरण ने उन्हें व्यक्तिगत पट्टेदारों के रूप में मान्यता दी है।

98. उन्होंने प्रस्तुत किया कि मास्टर लेआउट मानचित्र में, जो 2014 में अनुमोदित किया गया था जब केवल 16 आवंटी थे, खेल सुविधा की स्थापना की संपूर्ण देयता दो कंपनियों पर बांंधी गई थी। हालांकि, बाकी कंपनियों के लिए, उनके व्यक्तिगत मानचित्र स्वीकृत किए गए थे और उन्हें खेल सुविधाओं का निर्माण किए बिना भी निर्माण करने, बेचने और घर खरीदारों से पैसा एकत्र करने की अनुमति दी गई थी। यह संपूर्ण गड़बड़ी/घोटाला बिल्डरों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के साथ स्पष्ट मिलीभगत में किया गया है।

99. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि ऐसे मामलों में जहां नोएडा प्राधिकरण, बिल्डरों और घर खरीदारों का हित दांव पर है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **बिक्रम चटर्जी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य**³⁶ में स्पष्ट रूप से निर्धारित किया है कि घर खरीदारों का हित सर्वोच्च होना चाहिए, और उन्हें पहली प्राथमिकता मिलनी चाहिए और उनका ध्यान रखा जाना चाहिए।

100. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **घनश्याम मिश्रा एंड संस प्राइवेट लिमिटेड बनाम एडलवाइस एसेट रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड और अन्य**³⁷ में माना है कि अनुमोदित समाधान योजना बाध्यकारी होगी और इसलिए, नोएडा प्राधिकरण के लिए एनसीएलटी/एनसीएलएटी द्वारा पारित आदेशों को लागू नहीं करना खुला नहीं है, विशेष रूप से जब आदेश उनकी उपस्थिति में पारित किया गया था। यदि वे आदेश से व्यथित थे तो उन्हें इसे चुनौती देनी चाहिए थी लेकिन वे आदेश के कार्यान्वयन को नहीं रोक सकते हैं, यदि उन्होंने इसे चुनौती नहीं दी है।

101. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि परियोजना का कार्यान्वयन समयबद्ध तरीके से किया जाना है और मानचित्र को पुनर्मान्य करने में नोएडा प्राधिकरण द्वारा की गई देरी के कारण यह वास्तव में घर खरीदारों के हित के विरुद्ध काम कर रहा है, जिन्होंने पहले ही नुकसान उठाया है।

न्यायालय द्वारा विश्लेषण

102. हमने संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा की गई प्रस्तुतियों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है। उनकी सक्षम सहायता से, हमने याचिका में लिए गए आधारों, उसके साथ संलग्न संलग्नकों, विपक्षी द्वारा दाखिल उत्तर और अपीलकर्ताओं द्वारा दाखिल प्रतिउत्तर शपथपत्र का अध्ययन किया है।

ए. नोएडा में स्पोर्ट सिटी के विकास के लिए योजना-2010-2011 :-

103. नोएडा को एक औद्योगिक टाउनशिप घोषित किया गया है, जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 243क्यू के आधार पर न केवल उद्योगों को विकसित करने बल्कि एक पूर्ण टाउनशिप विकसित करने के लिए भी बाध्य है। स्पोर्ट्स सिटी योजना तैयार की गई और 03.03.2011 को शुरू की गई।

104. यह स्पष्ट है कि स्पोर्ट्स सिटी योजना का उद्देश्य अत्याधुनिक खेल सुविधाओं को विकसित करना था, जिसका लाभ आम जनता द्वारा लिया जाना था। यह योजना नोएडा में दो अलग-अलग स्थानों पर स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने के लिए शुरू की गई थी, पहली सेक्टर 78 और 79 में, जिसका क्षेत्रफल लगभग 7,27,500 वर्ग मीटर है और दूसरी स्पोर्ट्स सिटी नोएडा के सेक्टर 150 में।

105. योजना के अनुसार, आवंटन मूल्य रु.11500/- प्रति वर्ग मीटर था। चूंकि योजना खुले क्षेत्र में खेल सुविधाओं के विकास के लिए थी और इस उद्देश्य के लिए आवासीय अपार्टमेंट और वाणिज्यिक परिसर विकसित

करके खेल सुविधाओं को विकसित करने की लागत को संतुलित करने के लिए कीमत को जानबूझकर कम रखा गया था।

106. भूमि के एक विशाल पार्सल को आवंटित करने का कारण नोएडा द्वारा निर्धारित विशिष्टताओं के अनुसार खेल सुविधाओं को विकसित करना था। परियोजना के आकार और लागत को देखते हुए एक व्यक्तिगत कंपनी के लिए विशाल परियोजना को पूरा करना व्यवहार्य नहीं था, इसलिए एक संघ कंपनी को भाग लेने और स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को विकसित करने की अनुमति दी गई थी। प्राधिकरण का कभी भी स्पोर्ट्स सिटी के प्लॉट को छोटे प्लॉटों में विभाजित करने और छोटे बिल्डरों को स्पोर्ट्स सिटी में समूह आवास समाज बनाने की अनुमति देने का इरादा नहीं था, और इस कारण से, योग्यता की बाधा को उच्च रखा गया था।

107. संपूर्ण स्पोर्ट्स सिटी परियोजना खेल सुविधाओं के साथ-साथ आवासीय/वाणिज्यिक परियोजना की एक एकीकृत परियोजना थी। दोनों का विकास आपस में जुड़ा हुआ था। आवंटी को दोनों को एक साथ पूरा करना था, खेल भाग को प्राथमिकता देते हुए क्योंकि इसे पांच वर्षों में पूरा किया जाना था अर्थात् आवासीय भाग के पूरा होने से पहले। दोनों विकास एक दूसरे के पूरक थे, एक को विकसित करने में विफलता दूसरे को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगी।

108. एक स्टैंडअलोन समूह आवास स्पोर्ट्स सिटी का उद्देश्य नहीं था। समूह आवास को खेल सुविधाओं को विकसित किए बिना विकसित नहीं किया जा सकता था। परियोजना का कोई भी विभाजन या विभाजन जो इसकी योजना के विपरीत हो, अवैध होगा।

बी. एक संघ को आवंटन और उप-विभाजन

109. सामान्य रूप से, एक संघ विभिन्न कंपनियों/बिल्डरों/डेवलपर्स का एक समूह होता है, जो एक परियोजना को पूरा करने के लिए एक साथ आते हैं, लेकिन यहां मेसर्स थ्री-सी यूनिवर्सल डेवलपर्स नामक कंपनी के प्रमोटरों द्वारा कई कंपनियां निगमित की गईं और सभी कंपनियां नवगठित कंपनियां थीं और उनकी शेयरधारिता एक ही लोगों के समूह (अर्थात् निर्मल सिंह, सुरप्रीत सिंह सूरी और विदुर भारद्वाज) द्वारा धारित की गई थी। जाहिर तौर पर, इन प्रमोटरों का इरादा, पहले दिन से, परियोजना को विकसित करना नहीं था, बल्कि किसी तरह परियोजना को अवैध रूप से विभाजित करना और इसे बहुत अधिक लाभ पर अन्य बिल्डरों/डेवलपर्स/कंपनियों को बेचना था। कंपनी के संघ सदस्यों के इन प्रमोटरों और निदेशकों की मनसा बड़े पैमाने पर लिखी गई थी।

110. संघ सदस्यों/आवंटियों ने आवेदन किया था और 16.06.2014 को मास्टर लेआउट प्लान अनुमोदित करवाया था जिसके द्वारा उन्होंने विकास के दायरे को आपस में विभाजित कर लिया था। दायित्वों का विभाजन स्पष्ट रूप से संघ सदस्यों की मनसा को दर्शाता है। सभी देनदारियां दो कंपनियों में रखी गईं, अर्थात् मेसर्स जानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड और मेसर्स थ्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड, जबकि अन्य को परियोजना की क्रीम के साथ सौंपा गया था। नोएडा प्राधिकरण अपने आप निविदा शर्तों के विरुद्ध नहीं जा सकता है।

हालांकि, मास्टर लेआउट प्लान की स्वीकृति और उप-आवंटियों के व्यक्तिगत मानचित्रों की आगे की स्वीकृति योजना, निविदा शर्तों और पट्टा विलेखों की शर्तों के पूरी तरह से विपरीत थी। इन दो कारनामों ने स्पोर्ट्स सिटी की एकीकृत परियोजना को वस्तुतः खतरे में डाल दिया था।

111. चूंकि परियोजना को एक संघ को आवंटित किया गया था, संघ के सदस्यों के बीच आंतरिक व्यवस्था कुछ भी हो लेकिन यदि सदस्यों में से एक अपने दायित्वों को पूरा करने में विफल रहता है तो संघ के अन्य सदस्यों का कर्तव्य था कि वे इसे पूरा करें। चूंकि किसी भी उप पट्टेदार को कोई व्यक्तिगत अधिकार नहीं दिए गए हैं, इसलिए, संघ के किसी भी सदस्य द्वारा किसी भी भाग को निष्पादित करने में विफलता संघ के प्रदर्शन के हिस्से पर विफलता के बराबर होगी। चूंकि, इस मामले में सदस्यों में से एक द्वारा अपने हिस्से को निष्पादित करने में विफलता को एनसीएलटी में दिवालियापन कार्यवाही में ले जाया गया है और एनसीएलटी ने परियोजना के आंशिक पूर्णता के लिए निर्देश पारित किए हैं। यह निर्देश वास्तव में संघ के सभी सदस्यों को प्रभावित करेगा क्योंकि सदस्यों के बीच आंतरिक व्यवस्था असंतुलित हो जाती है। विद्वान एनसीएलटी को निर्देश पारित करने से पहले अन्य हितधारकों के हित पर विचार करना चाहिए था और सबसे पहले, संघ सदस्यों को बुलाना चाहिए था यह पता लगाने के लिए कि क्या वे समाधान योजना को अनुमोदित करने से पहले दिवालिया कंपनी के दायित्वों के हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक थे।

112. उपरोक्त चार में से, पहली तीन कंपनियों को स्पोर्ट्स सिटी के आवासीय भाग को विकसित करने का कार्य सौंपा गया था। वे संघ के मूल सदस्य या आवंटियों की 100% सहायक कंपनियां थीं और उनका केवल एक ही कार्य था, स्पोर्ट्स सिटी को विकसित करना। उन्होंने घर खरीदारों से भारी मात्रा में पैसा एकत्र किया है और परियोजना में बहुत कम राशि खर्च की गई है और साथ ही, उन्होंने नोएडा प्राधिकरण की देय किशतों का भुगतान नहीं किया है।

113. दो कंपनियां अर्थात्, मेसर्स जानाडू इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड. और मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड को स्पोर्ट्स सिटी की संपूर्ण खेल सुविधा को विकसित करने का कार्य सौंपा गया था। इन दोनों कंपनियों में से, मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड, जिसे खेल सुविधाओं को विकसित करना था, ने विकास की दिशा में कोई राशि खर्च नहीं की है और दिवालियापन में चली गई है।

114. इस मामले में, परियोजना को एक संघ को आवंटित की गई थी और आश्चर्यजनक रूप से संघ के सभी सदस्य योजना शुरू होने के बाद निगमित किए गए थे और सभी कंपनियों के प्रमोटर एक ही थे, जो यह दर्शाता है कि संघ एक वास्तविक संघ नहीं था, बल्कि यह एक ही लोगों के समूह के स्वामित्व वाली कंपनियों के समूह से बना था, जिन्होंने आवंटन प्राप्त करने के बाद, इसे उप-विभाजित करवाया और मास्टर प्लान की स्वीकृति के लिए आवेदन किया, जिसे बाद में इस तरह से अनुमोदित किया गया कि स्पोर्ट्स सिटी के सभी लाभ देने वाले हिस्से विभिन्न छोटी कंपनियों में रखे गए और स्पोर्ट्स सुविधाओं को विकसित करने की देयता केवल दो कंपनियों के साथ रखी गई।

115. वर्तमान स्थिति का एक व्यापक और समावेशी विश्लेषण प्रकट करता है कि वस्तुतः व्यक्तियों के समान समूह ने स्पोर्ट्स सिटी परियोजना प्राप्त करने के लिए और स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट के एकीकृत संपूर्ण के रूप में विकास के लिए प्राधिकरण से पट्टे प्राप्त करने के लिए कई कंपनियां बनाईं। हालांकि, परियोजना के एकीकृत विकास की ओर अपने दायित्व का निर्वहन करने के बजाय, व्यक्तियों के उपरोक्त समूह, जो स्वतंत्र कंपनियां होने की आड़ में संघ के सभी सदस्यों के पीछे प्रभावी रूप से थे, केवल आवासीय विकास पर ध्यान केंद्रित किया और खेल सुविधाओं के विकास के लिए अपनी जिम्मेदारी को पूरी तरह से नजरअंदाज किया, और बाद में स्वयं को दिवालियापन में डाल दिया।

दिवालियापन

116. स्पोर्ट्स सिटी के विकास में शामिल सभी कंपनियों में से, निम्नलिखित चार कंपनियां दिवालियापन में चली गई हैं, जो निम्नानुसार हैं:-

- (1) मेसर्स सीक्वल ब्यूडकॉन प्रा. लि.
- (2) मेसर्स एरिना सुपर स्ट्रक्चर प्रा. लि.
- (3) मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्रा. लि.
- (4) मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड

117. वर्तमान मामले में, दोनों कंपनियां मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड और मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड व्यक्तियों के समान समूह अर्थात् निरमल सिंह, सुरप्रीत सिंह सूरी और विदुर भारद्वाज द्वारा प्रचारित की गई थीं। इसके बाद मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड (जिसका प्लॉट आकार 1,00,000 वर्ग मीटर था) के अनुरोध पर फिर से दो भागों में उप-विभाजित किया गया। पहला (30,000 वर्ग मीटर का प्लॉट) याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा बनाए रखा गया और दूसरे शेष 20,000 वर्ग मीटर को मेसर्स पिनेकल सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड को आवंटित किया गया। हालांकि, आरओसी वेबसाइट के अनुसार, मेसर्स एरिना सुपर स्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड, एरिना (50,000 वर्ग मीटर) वर्ग मीटर और मेसर्स पिनाकल सुपरस्ट्रक्चर्स प्राइवेट लिमिटेड (20,000 वर्ग मीटर) की शेयरधारिता बदल गई है। इसलिए, यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मूल प्रमोटरों ने 70,000 वर्ग मीटर भूमि को कुछ अन्य संस्थाओं को बेच दिया/हस्तांतरित कर दिया। जाहिर है, यह एक कीमत पर बेचा गया होगा। पैसा विक्रेता कंपनी/या उसकी किसी अन्य चिंता में या प्रमोटरों (अर्थात् निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज और सुरप्रीत सिंह सूरी) के व्यक्तिगत खातों में आया होगा। अब सवाल यह है कि बिक्री प्रतिफल कहाँ गया। इसके अतिरिक्त, याचिकाकर्ता ने घर खरीदारों से पैसा एकत्र किया था, जिसमें से एक छोटा हिस्सा आवासीय संरचना को विकसित करने में खर्च किया गया था। संपूर्ण बिक्री आय और घर खरीदारों से एकत्र किए गए इस पैसे का बड़ा हिस्सा भी निकाल लिया गया और उसके बाद याचिकाकर्ता कंपनी को दिवालियापन में जाने की अनुमति दी गई। निश्चित रूप से, यह दिवालियापन केवल सिविल और आपराधिक देनदारियों से बचने और बकाया राशि के भुगतान से बचने और स्पोर्ट्स सिटी को विकसित करने के दायित्व को पूरा करने से बचने के लिए एक तैयार किया गया दिवालियापन है।

118. इन कंपनियों के दिवालियापन केवल नोएडा प्राधिकरण, बैंकों, उत्तर प्रदेश राज्य और घर खरीदारों को भुगतान से बचने के लिए डिजाइन किए गए थे। इन दिवालियापन का प्रभाव यह होगा कि खेल सुविधाएं कभी पूरी नहीं होंगी।

119. इसलिए, यह अनुमान लगाना गलत नहीं है कि ये दिवालियापन बनाए गए थे और कृत्रिम रूप से निर्मित थे, केवल निदेशकों/प्रमोटरों के साथ-साथ कंपनियों पर सिविल और आपराधिक देनदारियों से बचने के लिए। यह कार्य वास्तव में नोएडा प्राधिकरण के साथ-साथ घर खरीदारों पर खेती की गई एक धोखाधड़ी है।

डी. रिवर्स दिवालियापन

120. आईबीसी, 2016 की स्थापना के बाद से, अधिनियम को घर खरीदारों की बेहतरी के लिए एक से अधिक बार संशोधित किया गया है। हालांकि, इन संशोधनों के बाद भी यह कहना कठिन है कि संहिता अब घर खरीदारों की हर चिंता को संबोधित करती है। ऐसे समय में जहां संहिता कोई मदद नहीं करती है, न्यायपालिका ने अपने सामने के मामलों के आधार पर नवीन तंत्र के साथ आया है, जिससे घर खरीदारों/आवंटियों को उचित राहत दी जा सके। न्यायपालिका द्वारा पेश किया गया एक ऐसा तंत्र रिवर्स सीआईआरपी है, भले ही इसकी आईबीसी, 2016 में कोई उत्पत्ति नहीं है। इस तंत्र को पहली बार कंपनी अपील (एटी) (दिवालियापन) संख्या 926 वर्ष 2019 में पेश किया गया था जो 04.02.2020 (फ्लैट बायर्स एसोसिएशन विंटर हिल्स बनाम उमंग रियलटेक प्राइवेट लिमिटेड द्वारा आईआरपी और अन्य)³⁸ को निर्णीत हुआ था। इस मामले में, एनसीएलएटी ने माना कि रियल एस्टेट कंपनियां, सीआईआरपी अनूठे हैं और अन्य दिवालिया कंपनियों से अलग हैं। परिणामस्वरूप, एनसीएलएटी ने चर्चा की 'क्या रियल एस्टेट उद्योग में एक कॉर्पोरेट देनदार को आईबीसी में तीसरे पक्ष के समाधान योजना की स्वीकृति के बिना हल किया जा सकता है।' इन चर्चाओं ने रिवर्स सीआईआरपी के अत्यधिक रचनात्मक विचार के लिए दरवाजा खोल दिया, जिसमें कॉर्पोरेट देनदार के प्रमोटर आईबीसी की धारा 29ए के अधीन निर्धारित बाधा को पार कर सकते हैं और अपनी रुकी हुई परियोजना को पूरा करने और वितरित करने के लिए एक योजना प्रस्तुत कर सकते हैं, लेनदारों और हितधारकों से आवश्यक अनुमोदन के अधीन और एक समाधान पेशेवर (आरपी) और एनसीएलटी के मार्गदर्शन में।

121. रिवर्स सीआईआरपी के इस नए तंत्र का लाभ उठाते हुए, यहां याचिकाकर्ता ने परियोजना को पूरा करने का एक नया तरीका विकसित किया है, फिर भी कॉर्पोरेट देनदारों और राज्य, नोएडा प्राधिकरण की बकाया राशि और किसानों के लिए अतिरिक्त मुआवजे के प्रति किसी भी देनदारी का भुगतान नहीं करता है। यह नया उपकरण विधि की प्रक्रिया के घोर दुरुपयोग के अतिरिक्त कुछ नहीं है। याचिकाकर्ता कंपनी के पास पहले से ही पर्याप्त पैसा था, जो उसे 70,000 वर्ग मीटर भूमि बेचने और घर खरीदारों से पैसा एकत्र करने से मिला और इसे निकालने के बाद, याचिकाकर्ता ने अपनी कंपनी को दिवालियापन में धकेल दिया था और उसके बाद रिवर्स दिवालियापन की इस नई विधि का उपयोग करके परियोजना को पूरा करना चाहता है, अधिक फ्लैट बुक करना चाहता है, और शेष फ्लैटों को बेचकर और पैसा एकत्र करना चाहता है, अधिक राशि एकत्र करना चाहता है और फिर भी बकाया राशि का भुगतान नहीं करना चाहता है और अन्य लेनदारों को भुगतान नहीं करना चाहता है।

जिस तरह से याचिकाकर्ता ने इस सीआईआरपी के माध्यम से आगे बढ़ा है वह राज्य, नोएडा प्राधिकरण के साथ-साथ एनसीएलटी पर खेली गई धोखाधड़ी के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

122. यदि रिवर्स दिवालियापन की इस प्रक्रिया को जारी रखने की अनुमति दी जाती है तो हर बिल्डर, विशेष रूप से नोएडा में जहां उसे केवल भूमि राशि का 10% भुगतान करके भूमि आवंटित की जाती है, कंपनियों को दिवालियापन में धकेल देगा और उसके बाद रिवर्स दिवालियापन की प्रक्रिया के माध्यम से परियोजना को पूरा करने के लिए आगे आएगा। ऐसी तरह की धोखाधड़ी को बढ़ावा देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

123. दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 को अधिनियमित करने के उद्देश्य और उद्देश्य ऐसी तरह के बेईमान बिल्डरों को लाभ देना नहीं था, जो ऐसे तंत्र का आह्वान करके विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग कर सकते हैं।

ई. कॉर्पोरेट पर्दा उठाना

124. चूंकि कंपनियाँ (स्पोर्ट्स सिटी प्रोजेक्ट में शामिल डेवलपर्स) और उनके निदेशकों (वस्तुतः व्यक्तियों का समान समूह जिन्होंने कई कंपनियाँ बनाई) के बीच अंतर की रेखा धुंधली है। कंपनियाँ केवल अपनी विधिक जिम्मेदारी से बचने के लिए मालिकों के वैकल्पिक अहंकार के रूप में कार्य करती हैं, कॉर्पोरेट पर्दे को खोलने के लिए 'वैकल्पिक अहंकार' का सिद्धांत लागू हो जाएगा। इसके अतिरिक्त, चूंकि सभी व्यक्तिगत कंपनियों के पीछे निदेशकों का समान समूह कंपनियों द्वारा किए गए दायित्वों का निर्वहन करने के लिए उपयोग करने के बजाय अपने लाभ के लिए अलग कॉर्पोरेट संस्थाओं का उपयोग कर रहा है, कॉर्पोरेट पर्दे को खोलने के लिए 'साधनता' का सिद्धांत भी लागू होता है।

125. अब सवाल यह है कि, क्या जो कंपनी दिवालियापन में चली गई है उस पर (अपने निदेशकों के माध्यम से) नोएडा प्राधिकरण, राज्य को धोखा देने में कंपनी द्वारा किए गए अपराधों के लिए और साथ ही किसानों के अतिरिक्त मुआवजे का भुगतान नहीं करने के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है।

126. इस तथ्य को निर्धारित करने का एकमात्र तरीका कॉर्पोरेट पर्दे को भेदना है और यह देखना है कि मुख्य व्यक्ति कौन हैं और कंपनी के वास्तविक नियंत्रण में कौन हैं और क्या उन व्यक्तियों द्वारा धोखाधड़ी की गई है और यह भी देखना है कि क्या वे अपनी धोखाधड़ी की गतिविधियों और खुद को कंपनी के एक अलग न्यायिक व्यक्तित्व होने के मुखौटे के अधीन छिपाने की कोशिश कर रहे हैं।

127. धोखाधड़ी और अनियमितताओं की ऐसी घटनाओं की घटना के कारण, विधि ने अपने पहले के अपवाद के साथ बदलाव किया है कि कंपनी एक अलग न्यायिक व्यक्तित्व है और कंपनी की देयता को निदेशकों की संपत्ति से वसूल नहीं किया जा सकता है। समय के साथ, कंपनी के अलग न्यायिक व्यक्तित्व के सिद्धांत में कुछ अपवाद तराशे गए हैं, जिनका उल्लेख आगामी प्रस्तर में किया जा रहा है।

128. कॉर्पोरेट इकाई की अवधारणा को व्यापार और वाणिज्य को प्रोत्साहित करने और बढ़ावा देने के लिए विकसित किया गया था न कि अवैधता करने या लोगों को धोखा देने के लिए। जहां कॉर्पोरेट चरित्र का उपयोग अवैधता करने के उद्देश्य से या दूसरों को धोखा देने के लिए किया जाता है, न्यायालय कॉर्पोरेट चरित्र को नजरअंदाज करेगा और कॉर्पोरेट पर्दे के पीछे की वास्तविकता को देखेगा जिससे इसे संबंधित पक्षों के बीच न्याय करने के लिए उचित आदेश पारित करने में सक्षम बनाया जा सके।

129. 'कॉर्पोरेट पर्दे के भेदन' का सिद्धांत शुरू में *सॉलोमन बनाम सॉलोमन एंड कंपनी लिमिटेड*³⁹ में क्रिस्टलीकृत हुआ था। *हाउस ऑफ लॉर्ड्स* ने कहा था कि कंपनी विधि में जापन के सदस्यों से पूरी तरह से अलग व्यक्ति है। हालांकि, न्यायालय उक्त नियम के कई अपवादों को मान्यता देने के लिए आए हैं। हालांकि उन सभी का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है, जो हमारे लिए प्रासंगिक है वह है 'जब कॉर्पोरेट व्यक्तित्व का स्पष्ट रूप से धोखाधड़ी या अनुचित आचरण के लिए एक आवरण के रूप में उपयोग किया जा रहा है।

130. कॉर्पोरेट पर्दे को उठाने के सिद्धांत को जब भी और जहां भी स्थिति ने इसकी गारंटी दी, उपयोग किए जाने के लिए तराशा गया था। लॉर्ड डेनिंग ने *लिटिलवुड्स स्टोर्स बनाम आई.आर.सी.*⁴⁰ में निर्णीत किया:-

"सॉलोमन के प्रकरण में निर्धारित सिद्धांत को बहुत सावधानी से देखा जाना है। यह निर्णीत किया गया है कि यह एक सीमित कंपनी के व्यक्तित्व पर एक पर्दा डालता है, जिसके माध्यम से न्यायालय नहीं देख सकते हैं। लेकिन यह सच नहीं है। न्यायालय पर्दे को अलग कर सकते हैं, और अक्सर करते हैं। वे मुखौटा खींच सकते हैं, और अक्सर करते हैं। समूह खातों और बाकी के साथ जिस तरह से। और न्यायालयों को इसका अनुसरण करना चाहिए....."

131. 'कॉर्पोरेट पर्दे के भेदन' के सिद्धांत पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रेनूसागर पावर कंपनी*⁴¹ में निर्णीत किया माना है कि, आधुनिक न्यायशास्त्र के विस्तारित क्षितिज में, कॉर्पोरेट पर्दे को उठाना न केवल अनुमेय है, इसकी सीमाएं असीमित और हमेशा विस्तारित हैं। इसने आगे महत्वपूर्ण रूप से अवलोकन किया कि कॉर्पोरेट पर्दे को उठाना एक बदलती अवधारणा और विस्तारित क्षितिज की थी।

132. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम गोटन लाइम स्टोन खनिज उद्योग प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य*⁴² में निम्नानुसार माना है:-

"कंपनी या इसके सदस्यों के विशिष्ट कॉर्पोरेट व्यक्तित्व के अपवाद के रूप में कॉर्पोरेट पर्दे को उठाने का सिद्धांत न केवल कर चोरी को उजागर करने के लिए बल्कि वहां भी अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त है जहां सार्वजनिक हित की रक्षा सर्वोपरि महत्व की है और कॉर्पोरेट इकाई विधिक दायित्वों से बचने का प्रयास है और कल्याण विधि से बचने के लिए एक उपकरण को रोकने के लिए पर्दे को उठाना आवश्यक है। यह न तो आवश्यक है और न ही वांछनीय है कि उन मामलों की श्रेणियों की गणना की जाए, जहां पर्दे को उठाना अनुमेय

है, क्योंकि यह आवश्यक रूप से प्रासंगिक वैधानिक या अन्य प्रावधानों, प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य, विवादित आचरण, सार्वजनिक हित के तत्व की भागीदारी, पक्षों पर प्रभाव जो प्रभावित हो सकते हैं आदि पर निर्भर करेगा।"

133. कॉर्पोरेट व्यक्तित्व के पर्दे को उठाने के सिद्धांत को शुभा मुखर्जी और अन्य बनाम भारत कुकिंग कोल लिमिटेड और अन्य⁴³; कलकत्ता क्रोमोटाइप लिमिटेड बनाम कलेक्टर ऑफ सेंट्रल एक्साइज कोलकाता⁴⁴, न्यू होराइजन लिमिटेड और अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य⁴⁵, सी.आई.टी. बनाम मीनाक्षी मिल्स लिमिटेड मदुरा⁴⁶; टेल्को और अन्य बनाम स्टेट ऑफ बिहार⁴⁷; जुगगी लाल कमलापत बनाम कमिशनर ऑफ इनकम टैक्स, यू.पी.⁴⁸ में बरकरार रखा गया है।

134. यह उल्लेख करना उचित है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आर्सेलर मित्तल इंडिया प्राइवेट लिमिटेड बनाम सतीश कुमार गुप्ता और अन्य⁴⁹ में दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 की धारा 29ए के वैधानिक प्रावधान की व्याख्या करते हुए निर्णीत किया है कि कॉर्पोरेट पर्दे को उठाया जा सकता है, जब एक विधि स्वयं पर्दे को उठाने की परिकल्पना करती है या अनुचित आचरण को रोकने का इरादा है, या एक कर विधि या लाभकारी विधि से बचने की मांग की जाती है या जहां संबद्ध कंपनियां अटूट रूप से इस प्रकार जुड़ी हुई हैं कि वास्तव में, एक चिंता का हिस्सा हों।

135. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी (पी) लिमिटेड और अन्य⁵⁰ में निर्णीत किया है, जिसमें यह माना गया है कि कंपनियों के कॉर्पोरेट पर्दे को उठाना, कॉर्पोरेट पर्दे के पीछे बिल्डर द्वारा अवैध और भ्रष्ट साधनों से अर्जित संपत्ति की जब्ती और अटैचमेंट के साथ-साथ परिवार के सदस्यों की संपत्तियों को भी न्यायालय द्वारा आदेश दिया जा सकता है।

136. दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 का इरादा बेईमान प्रमोटरों को पैसा निकालने और फिर विधि का अवैध लाभ उठाने और केवल नागरिक और आपराधिक देनदारियों से बचने के लिए दिवालियापन कार्यवाही को इंजीनियर करने की अनुमति देना नहीं था। इसलिए, उपरोक्त चर्चा के प्रकाश में, यह न्यायालय दृढ़ मत का है कि दिवालियापन में धकेली गई कंपनियों के कॉर्पोरेट पर्दे को धोखाधड़ी करने के लिए निदेशकों पर मुकदमा चलाने के लिए उठाया जा सकता है।

एफ. धन शोधन निवारण अधिनियम का कार्यान्वयन

137. धन शोधन निवारण अधिनियम 2002 में अधिनियमित किया गया था। तत्परता संदर्भ के लिए पीएमएलए अधिनियम के अध्याय 1 के खंड 2 के उप-खंड (पी), (यू), (वी), (वाई) और (जेडए) को नीचे उद्धृत किया गया है:-

"(पी) "धन-शोधन" का अर्थ धारा 3 में दिया गया है;

(यू) "अपराध की आय" का अर्थ है कोई भी संपत्ति जो किसी व्यक्ति द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्राप्त या अर्जित की जाती है या ऐसी किसी भी संपत्ति का मूल्य या जहां ऐसी संपत्ति को देश के बाहर ले जाया जाता है या रखा जाता है, तो देश के भीतर या विदेश में रखी गई मूल्य में समकक्ष संपत्ति;

स्पष्टीकरण—संदेह को दूर करने के लिए, यह स्पष्ट किया जाता है कि "अपराध की आय" में न केवल अनुसूचित अपराध से प्राप्त या अर्जित संपत्ति शामिल है बल्कि कोई भी संपत्ति जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अनुसूचित अपराध से संबंधित किसी भी आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्राप्त या अर्जित की जा सकती है।

(v) "संपत्ति" का अर्थ है हर विवरण की कोई भी संपत्ति या संपत्ति, चाहे वह मूर्त या अमूर्त, चल या अचल, मूर्त या अमूर्त हो और इसमें ऐसी संपत्ति या संपत्ति में शीर्षक या हित का साक्ष्य देने वाले विलेख और उपकरण शामिल हैं, जहां भी स्थित हो;

स्पष्टीकरण—संदेह को दूर करने के लिए, यह स्पष्ट किया जाता है कि "संपत्ति" शब्द में इस अधिनियम के अधीन अपराध या किसी भी अनुसूचित अपराध के कमीशन में उपयोग की जाने वाली किसी भी प्रकार की संपत्ति शामिल है;

(वाई) "अनुसूचित अपराध" का अर्थ है—

(i) अनुसूची के भाग ए के अधीन निर्दिष्ट अपराध; या

(ii) अनुसूची के भाग बी के अधीन निर्दिष्ट अपराध यदि ऐसे अपराधों में शामिल कुल मूल्य एक करोड़ रुपये या उससे अधिक है; या

(iii) अनुसूची के भाग सी के अधीन निर्दिष्ट अपराध;

(जेडए) "हस्तांतरण" में बिक्री, खरीद, बंधक, प्रतिज्ञा, उपहार, ऋण या अधिकार, शीर्षक, कब्जा या ग्रहणाधिकार के हस्तांतरण का कोई अन्य रूप शामिल है;"

138. भा.दं.सं. के निम्नलिखित प्रावधानों को अनुसूची के भाग ए, प्रस्तर 1 में शामिल किया गया था।
अनुसूची:-

"भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के अधीन अपराध

धारा अपराध का विवरण

120बी आपराधिक षड्यंत्र

.....

420 धोखाधड़ी और बेईमानी से संपत्ति की डिलीवरी सहित।

421

3. धन-शोधन का अपराध-जो कोई भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराध की आय से जुड़ी किसी भी प्रक्रिया या गतिविधि में संलग्न होने का प्रयास करता है या जानबूझकर सहायता करता है या जानबूझकर एक पक्ष है या वास्तव में शामिल है जिसमें इसकी छिपाव, कब्जा, अधिग्रहण या उपयोग शामिल है और इसे बेदाग संपत्ति के रूप में प्रक्षेपित करना या दावा करना धन-शोधन के अपराध का दोषी होगा।

स्पष्टीकरण-संदेह को दूर करने के लिए, यह स्पष्ट किया जाता है कि—

(i) एक व्यक्ति धन-शोधन के अपराध का दोषी होगा यदि ऐसा व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराध की आय से जुड़ी निम्नलिखित में से एक या अधिक प्रक्रियाओं या गतिविधियों में संलग्न होने का प्रयास किया या जानबूझकर सहायता की या जानबूझकर एक पक्ष है या वास्तव में शामिल है, अर्थात्:—

(ए) छिपाव; या

(बी) कब्जा; या

(सी) अधिग्रहण; या

(डी) उपयोग; या

(ई) बेदाग संपत्ति के रूप में प्रक्षेपित करना; या

(एफ) बेदाग संपत्ति के रूप में दावा करना, किसी भी तरीके से;

(ii) अपराध की आय से जुड़ी प्रक्रिया या गतिविधि एक निरंतर गतिविधि है और तब तक जारी रहती है जब तक कि कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराध की आय का आनंद ले रहा हो इसके छिपाव या कब्जे या अधिग्रहण या उपयोग से या इसे बेदाग संपत्ति के रूप में प्रक्षेपित करके या किसी भी तरीके से बेदाग संपत्ति के रूप में दावा करके।”

139. पीएमएलए अधिनियम में संशोधन के बाद धोखाधड़ी, छल और आपराधिक षड्यंत्र के भा.दं.सं. के अधीन अपराध को पीएमएलए अधिनियम, 2002 के दायरे में शामिल किया गया था और ये अपराध पीएमएलए अधिनियम की धारा 2(y) के अनुसार अनुसूचित अपराध होंगे।

जी. धोखाधड़ी

140. कॉर्पोरेट धोखाधड़ी विशेष रूप से दिवालियापन मामले में तब होती है जब प्रबंधन/व्यक्ति कंपनी के भीतर या उससे जुड़े अवैध प्रथाओं में संलग्न होते हैं या अपने विश्वासी कर्तव्य को पूरा करने में विफल रहे हैं, जो अंततः दिवालियापन की ओर ले जाता है और ऐसे मामले में ऐसी धोखाधड़ी से प्रभावित हितधारक, जिसमें लेनदार और उपभोक्ता शामिल हैं, ऐसी धोखाधड़ी के शिकार बन जाते हैं। इस मुद्दे को संबोधित करने के लिए बहु-आयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। यह प्रथा विशेष रूप से रियल-एस्टेट बिल्डरों के साथ फैल रही है, जो घर खरीदारों से पैसा एकत्र करने के बाद नोएडा प्राधिकरण या लेनदार की बकाया राशि का भुगतान नहीं करना

पसंद करते हैं और धन को निकालने के बाद, विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग करके, और आईबी संहिता, 2016 का अनुचित लाभ उठाते हुए, कंपनी को दिवालियापन में धकेल देते हैं।

141. **Fraus Omnia Vitiat-धोखाधड़ी सब कुछ दूषित करती है:-**कॉर्पोरेट धोखाधड़ी, जिसमें कुप्रथाएं, वित्तीय कर्तव्य का उल्लंघन, वित्तीय हेरफेर, संपत्ति का डायवर्जन, धन को निकालना और सरकारी विफलता शामिल है, जिसके परिणामस्वरूप कंपनी में शॉट्स को कॉल करने वाले लोगों को अनुचित लाभ और अवैध लाभ होता है, कॉर्पोरेट धोखाधड़ी के दायरे में आएगा।

142. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **उदगार गगन प्रॉपर्टीज़ लिमिटेड बनाम संत सिंह और अन्य** 52 में माना कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका पोषणीय है क्योंकि यह केवल विवेक के सही और उचित प्रयोग पर आधारित अभ्यास का एक नियम है। न्यायालय धोखाधड़ी या विधि की प्रक्रिया के दुरुपयोग के आधार पर एक अवैध कार्रवाई को रद्द कर सकता है। संदर्भ; **मधुकर सद्भाव शिवरकर (डी) द्वारा एलआरएस बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य** 53।

143. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मेसर्स एम्बेसी प्रॉपर्टी डेवलपमेंट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य** 54 में निर्णीत किया है कि हालांकि राष्ट्रीय कंपनी विधि न्यायाधिकरण और राष्ट्रीय कंपनी विधि अपीलीय न्यायाधिकरण धोखाधड़ी के दावों को देख सकते हैं, लेकिन उन्हें सार्वजनिक विधि से संबंधित मामलों पर या जिसमें अर्ध न्यायिक प्राधिकरणों द्वारा लिया गया निर्णय शामिल है, निर्णय लेने की अनुमति नहीं है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णीत किया है:-

"50. इस संबंध में अपीलकर्ताओं की आपत्ति अच्छी तरह से स्थापित है। धारा 65 विशेष रूप से कार्यवाही की धोखाधड़ी या दुर्भावनापूर्ण शुरुआत से संबंधित है। यह निम्नानुसार पढ़ता है:

"65. कार्यवाही की धोखाधड़ी या दुर्भावनापूर्ण शुरुआत—(1) यदि, कोई भी व्यक्ति दिवालियापन समाधान प्रक्रिया या परिसमापन कार्यवाही को धोखाधड़ी से या दुर्भावनापूर्ण इरादे से दिवालियापन के समाधान या परिसमापन के अतिरिक्त किसी अन्य उद्देश्य के लिए शुरू करता है, तो निर्णायक प्राधिकरण ऐसे व्यक्ति पर एक जुर्माना लगा सकता है, जो एक लाख रुपये से कम नहीं होगा, लेकिन एक करोड़ रुपये तक बढ़ सकता है।

(2) यदि, कोई भी व्यक्ति किसी व्यक्ति को धोखा देने के इरादे से स्वैच्छिक परिसमापन कार्यवाही शुरू करता है, तो निर्णायक प्राधिकरण ऐसे व्यक्ति पर एक जुर्माना लगा सकता है जो एक लाख रुपये से कम नहीं होगा लेकिन एक करोड़ रुपये तक बढ़ सकता है।"

51. दिवालियापन समाधान के दौरान कॉर्पोरेट देनदार द्वारा की गई धोखाधड़ी वाली ट्रेडिंग की भी धारा 66 के अधीन निर्णायक प्राधिकरण द्वारा जांच की जा सकती है। धारा 69 लेनदारों को धोखा देने के उद्देश्य से

लेनदेन करने के लिए कॉर्पोरेट देनदार के एक अधिकारी और कॉर्पोरेट देनदार को सजा के लिए उत्तरदायी बनाती है। इसलिए, एनसीएलटी को (i) कार्यवाही की धोखाधड़ी शुरुआत के साथ-साथ (ii) धोखाधड़ी वाले लेनदेन की जांच करने की शक्ति है। यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि धारा 65(1) एक ऐसी स्थिति से संबंधित है जहां सीआईआरपी को धोखाधड़ी से "दिवालियापन के समाधान या परिसमापन के अतिरिक्त किसी अन्य उद्देश्य के लिए" शुरू किया गया है।

52. इसलिए, यदि, जैसा कि कर्नाटक सरकार द्वारा तर्क दिया गया है, सीआईआरपी को एक ही व्यक्ति द्वारा विभिन्न अवतार लेते हुए, दिवालियापन के समाधान या परिसमापन के वास्तविक उद्देश्य के लिए नहीं, बल्कि खदान और खनन पट्टे को कोने में करने के संपार्श्विक उद्देश्य के लिए शुरू किया गया था, तो वही धारा 65(1) द्वारा संबोधित दुष्कर्म के भीतर वर्गाकार रूप से आएगा। इसलिए, यह स्पष्ट है कि एनसीएलटी को धोखाधड़ी के आरोपों की जांच करने का अधिकार क्षेत्र है। एक परिणाम के रूप में, एनसीएलटी को भी अधिकार क्षेत्र होगा। इसलिए, सीआईआरपी की धोखाधड़ी शुरुआत धारा 61 में प्रदान की गई अपील के वैकल्पिक उपाय को बायपास करने का आधार नहीं हो सकती है।"

144. लॉ लेक्सिकन, दूसरा संस्करण (पुनर्मुद्रण) 2001 श्री पी. रामनाथ अय्यर द्वारा में, इस पर बल दिया गया है कि 'न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग आम तौर पर सद्भावना में कमी वाली कार्यवाही पर लागू होता है और तुच्छ, परेशान करने वाली या दमनकारी है, जिसमें एक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग करता है'। ऐसी तरह की कार्यवाही धोखाधड़ी के दायरे में आएगी। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कई मामलों में माना है कि धोखाधड़ी सभी कार्यवाही को दूषित करती है।

145. वर्तमान मामले में, कुछ घर खरीदारों ने याचिकाकर्ता को एनसीएलटी में ले लिया है, जिसमें याचिकाकर्ता कंपनी के पूर्व निदेशकों ने रिवर्स सीआईआरपी को अपना चुना और उनकी सिफारिश के आधार पर, विद्वान एनसीएलटी ने रिवर्स सीआईआरपी की अनुमति दी और आईआरपीको परियोजना को पूरा करने का निर्देश दिया, जिन्होंने बदले में मानचित्र के पुनर्मूल्यांकन के लिए नोएडा को लिखा।

146. धोखाधड़ी का इरादा परियोजना की शुरुआत से ही स्पष्ट था। खेल सुविधा को पूरा करने की कोई इच्छा नहीं थी। न ही वे गंभीर डेवलपर थे। वास्तव में, मूल आवंटि अब तस्वीर में कहीं नहीं हैं। आवंटियों ने संपूर्ण स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को उप विभाजित किया था और छोटे समय के बिल्डरों को हस्तांतरित/बेच दिया था, जो परियोजना की बोली प्रक्रिया में भाग लेने के लिए योग्य भी नहीं थे। मूल आवंटियों ने, आवंटन के समय, आवंटन प्राप्त करने के लिए प्रीमियम का न्यूनतम 10% भुगतान किया था और फिर मानचित्र को स्वीकृत करवाया और परियोजना को पूरा करने के कोई इरादे के बिना घर खरीदारों से भारी मात्रा में पैसा एकत्र करना शुरू कर दिया। उन्होंने भूमि प्रीमियम किश्तों का भुगतान नहीं करने का विकल्प चुना और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने, जो धोखाधड़ी में मिलीभगत कर रहे थे, अपनी आंखें बंद रखीं और बिल्डरों को किश्तों का भुगतान किए बिना घर खरीदारों से अधिक पैसा एकत्र करने की अनुमति दी। नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों

द्वारा एक लंबी रस्सी दी गई थी, जिससे उन्हें घर खरीदारों को धोखा देने और अधिक पैसा एकत्र करने और फिर कंपनी को दिवालियापन में धकेलने के लिए अधिक समय मिल सके।

एच. सार्वजनिक विश्वास का सिद्धांत

147. यह मामला बिल्डरों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों/कर्मचारियों के बीच भ्रष्टाचार के एक महत्वपूर्ण संबंध को उजागर करता है, जिसके परिणामस्वरूप सार्वजनिक विश्वास का घोर उल्लंघन, धोखाधड़ी वाली प्रथाएं और सीएजी रिपोर्ट के अनुसार नोएडा प्राधिकरण को रु.9000 करोड़ का वित्तीय नुकसान हुआ है।

148. हम अपने कर्तव्य में विफल होंगे, यदि हम नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के साथ मिलीभगत में बिल्डरों (उप-पट्टेदारों) द्वारा की गई अवैधताओं को नजरअंदाज करते हैं, जो एक बड़े भूमि घोटाले में बदल गया है।

149. सार्वजनिक विश्वास के सिद्धांत के अधीन सरकार अपने संसाधनों की रक्षा के लिए बाध्य है, जिससे उसी का उपयोग आम जनता के लिए किया जा सके और इसे कुछ निजी लाभों के लिए व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।

150. सार्वजनिक विश्वास सिद्धांत देश के विधि का एक हिस्सा है। नोएडा जैसे सार्वजनिक प्राधिकरण कर्तव्य से बंधे हैं कि वे यह देखें कि पट्टे पर दी गई संपत्ति घर-खरीदारों के पैसे के साथ बर्बाद नहीं हो। दुर्भाग्य से वर्तमान मामले में, सार्वजनिक प्राधिकरण, जो संपत्ति के भंडार थे, राज्य और घर खरीदारों के हित की रक्षा करने में बुरी तरह विफल रहे हैं।

आई. मिलीभगत

151. यह आवंटियों/बिल्डरों और नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों के बीच मिलीभगत का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। स्पोर्ट्स सिटी, पट्टा विलेख और नीति के ब्रोशर की योजना और प्रावधान का पूर्ण उल्लंघन है। योजना के अनुसार, अनुमति केवल केवल आवासीय क्षेत्र के हस्तांतरण की थी, और वह भी, खेल सुविधाओं के विकास के पहले चरण को पूरा करने के बाद। हालांकि, इस मामले में, नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने स्पोर्ट्स सिटी योजना के ब्रोशर में निहित शर्तों का खुलेआम उल्लंघन किया है और संपूर्ण परियोजना को विभाजित किया है और उन्होंने अन्य कंपनियों के पक्ष में मनोरंजक क्षेत्र के हस्तांतरण की भी अनुमति दी है। बस इतना ही नहीं, लीड मेंबर, जिसके पास संघ में 30% शेयर था, को पहले दिन ही जाने दिया गया था और इस तरह, कंपनी जो संघ की लीड मेंबर थी व जिसे परियोजना आवंटित की गई थी, जब पट्टे पर हस्ताक्षर किए गए तो गायब पाया गया। एसपीसी के गठन और उनकी जिम्मेदारियों को व्यक्त करने वाला एक संयुक्त एमओए भी गायब पाया गया, हालांकि यह योजना का एक अभिन्न हिस्सा था। बकाया राशि के बावजूद नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों द्वारा लेआउट मानचित्र को अनुमोदित किया गया था। आवंटियों को नोएडा प्राधिकरण की बकाया राशि के भुगतान के लिए नहीं पूछकर अनुचित लाभ दिया गया था। नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों

द्वारा अतिरिक्त मुआवजे की वसूली के लिए कोई ईमानदार प्रयास नहीं किए गए, जो किसानों को दिया जाना था। खेल सुविधा को विकसित करने के लिए तीन से पांच साल की समयसीमा निर्धारित की गई थी और आवासीय सुविधाओं को विकसित करने के लिए सात साल का समय दिया गया था। हालांकि, नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए समयसीमा का पालन करने के लिए कुछ भी नहीं किया। यह देखा गया है कि नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों का आचरण पूरी तरह से बिल्डरों को अनुचित लाभ देने का था और उनकी कार्यवाही/निष्क्रियता के कारण, वर्तमान स्थिति उत्पन्न हुई है।

152. बकाया प्रीमियम का शेष 90% 16 अर्धवार्षिक किश्तों में @ 11% ब्याज प्रति वर्ष की दर से भुगतान किया जाना था। हालांकि नोएडा प्राधिकरण के अनुसार, याचिकाकर्ता (मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड) ने केवल 4 किश्तों का भुगतान किया और उसके बाद डिफॉल्ट हो गया और कोई और भुगतान नहीं किया। याचिकाकर्ता डिफॉल्ट करता रहा और बकाया राशि बढ़ती रही। नोएडा प्राधिकरण अपनी गहरी नींद से बहुत देर से उठा और सीएजी रिपोर्ट के बाद 27.03.2023 को बकाया राशि के लिए एक नोटिस जारी किया जिसमें सभी व्यक्तिगत सह-आवंटियों से किस्त और ब्याज के लिए कहा गया, लेकिन आश्चर्यजनक रूप से फिर से राशि वसूल करने के लिए कोई गंभीर प्रयास नहीं किए गए। नोएडा प्राधिकरण के संबंधित अधिकारियों से ऐसा नहीं करने के लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं मांगा गया। नोएडा प्राधिकरण की ओर से कर्तव्य की यह उपेक्षा आज सभी समस्याओं का मूल कारण बन गई है।

153. याचिकाकर्ता के अनुरोध पर 1,00,000 वर्ग मीटर के मूल प्लॉट को तीन भागों में विभाजित किया गया था जिसमें से 30,000 वर्ग मीटर याचिकाकर्ता द्वारा रखा गया था और शेष 70,000 वर्ग मीटर को दो अन्य कंपनियों को हस्तांतरित कर दिया गया था, जो याचिकाकर्ता की कंपनी की 100% सहायक थीं, लेकिन बाद में दोनों कंपनियों को हस्तांतरित कर दिया गया और याचिकाकर्ता कंपनी के स्वामित्व वाले शेयर बेच दिए गए। बिक्री की आय कंपनी में आई होगी। यह सारा पैसा नोएडा और अन्य लेनदारों की बकाया राशि का भुगतान किए बिना हस्तांतरित किया गया था। नोएडा प्राधिकरण एक मूक दर्शक रहा था और कंपनियों को आवासीय भाग के विकास को करने और घर खरीदारों से पैसा एकत्र करने की अनुमति दी और उसी समय खेल सुविधा के विकास की दिशा में कुछ भी नहीं किया गया।

154. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने नोएडा टोल ब्रिज कंपनी लिमिटेड बनाम फेडरेशन ऑफ नोएडा रेजिडेंट्स वेलफेयर एसोसिएशन और अन्य⁵⁵ में निम्नानुसार निर्णीत किया है:-

"32. राज्य पर रखे गए दायित्व पर विचार करते हुए, इसके लिए और विस्तार की आवश्यकता नहीं है कि किसी भी प्रकार की उदारता या लाभ प्रदान करने में राज्य या इसके अंगों की हर कार्यवाही या निर्णय एक न्यायसंगत, पारदर्शी और अच्छी तरह से परिभाषित नीति में आधारित होना चाहिए। ऐसी नीति को उचित प्रकाशन के माध्यम से जनता को ज्ञात कराया जाना चाहिए और पूर्वाग्रह या पक्षपात से मुक्त, गैर-भेदभावपूर्ण साधनों के माध्यम से लागू किया जाना चाहिए। यहां तक कि जब सरकार एक अनुबंध प्रदान करती है या

समान लाभ देती है, तो ऐसी प्रदान करना उचितता और सार्वजनिक हित के मानकों को पूरा करना चाहिए। यदि इन मानदंडों में से कोई भी पूरा नहीं होता है, तो प्रदान करना असंवैधानिक माना जाएगा। एक आवश्यक परिणाम के रूप में, सरकार को राज्य की कीमत पर निजी संस्थाओं को लाभ पहुंचाने वाले तरीके से कार्य नहीं करना चाहिए। ऐसी कार्रवाइयां, यदि अनुचित हैं और सार्वजनिक हित के संरक्षण के विपरीत हैं, तो राज्य के संवैधानिक दायित्वों को कमजोर करेंगी।

35. स्वर्णिम सिद्धांत इस प्रकार है कि सार्वजनिक हित में अग्रणी सरकारी प्रक्रियाएं या नीतियां वास्तव में जनता की सेवा करनी चाहिए न कि केवल निजी संस्थाओं को समृद्ध करना चाहिए। जब सार्वजनिक हित को ओवरशैडो किया जाता है, तो यह चिंता बढ़ाता है कि क्या सरकार ने ऐसे तरीके से कार्य किया है जो मनमाना या स्वेच्छाचारी प्रतीत होता है। तब न्यायालय के लिए यह जांच करना अनिवार्य हो जाता है कि क्या ऐसी कार्रवाइयां समानता के संवैधानिक जनादेश को दूषित करती हैं। इसलिए, ऐसी प्रक्रियाओं को मन के उचित अनुप्रयोग, निष्पक्षता, पारदर्शिता और सबसे प्रासंगिक रूप से, सद्भावी होने के लिटमस टेस्ट को संतुष्ट करना चाहिए।"

जे. घर खरीदारों के हित

155. जहां तक घर खरीदारों का संबंध है, वे सबसे बुरे प्रभावित व्यक्ति हैं, उन्होंने अपनी जीवन भर की बचत निवेश करके/या बैंक लोन लिया है इस सपने के साथ कि एक दिन, उनके सिर पर एक छत होगी। चूंकि मानचित्र नोएडा प्राधिकरण द्वारा विधिवत अनुमोदित किए गए थे, उनके पास एक गलत खेल पर संदेह करने का कोई कारण नहीं था और वे जाल में फंस गए। फ्लैट की पूरी लागत का भुगतान करने के बाद, पूर्णता और बैंक योग्य शीर्षक अभी भी एक मृगतृष्णा है। उनमें से अधिकांश के पास मामलों का मुकाबला करने की क्षमता या वित्तीय समर्थन नहीं है। इसके अतिरिक्त, यहां के मुद्दे बहुत उलझे हुए हैं, जिन्हें सुलझाने की उनके पास बहुत कम उम्मीद है।

156. नोएडा प्राधिकरण/विकास प्राधिकरणों का नियोजित और व्यवस्थित विकास सुनिश्चित करने का वैधानिक कर्तव्य है। इसमें रियल-एस्टेट परियोजनाओं की प्रगति की निगरानी करने और उनकी समय पर पूर्णता सुनिश्चित करने का वैधानिक कर्तव्य शामिल है।

157. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **भूपिंदर सिंह बनाम यूनिटेक लिमिटेड (सिविल अपील संख्या 10856/2016)** में 26.04.2024 को निर्णय दिया है:-

"9.....यह घर खरीदारों के लिए सबसे अनुचित है। लेआउट योजनाओं और भवन योजनाओं के लिए अनुमोदन की मंजूरी की अनुपस्थिति में, यूनिटेक के घर खरीदारों की जरूरतों को पूरा करने के लिए निर्माण शुरू नहीं हो सकता। यह न्यायालय चार वर्षों से अधिक समय से यूनिटेक के घर खरीदारों से संबंधित संपूर्ण मुद्दे की निगरानी कर रहा है जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि घर खरीदार, जिन्होंने इस अपेक्षा में धन निवेश किया है कि उन्हें निकट भविष्य में खरीदे गए फ्लैट प्राप्त होंगे, को मुसीबत में नहीं छोड़ा जाए। दुर्भाग्य से,

नोएडा और ग्रेटर नोएडा और उनके अधिकारियों दोनों ने प्रक्रिया को बाधित किया है। वे अपना सहयोग देने में विफल रहे हैं।

10. इस न्यायालय के आदेशों के बावजूद, ऐसा प्रतीत होता है कि कोई समाधान नहीं मिला है। जब तक न्यायालय इस स्तर पर हस्तक्षेप नहीं करता, मामला अधर में लटका रहेगा और एक वास्तविक खतरा है कि घर खरीदार निराशा की भावना से सभी रुचि खो देंगे। घर खरीदारों ने खरीदे गए फ्लैटों के प्रति वित्तीय देनदारियों को उठाया है और यह सार्वजनिक हित का मामला है कि उनकी चिंताओं को विधिवत संरक्षित किया जाना चाहिए।"

158. यह सुस्थापित विधि है कि घर खरीदारों के हित को प्राथमिकता दी जानी चाहिए (**बिक्रम चटर्जी (उपरोक्त)**) में निर्धारित विधि के अनुसार। नोएडा प्राधिकरण निर्णय से अच्छी तरह से अवगत था, लेकिन फिर भी उसने घर खरीदारों के हित की रक्षा के लिए कोई कार्रवाई नहीं की।

159. घर खरीदारों के हित को भी मान्यता दी गई है और 2018 में दिवालियापन विधि समिति की सिफारिशों में इसे प्रतिध्वनित किया गया है, इसे बाद में दिवाला और शोधन अक्षमता (संशोधन), 2018 के साथ संहिताबद्ध किया गया था, जिसने प्रावधान किया कि विफल रियल-एस्टेट परियोजना के लिए गारंटीकृत रियल-एस्टेट आवंटियों का वित्त ऋण के समान वाणिज्यिक प्रभाव होगा।

160. वास्तव में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय का भी जेपी ऑर्चर्ड रेजिडेंट वेलफेयर सोसाइटी बनाम भारत संघ एवं अन्य (रिट याचिका (सिविल) संख्या-854/2017) में यही विचार था जिसमें उन्होंने कहा कि, वे घर खरीदारों के हित की रक्षा के लिए अपनी शक्ति में सब कुछ करने का प्रयास करेंगे।

161. इसके अतिरिक्त, **चित्रा शर्मा बनाम भारत संघ** 56 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने जेपी इंफ्राटेक लिमिटेड द्वारा शुरू की गई परियोजना में घर खरीदारों के हित की रक्षा की और दिवाला और शोधन अक्षमता (संशोधन) अध्यादेश, 2018 के प्रावधानों के अनुसार सीओसी को नए सिरे से गठित करने का निर्देश दिया।

162. वित्तीय लेनदारों के रूप में आवंटियों को शामिल करने की संवैधानिक वैधता का परीक्षण **पायनियर अर्बन लैंड एंड इंफ्रास्ट्रक्चर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया** 57 में किया गया था, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने चुनौती को खारिज कर दिया और दिवाला और शोधन अक्षमता (संशोधन) अध्यादेश, 2018 को बरकरार रखा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे माना कि रियल-एस्टेट कंपनी में दिवालियापन के मामले में आवंटियों के हित की रक्षा की जानी चाहिए।

163. वर्तमान मामले में, नोएडा प्राधिकरण को घर खरीदार को दंडित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है क्योंकि स्पोर्ट्स सिटी की वर्तमान स्थिति वैधानिक कर्तव्य की उपेक्षा और प्राधिकरण की ही विफलता के

कारण है कि वह निर्माण प्रगति की निगरानी करे; डिफॉल्टिंग बिल्डरों के विरुद्ध समय पर कार्रवाई करे, परियोजना की समयसीमा की पूर्णता को लागू करे। नोएडा प्राधिकरण की विफलता का परिणाम घर खरीदारों पर नहीं लादा जा सकता है।

के. उच्च न्यायालय का हस्तक्षेप

164. शुरू में, यह परंपरा थी कि न्यायालय को एनसीएलटी के आदेशों के साथ हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। यह किसी भी संदेह से परे है कि आईबीसी, 2016 अपने आप में एक पूर्ण संहिता है। आईबीसी की धारा 231 उन मामलों के संबंध में सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को रोकती है, जिनसे निपटने के लिए एनसीएलटी/एनसीएलएटी सशक्त हैं।

165. जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मेसर्स इनोवेटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आईसीआईसीआई बैंक** 58 में कहा है, यह कॉर्पोरेट संस्थाओं और अन्य के संबंध में दिवालियापन के विषय-वस्तु पर एक विस्तृत संहिता है। यह भी सत्य है कि आईबीसी, 2016 एक एकल एकीकृत छतरी संहिता है और बाद में एनसीएलटी के आदेश के विरुद्ध रिट याचिका में उच्च न्यायालय की कार्रवाई पर सवाल उठाए जा रहे थे।

166. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मेसर्स एम्बेसी प्रॉपर्टीज डेवलपमेंट्स प्राइवेट लिमिटेड (उपरोक्त)** में निर्णीत किया है कि एनसीएलटी के पास सार्वजनिक विधि के दायरे में शामिल मामलों के संबंध में निर्देश जारी करने का अधिकार क्षेत्र नहीं है जिसमें एनसीएलटी ने सरकार को कॉर्पोरेट देनदार के पक्ष में पूरक/पट्टा विलेख के विस्तार को निष्पादित करने का निर्देश दिया था। चूंकि पट्टा विलेख का निष्पादन सार्वजनिक विधि के दायरे में था और इसलिए, एनसीएलटी के अधिकार क्षेत्र में नहीं आता है। एनसीएलटी एक उच्चतर न्यायालय नहीं होने के कारण न्यायिक समीक्षा की शक्ति से निहित नहीं है। सार्वजनिक विधि दावों के निर्णय के लिए उचित मंच उच्च न्यायालय का रिट अधिकार क्षेत्र है।

167. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालयों को प्रदत्त शक्ति, पूर्ण है। यह अधिकार क्षेत्र बिना किसी विशिष्ट चुनौती उठाए प्रयोग किया जा सकता है। उच्च न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन पर्याप्त न्याय करने के लिए राहत को ढालने की शक्तियां प्रदान की गई हैं।

168. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत के दृष्टिगत यह स्पष्ट है कि एनसीएलटी के पास नोएडा प्राधिकरण को मानचित्र को पुनर्मान्य करने का निर्देश जारी करने की शक्ति नहीं है। यह शक्ति केवल भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन माननीय सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के पास है।

169. **मेसर्स इनोवेटिव इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आईसीआईसीआई बैंक (उपरोक्त)** में, इस अपील के मुद्दों में से एक यह था कि क्या कंपनी के निदेशक की अपील, जो अब प्रबंधन में नहीं हैं, एनसीएलटी के समक्ष दायर की गई है, अंतरिम समाधान पेशेवर नियुक्त होने के बाद रखरखाव योग्य है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय

ने माना है कि एक बार कंपनी का प्रबंधन करने के लिए एक दिवालियापन पेशेवर नियुक्त किया गया था, पूर्व निदेशक, जो अब कंपनी में नहीं है, कंपनी की ओर से अपील को बनाए नहीं रख सकता है। इसलिए, कंपनी के पूर्व निदेशकों द्वारा दायर एक अपील पर विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा पारित एक आदेश जिसमें उन्होंने रिवर्स दिवालियापन के लिए योजना दी थी, रखरखाव योग्य नहीं था। यहां तक कि अगर एक रिवर्स दिवालियापन तंत्र को पेश किया जाना था, तो वही आईआरपीके माध्यम से शुरू और दायर किया जाना था।

170. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने घनश्याम मिश्रा एंड संस प्राइवेट लिमिटेड द्वारा ऑथराइज्ड सिग्नेटरी बनाम एडलवाइस एसेट रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड द्वारा डायरेक्टर और अन्य⁵⁹ में निर्णीत किया है कि विधायिका ने सीओसी की वाणिज्यिक बुद्धि को सर्वोपरि महत्व दिया है और निर्णायक प्राधिकरण द्वारा न्यायिक समीक्षा का दायरा आईबी संहिता की धारा 31 के अधीन प्रदान की गई सीमा तक सीमित है। हालांकि, यह मुद्दों को देखने के लिए उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को प्रतिबंधित नहीं करता है। इस मामले में, सीओसी ने रिवर्स दिवालियापन में कोई संकल्प पारित नहीं किया है, इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय ऐसे तरह के मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है।

171. घनश्याम मिश्रा (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत वर्मन प्रकरण में लागू नहीं होगा क्योंकि वर्तमान मामले में शुरू की गई दिवालियापन कार्यवाही एक रची गई कार्यवाही थी और संपूर्ण कार्यवाही धोखाधड़ी के अतिरिक्त कुछ नहीं थी।

एल. निष्कर्ष

172. वर्तमान रिट याचिका विशिष्ट प्रार्थना के साथ योजित की गई है लेकिन मामले की योग्यता में जाते हुए, न्यायालय ने महसूस किया कि याचिकाकर्ता कंपनी के पूर्व प्रबंधन द्वारा धोखाधड़ी की गई है। न्यायालय इसे अवैधता और विधिक प्रावधानों के दुरुपयोग को ठीक करने और न्याय के हित की रक्षा के लिए हस्तक्षेप करने के लिए एक उपयुक्त मामला पाता है, विशेष रूप से जब न्यायालय पाता है कि संपूर्ण रिवर्स सीआईआरपी तंत्र विधि की प्रक्रिया के घोर दुरुपयोग के अतिरिक्त कुछ नहीं है और हितधारकों और न्यायाधिकरण पर खेला जा रही धोखाधड़ी है, जिसमें पूर्व निदेशक/प्रबंधन ने अवैध रूप से कंपनी से पैसा निकालने के बाद कंपनी को दिवालियापन में धकेल दिया था।

173. इस मामले में, याचिकाकर्ता कंपनी के विरुद्ध एनसीएलटी, दिल्ली के समक्ष आईबीसी 2016 की धारा 7 के अधीन एक आवेदन दायर किया गया था। शायद, एनसीएलटी के ध्यान में यह नहीं लाया गया कि संपूर्ण परियोजना एक एकीकृत परियोजना थी और एक संघ को आवंटित की गई थी। यदि, संघ सदस्यों में से एक दिवालियापन में जाता है तो यदि एक तीसरे पक्ष को परियोजना को आंशिक रूप से पूरा करने के लिए लाया जाता है, तो यह संघ के अन्य सदस्यों के हित को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगा। याचिकाकर्ता कंपनी के प्रबंधन द्वारा सुझाए गए रिवर्स सीआईआरपी तंत्र को अनुमति देने से पहले, एनसीएलटी को यह विचार करना चाहिए था कि वर्तमान परियोजना एक स्टैंडअलोन समूह आवास परियोजना नहीं थी, बल्कि एक बड़ी परियोजना

का एक छोटा हिस्सा था, जिसे एक संघ द्वारा विकसित किया जाना था। एनसीएलटी को इस पहलू पर विचार करना चाहिए था और अन्य हितधारकों विशेष रूप से अन्य संघ सदस्यों के हित पर भी विचार करना चाहिए था।

174. दिवाला और दिवालियापन संहिता 2016 की धारा 65 अर्थदंड अधिरोपित करने के लिए प्रावधान निर्धारित करती है। यदि, दुर्भावनापूर्ण दिवालियापन कार्यवाही शुरू की गई है, तो धारा 7 आवेदन को केवल डिफॉल्ट के सबूत के बाद स्वीकार किया जाना है। डिफॉल्ट के सबूत का मतलब केवल यह नहीं है कि कंपनी द्वारा डिफॉल्ट है बल्कि निर्णायक प्राधिकरण को यह भी देखना चाहिए कि क्या दिवालियापन के लिए दायर आवेदन वास्तविक है या दुर्भावनापूर्ण कार्यवाही का एक हिस्सा है।

175. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, हम इस विचार के हैं कि एनसीएलटी को, कॉर्पोरेट दिवालियापन कार्यवाही को आगे बढ़ाने से पहले, विशेष रूप से रियल एस्टेट क्षेत्र में, इस तथ्य पर विचार करना चाहिए कि क्या दिवालियापन एक वास्तविक दिवालियापन है या वही केवल वैधानिक बकाया राशि और लेनदारों को अन्य बकाया राशि से बचने के लिए रचा गया है।

एम. संघ पर प्रभाव, जब संघ का एक सदस्य दिवालियापन में जाता है

176. जहां तक एक संघ के सदस्य के दिवालियापन का संबंध है, उक्त विषय वस्तु पर बहुत कम निर्णय हैं। इससे संबंधित विधि में कोई महत्वपूर्ण विकास नहीं हुआ है, जो ऐसी स्थितियों में मार्गदर्शन देगा। वर्तमान मामला इस प्रकार एक बहुत ही दिलचस्प, और नया, विधिक प्रश्न प्रस्तुत करता है—

177. **संघ पर क्या प्रभाव होगा, जब संघ का एक सदस्य दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 के अधीन दिवालियापन में जाता है?**

178. हम वर्तमान मामले में दिशानिर्देश पारित करने के लिए बाध्य हैं क्योंकि दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 अन्य संघ सदस्यों के अधिकारों के संबंध में मौन है, यदि सदस्यों में से एक दिवालियापन में जाता है। चूंकि संघ की कंपनियां मेगा परियोजनाओं के विकास में आवेदन करती हैं और यदि इस खालीपन को नहीं भरा जाता है, तो विलायक कंपनियां भी, जो संघ के सदस्य हैं, संघ सदस्यों में से एक के दिवालियापन के कारण दिवालियापन में खींची जा सकती हैं। चूंकि दिवालिया सदस्य परियोजना के अपने हिस्से को पूरा करने में सक्षम नहीं होगा और परियोजना का गैर पूर्णता निश्चित रूप से अन्य कंपनियों को प्रभावित करेगी, जो संघ के सदस्य हैं। आईबी संहिता, 2016 का उद्देश्य एक विलायक कंपनी को दिवालियापन में खींचना नहीं है।

179. यदि संघ का सदस्य दिवालियापन में जाता है तो परियोजना और अन्य हितधारकों के हित में, विद्वान एनसीएलटी यांत्रिक तरीके से दिवालियापन कार्यवाही शुरू नहीं कर सकता है, बल्कि निम्नलिखित अनुशंसाओं की कसौटी पर मुद्दे का निर्णय कर सकता है:-

"(ए) पहले सहारे के एक उपाय के रूप में, आईआरपीकंपनी को उस संघ के अनुबंध में अपने कार्यों/दायित्वों को पूरा करना जारी रखने के लिए कंपनी की इच्छा की मांग करने के लिए कंपनी और प्राधिकरण को संवाद करेगा, जिसके सदस्य उक्त कंपनी है। यह आईबीसी की धारा 20 के अधीन आईआरपीके कार्यों को आगे बढ़ाने में होगा। यह संवाद सीआईआरपी की शुरुआत के अधिकतम 4 सप्ताह की अवधि के भीतर किया जाएगा और सीओसी के गठन से स्वतंत्र होगा। यदि उक्त अवधि के भीतर ऐसा कोई इरादा संप्रेषित नहीं किया जाता है, तो यह माना जाएगा कि कंपनी विषय परियोजना में भाग लेने के लिए अनिच्छुक है।

(बी) यदि आईआरपी, कंपनी (सीआईआरपी का सामना करने वाले संघ सदस्य) की क्षमताओं के मूल्यांकन पर, इस राय का है कि उक्त कंपनी संघ के व्यवसाय में उपयोगी या सार्थक रूप से भाग नहीं ले सकती है, तो वह उपरोक्त प्रस्तर (ए) में प्रदान की गई अवधि के भीतर अन्य संघ सदस्यों और प्राधिकरण (उक्त परियोजना के लिए) को संवाद करेगा। अन्य संघ सदस्यों (संयुक्त रूप से या व्यक्तिगत रूप से) के पास तब शेष परियोजना को अपने दम पर करने और इसे पूरा करने का विकल्प होगा। संघ सदस्यों द्वारा परियोजना को पूरा करने के विकल्प का प्रयोग 4 सप्ताह की अवधि के भीतर किया जाएगा, जो या तो उपरोक्त प्रस्तर (ए) में उल्लिखित 4 सप्ताह की अवधि की समाप्ति से (आईआरपीसे कोई संवाद प्राप्त नहीं होने की स्थिति में) या आईआरपीके संवाद से 4 सप्ताह के भीतर शुरू होगा कि उक्त कंपनी संघ के व्यवसाय में भाग लेने की स्थिति में नहीं है।

(सी) यदि संघ सदस्य सीआईआरपी का सामना करने वाले सदस्य की भागीदारी के बिना अपने बल पर परियोजना को पूरा करने के लिए अपनी इच्छा को संवाद करने में विफल रहते हैं या उक्त परियोजना को पूरा करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हैं, तो प्राधिकरण परियोजना के समय पर पूर्णता सुनिश्चित करने के लिए वैकल्पिक व्यवस्था करेगा।"

180. निम्नलिखित निष्कर्ष और हमारे बाद के निर्देश कदाचार को संबोधित करने और प्रभावित हितधारकों को राहत प्रदान करने के लिए लक्षित हैं।

181. न्यायालय हमेशा एनसीएलटी/एनसीएलएटी द्वारा पारित आदेशों के साथ निर्धारण और हस्तक्षेप करते समय सतर्क रहता है, लेकिन ऐसा करते समय, न्यायालय अपने संवैधानिक कर्तव्य से दूर नहीं हो सकता है और एक विधि या एक आदेश की व्याख्या को असहाय रूप से अनुमोदित नहीं कर सकता है जो सामाजिक लक्ष्यों को विफल करने और सार्वजनिक भलाई को खतरे में डालने के लिए निश्चित है।

182. उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता में, यह न्यायालय विचारित मत का है कि वर्तमान प्रकरण एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें याचिकाकर्ता, मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड को 1,00,000 वर्ग मीटर भूमि आवंटित की गई थी जिसमें से 70,000 वर्ग मीटर भूमि को विभाजित किया गया था और इसकी 100% अन्य सहायक कंपनी को आवंटित किया गया था। जिसके शेयर याचिकाकर्ता कंपनी के पास थे।

इन शेयर होल्डिंग्स को बेच दिया गया और कंपनी को हस्तांतरित कर दिया गया। जाहिर है, हस्तांतरण कुछ मौद्रिक प्रतिफल के आधार पर होना है। विचार कंपनी में आया होगा। याचिकाकर्ता ने पैसे को निकालने के बाद, जो कंपनी में आया, नोएडा प्राधिकरण के बकाया राशि के साथ-साथ अन्य बकाया का भुगतान नहीं किया, और कंपनी को दिवालियापन में धकेल दिया है। यह संपूर्ण कार्यवाही देनदारियों से बचने के लिए एक इंजीनियर दिवालियापन के अतिरिक्त कुछ नहीं है। एनसीएलटी को बैलेंस शीट और अन्य अभिलेखों से सत्यापित करना चाहिए जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि ऐसी तरह की इंजीनियर दिवालियापन कार्यवाही शुरू नहीं की जानी चाहिए यदि वही दुर्भावनापूर्ण कार्यवाही है और देनदारियों से बाहर निकलने के लिए बड़े षण्यंत्र के रूप में दायर की गई है। यदि ऐसी तरह के रिवर्स सीआईआरपी को जारी रखने की अनुमति दी जाती है तो यह वास्तव में प्रतिकूल और आईबी संहिता, 2016 के उद्देश्यों और उद्देश्यों के विपरीत होगा।

183. चूंकि स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ता कंपनी के प्रबंधन द्वारा धोखाधड़ी खेती गई है और पैसे का दुरुपयोग/निकासी की गई है, इसलिए हम अंधाधुंध रूप से रिवर्स दिवालियापन को अनुमोदित करते हुए एनसीएलटी/एनसीएलएटी द्वारा पारित आदेशों को मुहर नहीं दे सकते हैं।

184. तथ्यों और परिस्थितियों में, 'Fraus Omnia Vitiat' का सिद्धांत यहां लागू होता है। आईबीसी, 2016 की धारा 7 (श्री नीरव भटनागर एवं अन्य बनाम मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य) के अधीन योजित किए गए आवेदन पर एनसीएलटी द्वारा पारित आदेश, जो रिवर्स सीआईआरपी को अनुमोदित करता है, वर्तमान रिट याचिका में चुनौती नहीं दी गई है और इस तरह, न्यायिक औचित्य और क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के कारण, हम उपरोक्त आदेश को रद्द करने में असमर्थ हैं। हालांकि, यह पक्षों के लिए खुला होगा कि वे एनसीएलटी/एनसीएलएटी के ध्यान में वर्तमान आदेश को यह ध्यान में रखते हुए एक तर्कसंगत निर्णय लेने के लिए लाएं कि परियोजना, एक एकीकृत परियोजना है और यह संघ सदस्यों का कर्तव्य है कि वे सुनिश्चित करें कि संपूर्ण सुविधाएं, जैसा कि योजना में निर्धारित है, स्पोर्ट्स सिटी योजना के ब्रोशर में नोएडा प्राधिकरण द्वारा निर्धारित विशिष्टता के अनुसार विकसित की जा रही है। यह भी स्पष्ट किया गया है कि घर खरीदारों का हित सर्वोच्च है और उनके हित की अच्छी तरह से रक्षा की जानी चाहिए।

185. यह अपेक्षा की जाती है कि दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 के अधीन एक बिल्डर के विरुद्ध शुरू की गई कार्यवाही में, आवेदन को स्वीकार करने से पहले, विद्वान एनसीएलटी यह सुनिश्चित कर सकता है और स्वयं को संतुष्ट कर सकता है कि क्या दिवालियापन कार्यवाही वास्तविक है या वही धन को निकालने के बाद केवल नागरिक/आपराधिक देनदारियों से दूर जाने के लिए बिल्डर के कहने पर दुर्भावनापूर्वक दायर की गई है।

186. एनसीएलटी/एनसीएलएटी इस तथ्य पर भी विचार कर सकता है कि परियोजना एक एकीकृत परियोजना थी और इसे स्पोर्ट्स सिटी के उद्देश्यों के अनुसार विकसित किया जाना है और डेवलपर को

चुनते समय आईआरपीको परियोजना के विकास को एक एकीकृत परियोजना के रूप में ध्यान में रखना चाहिए।

187. वित्तीय धोखाधड़ी का अपराध पीएमएलए अधिनियम के अध्याय 1 के खंड 2 के उप-खंड (यू), (वी), (वाई), (जेडए) के दायरे में आता है। चूंकि याचिकाकर्ता कंपनी के प्रमोटरों द्वारा किया गया अपराध पीएमएलए अधिनियम के अधीन अनुसूचित अपराध की परिभाषा के अंतर्गत आता है, इसलिए प्रवर्तन निदेशालय को सभी अभियुक्त निदेशकों/प्रमोटरों/नामित अधिकारियों और सभी अन्य प्रमुख प्रबंधकीय व्यक्तियों के विरुद्ध कार्रवाई करने का निर्देश दिया जाता है, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से याचिकाकर्ता की कंपनी के नियंत्रण में थे, और जो कंपनी से पैसे का दुरुपयोग/निकासी में शामिल थे। ई.डी. को निदेशक/प्रबंधन/प्रमुख कार्मिक के विरुद्ध प्रवर्तन मामला सूचना रिपोर्ट (ईसीआईआर) दर्ज करने का निर्देश दिया जाता है, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से याचिकाकर्ता कंपनी के नियंत्रण में हैं और धन के डायवर्जन में जिम्मेदार हैं।

188. हम आगे निर्देश देते हैं कि ई.डी. जांच करेगा कि क्या धन की निकासी/डायवर्जन कंपनी से व्यक्तिगत खातों में या अन्य कंपनियों में पैसे हस्तांतरित करके हुई है जिसमें प्रमोटरों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हित है, या तीसरे पक्ष को लाभ पहुंचाने के लिए कोई लेनदेन, जिसमें कम मूल्य वाली कीमत पर संपत्तियों का हस्तांतरण या कुछ लेनदारों को चुकौती में प्राथमिकता देना शामिल है, या कोई धोखाधड़ी वाली मिलीभगत जहां संपत्तियों को बाजार मूल्य से नीचे बेचा गया था।

189. ई.डी. यह भी जांच करेगा कि क्या कोई फर्जी लेनदेन या शेल कंपनियों में लेनदेन या निदेशकों द्वारा भारी वेतन लेना या कंपनियों को व्यक्तिगत या अन्य खर्चों से बोझ डालना जो कंपनी से जुड़े नहीं हैं।

190. ई.डी. को आगे सभी संभावनाओं पर जांच करने का निर्देश दिया जाता है जो उपरोक्त कार्मिकों द्वारा धन को निकालने के लिए की गई हो सकती हैं। ई.डी. निकाले गए/दुरुपयोग किए गए पैसे के निशान का पता लगाने के लिए सभी प्रयास करेगा, जिससे वही कंपनी में वापस लाया जा सके और उसके साथ नोएडा प्राधिकरण, राज्य सरकार, किसानों को अतिरिक्त मुआवजा और अन्य बकाया का भुगतान किया जा सके।

191. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन, हम विचारित मत के हैं कि वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता को कोई राहत नहीं दी जा सकती है। तदनुसार, वर्तमान रिट याचिका उपरोक्त निर्देशों के साथ **निस्तारित** की जाती है।

192. निबंधक (अनुपालन) को इस निर्णय की एक प्रति विद्वान एनसीएलटी, दिल्ली और ई.डी. के निदेशक को सूचना और आवश्यक अनुपालन के लिए तुरंत भेजने का निर्देश दिया जाता है।

(2025) 2 ILRA 612

मूल क्षेत्राधिकार

दीवानी पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 24.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति महेश चंद्र त्रिपाठी

माननीय न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार

रिट सी संख्या-26640 of 2021

मेसर्स जानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

प्रतीक सिन्हा

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

कौशलेन्द्र नाथ सिंह

(ए) शहरी विकास और प्रशासनिक विधि-नोएडा प्राधिकरण की निष्क्रियता को चुनौती और स्पोर्ट्स सिटी-II योजना से संबंधित एकाधिक राहतों का दावा-भारत का संविधान-अनुच्छेद 243क्यू-लीड सदस्य-संघ-शून्य अवधि-एकीकृत टाउनशिप परियोजना-एक बार जब लीड सदस्य ने विकल्प चुना और न्यूनतम अनिवार्य 30% की शेयरधारिता रखना बंद कर दिया, तो उसने योजना के अधीन किसी भी राहत की मांग करने का अधिकार खो दिया। (प्रस्तर-60)

नोएडा द्वारा 2011 में सेक्टर 78, 79 और 150 में खेल और सहायक सुविधाओं के एकीकृत विकास के लिए शुरू की गई स्पोर्ट्स सिटी-II योजना-याचिकाकर्ता के नेतृत्व वाले संघ को भूमि आवंटित-याचिकाकर्ता के अनुरोध पर उप-विभाजन अनुमोदित-याचिकाकर्ता ने बाद में विकल्प चुना- कोई हिस्सा या अंश न रखने के बाद भी, याचिकाकर्ता ने शून्य अवधि के विस्तार, संशोधित मास्टर प्लान की स्वीकृति, एफएआर में वृद्धि, और 200 करोड़ रुपये के मुआवजे सहित राहतों की मांग की-इसलिए याचिका (प्रस्तर 2 से 19)

निर्णय:-

याचिकाकर्ता ने परियोजना से हटने का विकल्प चुना है और स्पोर्ट्स सिटी के विकास में कोई हिस्सा या भागीदारी नहीं रखता है, रिट याचिका योजित करने के लिए कोई अधिकार नहीं है। बकाया का पुनर्निर्धारण, एफएआर

वृद्धि और मुआवजे सहित दावा की गई राहते रिट क्षेत्राधिकार में प्रदान नहीं की जा सकती हैं। (प्रस्तर- 60, 63 से 66)

याचिका निरस्त। (ई-7)

(माननीय न्यायमूर्ति महेश चंद्र त्रिपाठी और माननीय न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार द्वारा उद्धोषित)

सामग्री की तालिका

क्र.सं.	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1	मामले के तथ्य	01-10
2	याचिकाकर्ता की ओर से तर्क	10-12
3	प्रतिवादियों की ओर से तर्क	12-17
4	विश्लेषण और निष्कर्ष	18-21

1. श्री प्रतीक सिन्हा, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की ओर से ब्रीफ धारण कर रहे श्री अमित शुक्ला, अधिवक्ता, विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता श्री देवेश विक्रम और राज्य प्रतिवादियों के लिए विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री मोहन श्रीवास्तव और श्री फुजैल अहमद अंसारी, और प्रतिवादी-नोएडा के लिए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनीष गोयल, जिनकी सहायता विद्वान अधिवक्ता श्री कौशलेन्द्र नाथ सिंह और सुश्री अंजलि गोखलानी कर रही हैं, को सुना।

मामले के तथ्य

2. न्यू ओखला इंडस्ट्रियल डेवलपमेंट अथॉरिटी¹ ने वर्ष 2011 में "स्पोर्ट्स सिटी-II" के नाम से एक योजना शुरू की, जो नोएडा के सेक्टर 78, 79 और 150 में विकसित की जानी थी। यह योजना 03.03.2011 को शुरू की गई और 24.03.2011 को बंद कर दी गई। योजना के अनुसार, नोएडा के सेक्टर 78, 79 में 72.75 हेक्टेयर भूभाग पर एक स्पोर्ट्स सिटी विकसित किया जाना था और दूसरा सेक्टर 150 में। योजना के लिए आरक्षित मूल्य 11,500/- रुपये प्रति वर्ग मीटर निर्धारित किया गया था। मूल्य जानबूझकर कम रखा गया था क्योंकि डेवलपर को उन्हें आवंटित की गई पूरी भूमि के 70% से अधिक पर खेल सुविधाएं बनानी थीं, जो विपणन योग्य नहीं थीं, और इसके अतिरिक्त, डेवलपर को इसे विकसित करने के लिए अपनी पूंजी निवेश करनी थी। शेष 30% भूमि में, (28% समूह आवास के लिए और 2% वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए था)। योजना में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि इस स्पोर्ट्स सिटी में जनसंख्या घनत्व 1650 लोग प्रति हेक्टेयर होगा। इस योजना में, कुल भूमि का अधिकतम अनुमेय फ्लोर एरिया रेशियो² 1.5 था। मनोरंजक घटक (यानी गोल्फ कोर्स, स्टेडियम आदि जैसी खेल गतिविधियां और खुली जगहें) के खुले/हरित क्षेत्र को पूरी भूमि के लिए खुले हरित क्षेत्रों के रूप में माना जाना था। स्पोर्ट्स सिटी के ब्रोशर में स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए शर्तें निर्धारित की गई थीं। ब्रोशर का प्रासंगिक भाग निम्नानुसार है:-

"संघ में लीड सदस्य की शेयरधारिता नोएडा से परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त होने तक कम से कम 30% रहेगी।

संघ के मामले में, सदस्य योजना(ओं) के लिए संयुक्त रूप से आवेदन करने के अपने आशय को व्यक्त करते हुए एक समझौता ज्ञापन (एमओए) प्रस्तुत करेंगे, और यदि उन्हें प्लॉट आवंटित किया जाता है, तो एमओए स्पष्ट रूप से संघ में प्रत्येक सदस्य की भूमिका और जिम्मेदारी को परिभाषित करेगा, एसपीसी जो बाद में आवंटी के रूप में अपनी सभी जिम्मेदारियों को पूरा करेगा, और आवंटित क्षेत्र पर कुल अनुमेय एफएआर के न्यूनतम 30% का निर्माण स्वयं करना होगा।

"लीड सदस्य" को नोएडा से परियोजना के कम से कम एक चरण का अस्थायी अधिभोग/पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त होने तक एसपीसी में कम से कम 30% की शेयरधारिता बनाए रखनी होगी।

किस्तों या किसी भुगतान को जमा करने में चूक के मामले में, चूक की अवधि के लिए व्यतिक्रम की गई राशि पर अर्ध-वार्षिक चक्रवृद्धि @ 14% ब्याज लगाया जाएगा।

पट्टाधारी को पट्टा विलेख के निष्पादन की तिथि से 3 वर्ष की अवधि के भीतर खेल, संस्थागत व अन्य सुविधाओं के लिए निर्धारित अनुमेय क्षेत्र के न्यूनतम 15% का निर्माण पूरा करना होगा और 5 वर्षों के भीतर चरणों में परियोजना को पूरा करना होगा। हालांकि, आवासीय और वाणिज्यिक विकास/निर्माण 7 वर्षों के भीतर चरणों में पूरा किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त, पट्टाधारी को मनोरंजक उपयोगों के लिए निर्धारित क्षेत्र के अनुपात में परियोजना में आवासीय और वाणिज्यिक घटक को विकसित करना होगा।

'पूर्णता प्रमाण पत्र' नोएडा द्वारा परियोजना या उसके हिस्से के चरणों में पूर्ण होने पर और परियोजना या उसके हिस्से की पूर्णता को प्रमाणित करने के लिए आवश्यक दस्तावेजों को प्रस्तुत करने पर जारी किया जाएगा।

पट्टाधारी परियोजना के पूर्ण न होने से उत्पन्न होने वाले सभी विवादों के विरुद्ध नोएडा की क्षतिपूर्ति करते हुए एक क्षतिपूर्ति बांड निष्पादित करेगा।

पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त किए बिना, पट्टाधारी के पास आवासीय और वाणिज्यिक उपयोग के लिए उपलब्ध क्षेत्र के लिए नोएडा के योजना मानदंडों के अनुसार आवंटित प्लॉट को उपयुक्त छोटे प्लॉट में उप-विभाजित करने और हस्तांतरण की तिथि पर प्रचलित दर पर हस्तांतरण शुल्क के भुगतान पर नोएडा की पूर्व स्वीकृति के साथ इच्छुक पक्षों को, यदि कोई हो, समान हस्तांतरित करने का अधिकार होगा।

पट्टादाता/नोएडा प्राधिकरण की लिखित स्वीकृति के बाद, पट्टाधारी अपनी कई सहायक कंपनियों के माध्यम से परियोजना को कार्यान्वित/विकसित कर सकता है जिसमें आवंटी/पट्टाधारी कंपनी के पास न्यूनतम 90% इक्विटी शेयर होल्डिंग होगी।

नोएडा द्वारा अनुमोदित लेआउट और भवन योजनाओं के आधार पर भूमि/निर्मित क्षेत्र का उप-पट्टा अनुमत होगा।

नोएडा परियोजना के कार्यान्वयन की निगरानी करेगा। जिन आवेदकों के पास निर्धारित समय सीमा के भीतर परियोजना को लागू करने की दृढ़ प्रतिबद्धता नहीं है, उन्हें आवंटन का लाभ नहीं लेने की सलाह दी जाती है।"

3. विज्ञापन के अनुसरण में, केवल दो कंपनियों ने इस परियोजना के लिए आवेदन किया, पहली मेसर्स वेव प्राइवेट लिमिटेड थी, जिसने आरक्षित मूल्य पर आवेदन किया था और दूसरी याचिकाकर्ता-कंपनी मेसर्स जानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (लीड सदस्य) और 8 अन्य कंपनियों (लीड सदस्य होने के कारण) का एक संघ था। संघ सदस्य और संघ में उनकी शेयरधारिता निम्नानुसार थी-

क्र.सं.	सदस्य	स्थिति	संघ में लीड और प्रासंगिक सदस्य की शेयरधारिता का %
1	मेसर्स जानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड	लीड	30%
2	मेसर्स मेरिटन इंफोटेक प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक	5%
3	मेसर्स सतलुज एग्री प्रोडक्ट्स लिमिटेड	प्रासंगिक	5%
4	मेसर्स जानाडु इंफ्राडेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक	10%
5	मेसर्स जानाडु इंफाटेक प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक	10%
6	मेसर्स जानाडु रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक	10%
7	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक	10%
8	मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक	10%
9	मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड	प्रासंगिक	10%
	कुल:		100%

4. मेसर्स जानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड, जो संघ का लीड सदस्य था, 10.03.2011 को निगमित किया गया था, जिसमें प्रमोटर श्री निर्मल सिंह, श्री विदुर भारद्वाज और श्री सुप्रीत सिंह सूरी थे। याचिकाकर्ता की कंपनी की शेयरधारिता मेसर्स थी सी यूनिवर्सल डेवलपर्स (99.99 प्रतिशत शेयर) के साथ थी और श्री सुप्रीत सिंह सूरी, मेसर्स थी सी यूनिवर्सल डेवलपर्स (.01%) के नामित थे।

5. बोलियों के मूल्यांकन के बाद, याचिकाकर्ता कंपनी के नेतृत्व वाले संघ की बोली अनुपालक पाई गई। नोएडा प्राधिकरण द्वारा 28.03.2011 को एक स्वीकृति पत्र जारी किया गया और उसके बाद, संघ के पक्ष में 04.05.2011 को आवंटन-सह-आरक्षण पत्र जारी किया गया, जिसमें संघ द्वारा स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए प्लॉट संख्या एससी-01-01, सेक्टर 78 और 79 में 7,27,500 वर्ग मीटर भूमि आरक्षित की गई थी।

6. संघ के लीड सदस्य होने के कारण याचिकाकर्ता कंपनी ने 11.10.2011 को एक पत्र लिखा, जिसमें नोएडा प्राधिकरण से संघ के प्रासंगिक सदस्यों के पक्ष में पूरी स्पोर्ट्स सिटी को उप-विभाजित करने का अनुरोध किया गया।

7. नोएडा प्राधिकरण द्वारा दिनांक 24.10.2011 के पत्र के माध्यम से अनुरोध स्वीकार किया गया और परियोजना संघ के सदस्यों को आवंटित की गई। त्वरित संदर्भ के लिए दिनांक 24.10.2011 का पत्र नीचे प्रस्तुत किया गया है:

"न्यू ओखला इंडस्ट्रियल डेवलपमेंट अथॉरिटी

मुख्य प्रशासनिक भवन,

सेक्टर-VI, नोएडा-201301

संख्या NOIDA/Commercial/2010 दिनांक: 24 अक्टूबर, 2011

मेसर्स जानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (संघ)

सी-23, ग्रेटर कैलाश एन्क्लेव, भाग-I,

नई दिल्ली-48

विषय: योजना संख्या 2010-11 (स्पोर्ट्स सिटी-II) के अधीन स्पोर्ट्स सिटी प्लॉट संख्या एससी-01-01 सेक्टर - 78 और 79 का उप-विभाजन

महोदय,

उपरोक्त विषय पर दिनांक 11 अक्टूबर, 2011 के आपके पत्र के संदर्भ में, मुझे यह सूचित करने का निर्देश दिया गया है कि योजना के ब्रोशर की शर्तों और नियमों को देखते हुए, उक्त प्लॉट को निम्नलिखित तरीके से छह (6) भागों में उप-विभाजित करने के आपके अनुरोध को सक्षम अधिकारी द्वारा स्वीकार कर लिया गया है; प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर 79 का 5 भागों में उप-विभाजन और प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर 78 जो आवंटित क्षेत्र का हिस्सा है कुल 712981.00 वर्ग मीटर प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर 79 नोएडा अर्थात्

(1) एससी-01/ए-1,00,000 वर्ग मीटर

(2) एससी-01/बी-48,000 वर्ग मीटर

(3) एससी-01/सी-2,50,027 वर्ग मीटर

(4) एससी-01/डी-1,00,000 वर्ग मीटर और

(5) एससी-01 सेक्टर-78 - 14,272.50 वर्ग मीटर, जो आवंटित क्षेत्र प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर-78 नोएडा कुल 14,519.00 वर्ग मीटर, का भाग है

साथ ही योजना के ब्रोशर की शर्तों और नियमों को देखते हुए, प्लॉट संख्या एससी-01/सी, सेक्टर-79 के लिए 2,50,020.50 वर्ग मीटर क्षेत्रफल के लिए एसपीसी, अर्थात् मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड, जिसमें संघ सदस्य शामिल हैं: (1) मेसर्स जानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड-62.5% (2) मेसर्स मेरिटन इंफोटेक प्राइवेट लिमिटेड-18.50% (3) मेसर्स सतलज एग्रो प्रोडक्ट्स लिमिटेड-9.5% (4) मेसर्स जानाडु इंफ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड-9.50% - 2,50,027 वर्ग मीटर, को पट्टा विलेख के निष्पादन के लिए अनुमोदित किया जाता है।

उप-विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01/ए सेक्टर 79 के पट्टा विलेख का लीड सदस्य अर्थात् मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड-1,00,000 वर्ग मीटर के पक्ष में निष्पादन अनुमोदित है।

उप-विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01/बी सेक्टर 79 के पट्टा विलेख का लीड सदस्य अर्थात् मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड-48,000 वर्ग मीटर के पक्ष में निष्पादन अनुमोदित है।

उप-विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01/डी सेक्टर 79 के पट्टा विलेख का लीड सदस्य अर्थात् मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड-1,00,000 वर्ग मीटर के पक्ष में निष्पादन अनुमोदित है।

उप-विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01/ई सेक्टर 79 के पट्टा विलेख का लीड सदस्य अर्थात् मेसर्स जानाडु रियलकॉन प्राइवेट लिमिटेड-80,000 वर्ग मीटर के पक्ष में निष्पादन अनुमोदित है।

उप-विभाजित प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर-78 के पट्टा विलेख का लीड सदस्य मेसर्स जानाडु इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड-14,272.50 वर्ग मीटर के नाम पर, जो आवंटित क्षेत्र प्लॉट संख्या एससी-01 सेक्टर-78 नोएडा कुल 14519.00 वर्ग मीटर का भाग है, निष्पादन अनुमोदित है।

तदनुसार उपरोक्त प्लॉटों का गणना विवरण संलग्न किया जा रहा है।

भवदीय,

ह/-

प्रबंधक (वाणिज्यिक)"

8. नोएडा प्राधिकरण द्वारा इन छह उप-पट्टेदारों के साथ 24.10.2011 को अलग-अलग पट्टा विलेख निष्पादित किए गए। हालांकि, पट्टा विलेख की एक शर्त यह थी कि लीड सदस्य के पास संघ में कम से कम 30 प्रतिशत हिस्सा होना चाहिए और पट्टेदारों को कम से कम पहले चरण का अस्थायी अधिभोग या पूर्णता प्रमाण पत्र दिए जाने तक शेयरधारिता का प्रतिशत बनाए रखना होगा।

9. नोएडा प्राधिकरण किसी कारणवश 7,27,500 वर्ग मीटर की पूरी भूमि का कब्जा नहीं सौंप सका, इसलिए, आवंटी ने प्राधिकरण को शून्य अवधि का लाभ देने के लिए एक प्रत्यावेदन दिया। 48,520 वर्ग मीटर को छोड़कर पूरी भूमि का कब्जा दे दिया गया, क्योंकि वहाँ कुछ अतिक्रमण था।

10. नोएडा प्राधिकरण ने 27.05.2013 को आयोजित बोर्ड की 177वीं बैठक में संकल्प लिया कि शेष भूमि, जिसका कब्जा नहीं दिया जा सका, उसके बदले में, आसपास के सेक्टरों की 48,520 वर्ग मीटर भूमि आवंटी को आवंटित की जा सकती है। तदनंतर, आसपास के सेक्टर 101 में 48,520 वर्ग मीटर भूमि आवंटित की गई और 21.06.2013 को आवंटियों को समान आवंटित करने के लिए एक नोटिस भी जारी किया गया। इस आवंटन के साथ स्पोर्ट्स सिटी परियोजना में प्रस्तावित क्षेत्र का 80 प्रतिशत प्राप्त कर लिया गया है, जिसके प्रभाव से परियोजना के लिए न्यूनतम आवश्यकता प्राप्त हो गई थी।

11. आवंटी/एसपीसी ने सामूहिक रूप से सेक्टर 78 और 79 में स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए एक मास्टर लेआउट प्लान की स्वीकृति के लिए आवेदन किया। योजना को 16 जून, 2014 को अनुमोदित किया गया।

12. हालांकि, नोएडा प्राधिकरण ने अपने दिनांक 30.12.2016 के पत्र के माध्यम से 3,24,729.30 वर्ग मीटर के क्षेत्र के लिए 31.01.2017 तक शून्य अवधि का लाभ प्रदान किया। लाभ प्रदान करते समय, नोएडा प्राधिकरण ने स्पष्ट कर दिया कि आवंटियों को कोई और लाभ नहीं दिया जाएगा। नोएडा प्राधिकरण ने उप-पट्टेदार को आवंटित प्लॉट के लिए एक संशोधित भुगतान योजना भी जारी की। स्थानांतरण का प्रभाव यह था कि बकाया का भुगतान करने की तारीख स्थानांतरित हो गई और भुगतान अनुसूची 31.07.2017 से 31.01-2025 तक शुरू हो गई।

13. याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा दावा किया गया है कि सेक्टर 101 में भूमि आवंटित होने के बाद, प्रतिनिधि भूमि का कब्जा लेने गए और पाया कि भूमि अभी भी किसानों के कब्जे में थी और बड़े पैमाने पर आंदोलन हो रहा था, इसलिए याचिकाकर्ता कंपनी को कब्जा नहीं सौंपा जा सका।

14. याचिकाकर्ता ने 17 अक्टूबर, 2018 के पत्र के साथ 2.0 के एफएसआई के साथ स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के लिए एक संशोधित मास्टर प्लान प्रस्तुत किया, और अतिरिक्त एफएसआई के लिए भुगतान भी किया गया बताया जाता है। हालांकि, इस योजना की स्वीकृति अभी भी नोएडा प्राधिकरण के पास लंबित है।

15. यह पता चलता है कि स्पोर्ट्स सिटी के विकास में घोटाले की कुछ रिपोर्ट थी, इसलिए, पूरे मुद्दे को मूल्यांकन के लिए नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक³ को संदर्भित किया गया था। सीएजी ने एक रिपोर्ट प्रस्तुत की, जो चौंकाने वाली थी और पूरे घोटाले का खुलासा करती थी। इसमें उल्लेख है कि कैसे नोएडा प्राधिकरण और राज्य सरकार को 9000 करोड़ रुपये की भारी हानि हुई थी, क्योंकि नोएडा प्राधिकरण ने योजना बनाते समय स्पोर्ट्स सिटी का गलत मूल्य निर्धारण किया था। ब्रोशर के अनुसार केवल आवासीय और वाणिज्यिक प्लॉटों को विभाजित किया जा सकता था, लेकिन नोएडा प्राधिकरण ने पूरे प्लॉटों को उप-विभाजित कर दिया, जो स्पोर्ट्स सिटी के लिए भी निर्धारित थे। आवंटियों की बोलियों की जांच नहीं की गई और प्लॉट आवंटित करने से पहले उम्मीदवारों के कारोबार पर भी विचार नहीं किया गया। सबसे अधिक हिस्सेदारी वाले लीड सदस्य को परियोजना से पूरी तरह से बाहर कर दिया गया और उसके बाद, विभिन्न अन्य कंपनियों को आवंटन किया गया, जो व्यक्तिगत रूप से वित्तीय बोली मूल्यांकन में योग्य नहीं हो सकती थीं। इस तरह की संदिग्ध पद्धति को अपनाकर, नोएडा प्राधिकरण ने परिणामस्वरूप उन लोगों को प्लॉट आवंटित किए, जो व्यक्तिगत रूप से आवेदन करने के अधिकारी भी नहीं थे।

16. सीएजी की रिपोर्ट प्राप्त होने पर, नोएडा के बोर्ड की 18-01-2021 को एक बैठक हुई (201वीं बोर्ड बैठक) जिसमें यह संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी में खेल सुविधाओं को पूरा करने के लिए, एक समिति बनाई जानी चाहिए, जो स्थिति को देखेगी और अगली बोर्ड बैठक में एक रिपोर्ट रखेगी और मानचित्रों के पुनर्मान्यकरण सहित स्पोर्ट्स सिटी में कोई और कदम उठाने को रोक दिया। सीएजी की रिपोर्ट के बाद, नोएडा ने स्पोर्ट्स सिटी में सभी गतिविधियों को रोक दिया और मामले को निर्देश और मार्गदर्शन के लिए राज्य सरकार को भेज दिया कि आगे क्या करना है।

17. समिति ने एक रिपोर्ट बनाई और रिपोर्ट के आधार पर, 26.07.2021 को 202वीं बैठक आयोजित की गई, जिसमें यह संकल्प लिया गया कि स्पोर्ट्स सिटी में कोई और उप-विभाजन नहीं होगा और अगले आदेश तक मानचित्र का कोई पुनर्मान्यकरण नहीं होगा और मामले को इसके मार्गदर्शन और निर्देशों के लिए राज्य सरकार को भेज दिया।

18. सीएजी की रिपोर्ट के बाद, स्थिति की गंभीरता को देखते हुए, मुद्दे को देखने के लिए विधान सभा के सदस्यों से मिलकर एक सार्वजनिक लेखा समिति का गठन किया गया।

19. याचिकाकर्ताओं ने एक बार फिर 11.08.2021 को संशोधित मास्टर-प्लान की स्वीकृति और शून्य अवधि का लाभ देने के लिए एक प्रत्यावेदन किया। चूंकि याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए प्रत्यावेदन पर कोई कार्रवाई नहीं की गई है, न तो संशोधित मास्टर प्लान को मंजूरी दी गई और न ही शून्य अवधि का लाभ दिया गया। इसलिए, नोएडा प्राधिकरण की निष्क्रियता से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने निम्नलिखित राहतों की मांग करते हुए वर्तमान रिट याचिका योजित की है:-

"i. प्रतिवादी संख्या 3 को सेक्टर 78, 79 और 101, नोएडा में स्थित कुल विषयगत भूमि के 3,63,409.80 वर्ग मीटर में से 3,24,729.30 वर्ग मीटर भूमि के संबंध में 01.02.2017 से वास्तविक, खाली और पूर्ण भौतिक कब्जा सौंपने की तिथि तक शून्य अवधि घोषित करने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट आदेश या निर्देश जारी करना, जिसके लिए प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा केवल 04.05.2011 से 31.01.2017 तक शून्य अवधि प्रदान की गई है;

ii. प्रतिवादी संख्या 3 को सेक्टर 78, 79 और 101, नोएडा में स्थित 3,63,409.80 वर्ग मीटर की विषयगत भूमि में से 38,680 वर्ग मीटर भूमि के संबंध में 04.05.2011 से वास्तविक, खाली और पूर्ण भौतिक कब्जा सौंपने की तिथि तक शून्य अवधि घोषित करने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट आदेश या निर्देश जारी करना, जिसके लिए प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा कोई शून्य अवधि प्रदान नहीं की गई है;

iii. प्रतिवादी संख्या 3 को याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 10.09.2020 के आवेदन के माध्यम से योजित स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में 1.5 के मूल एफएआर के साथ संशोधित मास्टर प्लान की स्वीकृति में तेजी लाने का निर्देश देने और परियोजनाओं के निर्माण और विकास के लिए विधि के अधीन समय-समय पर आवश्यक हमारी स्पोर्ट्स सिटी के संबंध में ऐसी अन्य स्वीकृतियां/मंजूरी/स्पष्टीकरण प्रदान करने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट आदेश या निर्देश जारी करना;

iv. प्रतिवादी संख्या 3 को याचिकाकर्ता के दिनांक 17.10.2018 के पत्र के संदर्भ में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के संबंध में याचिकाकर्ता को 2.00 का अतिरिक्त एफएसआई प्रदान करने और उसे बाद में स्पोर्ट्स सिटी

परियोजना के संशोधित मास्टर प्लान में जोड़ने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट आदेश या निर्देश जारी करना।

v. प्रतिवादी संख्या 3 को विषय भूमि के वास्तविक और पूर्ण भौतिक कब्जे की तिथि तक विषय भूमि पर मनोरंजक/आवासीय/वाणिज्यिक क्षेत्र के विकास के संबंध में विस्तार शुल्क/प्रभार के किसी भी भुगतान के बिना ऐसी शून्य अवधि के समतुल्य अवधि तक परियोजना के निर्माण और पूर्ण होने की अवधि बढ़ाने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट आदेश या निर्देश जारी करना;

vi. प्रतिवादियों को विषय भूमि के वास्तविक और पूर्ण भौतिक कब्जे की तिथि तक शून्य अवधि स्वीकृति के कारण पट्टा/आवंटन की तिथि से पट्टा किराया और पट्टा प्रीमियम पर ब्याज लेने या एकत्र नहीं करने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट आदेश या निर्देश जारी करना;

vii. प्रतिवादी संख्या 3 को याचिकाकर्ता द्वारा 04.05.2011 से आज तक जमा की गई मूल और ब्याज राशि को विषय भूमि के संबंध में भविष्य की किस्तों के विरुद्ध समायोजित करने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट आदेश या निर्देश जारी करना;

viii. प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता को पुनर्भुगतान अनुसूची का पुनर्गठन प्रदान करने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करना ताकि प्रश्नगत भूमि के आवंटन के विरुद्ध अमरापली बैच मामलों में सीडब्लूपी-940/2017 में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिनांक 10.06.2020 और 10.07.2020 को पारित आदेश के संदर्भ में नोएडा प्राधिकरण को राशि का भुगतान किया जाए;

ix. प्रतिवादी अधिकारियों को प्रश्नगत भूमि पर याचिकाकर्ता के विधिक अधिकार के संबंध में याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई जबरदस्ती कार्रवाई करने से रोकने के लिए उत्प्रेषण की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करना;

x. प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता को 200 करोड़ रुपये की दंडात्मक क्षति और मुआवजा देने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करना, जिसमें ऋणदाता से लिए गए ऋण पर याचिकाकर्ता (उधारकर्ता) द्वारा भुगतान की गई ब्याज लागत और साथ ही अपरिहार्य मुकदमेबाजी के कारण व्यवसाय की हानि और परिणामस्वरूप प्रतिष्ठा और सद्भावना की हानि शामिल है, क्योंकि प्रतिवादी परियोजना की प्रतिस्पर्धा के लिए याचिकाकर्ता को प्रश्न में भूमि का संपूर्ण खाली भौतिक कब्जा सौंपने में विफल रहे।

xi. प्रतिवादी संख्या 1- उत्तर प्रदेश राज्य को प्रतिवादी संख्या 3, नोएडा प्राधिकरण द्वारा अवैधताओं, उल्लंघनों और वैधानिक कर्तव्यों के परित्याग की जांच करने और वर्तमान रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान इस

माननीय न्यायालय को एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए तीन सदस्यों से मिलकर एक जांच समिति गठित करने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी करना,

xii. कोई अन्य आदेश या निर्देश जारी करना जो माननीय न्यायालय मामले की परिस्थितियों में उचित और उपयुक्त समझे।

xiii. इस याचिकाकर्ता को याचिका का व्यय प्रदान करना।"

याचिकाकर्ता की ओर से तर्क

20. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि शुरुआत से ही स्पोर्ट्स सिटी के विकास में समस्या थी। नोएडा प्राधिकरण ने भूमि अधिग्रहित नहीं की थी और भूमि के कब्जे में नहीं थी। फिर भी उन्होंने स्पोर्ट्स सिटी परियोजना की घोषणा की और याचिकाकर्ता को आवंटित होने के बाद, भूमि का कब्जा समय पर नहीं दिया जा सका। इसके परिणामस्वरूप परियोजना में देरी हुई और देरी के कारण याचिकाकर्ता को भारी वित्तीय नुकसान हुआ।

21. बिक्री विलेख के निष्पादन के समय, याचिकाकर्ता कंपनी को कोई भौतिक कब्जा नहीं सौंपा गया था और केवल कागजी कब्जा दिया गया था। जब याचिकाकर्ता कंपनी भूमि का कब्जा लेने गई, तो उन्हें किसानों के आंदोलन का सामना करना पड़ा। इसके अतिरिक्त, किसानों द्वारा भूमि के अधिग्रहण के बारे में उच्च न्यायालय में कई याचिकाएं योजित की गईं, जो लंबित न्यायनिर्णयन थीं।

22. याचिकाकर्ता कंपनी ने आगे प्रस्तुत किया कि पूरी स्पोर्ट्स सिटी एक एकीकृत परियोजना थी और इतने बड़े पैमाने पर विकास टुकड़ों में नहीं हो सकता, जब तक पूरा खाली कब्जा याचिकाकर्ता को नहीं सौंप दिया जाता; स्पोर्ट्स सिटी का विकास शुरू नहीं हो सकता था।

23. विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि सेक्टर 78 और 79 की अतिक्रमित भूमि के बदले में सेक्टर 101 में आवंटित भूमि भी भार मुक्त नहीं थी।

24. नोएडा प्राधिकरण की शून्य अवधि नीति उन सभी भूमियों के लिए लागू थी, जहां नोएडा प्राधिकरण भौतिक कब्जा सौंपने या आवश्यक बुनियादी ढांचे प्रदान करने में अपने दायित्वों को पूरा करने में विफल रहा था, जो उन्हें प्रदान करना चाहिए था या उन मामलों में जहां न्यायालय द्वारा कोई ऐसी मनाही या रोक थी।

25. इसके अतिरिक्त, एक बड़ी फैली हुई परियोजना का विकास टुकड़ों में नहीं हो सकता, जब तक कि परियोजना को पूरा करने के लिए याचिकाकर्ता कंपनी को प्रश्न में भूमि का संपूर्ण खाली भौतिक कब्जा प्रदान नहीं किया जाता है, और जैसे, याचिकाकर्ता को दी गई आवंटित भूमि के टुकड़ों में भूमि के छोटे हिस्सों का

कब्जा किसी काम का नहीं है और वास्तव में अप्रासंगिक है और केवल एक धोखा है, जब तक कि याचिकाकर्ता को प्रश्न में भूमि का संपूर्ण खाली भौतिक कब्जा प्रदान नहीं किया जाता है, परियोजना शुरू नहीं की जा सकती।

26. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि भूमि तीन अलग-अलग स्थानों पर आवंटित की गई थी। जब याचिकाकर्ता कंपनी के प्रतिनिधि सेक्टर 101 में भौतिक कब्जा लेने गए, तो यह पता चला कि प्रतिवादी संख्या 3 के पास कब्जा नहीं था, और भूमि अभी भी किसानों के पास थी। स्थल पर बड़े पैमाने पर आंदोलन हो रहा था, जिसके परिणामस्वरूप स्थल पर कुछ भी नहीं किया जा सका।

27. शून्य अवधि का लाभ केवल 31 जनवरी, 2017 तक दिया गया था। हालांकि, उचित भौतिक कब्जा नहीं सौंपा गया, न ही उसके बाद भी नोएडा प्राधिकरण द्वारा वादा किया गया बुनियादी ढांचा और सड़क प्रदान की गई। इसलिए, राज्य सरकार की शून्य अवधि नीति के अनुसार शून्य अवधि का लाभ बढ़ाया जाना चाहिए।

28. याचिकाकर्ता कंपनी, जो संघ का लीड सदस्य था, ने 1.5 से 2.0 तक एफएसआई में वृद्धि के लिए नीति के संदर्भ में आवेदन किया। अतिरिक्त एफएसआई के लिए 25 करोड़ रुपये का भुगतान किया गया, लेकिन यह नोएडा प्राधिकरण द्वारा कभी प्रदान नहीं किया गया।

29. परियोजना का विकास कई मुद्दों के कारण रुक गया, जिसमें मास्टर प्लान की गैर-स्वीकृति, उपयुक्त बुनियादी ढांचे की अनुपलब्धता, परियोजना से जोड़ने वाली सड़क की अनुपस्थिति और सीएजी रिपोर्ट के बाद नोएडा प्राधिकरण द्वारा निर्णय की कमी शामिल है।

30. चूंकि कब्जा सौंपने में नोएडा प्राधिकरण की ओर से देरी हुई थी। इसलिए, देरी को याचिकाकर्ता के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता और याचिकाकर्ता शून्य अवधि नीति के लाभ का अधिकारी है।

प्रतिवादियों की ओर से तर्क

31, नोएडा प्राधिकरण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनीष गोयल ने प्रस्तुत किया कि मामले में आगे बढ़ने से पहले यहां याचिकाकर्ता के बारे में उल्लेख करना उचित होगा। उन्होंने प्रस्तुत किया कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि याचिकाकर्ता उस संघ का लीड सदस्य था, जिसने परियोजना के लिए आवेदन किया था, लेकिन जैसे ही योजना के अनुसार परियोजना आवंटित की गई, लीड सदस्य को परियोजना में कम से कम 30 प्रतिशत हिस्सेदारी रखनी चाहिए थी। हालांकि, याचिकाकर्ता के अनुरोध पर, नोएडा प्राधिकरण द्वारा संघ के अन्य प्रासंगिक सदस्यों के साथ पट्टा निष्पादित किया गया, और याचिकाकर्ता का नाम गायब पाया गया। उस समय नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों द्वारा निष्पादित पट्टे स्पोर्ट्स सिटी के ब्रोशर में उल्लिखित शर्तों के विपरीत थे, और याचिकाकर्ता परियोजना से बाहर नहीं निकल सकता था। हालांकि, संघ सदस्यों के साथ-साथ नोएडा प्राधिकरण ने याचिकाकर्ता को जाने दिया, और पूरी परियोजना अन्य प्रासंगिक सदस्यों को आवंटित कर दी गई।

32. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि एक संघ द्वारा एक आवेदन किया गया था जिसमें लीड सदस्य मेसर्स जानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड अन्य संघ सदस्यों के साथ था। संघ की संरचना और उनके पंजीकरण की तिथि, निदेशकों की सूची और शेयरधारिता दिखाने वाला एक चार्ट निम्नानुसार है:-

क्र.सं.	कंपनी का नाम	प्रमुख सदस्य/संबंधित सदस्य	प्रतिशत	निगमन की तारीख	निदेशक	कंपनी की होल्डिंग
1	मेसर्स जानाडू एस्टेट्स प्रा. लि.	प्रमुख सदस्य	30%	10.03.2011	निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज, सुरप्रीत सिंह सूरी	
2	मेसर्स मेरिटन इन्फोटेक प्रा. लि.	संबंधित सदस्य	05%	19.10.2005	सुरप्रीत सिंह सूरी, विदुर भारद्वाज, निर्मल सिंह, मयंक चौरसिया, आनंद कुमार चौरसिया, हरि वीरपानेनी कृष्णा	
3	मेसर्स सतलुज एग्रो प्रोडक्ट्स लिमिटेड	संबंधित सदस्य	10%		निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज, सुरप्रीत सिंह सूरी	
4	मेसर्स जानाडू इन्फ्राडेवलपर्स प्रा. लि.	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज, सुरप्रीत सिंह सूरी	

5	मेसर्स जानाडू इन्फ्राटेक प्रा. लि.	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज, सुरप्रीत सिंह सूरी	
6	मेसर्स जानाडू रियलकॉन प्रा. लि.	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज, सुरप्रीत सिंह सूरी	
7	मेसर्स सीक्वल बिल्डकॉन प्रा. लि.	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज, सुरप्रीत सिंह सूरी	
8	मेसर्स सीक्वल बिल्डिंग कॉन्सेप्ट्स	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज, सुरप्रीत सिंह सूरी	
9	मेसर्स किंडल डेवलपर्स प्रा. लि.	संबंधित सदस्य	10%	10.03.2011	निर्मल सिंह, विदुर भारद्वाज, सुरप्रीत सिंह सूरी	

33. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि संघ की नौ कंपनियों में से सात 10.03.2011 को निगमित की गई थीं, यहां तक कि लीड सदस्य को भी 10.03.2011 को निगमित किया गया था, योजना शुरू होने के बाद निदेशकों के समान सेट के साथ। इससे पता चलता है कि सभी कंपनियां निदेशकों के समान सेट द्वारा निगमित की गई थीं, जो वास्तविक प्रमोटर थे।

34. इस संघ कंपनी की बोली सबसे अनुपालक थी और संघ को सेक्टर-78 और 79 में स्पोर्ट्स सिटी परियोजना आवंटित की गई, जो 7,27,500 वर्ग मीटर के क्षेत्र के लिए थी। तदनुसार, मेसर्स जानाडू एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (संघ) के पक्ष में 04.05.2011 को आवंटन पत्र जारी किया गया।

35. श्री गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि सेक्टर-78 और 79 में स्पोर्ट्स सिटी के विकास की योजना 03.03.2011 को शुरू की गई थी और यह 24.03.2011 को बंद की गई थी। स्पोर्ट्स सिटी योजना की मुख्य विशेषता खेल सुविधाएं थीं, जो एक एकीकृत परियोजना है और इसे समग्र रूप से विकसित किया जाना है। भले ही एक संघ कंपनी ने परियोजना के लिए आवेदन किया हो, यह पूरे रूप में संघ है, जिसे पट्टेदार माना जाता है न कि कोई व्यक्तिगत कंपनी।

36. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि जिस तरीके से आवंटन किया गया, उप-विभाजन किए गए, देय किस्तों के लिए कभी नहीं पूछा गया और न ही भुगतान किया गया; जिस तरीके से मानचित्र को मंजूरी दी गई, आवंटियों को खेल सुविधाओं के विकास को शुरू किए बिना भी वाणिज्यिक और आवासीय क्षेत्रों का निर्माण शुरू करने की अनुमति दी गई, वे योजना या ब्रोशर की शर्तों या पट्टा शर्तों के अनुसार नहीं थे।

37. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि मेसर्स जानाडु एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड (संघ के लीड सदस्य) ने दिनांक 11.10.2011 के पत्र के माध्यम से नोएडा से संघ के प्रासंगिक सदस्यों के पक्ष में अलग-अलग पट्टा विलेख निष्पादित करने का अनुरोध किया। उपरोक्त अनुरोध के अनुसरण में ही नोएडा ने 24.10.2011 को संघ के प्रासंगिक सदस्यों के पक्ष में पट्टा विलेख निष्पादित किए।

38. पूरा विभाजन याचिकाकर्ता द्वारा प्रदान किए गए एक पत्र के आधार पर किया गया था। आश्चर्यजनक रूप से, याचिकाकर्ता ने स्वयं संघ से बाहर निकलने का विकल्प चुना और लीड सदस्य के रूप में भूमि का कोई भाग बनाए नहीं रखा।

39. याचिकाकर्ता के अनुरोध पर, भूमि को छह भागों में उप-विभाजित किया गया, जिसके बाद नोएडा प्राधिकरण ने सभी छह कंपनियों के साथ पट्टा विलेख निष्पादित किए। पट्टा विलेख में स्पष्ट रूप से संकेत दिया गया था कि स्पोर्ट्स सिटी एक एकीकृत परियोजना है, जिसे समग्र रूप से विकसित किया जाना चाहिए।

40. संघ के लीड सदस्य के रूप में याचिकाकर्ता ने नोएडा प्राधिकरण को एक पत्र लिखा जिसमें कहा गया कि मेसर्स श्री सी ग्रीन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड मेसर्स जानाडु इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड के साथ स्पोर्ट्स सिटी में खेल सुविधा विकसित करने के लिए जिम्मेदार एक विशेष प्रयोजन कंपनी के रूप में काम करेगी।

41. सभी आवंटियों ने सामूहिक रूप से पूरे स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए एक मास्टर लेआउट प्लान प्रस्तुत किया। एक आंतरिक व्यवस्था के रूप में, उन्होंने आपस में दायित्वों को विभाजित किया, जिसमें दो कंपनियों को ब्रोशर के अनुसार पूरे स्पोर्ट्स सिटी को विकसित करने का काम सौंपा गया। इस बीच, अन्य छोटी कंपनियों ने स्पोर्ट्स सिटी के आवासीय और वाणिज्यिक हिस्सों को विकसित करने की जिम्मेदारी ली।

42. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि यह विभाजन संघ सदस्यों के बीच एक आंतरिक व्यवस्था थी। नोएडा प्राधिकरण के संबंध में, स्पोर्ट्स सिटी एक एकीकृत परियोजना थी जिसे योजना के अनुसार संघ द्वारा विकसित किया जाना था। नोएडा प्राधिकरण ने कभी भी परियोजना को विभाजित नहीं किया या व्यक्तिगत कंपनियों को आवासीय और वाणिज्यिक हिस्सों को विकसित करने की जिम्मेदारी नहीं सौंपी।

43. ब्रोशर और संघ सदस्यों के बीच निष्पादित पट्टा विलेख का एक सरल अवलोकन स्पष्ट रूप से दिखाता है कि परियोजना एक एकीकृत थी। स्पोर्ट्स सिटी के विकास में, यह स्पष्ट था कि प्राथमिक उद्देश्य स्पोर्ट्स सिटी का विकास था, जबकि वाणिज्यिक और आवासीय घटक परियोजना के सहायक हिस्से थे।

44. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि परियोजना के पूरे हिस्से को सौंपने में अतिक्रमण और चुनौतियां थीं। बोर्ड की 177वीं बैठक में, सेक्टर 101 में एक वैकल्पिक प्लॉट प्रदान करने का निर्णय लिया गया, यह सुनिश्चित करते हुए कि ब्रोशर में परिकल्पित परियोजना भूमि का 80% संघ को स्पोर्ट्स सिटी के विकास के लिए सौंप दिया गया। संघ सदस्यों द्वारा किए गए प्रत्यावेदन के आधार पर, नोएडा प्राधिकरण ने स्वयं 31.01.2017 तक शून्य अवधि के लाभ प्रदान किए और बाद में, परियोजना के देर से कब्जे के कारण प्राधिकरण पर किसी प्रतिकूल प्रभाव को रोकने के लिए भुगतान अनुसूची को पुनर्निर्धारित किया। हालांकि, शून्य अवधि लाभ प्रदान करते समय, यह स्पष्ट रूप से कहा गया था कि संघ सदस्यों/आवंटियों को शून्य अवधि के कोई और लाभ नहीं दिए जाएंगे।

45. चार वर्षों तक शून्य अवधि के लाभों का आनंद लेने के बाद, याचिकाकर्ता कंपनी एक बार फिर शून्य अवधि के विस्तार की मांग कर रही है। हालांकि, कोई और लाभ नहीं दिया जा सकता, क्योंकि भूमि का कब्जा उन्हें सौंप दिया गया है। परियोजना के निष्पादन में देरी पूरी तरह से संघ सदस्यों/आवंटियों के लिए जिम्मेदार है। इसके अतिरिक्त, कुछ आवंटियों ने आवासीय और वाणिज्यिक क्षेत्रों के विकास के लिए व्यक्तिगत मानचित्र मंजूरी प्राप्त की है और घर खरीदारों से बुकिंग और धन एकत्र करना शुरू कर दिया है। यदि इन कंपनियों के पास भूमि का कब्जा नहीं था, तो वे मानचित्र मंजूरी कैसे प्राप्त कर सकती थीं और घर खरीदारों से धन एकत्र करना शुरू कर सकती थीं? कब्जे के बिना घर खरीदारों से धन एकत्र करना घर खरीदारों के साथ धोखाधड़ी का एक कार्य होगा।

46. याचिकाकर्ता कंपनी 1.5 से 2.0 तक एफएआर में वृद्धि की मांग कर रही है, जो संभव नहीं है। स्पोर्ट्स सिटी की परिकल्पना 1.5 के एफएआर को ध्यान में रखते हुए की गई थी, और आवंटन तदनुसार किया गया था। याचिकाकर्ता के लिए 2.0 के एफएआर का अनुरोध करना अनुमत नहीं है, क्योंकि यह स्पोर्ट्स सिटी की योजना या नीति का हिस्सा नहीं था।

47. सभी संघ सदस्य समय पर प्रीमियम किस्तों का भुगतान करने में विफल रहे हैं। पट्टा विलेख में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यदि किस्तों का समय पर भुगतान नहीं किया जाता है, तो वे किस्तों के विलंबित

भुगतान पर 11% ब्याज, साथ ही 3% दंड ब्याज के अधीन होंगे। इसलिए, वे संविदात्मक ब्याज व अन्य बकाया के साथ देय प्रीमियम का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी हैं, जो बकाया हैं।

48. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि इस याचिका में, याचिकाकर्ता 200 करोड़ रुपये की क्षति की मांग कर रहा है। हालांकि, देरी संघ सदस्यों की निष्क्रियता के कारण है, और किसी मुआवजे का भुगतान करने का कोई सवाल ही नहीं है। इसके अतिरिक्त रिट याचिका में कोई मुआवजा नहीं मांगा जा सकता।

49. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने बलपूर्वक तर्क दिया कि याचिकाकर्ता कंपनी के पास वर्तमान रिट याचिका योजित करने का कोई अधिकार नहीं है। जबकि यह प्रारंभिक आवेदन के दौरान संघ का लीड सदस्य था, इसने बाद में स्वयं परियोजना से बाहर निकलने का विकल्प चुना। बाद में, परियोजना को छह कंपनियों के बीच विभाजित किया गया, और अब तक, याचिकाकर्ता कंपनी का परियोजना में कोई हित नहीं है।

50. उन्होंने अंत में प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता द्वारा योजित वर्तमान रिट याचिका विधि की प्रक्रिया के घोर दुरुपयोग के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है और यह एक तुच्छ याचिका है क्योंकि याचिकाकर्ता के पास वर्तमान रिट याचिका योजित करने का कोई अधिकार नहीं है।

विश्लेषण और निष्कर्ष

51. हमने संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत प्रस्तुतियों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है। उनकी सक्षम सहायता से, हमने अभिवचनों, रिट याचिका में लिए गए आधारों, उसके साथ संलग्न अनुबंधों, विपक्षी पक्ष द्वारा योजित उत्तर और अपीलकर्ताओं द्वारा योजित प्रतिउत्तर शपथपत्र का अवलोकन किया है।

52. नोएडा को एक औद्योगिक टाउनशिप घोषित किया गया है, न केवल उद्योगों को विकसित करने बल्कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 243क्यू के आधार पर एक पूर्ण टाउनशिप विकसित करने के लिए भी बाध्य है। स्पोर्ट्स सिटी योजना जो 03.03.2011 को व्यापक रूप से प्रचारित की गई थी, एक प्रशंसनीय उद्देश्य को पूरा करने के लिए थी। यह स्पष्ट है कि योजना का उद्देश्य जनता द्वारा आनंदित की जाने वाली अत्याधुनिक खेल सुविधाओं को विकसित करना था। यह योजना नोएडा में दो अलग-अलग स्थानों पर स्पोर्ट्स सिटी विकसित करने के लिए शुरू की गई थी, पहली सेक्टर 78 और 79 में, लगभग 7,27,500 वर्ग मीटर क्षेत्रफल की और दूसरी नोएडा में सेक्टर 150 में स्पोर्ट्स सिटी।

53. यह एक अनिवार्य शर्त थी कि केवल लीड सदस्य को ही नोएडा प्राधिकरण के साथ पत्राचार करने के लिए अधिकृत किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, लीड सदस्य को संघ में एकल सबसे बड़ा शेयरधारक होना आवश्यक था, जिसमें न्यूनतम 30% हिस्सेदारी थी।

54. आवंटन के तुरंत बाद, लीड सदस्य ने प्रस्ताव दिया कि पूरी स्पोर्ट्स सिटी परियोजना को छह संघ सदस्यों के बीच विभाजित किया जाए। हालांकि, याचिकाकर्ता-कंपनी, जिसे शुरू में संघ में 30% हिस्सा रखना आवश्यक था, ने बाहर निकलने का विकल्प चुना, और पूरी परियोजना बाद में अन्य कंपनियों को हस्तांतरित कर दी गई। यह हस्तांतरण याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए प्रत्यावेदन पर किया गया था और उसके अनुरोध पर नोएडा प्राधिकरण द्वारा व्यक्तिगत उप-पट्टे निष्पादित किए गए।

55. ब्रोशर में स्पष्ट रूप से अनिवार्य था कि संघ में लीड सदस्य की शेयरधारिता परियोजना के कम से कम एक चरण के लिए नोएडा से अस्थायी अधिभोग या पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त होने तक कम से कम 30% रहनी चाहिए। हालांकि, आवंटन के तुरंत बाद, परियोजना शुरू होने से पहले ही लीड सदस्य की शेयरधारिता शून्य कर दी गई।

56. परियोजना के प्रारंभिक आवंटन के बाद, नोएडा प्राधिकरण के साथ उपलब्ध भूमि संघ को आवंटित की गई। शेष भूमि के लिए, जैसे-जैसे यह उपलब्ध हुई, अलग-अलग आवंटन पत्र जारी किए गए। क्षेत्र में कमी के लिए, नोएडा के बोर्ड ने अपनी 177वीं बैठक में, आसपास के सेक्टर 101 से शेष भूमि आवंटित करने का निर्णय लिया। यह भूमि स्पोर्ट्स सिटी के साथ सटी थी, और इसे बाद में संघ को आवंटित किया गया। इस आवंटन के साथ, भूमि की न्यूनतम अनिवार्य आवश्यकता पूरी हो गई। कब्जा आवंटियों को सौंप दिया गया। लाभ प्राप्त करने के बाद, याचिकाकर्ता उसी को चुनौती नहीं दे सकता।

57. संघ को आवंटित भूमि के कुछ हिस्से मुकदमेबाजी और अतिक्रमणों के अधीन थे। संघ के एक सदस्य द्वारा किए गए प्रत्यावेदन पर, नोएडा प्राधिकरण ने 31.01.2017 तक शून्य अवधि लाभ प्रदान किया। हालांकि, यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट किया गया कि संघ को कोई और शून्य अवधि लाभ नहीं दिया जाएगा। संघ सदस्यों ने बिना किसी आपत्ति के इस पत्र को स्वीकार कर लिया।

58. स्पोर्ट्स सिटी परियोजना के संघ सदस्य/आवंटी उन्हें आवंटित क्षेत्र में खेल सुविधाओं को विकसित करने में बुरी तरह विफल रहे, वास्तव में, खेल सुविधाओं के विकास की दिशा में कुछ भी नहीं किया गया है और न तो नोएडा प्राधिकरण के बकाया का भुगतान किया गया और न ही किसानों के अतिरिक्त मुआवजे व अन्य बकाया का भुगतान किया गया। संघ के सदस्य केवल आवासीय क्षेत्र को विकसित करने में रुचि रखते थे, जो परियोजना का द्वितीयक हिस्सा था। कोई भी सदस्य स्पोर्ट्स सिटी को विकसित करने में रुचि नहीं रखता था, जो परियोजना का प्राथमिक हिस्सा था।

59. कुछ समय बाद, चूकों को दूर करने के लिए, याचिकाकर्ता कंपनी ने फिर से शून्य अवधि के लाभ प्रदान करने का अनुरोध किया। हालांकि, याचिकाकर्ता इस लाभ को प्रदान करने के लिए कोई पर्याप्त कारण प्रदान करने में विफल रहा है। एक ओर, याचिकाकर्ता शून्य अवधि का लाभ मांग रहा है यह दावा करते हुए कि उनके

पास कब्जा नहीं है, और दूसरी ओर, संघ सदस्य आवासीय अपार्टमेंट के निर्माण और घर खरीदारों से धन एकत्र करने में लगे हुए थे, सहायक परियोजना के साथ जारी रख रहे थे।

60. जहां तक याचिकाकर्ता-कंपनी के अधिकार का संबंध है, याचिकाकर्ता संघ का लीड सदस्य था, इसने परियोजना आवंटन के तुरंत बाद स्पोर्ट्स सिटी परियोजना से बाहर निकलने का विकल्प चुना। इसकी परियोजना में कोई भागीदारी नहीं है और स्पोर्ट्स सिटी के विकास में कोई हिस्सेदारी या हित नहीं है। इसके अतिरिक्त, नोएडा प्राधिकरण की निष्क्रियता से इसके अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है। इसलिए, याचिकाकर्ता के पास उसमें उल्लिखित राहतों की मांग करते हुए वर्तमान रिट याचिका योजित करने का कोई अधिकार नहीं है।

61. बकाया भुगतानों की पुनर्निर्धारण के संबंध में, पुनर्निर्धारण के लिए कोई औचित्य नहीं है। यह पता चलता है कि नोएडा प्राधिकरण के अधिकारियों ने अब तक उप-पट्टेदारों को अनुचित लाभ प्रदान किए हैं। नोएडा प्राधिकरण के अधिकारी आवंटियों के विरुद्ध बकाया एकत्र करने के लिए कोई गंभीर कदम उठाने में विफल रहे हैं। जबकि औपचारिकता के रूप में आवंटियों को कुछ नोटिस भेजे गए हो सकते हैं, बकाया वसूल करने के लिए कोई वास्तविक प्रयास नहीं किए गए हैं।

62. संघ सदस्य पट्टे की शर्तों से बंधे हैं, जो उन्हें पट्टा समझौते के अनुसार बकाया पर ब्याज और दंड ब्याज का भुगतान करने की आवश्यकता है।

63. मामले के संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, हम दृढ़ मत के हैं कि चूंकि पूरी देरी उप-आवंटियों की ओर से है, भुगतान अनुसूची को पुनर्गठन या पुनर्निर्धारण का कोई प्रश्न ही नहीं है।

64. इस याचिका में, याचिकाकर्ता ने यद्यपि 200 करोड़ रुपये की क्षति का दावा किया है। हालांकि, यह प्रार्थना पूरी तरह से गलत धारणा है, क्योंकि वर्तमान कार्यवाही में क्षति प्रदान नहीं की जा सकती।

65. दिए गए तथ्यों और मामले की परिस्थितियों में, यह न्यायालय पाता है कि याचिकाकर्ता कंपनी ने स्वयं स्पोर्ट्स सिटी परियोजना से बाहर निकलने का विकल्प चुना। याचिकाकर्ता कंपनी यह प्रदर्शित नहीं कर सकी कि कैसे और किस तरीके से इसके अधिकार प्रभावित हैं और इसलिए, वर्तमान रिट याचिका में याचिकाकर्ता को कोई राहत नहीं दी जा सकती।

66. रिट याचिका में योग्यता नहीं है और तदनुसार, निरस्त की जाती है।

67. पक्षकार अपना-अपना व्यय स्वयं वहन करेंगे।

(2025) 2 ILRA 627

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 10.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति शेखर बी. सराफ

माननीय न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित

रिट याचिका सं.28993 सन् 2024

जानेन्द्र कुमार

...याचिकाकर्ता

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता:

सौरभ श्रीवास्तव

प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता:

ए.एस.जी.आई., मु.स्था.अधि., कोमल मेहरोत्रा

क. सिविल विधि-भारत का संविधान, 1950 अनुच्छेद 226-विपणन अनुशासन दिशानिर्देश, 2012 का खंड 8.5.6- कारण बताओ नोटिस जारी करने में विलंब-समय सीमा की अनिवार्य प्रकृति- याचिकाकर्ता ने दिशानिर्देश 2012 में निर्धारित नमूना परीक्षण परिणाम की तिथि से 30 दिनों की अनुमेय अवधि से परे जारी किए गए कारण बताओ नोटिस को चुनौती दी-न्यायालय ने पाया कि उक्त खंड, 30 दिनों के भीतर नोटिस जारी करना अनिवार्य करता है-वर्तमान मामले में, दो महीने से अधिक के विलंब के लिए कोई वैध स्पष्टीकरण प्रदान नहीं किया गया था-आक्षेपित कारण बताओ नोटिस को निरस्त कर दिया गया और प्रतिवादीगण को विधि के अनुसार नया निरीक्षण करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई। (प्रस्तर 1 से 7)

रिट याचिका निस्तारित की जाती है। (ई-6)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड व अन्य बनाम आर.एम. सर्विस सेंटर व अन्य, (2019) 19 SCC 662

(माननीय न्यायमूर्ति शेखर बी. सराफ एवं माननीय न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित द्वारा उद्धोषित)

1. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया और अभिलेख का अवलोकन किया गया।
2. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत याचिकाकर्ता ने यह रिट याचिका कारण बताओ नोटिस दिनांक 08.09.2023 से व्यथित होकर की है, जिसमें याचिकाकर्ता को संयुक्त निरीक्षण में पाई गई कथित विसंगति के संबंध में कारण बताने के लिए कहा गया है।
3. वर्तमान मामले में, तथ्यात्मक स्थिति यह है कि प्रतिवादी अधिकारियों द्वारा 04.03.2023 को निरीक्षण किया गया था और नमूनों का परीक्षण परिणाम 23.06.2023 को आया। प्रतिवादी अधिकारी नमूना परीक्षणों पर ढाई महीने की अवधि तक शांत बैठे रहे और फिर 08.09.2023 को कारण बताओ नोटिस जारी किया। विपणन अनुशासन दिशानिर्देश, 2012 का संबंधित खंड 8.5.6 निम्नानुसार है:-

"8.5.6 अनियमितताओं के सभी मामलों के संबंध में, निरीक्षण की तिथि से 30 दिनों के भीतर, डीलर को सभी अनियमितताएं दर्शाते हुए एक कारण बताओ नोटिस जारी किया जाएगा। हालांकि, यदि निरीक्षण के दौरान एमएस/एचएसडी के नमूने लिए गए थे, तो परीक्षण परिणामों के 30 दिनों के भीतर कारण बताओ नोटिस जारी किया जाएगा। कारण बताओ नोटिस सभी रिपोर्टों और अन्य अभिलेखों आदि के साथ जारी किया जाना चाहिए, जो नोटिस का आधार बनते हैं।"
4. उक्त खंड के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि निरीक्षण की तिथि से 30 दिनों के भीतर कारण बताओ नोटिस जारी करना आवश्यक है और यदि निरीक्षण के दौरान नमूने लिए जाते हैं, तो यह कारण बताओ नोटिस परीक्षण परिणामों की तिथि से 30 दिनों के भीतर जारी करना आवश्यक है, लेकिन वर्तमान मामले में, परीक्षण परिणामों की प्राप्ति की तिथि से 2 महीने से अधिक के बाद कारण बताओ नोटिस जारी किया गया है। इस तरह के विलंब के कारणों को इंगित करने के लिए प्रतिवादी अधिकारियों द्वारा कोई उचित स्पष्टीकरण प्रदान नहीं किया गया है।
5. उपर्युक्त खंड को आगे पढ़ने पर, हम इस विचार के हैं कि यह खंड अनिवार्य प्रकृति का है। भले ही कुछ लचीलापन प्रदान किया जाए, तो भी दो महीने के विलंब को स्वीकार नहीं किया जा सकता। प्रतिवादीगण द्वारा भरोसा किए गए निर्णय *इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड व अन्य बनाम आर.एम. सर्विस सेंटर व अन्य, (2019) 19 SCC 662*, तथ्यात्मक रूप से भिन्न है और वर्तमान मामले में लागू नहीं होगा क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में, संदर्भित खंड ने "अधिमानतः" शब्द का उपयोग किया था, लेकिन वर्तमान मामले में, शब्द भिन्न हैं और उक्त खंड में कारण बताओ नोटिस जारी करने के लिए प्रदान किए गए समय के संबंध में कोई अस्पष्टता नहीं दिखाई देती है।
6. इसके दृष्टिगत, वर्तमान कारण बताओ नोटिस इस आधार पर बनी नहीं रह सकती कि यह अनुचित विलंब के साथ जारी की गई है। तदनुसार, कारण बताओ नोटिस को खंडित और निरस्त किया जाता है और

प्रतिवादी अधिकारियों को नया निरीक्षण करने और नमूने लेने और विधि के अनुसार कार्य करने की स्वतंत्रता प्रदान की जाती है।

7. उपरोक्त निर्देश के साथ, रिट याचिका निस्तारित की जाती है।

(2025) 2 ILRA 628

मूल अधिकारिता

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 07.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति शेखर बी. सराफ

माननीय न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित

रिट याचिका सं. 33222 सन् 2023

स्पैन इन्फ्रा डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड

....याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

...प्रतिवादीगण

याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता:

रवि आनंद अग्रवाल, श्रेया गुप्ता

प्रतिवादीगण के लिए विद्वान अधिवक्ता:

अभिमन्यु सिंह, मु.स्था.अधि.

क. सिविल विधि-भारत का संविधान, 1950 अनुच्छेद 226-शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 एवं 1999 (निरसन) धारा 3- याचिकाकर्ता ने अधिनियम, 1976 के अधीन अधिशेष घोषित भूमि के एक टुकड़े पर अपने कब्जे के साथ उत्तर प्रदेश राज्य और बरेली विकास प्राधिकरण द्वारा किए गए हस्तक्षेप को चुनौती दी- याचिकाकर्ता ने तर्क दिया कि राज्य द्वारा वास्तविक भौतिक कब्जा कभी नहीं लिया गया था और इसलिए, वह निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 के अधीन संरक्षण का अधिकारी था-केवल प्रतीकात्मक कब्जा वास्तविक कब्जे के समान नहीं है और अधिनियम की धारा 10(3) के अधीन विधिक निहित होना धारा 10(5) या 10(6) के अधीन वास्तविक भौतिक बेदखली के बिना धारक के अधिकारों को समाप्त करने के लिए पर्याप्त नहीं है-राज्य द्वारा शांतिपूर्ण या बलपूर्वक बेदखली का कोई साक्ष्य न पाते हुए, न्यायालय ने निर्णीत किया कि याचिकाकर्ता ने भूमि का कब्जा बनाए रखा और वह निरसन अधिनियम के लाभ का

अधिकारी था-अतः आक्षेपित आदेश को खंडित कर दिया गया और प्रतिवादीगण को याचिकाकर्ता के कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए परमादेश की रिट जारी की गई। (प्रस्तर 1 से 9)

रिट याचिका का निस्तारण किया जाता है। (E-6)

उद्धृत निर्णयों की सूची:

1. राम चंद्र पांडे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2010) 82 एएलआर 136
2. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरि राम (2013) JT 4 SC 275: (2013) 4 SCC 280
3. गजानन कमलया पाटिल बनाम अपर कलेक्टर एवं सक्षम प्राधिकारी व अन्य JT (2014) 3 SC 211

(माननीय न्यायमूर्ति शेखर बी. सराफ एवं माननीय न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित द्वारा उद्धोषित)

1. हमने याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री शशि नंदन, जिनकी सहायता सुश्री श्रेया गुप्ता विद्वान अधिवक्ता कर रही हैं; प्रतिवादीगण-राज्य के लिए विद्वान स्थायी अधिवक्ता तथा बरेली विकास प्राधिकरण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री अभिमन्यु चौहान को सुना है।

2. याचिकाकर्ता का मामला यह है कि यद्यपि याचिकाकर्ता की भूमि को शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 (संक्षेप में इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) के अधीन अधिशेष घोषित किया गया था, लेकिन वास्तविक भौतिक कब्जा नहीं लिया गया है और इस प्रकार वह शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) निरसन अधिनियम, 1999 (संक्षेप में इसके बाद 'निरसन अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की उप-धारा (3) के लाभ का अधिकारी होगा।

3. याचिकाकर्ता का विशिष्ट पक्ष यह है कि वास्तविक भौतिक कब्जा नहीं लिया गया था और केवल प्रतीकात्मक कब्जा पर्याप्त नहीं होगा क्योंकि याचिकाकर्ता प्रश्नगत प्लॉट के कब्जे में जारी रहा है। उसके नाम को 29 दिसंबर, 2010 को उसके पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर राजस्व अभिलेखों में विधिवत दर्ज किया गया है।

4. इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा **राम चंद्र पांडे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2010 (82) ALR 136** में इस बिन्दु पर विचार किया गया था, जिसमें यह निर्णीत किया गया था कि केवल प्रतीकात्मक कब्जा वास्तविक भौतिक कब्जा लेने के समान नहीं है। यह भी निर्णीत किया गया कि जब तक राज्य द्वारा वास्तविक भौतिक कब्जा नहीं लिया गया है, पक्षकार निरसन अधिनियम, 1999 के लाभ का अधिकारी होगा।

5. **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरि राम [JT 2013 (4) SC 275: 2013 (4) SCC 280]** में शीर्ष न्यायालय द्वारा भी यही दृष्टिकोण अपनाया गया है। उक्त मामले में शीर्ष न्यायालय के समक्ष विचार का प्रश्न यह था कि क्या अधिनियम की धारा 10(3) के अधीन अधिशेष भूमि का कल्पित निहित होना निरसन अधिनियम की उप धारा (3) के अधीन बचत खंड के लाभ से भूस्वामियों को वंचित करते हुए वास्तविक कब्जा लेने के समान होगा। इस बिन्दु का उत्तर शीर्ष न्यायालय द्वारा उक्त निर्णय के प्रस्तर 36, 39 और 42 में दिया गया है, जो निम्नानुसार है:-

"बलपूर्वक बेदखली

36. अधिनियम बलपूर्वक बेदखली का प्रावधान करता है लेकिन केवल तभी, जब कोई व्यक्ति धारा 10 की उप-धारा (5) के अधीन आदेश का पालन करने से इनकार करता है या असफल रहता है। धारा 10 की उप धारा (6) फिर से "कब्जे" की बात करती है, जो कहती है, यदि कोई व्यक्ति उप-धारा (5) के अधीन किए गए आदेश का पालन करने से इनकार करता है या असफल रहता है, तो सक्षम प्राधिकारी राज्य सरकार को दी जाने वाली रिक्त भूमि का कब्जा ले सकता है और उस उद्देश्य के लिए, बल का उपयोग किया जा सकता है-जो आवश्यक हो। इसलिए, उप-धारा (6) किसी व्यक्ति के उप-धारा (5) के अधीन आदेश का पालन करने से इनकार करने या असफल रहने की स्थिति की परिकल्पना करती है, जिसकी घटना में सक्षम प्राधिकारी बल के उपयोग द्वारा कब्जा ले सकता है। इसलिए, भूमि का जबरन बेदखली केवल उस स्थिति में किया जा रहा है जो उप-धारा (6) के अंतर्गत आती है न कि धारा 10 की उप-धारा (5) के अधीन। इसलिए, उप-धाराएं (5) और (6) दोनों स्थितियों का ध्यान रखती हैं अर्थात् नोटिस देकर कब्जा लेना, अर्थात्, "शांतिपूर्ण बेदखली" और धारा 10(5) के अधीन कब्जा सरेंडर करने या डिलीवरी देने में विफलता पर, फिर धारा 10 की उप-धारा (6) के अधीन "बलपूर्वक बेदखली"।"

39. उपर्युक्त निर्देश स्पष्ट करते हैं कि उप-धारा (3) केवल विधिक कब्जा लेती है न कि वास्तविक कब्जा, इसलिए, यदि भूस्वामी धारा 10 की उप-धारा (3) के अधीन स्वेच्छा से कब्जा सरेंडर नहीं कर रहा है, या धारा 10(5) के अधीन नोटिस के बाद कब्जा सरेंडर या वितरण कर रहा है या बल के उपयोग द्वारा बेदखली कर रहा है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि राज्य सरकार ने रिक्त भूमि का कब्जा ले लिया है।

42. धारा 10 की उप-धारा (3) के अधीन भूमि का केवल निहित होना राज्य सरकार को रिक्त भूमि का वास्तविक कब्जा लेने का कोई अधिकार प्रदान नहीं करेगा, जब तक कि 18.3.1999 से पहले रिक्त भूमि का स्वैच्छिक समर्पण न हो। राज्य को यह स्थापित करना होगा कि रिक्त भूमि का स्वैच्छिक समर्पण हुआ है या धारा 10 की उप-धारा (5) के अधीन शांतिपूर्ण कब्जे का समर्पण और वितरण या धारा 10 की उप धारा (6) के अधीन बलपूर्वक बेदखली हुआ है। इनमें से किसी भी स्थिति को स्थापित करने में विफलता पर, भूमि मालिक या धारक निरसन अधिनियम की धारा 3 के लाभ का दावा कर सकता है।"

6. गजानन कमलया पाटिल बनाम अपर कलेक्टर एवं सक्षम प्राधिकारी व अन्य, JT 2014 (3) SC 211 में शीर्ष न्यायालय द्वारा उसी बिन्दु की पुष्टि की गई है।

7. प्रति-शपथपत्र में यह प्रदर्शित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि राज्य या बरेली विकास प्राधिकरण, बरेली ने शांतिपूर्ण कब्जा लिया है, न ही यह प्रदर्शित करने के लिए कोई सामग्री है कि याचिकाकर्ता द्वारा स्वेच्छा से कब्जा सौंप दिया गया था या बल के उपयोग द्वारा लिया गया था। अधिनियम की धारा 10(6) के अधीन जारी किए गए किसी भी नोटिस के संबंध में भी कोई संकेत नहीं है। तथ्य स्पष्ट रूप से संकेत करते हैं कि निरसन अधिनियम के लागू होने से पहले राज्य द्वारा केवल विधिक कब्जा लिया गया है, वास्तविक कब्जा नहीं।

8. इस प्रकार याचिकाकर्ता निरसन अधिनियम की धारा 3 के लाभ को प्राप्त करने का अधिकारी है। तथ्यों और परिस्थितियों में, रिट याचिका स्वीकार किए जाने योग्य है।

9. तदनुसार, रिट याचिका सफल होती है और स्वीकार की जाती है। दिनांक 9 नवंबर, 2022 के आक्षेपित आदेश को खंडित किया जाता है। प्रतिवादीगण को विवादग्रस्त भूमि पर याचिकाकर्ता के वास्तविक भौतिक कब्जे में हस्तक्षेप न करने का आदेश देते हुए परमादेश की रिट जारी की जाती है। व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(2025) 2 ILRA 631

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 19.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति इरशाद अली

रिट सी संख्या 1000097 वर्ष 1995

शिव बालक सिंह एवं अन्य

...याचिकाकर्ता

बनाम

राजस्व बोर्ड एवं अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता : एस.सी. मिश्रा, आई.पी. सिंह, के.के. सिंह, मोहम्मद असलम खान, पी.एस. पांडे

प्रतिवादियों के अधिवक्ता : मुख्य स्थाई अधिवक्ता, अजय कुमार निगम, जी.एस. निगम, सुनील कुमार मिश्रा, विवेक सिंह

(ए) राजस्व कानून - उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम, 1950 - धारा 331 एवं 333 - द्वितीय अपील की पोषणीयता - अपील को पुनरीक्षण में परिवर्तित नहीं किया जा सकता - द्वितीय अपील को पुनरीक्षण में परिवर्तित करना क्षेत्राधिकार से बाहर माना गया - अधिनियम की धारा 333 के अन्तर्गत अपील को पुनरीक्षण में परिवर्तित नहीं किया जा सकता - ऐसा परिवर्तन अवैध एवं आधारणीय है। (पैरा - 24 से 26)

याचिकाकर्ता, जमींदारी के समय से लगातार कब्जे में थे - धारा 12 के तहत सीरदार घोषित किया गया - कोई अपील दायर नहीं होने के कारण आदेश अंतिम हो गया - बाद में धारा 229-बी के तहत संक्रमणीय अधिकारों के साथ भूमिधर घोषित किया गया - अपील में पुष्टि हुई - विलम्बित पुनर्विलोकन खारिज कर दी गई - राजस्व बोर्ड द्वारा दूसरी अपील को अवैध रूप से पुनरीक्षण में बदल दिया गया - जिसके कारण वर्तमान रिट याचिका में आक्षेपित आदेश को चुनौती दी गई। (पैरा - 4 से 18)

धरित : - अपील को पुनरीक्षण में परिवर्तित नहीं किया जा सका। राजस्व बोर्ड का आदेश स्पष्ट रूप से अवैधता से ग्रस्त था और कानून में बने रहने योग्य नहीं था। दूसरी अपील दायर की गई लेकिन उसे गलती से पुनरीक्षण में बदल दिया गया, जो कि अस्वीकार्य था। इसलिए, आक्षेपित आदेश अवैधता से ग्रस्त था और इसे अपास्त किया जाना चाहिए। (पैरा - 25,26)

याचिका स्वीकार की गई।(ई-7)

(माननीय न्यायमूर्ति इरशाद अली द्वारा प्रदत्त)

1. दोनों पक्षों द्वारा दायर पूरक शपथपत्रों को अभिलेख में लिया गया है।
2. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मोहम्मद आरिफ खान जिनकी सहायता विद्वान अधिवक्ता श्री मोहम्मद असलम खान ने की और राज्य-प्रतिवादी के विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता श्री शत्रुघ्न चौधरी को सुना गया।
3. प्रतिवादियों को सूचना दिए जाने के बावजूद, प्रतिवादी संख्या 3 से 5 की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ।
4. वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से याचिकाकर्ताओं ने दिनांक 6.9.1994 के आदेश को चुनौती दी है, जो रिट याचिका के अनुलग्नक-1 में अंतर्विष्ट है। इसमें आगे प्रार्थना की गई है कि परमादेश की प्रकृति का एक रिट या निर्देश जारी किया जाए, जिससे प्रतिवादियों को दिनांक 6.9.1994 का आक्षेपित आदेश को लागू न करने का आदेश दिया जा सके और उन्हें आगे कार्यवाही करने से रोका जा सके।

5. मामले का तथ्यात्मक सार यह है कि याचिकाकर्ताओं का ज़मीनी स्तर पर 3 बीघा 8 बिस्वा क्षेत्रफल वाले भूखंड संख्या 5053 और 3 बीघा 7 बिस्वा क्षेत्रफल वाले भूखंड संख्या 5054 पर ज़मींदारी के समय से ही भौतिक कब्ज़ा रहा है, हालाँकि, उन्नाव के अभिलेखों में उनके नाम दर्ज नहीं थे। जब गाँव में चकबंदी की कार्यवाही शुरू हुई, तो आंशिक रूप से, याचिकाकर्ताओं का विवादित भूखंडों पर भौतिक कब्ज़ा पाया गया, हालाँकि, उक्त भूखंड राजस्व अभिलेखों में बंजर के रूप में दर्ज थे।

6. याचिकाकर्ताओं ने जोत चकबंदी अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत चकबंदी अधिकारी, नवाबगंज, उन्नाव के समक्ष एक आपत्ति प्रस्तुत की, जिसमें प्रार्थना की गई कि विवादित भूखंडों पर उनका नाम सीरदार के रूप में दर्ज किया जाए। चकबंदी अधिकारी ने सहायक चकबंदी अधिकारी को विवादित भूखंडों का स्थलीय निरीक्षण करने के बाद एक रिपोर्ट तैयार करने का निर्देश दिया और इस प्रकार सहायक चकबंदी अधिकारी ने एक रिपोर्ट तैयार की, जिसमें उनका निष्कर्ष था कि भूखंड याचिकाकर्ताओं के कब्जे में हैं और वे उन पर खेती कर रहे हैं और इन भूखंडों पर गांव सभा द्वारा कभी खेती नहीं की गई है और चकबंदी के समय जनता या गांव सभा द्वारा किसी भी प्रकार का कोई विवाद नहीं उठाया गया था। हालाँकि, ये भूखंड गांव के कागजों में बंजर के रूप में दर्ज हैं।

7. दिनांक 21.1.1994 के निर्णय और आदेश के तहत, चकबंदी अधिकारी, नवाबगंज, उन्नाव ने याचिकाकर्ताओं द्वारा जोत चकबंदी अधिनियम की धारा 12 के तहत दायर मामले को स्वीकार कर लिया और निर्देश दिया कि गांवसभा, उन्नाव में स्थित प्लॉट संख्या 5053 जिसका क्षेत्रफल 3 बीघा 8 बिस्वा और 2 बिसवांसी है और प्लॉट संख्या 5054 जिसका क्षेत्रफल 3 बीघा है, को याचिकाकर्ताओं के नाम पर सीरदार के रूप में दर्ज किया जाए, नियमों के अनुसार भू-राजस्व तय किया जाए और तदनुसार अमलदरामद किया जाए।

8. दिनांक 21.1.1994 के उक्त निर्णय के विरुद्ध न तो गांव सभा और न ही प्रतिवादी संख्या 5 सहित अन्य ग्रामीणों ने अगली उच्च चकबंदी अदालत या किसी अन्य अदालत में अपील दायर की और इस प्रकार चकबंदी अधिकारी द्वारा दिनांक 21.1.1994 को पारित निष्कर्ष और आदेश अंतिम हो गया।

9. यह प्रस्तुत किया गया है कि यद्यपि विवादित भूखंडों के सीरदार के रूप में याचिकाकर्ताओं के नाम दर्ज करने के लिए विशिष्ट निर्देश दिए गए थे और यह भी निर्देश दिया गया था कि तदनुसार अमलदरामद किया जाए, लेकिन अनजाने में उनके नाम गाँव के अभिलेखों में दर्ज नहीं हो सके, तथापि, याचिकाकर्ता विवादित भूखंड पर लगातार काबिज रहे हैं और वे उस भूमि पर खेती करते रहे हैं। यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि चकबंदी कार्यवाही पूरी होने के बाद, गाँव को जोत चकबंदी अधिनियम की धारा 52 के अंतर्गत अधिसूचित किया गया है, इस प्रकार, गाँव की भूमि पर प्रविष्टियों के बारे में निष्कर्ष अंतिम हो गया है और चकबंदी प्राधिकारी द्वारा धारित याचिकाकर्ताओं के स्वामित्व को किसी भी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती है, यह याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

10. उपरोक्त तथ्यों के बावजूद यह प्रस्तुत किया गया है कि, प्रतिवादी संख्या 4 और 5 के नाम *इंतखाब खतौनी* में *वर्ग-चार* में दर्ज किए गए थे, हालांकि वे कभी भी विवादित भूखंडों पर काबिज नहीं रहे हैं और उनका कोई अधिकार नहीं है। इसके अलावा, याचिकाकर्ताओं के अधिकार और शीर्षक पहले ही चकबंदी अधिकारी द्वारा तय किए जा चुके हैं और इस प्रकार उपरोक्त कार्रवाई से व्यथित महसूस करते हुए, याचिकाकर्ताओं ने 12.8.1981 को उप-मंडल अधिकारी, उन्नाव के समक्ष उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम, 1950 की धारा 229-बी के तहत एक वाद दायर किया, जिसमें प्रार्थना की गई कि याचिकाकर्ताओं को विवादित भूखंडों पर संक्रमणीय अधिकारों के साथ *भूमिधर* घोषित किया जाए, क्योंकि वे जमींदारी के काल से उक्त भूमि पर काबिज हैं और उनके स्वामित्व और अधिकार पहले ही चकबंदी अधिकारी द्वारा तय किये जा चुके हैं।

11. इसके बाद, प्रतिवादियों को नोटिस जारी किए गए और उसके बाद उप-मंडल अधिकारी द्वारा मुद्दे तय किए गए और पक्षों द्वारा दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत किए गए। मौजा-उन्नाव, जिला उन्नाव के ग्राम प्रधान, जहां विवादित भूखंड स्थित हैं, का बयान भी दर्ज किया गया, हालांकि उन्होंने कहा कि याचिकाकर्ता जमींदारी के समय से विवादित भूखंडों पर काबिज हैं और वे लगातार उक्त भूखंडों पर खेती कर रहे हैं। आज तक किसी भी व्यक्ति ने उन्हें बेदखल नहीं किया है। यह भी प्रस्तुत किया गया कि न तो गाँव सभा और न ही प्रतिवादी संख्या 4 और 5 कभी भी विवादित भूखंडों पर काबिज थे, इसके अलावा गाँव सभा ने भी यह प्रस्तुत किया है कि गाँव सभा का उक्त भूखंडों से कोई संबंध नहीं है।

12. दिनांक 16.7.1981 के निर्णय और आदेश के तहत, याचिकाकर्ताओं के मामले को सहायक कलेक्टर प्रथम श्रेणी/उप मंडल अधिकारी द्वारा स्वीकार कर लिया गया था, जिसके तहत यह धारित किया गया था कि याचिकाकर्ता विवादित भूखंडों के हस्तांतरणीय अधिकार वाले *भूमिधर* हैं। चूंकि याचिकाकर्ताओं ने उप मंडल अधिकारी उन्नाव के समक्ष विवादित भूखंडों पर अपने *भूमिधरी* अधिकारों का दावा किया था, हालांकि, सहायक कलेक्टर ने याचिकाकर्ताओं को भूमि का *सीरदार* (*भूमिधर*, हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ) माना। वास्तव में, याचिकाकर्ता जमींदारी के समय से ही विवादित भूमि पर काबिज हैं और वे उक्त भूमि के *भूमिधर* (हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ) बन गए और इस तरह, याचिकाकर्ताओं ने आयुक्त, लखनऊ के समक्ष एक अपील दायर की जिसमें प्रार्थना की गई कि सहायक कलेक्टर प्रथम श्रेणी/उप मंडल अधिकारी के न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को संशोधित किया जाए और अपीलकर्ताओं को हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ *भूमिधर* घोषित किया जाए।

13. दिनांक 4.3.1982 के निर्णय और आदेश के तहत, अपर आयुक्त, लखनऊ ने याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर अपील को स्वीकार कर लिया, जिसके तहत सहायक कलेक्टर प्रथम श्रेणी/उप मंडल अधिकारी, उन्नाव के दिनांक 8.7.1981 के निर्णय को संशोधित कर दिया गया, जिसके तहत याचिकाकर्ताओं को विवादित भूखंडों के हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ *भूमिधर* घोषित कर दिया गया।

14. उपरोक्त आदेश के विरुद्ध प्रतिवादी संख्या 2 और 4 ने अपर आयुक्त, लखनऊ के समक्ष एक पुनर्विलोकन आवेदन दायर किया, जिसमें प्रार्थना की गई कि याचिकाकर्ताओं को विवादित भूमि पर हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ भूमिधर घोषित न किया जाए।

15. यह प्रस्तुत किया गया है कि न तो राज्य और न ही गाँव सभा ने सहायक कलेक्टर प्रथम श्रेणी/ उपमंडल अधिकारी द्वारा पारित दिनांक 9.7.1981 के आदेश के विरुद्ध कभी अपील दायर की है जिसके तहत याचिकाकर्ताओं को विवादित भूमि का सीरदार घोषित किया गया है। इसके अलावा, उन्होंने पुनर्विलोकन आवेदन पाँच वर्ष आठ महीने और तीन दिन की देरी से, देरी का कारण स्पष्ट किये बिना, प्रस्तुत किया है।

16. यह प्रस्तुत किया गया है कि यद्यपि अपर आयुक्त द्वारा पुनर्विलोकन आवेदन और इसे दाखिल करने में विलम्ब के लिए क्षमा आवेदन पर पारित आदेश के विरुद्ध कोई दूसरी अपील नहीं है, तथापि अपर आयुक्त द्वारा पारित 25.1.1990 के निर्णय के विरुद्ध, प्रतिवादी संख्या 2 और 4 ने प्रतिवादी संख्या 1 के समक्ष दूसरी अपील संख्या 17 वर्ष 1990 (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम शिव बालक सिंह और अन्य) दायर की।

17. द्वितीय अपील तथा अपील दायर करने में विलम्ब के लिए क्षमा आवेदन के विरुद्ध याचिकाकर्ताओं ने यह कहते हुए अपनी आपत्ति दर्ज की कि उक्त द्वितीय अपील पोषणीय नहीं है, क्योंकि इसके लिए कोई प्रावधान नहीं है तथा इसे विलम्ब से दायर किया गया है।

18. प्रस्तुत किया गया है कि प्रतिवादी संख्या 1 ने उपरोक्त द्वितीय अपील को उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम की धारा 333 के अंतर्गत एक मामले में परिवर्तित करते हुए, अत्यंत अवैध एवं मनमाने ढंग से आदेश पारित किया है, जिससे मामले की पत्रावली निचली अदालत अर्थात् उप-मंडल अधिकारी के पास इस बिंदु पर निर्णय हेतु वापस भेज दी गई है कि क्या चकबंदी अधिकारी को याचिकाकर्ताओं को विवादित भूमि का सीरदार घोषित करने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त, कलेक्टर/जिला मजिस्ट्रेट को राज्य के अधिवक्ता को मामले की पैरवी उचित ढंग से करने का निर्देश देने का भी निर्देश दिया है।

19. प्रस्तुत किया गया है कि उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम की धारा 333, राजस्व परिषद को अधीनस्थ न्यायालय द्वारा निर्णीत किसी भी वाद या कार्यवाही के अभिलेख मँगवाने की शक्ति प्रदान करती है, जबकि उसने अधिकार क्षेत्र के बाहर कार्य किया हो। जहाँ तक वर्तमान मामले का संबंध है, अपर आयुक्त के पास आदेश पारित करने का अधिकार क्षेत्र था और उन्होंने अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर कोई कार्य नहीं किया है। अतः, राजस्व परिषद द्वारा प्रतिवादी संख्या 2 और 4 द्वारा दायर द्वितीय अपील को उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम की धारा 333 के अंतर्गत वाद में परिवर्तित करने का पारित आक्षेपित आदेश अधिकार क्षेत्र के बाहर है और इसलिए, यह आक्षेपित आदेश पूर्णतः अवैध और मनमाना है।

20. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम की धारा 331 के अंतर्गत निहित प्रावधान के दृष्टिगत पुनर्विचार याचिका के आदेश के विरुद्ध द्वितीय अपील पोषणीय नहीं है। दूसरा तर्क यह है कि राजस्व परिषद ने इस मुद्दे पर निर्णय हेतु मामले को वापस भेजकर स्पष्ट कानूनी त्रुटि की है कि क्या याचिकाकर्ता हस्तांतरणीय अधिकारों वाले *भूमिधर* हैं या नहीं। अगला तर्क यह है कि प्रथम अपील के निर्णीत हो जाने के बाद, इस याचिका में पीड़ित पक्षकारों, अर्थात् प्रतिवादियों को राजस्व परिषद के समक्ष द्वितीय अपील दायर करनी थी, न कि पाँच वर्ष से अधिक समय बीत जाने के बाद दायर पुनर्विचार याचिका में पारित आदेश के विरुद्ध।

21. खंडन में, विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता ने प्रति-शपथपत्र के पैरा 4 की ओर न्यायालय का ध्यान आकृष्ट किया, जिसमें कहा गया है कि चकबंदी अधिकारी के आदेश के विरुद्ध बंदोबस्त अधिकारी(चकबंदी) के समक्ष अपील दायर कर कार्यवाही प्रारंभ की गई थी, जो वर्ष 2013 में स्वीकृत की गयी थी। उक्त आदेश की प्रति अनुलग्नक एसए-1 के रूप में अनुपूरक शपथपत्र के साथ संलग्न है और इसे याचिकाकर्ताओं द्वारा अनुलग्नक-1 के रूप में अनुपूरक शपथपत्र के साथ दायर किया गया है।

22. विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता ने अपील को पुनरीक्षण में परिवर्तित करने के लिए पुनरीक्षण की धारणीयता के संबंध में पूछे गए प्रश्न कि, अपील को पुनरीक्षण में परिवर्तित किया जा सकता है या नहीं, तो उन्होंने प्रस्तुत किया कि द्वितीय अपील संविधि के तहत पारित आदेश के विरुद्ध होगी और इसे पुनरीक्षण में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है।

23. पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्क को सुनने के पश्चात, मैंने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

24. वर्तमान रिट याचिका में शामिल प्रश्न यह है कि क्या अपर आयुक्त द्वारा दिनांक 3.8.1987 को पारित पुनरीक्षण आदेश के विरुद्ध राजस्व परिषद के समक्ष द्वितीय अपील की जा सकती है या उसे उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम, 1950 की धारा 333 में निहित प्रावधान के आलोक में पुनरीक्षण में परिवर्तित किया जा सकता है। चुनौती दिया गया आदेश दिनांक 6.9.1994 का है। उपरोक्त तथ्य के दृष्टिगत, बंदोबस्त अधिकारी (चकबंदी) द्वारा अपील में पारित आदेश को वर्ष 1994 में चुनौती दिए गए आदेश में ध्यान में नहीं लिया जा सकता।

25. उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम, 1950 की धारा 331 में निहित प्रावधानों के मददेनजर, अपील को पुनरीक्षण में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है, इसलिए, राजस्व परिषद द्वारा पारित आदेश स्पष्ट अवैधता से ग्रस्त है और कानून की दृष्टि में कायम नहीं रह सकता है। प्रति शपथपत्र में, यह कहा गया है कि चकबंदी अधिकारी के आदेश के विरुद्ध, जिसमें कहा गया था कि याचिकाकर्ता *सीरदार* हैं, उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम में कुछ संशोधन किया गया था, जिसके प्रभाव से *सीरदारों*

को हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ भूमिधर माना जाएगा। धारा 229-बी के तहत एक वाद याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर किया गया था, जिसे याचिकाकर्ताओं को गैर-हस्तांतरणीय अधिकारों वाला भूमिधर मानते हुए स्वीकार कर लिया गया था, जिसके विरुद्ध आयुक्त के समक्ष प्रथम अपील दायर की गई थी, जिसे दिनांक 4.3.1982 के निर्णय के तहत याचिकाकर्ताओं को हस्तांतरणीय अधिकारों वाला भूमिधर मानते हुए स्वीकृति दी गई थी।

26. प्रथम अपील में पारित आदेश के विरुद्ध राजस्व बोर्ड के समक्ष द्वितीय अपील प्रस्तुत की जा सकती थी, किन्तु वह प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत नहीं की गई, बल्कि पुनर्विलोकन प्रस्तुत किया गया, जो 25.1.1990 को खारिज कर दिया गया और पुनर्विलोकन में पारित आदेश के विरुद्ध द्वितीय अपील दायर की गई थी, जिसे पुनरीक्षण में परिवर्तित कर दिया गया, जिसकी विधि की दृष्टि में अनुमति नहीं है। अतः, आक्षेपित आदेश स्पष्टतः अवैध है और अपास्त किए जाने योग्य है। तदनुसार, दिनांक 6.9.1994 का आदेश अपास्त किया जाता है। रिट याचिका सफल होती है और स्वीकृत की जाती है।

27. वादव्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं है।

(2025) 2 ILRA 635

अपीलीय क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 13.02.2025

समक्ष

माननीय मुख्य न्यायमूर्ति अरुण भंसाली

माननीय न्यायमूर्ति क्षितिज शैलेन्द्र

विशेष अपील संख्या 459 वर्ष 2023

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...अपीलकर्ता

बनाम

मोहम्मद समीर राव और अन्य

...प्रतिवादी

अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता : कुणाल रवि सिंह, रामा नंद पांडे

प्रतिवादियों के अधिवक्ता : व्यक्तिगत रूप से, श्रेयस श्रीवास्तव

सिविल कानून - भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 14, 19, 19(1)(ए), 21 और 226 -इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमावली, 1952- अध्याय VIII - नियम 5, - उ.प्र. इंटरमीडिएट शिक्षा अधिनियम, 1921 - अध्याय

- III, XII, विनियमन - 7, 40, 40 (बी) और 40 (सी) -अंतर न्यायालय अपील - एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और आदेश की वैधता पर हमला - रिट याचिका - रिट याचिकाकर्ता मोहम्मद समीर राव को पहले शाहनवाज के नाम से जाना जाता था - जिन्होंने क्रमशः वर्ष 2013 और 2015 में हाई स्कूल और इंटरमीडिएट बोर्ड पास किया है - वर्ष 2020 में एक आवेदन के माध्यम से मोहम्मद समीर राव के नाम से कुछ नए जारी किए गए आधार कार्ड और पैन कार्ड और एक राजपत्र अधिसूचना के आधार पर बोर्ड से हाई स्कूल और इंटरमीडिएट प्रमाणपत्रों में अपना नया नाम शामिल करने और एक नया प्रमाण पत्र जारी करने के लिए संपर्क किया गया - बोर्ड ने समय बाधित होने के कारण उनके अनुरोध को खारिज कर दिया - रिट याचिका - एकल न्यायाधीश ने आक्षेपित आदेश को अपास्त कर दिया - तत्काल अपील - न्यायालय ने धारित किया कि, विद्वान एकल न्यायाधीश ने विनियम 40 (सी) को मनमाना, असंवैधानिक और भारत के संविधान द्वारा गारंटीकृत मौलिक अधिकार का उल्लंघन माना है - इसके अलावा, कई अन्य निर्देश भी जारी किए गए हैं जैसे कि आधार कार्ड, राशन कार्ड, ड्राइविंग लाइसेंस, पासपोर्ट, मतदाता पहचान पत्र आदि जैसे पहचान के सार्वजनिक दस्तावेजों को सक्षम अधिकारियों को सौंपने, नाम में परिवर्तन को पंजीकृत करने, कानून के अनुसार पहले के पहचान दस्तावेजों का निपटान करने या नष्ट करने और उसके परिवर्तित नाम के अनुरूप नए दस्तावेज जारी करने के लिए - और - विद्वान एकल न्यायाधीश ने सचिव, गृह मंत्रालय, भारत सरकार और मुख्य सचिव, उ.प्र. सरकार, लखनऊ को उचित कानूनी और प्रशासनिक ढांचा बनाने के लिए एक निर्देश भी जारी किया है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि दोनों सरकारें पहचान संबंधी दस्तावेजों को बनाने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मिलकर काम करें और उसमें विसंगतियों को दूर करें - धारित, (i) वास्तव में, ये विशेष रूप से विधायी/कार्यकारी क्षेत्र के नीतिगत मामले हैं और मामले के तथ्यात्मक आधार पर, रिट याचिकाकर्ता के पास गुण-दोष के आधार पर कोई मामला नहीं था, - (ii) विशिष्ट प्रशासनिक आदेश के दृष्टिगत, किसी भी विनियमन को मनमाना, असंवैधानिक और/या संविधान द्वारा गारंटीकृत मौलिक अधिकार का उल्लंघन करने वाला मानने या ठहराने का अधिकार क्षेत्र केवल उचित मामलों में खंडपीठ के पास निहित है - इसलिए, विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय को बरकरार नहीं रखा जा सकता- विशेष अपील स्वीकृत की जाती है- तदनुसार रिट याचिका खारिज की जाती है। (पैरा - 31, 32, 35)

विशेष अपील स्वीकृत। (ई-11)

उद्धृत मामलों की सूची:

1. ए.के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य: एआईआर 1950 एससी 27,
2. जिज्ञा यादव (नाबालिग) (अभिभावक/पिता हरि सिंह के माध्यम से) बनाम केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और अन्य: (2021) 7 एससीसी 535,
3. पूजा यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य: 2023 (10) एडीजे 176।
4. आनंद सिंह बनाम उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा बोर्ड एवं अन्य, 2014 (3) एडीजे 443 (डीबी)

5. सुब्रमण्यम स्वामी एवं अन्य बनाम राजू, सदस्य, किशोर न्याय बोर्ड एवं अन्य के माध्यम से: (2014) 8 एससीसी 390,
6. डी.टी.सी. बनाम मजदूर कांग्रेस, 1991 सप (1) एससीसी 600,

(माननीय मुख्य न्यायमूर्ति अरुण भंसाली)

और

माननीय न्यायमूर्ति क्षितिज शैलेन्द्र द्वारा प्रदत्त)

1. उत्तर प्रदेश राज्य, उत्तर प्रदेश हाई स्कूल और इंटरमीडिएट शिक्षा बोर्ड (संक्षेप में 'बोर्ड') और इसके क्षेत्रीय सचिव ने उच्च न्यायालय नियम, 1952 के अध्याय VIII नियम 5 के तहत अंतर-न्यायालय अपील में, दिनांक 25.05.2023 के निर्णय और आदेश की वैधता पर सवाल उठाया है, जिसके तहत विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट-सी संख्या 3671 वर्ष 2022 (मोहम्मद समीर राव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और 2 अन्य) को अनुमति देते हुए, बोर्ड के क्षेत्रीय सचिव द्वारा पारित दिनांक 24.12.2020 के आदेश को अपास्त कर दिया है और रिट याचिका के प्रतिवादियों को आदेश देते हुए एक परमादेश रिट भी जारी की है कि वे रिट याचिकाकर्ता के नाम को "शाहनवाज" से बदलकर "मोहम्मद समीर राव" करने के आवेदन को अनुमति दें और तदनुसार, उक्त परिवर्तन को शामिल करते हुए नए हाई स्कूल और इंटरमीडिएट प्रमाण पत्र जारी करें। विद्वान एकल न्यायाधीश ने आधार कार्ड, राशन कार्ड, ड्राइविंग लाइसेंस, पासपोर्ट, मतदाता पहचान पत्र आदि जैसे पहचान के सार्वजनिक दस्तावेजों को सक्षम प्राधिकारियों को सौंपने जैसे कई अन्य निर्देश भी जारी किए हैं, साथ ही उन्हें नाम परिवर्तन दर्ज करने, कानून के अनुसार पुराने पहचान दस्तावेजों का निपटान या विनाश करने और परिवर्तित नाम के अनुरूप नए दस्तावेज जारी करने का निर्देश भी दिया है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने भारत सरकार के गृह मंत्रालय के सचिव और उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ के मुख्य सचिव को उचित कानूनी और प्रशासनिक ढाँचा बनाने का भी निर्देश दिया है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि दोनों सरकारें पहचान संबंधी दस्तावेज बनाने और उनमें मौजूद विसंगतियों को दूर करने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मिलकर काम करें।

मामले के संक्षिप्त तथ्य

2. बेशक, रिट याचिकाकर्ता मोहम्मद समीर राव को पहले शाहनवाज के रूप में जाना जाता था। वह इसी नाम से वर्ष 2013 और 2015 में बोर्ड द्वारा आयोजित हाई स्कूल और इंटरमीडिएट परीक्षाओं में शामिल हुए और उत्तीर्ण हुए। उनके पास शाहनवाज के नाम से जारी किए गए सभी पहचान पत्र थे। आधार कार्ड और पैन कार्ड की प्रतियां कार्यवाही के अभिलेख में लाई गईं। वर्ष 2020 में, मोहम्मद समीर राव के नाम से कुछ नए जारी किए गए आधार कार्ड और पैन कार्ड के आधार पर और भारत के राजपत्र में प्रकाशित एक राजपत्र अधिसूचना, जिसमें राजपत्र संख्या 39 नई दिल्ली, शनिवार, 26 सितंबर - 2 अक्टूबर, 2020 (आश्विन 4, 1942) भाग- IV, पृष्ठ 1091 है, उन्होंने बोर्ड से हाई स्कूल और इंटरमीडिएट के प्रमाण पत्रों में अपना नया नाम शामिल करने और "मोहम्मद समीर राव" के रूप में अपना नाम मुद्रित करने वाले नए प्रमाण पत्र जारी

करने का अनुरोध किया। उक्त आवेदन को बोर्ड के क्षेत्रीय सचिव ने दिनांक 24.12.2020 के आदेश द्वारा इस आधार पर खारिज कर दिया कि यह मामला "काल बाधित मामले" की श्रेणी में आता है और उत्तर प्रदेश इंटरमीडिएट शिक्षा अधिनियम, 1921 (संक्षेप में अधिनियम, 1921) के अंतर्गत निर्मित विनियमों के अध्याय III के विनियम 7 के अनुसार, तीन वर्ष की अवधि के बाद परिवर्तन के अनुरोध पर विचार नहीं किया जा सकता। इसी आदेश को रिट याचिकाकर्ता द्वारा चुनौती दी गई थी और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा इसे रद्द कर दिया गया था तथा वर्तमान अपील में इसे चुनौती दी गई है।

3. दिनांक 24.12.2020 का आक्षेपित आदेश जिसे विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष चुनौती दी गई

“प्रेषक,
क्षेत्रीय सचिव
माध्यमिक शिक्षा परिषद, उ०प्र०
क्षेत्रीय कार्यालय, बरेली।

सेवा में,
प्राचार्य/प्रधानाचार्य,
उमर इंटर कालेज
जलालपुर मुरादाबाद

पत्रांक: मा०शि०प०/ हाई०/इंटर प्रमाण-पत्र/व/ 10231-32 दिनांक 24.12.20

महोदय/महोदया,

आपके पत्र संख्या दिनांक के संदर्भ में हाईस्कूल/इंटर परीक्षा 2013 के निम्नांकित प्रमाण-पत्र संशोधन हस्तलेखन के पश्चात परीक्षार्थियों के हेतु भी जा रहे हैं। कृपया क्रासलिस्ट में संशोधन प्रमाण-पत्र के अनुसार अंकन कर लघु हस्ताक्षर कर दें।

कृपया प्राप्ति की सूचना तुरंत भेजने का कष्ट करें।

अनुक्रमांक नाम परीक्षार्थी अशुद्ध विवरण शुद्ध विवरण

0819050 शाहनबाज

नोट- प्रकरण कालबाधित की श्रेणी में है आपका प्रार्थनापत्र इस कार्यालय में दि० 26.11.2020 को प्राप्त हुआ है। परिपक्षीय नियमानुसार प्रमाण पत्र निर्गमन तिथि के तीन वर्ष बाद प्राप्त प्रकरण पर इंटरमीडिएट शिक्षा अधिनियम 1921 के अध्याय तीन के विनियम-7 के अनुसार संशोधन पर विचार किया जाना संभव नहीं है। अतः प्रमाण पत्र मूल रूप में वापस प्रेषित।

विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय का सार

4. विद्वान एकल न्यायाधीश ने कुछ पारंपरिक और साहित्यिक पुस्तकों के संदर्भ में और भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 और 21 से निपटते हुए यह धारित किया है कि मानव जीवन और व्यक्ति के नाम की घनिष्ठता निर्विवाद है, पसंद का नाम रखने या व्यक्तिगत प्राथमिकताओं के अनुसार नाम बदलने का अधिकार अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत जीवन के अधिकार के व्यापक दायरे में आता है और अधिनियम, 1921 के तहत बनाए गए विनियमों के अध्याय XII के विनियम 40 में निहित प्रतिबंध असंगत हैं और संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (ए) और अनुच्छेद 14 और 21 के तहत मौलिक अधिकारों पर उचित निर्बंधनों की कसौटी पर खरे नहीं उतरते हैं और ये मनमाने हैं और अपना नाम चुनने और बदलने के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करते हैं। विद्वान एकल न्यायाधीश ने "कम करके पढ़ने" के सिद्धांत को अपनाते हुए विनियमन 40(जी) का अवलोकन किया और कहा कि याचिकाकर्ता का नया नाम उसे आत्म-सम्मान की उच्च भावना प्रदान करता है।

अपीलकर्ताओं के तर्क

5. विद्वान अतिरिक्त मुख्य स्थायी अधिवक्ता श्री रामा नंद पांडे ने मुख्य रूप से निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ दीं:-

(i) भारत के संविधान द्वारा गारंटीकृत मौलिक स्वतंत्रताएं पूर्ण नहीं हैं और उन पर उचित प्रतिबंध भी लागू हैं।

(ii) बोर्ड द्वारा जारी हाई स्कूल और इंटरमीडिएट प्रमाणपत्रों में दर्ज नाम में परिवर्तन अधिनियम, 1921 के अध्याय XII के विनियमन 40 द्वारा विनियमित है और यह किसी भी व्यक्तिगत स्वतंत्रता के विरुद्ध नहीं है।

(iii) अधिनियम के अंतर्गत बनाए गए विनियमों के अध्याय III के विनियम 7 के साथ पठित विनियमों के अध्याय XII के विनियम 40(बी) और 40(सी) के दृष्टिगत, सात वर्ष से अधिक समय के बाद नाम परिवर्तन को अन्यथा स्वीकार नहीं किया जा सकता है, जो इस मामले में उचित प्रतिबंध हैं।

(iv) विद्वान एकल न्यायाधीश ने नीतिगत मामलों में न्यायिक पुनर्विलोकन की अपनी शक्ति का अतिक्रमण किया है तथा राज्य सरकार को निर्देश देकर विधायी कार्यों का अतिक्रमण किया है, जो विशेष रूप से कार्यपालिका के अधिकार क्षेत्र में आते हैं।

(v) ए.के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य: एआईआर 1950 एससी 27 में सर्वोच्च न्यायालय ने धारित किया कि मौलिक अधिकार के उपभोग पर उचित प्रतिबंध इस तथ्य के कारण लगाए जाते हैं कि कुछ परिस्थितियों में व्यक्तिगत स्वतंत्रता को समाज के कुछ अन्य बड़े हितों के अधीन करना पड़ता है।

(vi) यदि शाहनवाज़ से नाम बदलकर मोहम्मद समीर राव करने की अनुमति दी गई तो अराजकता पैदा होगी और एक अंतहीन प्रक्रिया वाला नया भानुमती का पिटारा खुल जाएगा।

(vii) संघ और राज्य के कार्यकारी अधिकारियों को कानूनी ढांचा बनाने के लिए निर्देश जारी करना संविधान के संघीय ढांचे का उल्लंघन है क्योंकि ऐसे अधिकार और शक्तियाँ संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार, विशेष रूप से अनुच्छेद 245 के साथ पठित अनुसूची 7 के तहत, विभिन्न मामलों में विधायी क्षमता के अंतर्गत, केंद्र सरकार और राज्य सरकार के पास निहित हैं।

(viii) सर्वोच्च न्यायालय ने, **जिना यादव (नाबालिग) (अभिभावक/पिता हरि सिंह के माध्यम से) बनाम केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और अन्य: (2021) 7 एससीसी 535**, में मोटे तौर पर दो श्रेणियाँ निर्धारित की हैं जिनके अंतर्गत नाम परिवर्तन अनुमेय है और यदि रिट याचिकाकर्ता अपनी इच्छा से भी अपना नाम बदलना चाहता है, तो वह पहले सिविल न्यायालय से घोषणा प्राप्त कर सकता था, फिर आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशन करवा सकता था और फिर निर्धारित समय सीमा के भीतर बोर्ड से संपर्क कर सकता था और केवल उसी स्थिति में, उसके दावे पर गुण-दोष के आधार पर विचार करने का अधिकार उत्पन्न हो सकता था। इस संबंध में, **पूजा यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं 3 अन्य: 2023 (10) एडीजे 176** में हम में से एक (न्यायमूर्ति क्षितिज शैलेंद्र) द्वारा एकल पीठ में दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया।

(ix) अधिनियम, 1921 के तहत बनाए गए किसी भी विनियमन को रिट याचिका में चुनौती नहीं दी गई है, या यदि संशोधन द्वारा चुनौती दी गई है, तो विद्वान एकल न्यायाधीश **“किसी प्रावधान को कम करने”** के सिद्धांत को लागू करके निहित रूप से उसे रद्द करने के लिए सक्षम नहीं थे और इसलिए, अपील में दिया गया निर्णय अधिकार क्षेत्र से बाहर है।

प्रतिवादी के तर्क

6. इसके विपरीत, श्री श्रेयस श्रीवास्तव, विद्वान अधिवक्ता जिन्हें इस न्यायालय के आदेश के तहत विधिक सेवा प्राधिकरण द्वारा नियुक्त किया गया था, ने निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ दीं:-

(i) रिट याचिकाकर्ता का मामला पूरी तरह से **जिना यादव** (उपरोक्त) 171(बी) (उद्धृत संदर्भ मनु/एससी/0362/2021) [(2021) 7 एससीसी 535 के समतुल्य पैराग्राफ संख्या 194, 194.1 और 194.2] द्वारा कवर किया गया है, क्योंकि रिट याचिकाकर्ता ने बिना किसी सहायक स्कूल अभिलेख के 'अपनी इच्छा से' अपना नाम बदल लिया था, लेकिन चूंकि उन्होंने अपने नए नाम से जारी कुछ सार्वजनिक दस्तावेज और एक राजपत्र अधिसूचना प्राप्त किया था, इसलिए बोर्ड हाई स्कूल और इंटरमीडिएट प्रमाणपत्रों में नाम को सही करने/बदलने की प्रार्थना को अनुमति देने और रिट याचिकाकर्ता को इसे जारी करने के दायित्व अधीन था।

(ii) किसी भी न्यायालय से घोषणा प्राप्त करने की कोई भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि सार्वजनिक दस्तावेज और आधिकारिक राजपत्र प्रार्थना की स्वीकृति के लिए पर्याप्त होंगे।

(iii) विनियमन 40 को विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सही ढंग से पढ़ा गया है क्योंकि यह नया नाम प्राप्त करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकार के विरुद्ध है।

(iv) विद्वान एकल न्यायाधीश ने, इंटरमीडिएट शिक्षा अधिनियम, 1921 तहत बनाए गए विनियमों के अध्याय XII, भाग II-B के विनियमन 40 के प्रावधानों की व्यावहारिक व्याख्या करते हुए, इसकी संवैधानिकता को बचाने के लिए उक्त विनियमन को रद्द कर दिया है।

(v) विद्वान एकल न्यायाधीश इस प्रावधान को कम करने के लिए सक्षम थे, क्योंकि शैक्षणिक मामले उच्च न्यायालय नियम, 1952 के तहत मुख्य न्यायाधीश द्वारा तैयार किए गए रोस्टर के अनुसार एकल न्यायाधीश पीठ द्वारा संज्ञेय थे

(vi) नाम बदलने के अधिकार को भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ए) के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी गई है।

(vii) नाम रखने के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में स्वीकार करने के पीछे का तर्क इस तथ्य से निकलता है कि पहचान को विभिन्न आंतरिक और बाह्य विशेषताओं का मिश्रण माना गया है जिसमें व्यक्ति का नाम भी शामिल है, जो पहचान की प्रमुख अभिव्यक्ति है।

(viii) माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **जिज्ञा यादव (उपरोक्त)** के पैरा संख्या 171(क) में यह धारित किया है कि सार्वजनिक दस्तावेजों के पक्ष में एक कानूनी पूर्वधारणा कार्य करती है और सीबीएसई ऐसे दस्तावेजों की अनदेखी नहीं कर सकता। हालाँकि ये टिप्पणियाँ सीबीएसई के संबंध में की गई थीं, लेकिन ये टिप्पणियाँ उत्तर प्रदेश के हाई स्कूल और इंटरमीडिएट शिक्षा बोर्ड पर भी पूरी तरह लागू होती हैं।

(ix) बोर्ड को किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के प्रयोग को सीमित करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं है, जो अन्य सार्वजनिक/वैधानिक दस्तावेजों में निहित हैं जिनका अनुमानित मूल्य है।

(x) चूंकि उपर्युक्त विनियमन की संवैधानिकता को कोई विशेष चुनौती नहीं दी गई थी, इसलिए मामले को इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमावली के अध्याय 5 नियम 1 के तहत माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा तैयार किए गए रोस्टर के अनुसार प्रत्यायोजित विधान की संवैधानिकता को चुनौती देने वाले मामलों की सुनवाई के लिए अधिकृत पीठ के समक्ष प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं थी।

बहस

7. वर्तमान मामले में शामिल मुद्दा काफी महत्वपूर्ण और व्यापक निहितार्थ वाला है। दिलचस्प बात यह है कि दोनों पक्षों ने **जिज्ञा यादव** (उपरोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा जताया है। **जिज्ञा यादव** (उपरोक्त) का मामला एक ऐसी स्थिति से उत्पन्न हुआ था जहां संबंधित उम्मीदवार ने अंक-पत्र में अपने माता-पिता के नाम को सही कराने के लिए केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के समक्ष आवेदन किया था। उस याचिकाकर्ता के अनुसार, उसके पिता हरि सिंह का नाम गलती से हरि सिंह यादव के रूप में और मां का नाम ममता के बजाय ममता यादव के रूप में दर्ज किया गया था। यह दावा उसके माता-पिता की पहचान के कुछ दस्तावेजों पर आधारित था। सीबीएसई ने प्रार्थना को अस्वीकृत कर दिया और उक्त अस्वीकृति के विरुद्ध दायर रिट याचिका को दिल्ली उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया। शैक्षिक प्रमाणपत्रों में नामों में सुधार कराने की अनुमति और संवैधानिक प्रावधानों के साथ-साथ कुछ उपनियमों/नियमों/विनियमों पर विचार करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित प्रेक्षित किया:-

"न्यायालयों को बदलाव की अनुमति देने से पहले तत्काल तथ्यात्मक स्थिति के प्रति अतिरिक्त सतर्क और सजग रहने की आवश्यकता है। नाम परिवर्तन या जन्म तिथि में परिवर्तन के दो अनुरोधों को एक ही न्यायिक दृष्टि से नहीं देखा जा सकता। कभी-कभी, नाम परिवर्तन एक आवश्यकता हो सकती है, कभी-कभी यह बिना किसी आवश्यकता के विशुद्ध स्वेच्छाचारिता का प्रयोग भी हो सकता है। जब उपनियम या लागू नियम इसकी अनुमति देते हैं, तब किसी भी न्यायालय के लिए ऐसी राहत देने से इनकार करने का कोई कारण नहीं है। लेकिन जब उपनियम इसकी अनुमति नहीं देते हैं, तो न्यायालय को निर्देश जारी करने से पहले सावधानी बरतनी चाहिए, वह भी उपनियमों की वैधता पर टिप्पणी किए बिना और उन संवैधानिक या कानूनी अधिकारों को प्रदर्शित किए बिना जो दांव पर लगे हैं।"

8. माननीय न्यायालय ने आगे निम्नलिखित प्रेक्षित किया:-

"162. नाम में "परिवर्तन" का प्रावधान कहीं अधिक कठोर है और सही स्थिति तय करने के लिए गहन पुनर्विलोकन की आवश्यकता है। वर्तमान कानून के अनुसार, नाम परिवर्तन दो पूर्व शर्तों की पूर्ति पर अनुमेय है - न्यायालय की पूर्व अनुमति और आधिकारिक राजपत्र में प्रस्तावित परिवर्तन का प्रकाशन। ये शर्तें एक अन्य शर्त के साथ मौजूद हैं जो यह बताती है कि परिणाम के प्रकाशन से पहले पूर्व अनुमति और प्रकाशन दोनों किए जाने चाहिए। इसका प्रभावी रूप से अर्थ यह है कि उम्मीदवार के परिणाम के प्रकाशन के बाद नाम परिवर्तन पूरी तरह से अस्वीकार्य होगा, भले ही उसे न्यायालय द्वारा अनुमति दी गई हो और आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित किया गया हो। दूसरे शब्दों में, एक बार उम्मीदवार का परीक्षा परिणाम प्रकाशित हो जाने के बाद, बोर्ड केवल प्रमाण पत्र में उल्लिखित नाम में सुधार की अनुमति देगा। इसके अलावा, स्वेच्छा से नाम बदलने की संभावना पूरी तरह से खारिज कर दी गई है।"

9. अंत में, न्यायालय ने नाम या अन्य विवरण में सुधार की मांग करने वाले ऐसे मामलों को दो व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया और निम्नानुसार धारित किया :-

“171. सीबीएसई द्वारा जारी प्रमाणपत्र में विवरण में "परिवर्तन" के अनुरोध के संबंध में, यह पूर्वधारणा है कि सीबीएसई प्रमाणपत्र में दर्ज किए जाने वाले विवरण स्कूल के अभिलेख के अनुरूप नहीं हैं। ऐसा अनुरोध दो अलग-अलग स्थितियों में किया जा सकता है। **पहला**, जन्म प्रमाण पत्र, आधार कार्ड/मतदान कार्ड आदि जैसे सार्वजनिक दस्तावेजों के आधार पर और सीबीएसई प्रमाणपत्र में उनके अनुरूप परिवर्तन को शामिल करने के लिए। **दूसरी** संभावना तब होती है जब परिवर्तन का अनुरोध बाद में अपनी पसंद से प्राप्त नाम के कारण हो। उस परिवर्तन का उम्मीदवार से संबंधित सार्वजनिक दस्तावेजों द्वारा समर्थित होना आवश्यक नहीं है।

(ए) पहली श्रेणी पर लौटते हुए, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, 1872 के अधिनियम में परिकल्पित सार्वजनिक दस्तावेजों के संबंध में एक कानूनी पूर्वधारणा है। इसलिए, ऐसे सार्वजनिक दस्तावेजों की सीबीएसई द्वारा उपेक्षा नहीं की जा सकती है। उन दस्तावेजों को ध्यान में रखते हुए, सीबीएसई अपने द्वारा जारी किए गए प्रमाण पत्र में परिवर्तन दर्ज करने के अनुरोध पर विचार कर सकता है। हालांकि, यह बिना शर्त नहीं होना चाहिए, बल्कि आवेदक द्वारा कुछ उचित शर्तों को पूरा करने के अधीन होना चाहिए, जैसा कि सीबीएसई द्वारा निर्धारित किया जा सकता है, जैसे कि घोषणा सहित शपथ पत्र प्रस्तुत करना और सीबीएसई को क्षतिपूर्ति करना और प्रशासनिक खर्चों के बदले निर्धारित शुल्क का भुगतान करना। सीबीएसई आवेदक द्वारा मूल प्रमाण पत्र (या डुप्लिकेट मूल प्रमाण पत्र, जैसा भी मामला हो) के समर्पण/वापसी पर उसके द्वारा जारी किए जाने वाले नए प्रमाण पत्र में परिवर्तन दर्ज करने से पहले आधिकारिक राजपत्र में सार्वजनिक सूचना जारी करने और प्रकाशन के लिए भी आग्रह कर सकता है। नए प्रमाणपत्र में मूल प्रविष्टि के सामने अस्वीकरण और शीर्षक/टिप्पणी हो सकती है (भूल जाने के अधिकार के प्रयोग में किए गए नाम परिवर्तन को छोड़कर), जिसमें परिवर्तन दर्ज करने की तिथि और उसका आधार दर्शाया गया हो। दूसरे शब्दों में, नए प्रमाणपत्र में ऊपर उल्लिखित शीर्षक/टिप्पणी के साथ परिवर्तन दर्ज करते समय मूल विवरण सुरक्षित रखा जा सकता है (भूल जाने के अधिकार के प्रयोग में किए गए नाम परिवर्तन को छोड़कर)।

(बी) हालाँकि, बाद वाली स्थिति में जहां परिवर्तन बिना किसी सहायक स्कूल अभिलेख या सार्वजनिक दस्तावेज के नए अधिग्रहीत नाम के आधार पर किया जाना है, उस अनुरोध पर, उस संबंध में न्यायालय द्वारा पूर्व अनुमति/घोषणा और आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशन सहित सीबीएसई द्वारा जारी मूल प्रमाण पत्र (या डुप्लिकेट मूल प्रमाण पत्र, जैसा भी मामला हो) समर्पण/वापसी और निर्धारित शुल्क के भुगतान के बाद, विचार किया जा सकता है। ऊपर उल्लिखित अन्य स्थितियों की तरह नये प्रमाण पत्र में भी मूल प्रविष्टि को (भूल जाने के अधिकार के प्रयोग में किये गए नाम के परिवर्तन छोड़कर) बनाए रखा जाएगा और उसमें एक शीर्षक/टिप्पणी जोड़ी जाएगी जिसमें प्रविष्टि की तारीख और सीबीएसई के अस्वीकरण सहित अन्य विवरण दिये

जाएंगे। ऐसा इसलिए है क्योंकि सीबीएसई को न तो निर्णय देने की आवश्यकता है और न ही उसके पास आवेदक के दावे की सत्यता को सत्यापित करने का कोई तंत्र है।

10. वर्तमान मामला अर्थात् शाहनवाज से मोहम्मद समीर राव नाम बदलना, पहली श्रेणी में नहीं आता है, जो वास्तव में पूरी तरह से एक नया नाम प्राप्त करने के समान है। याचिकाकर्ता ने अपने नए नाम अर्थात् शाहनवाज के नाम से पहले से मौजूद पहचान के दस्तावेजों जैसे आधार कार्ड/जन्म प्रमाण पत्र/मतदाता पहचान पत्र आदि के आधार पर अपना नाम सही करने के लिए बोर्ड से संपर्क नहीं किया। यह मामला दूसरी श्रेणी में आता है जहां परिवर्तन बिना किसी सहायक स्कूल अभिलेख या सार्वजनिक दस्तावेज के अपनी पसंद से प्राप्त नए नाम के आधार पर किया जाना है। उस श्रेणी से निपटते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से प्रेक्षित किया है कि इस तरह के अनुरोध पर, उस संबंध में न्यायालय द्वारा पूर्व अनुमति/घोषणा और आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशन सहित मूल प्रमाण पत्र (या डुप्लिकेट मूल प्रमाण पत्र, जैसा भी मामला हो) के समर्पण/वापसी और निर्धारित शुल्क के भुगतान के बाद विचार किया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी कहा है कि नए प्रमाण-पत्र में मूल प्रविष्टि बरकरार रहेगी तथा एक शीर्षक/टिप्पणी जोड़ी जाएगी जिसमें प्रविष्टि की तारीख तथा अन्य विवरण दिए जाएंगे, क्योंकि बोर्ड को निर्णय देने की आवश्यकता नहीं है और न ही उसके पास आवेदक के दावे की सत्यता को सत्यापित करने का कोई तंत्र है।

11. एक बार जब सर्वोच्च न्यायालय ने "न्यायालय द्वारा पूर्व अनुमति/घोषणा के लिए आग्रह" पर जोर दिया है, तो यह न्यायालय देश के दीवानी कानून के संदर्भ में मामले के उक्त पहलू पर विचार कर सकता है। **सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908** की धारा 9 में प्रावधान है कि न्यायालयों को दीवानी प्रकृति के सभीवादों पर विचार करने का अधिकार है, सिवाय उनवादों के जिनका संज्ञान स्पष्ट रूप से या विवक्षित रूप से वर्जित है। **विशिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963**, जो विभिन्न अध्यायों में विभाजित है, के अंतर्गत विभिन्न प्रकृति केवादों का प्रावधान है। अध्याय-I में संपत्ति पर कब्जा पुनः प्राप्त करने केवादों का प्रावधान है, अध्याय-II में संविदाओं के विशिष्ट पालन का उल्लेख है, अध्याय-III में विलेखों के सुधार का उल्लेख है, अध्याय-IV में संविदाओं के निरसन का उल्लेख है, अध्याय-V में विलेखों के निरस्तीकरण का प्रावधान है, अध्याय-VII और VIII में निषेधाज्ञा का उल्लेख है। हालाँकि, वर्तमान मामले में, 1963 के अधिनियम के अध्याय-VI का उल्लेख आवश्यक है। इसमें केवल दो प्रावधान हैं, अर्थात् धारा 34 और 35, जिन्हें निम्नानुसार उद्धृत किया गया है:-

“34. प्रास्थिति या अधिकार की घोषणा के संबंध में न्यायालय का विवेकाधिकार - कोई भी व्यक्ति जो किसी विधिक हैसियत या किसी संपत्ति पर किसी अधिकार का हकदार है, ऐसे हैसियत या अधिकार पर उसके हक को अस्वीकार करने वाले या अस्वीकार करने में हितबद्ध किसी व्यक्ति के विरुद्ध वाद संस्थित कर सकता है, और न्यायालय अपने विवेकाधिकार से उसमें यह घोषणा कर सकता है कि वह ऐसा हकदार है, और वादी को ऐसे वाद में किसी अतिरिक्त अनुतोष की मांग करने की आवश्यकता नहीं है:

परन्तु कोई भी न्यायालय वहां ऐसी कोई घोषणा नहीं करेगा, जहां वादी, मात्र हक की घोषणा से अधिक अनुतोष प्राप्त करने में समर्थ होते हुए भी, ऐसा करने से चूक करता है।

स्पष्टीकरण-संपत्ति का न्यासी ऐसे हक को “अस्वीकार करने में हितबद्ध व्यक्ति” है जो ऐसे व्यक्ति के हक के प्रतिकूल हो जो अस्तित्व में नहीं है, और यदि वह अस्तित्व में होता, तो वह उसका न्यासी होता।

35. घोषणा का प्रभाव- इस अध्याय के अंतर्गत की गई घोषणा केवल वाद के पक्षकार और उनसे व्युत्पन्न अधिकार के माध्यम से दावा करने वाले व्यक्तियों पर ही बाध्यकारी है और, जहां कि कोई भी पक्षकार न्यासी है, वहां उन व्यक्तियों को ही बाध्य करती है जिनके लिए ऐसे पक्षकार न्यासी होते, यदि घोषणा की तिथि पर उनका अस्तित्व होता।”

12. धारा 34 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि सिविल न्यायालय किसी भी व्यक्ति की प्राप्ति या अधिकार की घोषणा करने के लिए सक्षम है, जिसमें उसके विधिक हैसियत का समावेश होता है। अपनी इच्छा से नया नाम प्राप्त करना अधिनियम के अध्याय-VI के अंतर्गत इस अर्थ में आता है कि नया नाम प्राप्त करने का इच्छुक व्यक्ति सिविल न्यायालय से इस आशय की घोषणा की डिक्री प्राप्त कर सकता है कि अब से उसे उसके नए अर्जित नाम से जाना जाएगा। ऐसी स्थिति में, डिक्री की तिथि प्रासंगिक होगी और उक्त तिथि से प्रभावी होगी, जिसके पूर्व घोषणा चाहने वाले वादी को उसके पूर्व नाम से जाना जाएगा। यद्यपि यह सत्य है कि धारा 35 के अनुसार, अध्याय-VI के अंतर्गत की गई घोषणा केवल वाद के पक्षकारों पर ही बाध्यकारी होगी, तथापि यह डिक्री के नए नाम प्राप्त करने की वैधता को प्रभावित नहीं करती है, क्योंकि ऐसी स्थिति में, डिक्री समूचे विश्व के विरुद्ध डिक्री के रूप में कार्य करेगी, बशर्ते कि वादी अपने विरोधियों को उसी प्रकार से चुने, जैसे सामान्य जनता, भारत संघ, उत्तर प्रदेश राज्य, संबंधित बोर्ड या विभाग आदि। इस प्रकार प्राप्त की गई घोषणा, संघ और राज्य के प्रत्येक विभाग तथा समूचे जनसाधारण को भी बाध्यकारी होगी।

13. इस समय, साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 41 का भी संदर्भ आवश्यक है। यह धारा अध्याय-III में “तथ्यों की प्रासंगिकता” शीर्षक से स्थान पाती है और इस प्रकार है:-

“41. प्रोबेट इत्यादि विषयक अधिकारिता के किन्हीं निर्णयों की सुसंगति -किसी सक्षम न्यायालय के प्रोबेट-विषयक, विवाह-विषयक, नवाधिकरण-विषयक या दिवाला-विषयक अधिकारिता के प्रयोग में दिया हुआ अंतिम निर्णय, आदेश या डिक्री, जो किसी व्यक्ति को, कोई विधिक हैसियत प्रदान करती या लेती है या जो सर्वतः न कि किसी विनिर्दिष्ट व्यक्ति के विरुद्ध किसी व्यक्ति को ऐसी किसी हैसियत का हकदार या किसी विनिर्दिष्ट चीज का हकदार घोषित करती है, तब सुसंगत हैं जब कि किसी ऐसी विधिक हैसियत, या किसी ऐसी चीज पर किसी ऐसे व्यक्ति के, हक का अस्तित्व सुसंगत है।

ऐसा निर्णय, आदेश या डिक्री एक निश्चायक सबूत है-

कि कोई विधिक हैसियत, जो वह प्रदत्त करती है, उस समय प्रोद्भूत हुई जब ऐसा निर्णय, आदेश, या डिक्री प्रवर्तन में आयी;

कि कोई विधिक हैसियत, जिसके लिए वह हकदार घोषित करती है, उस व्यक्ति को उस समय प्रोद्भूत हुई जो उस समय ऐसे निर्णय, [आदेश या डिक्री] द्वारा घोषित है कि उस समय वह उस व्यक्ति को प्रोद्भूत हुई;

.....”

14. धारा 41 में प्रयुक्त शब्द "जो किसी व्यक्ति को कोई विधिक हैसियत प्रदान करता है या उससे छीनता है या जो किसी व्यक्ति को ऐसे किसी हैसियत का हकदार घोषित करता है" अत्यंत महत्वपूर्ण हैं और व्यापक विश्व के विरुद्ध की गई ऐसी घोषणा की प्रकृति के लिए बाध्यकारी भी हैं। यह प्रावधान लोकलक्षी निर्णयों की बात करता है। अंग्रेजी कानून में **लोकलक्षी निर्णय** को "एक न्यायाधिकरण द्वारा किसी विशेष विषय-वस्तु की स्थिति के आधार पर सुनाया गया निर्णय (जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है) के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसके पास उस प्रयोजन के लिए सक्षम प्राधिकारी है। यह किसी व्यक्ति या वस्तु की स्थिति, अर्थात् उस व्यक्ति या वस्तु का सामान्यतः विश्व से न्यायिक संबंध, घोषित, परिभाषित या अन्यथा निर्धारित करता है।

15. हम यह भी देख सकते हैं कि हम में से एक (न्यायमूर्ति क्षितिज शैलेन्द्र), ने **जिन्ना यादव** (उपरोक्त) और विशिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 34 में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के उपरोक्त पैराग्राफ का उल्लेख करते हुए, **पूजा यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं 3 अन्य: 2023 (10) एडीजे 176** में धारित किया कि अपनी पसंद से नया नाम प्राप्त करने के लिए सिविल न्यायालय से घोषणा प्राप्त करना पूर्व-आवश्यकता है और केवल तभी अनुरोध पर विचार किया जा सकता है जब ऐसी डिक्री प्राप्त कर ली गई हो और बोर्ड के समक्ष रख दी गई हो।

16. कोई ऐसी स्थिति की कल्पना कर सकता है जहां किसी व्यक्ति के पास पहचान के कुछ दस्तावेज हैं, जैसे आधार कार्ड, वोटर आईडी कार्ड, पैन कार्ड इत्यादि जिसमें एक खास नाम का उल्लेख है जिसके आधार पर वह हाईस्कूल और इंटरमीडिएट परीक्षा में शामिल हुआ और प्रमाण पत्र प्राप्त किया। कुछ वर्षों के बाद उक्त व्यक्ति नया नाम प्राप्त करना चाहता है और फिर से नया आधार कार्ड, वोटर आईडी कार्ड, पैन कार्ड इत्यादि प्राप्त करता है। उस आधार पर, भले ही एक या दूसरे कारण से बोर्ड अपने नए नाम को शामिल करते हुए नए शैक्षिक प्रमाण पत्र जारी करता है, फिर, यदि कुछ समय बाद वह व्यक्ति तीसरा नाम प्राप्त करना चाहता है और फिर से उस तीसरे नए नाम में जारी किए गए पहचान के नए दस्तावेज प्राप्त करता है और फिर से अपने नए नाम को शामिल करते हुए नए प्रमाण पत्र जारी करने के लिए बोर्ड से संपर्क करता है, तो ऐसी प्रक्रिया एक अंतहीन प्रक्रिया बन जाएगी। ऐसा दायित्व बोर्ड पर नहीं लगाया जा सकता है, खासकर जब यह वैधानिक नियमों के विपरीत हो।

17. हालाँकि, हम स्पष्ट कर सकते हैं कि हम आधार कार्ड पैन कार्ड या किसी अन्य दस्तावेज़ की वैधता की जाँच नहीं कर रहे हैं जो बाद में रिट याचिकाकर्ता द्वारा मो. समीर राव के नाम से प्राप्त किया गया, क्योंकि वर्तमान अपील में शामिल मुद्दा बिल्कुल अलग है। हमारा ध्यान बोर्ड के दायित्व पर केंद्रित है कि वह रिट याचिकाकर्ता जैसे अभ्यर्थी के शैक्षिक अभिलेखों में अपना नाम बदलने या नए नाम से नए प्रमाणपत्र जारी करवाने के अनुरोध को स्वीकार करे या अस्वीकार करे। इसलिए, इस निर्णय में की गई किसी भी टिप्पणी को किसी भी समय रिट याचिकाकर्ता द्वारा प्राप्त पहचान के किसी भी दस्तावेज़ को मान्य/अमान्य करने के रूप में नहीं माना जा सकता।

18. जहाँ तक राजपत्र संख्या 9, नई दिल्ली, शनिवार, 26 सितंबर - 2 अक्टूबर, 2020 (आश्विन 4, 1942) भाग-IV, पृष्ठ 1091 में प्रकाशित राजपत्र अधिसूचना का संबंध है, न्यायालय उससे संबंधित कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं का उल्लेख कर सकता है। राजपत्र की शुरुआत निम्नलिखित शब्दों में एक सूचना से होती है:-

“भारत के राजपत्र के इस भाग में विज्ञापनों/सार्वजनिक सूचनाओं के प्रकाशन के लिए कोई कानूनी जिम्मेदारी स्वीकार नहीं की जाती है। विज्ञापन/सार्वजनिक सूचनाएं सूचित करने वाले व्यक्ति कानूनी परिणामों और किसी भी अन्य गलत बयानी आदि के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार होंगे।

आदेश से प्रकाशन नियंत्रक”

19. उक्त राजपत्र में विभिन्न व्यक्तियों के नाम परिवर्तन की जानकारी समान भाषा में दी गई है। जहाँ तक याचिकाकर्ता का संबंध है, सूचना निम्नलिखित है:-

मैं अब तक शाहनवाज पुत्र मौवीन हुसैन के नाम से जाना जाता था, मैं गांव मेहलोली, पोस्ट जलालपुर खास, तहसील बिलारी, जिला मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश 244411 में रहता हूं, मैंने अपना नाम बदल लिया है और अब मुझे मो. समीर राव के नाम से जाना जाएगा।

यह प्रमाणित किया जाता है कि मैंने इस संबंध में अन्य कानूनी आवश्यकताओं का अनुपालन किया है।

शाहनवाज

[हस्ताक्षर (मौजूदा पुराने नाम से)]”

20. नोटिस के अंत में लिखे गए शब्द "यह प्रमाणित किया जाता है कि मैंने इस संबंध में अन्य कानूनी आवश्यकताओं का अनुपालन किया है", भारत सरकार द्वारा जारी प्रमाणपत्र नहीं हैं, बल्कि यह उम्मीदवार द्वारा स्वयं किया गया प्रमाणीकरण है कि उसने अन्य कानूनी आवश्यकताओं का पालन किया है। वे 'कानूनी

आवश्यकताएँ क्या हैं, इसका राजपत्र में कहीं उल्लेख नहीं है, बल्कि, ऊपर उद्धृत नोटिस के साथ पढ़ने पर, इसका अर्थ होगा कि भारत सरकार ने स्वयं एक अस्वीकरण जारी किया है जो राजपत्र में नया नाम अधिसूचित करने के परिणामस्वरूप होने वाली किसी भी कानूनी ज़िम्मेदारी/दायित्व/परिणामों या किसी अन्य गलत बयानी आदि से खुद को बचाता है।

21. भारत में, राजपत्र अधिसूचना और दीवानी न्यायालय का आदेश अलग-अलग उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं और यद्यपि वे एक-दूसरे के पूरक हो सकते हैं, फिर भी वे एक-दूसरे के स्थान पर नहीं आ सकते। राजपत्र अधिसूचना एक आधिकारिक प्रकाशन है जो किसी व्यक्ति के नाम में परिवर्तन की घोषणा करता है। यह आमतौर पर व्यक्ति द्वारा आवश्यक प्रक्रियाओं, जैसे कि हलफनामा दाखिल करना और स्थानीय समाचार पत्रों में नाम परिवर्तन प्रकाशित करना, का पालन करने के बाद प्रकाशित किया जाता है। दूसरी ओर, दीवानी न्यायालय का आदेश, न्यायालय द्वारा पारित एक औपचारिक आदेश होता है, जो किसी व्यक्ति के नाम परिवर्तन के संबंध में एक बाध्यकारी घोषणा प्रदान कर सकता है। राजपत्र अधिसूचना मुख्यतः सार्वजनिक सूचना के रूप में कार्य करती है, जबकि दीवानी न्यायालय का आदेश एक कानूनी रूप से बाध्यकारी घोषणा प्रदान करता है, राजपत्र अधिसूचना सरकार द्वारा जारी की जाती है, जबकि दीवानी न्यायालय का आदेश न्यायिक प्राधिकारी द्वारा पारित किया जाता है, दीवानी न्यायालय का आदेश कानून द्वारा प्रवर्तनीय होता है, जबकि राजपत्र अधिसूचना, यद्यपि आधिकारिक होती है, विवादों को सुलझाने या अधिकारों को स्थापित करने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकती है। सामान्यतः, राजपत्र अधिसूचना दीवानी न्यायालय के आदेश का स्थान नहीं ले सकती। ऐसी स्थितियों में जहाँ बाध्यकारी घोषणा या प्रवर्तन आवश्यक हो, दीवानी न्यायालय का आदेश अनिवार्य रूप से आवश्यक है।

22. न्यायालय की राय में, राजपत्र प्रकाशन से पहले कुछ कानूनी आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए, न कि केवल नाम परिवर्तन के संबंध में ऐसी घोषणा/सूचना के प्रकाशन की मांग करने वाले फॉर्म को मात्र भरना। ऐसी आवश्यकता केवल सिविल न्यायालय से प्राप्त डिक्री की प्रकृति में ही हो सकती है और किसी अन्य तरीके से नहीं, अन्यथा कोई भी व्यक्ति इस तरह की सूचना आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित करवा देगा और सरकारी विभागों पर सभी अभिलेखों को बदलते हुए नए अधिग्रहीत नाम को शामिल करने का प्रभाव डालेगा। भले ही साक्ष्य अधिनियम, 1872 में राजपत्रों के पक्ष में उपधारणा संलग्न करने वाले कुछ प्रावधान हों, वे केवल साक्ष्य में ऐसे राजपत्रों की ग्राह्यता के संदर्भ में हैं, लेकिन राजपत्र की सामग्री, उनसे जुड़ी किसी कानूनी पवित्रता के अभाव में, ऐसे प्रकाशन की प्रकृति और चरित्र के निर्णायक प्रमाण के रूप में नहीं मानी जा सकती।

23. यहां रिट याचिकाकर्ता का मामला यह नहीं है कि अपने परिवर्तित नाम की सूचना आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित करवाने से पहले, उसने किसी सक्षम सिविल न्यायालय से कोई डिक्री प्राप्त की थी और इसलिए, जब **जिज्ञा यादव** (उपरोक्त) के पैराग्राफ संख्या 171 (बी) में उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रयोग किए गए शब्दों कि "इस संबंध में न्यायालय द्वारा पूर्व अनुमति/घोषणा और आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशन के लिए आग्रह करने पर अनुरोध पर विचार किया जा सकता है", की गहराई से जांच की जाती है और वर्तमान मामले

के तथ्यात्मक सार में हम पाते हैं कि सिविल न्यायालय से डिक्री के अभाव में, यहां तक कि केवल राजपत्र प्रकाशन, जिस पर रिट याचिकाकर्ता द्वारा भरोसा किया गया है, का भी कोई परिणाम नहीं होगा।

24. चूंकि विद्वान एकल न्यायाधीश ने विनियमों के विनियम 40(सी) को पढ़ा है, इसलिए पहले उसे निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत करने की आवश्यकता है:-

“40.प्रमाण पत्र में नाम परिवर्तन परिषद सफल उम्मीदवारों द्वारा विहित प्रक्रियानुसार आवेदन पत्र देने तथा इस अध्याय के विनियम 22(13) में निर्धारित शुल्क देने पर प्रमाण पत्र में **निम्नांकित प्रतिबंधों के अधीन** नाम परिवर्तन कर सकती है—

(क) आवेदन पत्र उचित सारणी द्वारा दिया जाएगा तथा जिस वर्ष परीक्षा हुई थी, उसकी 31 मार्च से तीन वर्ष के भीतर परिषद के सचिव के कार्यालय में पहुंच जाना चाहिए। आवेदक को एक टिकट लगे हुए कागज पर शपथ-पत्र देना होगा, जो प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट अथवा नोटरी द्वारा यथाविधि प्रमाणित होना चाहिए, जिसमें नाम परिवर्तन के वैध कारण दिये होंगे तथा जो एक राजपत्रित अधिकारी द्वारा यथा विधि प्रमाणित होगा तथा परीक्षार्थी जहां वह निवास करता है, वहाँ के स्थानीय दैनिक पत्र की तीन विभिन्न तिथियों के संस्करणों में अपने नाम के परिवर्तन को विज्ञापित करेगा, इससे पूर्व कि उसे परिवर्तित नाम का नया प्रमाण-पत्र प्राप्त हो संबंधित तिथियों के समाचार पत्रों की प्रतियां आवेदन पत्र के साथ संलग्न करना अनिवार्य है।

(ख) परिषद द्वारा नाम परिवर्तन के आवेदन-पत्र निम्नलिखित को छोड़कर अन्य किन्हीं कारणों से स्वीकार नहीं किये जाएंगे।

नाम में भद्दापन हो या नाम से अपशब्द की ध्वनि निकलती हो अथवा नाम असम्मान प्रतीत होता हो अथवा अन्य ऐसी स्थिति होने पर।

(ग) परीक्षार्थी द्वारा नाम के पहले या बाद में उपनाम जोड़ने धर्म अथवा जति सूचक शब्द के जोड़ने अथवा सम्मानजनक शब्द या उपाधि जोड़ने जैसे किसी भी प्रकार के आवेदन पत्रों को स्वीकार्य नहीं किया जाएगा। इसी प्रकार धर्म अथवा जाति परिवर्तन के आधार पर अथवा विवाहित छात्र/छात्राओं के नाम में भी विवाह के फलस्वरूप नाम परिवर्तन हो जाने पर परिषद द्वारा नाम में परिवर्तन नहीं किया जाएगा।”

25. हम पाते हैं कि रिट याचिका में आक्षेपित आदेश अधिनियम, 1921 के तहत बनाए गए विनियमों के अध्याय-III भाग-II(बी) के विनियम 7 के संदर्भ में है। उक्त विनियमन निम्नानुसार उद्धृत है:-

“विनियम -7 संशोधित स्वरूप

सचिव परिषद की ओर से सफल उम्मीदवारों को परिषद की परीक्षा में उत्तीर्ण होने का प्रमाण-पत्र विहित प्रपत्र में देगा और बाद में उसकी प्रविष्टियों में कोई शुद्धि करेगा, बशर्ते की प्रमाण-पत्र में किसी ऐसी गलत प्रविष्टि किसी अभिचारित लिपिकीय भूल या लोप के कारण या किसी ऐसी लिपिकीय भूल के कारण की गयी हो, जो असावधानी से परिषद के स्तर के या उस संस्था के जहाँ से अंतिम बार शिक्षा प्राप्त की हों स्तर पर अभिलेख में हो गयी हों।

यह शुद्धि सचिव द्वारा यूसी स्थिति में की जा सकेगी, जबकि अभ्यर्थी ने संबंधित परीक्षा के प्रमाणपत्र को परिषद द्वारा निर्गमन की तिथि से तीन वर्ष की लिपिकीय त्रुटि की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए संबंधित प्रधानाचार्य/ अग्रसारण अधिकारी के त्रुटि के संशोधन प्रथम पत्र प्रस्तुत कर दिया गया हो और उसकी प्रति पंजीकृत डाक से सचिव परिषद को भी प्रेषित की हो।

प्रतिबंध यह है कि अभ्यर्थी के अंकपत्र तथा प्रमाणपत्र में अभ्यर्थी के नाम, पिता के नाम अथवा माता के नाम में यदि कोई वर्तनी त्रुटि है, तो अभ्यर्थी द्वारा आवेदन करने पर उसे परिषद के संबंधित क्षेत्रीय कार्यालयों के क्षेत्रीय सचिवों द्वारा पुष्टित एवं प्रमाणित साक्ष्यों के आधार पर तत्काल शुद्ध कर दिया जाएगा।"

26. जहां तक विनियम 7 के तहत प्रदान की गई 3 वर्ष की सीमा का संबंध है, **आनंद सिंह बनाम यूपी बोर्ड ऑफ सेकेंडरी एजुकेशन और अन्य: 2014 (3) एडीजे 443 (डीबी)** में इस न्यायालय के खण्ड पीठ के निर्णय का संदर्भ दिया जा सकता है। खण्ड पीठ ने सुधार के संबंध में तीन साल की सीमा पर विचार करते हुए धारित किया कि देरी के आधार पर नाम को सही करने से इनकार करना अपोषणीय है क्योंकि दावा सद्भावनापूर्ण पाया गया था। हालांकि, उक्त निर्णय की सावधानीपूर्वक जांच से पता चलता है कि विनियम 7 के आलोक में सुधार की प्रकृति की इस न्यायालय द्वारा जांच की गई थी और यह उम्मीदवार के नाम या उसके माता-पिता के नाम में कुछ **अनजाने लिपिकीय त्रुटि या चूक** तक ही सीमित है। यह उस स्थिति से पूरी तरह अलग है जहां पूरी तरह से नया नाम अर्जित करने की मांग की जाती है और फिर उक्त नाम को शामिल करते हुए नए प्रमाणपत्र जारी करने का अनुरोध किया जाता है।

27. हम यह भी देख सकते हैं कि रिट याचिका में दो प्रार्थनाएँ थीं, एक बोर्ड के अधिकारी द्वारा पारित 24.12.2020 के आदेश को चुनौती देने वाली और दूसरी बोर्ड को परमादेश के प्रकृति का यह आदेश देने की, कि याचिकाकर्ता का नाम शाहनवाज़ से बदलकर मोहम्मद समीर राव कर दिया जाए, जो क्रमशः वर्ष 2013 और 2015 से संबंधित हाई स्कूल और इंटरमीडिएट के अभिलेख में है। किसी भी विनियम को कोई प्रारंभिक चुनौती नहीं दी गई थी, हालांकि, बाद में, 01.05.2023 को एक आदेश पारित किया गया, जिसमें न्यायालय मित्र को रिट याचिका में संशोधन करने की अनुमति दी गई। याचिका में संशोधन किया गया था या नहीं, यह स्पष्ट नहीं है क्योंकि अपील के साथ याचिका की एक प्रति है जिसमें किसी भी विनियमन को चुनौती नहीं दी गई है। अगर हम यह मान भी लें कि रिट याचिका में संशोधन किया गया था, तो भी विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा प्रावधान को पढ़कर विनियम 40(सी) को असंवैधानिक या मनमाना घोषित करना उचित नहीं था। जब

तक उत्तर प्रदेश इंटरमीडिएट शिक्षा अधिनियम, 1921 के अंतर्गत बनाए गए विनियम, संविधि पुस्तिका में विद्यमान हैं, तब तक उन्हें उसी रूप में पढ़ा जाएगा, जैसा कि वे विद्यमान हैं, तथा बोर्ड विनियम की प्रयोज्यता पर आधारित किसी चुनौती की जांच करते समय उन्हें नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

28. जहां तक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा प्रयुक्त किसी प्रावधान को कम करने के सिद्धांत का संबंध है, उच्चतम न्यायालय ने **सुब्रमण्यम स्वामी एवं अन्य बनाम राजू, किशोर न्याय बोर्ड के सदस्य के माध्यम से एवं अन्य: (2014) 8 एससीसी 390** के मामले में निम्नानुसार धारित किया:-

"किसी संविधि के प्रावधानों को तब कम करके नहीं पढ़ा जा सकता जब तक उसका अर्थ स्पष्ट और असंदिग्ध हो और विधायी आशय स्पष्ट हो। न्यायालयों को सबसे पहले कानून को अक्षरशः पढ़ना चाहिए। यदि इस तरह पढ़ने और समझने पर असंवैधानिकता का दोष लगता है, तो न्यायालयों को यह पता लगाना चाहिए कि क्या कोई अनजाने में विधायी चूक हुई है। यदि ऐसा आशय बिना किसी विधायी प्रक्रिया के, जो स्पष्ट रूप से एक विधायी प्रक्रिया होगी, उचित रूप से निहित किया जा सकता है, तो अधिनियम को असंवैधानिकता से बचाने के लिए उसे कम करके पढ़ा जा सकता है।"

29. **डी.टी.सी. बनाम मजदूर कांग्रेस, 1991 सप् (1) एससीसी 600** में, उच्चतम न्यायालय ने संक्षेप में स्थिति को इस प्रकार बताया:

"255. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि कानून को कम करके आंकने या पुनर्रचना करने के सिद्धांत को सीमित परिस्थितियों में ही लागू किया जा सकता है। इसका प्रयोग मूलतः, सबसे पहले, किसी कानून को उसकी असंवैधानिकता के कारण रद्द होने से बचाने के लिए किया जाता है। यह इस सिद्धांत का विस्तार है कि जब दो व्याख्याएँ संभव हों - एक उसे संवैधानिक बनाती हो और दूसरी उसे असंवैधानिक, तो पहली व्याख्या को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। असंवैधानिकता या तो कानून बनाने में विधायिका की अक्षमता से या संविधान के किसी प्रावधान के उल्लंघन से उत्पन्न हो सकती है। दूसरी स्थिति जिसमें इसकी आवश्यकता होती है, वह है जहाँ कानून के प्रावधान अस्पष्ट और संदिग्ध हों और कानून के उद्देश्य, उस संदर्भ जिसमें प्रावधान निहित है और जिस उद्देश्य के लिए इसे बनाया गया है, उससे विधायिका के इरादों का अनुमान लगाना संभव न हो। हालाँकि, जब प्रावधान एक निश्चित और स्पष्ट भाषा में लिखा गया हो और उसका उद्देश्य स्पष्ट हो, तो उसे सुधारना या संशोधित करना स्वीकार्य नहीं है, भले ही ऐसा पुनर्रचना उचित तर्क और विवेक के अनुरूप हो। ऐसी परिस्थितियों में, न्यायालय के लिए कानून में बदलाव करना संभव नहीं है। उसका एकमात्र कर्तव्य उसे निरस्त करना और यदि वह चाहे तो उसे संशोधित करने का काम विधायिका पर छोड़ देना है। इसके अलावा, यदि न्यायालयों द्वारा कानून के पुनर्निर्माण से उसका विरूपण होता है, तो उस प्रक्रिया से पूरी तरह बचना चाहिए। एक और स्थिति जहाँ इस सिद्धांत को कभी भी लागू नहीं किया जा सकता, वह है जहाँ कानून में व्यापक परिवर्धन और विलोपन की आवश्यकता होती

है। न केवल ऐसा करना न्यायालय के कर्तव्य का हिस्सा नहीं है, बल्कि ऐसा करना उसके अधिकार क्षेत्र से भी बाहर है।”

30. इसके अलावा, इस मामले में अधिकार क्षेत्र का मुद्दा भी उठता है। मुख्य न्यायाधीश द्वारा 01.08.2016 को पारित एक प्रशासनिक आदेश में निम्नलिखित प्रावधान हैं:-

“ऐसे सभी मामले जहां केंद्रीय या राज्य कानून की शक्तियों को चुनौती दी गई है, खण्ड पीठ द्वारा संज्ञान योग्य होंगे।

चीफ जस्टिस

01.08.2016”

31. विद्वान एकल न्यायाधीश ने विनियम 40(सी) को मनमाना, असंवैधानिक और भारत के संविधान द्वारा गारंटीकृत मौलिक अधिकार का उल्लंघन करने वाला धारित किया है। इसके अलावा, कई अन्य निर्देश भी जारी किए गए हैं जैसे आधार कार्ड, राशन कार्ड, ड्राइविंग लाइसेंस, पासपोर्ट, वोटर आईडी कार्ड आदि जैसे पहचान के सार्वजनिक दस्तावेजों को सक्षम प्राधिकारियों को सौंपना, साथ ही उन्हें नाम परिवर्तन दर्ज करने, कानून के अनुसार पुराने पहचान दस्तावेजों का निपटान या विनाश करने और परिवर्तित नाम के अनुरूप नए दस्तावेज जारी करने का निर्देश देना। विद्वान एकल न्यायाधीश ने भारत सरकार के गृह मंत्रालय के सचिव और उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ के मुख्य सचिव को उचित कानूनी और प्रशासनिक ढाँचा बनाने का निर्देश भी जारी किया है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि दोनों सरकारें पहचान संबंधी दस्तावेज बनाने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मिलकर काम करें और उनमें मौजूद विसंगतियों को दूर करें। वास्तव में, ये नीतिगत मामले हैं जो विशेष रूप से विधायी/कार्यपालिका के अधिकार क्षेत्र में आते हैं।

32. विशिष्ट प्रशासनिक आदेश के दृष्टिगत, किसी विनियम को मनमाना, असंवैधानिक और/या संविधान द्वारा गारंटीकृत मौलिक अधिकार का उल्लंघन करने वाला मानने या उसे रद्द करने का अधिकार केवल उचित मामलों में खण्ड पीठ के पास ही निहित है।

33. अन्यथा भी, जैसा कि मामले के तथ्यात्मक आधार पर पहले भी देखा गया है, रिट याचिकाकर्ता के पास गुण-दोष के आधार पर कोई मामला नहीं था।

34. उपरोक्त सभी कारणों से, हम इस बात से संतुष्ट हैं कि विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय को बरकरार नहीं रखा जा सकता।

35. विशेष अपील स्वीकार की जाती है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा रिट संख्या 3671 वर्ष 2022 (मो. समीर राव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं 2 अन्य) में पारित दिनांक 25.05.2023 के निर्णय एवं आदेश को अपास्त किया जाता है। रिट याचिका खारिज की जाती है।

(2025) 2 ILRA 648

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 04.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अताउ रहमान मसूदी,

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी

रिट - ए संख्या 3770 वर्ष 2023, रिट - ए संख्या 3769 वर्ष 2023 से संबंधित

जय प्रकाश चंद एवं अन्य

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश एवं अन्य राज्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता : अपूर्व तिवारी, आदित्य तिवारी

प्रतिवादियों के अधिवक्ता : मुख्य स्थाई अधिवक्ता

(ए) सेवा कानून - सरकारी रोजगार - विलय - वरिष्ठता और पदोन्नति - मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों (अधिकारियों, निरीक्षकों और अन्य कर्मचारियों के सेवा संवर्ग) की वाणिज्य कर विभाग के संबंधित संवर्गों में वैधता को चुनौती - उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन और अपील) नियमावली, 1999 - नियम 7 - यू.पी. सरकारी सेवक वरिष्ठता नियमावली, 1991 - खण्ड 4(एच) - 'मौलिक नियुक्ति' - उत्तर प्रदेश माल और सेवा कर अधिनियम, 2017 - धारा 174, उत्तर प्रदेश विलय नियमावली, 2022 - नियम 2, नियम 3(3), नियम 3(4), नियम 4(4), नियम 4(5), नियम 4(7), भारत का संविधान - अनुच्छेद 311 - पदोन्नति की संभावना में परिवर्तन संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं करता है - सरकारी नीतिगत निर्णयों का न्यायिक पुनर्विलोकन सीमित है और इसमें तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि नीति मनमानी, तर्कहीन या असंवैधानिक न हो यह सरकार का नीतिगत निर्णय है और इसे तब तक चुनौती नहीं दी जा सकती जब तक कि यह वैधानिक या संवैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन न करता हो - वरिष्ठता और पदोन्नति विलय किए गए विभाग के नए नियमों के अधीन हैं।

(पैरा - 47 से 56)

याचिकाकर्ताओं को मूल रूप से मनोरंजन कर निरीक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था - बाद में उच्च पदों पर पदोन्नत किया गया - यू.पी. माल और सेवा कर अधिनियम ने यू.पी. मनोरंजन और सट्टा कर अधिनियम को निरस्त कर दिया - मनोरंजन कर विभाग को समाप्त कर दिया गया - राज्य सरकार द्वारा नीतिगत निर्णय के माध्यम से कर्मचारियों का वाणिज्यिक कर विभाग में विलय किया गया - याचिकाकर्ताओं को विलय नियमों के तहत वाणिज्यिक कर विभाग के अपने-अपने संवर्गों में वरिष्ठता सूची में सबसे नीचे रखा गया - नियुक्ति को चुनौती दी गई - आधार - मनमाना, संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन - उनकी पदोन्नति की संभावनाएं प्रभावित - राज्य सरकार ने तर्क दिया - केवल मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों का वाणिज्यिक कर में विलय किया गया, मनोरंजन कर विभाग के पद का नहीं - वरिष्ठता का निर्धारण वाणिज्य कर विभाग के नए संवर्ग नियमों के तहत किया जाना था। (पैरा - 33 से 48)

धारित: - विलय नियम, 2022 को वैध माना जाता है और ये संविधान के अनुच्छेद 14, 16 और 21 का उल्लंघन नहीं करते। याचिकाकर्ताओं को विलय नियम, 2022 में शामिल करना नीतिगत निर्णय का एक हिस्सा है और याचिकाकर्ताओं को राज्य सरकार द्वारा लिए गए नीतिगत निर्णय पर सवाल उठाने का कोई अधिकार नहीं है। याचिकाकर्ताओं की मौलिक नियुक्ति और पदोन्नति पर 24.04.2018 के बजाय 21.07.2022 से विचार किया जाएगा। (पैरा 45,48,49,56)

याचिका खारिज। (ई-7)

उद्धृत मामलों की सूची:

1. बी. मनमाड रेड्डी एवं अन्य बनाम चंद्र प्रकाश रेड्डी एवं अन्य, (2010) 3 एससीसी 314
2. एस. शिवगुरु बनाम तमिलनाडु राज्य एवं अन्य एवं अन्य संबंधित अपीलें, (2013) 7 एससीसी 335
3. ए. सत्यनारायण और अन्य बनाम एस. पुरुषोत्तम एवं अन्य, (2008) 5 एससीसी 416
4. बिहार राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य बनाम धर्मदेव दास, 2024 (2) एसएलजे 498
5. उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम अशोक कुमार श्रीवास्तव एवं अन्य, (2014) 14 एससीसी 720
6. इंडियन एयरलाइंस ऑफिसर्स एसोसिएशन बनाम इंडियन एयरलाइंस लिमिटेड एवं अन्य एवं अन्य संबंधित अपीलें, (2007) 10 एससीसी 684
7. मैसूर राज्य एवं अन्य बनाम जी.एन. पुरोहित एवं अन्य, एमएएनयू/एससी/0459/1967
8. रामचंद्र शंकर बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य, (1974) 1 एससीसी 317
9. एयर कमोडोर नवीन जैन बनाम भारत संघ एवं अन्य, 2019 (10) एससीसी 34
10. उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य बनाम प्रधानाचार्य, अभय नंदन इंटर कॉलेज व अन्य, (2021) 15 एससीसी

11. उर्वरक निगम कामगार यूनियन (पंजीकृत), सिंदरी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (1981) 1 एससीसी 568
12. फिल्म समारोह निदेशालय एवं अन्य बनाम गौरव अश्विन जैन एवं अन्य, (2007) 4 एससीसी 737
13. इंडियन रेलवे कैटरिंग एंड टूरिज्म कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम इंडियन रेलवे मेजर एंड माइनर कैटरर्स एसोसिएशन और अन्य, (2011) 12 एससीसी 792
14. जैकब पुलियेल बनाम भारत संघ और अन्य, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 533

(माननीय न्यायमूर्ति अताउ रहमान मसूदी द्वारा प्रदत्त)

(1) याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता श्री अपूर्व तिवारी और राज्य-प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री आकाश सिन्हा को दोनों रिट याचिकाओं में सुना गया।

(2) उपर्युक्त दोनों रिट याचिकाओं में, याचिकाकर्ताओं ने **मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारी (अधिकारियों, निरीक्षकों एवं अन्य कर्मचारियों के सेवा संवर्ग) को वाणिज्य कर विभाग के संबंधित संवर्गों में सम्मिलित करने हेतु उत्तर प्रदेश संविलियन नियमावली, 2022** [संक्षेप में, 'नियमावली, 2022' कहा जाएगा] को भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 16 और 21 के विरुद्ध घोषित करने का अनुरोध किया है। इसके अतिरिक्त, मनोरंजन कर अधिकारी के पद पर कार्यरत रिट-ए संख्या 3770 वर्ष 2023 के याचिकाकर्ताओं ने सहायक आयुक्त के पद पर पदोन्नति का दावा किया है, जबकि सहायक आयुक्त के पद पर कार्यरत रिट-ए संख्या 3769 वर्ष 2023 के याचिकाकर्ताओं ने उप आयुक्त के पद पर पदोन्नति का दावा किया है। अतः, इन पर एक साथ विचार किया जा रहा है और एक ही आदेश द्वारा निर्णय दिया जा रहा है।

(3) उपरोक्त दो रिट याचिकाओं में उठाई गई शिकायत यह है कि उत्तर प्रदेश माल और सेवा कर अधिनियम, 2017 के लागू होने पर, मनोरंजन और सट्टा कर विभाग में याचिकाकर्ताओं को जो सेवा लाभ प्राप्त हुए थे, वे विलय होने पर माल और सेवा कर विभाग में प्रदान किए जाने योग्य हैं और उन्हें माल और सेवा कर विभाग में पदोन्नति मिलने पर अगले उच्च पद पर पदोन्नत किया जाना चाहिए।

(4) संक्षेप में बताए गए तथ्य इस प्रकार हैं:-

(5) सभी याचिकाकर्ता पहले उत्तर प्रदेश मनोरंजन और सट्टा कर अधिनियम, 1979 [संक्षेप में, इसे '**मनोरंजन कर अधिनियम**' कहा गया है] के तहत शासित थे और वे 1996-1997 की अवधि के दौरान उक्त विभाग में अपनी सेवाओं में शामिल हुए और 2017 तक, उन्हें अगले उच्च स्तर के पदों पर पदोन्नत किया गया।

(6) दिनांक 01.07.2017 को, उत्तर प्रदेश माल एवं सेवा कर अधिनियम, 2017 [जिसे संक्षेप में 'जीएसटी अधिनियम' कहा जाएगा] प्रख्यापित होकर तत्काल प्रभाव से लागू हो गया। जीएसटी अधिनियम की धारा 174 के प्रावधानों के कारण, मनोरंजन कर अधिनियम सहित कुछ अन्य अधिनियम निरस्त हो गए थे, अतः मनोरंजन कर विभाग के अधिकारियों/कर्मचारियों को जीएसटी विभाग में संगत पदों पर पुनर्गठित एवं संविलियन किए जाने की आवश्यकता उत्पन्न हुई।

(7) मनोरंजन एवं सट्टा कर विभाग के कर्मचारियों की सेवाओं की सुरक्षा के लिए राज्य सरकार ने नीतिगत निर्णय लिया है कि मनोरंजन एवं सट्टा कर विभाग के कर्मचारियों को वाणिज्यिक कर विभाग में उपलब्ध समतुल्य वेतन मैट्रिक्स के पदों पर संविलियन किया जाए।

(8) काफी विचार-विमर्श के बाद, राज्य सरकार द्वारा, अपर आयुक्त, मनोरंजन एवं सट्टा कर विभाग की अध्यक्षता में गठित समिति की दिनांक 23.05.2017 की अनुशंसाओं पर कार्यवाही करते हुए, दिनांक 24.04.2018 को अधिसूचना जारी की गयी, जिसके तहत मनोरंजन एवं सट्टा कर विभाग के कर्मचारियों को वाणिज्य कर विभाग में उपलब्ध समकक्ष पदों में संविलियन कर दिया गया तथा उक्त विभाग को समाप्त करते हुए मनोरंजन एवं सट्टा कर आयुक्त के समस्त अधिकार एवं कर्तव्य आयुक्त, वाणिज्य कर में निहित कर दिये गये।

(9) इसके बाद, 12.07.2018, 31.12.2018, 18.12.2019, 22.10.2019 और 22.09.2020 को राज्य सरकार ने निर्देश दिया कि जब तक सभी कर्मचारियों के संबंध में सेवा नियमों का समामेलन नहीं हो जाता, मनोरंजन कर विभाग में मौजूदा रिक्तियों के विरुद्ध पदोन्नति मनोरंजन और सट्टा कर विभाग के मौजूदा सेवा नियमों के अनुसार मनोरंजन कर विभाग के अधिकारियों में से की जाएगी।

(10) राज्य सरकार ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के परंतुक के तहत शक्ति के कथित प्रयोग में, इसके बाद "मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारी (अधिकारियों, निरीक्षकों और अन्य कर्मचारियों के सेवा संवर्ग) वाणिज्य कर विभाग के संबंधित संवर्गों में, उत्तर प्रदेश विलय नियमावली, 2022" तैयार किया है, जिसे 21.07.2022 से प्रभावी किया गया है।

(11) याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि आक्षेपित नियमावली, 2022 अन्यायपूर्ण, मनमाना और असंवैधानिक है क्योंकि ये पूर्ववर्ती मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों की पहचान उनके मूल, अर्थात् जन्मचिह्न के आधार पर करके बिना किसी उचित संबंध के उप-वर्गीकरण करती है। आक्षेपित नियमावली, 2022 का नियम 1(3) इसकी प्रयोज्यता को केवल पूर्ववर्ती मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों तक ही सीमित करता है। कर्मचारियों के जन्मचिह्न के आधार पर ऐसी पहचान पूरी तरह से अन्यायपूर्ण और अस्वीकार्य है जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने **बी. मनमाड रेड्डी और अन्य बनाम चंद्र प्रकाश रेड्डी और अन्य**

[(2010) 3 एससीसी 314] और एस. शिवगुरु बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य एवं अन्य संबंधित अपील [(2013) 7 एससीसी 335] के मामलों में धारित किया है।

(12) यह भी प्रस्तुत किया गया है कि आक्षेपित नियमावली, 2022 का नियम 3(3) पूर्ववर्ती मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों के लिए 'मूल नियुक्ति तिथि' की एक नई परिभाषा प्रदान करता है। इसमें कहा गया है कि 'मूल नियुक्ति तिथि' का तात्पर्य दिनांक 24.04.2018 की अधिसूचना के अनुसार पद पर नियुक्ति की तिथि से है।

(13) उपरोक्त परिभाषा उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक वरिष्ठता नियमावली, 1991 के अनुसार मौलिक नियुक्ति की परिभाषा के विपरीत है। उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक वरिष्ठता नियमावली, 1991 के खंड 4(एच) में 'मौलिक नियुक्ति' को उस सेवा से संबंधित सेवा नियमावली के अनुसार चयन के पश्चात सेवा संवर्ग में किसी पद पर की गई नियुक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है, जो तदर्थ नियुक्ति नहीं है। यह प्रस्तुत किया गया है कि आक्षेपित नियमावली, 2022 बनाते समय, मनोरंजन कर विभाग में 20-25 वर्ष से अधिक सेवा प्रदान कर चुके याचिकाकर्ताओं को 24.04.2018 तक वाणिज्य कर विभाग में सीधे नियुक्त माना जा रहा है।

(14) यह प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा अपने मूल संवर्ग में की गई पिछली सेवा को न गिनने का निर्णय आक्षेपित नियमावली, 2022 द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से कोई उचित संबंध नहीं है, और इसलिए, विलय नियमावली पूरी तरह से मनमाना और असंवैधानिक है।

(15) यह भी प्रस्तुत किया गया है कि मनोरंजन कर विभाग में जिला मनोरंजन कर अधिकारी और वाणिज्यिक कर विभाग में वाणिज्यिक कर अधिकारी के पदों के बीच समानता स्थापित करते समय, प्रतिवादियों ने दोनों संवर्गों की संरचना में मूलभूत अंतर पर विचार न करके गलती की है। वाणिज्यिक कर विभाग में, वाणिज्यिक कर अधिकारी प्रवेश स्तर का पद है, जबकि मनोरंजन कर विभाग में, निरीक्षक प्रवेश स्तर का पद है। एक निरीक्षक 7 वर्ष की अर्हक सेवा पूरी करने के बाद जिला मनोरंजन कर अधिकारी के पद पर पदोन्नत होने के लिए पात्र होता है, जबकि वाणिज्यिक कर अधिकारी को 7 वर्ष की अर्हक सेवा पूरी करने पर सहायक आयुक्त के पद पर पदोन्नत किया जा सकता है। अतः दोनों पदों के बीच की गई समतुल्यता पूरी तरह से अनुचित और मनमाना है। निम्नलिखित तालिका दोनों विभागों में पदोन्नति/चयन के मानदंड और पदोन्नति हेतु अर्हक सेवा को स्पष्ट करती है:-

क्रम संख्या	संरचना	मानदंड पदोन्नति / चयन के लिए	पदोन्नति के लिए योग्यता सेवा

		मनोरंजन कर विभाग	वाणिज्यिक कर विभाग	मनोरंजन कर विभाग	वाणिज्यिक कर विभाग
1.	मनोरंजन कर निरीक्षक	75% सीधी भर्ती 25% पदोन्नति लिपिक संवर्ग से	कोई निरीक्षक नहीं	75% सीधी भर्ती 25%- 5 वर्ष	कोई निरीक्षक नहीं
2.	मनोरंजन कर अधिकारी/ वाणिज्यिक कर अधिकारी	100% पदोन्नति निरीक्षक से	50% सीधी भर्ती 50% पदोन्नति लिपिक संवर्ग से	7 वर्ष	50% सीधी भर्ती 50% - 5 वर्ष
3.	सहायक आयुक्त	100% पदोन्नति अधिकारी से	50% सीधी भर्ती 50% पदोन्नति लिपिक संवर्ग से	3 वर्ष	सीधी भर्ती 50% - 7 वर्ष
4.	उप-आयुक्त	100 पदोन्नति सहायक आयुक्त से	100 पदोन्नति सहायक आयुक्त से	2 वर्ष	7 वर्ष
5.	संयुक्त आयुक्त	100% पदोन्नति उप- आयुक्त से	100% पदोन्नति उप-आयुक्त से	2 वर्ष	5 वर्ष

(16) याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि यदि विलय नियमावली, 2022 को लागू रहने दिया जाता है तो लगभग सभी याचिकाकर्ता पदोन्नति के लिए विचार किए जाने के पात्र बनने के लिए अर्हक सेवा प्राप्त करने में सक्षम होने से पहले ही सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त कर लेंगे, जबकि उनके पूर्ववर्ती सेवा नियम, 1992 के अनुसार, जो सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए अस्तित्व में हैं, वे सभी पदोन्नति के लिए विचार किए जाने के पात्र हैं।

(17) पूर्ववर्ती मनोरंजन कर विभाग के सभी सहायक आयुक्त अपने स्वयं के नियम, 1992 के अनुसार 01.07.2021 से 01.07.2023 के बीच पदोन्नति के लिए विचार किए जाने के योग्य हो गए, जबकि

यदि आक्षेपित नियमावली, 2022 लागू होती हैं तो सभी याचिकाकर्ता और पूर्व मनोरंजन कर विभाग के अन्य सहायक आयुक्त, वाणिज्य कर विभाग के संबंधित सेवा नियमों में निर्धारित 7 वर्ष की अर्हक सेवा पूरी करने से पहले ही सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त कर लेंगे। पूर्ववर्ती मनोरंजन विभाग में रिट-ए संख्या 3770 वर्ष 2023 के सभी मनोरंजन कर अधिकारियों की स्थिति लगभग समान है।

(18) यह भी प्रस्तुत किया गया है कि राज्य सरकार ने वाणिज्यिक कर विभाग के संवर्ग पुनर्गठन के संबंध में भारतीय प्रबंधन संस्थान से विशेषज्ञ की राय मांगी थी। हालाँकि, उसने भारतीय प्रबंधन संस्थान, लखनऊ की राय पर विचार किए बिना ही आक्षेपित नियमावली, 2022 को अधिसूचित कर दिया।

(19) उनकी आगे की प्रस्तुति यह है कि आक्षेपित नियमावली, 2022 के नियम 4(3)(2) के तहत याचिकाकर्ताओं को उनकी भर्ती के वर्ष में सबसे कनिष्ठ माना गया है, जिससे याचिकाकर्ताओं को अगले उच्च पद पर पदोन्नति के लिए किसी भी निष्पक्ष और उचित विचार से हमेशा के लिए वंचित कर दिया गया है, जिसका अर्थ है कि प्रत्येक चयन वर्ष में, मनोरंजन कर विभाग के विलय किए गए कर्मचारी को वाणिज्य कर विभाग के उसी चयन वर्ष में नियुक्त कर्मचारियों से कनिष्ठ माना जाएगा। पूर्ववर्ती मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों को सबसे निचले स्थान पर रखना भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 एवं 16 का पूर्णतः उल्लंघन है।

(20) याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता की आगे की प्रस्तुति यह है कि नियमावली, 1991 के नियम 5 के प्रावधानों के अनुसार, एक सरकारी कर्मचारी अपनी प्रारंभिक नियुक्ति से ही अपनी वरिष्ठता की गणना करने का हकदार है और बाद के चयन के परिणामस्वरूप नियुक्त सरकारी कर्मचारी, पहले के चयन के परिणामस्वरूप नियुक्त व्यक्तियों से कनिष्ठ होगा। हालाँकि, आक्षेपित नियमावली के नियम 4 (3) (2) के प्रावधानों के अनुसार, मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारी उसी चयन वर्ष में नियुक्त वाणिज्य कर विभाग के कर्मचारियों से अनिवार्य रूप से कनिष्ठ होंगे, चाहे उनकी नियुक्ति की तिथि कुछ भी हो।

(21) यह भी प्रस्तुत किया गया है कि भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने विभिन्न निर्णयों में बार-बार यह धारित किया है कि यद्यपि पदोन्नति का मात्र अवसर मौलिक अधिकार नहीं है, परंतु पदोन्नति के लिए विचार किए जाने का अधिकार मौलिक अधिकार है। ऐसी कोई भी नीति जिसके द्वारा किसी श्रेणी के कर्मचारियों के लिए भविष्य में पदोन्नति के सभी अवसर समाप्त हो जाएँ, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 16 से प्रभावित होगी। इसके लिए **ए. सत्यनारायण एवं अन्य बनाम एस. पुरुषोत्तम एवं अन्य [(2008) 5 एससीसी 416]** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया गया है।

(22) प्रति-शपथपत्र के पैराग्राफ 16 में, प्रतिवादियों ने दावा किया है कि केवल मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों का ही वाणिज्य कर विभाग में विलय किया गया है, मनोरंजन कर विभाग के पदों का नहीं। इसके जवाब में, याचिकाकर्ताओं ने अपने प्रत्युत्तर शपथपत्र के पैराग्राफ 11 में दावा किया है कि दिनांक

05.05.2017 की बैठक के कार्यवृत्त से स्पष्ट है कि मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों का विलय उनके वर्तमान पदों के साथ किया गया था और वाणिज्यिक कर विभाग में कोई अलग पद सृजित नहीं किया गया था। इसके बाद, प्रतिवादियों ने याचिकाकर्ताओं के प्रत्युत्तर शपथपत्र के जवाब में एक और संक्षिप्त प्रति-शपथपत्र दायर किया है। हालाँकि, प्रतिवादियों ने याचिकाकर्ताओं के प्रत्युत्तर शपथपत्र के पैराग्राफ 11 की विषय-वस्तु का खंडन नहीं किया है। यह विधि की एक स्थापित प्रस्थापना है कि किसी अभिवचन के विशिष्ट खंडन के अभाव में, उसे स्वीकार किया गया माना जाता है।

(23) याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि ऐसा वर्गीकरण पूरी तरह से निराधार है और इससे पूर्ववर्ती मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों की पदोन्नति के संबंध में उनके हितों को नुकसान पहुँचाने के अलावा कोई उद्देश्य प्राप्त नहीं होता। इसके अतिरिक्त, आक्षेपित नियमावली, 2022 असंवैधानिक हैं क्योंकि वह मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों की वरिष्ठता निर्धारण के लिए ऐसा सिद्धांत प्रदान करती हैं जो उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक वरिष्ठता नियमावली, 1991 के अनुसार उत्तर प्रदेश राज्य के सभी सरकारी कर्मचारियों पर लागू सामान्य सिद्धांतों के विपरीत हैं।

(24) दूसरी ओर, प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि दिनांक 01.07.2017 को माल एवं सेवा कर अधिनियम, 2017 के लागू होने के बाद, राज्य सरकार ने दिनांक 24.04.2018 को सरकारी आदेश जारी किया, जिसके तहत मनोरंजन और सट्टा कर विभाग को समाप्त कर दिया गया और विभाग के सभी अधिकार और कर्तव्य आयुक्त, वाणिज्यिक कर में निहित कर दिए गए।

(25) विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया है कि शासनादेश दिनांक 24.04.2018 के अनुसरण में, विशेष सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई थी जिसमें कार्मिक विभाग, वित्त, कानून और न्याय के अधिकारियों को पूर्ववर्ती मनोरंजन और सट्टा कर विभाग के कर्मचारियों से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर चर्चा करने के लिए सदस्य के रूप में नामित किया गया था। उक्त समिति में पूर्ववर्ती मनोरंजन और सट्टा कर विभाग और वाणिज्य कर विभाग के अधिकारियों के प्रतिनिधि भी नामित किए गए थे। समिति ने दोनों विभागों के पदाधिकारियों द्वारा दिए गए अभ्यावेदन पर उचित परामर्श और विचार करने के बाद 19.07.2019 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। समिति की दिनांक 19.07.2019 की सिफारिशों के अनुसरण में, याचिकाकर्ताओं को दिनांक 02.07.2019 के आदेश के अनुसार वाणिज्य कर विभाग में तैनाती दी गई। बाद में, उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग ने 26.04.2022 को विलय नियमावली के प्रारूप को अनुमोदित किया और अधिसूचना दिनांक 21.07.2022 के माध्यम से विलय नियमावली को तत्काल प्रभाव से अधिसूचित किया गया।

(26) अपनी प्रस्तुतियों को विस्तार से बताते हुए, विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने हमारा ध्यान विलय नियमावली की ओर आकर्षित किया और कहा कि विलय नियमावली, 2022 का नियम 2 विशेष रूप से अधिभावी प्रभाव से संबंधित है। नियम 3(2) स्पष्ट रूप से निर्धारित करता है कि विलय करने वाले कर्मचारियों

को नियंत्रित करने वाले सेवा नियमों का तात्पर्य वाणिज्यिक कर विभाग के संबंधित सेवा संवर्ग के पदों को नियंत्रित करने वाले सेवा नियमों से है। नियम 3(3) 'मूल नियुक्ति' की तिथि को अधिसूचना दिनांक 24.04.2018 को धारित पद पर नियुक्ति की तिथि के रूप में परिभाषित करता है।

(27) विलयन नियमावली, 2022 के नियम 3(4) में 'संवर्ग' को परिभाषित किया गया है, जिसका आशय इन नियमों के प्रारम्भ होने के समय वाणिज्य कर विभाग एवं मनोरंजन कर विभाग के सम्बन्धित सेवा संवर्ग में उपलब्ध पदों के समूह से है, किन्तु निरीक्षक संवर्ग से आशय उन पदों के समूह से है, जिनका वाणिज्य कर विभाग में अधिसूचना दिनांक 09 मार्च, 2019 द्वारा मृत संवर्ग के रूप में विलय कर दिया गया है।

(28) विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि चूंकि मनोरंजन और सट्टेबाजी कर विभाग के कर्मचारी पहली बार 24.04.2018 की विलय अधिसूचना द्वारा वाणिज्यिक कर विभाग के समकक्ष कैंडर में नियुक्त हुए थे और इस पहलू पर कानून ने स्पष्ट किया है कि वरिष्ठता केवल उस तारीख से दी जा सकती है जब कोई कर्मचारी कैंडर में नियुक्त होता है। बिहार राज्य विद्युत बोर्ड और अन्य बनाम धरमदेव दास [2024 (2) एसएलजे 498] और उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम अशोक कुमार श्रीवास्तव और अन्य [(2014) 14 एससीसी 720] के मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस स्थिति को स्पष्ट किया गया है। इस प्रकार प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता का कहना है कि प्रशासनिक आवश्यकता और याचिकाकर्ताओं की सेवाओं की सुरक्षा के उद्देश्य को देखते हुए, विलय अधिसूचना की तारीख को 'मूल नियुक्ति तिथि' के रूप में लिया गया था।

(29) विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया है कि नियम 4(4) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि विलय नियमावली, 2022 के लागू होने के बाद संबंधित पद की पदोन्नति और अन्य सेवा मामलों का निर्णय वाणिज्यिक कर विभाग के सेवा संवर्ग के संबंधित नियमों के तहत किया जाएगा। आज की स्थिति में याचिकाकर्ताओं को नियंत्रित करने वाली नियमावली व्यापार कर नियमावली, 1983 हैं क्योंकि विलय नियमावली, 2022 याचिकाकर्ताओं की सेवा की रक्षा के लिए एकमुश्त उपाय है न कि उनके लिए विशेष सेवा नियम और विलय नियमावली, 2022 का नियम 4(5) राज्य की इस प्रस्तुति को स्पष्ट करता है कि विलय किए गए कर्मचारियों की सेवाएं संवर्ग को नियंत्रित करने वाली संबंधित सेवा नियमावली द्वारा शासित होंगी। विलय नियमावली, 2022 का नियम 4(7) याचिकाकर्ताओं की सेवाओं की निरंतरता को बनाए रखने और उसकी सुरक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आम तौर पर, एक कर्मचारी दो तरीकों से सेवा या सेवा के संवर्ग में आता है - (1) सीधी नियुक्ति और (2) पदोन्नति। लेकिन प्रशासनिक आवश्यकता के कारण याचिकाकर्ताओं की सेवाओं की सुरक्षा के लिए उनकी सेवाओं को वाणिज्यिक कर विभाग के मौजूदा कैंडर में विलय कर दिया गया था। इसलिए सेवा की निरंतरता बनाए रखने के लिए उनके विलय की तिथि को वाणिज्यिक कर विभाग के संबंधित सेवा कैंडर में नियुक्ति माना जा रहा है। इसके अलावा, सेवा की निरंतरता को पूरी तरह से बनाए रखा गया है और याचिकाकर्ताओं की नियुक्तियों को नई नियुक्तियों के रूप में नहीं माना गया है। इसके बाद, दिनांक 11.01.2023 के आदेश के तहत, वाणिज्यिक कर विभाग में विलय नियमों के अनुसार जिला मनोरंजन

कर अधिकारी (डीईटीओ) की वरिष्ठता निर्धारित करने के लिए एक समिति का गठन किया गया था। यह आगे कहा गया है कि दिनांक 18.08.2023 की वरिष्ठता सूची को अंतिम रूप दिया गया है जिसमें याचिकाकर्ताओं को विलय नियमावली, 2022 के नियम 3(3) के प्रावधानों के अनुसार उनकी वरिष्ठता के अनुसार रखा गया है।

(30) प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया है कि मनोरंजन और सट्टा कर विभाग के कर्मचारियों की सेवाओं की रक्षा के लिए विलय नियमावली, 2022 तैयार की गई थी।

(31) उन्होंने आगे प्रस्तुत किया है कि चूँकि यह सरकार का नीतिगत निर्णय है और उनकी सेवाओं की सुरक्षा के लिए, आक्षेपित विलय नियमावली, 2022 बनायी गई हैं। इस प्रकार, याचिकाकर्ताओं को कोई नुकसान नहीं पहुँचा है और दोनों रिट याचिकाएँ खारिज किए जाने योग्य हैं।

(32) हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत प्रस्तुतियों पर विचार किया है तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया है।

(33) प्रारंभ में, रिट-ए संख्या 3770 वर्ष 2023 के याचिकाकर्ता जो वर्ष 1997 में मनोरंजन एवं सट्टा कर विभाग में मनोरंजन कर निरीक्षक के पद पर नियुक्त हुए थे, वे उत्तर प्रदेश मनोरंजन एवं सट्टा कर अधिनियम, 1979 के अधीन शासित थे तथा समय बीतने के साथ, वर्ष 2016 में उन्हें जिला मनोरंजन कर अधिकारी के पद पर पदोन्नत किया गया। याचिकाकर्ताओं का विवरण नीचे दिया गया है:-

क्रम संख्या	याचिकाकर्ता का नाम	विभाग में शामिल होने की तिथि	मनोरंजन कर अधिकारी के पद पर पदोन्नति की तिथि	सेवानिवृत्ति की तिथि
1.	जय प्रकाश चंद	24.07.1997	25.10.2016	31.01.2025
2.	पीयूष कुमार यादव	01.08.1997	25.10.2016	30.1.2029

3.	कल्पना कन्नौजिया	04.07.1997	02.11.2016	30.04.2027

(34) रिट ए संख्या 3769 वर्ष 2023 के याचिकाकर्ताओं का विवरण नीचे दिया गया है:-

क्रम संख्या	याचिकाकर्ता का नाम	विभाग में शामिल होने की तिथि	मनोरंजन कर अधिकारी के पद पर पदोन्नति की तिथि	सहायक आयुक्त के पद पर पदोन्नति की तिथि	सेवानिवृत्ति की तिथि
1.	रोशन लाल	22.11.1996	09.04.2015	01.07.2020	31.03.2025
2.	प्रभात चौधरी	13.06.1997	04.01.2016	01.07.2020	30.04.2028
3.	सुरेश चंद्र सिंह बिसेन	31.07.1997	04.01.2016	01.01.2021	31.01.2027

(35) चूंकि मामला उत्तर प्रदेश माल एवं सेवा कर अधिनियम, 2017 की धारा 174 के प्रावधानों के इर्द-गिर्द घूमता है, इसलिए इसे निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत करना आवश्यक है:-

“174. निरसन और व्यावृत्ति

- (1) इस अधिनियम में अन्यथा उपबंधित के सिवाय, इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से,
- (i) संविधान की सातवीं अनुसूची की राज्य सूची की प्रविष्टि 54 में शामिल वस्तुओं के सिवाय, उत्तर प्रदेश मूल्य वर्धित कर अधिनियम, 2008,
- (ii) उत्तर प्रदेश स्थानीय क्षेत्रों में माल के प्रवेश पर कर अधिनियम, 2007
- (iii) उत्तर प्रदेश मनोरंजन और सट्टा कर अधिनियम, 1979
- (iv) उत्तर प्रदेश विज्ञापन कर अधिनियम 1981
- (v) संयुक्त प्रांत मोटर स्प्रिट, डीजल तेल और अल्कोहल बिक्री कराधान अधिनियम, 1939

(vi) उत्तर प्रदेश गन्ना (खरीदकर) अधिनियम, 1961 (जिन्हें आगे निरसित अधिनियम कहा गया है) को एतद्वारा **निरस्त** कर दिया।”

(36) उत्तर प्रदेश माल एवं सेवा अधिनियम, 2017 के लागू होने पर, उत्तर प्रदेश मनोरंजन एवं सट्टा कर अधिनियम, 1979 सहित उपरोक्त छह अधिनियम निरस्त हो गए हैं, जिसके तहत याचिकाकर्ताओं ने अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया। इसके दृष्टिगत, राज्य सरकार ने 24.04.2018 से मनोरंजन एवं सट्टा कर विभाग के कर्मचारियों को वाणिज्य कर विभाग के पदों पर विलय करने का नीतिगत निर्णय लिया। हालाँकि, यह नीतिगत निर्णय वैधानिक नियमों के माध्यम से तब तक मूर्त रूप नहीं ले पाया जब तक कि विलय नियमावली, 2022 का गठन और 21.07.2022 से अधिसूचना नहीं हो गई। विलय नियमावली के गठन तक पदोन्नति संबंधी लाभ मनोरंजन कर विभाग के पूर्ववर्ती नियमों के अनुसार ही दिए जाते थे।

(37) पुनरावृत्ति के तौर पर, यह उल्लेख किया गया है कि विलय नियमावली के नियम 2 में अधिभावी प्रभाव का उल्लेख किया गया है। नियमावली का नियम 3(3) 'मूल नियुक्ति' की तिथि को अधिसूचना दिनांक 24.04.2018 की तिथि को धारित पद पर नियुक्ति की तिथि के रूप में परिभाषित करता है। विलय नियमावली, 2022 का नियम 3(4) वाणिज्यिक कर विभाग और मनोरंजन कर विभाग में पदों के 'कैडर' को परिभाषित करता है। नियम 4(4) में प्रावधान है कि संबंधित पदों की पदोन्नति और अन्य सेवा मामलों का निर्णय वाणिज्यिक कर विभाग के सेवा कैडर के संबंधित नियमों के तहत किया जाएगा। विलय नियमावली, 2022 का नियम 4(5) स्पष्ट करता है कि विलय किए गए कर्मचारियों की सेवाएं कैडर को नियंत्रित करने वाले संबंधित सेवा नियमों द्वारा शासित होंगी। विलय नियमावली, 2022 का नियम 4(7) याचिकाकर्ताओं की सेवाओं की निरंतरता को बनाए रखने और उसकी सुरक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अतः सेवा की निरंतरता बनाए रखने के लिए उनके विलय की तिथि को वाणिज्यिक कर विभाग के संबंधित सेवा संवर्ग में नियुक्ति की तिथि माना जा रहा है। इसके अतिरिक्त, सेवा की निरंतरता को भी बरकरार रखा गया है और याचिकाकर्ताओं की नियुक्तियों को नई नियुक्तियाँ नहीं माना गया है।

(38) इस स्तर पर, 19.05.2023 को इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश पर गौर करना आवश्यक है जो इस प्रकार है:-

“24 जुलाई, 2023 से शुरू होने वाले सप्ताह में रिट-ए संख्या 3769 वर्ष 2023 के साथ जोड़ें और सूचीबद्ध करें।

प्रतिवादियों की ओर से प्रस्तुत नोटिस को विद्वान मुख्य स्थायी अधिवक्ता के कार्यालय द्वारा स्वीकार कर लिया गया है।

वाणिज्यिक कर विभाग में विलय से पहले मनोरंजन कर विभाग में कार्यरत याचिकाकर्ताओं के समक्ष अपनी पदोन्नति के संबंध में उत्पन्न होने वाली आसन्न समस्या को ध्यान में रखते हुए, हम निर्देश देते हैं कि प्रतिवादी

छह सप्ताह की अवधि के भीतर अपना प्रति-शपथपत्र दाखिल करें। हम अपेक्षा करते हैं कि प्रतिवादी इस मामले की तात्कालिकता को देखते हुए, निर्धारित समय-सीमा के भीतर प्रति-शपथपत्र दाखिल करेंगे।”

(39) दिनांक 19.05.2023 के आदेश के अनुसरण में, राज्य सरकार ने अपना प्रति-शपथपत्र दाखिल किया है, जिसमें प्रतिवादियों ने दावा किया है कि केवल मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों को ही वाणिज्यिक कर विभाग में विलय किया गया है, न कि मनोरंजन कर विभाग के पदों को।

(40) इसके अलावा, इस न्यायालय के प्रश्न का समाधान करने के लिए, दिनांक 24.10.2024 के निर्देश इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए, जिनमें वर्ष 2018 और 2024 में उपलब्ध पदों की सटीक संख्या बताई गई थी। इस प्रकार, दिनांक 24.10.2024 के निर्देशों के मात्र अवलोकन से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि वाणिज्यिक कर विभाग में एक भी पद नहीं बढ़ाया गया है। अतः, पूर्ववर्ती मनोरंजन एवं सट्टा कर विभाग का कोई भी पद वाणिज्यिक कर विभाग को हस्तांतरित नहीं किया गया है। यह स्थिति प्रति-शपथपत्र के पैरा-16 में दिए गए कथनों से पुष्ट होती है, जैसा कि निर्णय के पूर्व भाग में कहा गया है।

(41) इसके अलावा, उपरोक्त रिट याचिकाओं की सुनवाई के दौरान, इस न्यायालय ने दिनांक 04.12.2023 के आदेश द्वारा राज्य के विद्वान अधिवक्ता को निर्देश दिया कि वे इस बारे में पूर्ण निर्देश प्राप्त करें कि उत्तर प्रदेश मनोरंजन एवं सट्टा कर सेवा से संबंधित सेवा सदस्यों को वाणिज्य विभाग में नई विलय नियमावली, 2022 के अंतर्गत समान रूप से पदोन्नति के अवसर कैसे प्रदान किए जा सकते हैं। दिनांक 04.12.2023 का आदेश निम्नानुसार है:-

“1. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता श्री अपूर्व तिवारी और राज्य के विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री आकाश सिन्हा को सुना गया।

2. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने इस संबंध में पूर्ण निर्देश प्राप्त करने के लिए चार दिन का समय मांगा है कि उत्तर प्रदेश मनोरंजन एवं सट्टा कर सेवा के सदस्यों को किस प्रकार से नई नियमावली के अंतर्गत पात्रता के संबंध में समान रूप से पदोन्नति का अवसर प्रदान किया जा सकता है, अर्थात् मनोरंजन कर विभाग के कर्मचारियों (अधिकारियों, निरीक्षकों एवं अन्य कर्मचारियों के सेवा संवर्ग) को वाणिज्य कर विभाग के संबंधित संवर्गों में उत्तर प्रदेश विलय नियमावली, 2022 के तहत वाणिज्य कर विभाग में सेवारत सदस्यों के समतुल्य पद प्रदान किया जाएगा।

3. 11.12.2023 को दस मामलों में सूचीबद्ध/प्रस्तुत किया जाय।

4. श्री कुलदीप पति त्रिपाठी, विद्वान अपर महाधिवक्ता इस मामले में न्यायालय की सहायता करेंगे।”

(42) इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 04.12.2023 के आदेश के अनुसरण में राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने राज्य सरकार द्वारा पूर्व में अपनाए गए रुख को दोहराया है।

(43) अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत प्रस्तुतियों से यह स्पष्ट है कि विलय नियमावली, 2022 के निर्माण तक याचिकाकर्ताओं को कोई शिकायत नहीं थी क्योंकि वे उत्तर प्रदेश मनोरंजन और सट्टा कर (राजपत्रित) सेवा नियमावली, 1992 के अनुसार सेवा लाभों का आनंद लेते रहे। विलय नियमावली, 2022 के कारण, जब उन्हें 24.04.2018 तक वाणिज्य कर विभाग के संबंधित संवर्गों में वरिष्ठता सूची में सबसे नीचे रखा गया है, तो उन्होंने उपरोक्त रिट याचिकाओं के माध्यम से अपनी शिकायत उठाई, जिसमें कहा गया कि राज्य सरकार द्वारा की गई कार्रवाई भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 द्वारा प्रभावित है।

(44) तर्क के लिए, यदि याचिकाकर्ताओं को अधिनियम के निरस्त होने के कारण पूर्ववर्ती विभाग से हटा दिया गया होता, तो यू.पी.जी.एस.टी. अधिनियम, 2017 के लागू होने पर उनका भविष्य दुविधा में पड़ जाता। इसके बजाय, राज्य सरकार ने मनोरंजन एवं सट्टा कर विभाग के सभी कर्मचारियों को वाणिज्य कर विभाग में विलय करने का एक सचेत निर्णय लिया।

(45) यद्यपि मनोरंजन एवं सट्टा कर विभाग के कर्मचारियों को सेवा वर्ष में वाणिज्य कर कर्मचारियों से कनिष्ठ रखने के कारण ऊपर बताए गए हैं, किन्तु याचिकाकर्ताओं को विलय नियम, 2022 में रखना नीतिगत निर्णय का हिस्सा है और याचिकाकर्ताओं को राज्य सरकार द्वारा लिए गए नीतिगत निर्णय पर प्रश्न उठाने का कोई अधिकार नहीं है।

(46) इस न्यायालय के समक्ष उठाई गई एकमात्र शिकायत यह है कि याचिकाकर्ताओं को वाणिज्यिक विभाग में रखने से पक्षपात हुआ है। इस संबंध में, प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा **इंडियन एयरलाइंस ऑफिसर्स एसोसिएशन बनाम इंडियन एयरलाइंस लिमिटेड और अन्य एवं अन्य संबंधित अपीलें [(2007) 10 एससीसी 684]** पर जताया भरोसा पूर्णतः लागू होता है जिसमें यह धारित किया गया है कि पूरी योजना को मनमाना/भेदभावपूर्ण मात्र इसलिए नहीं कहा जा सकता कि इससे कुछ कर्मचारियों को पदोन्नति/वरिष्ठता के मामले में नुकसान होता है और अंततः उनकी पदोन्नति की संभावना प्रभावित होती है।

(47) जहाँ तक याचिकाकर्ताओं की पदोन्नति की संभावनाओं का सवाल है, इस मुद्दे पर कानून स्पष्ट हो चुका है कि पदोन्नति की संभावना सेवा की शर्त नहीं है और पदोन्नति की संभावनाओं में बदलाव भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 को प्रभावित नहीं करता है। प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता का तर्क **मैसूर राज्य एवं अन्य बनाम जी. एन. पुरोहित और अन्य [एमएनयू /एससी/0459/1967]**, **रामचंद्र शंकर बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य [(1974) 1 एससीसी 317]**, **एयर कम्पोडोर नवीन जैन बनाम भारत संघ और अन्य [2019 (10) एससीसी 34]** और **बिहार राज्य विद्युत बोर्ड (उपरोक्त)** के मामलों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून से पुष्ट होता है।

(48) उपरोक्त कारणों से, यह पूरी तरह स्पष्ट है कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 16 और 21 का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है और चूँकि विलय नियमावली, 2022 में कुछ भी उपरोक्त अनुच्छेदों का उल्लंघन नहीं करता है, इसलिए याचिकाकर्ताओं द्वारा दोनों रिट याचिकाओं में इसे *अधिकारातीत* घोषित करने की प्रार्थना का कोई आधार नहीं है और इसका कानून में कोई बल नहीं है क्योंकि यह मामला राज्य सरकार द्वारा लिए गए नीतिगत निर्णय से संबंधित है। राज्य सरकार के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत **उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम प्रधानाचार्य, अभय नंदन इंटर कॉलेज एवं अन्य [(2021) 15 एससीसी 600]** मामले में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय वर्तमान मामले पर लागू होता है।

(49) चूँकि राज्य सरकार द्वारा लिए गए निर्णय विशुद्ध रूप से नीतिगत निर्णय होते हैं, इसलिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों की शृंखला के आलोक में उनकी जाँच की जानी चाहिए, जहाँ नीतिगत मामलों में न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप की गुंजाइश सुस्थापित है। न्यायिक पुनर्विलोकन संविधानवाद की आधारशिला है और हमारे मूल ढांचे का एक अभिन्न अंग है। इस समझ के बावजूद, सर्वोच्च न्यायालय ने बार-बार दोहराया है कि न्यायिक पुनर्विलोकन के माध्यम से राज्य के नीतिगत निर्णयों में तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि वे घोर मनमाने या तर्कहीन न हों, क्योंकि शक्तियों का पृथक्करण बनाए रखना आवश्यक है।

(50) **उर्वरक निगम कामगार यूनियन (पंजीकृत), सिंदरी एवं अन्य में बनाम भारत संघ एवं अन्य, (1981) 1 एससीसी 568**, में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की है:-

"35. सामाजिक न्याय के प्रति एक व्यावहारिक दृष्टिकोण हमें संवैधानिक प्रावधानों, जिनमें अनुच्छेद 32 और 226 जैसे प्रावधान भी शामिल हैं, की व्याख्या इस दृष्टि से करने के लिए बाध्य करता है कि सत्ता के गलियारों की प्रभावी निगरानी न्यायालय द्वारा तब तक की जाए जब तक कि अन्य लोकपाल व्यवस्थाएँ लागू न हो जाएं - एक ऐसी समस्या जिससे संसद लंबे समय से जूझ रही है - सामने न आ जाएँ। मैंने इस नीतिगत पहलू और न्यायालयीन प्रक्रिया पर थोड़ा विस्तार से चर्चा की है क्योंकि विद्वान अटॉर्नी-जनरल ने सार्वजनिक क्षेत्र के गलत कार्यों पर न्यायालय में प्रश्न उठाने के लिए याचिकाकर्ता के कर्मचारी या नागरिक के रूप में अधिकार क्षेत्र को चुनौती दी थी, हालाँकि उन्होंने यह भी कहा था कि निगम द्वारा जो किया गया था वह सद्भावपूर्ण और सही दोनों था। हम निश्चित रूप से इस बात से सहमत हैं कि शक्तियों के पृथक्करण की हमारी मॉटेस्क्यू प्रणाली में प्रशासन में न्यायिक हस्तक्षेप अति-सूक्ष्म नहीं हो सकता। न्यायालय अधिकार का अतिक्रमण या त्याग नहीं कर सकता, और न्यायिक पुनर्विलोकन के मानदंड स्पष्ट रूप से परिभाषित होने चाहिए और उनका उल्लंघन कभी नहीं किया जाना चाहिए। यदि किसी सरकारी कंपनी के निदेशालय ने निष्पक्ष रूप से कार्य किया है, भले ही वह अपनी बुद्धिमत्ता में चूक गया हो, तो न्यायालय, एक सुपर-ऑडिटर के रूप में, निदेशक बोर्ड को फटकार नहीं लगा सकता। निदेशकों को कार्य सौंपना। यह कार्य केवल यह जांचने तक सीमित है कि क्या प्रशासनिक कार्रवाई निष्पक्ष और अनुचितता के दाग से मुक्त रही है और क्या उसने निर्धारित प्रक्रिया मानदंडों का पर्याप्त रूप से पालन किया है। इसके लिए लोक प्रशासन के नियमों का पालन किया जाना चाहिए।"

(51) *फिल्म समारोह निदेशालय एवं अन्य बनाम गौरव अश्विन जैन एवं अन्य, (2007) 4 एससीसी 737*, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की थी:-

“16. सरकारी नीति के न्यायिक पुनर्विलोकन का दायरा अब पूरी तरह से परिभाषित है। न्यायालय किसी नीति की शुद्धता, उपयुक्तता और औचित्य की जाँच करने वाले अपीलीय प्राधिकारी के रूप में कार्य नहीं करते और न ही कर सकते हैं, न ही वे कार्यपालिका को नीतिगत मामलों में सलाहकार हैं जिन्हें बनाने का अधिकार कार्यपालिका को है। सरकार की किसी नीति की जाँच करते समय न्यायिक पुनर्विलोकन का दायरा यह जाँचना है कि क्या वह नागरिकों के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती है या संविधान के प्रावधानों के विरुद्ध है, या किसी वैधानिक प्रावधान के विरुद्ध है या स्पष्ट रूप से मनमाना है। न्यायालय किसी नीति में इस आधार पर हस्तक्षेप नहीं कर सकते कि वह त्रुटिपूर्ण है या इस आधार पर कि कोई बेहतर, निष्पक्ष या समझदारी भरा विकल्प उपलब्ध है। नीति की वैधता, न कि नीति की बुद्धिमत्ता या सुदृढ़ता, न्यायिक पुनर्विलोकन का विषय है (देखें *आसिफ हमीद बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य [1989 अनुपूरक (2) एससीसी 364]*, *सीताराम शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम भारत संघ [(1990) 3 एससीसी 223]*, *खोडे डिस्टिलरीज लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य [(1996) 10 एससीसी 304]*, *बाल्को कर्मचारी संघ बनाम भारत संघ [(2002) 2 एससीसी 333]*, *उड़ीसा राज्य बनाम गोपीनाथ दाश [(2005) 13 एससीसी 495: 2006 एससीसी (एल एंड एस) 1225]* और *अखिल भारत गोसेवा संघ (3) बनाम एपी राज्य [(2006) 4 एससीसी 162]*)।”

(52) उपर्युक्त टिप्पणी *भारतीय रेलवे खानपान एवं पर्यटन निगम लिमिटेड बनाम भारतीय रेलवे मेजर एवं माइनर कैटरर्स एसोसिएशन एवं अन्य, (2011) 12 एससीसी 792* में भी की गई थी। सर्वोच्च न्यायालय ने धारित किया कि सरकार के नीतिगत निर्णयों में तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि नीति सांविधिक नियमों या संविधान के प्रावधानों के विपरीत न हो। उक्त मामले में, कोई अवैधता या असंवैधानिकता नहीं पाई गई और सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित धारित किया:-

“2. इस आक्षेपित आदेश के द्वारा, उच्च न्यायालय ने आरक्षण के संबंध में 2005 की खानपान नीति में हस्तक्षेप किया है। अब तक यह कानून का एक सुस्थापित सिद्धांत है कि सरकार के नीतिगत निर्णयों में नियमित तरीके से हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, जब तक कि नीति सांविधिक नियमों या संविधान के प्रावधानों के विपरीत न हो। हमारे संज्ञान में ऐसा कुछ भी नहीं लाया गया है कि नीति सांविधिक नियमों या संविधान के प्रावधानों के विपरीत हो। इस साधारण कारण से, हम उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश को अपास्त करते हैं।”

(53) हाल ही में, *जैकब पुलियेल बनाम भारत संघ और अन्य, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 533* में, हालांकि सर्वोच्च न्यायालय स्वास्थ्य से संबंधित नीतिगत निर्णयों की व्यापक रूप से जांच कर रहा था, इसने प्रेक्षित किया था कि अपने न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति के प्रयोग में, न्यायालयों को आमतौर पर कार्यपालिका के नीतिगत निर्णयों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कि नीति को दुर्भावना, अतर्कसंगतता,

मनमानी या अनुचितता आदि के आधार पर गलत नहीं ठहराया जा सकता हो। इस संबंध में निर्णय का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

"21. अब हम स्वास्थ्य संबंधी सार्वजनिक नीतियों के न्यायिक पुनर्विलोकन के दायरे में इस न्यायालय के पूर्व-निर्णयों का विश्लेषण करेंगे। यह सर्वविदित है कि न्यायालय, न्यायिक पुनर्विलोकन की अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए, कार्यपालिका के नीतिगत निर्णयों में सामान्यतः तब तक हस्तक्षेप नहीं करते जब तक कि नीति को दुर्भावना, अतर्कसंगतता, मनमानी या अनुचितता आदि के आधार पर दोषपूर्ण न ठहराया जा सके। वास्तव में, मनमानी, अतार्किकता, विकृति और दुर्भावना नीति को असंवैधानिक बना देगी। यह न तो न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र में है और न ही न्यायिक पुनर्विलोकन के दायरे में कि वे इस बात की जाँच करें कि क्या कोई विशेष सार्वजनिक नीति विवेकपूर्ण है या क्या बेहतर सार्वजनिक नीति विकसित की जा सकती है। न ही न्यायालय किसी याचिकाकर्ता के कहने पर किसी नीति को केवल इसलिए रद्द करने के लिए इच्छुक होते हैं क्योंकि यह तर्क दिया गया है कि कोई अन्य नीति अधिक न्यायसंगत, विवेकपूर्ण, अधिक वैज्ञानिक या अधिक तार्किक होती। न्यायालय किसी नीति की शुद्धता, उपयुक्तता और औचित्य की जाँच करने वाले अपीलीय प्राधिकारियों के रूप में कार्य नहीं करते और न ही कर सकते हैं, न ही न्यायालय कार्यपालिका के उन नीतिगत मामलों में सलाहकार है जिसे वह बनाने का अधिकार रखती है। सरकार की किसी नीति की जाँच करते समय न्यायिक पुनर्विलोकन का दायरा यह जाँचना है कि क्या वह नागरिकों के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती है या संविधान के प्रावधानों के विरुद्ध है, या किसी सांविधिक प्रावधान के विरुद्ध है या स्पष्ट रूप से मनमाना है।"

(54) इसके अतिरिक्त, जब तक विलय नियमावली तैयार नहीं हो गई और उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा अनुमोदित नहीं कर दी गई, तब तक याचिकाकर्ताओं को पूर्ववर्ती विभाग के कर्मचारी माना गया और तदनुसार, सभी याचिकाकर्ताओं को उनके संबंधित ग्रेड में रिक्ति होने पर पदोन्नत किया गया। आदेश संख्या 3828 दिनांक 11.01.2023 द्वारा नियमावली तैयार होने पर, वाणिज्य कर विभाग में विलय नियमावली के अनुसार जिला मनोरंजन कर अधिकारी की वरिष्ठता निर्धारित करने हेतु एक समिति गठित की गई और दिनांक 18.08.2023 को एक वरिष्ठता सूची को अंतिम रूप दिया गया और याचिकाकर्ताओं को विलय नियमावली, 2022 के नियम 3(3) के प्रावधानों के अनुसार उनकी वरिष्ठता के अनुसार रखा गया है।

(55) उपरोक्त कारणों से, याचिकाकर्ताओं का कोई मामला नहीं बनता है और याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत न्यायिक निर्णय लागू नहीं होते हैं।

(56) तदनुसार, विलय नियमावली, 2022 के विरुद्ध चुनौती से राहत हेतु दायर दोनों रिट याचिकाएँ **खारिज** की जाती हैं। हालाँकि, यह प्रावधान किया गया है कि चूँकि विलय नियमावली 21.07.2022 से प्रभावी हो गए हैं और कुछ याचिकाकर्ताओं को 24.04.2018 से 21.07.2022 की अवधि के दौरान पदोन्नति दी गई

है, इसलिए याचिकाकर्ताओं की मूल नियुक्ति की तिथि और स्थिति, वाणिज्यिक कर विभाग में पदोन्नति पदों पर विलय नियमावली, 2022 में निर्धारित 24.04.2018 के स्थान पर 21.07.2022 मानी जाएगी।

(57) लागत के हिसाब से कोई आदेश नहीं।

(2025) 2 ILRA 662

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 10.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति जे. जे. मुनीर

रिट - ए संख्या 11079 वर्ष 2024

जगबीर सिंह

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता: श्री अश्वनी कुमार श्रीवास्तव, अधिवक्ता

प्रतिवादियों के अधिवक्ता: श्री गिरिजेश कुमार त्रिपाठी, राज्य के अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता

ए. सेवा कानून - सेवानिवृत्ति - जन्म तिथि का निर्धारण - उत्तर प्रदेश सेवा में भर्ती (जन्म तिथि का निर्धारण) नियमावली, 1974 - नियम 2 एवं 3- किसी सरकारी कर्मचारी के लिए, जो मैट्रिक पास या समकक्ष प्रमाणपत्र धारक नहीं है, उसकी जन्मतिथि निर्धारित करने के लिए नियम 2 के आदेशानुसार, सेवा में प्रवेश के समय सेवा पुस्तिका में दर्ज जन्मतिथि को ही सभी उद्देश्यों के लिए, जिसमें सेवानिवृत्ति भी शामिल है, उसकी सही जन्मतिथि माना जाएगा। 1974 के नियमावली का नियम 2 स्पष्ट रूप से कहता है कि हाई स्कूल या समकक्ष से कम शिक्षा के प्रमाणपत्र किसी व्यक्ति की आयु निर्धारित करने के लिए अप्रासंगिक हैं।(पैरा 17)

A. शब्द और वाक्यांश - 'माना गया' - नियम 2 के संदर्भ में "माना गया" अभिव्यक्ति का प्रयोग अत्यंत प्रासंगिक है।(पैरा 17)

सरकारी कर्मचारियों के निचले ग्रेड के गैर-मैट्रिकुलेटेड कर्मचारियों की आयु से संबंधित विवादों को कम करने के उद्देश्य से, यह मानते हुए कि इस बारे में कोई विश्वसनीय प्रमाण उपलब्ध नहीं होगा, यह कानून एक कल्पना को जन्म देता है कि सेवा में प्रवेश के समय सेवा पुस्तिका में दर्ज जन्मतिथि या आयु, नियम 2 के अंतर्गत

सभी उद्देश्यों के लिए सही मानी जाएगी, जिसमें सेवानिवृत्ति भी शामिल है। इसलिए, ऐसे गैर-मैट्रिकुलेटेड कर्मचारी की जन्मतिथि के बारे में कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जा सकता या जाँचा नहीं जा सकता। (पैरा 17)

चूँकि इस मुद्दे पर कोई आपत्ति नहीं है कि याचिकाकर्ता की जन्मतिथि, जो मूल रूप से 20.02.1967 दर्ज की गई थी, और बाद में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत 09.01.2012 के नोटरी शपथपत्र के आधार पर बदल दी गई, यह परिवर्तन स्पष्ट रूप से नियमावली 1974 के नियम 2 के विरुद्ध है। इसके अलावा, नियम 3 के आधार पर, नियमावली 1974 का प्रभाव अन्य सभी नियमों पर सर्वोपरि है। याचिकाकर्ता की मूल रूप से उसकी सेवा पुस्तिका में दर्ज जन्मतिथि, अर्थात् 20.02.1967, को ही उसकी सही और अपरिवर्तनीय जन्मतिथि माना जाना चाहिए।

(पैरा 17, 18)

रिट याचिका स्वीकृत.(ई-4)

अनुसरित पूर्व-निर्णय:

श्रीमती कल्याणी देवी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, 2023 एचसी 242352; 2024 (2) एडीजे 271 (पैरा 17)

वर्तमान याचिका में दिनांक 13.05.2024 के कार्यालय जापन और दिनांक 03.07.2024 के आदेश का विरोध किया गया है, जिसमें याचिकाकर्ता को 31.08.2024 को सेवानिवृत्ति आयु प्राप्त होने पर सेवानिवृत्त होने का निर्देश दिया गया है। ये दोनों आदेश कार्य प्रबंधक, सिंचाई कार्यशाला खण्ड, मेरठ द्वारा जारी किए गए हैं।

(माननीय न्यायमूर्ति जे.जे. मुनीर द्वारा प्रदत्त)

यह रिट याचिका दिनांक 13.05.2024 के कार्यालय जापन और दिनांक 03.07.2024 के आदेश के विरुद्ध है, जिसमें याचिकाकर्ता को सेवानिवृत्ति आयु प्राप्त करने पर 31.08.2024 को सेवानिवृत्त होने का निर्देश दिया गया था। ये दोनों आदेश, कार्य प्रबंधक, सिंचाई कार्यशाला खण्ड, मेरठ द्वारा जारी किए गए हैं।

2. इस याचिका को उत्पन्न करने वाले तथ्य ये हैं:

यह स्पष्ट नहीं है कि प्रतिवादियों के प्रतिष्ठान में याचिकाकर्ता की नियुक्ति का मामला उसके पिता की सड़क दुर्घटना में हुई मृत्यु से कैसे जुड़ी है, क्योंकि न तो याचिकाकर्ता इस तथ्य का दावा करता है कि उसके पिता प्रतिवादियों के यहाँ कार्यरत थे और उनकी नियुक्ति अनुकंपा के आधार पर हुई थी, और न ही कार्य

प्रबंधक, सिंचाई विभाग, मेरठ द्वारा जारी दिनांक 12.04.1983 के उसके नियुक्ति पत्र में यह स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है। इस तथ्य को लेकर कोई विवाद नहीं है कि याचिकाकर्ता वास्तव में 12.04.1983 को प्रतिवादी के प्रतिष्ठान में अकुशल श्रमिक के रूप में नियुक्त हुआ था। इसलिए, हम इस तथ्य के आधार पर आगे बढ़ते हैं कि याचिकाकर्ता की नियुक्ति प्रतिवादियों के प्रतिष्ठान में 12.04.1983 को हुई थी, जैसा कि पूर्वोक्त है।

3. स्पष्टतः, याचिकाकर्ता सेवा में बना रहा और प्रतिवादी संख्या 3, कार्य प्रबंधक के प्रतिष्ठान में मैकेनिक ग्रेड-I के पद पर कार्यरत था, जब उसे दिनांक 13.05.2024 का सेवानिवृत्ति नोटिस दिया गया, जिसमें कहा गया था कि वह 31.08.2024 को, अर्थात 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने पर, सेवा से सेवानिवृत्त हो जाएगा। ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता ने कार्य प्रबंधक के समक्ष यह मामला प्रस्तुत किया था कि उसकी जन्मतिथि 20.02.1967 है, जो उसे 28.02.2027 तक सेवा में बने रहने का अधिकार देती है। कार्य प्रबंधक द्वारा दिनांक 03.07.2024 को दिए गए आदेश द्वारा इस आवेदन को निम्नलिखित कारणों से अस्वीकार कर दिया गया, जिनका विवरण हम आगे देंगे।

4. याचिकाकर्ता का मामला यह है कि उसने वर्ष 1982 में श्री संजय गांधी स्मारक विद्यालय, सलारपुर, मेरठ से कक्षा आठ की परीक्षा उत्तीर्ण की और उपरोक्त संस्थान द्वारा जारी विद्यालय छोड़ने के प्रमाण पत्र के अनुसार याचिकाकर्ता की जन्मतिथि 20.02.1967 है। वह वर्ष 1985 में हाईस्कूल की परीक्षा में बैठा, लेकिन अनुत्तीर्ण रहा। याचिकाकर्ता ने उत्तर प्रदेश हाईस्कूल और इंटरमीडिएट शिक्षा बोर्ड द्वारा जारी हाईस्कूल का एक अंकपत्र अभिलेख पर लाया है, जिसमें याचिकाकर्ता की जन्मतिथि 20.02.1967 दिखाई गई है। याचिकाकर्ता ने अपनी उम्र के बारे में मूल सत्यापन मूल्य के एक दस्तावेज का भी हवाला दिया है। यह सिंचाई कार्यशाला डिवीजन, मेरठ के कुछ पदाधिकारी द्वारा जारी किया गया प्रमाण पत्र है, जिसे मुख्य समयपाल कहा जाता है। इस दस्तावेज में भी याचिकाकर्ता की जन्म तिथि 20.02.1967, नियुक्ति तिथि 01.04.1983 तथा सेवानिवृत्ति तिथि 31.03.2025 दर्शाई गई है।

5. ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता ने पुनः कार्य प्रबंधक, सिंचाई कार्यशाला प्रभाग, मेरठ को संबोधित शून्य दिनांकित अभ्यावेदन के माध्यम से अपना पक्ष प्रस्तुत किया है, जिसमें उसने अपने सेवा अभिलेखों में अपनी जन्मतिथि को 01.09.1964 के स्थान पर 20.02.1967 के रूप में दर्ज करने की मांग की है।

6. यह अभ्यावेदन अभी भी लंबित था, जब याचिकाकर्ता ने उपचार की निरर्थकता को महसूस करते हुए, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत 24.07.2024 को इस न्यायालय में याचिका दायर की, जो कि आक्षेपित आदेश के अनुसार, उसकी निर्धारित सेवानिवृत्ति से लगभग एक महीने पहले था। यह याचिका 05.08.2024 को स्वीकार के लिए आई, जब इस न्यायालय ने कार्य प्रबंधक, सिंचाई कार्यशाला मंडल, मेरठ और सहायक अभियंता-II, सिंचाई कार्यशाला मंडल, मेरठ की अभिरक्षा से याचिकाकर्ता की सेवा पुस्तिका को मूल रूप में तलब किया, और मामले की अगली सुनवाई 08.08.2024 को निर्धारित किया। 08.08.2024 को, याचिकाकर्ता की सेवा

पुस्तिका के अवलोकन के बाद, एक बहुत विस्तृत आदेश द्वारा प्रस्ताव का नोटिस जारी किया गया, जिसमें कार्य प्रबंधक और अधीक्षण अभियंता, सिंचाई कार्यशाला मंडल, लखनऊ को मामले में कारण बताओ नोटिस जारी किया गया। 14.08.2024 को, दो व्यक्तिगत शपथपत्र दायर किए गए, एक निर्माण प्रबंधक, प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा और दूसरा अधीक्षण अभियंता, प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा। इन शपथपत्रों को मामले में प्रति-शपथपत्र के रूप में माना गया। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्युत्तर दायर करने के अपने अधिकार का त्याग कर दिया। याचिका को सुनवाई के लिए स्वीकार कर लिया गया, जो तत्काल शुरू हुई। निर्णय सुरक्षित रखा गया।

7. यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि याचिकाकर्ता की पहले प्रस्तुत सेवा पुस्तिका, जिसे विद्वान रजिस्ट्रार जनरल के पास सीलबंद लिफाफे में रखने का निर्देश दिया गया था, का न्यायालय द्वारा उस समय अवलोकन किया गया जब मामले की सुनवाई हुई।

8. कार्य प्रबंधक द्वारा दायर व्यक्तिगत शपथपत्र में, यह रुख अपनाया गया है कि याचिकाकर्ता को प्रतिवादियों के प्रतिष्ठान में 01.04.1983 को एक अकुशल मजदूर के रूप में, उसे एक वयस्क मानते हुए, नियुक्त किया गया था। बाद में, याचिकाकर्ता ने प्रतिवादियों से अनुमति लेने के बाद, शैक्षणिक सत्र 1984-85 में एक व्यक्तिगत अभ्यर्थी के रूप में अपनी हाई-स्कूल परीक्षा में शामिल हुआ। याचिकाकर्ता को जारी किये गए अंकपत्र में उसकी जन्मतिथि 20.02.1967 अंकित की गई है, जो कि, प्रतिवादियों के अनुसार, स्पष्ट रूप से गलत है, क्योंकि याचिकाकर्ता को 01.04.1983 को एक वयस्क मानते हुए नियुक्त किया गया था। श्री संजय गांधी मेमोरियल विद्यालय, सलारपुर, मेरठ द्वारा दिनांक 04.07.1982 को जारी किए गए स्थानांतरण प्रमाण पत्र के बारे में, कार्य प्रबंधक के शपथपत्र के पैराग्राफ संख्या 7 में यह कहा गया है कि दस्तावेज संदिग्ध है और इसकी वास्तविकता संदेहास्पद है। इस अंकपत्र की प्रामाणिकता के बारे में प्रतिवादियों के पक्ष को पुष्ट करने के लिए, संदर्भित शपथपत्र में कहा गया है कि दस्तावेज़ में ओवरराइटिंग ध्यान देने योग्य है। यह भी कहा गया है कि यह अजीब है कि स्थानांतरण प्रमाण पत्र में यह उल्लेख नहीं है कि याचिकाकर्ता को संस्थान में किस कक्षा में प्रवेश दिया गया था, जबकि संस्थान छोड़ने का कारण याचिकाकर्ता द्वारा कक्षा आठ उत्तीर्ण करना है। यह भी उल्लेख किया गया है कि वाक्य "कक्षा आठ उत्तीर्ण" स्पष्ट रूप से ओवरराइटिंग की गई है। प्रतिवादियों का यह भी कहना है कि इसी तरह, कई अन्य ओवरराइट किए गए शब्द भी ध्यान देने योग्य हैं, जो संस्थान द्वारा 04.07.1982 को जारी किए गए स्थानांतरण प्रमाण पत्र की वास्तविकता के बारे में संदेह पैदा करते हैं।

9. आगे कहा गया है कि यह उपरोक्त फर्जी स्थानांतरण प्रमाण पत्र के आधार पर ही याचिकाकर्ता ने हाईस्कूल की परीक्षा एक व्यक्तिगत अभ्यर्थी के रूप में दी थी, जहाँ उसकी जन्मतिथि 20.02.1967 दर्ज है। यही जन्मतिथि उसकी हाईस्कूल के अंकपत्र पर भी अंकित है। कार्य प्रबंधक ने आगे कहा कि याचिकाकर्ता द्वारा अभिलेख में की गई हेराफेरी के लिए दोषी और पश्चाताप महसूस करते हुए, उसने 19.01.2012 को तत्कालीन कार्य प्रबंधक, ए.के. अग्रवाल, के पास एक नोटरी शपथपत्र दायर किया, जिसमें उसने कहा कि उसकी नियुक्ति 01.04.1983 को हुई थी और उसकी उम्र 18 वर्ष और 7 महीने थी। कार्य प्रबंधक के अनुसार, यह शपथपत्र

याचिकाकर्ता द्वारा उसकी उम्र के बारे में की गई हेराफेरी के परिणामों से खुद को बचाने के लिए दायर किया गया था। आगे यह तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 09.01.2012 को दायर शपथपत्र के आधार पर, सेवा पुस्तिका में उसकी जन्मतिथि तत्कालीन सहायक अभियंता (समय कार्यालय), जो सेवा पुस्तिका का संरक्षक था, द्वारा 01.09.1964 दर्ज की गई है। तत्कालीन सहायक अभियंता भी सेवानिवृत्त हो चुके हैं। फिर भी, यह तर्क दिया जाता है कि यह सही प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता 01.04.1983 को अकुशल श्रमिक के रूप में नियुक्ति के समय वयस्क था।

10. प्रतिवादियों की ओर से कार्य प्रबंधक द्वारा अंततः यह कहा गया है कि दिनांक 09.01.2012 के नोटरी शपथपत्र में उनकी जन्मतिथि को देखते हुए, याचिकाकर्ता 31.08.2024 को सेवानिवृत्त हो चुके हैं। अधीक्षण अभियंता ने भी यही रुख अपनाया है।

11. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री अश्विनी कुमार श्रीवास्तव और राज्य की ओर से उपस्थित अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता श्री गिरिजेश कुमार त्रिपाठी को सुना गया।

12. सेवा पुस्तिका के अवलोकन से पता चलता है कि याचिकाकर्ता की जन्मतिथि, जो मूल रूप से एफ.आर. फॉर्म संख्या 13 में सेवा पुस्तिका के तीसरे पृष्ठ पर दर्ज है, नीली स्याही से है। यह शब्दों और अंकों दोनों में लिखी है। यह 20.02.1967 है। इस पर याचिकाकर्ता के हस्ताक्षर भी नीली स्याही से हैं। सेवा पुस्तिका में अन्य प्रविष्टियाँ अलग हाथ से और अलग कलम से, सभी काली स्याही से हैं। मूल रूप से नीली स्याही से दर्ज जन्मतिथि को जन्मतिथि दर्ज करने के लिए बने कॉलम संख्या 5 में दर्ज किया गया है। हालाँकि, याचिकाकर्ता के पिता के नाम और उनके निवास स्थान से संबंधित चौथे कॉलम में, कोष्ठक में "शपथ पत्र के अनुसार जन्मतिथि 01.09.1964" शब्द लिखे हैं। यह स्पष्ट रूप से जन्मतिथि में परिवर्तन है, जो मूल रूप से उपयुक्त कॉलम अर्थात् कॉलम संख्या 5 में नीली स्याही से दर्ज की गई थी। परिवर्तित प्रविष्टि, जो दर्शाती है कि यह शपथ पत्र पर आधारित है, पर संस्थान के किसी भी अधिकारी द्वारा न तो आद्याक्षरित किए गए हैं और न ही उस पर हस्ताक्षर किए गए हैं, लेकिन, इसका अधिक महत्व नहीं हो सकता है।

13. दिनांक 08.08.2024 के आदेश, जिसके द्वारा प्रस्ताव का नोटिस जारी किया गया था, में जन्मतिथि में अलग हस्तलेख और स्याही से परिवर्तन के तथ्य देखे जाने के बावजूद, प्रतिवादी अपने शपथपत्रों में इस तथ्य से इनकार नहीं करते हैं कि मूल रूप से दर्ज की गई याचिकाकर्ता की जन्मतिथि 20.02.1967 थी। वैसे भी, कॉलम संख्या 4 में कोष्ठक में याचिकाकर्ता के पिता के नाम के सामने दर्ज की गई अन्य जन्मतिथि एक परिवर्तित और बाद में दर्ज की गई जन्मतिथि है। चूंकि यह एक अलग उद्देश्य वाले कॉलम में दर्ज की गई है, और "शपथ पत्र के अनुसार" शब्दों का प्रयोग करके उक्त तिथि को आधार भी देता है इसलिए इस तथ्य पर कोई आपत्ति नहीं है कि प्रतिवादियों ने याचिकाकर्ता की जन्मतिथि को उसकी सेवा पुस्तिका में 20.02.1967 से 01.09.1964 तक बदल दिया था। प्रतिवादियों का कहना है कि याचिकाकर्ता ने स्वेच्छा से यह परिवर्तन करने के लिए एक शपथपत्र दिया था, क्योंकि वह अपने कक्षा आठ के अंकपत्र, जिसका उपयोग उसने

सेवाकाल के दौरान हाईस्कूल परीक्षा में बैठने के लिए किया था, मैं जालसाजी के संबंध में किसी भी संभावित कार्रवाई से खुद को बचाना चाहता था। यह बहुत मौलिक नहीं लगता, क्योंकि सेवा पुस्तिका में प्रविष्टियाँ 01.04.1983 की हैं और याचिकाकर्ता ने प्रतिवादियों से अनुमति लेकर सत्र 1984-85 के दौरान अपनी हाईस्कूल परीक्षा दी थी। इसलिए, सेवा पुस्तिका के स्पष्ट स्वरूप के अनुसार, याचिकाकर्ता की जन्मतिथि के बारे में सबसे प्रारंभिक प्रविष्टि याचिकाकर्ता के हाईस्कूल परीक्षा में बैठने और उसमें अनुत्तीर्ण होने से पहले की गई थी। संबंधित कॉलम में याचिकाकर्ता की जन्मतिथि के बारे में सबसे प्रारंभिक प्रविष्टि का भी कोई आधार नहीं है। इस प्रकार, ऐसा करने का कोई कारण नहीं था। याचिकाकर्ता पर किसी कार्रवाई से बचने या यहां तक कि पश्चाताप के लिए प्रेरित होने का आरोप नहीं लगाया जा सकता, जैसा कि प्रतिवादियों का कहना है, कि उसने कक्षा आठ के स्थानांतरण प्रमाण पत्र में अपनी जन्मतिथि में हेरफेर किया था, जिसके आधार पर याचिकाकर्ता बाद में हाई स्कूल की परीक्षा में बैठा था।

14. यह सब प्रतिवादियों की ओर से शुद्ध अनुमान है। स्पष्टतः, याचिकाकर्ता ने 09.01.2012 का शपथपत्र इसलिए दिया क्योंकि उसे या तो किसी प्रकार का भय था या नाबालिग के रूप में सरकारी सेवा में नियोजित होने के परिणामों के बारे में किसी प्रकार की धमकी का सामना करना पड़ रहा था, जो कि तब होता जब याचिकाकर्ता की जन्मतिथि, जो मूल रूप से उसकी सेवा पुस्तिका में दर्ज है, स्वीकार कर ली जाती। याचिकाकर्ता ने 01.04.1983 को एक अस्थायी मजदूर के रूप में नौकरी शुरू की थी, और उसकी सेवा पुस्तिका में मूल रूप से दर्ज जन्मतिथि, यानी 20.02.1967, के अनुसार, उसकी आयु नियुक्ति की तिथि से 16 वर्ष और 2 महीने होगी।

15. इस तरह के रोजगार के परिणामों के बारे में नियोक्ताओं और कर्मचारियों, दोनों के बीच, खासकर राज्य के रोजगार में, काफी गलतफहमी है। सरकार के कुछ अधिकारी, जो राज्य के लिए कार्य करती हैं, का मानना है कि किसी नाबालिग को नौकरी पर रखने से उसकी नियुक्ति रद्द हो जाएगी या वह धोखाधड़ी आदि के अपराध के लिए उत्तरदायी होगा। कर्मचारियों का भी यही मानना है। इस तथ्य को स्वीकार किया जाना चाहिए कि बीते वर्षों में एक लंबा समय ऐसा था जब एक निश्चित आयु से अधिक के नाबालिगों को सरकारी सेवा में छठी श्रेणी की नौकरियों में नियुक्त किया जाता था, और इस मुद्दे पर ज्यादा विचार नहीं किया जाता था। ऐसे कर्मचारियों और उनके अधिकारों के बारे में कानूनी प्रस्ताव यह है कि वयस्क होने से पहले उन्होंने जितने वर्षों की सेवा की है, उसे विभिन्न उद्देश्यों के लिए उनकी सेवा अवधि से घटा दिया जाना चाहिए। हालाँकि, यह दोष नियुक्ति को अमान्य नहीं करता है। ऐसी सेवा को आमतौर पर "बाल सेवा" कहा जाता है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि बीते वर्षों में कुछ चतुर्थ श्रेणी के पदों के लिए पात्रता की आयु 18 वर्ष की बजाय 16 वर्ष थी। लेकिन, हम इस बारे में कुछ नहीं कह रहे हैं, क्योंकि किसी भी पक्ष ने इस मामले में पात्रता के संबंध में संबंधित समय पर लागू प्रासंगिक नियमों को नहीं रखा। इस प्रकार, याचिकाकर्ता की आयु, जैसा कि मूल रूप से दर्ज की गई है, उसे मजदूर के चतुर्थ श्रेणी के पद पर नियुक्त किए जाने के समय नाबालिग बनाती है, इसके बावजूद प्रतिवादियों के पास याचिकाकर्ता के आचरण की निंदा करने या उस पर इस तथ्य के बारे में शपथपत्र प्रस्तुत करने के लिए दबाव डालने का कोई कारण नहीं था कि जब उसने सेवा में प्रवेश किया था, उस समय

उसकी आयु 18 वर्ष और 7 महीने थी और फिर, उस आधार पर उसकी जन्मतिथि को पुनः निर्धारित किया जाए।

16. अब, यह देखना होगा कि याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत दिनांक 09.01.2012 के शपथपत्र का क्या प्रभाव पड़ता है। उक्त शपथपत्र में इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि प्रतिवादियों की सेवा में प्रवेश करते समय याचिकाकर्ता की आयु 18 वर्ष और 7 महीने थी। बेशक, सेवा पुस्तिका में मूल रूप से दर्ज याचिकाकर्ता की जन्मतिथि 20.02.1967 है। क्या इस शपथपत्र के कारण प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता की जन्मतिथि बदलने का अधिकार मिल जाएगा? हमें नहीं लगता। इसका उत्तर उत्तर प्रदेश सेवा में भर्ती (जन्मतिथि निर्धारण) नियमावली, 1974 के नियम 2 और 3 में मिलता है। नियमावली, 1974 के नियम 2 और 3 इस प्रकार हैं:

2. **सही जन्म तिथि या आयु का निर्धारण-** सरकारी सेवा में प्रवेश के समय हाई स्कूल या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण करने के प्रमाण पत्र में दर्ज सरकारी सेवक की जन्मतिथि या जहां सरकारी सेवक ने पूर्वोक्त कोई परीक्षा उत्तीर्ण नहीं की है या सेवा में शामिल होने के बाद ऐसी परीक्षा उत्तीर्ण की है, सरकारी सेवा में प्रवेश के समय उसकी सेवा पुस्तिका में दर्ज जन्मतिथि या आयु, उसकी सेवा से संबंधित सभी प्रयोजनों के लिए, जिसमें पदोन्नति, सेवानिवृत्ति, समयपूर्व सेवानिवृत्ति या सेवानिवृत्ति लाभों के लिए पात्रता भी शामिल है, यथास्थिति, उसकी सही जन्मतिथि या आयु मानी जाएगी और किसी भी परिस्थिति में ऐसी तिथि या आयु में सुधार के लिए कोई आवेदन या अभ्यावेदन स्वीकार नहीं किया जाएगा।

3. **अधिभावी प्रभाव-** ये नियम, प्रासंगिक सेवा नियमों या आदेशों में निहित किसी भी विपरीत बात के बावजूद, प्रभावी होंगे।

17. 1974 के नियमावली का नियम 2 स्पष्ट है कि किसी व्यक्ति की आयु निर्धारित करने के लिए हाई स्कूल या समकक्ष से कम शिक्षा के प्रमाण पत्र अप्रासंगिक हैं। याचिकाकर्ता के हाई स्कूल के अंकपत्र में दर्ज जन्मतिथि, जिसमें वह परीक्षा में अनुत्तीर्ण रहा, भी प्रासंगिक दस्तावेज नहीं है, और न ही उसकी कक्षा आठ का अंकपत्र, उक्त नियम के अंतर्गत। 1974 के नियमावली के नियम 2 के तहत किसी कर्मचारी के लिए, जो हाई स्कूल पास या समकक्ष प्रमाण पत्र धारक नहीं है, उसकी जन्मतिथि निर्धारित करने के लिए केवल वही प्रासंगिक है जो उसके सेवा में प्रवेश के समय उसकी सेवा पुस्तिका में दर्ज जन्मतिथि या आयु है, ताकि नियम में दिए गए कथन का प्रयोग किया जा सके। नियम 2 के आदेशानुसार सेवा में प्रवेश के समय ऐसे सरकारी कर्मचारी की सेवा पुस्तिका में दर्ज जन्मतिथि को सभी उद्देश्यों के लिए, जिसमें सेवानिवृत्ति भी शामिल है, उसकी सही जन्मतिथि माना जाएगा। नियम 2 के संदर्भ में "माना" कथन का प्रयोग अत्यंत प्रासंगिक है। सरकारी सेवकों के निचले ग्रेड के गैर-मैट्रिकुलेटेड कर्मचारियों के पास, जहाँ भी वे पात्र हों, अपनी जन्मतिथि या यहाँ तक कि आयु के बारे में सटीक अभिलेख नहीं हो सकता है। उनकी आयु से संबंधित विवाद को कम करने के उद्देश्य से, यह मानते हुए कि इस बारे में कोई विश्वसनीय साक्ष्य

नहीं होगा, यह कानून एक काल्पनिक धारणा उत्पन्न करता है कि सेवा में प्रवेश के समय सेवा पुस्तिका में दर्ज जन्मतिथि या आयु, नियम 2 के अंतर्गत सभी उद्देश्यों के लिए सही मानी जाएगी, जिसमें सेवानिवृत्ति भी शामिल है। इसलिए, ऐसे गैर-मैट्रिकुलेटेड कर्मचारी की जन्मतिथि के बारे में कोई अन्य साक्ष्य स्वीकार या जाँच योग्य नहीं है। इस संबंध में श्रीमती कल्याणी देवी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य 2 में इस न्यायालय के निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है। चूंकि इस मुद्दे पर कोई आपत्ति नहीं है कि याचिकाकर्ता की जन्मतिथि, जो मूल रूप से दर्ज की गई थी, 20.02.1967 थी, और बाद में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत दिनांक 09.01.2012 के नोटरी शपथपत्र के आधार पर बदल दी गई थी, इसलिए यह परिवर्तन स्पष्ट रूप से नियमावली 1974 के नियम 2 के विरुद्ध है। इसके अलावा, नियम 3 के आधार पर, 1974 के नियमावली अन्य सभी नियमों पर अधिभावी प्रभाव रखते हैं।

18. इसका परिणाम यह होगा कि याचिकाकर्ता की मूल जन्मतिथि, जो उसकी सेवा पुस्तिका में मूलतः दर्ज है, अर्थात् 20.02.1967, को ही उसकी सही और अपरिवर्तनीय जन्मतिथि माना जाना चाहिए। इसलिए, प्रतिवादियों द्वारा इसके विपरीत निकाला गया निष्कर्ष और आक्षेपित आदेश स्पष्ट रूप से अवैध हैं।

19. परिणामस्वरूप, यह याचिका सफल होती है और स्वीकार की जाती है। कार्य प्रबंधक, सिंचाई कार्यशाला मण्डल, मेरठ द्वारा पारित दिनांक 13.05.2024 और 03.07.2024 के दोनों विवादित आदेश एतद्वारा निरस्त किए जाते हैं। अधीक्षण अभियंता, सिंचाई कार्यशाला मण्डल, लखनऊ, कार्य प्रबंधक, सिंचाई कार्यशाला मण्डल, मेरठ और सहायक अभियंता-II, सिंचाई कार्यशाला खण्ड, मेरठ को यह सुनिश्चित करने के लिए निर्देश दिए गए हैं कि याचिकाकर्ता को वेतन, वेतन वृद्धि और वरिष्ठता के सभी परिणामी लाभों सहित सेवा में तत्काल बहाल किया जाए। याचिकाकर्ता उस अवधि के लिए बकाया वेतन पाने का हकदार होगा जब तक वह नौकरी से बाहर रहा। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि याचिकाकर्ता अपनी सेवा पुस्तिका में मूल रूप से दर्ज जन्मतिथि, अर्थात् 20.02.1967 के अनुसार, सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने तक सेवा में बने रहने का हकदार होगा।

20. लागत के रूप में कोई आदेश नहीं किया जाएगा।

21. रजिस्ट्रार (अनुपालन) को निर्देशित किया जाता है कि वह इस आदेश को विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, लखनऊ के माध्यम से अधीक्षण अभियंता, सिंचाई कार्यशाला मंडल, लखनऊ और निर्माण प्रबंधक को और सिंचाई कार्यशाला मण्डल, मेरठ और सहायक अभियंता-II, सिंचाई कार्यशाला मण्डल, मेरठ, दोनों को विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, मेरठ के माध्यम से प्रेषित करें।

(2025) 2 ILRA 668

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: लखनऊ 11.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अताउ रहमान मसूदी

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी

रिट - ए संख्या 12905 वर्ष 2024

दान बहादुर यादव

...याचिकाकर्ता

बनाम

प्रबंध निदेशक एवं सीईओ बैंक आफ बड़ौदा कॉर्पोरेट सेंटर मुंबई एवं अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता : सालिक राम यादव

प्रतिवादियों के अधिवक्ता : प्रशांत कुमार श्रीवास्तव

(ए) सेवा कानून - पेंशन - बैंक ऑफ बड़ौदा (कर्मचारी) पेंशन विनियमन, 1995 - विनियम 41 - संराशीकरण - केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन का संराशीकरण) नियम, 1981 - नियम 10 ए - संराशीकृत पेंशन की बहाली - विबन्ध का सिद्धांत - वेडनसबरी अनुचितता - पेंशन के संराशीकरण से संबंधित मामले जटिल मामले हैं जिनमें विविध क्षेत्रों से जुड़े जटिल मुद्दे शामिल हैं, जिनके लिए विशेष विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है - ऐसे मामलों में, न्यायालय केवल स्पष्ट और प्रत्यक्ष मनमानी के मामलों में ही कदम उठाएगा।(पैरा-13)

याचिकाकर्ता (बैंक ऑफ बड़ौदा के सेवानिवृत्त कर्मचारी) ने बैंक ऑफ बड़ौदा (कर्मचारी) पेंशन विनियमन, 1995 के विनियमन 41 में संलग्न नोट की वैधता को चुनौती दी - जो संराशीकृत पेंशन की बहाली के लिए 15 वर्ष की अवधि को अनिवार्य करता है - याचिकाकर्ता ने तर्क दिया - संराशीकृत राशि पहले ही 9.81 वर्षों में समायोजित की जा चुकी है, जिससे शेष कटौती अनुचित संवर्धन बन गई है।(पैरा - 2,3,4)

धारित: - याचिकाकर्ता ने 2013 में स्वेच्छा से संराशीकरण योजना स्वीकार कर ली थी और अब उसे इसे चुनौती देने से रोक दिया गया है। 15 साल की बहाली का नियम न तो मनमाना है और न ही अनुचित, और कॉमन कॉज मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इसे बरकरार रखा है। यह प्रावधान अनुचित संवर्धन नहीं है, और इसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।(पैरा -13,19)

2.इला दान बहादुर यादव बनाम प्रबंध निदेशक एवं सीईओ बैंक आफ बड़ौदा कॉर्पोरेट सेंटर मुंबई एवं अन्य 885 याचिका खारिज. (ई-7)

उद्धृत मामलों की सूची:

1. हरि एन. सास्ते एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, सी.ए.टी., मुंबई बेंच, मुंबई, ओ.ए. संख्या 860 वर्ष 2024
2. शिला देवी एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य, सी.डब्ल्यू.पी. संख्या 9426 वर्ष 2023 (ओ एंड एम)
3. "कॉमन कॉज" एक पंजीकृत सोसायटी और अन्य बनाम भारत संघ, (1987) 1 एससीसी 142
4. एसोसिएटेड प्रोविशियल पिक्चर हाउसेस लिमिटेड बनाम वेडनसबरी कॉर्पोरेशन, (1948) 1 केबी 223
5. ईस्ट इंडिया कमर्शियल कंपनी लिमिटेड बनाम कस्टम्स कलेक्टर, एआईआर 1962 एससी 1893

(माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी द्वारा प्रदत्त)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री सालिक राम यादव तथा प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रशांत कुमार श्रीवास्तव को सुना गया।

2. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायर की गई इस रिट याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ता ने बैंक ऑफ बड़ौदा (कर्मचारी) पेंशन विनियमन, 1995 के विनियम 41 में संलग्न एक नोट की वैधता को चुनौती दी है, जो इस प्रकार है: -

"(2) जिस कर्मचारी ने पेंशन के स्वीकार्य भाग को संराशीकृत कर लिया है, वह संराशीकरण की तारीख से पंद्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद पेंशन के संराशीकृत भाग, को बहाल करने का हकदार है।"

3. याचिकाकर्ता ने प्रतिवादी को यह निर्देश देने की मांग की है कि वह याचिकाकर्ता की 9.81 वर्ष की समाप्ति के तुरंत बाद पूर्ण पेंशन बहाल करे, जैसा कि उपरोक्त प्रावधान में 15 वर्ष का प्रावधान है।

4. याचिकाकर्ता 31.03.2013 को बैंक ऑफ बड़ौदा से सेवानिवृत्त हुए और उन्होंने बैंक ऑफ बड़ौदा (कर्मचारी) पेंशन विनियम, 1995 के अध्याय VIII में निहित निम्नलिखित प्रावधानों के अनुसार अपनी पेंशन का 1/3 हिस्सा संराशीकृत करवाया:-

"41. संराशीकरण

(1) एक कर्मचारी अपनी पेंशन के एक तिहाई से अनधिक अंश के एकमुश्त भुगतान के लिए राशि संराशीकृत करने का हकदार होगा:

बशर्ते कि ऐसे कर्मचारी के संबंध में, जो इन विनियमों के विनियम 3 के उपविनियम (5) द्वारा शासित होता है, ऐसे कर्मचारी का परिवार भी एकमुश्त भुगतान के लिए कर्मचारी को स्वीकार्य पेंशन के एक तिहाई से अनधिक अंश को संराशीकृत करने का हकदार होगा।

(2) कर्मचारी को पेंशन का वह अंश बताना होगा, जिसे वह संराशीकृत करना चाहता है, तथा वह या तो एक-तिहाई पेंशन की अधिकतम सीमा या ऐसी निम्नतम सीमा बता सकता है, जिसे वह संराशीकृत करना चाहता है।

(3) यदि पेंशन का अंश, जिसे संराशीकृत किया जाना है, रुपये के अंश के रूप में परिणत होता है, तो रुपये के ऐसे अंश को संराशीकरण के प्रयोजन के लिए नजरअंदाज कर दिया जाएगा।

(4) आवेदक को देय एकमुश्त राशि की गणना नीचे दी गई तालिका के अनुसार की जाएगी।

तालिका
प्रति वर्ष एक रुपये की पेंशन के लिए संराशीकरण मूल्य

अगले जन्मदिन पर आयु	संराशीकरण मूल्य को वर्षों की क्रय संख्या के रूप में व्यक्त किया गया है	अगले जन्म दिन पर आयु	संराशीकरण मूल्य को वर्षों की क्रय संख्या के रूप में व्यक्त किया गया है
17	19.28	51	12.95
18	19.20	52	12.66
19	19.11	53	12.35
20	19.01	54	12.05
21	18.91	55	11.73
22	18.81	56	11.42
23	18.70	57	11.10
24	18.59	58	10.78
25	18.47	59	10.46
26	18.34	60	10.13
27	18.21	61	9.81

2.इला दान बहादुर यादव बनाम प्रबंध निदेशक एवं सीईओ बैंक आफ बड़ौदा कॉर्पोरेट सेंटर मुंबई एवं अन्य 887

28	18.07	62	9.48
29	17.93	63	9.15
30	17.78	64	8.82
31	17.62	65	8.50
32	17.46	66	8.17
33	17.29	67	7.85
34	17.11	68	7.53
35	16.92	69	7.22
36	16.72	70	6.91
37	16.52	71	6.60
38	16.31	72	6.30
39	16.09	73	6.01
40	15.87	74	5.72
41	15.64	75	5.44
42	15.40	76	5.17
43	15.15	77	4.90
44	14.90	78	4.65
45	14.64	79	4.40
46	14.37	80	4.17
47	14.10	81	3.94
48	13.82	82	3.72
49	13.54	83	3.52
50	13.25	84	3.32
		85	3.13

नोट्स:

(1) उपरोक्त तालिका पेंशन के संराशीकृत मूल्य को दर्शाती है, जिसे पेंशनभोगी के अगले जन्मदिन पर उसकी आयु के संदर्भ में क्रय वर्षों की संख्या के रूप में व्यक्त किया गया है। 58 वर्ष की आयु में सेवानिवृत्त होने वाले कर्मचारी के मामले में संराशीकृत मूल्य 10.46 वर्ष क्रय वर्ष है, इसलिए यदि वह सेवानिवृत्ति के एक वर्ष के भीतर अपनी पेंशन से सौ रुपये संराशीकृत करता है, तो उसे देय एकमुश्त राशि $100 \text{ रुपये} \times 10.46 \times 12 = 12,552 \text{ रुपये}$ होगी।

(2) एक कर्मचारी जिसने पेंशन के स्वीकार्य भाग को संराशीकृत कर दिया है, वह संराशीकरण की तारीख से पंद्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात पेंशन के संराशीकृत भाग को बहाल करने का हकदार है।

(3)...

(4)...

(5)...

(6)..."

5. उपर्युक्त विनियमन में निहित प्रावधानों के अनुसार, याचिकाकर्ता संराशीकरण की तारीख से 15 वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद पूर्ण पेंशन की बहाली का हकदार होगा, अर्थात् 01.04.2028 से प्रभावी होगा, जो कि 01.04.2013 के पेंशन भुगतान आदेश में स्पष्ट रूप से उल्लिखित है। याचिकाकर्ता ने उपर्युक्त विनियम की वैधता को चुनौती दी है और उन्होंने प्रस्तुत किया है कि संराशीकरण के माध्यम से उनके द्वारा प्राप्त राशि 9.81 वर्षों के भीतर समायोजित कर दी गई है और वे उपरोक्त अवधि के बाद पूर्ण पेंशन की बहाली के हकदार हैं। याचिकाकर्ता ने प्रस्तुत किया है कि 15 वर्षों के लिए पेंशन की कटौती का मतलब होगा कि विरोधी पक्ष संराशीकृत की गई राशि पर 8% प्रति वर्ष की दर से ब्याज ले रहे हैं, जो पेंशनरों/वरिष्ठ नागरिकों की कीमत पर राज्य के अन्यायपूर्ण संवर्धन के बराबर है। इस प्रावधान को मनमाना और अनुचित बताया गया है।

6. याचिकाकर्ता ने तर्क दिया है कि केंद्र शासित प्रदेश चंडीगढ़ ने दिनांक 04.09.2024 को एक कार्यालय जापन जारी किया है जिसमें निर्देश दिया गया है कि उन पेंशनभोगियों से संराशीकरण राशि की वसूली रोक दी जाए, जिन्होंने अपनी सेवानिवृत्ति की तारीख से दस वर्ष पूरे कर लिए हैं और वह उपरोक्त कार्यालय जापन की समानता की मांग कर रहे हैं।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, मुंबई पीठ, मुंबई द्वारा ओ.ए. संख्या 860 वर्ष 2024, जिसका शीर्षक हरि एन. सास्ते और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य है, में पारित दिनांक 11.11.2024 के निर्णय और आदेश पर भरोसा किया है।

8. दूसरी ओर प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता ने बैंक ऑफ बड़ौदा (कर्मचारी) पेंशन विनियमन, 1995 के विनियम 41 में निहित प्रावधानों और उससे जुड़ी शर्तों के अनुसार पेंशन प्रतिवादियों का लाभ वर्ष 2013 में ही प्राप्त कर लिया था, जिसमें यह शर्त भी शामिल थी कि उसकी

2.इला दान बहादुर यादव बनाम प्रबंध निदेशक एवं सीईओ बैंक आफ बड़ौदा कॉर्पोरेट सेंटर मुंबई एवं अन्य 889 पूरी पेंशन 15 वर्ष बाद, अर्थात् 01.04.2028 से बहाल कर दी जाएगी। याचिकाकर्ता ने लाभ प्राप्त करते समय इस शर्त को चुनौती नहीं दी थी। अब उसे उस लाभ से जुड़ी शर्त को चुनौती देने से रोक दिया गया है जिसका लाभ उसने एक दशक से भी अधिक समय पहले प्राप्त किया था।

9. प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने शिला देवी एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य - सी.डब्ल्यू.पी. संख्या 9426 वर्ष 2023 (ओ एंड एम) में पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ द्वारा 27.11.2024 को पारित निर्णय के साथ-साथ 807 अन्य रिट याचिकाओं का हवाला दिया है, जिनमें याचिकाकर्ताओं ने पंजाब सिविल सेवा, खंड-II के अध्याय XI में निहित प्रावधानों के अनुसार अपनी पेंशन के संराशीकरण का विकल्प चुना था। रिट याचिकाओं में यह प्रश्न था कि क्या याचिकाकर्ताओं की पेंशन का हिस्सा पंजाब सिविल सेवा नियम, खंड-II के नियम 11.1(2) के अनुसार संराशीकरण की तिथि से 15 वर्ष पूरे होने के बाद बहाल किया जाना चाहिए या इसे कम अवधि अर्थात् लगभग 12 वर्ष बाद बहाल किया जाना चाहिए। नियम 11.1 में निम्नलिखित प्रावधान है: -

11.1 (1) एक सरकारी कर्मचारी, सेवानिवृत्ति/समयपूर्व सेवानिवृत्ति पर, अपनी पेंशन के 40% (चालीस प्रतिशत) से अनधिक अंश को एकमुश्त भुगतान के लिए संराशीकृत करने का हकदार होगा। तथापि, सेवानिवृत्ति अर्थात् अधिवर्षिता/समयपूर्व सेवानिवृत्ति पर इस प्रकार संराशित पेंशन का अंश, सेवानिवृत्ति की तिथि से 15 वर्ष पूरे होने पर या संराशीकरण मूल्य की वास्तविक प्राप्ति से 15 वर्ष पूरे होने पर, जो भी बाद में हो, उसे वापस कर दिया जाएगा।

(2)..."

पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय ने उपरोक्त प्रावधान को दी गई चुनौती को खारिज कर दिया और धारित किया कि: -

"27. यह अभिलेख में दर्ज है कि हमारे समक्ष सभी याचिकाकर्ता सेवानिवृत्त कर्मचारी हैं जिन्होंने सच में पेंशन के संराशीकरण का लाभ उठाया है। बेशक, कुछ कर्मचारियों की पेंशन भी बहाल हो गई है। सभी याचिकाकर्ता 21.07.1998 की अधिसूचना जारी होने के समय सेवा में थे। उन्होंने पेंशन की बहाली के लिए 15 साल की निर्धारित अवधि पर कभी कोई आपत्ति नहीं जताई। एक ऐसे लाभ का लाभ उठाने के बाद जो स्पष्ट रूप से स्वैच्छिक प्रकृति का है, याचिकाकर्ताओं के लिए इस स्तर पर ऊपर बताई गई शिकायतों को उठाना, शर्तों में बदलाव की मांग करना और खुली आंखों से स्वीकार करना संभव नहीं है। वे स्वीकृत नियमों और शर्तों के अनुसार उनके द्वारा जमा की गई राशि की वसूली की मांग करने के हकदार नहीं हैं।

28. इस तथ्यात्मक मैट्रिक्स में, यह तर्क कि यह पेंशन से संबंधित होने के कारण कार्रवाई का एक सतत कारण है स्पष्ट रूप से अस्वीकार्य है। जैसा कि प्रार्थना किया गया है राज्य को 11.5 वर्ष या 12 वर्ष की अवधि की समाप्ति पर पेंशन बहाल करने या इस प्रकार वसूली गई राशि वापस करने के लिए कोई भी निर्देश देने का सवाल ही नहीं है। राज्य के लिए यह आवश्यक है कि वह जटिल प्रश्नों और अंतर्निहित मापदंडों पर

गहराई से विचार करने के बाद एक सुविचारित निर्णय ले, जो मुद्दों के मूल्यांकन में शामिल होंगे। निस्संदेह, पेंशन के संराशीकरण से संबंधित मामले जटिल होते हैं जिनमें विविध क्षेत्रों से जुड़े पेचीदा मुद्दे शामिल होते हैं जिनके लिए विशिष्ट विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। यह एक स्थापित स्थिति है कि ऐसे मामलों में न्यायालय केवल तभी हस्तक्षेप करेगा जब स्पष्ट और प्रत्यक्ष मनमानी हो। याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत करने में असमर्थ रहे जिससे यह पता चले कि अपनाया गया फॉर्मूला स्वयं में और स्पष्टतः तर्कहीन या मनमाना है। जिसके लिए इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की आवश्यकता है।”

10. पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के "कॉमन कॉज" एक पंजीकृत सोसायटी एवं अन्य बनाम भारत संघ: (1987) 1 एससीसी 142, के मामले में दिए गए निर्णय का हवाला दिया है, जो कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत 'कॉमन कॉज', एक पंजीकृत सोसायटी और तीन सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारियों द्वारा दायर एक रिट याचिका थी, जिसमें सिविल और रक्षा पेंशनभोगियों पर लागू पेंशन के संराशीकरण नियमों के कुछ प्रावधानों को चुनौती दी गई थी, जिसके अनुसार जब कोई पेंशनभोगी अपनी पेंशन के किसी भी हिस्से को अधिकृत सीमा तक संराशीकृत करता था, तो उसके जीवन के शेष समय के लिए उसकी पेंशन में मासिक पेंशन से संराशीकृत हिस्से की कटौती कर दी जाती थी। इस प्रकार भारत संघ ने संराशीकरण पर पेंशनभोगियों को दिए गए भुगतान से अधिक की वसूली की। याचिकाकर्ताओं ने यह निर्देश देने की प्रार्थना की थी कि संराशीकरण से संबंधित प्रावधानों को युक्तिसंगत बनाने वाली एक उपयुक्त योजना लागू की जाए। याचिकाकर्ताओं की ओर से यह तर्क दिया गया कि भारत में लोगों की जीवन प्रत्याशा में पर्याप्त सुधार हुआ है, जिसका प्रतिवादी की ओर से खंडन नहीं किया गया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सुनवाई के दौरान प्रतिवादी को सुझाव दिया था कि देश में तत्कालीन बदली हुई परिस्थितियों में, इस मामले पर नए सिरे से विचार किया जाना चाहिए। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए सुझाव के सम्मान में, भारत संघ सभी असैन्य कर्मचारियों के लिए सत्तर वर्ष की आयु या पंद्रह वर्ष की आयु के बाद, जो भी बाद में हो, पेंशन के संराशीकृत हिस्से को बहाल करने पर सहमत हो गया। इसके बाद केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन का संराशीकरण) नियमावली, 1981 में निम्नलिखित नियम जोड़ा गया:-

“10 ए. संराशीकृत पेंशन की बहाली - “पेंशन की संराशीकृत राशि, नियम 6 के अनुसार संराशीकरण के कारण पेंशन में कटौती के प्रभावी होने की तारीख से पंद्रह वर्ष पूरे होने पर बहाल की जाएगी: परंतु जब पेंशन के ऊपर की ओर संशोधन के कारण संराशीकरण राशि का भुगतान एक से अधिक अवसरों पर किया गया हो, तो पेंशन की संबंधित संराशीकृत राशि संबंधित तारीख (तारीखों) से पंद्रह वर्ष पूरे होने पर बहाल की जाएगी।”

याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया कि पेंशन से संराशीकृत हिस्सा आमतौर पर लगभग 12 वर्षों में वसूल हो जाता है, इसलिए इस अवधि को 15 वर्ष निर्धारित करने का कोई औचित्य नहीं है। संराशीकरण से कुछ लाभ होते हैं। इस तर्क को खारिज करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने धारित किया कि कि: -

2.इला दान बहादुर यादव बनाम प्रबंध निदेशक एवं सीईओ बैंक आफ बड़ौदा कॉर्पोरेट सेंटर मुंबई एवं अन्य 891

"5... संराशीकृत पेंशनभोगी को एकमुश्त राशि मिलती है जो आमतौर पर उसे एक निश्चित अवधि में मिलती, बशर्ते वह जीवित रहे। इस प्रकार, संराशीकरण से निश्चित रूप से दो लाभ होते हैं - (1) एकमुश्त राशि की उपलब्धता, और (2) जोखिम कारक। कई राज्य सरकारें पहले ही 15 साल के नियम को स्वीकार करते हुए योजनाएँ बना चुकी हैं। इस पृष्ठभूमि में, हमें नहीं लगता कि जहाँ तक नागरिक जीवन का सवाल है, 15 साल के फॉर्मूले में बदलाव करना उचित होगा।"

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे धारित किया कि: -

"9. इस प्रकार के मामलों से निपटने में, जीवन बीमा के उदाहरण से निर्देशित होना उचित नहीं है; ब्याज के आधार को अपनाना भी उतना ही अन्यायपूर्ण होगा। दूसरी ओर, निष्कर्ष को "खरीद के वर्षों" के आधार से जोड़कर निकाला जाना चाहिए। खरीद के वर्षों के आधार पर वसूली के लिए आवश्यक अवधि में दो वर्ष जोड़ना 15-वर्ष के नियम को अपनाने को उचित ठहराता है। यही वह आधार है जो कमोबेश न्यायसंगत प्रतीत होता है..." (जोर दिया गया)

11. याचिकाकर्ता ने उपरोक्त विनियमन की वैधता को चुनौती दी है और प्रस्तुत किया है कि उसे संराशीकरण के माध्यम से प्राप्त राशि 9.81 वर्षों के भीतर समायोजित कर दी गई है और वह उपरोक्त अवधि के बाद पूरी पेंशन की बहाली का हकदार है। याचिकाकर्ता ने कहा है कि 15 वर्षों तक पेंशन में कटौती का अर्थ यह होगा कि विपक्षी पक्ष संराशीकरण राशि पर 8% प्रति वर्ष की दर से ब्याज वसूल रहे हैं, जो पेंशनभोगियों/वरिष्ठ नागरिकों की कीमत पर राज्य को अनुचित रूप से समृद्ध करने के समान है।

12. याचिकाकर्ता ने तर्क दिया है कि 15 वर्षों के बाद पूर्ण पेंशन की बहाली का प्रावधान वेडनसबरी अनुचितता से ग्रस्त है। वेडनसबरी अनुचितता का सिद्धांत एसोसिएटेड प्रोविंशियल पिक्चर हाउस, लिमिटेड बनाम वेडनसबरी कॉर्पोरेशन: (1948) 1 केबी 223 में प्रतिपादित किया गया था, जिसमें प्रतिवादी निगम ने वादी कंपनी को, जो गौमोंट सिनेमा, वेडनसबरी, स्टैफोर्डशायर का मालिक और लाइसेंसधारी था, रविवार मनोरंजन अधिनियम, 1932 की धारा 1 (1) के तहत रविवार को प्रदर्शन देने का लाइसेंस दिया था; लेकिन लाइसेंस इस शर्त के अधीन दिया गया था कि "पंद्रह वर्ष से कम उम्र के किसी भी बच्चे को किसी भी मनोरंजन में शामिल नहीं किया जाएगा, चाहे उसके साथ कोई वयस्क हो या नहीं।" वादी ने यह घोषित करने की मांग की कि यह शर्त अधिकारहीन और अनुचित थी। दावे को खारिज करते हुए, किंग्स बेंच ने कानून का निम्नलिखित प्रस्ताव रखा, जिसे 'वेडनसबरी सिद्धांत' के रूप में जाना जाता है और जिसका भारत में न्यायालय द्वारा लगातार पालन किया जा रहा है: -

"यह कहना सही है कि अगर किसी सक्षम मामले पर कोई निर्णय इतना अनुचित है कि कोई भी उचित प्राधिकारी उस पर कभी नहीं पहुँच सकता, तो न्यायालय हस्तक्षेप कर सकते हैं। ...यह वह नहीं है जिसे न्यायालय अनुचित मानता है, यह बिल्कुल अलग बात है। अगर यह वह है जिसे न्यायालय अनुचित मानता है,

तो इस तरह के उच्च सार्वजनिक नीतिगत मामलों पर न्यायालय के विचार स्थानीय प्राधिकारी से अलग हो सकते हैं। कुछ न्यायालय सोच सकते हैं कि रविवार को बच्चों को बिल्कुल भी प्रवेश नहीं दिया जाना चाहिए, कुछ न्यायालय इसके विपरीत सोच सकते हैं, और मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि पूरे देश में ईमानदार और निष्ठावान लोग अलग-अलग विचार रखते हैं। इस कानून का उद्देश्य न्यायालय को एक विचार की दूसरे पर सही होने का मध्यस्थ बनाना नहीं है। स्थानीय प्राधिकरण ही इस स्थिति में हैं और, बशर्ते वे अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर, जैसा कि उन्होंने किया है, कार्य करें, मेरी राय में, यह न्यायालय हस्तक्षेप नहीं कर सकता।"

13. हमें संराशीकृत पेंशन की बहाली के लिए 15 वर्ष की अवधि नियत करने की नीति को निर्धारित करने वाले विनियमन को दी गई चुनौती की जाँच वेडनसबरी की अनुचितता की कसौटी पर करनी होगी। पूर्ण पेंशन की बहाली के लिए 15 वर्ष की अवधि निर्धारित करने वाला विनियमन बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा तैयार किया गया है। पेंशन के संराशीकरण से संबंधित मामले जटिल होते हैं और इनमें विविध क्षेत्रों से जुड़े जटिल मुद्दे शामिल होते हैं जिनके लिए विशिष्ट विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। यह एक स्थापित स्थिति है कि ऐसे मामलों में न्यायालय केवल स्पष्ट और प्रत्यक्ष मनमानी की स्थिति में ही कदम उठाएगा।

14. बैंक ऑफ बड़ौदा (कर्मचारी) पेंशन विनियम, 1995 के नियम 41 के साथ संलग्न नोट 2 में केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन संराशीकरण) नियम, 1981 के नियम 10-ए के समान एक प्रावधान है, जिसकी वैधता की जाँच माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कॉमन कॉज (उपरोक्त) मामले में पहले ही की जा चुकी है और उसे बरकरार रखा गया है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने वर्तमान मामले को कॉमन कॉज (उपरोक्त) मामले से अलग करने का कोई प्रयास नहीं किया। इसलिए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कॉमन कॉज (उपरोक्त) मामले में निर्धारित कानून के आलोक में याचिकाकर्ता के उपरोक्त तर्कों का कोई महत्व नहीं है।

15. इसके अलावा, याचिकाकर्ता ने वर्ष 2013 में पेंशन के संराशीकरण का लाभ उठाया, पेंशन की बहाली के लिए 15 वर्ष की निर्धारित अवधि पर कोई आपत्ति नहीं जताई और इसलिए याचिकाकर्ता को उस विनियमन की वैधता को चुनौती देने से रोक दिया गया है, जो इसके संराशीकरण के 15 साल बाद पूर्ण पेंशन की बहाली का प्रावधान करता है।

16. केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, मुंबई पीठ, मुंबई द्वारा ओ.ए. संख्या 860 वर्ष 2024 में पारित दिनांक 11.11.2024 के निर्णय और आदेश पर भरोसा करने के संबंध में, यह कहना पर्याप्त है कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 141 यह प्रावधान करता है कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित कानून भारत के क्षेत्र के भीतर सभी न्यायालयों पर बाध्यकारी होगा।

17. ईस्ट इंडिया कमर्शियल कंपनी लिमिटेड बनाम कस्टम्स कलेक्टर: एआईआर 1962 एससी 1893 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने धारित किया कि: -

2.इला दान बहादुर यादव बनाम प्रबंध निदेशक एवं सीईओ बैंक आफ बड़ौदा कॉर्पोरेट सेंटर मुंबई एवं अन्य 893

“31....अनुच्छेद 215 के अंतर्गत, प्रत्येक उच्च न्यायालय एक अभिलेख न्यायालय होगा और उसे ऐसे न्यायालय की सभी शक्तियाँ प्राप्त होंगी, जिनमें स्वयं की अवमानना के लिए दंड देने की शक्ति भी शामिल है। अनुच्छेद 226 के अंतर्गत, उसे अपने क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति या प्राधिकरण, जिसमें उपयुक्त मामलों में कोई सरकार भी शामिल है, को मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन और किसी अन्य उद्देश्य के लिए आदेश या रिट जारी करने की पूर्ण शक्ति प्राप्त है। अनुच्छेद 227 के अंतर्गत, उसे उन सभी न्यायालयों और न्यायाधिकरणों पर अधिकार क्षेत्र प्राप्त है, जिनके संबंध में वह अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करता है। यह कहना असंगत होगा कि कोई न्यायाधिकरण, जिस पर उच्च न्यायालय का अधीक्षण है, उस न्यायालय द्वारा घोषित कानून की अवहेलना कर सकता है और उसके सीधे उल्लंघन में कार्यवाही शुरू कर सकता है। यदि एक न्यायाधिकरण ऐसा कर सकता है, तो सभी अधीनस्थ न्यायालय भी समान रूप से ऐसा कर सकते हैं, क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय की तरह, उच्च न्यायालय द्वारा घोषित कानून को अधीनस्थ न्यायालयों पर बाध्यकारी बनाने का कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है। एक उच्चतर न्यायाधिकरण को प्रदत्त पर्यवेक्षण शक्ति में यह निहित है कि उसके पर्यवेक्षण के अधीन सभी न्यायाधिकरण इसके द्वारा निर्धारित कानून का पालन करें। ऐसा पालन उनके सुचारु संचालन के लिए भी अनुकूल होगा: अन्यथा, कानून के प्रशासन में भ्रम की स्थिति पैदा होगी और कानून के प्रति सम्मान अपूरणीय रूप से कम हो जाएगा। इसलिए, हमारा मानना है कि राज्य के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित कानून उसके अधीन आने वाले प्राधिकारियों या न्यायाधिकरणों पर बाध्यकारी है, और वे किसी कार्यवाही को शुरू करने या ऐसी कार्यवाही में शामिल अधिकारों पर निर्णय लेने में इसकी अनदेखी नहीं कर सकते...।” (जोर दिया गया)

18. न्यायाधिकरणों को माननीय सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानूनों का पालन करना होता है, जिनके अधीन वे कार्य करते हैं, लेकिन उनके पास कानून बनाने का अधिकार नहीं है। इसलिए, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण के निर्णय पर भरोसा करना गलत है।

19. इसके अतिरिक्त, केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, मुंबई पीठ ने दिनांक 11.11.2024 को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कॉमन कॉज (उपरोक्त) में निर्धारित कानून का उल्लेख किए बिना और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि के सिद्धांत के विरुद्ध आदेश पारित किया है, जो आदेश को अमान्य करता है। याचिकाकर्ता या कोई भी व्यक्ति माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का उल्लंघन करते हुए न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश के आधार पर किसी भी लाभ का दावा नहीं कर सकता।

20. उपरोक्त चर्चा के दृष्टिगत, हमें इसमें कोई दम नहीं लगता और तदनुसार रिट याचिका खारिज की जाती है।

(2025) 2 ILRA 675

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 11.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति अजय भनोट

रिट - ए संख्या 16401 वर्ष 2024

सूर्य प्रताप सिंह

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

सत्येंद्र चंद्र त्रिपाठी

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

सीएससी, जितेंद्र ओझा, रामा नंद पांडे

ए. याचिकाकर्ता ने 16.08.2024 के उस आदेश को चुनौती दी थी जिसके तहत उसे बूथ लेवल ऑफिसर (बीएलओ) के रूप में चुनाव ड्यूटी सौंपी गई थी। निर्णय में कहा गया है कि अधिकारियों को चुनाव ड्यूटी के लिए शिक्षकों की तैनाती की समीक्षा और संशोधन करना चाहिए। शिक्षकों की नियुक्ति तभी की जानी चाहिए जब अन्य सभी श्रेणियों (पटवारी, पंचायत सचिव आदि) के पद रिक्त हों। समीक्षा होने तक, याचिकाकर्ता को केवल छुट्टियों के दिनों में या स्कूल के समय के बाद ही ड्यूटी करनी चाहिए। (पैरा 1 से 42)

रिट याचिका का निपटारा किया जाता है। (ई-6)

उद्धृत मामलों की सूची:

1. सुनीता शर्मा एडवोकेट हाईकोर्ट एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश एवं अन्य, जनहित याचिका संख्या 11028/2015
2. निर्भय सिंह एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, रिट ए संख्या 26204/2021
3. ईसीआई बनाम सेंट मैरी स्कूल (2008) एआईआर एससी 655
4. उत्तर प्रदेशीय प्राथमिक शिक्षक संघ एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश एवं अन्य, जनहित याचिका संख्या 36449/2016
5. सुधीर कुमार शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, रिट ए संख्या 34551/2015

6. उमाकांत रामकृष्ण माहुरे बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य, WP संख्या 6718 वर्ष 2019
7. सत्येंद्र कुमार सांडिल्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य (2018) 11 एडीजे 393
8. महेश स्वामी व अन्य बनाम राजस्थान राज्य व अन्य डब्ल्यूपी संख्या 17945/2021
9. श्रीमती रेखा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, आपराधिक विविध जमानत आवेदन संख्या 25993/2024
10. अविनाश नागरा बनाम नवोदय विद्यालय समिति (1997) 2 एससीसी 534
11. विनीत मिश्रा बनाम बीएचयू (2023) एससीसी ऑनलाइन सभी 2972
12. सुष्मिता बसु बनाम बल्लीगंज शिक्षा समिति (2006) 7 एससीसी 680

(माननीय न्यायमूर्ति अजय भनोट द्वारा पारित)

1. चर्चा को सुविधाजनक बनाने के लिए निर्णय को निम्नलिखित वैचारिक ढांचे में संरचित किया जा रहा है:

ए	परिचय								
बी	प्रस्तुतियाँ								
सी	तथ्य								
डी	निर्धारण हेतु उठने वाले मुद्दे								
ई	शिक्षा का अधिकार और शिक्षकों को चुनाव कर्तव्यों के आवंटन के परिणाम: केस लॉ								
एफ	चुनाव दिशानिर्देश दिनांक 04.10.2022 <table> <tr> <td>क</td><td>चुनाव आयोग दिशानिर्देश संख्या 1.2 उन कर्मचारियों की श्रेणियां जिन्हें बूथ लेवल अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जा सकता है</td></tr> </table>	क	चुनाव आयोग दिशानिर्देश संख्या 1.2 उन कर्मचारियों की श्रेणियां जिन्हें बूथ लेवल अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जा सकता है						
क	चुनाव आयोग दिशानिर्देश संख्या 1.2 उन कर्मचारियों की श्रेणियां जिन्हें बूथ लेवल अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जा सकता है								
जी	चुनाव आयोग दिशानिर्देश संख्या 1.5डी दिनांक 04.10.2022 <table> <tr> <td>क</td><td>शिक्षा का महत्व</td></tr> <tr> <td>ख</td><td>शिक्षकों की भूमिका</td></tr> <tr> <td>ग</td><td>शिक्षण: शिक्षकों के लिए खाली समय की आवश्यकता और छुट्टियों/खाली समय का उत्पादक रूप से उपयोग करने का शिक्षण पर प्रभाव</td></tr> <tr> <td>घ</td><td>चुनाव दिशानिर्देश संख्या 1.5डी शिक्षकों की न्यूनतम नियुक्ति: व्याख्या और निष्कर्ष</td></tr> </table>	क	शिक्षा का महत्व	ख	शिक्षकों की भूमिका	ग	शिक्षण: शिक्षकों के लिए खाली समय की आवश्यकता और छुट्टियों/खाली समय का उत्पादक रूप से उपयोग करने का शिक्षण पर प्रभाव	घ	चुनाव दिशानिर्देश संख्या 1.5डी शिक्षकों की न्यूनतम नियुक्ति: व्याख्या और निष्कर्ष
क	शिक्षा का महत्व								
ख	शिक्षकों की भूमिका								
ग	शिक्षण: शिक्षकों के लिए खाली समय की आवश्यकता और छुट्टियों/खाली समय का उत्पादक रूप से उपयोग करने का शिक्षण पर प्रभाव								
घ	चुनाव दिशानिर्देश संख्या 1.5डी शिक्षकों की न्यूनतम नियुक्ति: व्याख्या और निष्कर्ष								

एच	अंतिम निर्देश

क. परिचय

2. दिनांक 16.08.2024 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता को बूथ लेवल अधिकारी के रूप में चुनाव कर्तव्यों का निर्वहन करने का निर्देश दिया गया है।

बी. विद्वान अधिवक्ताओं की प्रस्तुतियाँ

3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री सत्येन्द्र चन्द्र त्रिपाठी ने निम्नलिखित तर्क दिए हैं:-

i) याचिकाकर्ता को सौंपे गए चुनाव कर्तव्य, सहायक अध्यापक के रूप में याचिकाकर्ता के कामकाज में हस्तक्षेप करेंगे।

ii) बूथ लेवल अधिकारी का कार्य सतत प्रकृति का होता है और चुनाव कर्तव्यों में कोई कमी नहीं आने दी जाएगी।

iii) याचिकाकर्ता की चुनाव इयूटी पर नियुक्ति शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 और **सुनीता शर्मा एडवोकेट उच्च न्यायालय एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य** में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के विरुद्ध है।

iv) याचिकाकर्ता को चुनाव इयूटी पर तैनात करना शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के प्रावधानों के विपरीत है और इससे उसके शिक्षण कार्य में बाधा उत्पन्न होगी।

(v) उपर्युक्त नियुक्ति चुनाव इयूटी पर शिक्षकों की नियुक्ति के लिए प्रासंगिक चुनाव आयोग के दिशानिर्देशों के भी विपरीत है।

4. भारत निर्वाचन आयोग के विद्वान अधिवक्ता श्री जितेन्द्र ओझा और विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता श्री रामा नंद पांडे ने निम्नलिखित तर्क दिया है:-

i) याचिकाकर्ता की बूथ स्तरीय अधिकारी के रूप में नियुक्ति शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 और उससे संबंधित चुनाव आयोग के नियमों के अनुरूप है। याचिकाकर्ता को आवंटित चुनाव कर्तव्यों का उसके शिक्षण कर्तव्यों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

ii) **निर्भय सिंह एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य** मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया।

5. उभय पक्ष के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।

सी. तथ्य

6. विवाद के निर्णय के लिए प्रासंगिक स्वीकृत तथ्य ये हैं:

याचिकाकर्ता एक प्राथमिक विद्यालय में सहायक अध्यापक है। याचिकाकर्ता को 16.08.2024 के आदेश द्वारा बूथ स्तरीय अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया है और उसे राज्य विधानसभा चुनावों के लिए मतदाता सूची के पुनरीक्षण जैसे चुनाव संबंधी कार्य सौंपे गए हैं। इस प्रकार आवंटित कार्य कोई एक बार के कार्य नहीं प्रतीत होते। उक्त चुनाव कार्यों में यदि स्थायी नहीं तो एक दीर्घकालिक प्रतिबद्धता शामिल होती है।

डी. निर्धारण हेतु उठने वाले मुद्दे:

7. इस मामले और अन्य संबद्ध रिट याचिकाओं के तथ्यों और परिस्थितियों में विचारणीय मुद्दा यह है कि चुनाव इयूटी पर तैनात शिक्षकों की नियुक्ति के लिए लागू चुनाव दिशानिर्देशों का दायरा क्या है और उनके कार्यान्वयन का तरीका क्या है।

ई. शिक्षा का अधिकार और शिक्षकों को चुनाव कर्तव्यों के आवंटन के परिणाम: केस लॉ

8. चुनाव इयूटी के लिए शिक्षकों की तैनाती के मुद्दे की संवैधानिक न्यायालयों द्वारा कई अवसरों पर जांच की गई।

9. शिक्षकों को चुनाव संबंधी दायित्व सौंपे जाने के परिणामस्वरूप, बच्चों को प्राप्त शिक्षा के मौलिक अधिकार और एक लोकतांत्रिक देश में चुनावी प्रक्रिया के सर्वोपरि महत्व के बीच स्पष्ट असंगति, **भारत निर्वाचन आयोग बनाम सेंट मैरी स्कूल** मामले में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ उठी। स्पष्टतः भिन्न मांगों में सामंजस्य स्थापित करते हुए, सेंट मैरी स्कूल (उपरोक्त) ने निम्नलिखित शब्दों में कानून प्रस्तुत किया:

"27. यद्यपि 1950 और 1951 के अधिनियमों के प्रावधान भारतीय संविधान के अनुच्छेद 324 के अनुसार अधिनियमित किए गए थे, फिर भी उन्हें सीमित अर्थ दिया जाना चाहिए। चुनाव कराना निस्संदेह अत्यंत महत्वपूर्ण है। लेकिन उक्त उद्देश्य के लिए बच्चों की शिक्षा की उपेक्षा नहीं की जा सकती। इसलिए, दोनों के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है।

28. तकनीक के आगमन के साथ, चुनाव कराने के लिए बड़ी संख्या में लोगों की आवश्यकता शायद न रहे। हम देख सकते हैं कि चुनाव आयोग की भूमिकाएँ अलग-अलग हैं। मतदाता सूची तैयार करना, मतदाता सूची का पुनरीक्षण, आपत्तियाँ कब दर्ज की जाएँ, पक्षों की सुनवाई और आपत्तियों का निपटारा, मतदाता सूची की गणना और समय पर चुनाव कराना। हमारी राय में, चुनाव आयोग और उसके अधिकारी एक प्रभावी योजना बना सकते हैं जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि बड़ी संख्या में शिक्षकों की सेवाओं की आवश्यकता न पड़े।

राज्य शिक्षा प्रदान करने के अपने संप्रभु कार्य को करने में सक्षम नहीं है। ऐसे कार्य अनिवार्य रूप से निजी संस्थाओं द्वारा किए जाने चाहिए। जो छात्र सरकारी स्कूलों में प्रवेश पाने की स्थिति में हैं, वे संभवतः ट्यूटर नियुक्त करने की स्थिति में भी होंगे, जबकि सरकारी स्कूलों में प्रवेश पाने वाले छात्र आमतौर पर मध्यम या निम्न मध्यम वर्ग या गरीब परिवारों से होते हैं। भारत में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति दयनीय है। स्कूलों से, विशेष रूप से बालिका विद्यालयों में, बड़ी संख्या में छात्र पढ़ाई छोड़ देते हैं। यदि मताधिकार का प्रयोग करने का अधिकार, जिस पर श्री वेणुगोपाल ने जोर दिया है, एक महत्वपूर्ण प्रश्न है, तो शिक्षा का अधिकार भी एक मौलिक अधिकार होने के नाते कम महत्वपूर्ण नहीं है।

29. मानवाधिकार सम्मेलनों ने संविदाकारी राज्यों पर उच्च शिक्षा के ऐसे संस्थान स्थापित करने का दायित्व आरोपित किया है जिनसे यह निष्कर्ष निकले कि उनके नागरिकों को उन तक पहुँच का प्रभावी अधिकार प्रदान किया जाना चाहिए। एक लोकतांत्रिक समाज में, विकास के अधिकार को मानवाधिकार के रूप में व्याख्यायित करने में शिक्षा का अधिकार अपरिहार्य है। [लेयला साहिन बनाम तुर्की, यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय द्वारा 10 नवंबर, 2005 को निर्णीत] देखें। इस प्रकार, विकास के अधिकार को भी एक बुनियादी मानवाधिकार माना जाता है।

30. संभवतः इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, चुनाव आयोग की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने भी प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित अन्य अधिवक्ताओं के साथ मिलकर अदालत को यह सुझाव दिया था कि जिन दिनों स्कूल खुले हों, उन दिनों शिक्षकों की सेवाएँ न ली जाएँ। श्री वेणुगोपाल का यह तर्क कि चुनाव आयोग की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने ऐसा कोई तर्क नहीं दिया, स्वीकार नहीं किया जा सकता।

31. तथापि, हमने मामले पर कुछ विस्तार से विचार किया है, क्योंकि संवैधानिक अधिकार और विशेष रूप से मौलिक अधिकार के अनुप्रयोग के संबंध में प्रश्न को केवल एक अधिवक्ता द्वारा दी गई रियायत के कारण विफल नहीं किया जा सकता है।

32. हालाँकि, हम ध्यान दें कि चुनाव आयोग ने हमारे समक्ष यह भी स्पष्ट रूप से कहा था कि जहाँ तक संभव हो, शिक्षकों को छुट्टियों, गैर-शिक्षण दिवसों और गैर-शिक्षण घंटों में मतदाता सूची पुनरीक्षण कार्य में लगाया जाएगा; जबकि गैर-शिक्षण कर्मचारियों को किसी भी समय इयूटी पर लगाया जा सकता है। इसलिए, हम निर्देश देते हैं कि सभी शिक्षण कर्मचारियों को छुट्टियों और गैर-शिक्षण दिनों में मतदाता सूची पुनरीक्षण और चुनाव कार्यों में लगाया जाएगा। शिक्षकों को आमतौर पर शिक्षण दिवसों और शिक्षण घंटों के दौरान इयूटी पर नहीं लगाया जाना चाहिए। हालाँकि, गैर-शिक्षण कर्मचारियों को किसी भी दिन या किसी भी समय ऐसी इयूटी पर लगाया जा सकता है, यदि कानून द्वारा अनुमति हो।

10. उत्तर प्रदेशीय प्राथमिक शिक्षक संघ एवं 3 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं 7 अन्य मामले में इस न्यायालय में शिक्षकों को बूथ स्तरीय अधिकारी के रूप में विभिन्न चुनावी कर्तव्यों जैसे मतदाता सूची की

तैयारी, संशोधन, रखरखाव और प्रतिलिपिकरण करने के निर्देश देने वाले आदेशों की वैधता को चुनौती दी गई थी।

11. **उत्तर प्रदेशीय प्राथमिक शिक्षक संघ (उपरोक्त)** मामले में इस न्यायालय की विद्वान खंडपीठ ने **सेंट मैरी स्कूल (उपरोक्त)** को देखने के बाद शिक्षकों को गैर-शिक्षण दिवसों और गैर-शिक्षण घंटों के दौरान चुनावी झूटी पर लगाने के राज्य के रुख को बरकरार रखा:

प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि वे शिक्षण कर्मचारियों को गैर-शिक्षण दिवसों और गैर-शिक्षण घंटों के दौरान झूटी पर रखेंगे, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने उपर्युक्त पैराग्राफ में कहा है। उनका दलील दर्ज की गई है और उसे स्वीकार किया गया है। इसके मद्देनजर, रिट याचिका में अब और कुछ नहीं बचा है। रिट याचिका का निस्तारण किया जाता है।"

12. **सुनीता शर्मा (उपरोक्त)** मामले में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के अंतर्गत कार्डधारक परिवारों के समावेशन एवं बहिष्करण के सत्यापन का कार्य प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों को सौंपने के मुख्य सचिव के निर्देशों की वैधता पर प्रश्न उठाया गया था।

13. शिक्षकों को गैर-शैक्षणिक कर्तव्यों का आवंटन और शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के उल्लंघन तथा भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21-ए के अधिदेश के उल्लंघन की संभावना का निर्धारण **सुनीता शर्मा (उपरोक्त)** मामले में किया गया था। **सुनीता शर्मा (उपरोक्त)** में समाज में शिक्षा के मूल्य और शिक्षकों के कर्तव्यों के संदर्भ में इन मुद्दों की जाँच करते हुए निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले:-

"छह से चौदह वर्ष की आयु के बच्चों के निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा के अधिकार को निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम, 2009 की धारा 3(1) में वैधानिक रूप से मान्यता दी गई है। यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21-ए द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकार के अनुसरण में है। अधिनियम के अध्याय IV में विद्यालयों और शिक्षकों के उत्तरदायित्वों का प्रावधान है। धारा 27 में विशेष रूप से गैर-शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए शिक्षकों की तैनाती पर प्रतिबंध है। धारा 27 के तहत, किसी भी शिक्षक को दशकीय जनगणना, आपदा राहत कर्तव्यों या स्थानीय प्राधिकरण, राज्य विधानमंडलों या संसद के चुनावों से संबंधित कर्तव्यों के अलावा किसी भी गैर-शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए तैनात नहीं किया जाएगा। इस वैधानिक प्रतिबंध के मद्देनजर, पात्र कार्डधारक परिवारों के सत्यापन के लिए शिक्षकों की सेवाओं की मांग करना राज्य की ओर से स्पष्ट रूप से गैरकानूनी और अधिकार क्षेत्र से बाहर है। 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार संवैधानिक रूप से संरक्षित है। अधिनियम में वैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त अधिकार। यदि राज्य को संविदा कर्मचारियों की भर्ती करके या उपयुक्त वैकल्पिक व्यवस्था करके सत्यापन कार्य पूरा करने के लिए कर्मचारियों की आवश्यकता होती है, तो वह शक्तिहीन नहीं है, लेकिन ऐसी व्यवस्था में शिक्षकों की तैनाती शामिल नहीं हो सकती। शिक्षकों का कर्तव्य केवल छात्रों को पढ़ाना है। उनकी स्थिति को राज्य के एक सहायक

कर्मचारी तक सीमित नहीं किया जा सकता। यह कहना कोई उत्तर नहीं है, जैसा कि जिला आपूर्ति अधिकारी ने प्रति-शपथपत्र में कहा है, कि शिक्षकों को स्कूल की इयूटी से मुक्त होने पर सत्यापन कार्य करने के लिए कहा जाता है। स्कूल में काम के घंटे पूरे होने के बाद एक शिक्षक से अपेक्षा की जाती है कि वह अगले दिन की कक्षाओं की तैयारी में समय बिताए और बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के लिए अपने ज्ञान और सीखने की प्रक्रिया को आगे बढ़ाए। यह मानने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि स्कूल के घंटों के बाद, पात्र परिवारों के सत्यापन जैसे सहायक कर्तव्यों को पूरा करने में एक शिक्षक पर बोझ डालना, छात्रों को पढ़ाने की उसकी क्षमता और सामर्थ्य को कम करेगा। यदि राज्य छह से चौदह वर्ष की आयु के बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा के अधिकार को लागू करने के बारे में गंभीर है, तो उसे यह समझने का समय आ गया है। उत्तर प्रदेश राज्य ने कहा है कि शिक्षकों के साथ इस तरह का लापरवाही भरा और कठोर व्यवहार नहीं किया जा सकता। किसी समाज की सभ्यता की परिभाषा शिक्षा के प्रति उसके मूल्य और शिक्षकों के प्रति उसके सम्मान से होती है। ये पारंपरिक मूल्य हो सकते हैं, लेकिन सौभाग्य से, कुछ मूल्य शाश्वत होते हैं। शिक्षा प्रदान करने में शिक्षक की भूमिका एक महत्वपूर्ण तत्व है, जिसे मान्यता, संरक्षण और पालन मिलना चाहिए। राज्य के किसी अधिकारी द्वारा की गई ऐसी कार्रवाई स्पष्ट रूप से राज्य को सौंपे गए कर्तव्य का उल्लंघन है....."

(जोर दिया गया)

14. इस न्यायालय की विद्वान खंडपीठ ने **सुधीर कुमार शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं 2 अन्य** मामले में शिक्षकों को सौंपे गए चुनाव कर्तव्यों के संबंध में निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम, 2009 की धारा 27 के दायरे पर विचार किया, लेकिन **सुनीता शर्मा (उपरोक्त)** मामले में इस न्यायालय के निर्णय को निम्नलिखित तर्क के आधार पर उक्त मामलों के तथ्यों पर लागू करने से इनकार कर दिया:

"उपर्युक्त निर्णय के आलोक में हम पाते हैं कि चूंकि विचाराधीन कार्य, जो शिक्षक को सौंपा गया है, वह बच्चों के निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009 की धारा 27 के दायरे और परिधि में नहीं आता है, इसलिए इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह दृष्टिकोण अपनाया है कि जिला प्रशासन कानून के प्राधिकार के बिना ऐसे कर्तव्यों के निष्पादन के लिए प्राथमिक विद्यालय और जूनियर हाई स्कूल से याचिकाकर्ता की सेवाओं की मांग नहीं करेगा। धारा 27 में स्वयं उल्लेख किया गया है कि किसी भी शिक्षक को दशकीय जनसंख्या जनगणना, आपदा राहत कर्तव्यों या स्थानीय प्राधिकरण, या राज्य विधानमंडलों या संसद के चुनावों से संबंधित कर्तव्यों के अलावा किसी भी गैर-शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए तैनात नहीं किया जाएगा। इस प्रकार धारा 27 अपने आप में एक अपवाद स्थापित करती है तथा दशकीय जनसंख्या जनगणना, आपदा राहत कर्तव्यों या स्थानीय प्राधिकरण, राज्य विधानमंडलों या संसद के चुनावों से संबंधित कर्तव्यों के संबंध में तैनाती की अनुमति देती है, जैसा भी मामला हो।"

15. तत्पश्चात, **सेंट मैरी स्कूल (उपरोक्त)** का हवाला देते हुए, **सुधीर कुमार शर्मा (उपरोक्त)** में विद्वान खंडपीठ ने कानून का निम्नलिखित प्रस्ताव प्रस्तुत किया:-

"चूंकि मतदाता सूची का पुनरीक्षण भी जारी चुनाव प्रक्रिया का अभिन्न अंग है और मतदाता सूची के पुनरीक्षण के लिए बूथ स्तर के अधिकारियों को सूची के पुनरीक्षण के मामले में सहयोग करने के लिए कहा गया है, तो यह कहना कि अनुच्छेद 21-ए और धारा 27 उक्त उद्देश्य के लिए प्राथमिक विद्यालय के साथ-साथ जूनियर हाई स्कूल के शिक्षण स्टाफ की सेवाओं की मांग को प्रतिबंधित करता है, मामले के तथ्यों में स्वीकार नहीं किया जा सकता है, लेकिन निश्चित रूप से उक्त समय पर, सेंट मैरी कॉन्वेंट (उपरोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों को संबंधित अधिकारियों द्वारा ध्यान में रखना होगा और ध्यान रखा जाना चाहिए कि शिक्षण पक्ष का सामान्य कामकाज बिल्कुल भी बाधित/बाधित न हो।"

16. इस न्यायालय की विद्वान खंडपीठ ने **निर्भय सिंह एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य** मामले में शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के आलोक में शिक्षकों द्वारा किए जाने वाले चुनावी कर्तव्यों का पुनः परीक्षण किया। **निर्भय सिंह (उपरोक्त)** मामले में निम्नलिखित प्रश्न विद्वान खंडपीठ को भेजे गए थे:-

"(1) क्या निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम, 2009 की धारा 27 के प्रावधान, कानून के समुचित प्रावधानों के अंतर्गत स्थानीय निकाय, राज्य विधानसभा या संसद से संबंधित चुनाव अधिसूचना जारी होने से पहले, चुनाव से संबंधित किसी भी प्रकार के कर्तव्यों को करने के लिए शिक्षकों की तैनाती की अनुमति देते हैं?

(2) क्या स्थानीय निकाय, राज्य विधानसभा या संसद के चुनावों से संबंधित अधिसूचना जारी होने से पहले या बाद में, शिक्षकों को शिक्षण दिवसों या शिक्षण समय के दौरान किसी भी प्रकार के चुनाव संबंधी कार्य में लगाया जा सकता है?

17. **निर्भय सिंह (उपरोक्त)** में विद्वान खंडपीठ ने उक्त प्रश्नों का उत्तर इस प्रकार दिया:-

"प्रश्नों के उत्तर

29. प्रश्न संख्या 1 का उत्तर सकारात्मक रूप से दिया गया है कि शिक्षकों को स्थानीय निकाय, राज्य विधानसभा या संसद के चुनाव से संबंधित अधिसूचना जारी होने से पहले भी चुनाव इयूटी के लिए तैनात किया जा सकता है, जिसमें मतदाता सूची के पुनरीक्षण का कार्य भी शामिल है।

प्रश्न संख्या 2 का उत्तर नकारात्मक है, जिसमें कहा गया है कि शिक्षकों को शिक्षण दिवसों या शिक्षण घंटों के दौरान तैनात नहीं किया जा सकता, लेकिन गैर-शिक्षण दिवसों और गैर-शिक्षण घंटों में तैनात किया जा सकता है।

30. वृहद पीठ द्वारा संदर्भित प्रश्नों का उत्तर देते हुए, वर्तमान रिट याचिका को अब 29 अगस्त, 2022 को रोस्टर के अनुसार एकल पीठ के समक्ष रखा जाए।"

18. शिक्षकों को सौंपे गए चुनाव संबंधी कार्यों और बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 की धारा 27 के टकराव के संबंध में मुद्दा **उमाकांत रामकृष्ण माहुरे बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, रिट याचिका संख्या 6718/2019** में बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ के समक्ष विचार के लिए रखा गया था, जिस पर 18.02.2020 को निर्णय हुआ।

19. **उमाकांत रामकृष्ण माहुरे (उपरोक्त)** मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय ने **सेंट मैरी स्कूल (उपरोक्त)** के आलोक में भारत के चुनाव आयोग द्वारा जारी विभिन्न निर्देशों पर विचार किया और कहा:-

"(i) याचिकाकर्ता, जो शिक्षक हैं, बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 की धारा 27 के प्रावधानों के अंतर्गत आते हैं, उन्हें छुट्टियों और गैर-शिक्षण घंटों में मतदाता सूची को अद्यतन करने सहित चुनाव ड्यूटी करने के लिए बुलाया जा सकता है।

(ii) यदि किसी याचिकाकर्ता के विरुद्ध विद्यालय समय के दौरान ड्यूटी करने से इनकार करने पर प्राथमिकी दर्ज की जाती है, तो उस पर मुकदमा नहीं चलाया जाएगा। हालाँकि, यदि याचिकाकर्ता भारत निर्वाचन आयोग के निर्देशों के अनुसार काम करने से इनकार करते हैं, तो प्रतिवादियों को ऐसी कार्रवाई जारी रखने की छूट होगी।

20. इसी प्रकार, **सत्येन्द्र कुमार सांडिल्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** मामले में पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने भी यह राय व्यक्त की थी कि **सेंट मैरी स्कूल (उपरोक्त)** के मददेनजर चुनाव संबंधी कर्तव्यों पर शिक्षकों की तैनाती पर कानून में कोई रोक नहीं है।

21. **महेश स्वामी एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य** मामले में राजस्थान उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने भी चुनावी ड्यूटी पर शिक्षकों की नियुक्ति को बरकरार रखा था।

एफ. चुनाव दिशानिर्देश संख्या 1.2 दिनांक 04.10.2022.

(क) कर्मचारियों की श्रेणियाँ जिन्हें बूथ स्तर अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जा सकता है

22. बूथ स्तरीय अधिकारियों की नियुक्ति भारत निर्वाचन आयोग के दिनांक 04.10.2022 के दिशानिर्देशों द्वारा शासित और विनियमित होती है।

23. उपर्युक्त दिशानिर्देशों की दिशानिर्देश संख्या 1.2 में विभिन्न श्रेणियों के सरकारी/अर्ध-सरकारी कर्मचारियों को बूथ स्तरीय अधिकारी के रूप में नियुक्त करने का प्रावधान है। उक्त प्रावधान नीचे उद्धृत है:-

1.2 बूथ लेवल अधिकारी की नियुक्ति निम्नलिखित श्रेणियों के सरकारी/अर्धसरकारी कर्मचारियों में से की जा सकती है:

- (i) शिक्षक,
- (ii) आंगनवाड़ी कार्यकर्ता,
- (iii) पटवारी/अमीन/लेखपाल,
- (iv) पंचायत सचिव,
- (v) ग्राम स्तरीय कार्यकर्ता,
- (vi) बिजली बिल रीडर,
- (vii) डाकिया,
- (viii) सहायक नर्स और दाइयां,
- (ix) स्वास्थ्य कार्यकर्ता,
- (x) मध्याह्न भोजन कार्यकर्ता,
- (xi) अनुबंध शिक्षक,
- (xii) निगम कर संग्राहक, और
- (xiii) शहरी क्षेत्र में लिपिकीय कर्मचारी (यूडीसी/एलडीसी आदि)

जी. चुनाव आयोग दिशानिर्देश संख्या 1.5डी दिनांक 04.10.2022

(क) शिक्षा का महत्व

24. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21-ए में वर्णित हमारे समाज में शिक्षा का सर्वोपरि स्थान **श्रीमती रेखा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य** के मामले में इस न्यायालय के समक्ष विचारार्थ आया:-

"IV(सी). बच्चे: शिक्षा और समय विकास

"यदि कोई राष्ट्र सभ्यता की स्थिति में अज्ञानी और स्वतंत्र होने की आशा करता है, तो वह ऐसी अपेक्षा करता है जो न कभी थी और न कभी होगी।"

~थॉमस जेफरसन

13. शिक्षा किसी भी राष्ट्र की स्वतंत्रता की आधारशिला और आर्थिक समृद्धि का इंजन है। शिक्षा ने मानव प्रजाति के संरक्षण और मानव सभ्यता के विकास की गारंटी दी है।

14. शिक्षा केवल रोजगार प्राप्त करने के लिए कक्षा में दी जाने वाली किताबी शिक्षा नहीं है। शिक्षा की अवधारणा इतनी व्यापक है कि यह मानव अस्तित्व के विभिन्न पहलुओं को समाहित करती है और मानव जीवन के हर

पहलू को छूती है। होमो सेपियंस की अपने स्थान और अपने आसपास के ब्रह्मांड के साथ अपने संबंधों को समझकर स्वयं को समझने और विकसित करने की क्षमता भी शिक्षा में समाहित है।

15. शिक्षा एक ऐसे समग्र वातावरण की परिकल्पना करती है जो उत्कृष्टता के अनुरूप मानवीय क्षमताओं के विकास के लिए अनुकूल हो। स्वस्थ जीवनशैली की आदतों का विकास, सुदृढ़ नैतिक मूल्यों और चरित्र का विकास, तथा व्यावसायिक एवं शैक्षणिक ज्ञान का समावेश, किसी भी विधि-शासित राष्ट्र की शिक्षा की परिकल्पना का हिस्सा होते हैं।

16. शिक्षा हमारे संवैधानिक लक्ष्य को प्राप्त करने का प्राथमिक साधन है। सर्वपल्ली राधाकृष्णन का यह विचार कि "सरकार का उद्देश्य कार्यकुशलता नहीं, बल्कि सर्वकालिक शिक्षा है" राष्ट्र के शासन में एक मार्गदर्शक कारक है। शिक्षा के अधिकार को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21ए के अंतर्गत एक मौलिक अधिकार के रूप में शामिल किया गया था ताकि प्रस्तावना में संक्षेप में वर्णित हमारे संवैधानिक लक्ष्यों को साकार किया जा सके। विधायिका ने शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 पारित करके शिक्षा के मौलिक अधिकार को साकार करने के लिए व्यापक ढाँचे और विस्तृत तंत्र भी तैयार किए।

25. सर्वोच्च न्यायालय ने **अविनाश नागरा बनाम नवोदय विद्यालय समिति** मामले में संवैधानिक कानून में शिक्षा के महत्व को स्थापित किया था, जिसमें सामाजिक परिवर्तन के साधन और उत्कृष्टता के साधन के रूप में शिक्षा के महत्व पर बल दिया गया था।

"6. शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो बच्चे के बौद्धिक, नैतिक और शारीरिक विकास के लिए अच्छे चरित्र निर्माण, सामाजिक प्रतिष्ठा में गतिशीलता, समानता का अवसर और लोगों में आवश्यक जागृति सहित सामाजिक परिवर्तन लाने का एक सशक्त साधन प्रदान करती है। शिक्षा बौद्धिक, नैतिक और सामाजिक लोकतंत्र को बढ़ावा देती है। शिक्षा अच्छी नागरिकता की नींव रखती है और बच्चे को बौद्धिक और सांस्कृतिक गतिविधियों और मूल्यों के प्रति जागृत करने का एक प्रमुख साधन है, जिससे वह आगे के व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए तैयार होता है और उसे नए वातावरण में समायोजित होने में मदद मिलती है। इसलिए, शिक्षा को हमारे विकासशील राष्ट्र की सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक आवश्यकताओं से जोड़ा जाना चाहिए, धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को बढ़ावा देना चाहिए, जातिवाद, भाषावाद, धार्मिक कट्टरता की बाधाओं को तोड़ना चाहिए और सामाजिक परिवर्तन के एक साधन के रूप में कार्य करना चाहिए। शिक्षा उत्कृष्टता की खोज की ज्वाला प्रज्वलित करती है, युवा मन को अंधविश्वास की बजाय तर्कशक्ति से अपनी बुद्धि को अधिक प्रखर बनाने में सक्षम और उत्कृष्ट बनाती है ताकि वह बौद्धिक ऊँचाइयों तक पहुँच सके और उसमें सामाजिक समानता और व्यक्ति की गरिमा के लिए प्रयास करने की भावना पैदा हो।"

(ख) शिक्षकों की भूमिका

26. भारतीय संस्कृति में शिक्षकों का स्थान सदैव आदरणीय रहा है तथा हमारे संवैधानिक विमर्श में भी उनका स्थान सदैव ऊंचा रहा है।

27. भारतीय परम्पराओं और विचारों में शिक्षकों को जिस उच्च स्थान पर रखा गया है, उसे **अविनाश नागरा (उपरोक्त)** में भारतीय समाज में शिक्षकों की वर्तमान भूमिका को समझाने के लिए स्मरण किया गया है:

"9. पृष्ठ 133 पर शिक्षक के कार्यों पर, डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार, शैक्षिक प्रक्रिया की सफलता काफी हद तक शिक्षक पर निर्भर करती है, क्योंकि शिक्षक ही वह व्यक्ति है जिसे छात्रों में लक्ष्य स्थापित करने और उनके चरित्र का निर्माण करना होता है। लास्की के अनुसार, शिक्षा के मूल में, किसी विश्वविद्यालय की गुणवत्ता हमेशा उसके शिक्षक की गुणवत्ता के सीधे अनुपात में होती है। एक अच्छा शिक्षक वह होता है जो अपने विषय को जानता हो, उसके प्रति उत्साही हो और जो कभी सीखना बंद न करे। छात्रों के साथ संवाद और अपने कार्य के प्रति प्रतिबद्धता आवश्यक है। इसलिए, डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार, एक अच्छा शिक्षक वह होता है जो वस्तुनिष्ठ, न्यायप्रिय, विनम्र और सुधार के लिए तत्पर हो। व्हाइटहेड के अनुसार शिक्षक को आत्मविश्वासी और विद्वान होना चाहिए। इसलिए, शिक्षक युवाओं को बौद्धिक और नैतिक मूल्यों का संचार करने वाला प्राथमिक कार्यकर्ता है। उसे स्वतंत्र अन्वेषण और तर्कसंगत चिंतन की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करना चाहिए। शिक्षक को अभिमान, पूर्वाग्रह, जुनून और इच्छा के बोझ को हटाने का प्रयास करना चाहिए जो छात्र की दृष्टि को धुंधला कर सकते हैं। एक समर्पित शिक्षक केवल बच्चे के बौद्धिक विकास के साथ-साथ उसके नैतिक, भावनात्मक और सामाजिक विकास पर भी ध्यान देना उसका दायित्व है।

10. राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा है कि "एक शिक्षक चरित्रहीन नहीं हो सकता। अगर उसमें चरित्र का अभाव है, तो वह स्वादहीन नमक के समान होगा। एक शिक्षक को अपने विद्यार्थियों के हृदय को छूना चाहिए। बच्चे पुस्तकों से ज़्यादा शिक्षक के जीवन से सीखते हैं। अगर शिक्षक अपने विद्यार्थियों को दुनिया का सारा ज्ञान दे दें, लेकिन उनमें सत्य और पवित्रता का संचार न करें, तो वे उनके साथ विश्वासघात करेंगे।" श्री अरबिंदो ने कहा है कि "शिक्षक का कर्तव्य है कि वह मशाल को ऊंचा उठाए रखे, हर समय और हर जगह इस बात पर जोर दे कि हमारे इस राष्ट्र की स्थापना आदर्शवाद पर हुई है और समय की प्रवृत्तियाँ चाहे जो भी हों, हमारे बच्चे सूर्य की किरणों के बीच रहना सीखेंगे।" डॉ. एस. राधाकृष्णन ने कहा है कि "हम अपने देश में शिक्षकों को गुरु या आचार्य मानते हैं।" आचार्य वह होता है जिसका आचार या आचरण अनुकरणीय हो। उसे सदाचार या अच्छे आचरण का उदाहरण होना चाहिए। उसे अपने अधीन सौंपे गए शिष्यों को सद्गुण और भलाई के प्रति प्रेम से प्रेरित करना चाहिए। एक सच्चे शिक्षक का आदर्श है अंधकारनिधिता गुरु इत्य भिधीयते। अंधकार केवल बौद्धिक अज्ञान नहीं है, बल्कि आध्यात्मिक अंधापन भी है। जो इस प्रकार के आध्यात्मिक अंधेपन को दूर करने में सक्षम है, उसे गुरु कहा जाता है। क्या हम आचार्य या गुरु की महान उपाधि के पात्र हैं? स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि "छात्र को बचपन से ही ऐसे व्यक्ति के साथ रहना चाहिए जिसका चरित्र प्रज्वलित अग्नि हो और उसके सामने सर्वोच्च शिक्षा का जीवंत उदाहरण हो। हमारे देश में ज्ञान का वितरण सदैव त्यागी पुरुषों द्वारा किया जाता रहा है। ज्ञान प्रदान करने का भार पुनः त्यागियों के कंधों पर आना चाहिए।"

11. इसीलिए, इसी पृष्ठभूमि में, भारतीय समाज ने शिक्षक को "गुरु ब्रह्मा, गुरु विष्णु, गुरु देवो महेश्वरः" के रूप में प्रतिष्ठित किया है। ब्रह्मा के रूप में, शिक्षक ज्ञान, विद्या और बुद्धि का सृजन करता है और अपने शिष्यों में से ऐसे स्त्री-पुरुषों का निर्माण भी करता है जो योग्यता, ज्ञान, अनुशासन और बौद्धिकता से युक्त हों ताकि वे अपने जीवन की चुनौतियों का सामना कर सकें। विष्णु के रूप में, शिक्षक विद्या का संरक्षक है। महेश्वर के रूप में, वह अज्ञान का नाश करता है। अतः, स्पष्टतः, शिक्षक को माता-पिता से भी नीचे स्थान दिया गया है। राज्य ने शिक्षक की सेवा शर्तों का ध्यान रखा है और वह स्वयं तथा समाज के प्रति दोहरे मौलिक कर्तव्यों का पालन करता है। एक महान शिक्षण पेशे के सदस्य और भारत के नागरिक के रूप में उन्हें सदैव तत्पर, आत्म-अनुशासित, सत्यनिष्ठा से समर्पित होकर ज्ञान का सदैव अधिगमकर्ता बने रहना चाहिए, बुद्धिमत्तापूर्वक स्पष्ट शब्दों में संवाद करना चाहिए और अपने विद्यार्थियों में सामाजिक कर्तव्य के रूप में शिक्षा प्रदान करनी चाहिए, उन्हें अनुशासन में बड़ा करना चाहिए, हिंसा का परित्याग करना चाहिए और उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करना चाहिए, साथ ही जीवन के किसी भी क्षेत्र में निरंतर उच्च स्तर तक पहुँचने के लिए खोजबीन और सुधार की भावना रखनी चाहिए, अनुच्छेद 51-ए में निहित संवैधानिक आदर्शों का पोषण करना चाहिए ताकि विद्यार्थी देश के जिम्मेदार नागरिक बन सकें। इस प्रकार शिक्षक को व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से शिक्षकों के एक समुदाय के रूप में, संविधान में निहित धर्मनिरपेक्ष विचारधाराओं के साथ संविधानवाद के व्यापक परिप्रेक्ष्य में आध्यात्मिकता की प्रवृत्ति के साथ इस समर्पण को पुनर्जीवित करना चाहिए, जो कानून के शासन के तहत समतावादी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने के लिए राज्य का एक अंग है। इसलिए, जब समाज ने ऐसा दर्जा दिया है, तो शिक्षक का आचरण, चरित्र, योग्यता और स्वभाव विद्यार्थी को एक अनुशासित नागरिक, सीखने के लिए जिज्ञासु, जीवन के किसी भी क्षेत्र में समर्पण, अनुशासन और निष्ठा के साथ आगे बढ़ने के लिए बौद्धिक, जिज्ञासु मन वाला बनाना चाहिए, न कि अंधविश्वासी रूढ़िबद्ध मान्यताओं वाला। शिक्षक द्वारा प्रदान की जाने वाली शिक्षा समाज के विकास, समृद्धि और कल्याण के लिए विद्यार्थी के स्तर का निर्धारण करती है। इसलिए, शिक्षक की गुणवत्ता, योग्यता और चरित्र, विद्यार्थियों की योग्यता, चरित्र और क्षमता को लोकतांत्रिक संस्थाओं के सफल संचालन के लिए ढालने और उन्हें जीवन के बाद के वर्षों में विभिन्न जिम्मेदारियों में एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में बनाए रखने के लिए सबसे महत्वपूर्ण हैं। एक समर्पित और अनुशासित शिक्षक के बिना, सर्वोत्तम शिक्षा प्रणाली भी विफल होने के लिए बाध्य है। इसलिए, शिक्षक का कर्तव्य है कि वह विद्यार्थियों की ऐसी देखभाल करे जैसा एक सावधान अभिभावक अपने बच्चों की करता है और जहाँ शिक्षक की लापरवाही है, वहाँ प्रतिनिधि दायित्व का सामान्य सिद्धांत लागू होगा। विद्यार्थी की आयु और जिस गतिविधि में वह भाग लेता है उसकी प्रकृति, एक शिक्षक द्वारा अपेक्षित स्तर और पर्यवेक्षण को निर्धारित करने वाले महत्वपूर्ण कारक हैं।

28. **विनीत मिश्रा बनाम बनारस हिंदू विश्वविद्यालय** में इस न्यायालय ने शिक्षकों के योगदान पर चर्चा करते हुए कहा:

"19. आज के विश्वविद्यालयों में भारतीय परंपराओं की निरंतरता में शिक्षक सभी छात्रों के लिए आदर्श बने हुए हैं, और विश्वविद्यालय भविष्य के नेतृत्व को विकसित करने वाली नर्सरी बने हुए हैं। आदर्श के रूप में

शिक्षक हमारे युवाओं में सकारात्मक बदलाव के लिए सर्वोत्तम उत्प्रेरक हैं, और शिक्षण संस्थानों के रूप में विश्वविद्यालय, मस्तिष्क को ढालने के लिए सर्वोत्तम वातावरण प्रदान करते हैं।

41. भारत में शिक्षा का इतिहास विचारों की स्वतंत्रता, तर्क के प्रति दृढ़ निष्ठा और ज्ञान की सीमाओं के विस्तार के आधार के रूप में जीवन के अनुभवों को स्वीकार करने की विशेषता रखता है। ज्ञान और सत्य की खोज में उपनिषदों के शिक्षकों और शिष्यों के दृष्टिकोण पर टिप्पणी करते हुए सी. राजगोपालाचारी ने कहा:

"विशाल कल्पना, विचारों का भव्य विस्तार और अन्वेषण की लगभग उन्मुक्त भावना, जिसके द्वारा सत्य की अदम्य प्यास से प्रेरित होकर उपनिषद के शिक्षक और शिष्य ब्रह्माण्ड के खुले रहस्य की खोज करते हैं, विश्व की सबसे प्राचीन पवित्र पुस्तक को आज भी सबसे आधुनिक और सबसे संतोषजनक बनाते हैं।"

29. **सुष्मिता बसु बनाम बल्लीगंज शिक्षा समिति** मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने हमारे समाज में शिक्षक की पारंपरिक स्थिति पर प्रकाश डाला तथा भविष्य के भारत के निर्माण में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका पर भी प्रकाश डाला।

"5. हमें याद रखना चाहिए कि शिक्षण का पेशा एक महान पेशा है। यह केवल रोज़ी-रोटी कमाने के अर्थ में रोज़गार नहीं है। एक शिक्षक राष्ट्र के जीवन में एक महान भूमिका निभाता है। वह "गुरु" है। शिक्षक ही है जो अपने छात्रों को न केवल ज्ञान, बल्कि कर्तव्य, धर्म और राष्ट्र के कल्याण के प्रति समर्पण, और साथ ही मन और हृदय के अन्य गुणों का संचार करके भावी नागरिकों का निर्माण करता है। यदि शिक्षक अधिक वेतन और सुविधाओं की माँग करते हैं, तो निजी शिक्षण संस्थानों के मामले में, यदि माँग मान ली जाती है, तो सामान्य परिणाम यह होगा कि वे छात्रों द्वारा देय शुल्क में वृद्धि करके बोझ छात्रों पर डाल देंगे। शिक्षकों को स्वयं से यह प्रश्न पूछना चाहिए कि क्या उन्हें औसत आय वाले परिवारों के माता-पिता के बच्चों की पहुँच से बाहर शिक्षा को बढ़ावा देना चाहिए। एक शिक्षक का पेशा राष्ट्र के हित में थोड़े से त्याग की माँग करता है। एक शिक्षक की मुख्य संपत्ति उसके पूर्व और वर्तमान छात्र होते हैं। आदर्शों पर खरा उतरने वाले शिक्षकों का उनके शिष्य बहुत सम्मान करते हैं। हमारे लोकाचार में गुरु का स्थान ईश्वर के समान है (मठ पीठ गुरु दैवम्)। आज के शिक्षकों को यह सुनिश्चित करना होगा कि इस महान भारतीय अवधारणा और उनके द्वारा धारण किए गए सम्माननीय स्थान को लोभ की वेदी पर बलि न चढ़ाया जाए।

(ग) शिक्षण: शिक्षकों के लिए अवकाश के समय की आवश्यकता और छुट्टियों/खाली समय का शिक्षण पर उत्पादक प्रभाव

30. शिक्षण बौद्धिक पूँजी का उपभोग करता है और शिक्षकों के भावनात्मक भंडार का उपयोग करता है। शिक्षण समय के बाद शिक्षक निरंतर चिंतन, निर्बाध बौद्धिक पूँजी निर्माण और मानवीय मूल्यों के निरंतर पुनरुद्धार में लगे रहते हैं, जो उनके कर्तव्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक हैं। स्कूल के बाद के समय को शिक्षक व्यर्थ नहीं गँवाते। शिक्षकों को इस खाली समय का उपयोग अपने ज्ञान को उन्नत करने, अपने व्यावसायिक कौशल

को निखारने और अपने क्षितिज को व्यापक बनाने में फलदायी रूप से करना चाहिए। स्कूल के बाद के समय का उपयोग शिक्षक अक्सर छात्रों द्वारा जमा की गई नोटबुक, वर्कशीट और असाइनमेंट को सही करने के लिए करते हैं। इस समय में शिक्षक अपने विद्यार्थियों का मूल्यांकन भी करते हैं और छात्रों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विशिष्ट योजनाएँ बनाते हैं।

31. शिक्षण की गुणवत्ता अक्सर शिक्षकों द्वारा ड्यूटी के बाद और छुट्टियों में उपलब्ध खाली समय में किए गए पठन और मनन से निर्णायक रूप से प्रभावित होती है। शिक्षकों के लिए छुट्टियाँ बौद्धिक अन्वेषण और उच्च मानवीय क्षमताओं के गहन विकास का एक आश्रय स्थल होती हैं, जिससे शिक्षण कौशल और क्षमताओं का निर्माण होता है। गैर-शिक्षण घंटों का संरचित उपयोग और उत्पादक रूप से व्यतीत की गई छुट्टियाँ शिक्षण घंटों में बेहतर परिणाम और रचनात्मक परिणाम प्रदान करती हैं।

32. राज्य प्राधिकारी शिक्षकों के खाली समय का हल्के में या लापरवाही से अतिक्रमण नहीं कर सकते। जब तक अन्य विकल्पों पर पूरी तरह से विचार और प्रयोग नहीं किया जाता, शिक्षकों को उनके आत्मचिंतन के समय से विचलित नहीं किया जा सकता या खाली समय में स्व-शिक्षा के उनके प्रयासों से विचलित नहीं किया जा सकता।

33. कई लोग मानते हैं कि एक शिक्षक अपने कार्य समय में पढ़ता है और अवकाश के समय सीखता है। वास्तव में, सीखना शिक्षण का एक पहलू है और शिक्षण, सीखने की अभिव्यक्ति है। दोनों प्रक्रियाएँ एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। सीखना और सिखाना साथ-साथ चलते हैं और मानव ज्ञान के भंडार को भरने तथा एक अधिक परिपूर्ण मानव जाति के विकास को बढ़ावा देने के लिए सदैव एक-दूसरे को सुदृढ़ करते हैं। शिक्षण कला में निपुण व्यक्ति अपने कार्य समय और अवकाश के समय में कोई भेद नहीं करता। सच्चे शिक्षक केवल शिक्षा में उत्कृष्टता के अपने दृष्टिकोण और मन को ढालने तथा जीवन को प्रकाशित करने के अपने प्रयास का अनुसरण करते हैं; यह दूसरों पर छोड़ देते हैं कि वे काम पर हैं या अवकाश पर, और वे सीख रहे हैं या सिखा रहे हैं।

34. मानव उपलब्धियों के शिखर और मानव सभ्यता की बढ़ती प्रगति शिक्षकों के विद्वत्तापूर्ण और आध्यात्मिक प्रयासों की स्तुति है।

35. खाली समय और छुट्टियों के अभाव में शिक्षण की गुणवत्ता स्थिर हो जाएगी और शिक्षा का स्तर गिर जाएगा।

36. **सुनीता शर्मा (उपरोक्त)** मामले में विद्वान खंडपीठ द्वारा शिक्षकों द्वारा स्कूल ड्यूटी से मुक्त होने के बाद समय के विवेकपूर्ण उपयोग के संबंध में की गई टिप्पणियाँ भी इस कथन के अनुरूप हैं।

(घ) चुनाव दिशानिर्देश संख्या 1.5घ**शिक्षकों की न्यूनतम नियुक्ति: व्याख्याएँ और निष्कर्ष**

37. समाज में शिक्षकों की भूमिका को रेखांकित करने वाले संवैधानिक कानून के विमर्श से लाभ उठाते हुए, भारत निर्वाचन आयोग ने शिक्षकों की बूथ स्तरीय अधिकारी के रूप में नियुक्ति पर कुछ शर्तें लगाई हैं। दिशानिर्देश संख्या 1.5घ में दी गई उक्त सीमाएँ नीचे उद्धृत हैं:-

"1.5

घ. शिक्षकों को न्यूनतम बूथ स्तरीय अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जाएगा। हालाँकि, जहाँ आवश्यक हो, उन्हें छुट्टियों के दौरान, गैर-शिक्षण समय और गैर-शिक्षण दिनों में बूथ स्तरीय अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जाना चाहिए ताकि शैक्षणिक कार्य में किसी भी प्रकार की हानि न हो। यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि एकल शिक्षक वाले किसी भी विद्यालय का कोई भी शिक्षक इस कार्य के लिए तैनात न किया जाए।

(जोर दिया गया)

38. उक्त चुनाव आयोग दिशानिर्देश संख्या 1.5घ, शिक्षकों की नियुक्ति पर प्रतिबंध लगाकर, शिक्षा के अधिकार की परस्पर विरोधी अनिवार्यताओं, समाज में शिक्षकों की अपरिहार्य भूमिका और लोकतंत्र में चुनावी कार्य की आवश्यकता के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता है। चुनाव आयोग के दिशानिर्देशों में उल्लिखित प्रतिबंधों की व्याख्या हमारे देश में शिक्षा के महत्व, हमारी संवैधानिक व्यवस्था में शिक्षकों की भूमिका और इस तथ्य की पृष्ठभूमि में की जानी चाहिए कि चुनाव किसी भी लोकतंत्र का जीवन रक्त हैं।

39. चुनाव आयोग ने चुनाव ड्यूटी पर "शिक्षकों की न्यूनतम नियुक्ति" का प्रतिबंधात्मक निर्देश जारी करके यह सुनिश्चित किया है कि चुनावी प्रक्रिया शैक्षणिक प्रणाली पर भारी मांग नहीं थोपे। पूर्ववर्ती चर्चा के मद्देनजर दिशानिर्देश संख्या 1.5डी में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि शिक्षकों को चुनाव ड्यूटी पर तभी लगाया जाएगा जब चुनाव दिशानिर्देश संख्या 1.5डी में उल्लिखित अन्य सभी श्रेणियों के कर्मचारियों की नियुक्ति समाप्त हो गई हो। दूसरे शब्दों में, बूथ लेवल अधिकारियों की नियुक्ति या चुनाव ड्यूटी का आवंटन सबसे पहले शिक्षकों को छोड़कर चुनाव दिशानिर्देश संख्या 1.2 में दर्शाए गए सभी श्रेणियों के कर्मचारियों के पूल में से किया जाएगा। ऐसे अवसर आ सकते हैं जब अन्य सभी श्रेणियों के कर्मचारियों (शिक्षकों के अलावा) की नियुक्ति के बाद भी बूथ लेवल अधिकारियों के रिक्त पद नहीं भरे जाते हैं और अतिरिक्त कर्मचारियों की आवश्यकता होती है। केवल उस स्थिति में शिक्षकों को बूथ लेवल अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जा सकता है और उन्हें चुनाव ड्यूटी सौंपी जा सकती है। शिक्षकों को चुनाव ड्यूटी पर लगाना सदैव अंतिम उपाय होगा तथा ऐसा चुनाव दिशानिर्देश संख्या 1.2 और 1.5डी में दिए गए अन्य सभी विकल्पों का प्रयोग करने के बाद ही किया जाएगा।

एच. अंतिम निर्देश:

40. तदनुसार, प्रतिवादी प्राधिकारियों को निर्देश दिया जाता है कि वे चुनाव आयोग के दिशानिर्देश संख्या 1.5डी और चुनाव आयोग के दिशानिर्देश संख्या 1.2 की उपरोक्त व्याख्या के आलोक में शिक्षकों की बूथ स्तरीय अधिकारी या अन्य चुनाव इयूटी पर तैनाती को पुनर्निर्धारित करें। यदि चुनाव दिशानिर्देश संख्या 1.2 में उल्लिखित अन्य श्रेणियों के कर्मचारी उपलब्ध हैं, तो शिक्षकों को चुनाव इयूटी पर तैनात या बूथ स्तरीय अधिकारी के रूप में नियुक्त नहीं किया जाएगा। यह कार्य तीन महीने की अवधि के भीतर पूरा किया जाना है।

41. हालाँकि, जब तक यह प्रक्रिया पूरी नहीं हो जाती, संबंधित शिक्षकों को प्रतिवादी संख्या 7 अर्थात् जिला मजिस्ट्रेट/जिला निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण अधिकारी, झाँसी द्वारा पारित दिनांक 16.08.2024 की आक्षेपित बीएलओ सूची में उल्लिखित अपने चुनावी कर्तव्यों का निर्वहन करना होगा। याचिकाकर्ता इस रिट याचिका में दिए गए निर्देशों के अनुपालन में नए आदेश आने तक छुट्टियों के दिनों में और शिक्षण समय के बाद चुनावी कर्तव्यों का पालन करेगा। हालाँकि, आक्षेपित आदेश/सूची प्रतिवादी संख्या 7 द्वारा उपरोक्त निर्देशों के अनुसरण में पारित किए जाने वाले नए आदेशों का पालन करेगी।

42. उपर्युक्त निर्देशों के साथ, रिट याचिका का अंतिम रूप से निस्तारण किया जाता है।

(2025) 2 ILRA 687

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 05.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति जे. जे. मुनीर

रिट - ए संख्या 56331 वर्ष 2012

श्रीपाल गिरि

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

श्री एचएमबी सिन्हा , अधिवक्ता

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मुख्य स्थाई अधिवक्ता

क. सेवा कानून - अनुशासनात्मक कार्यवाही - दंड - सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1930 - मूल नियम 54-बी - निलंबन अवधि के लिए भत्ते देने संबंधी सरकार के निर्णय की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इस संबंध में निर्णय अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा, सरकारी कर्मचारी को नोटिस देकर और वित्तीय पुस्तिका के मूल नियम 54 में निर्दिष्ट अवधि के भीतर उसका स्पष्टीकरण मांगने के बाद लिया जाना चाहिए। यहाँ, यह स्वीकार किया जाता है कि याचिकाकर्ता को अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा यह स्पष्टीकरण मांगने के लिए कोई नोटिस नहीं दिया गया कि सेवा से निलंबन की अवधि के दौरान, उसे प्राप्त निर्वाह भत्ते के अलावा, उसके परिलब्धियों के रूप में कुछ भी भुगतान क्यों नहीं किया जाए। (पैरा 26)

ख. 1999 के नियमों का नियम 5 - इसमें कहा गया है कि कर्मचारी को सूचना देने के बाद निलंबन की अवधि के लिए, अनुशासन प्राधिकारी द्वारा निर्णय लिया जाएगा कि निलंबन की अवधि को कर्तव्य पर बिताया गया माना जाए या नहीं। लेकिन, यह शक्ति इस मामले में पूरी तरह लागू नहीं हो सकती। किसी भी स्थिति में, यदि अनुशासन प्राधिकारी के पास ऐसी कोई शक्ति हो भी, तो उसका प्रयोग विवेकपूर्ण ढंग से किया जाना चाहिए, मनमाने ढंग से नहीं। (पैरा 31)

ग. प्रतिवादियों द्वारा पारित बर्खास्तगी के आदेश के कारण याचिकाकर्ता के सेवा से बाहर रहने की पूरी अवधि को माफ करने का निर्णय, जिसे इस न्यायालय ने समक्ष की रिट याचिका में रद्द कर दिया था, सेवा नियमों के तहत परिकल्पित दंडों में से एक नहीं है; विशेष रूप से 1999 के नियमों के नियम 3 में उल्लिखित आठ दंड। इसलिए, याचिकाकर्ता पर लगाया गया यह वंचना, उल्लिखित दंडों में से एक नहीं है, इस हितकर सिद्धांत के अनुसार कि किसी व्यक्ति के खिलाफ प्रतिकूल नागरिक परिणाम वाला कोई भी आदेश उसे सुनवाई का उचित अवसर दिए बिना नहीं किया जाना चाहिए, नोटिस और अवसर के अभाव में आदेश गलत होगा।

घ. यदि 1999 के नियमों के नियम 5 का इस मुद्दे पर कोई प्रभाव पड़ता है, तो बर्खास्तगी की अवधि के लिए इस तरह के वंचन के समक्ष याचिकाकर्ता को इस संबंध में नोटिस जारी करना और इस मुद्दे पर उसकी बात सुनना अनिवार्य था। यह स्वीकार किया जाता है कि ऐसा नहीं किया गया है। यह विनाशकारी पूर्वाग्रहपूर्ण उपाय, जो कि विवादित आदेश का एक हिस्सा है, याचिकाकर्ता को दिए गए समय के वेतनमान में निम्नतम स्तर तक कटौती के दंड के आदेश के साथ आया है और इस न्यायालय ने प्रतिवादियों को समक्ष दिए गए बर्खास्तगी के बजाय कम दंड देने की स्वतंत्रता प्रदान की है। यदि नियमों के तहत लगाए गए दंड के अलावा याचिकाकर्ता के हितों के लिए पूर्वाग्रहपूर्ण कोई भी उपाय प्रतिवादियों द्वारा किया जाना था, तो यह याचिकाकर्ता को अलग से उचित नोटिस और अवसर देकर किया जाना था। (पैरा 32)

ड. संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन - आदेश का यह भाग याचिकाकर्ता को सूचना और अवसर न दिए जाने के कारण खराब होने के अलावा, पूरी तरह से मनमाना, स्वेच्छाचारी और मनमौजी है। यह पाया गया है कि सेवा से बर्खास्तगी का पूर्व में दिया गया दंड अत्यधिक अनुपातहीन है। इस न्यायालय ने बर्खास्तगी

के दंड को अत्यधिक कठोर माना और प्रतिवादियों ने बिना किसी अपीलीय प्रक्रिया का सहारा लिए न्यायालय के उस निर्णय को स्वीकार कर लिया।

यदि प्रतिवादियों ने अपेक्षाकृत मामूली कदाचार के लिए सेवा से बर्खास्तगी का आदेश पारित करने में कोई गलती नहीं की होती, तो याचिकाकर्ता कुछ मामूली दंड भुगतते हुए सेवा में बना रहता। उसकी सेवा में निरंतरता बनी रहती, जिससे कम से कम उसकी वरिष्ठता बनी रहती और सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों में योगदान मिलता। आदेश के इस भाग द्वारा याचिकाकर्ता को एक ही झटके में इन सभी लाभों से वंचित कर दिया गया है। यह किसी भी तर्कसंगतता या निष्पक्षता के मानक से परे है कि एक कर्मचारी, जिसे इस न्यायालय ने अपेक्षाकृत मामूली कदाचार के लिए अत्यधिक अनुपातहीन अंतिम दंड दिया है और कम दंड देने का निर्देश दिया है, बहाली पर सेवा में निरंतरता का लाभ, जिसमें वरिष्ठता और सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों के लिए सेवा अवधि की गणना शामिल है, क्यों नहीं खोएगा। न्यायालय की स्पष्ट समझ के अनुसार, आदेश का यह भाग, उन परिस्थितियों को देखते हुए जिनमें याचिकाकर्ता की सेवा से बर्खास्तगी को अत्यधिक अनुपातहीन माना गया था, मनमाना और अनुचित दोनों हैं। (पैरा 33)

दिनांक 19.07.2012 का विवादित आदेश, जहां तक याचिकाकर्ता को दंडित किया गया है, एतद्वारा निरस्त किया जाता है। (पैरा 35)

रिट याचिका स्वीकृत (ई-4)

अनुसरण की गई मिसालें:

1. गया प्रसाद यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, द्वारा प्रमुख सचिव एवं अन्य, 2022 एससीसी ऑनलाइन सभी 685 (पैरा 20)
2. अखिलेश कुमार अवस्थी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, 2008 (4) एडब्ल्यूसी 4061 (पैरा 26)
3. राम कृपाल श्रीवास्तव बनाम उत्तर प्रदेश पीएसटी, 2011 एससीसी ऑनलाइन सभी 3339 (पैरा 28)
4. दीपाली गुंडू सुरवासे बनाम क्रांति कनिष्ठ अध्यापक महाविद्यालय (डी.एड.) एवं अन्य, (2013) 10 एससीसी 324 (पैरा 33)

विशिष्ट मिसाल:

अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, महानदी कोलफील्ड्स लिमिटेड बनाम रवींद्रनाथ चौबे, (2020) 18 एससीसी 71 (पैरा 21)

यह रिट याचिका संयुक्त आयुक्त (वाणिज्य कर), जो उप आयुक्त (प्रशासन), वाणिज्यिक कर, नोएडा का प्रभार संभाल रहे हैं, द्वारा दिनांक 19.07.2012 को पारित आदेश को चुनौती देती है, जिसके तहत अनुशासनात्मक कार्यवाही के बाद याचिकाकर्ता को दंडित किया गया है।

(माननीय न्यायमूर्ति जे.जे. मुनीर द्वारा पारित)

1. यह रिट याचिका संयुक्त आयुक्त (वाणिज्य कर), जो उप आयुक्त (प्रशासन), वाणिज्यिक कर, नोएडा का प्रभार संभाल रहे हैं, द्वारा दिनांक 19.07.2012 को पारित आदेश के विरुद्ध है उस सीमा तक, जिसमें अनुशासनात्मक कार्यवाही के बाद याचिकाकर्ता को दंडित करने का प्रावधान है।

2. इस रिट याचिका को जन्म देने वाले तथ्यों को दोबारा गिनना आवश्यक है, इस तथ्य के बावजूद कि यहां शामिल मुद्दा सीमित है। याचिकाकर्ता व्यापार कर विभाग की सेवा में एक सेवक (चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी) है और नोएडा क्षेत्र, जिला गौतम बुद्ध नगर में तैनात है। 06/07.07.1995 की रात को, याचिकाकर्ता को दो अन्य सेवकों, राम स्वरूप और कुशलपाल के साथ मोहन नगर, गाजियाबाद चेक-पोस्ट पर तैनात किया गया था। याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप यह था कि दो अन्य सेवकों के साथ, उन्होंने एक वाहन, पंजीकरण संख्या DL-G/9490 को उसके कागजात की जांच किए बिना चेक-पोस्ट से गुजरने दिया। याचिकाकर्ता को दो अन्य सेवकों में से एक राम स्वरूप के साथ 27.12.1995 के आदेश द्वारा जांच लंबित रहने तक निलंबित रखा गया था। उन्हें 25.10.1999 को आरोप-पत्र दिया गया। याचिकाकर्ता ने 01.02.2000 को अपना जवाब दाखिल किया और आरोपों से इनकार किया। जाँच अधिकारी ने जाँच की और याचिकाकर्ता को दोनों आरोपों में दोषी पाया। याचिकाकर्ता का कहना है कि जाँच अधिकारी ने टिप्पणी की थी कि याचिकाकर्ता और अन्य दो सेवक, रामस्वरूप और कुशलपाल, समान रूप से दोषी हैं। कुशलपाल के बारे में कहा गया है कि समान रूप से उत्तरदायी होने के बावजूद, उन्हें निलंबित या आरोपित नहीं किया गया।

3. याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस दिनांकित 09.03.2000 दिया गया, जिस पर उसने 13.03.2000 को जवाब दाखिल किया। सहायक आयुक्त (प्रशासन), व्यापार कर, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर ने 14.03.2000 के आदेश के तहत याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त कर दिया। याचिकाकर्ता ने विभागीय अपील दायर की, जिसे उपायुक्त (कार्यालय व्यापार कर), नोएडा ने 09.11.2001 के आदेश के तहत खारिज कर दिया। याचिकाकर्ता ने इन आदेशों को रिट-ए संख्या 20574/2008 के माध्यम से इस न्यायालय में चुनौती दी। उक्त रिट याचिका को इस न्यायालय ने आंशिक रूप से स्वीकार कर लिया, जिसमें बर्खास्तगी के आदेश को इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि यह अनुपातहीन सजा थी, और मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकारी को "कुछ कम सजा देने" के नए आदेश पारित करने के लिए भेज दिया गया। रिट याचिका, जिसे वास्तव में आंशिक रूप से स्वीकार किया गया था, के बारे में कहा गया कि इसका निपटारा विद्वान न्यायाधीश द्वारा किया गया, जिन्होंने 17.04.2012 के निर्णय और आदेश में टिप्पणी की:

याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप लगाया गया है कि उसने उस दिन एक ट्रक को बिना वैध गेट पास के गुजरने की अनुमति दी।

याचिकाकर्ता की सेवाएं एक ही घटना के कारण समाप्त कर दी गयीं।

याचिकाकर्ता ने रिट याचिका के पैरा 25 में कहा है कि याचिकाकर्ता के साथ दो अन्य चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी भी मौजूद थे, लेकिन उन्हें किसी प्रकार की सजा नहीं दी गई। राज्य द्वारा दायर प्रति-शपथपत्र में इस तथ्य का खंडन नहीं किया गया है।

राज्य द्वारा दायर जवाबी हलफनामे में इस घटना के अलावा याचिकाकर्ता के अतीत या पिछले आचरण का कोई अन्य संदर्भ नहीं दिया गया है जो विभाग के हित के विरुद्ध था।

राज्य द्वारा इस बात से भी इनकार नहीं किया गया है कि उसी रात याचिकाकर्ता के साथ दो अन्य व्यक्ति भी तैनात थे और उन्हें कोई सजा नहीं दी गई है।

लापरवाही और उपेक्षा के एक मात्र कृत्य के लिए केवल याचिकाकर्ता को ही सेवा से बर्खास्तगी की कठोर सजा दी गई है।

अपीलीय प्राधिकारी ने सजा देते समय इस बात पर कोई चर्चा नहीं की कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए अकेले यह कठोर सजा क्यों उचित होगी।

मेरी राय में, सेवा समाप्ति के याचिकाकर्ता पर लगाया गया दंड उन आरोपों की तुलना में बहुत कठोर और असंगत है जो उसके विरुद्ध पाए गए हैं। इसलिए मैं सेवा समाप्ति के आदेश को रद्द करता हूँ। यह मामला दंड प्राधिकारी को कुछ कम दंड देने के लिए भेजा जाता है, जो वह तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर उचित और उपयुक्त समझे। कम दंड देने के मामले पर प्राधिकारी द्वारा संबंधित प्राधिकारी के समक्ष यह आदेश रखे जाने की तिथि से तीन महीने की अवधि के भीतर निर्णय लिया जा सकता है। यह आदेश याचिकाकर्ता द्वारा आज से दस दिनों के भीतर प्राधिकारी के समक्ष रखा जा सकता है। इस आदेश की प्रमाणित प्रति याचिकाकर्ता को 48 घंटों के भीतर सामान्य शुल्क का भुगतान करने पर दी जा सकती है। रिट याचिका का निपटारा ऊपर दिए अनुसार किया जाता है। कोई खर्च नहीं।

4. इस आदेश के अनुपालन में, याचिकाकर्ता को सेवा में बहाल माना गया, लेकिन रिट-ए संख्या 20574/2008 में पारित हमारे निर्णय की तिथि, अर्थात् 17.04.2012 से निलंबन में ही रहा। याचिकाकर्ता को 09.07.2012 को एक कारण बताओ नोटिस जारी किया गया, जिसके साथ जाँच रिपोर्ट की एक प्रति संलग्न की गई, जिसके आधार पर सेवा से बर्खास्तगी का आदेश, जिसे इस न्यायालय ने रद्द कर दिया था, आधारित था। 09.07.2012 के कारण बताओ नोटिस के प्रासंगिक भाग को उद्धृत करना उचित है:

"आपके विरुद्ध जारी आरोप पत्र के क्रम में जांच अधिकारी द्वारा अपनी जांच रिपोर्ट (प्रमाणित प्रति संलग्न) में सभी आरोपों के आपके विरुद्ध प्रमाणित होना पाया गया है। अतः आपको निर्देशित किया जाता है कि आप नोटिस प्राप्त के तीन दिन के भीतर जांच रिपोर्ट के संदर्भ में अपना लिखित अभिकथन अधोहस्ताक्षरी के समक्ष प्रस्तुत करते हुए कारण बताएं कि क्यों न आपके विरुद्ध आरोप प्रमाणित पाये जाने के फलस्वरूप आपको सेवा से हटा दिया (रिमूव कर दिया) जाए।

इस संबंध में यदि आपको व्यक्तिगत रूप से कुछ कहना है तो आप दिनांक 12.07.2012 को प्रातः 11 बजे मेरे समक्ष उपस्थित होकर अपना पक्ष प्रस्तुत कर सकते हैं।"

(न्यायालय द्वारा ज़ोर)

5. याचिकाकर्ता ने कारण बताओ नोटिस का जवाब प्रस्तुत किया और 10.07.2012 के अपने जवाब में उठाए गए तकनीकी तर्कों के अनावश्यक विवरण को छोड़कर, केवल इतना ही कहा जाना चाहिए कि संयुक्त आयुक्त (व्यापार कर), जो नोएडा में वाणिज्य कर विभाग के उप आयुक्त (प्रशासन) का कार्यभार संभाल रहे थे, ने 19.07.2012 को एक आदेश पारित किया, जिसमें याचिकाकर्ता को सेवा में बहाल किया गया, लेकिन फिर भी उसे दंडित किया गया। 19.07.2012 के आदेश का वह भाग, जिसमें याचिकाकर्ता पर दंड लगाया गया था, वर्तमान रिट याचिका में आक्षेपित है और इसे आगे 'आपत्तिजनक आदेश' कहा जाएगा।

6. आक्षेपित आदेश से व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत यह रिट याचिका दायर की है।

7. पक्षकारों द्वारा हलफनामों का आदान-प्रदान करने के बाद, रिट याचिका 05.08.2024 को सुनवाई के लिए स्वीकार की गई, जो तुरंत शुरू हुई लेकिन उस दिन अनिर्णायक रही। सुनवाई अगले दिन, अर्थात् 06.08.2024 तक के लिए स्थगित कर दी गई, जब पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं ने अपनी दलीलें पूरी कर लीं। निर्णय सुरक्षित रखा गया।

8. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री एचएमबी सिन्हा और राज्य की ओर से उपस्थित सभी प्रतिवादियों का प्रतिनिधित्व करने वाली विद्वान अतिरिक्त मुख्य स्थायी अधिवक्ता सुश्री मोनिका आर्य को सुना गया।

9. यद्यपि यह सीधे तौर पर मुद्दा नहीं है, लेकिन कार्यवाही से संबंधित है, दिनांक 09.07.2012 का कारण बताओ नोटिस, जो इस न्यायालय द्वारा बर्खास्तगी के आदेश को रद्द करने और मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकारी को नए आदेश जारी करने, कुछ कम सजा देने के लिए वापस भेजने के बाद जारी किया गया था। इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 17.04.2012 के आदेश का स्पष्ट आशय यह था कि दी जाने वाली कम सजा, एक गैर-मृत्युदंडीय सजा होनी चाहिए। हालाँकि, दिनांक 09.07.2012 का कारण बताओ नोटिस, जो उपायुक्त (प्रशासन), वाणिज्यिक कर, नोएडा द्वारा जारी किया गया था, याचिकाकर्ता से कारण बताने के लिए कहा गया था कि जाँच अधिकारी के निष्कर्षों के मद्देनजर, उसे सेवा से क्यों न हटाया जाए। अब यह मुद्दा काफी हद तक अकादमिक हो गया है क्योंकि याचिकाकर्ता को एक गैर-अंतिम दंड से दंडित करने वाला अंतिम आदेश पारित हो चुका है, जिस पर अब सवाल उठाया गया है, लेकिन यह बेहद अपवाद की बात है कि नोएडा के वाणिज्य कर उपायुक्त (प्रशासन) ने याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस जारी कर पूछा कि उसे सेवा से क्यों न हटा दिया जाए। 09.07.2012 का कारण बताओ नोटिस स्पष्ट रूप से रिट-ए संख्या 20574/2008 में पारित हमारे 17.04.2012 के आदेश का उल्लंघन है। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, चूँकि

कार्यवाही एक गैर-अंतिम दंड आदेश के साथ समाप्त हुई है, इसलिए हम इस मामले को यहीं समाप्त करते हैं; और निश्चित रूप से, 09.07.2012 के कारण बताओ नोटिस की विषयवस्तु पर अपनी असहमति दर्ज करते हैं।

10. यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि वर्तमान रिट याचिका का दायरा यह देखने तक सीमित है कि वर्तमान में दी गई सजा कानूनन वैध है या नहीं। इस न्यायालय द्वारा रिट-ए संख्या 20574/2008 में 17.04.2012 को पारित निर्णय द्वारा याचिकाकर्ता के इस पर प्रश्न उठाने के अधिकार को सीमित कर दिए जाने के कारण, अब याचिकाकर्ता के लिए दोष का प्रश्न चुनौती देने का विषय नहीं रह गया है। हमारा यह निर्णय याचिकाकर्ता के दोष को बरकरार रखता है, लेकिन अवधि के आधार पर सेवा से बर्खास्तगी के आदेश को रद्द कर देता है, या यूँ कहें कि, हालाँकि यह अभिव्यक्ति यहाँ प्रयुक्त नहीं हुई है, क्योंकि सजा 'चौंकाने वाली रूप से अनुपातहीन' है। इन्हीं सीमाओं के परिप्रेक्ष्य में, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री एचएमबी सिन्हा ने आक्षेपित आदेश की आलोचना में वास्तव में तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की। उन्होंने दलील दी कि आरोपों की प्रकृति और गंभीरता को देखते हुए, उक्त आदेश द्वारा दी गई सजा अभी भी "चौंकाने वाली और अनुपातहीन" है, जो कि मामूली प्रकृति की है और किसी भी तरह से बड़ी सजा देने लायक नहीं है। उन्होंने जोर देकर कहा कि याचिकाकर्ता की ईमानदारी और समर्पण पर कोई संदेह नहीं किया गया है। इसके विपरीत, जाँच अधिकारी ने भी इनका समर्थन किया है।

11. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि उसका संपूर्ण सेवा रिकॉर्ड बेदाग है। यह कहा गया है कि आरोपित सजा उसके पूरे करियर को बर्बाद कर देती है, क्योंकि 14.03.2000 से 20.04.2012 तक की अवधि को पेंशन संबंधी लाभों सहित किसी भी उद्देश्य के लिए नहीं गिना जाना चाहिए। आदेश का दूसरा भाग, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को स्थायी रूप से सेवक के लिए सामान्य समय-मान में न्यूनतम स्तर तक पदावनत करके दंडित किया गया है, की आलोचना याचिकाकर्ता को दी गई अत्यधिक अनुपातहीन सजा के रूप में की गई है, जो सिद्ध पाए गए आरोपों के अनुरूप बिल्कुल भी नहीं है। दूसरा निर्देश, जिसमें निलंबन की अवधि के लिए याचिकाकर्ता को निर्वाह भत्ते के अलावा कोई वेतन नहीं देने का निर्देश दिया गया है, मानो वह सजा का एक हिस्सा हो, को अवैध बताया गया है। श्री सिन्हा का तर्क है कि किसी कर्मचारी को निलंबन अवधि के दौरान दिए गए निर्वाह भत्ते से अधिक वेतन न देने का निर्देश उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन एवं अपील) नियमावली, 1999 (संक्षेप में 'नियमावली 1999') के अंतर्गत दंड नहीं है। उनका तर्क है कि उत्तर प्रदेश में लागू सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियमावली, 1930 (संक्षेप में सीसीए नियमावली) के मूल नियम 54-बी के अंतर्गत निर्धारित प्रक्रिया का पालन करने के बाद निलंबन अवधि के लिए वेतन पूर्णतः या आंशिक रूप से देने से इनकार किया जा सकता है।

12. श्री सिन्हा ने आगे दलील दी है कि याचिकाकर्ता को दंडित करने के लिए दिया गया यह आदेश घोर मनमाना है और संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन करता है, क्योंकि तीन लोगों को चेकपोस्ट पर पहरा देने का एक जैसा काम सौंपा गया था और उनके खिलाफ आरोप एक जैसे नहीं, बल्कि एक जैसे हैं, यानी एक वाहन को उसके कागजात की जाँच किए बिना भागने की अनुमति देना। हालाँकि, तीनों कर्मचारियों में से

दो को पूरी तरह से दोषमुक्त कर दिया गया है, उन पर कोई कार्रवाई नहीं की गई है और याचिकाकर्ता को बिना किसी विशेष गुण के निशाना बनाया गया है। उसे बलि का बकरा बनाया गया है और उसे अनुपातहीन दंड दिया गया है।

13. दूसरी ओर, विद्वान अतिरिक्त मुख्य स्थायी न्यायाधीश सुश्री मोनिका आर्य का कहना है कि इस न्यायालय के आदेश के अनुपालन में याचिकाकर्ता को सेवा में बहाल कर दिया गया है और उसे कोई अंतिम दंड नहीं दिया गया है। जहाँ तक दंड की मात्रा का प्रश्न है, यह अनुशासनात्मक प्राधिकारी के अधिकार क्षेत्र में है, और यह न्यायालय इसकी मात्रा में तब तक हस्तक्षेप नहीं कर सकता जब तक कि यह अत्यधिक अनुपातहीन न हो। उनका कहना है कि गैर-अंतिम दंड दिए जाने के साथ ही दंड के अत्यधिक अनुपातहीन होने का तत्व समाप्त हो जाता है। यह याचिकाकर्ता के मुंह से या इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में नहीं आता कि वह अनुशासनात्मक प्राधिकारी को यह निर्देश दे कि याचिकाकर्ता को क्या दंड दिया जाए।

14. हमने दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत प्रतिद्वन्द्वी दलीलों पर ध्यानपूर्वक विचार किया है तथा अभिलेख का अवलोकन किया है।

15. याचिकाकर्ता को दी गई सजा के तीन घटक हैं, जिन्हें इस प्रकार समझा जा सकता है:

- (i) याचिकाकर्ता को सेवक के रूप में सेवा में बहाल किए जाने पर, सेवा से निलंबन के समय प्राप्त प्रथम पदोन्नति वेतनमान के स्थान पर, साधारण समय-मान में न्यूनतम स्तर पर वापस कर दिया जाएगा;
- (ii) याचिकाकर्ता को सेवा से निलंबन की सम्पूर्ण अवधि के दौरान, उसके निर्वाह भत्ते के अलावा कोई अन्य पारिश्रमिक नहीं मिलेगा; तथा,
- (iii) 14.03.2000 से 24.04.2012 तक की सम्पूर्ण अवधि, अर्थात् याचिकाकर्ता की सेवा से बर्खास्तगी की तिथि तथा उसके द्वारा कार्यभार ग्रहण करने की रिपोर्ट प्रस्तुत करने की तिथि, क्रमशः सेवा में विराम मानी जाएगी तथा यह अवधि किसी भी सेवा लाभ के लिए नहीं गिनी जाएगी।

16. सरकारी कर्मचारी को दिए जाने वाले दंड, 1999 के नियम 3 में वर्णित हैं। दंडों को मोटे तौर पर लघु और वृहद दंडों में वर्गीकृत किया गया है। 1999 के नियम 3 में कहा गया है:

3. दंड.--

निम्नलिखित दंड, अच्छे और पर्याप्त कारण के लिए और इसके बाद प्रदान किए गए अनुसार, सरकारी कर्मचारियों पर लगाए जा सकते हैं:

मामूली दंड:

- (i) निंदा;
- (ii) निर्दिष्ट अवधि के लिए वेतन वृद्धि को रोकना;
- (iii) दक्षता बार पर ठहराव;

- (iv) लापरवाही या आदेशों के उल्लंघन के कारण सरकार को हुई किसी भी आर्थिक हानि की पूरी या आंशिक राशि की वेतन से वसूली;
- (v) समूह 'घ' पद धारण करने वाले व्यक्तियों के मामले में जुर्माना: बशर्ते कि ऐसे जुर्माने की राशि किसी भी मामले में उस महीने के वेतन के पच्चीस प्रतिशत से अधिक नहीं होगी जिसमें जुर्माना लगाया गया हो।

प्रमुख दंड:

- (i) संचयी प्रभाव से वेतन वृद्धि रोकना;
- (ii) निम्नतर पद या ग्रेड या समय स्केल या समय स्केल में निम्नतर स्तर पर पदावनति;
- (iii) सेवा से हटाया जाना जो भविष्य में रोजगार के लिए अयोग्य न ठहराए;
- (iv) सेवा से बर्खास्तगी जिसके कारण भविष्य में रोजगार के लिए अयोग्य घोषित कर दिया जाता है।
- स्पष्टीकरण.- इस नियम के अर्थ में निम्नलिखित को दंड नहीं माना जाएगा, अर्थात्:
- (i) विभागीय परीक्षा उत्तीर्ण करने में असफल रहने या सेवा को नियंत्रित करने वाले नियमों या आदेशों के अनुसार किसी अन्य शर्त को पूरा करने में असफल रहने पर सरकारी कर्मचारी की वेतन वृद्धि रोक दी जाएगी;
- (ii) कार्यकुशलता सीमा पार करने के लिए उपयुक्त न पाए जाने के कारण समय वेतनमान में कार्यकुशलता सीमा पर रोक;
- (iii) परिवीक्षा पर नियुक्त व्यक्ति को नियुक्ति की शर्तों या ऐसी परिवीक्षा को नियंत्रित करने वाले नियमों और आदेशों के अनुसार परिवीक्षा की अवधि के दौरान या उसके अंत में सेवा में वापस लाया जाना;
- (iv) परिवीक्षा पर नियुक्त व्यक्ति की सेवा की सेवा की शर्तों या ऐसी परिवीक्षा को नियंत्रित करने वाले नियमों और आदेशों के अनुसार परिवीक्षा की अवधि के दौरान या उसके अंत में समाप्ति।

17. स्पष्ट रूप से, याचिकाकर्ता को दिए गए समय-मान में निम्नतम श्रेणी में पदावनत करने का दंड, नियम के उस भाग के नियम 3(ii) के अंतर्गत एक बड़े दंड की श्रेणी में आता है जो बड़े दंडों से संबंधित है। याचिकाकर्ता के लिए पाए गए कदाचार की प्रकृति को इस न्यायालय ने रिट-ए संख्या 20574/2008 में पारित दिनांक 17.04.2012 के निर्णय और आदेश के माध्यम से "लापरवाही और उपेक्षा का एक मात्र कृत्य" माना है। इस न्यायालय ने इस तथ्य पर नाराजगी जताई है कि याचिकाकर्ता को सेवा समाप्ति के कठोर दंड के लिए चुना गया, जबकि अन्य दो सेवकों, जिनके चेक-पोस्ट से गुजरने वाले वाहनों के कागजात की जाँच करने के समान कर्तव्य और ज़िम्मेदारियाँ थीं, को कोई दंड नहीं दिया गया। बर्खास्तगी की सजा, जैसा कि इस न्यायालय ने संदर्भित निर्णय में वर्णित किया है, जो वास्तव में याचिकाकर्ता के खिलाफ पहले पारित बर्खास्तगी के आदेश को संदर्भित करती है, जिसे बाद में रद्द कर दिया गया, को साबित पाए गए आरोपों के लिए बहुत कठोर और अनुपातहीन माना गया है। कुछ कम सजा देने के उद्देश्य से मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकारी को भेज दिया गया था। हालांकि यह सच है, जैसा कि सुश्री मोनिका आर्य ने कहा है कि हम अनुशासनात्मक प्राधिकारी को उस मामले में सजा देने के लिए निर्देशित नहीं कर सकते हैं जहां अपराध साबित हो गया है, लेकिन केवल दंड के अत्यधिक अनुपातहीन होने के आधार पर हस्तक्षेप कर सकते हैं, क्या यह कहा जा सकता है कि एक बार पहले दिए गए दंड को आश्चर्यजनक रूप से अनुपातहीन मानने के बाद, हम यह मानने से वंचित हैं कि

संबंधित सरकारी कर्मचारी द्वारा मामूली उल्लंघन या कदाचार के लिए दी गई थोड़ी कम सजा को फिर से हमारे द्वारा आश्चर्यजनक रूप से अनुपातहीन नहीं माना जा सकता है। हम ऐसा नहीं सोचते हैं।

18. याचिकाकर्ता के खिलाफ साबित हुए कदाचार के लिए सेवा से बर्खास्तगी का दंड वास्तव में अपमानजनक था। यह एक ऐसा मामला था जिसमें एक अकेला वाहन तीन सेवकों, सभी ग्रुप-डी कर्मचारियों के प्रभार में चेक-पोस्ट से बिना उसके कागजात की जांच किए भाग गया। इसका पीछा किया गया और इसे पकड़ लिया गया। इससे राज्य को राजस्व की कोई हानि नहीं हुई। ये तीनों लोग 06/07.07.1995 की रात 9 बजे से सुबह 7 बजे तक मोहन नगर चेक-पोस्ट पर गुजरने वाले वाहनों के कागजात की जांच करने के अपने कर्तव्यों का पालन कर रहे थे। याचिकाकर्ता का रिकॉर्ड साफ प्रतीत होता है और यह उसके खिलाफ साबित पाया गया एकमात्र कदाचार है। हालांकि याचिकाकर्ता को दोषमुक्त करने का कोई आधार नहीं है, यह वास्तव में आश्चर्यजनक है कि चेक-पोस्ट पर समान कर्तव्य सौंपे गए समान परिस्थिति वाले अन्य दो कर्मचारियों को बिल्कुल भी दंडित नहीं किया गया है। इन परिस्थितियों में, कुल मिलाकर, समय-मान में सबसे निचले ग्रेड में पदावनत करने का एक बड़ा दंड, जिसमें स्थायी पदावनति शामिल है, वास्तव में फिर से चौंकाने वाला और अनुपातहीन प्रतीत होता है। ऐसा कोई सिद्धांत नहीं है, जिससे हमारी अंतरात्मा एक बार आहत हो जाए, तो दोबारा न हिल जाए। याचिकाकर्ता जैसे समूह-घ कर्मचारी के लिए समय-मान में सबसे निचले ग्रेड में पदावनत करना, उसकी पिछली बर्खास्तगी जितना ही चौंकाने वाला है। हम इसी के अनुसार निर्णय देते हैं।

19. हालांकि इस संबंध में किसी विशेष दंड को देने का निर्देश देना या अनुशासनात्मक प्राधिकारी के विवेक के स्थान पर स्वयं दंड देना हमारा अधिकार नहीं है, फिर भी याचिकाकर्ता के विरुद्ध सिद्ध पाए गए कदाचार और अब तक प्रतिवादियों द्वारा उसके साथ किए गए व्यवहार को देखते हुए, हम इस मामले में प्रतिवादियों के विवेक को एक या दूसरे छोटे दंड को देने तक सीमित रखने के बारे में सोचते, जो उन्हें उचित लगता। लेकिन, हमने देखा है कि याचिकाकर्ता इस याचिका के लंबित रहने तक सेवा से सेवानिवृत्त हो चुका है। इसलिए, हम प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता को उसके अपराध के अनुरूप, नियमों के अनुसार, दंड देने के लिए स्वतंत्र छोड़ते हैं। यदि नियमों के तहत याचिकाकर्ता, जो अब एक सेवानिवृत्त कर्मचारी है, को कोई दंड देना अनुमेय है, तो आक्षेपित आदेश द्वारा दिए गए बड़े दंड की चौंकाने वाली असमानता के बारे में हमारी टिप्पणी को अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा ध्यान में रखा जाएगा।

20. प्रश्न का एक उप-अनुच्छेद है: याचिकाकर्ता, जो एक सेवानिवृत्त कर्मचारी है, पर अब क्या दंड लगाया जा सकता है? हालांकि इस सिद्धांत पर कोई आपत्ति नहीं है कि कर्मचारी के सेवाकाल के दौरान शुरू की गई कोई भी जांच उसकी सेवानिवृत्ति के बाद भी जारी रह सकती है, सिविल सेवा विनियम (संक्षेप में 'सीएसआर') के अनुच्छेद 351-ए के तहत राज्यपाल की मंजूरी की आवश्यकता के बिना, प्रश्न यह है कि क्या वे सभी दंड दिए जा सकते हैं जो कर्मचारी के सेवाकाल के दौरान लगाए जा सकते थे। उत्तर प्रदेश सरकार में सेवारत सरकारी कर्मचारियों के मामले में, लागू नियम सीएसआर के अनुच्छेद 351-ए के तहत दंड की शक्ति को सीमित करेंगे। अनुच्छेद 351-ए के तहत शक्ति का प्रयोग केवल राज्यपाल द्वारा किया जा सकता है, अन्य किसी द्वारा नहीं।

दंड पेंशन या उसके किसी भाग को रोकने या वापस लेने तक सीमित हैं, इसके अलावा पेंशन से वसूली का आदेश देने का अधिकार भी है। इस संबंध में, **गया प्रसाद यादव बनाम यूपी राज्य, द्वारा प्रमुख सचिव और अन्य, 2022 एससीसी ऑनलाइन ऑल 685** में इस न्यायालय के खंडपीठ के निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है। **गया प्रसाद यादव (सुप्रा)** में, जो सशस्त्र पुलिस के एक कांस्टेबल से संबंधित था, उनके माननीयों की निम्नलिखित टिप्पणियां उपयुक्त हैं:

31. इसलिए, इस मामले में यह प्रश्न विचारणीय है कि क्या ऐसा कोई नियम, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रवींद्रनाथ चौबे (सुप्रा) मामले में चर्चा की गई है, अपीलकर्ता-याचिकाकर्ता को नियंत्रित करने वाले आचरण, अनुशासन और अपील नियमों में मौजूद है।

32. राज्य सरकार ने पुलिस अधिनियम, 1861 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए "उत्तर प्रदेश पुलिस अधीनस्थ अधिकारी (दंड एवं अपील) नियमावली, 1991" तैयार की है। ये नियम वैधानिक प्रकृति के हैं। नियम 4 में दो प्रकार के दंड का प्रावधान है, जिसके अनुसार प्रमुख दंडों में (i) सेवा से बर्खास्तगी, (ii) सेवा से निष्कासन और (iii) पद में कमी, जिसमें निम्न वेतनमान या समयमान में निम्नतर स्तर पर कमी शामिल है, जबकि लघु दंडों में (i) पदोन्नति रोकना, (ii) एक माह के वेतन से अधिक का जुर्माना, (iii) वेतन वृद्धि रोकना, जिसमें दक्षता पर रोक लगाना और (iv) निंदा शामिल है। दंड देने की प्रक्रिया नियम 14 में दी गई है।

33. नियम 14(1) में वृहद दंड की प्रक्रिया का प्रावधान है, जिसके अनुसार कार्यवाही नियमों के साथ संलग्न परिशिष्ट-1 में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार की जाएगी। नियम 14(2) में कहा गया है कि पुलिस अधिकारी को उसके विरुद्ध प्रस्तावित कार्रवाई और उस कार्य या चूक के बारे में लिखित रूप से सूचित करने के बाद, जिसके आधार पर कार्रवाई प्रस्तावित है, उसे अभ्यावेदन का उचित अवसर देने के बाद वृहद दंड लगाया जा सकता है।

34. उत्तर प्रदेश पुलिस अधीनस्थ अधिकारी (दंड एवं अपील) नियमावली, 1991 में अनुशासन एवं अपील नियमावली के 34.2 के प्रावधानों के समान कोई प्रावधान नहीं है, जैसा कि रवींद्रनाथ चौबे (उपरोक्त) के मामले में चर्चा की गई है। यहाँ तक कि सिविल सेवा विनियमों में भी ऐसा कोई नियम या प्रावधान नहीं है जो कर्मचारी के सेवानिवृत्त होने की स्थिति में बर्खास्तगी या अन्य दंड का आदेश पारित करने की अनुमति देता हो। विद्वान राज्य अधिवक्ता भी हमारे समक्ष ऐसा कोई नियम प्रस्तुत नहीं कर पाए हैं।

35. किसी ऐसे नियम के अभाव में, जो सेवानिवृत्ति के बाद बर्खास्तगी की सजा देने की अनुमति देता हो या जो अनुशासनात्मक कार्यवाही के प्रयोजनों के लिए कर्मचारी-नियोक्ता संबंध को सेवानिवृत्ति के बाद भी जारी रखने योग्य मानता हो, हमारी राय में, रवींद्रनाथ चौबे (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले का इस मामले में कोई अनुप्रयोग नहीं है। तदनुसार, विद्वान राज्य अधिवक्ता द्वारा उक्त फैसले पर भरोसा करना गलत है। जैसा कि पहले ही ऊपर देखा गया है, प्रभाकर सदाशिव करवड़े (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से माना है कि सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने के बाद किसी अधिकारी/कर्मचारी

पर बर्खास्तगी का जुर्माना नहीं लगाया जा सकता है जब तक कि उस संबंध में कोई विशिष्ट नियम मौजूद न हो। यदि संबंधित कर्मचारी की सेवानिवृत्ति से पहले अनुशासनात्मक जांच शुरू की जाती है, तो वह सिविल सेवा विनियम तथापि, ऐसे मामले में यदि कर्मचारी गंभीर कदाचार का दोषी पाया जाता है या सरकार को आर्थिक नुकसान पहुँचाता है, तो राज्यपाल सिविल सेवा विनियमों के अनुच्छेद 351-ए के अनुसार कार्रवाई कर सकते हैं।

21. यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि 1999 के नियमों के तहत सीएसआर लागू है और आचरण, अनुशासन और अपील नियमों के नियम 13.2 में शामिल तरह की कोई कल्पना नहीं है, जो **अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, महानदी कोलफील्ड्स लिमिटेड बनाम रवींद्रनाथ चौबे, (2020) 18 एससीसी 71** में लागू हुआ था। **महानदी कोलफील्ड्स लिमिटेड (सुप्रा)** में शामिल नियमों के तहत, एक कानूनी कल्पना है, जो यह प्रदान करती है कि यदि किसी कर्मचारी की सेवानिवृत्ति से पहले अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की जाती है, तो उन कार्यवाहियों को न केवल सेवानिवृत्ति के बाद की कार्यवाही माना जाएगा, बल्कि कार्यवाही उसी तरह से समाप्त की जाएगी जैसे कि कर्मचारी ने सेवा जारी रखी हो। यह **महानदी कोलफील्ड्स लिमिटेड** में शामिल इस तरह का एक नियम था जिसने सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों को यह निष्कर्ष निकालने के लिए प्रेरित किया कि कर्मचारी पर एक बड़ा जुर्माना लगाया जा सकता है। लेकिन, इस मामले में, **गया प्रसाद यादव** की तरह, ऐसा कोई नियम न्यायालय के संज्ञान में नहीं लाया गया है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा याचिकाकर्ता पर उसके कदाचार के अनुरूप लगाए जाने वाले दंड का निर्णय लेते समय हमारी इन टिप्पणियों को ध्यान में रखा जाएगा। यह भी ध्यान में रखा जाएगा कि अब सक्षम प्राधिकारी कौन है, जो याचिकाकर्ता को उचित दंड दे सकता है।

22. लगाए गए दंडों का दूसरा पहलू निलंबन अवधि के दौरान देय या भुगतान किए गए निर्वाह भत्ते के अतिरिक्त परिलब्धियों से वंचित करना है। 1999 के नियमों के नियम 3 पर गौर करने से यह नहीं पता चलता कि निलंबन अवधि के दौरान परिलब्धियों से वंचित करना वास्तव में किसी प्रकार का दंड है जो अनुशासनात्मक कार्यवाही में लापरवाह पाए गए सरकारी कर्मचारी पर लगाया जा सकता है।

23. 1999 के नियमों का नियम 4 निलंबन की बात करता है और नियम 5 निलंबन अवधि के लिए वेतन और भत्ते आदि के बारे में। नियम 5 उस बिंदु के लिए प्रासंगिक है जो यहाँ विचारणीय है। इसमें लिखा है:

5. निलंबन अवधि का वेतन और भत्ता आदि.- इन नियमों के अंतर्गत, जैसा भी मामला हो, आपराधिक मामले के आधार पर विभागीय जांच में आदेश पारित होने के बाद, संबंधित सरकारी सेवक के निलंबन अवधि के वेतन और भत्ते के बारे में निर्णय और यह भी कि क्या उक्त अवधि को कर्तव्य पर बिताया गया माना जाएगा या नहीं, वित्तीय हैंडबुक, खंड-II, भाग II से IV के नियम 54 के तहत एक निर्दिष्ट अवधि के भीतर उक्त सरकारी सेवक को नोटिस देने और उसका स्पष्टीकरण मांगने के बाद अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा लिया जाएगा।

24. वित्तीय हैंडबुक, खंड-II, भाग II से IV के मूलभूत नियम 54 में प्रावधान है:

54. (1) जब किसी सरकारी कर्मचारी को, जिसे बर्खास्त, हटाया गया हो या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया गया हो, अपील या समीक्षा के परिणामस्वरूप बहाल किया जाता है या उसे बहाल किया जाता, यदि वह निलंबन के दौरान या उसके बिना अधिवर्षिता पर सेवानिवृत्त न होता, तो बहाली का आदेश देने के लिए सक्षम प्राधिकारी विचार करेगा और एक विशिष्ट आदेश देगा।

(क) सरकारी कर्मचारी को उसकी इयूटी से अनुपस्थिति की अवधि के लिए भुगतान किए जाने वाले वेतन और भत्ते के संबंध में, जिसमें उसकी बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले की निलंबन अवधि भी शामिल है, जैसा भी मामला हो; और

(ख) क्या उक्त अवधि को इयूटी पर बिताई गई अवधि माना जाएगा या नहीं।

(2) जहां बहाली का आदेश देने के लिए सक्षम प्राधिकारी की राय है कि सरकारी सेवक जिसे बर्खास्त, हटाया गया था या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया गया था, पूरी तरह से दोषमुक्त कर दिया गया है, वहां सरकारी सेवक को उप-नियम (6) के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, वह पूरा वेतन और भत्ते दिए जाएंगे, जिनका वह हकदार होता, यदि उसे ऐसी बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले बर्खास्त, हटाया या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त या निलंबित नहीं किया गया होता, जैसा भी मामला हो:

परंतु जहां ऐसे प्राधिकारी की यह राय है कि सरकारी सेवक के विरुद्ध संस्थित कार्यवाही की समाप्ति में सरकारी सेवक के प्रत्यक्षतः कारण से विलम्ब हुआ है, वहां वह उसे इस संबंध में संसूचना की तारीख से साठ दिन के भीतर अपना अभ्यावेदन करने का अवसर देने के पश्चात् और उसके द्वारा प्रस्तुत अभ्यावेदन, यदि कोई हो, पर विचार करने के पश्चात्, कारणों को लिखित रूप में अभिलिखित करते हुए निर्देश दे सकेगा कि सरकारी सेवक को उपनियम (7) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, ऐसे विलंब की अवधि के लिए वेतन और भत्तों की केवल उतनी राशि (जो संपूर्ण नहीं होगी) का भुगतान किया जाएगा, जैसा वह अवधारित करे।

(3) उपनियम (2) के अंतर्गत आने वाले मामले में, इयूटी से अनुपस्थिति की अवधि, जिसमें बर्खास्तगी, निष्कासन या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पूर्व निलंबन की अवधि भी शामिल है, सभी प्रयोजनों के लिए इयूटी पर बिताई गई अवधि मानी जाएगी।

(4) उप-नियम (2) के अंतर्गत आने वाले मामलों को छोड़कर अन्य मामलों में [जिनमें वे मामले भी शामिल हैं जहां सेवा से बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश अपीलीय या समीक्षा प्राधिकारी द्वारा संविधान के अनुच्छेद 311 के खंड (1) या खंड (2) की अपेक्षाओं का अनुपालन न करने के आधार पर रद्द कर दिया जाता है और आगे कोई जांच किए जाने का प्रस्ताव नहीं है], सरकारी कर्मचारी को उप-नियम (6) और (7) के प्रावधानों के अधीन रहते हुए वेतन और भत्ते की ऐसी राशि (पूरी नहीं) का भुगतान किया जाएगा, जिसका वह हकदार होता यदि उसे, यथास्थिति, ऐसी बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले बर्खास्त, हटाया या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त या निलंबित नहीं किया गया होता, जैसा कि सक्षम प्राधिकारी निर्धारित कर सकता है, प्रस्तावित राशि के बारे में सरकारी कर्मचारी को नोटिस देने के बाद और उस संबंध में उसके द्वारा प्रस्तुत

किए गए अभ्यावेदन पर विचार करने के बाद, ऐसी अवधि के भीतर (जो किसी भी मामले में नोटिस की तारीख की तारीख से साठ दिनों से अधिक नहीं होगी) जैसा कि नोटिस में निर्दिष्ट किया जा सकता है।

(5) उप-नियम (4) के अंतर्गत आने वाले मामले में, इयूटी से अनुपस्थिति की अवधि, जिसमें उसकी बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले निलंबन की अवधि भी शामिल है, को इयूटी पर बिताई गई अवधि के रूप में नहीं माना जाएगा, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी विशेष रूप से निर्देश न दे कि इसे किसी निर्दिष्ट उद्देश्य के लिए ऐसा माना जाएगा:

बशर्ते कि यदि सरकारी कर्मचारी ऐसा चाहे तो ऐसा प्राधिकारी निर्देश दे सकता है कि उसकी बर्खास्तगी, हटाने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति से पहले निलंबन की अवधि सहित कर्तव्य से अनुपस्थिति की अवधि, सरकारी कर्मचारी को देय और स्वीकार्य किसी भी प्रकार की छुट्टी में परिवर्तित हो जाएगी।

नोट- पूर्ववर्ती परंतुक के अंतर्गत सक्षम प्राधिकारी का आदेश पूर्णतया मान्य होगा तथा निम्नलिखित के लिए किसी उच्चतर अनुमोदन की आवश्यकता नहीं होगी-

- (क) अस्थायी सरकारी कर्मचारी के मामले में तीन महीने से अधिक का असाधारण अवकाश; और
- (ख) स्थायी सरकारी कर्मचारी के मामले में पांच वर्ष से अधिक का किसी भी प्रकार का अवकाश।

(6) उपनियम (4) के उपनियम (2) के अधीन भत्तों का भुगतान उन सभी अन्य शर्तों के अधीन होगा जिनके अधीन ऐसे भत्ते स्वीकार्य हैं।

(7) उपनियम (2) के परन्तुक या उपनियम (4) के अधीन अवधारित राशि, नियम 53 के अधीन अनुज्ञेय निर्वाह भत्ते और अन्य भत्तों से कम नहीं होगी।

(8) इस नियम के अंतर्गत किसी सरकारी सेवक को उसकी बहाली पर किया गया कोई भी भुगतान, उसके निष्कासन, बर्खास्तगी या अनिवार्य सेवानिवृत्ति, जैसी भी स्थिति हो, की तिथि और बहाली की तिथि के बीच की अवधि के दौरान उसके द्वारा किसी रोजगार के माध्यम से अर्जित राशि, यदि कोई हो, के समायोजन के अधीन होगा। जहाँ इस नियम के अंतर्गत देय पारिश्रमिक अन्यत्र रोजगार के दौरान अर्जित राशि के बराबर या उससे कम है, वहाँ सरकारी सेवक को कोई भुगतान नहीं किया जाएगा।

टिप्पणी- जहाँ सरकारी कर्मचारी बर्खास्तगी, निष्कासन या अनिवार्य सेवानिवृत्ति के बाद बहाली के आदेश जारी होने के बाद उचित समय के भीतर इयूटी पर रिपोर्ट नहीं करता है, तो उसे ऐसी अवधि के लिए कोई वेतन और भत्ते का भुगतान नहीं किया जाएगा जब तक कि वह वास्तव में कार्यभार ग्रहण नहीं कर लेता है।

25. इसलिए, 1999 के नियमों के नियम 5 के प्रावधानों को वित्तीय हैंडबुक के मूल नियम 54 के साथ पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है कि सेवा से निलंबन की अवधि के दौरान परिलब्धियों का भुगतान 1999 के नियमों के नियम 5 द्वारा शासित होगा। सेवा से निलंबन की अवधि के दौरान परिलब्धियों से वंचित करना, या उस मामले के लिए, वह अवधि जब याचिकाकर्ता बर्खास्तगी के आदेश के कारण सेवा से बाहर रहा है, जिसे इस न्यायालय ने रद्द कर दिया है, सभी वित्तीय हैंडबुक के मूल नियम 54 के साथ नियम 1999 के नियम 5 द्वारा शासित होंगे। यह विशेष रूप से इसलिए है क्योंकि बर्खास्तगी का आदेश इस आधार पर रद्द कर दिया गया था कि लगाया गया दंड कम सजा देने की स्वतंत्रता के साथ अनुपातहीन था, जिसे अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने उचित समझा, बर्खास्तगी का आदेश मिट गया। इस न्यायालय ने प्रतिवादियों के पास एकमात्र विकल्प कम सजा का छोड़ा था, जो स्पष्ट रूप से गैर-टर्मिनल सजा थी, तथ्य यह है कि बर्खास्तगी के आदेश के कारण याचिकाकर्ता नौकरी से बाहर रहा, यह प्रतिवादियों द्वारा स्वयं पर लायी गयी स्थिति है। याचिकाकर्ता ने अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान या अदालत में अपने मामले की पैरवी के दौरान कभी भी काम करने से इनकार नहीं किया और न ही मामलों में देरी की - जितना वह कर सकता था। यह ध्यान देने योग्य है कि 1999 के नियमों का नियम 3, जो छोटे और बड़े दंडों के बारे में बात करता है, सेवा से निलंबन की अवधि या कर्मचारी द्वारा सजा के टर्मिनल आदेश के कारण सेवा से बाहर रहने की अवधि के लिए वेतन से वंचित करने का उल्लेख नहीं करता है, जिसे बाद में एक कम सजा देने की स्वतंत्रता के साथ अदालत द्वारा रद्द कर दिया जाता है, जो कि लगाए जा सकने वाले दंडों में से एक है। इसलिए, प्रतिवादियों द्वारा याचिकाकर्ता को उसके निर्वाह भत्ते को छोड़कर निलंबन की पूरी अवधि के दौरान सभी परिलब्धियों से वंचित करने के दंड के साथ उससे मिलने को प्रतिवादियों द्वारा उसे दंडित करने के लिए अपने अनुशासनात्मक क्षेत्राधिकार के प्रयोग में पारित आदेश नहीं माना जा सकता है। यह 1999 के नियम 5 के अंतर्गत एक शक्ति है, जो निलंबन अवधि के लिए वेतन और भत्तों से संबंधित है।

26. निलंबन अवधि के लिए भत्ते देने के सरकार के निर्णय की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इस संबंध में निर्णय अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा सरकारी कर्मचारी को नोटिस देने और वित्तीय हैंडबुक के मूल नियम 54 के तहत निर्दिष्ट अवधि के भीतर उसका स्पष्टीकरण मांगने के बाद लिया जाना है। यहां, बेशक, याचिकाकर्ता को कोई नोटिस नहीं दिया गया था, जिसमें अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा उसका स्पष्टीकरण मांगा गया हो कि सेवा से उसके निलंबन की अवधि के लिए, उसके द्वारा प्राप्त निर्वाह भत्ते के अलावा, उसके परिलब्धियों के रूप में कुछ भी भुगतान क्यों नहीं किया जाए। इस संबंध में, **अखिलेश कुमार अवस्थी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, 2008 (4) एडब्ल्यूसी 4061** का संदर्भ लिया जा सकता है, जहां वित्तीय हैंडबुक के मूल नियम 54 के प्रावधानों पर भरोसा करते हुए, यह माना गया था:

11. अब इस प्रश्न पर आते हैं कि क्या पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश, जिसमें याचिकाकर्ता को निलंबन अवधि के साथ-साथ 2.5.1994 के बर्खास्तगी आदेश के अनुसार रोजगार से बाहर रहने की अवधि के लिए वेतन का बकाया देने से इनकार किया गया है, सही है या नहीं, मैं पाता हूं कि ऐसा आदेश सक्षम प्राधिकारी

द्वारा संबंधित कर्मचारी को कारण बताओ नोटिस जारी करने के बाद ही पारित किया जा सकता है, जैसा कि मौलिक नियम 54 के तहत परिकल्पित है, जो इस प्रकार है:

(उद्धृत भाग छोड़ा गया)

12. उपर्युक्त प्रावधान के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि निलंबन की अवधि या जब वह रोजगार से बाहर था, उस दौरान सरकारी कर्मचारी को पूर्ण वेतन से वंचित करने का आदेश पारित करने से पहले, संबंधित सरकारी कर्मचारी को कारण बताओ नोटिस जारी किया जाना चाहिए और उसके बाद ही सक्षम प्राधिकारी विभिन्न पहलुओं पर विचार करते हुए उचित आदेश पारित कर सकता है।

27. अब, **अखिलेश कुमार अवस्थी** (सुप्रा) एक ऐसा मामला था जिसमें याचिकाकर्ता के खिलाफ 02.05.1994 को उस रिट याचिका में बर्खास्तगी का आदेश पारित किया गया था। उस समय तक, 1999 के नियम लागू नहीं हुए थे। इसलिए, सीसीए नियम लागू हुए, जिसके आधार पर निलंबन की अवधि के लिए वेतन केवल मौलिक नियम 54 के अनुसार देने से इनकार किया जा सकता था। अब, 1999 के नियमों के नियम 17 के आधार पर सीसीए नियम रद्द हो गए हैं, लेकिन 1999 के नियमों के नियम 5 के प्रावधान और वित्तीय हैंडबुक के मौलिक नियम 54 के तहत निर्धारित नोटिस की अवधि को अपनाना, अनुशासनात्मक प्राधिकारी के लिए यह अनिवार्य बनाता है कि वह किसी सरकारी कर्मचारी को सेवा से निलंबन की अवधि के लिए पहले से प्राप्त निर्वाह भत्ते से परे उसके पूरे वेतन या उसके किसी हिस्से से वंचित करने का फैसला करने से पहले उसे नोटिस दे। इसलिए, 1999 के नियम 5 के अनुसार, **अखिलेश कुमार अवस्थी** मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत अभी भी लागू होगा; हो सकता है कि यह पैरा मेटेरिया के नियमों के एक अलग सेट के आधार पर हो।

28. इसी कारण से, **राम कृपाल श्रीवास्तव बनाम यूपीपीएसटी, 2011 एससीसी ऑनलाइन ऑल 3339** में इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय का संदर्भ भी उपयुक्त होगा, जो उस समयावधि से संबंधित है जब सीसीए नियम लागू हुए थे, साथ ही वित्तीय हैंडबुक के मूल नियम 54 और 54-बी के प्रासंगिक प्रावधान भी। **राम कृपाल श्रीवास्तव** (सुप्रा) मामले में, खंडपीठ के माननीय न्यायाधीशों ने यह टिप्पणी की थी:

22. मूल नियम 54-बी के उपनियम (3) और (5) के अवलोकन से पता चलता है कि सक्षम प्राधिकारी निलंबन की अवधि के दौरान सरकारी सेवक को भुगतान की जाने वाली राशि (उसके द्वारा पहले से प्राप्त निर्वाह भत्ते से कम नहीं) के बारे में निर्णय प्रस्तावित राशि के संबंध में उसे नोटिस देने और उसके द्वारा किए गए अभ्यावेदन, यदि कोई हो, पर विचार करने के बाद लेगा। उपरोक्त निर्णय का दायरा पूरी तरह से अलग है। यह प्रश्न कि सरकारी सेवक को पूर्ण वेतन दिया जाना चाहिए या नहीं, उत्तर प्रदेश में लागू सीसीए नियम, 1930 के तहत प्रदान की गई सजा नहीं है, बल्कि यह उसमें उल्लिखित सजा से अलग है। हालांकि, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि जब अनुशासनात्मक प्राधिकारी यह सोचता है कि निलंबन की अवधि के लिए सरकारी सेवक को संपूर्ण वेतन का भुगतान नहीं किया जाना चाहिए, तो ऐसा आदेश दोषी कर्मचारी के लिए नागरिक

परिणामों को जन्म देता है। अतः, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप, मूल नियम 54-बी के उपनियम (3) और (5) में कारण बताओ नोटिस जारी करने और उसके बाद दोषी कर्मचारी के अभ्यावेदन, यदि कोई हो, पर विचार करने के बाद सक्षम प्राधिकारी द्वारा आदेश पारित करने का प्रावधान है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि दंड के आदेश के साथ-साथ, कोई भी सक्षम प्राधिकारी दोषी कर्मचारी को पूर्ण वेतन देने से इनकार करने का निर्णय तब तक नहीं ले सकता जब तक कि मूल नियम 54-बी के तहत निर्धारित प्रक्रिया का पालन न किया जाए।

29. उक्त कारण से, 1999 के नियम 5 के तहत निर्धारित प्रक्रिया का पालन किए बिना, निलंबन की अवधि के दौरान याचिकाकर्ता को उसके पारिश्रमिक से वंचित करने वाला आक्षेपित आदेश का हिस्सा स्पष्ट रूप से दोषपूर्ण होगा।

30. यह हमें आक्षेपित आदेश में दिए गए दंड के अंतिम भाग की ओर ले जाता है। और, यह निर्देश देता है कि 14.03.2000 से 24.04.2012 तक की पूरी अवधि, अर्थात् याचिकाकर्ता की सेवा से बर्खास्तगी की तिथि और उसके द्वारा अपनी कार्यभार ग्रहण रिपोर्ट प्रस्तुत करने की तिथि, क्रमशः सेवा में व्यवधान मानी जाएगी और किसी भी सेवा लाभ के लिए गणना में नहीं ली जाएगी।

31. 1999 के नियमों के नियम 5 के तहत अनुशासनात्मक प्राधिकारी में इस प्रकार की शक्ति का कुछ निवेश है, जहां यह कहा गया है कि कर्मचारी को नोटिस देने के बाद निलंबन की अवधि के लिए, अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा निर्णय लिया जाएगा कि निलंबन की अवधि को इयूटी पर बिताए गए समय के रूप में माना जाएगा या नहीं। लेकिन, यह शक्ति पूरी तरह से इस मामले में लागू नहीं हो सकती है। किसी भी मामले में, भले ही अनुशासनात्मक प्राधिकारी में ऐसी कोई शक्ति हो, इसे उचित रूप से प्रयोग किया जाना चाहिए, मनमानी तरीके से नहीं। यह मामला, हम सोचते हैं, नियम 5 द्वारा पूरी तरह से कवर नहीं किया गया है, क्योंकि यह ऐसा मामला नहीं है जहां याचिकाकर्ता को जांच लंबित रहने तक निलंबन का सामना करना पड़ा हो, जो कुछ गैर-टर्मिनल दंड के साथ बहाली में समाप्त हुआ हो। याचिकाकर्ता, अनुशासनात्मक कार्यवाही के बाद, सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था और इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दिए जाने पर, बर्खास्तगी के आदेश को अनुशासनात्मक प्राधिकारी को कम दंड देने की स्वतंत्रता के साथ रद्द कर दिया गया था। प्रतिवादियों ने 14.03.2000, जब याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त किया गया था, और जिस दिन उसने अपनी कार्यभार ग्रहण रिपोर्ट प्रस्तुत की थी, अर्थात् 24.04.2012, के बीच की अवधि को सेवा में विराम माना है, जो किसी भी सेवा लाभ के लिए गणना में नहीं आएगा। स्पष्टतः, यह याचिकाकर्ता की सेवा में निरंतरता, वरिष्ठता या सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों के उसके अधिकार के सीमित उद्देश्य के लिए भी गणना में नहीं आएगा।

32. प्रतिवादियों द्वारा पारित बर्खास्तगी के आदेश के कारण याचिकाकर्ता के सेवा से बाहर रहने की पूरी अवधि को माफ करने का निर्णय, जिसे इस न्यायालय ने पहले की रिट याचिका में रद्द कर दिया था, सेवा नियमों के तहत परिकल्पित दंडों में से एक नहीं है; विशेष रूप से 1999 के नियमों के नियम 3 में उल्लिखित आठ

दंड। इसलिए, याचिकाकर्ता पर लगाया गया यह वंचना, उल्लिखित दंडों में से एक नहीं है, इस हितकर सिद्धांत के अनुसार कि किसी व्यक्ति के प्रतिकूल नागरिक परिणाम होने पर उसे सुनवाई का उचित अवसर दिए बिना कोई आदेश नहीं दिया जाना चाहिए, नोटिस और अवसर के अभाव में आदेश गलत होगा। यदि 1999 के नियमों के नियम 5 का इस मुद्दे पर कोई प्रभाव पड़ता है, तो बर्खास्तगी की अवधि के लिए इस तरह की वंचना से पहले याचिकाकर्ता पर लाया गया था, इस संबंध में उसे नोटिस जारी करना और इस मुद्दे पर उसे सुनना अनिवार्य था। बेशक, ऐसा नहीं किया गया है। यह विनाशकारी प्रतिकूल उपाय, जो आक्षेपित आदेश का एक हिस्सा है, याचिकाकर्ता को दिए गए समयमान में सबसे निचले स्तर पर कटौती के दंड के आदेश के साथ आया है, और इस न्यायालय ने प्रतिवादियों को पूर्व में दिए गए बर्खास्तगी आदेश के बजाय कम दंड देने की स्वतंत्रता प्रदान की है। यदि प्रतिवादियों द्वारा नियमों के तहत लगाए गए दंड के अलावा, याचिकाकर्ता के हितों के प्रतिकूल कोई भी उपाय किया जाना था, तो उसे याचिकाकर्ता को अलग से उचित सूचना और अवसर प्रदान करके किया जाना था।

33. याचिकाकर्ता को सूचना और अवसर न दिए जाने के कारण आदेश का यह भाग खराब होने के अलावा, हमारा मानना है कि यह आदेश पूरी तरह से मनमाना, स्वेच्छाचारी और सनकी है। इसका कारण यह है कि इस न्यायालय ने सेवा से बर्खास्तगी के पूर्व में दिए गए दंड को अत्यधिक अनुपातहीन पाया। यद्यपि, रिट-ए संख्या 20574/2008 में पारित निर्णय और आदेश में इस अभिव्यक्ति का प्रयोग नहीं किया गया था, फिर भी इस न्यायालय ने बर्खास्तगी के आदेश को रद्द करने के बाद, प्रतिवादियों को कम दंड देने का आदेश दिया, जिसे अनुशासन प्राधिकारी ने उचित समझा। इस न्यायालय ने बर्खास्तगी के दंड को अत्यधिक कठोर माना और प्रतिवादियों ने बिना किसी अपीलीय प्रक्रिया का सहारा लिए न्यायालय के उस निर्णय को स्वीकार कर लिया। यदि प्रतिवादियों ने अपेक्षाकृत मामूली कदाचार के लिए सेवा से बर्खास्तगी का आदेश पारित करने में कोई गलती नहीं की होती, तो याचिकाकर्ता कुछ मामूली दंड भुगतते हुए सेवा में बना रहता। उसकी सेवा में निरंतरता बनी रहती, जिससे कम से कम उसकी वरिष्ठता बनी रहती और सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों में वृद्धि होती। आदेश के इस भाग द्वारा याचिकाकर्ता को एक ही झटके में इन सभी लाभों से वंचित कर दिया गया है। यह किसी भी तार्किकता या निष्पक्षता के मानक से परे है कि एक कर्मचारी, जिसे इस न्यायालय ने अपेक्षाकृत मामूली कदाचार के लिए अत्यधिक अनुपातहीन अंतिम दंड दिया है और कम दंड देने का निर्देश दिया है, बहाली पर सेवा में निरंतरता का लाभ, जिसमें वरिष्ठता और सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों के लिए सेवा अवधि की गणना शामिल है, क्यों नहीं खोएगा। हालाँकि, आदेश में यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है कि जिस अवधि के दौरान याचिकाकर्ता सेवा में नहीं था, वह सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों के लिए उसकी पात्रता में नहीं गिनी जाएगी, लेकिन इसे सेवा में विराम मानने के निर्देश का यही परिणाम है। न्यायालय की स्पष्ट समझ के अनुसार, आदेश का यह भाग, उन परिस्थितियों को देखते हुए जिनमें याचिकाकर्ता की सेवा से बर्खास्तगी को अत्यधिक अनुपातहीन माना गया था, मनमाना और अनुचित दोनों है। यह संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन है। यहाँ सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दीपाली गुंडू सुरवासे बनाम क्रांति जूनियर अध्यापक महाविद्यालय (डी.एड.) एवं अन्य (2013) 10 एससीसी 324 मामले में निर्धारित सिद्धांतों का संदर्भ लिया जा सकता है, जो न्यायालय के किसी आदेश के परिणामस्वरूप, जहाँ किसी कर्मचारी की बर्खास्तगी को गलत माना गया हो, सेवा में उसकी

बहाली पर सेवा की निरंतरता और पिछले वेतन के अधिकार को नियंत्रित करते हैं। दीपाली गुंडू सुरवासे (सुप्रा) मामले में, निम्नलिखित सिद्धांत निर्धारित किए गए थे:

38. उपर्युक्त निर्णयों से जो प्रस्ताव निकाले जा सकते हैं वे हैं:

38.1. सेवा की गलत समाप्ति के मामलों में, सेवा की निरंतरता और बकाया वेतन के साथ बहाली सामान्य नियम है।

38.2. उपर्युक्त नियम इस शर्त के अधीन है कि बकाया वेतन के मुद्दे पर निर्णय करते समय, न्यायनिर्णायक प्राधिकारी या न्यायालय कर्मचारी/कर्मचारी की सेवा अवधि, कर्मचारी/कर्मचारी के विरुद्ध सिद्ध किए गए कदाचार की प्रकृति, यदि कोई हो, नियोक्ता की वित्तीय स्थिति और इसी प्रकार के अन्य कारकों को ध्यान में रख सकता है।

38.3. सामान्यतः, किसी कर्मचारी या कर्मकार, जिसकी सेवाएँ समाप्त कर दी गई हों और जो पिछला वेतन पाने का इच्छुक हो, को या तो न्यायनिर्णायक प्राधिकारी या प्रथम दृष्टया न्यायालय के समक्ष यह दलील देनी होगी या कम से कम यह बयान देना होगा कि वह लाभकारी रूप से नियोजित नहीं था/थी या कम वेतन पर नियोजित था/थी। यदि नियोक्ता पूर्ण बकाया वेतन के भुगतान से बचना चाहता है, तो उसे यह दलील देनी होगी और यह साबित करने के लिए ठोस सबूत भी पेश करने होंगे कि कर्मचारी/कर्मकार लाभकारी रूप से नियोजित था/थी और उसे सेवा समाप्ति से पहले प्राप्त वेतन के बराबर वेतन मिल रहा था/थी। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह स्थापित कानून है कि किसी विशेष तथ्य के अस्तित्व को साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होता है जो उसके अस्तित्व के बारे में सकारात्मक कथन करता है। नकारात्मक तथ्य को साबित करने की तुलना में सकारात्मक तथ्य को साबित करना हमेशा आसान होता है। इसलिए, एक बार जब कर्मचारी यह दिखा देता है कि वह नियोजित नहीं था/थी, तो नियोक्ता का दायित्व है कि वह विशेष रूप से दलील दे और साबित करे कि कर्मचारी लाभकारी रूप से नियोजित था/थी और उसे समान या लगभग समान परिलब्धियाँ मिल रही थीं/थीं।

38.4. ऐसे मामले जिनमें श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरण औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 11-ए के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करता है और पाता है कि भले ही कर्मचारी/कर्मचारी के विरुद्ध की गई जाँच प्राकृतिक न्याय के नियमों और/या प्रमाणित स्थायी आदेशों, यदि कोई हो, के अनुरूप है, लेकिन यह मानता है कि सज़ा सिद्ध पाए गए कदाचार के अनुपात में नहीं थी, तो उसे पूरा बकाया वेतन न देने का विवेकाधिकार होगा। हालाँकि, यदि श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरण यह पाता है कि कर्मचारी या कर्मकार किसी भी कदाचार का दोषी नहीं है या नियोक्ता ने झूठा आरोप लगाया है, तो पूरा बकाया वेतन देने का पर्याप्त औचित्य होगा।

38.5. जिन मामलों में सक्षम न्यायालय या न्यायाधिकरण यह पाता है कि नियोक्ता ने वैधानिक प्रावधानों और/या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन किया है या कर्मचारी या कामगार को प्रताड़ित करने का दोषी है, तो संबंधित न्यायालय या न्यायाधिकरण को पूर्ण बकाया वेतन का भुगतान करने का निर्देश देना पूरी तरह से उचित होगा। ऐसे मामलों में, उच्च न्यायालयों को संविधान के अनुच्छेद 226 या 136 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं करना चाहिए और श्रम न्यायालय आदि द्वारा पारित निर्णय में केवल इसलिए हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि कर्मचारी/कामगार के पूर्ण बकाया वेतन पाने के अधिकार या नियोक्ता के भुगतान के दायित्व पर अलग राय बनने की संभावना है। न्यायालयों को हमेशा यह ध्यान रखना चाहिए कि सेवा की गलत/अवैध समाप्ति के मामलों में, गलती करने वाला नियोक्ता है और पीड़ित कर्मचारी/कामगार है और नियोक्ता को कर्मचारी/कामगार को पूर्ण बकाया वेतन के रूप में उसका बकाया भुगतान करने के भार से मुक्त करके उसके गलत कार्यों के लिए उसे अतिरिक्त भुगतान देने का कोई औचित्य नहीं है।

38.6. कई मामलों में, उच्च न्यायालयों ने इस आधार पर प्राथमिक न्यायिक प्राधिकारी के निर्णय में हस्तक्षेप किया है कि मुकदमे के निपटारे में लंबा समय लग गया है, जबकि अधिकांश मामलों में पक्षकार इस देरी के लिए ज़िम्मेदार नहीं होते। बुनियादी ढाँचे और जनशक्ति की कमी मामलों के निपटारे में देरी का मुख्य कारण है। इसके लिए वादियों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता या दंडित नहीं किया जा सकता। किसी कर्मचारी या कामगार को केवल इसलिए पिछला वेतन देने से मना कर दिया जाए क्योंकि उसकी सेवा समाप्ति और बहाली के आदेश के अंतिम रूप देने के बीच लंबा समय बीत चुका है, तो यह उसके साथ घोर अन्याय होगा। अदालतों को यह ध्यान में रखना चाहिए कि इनमें से अधिकांश मामलों में, नियोक्ता, कर्मचारी या कामगार की तुलना में लाभप्रद स्थिति में होता है। वह पीड़ित, यानी कर्मचारी या कामगार, की पीड़ा को बढ़ाने के लिए सर्वश्रेष्ठ कानूनी विशेषज्ञों की सेवाएँ ले सकता है, क्योंकि कर्मचारी या कामगार किसी प्रसिद्ध अधिवक्ता पर पैसा खर्च करने की विलासिता नहीं उठा सकते। इसलिए, ऐसे मामलों में हिंदुस्तान टिन वर्क्स (पी) लिमिटेड बनाम कर्मचारी [हिंदुस्तान टिन वर्क्स (पी) लिमिटेड बनाम कर्मचारी, (1979) 2 एससीसी 80: 1979 एससीसी (एल एंड एस) 53] में सुझाए गए पाठ्यक्रम को अपनाना विवेकपूर्ण होगा।

38.7. जेके सिंथेटिक्स लिमिटेड बनाम केपी अग्रवाल [(2007) 2 एससीसी 433: (2007) 1 एससीसी (एल एंड एस) 651] में की गई यह टिप्पणी कि बहाली के बाद कर्मचारी/कर्मचारी अधिकार के रूप में सेवा की निरंतरता का दावा नहीं कर सकता, तीन न्यायाधीशों की पीठों [हिंदुस्तान टिन वर्क्स (पी) लिमिटेड बनाम कर्मचारी, (1979) 2 एससीसी 80: 1979 एससीसी (एल एंड एस) 53], [सुरेंद्र कुमार वर्मा बनाम केंद्रीय सरकार औद्योगिक न्यायाधिकरण-सह-श्रम न्यायालय, (1980) 4 एससीसी 443: 1981 एससीसी (एल एंड एस) 16] के निर्णयों के अनुपात के विपरीत है, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है और इसे अच्छे कानून के रूप में नहीं माना जा सकता है। निर्णय का यह भाग कर्मचारी/कर्मचारी की बहाली की अवधारणा के भी विरुद्ध है।

(न्यायालय द्वारा जोर)

34. याचिकाकर्ता के लिए सेवा में विराम माने जाने के निर्देश को प्राप्त करने वाली परिस्थितियों की समग्रता में, सेवा से बर्खास्तगी के आदेश के कारण उसके द्वारा रोजगार से बाहर रहने की कुल अवधि, जिसे इस न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया है, कायम नहीं रखी जा सकती है और उसे पूर्ववत किया जाना चाहिए।

35. परिणामस्वरूप, यह याचिका **सफल** होती है और **स्वीकार** की जाती है। संयुक्त आयुक्त (वाणिज्य कर), जो उप-आयुक्त (प्रशासन), वाणिज्य कर, नोएडा का प्रभार संभाल रहे थे, द्वारा पारित दिनांक 19.07.2012 का आक्षेपित आदेश, उस सीमा तक जिसमें याचिकाकर्ता को दंडित किया गया था, एतद्वारा **निरस्त** किया जाता है। प्रतिवादी इस निर्णय में दिए गए मार्गदर्शन को ध्यान में रखते हुए, नियमों के तहत याचिकाकर्ता की सेवा से सेवानिवृत्ति के कारण उसकी परिवर्तित स्थिति के अनुसार दंड देने वाला एक नया आदेश पारित कर सकते हैं। प्रतिवादी, याचिकाकर्ता को पूर्वोक्त सीमित उद्देश्य के लिए नोटिस देने और उसे उचित अवसर प्रदान करने के बाद, सेवा से निलंबन की अवधि के लिए परिलब्धियाँ प्राप्त करने के उसके अधिकार के संबंध में आगे आदेश भी पारित करेंगे। हालाँकि, याचिकाकर्ता सेवा में निरंतरता के लाभ का हकदार होगा, जो उसके सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों के निर्धारण में शामिल होगा। याचिकाकर्ता के सेवाकाल के दौरान वेतन वृद्धि अर्जित करने का प्रश्न तथा उस कारण देय बकाया, यदि कोई हो, तो वह अंततः प्रतिवादियों द्वारा दिए जाने वाले दंड के अधीन होगा।

36. लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(2025) 2 ILRA 704

मूल क्षेत्राधिकार

सिविल पक्ष

दिनांक: इलाहाबाद 20.02.2025

समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति पीयूष अग्रवाल

रिट सी संख्या 9298 वर्ष 2021

बिरजेश अग्रवाल

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

...प्रतिवादी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता:

ब्रजेश शुक्ला , कृष्ण दत्त तिवारी

प्रतिवादियों के अधिवक्ता:

मुख्य स्थाई अधिवक्ता

सिविल कानून - भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 - धारा 47-ए - स्टाम्प शुल्क की कमी - भूमि के एक बड़े हिस्से को 37 छोटे भूखंडों में विभाजित किया गया था, जिसमें 9 मीटर का एक सामान्य मार्ग था, जिसे विकास प्राधिकरण द्वारा विधिवत अनुमोदित किया गया था। कॉलोनी का निकास मुख्य सड़क से जुड़ गया। याचिकाकर्ता ने 9 मीटर चौड़ी आंतरिक सड़क पर स्थित एक आवासीय भूखंड खरीदा, लेकिन स्टाम्प शुल्क की कमी लगाई गई, भूखंड को मुख्य सड़क पर स्थित माना गया, केवल इसलिए कि जमीन का बड़ा हिस्सा मुख्य सड़क से सटा हुआ था, और वह भी बिना किसी स्पाॅट निरीक्षण के। निर्णय: जब एक कॉलोनी को विकास प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित किया जाता है, तो उसमें आंतरिक सड़कों को भी अनुमोदित माना जाता है और उसके बाद प्राधिकरण द्वारा उनका रखरखाव किया जाना चाहिए। जब उप-विभाजन और सामान्य सड़क को विकास प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित किया जाता है, तो यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि याचिकाकर्ता का भूखंड मुख्य सड़क पर स्थित है जैसा कि ऊपर कहा गया है, केवल इसलिए कि कॉलोनी की सड़क मुख्य सड़क से मिलती है, प्राधिकारियों को समक्ष प्लॉट की तुलना में याचिकाकर्ता पर स्टाम्प शुल्क की कमी वसूलने का अधिकार नहीं होगा, जो मुख्य सड़क से सटा हुआ है। (पैरा 8, 9)
अनुमत। (ई-5)

(माननीय न्यायमूर्ति पीयूष अग्रवाल द्वारा पारित)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य प्रतिवादी की ओर से विद्वान अपर मुख्य स्थाई अधिवक्ता को सुना गया।
2. यह रिट याचिका वाद संख्या 03364/2019 में प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 04.11.2020 के साथ-साथ अपील संख्या 00018/2021 में प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 08.02.2021 को चुनौती देते हुए दायर की गई है।
3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि दिनांक 25.07.2019 के विक्रय विलेख के माध्यम से याचिकाकर्ता ने अपेक्षित स्टाम्प शुल्क का भुगतान करने के बाद संबंधित आवासीय भूखंड खरीदा। उन्होंने आगे कहा कि भूमि का बड़ा हिस्सा छोटे भूखंडों में विभाजित था, जिसे सहारनपुर विकास प्राधिकरण द्वारा विधिवत अनुमोदित किया गया था। इसके बाद, उप रजिस्ट्रार, सहारनपुर ने स्टाम्प शुल्क की कमी के संबंध में एक रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसके अनुसार याचिकाकर्ता के खिलाफ भारतीय स्टाम्प अधिनियम की धारा 47-ए के तहत कार्यवाही शुरू की गई और एक नोटिस जारी किया गया, जिस पर याचिकाकर्ता ने अपना जवाब प्रस्तुत किया। इसके बाद, प्रतिवादी संख्या 2 ने दिनांक 04.11.2020 के आदेश के तहत ब्याज और जुर्माने के साथ स्टाम्प शुल्क की कमी लगाई। उक्त आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने अपील दायर की, जिसे दिनांक 08.02.2021 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया है। इसलिए, यह रिट याचिका की गई है।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि विवादित आदेश याचिकाकर्ता के इस तर्क पर विचार किए बिना पारित किया गया है कि विचाराधीन भूखंड 9 मीटर चौड़ी सड़क पर स्थित है, जबकि आदेश को मुख्य सड़क पर मानते हुए पारित किया गया है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि उप-पंजीयक ने विवादित भूखंड का कोई स्थलीय निरीक्षण किए बिना ही अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि विवादित आदेश पारित करने से पहले, कलेक्टर ने न तो कोई स्थलीय निरीक्षण किया और न ही कोई रिपोर्ट मंगवाई।

5. उन्होंने आगे कहा कि चूंकि भूमि के बड़े हिस्से को 9 मीटर के सामान्य मार्ग को दर्शाते हुए उप-विभाजित किया गया है और याचिकाकर्ता का प्लॉट 9 मीटर की सड़क के सामने स्थित है, इसलिए प्रतिवादी अधिकारियों की ओर से यह मानना गलत था कि याचिकाकर्ता का प्लॉट मुख्य सड़क पर स्थित है। वह बिक्री विलेख (रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या 1) का हवाला देते हैं, जहां आंतरिक पृष्ठ संख्या 3 पर इस तथ्य का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। जब याचिकाकर्ता के खिलाफ कार्यवाही शुरू की गई थी, तो उसके जवाब में, याचिकाकर्ता ने एक विशिष्ट आधार लिया था, लेकिन हालांकि उक्त तथ्य को आरोपित आदेश में देखा गया था, लेकिन कोई महत्व नहीं दिया गया था। अपील में भी, उक्त तथ्य का उल्लेख ग्राउंड नंबर 12 में किया गया था, लेकिन इस आशय का कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया गया था। वह रिट याचिका को अनुमति देने के लिए प्रार्थना करते हैं।

6. इसके विपरीत, विद्वान एसीएससी ने विवादित आदेश का समर्थन किया है और तर्क दिया है कि विचाराधीन भूमि मुख्य सड़क पर स्थित एक बड़ा भूखंड है और इसलिए, याचिकाकर्ता के विरुद्ध कार्यवाही उचित रूप से शुरू की गई है। उन्होंने आगे तर्क दिया है कि एक बार भूखंडों का विभाजन हो जाने के बाद, खरीदार राज्य को देय स्टाम्प शुल्क के भुगतान के अपने दायित्व से बच नहीं पाएंगे।

7. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के पश्चात न्यायालय ने अभिलेखों का अवलोकन किया।

8. इसमें कोई विवाद नहीं है कि विचाराधीन भूखंड ज़मीन का एक बड़ा टुकड़ा था, जिसमें 37 भूखंड उप-विभाजित थे और कॉलोनी का निकास मुख्य सड़क, यानी भगत सिंह मार्ग, से जुड़ता है। रिकॉर्ड से यह भी पता चलता है कि अधिकारियों ने इस तथ्य को नज़रअंदाज़ कर दिया है कि कॉलोनी या भूखंडों के उप-विभाजन को विकास प्राधिकरण द्वारा विधिवत अनुमोदित किया गया है। एक बार उप-विभाजन और आम सड़क को विकास प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित कर दिए जाने के बाद, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मुख्य सड़क पर स्थित याचिकाकर्ता के विचाराधीन भूखंड का कोई आधार नहीं है।

9. उप-विभाग का मानचित्र, जो विकास प्राधिकरण द्वारा विधिवत अनुमोदित है, रिट याचिका के साथ अनुलग्नक संख्या 2 के रूप में संलग्न किया गया है। प्लॉट संख्या 24 याचिकाकर्ता द्वारा खरीदा गया है, जो मुख्य सड़क पर नहीं है, लेकिन इससे पहले प्लॉट संख्या 21, 22 और 23 मौजूद हैं और उसके बाद याचिकाकर्ता का प्लॉट है। प्लॉट के सामने 9 मीटर चौड़ी सड़क है, जो विकास प्राधिकरण द्वारा विधिवत अनुमोदित है। एक बार जब कोई कॉलोनी विकास प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित हो जाती है, तो यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि उसकी

सड़क भी अनुमोदित है, जिसका रखरखाव उसके बाद विकास प्राधिकरण द्वारा किया जाना है। केवल इसलिए कि कॉलोनी की सड़क मुख्य सड़क से मिलती है, जैसा कि ऊपर कहा गया है, अधिकारियों को पहले प्लॉट की तुलना में याचिकाकर्ता पर स्टांप शुल्क की कमी का आरोप लगाने का अधिकार नहीं होगा, जो मुख्य सड़क से सटा हुआ है।

10. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, मामले के विशिष्ट तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए, इन रिट याचिकाओं में पारित आक्षेपित आदेश कानून की दृष्टि में मान्य नहीं हैं। इन मामलों पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

11. उक्त प्रयोजन के लिए, रिट याचिका में नीचे के प्राधिकारियों द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को निरस्त किया जाता है।

12. तदनुसार, रिट याचिका स्वीकार की जाती है।

13. यह मामला कलेक्टर (स्टाम्प)/सहायक आयुक्त, स्टाम्प, सहारनपुर, अर्थात् प्रतिवादी संख्या 2 को वापस भेजा जाता है, ताकि सभी हितधारकों को सुनवाई का उचित अवसर प्रदान करने के बाद, शीघ्रता से, अधिमानतः, इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत करने की तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर, इस मुद्दे पर नए सिरे से निर्णय लिया जा सके।

14. यह स्पष्ट किया जाता है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा पहले से जमा की गई कोई भी राशि प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित आदेश के परिणाम के अधीन होगी।